अपभ्रंश भाषा के

महाकवि पुष्पदन्त द्वारा रचित

आदिपुराण

(सचित्र)

हिन्दी अर्थसहित

प्रकाशक

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

राजस्थान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश भाषा के

महाकवि पुष्पदन्त द्वारा रचित

आदिपुराण

(सचित्र)

हिन्दी अर्थसहित

प्रकाशक

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

राजस्थान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

■ प्रकाशक
जैनविद्या संस्थान
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी
श्री महावीरजी- 322220 (राज.)

■ प्राप्ति-स्थान
1. जैनविद्या संस्थान, श्री महावीरजी

2. साहित्य विक्रय केन्द्र
दिगम्बर जैन नसिया भट्टारकजी
सवाई रामसिंह रोड
जयपुर-302 004
फोन : (0141)-2385247

■ प्रथमबार, नवम्बर सन् 2004, 1000 प्रतियाँ

■ मूल्य : 3000 रुपये

ISBN No. 81-88677-02-7

■ मुद्रक
जयपुर प्रिन्टर्स प्रा. लि.
एम. आई. रोड
जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ संख्या
१. आदिनाथ ऋषभदेव स्तुति	(v)
२. प्रकाशकीय	(vii)
३. आदिपुराण - विषय-सूची	(xi)
४. आदिपुराण-मूलग्रन्थ	1-687
५. परिशिष्ट - ऋषभपुत्र भरत से भारत	688
६. आर्थिक सहयोग हेतु आभार	691

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदिनाथ ऋषभदेव स्तुति

जय भुवणभवणतिमिरहरदीव जय सुइसंबोहियभव्वजीव।
जय भासियएयाणेयभेय जय णग्ग णिरंजण णिरुवमेय।
सकयत्थइं कमकमलाइं ताइं तुह तित्थु पसत्थु गयाइं जाइं।
णयणाइं ताइं दिट्ठो सि जेहिं सो कंठु जेण गायउ सरेहिं।
ते धण्ण कण्ण जे पइं सुणंति ते कर जे तुह पेसणु करंति।
ते णाणवंत जे पइं मुणंति ते सुकइ सुयण जे पइं थुणंति।
तं कव्वु देव जं तुज्झु रइउ सा जीह जाइ तुह णाउं लइउ।
तं मणु जं तुह पयपोमलीणु तं धणु जं तुह पूयाइ खीणु।
तं सीसु जेण तुहुं पणविओ सि ते जोइ जेहिं तुहुं झाइओ सि।
तं मुहुं जं तुह संमुहउं थाइ विवरंमुहुं कुच्छियगुरुहुं जाइ।
तेल्लोक्कताय तुहुं मज्झु ताउ धण्णेहिं कहिं मि कह कह व णाउ॥

— महापुराण (१०.७)

(दिशाओं के लोकपालों को कँपानेवाले चक्राधिप भरत ने स्तुति प्रारम्भ की —)

— विश्वरूपी भवन के अंधकार के दीप, आपकी जय हो! आगम से भव्य जीवों को सम्बोधित करनेवाले, आपकी जय हो! एकानेक भेदों को बतानेवाले, आपकी जय हो! हे दिगम्बर, निरंजन और अनुपमेय, आपकी जय हो! वे चरणकमल कृतार्थ हो गये जो तुम्हारे प्रशस्त तीर्थ के लिए गये। वे नेत्र कृतार्थ हैं जिन्होंने तुम्हें देखा; वह कण्ठ सफल हो गया जिसने स्वरों से तुम्हारा गान किया। वे कान धन्य हैं जो तुम्हें सुनते हैं; वे हाथ कृतार्थ हैं जो तुम्हारी सेवा करते हैं। वे ज्ञानी हैं जो आपका चिन्तन करते हैं; वे सज्जन और सुकवि हैं जो तुम्हारी स्तुति करते हैं। हे देव! काव्य वह है जो तुममें अनुरक्त है। जीभ वह है जिसने तुम्हारा नाम लिया है। वह मन है जो तुम्हारे चरण-कमलों में लीन है। वह धन है जो तुम्हारी पूजा में समाप्त होता है, वह सिर है जिसने तुम्हें प्रणाम किया है। योगी वे हैं जिनके द्वारा तुम्हारा ध्यान किया गया। वह मुख है जो तुम्हारे सम्मुख स्थित है। जो विपरीत मुख हैं वे कुगुरुओं के पास जाते हैं। हे त्रैलोक्य पिता, तुम मेरे पिता हो (इसलिए मैं धन्य हूँ), मुझ धन्य के द्वारा (आपका स्वरूप) ज्ञात है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकाय

धर्म, साहित्य एवं कला के प्रेमियों के लिए 'आदिपुराण' की सचित्र पाण्डुलिपि का प्रकाशन करते हुए अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है।

यह 'आदिपुराण' अपभ्रंश भाषा के महाकवि पुष्पदन्त द्वारा दसवीं शताब्दी (ई. सन् ९५९-९६५) में रचित 'महापुराण' का प्रारम्भिक भाग है जिसमें 'तीर्थंकर ऋषभदेव' का चरित वर्णित है।

तीर्थंकर ऋषभदेव

जैन परम्परा के अनुसार काल-चक्र उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी रूप में सदा गतिमान रहता है।[१] इस समय अवसर्पिणी काल का पंचमकाल प्रवहमान है। इस अवसर्पिणी के चौथे काल में चौबीस तीर्थंकरों में ऋषभदेव प्रथम और वर्धमान महावीर चौबीसवें - अन्तिम तीर्थंकर हुए हैं। इससे पूर्व तीसरे काल तक का समय 'भोगभूमि' कहा जाता है। इस काल तक अपने जीवन-निर्वाह के लिए कुछ भी उद्योग नहीं करना होता। जीवन-निर्वाह के लिए सब प्रकार की सामग्री कल्पवृक्षों से मिल जाती है। किन्तु इसके बाद परिवर्तन प्रारम्भ होता है। धीरे-धीरे कल्पवृक्षों से आवश्यकता की पूर्ति के लायक सामग्री मिलना कठिन हो जाता है। तब १४ कुलकर जो मनु कहे जाते हैं, लोगों को जीवन-निर्वाह से सम्बन्धित शिक्षा देना प्रारम्भ करते हैं। उसी क्रम में अयोध्या में अन्तिम कुलकर/मनु श्री नाभिराय हुए। उनकी पत्नी मरुदेवी से चैत्र कृष्ण नवमी को ऋषभदेव का जन्म हुआ।

कल्पवृक्षों के नष्ट हो जाने पर लोगों के जीवन-यापन के लिए ऋषभदेव ने उन्हें असि (सैनिक-कार्य), मसि (लेखन-कार्य), कृषि (खेती), विद्या (संगीत, नृत्य-गान आदि), शिल्प (विविध वस्तुओं का निर्माण) और वाणिज्य (व्यापार)—इन छ: कार्यों का उपदेश दिया। ऋषभदेव द्वारा प्रदर्शित इन कार्यों से लोगों की आजीविका चलने लगी। 'कर्मभूमि' प्रारम्भ हो गयी। उस समय की सारी व्यवस्था ऋषभदेव ने अपनी बुद्धि-कौशल से की इसलिए वे आदिपुरुष, ब्रह्मा, विधाता आदि संज्ञाओं से व्यवहृत हुए।

राजा नाभिराय ने यशस्वती (नन्दा) और सुनन्दा नाम की दो राजपुत्रियों से उनका विवाह किया। कुछ समय बाद उन्होंने पिता के आग्रह से राज्य का भार भी सँभाला। आपके शासन से प्रजा अत्यन्त सन्तुष्ट हुई। कालक्रम से यशस्वती से भरत आदि सौ पुत्र तथा ब्राह्मी नामक पुत्री हुई और सुनन्दा से बाहुबली पुत्र और सुन्दरी नाम की पुत्री उत्पन्न हुई। ऋषभदेव ने अपने पुत्र-पुत्रियों को अनेक जन-कल्याणकारी विद्याएँ सिखाईं। उन्होंने अपनी पुत्रियों को लिपि (लिखने) का और अंक (संख्या) का ज्ञान दिया।

एक दिन सभा में देवाङ्गना नीलांजना के नृत्य करते हुए विलीन हो जाने के कारण ऋषभदेव को वैराग्य हो गया। उन्होंने अपने बड़े पुत्र भरत को राज्य और अन्य पुत्रों को यथायोग्य स्वामित्व देकर मुनि-जीवन धारण किया।

उन्होंने प्रथम योग छः माह का लिया। छः माह समाप्त होने के बाद वे आहार के लिए निकले, परन्तु उस समय लोग यह नहीं जानते थे कि मुनियों को आहार किस प्रकार दिया जाता है! अत: विधि न मिलने के कारण उन्हें छः माह तक भ्रमण करना पड़ा। विहार करते हुए वे हस्तिनापुर पहुँचे। उस समय वहाँ राजा सोमप्रभ राज करते थे। उनके छोटे भाई का नाम 'श्रेयांस' था। श्रेयांस का ऋषभदेव के साथ पूर्वभव का सम्बन्ध था। ऋषभदेव के पूर्वभव में उनकी 'वज्रजंघ' की पर्याय में ये (राजा श्रेयांस) उनकी 'श्रीमती' नाम की स्त्री थे। उस समय इन दोनों ने एक मुनिराज को आहार दिया था। श्रेयांस को जाति-स्मरण होने से वह सब घटना याद हो आई। इसलिए उन्होंने आहार के लिए आते हुए ऋषभदेव को देखते ही पड़गाह लिया और उन्हें 'इक्षुरस' का आहार दिया। वह आहार वैशाख शुक्ल तृतीया के दिन दिया गया था, तभी से यह दिन 'अक्षयतृतीया' के नाम से प्रसिद्ध हो गया। लोगों ने राजा सोमप्रभ, श्रेयांस तथा उनकी रानियों का खूब सम्मान किया।

आत्म-साधना के फलस्वरूप ऋषभदेव को दिव्यज्ञान-केवलज्ञान प्रकट हुआ। अब वे 'सर्वज्ञ' हो गये। ऋषभदेव ने सर्वज्ञ दशा में 'दिव्यध्वनि' के द्वारा संसार के प्राणियों के लिए हित का उपदेश दिया। वे इस अवसर्पिणी काल में जैन धर्म के प्रवर्तक कहलाये। जीवन के अन्त समय में वे 'कैलाश पर्वत' पर पहुँचे, वहीं से 'मोक्ष' प्राप्त किया।

भारत के पूर्व राष्ट्रपति तथा प्रसिद्ध दार्शनिक डॉ. एस. राधाकृष्णन ने अपनी 'भारतीय दर्शन' नामक पुस्तक में लिखा है— 'जैन परम्परा के अनुसार जैन दर्शन का उद्भव ऋषभदेव से हुआ। इस प्रकार की पर्याप्त साक्षी उपलब्ध है जिसके आधार पर कहा जा सकता है कि ईसा के एक शताब्दी

१. काल-चक्र की गति एक बार सुख से दु:ख की ओर होती है, दूसरी बार दु:ख से सुख की ओर। सुख से दु:ख की ओर गति होने पर उस काल को अवसर्पिणी कहते हैं और दु:ख से सुख की ओर गतिवाले काल को उत्सर्पिणीकाल। प्रत्येक काल में छ:-छ: विभाग होते हैं—

१. अतिसुखरूप = सुखमा-सुखमा | **२. सुखरूप** = सुखमा | **३. सुख-दु:खरूप** = सुखमा-दुखमा
४. दु:ख-सुखरूप = दुखमा-सुखमा | **५. दु:खरूप** = दु:खमा, और | **६. अतिदु:खरूप** = दुखमा-दुखमा।

प्रत्येक उत्सर्पिणी व अवसर्पिणी काल के चौथे विभाग (दुखमा-सुखमा) में चौबीस तीर्थंकर होते हैं जो जैन धर्म का प्रचार करते हैं। तीर्थंकर किसी नये सम्प्रदाय या धर्म का प्रवर्तन नहीं करते अपितु अनादिनिधन आत्मधर्म का स्वयं साक्षात्कार कर वीतरागभाव से उसकी पुनर्व्याख्या या प्रवचन करते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूर्व भी ऐसे लोग थे जो ऋषभदेव की पूजा करते थे। यजुर्वेद में तीन तीर्थंकरों के नामों का उल्लेख है — ऋषभदेव, अजितनाथ और अरिष्टनेमि। भागवतपुराण भी इस बात का समर्थन करता है कि ऋषभ (इस युग में) जैन मत के संस्थापक थे।'[१]

चक्रवर्ती राजा भरत

तीर्थंकर ऋषभदेव के पुत्र भरत 'प्रथम चक्रवर्ती' हुए। उन्होंने चक्ररत्न के द्वारा षट्खण्ड भरतक्षेत्र को अपने अधीन कर लिया। राजनीति का विस्तार कर उन्होंने अपने अधीन राजाओं को राज्य-शासन-पद्धति सिखायी। भरत चक्रवर्ती यद्यपि षट्खण्ड पृथ्वी के अधिपति थे किन्तु फिर भी वे उसमें आसक्त नहीं रहते थे। यही कारण था कि उन्हें दीक्षा के बाद अन्तर्मुहूर्त में ही केवलज्ञान हो गया और कालान्तर में उन्होंने 'मोक्ष' प्राप्त किया।

यह स्मरणीय है कि नाभिपुत्र-ऋषभदेव और ऋषभपुत्र-भरत की चर्चा प्राय: सभी जैनेतर पुराणों, वेद-मन्त्रों आदि में उपलब्ध है। यह एक शुभ संयोग है कि ऋषभदेव और उनके पुत्र भरत दोनों की जन्मतिथि एक ही दिवस 'चैत्र कृष्ण नवमी' को है।[२] इस देश का नाम 'भारत' ऋषभपुत्र 'भरत' के नाम से ही हुआ है। उक्त कथन की पुष्टि के लिए अनेक उद्धरण हैं।[३]

महापुराण

'महापुराण' जैन साहित्य में एक विशेष शब्द है। इसमें त्रेसठ जैन महापुरुषों के जीवन का वर्णन होता है। चौबीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नौ नारायण, नौ प्रतिनारायण और नौ बलभद्र—इन्हें जैन परम्परा में त्रेसठ शलाका पुरुष कहा जाता है।[४] जिस ग्रन्थ में इन शलाका पुरुषों का वर्णन किया जाता है वह ग्रन्थ 'त्रेसठ शलाका पुरुषचरित' या 'महापुराण' कहलाता है।

जैन वाङ्मय में संस्कृत भाषा में आचार्य जिनसेन (ईसा की नवीं शताब्दी) द्वारा 'आदिपुराण' की और उनके शिष्य आचार्य गुणभद्र (ईसा की नवीं शताब्दी) द्वारा 'उत्तरपुराण' की रचना की गई। इसके पश्चात् महाकवि पुष्पदन्त (ईसा की दसवीं शताब्दी) ने अपभ्रंश भाषा में 'महापुराण' की रचना की।

अपभ्रंश भारतवर्ष में प्रचलित एक सुसमृद्ध लोकभाषा थी। ईसा की पाँचवीं-छठी शताब्दी में यह साहित्यिक अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बन गई थी। लम्बे समय तक यह उत्तरी भारत की भाषा बनी रही। पश्चिम से पूर्व तक इसका प्रयोग होता था। इसी से आधुनिक भारतीय भाषाओं का जन्म हुआ है। ईसा की आठवीं से तेरहवीं शताब्दी का समय अपभ्रंश साहित्य का उत्कर्ष युग कहा जा सकता है। सातवीं शताब्दी से सोलहवीं शताब्दी तक जैन कवियों द्वारा रचित अपभ्रंश साहित्य प्राप्त होता है। इस सुदीर्घ काल में जो प्रचुर साहित्य रचा गया है उसका केवल एक अंश अब तक प्रकाश में आया है। जैन ग्रन्थ-भण्डारों में अपभ्रंश भाषा का साहित्य विपुल मात्रा में सुरक्षित है।

'महापुराण' महाकवि की अपभ्रंश भाषा की रचनाओं में पहली और विशाल रचना है। कवि की यह महान कृति अपभ्रंश साहित्य में अपना एक विशिष्ट स्थान रखती है। इसमें पुराणोचित गुणों के साथ ही सभी काव्योचित गुणों के दर्शन भी होते हैं। वस्तुत: यह महापुराण कविकुलतिलक पुष्पदंत की अनुपम रचना है। महाकवि पुष्पदन्त का महापुराण एक 'महाकाव्य' है।

यह महापुराण अपभ्रंश साहित्य का एवं जैन परम्परा का एक महान ग्रन्थ है। इसमें १०२ संधियाँ हैं। यह ग्रन्थ दो भागों में विभक्त है—आदिपुराण और उत्तरपुराण। 'आदिपुराण' प्रथम भाग है जिसमें तीर्थंकर ऋषभदेव एवं उनके पुत्रों के जीवन-चरित्र का वर्णन किया गया है, इसमें प्रारम्भ में कुलकरों का वर्णन है फिर ऋषभदेव के कल्याणकों का वर्णन है। बीसवीं सन्धि से उनके पूर्वभवों का वर्णन किया गया है। इसे 'नाभेयचरित' भी कहा जाता है। यह भाग प्रारम्भ की ३७ सन्धियों में वर्णित है। शेष भाग 'उत्तरपुराण' कहा जाता है जो शेष ६५ संधियों में वर्णित है। इस प्रकार 'आदिपुराण' या 'नाभेयचरित' महापुराण का ही प्रारम्भिक भाग है।

महाकवि पुष्पदन्त

पुष्पदन्त अपभ्रंश के ही नहीं अपितु भारत के महान कवियों में से एक हैं। वे अनेक उपाधियों से विभूषित थे। उन्हें 'काव्यरत्नाकर', 'कविकुल-तिलक', 'सरस्वती-निलय' और 'कव्व-पिसल्ल' (काव्य पिशाच) आदि कहा गया है।

---

१. भारतीय दर्शन, पृ. २३३, राजपाल एण्ड सन्स, सन् १९८९.

२ आदिपुराण, आचार्य जिनसेन, संपा-अनु.-पं. पन्नालाल जैन, १५.१४१, पृ. ३३७, भारतीय ज्ञानपीठ, चतुर्थ संस्करण, १९९३.

३. विशेष विवरण के लिए परिशिष्ट द्रष्टव्य है।

४. **२४ तीर्थंकर—** १. ऋषभदेव, २. अजितनाथ, ३. सम्भवनाथ, ४. अभिनन्दन, ५. सुमतिनाथ, ६. पद्मप्रभ, ७. सुपार्श्वनाथ, ८. चन्द्रप्रभ, ९. पुष्पदन्त, १०. शीतलनाथ, ११. श्रेयांसनाथ, १२. वासुपूज्य, १३. विमलनाथ, १४. अनन्तनाथ, १५. धर्मनाथ, १६. शान्तिनाथ, १७. कुन्थुनाथ, १८. अरनाथ, १९. मल्लिनाथ, २०. मुनिसुव्रतनाथ, २१. नमिनाथ, २२. नेमिनाथ, २३. पार्श्वनाथ, २४. वर्धमान महावीर।
१२ चक्रवर्ती — १. भरत, २. सगर, ३. मघवा, ४. सनत्कुमार, ५. शान्तिनाथ, ६. कुन्थुनाथ, ७. अरनाथ, ८. सूभूम, ९. महापद्म, १०. हरिषेण, ११. जयसेन, १२. ब्रह्मदत्त।
९ नारायण— १. त्रिपृष्ठ, २. द्विपृष्ठ, ३. स्वयंभू, ४. पुरुषोत्तम, ५. पुरुषसिंह, ६. पुण्डरीक, ७. दत्त, ८. लक्ष्मण, ९. कृष्ण।
९ प्रतिनारायण— १. अश्वग्रीव, २. तारक, ३. मेरुक, ४. निशुम्भ, ५. मधुकैटभ, ६. बलि, ७. प्रहरण, ८. रावण, ९. जरासन्ध।
९ बलभद्र— १. विजय, २. अचल, ३. सुधर्म, ४. सुप्रभ, ५. सुदर्शन, ६. नान्दी, ७. नन्दिमित्र, ८. राम, ९. बलराम।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाकवि पुष्पदन्त काश्यप-गोत्रीय ब्राह्मण थे। उनके पिता का नाम केशव भट्ट और माता का नाम मुग्धादेवी था। प्रारम्भ में कवि शैव मतावलम्बी थे। उस समय उन्होंने किसी शैव राजा की प्रशंसा में काव्य का प्रणयन भी किया था, वहाँ उनका अपमान हुआ तो वे मान्यखेट चले आये। बाद में किसी जैन मुनि के उपदेश से प्रभावित होकर उन्होंने जैनधर्म अपना लिया।

पुष्पदन्त का जीवन संघर्षों से भरा हुआ था। वे प्रकृति से अक्खड़ और निःसंग थे, निस्पृह थे, भावुक थे, अत्यन्त स्वाभिमानी होने से उनका स्वभाव उग्र और स्पष्टवादी था इसलिए उन्हें बहुत मानसिक तनाव झेलना पड़ा। इनकी विचारधारा थी— 'पहाड़ की गुफा में रहकर घास खा लेना अच्छा परन्तु दुर्जनों के बीच रहना अच्छा नहीं। यह अच्छा है कि आदमी माँ की कोख से जन्म लेते ही मर जाये पर यह अच्छा नहीं कि सवेरे-सवेरे वह किसी दुष्ट राजा का मुख देखे।'

'महापुराण' महाकवि की मूल और मुख्य रचना है जिसे हम अपभ्रंश साहित्य का आकर ग्रन्थ भी कह सकते हैं। इसकी रचना में कवि को लगभग छः वर्ष का समय लगा जबकि इसके सम्पादन में डॉ. पी.एल. वैद्य को (ई. सन् १९३१ से १९४२) दस वर्ष का समय लगा।

पुष्पदन्त ने अपभ्रंश भाषा में जैनों के त्रेसठ शलाका पुरुषों के चरित का काव्यात्मक भाषा में वर्णन कर एक अनुकरणीय कार्य किया है। अपभ्रंश भाषा के स्वरूप, प्रकृति, रचना-प्रक्रिया, देशी शब्द-प्रयोग आदि के विषय में सही विश्लेषण के लिए पुष्पदन्त का महापुराण ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है।

महापुराण के अतिरिक्त कवि की दो रचनाएँ और हैं—

१. णायकुमारचरिउ और २. जसहरचरिउ।

पुष्पदन्त के आश्रयदाता

इसमें सन्देह नहीं कि काव्य मनुष्य की उदात्त चेतना तथा सृजन-शक्ति से आविर्भूत होता है। किन्तु यह कार्य किसी बाह्य उच्च आश्रय के बिना सम्भव नहीं होता है। यह उल्लेखनीय है कि भारतीय कवि को अपने साहित्य-सृजन के लिए किसी न किसी का आश्रय सदैव मिला है। इसलिए भारत में जो महान काव्य लिखे गये वे राजनीति या धर्म के आश्रय या प्रेरणा से लिखे गये। महाकवि पुष्पदन्त को भी यदि मंत्री भरत और मंत्री नन्न का आश्रय न मिलता तो महापुराण आदि की रचना संभव नहीं होती।

१. मंत्री भरत

पुष्पदन्त के साहित्य में मान्यखेट के राष्ट्रकूटवंशीय राजा कृष्ण तृतीय के तीन नाम मिलते हैं— तुडिग, सुह तुंगराय कृष्णराज (शुभतुंगराज कृष्णराज) और वल्लभ नृप। पुष्पदन्त के आश्रयदाता भरत इन्हीं कृष्णराज तृतीय के मंत्री और सेनापति थे। भरत महामात्य-वंश में उत्पन्न हुए थे। उनका परिवार एक सम्पन्न परिवार था। उनके पिता का नाम एयण, माता का नाम देवी था, पितामह का नाम अन्नय था। पत्नी का नाम कुंदव्वा था, उनके सात पुत्र थे।

मंत्री भरत जैन धर्मावलम्बी थे। भरत ने मात्र जिनमन्दिर बनवाने की अपेक्षा जैन-पुराणों की प्रख्याति के लिए ही अपनी सम्पत्ति का व्यय किया। वे विद्याव्यसनी थे। उनका चरित्र पवित्र था। वे बहुत गुणवान व अत्यन्त उदार थे। उनका यश दशों दिशाओं में फैला हुआ था।

पुष्पदन्त अपने स्वाभिमान के कारण राज्य या राजा का आश्रय लेना पसन्द नहीं करते थे किन्तु मन्त्री भरत के गुणानुराग और विद्याप्रेम से परिचित इन्द्रराज और नागैया नाम के दो व्यक्तियों ने उनसे (पुष्पदन्त से) मंत्री भरत के पास चलने का अनुरोध किया और वे सफल हुए।

मंत्री भरत महाकवि पुष्पदन्त के स्वभाव से तथा उसके पूर्व जीवन से परिचित थे। इसलिए वे अत्यन्त विनम्रता से कहते हैं—'हे कविवर! तुम चन्द्रमा के समान यशस्वी हो। तुम भव्यजनों के लिए देवकल्प हो, अतः आदिनाथ ऋषभदेव के चरित को काव्यनिबद्ध करने के लिए अपने कन्धों का सहारा दो! वाणी कितनी ही अलंकृत, सुन्दर और गम्भीर हो, वह तभी सार्थक होती है जब उसमें कामदेव का संहार करनेवाले प्रथम जिनदेव ऋषभदेव के चरित का वर्णन किया जाये।'

कवि उत्तर देते हैं— 'यह कलियुग पापों से मलिन और विपरीत है। निर्दय, निर्गुण और अन्यायकारी इसमें जो-जो भी दिखाई देता है वह अन्यायजनक है। सूखे हुए वन की तरह फलहीन और नीरस। जगत के लोगों का राग (स्नेह) सन्ध्याकाल के राग के समान है। मेरा मन धन में प्रवृत्त नहीं होता। भीतर अतिशय उद्वेग बढ़ रहा है। एक-एक पद की रचना करना भारी पड़ता है। फिर मैं जो कुछ कहूँगा उसमें दोष ढूँढा जायगा; मैं यह नहीं समझ पाता कि यह दुनिया सज्जनों के प्रति खिंची-खिंची क्यों रहती है, उसी तरह कि जिस तरह धनुष पर डोरी खिंची होती है!'

इस प्रकार कवि ने पहले तो मंत्री भरत के प्रस्ताव के प्रति अपनी अनिच्छा व्यक्त की, पर बाद में उन्होंने मंत्री भरत के अनुरोध और विनम्र आग्रह पर उनका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। उन्होंने ई. सन् ९५९ में मंत्री भरत के घर में रहकर काव्यरचना शुरू की और 'महापुराण' की रचना की। अपभ्रंश साहित्य की रचना करने से जिस तरह कवि का यश दूर-दूर तक फैला उसी प्रकार भरत की उदारता भी दूर-दूर तक प्रसिद्ध हो गई।

मंत्री भरत दुस्थितों के मित्र, दंभरहित, उपकार-भाव का निर्वाह करनेवाले, विद्वानों के कष्टरूपी भयों को दूर करनेवाले, गर्वरहित और भव्य थे। मंत्री भरत विद्या और लक्ष्मी दोनों से युक्त थे। इसी कारण महाकवि मंत्री भरत की प्रशंसा करते हुए कहते हैं कि वाग्देवी सरस्वती से लक्ष्मी सदैव रुष्ट रहती थी और सरस्वती लक्ष्मी से द्वेष रखती थी। परन्तु वे दोनों जब मंत्री भरत के पास आईं तो दोनों में प्रगाढ़ प्रेम हो गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कवि ने काव्य के प्रारम्भ में कहा है कि मंत्री भरत ने मुझसे इस काव्य की रचना करवायी, इसी प्रकार अन्त में भी स्पष्टरूप से स्वीकार किया है कि उसने 'मंत्री भरत' के अनुरोध पर नाना रस-भावों से युक्त 'पद्धड़िया' छन्द में महापुराण की रचना की। पद्धड़िया उस युग में अपभ्रंश काव्यों की विशेष-लोकप्रिय शैली थी। कवि महापुराण पूर्ण करने का श्रेय अपनी प्रतिभा को और मंत्री भरत की उदारता को देते हैं। मंत्री भरत की त्यागशीलता पर कवि को बड़ा गर्व था। पुष्पदन्त ने अपने काव्य की प्रत्येक सन्धि के अन्त में अत्यन्त गौरव से 'भरत' के नाम के साथ 'महाभव्य' विशेषण का उल्लेख किया है। महाकवि पुष्पदन्त जैसे स्वाभिमानी, निर्लोभी और संसार से उद्विग्न व्यक्ति को अपने घर रखकर 'महापुराण' जैसे विशाल ग्रन्थ की रचना करवा लेना मंत्री भरत की अपनी विशेषता है। वे नर-पारखी तथा गुणग्राही थे। निःसन्देह मंत्री भरत की उदारता के कारण ही विश्व को अपभ्रंश का यह महान ग्रन्थ उपलब्ध हो सका।

2. मंत्री नन्न

महाकवि 'महापुराण' की समाप्ति (अर्थात् ९६५ ई.) तक मंत्री भरत के ही आश्रय में थे किन्तु 'णायकुमारचरिउ' की रचना के समय (९६६-९६८ ई. के बीच) वे मंत्री भरत के पुत्र नन्न के आश्रय में रहने लगे थे। इससे प्रतीत होता है कि जब पुष्पदन्त ने 'महापुराण' की रचना की तब भरत मंत्री थे किन्तु महापुराण पूर्ण होने के बाद या तो भरत का निधन हो गया या उन्होंने वैराग्य ग्रहण कर लिया। भरत के पुत्र 'नन्न' को पिता का उत्तराधिकारी बनाया गया तो 'नन्न' ने भी महाकवि को आश्रय प्रदान किया तथा अपभ्रंश में काव्य रचने की प्रेरणा दी। नन्न प्रकृति से सौम्य तथा हृदय से शुद्ध थे। अपने पिता की भाँति ही वे भी धार्मिक प्रवृत्ति के थे और जैनागमों के अर्थ का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन और चिन्तन किया करते थे, चारों प्रकार के दान दिया करते थे। उनके आश्रय में कवि ने 'णायकुमारचरिउ' और 'जसहरचरिउ' काव्यों की रचना की।

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी द्वारा संचालित 'जैनविद्या संस्थान' जैन दर्शन, संस्कृति, कला, आचार-विचार आदि को सुरक्षित रखने एवं उसके प्रचार-प्रसार के लिए समर्पित है। अपने इस उद्देश्य के अनुरूप संस्थान द्वारा 'आदिपुराण' की इस सचित्र पाण्डुलिपि का प्रकाशन किया गया है।

'आदिपुराण' की इस सचित्र पाण्डुलिपि का प्रकाशन पहली बार किया गया है। अपभ्रंश भाषा की यह मूल सचित्र पाण्डुलिपि आर्ट पेपर पर हिन्दी अर्थसहित प्रकाशित की गई है। (स्व.) डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन कृत हिन्दी अर्थ भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित 'आदिपुराण'[१] (सन् २००१) से साभार लिया गया है।

प्रस्तुत पांडुलिपि जयपुर के दिगम्बर जैन बड़ा मन्दिर तेरहपंथियान के शास्त्र भण्डार में संगृहीत है। इस पांडुलिपि में ३४४ पत्र (६८७ पृष्ठ) हैं। इसका लिपिकाल संवत् १५९७ (ई. सन् १५४०) फाल्गुन शुक्ल १३ है। इस समय जोगिनीपुर (दिल्ली) के महादुर्ग पर सुल्तान आलम पातिसाह का राज था। तब 'पाल' नामक शुभस्थान में 'चौधरी राइमल' द्वारा महापुराण के आदि खंड की यह प्रति लिखवाई गई। लेखनकार्य 'विश्नुदास' नाम के ब्राह्मण व्यक्ति के द्वारा किया गया और चित्र 'हरिनाथ कायस्थ' और उसके परिवार द्वारा बनाये गये हैं।

६८७ पृष्ठों की इस पाण्डुलिपि में तीर्थंकर ऋषभदेव के जीवन-चरित के अनुरूप ५४१ रंगीन चित्र अंकित हैं। मूल पाण्डुलिपि में पत्र संख्या-१०, १५, ८७, ९६, १३२, १३३ कुल छः पत्र तदनुसार पृष्ठ संख्या १८-१९, २८-२९, १७२-१७३, १९०-१९१, २६२-२६३ तथा २६४-२६५ अनुपलब्ध हैं। उनका अपभ्रंश पाठ 'आदिपुराण' की (भारतीय ज्ञानपीठ से) मुद्रित/प्रकाशित प्रति से साभार लिया गया है। ऐतिहासिक महत्व की यह सचित्र पाण्डुलिपि अनुपम है, अद्वितीय है, अनूठी है।

दिगम्बर जैन बड़ा मन्दिर तेरहपंथियान, जयपुर की प्रबन्धकारिणी कमेटी के अध्यक्ष — श्री (डॉ.) सुभाष कासलीवाल, मंत्री — श्री (डॉ.) समन्तभद्र पापड़ीवाल तथा अन्य सभी सदस्यों के हम अत्यन्त आभारी हैं जिनके सौजन्य से यह पाण्डुलिपि प्रकाशन हेतु जैनविद्या संस्थान को प्राप्त हुई। इस कार्य में बड़े मन्दिर की प्रबन्धकारिणी कमेटी की ओर से मनोनीत श्री विनयचन्द पापड़ीवाल द्वारा प्रदत्त सहयोग उल्लेखनीय रहा है। इस कार्य हेतु उनके द्वारा दिया गया समय एवं किया गया अथक परिश्रम श्लाघनीय है।

जिन उदारमना महानुभावों ने आर्थिक सहयोग प्रदानकर इस ग्रन्थ-प्रकाशन के कार्य को सहज बनाया उन सभी के प्रति हम हृदय से कृतज्ञ हैं। उनके नाम परिशिष्ट में सादर अंकित हैं।

इस पाण्डुलिपि के प्रकाशन की स्वीकृति के लिए हम दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी की प्रबन्धकारिणी कमेटी एवं जैनविद्या संस्थान समिति के सदस्यों के आभारी हैं।

इसके प्रकाशन कार्य में संस्थान के कार्यकर्ताओं, विशेषरूप से सुश्री प्रीति जैन का सहयोग उल्लेखनीय रहा है।

इस सुन्दर एवं कलात्मक मुद्रण के लिए जयपुर प्रिन्टर्स प्रा. लि. जयपुर के श्री प्रमोदकुमार जैन एवं श्री आलोक जैन धन्यवादार्ह हैं।

नरेशकुमार सेठी	**नरेन्द्रकुमार पाटनी**	**डॉ. कमलचन्द सोगाणी**
अध्यक्ष	*मंत्री*	*संयोजक*
प्रबन्धकारिणी कमेटी		जैनविद्या संस्थान समिति
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी		

तीर्थंकर महावीर निर्वाण दिवस, कार्तिक कृष्ण अमावस्या, वीर निर्वाण संवत् २५३१, १२.११.२००४

१. महाकवि पुष्पदन्त विरचित 'अपभ्रंश महापुराण' का प्रथम एवं द्वितीय भाग।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदिपुराण - विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

सन्धि १ 1-16

(१) ऋषभ जिन की वन्दना। (२) सरस्वती की वन्दना। (३) कवि का मान्यखेट के उद्यान में प्रवेश और आगन्तुकों से संवाद। (४) राज्यलक्ष्मी की निन्दा। (५) भरत का परिचय। (६) भरत द्वारा कवि की प्रशंसा और काव्य रचना का प्रस्ताव। (७)कवि द्वारा दुर्जन-निन्दा। (८) भरत का दुबारा अनुरोध और कवि की स्वीकृति। (९) कवि द्वारा स्व-अल्पज्ञता का कथन और परम्परा का उल्लेख (१०) गोमुख यक्ष से प्रार्थना। (११) स्व-अल्पज्ञता की स्वीकृति के साथ कवि द्वारा महापुराण लेखन का निश्चय। जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र और मगध देश का चित्रण। (१२-१६) राजगृह का वर्णन। (१७) राजा श्रेणिक का वर्णन। (१८) उद्यानपाल द्वारा वीतराग परम तीर्थंकर महावीर के समवसरण का विपुलाचल पर आगमन की सूचना और राजा श्रेणिक का वन्दना-भक्ति के लिए प्रस्थान।

सन्धि २ 17-38

(१) नगाड़े का बजना और नगरवनिताओं का विविध उपहारों के साथ प्रस्थान। (२) राजा का पहुँचना, देवों द्वारा समवसरण की रचना। (३) राजा द्वारा जिनेन्द्र की स्तुति। (४-८) गौतम गणधर से महापुराण की अवतारणा के विषय में पूछना, गौतम गणधर द्वारा पुराण की अवतारणा करते हुए काल द्रव्य का वर्णन। (९-११) प्रतिश्रुत आदि कुलकरों का जन्म। (१२) नाभिराज कुलकर की उत्पत्ति, भोगभूमि का क्षय और कर्मभूमि का प्रारम्भ। (१३) मेघवर्षा, नये धान्यों की उत्पत्ति। (१४) कुलकर का प्रजा को समझाना और जीवनयापन की शिक्षा देना। (१५-१६) मरुदेवी के सौन्दर्य का वर्णन। (१७) नाभिराज और मरुदेवी की जीवनचर्या, इन्द्र का कुबेर को आदेश। (१८) नगर के प्रारूप का वर्णन। (१९) कर्मभूमि की समृद्धि। (२०) समृद्धि का चित्रण। (२१) नगर के वैभव का वर्णन।

सन्धि ३ 38-59

(१) इन्द्र द्वारा भावी तीर्थंकर के छह माह बाद उत्पन्न होने की घोषणा। (२) सुरबालाओं का जिनमाता की सेवा और गर्भशोधन के लिए आगमन। (३) देवांगनाओं द्वारा जिनमाता का रूप-चित्रण। (४) देवांगनाओं द्वारा जिनमाता की सेवा। (५) माता द्वारा १६ स्वप्न देखना। (६) राजा द्वारा भविष्य-कथन। (७) रत्नों की वर्षा। (८) जिन का जन्म। (९) देवों का आगमन और उनके द्वारा स्तुति। (१०) विभिन्न वाहनों पर बैठकर देवों का अयोध्या आगमन। (११) माता को मायावी बालक देकर इन्द्राणी द्वारा (तीर्थंकर) बालक को बाहर निकालना; बालक को देखकर इन्द्र द्वारा प्रशंसा। (१२) इन्द्र के द्वारा स्तुति; सुमेरु पर्वत पर ले जाना; पाण्डुशिला के ऊपर सिंहासन पर विराजमान करना। (१३) सुमेरु पर्वत द्वारा प्रसन्नता प्रकट करना। (१४) नाना वाद्यों के साथ देवों के द्वारा अभिषेक। (१५) स्नान के बाद अलंकरण। (१६) जिन का वर्णन। (१७) गन्धोदक की वन्दना। (१८) सामूहिक उत्सव। (१९) स्तुति। (२०) विभिन्न वाद्यों के साथ इन्द्र का नृत्य; उसकी व्यापक प्रतिक्रिया। (२१) जिन-शिशु को लेकर अयोध्या आना; उनका वृषभ (ऋषभ) नामकरण।

पृष्ठ संख्या

सन्धि ४ 60-77

(१) देवियों द्वारा बालक का अलंकरण; विद्याभ्यास और समस्त शास्त्रों और कलाओं का ज्ञान। (२-३) जिन के रूप-गुण का वर्णन। (४-५) शैशव क्रीड़ा। (६) नाभिराज द्वारा विवाह का प्रस्ताव। (७) पुत्र की असहमति, इन्द्रिय-भोग और विषयसुख की निन्दा। (८) चारित्रावरण कर्म के शेष होने के कारण ऋषभदेव की विवाह की स्वीकृति; कच्छ और महाकच्छ की कन्याओं से विवाह का प्रस्ताव। (९) विवाह की तैयारी। (१०) मण्डप का निर्माण। (११) वाद्यवादन। (१२) विवाह के लिए तैयारियाँ, वर-वधू के कंकण बाँधा जाना। (१३) वाद्य-वादन, विवाह की तैयारी। (१४) दोनों कन्याओं से पाणिग्रहण। (१५) सूर्यास्त का वर्णन। (१६) चन्द्रोदय का वर्णन। (१७) नाट्य प्रदर्शन। (१८) विभिन्न रसों का नाट्य। (१९) सूर्योदय। ऋषभ जिन राज्य करने लगे।

सन्धि ५ 77-98

(१) यशोवती का स्वप्न देखना। (२) स्वप्नफल पूछना। (३) गर्भवती होना; पुत्रजन्म। (४) बालक का वर्णन, नामकरण। (५) बालक का बढ़ना; उसके सौन्दर्य का वर्णन; सामुद्रिक लक्षण। (६) रूप-चित्रण और ऋषभ द्वारा प्रशिक्षण। (७-८) अर्थशास्त्र व नीतिशास्त्र का उपदेश। (९-१०) क्षात्रधर्म की शिक्षा। (११) राजनीतिशास्त्र। (१२) राज्य-परिपालन की शिक्षा। (१३) अन्य पुत्रों का जन्म। (१४) बाहुबलि का जन्म और यौवन की प्राप्ति। (१५) प्रथम कामदेव बाहुबलि के नवयौवन और सौन्दर्य के प्रति नगरवनिताओं की प्रतिक्रिया। (१६) नगरवनिताओं की चेष्टाएँ। (१७-१८) ब्राह्मी और सुन्दरी का जन्म, ऋषभ जिन द्वारा उन्हें पढ़ाना। (१९) कल्पवृक्षों की समाप्ति; ऋषभ के द्वारा असि-मसि आदि कर्मों की शिक्षा। (२०) उस समय की समाज-व्यवस्था का चित्रण। (२१) गोपुरों की रचना। (२२) ऋषभ द्वारा धरती का परिपालन।

सन्धि ६ 98-106

(१-२) ऋषभ राजा के दरबार और अनुशासन का वर्णन। (३-४) इन्द्र की चिन्ता कि ऋषभ जिन को किस प्रकार विरक्त किया जाये। (५-९) नीलांजना को भेजना और संगीत शास्त्र का वर्णन। नीलांजना का नृत्य करना और अन्तर्धान होना, ऋषभ जिन द्वारा विस्मित होना।

सन्धि ७ 107-129

(१-१४) बारह अनुप्रेक्षाओं का कथन। (१५-१९) आत्मचिन्तन और लौकान्तिक देवों द्वारा सम्बोधन। (२०-२१) दीक्षा का निश्चय, और भरत से राजपाट सम्हालने का प्रस्ताव; प्रतिरोध करने के बावजूद भरत को राजपट्ट बाँध दिया गया। (२२) सिंहासन पर आरूढ़ भरत और ऋषभनाथ। (२३) वाद्य-गान और उत्सव के साथ भरत का राज्याभिषेक। (२४) ऋषभ जिन द्वारा दीक्षा ग्रहण के लिए प्रस्थान। (२५-२६) सिद्धार्थ वन का वर्णन; दीक्षा ग्रहण करना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृष्ठ संख्या

सन्धि ८ 130-147

(१) तप, छह माह का कठोर अनशन। (२) दीक्षा लेनेवाले अन्य लागों का दीक्षा से विचलित होना। (३) उनकी प्रतिक्रियाओं का वर्णन। (४) दिव्यध्वनि द्वारा चेतावनी। (५) जिन-दीक्षा का त्याग व अन्य मतों का ग्रहण; कुछ घर वापस लौट आये। कच्छ और महाकच्छ के पुत्रों का आगमन; ध्यान में लीन ऋषभ जिन से धरती की माँग। (६) धरणेन्द्र के आसन का कम्पायमान होना। (७) धरणेन्द्र का आकर ऋषभ जिन के दर्शन करना; नागराज द्वारा स्तुति। (८) नागराज द्वारा ऋषभ जिन का मानव जाति के लिए महत्व प्रतिपादित करना; नागराज की चित्तशुद्धि। (९) नागराज की नमि-विनमि से बातचीत। (१०) नागराज उन्हें विजयार्ध पर्वत पर ले गया। (११) विजयार्ध पर्वत का वर्णन। (१२) नमि-विनमि को विद्याओं की सिद्धि। (१३) नागराज ने विजयार्ध पर्वत की एक श्रेणी नमि को प्रदान की। (१४) दूसरी श्रेणी विनमि को प्रदान की। (१५) पुण्य की महत्ता का वर्णन।

सन्धि ९ 148-178

(१) ऋषभ द्वारा कायोत्सर्ग की समाप्ति। (२) विहार। (३) श्रेयांस द्वारा स्वप्न देखना। अपने भाई राजा सोमप्रभ से स्वप्न का फल पूछना। (४) ऋषभ जिन का नगर में प्रवेश। नगरजनों द्वारा ऋषभदेव को अपने-अपने घर चलने के लिए आग्रह करना। (५) राजा को ऋषभ जिन के आने की द्वारपाल द्वारा सूचना; दोनों भाइयों का ऋषभ जिन के पास जाना। (६) श्रेयांस को पूर्वजन्म का स्मरण और आहार-दान की घटना का याद आना। (७) विभिन्न प्रकार के दानों का उल्लेख। (८) उत्तम पात्र के दान की प्रशंसा। (९) राजा द्वारा ऋषभ जिन को पड़गाहना। (१०) इक्षुरस का आहार दान। (११) पाँच प्रकार के रत्नों की वृष्टि। (१२) भरत द्वारा प्रशंसा; आदि जिन का विहार; ज्ञानों की प्राप्ति। (१३) पुरिमतालपुर में ऋषभ जिन का प्रवेश। (१४) पुरिमतालपुर उद्यान का वर्णन। (१५) ऋषभ जिन का आत्मचिन्तन और कर्मक्षय। (१६) केवलज्ञान की प्राप्ति। (१७-१८) इन्द्र का आगमन; ऐरावत का वर्णन। (१९) विविध वाहनों के द्वारा देवों का आगमन। (२०) देवांगनाओं का आगमन। (२१-२३) समवसरण का वर्णन। (२४) धूम्र-रेखाओं से शोभित आकाश का वर्णन। (२५) ध्वजों का वर्णन। (२६) परकोटाओं और स्तूपों का चित्रण; नाट्यशाला का वर्णन। (२७) सिंहासन और वन्दना करते हुए देवों का वर्णन। (२८) आकाश से हो रही कुसुमवृष्टि का चित्रण। (२९) देवों द्वारा जिनवर की स्तुति।

सन्धि १० 178-191

(१) इन्द्र द्वारा जिनवर की स्तुति। (२) सिंहासन पर स्थित ऋषभ जिनवर का वर्णन; दिव्यध्वनि और गमन का वर्णन। (३) केवलज्ञान प्राप्त होने के बाद ऋषभ जिन के विहार के प्रभाव का वर्णन; मानस्तम्भ का वर्णन। (४-८) विविध देवों-देवांगनाओं द्वारा ऋषभ जिन की स्तुति। (९) ऋषभ जिनवर द्वारा तत्त्वकथन; जीवों का विभाजन। (१०) जीवों के भेद-प्रभेद; पृथ्वीकायादि का वर्णन। (११) वनस्पतिकाय और जलकाय जीवों का वर्णन। (१२) दोइन्द्रिय-तीनइन्द्रिय आदि जीवों का कथन। (१३) द्वीप समुद्रों का वर्णन। (१४) जलचर प्राणियों का वर्णन।

पृष्ठ संख्या

सन्धि ११ 191-216

(१) संज्ञी-पर्याप्त जीव। (२) तिर्यंच गति के विभिन्न जीवों का वर्णन। (३) भरत आदि क्षेत्रों का वर्णन। (४) हरिक्षेत्रादि वर्णन। (५) हिमवत् पद्म सरोवर का वर्णन। (६) पद्म-महापद्म आदि सरोवरों का वर्णन। (७) जम्बूद्वीप के बाहर के अन्तर्द्वीप और उनके जीवों का वर्णन। (८) भवनवासी आदि देवों का वर्णन। (९) पन्द्रह कर्मभूमियों का वर्णन, मरणयोनि का वर्णन। (१०) कौन जीव कहाँ से कहाँ जाता है, इसका वर्णन। (११) जीवों के एक गति से दूसरी गति में जाने का वर्णन। (१२) नरकवास का वर्णन। (१३) नरकों के विभिन्न बिलों का कथन। (१४-२०) नरक की यातनाओं का वर्णन। (२१-२२) पाँच प्रकार के देवों का वर्णन। (२३) स्वर्ग विमानों का वर्णन। (२४) विविध प्रकार के देवों का वर्णन। (२५) देवों की ऊँचाई आदि का चित्रण। (२६) विभिन्न स्वर्गों में काम की स्थिति का, देवों की आयु का वर्णन। (२७) सर्वार्थसिद्धि के देवों का वर्णन। (२८) नरक-देवभूमियों में आहारादि का वर्णन। (२९) योग-वेद और लेश्याओं के आधार पर वर्णन। (३०) कर्म-प्रकृति के आधार पर ऊँच-नीच प्रकृति का वर्णन। (३१) कषायों की विभिन्न स्थितियों का चित्रण। (३२) पाँच प्रकार के शरीरों का वर्णन। (३३) मोक्ष का स्वरूप, आत्मा की सही स्थिति का चित्रण। (३४) अजीव का वर्णन। (३५) वृषभसेन द्वारा शुभ भाव का ग्रहण। ब्राह्मी-सुन्दरी आर्यिका बनीं, अनन्तवीर्य अग्रणी मोक्षमार्गी हुआ।

सन्धि १२ 216-243

(१) भरत की विजय यात्रा, शरद् ऋतु का वर्णन। (२) प्रस्थान। (३) राजसैन्य के कूच का वर्णन। (४) सैन्य सामग्री का वर्णन, चौदह रत्नों का उल्लेख। (५-७) भरत का प्रस्थान; गंगानदी का वर्णन। (८) नदी को देखकर भरत का प्रश्न; सारथि का उत्तर, सेना का ठहरना। (९) पड़ाव का वर्णन। (१०) रात्रि बिताना, प्रातः पूर्व दिशा की ओर प्रस्थान। (११) गोकुल बस्ती में प्रवेश, वहाँ की वनिताओं पर प्रतिक्रिया। (१२) शबरबस्ती में। (१३) भरत का गमन। (१४-१५) समुद्र का चित्रण। (१६) भरत द्वारा समुद्र पर बाण चलाना। (१७-१८) मागध देव का क्रुद्ध होना। मागध देव का आक्रोश। (१९) भरत के बाण के अक्षर पढ़कर क्रोध शान्त होना। (२०) मागधदेव का समर्पण।

सन्धि १३ 244-258

(१) भरत का वरदाम तीर्थ के लिए प्रस्थान। (२) उपसमुद्र और वैजयन्त समुद्र के किनारे राजा का ठहरना, सैन्य का श्लेष में वर्णन, राजा द्वारा उपवास, कुलचिह्नों और प्रतीकों की पूजा। (३) सूर्योदय, धनुष का वर्णन। (४) धनुष का श्लिष्ट वर्णन। (५) वरतनु का समर्पण। (६) भरत द्वारा बन्धन-मुक्ति और पश्चिम दिशा की ओर प्रस्थान, सिन्धुतट पर पहुँचना। (७) सिन्धुनदी का वर्णन (श्लेष में); भरत का डेरा डालना। (८) सन्ध्या और रात का वर्णन, सूर्योदय। (९) भरत द्वारा उपवास और प्रहरणों की पूजा के बाद लवण समुद्र के भीतर जाना; बाण का सन्धान करना, प्रभास का आत्म-समर्पण। (१०-११) विजयार्द्ध पर्वत की ओर प्रस्थान; म्लेच्छों पर विजय; विभिन्न जनपदों को जीतकर विजयार्द्ध पर्वत के शिखर पर आरूढ़ होना; विजयार्द्ध की पराजय। सेना का पड़ाव; विन्ध्या के गज का नाश।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृष्ठ संख्या

सन्धि १४ 259-279

(१) मणिशेखर देव का आगमन और निवेदन; भरत द्वारा गुहाद्वार खोलने का आदेश; दण्डरत्न का प्रक्षेप। (२) गुहाद्वार का उद्घाटन होना; गुहा का वर्णन। (३-४) गुहादेव का पतन; भरत का चक्र भेजना और उसके पीछे सेना का चलना। (५) गुहामार्ग में सूर्य-चन्द्र का अंकन, विभिन्न जाति के नागों में हलचल। (६) समुन्मग्ना और निमग्ना नदियों के तट पर पहुँचना और सेतु बाँधना; सैन्य का पानी पार करना। (७) म्लेच्छकुल के राजाओं का पतन। (८) म्लेच्छ राजा द्वारा विषधरकुल नागों के राजा को बुलाना। (९) म्लेच्छ राजा का प्रत्याक्रमण का आदेश, नागों द्वारा विद्या के द्वारा अनवरत वर्षा। (१०) चर्मरत्न से रक्षा। (११) सेना के घिरने पर भरत द्वारा स्वयं प्रतिकार। (१२) मेघों का पतन।

सन्धि १५ 279-307

(१) सिन्धु-विजय के बाद राजा का ऋषभनाथ को प्रणामकर हिमवन्त के लिए प्रस्थान। (२) हिमवन्त के कूटतल में सेना का पड़ाव। (३) भरत-पक्ष के द्वारा प्रक्षिप्त बाण को देखकर राजा हिमवन्त कुमार की प्रतिक्रिया। (४) बाण में लिखित अक्षर देखकर उसका समर्पण। (५) अधीनता स्वीकार कर उसका चला जाना। (६) भरत का वृषभ महीधर के निकट जाना; उसका वर्णन; उस पर्वत के तट पर अनेक राजाओं के नाम खुदे हुए थे; राज्य की निन्दा। (७) भरत की यह स्वीकृति कि राजा बनने की आकांक्षा व्यर्थ है, फिर भी अपने नाम का अंकन। (८) हिमवन्त से प्रस्थान और मन्दाकिनी के तट पर ठहरना। (९) गंगा का वर्णन। (१०) गंगा देवी द्वारा भरत का सम्मान। (११) गंगा का उपहार देकर वापस जाना। (१२) सेना और नदी का श्लिष्ट वर्णन। (१३) विजयार्ध पर्वत की पश्चिमी गुहा में प्रवेश। (१४) किवाड़ का विघटन। (१५) मन्त्रियों द्वारा वहाँ के शासक नमि-विनमि का परिचय। (१६) दोनों भाइयों के द्वारा अधीनता स्वीकार। (१७) नमि-विनमि द्वारा निवेदन; भरत द्वारा उनकी पुनःस्थापना। (१८) सैन्य का प्रस्थान; गुहा द्वार में प्रवेश; सूर्य-चन्द्र का अंकन। (१९) पर्वत गुफा से निकलकर कैलाश गुफा पर पहुँचना। (२०-२१) कैलास पर्वत का वर्णन। (२२) कैलास पर आरोहण। (२३) ऋषभ जिन के दर्शन। (२४) ऋषभ जिन की स्तुति।

सन्धि १६ 307-335

(१) साकेत के लिए कूच, सैन्य के चलने की प्रतिक्रिया, अयोध्या के सीमा द्वार पर पहुँचना, स्वागत की तैयारी। (२) चक्र का नगर सीमा में प्रवेश नहीं करना। (३-४) इस तथ्य का अलंकृत शैली में वर्णन; भरत के पूछने पर राजा का इसका कारण बताना। (५) बाहुबलि के बारे में मन्त्रियों का कथन। (६) बाहुबलि की अजेयता का वर्णन; भरत की प्रतिक्रिया। (७) दूत का कुमारगण के पास जाना; कुमारगण की प्रतिक्रिया। (८) भौतिक पराधीनता की आलोचना। (९) बाहुबली के अतिरिक्त शेष भाइयों द्वारा भौतिक मूल्यों के लिए नैतिक मूल्यों की उपेक्षा किये जाने की निन्दा। (१०) कुमारों का ऋषभ के पास जाना, स्तुति और संन्यास ग्रहण; बाहुबलि की अस्वीकृति। (११) दूत का भरत को यह समाचार देना; भरत का आक्रोश। (१२) भरत का दूत को सख्त आदेश। (१३) दूत का बाहुबलि के आवास पर जाना; पोदनपुर का वर्णन। (१४) दूत की बाहुबलि से भेंट। (१५) दूत के द्वारा बाहुबलि की प्रशंसा; बाहुबलि का भाई के कुशल-क्षेम पूछना। (१६) दूत का उत्तर और युक्ति से भरत की अधीनता मानने का प्रस्ताव। (१७) दूत के द्वारा भरत की दिग्विजय का वर्णन। (१८) दिग्विजय का वर्णन, बाहुबलि का आक्रोश। (१९) बाहुबलि का आक्रोशपूर्ण उत्तर। (२०) दूत का उत्तर और भरत का अपराजेयता का संकेत। (२१) बाहुबलि द्वारा राजा की निन्दा। (२२) दूत का वापस आकर भरत से प्रतिवेदन। (२३) सूर्यास्त का वर्णन। (२४) संध्या का चित्रण। (२५-२६) रात्रि के विलास का चित्रण।

पृष्ठ संख्या

सन्धि १७ 335-352

(१) युद्ध का श्रीगणेश; बाहुबलि का आक्रोश। (२) वनिताओं की प्रतिक्रिया। (३) रणतूर्य का बजना; योद्धाओं का तैयार होना। (४) भरत के आक्रमण की सूचना; बाहुबलि का आक्रोश। (५) बाहुबलि की सेना की तैयारी। (६) योद्धाओं की गर्वोक्तियाँ। (७) संग्राम-भेरी का बजना। (८) मन्त्रियों का हस्तक्षेप। (९) मन्त्रियों द्वारा द्वन्द्व युद्ध का प्रस्ताव। (१०) दृष्टि, जल और मल्ल युद्ध के लिए सहमति। (११) दृष्टि युद्ध; भरत की पराजय। (१२) जलयुद्ध; सरोवर का वर्णन। (१३) भरत की पराजय। (१४) भरत का आक्रोश। (१५) बाहुयुद्ध; भरत की हार। (१६) बाहुबलि की प्रशंसा।

सन्धि १८ 353-366

(१) बाहुबलि का पश्चात्ताप। (२) राजसत्ता के लिए संघर्ष की निन्दा; संसार की नश्वरता। (३) भरत का उत्तर; भरत द्वारा बाहुबलि की प्रशंसा। (४) भरत का पश्चात्ताप। (५) बाहुबलि का पश्चात्ताप। (६) बाहुबलि का ऋषभ जिन के दर्शन करने जाना; ऋषभ जिन की संस्तुति; जिन-दीक्षा और पाँच महाव्रतों को धारण करना। (७) परिषह सहन करना। (८) घोर तपश्चरण। (९) भरत का ऋषभ जिन की वन्दना-भक्ति के लिए जाना; स्तुति के बाद बाहुबलि से पूछना; भरत का बाहुबलि से क्षमायाचना करना। (१०) बाहुबलि का आत्मचिन्तन और तपस्या; दश उत्तम धर्मों का पालन। (११) चारित्र्य का पालन; केवलज्ञान की प्राप्ति। (१२) देवों का आगमन। (१३) भरत का अयोध्या नगरी में प्रवेश। (१४) भरत की उपलब्धियाँ और वैभव। (१५) भरत की ऋद्धि का चित्रण। (१६) विलास-वर्णन।

सन्धि १९ 366-378

(१) भरत का दान के बारे में सोचना। (२) कंजूस व्यक्ति की निन्दा। (३) गुणी व्यक्ति कौन। (४) राजाओं को बुलाया गया। ब्राह्मण वर्ण की स्थापना। (५) ब्राह्मणों के बाद क्षत्रिय वर्ण की स्थापना। (६-७) ब्राह्मण की परिभाषा। ब्राह्मणों को दान। (८) अशुभ स्वप्नावली का दर्शन। (९) भरत द्वारा ऋषभ जिन के दर्शन और अशुभ स्वप्न का फल पूछना। (१०) ऋषभ जिन द्वारा ब्राह्मणों के दुष्कर्मों की आलोचना। (११) भविष्य कथन। (१२) अशुभ स्वप्न-फल कथन। (१३) भविष्य कथन।

सन्धि २० 378-401

(१) पुराण की परिभाषा। (२) लोक के कर्तृत्व का खण्डन। (३-४) लोक का वर्णन। (५) विजयार्ध पर्वत का वर्णन। (६-७) अलकापुरी का वर्णन। (८) राजा अतिबल का वर्णन। (९) रानी मनोहरा का वर्णन।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१०) राजा अतिबल को वैराग्य। (११) पुत्र महाबल को गद्दी और उपदेश। (१२) राजा महाबल और उसके मन्त्री। (१३) स्वयंबुद्ध का उपदेश। (१४) इन्द्रिय सुख की निन्दा। (१५) विषय-सुख की निन्दा। (१६) स्वयंबुद्ध का उपदेश जारी रहता है। (१७) मन्त्री महामति द्वारा चार्वाक मत का समर्थन। (१८) स्वयंबुद्धि द्वारा खण्डन। (१९) क्षणिकवादी का खण्डन। (२०) सियार और मछली का उदाहरण। (२१) जिन के कथन का समर्थन। पूर्वज अरविन्द और उसके पुत्र हरिश्चन्द और कुरुविन्द का उल्लेख। (२२) पिता अरविन्द को दाह-ज्वर। (२३) अरविन्द द्वारा रक्त-सरोवर बनवाने के लिए कहना। (२४) कृत्रिम रक्तसरोवर में राजा का स्नान। (२५) राजा का क्रोध। उसने छुरी से पुत्र को मारना चाहा, परन्तु उस पर गिरकर स्वयं मर गया।

सन्धि २१ 402-414

(१) स्वयंबुद्धि महाबल को सहारा देता है। मन्त्री द्वारा पूर्वजों का कथन। (२) राजा के चित्त की शान्ति। सुमेरु पर्वत का वर्णन। (३) चारण मुनियों का आगमन। उनका वर्णन। (४) मुनियों का उपदेश। राजा के दसवें भव में तीर्थंकर होने का उपदेश। (५) राजा जयवर्मा ने (जो महाबल का बड़ा पुत्र था) भी छोटे भाई को राज्य देने के कारण संन्यास ले लिया। (६-७) वन में जाकर तपस्या करना। वन का वर्णन। (८) मुनि जयवर्मा का निदान। साँप के काटने से मृत्यु। अलकापुरी में मनोहरा का पुत्र। (९) स्वयंबुद्ध का राजा को समझाना। (१०) स्वयंबुद्ध महाबल से कहता है कि मुनि का कहा झूठ नहीं हो सकता। (११) महाबल द्वारा स्वयंबुद्ध की प्रशंसा। (१२) जिनवर की पूजा-वन्दना। संल्लेखना से मरण। (१३-१५) महाबल का देवकुल में उत्पन्न होना। अवधि-ज्ञान से वह सारी बात जान लेता है।

सन्धि २२ 415-433

(१) ललितांग देव की माला का मुरझाना। उसकी चिन्ता। (२) धर्माचरण। (३-४) पुष्कलावती के उत्पलखेड़ नगर का वर्णन, वहाँ के राजा वज्रबाहु के ललितांग देव का वज्रजंघ नामक पुत्र के रूप में जन्म। पुत्र दिन दूना रात चौगुना बढ़ता है। (५) देवी स्वयंप्रभा का विलाप। वह पुण्डरीकिणी नगरी में गई। नगरी का वर्णन। (६) वज्रदन्त राजा। (७) स्वयंप्रभा राजा वज्रदन्त के श्रीमती नाम की कन्या हुई। (८) ललितांग का स्मरण। (९) पूर्वजन्म के वर ललितांग की याद। पिता का यशोधर के केवलज्ञान-समारोह में जाना। (१०-११) यशोधर का वर्णन। राजा को पूर्वभव की याद आती है। (१२) घर आकर अपनी कन्या को समझाता है और पूर्वभव का कथन करता है। (१३) धाय पुत्री का मर्म पूछती है। (१४) गन्धिल्ल देश के भूतग्राम का वर्णन। नागदत्त वणिक्। उसके कई पुत्र-पुत्रियाँ थीं। अन्तिम कन्या निर्नामिका। (१५) सिर पर लकड़ियों का गट्ठा रखे हुए वह जैन मुनि के दर्शन का योग पाती है। (१६) मुनि को नमस्कार किया। (१७) मुनि पिहितास्रव द्वारा पूर्वभव कथन। (१८) जैनधर्म का उपदेश। (१९) व्रतों का विधान। (२०) मुनिनिन्दा का फल। निर्नामिका घर आती है। (२१) मरकर स्वर्ग में स्वयंप्रभा नाम की देवी उत्पन्न होना।

सन्धि २३ 434-453

(१) धाय द्वारा श्रीमती का चित्रपट लेकर जाना। (२) चित्रपट देखकर विभिन्न राजकुमारों की प्रतिक्रिया। (३-१५) पिता का विजययात्रा से लौटकर अपनी पुत्री को आश्वासन देना और अपना पूर्वभव कथन। (१६) दार्शनिक विवेचन। (१७-२१) राजा द्वारा पुत्री श्रीमती को अपना पूर्वभव कथन।

सन्धि २४ 454-464

(१) पिता श्रीमती से कहता है कि आज उसका भावी ससुर आने वाला है। धाय का आगमन। (२-३) भावी वर का वर्णन। (४-५) वर का चित्रपट को देखकर पूर्वभव का स्मरण। (६) धाय और वर की बातचीत का विवरण। (७) वर की काम-पीड़ा का वर्णन। (८) पिता वज्रबाहु का पुत्र को समझाना। (९-१०) वज्रबाहु का पुण्डरीकिणी नगर आना। पुत्र को देखकर नगर-वनिताओं की प्रतिक्रिया। (११) राजा द्वारा वज्रबाहु का स्वागत। वज्रबाहु अपने पुत्र वज्रजंघ के लिए श्रीमती माँगता है। (१२) विवाह-मण्डप। (१३) विवाह। (१४) वर-वधू वर्णन।

सन्धि २५ 464-481

(१) वज्रजंघ और श्रीमती का वर्णन। (२) वज्रबाहु और वज्रजंघ का प्रस्थान। (३) वर-वधू का निवास। वज्रबाहु का दीक्षा ग्रहण करना। (४) वज्रजंघ को विरक्ति होना। कमल में मृत भ्रमर देखना। (५) राजा का वैराग्य-चिन्तन। (६) पुत्र अमिततेज को राजपाट सौंपने का प्रस्ताव। पुत्र अमिततेज की अस्वीकृति। (७) राजा वज्रदन्त व पुत्र अमिततेज द्वारा संन्यासग्रहण। (८) रानी का परिताप। (९) रानी लक्ष्मीवती का चिन्तन। उसका वज्रजंघ को लेख भेजना। (१०) वज्रजंघ का पत्र पढ़ना। (११) वज्रजंघ का प्रस्थान। (१२) वन में मुनियों को आहारदान। (१३) पूर्वभव का स्मरण। (१४-२०) पूर्वभव कथन। (२१) हलवाई का आख्यान। (२२) वज्रजंघ का पुण्डरीकिणी पहुँचना। बहन का राज्य सँभालना।

सन्धि २६ 481-493

(१) श्रीमती और उसके पति का निधन। (२) उत्तर कुरुभूमि में जन्म। (३) कुरुभूमि का वर्णन। (४) दोनों का सुखमय जीवन। (५) शार्दूल आदि का कुरुभूमि में जन्म लेना। (६) पूर्वभव कथन। (७) वेद का अर्थ। (८) सच्चे गुरु की पहचान। (९)तत्त्वों का कथन। शार्दूल आदि के जीवों को सम्बोधन। (१०) मुनियों का आकाश-मार्ग से जाना। व्याघ्र आदि का स्वर्ग में जाना। (११) पूर्वभव कथन। (१२-१८) सम्भिन्नमति आदि के पूर्वभव का कथन।

सन्धि २७ 494-504

(१) अच्युतेन्द्र की आयु के क्षीण होने का वर्णन। (२) पूर्वभव का कथन। (३) लौकान्तिक देवों का वज्रसेन को प्रबोध देना। (४-५) वज्रनाभि के तप का वर्णन। (६) ऋद्धियों की प्राप्ति। वज्रनाभि का अहमिन्द्र होना। (७) अवधिज्ञान से पूर्वभव का ज्ञान। (८-१०) ऋषभदेव के पूर्वभव-कथन। (११) पूर्वभव-कथन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और भरत का प्रश्न। (१२) ऋषभ द्वारा भावी तीर्थंकरों और चक्रवर्ती आदि की पूर्व घोषणा। (१३) भविष्य-कथन। (१४) भरत द्वारा ऋषभ जिन की स्तुति।

सन्धि २८ 504-537

(१) भरत द्वारा शान्तिकर्म का विधान। राजा के आचरण का कथन। (२) भरत का आत्मचिन्तन। (३) राजनीतिविज्ञान का कथन। (४) भरत की दिनचर्या। (५) राजा का कथन। (६) कुगुरु आदि की संगति का परिणाम। (७) धर्म की महिमा का कथन। (८) प्रजा के धर्म और न्याय की रक्षा। (९) सोमवंशीय राजा श्रेयांस के पूर्वभव का कथन। (१०-११) दीवड़ जाति के नाग और नागिन की कथा। (१२) जयकुमार से द्वारपाल की भेंट। राजा अकम्पन की रानी सुप्रभा का वर्णन। सुप्रभा के सौन्दर्य का वर्णन। उसकी कन्या सुलोचना। (१३) उसके सौन्दर्य का चित्रण। वसन्त का आगमन। (१४-१५) वसन्त का चित्रण। (१६) कन्या का ऋतुमती होना। राजा की चिन्ता। स्वयंवर की रचना। (१७-१८) सुलोचना का स्वयंवर में प्रवेश। (१९) राजाओं के प्रतिक्रिया। (२०) सारथि का जयकुमार की ओर रथ हाँकना। (२१) जयकुमार के गले में वरमाला डालना। (२२-२३) भरतपुत्र अर्ककीर्ति का आक्रोश। नीति-कथन। (२४) युद्ध के नगाड़ों का बजना। (२५) योद्धाओं का जमघट। (२६-२७) युद्ध का वर्णन। (२८) घमासान युद्ध। धनुष का आस्फालन। (२९) हाथियों और घोड़ों में भगदड़। (३०) तीरों का तुमुल युद्ध। (३१) अर्ककीर्ति की गर्वोक्ति। (३२) जयकुमार को चुनौती। गजों का आहत होना। (३३-३४) युद्धभूमि का वर्णन। रात्रि में युद्ध करने से मना करना। (३५) स्त्रियों की प्रतिक्रिया। (३६) प्रातःकाल युद्ध का वर्णन। (३७) जयकुमार के युद्ध-कौशल की प्रशंसा। (३८) सुलोचना की प्रतिज्ञा। अर्ककीर्ति का पकड़ा जाना।

सन्धि २९ 538-561

(१) अर्ककीर्ति का आत्मचिन्तन। (२) भरत की प्रताड़ना। (३) अकम्पन भरत से क्षमा याचना करता है, भरत का नीति कथन। (४) जयकुमार द्वारा ससुर की प्रशंसा। (५) पुत्री की विदाई। (६) गंगातट पर पड़ाव और जयकुमार का भरत से जाकर मिलना। (७) जयकुमार की भरत द्वारा विदाई। (८) मगर का हाथी को पकड़ना। देवी द्वारा सुलोचना की रक्षा। (९) देवी द्वारा पूर्वभव-कथन। (१०) नागिन की कथा। (११) विद्याधर जोड़ी देखकर जयकुमार को पूर्वभव स्मरण से मूर्च्छा। (१२) सुलोचना द्वारा पूर्वभव कथन। (१३) पूर्वभव कथन। शक्तिषेण और सत्यदेव की कथा। (१४-१५) पूर्वभव कथन। (१६) धनेश्वर का डेरा डालना। दो चारण मुनियों को आहारदान। (१७) मेरुदत्त का निदान। (१८) मुनि द्वारा पूर्वभव कथन। (१९) भूतार्थ और सत्यदेव का परिचय। सत्यदेव घर वापस नहीं जाता। (२०) शक्तिषेण, नवदम्पति को सेठ को सौंपता है, परन्तु शक्तिषेण शोभापुर में आकर उसे आश्रय देता है। (२१) भवदेव सत्यदेव दम्पति को आग में जला देता है। वे सेठ के घर में कबूतर-कबूतरी हुए। वे पूर्वभव का कथन करते हैं। (२२-२५) पूर्वभव कथन। (२६) बूढ़े मन्त्री कुबेरमित्र का उपहास। (२७) वापिका के पानी का लाल रंग होने का कारण। (२८) सुलोचना कथा कहना जारी रखती है।

सन्धि ३० 561-577

(१) राजा लोकपाल और वसुमती का कथानक। ऋषि को देखकर पक्षियों का पूर्वभव स्मरण। (२) पूर्वभव कथन। मुनि उनके पूर्वभव बताते हैं। (३-१०) पूर्वभव-कथन। (११) प्रभावती के वैराग्य का कारण। (१२) पूर्वभव कथन। विद्याधरी का साँप के काटने का बहाना। (१३) विद्याधर का दवा लेने जाना। (१४) कुबेरकान्त का विमान स्खलित होना। श्रावक धर्म का उपदेश। (१५) मुनियों के सम्मान के बाद प्रस्थान। (१६) रतिषेण मुनि की वन्दना। (१७) कुबेरप्रिया का दीक्षा ग्रहण करना। (१८) पूर्वभव कथन।(१९) तलवर भृत्य का आर्यिका से प्रतिशोध। उसे जला दिया। (२०) प्रजा की करुण प्रतिक्रिया। (२१) स्वर्णवर्मा विद्याधर का वहाँ पहुचना। (२२) मुनि की वन्दना। (२३) माली की कन्याओं द्वारा जैनधर्म स्वीकार करना। सुलोचना जय को पूर्वभव बताना जारी रखती है।

सन्धि ३१ 578-598

(१-६) मणिमाली देव का पूर्वभव स्मरण। (७) सुनार की कथा। (८) राजा गुणपाल की कहानी। (९) नवतोरण नाट्यमाली की कथा। (१०) वेश्या और सेठ का प्रेम। (११) वह सेठ का अपहरण करवाती है। (१२) हार की घटना। (१३) राजा द्वारा दण्ड और सेठ द्वारा क्षमायाचना। (१४) कामरूप धारण करने वाली अँगूठी। (१५) प्रतिमायोग में स्थित सेठ की परीक्षा। (१६) पुरदेवता का हस्तक्षेप। (१७) सेठ का तप करने का संकल्प। (१८) पूर्वजन्म संकेत। (१९) देव-मुनि संवाद। (२०) मुनि को केवलज्ञान, व्यन्तर देवियों का आना। (२१) व्रतधारण। (२२) राजा धर्मपाल को पुत्री का लाभ। (२३) पूर्वभव कथन। (२४-२८) नागदत्त का आख्यान। (२९) नागदत्त का नाग को वश में करना।

सन्धि ३२ 598-620

(१) जयकुमार के पूछने पर सुलोचना श्रीपाल का चरित कहती है। पुण्डरीकिणी नगरी में कुबेरश्री अपने पति के लिए चिन्तित है। महामुनि गुणपाल का आगमन। (२) वह वन्दना-भक्ति के लिए गयी। उसके पुत्र भी दूसरे रास्ते से वन्दना-भक्ति के लिए गये। उन्होंने जगपाल यक्ष का मेला देखा। (३) नर-नारी के जोड़े का नृत्य। (४) जोड़े का परिचय। श्रीपाल पुरुष रूप में नाचती हुई कन्या को पहचान लेता है, जो राजकन्या थी। एक चंचल घोड़ा उसे ले जाता है। (५) घोड़ा श्रीपाल को विजयार्ध पर्वत पर ले गया। (६) वेताल बताता है कि श्रीपाल ने पूर्वभव में उसकी पत्नी का अपहरण किया था। जगपाल यक्ष उसकी रक्षा करता है। (७) यक्ष का वेताल से द्वन्द्व। (८) वेताल कुमार को छोड़कर भाग जाता है। सरोवर में पानी पीने जाना। एक बाला से भेंट। (९) कुमार का वर्णन। (१०) कन्या अपने परिचय के साथ अपना संकट बताती है। (११) वह श्रीपाल को अपना पति मानती है, और अपना हाल बताती है। (१२) अशनिवेग ने उन्हें यहाँ लाकर छोड़ दिया है। (१३) श्रीपाल उनकी रक्षा का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेता है। विद्युद्वेगा को देखकर लड़कियाँ वन में भाग जाती हैं। (१४) विद्याधरी से कुमार की बातचीत। विद्याधरी उसे छिपाकर जाती है। भेरुण्ड पक्षी उसे ले जाता है। (१५) श्रीपाल को सिद्धकूट जिनालय के निकट छोड़कर पक्षी भागता है। जिनवर की स्तुति। (१६) सिद्धकूट के किवाड़ खुलना। वस्तुस्थिति का पता चलना। भोगावती से विवाह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का प्रस्ताव। (१७) भोगावती की श्रीपाल द्वारा निन्दा। पिता कुमार को प्रेत-वन में विद्या देता है। (१८) कुमार को सर्वोषधि विद्या की सिद्धि। कुमार वृद्ध को नवयुवा बना देता है, औषधि के प्रभाव से। (१९) एक वृद्धा स्त्री से भेंट। कुमार पत्थर उठाकर रखता है। (२०) वृद्धा बेर देती है। श्रीपाल उन्हें खाता है। (२१) कुमार अपना परिचय देता है। (२२) श्रीपाल का आत्मपरिचय। (२३) यौवन को प्राप्त वृद्धा अपना परिचय देती है। (२४) बप्पिला की प्रेमकथा। (२५) कुमार को मालूम हो जाता है कि वह अशनिवेग विद्याधर द्वारा यहाँ लाया गया है। (२६) विद्युद्वेगा का वियोग कथन। (२७) श्रीपाल की कथा की समाप्ति।

सन्धि ३३ 620-630

(१) जिनालय में जिनवर की स्तुति। (२) भोगावती आदि का वहाँ पहुँचना। (३) जिनेन्द्र भगवान् की स्तुति। विद्या सिद्ध करते हुए राजकुमार शिव की गर्दन टेढ़ी होना। (४) श्रीपाल उसके गले को सीधा कर देता है। राजा का कुमार के पास जाना। (५) जिनमन्दिर में पहुँचना। सुखोदय बावड़ी में पहुँचना। (६) सुखावती का काम। (७) अशनिवेग का आना। (८) अशनिवेग का आक्रमण। शत्रुसेना का उपद्रव। (९) विद्याधरियाँ क्रीड़ा कर अपने घर जाती हैं। (१०) उसिरावती के हिरण्यवर्मा की चिन्ता। श्रीपाल आपत्तियों में सफल उतरता है। (११) जिनेन्द्र की महिमा। (१२) श्रीपाल सुरक्षित रहता है। (१३) विद्याधरी का दुश्चरित।

सन्धि ३४ 630-639

(१) कमलावती का भूत से ग्रस्त होना। कुमार उसका भूत भगाता है। (२) पिता द्वारा विवाह का प्रस्ताव। (३) श्रीपाल का पानी लेने जाना। सुखावती नदी का पानी सुखा देती है। (४-५) श्रीपाल द्वारा सुखावती की प्रशंसा। दो विद्याधर भाइयों में द्वन्द्व युद्ध। (६) श्रीपाल के पास अन्तःपुर इकट्ठा होना। (७) श्रीपाल का वास्तविक रूप प्रकट होना। (८) सुखावती का रूठना। (९) सुखावती का प्रच्छन्न रूप में सुरक्षा का आश्वासन। (१०-११) मदोन्मत्त गज को वश में करना। (१२) श्रीपाल को विद्याधर कन्याओं की प्राप्ति।

सन्धि ३५ 639-651

(१) श्रीपाल का सुखावती के साथ घर के लिए प्रस्थान। घोड़े का दिखना। (२) घोड़े का वर्णन। (३) कुमार का तलवार से खम्भे पर आघात। (४) महानाग। (५) सर्प का रत्न बनना। (६) अन्य कन्याओं से विवाह। (७) सुखावती और धूमवेग। (८) दोनों का तुमुल युद्ध। मुग्धा सुखावती श्रीपाल को पहाड़ पर रखकर युद्ध करती है। (९-११) द्वन्द्व युद्ध। पूर्वभव की जननी द्वारा सुरक्षा। वह अपना परिचय देती है। (१२) सूर्यास्त का चित्रण। पंचणमोकार मन्त्र का महत्व। (१३) पानी में तिरती जिन भगवन् की प्रतिमा। उसे स्थापित कर अभिषेक। (१४) यक्षिणी द्वारा अनेक उपहार। विद्याधरी द्वारा राजा पर उपसर्ग। (१५) पुण्डरीकिणी नगरी की ओर प्रस्थान। (१६) स्कन्धावार का वर्णन। माता पुत्र से वैभव का कारण पूछती है। (१७-१८) सुखावती की प्रशंसा।

सन्धि ३६ 651-666

(१) सुखावती द्वारा सास को नमस्कार। विवाह। (२) सुखावती द्वारा अपने पिता को यशस्वती आदि का वृत्तान्त सुनाना। उसका मान करना। (३) विद्याधर का पत्र लेकर आना। अकम्पन का आगमन। (४) अतिथियों का आगत-स्वागत। (५) सुखावती का आक्रोश। यशस्वती से ईर्ष्या। (६) श्रीपाल द्वारा अपना वृतान्त कहना। (७) हरिकेतु को पट्ट बाँधना। (८) सुखावती और यशस्वती की स्पर्धा। (९) यशस्वती के सौभाग्य का कथन। (१०) सेठ का निवेदन। (११) गुणपाल का जन्म। (१२) अतिशयों से युक्त तीर्थंकर हुए। (१३) मोक्ष की प्राप्ति। (१४) जयकुमार की विरक्ति। (१५) नन्दनवन आदि की तीर्थयात्रा। (१६) हिमगिरि पर्वत पर। (१७) तडित्मालिनी का अपना परिचय। (१८-२०) तीर्थंकरों की वन्दना।

सन्धि ३७ 667-687

(१) सुन्दरी द्वारा चैत्य-वन्दना। (२) जयकुमार द्वारा मुनियों की वन्दना। (३) ऋषभनाथ व गणधर वृषभसेन के दर्शन। (४) ऋषभ जिन की स्तुति। (५) विभिन्न उदाहरण। (६) जयकुमार दम्पति द्वारा स्तुति। (७) जय का तप धारण करने का आग्रह। (८) पूर्वभव स्मरण। (९) दूसरों के द्वारा अनुकरण। (१०) पूर्वभव कथन। सुलोचना द्वारा तपश्चर्या ग्रहण। (११) विद्याओं का परित्याग। (१२) ऋषभ का उपदेश और जय के निर्वाण प्राप्त करने की भविष्यवाणी। (१३) भविष्य कथन। (१४) भरत द्वारा वन्दना। (१५-१७) तत्त्व-कथन। (१८) ऋषभ जिन का कैलाश पर पहुँचना। (१९) भरत का अष्टापद शिखर पर जाना। (२०) ऋषभ को मोक्ष। (२१) देवताओं द्वारा ऋषभजिन के पाँचवें कल्याणक की पूजा। (२२) अग्निसंस्कार। (२३) भरत का अनुताप। (२४) भरत द्वारा स्तुति। (२५) भरत को मोक्ष।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदिपुराण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ॐ नमः ॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।
एसो पंचणमोक्कारो। सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं।

सन्धि १

१

सिद्धिरूपी वधू के मन का रंजन करनेवाले, अत्यन्त निरंजन (पापों से रहित), विश्वरूपी कमल-सरोवर के सूर्य, विघ्नों का नाश करनेवाले, तथा अनुपम मत-वाले ऋषभनाथ को मैं प्रणाम करता हूँ। जो अच्छी तरह परीक्षित हैं, जिन्होंने पृथ्वी-जलादि पाँच महाभूतों के विस्तार की रक्षा की है, जिनका शरीर दिव्य और पाँच सौ धनुष ऊँचा है, जिन्होंने शाश्वत पदरूपी (मोक्ष) नगर का पथ प्रकट किया है, जिन्होंने पर-मतों के एकान्त प्रमाणों का नाश किया है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

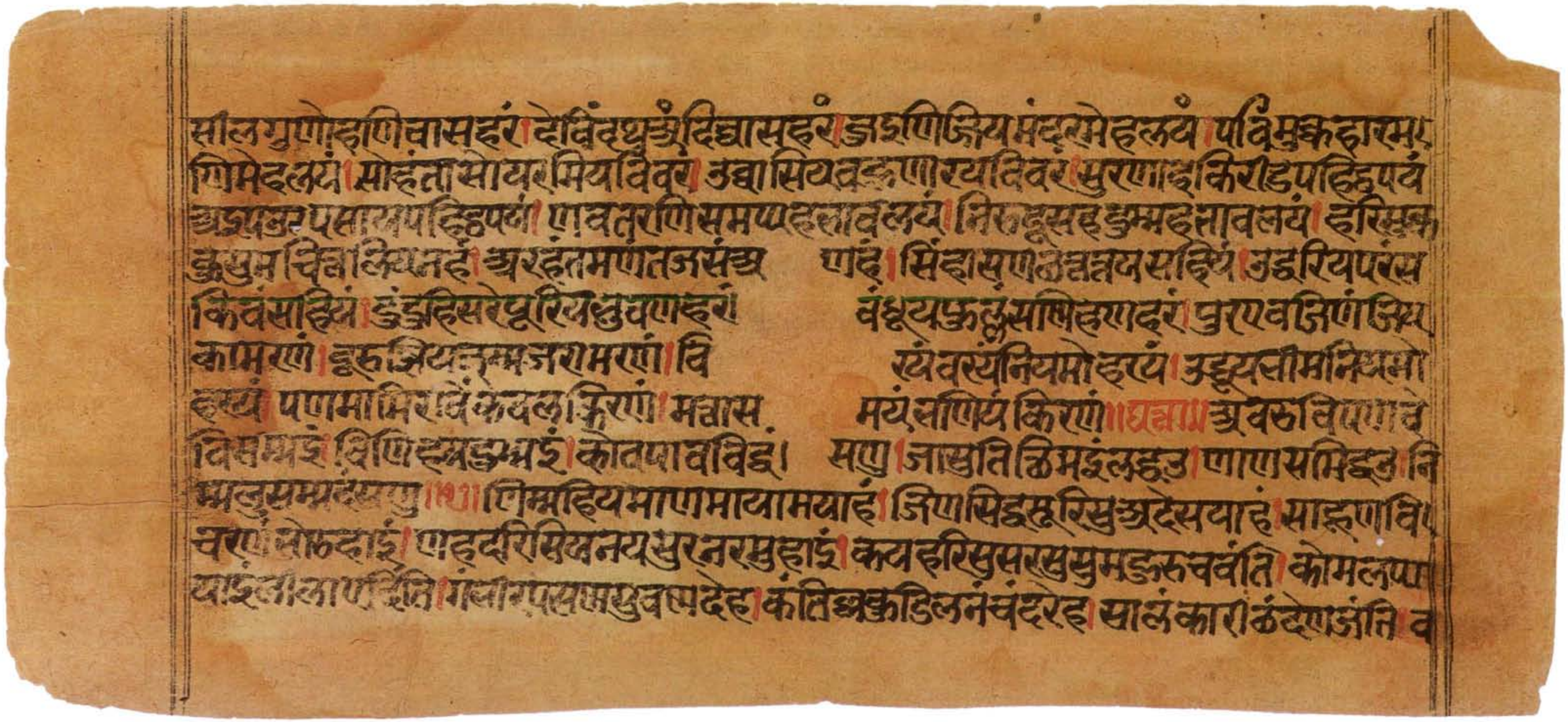

जो शुभशील और गुण-समूह के निवास-गृह हैं, जो देवों के द्वारा संस्तुत और दिशारूपी वस्त्र धारण करनेवाले (दिगम्बर) हैं, जिन्होंने अपनी कान्ति से मन्दराचल की मेखला को जीत लिया है, जिन्होंने हार और रत्न-मालाओं का परित्याग किया है, जो क्रीड़ारत श्रेष्ठ पक्षियों से युक्त अशोकवृक्ष से शोभित हैं, जिन्होंने अनेक नरकरूपी बिलों को उखाड़ दिया है, जिनके चरण देवेन्द्रों के मुकुटों से घर्षित हैं, जिन्होंने प्रचुर प्रसादों से प्रजाओं को आनन्दित किया है, जिनका प्रभामण्डल नवसूर्य की प्रभा के समान है और जो (प्रमाणहीन होने के कारण) अत्यन्त असह्य, मिथ्यागम के भावों का अन्त करनेवाले हैं, जिनके कारण इन्द्र के द्वारा बरसाये गये पुष्पों से आकाश पुष्पित और चित्रित है, जो अनन्त यशवाले, पाप से रहित अर्हत् हैं, सिंहासन और तीन छत्रों से युक्त हैं, जो मिथ्यावादियों का नाश करनेवाले कृपालु तथा हितकारी हैं, जो दुन्दुभियों के स्वर से विश्वरूपी घर को आपूरित करनेवाले हैं, जिनके नख दुपहरिया पुष्पों के समान आरक्त हैं, जो कामदेव से युद्ध जीत चुके हैं, जिन्होंने जन्म, जरा और मृत्यु को दूर से छोड़ दिया है, जो मल से रहित और वर-दाता हैं, जो नियमों (व्रतों) के समूह में लीन हैं, जिन्होंने अपनी मोहरूपी भीषण रज को नष्ट कर दिया है, और जो मत्तासमय (मात्रा परिग्रह को शान्त करनेवाले — मात्रा समय छन्द) कहे जाते हैं, ऐसे केवलज्ञानरूपी किरणों से युक्त सूर्य जिन-भगवान् को मैं प्रणाम करता हूँ।

घत्ता—और भी मैं (कवि पुष्पदन्त), जिन्होंने दुर्गति का नाश कर दिया है ऐसे, तथा क्रोधरूपी पाप का नाश करनेवाले सन्मतिनाथ को प्रणाम करता हूँ कि जिनके तीर्थकाल में ज्ञान से समृद्ध पवित्र सम्यग्दर्शन को मैंने प्राप्त किया॥ १ ॥

२

मान, माया और मदरूपी पापों का नाश करनेवाले, अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधुओं के, आकाश में देवताओं के मुखों को प्रणत दिखानेवाले, चरणकमलों में मैं कवि (पुष्पदन्त) प्रणाम करता हूँ। जो (सरस्वती) हर्ष उत्पन्न करनेवाला सरस और मधुर बोलती हैं, जो अपने कोमलपदों (चरणों, पादों) से लीलापूर्वक चलती हैं, जो गम्भीर, प्रसन्न और सोने के समान शरीरवाली हैं, मानो कान्तिमयी कुटिल चन्द्रलेखा हो; चन्द्रलेखा कान्ति से युक्त और कुटिल होती है, सरस्वती भी स्वर्ण देहवाली होने से कान्तिमयी एवं कुटिल (वक्रोक्ति संयुक्त) है। जो अलंकारों से युक्त और छन्द के द्वारा चलती है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो बहुत-से शास्त्रों के अर्थगौरव को धारण करती है, जो चौदह पूर्वों और बारह अंगों से युक्त है, जो जिनमुख से निकली हुई सप्तभंगी से सहित है, जो ब्रह्मा के मुख में निवास करनेवाली एवं शब्दयोनिजा है, जो निश्रेयस् की युक्ति और सौन्दर्य की भूमि है, जो दु:खों का क्षय करनेवाली और सुख की खदान है, ऐसी दिव्यवाणी सरस्वती देवी को प्रणाम कर मैं धर्मानुशासन के आनन्द से भरे हुए, तथा पाप से रहित नाभेय-चरित (आदिनाथ के चरित) का वर्णन करता हूँ।

घत्ता—जिस (आदिपुराण) चरित्र को सुनने से मनुष्य को सुखों के समूह और त्रिभुवन को क्षुब्ध करनेवाले सुन्दर पाँच कल्याण प्राप्त होते हैं, तथा पदार्थों को जाननेवाले प्रशस्त पाँचों ज्ञान उत्पन्न होते हैं॥ २॥

३

मैं विश्व में सुन्दर प्रसिद्ध नाम महापुराण का सिद्धार्थ वर्ष में वर्णन करता हूँ। जहाँ (मेलपाटी नगर में) चोलराजा के केशपाशवाले भ्रूभंग से भयंकर सिर को नष्ट करनेवाला, विश्व में एकमात्र सुन्दर राजाधिराज महानुभाव तुडिग (कृष्ण तृतीय) राजा विद्यमान है। दीनों को प्रचुर स्वर्णसमूह देनेवाले ऐसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उस मेलपाटि नगर में धरती पर भ्रमण करता हुआ, खलजनों की अवहेलना करनेवाला, गुणों से महान् कवि पुष्पदन्त कुछ ही दिनों में पहुँचा। दुर्गम और लम्बे पथ के कारण क्षीण, नवचन्द्र के समान शरीर से दुबला-पतला वह, जिसके आम्रवृक्ष के गुच्छों पर तोते इकट्ठे हो रहे हैं और जिसका पवन वृक्ष-कुसुमों के पराग से रंजित है ऐसे नन्दनवन में जैसे ही विश्राम करता है वैसे ही वहाँ दो आदमी आये। प्रणाम कर उन्होंने इस प्रकार कहा — ''हे पाप के अंश को नष्ट करनेवाले कवि खण्ड (पुष्पदन्त कवि), परिभ्रमण करते हुए भ्रमरों के शब्दों से गूँजते हुए इस एकान्त उपवन में तुम क्यों रहते हो?

हाथियों के स्वरों से दिशामण्डल को बहरा बना देनेवाले इस विशाल नगरवर में क्यों नहीं प्रवेश करते?'' यह सुनकर अभिमानमेरु पुष्पदन्त कवि कहता है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

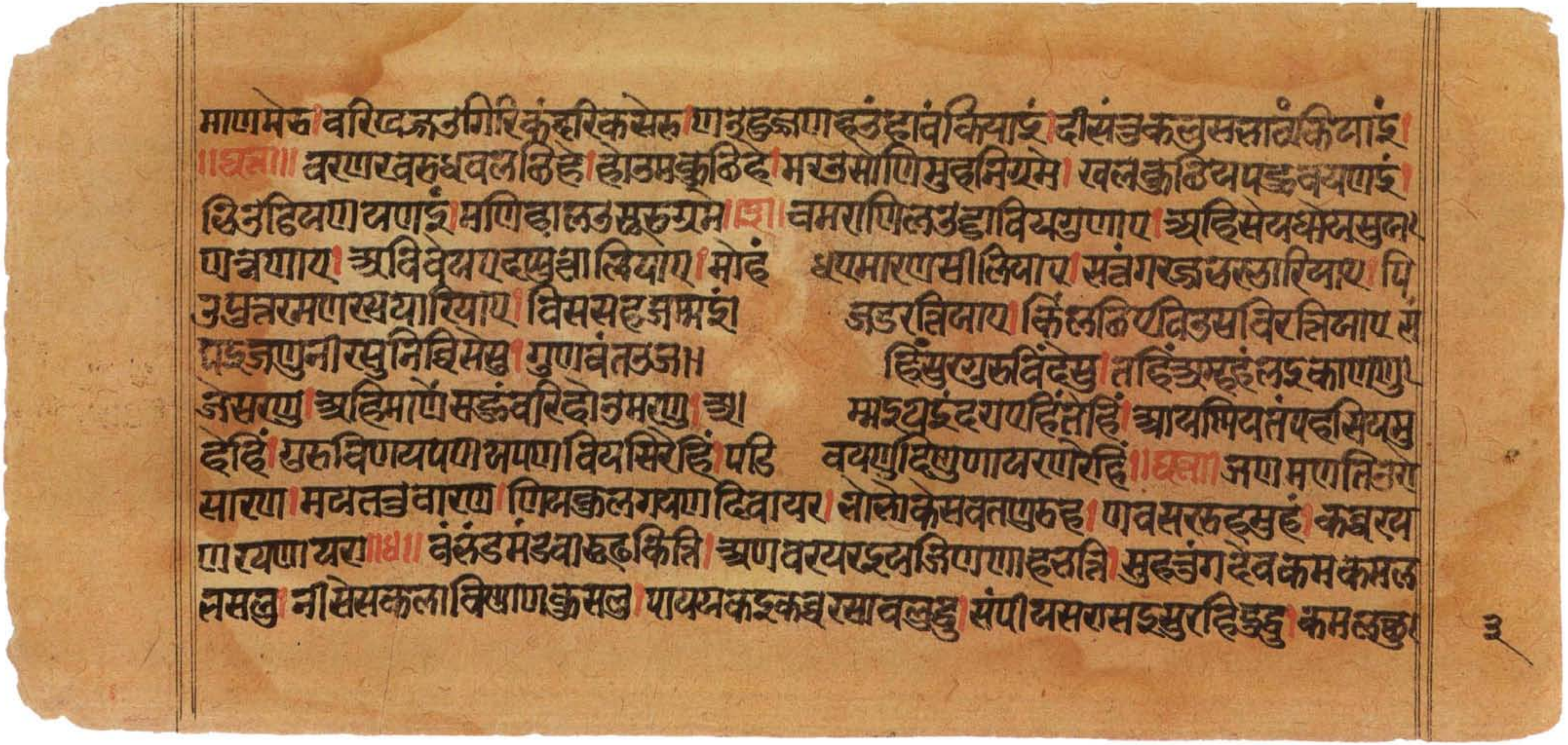

''पहाड़ की गुफा में घास खा लेना अच्छा, परन्तु कलुषभाव से अंकित, दुर्जनों की टेढ़ी भौंहें देखना अच्छा नहीं।

घत्ता—अच्छा है श्रेष्ठ मनुष्य, धवल आँखोंवाली उत्तम स्त्री की कोख से जन्म न ले, या गर्भ से निकलते ही मर जाये, लेकिन यह अच्छा नहीं कि वह टेढ़ी आँखोंवाले, दुष्ट और भद्दे प्रभु-मुखों को सवेरे-सवेरे देखे ॥ ३ ॥

४

जो चामरों की हवा से गुणों को उड़ा देती है, अभिषेक के जल से सुजनता को धो देती है, जो अविवेकशील है, दर्प से उद्धत है, मोह से अन्धी और दूसरों को मारने के स्वभाववाली है, जो सप्तांग राज्य के भार से भारी है, जो पुत्र और पिता के साथ रमणरूपी रस में समानरूप से आसक्त है, जिसका जन्म कालकूट (विष) के साथ हुआ है, जो जड़ों में अनुरक्त है और विद्वानों से विरक्त है, ऐसी लक्ष्मी से क्या? सम्पत्ति में मनुष्य सब प्रकार से नीरस होता है, जहाँ गुणवान तक द्वेष्य होता है, वहाँ हमारे लिए तो वन ही शरण है। (कम-से-कम) स्वाभिमान के साथ मृत्यु का होना अच्छा।'' यह सुनकर अम्मइया और इन्द्रराज दोनों नागरनरों ने हँसते हुए भारी विनय और प्रणति से अपने सिरों को झुकाते हुए यह प्रत्युत्तर दिया—

घत्ता—जनमनों के अन्धकार को दूर करनेवाले, मदरूपी वृक्ष के लिए गज के समान, अपने कुलरूपी आकाश के सूर्य, नवकमल के समान मुखवाले, काव्यरूपी रत्नों के लिए रत्नाकर, हे केशवपुत्र (पुष्पदन्त) ॥ ४ ॥

५

जिसकी कीर्ति ब्रह्माण्डरूपी मण्डप में व्याप्त है, जो अनवरत रूप से जिनभगवान् की भक्ति रचता रहता है, जो शुभ तुंगदेव (कृष्ण) के चरणरूपी कमलों का भ्रमर है, समस्त कलाओं और विज्ञान में कुशल है, जो प्राकृत कृतियों के काव्यरस से अवबुद्ध है, जिसने सरस्वतीरूपी गाय का दुग्धपान किया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो कमलों के समान नेत्रवाला है, मत्सर से रहित, सत्यप्रतिज्ञ, युद्ध के भार की धुरा को धारण करने में अपने कन्धे ऊँचे रखनेवाला है, जो विलासवती स्त्रियों के हृदयों का चोर है, और अत्यन्त प्रसिद्ध महाकवियों के लिए कामधेनु के समान है, जो अकिंचन और दीनजनों की आशा पूरी करनेवाला है, जिसने अपने यश के प्रसार से दसों दिशाओं को प्रसाधित किया है, जो परस्त्रियों से विमुख है, जो शुद्ध स्वभाव और उन्नत मतिवाला है, जिसका स्वभाव सुजनों का उद्धार करना है, जिसका सिर गुरुजनों के चरणों में प्रणत रहता है, जिसका शरीर श्रीमती अम्बादेवी की कोख से उत्पन्न हुआ है, जो अम्मइया के पुत्र का पुत्र है, प्रशस्त जो हाथी के समान, दान (दान और मदजल) से उल्लसित दीर्घ हस्त (सूँड और हाथ) वाला है, जो महामंत्री वंश का गम्भीर ध्वजपट है, जिसका शरीर श्रेष्ठ लक्षणों से अंकित है, जो दुर्व्यसनरूपी सिंहों के संहार के लिए श्वापद के समान है, ऐसे भरत नाम के व्यक्ति को क्या आप नहीं जानते?

घत्ता—आओ उसके घर चलें, नेत्रों को आनन्द देनेवाला वह सुकवियों के कवित्व को अच्छी तरह जानता है। गुणसमूह से सन्तुष्ट होनेवाला वह, त्रिभुवन में भला है और निश्चय ही वह तुम्हारा सम्मान करेगा॥ ५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

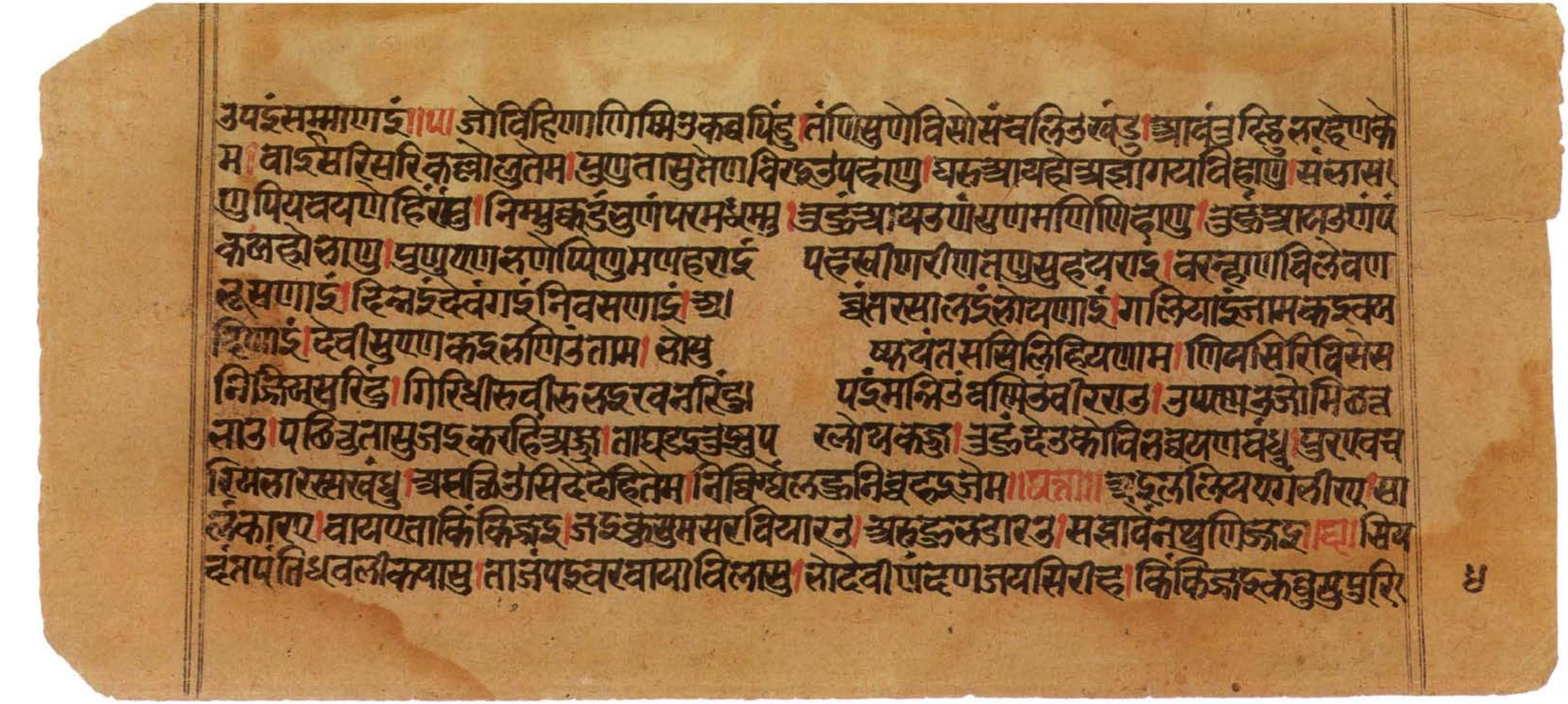

६

जिसे विधाता ने काव्य-शरीर बनाया है, ऐसा खण्डकवि पुष्पदन्त यह सुनकर चला। आते हुए भरत ने उसे इस प्रकार देखा जैसे सरस्वतीरूपी नदी की लहर हो। फिर उसने घर आये हुए उस (पुष्पदन्त) का प्रमुख अतिथि-सत्कार विधान किया तथा प्रिय शब्दों में सुन्दर सम्भाषण किया—"तुम मानो दम्भ से रहित परमधर्म हो, तुम आये अर्थात् गुणरूपी मणियों का समूह आ गया, तुम आ गये अर्थात् कमलों के लिए सूर्य आ गया।" इस प्रकार पथ से थके और दुर्बल शरीर के लिए शुभकर सुन्दर वचन कहकर उसने (भरत ने) उन्हें उत्तम स्नान, विलेपन, भूषण, देवांग वस्त्र तथा अत्यन्त स्वादिष्ट भोजन दिया। जब कुछ दिन बीत गये, तो देवीसुत (भरत) ने कहा—'चन्द्रमा के समान प्रसिद्ध नाम हे पुष्पदन्त, अपनी लक्ष्मी विशेष से देवेन्द्र को जिसने जीता है, ऐसा गिरि की तरह धीर और वीर भैरवराजा है। तुमने उस वीर राजा को माना है और उसका वर्णन किया है (उस पर किसी काव्य की रचना की है) इससे जो मिथ्यात्व उत्पन्न हुआ है यदि तुम आज उसका प्रायश्चित्त करते हो तो तुम्हारा परलोक-कार्य सध सकता है। तुम भव्यजनों के लिए बन्धुस्वरूप कोई देव हो। तुमसे अभ्यर्थना की जाती है (मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ) कि तुम पुरुदेव (आदिनाथ) के चरितरूपी भार को इस प्रकार कंधा दो जिससे वह बिना किसी विघ्न के समाप्त हो जाये।

घत्ता—उस वाणी से क्या? अत्यन्त सुन्दर गम्भीर और अलंकारों से युक्त होने पर भी जिससे, कामदेव का नाश करनेवाले आदरणीय अर्हत् की सद्भाव के साथ स्तुति नहीं की जाती॥ ६॥

७

तब, अपनी सफेद दन्त-पंक्ति से दिशाओं को धवलित करनेवाला और वरवाणी से विलास करनेवाला पुष्पदन्त कवि कहता है—"विजयरूपी लक्ष्मी की इच्छा रखनेवाले पुरुषसिंह देवीनन्दन (भरत) काव्य की रचना क्यों की जाये?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

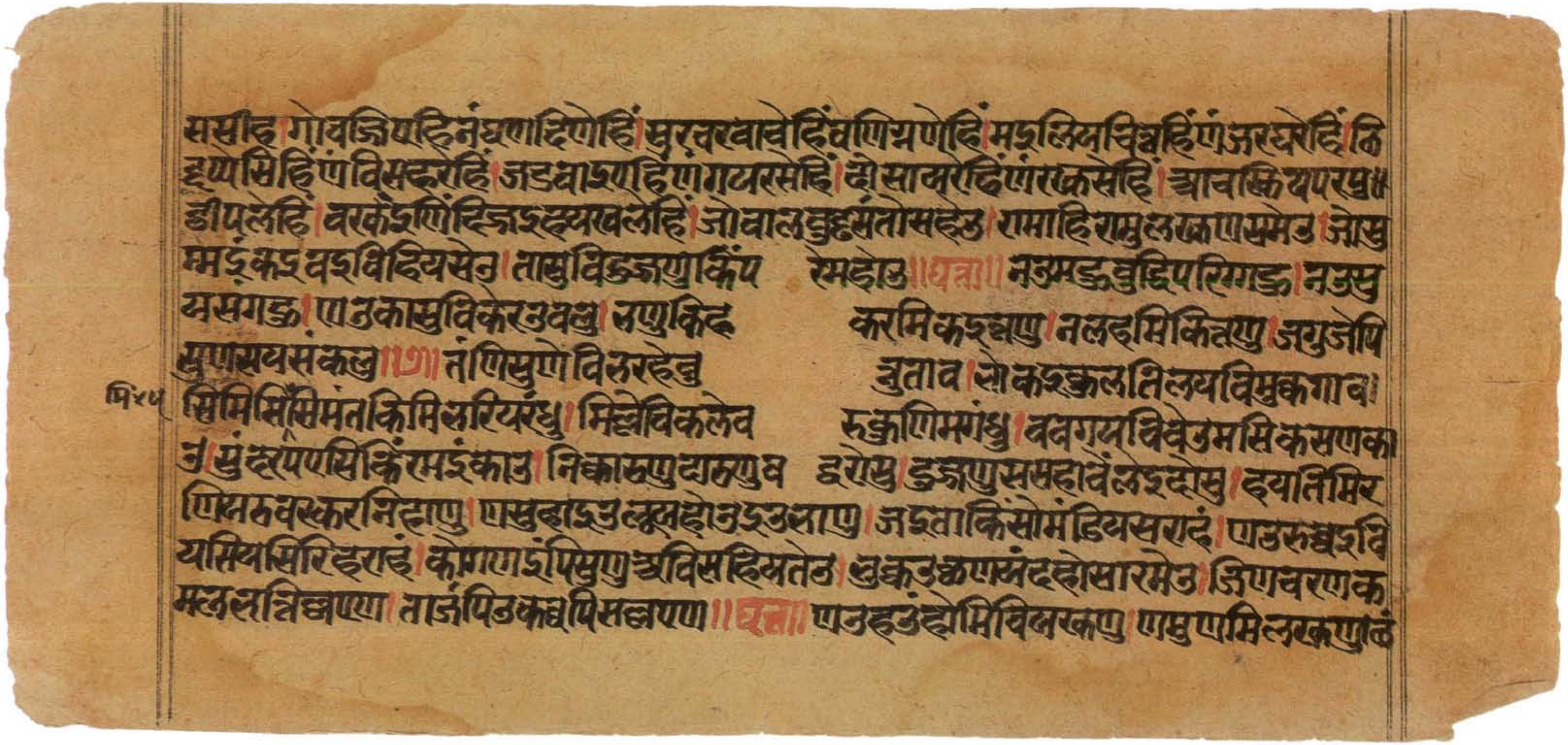

जहाँ हत दुष्टों के द्वारा श्रेष्ठ कवि की निन्दा की जाती है, जो मानो (दुष्ट) मेघ दिनों की तरह गो (वाणी/सूर्यकिरणों) से रहित हैं (गो वर्जित), जो मानो इन्द्रधनुषों की तरह निर्गुण (दयादि गुणों/डोरी से रहित) हैं, जो मानो (काले) बादलों तरह मैले चित्तोंवाले हैं। जो मानो विषधरों की तरह छिद्रों का अन्वेषण करनेवाले हैं, जो मानो जड़वादियों की तरह गतरस हैं, जो मानो राक्षसों की तरह दोषों के आकर हैं, तथा दूसरों की पीठ का मांस भक्षण करनेवाले (पीठ पीछे चुगली करनेवाले) हैं, जो (प्रवरसेन द्वारा विरचित सेतुबन्ध काव्य) बालकों और वृद्धों के सन्तोष का कारण है, जो राम से अभिराम और लक्ष्मण से युक्त है, और कइवइ (कपिपति=हनुमान्, कविपति=राजा प्रवरसेन) के द्वारा विहित सेतु (जिसमें सेतु—पुल रचा गया हो) सुना जाता है ऐसे उस सेतुबन्ध काव्य का क्या दुर्जन शत्रु नहीं होता? (अर्थात् होता ही है)।

घत्ता—न तो मेरे पास बुद्धि का परिग्रह है, न शास्त्रों का संग्रह है, और न ही किसी का बल है, बताओ मैं किस प्रकार कविता करूँ? कीर्ति नहीं पा सकता, और यह विश्व सैकड़ों दुष्टजनों से संकुल है"॥ ७॥

८

यह सुनकर, तब महामन्त्री भरत ने कहा—"हे गर्वरहित कविकुलतिलक, बिलबिलाते हुए कृमियों से भरे हुए छिद्रोंवाले सड़ी गन्ध से युक्त शरीर को छोड़कर, विवेकशून्य स्याही की तरह काले शरीरवाला कौआ, क्या सुन्दर प्रदेश में रमण करता है? अत्यन्त करुणाहीन, भयंकर और क्रोध बाँधनेवाला दुर्जन स्वभाव से ही दोष ग्रहण करता है। अन्धकारसमूह को नष्ट करनेवाला और श्रेष्ठ किरणों का निधान, तथा उगता हुआ सूर्य यदि उल्लू को अच्छा नहीं लगता तो क्या सरोवरों को मण्डित करनेवाले तथा विकास की शोभा धारण करनेवाले कमलों को भी वह अच्छा नहीं लगता? तेज को सहन नहीं करनेवाले दुष्ट की गिनती कौन करता है? कुत्ता चन्द्रमा पर भौंका करे।" तब जिनवर के चरणकमलों के भक्त काव्यपण्डित (पुष्पदन्त) ने कहा—

घत्ता—"मैं पण्डित नहीं हूँ, मैं लक्षणशास्त्र (व्याकरण शास्त्र) नहीं समझता। छन्द और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

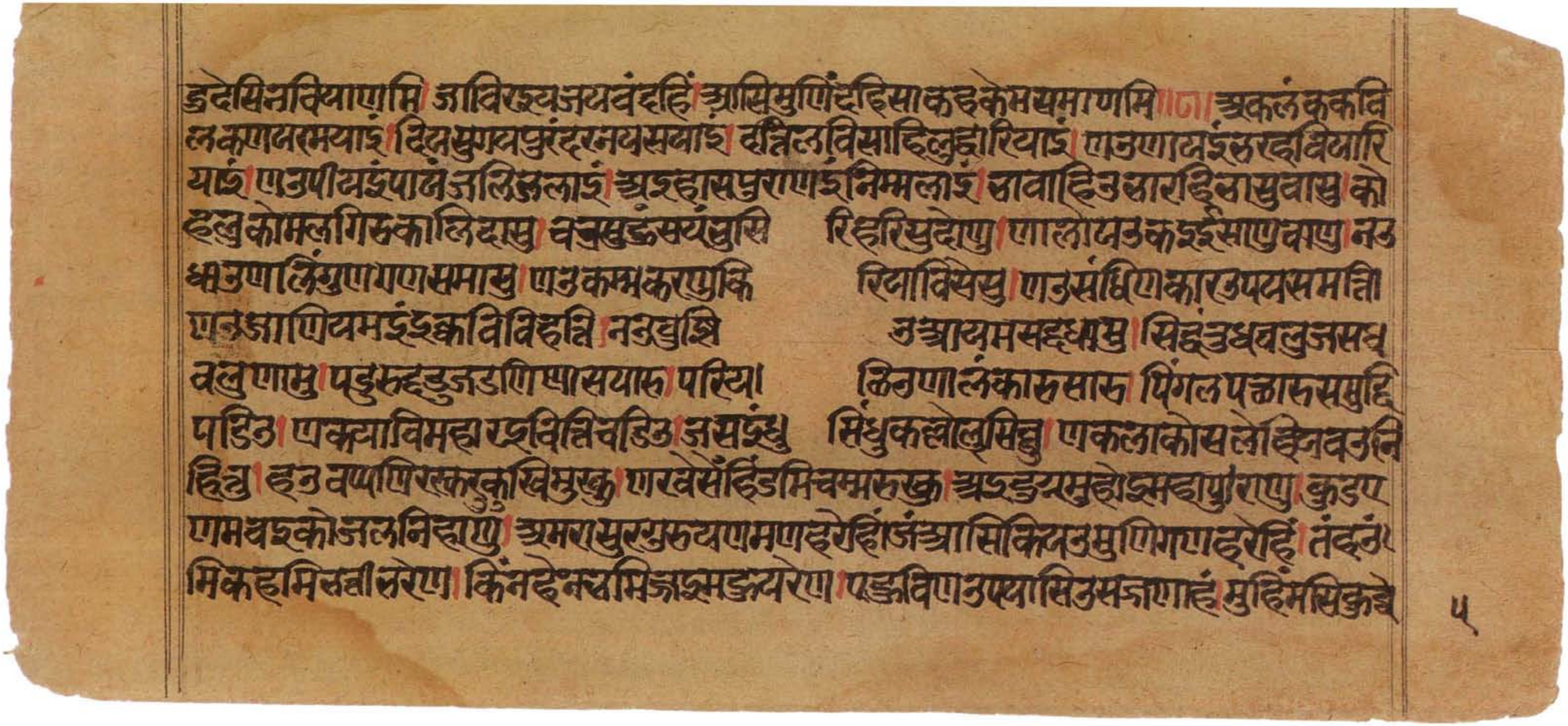

देशी को नहीं जानता और जो कथा विश्ववन्द्य मुनीन्द्रों के द्वारा विरचित है उसका मैं किस प्रकार वर्णन करूँ?॥८॥

९

अकलंक (जैनाचार्य), कपिल (सांख्यदर्शन के प्रवर्तक), कणयर (कणाद—वैशेषिक दर्शन के प्रवर्तक) के मतों, द्विज (वेदपाठी-कर्मकाण्डी), सुगत (बौद्ध) और इन्द्र (चार्वाक) के सैकड़ों नयों, दत्तिल और विसाहिल के द्वारा रचित संगीतशास्त्र और भरत मुनि के द्वारा विचारित नाट्यशास्त्र को मैंने ज्ञात नहीं किया। पतंजलि के भाष्यरूपी जल को मैंने नहीं पिया। निर्मल इतिहास और पुराण, भावाधिप भारवि, भास, व्यास, कोहल, कोमलवाणीवाले कालिदास, चतुर्मुख, स्वयम्भू, श्रीहर्ष, द्रोण, कवि ईशान और बाण का भी मैंने अवलोकन नहीं किया। न मैंने धातु, लिंग, गण, समास, न कर्म, करण, क्रियानिवेश, न सन्धि, कारक और पद-समाप्ति का, और न ही मैंने एक भी विभक्ति का ज्ञान प्राप्त किया। शब्दों के धाम, सिद्धान्तग्रन्थ धवल और जयधवल आगमों को भी मैंने नहीं समझा। जड़ता का नाश करनेवाले कुशल रुद्रट और उनके अलंकारसार को भी मैंने नहीं देखा। न मैं पिंगल प्रस्तार के समुद्र में पड़ा। और न ही कभी यश से चिह्नित लहरों से सिक्त सिन्धु मेरे चित्त पर चढ़ा। और न मैंने कलाकौशल में अपने मन को लगाया। मैं बेचारा जन्मजात मूर्ख हूँ। चर्म से आच्छादित वृक्ष (ढूँठ)-सा मनुष्य के रूप में घूम रहा हूँ। महापुराण अत्यन्त दुर्गम होता है, घड़े से समुद्र को कौन माप सकता है? देवों, असुरों और गुरुजनों के लिए सुन्दर मुनियों एवं गणधरों ने जिस महापुराण की रचना की है, मैं भी भक्तिभाव से भरकर उसकी रचना करता हूँ। क्या आकाश में भ्रमर के द्वारा न घूमा जाये (क्या वह भ्रमण न करे)? यह विनय मैंने सज्जन लोगों के प्रति की है, दुर्जनों के मुख पर तो मैंने स्याही की कूँची ही फेरी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

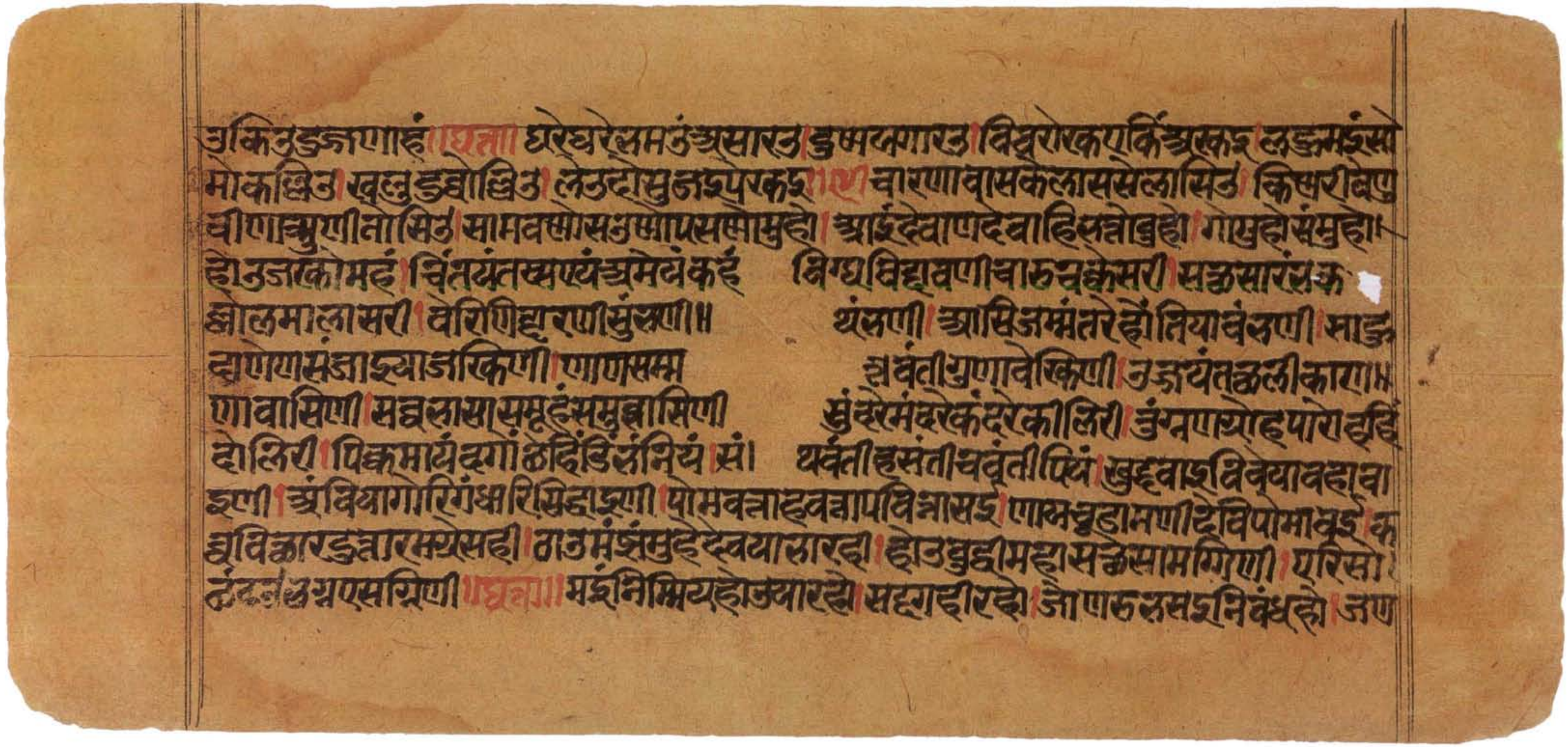

घत्ता—घर-घर में घूमता हुआ असार दुर्नय करनेवाला दुष्ट परोक्ष में क्या कहता है? खोटे बोलनेवाले दुष्ट को लो मैं मुक्त करता हूँ। यदि उसे दोष दिखाई देता है तो वह उसे ग्रहण करे॥ ९॥

१०

जो मुनीश्वरों के निवासस्थान कैलास पर्वत के शिखर पर निवास करता है, किन्नरियों की वेणु-वीणाओं की ध्वनियों से सन्तुष्ट होता है, जो श्यामवर्ण पुण्यात्मा प्रसन्न शुभ है, आदिदेव ऋषभ का देवाधिभक्त और बुध है, ऐसा वह गोमुख यक्ष इस अप्रमेय कथा का चिन्तन करते हुए मेरे सम्मुख हो। जो विघ्नों का नाश करनेवाली, शास्त्रों के साररूपी जलों की कल्लोलमालाओं पर चलनेवाली, शत्रुओं का विदारण करनेवाली, जन्मान्तर में हिंसा करनेवाली और स्तम्भन विद्यावाली ब्राह्मणी थी, जो साधुदान के कारण, सम्यक्दर्शन और ज्ञान से युक्त, गुणों की अपेक्षा करनेवाली यक्षिणी हुई। जो गिरिनार पर्वत पर निवास करनेवाली सर्वभाषासमूह को प्रकाशित करनेवाली, ऊँचे वटवृक्षों पर निवास करनेवाली, हँसती हुई और प्रिय बोलनेवाली है। जो क्षुद्रवादियों के विवेक का अपघात करनेवाली, वादिनी, अम्बिका, गौरी, गान्धारी, सिद्धायनी तथा कमलपत्रों के समान मुखवाली, पवित्र सती, ज्ञान की चूड़ामणि, पद्मावतीदेवी पवित्र सती हैं, ऐसी वह, मेरे काव्य-विस्तार के इस दुस्तर मार्ग में सहायक हो, देवी भारती मेरे मुख में स्थित हो। मेरी बुद्धि महाशास्त्रों की सामग्री से सहित हो।'' इस प्रकार का छन्द सर्गिणी छन्द कहा जाता है।

घत्ता—''मेरे द्वारा रचित उदार शब्द से गम्भीर निबन्ध (महाकाव्य) की जो मनुष्य निन्दा करता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

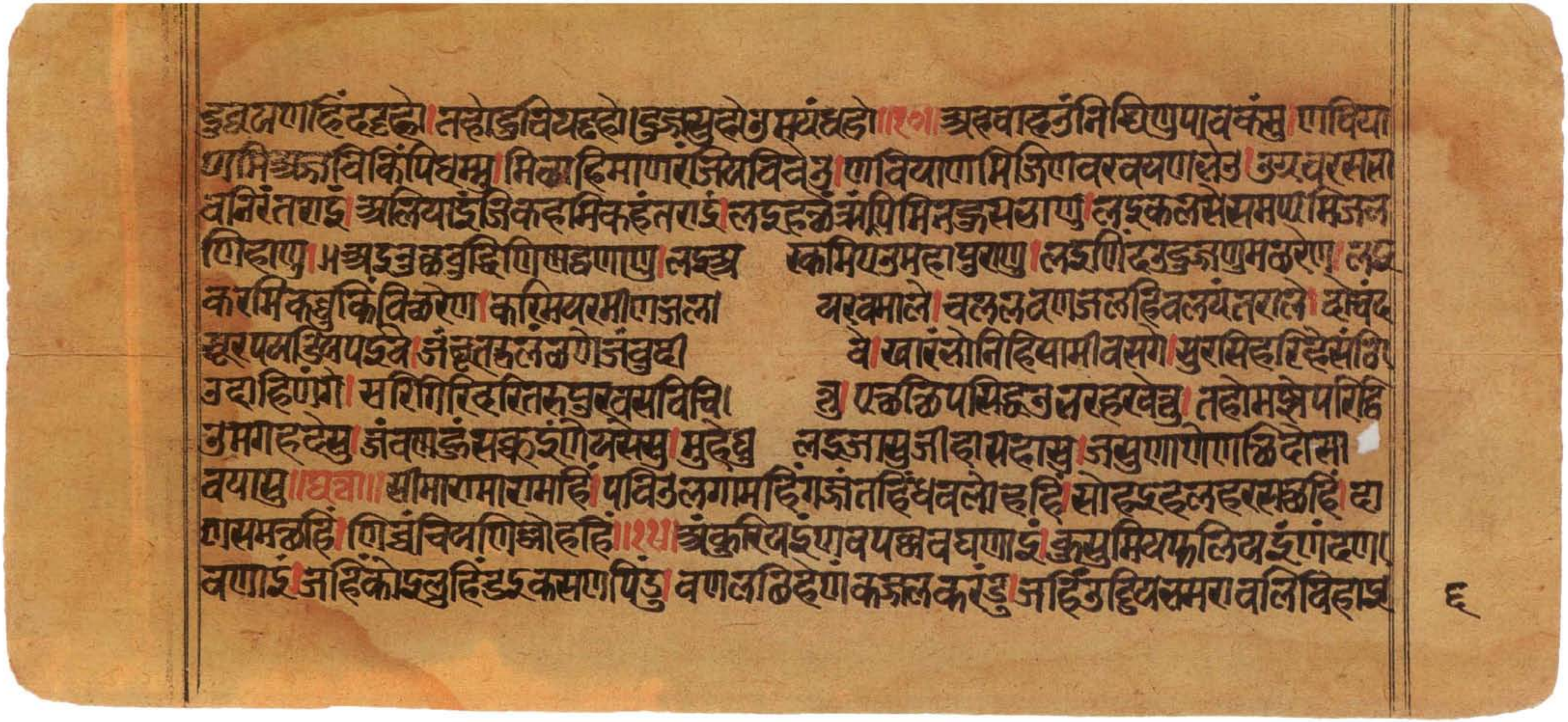

जनता के दुर्वचनों से दग्ध उस मदान्ध दुर्विदग्ध को (दुनिया में) अपयश मिले॥ १०॥

११

अथवा मैं अदय और पापकर्मा हूँ, मैं आज भी कुछ भी धर्म नहीं जानता। मिथ्यात्व के सौन्दर्य से रंजित विवेकवाला मैं जिनवर के वचनों के रहस्य को नहीं जानता। मैं अनवरत रसभाव उत्पन्न करनेवाले झूठे कथान्तरों को कहता रहा हूँ। लो मैं सूर्य से सहित आकाश को अपने हाथ से ढँकना चाहता हूँ। लो मैं समुद्र को घड़े में बन्द करना चाहता हूँ। मैं तुच्छ बुद्धि और नष्टज्ञान हूँ, (फिर भी) लो यह महापुराण कहता हूँ। लो दुर्जन ईर्ष्या से निन्दा करे। लो मैं काव्य करता हूँ। विस्तार से क्या?" जलगजों, मगरों, मत्स्यों और जलचरों के कोलाहल से व्याप्त चंचल लवण समुद्र के वलय में स्थित, दो-दो सूर्यों और चन्द्रों से आलोकित होनेवाले तथा जम्बुवृक्षों से शोभित जम्बूद्वीप है। उसमें सुमेरुपर्वत के, लवणसमुद्र की समीपता करनेवाले, दक्षिणभाग में, प्रसिद्ध भरत क्षेत्र है, जो नदियों, पहाड़ों, घाटियों, वृक्षों और नगरों से विचित्र है। उसके मध्य में मगध देश प्रतिष्ठित है, शेषनाग भी उसका वर्णन नहीं कर सकता, यद्यपि उसके मुँह में हजार जीभें चलती हैं, और उसके ज्ञान में दोष के लिए जरा भी गुंजाइश नहीं है।

घत्ता—वह मगध देश, सीमाओं और उद्यानों से हरे-भरे बड़े-बड़े गाँवों, गरजते हुए वृषभ-समूहों, और दान देने में समर्थ लोभ से रहित कृषकसमूहों से नित्य शोभित रहता है॥ ११॥

१२

जिसमें अंकुरित, नये पत्तों से सघन फूलों और फलोंवाले नन्दनवन हैं। जिसमें काले शरीरवाला कोकिल घूमता है मानो जो वनलक्ष्मी के काजल का पिटारा हो, जहाँ उड़ती हुई भौंरों की कतार ऐसी शोभित होती है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

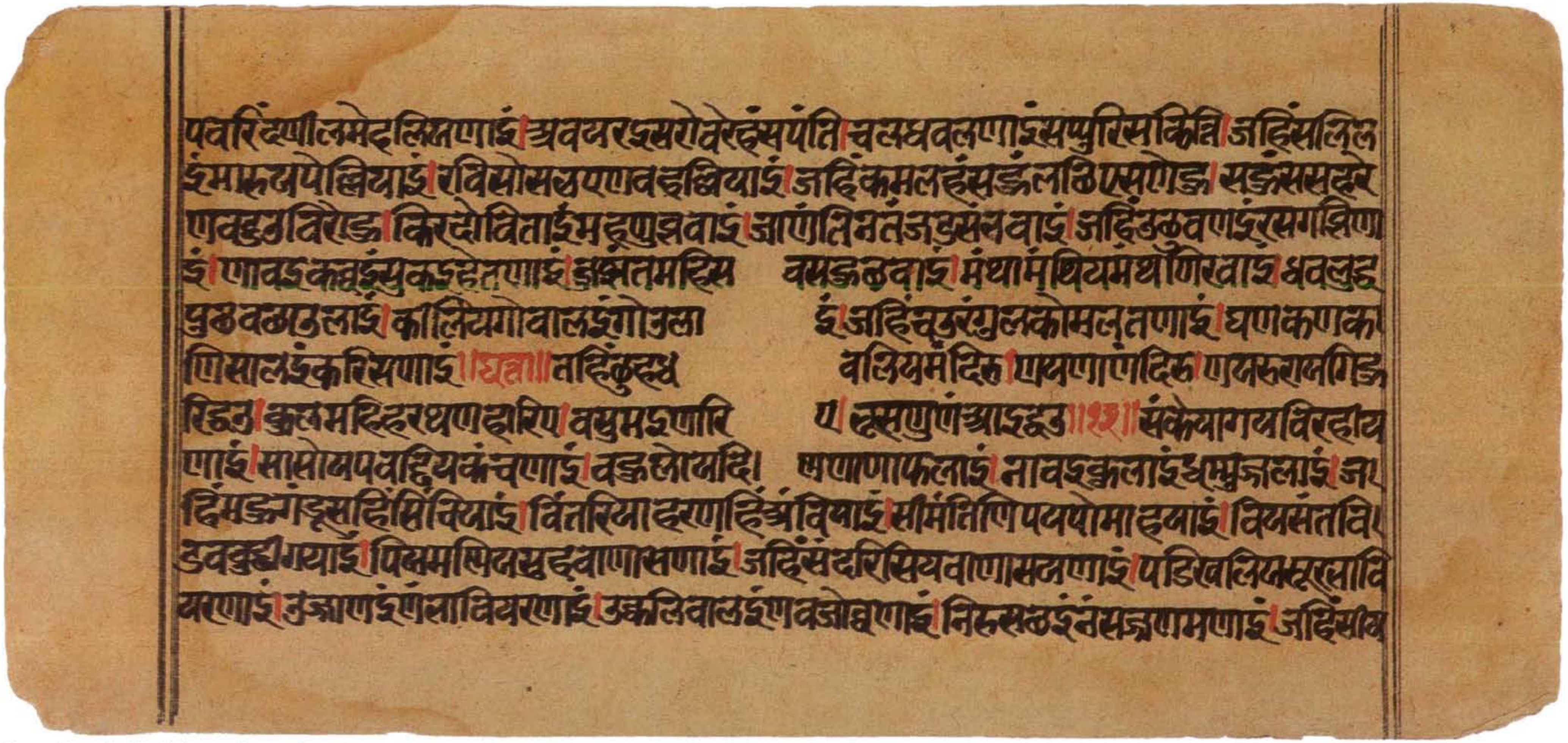

जैसे इन्द्रनील मणियों की विशाल मेखला हो। सरोवर में उतरी हुई हंसों की कतार ऐसी मालूम होती है जैसे सज्जन पुरुष की चलती-फिरती धवल कीर्ति हो। जहाँ हवा से प्रेरित जल ऐसे मालूम होते हैं जैसे सूर्य के शोषण के डर से काँप रहे हों। जहाँ कमल लक्ष्मी से स्नेह करते हैं लेकिन चन्द्रमा के साथ उनका बड़ा विरोध है। यद्यपि दोनों समुद्रमन्थन से उत्पन्न हुए हैं लेकिन जड़ (जड़ता और जल) से पैदा होने के कारण वे इस बात को नहीं जानते। जहाँ ईखों के खेत रस से परिपूर्ण हैं, मानो जैसे सुकवियों के काव्य हों। जहाँ लड़ते हुए भैंसों और बैलों के उत्सव होते रहते हैं, जहाँ मथानी घुमाती हुई गोपियों की ध्वनियाँ होती रहती हैं, जहाँ चपल पूँछ उठाये हुए बच्छों का कुल है, और खेलते हुए ग्वालबालों से युक्त गोकुल हैं। जहाँ चार-चार अंगुल के कोमल तृण हैं और सघन दानोंवाले धान्यों से भरपूर खेत हैं।

घत्ता—उस मगध देश में चूने के धवल भवनोंवाला नेत्रों के लिए आनन्ददायक राजगृह नाम का समृद्ध नगर है, जो ऐसा लगता है मानो कुलाचलरूपी स्तनों को धारण करनेवाली वसुमतीरूपी नारी ने आभूषण धारण कर रखा हो॥ १२॥

१३

जिसके उद्यान-वन, कुलों के समान, संकेतागत विरहीजन [संकेत से जिनमें विरहीजन आते हैं / पक्ष में जिनमें संकेत से विरहीजन नहीं आते], अशोक सहित प्रवर्द्धितकंचन [जिनमें अशोक वृक्षों के साथ चम्पक वृक्ष बढ़ रहे हैं / पक्ष में, हर्ष के साथ स्वर्ण बढ़ रहा है], बहुलोक दत्त नाना फल (बहुत लोकों में नाना प्रकार के फल देनेवाले) और धर्मोज्ज्वल (अर्जुन वृक्ष से उज्ज्वल, धर्म से उज्ज्वल) हैं। जहाँ उद्यान मधु (पराग और मद्य) के कुल्लों से सिंचित भावी रण के समान हैं। जो विंभरित (विस्मृत और विस्मित कर देनेवाले) आभरणों से अंचित हैं, जो सीमन्तिनियों के चरणकमलों से आहत हैं, जो बढ़ते हुए वृक्षों से वृद्धि को प्राप्त हो रहे हैं, जिनमें (उद्यानों में) कोयलों (कोकिलों) के द्वारा मान्य सुभग 'आण' शब्द किया जा रहा है, (रण में) प्रियाओं के द्वारा मान्य सुभग आज्ञा शब्द (गजमुक्ता लाओ, युद्ध जीतकर आना इत्यादि) किया जा रहा है, जहाँ (उद्यानों में) बाण और अर्जुन वृक्ष दिखाई दे रहे हैं, जहाँ (रण में) धनुष और बाण दिखाई दे रहे हैं। जहाँ (उद्यानों और युद्ध में) सूर्य एवं शूरवीरों की प्रभा का विचरण अवरुद्ध हो रहा है, जहाँ का जल नवयौवन की तरह उत्कलित (कल्लोलमाला से शोभित और कलि-रहित) है। जो सज्जनों के मनों की तरह अत्यन्त स्वच्छ है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

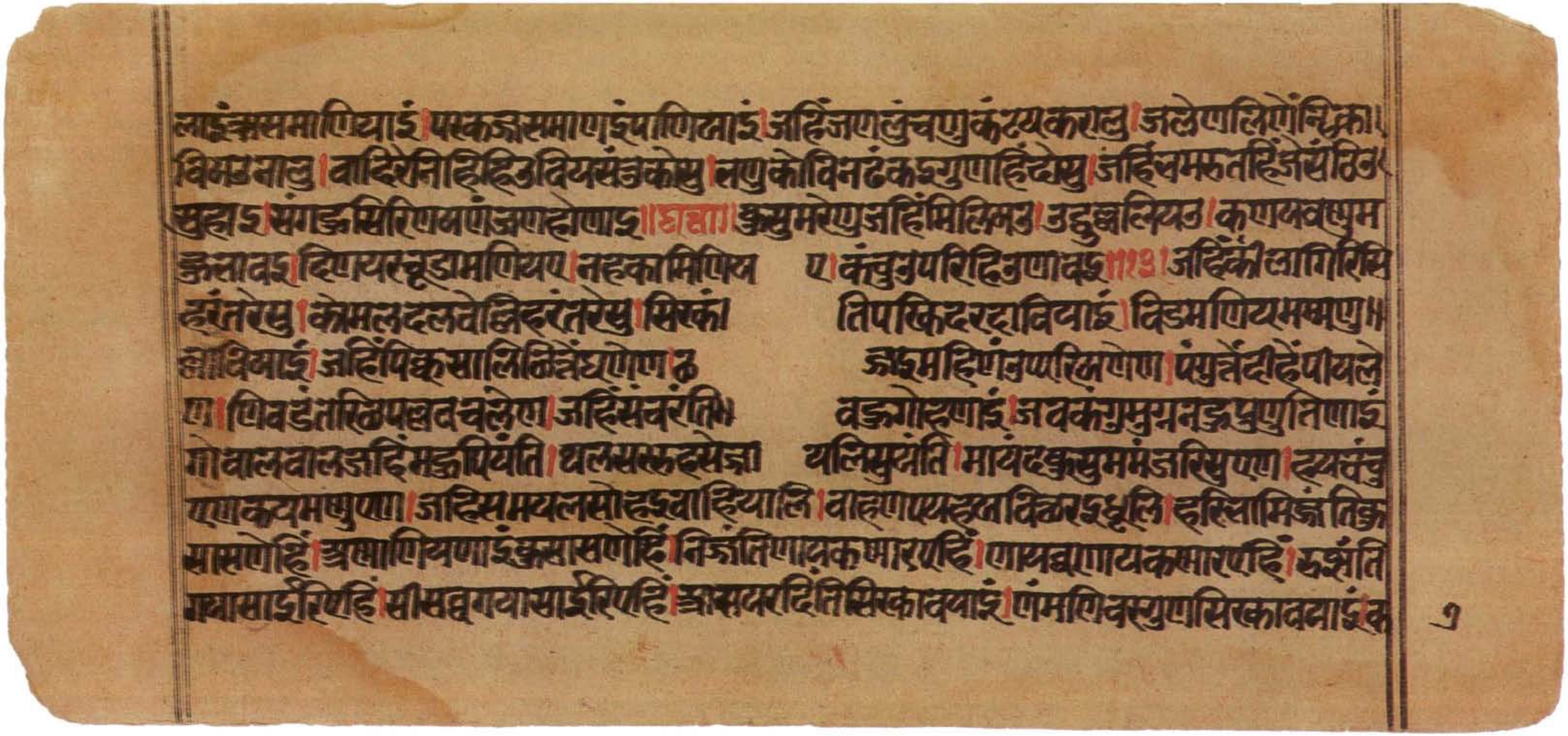

मत्स्यों के द्वारा मान्य जो जल दूसरों के कार्य के समान शीतल है। जहाँ (सरोवरों में) कमल ने अपना काँटों से भयंकर, लोगों को नोचनेवाला नाल पानी में छिपा लिया है, तथा विकास को प्राप्त होता हुआ कोश बाहर रख छोड़ा है, बताओ कौन गुणों से अपने दोष को नहीं ढकता। जहाँ-जहाँ भ्रमर है, वहाँ-वहाँ पर वह लक्ष्मी के नेत्रों के अंजन के संग्रह के समान शोभित होता है।

घत्ता—पवन से उड़ता हुआ, सुनहला, मिश्रित कुसुम-पराग मुझ कवि (पुष्पदन्त) को ऐसा लगता है मानो सूर्यरूपी चूड़ामणिवाली आकाशरूपी लक्ष्मी ने कंचुकी वस्त्र पहन रखा हो॥ १३॥

१४

जहाँ क्रीड़ापर्वतों के शिखरों के भीतर कोमल दलवाले लतागृहों में पक्षीगण थोड़ा-थोड़ा दिखना, और विटों के द्वारा मान्य काम की अव्यक्त ध्वनि करना सीख रहे हैं। जहाँ पके हुए धान्य के खेतों से भूमि ऐसी शोभित है मानो उसने उपरितन वस्त्र के प्रावरण (दुपट्टे) को ओढ़ रखा हो। जो (प्रावरण) लम्बा, पीला और गिरते हुए शुकों के पंखों के समान चंचल है। जहाँ अनेक गोधन जौ, कंगु और मूँग खाते हैं, फिर घास नहीं खाते। जहाँ गोपालबाल रस का पान करते हैं और गुलाब के फूलों की सेज पर सोते हैं। जहाँ क्रोध करनेवाले शुक ने अपनी चोंच से आम्रकुसुम की मंजरी को आहत कर दिया है। जहाँ पर समतल राजमार्ग शोभित है। उस पर वाहनों के पैरों से आहत धूल फैल रही है। जहाँ सईसों के द्वारा घोड़े घुमाये जा रहे हैं, जैसे खोटे शासनों से अज्ञानीजनों को घुमाया जाता है। महावतों के द्वारा हाथी वश में किये जा रहे हैं, जैसे सपेरों के द्वारा साँप वश में किये जाते हैं। सवारों के द्वारा हाथी और घोड़े रोके जा रहे हैं, जैसे निराश आचार्यों द्वारा शिष्यों को रोक लिया जाता है। खच्चरों को शिक्षा शब्द कहे जा रहे हैं, मानो मुनिवर गुणव्रतों और शिक्षा व्रतों को दे रहे हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

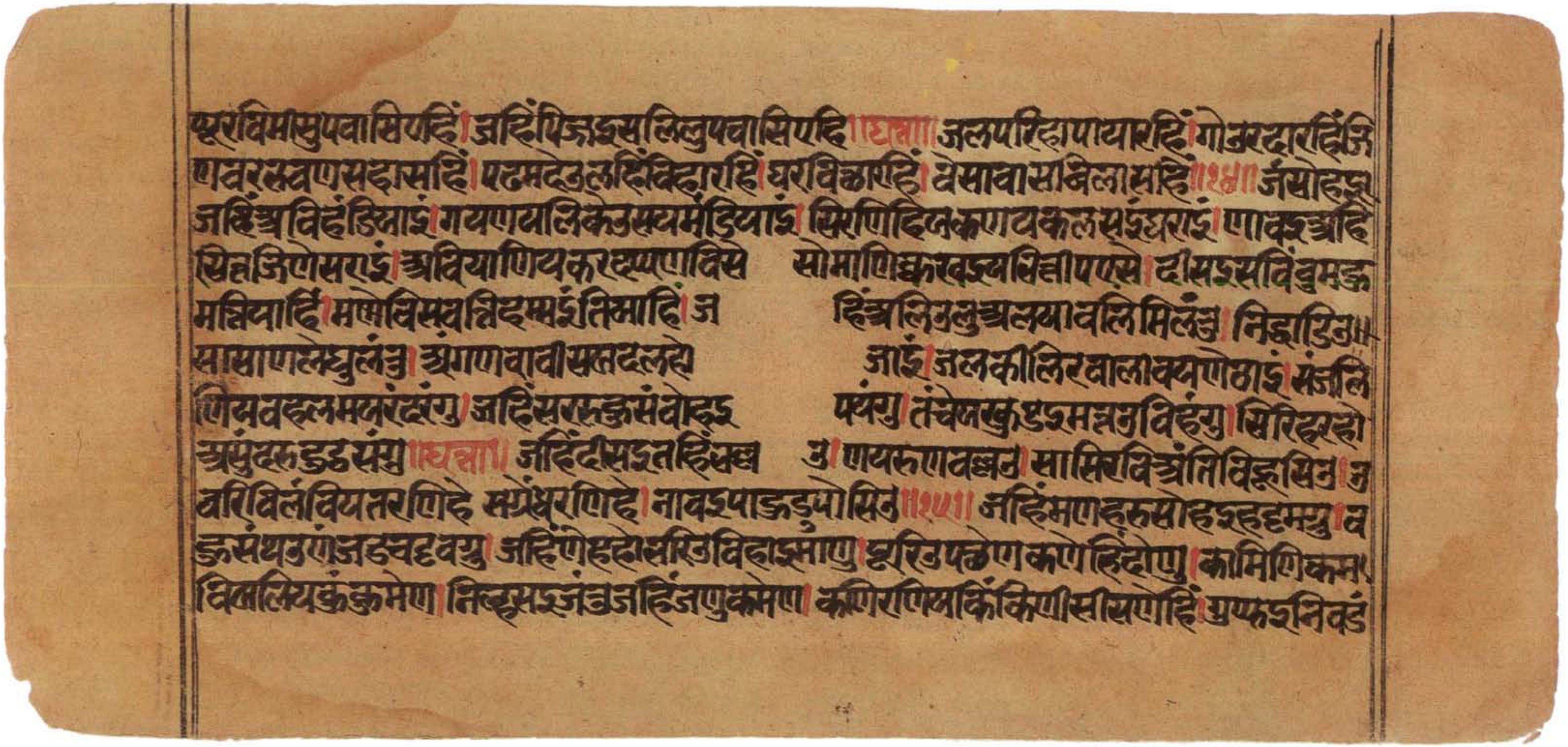

जहाँ प्याउओं पर ठहरे हुए प्रवासियों के द्वारा कपूर से मिला हुआ पानी पिया जाता है।

घत्ता—जिनके परकोटे चन्द्रमा की प्रभा के समान हैं ऐसे, गोपुर द्वारवाले हजारों जिनमन्दिरों, मठों, देवकुलों, विहारों, गृह विस्तारों, वेश्याओं के आवासों और विलासों में से॥ १४॥

१५

जो उसी प्रकार शोभित हैं कि जिस प्रकार निरन्तर सैकड़ों ग्रहों से आकाश। जिनके अग्रभाग पर स्वर्णकलश रखे हुए हैं, ऐसे घर इस प्रकार मालूम होते हैं मानो उन्होंने जिनभगवान् का अभिषेक किया हो। जिनमें हाथ के दर्पण विशेष ज्ञात नहीं होते, माणिक्यों से रचित ऐसी दीवारों में मदिरा से मत्त स्त्रियों को अपना बिम्ब दिखाई देता है, सौत समझकर वह उनके द्वारा पीटा जाता है, जहाँ भ्रमर-समूह अलकावली से घुल-मिल गया है, लेकिन चक्राकार घूमते हुए उसे श्वास के पवन ने निकाल दिया है। वह आँगन की बावड़ी के कमलों पर जाता है, और पानी में क्रीड़ा करती हुई बाला के शरीर पर बैठता है। वहाँ, जिसे प्रचुर पराग प्रेम उत्पन्न हो गया है ऐसे कमल को सूर्य सम्बोधित करता है, (उसे खिलाता है) उसी को मतवाला हंस खुटक लेता है। श्रीधर (कमल और धनवान्) का दुष्ट साथ असुन्दर होता है।

घत्ता—वह नगर जहाँ देखो वहीं भला तथा चन्द्रकान्त-सूर्यकान्त मणियों से भूषित नया दिखाई देता है। जिसके ऊपर सूर्य विलम्बित है ऐसी धरती के लिए मानो स्वर्ग ने उसे उपहार के रूप में भेजा हो॥ १५॥

१६

जहाँ मनोहर हाट-मार्ग शोभित हैं, जो मानो बहुसंस्तृत (रत्नमणि आदि वस्तुओं/अनेक शस्त्रोंवाला) मूर्ख शिष्यवर्ग हो। जहाँ मान (तेल मापने का पात्र) स्नेह (तेल) से भरा हुआ शोभित है। जहाँ प्रस्थ (अन्न मापने का पात्र) के द्वारा द्रोण इस प्रकार भर दिया गया है जिस प्रकार बाणों से द्रोणाचार्य आच्छादित कर दिये गये थे। स्त्रियों के पैरों से विगलित कुमकुम से युक्त मार्ग से जाता हुआ मनुष्य फिसल जाता है। रुनझुन करती हुई किंकिणियों के स्वरोंवाले गिरते हुए गहनों से वह गिर पड़ता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गजों के मद और घोड़ों के फेनों की कीचड़ में और शंका उत्पन्न करनेवाले ताम्बूलों की पीक में खप जाता है। जहाँ रत्नों से विजड़ित राजकुल ऐसा लगता है मानो आकाश में अमरविमान आ टपका हो। जिन्हें धूप के धुएँ से मन में शंका उत्पन्न हो गयी है ऐसे मयूर जहाँ मेघों की भ्रान्ति से नृत्य करते हैं, जहाँ विजय-नगाड़ों और दुन्दुभियों के स्वरों के कारण नर-नारियों को कुछ भी सुनाई नहीं देता। जहाँ प्रांगण प्रदेश में नव दिनकर की किरणों से आरक्त प्रभात के फैलने पर—

घत्ता—विजयश्री में श्रेष्ठ राजकुमारों के द्वारा चंचल चौगानों से प्रताड़ित गेंद ऐसी मालूम होती है मानो लोगों में अनुराग उत्पन्न करनेवाले पर-मत के वादी कवियों द्वारा लोगों को भ्रमित कर दिया गया हो॥ १६ ॥

१७

उसमें श्रेणिक नाम का राजा है जो गारुड़ गुरु (गरुड़ विद्या का जानकार) के समान, विज्ञातणाय (नागों का जानकार/न्याय का जानकार) है, जो कार्यों में कुशल फुरतीबाज और मानो शत्रुओं के वंश को जलाने में अग्नि है। सीता के मन के समान जो रामाभिराम (जिसे राम और रामा सुन्दर है) है जो सूर्य के समान दूसरों के द्वारा अलंघ्य है। जो अपने समय के अनुसार कार्यों को सम्पादित करनेवाला है, जो हनुमान् के समान अपना स्थैर्य प्रकट करनेवाला है, वज्रदण्ड की तरह जिसने लोह (लोहा/लोभ) को नष्ट कर दिया है, जो व्याधा की तरह मयसमूह (मद/मृग समूह) को नष्ट करनेवाला है, व्रतधारी की तरह जो गुरुजनों के प्रति विनीत है, ऐरावत गज की भाँति जो अखण्डित दानवाला है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योगीश्वर के समान क्रोध और हर्ष को नष्ट करनेवाला है, मानो क्षात्रधर्म ही पुरुष रूप में स्थित हो गया हो। वह विग्रह और सन्धि के स्थान को जानता है, मानो वह महामुख्य वैयाकरण हो। वह सप्तांग राज्य का पालन इस प्रकार करता है जैसे प्रकृतियों[१] से निबद्ध उसकी देह हो। पवन के समान जिसने मन्दमेह (मन्द मेघ/मेधा—बुद्धि) को नष्ट कर दिया है। गोपाल के समान जो महिषी (पट्टरानी और भैंस) से स्नेह करनेवाला है। जिनके चरण माण्डलीक राजाओं के मुकुटों से घर्षित हैं ऐसा वह जिनेन्द्रनाथ के समान निखिल मनुष्य राजाओं की शरण है।

घत्ता—एक दिन लम्बी बाँहोंवाला वह राजा अपने सिंहासन पर बैठा हुआ था। चेलना देवी से शोभित वह ऐसा जान पड़ता था मानो नवलताओं ने कल्पवृक्ष को आलिंगित कर लिया हो॥ १७॥

१८

अतुलित बलवाला, शत्रुकुल के लिए प्रलयकाल के समान, धरती का श्रेष्ठ स्वामी वह राजा जब बैठा हुआ था कि इतने में जिसने सिररूपी शिखर पर अपनी बाहुरूपी डाल चढ़ा रखी हैं,[२] ऐसा उद्यानपाल वहाँ आया। अनवरत सामन्तों की सेवा करनेवाला वह कहता है—''हे देव, सुनिए, कामदेव के बाणों के प्रसार को शान्त करने में समर्थ, समस्त मंगलों के आश्रय, प्रशस्त, सूर्य, विद्याधर और मनुष्यों के द्वारा वन्दनीय-चरण, त्रिलोक स्वामी जिन, वीतराग, इन्द्र के द्वारा जिनका समवसरण बनाया गया है, जो चारों निकायों के देवों को आनन्द देनेवाले

१. सप्त धातुओं; २. लम्बे हाथोंवाला

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

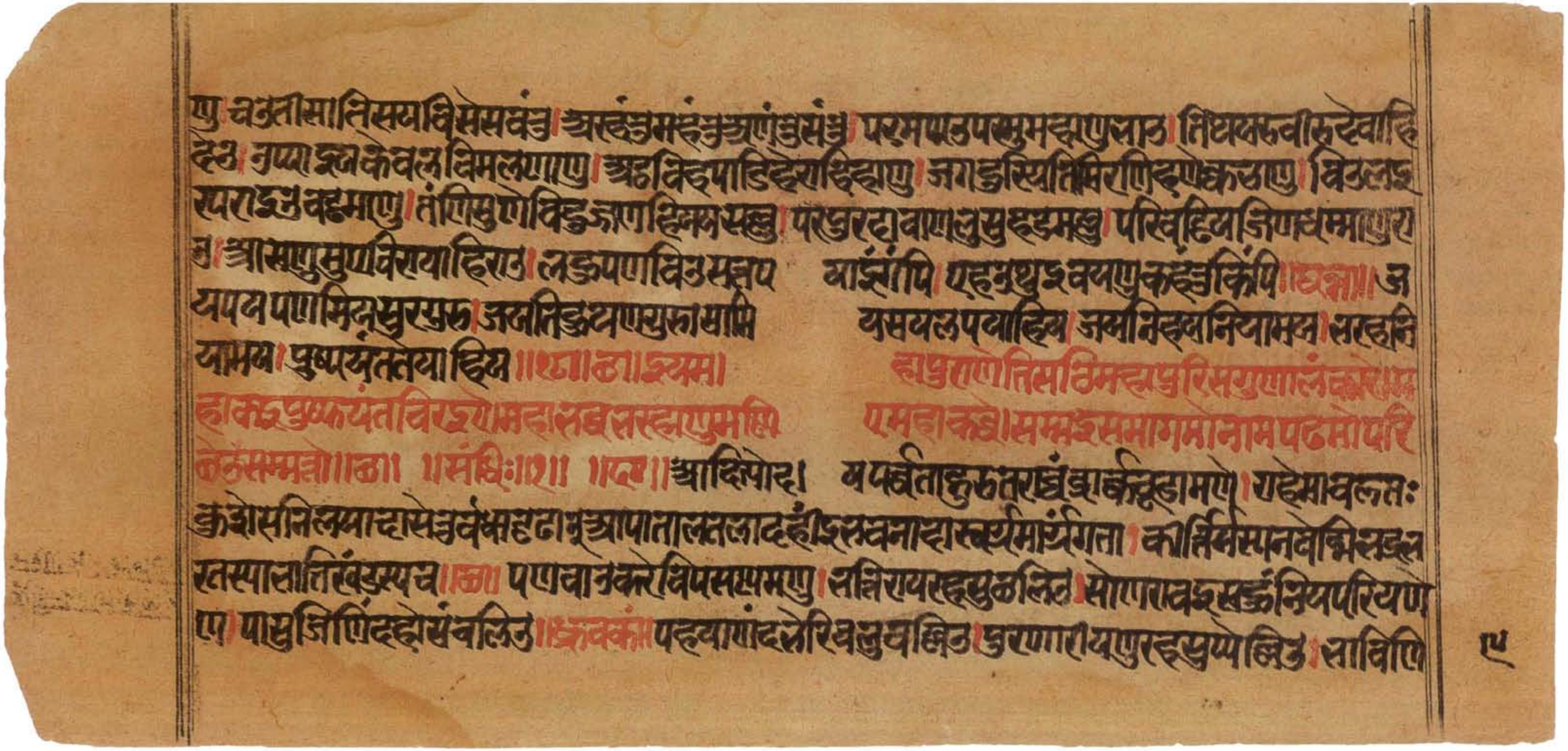

चौंतीस अतिशय विशेषों से युक्त हैं। ऐसे अर्हत् महान्, अनन्त, सन्त, परमात्मा, परम महानुभाव, वीर, तीर्थंकर, देवाधिदेव जिन्हें केवलज्ञान उत्पन्न है, ऐसे विमलज्ञानवाले, आठ प्रातिहार्यों के चिह्नोंवाले, विश्व के पापरूपी अन्धकार को दूर करने के लिए एकमात्र सूर्य, स्वामी वर्धमान विपुलाचल पर आये हैं। यह सुनकर, शत्रुओं हृदयों के लिए शल्य के समान, शत्रुनगर के लिए दावानल, सुभटों में मल्ल, तथा जिसका जिनधर्म के लिए अनुराग बढ़ रहा है ऐसे उस राजाधिराज ने आसन छोड़कर शीघ्र सात पैर चलकर, निम्नलिखित स्तुति-वचन कहते हुए प्रमाण किया।

घत्ता—बृहस्पति जिनके चरणों में प्रणत हैं ऐसे हे त्रिभुवन गुरु और समस्त प्रजा का हित करनेवाले, आपकी जय हो। अपने समस्त रोगों का नाश करनेवाले तथा भरत क्षेत्र के नियामक सूर्य और चन्द्र से भी अधिक तेजवाले जिन, आपकी जय हो॥ १८॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारवाले महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित तथा महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का सन्मति समागम नाम का पहला परिच्छेद समाप्त हुआ॥ १॥

सन्धि २

प्रणाम कर प्रसन्न-मन, भक्तिराग और हर्ष से उछलता हुआ वह राजा अपने परिजन के साथ जिनेन्द्र भगवान् के पास चला।

१

आनन्द की भेरी बजाकर सेना चली। नगर का नारी-समूह हर्ष से प्रेरित हो उठा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावाणि का वि देवगुणभाविणी चलिय स कमलहत्थ णं गोमिणि।
का वि सचंदण सहइ महासइ णं मलयइरिणियंववणासइ।
कुवलउ का वि लेइ जसधारिणि णं वररायवित्ति रिउदारिणि।
रुप्पयथालु का वि घुसिणालउ ससिबिंबु व संझारायालउ।
पवरकसणगंधोहकरंबउ उवरज्जंतु व णवरविबिंबउ।
कणयवत्तु काइ वि करि धरियउ इंदणीलमउ मोत्तियभरियउ।
णावइ णहयलु उडुविप्फुरियउ गुरुचरणारविंदु संभरियउ।
का वि ससंख समुद्दसही विव का वि सकलस णिहाणमही विव।
का वि सदप्पण वेसावित्ति व का वि सरस कइकव्वपउत्ति व।
का वि जिणिंदभत्तिपब्भारें णच्चइ भरहभाववित्थारें।
काहि वि विहुउ पयडु थणत्थलु णाइं णिरंगकुंभिकुंभत्थलु।
मयणंकुसवणरेहारुणियउ समवंतेण पिएण ण गणियउ।

देव के गुणों की भावना करनेवाली कोई भामिनी हाथ में कमल लेकर इस प्रकार चली मानो लक्ष्मी हो। चन्दनसहित कोई महासती ऐसी शोभित होती है मानो मलयपर्वत के ढाल की वनस्पति हो। कोई यशस्विनी कुवलय (नीलकमल) को लेती है, वह ऐसी मालूम होती है मानो शत्रु का विदारण करनेवाली श्रेष्ठ राजा की वृत्ति हो। कोई केशर से युक्त चाँदी का थाल लेती है जो सन्ध्याराग से युक्त चन्द्रबिम्ब के समान लगता है। श्रेष्ठ काली गन्ध (कालागुरु) के समूह से सहित वह (थाल) ऐसा प्रतीत होता है मानो राहु से ग्रस्त नवसूर्य बिम्ब हो। किसी ने स्वर्णपात्र अपने हाथ में ले लिया, इन्द्रनील मणियोंवाला और मोतियों से भरा हुआ जो नक्षत्रों से विस्फुरित आकाश के समान जान पड़ता है। किसी ने गुरु के चरण-कमलों का स्मरण किया। शंख से युक्त कोई समुद्र की सखी के समान जान पड़ती है। कलश से सहित कोई खजाने की भूमि के समान है। कोई वेश्यावृत्ति के समान दर्पणसहित है। कोई कवि की काव्य-उक्ति के समान सरस है। कोई जिनेन्द्र की भक्ति के प्रभार के कारण भरतमुनि के संगीत के विस्तार के साथ नृत्य करती है। किसी का खुला हुआ स्तन-स्थल कामदेवरूपी महागज के कुम्भ-स्थल की तरह दिखाई दे रहा है। मदनांकुश (नखों) के घावों की रेखा से लाल होने पर भी उस (स्तन-स्थल) पर उपशमभाव से युक्त प्रिय ने कुछ भी ध्यान नहीं दिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

काहि वि घुलइ हारु मणिमंडिउ णावइ कामें पासउ मंडिउ।
झल्लरिपडहमुइंगसहासहिं वज्जंतहिं जयजयणिग्घोसहिं।

घत्ता—आरूढउ महिवइ मत्तगइ मयजलघुलियचलालिगणे॥
णं महिहरि केसरि खरणहरु पवणुल्ललियतमालवणे॥ १॥

२

चोइउ कुंजरु कमसंचारें गंडालीणभमरझंकारें।
चामरचवलें छत्तधारें गच्छमाणु सहुं णियपरिवारें।
पत्तु णरेसरु तियसरवण्णउं दिट्ठउ समवसरणु वित्थिण्णउं।

किसी का मणिमण्डित हार ऐसा प्रतीत होता था मानो कामदेव ने अपना पाश मण्डित कर लिया हो। बजते हुए हजारों झल्लरी, पटह और मृदंग आदि वाद्यों तथा जय-जय शब्दों के साथ—

घत्ता—मदजल के कारण मँडराते हुए चंचल भ्रमरों से युक्त मत्तगज पर राजा ऐसा सवार हो गया मानो पवन से आन्दोलित तमालवनवाले पहाड़ पर तीव्र नखवाला सिंह आरूढ़ हो गया है॥ १॥

२

महावत ने पैरों के संचालन से हाथी को प्रेरित किया। गण्डस्थल में लीन भ्रमरों की झंकार तथा चमरों से चपल तथा छत्रों की छायावाले अपने परिवार के साथ जाता हुआ राजा वहाँ पहुँचा और उसे देवों से रमणीय विस्तृत समवसरण दिखाई दिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

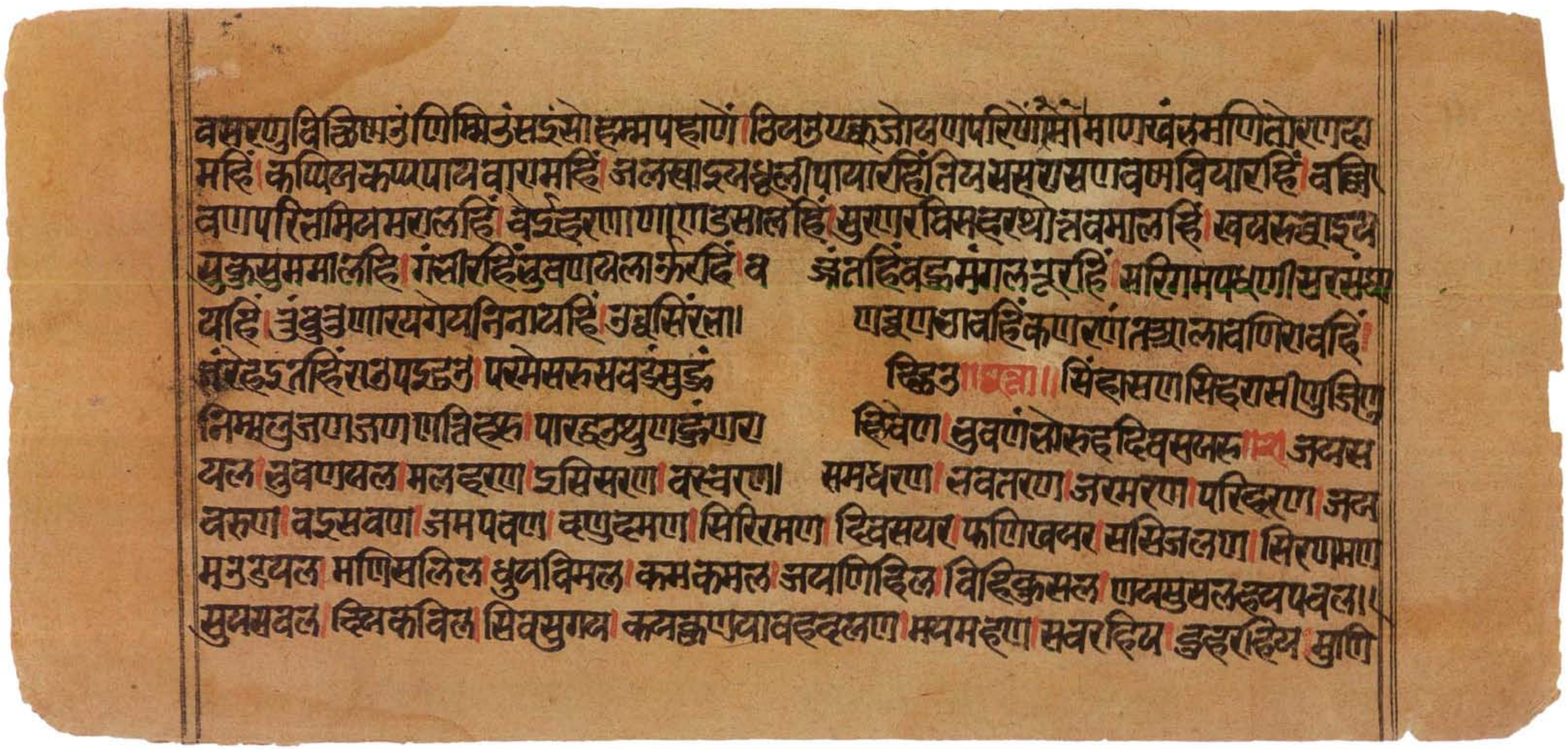

जिसे सौधर्म्य स्वर्ग के इन्द्र ने स्वयं निर्मित किया था और जो एक योजनप्रमाण क्षेत्र में स्थित था। जो मानस्तम्भों और मणियों के वन्दनवारों, कल्पित कल्पवृक्षों के उद्यानों, जलपरिखाओं और धूलिप्राकारों, चैत्यगृहों, नाना नाट्यशालाओं, सुरों, नटों और विषधरों के स्तोत्रों, कोलाहलों, विद्याधरों के द्वारा उठायी गयी पुष्पमालाओं, भुवनतल आपूरित करनेवाले बजते हुए मंगलवाद्यों, सा रे ग म प ध नी स आदि स्वरों के संघातों, तुम्बुरु और नारद के गीत-विनोदों, उर्वशी और रम्भा के नृत्यभावों तथा बजती हुई वीणाओं के स्वरों से शोभित था। ऐसे समवसरण में राजा ने प्रवेश किया और सामने परमेश्वर को देखा।

घत्ता—सिंहासन के शिखर पर आसीन, पवित्र, लोगों की जन्मपीड़ा का हरण करनेवाले, विश्वरूपी कमल के लिए सूर्य के समान वीर जिनेन्द्र की राजा ने स्तुति प्रारम्भ की॥ २॥

३

समस्त भुवनतल का मल दूर करनेवाले! आपकी जय हो। ऋषियों के शरणस्वरूप श्रेष्ठ चरण तथा समता धारण करनेवाले, भव से तारनेवाले, बुढ़ापा और मृत्यु का हरण करनेवाले, यम, पवन और दनु का दमन करनेवाले, लक्ष्मी से रमण करनेवाले, मुकुटतल के मणियों के जल से जिनके पवित्र चरणकमल धोये गये हैं ऐसे हे समस्त विधान में कुशल, आपकी जय हो (मुनिधर्म और गृहस्थ धर्म की रचना में)। न्यायरूपी मूसल से प्रबलों को आहत करनेवाले, शास्त्रों से सबल, द्विज, कपिल, शिव और सुगत के कुनयों के पथ को नष्ट करनेवाले, मद का नाश करनेवाले, स्व-पर भाव से शून्य तथा दु:ख से रहित,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

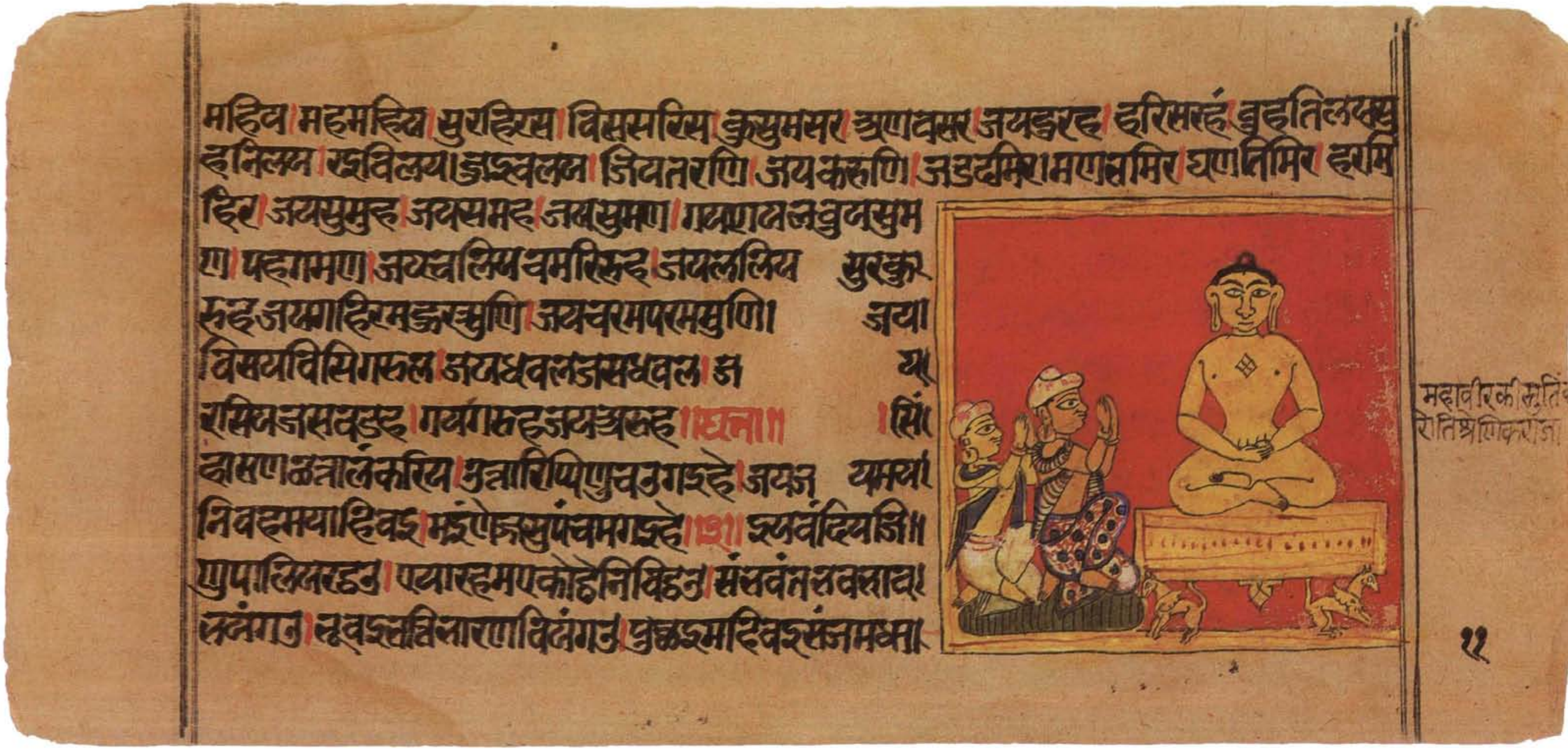

मुनियों से पूज्य महामहनीय, दुग्धरस और विष के रस में समानभाव रखनेवाले, कामदेव की पहुँच से परे हे देव! आपकी जय हो। पापरूपी सिंह के लिए अष्टापद के समान, पण्डितों में प्रवर, सुख के निवास, रति का विलय करनेवाले, द्युति के मण्डल, सूर्य को जीतनेवाले हे करुण, आपकी जय हो। जड़ों का दमन करनेवाले, मन को भ्रमित करनेवाले, सघन अन्धकार के लिए सूर्य, हे सुमुख और समदृष्टि रखनेवाले आपकी जय हो। हे सुमन! आपकी जय, जिनके लिए आकाश से सुमनों की वर्षा की जाती है ऐसे हे आकाशगामी, आपकी जय हो। जिन पर चमर ढोरे जाते हैं, ऐसे आपकी जय। हे सुन्दर कल्पवृक्ष, आपकी जय। हे गम्भीर मधुर ध्वनि, आपकी जय। हे अन्तिम तीर्थंकर आपकी जय। हे विषयरूपी सर्प के लिए गरुड़, विश्व के लिए मंगलस्वरूप यश से धवल आपकी जय हो। जिनके यश के नगाड़े बज रहे हैं ऐसे हे अनिन्द्य अर्हन्त आपकी जय हो।

घत्ता—सिंहासन और छत्रों से अलंकृत तथा मदरूपी मृगों के लिए सिंह के समान आपकी जय हो। चार गतियों से उद्धार कर आप मुझे पाँचवीं गति (मोक्ष) में ले जायें॥ ३॥

४

राष्ट्र का पालन करनेवाला राजा श्रेणिक, इस प्रकार जिनेन्द्र भगवान् की वन्दना कर ग्यारहवें कोठे में जाकर बैठ गया। उत्पन्न होते हुए विश्वभार के भय से डरकर वह भक्ति के भार से विनत शरीर हो गया। राजा ने पूछा— 'संयम को धारण करनेवाले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

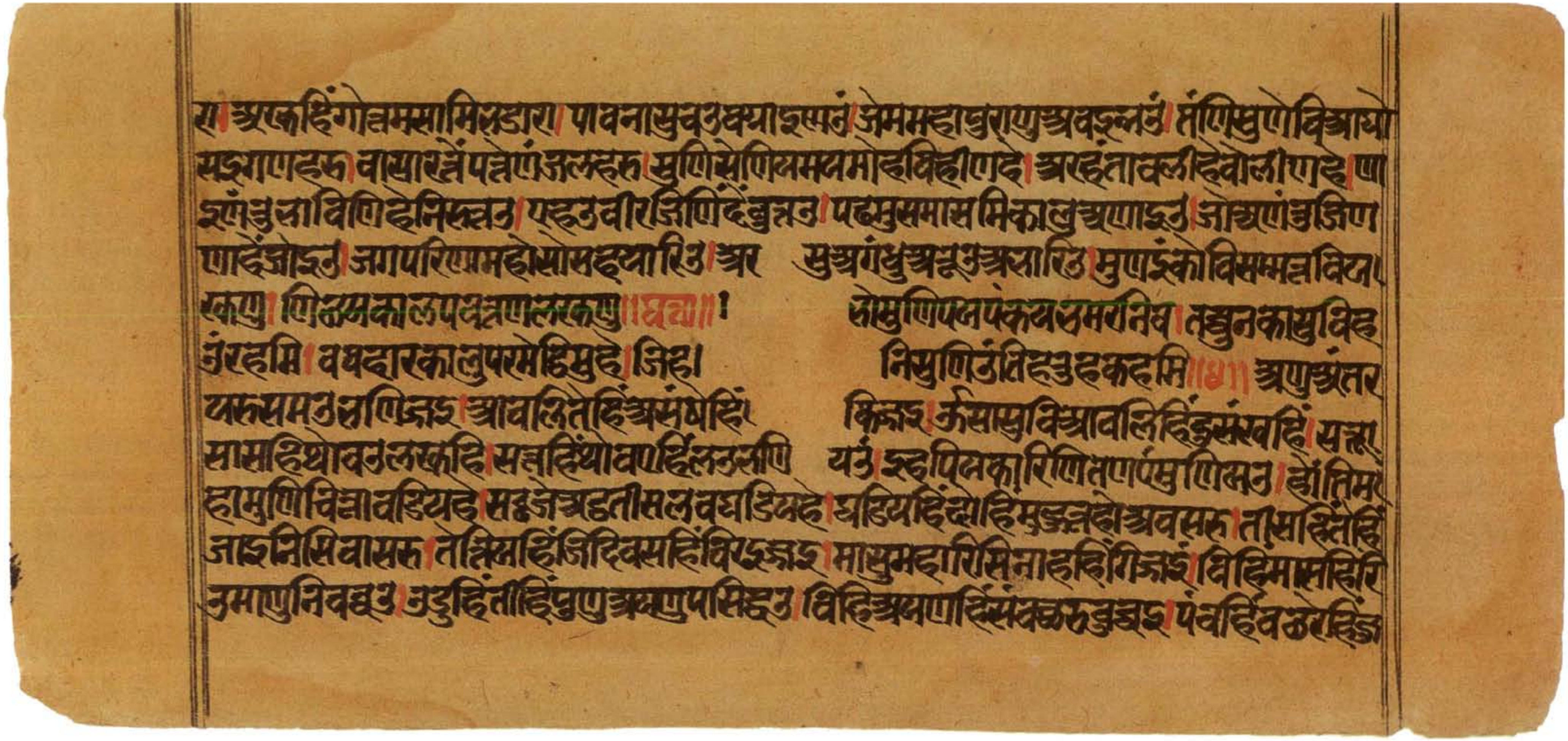

आदरणीय गौतम, बताइए कि पाप का नाशक तथा चार पुरुषार्थों से परिपूर्ण महापुराण किस प्रकार अवतरित हुआ?' यह सुनकर गौतम गणधर ने इस प्रकार घोषणा की कि जैसे पावस ऋतु आने पर मेघ गरज उठे हों। उन्होंने कहा— 'हे श्रेणिक, सुनो। मद और मोह से रहित अरहन्तों की समाप्त हो रही परम्परा का न आदि है और न होनेवाली परम्परा का अन्त है। वीर भगवान् ने निश्चय रूप से यह कहा है—सबसे पहले संक्षेप में बताता हूँ कि काल अनादि और अनन्त है जिसे जिनभगवान् ने अपने केवलज्ञान से देखा है। इस विश्व के परिणमन में वही सहायक है, वह अरस, अगन्ध, अरूप एवं भारहीन है। संसार के प्रवर्तन के कारणस्वरूप इस निश्चयकाल को, सम्यक्त्व से विलक्षण कोई विरला मनुष्य ही जान सकता है।

घत्ता—मुनियों के चरणकमलों के भ्रमर हे राजन्! मैं किसी भी तत्त्व को छिपा नहीं रखूँगा। परमेष्ठी भगवान् के मुख से जिस रूप में व्यवहार काल को मैंने सुना है वह मैं वैसा ही तुम्हें बताता हूँ॥ ४॥

५

एक अणु जितने समय में आकाश के एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में जाता है उसे समय कहते हैं। असंख्य समयों की एक आवली कही जाती है। संख्यात आवलियों से एक उच्छ्वास बनता है। सात उच्छवासों का एक स्तोक समझना चाहिए। सात स्तोकों का एक लव कहा जाता है—ऐसा प्रियकारिणी त्रिशला के पुत्र महावीर ने समझा है। महामुनियों के चित्त में आनेवाली नाड़ी में साढ़े अड़तालीस लव होते हैं। दो घड़ियों से मुहूर्त का अवसर बनता है और तीस मुहूर्तों का दिन-रात होता है। दिनों से मास बनता है—ऐसा महाऋषि-नाथ के द्वारा कहा गया है। दो माहों से ऋतुमान बनता है, तीन ऋतुमानों से फिर अयन प्रसिद्ध होता है। दो अयनों से एक वर्ष बनता है और पाँच वर्षों का युग कहा जाता है।

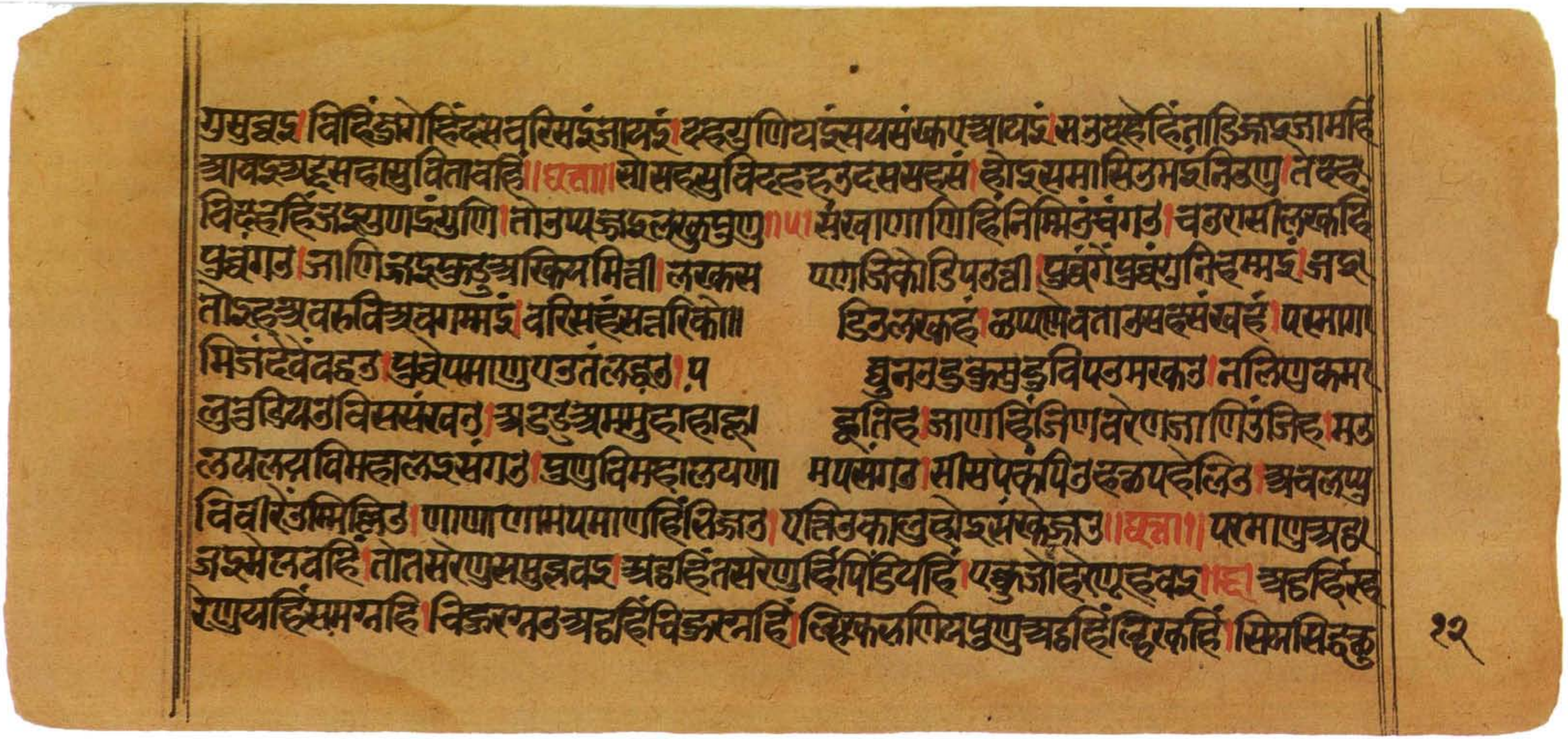

और दो युगों से दस वर्ष बनते हैं। उनमें दस का गुणा करने पर सौ साल होते हैं। जब १०० में दस का गुणा किया जाता है तो एक हजार वर्ष होते हैं।

घत्ता—दस से आहत होने पर वह हजार दस हजार होता है, थोड़े में मैंने ऐसा गुना है। उन दस हजार का भी जब दस से गुणा किया जाये तो एक लाख उत्पन्न होते हैं ॥ ५ ॥

६

संख्याज्ञानियों (गणितज्ञों) ने यह अच्छी तरह जाना है कि चौरासी लाख वर्षों का एक पूर्वांग होता है। कथन मात्र से यह जान लिया जाता है कि सौ लाख का एक करोड़ कहा जाता है। जब पूर्वांग से पूर्वांग का गुणा किया जाये तो और भी संख्या जानी जाती है, सत्तर करोड़ एक लाख छप्पन हजार वर्षों का एक सह संख्य होता है। परमागम में देव (जिनेन्द्र) ने जैसा निबद्ध किया है उस पूर्व के प्रमाण को यहाँ जान लिया। पूर्व नियुत कुमुद, पद्म, नलिन, संखसहित तुट्य, अट्ट, अमंग, ऊहांग और ऊहा को उसी प्रकार जानो कि जिस प्रकार जिन भगवान् ने कहा है। और भी मृदुलता, लता, महालतांग और फिर महालता नाम का प्रसंग आता है। शिर:प्रकम्पित, हस्तप्रहेलिका और अचल काल हैं, उसे महावीर प्रभु ने प्रकाशित किया है। इस प्रकार नाना नाम और प्रमाणों से विभाजित इतना संख्यात काल होता है।

घत्ता—यदि आठ परमाणुओं को मिला दिया जाये, तो एक त्रसरेणु उत्पन्न होता है और आठ त्रसरेणुओं के मिलने पर एक रथरेणु की उत्पत्ति होती है ॥ ६ ॥

७

आठ रथरेणुओं के मिलने पर एक बालाग्र बनता है, आठ बालाग्रों की एक लीख कही जाती है। आठ लीखों से एक सफेद सरसों बनता है, ऐसा महामुनियों ने कहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

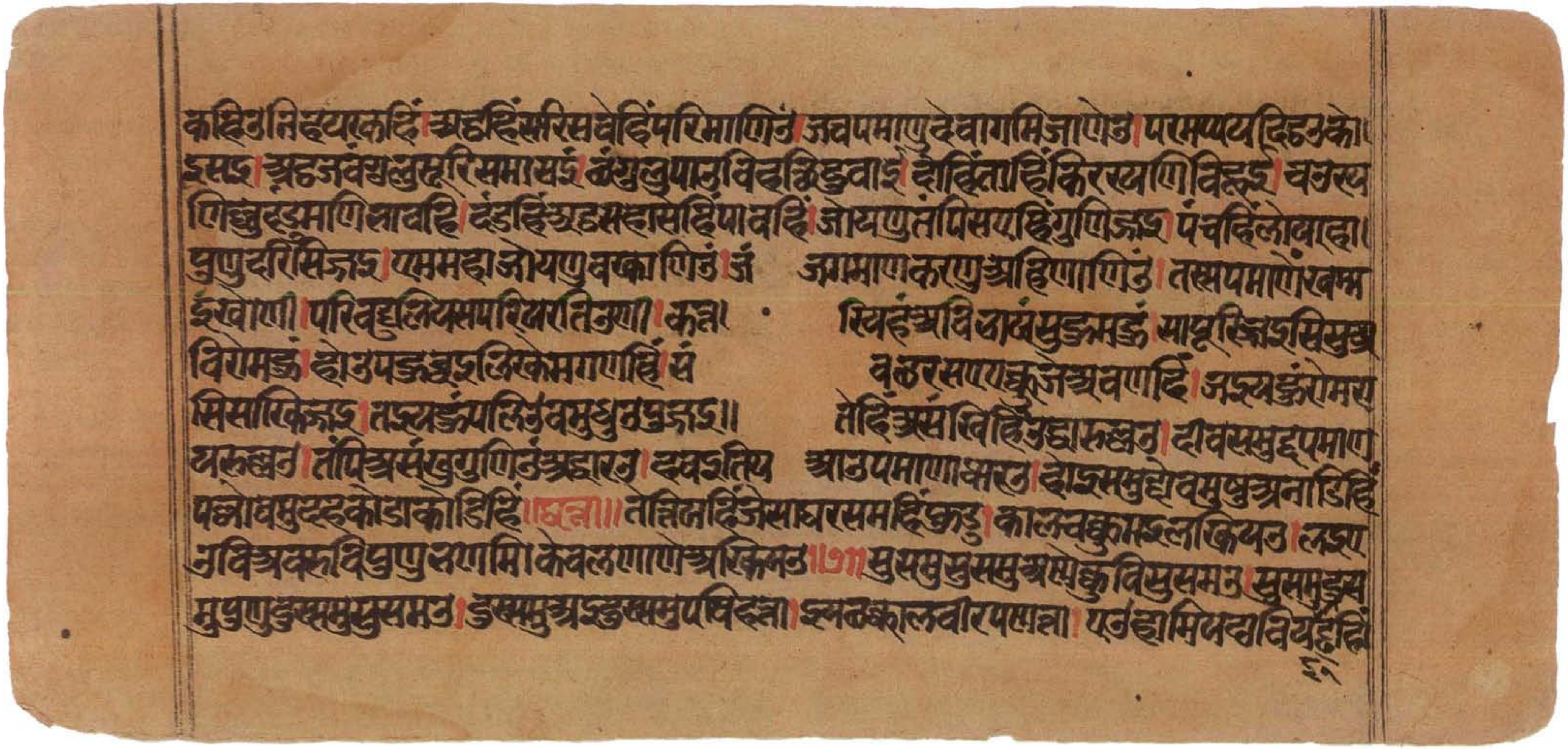

आठ सरसों को इकट्ठा करने पर एक जौ का आकार बनता है ऐसा जिनागम में कहा गया है। परमपद में स्थित लोगों के द्वारा जो देखा जाता है उसमें कौन दोष लगा सकता है? मुनि लोग संक्षेप में आठ जौ का एक अंगुल बताते हैं। छह अंगुलों का एक पाद होता है, दो पाद की एक वितस्ति, दो वितस्तियों का एक रत्नी, चार रत्नियों का एक दण्ड मन में भाता है। हजार दण्डों का एक योजन होता है, उस योजन को आठ हजार से गुणित किया जाये और फिर उसे भी पाँच सौ से गुणा किया जाये, और फिर लोक को दिखाया जाये—इस प्रकार महायोजन कहा जाता है और जिसे जग को मापने का आधार समझा जाता है उसके प्रमाण से धरती खोदी जाये, अपनी परिधि से तीन गुनी अधिक गोल-गोल। और जो कैंची से न काटे जा सके ऐसे सूक्ष्म मेष के बच्चों के रोमों से उसे भरा जाये। जब वह भर जाये तो उसे गिनो मत। सौ साल में एक बाल निकालो, जब वह रोमराजि समाप्त हो जाये तब निश्चय से एक व्यवहार पल्य पूरा होता है। उन असंख्य पल्यों से एक उद्धारपल्य बनता है, और असंख्यात उद्धारपल्यों से एक द्वीप-समुद्रप्रमाण काल बनता है। उसमें भी असंख्यात का गुणा करने पर एक अद्धा पल्य बनता है जो जन्म, स्थिति, आयु और प्रमाण का धारक होता है। दस करोड़ पल्यों के बराबर घटिकाओं के समाप्त होने पर एक सागरप्रमाण समय होता है।

घत्ता—इतने ही सागरों के बराबर कालचक्र को मैंने लक्षित किया है, लो मैं वैसा ही बताता हूँ कि जैसा केवलज्ञानी ने कहा है॥७॥

८

सुषमा-सुषमा एक और सुषमा, सुषमा-दुषमा फिर दुषमा-सुषमा, दुषमा, अति दुषमा भगवान् महावीर के द्वारा विज्ञप्त ये छह काल विभाजित हैं। यह कालचक्र क्रमशः ऋद्धि को घटाता-बढ़ाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

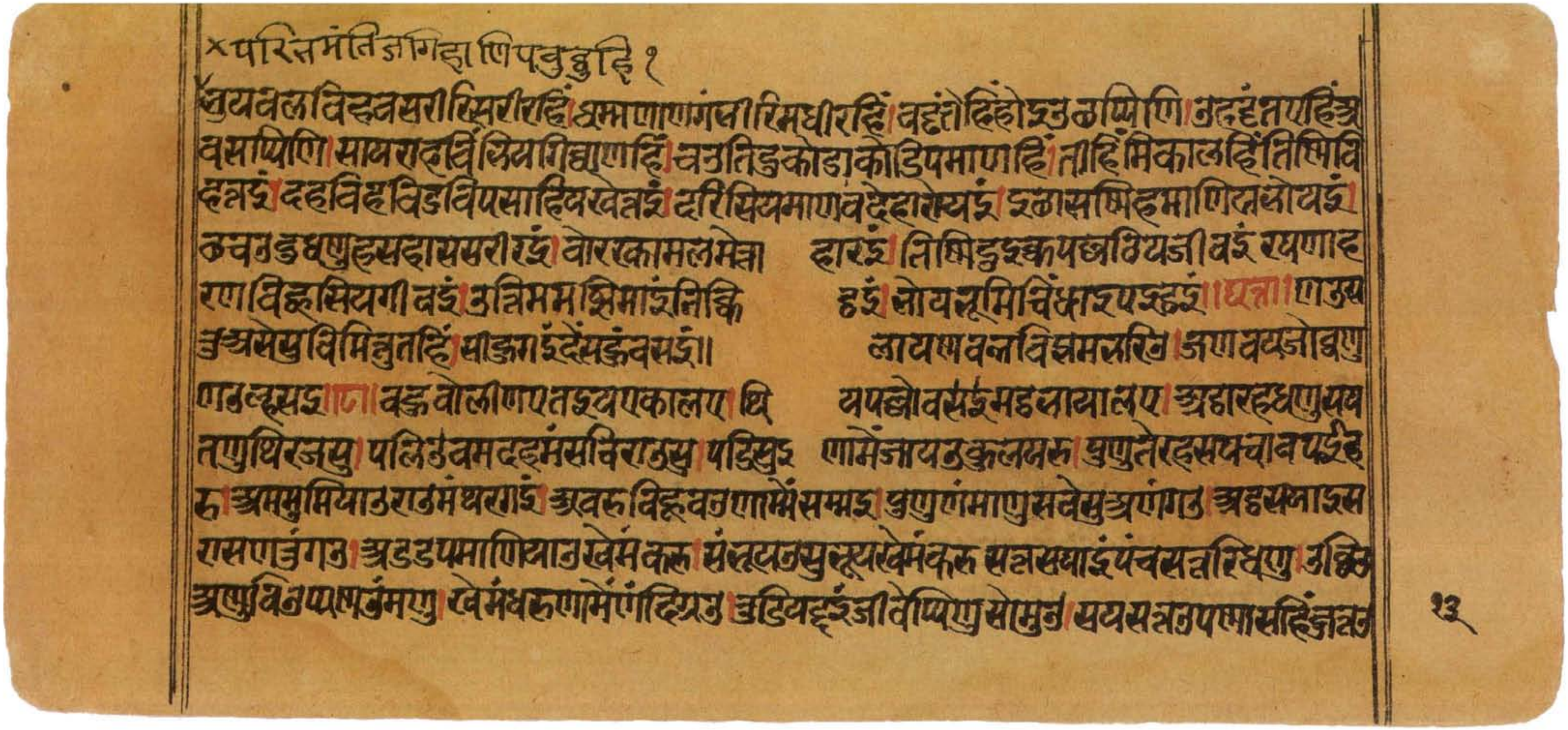

हानि और वृद्धि को करता हुआ लोक में घूम रहा है। जब बाहुबल, वैभव, मनुष्य, शरीर, धर्म, ज्ञान, गाम्भीर्य और धैर्य बढ़ते हैं, तो उत्सर्पिणी काल होता है, और जब ये चीजें घटती हैं तब अवसर्पिणी काल होता है। देवताओं को चकित करनेवाले इन कालों का समय, क्रमशः तीन, चार और दो कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण होता है, तीनों काल तीन प्रकार से विभक्त हैं। इनमें दस प्रकार के कल्पवृक्षों से प्रसाधित क्षेत्र हैं। मनुष्य के शरीर नीरोग दिखाई देते हैं। इच्छा के अनुसार भोगों को प्राप्त करते हैं। मनुष्यों के शरीर क्रमशः छह, चार और दो हजार धनुषप्रमाण होते हैं। उनका आहार क्रमशः बेर, बहेड़ा और आँवले की मात्रा के बराबर होता है। उनकी आयु क्रमशः तीन, दो और एक पल्य की होती है। शरीर रत्नों और अलंकारों से विभूषित होते हैं। इस प्रकार भोगभूमि के चिह्न प्रकट हुए—उत्तम, मध्यम और जघन्य।

घत्ता—जहाँ कोई शत्रु नहीं होता, सभी मित्र हैं। सिंह हाथी के साथ रहता है तथा लोगों का लावण्य रंग और विलास से परिपूर्ण वय और यौवन नष्ट नहीं होते॥ ८॥

९

तीसरा काल बीतने पर, जब पल्योपम के आठवें भाग बराबर समय रह गया, तब प्रतिश्रुति नाम का दीर्घायुवाला कुलकर उत्पन्न हुआ, स्थिर यशवाला जो अठारह सौ धनुषप्रमाण शरीर का था उसकी आयु पल्योपम के दसवें भाग के बराबर थी। फिर तेरह सौ धनुषप्रमाण शरीरवाला अमितायु और मन्थर गतिवाला सन्मति नाम का कुलकर उत्पन्न हुआ। फिर कामदेव के समान तथा आठ सौ धनुषप्रमाण शरीरवाला अडड बराबर आयु से युक्त प्राणियों का कल्याण करनेवाला क्षेमंकर कुलकर उत्पन्न हुआ। फिर सात सौ पचहत्तर धनुषप्रमाण शरीरवाला एक और मनु हुआ, उसका नाम क्षेमन्धर था और वह दिग्गज था, जो एक तुट्य वर्षप्रमाण जीवित रहकर मर गया। फिर जिसका शरीर सात सौ पचास

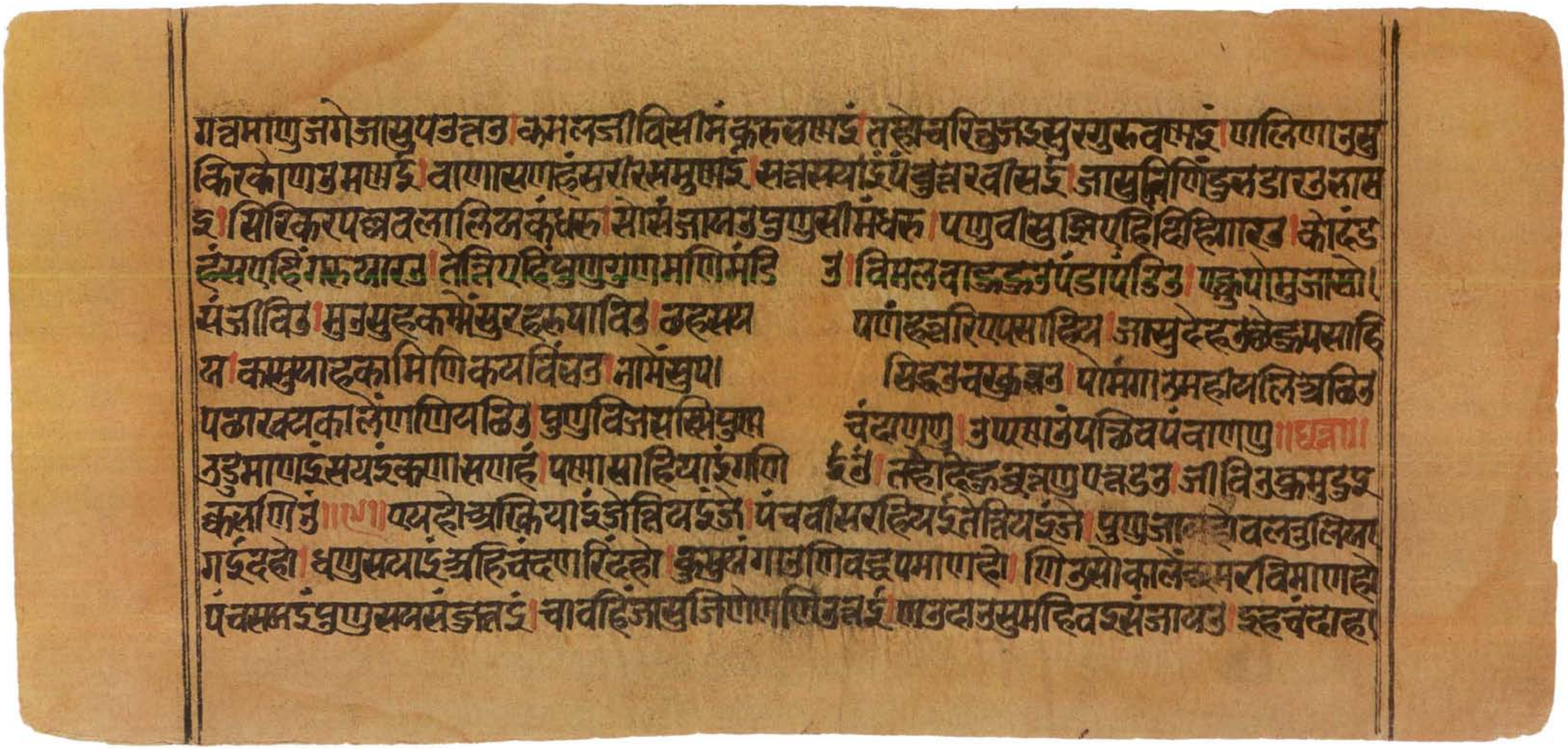

धनुषप्रमाण कहा जाता है ऐसे सीमंकर की आयु कमलांक-प्रमाण थी। उसके चरित का वर्णन बृहस्पति ही कर सकता है। नलिन के बराबर आयुवाले उसे कौन नहीं जानता! जिनेन्द्र भगवान् ने जिसके शरीर की ऊँचाई सात सौ पच्चीस धनुषप्रमाण बतायी है, तथा जिसके कन्धे लक्ष्मी के कर-पल्लवों से लालित हैं ऐसा सीमंधर कुलकर उत्पन्न हुआ। सीमन्धर की आयु से पच्चीस वर्ष कम अर्थात् सात सौ धनुषप्रमाण ऊँचाईवाला भाग्यशाली पण्डितों में चतुर, उतने ही गुणों से मण्डित विमलवाहन कुलकर उत्पन्न हुआ, जिसका जीवन एक पद्मप्रमाण था। उसने मरकर स्वर्ग प्राप्त किया। जिसके शरीर की ऊँचाई छह सौ पचहत्तर धनुषप्रमाण थी, कामिनियों को विस्मय में डालनेवाला सुप्रसिद्ध नाम चक्षुद्भव उत्पन्न हुआ। वह एक पद्म समय धरती पर जीवित रहा। बाद में क्षयकाल ने उसे समाप्त कर दिया। फिर पूर्णेन्दु के समान मुखवाला और राजाओं में सिंह यशस्वी नाम का कुलकर हुआ।

घत्ता—मैं, पचास अधिक ऋतुओं की संख्या के बराबर अर्थात् छह सौ पचास धनुषप्रमाण, उसके शरीर की ऊँचाई गिनता हूँ और उनका जीवन-काल एक कुमुदप्रमाण बताता हूँ॥ ९॥

१०

यशस्वी की जितनी ऊँचाई बतायी गयी है, उसमें पच्चीस वर्ष कम, अर्थात् छह सौ पच्चीस धनुषप्रमाण शरीरवाला अभिचन्द राजा हुआ जो शक्ति में हाथियों को तौलता था। उसकी आयु एक कुमुदांग के बराबर निबद्ध थी। वह भी समय आने पर अमर विमान में चला गया। फिर सौ सहित पाँच सौ अर्थात् छह सौ धनुषप्रमाण जिसका शरीर, जिनेन्द्र ने बताया है, पल्य के १० हजार करोड़ वर्ष के बराबर आयुवाला ऐसा विख्यात चन्द्राभ नाम का राजा हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

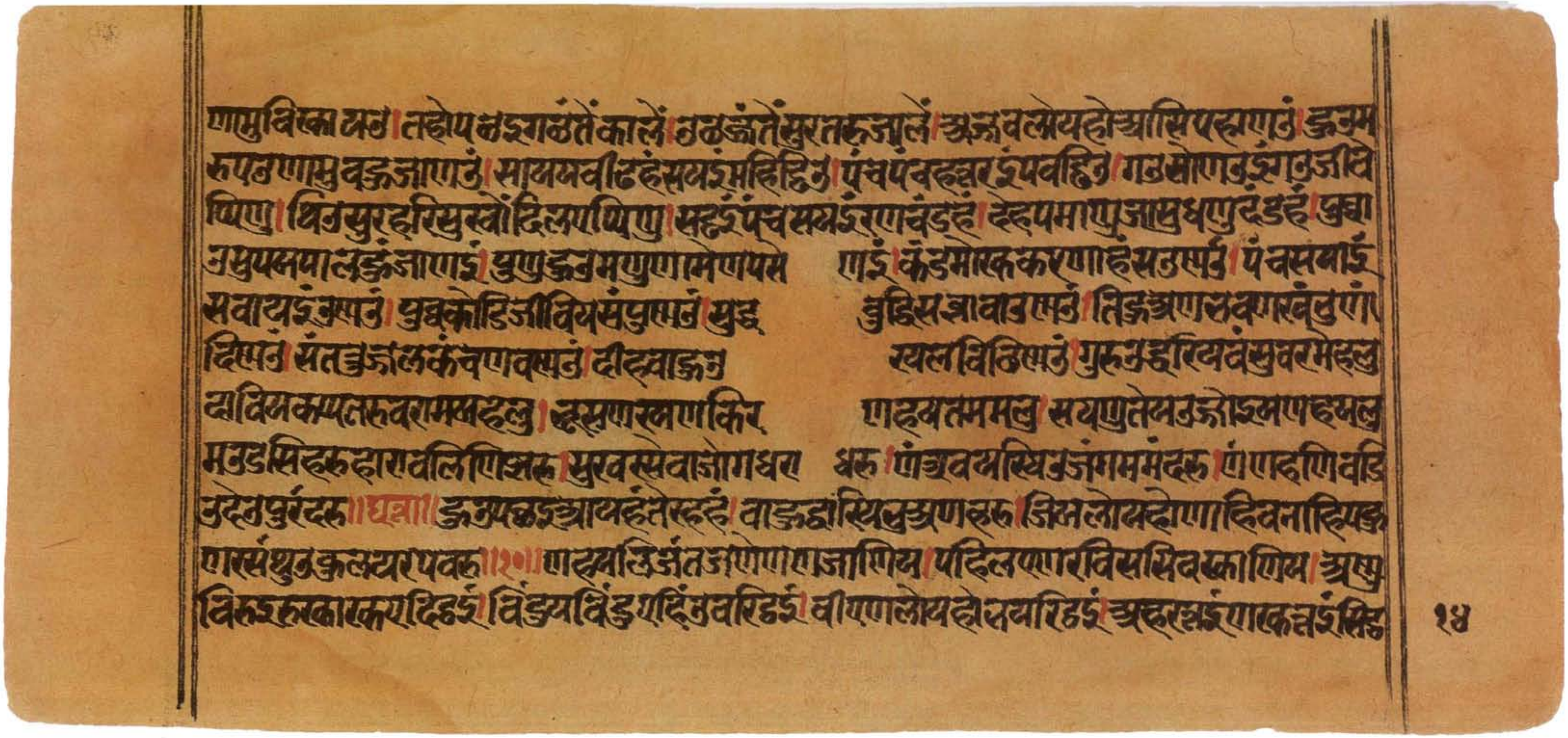

उसके बाद समय बीतने पर कल्पवृक्षों की परम्परा नष्ट होने पर, आर्यलोक का प्रधान मरुदेव नाम का बहुज्ञानी राजा हुआ, जो पचहत्तर सहित पाँच सौ अर्थात् पाँच सौ पचहत्तर धनुषप्रमाण शरीरवाला था, वह नौ अंगप्रमाण जीवित रहकर देवशरीर प्राप्त कर स्वर्गलोक चला गया, फिर जिसकी आयु एक पूर्वप्रमाण, जो प्रजा का पालन करना जानता था, ऐसा प्रसेनजित् नाम का मनु हुआ। उसका शरीर सवा पाँच सौ धनुषप्रमाण ऊँचा था। पूर्वकोटि आयु से परिपूर्ण जो शुद्ध बुद्धि और सद्भाव से आपूरित था। तपे हुए सोने के रंग के समान जो मानो त्रिभुवनरूपी भवन का आधार-स्तम्भ था। अपने भारी वंश का उद्धार करनेवाला, श्रेष्ठ मेखला से युक्त, कल्पवृक्ष के अमृतफलों को दिखानेवाला, आभूषण रत्नों की किरणों से तममल को नष्ट करनेवाला, अपने शरीर के तेज से आकाशतल को आलोकित करनेवाला, मुकुटरूपी शिखर से और हारावलि के निर्झर से युक्त जो ऐसा लगता था मानो सुरवरों के सेवायोग्य धरा को धारण करनेवाला मन्दराचल ही अवतरित हुआ हो, या मानो आकाश से इन्द्रदेव गिर पड़ा हो।

घत्ता—इन तेरह कुलकरों के बाद, अपने बाहुओं से भुवनभार को उठानेवाले नरों से संस्तुत महान् कुलकर नाभि राजा हुए, जो मानो जीवलोक के लिए धुरी के समान थे॥ १०॥

११

आकाशतल में जाते हुए जो आदमी के द्वारा नहीं जाने जाते थे, पहले कुलकर ने उन्हें सूर्य और चन्द्रमा कहा। और भी जो ज्योतिरंग कल्पवृक्षों के नष्ट हो जाने पर बिन्दुओं-बिन्दुओं पर स्थित दिखाई देने लगे। दूसरे कुलकर ने (सन्मति ने) भी लोक के लिए उत्पातस्वरूप दिन-रात और नक्षत्रों का कथन किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हूया जे मृग दारुण जइयहुं तइयएण ते साहिय तइयहुं।
सिंगि णक्खि दाढि वि परिहरिया सोम्म सुलक्खण णियडइ धरिया।
चोत्थएण पुणु णउ उप्पेक्खिउ लोउ मृगहिं खज्जंतउ रक्खिउ।
ताडिय ते तढदंडपहारिहिं पंचमेण बहुबुद्धिपयारिहिं।
वियलियफल तरु विरइयमेरइ अज्जव सुणिरोहिय णियकेरइ।
पविरलदुमकालइ कुज्झंता फललोहें कोहें जुज्झंता।
छट्ठएण मणुणा अणुयंधें वारिय णर कयसीमाचिंधें।

घत्ता—कुलयरपवरेण वि सत्तमेण णियमइविहवें भाविउ॥
पल्लाणिवि हयगयवरवसहभारारोहणु दाविउ॥ ११॥

१२

अट्ठमेण चंगउ उवएसिउ डिंभयदंसणभउ णिण्णासिउ।
णवमएण सुयमुहससि दरिसिउ तं जोइवि जणु हियवइ हरिसिउ।

और अब जो भयंकर पशु उत्पन्न हुए, तो तीसरे ने उनके पशुस्वरूप का वर्णन किया। सींगों, नखों और दाढ़ोंवाले पशुओं को छोड़ दिया और जो सौम्य और सुलक्षण थे, उन्हें अपने पास रख लिया। चौथे कुलकर ने भी उपेक्षा नहीं की तथा पशुओं के द्वारा खाये जाते हुए लोक की रक्षा की। पाँचवें ने दृढ़ दण्डों के प्रहारों और अनेक बुद्धिप्रकारों से उन्हें प्रताड़ित किया। छठे कुलकर सीमन्धर ने विगलित फलवाले वृक्षों को मर्यादायुक्त अपनी आज्ञा से सीधे सुनिबद्ध किया। वृक्षों के उस अभावकाल में नष्ट होते हुए, तथा फलों के लोभ और क्रोध से झगड़ते हुए लोगों को आग्रह के साथ मना किया।

घत्ता—सातवें श्रेष्ठ कुलकर ने भी अपनी बुद्धि के वैभव से विचार किया तथा जीन कसकर अश्व, गज एवं श्रेष्ठ बैलों पर भार लादना सिखाया॥ ११॥

१२

आठवें ने सुन्दर उपदेश दिया और बच्चे के देखने के डर को दूर कर दिया (उसके पूर्व पिता पुत्र का मुख और आँखें देखे बिना मर जाते थे)। नौवें कुलकर यशस्वी ने पुत्र के मुखरूपी चन्द्रमा को देखना बताया। उसे देखकर लोग अपने मन में प्रसन्न हुए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खणु जीवेप्पिणु मुउ सोमालहुं दहमें केलि पयासिय बालहुं।
एयारहमइ कुलयरि जायइ णंदणि माणववंदहु हूयइ।
जीउ ण वज्जइ कइवयदिवसइं बारहमइ हुइ बहुयइं वरिसइं।
णंदइ पय पयाइ संजुत्ती तेरहमेण वियप्पिय वित्ती।
विहियइं सरिसमुद्दजलजाणइं गयणलग्गगिरिवरसोवाणइं।
तक्कालइ जायइं णिम्मग्गइं कुसरि कुसायर कुकुहर दुग्गइं।

घत्ता—जाएं मणुणा चोद्दहमइण णरसिसुणालइ खंडियइं॥
कसणब्भइं थियइं णहंगणइ चलसोदामणिसंडियइं॥ १२॥

विसकालिंदिकालणवजलहरपिहियणहंतरालओ।
धुयगयगंडमंडलुड्डावियचलमत्तालिमेलओ॥
अविरलमुसलसरिसथिरधारावरिसभरंतभूयलो।
हयरवियरपयावपसरुग्गयतरुतणणीलसद्दलो॥

लेकिन बालक एक क्षण जीवित रहकर मर गया। दसवें कुलकर अमिचन्द (अमृतचन्द्र) ने सुकुमार बालकों की क्रीड़ा दिखलायी। ग्यारहवें कुलकर चन्द्राभ के होने पर मानव समूह के पुत्र उत्पन्न होने लगे। लेकिन कुछ दिनों के बाद उनका जीव नहीं बचता, बारहवें कुलकर मरुदेव के होने पर वे जीवित रहने लगे और प्रजा पुत्रादि से संयुक्त होकर आनन्द से रहने लगी। तेरहवें कुलकर प्रसेनजित् ने उनकी आजीविका की चिन्ता की। उसने समुद्र-नदियों के लिए जलयान बनाये। आकाश को छूनेवाले पहाड़ों पर सोपान बनाये गये। उन्हीं के समय उत्पाती नदियों और समुद्रों में निश्चित मार्ग बनाये गये तथा पहाड़ों में दुर्ग रचे गये।

घत्ता—चौदहवें कुलकर नाभिराज के उत्पन्न होने पर मानव-शिशुओं के नाल काटे जाने लगे, और सुन्दर बिजलियों से अलंकृत काले बादल आकाशरूपी आँगन में स्थित हो गये॥ १२॥

१३

जिसमें विष, यमुना और काल के समान (काले) नवमेघों ने आकाश के मध्यभाग को ढँक लिया था, जो गजों के हिलते हुए गण्डस्थलों से उड़ाये गये भ्रमरसमूह के समान था, जिसने अविरल मूसलाधार धारावाहिक वर्षा से भूतल को भर दिया था, जो सूर्य की किरणों के प्रताप को नष्ट करनेवाला, निकलते हुए वृक्षों और तृणों के समान नीले पत्रों से नीला और हरा-भरा था,

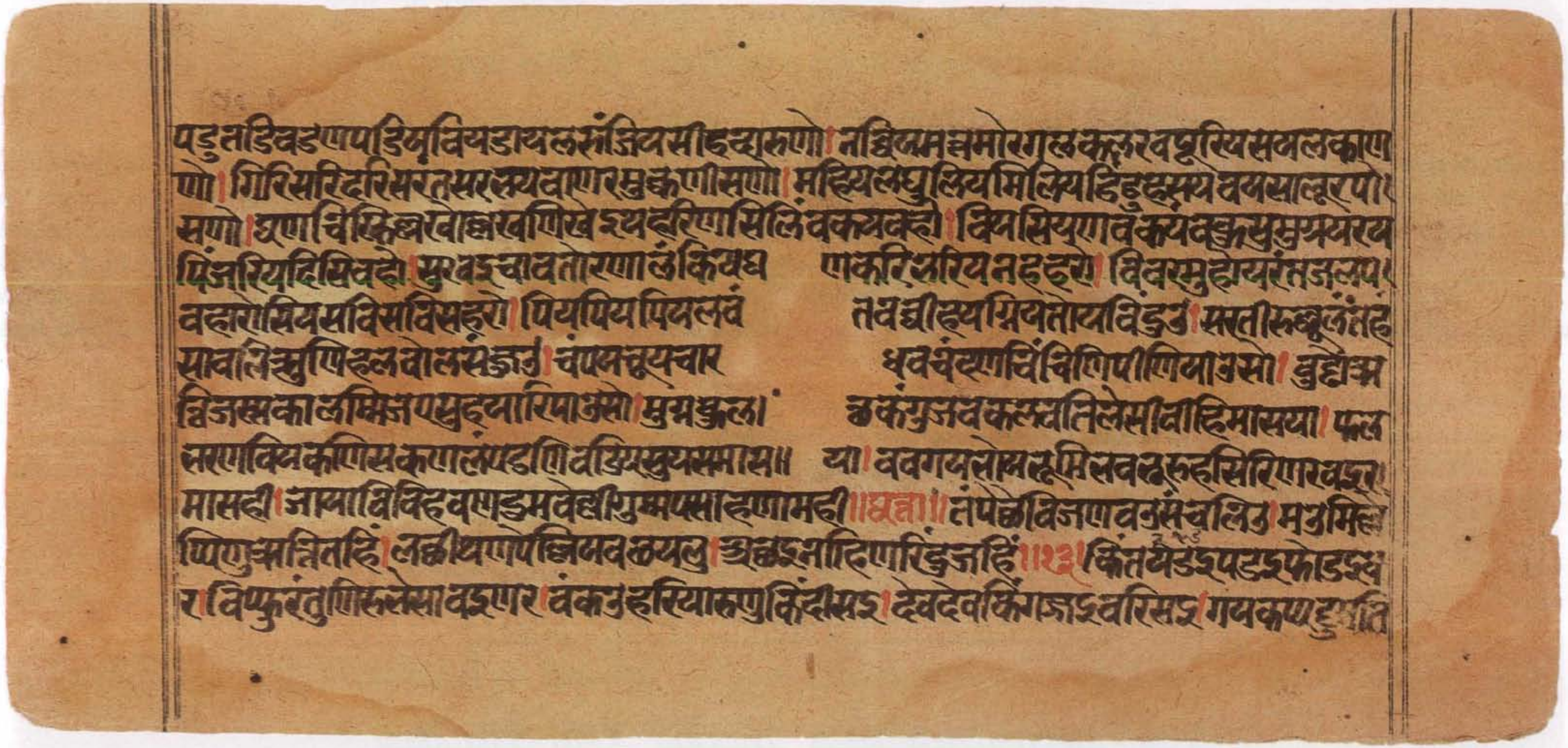

तथा वज्र और बिजलियों के पतन से ध्वस्त पर्वत पर गरजते हुए सिंहों से भयंकर था, जिसमें नाचते हुए मतवाले मयूरों के सुन्दर शब्द से समस्त कानन गूँज उठा था, जिसमें पहाड़ की नदियों और घाटियों में बहते हुए जलों के स्वरों से भयभीत वानर शब्द कर रहे थे, जो धरती में फैले हुए और मिले हुए डुंडुह (निर्विष साँप), सर्पों और मेंढकों को पोषण देनेवाला था, जो कीचड़ की कोटरों और गड्ढों में रखे हुए मृगशावकों का वध करनेवाला था, जिसमें खिले हुए नवकदम्ब के कुसुमों से निकली हुई धूल से दिशापथ पोले थे, इन्द्रधनुष के तोरणों से अलंकृत मेघरूपी गजों से, जिसमें आकाशरूपी घर भरा हुआ था। बिलों के मुख पर पड़ते हुए जलप्रवाहों से जिसमें विषैले विषधर क्रुद्ध हो रहे थे। जिसमें पिउ-पिउ-पिउ बोलते हुए पपीहों के द्वारा जल की बूँदें माँगी जा रही थीं। सरोवरों के किनारों पर उल्लसित होती हुई हंसावली की ध्वनियों के कोलाहल से जो युक्त था। जो चम्पक, आम्र, चार, चव, चन्दन और चिंचिंणी वृक्षों के प्राणों का सिंचन करनेवाला था, ऐसा पावस जिस कुलकर के समय जगत् में शीघ्र बरस गया। धरती मूँग, कुलत्थ, कंगु, जौ, कलम (सुगन्धित धान्य), तिल, अलसी, ब्रीहि और उड़द से युक्त हो उठी। जिस पर फल के भार से झुकी हुई बालों के कणों के लालची हजारों शुक गिर रहे हैं, जिससे भोगभूमि के कल्पवृक्ष विदा हो चुके हैं, और जो (भूमि) राजा की लक्ष्मी की सखी है, ऐसी वह भूमि विविध धान्यों, वृक्षों और लतागुल्मों से प्रसाधित हो उठी।

घत्ता—उस भूमि को देखकर जनपद अहंकार छोड़कर शीघ्र ही वहाँ चला जहाँ लक्ष्मी के स्तनों से सटा है वक्षःस्थल जिसका, ऐसा नाभि नरेन्द्र विराजमान था॥ १३॥

१४

जनों ने कहा—"यह तड़-तड़ करके क्या गिरता है जो धरती को फोड़ रहा है? अत्यन्त चमकता हुआ यह लोगों को डराता है। वक्र यह हरा और लाल क्या दिखाई देता है? हे देव, हे देव, यह क्या गरजता और बरसता है?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

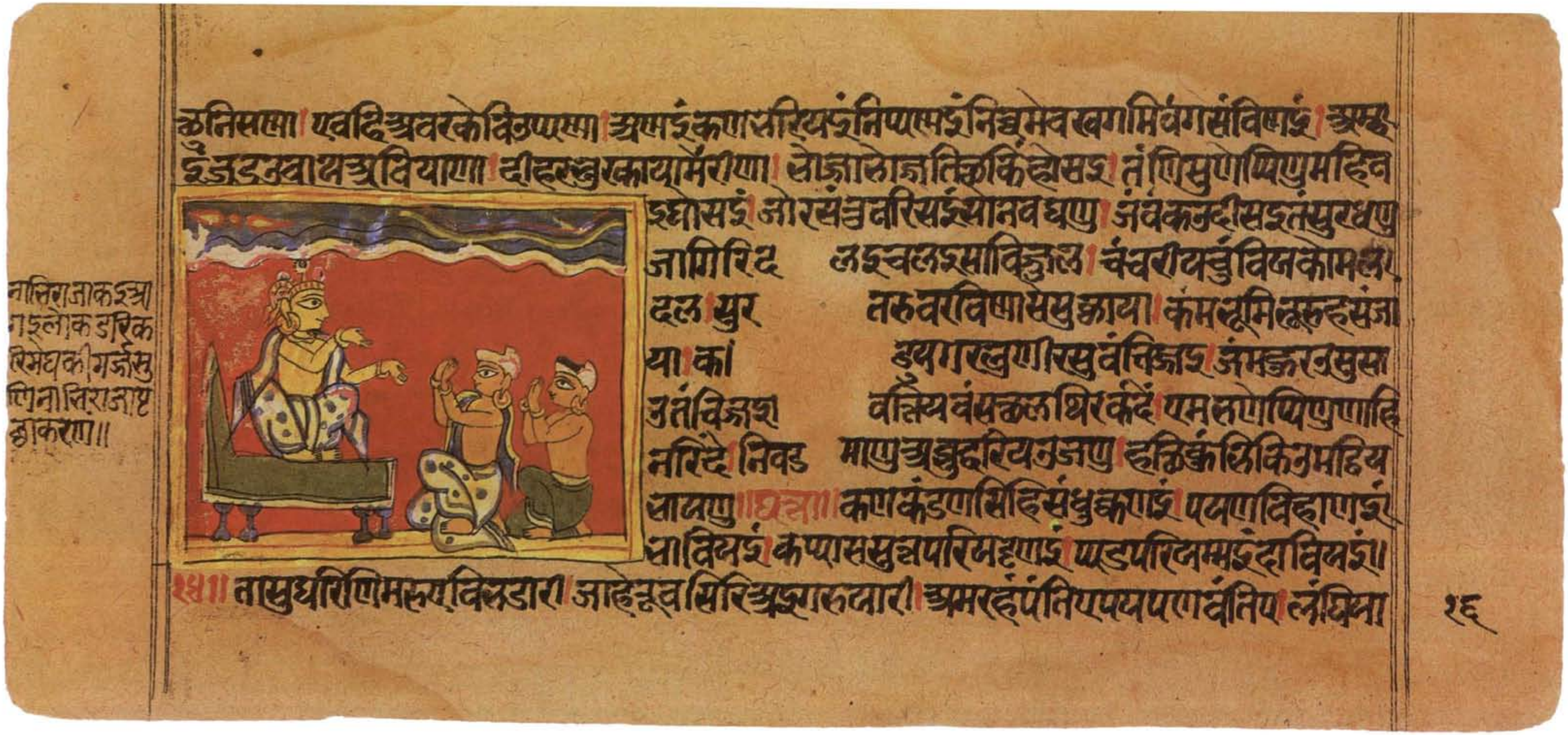

गत कल्पवृक्ष जहाँ पर स्थित थे, इस समय वहाँ पर दूसरे वृक्ष उग आये हैं और दानों से भरे हुए पौधे निष्पन्न हुए हैं जो नित्य ही पक्षियों और पशुओं के द्वारा चुगे जाते हैं। उपाय को नहीं जाननेवाले हम लोग जड़ हैं और लम्बी भूख के क्लेश से दुःखी हैं। उनमें खाने योग्य और न खाने योग्य क्या होगा?'' यह सुनकर राजा घोषणा करता है— ''जो गरजता हुआ बरसता है वह नवघन है। जो टेढ़ा दिखाई देता है वह इन्द्रधनुष है। जो चलती है और पहाड़ को नष्ट कर देती है वह बिजली है। कल्पवृक्षों के नष्ट होने पर अच्छी छायावाले ये कर्मभूमि के वृक्ष उत्पन्न हुए हैं। जो कडुवा-विषैला और नीरस फल है उससे बचना चाहिए, और जो मधुर तथा सुस्वादु है उसे खाना चाहिए।'' क्षत्रियरूपी वंशस्थल के प्रथम अंकुर नाभिराजा ने यह कहकर नष्ट होती हुई प्रजा का उद्धार किया। हाथी के कुम्भस्थल के समान उन्होंने मिट्टी का घड़ा बनाया।

घत्ता—(उन्होंने) दानों का फटकना, आग को धौंकना आदि और भोजन बनाने के विधानों को उत्पन्न किया। तथा कपास से सूत खींचना और कपड़ा बुनने का कर्म बताया॥ १४॥

१५

आदरणीया मरुदेवी उनकी गृहिणी थीं जिनकी रूपश्री गौरव को बढ़ानेवाली थी। जिसके नूपुरों ने मानो यह घोषणा की कि आकाश से आयी हुई देवपंक्ति ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चरणतलों (तलुओं) के राग (लालिमा) में क्या पाया कि जो उसने हमारी उपेक्षा की। एड़ी के निचले हिस्सों ने अपना अनुरक्त चित्त बता दिया। अँगुलियों ने अपनी सरलता प्रकाशित कर दी। अँगूठों की उन्नति के कारण गूढ़ गाँठें हैं जो दुष्ट और कठोर हैं। रोमविहीन, शिरारहित, गोल, चिकनी, सुन्दर और उजली जाँघें क्रमिकहीनता से नीचे-नीचे अपकर्ष को प्राप्त होती हुईं, दुष्ट मित्रों की क्रिया को प्रकट करती हैं। जो राजाओं की मन्त्रणा की भाषा की तरह गूढ़ हैं, जो व्याकरण की तरह समास (समास और मांस) से रचित हैं, मानो वे सघन सन्धिबन्धों से युक्त काव्य हैं। देवी के घुटने अत्यन्त भव्य हैं, जिसके जाँघोंरूपी खम्भे राजाओं के दमन के लिए थे अथवा रति के भवन के लिए तोरण-खम्भों के समान थे। जिसने देवों और मनुष्यों सहित त्रिभुवन को जीत लिया है, जिसे देवों द्वारा कामतत्त्व कहा जाता है, मानो उसने इस देवी के कटि-बिम्ब को स्थिरता प्रदान की है, उसके नितम्बों की गुरुता का वर्णन मैं क्या करूँ?

घत्ता—उसकी गम्भीर नाभि, दुबले मध्यभाग और तुच्छ (छोटे) उदर को मैंने देखा है। संसर्ग के कारण किसी में कोई गुण नहीं आता, यदि वह गुण जन्म से उसमें स्वयं पैदा नहीं होता॥ १५॥

१६

त्रिवलियों की सीढ़ियों से चढ़कर, रोमावलीरूपी मार्ग पारकर, कामदेव स्तनरूपी गिरीन्द्र पर चढ़ने के लिए डोरस्वरूप मुक्ताहार से जा लगा। प्रिय का वशीकरण मन्त्र जिसके भुजमूल में निवास करता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

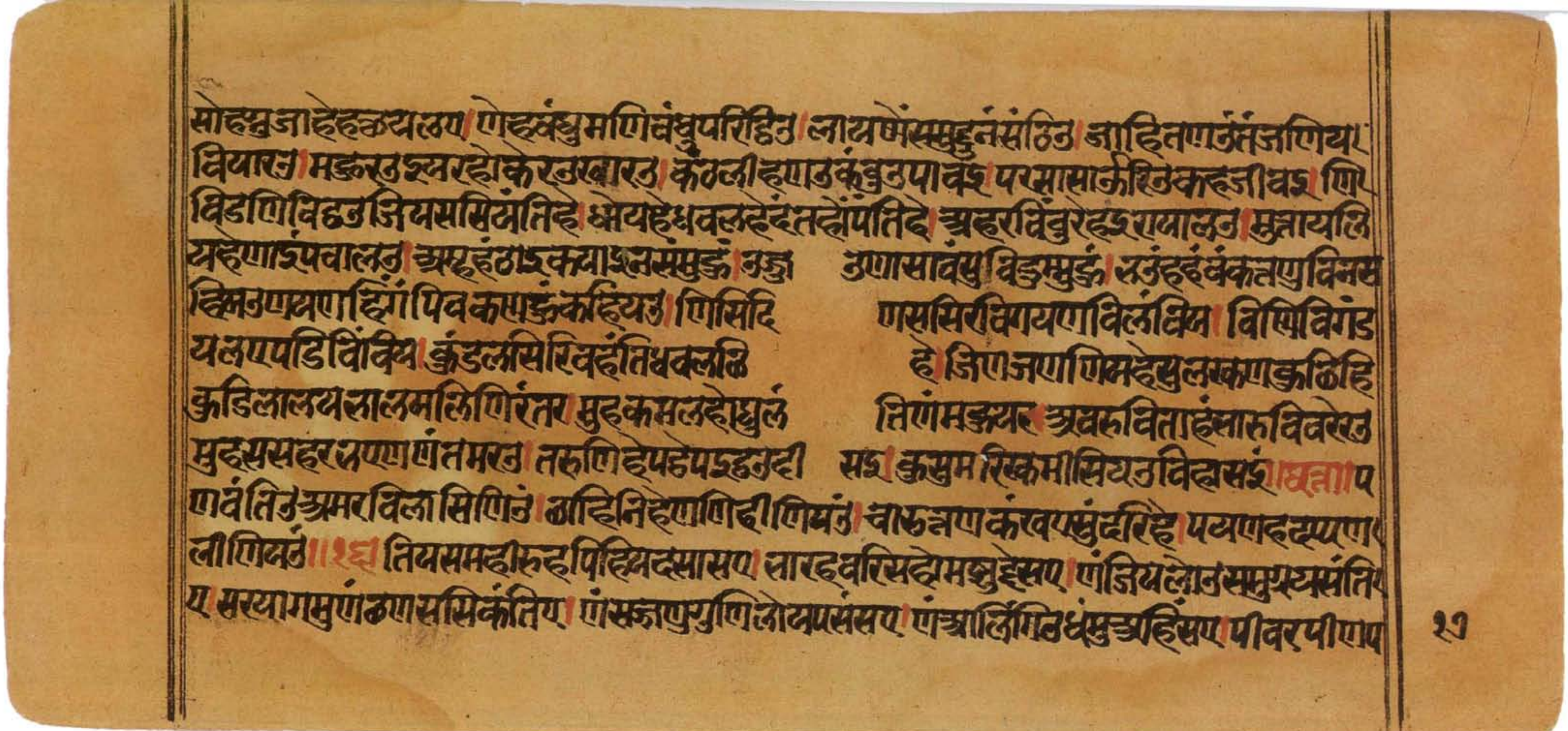

और पवित्र सौभाग्य हथेली में। स्नेहबन्ध, जिसके मणिबन्ध (प्रकोष्ठ) में स्थित है, लावण्य में समुद्र जिसके सम्मुख नहीं ठहरता, वह जिसके लिए है उसी के लिए मधुर है, दूसरे के लिए विकार (रोग) जनक और खारा है। उसकी कण्ठरेखा को शंख नहीं पा सकता, दूसरों के श्वासों से आपूरित होकर वह क्यों जीवित रहता है? चन्द्रमा की कान्ति को जीतनेवाली धोयी हुई धवल, दन्त-पंक्ति के निकट रहनेवाला, लालिमा का घर अधर-बिम्ब ऐसा शोभित होता है जैसे मोतियों की माला में प्रवाल (मूँगा) हो। वह हमारे सामने कभी भी नहीं ठहरता, सीधा नासिका वंश भी दुर्मुख (दुष्ट) दो मुखवाला है। भौंहों का टेढ़ापन भी सहन नहीं किया गया। (नेत्रों के द्वारा), और उन्होंने जाकर कानों से कह दिया। दिन-रात आकाश में अवलम्बित रहनेवाले सूर्य और चन्द्रमा दोनों उसके गण्डतल में प्रतिबिम्बित हैं, और वे धवल आँखोंवाली तथा लक्षणों से युक्त कोखवाली प्रथम जिनेन्द्र की माता के कुण्डलों की शोभा को धारण करते हैं, उसके भालतल पर घुँघराले बाल निरन्तर ऐसे जान पड़ते हैं मानो मुखरूपी कमल पर भ्रमर मँडरा रहे हैं। और भी उनका विपरीत भार ऐसा ज्ञात होता है मानो मुखरूपी चन्द्रमा के डर से तम का प्रवाह उस तरुणी की पीठ में प्रविष्ट होता हुआ दिखाई देता है, और जो कुसुमरूपी नक्षत्रों से मिला हुआ शोभित होता है।

घत्ता—प्रणाम करती हुई प्रतिबिम्ब के बहाने अपने को हीन समझती हुई देव-स्त्रियाँ उस सुन्दरी के सौन्दर्य की आकांक्षा से पैरों के नखरूपी दर्पण में लीन हो गयीं॥ १६॥

१७

भारतवर्ष के कल्पवृक्षों से आच्छादित दसों दिशाओंवाले मध्यदेश में, जिसके हाथ पुष्ट और स्थूल स्तनों पर हैं, ऐसे अन्तिम कुलकर नाभिराजा उस मरुदेवी के साथ इस प्रकार रहते थे, मानो उत्पन्न शान्ति के साथ जीवलोक, मानो पूर्ण चन्द्रमा की कान्ति के साथ शरदागम; मानो गुणीजनों की प्रशंसा के साथ सज्जन, मानो अहिंसा के साथ धर्म आलिंगित हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जब वह अन्तिम कुलकर उसके साथ रह रहे थे तब इन्द्र अपने मन में विचार करता है कि जग में श्रेष्ठ देवों और मनुष्यों के द्वारा वन्दनीय, महान् संसाररूपी समुद्र से तारनेवाले, कामरूपी जड़ को काटने के लिए कुठार, आदरणीय आदि जिन इन दोनों से उत्पन्न होंगे। यह सोचकर उसने निश्चय कर लिया और कुबेर के लिए आदेश दिया — ''हे कुबेर, तुम शीघ्र चार द्वारोंवाला सुन्दर अत्यन्त भला नगरवर बनाओ।'' तब उस आदेश को यक्ष ने स्वीकार कर लिया और शीघ्र ही उसने साकेत नगर की रचना कर डाली।

घत्ता—जहाँ पवनरूपी आचार्य के कारण सुन्दर पत्तोंवाले (सुपात्रोंवाले) नन्दन वन, पुष्पों के मुखों से मुक्त पराग से मतवाले होकर नृत्य कर रहे हैं॥ १७॥

१८

सरोवर में जहाँ लक्ष्मी के चरण-स्पर्श से कमल सन्तोष के साथ विकसित होता है, दूसरों के द्वारा भुक्त और अन्धकार के दोष से मुक्त अपने कोश (धन, जो तम अर्थात् क्रोध से मुक्त है, अथवा कोश पराग का घर) से कौन आनन्दित नहीं होता! उस वैसे कमल को बालगज क्यों नष्ट करता है? मानो इसी कारण मधुकर-कुल क्रोध से आवाज करता है। वह गज क्या डरकर उसे (भ्रमर कुल को) दान (मदजल) देता है, दूसरा भी महान् व्यक्ति विनीत होता है!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

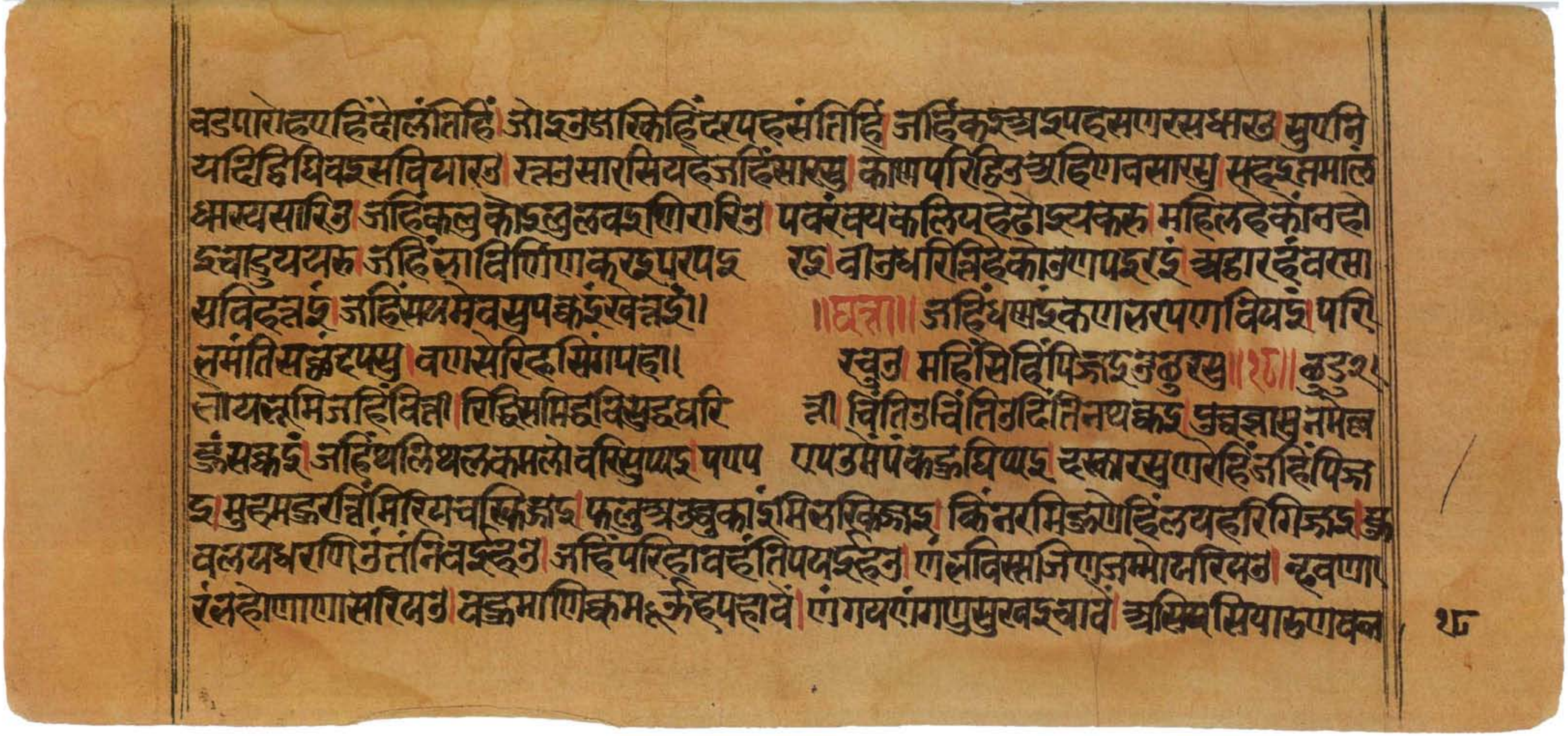

वटवृक्ष के तनों पर झूलती हुई और थोड़ा-थोड़ा मुसकाती हुई यक्षणियों के द्वारा जहाँ अत्यन्त हास्य रस को धारण करनेवाला वानर देखा जाता है, और जो विकारपूर्वक अपनी दृष्टि शुक्र पर डालता है, जहाँ सारसी में अनुरक्त कोई सारस सरस आवाज करता हुआ स्थित है। जहाँ तमाल वृक्षों के अन्धकार की लक्ष्मी का शत्रु चन्द्रमा शोभित है, जहाँ कोकिल अत्यन्त सुन्दर आवाज करता है, और जो प्रवर आम्र कलिका में अपनी चोंच (कर) ले जाता है, महिला के प्रति कौन मनुष्य चाटुकार नहीं होता! जहाँ स्त्री दूसरे के पति से रमण नहीं करती, जहाँ धरती में कोई बीज नहीं डालता। जहाँ अठारह प्रकार के धान्यों से विभाजित खेत अपने-आप पक जाते हैं।

घत्ता—जहाँ धान्य कणों के भार से झुके हुए हैं, पशु स्वच्छन्द विचरण करते हैं, और जंगली भैंसाओं के सींगों के प्रहार से च्युत ईख-रस भैंसों के द्वारा पिया जाता है॥ १८॥

१९

जहाँ हाल ही में भोगभूमि समाप्त हुई है और धरती ऋद्धियों से समृद्ध और विशुद्ध है। चिन्तित (वस्तुओं) को देते हुए भी जो नहीं थकती, मानो जो अपने पूर्व अभ्यास को छोड़ने में असमर्थ हैं। जहाँ जमीन पर, गुलाबों के ऊपर सोया जाता है और पग-पग पर कमल की पराग-पंक से लिप्त होना पड़ता है। जहाँ मनुष्यों के द्वारा द्राक्षा रस का पान किया जाता है और कोई अपूर्व फल का भक्षण किया जाता है। जहाँ पृथिवी मण्डल की भूमियाँ मानो राजाओं की आकांक्षाओं के समान हैं, जहाँ लम्बी-लम्बी परिखाएँ बहती हैं जो मानो भावी जिनेन्द्र के जन्म के अवसर पर स्नान को प्रारम्भ करने के लिए अवतरित हुई नाना नदियाँ हों। प्रचुर माणिक्यों की किरणों के प्रभावों से वह नगर ऐसा प्रतीत होता है मानो नाना इन्द्रधनुषों और

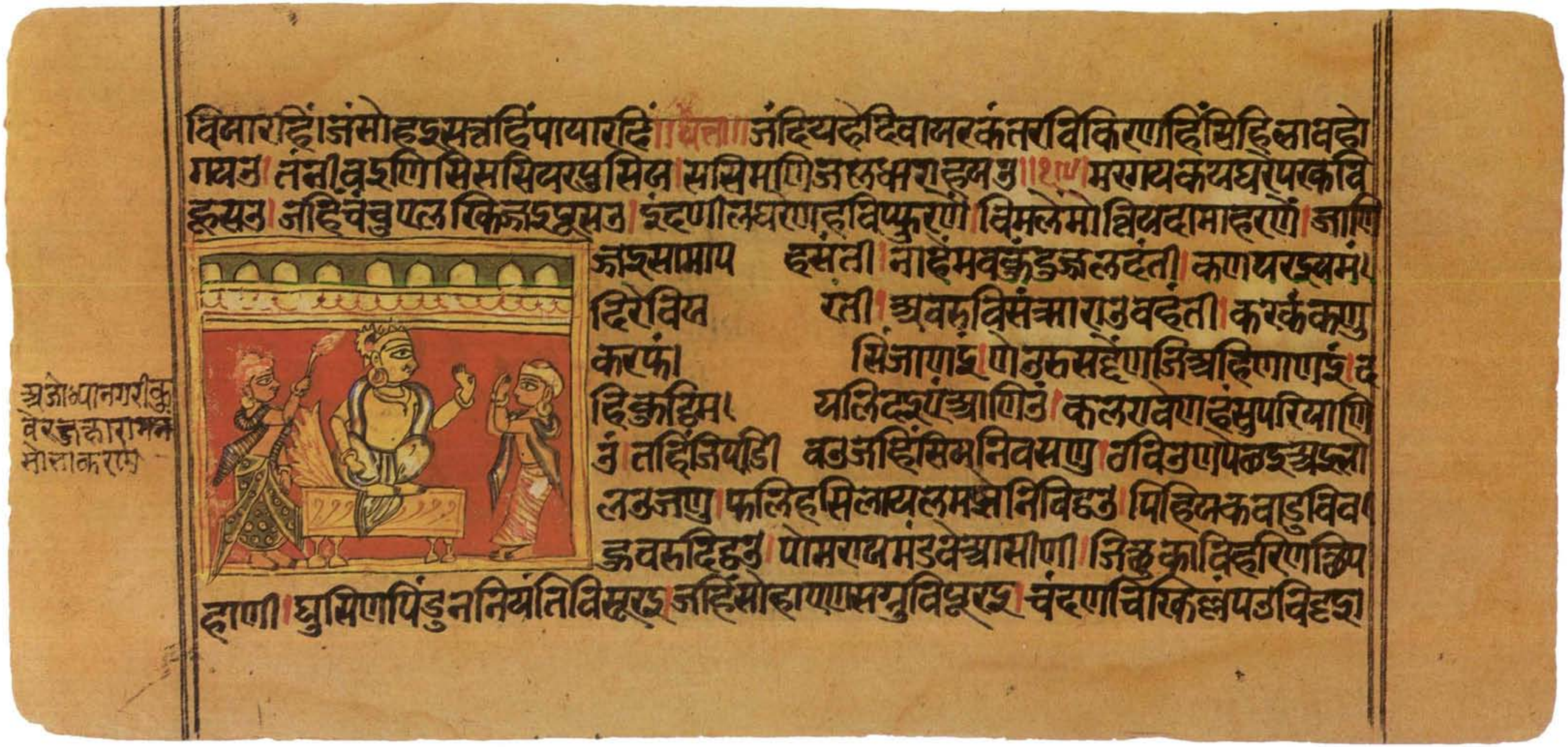

लाल रंगोंवाले सात परकोटों से शोभित है।

घत्ता—जो नगर दिन में सूर्यकान्त मणि की किरणों से अग्निभाव को प्राप्त होता है (जल उठता है) वही रात में चन्द्रकान्त मणियों की धाराओं से आहत होकर शान्त हो जाता है॥ १९॥

२०

जहाँ पन्नों के बने परों में, पंखों से विभूषित, शुक अपनी चोंच से पहचाना जाता है, इन्द्रनील मणि के घरों में, नवकुन्द पुष्प के समान उज्ज्वल दाँतोंवाली हँसती हुई श्यामा, आकाश को आलोकित करते हुए स्वच्छ मुक्तामाला के आभरण से (प्रिय के द्वारा) पहचानी जाती है। स्वर्णनिर्मित मन्दिर में विचरण करती हुई, सन्ध्याराग को धारण करनेवाली वह हाथ के स्पर्श से कंगन को जानती है, और शब्द करने से नूपुर को पहचानती है। प्रिय के द्वारा धवलशिला पर लाये गये हंस को वह कलरव से जान पाती है, धवल वस्त्र जहाँ गिर जाता है वह वहाँ ही पड़ा रहता है, आदमी वहाँ इतना भोला है कि रखे हुए वस्त्र को नहीं पहचान पाता। स्फटिक मणि के घर में स्थित वर-वधू को किवाड़ लगे रहने पर भी देख लिया जाता है। पद्मराग मणियों के मण्डप में बैठी हुई एक रमणी केशरपिण्ड नहीं देख पड़ने के कारण दु:खी हो उठती है। सौन्दर्य में स्वर्ग भी जिसकी पूर्ति नहीं कर सकता। जहाँ रास्ते चन्दन के कीचड़ से आर्द्र हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

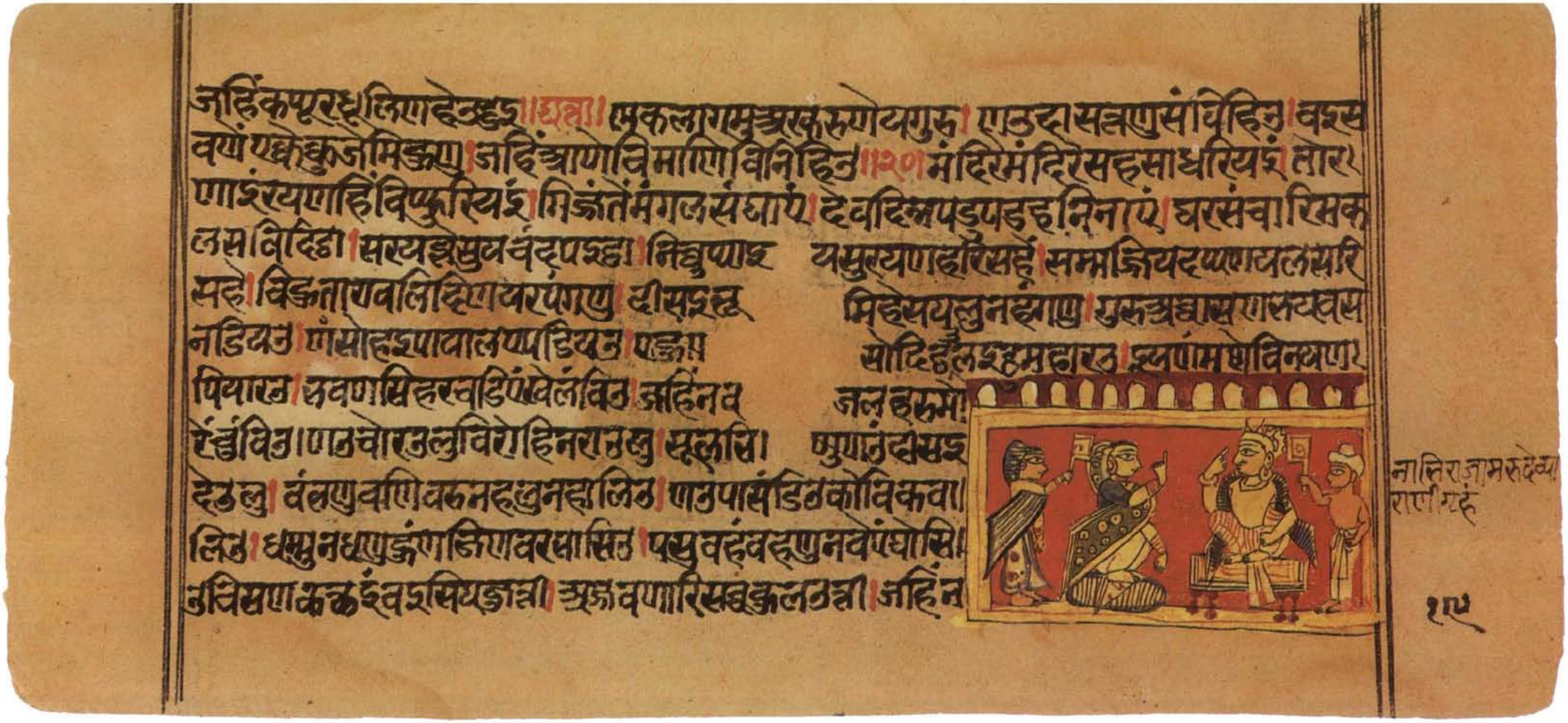

और कपूर की धूल आकाश में नहीं उड़ती।

घत्ता—जहाँ पर न कलागम है और न अक्षर, न गुरु है और न दासता बनायी गयी है। कुबेर के द्वारा एक-एक जोड़ा (युगल) लाकर और मानकर रख दिया गया है॥ २०॥

२१

घर-घर में शीघ्र ही रत्नों से विस्फुरित तोरणों को, गाये गये मंगलगीत समूहों और देवों के द्वारा आहत पटहनिनादों के साथ बाँध दिया गया। घर में संचरित होनेवाले कलश भी दिखाई दिए जो शरद् के मेघों के समान ऐसे लगते थे कि चन्द्रमा प्रविष्ट हुए हों। जिसमें नित्य देवताओं के लिए हर्ष उत्पन्न किया जाता है, और जो पोंछे गये दर्पणतल की तरह है ऐसी भूमि में प्रतिबिम्बित आकाशरूपी आँगन (जो चन्द्रमा, तारावलि और दिनकर का आँगन है) ऐसा शोभित होता है मानो अत्यन्त लम्बे समय तक स्थित रहने के डर से प्रवंचित होकर जैसे पाताललोक में पड़ा हुआ है। जहाँ प्रासादों के शिखरों पर चढ़े हुए मोर ने यह मानकर कि यह हमारा नेत्र-प्यारा इष्ट दिखाई दिया है, नवजलधर (नवमेघ) को चूम लिया। वहाँ न चोरकुल था, न विरोधी राजकुल था। और न त्रिशूलभिन्न देवकुल दिखाई देता था। जहाँ न ब्राह्मण था और न वणिकवर। न हल था और न किसान। न सम्प्रदाय था और न कापालिक। जहाँ क्षत्रिय धर्म नहीं था और न जिनेश्वर के द्वारा भाषित धर्म, न व्याधा के द्वारा किया गया और वेदों के द्वारा घोषित पशुवध था। न वेश्या थी और न वेश्या की युक्ति थी। समस्त नारियाँ और कुलपुत्रियाँ सीधी थीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहाँ न महाव्रत थे और न अणुव्रत। और न बुरा करनेवाली शिल्पजीवी प्रजा थी।

घत्ता—समस्त मनुष्य सामान्य थे, वहाँ एक भी आदमी विशेष नहीं था। श्वेतपुष्प के समान दाँतोंवाला वह नाभिराजा था, जो भरत (क्षेत्र, भरत भव्य मन्त्री) से विभूषित था॥ २१॥

इस प्रकार महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत (त्रिषष्टि महापुरुष गुणालंकारवाले महापुराण के अन्तर्गत) महाकाव्य में अयोध्यानगरी-वर्णन नाम का दूसरा परिच्छेद समाप्त हुआ॥ २॥

सन्धि ३

जब उस अयोध्या में नाभिराजा निश्चल और सुन्दर राज्य का भोग कर रहे थे तब अपने विमान से मण्डित इन्द्र काल के प्रमाण का (तीसरे काल के अन्त का) चिन्तन करता है।

१

"इस राजा की मानिनी रानी मरुदेवी के उदर से छह माह में परम जिन (गर्भ में) होंगे। भोग के बिना कर्म का नाश नहीं होता। मैं सम्यक्त्व की समग्रता दिखाता हूँ, शीघ्र ही गर्भाशय का शोधन कराता हूँ। लो मेरा यही काम है कि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मैं अतिशय सेवा का प्रदर्शन करूँ।" यह विचारकर उसने शीघ्र अपने मन में पीन पयोधरोंवाली छह चन्द्रमुखियों का ध्यान किया। सुन्दर हाथोंवाली, श्रेष्ठ श्री, ह्री, धृति, उत्तम कान्ति, कीर्ति और लक्ष्मी देवियाँ सुन्दर बोलती हुईं प्रणय और नय से नमन करती हुईं, नीलकमल के समान दीर्घ नेत्रोंवाली वे इन्द्र के घर पहुँचीं। बेलफल की लता के समान शरीरवाली उनसे देवेन्द्र ने शीघ्र कहा—

घत्ता—मनुष्यलोक में जाकर नाभिराजा के भोगों का भोग करनेवाले घर में मरुदेवी की उस देह का शोधन करो जिसमें पापों के नाश करनेवाले जिनदेव का गर्भ-निवास होगा॥ १॥

२

तब करधनियों से रमणीय देवस्त्रियाँ चल पड़ीं। स्वर्गालय से निर्गमन करनेवाली, मद से मन्थर महागज के समान चलनेवाली, त्रैलोक्य के लक्ष्मीपतियों के मन का दमन करनेवाली,

तथा विरक्तों में कामदेव की हलचल उत्पन्न करती हुईं, कुण्डलों से शोभित कपोलोंवाली वे ऐसी लगती थीं मानो कामदेव ने अपनी तीरपंक्ति सँभाल ली हो। अपने शरीर के तेज से आकाश को आलोकित करती हुईं, विचित्र वस्त्रों से आन्दोलित होती हुईं, नय और सप्तभंगी की विधि से बोलती हुईं, मिथ्यात्व और मद के कारणों का निरसन करती हुईं, इन्द्रादि देवों में अनुरक्त रहनेवाली वे मानो दानवारि (इन्द्रादि देवों) में लीन रहनेवाली भ्रमरियाँ थीं जो दानवारि (मदजल) में रत रहती हैं।

घत्ता—ये और दूसरी कन्याएँ मनुष्यनियों का रूप धारणकर अत्यन्त भक्तिभाव के साथ श्री मरुदेवी के पास आयीं॥ २॥

३

सुरवर लोक से च्युत कोमल मृणाल की तरह कोमल भुजावाली परमेश्वरी आर्यसुता को देवकुमारियों ने इस प्रकार देखा मानो (उसकी रचना में) विधाता का विज्ञान समाप्त हो गया हो। सर्वांग और अवयवों से सुलक्षण; नाग, सुर और नरों के मन को उत्तेजित करनेवाली, चारणों के द्वारा वन्दनीय चरण-युगलोंवाली उसकी अत्यन्त सुन्दर स्तोत्रों से देवियों ने स्तुति की— ''हे विश्वगुरु को जन्म देनेवाली माँ! तुम्हारी जय हो, स्तनतल पर हिलते हार मणिवाली तुम्हारी जय हो, कर्मरूपी कानन के लिए आग लगानेवाली लकड़ी के समान आपकी जय हो,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्मरूपी वृक्ष के जन्म को धारण करनेवाली! आपकी जय हो, तुम्हें देख लेने पर पापमल नष्ट हो जाता है और सोचा हुआ फल प्राप्त हो जाता है। तुमने महिला-जन्म का फल प्राप्त कर लिया। तुम्हारी कोख से जिनश्रेष्ठ का जन्म होगा।''

घत्ता—अत्यन्त सरस नृत्य करता हुआ, हाथों की अंजली बनाकर पैरों में पड़ता हुआ, अमर-विलासिनी-समूह वहाँ पहुँचता है और सेवा करना चाहता है॥ ३॥

४

कोई देवी के ललाट पर तिलक करती है, कोई दर्पण आगे रखती है, कोई श्रेष्ठ रत्नाभरण अर्पित करती है, कोई केशर से चरण का लेप करती है, कोई मधुर स्वर में गाती-नाचती है। कोई दूसरा विनोद प्रारम्भ करती है, पैनी छुरीवाली कोई परिरक्षा करती है। कोई दण्ड लेकर द्वार पर स्थित है। कोई कोई आख्यान कहती है, कोई दिये गये क्रीड़ाशुक को धारण करती है। कोई बार-बार विनय से नमन करती है।

कोई सुरसरिता के जल से स्नान कराती है। कोई माला, उजला वस्त्र और सुगन्धित लेप देती है। भाग्यविधाता, सुखनिधि और अभीप्सित जिनेन्द्रदेव को प्रकट होने (गर्भ में आने में) जब छह माह रह गये तो राजा के आँगन में निधियों में धन रखनेवाले कुबेररूपी मेघ ने रत्नों की बरसा की।

घत्ता—सरोवर के कमल पर हंसिनी के समान, सुन्दर और सुखद, तथा ठीक है अग्रभाग जिसका, ऐसे शयनतल पर वह मरुदेवी सोती है। जिसके उरतल पर हारावली झूल रही है ऐसी वह स्वयं स्वप्नावली देखती है॥४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

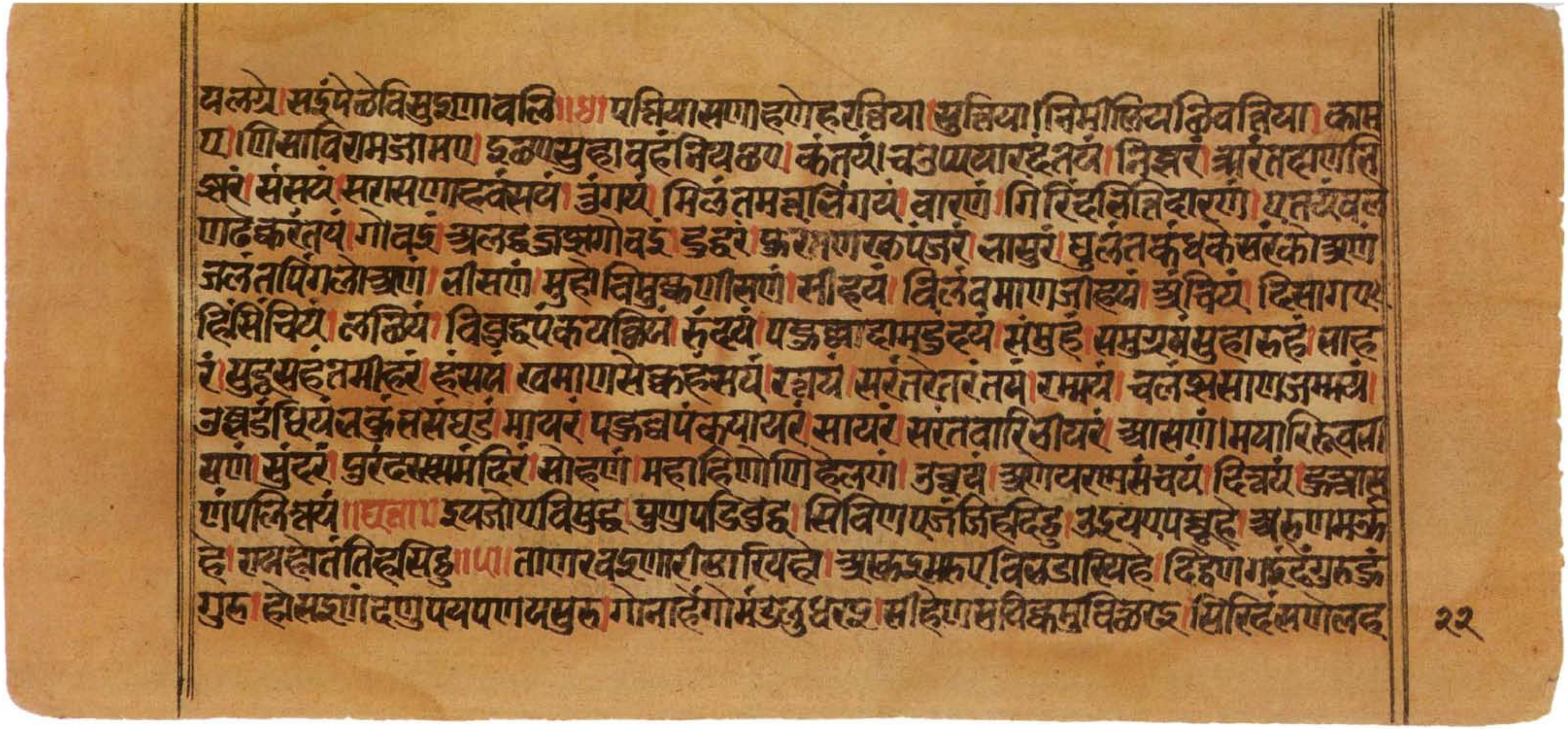

५

अपने स्वामी के स्नेह में पगी हुई, आँखों की पलकें बन्द कर सोती हुई पत्नी, कामद रात्रि के अन्तिम प्रहर में शुभ करनेवाले (स्वप्नों) को अपनी इच्छा से देखती है—सुन्दर चार प्रकार के दाँतोंवाला, पूर्ण, मदजल-धारा को झरता हुआ प्रशंसनीय धानुष्क वंशीय, ऊँचा, जिसपर मतवाले भ्रमर मँडरा रहे हैं, ऐसा पहाड़ों की दीवालों को विदीर्ण करनेवाला गज। आता हुआ जोर-जोर से दहाड़ता हुआ, जिसे लड़ने के लिए प्रतिद्वन्द्वी बैल नहीं मिला है, ऐसा बैल; दुर्धर नखसमूह से विस्फुरित, भास्वर, कन्धे की अयाल को घुमाता हुआ, क्रुद्ध चमकती हुई पीली आँखोंवाला, भीषण मुख से शब्द करता हुआ, जीभ को निकालता हुआ सिंह; पूजित दिग्गजों के द्वारा अभिषिक्त और पूजित, खिले हुए कमलों के समान आँखोंवाली लक्ष्मी; विशाल दो पुष्पमालाएँ; सामने उगता हुआ शुभ किरणोंवाला (चन्द्रमा); प्रभा का घर, अत्यन्त दु:सह रात्रि का हरण करनेवाला हंसक (सूर्य), (जो आकाशरूपी सरोवर का एकमात्र हंस था); सरोवर में तैरता हुआ अनुरक्त और सुन्दर, मछलियों का चंचल जोड़ा; प्रकट जल से भरे हुए कलशों का जोड़ा। खिले हुए कमलों का आकर और शोभा बढ़ानेवाला सरोवर; गरजते हुए जल से भयंकर समुद्र; सिंह है आभूषण जिसका ऐसा आसन अर्थात् सिंहासन; सुन्दर इन्द्र का विमान; सुहावना महानाग का घर; ऊँची रत्नराशि; चमकती हुई और जलती हुई आग।

घत्ता—वह मुग्धा सपनों को देखकर जाग उठी, और स्वप्नों में उसने जिस प्रकार जो देखा था, लाल-लाल किरणोंवाला सवेरा होने पर, उसने उसी प्रकार राजा से कहा॥ ५॥

६

तब राजा नारियों में श्रेष्ठ आदरणीय मरुदेवी से कहते हैं—"गजेन्द्र देखने से तुम्हारा पुत्र देवों से प्रणतपद और गुरुओं का गुरु होगा। गोनाथ (बैल) देखने से पृथ्वी धारण करेगा। सिंह देखने से वह पराक्रम का विस्तार करेगा,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

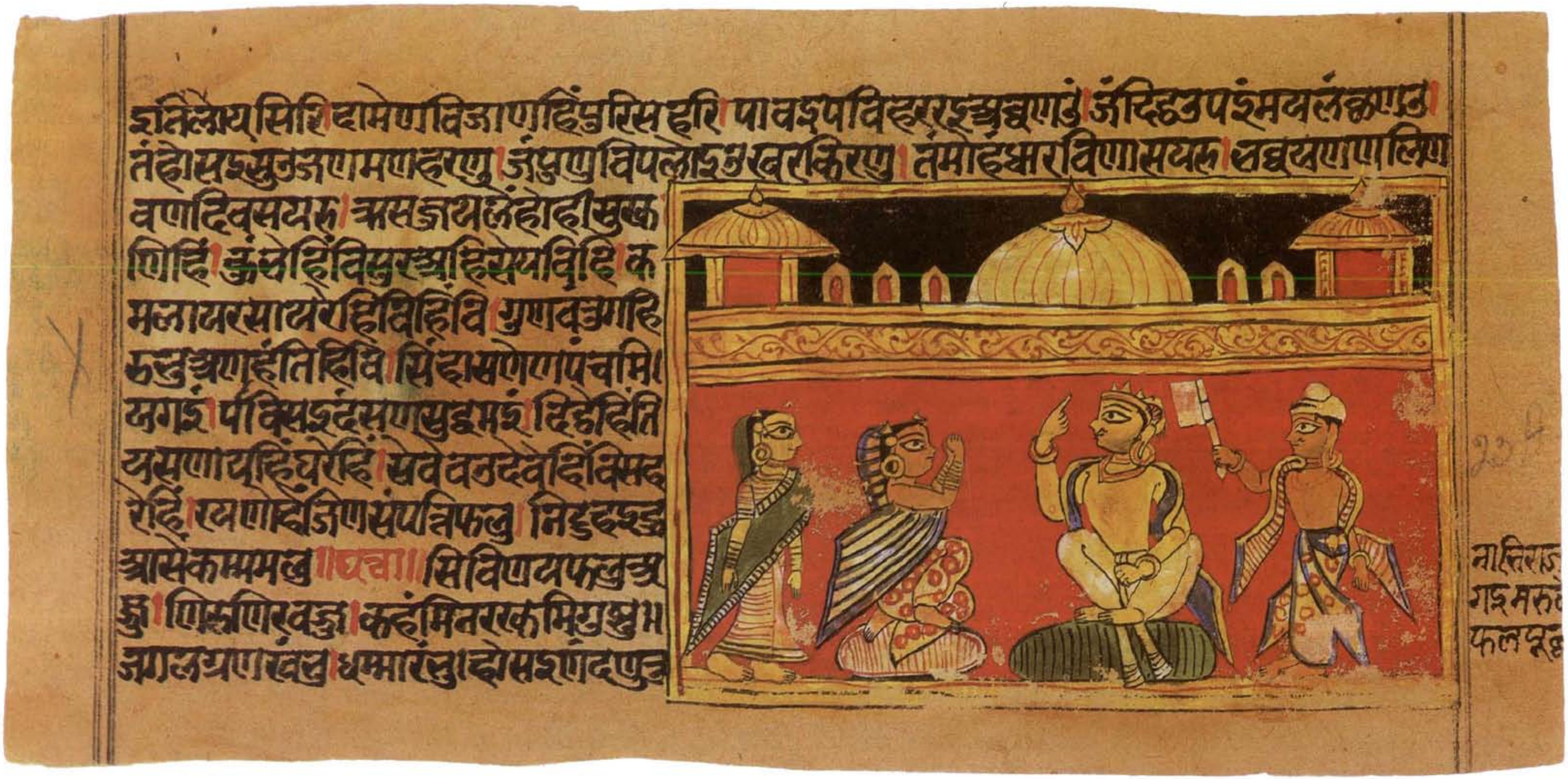

लक्ष्मी देखने से त्रिभुवन की लक्ष्मी धारण करेगा, पुष्पमाला देखने से उसे पुरुषश्रेष्ठ समझो, और जो तुमने चन्द्रमा देखा है उससे वह इन्द्र के द्वारा की गयी अर्चा प्राप्त करेगा, जो तुमने सूर्य देखा है उससे तुम्हारा पुत्र जन-मनों के लिए सुन्दर, मोहान्धकार का विनाश करनेवाला और भव्यजनरूपी कमलवन के लिए दिवाकर होगा; मीनयुग्म देखने से सुखनिधि होगा, और घड़ों को देखने से देवता उसका अभिषेक करेंगे। दोनों समुद्र और सरोवर देखने से वह त्रिभुवन में गुणवान् और गम्भीर होगा। सिंहासन देखने से दर्शन से विशुद्धमति वह पाँचवीं गति (मोक्ष) प्राप्त करेगा। देवों और नागों के घरों को देखने से देव और नाग उसकी सेवा करेंगे। रत्नों का समूह देखने से वह जिन-सम्पत्ति का फल प्राप्त करेगा, और (तप की) आग में कर्ममल को जलायेगा।

घत्ता—आज मैं निर्दोष कर्मफल कहता हूँ, कुछ की गुह्य नहीं रखता। तुम्हारा पुत्र जग का आधारस्तम्भ और धर्म का आरम्भ करनेवाला होगा॥ ६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७

तब वहीं, उस काल के आने पर कि जब आकाश का अन्तराल नक्षत्रों से शोभित था, कल्पवृक्षों के नष्ट हो जाने से जनता में असन्तोष बढ़ रहा था, सूर्य और चन्द्र के बिम्ब अन्धकार नष्ट करने लगे थे, अवसर्पिणीकाल रूपी नागिन प्रवेश कर चुकी थी, मनुष्य के भोगों और प्रचुर सुखों को काल अपने ग्रास में भर चुका था, तब माया-महामोह के बन्धन तोड़ने, श्रेष्ठ प्रचुर पुण्यों का संचय करने, सोलह तप-भावनाओं की प्रभावना, विश्व के द्वारा नमित तीर्थंकर नाम के समार्जन, निर्घृण और निन्दनीय इन्द्रियों को नष्ट करने, तैंतीस सागर आयु भोगने के लिए जन्मान्तर में बाँधे गये पुण्य के प्रभाव से, हिम-हार और नीहार के समान सफेद बैल के रूप में आषाढ़ माह के कृष्णपक्ष की द्वितीया को उत्तराषाढ़ नक्षत्र में, सर्वार्थसिद्धि विमान से अवतरित होकर परमेश्वर जिन ने माता के गर्भ में उसी प्रकार प्रवेश किया जिसप्रकार सुन्दर चन्द्रबिम्ब शरद् मेघों के बीच तथा जलबिन्दु कमलिनी पत्र के बीच प्रवेश करता है। देवता आये और गर्भवास को नमस्कार तथा राजदेवी की प्रशंसा करके चले गये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

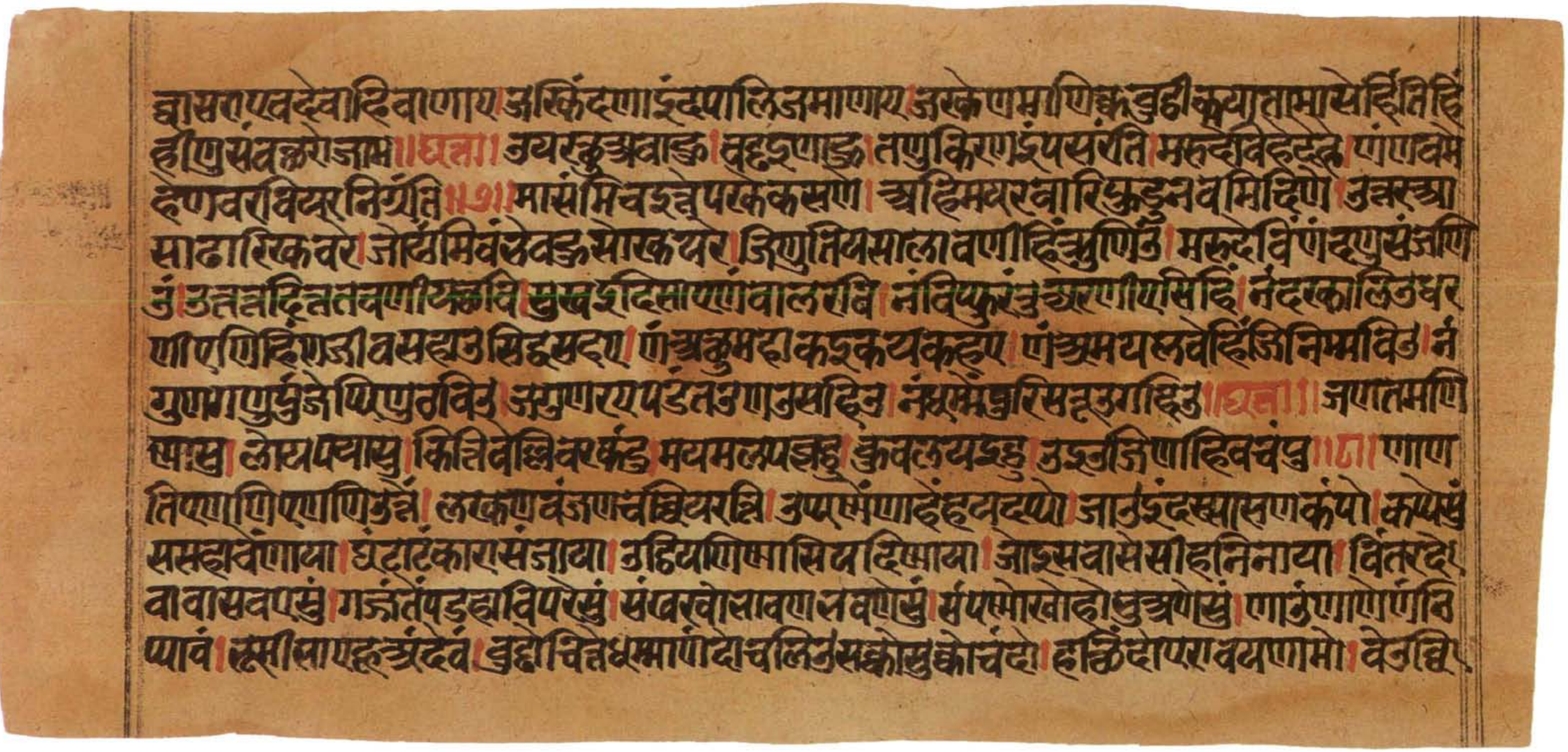

उस दिन राक्षसेन्द्रों और नागेन्द्रों द्वारा मान्य इन्द्रराज की आज्ञा से कुबेर ने रत्नों की वर्षा की तब तक कि जब वर्ष में ३ माह कम थे, (अर्थात् ९ माह)।

घत्ता—उदर के भीतर स्वामी बिना किसी बाधा के बढ़ने लगे। उनके शरीर की किरणें मरुदेवी की देह पर इस प्रकार प्रसरित होने लगीं, मानो सूर्य की किरणें नवमेघ पर प्रसरित हो रही हों॥ ७॥

८

चैत्र माह के कृष्णपक्ष में रविवार को स्पष्ट नवमी के दिन, उत्तराषाढ़ नक्षत्र में बहुसुखद ब्रह्मयोग में देवों के आलापों में ध्वनित (प्रशंसित) पुत्र को मरुदेवी ने जन्म दिया। तपाये हुए सोने के समान वर्णवाले वह ऐसे लगते थे मानो पूर्वदिशा में बालरवि हो, मानो अरणियों (लकड़ी विशेष, जिसके घर्षण से अग्नि पैदा होती है) से ज्वाला निकल रही हो, मानो धरती ने अपनी निधि दिखायी हो, मानो सिद्ध श्रेणी ने जीव का स्वभाव दिखाया हो, मानो महाकवि द्वारा रचित कथा ने अपना अर्थ दिखाया हो, मानो वह अमृत-कणों से निर्मित हो, मानों गुणगण को इकट्ठा करके रख दिया गया हो, जब नरक में गिरता हुआ विश्व नहीं सध सका तो इसलिए मानो धर्म ने पुरुष-रूप ग्रहण कर लिया हो।

घत्ता—जनों के तम का नाशक, लोक को प्रकाशित करनेवाला, कीर्तिरूपी बेल का अंकुर, मृगलांछन से रहित कुमुदों के लिए इष्ट जिनराजरूपी चन्द्र उदित हुआ है॥ ८॥

९

निश्चय ही अपने तीन ज्ञानों, लक्षणों (शंख, कुलिश आदि) तथा व्यंजनों (तिलक, मसा आदि) से युक्त शरीर के साथ जिननाथ के जन्म लेने पर इन्द्र का आहतदर्प आसन काँप उठा। कल्पवासियों ने अपने स्वभाव से जान लिया। घण्टों की टंकार-ध्वनि होने लगी। ज्योतिषदेवों के भवनों में दिग्गजों को नष्ट कर देनेवाले निनाद हुए, व्यन्तरदेवों के आवासों और शिविरों में पटह गरज उठे। भवनवासी देवों के विमानों में शंखध्वनि होने लगी, विश्व में क्षोभ फैल गया। ज्ञान से इन्द्र ने जान लिया कि भूलोक में निष्पाप देव का जन्म हुआ है। उसके चित्त में धर्मानन्द बढ़ गया। इन्द्र चला, सूर्य चला और चन्द्र चला। तब ऐरावत नाम का मतवाला हाथी, जो वैक्रियिक शरीर के परिमाणवाला था,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

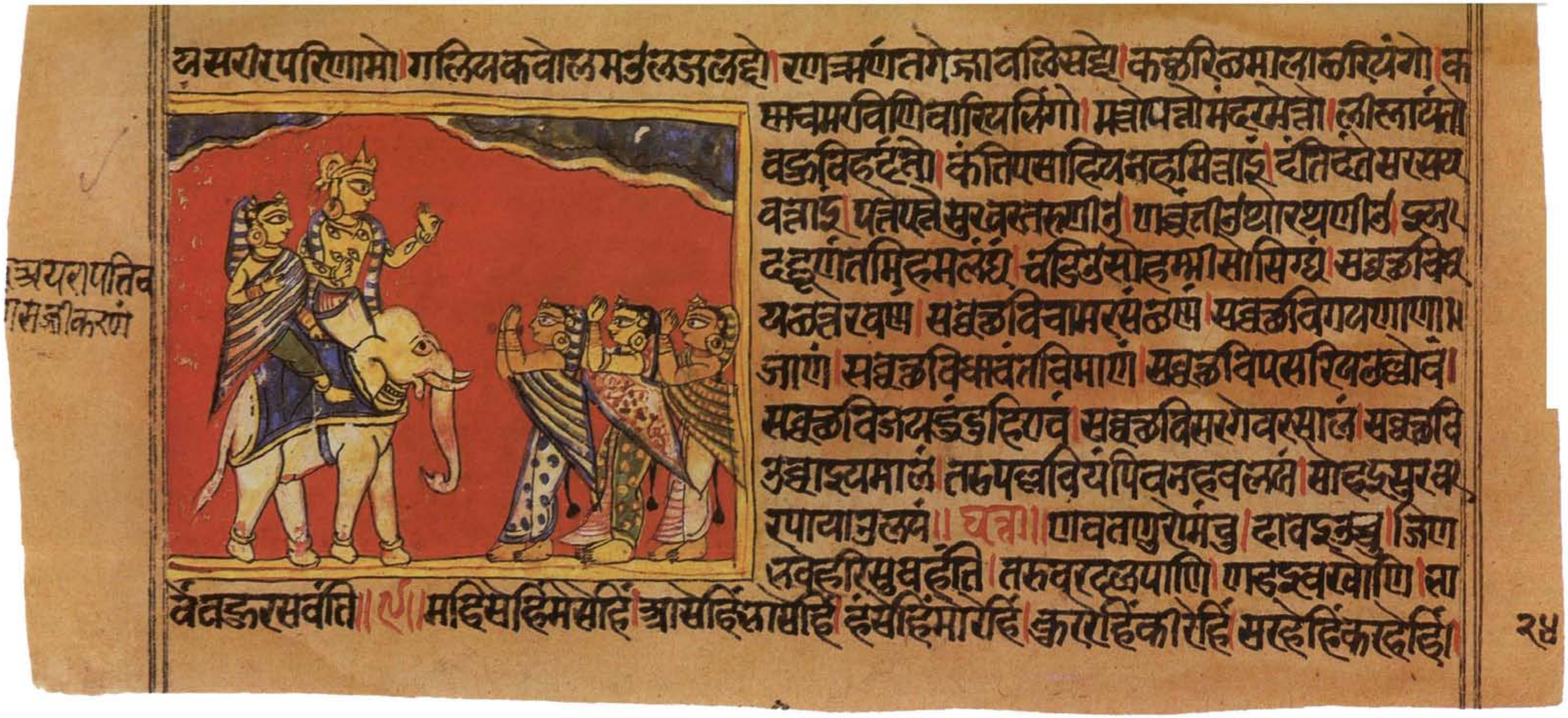

जो झरते हुए गण्डस्थल के मदजल से गीला था, जो रुनझुन बजती हुई घण्टियों से ध्वनित था, जो वरत्रारूपी नक्षत्रमाला से स्फुरित शरीरवाला था, जो कानों के चामरों से भ्रमरावलि को उड़ा रहा था, जो मन्दरांचल के समान था, आ पहुँचा। लीलाओं से पूर्ण बहुविध दाँतोंवाला, उसके प्रत्येक दाँत पर, अपनी कान्ति से आकाश के सूर्यों को आलोकित करनेवाले सरोवर के कमल थे। पत्र-पत्र पर स्थूल स्तनोंवाली देवनारियाँ नृत्य कर रही थीं। इस प्रकार अलंघनीय उस ऐरावत को देखकर सौधर्म स्वर्ग का इन्द्र उस पर शीघ्र चढ़ गया। सर्वत्र ध्वज छत्रों से सुन्दर था, सर्वत्र चमरों से आच्छादित था। सर्वत्र नाना यान जा रहे थे, सर्वत्र विमान दौड़ रहे थे, सर्वत्र मण्डप फैले हुए थे, सर्वत्र जयदुन्दुभि का शब्द हो रहा था, सर्वत्र स्वर और गीतों की मिठास थी। सर्वत्र उठी हुई मालाएँ थीं। तरुओं से पल्लवित और कल्पवृक्षों से व्याप्त आकाश सर्वत्र सोह रहा था।

घत्ता—धरती, जिनेन्द्र भगवान् के जन्म पर हर्ष धारण करती हुई अपना नव तृणांकुरों का ऊँचा रोमांच दिखाती है, और अनेक रसभावों से युक्त, वृक्षों के चलदलवाले हाथोंवाली वह भाव से नृत्य करती है ॥ ९ ॥

१०

महिषों, मेषों, अश्वों, उलूकों, हंसों, मोरों, कुररों, कीरों, शरभों, करभों,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गजों, बैलों, चमकती हुई आँखोंवाले रीछों, मत्स्यों, सारंगों, सिंहों, वृक्षों, पहाड़ों और मेघों पर सवार होकर अग्नि, महाभयंकर यम, नैऋत्य, वरुण (समुद्रेश), मारुत, कुबेर और शंकाहीन ईशान आदि देव आये। मध्य में क्षीण, मुग्धा, पूर्णचन्द्रमुखी, नव-कमलों के समान आँखोंवाली, स्तनों पर हिलते हारोंवाली, प्रसरणशील विकारों से युक्त, हंस की तरह चलनेवाली, आकाश से उतरती हुई सरस नृत्य करती हुईं सुन्दर रमणियों तथा बजते हुए वाद्यों, क्रीड़ा करते हुए वामनों, बाहुओं से शब्द करते आते हुए मल्लों, बहुविधविलासों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

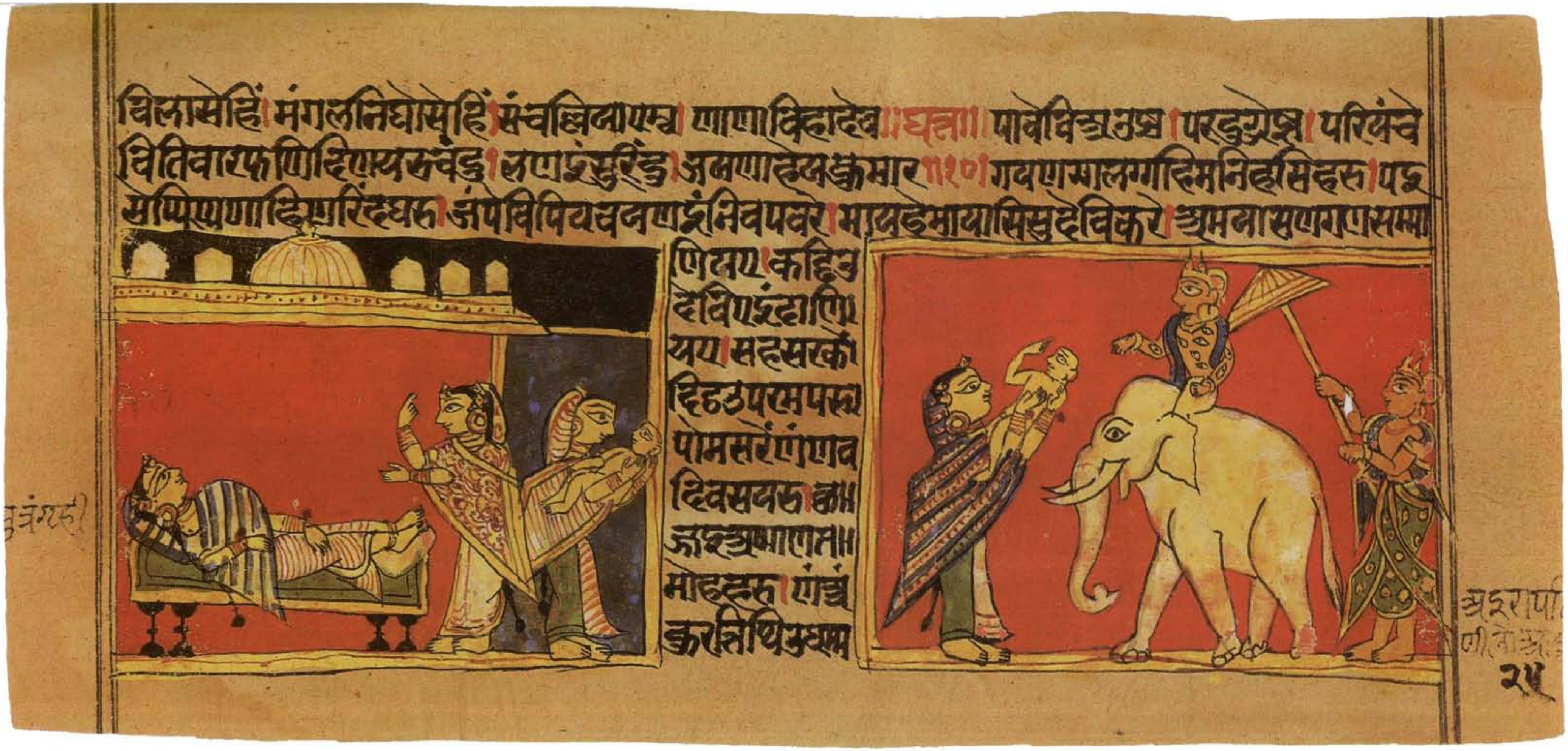

और मंगल शब्दों के साथ, इस प्रकार नाना प्रकार के देव चले।

घत्ता—अत्यन्त दुर्ग्राह्य अयोध्या पहुँचकर तीन बार उसकी प्रदक्षिणा कर नाग, दिनकर, चन्द्र और सुरेन्द्र ने कहा—"हे नाभेय कुमार! आपकी जय हो।" ॥ १० ॥

११

जिसके हिम-सदृश शिखर आकाश के अग्रभाग को छूते हैं ऐसे नाभिराजा के घर में प्रवेश कर नृपश्रेष्ठ से प्रिय बातें कर माता के हाथ में मायावी बालक देकर, देवों के द्वारा सम्माननीय इन्द्राणी उसे बाहर ले गयी। इन्द्र ने उन परमश्रेष्ठ को देखा मानो नवसूर्य ने कमलसरोवर को देखा हो। अज्ञानरूपी अन्धकार के समूह को नष्ट करनेवाले वे ऐसे लगते हैं मानो धर्म का वृक्ष अंकुरित हो उठा हो;

मानो शिवसुखरूपी स्वर्णरस बाँध दिया गया हो, मानो यश पुरुष के रूप में रख दिया गया हो, मानो सम्पूर्ण कलाधर (पूर्णचन्द्र) उग आया हो, मानो लक्षणों का समूह एक जगह रख दिया गया हो, दिये जाते हुए बालक को देवी ने देखा, देवेन्द्र ने उसे स्वीकार कर लिया। श्रेष्ठ चारणसमूह द्वारा वन्दनीय उन्हें प्रणामकर गोद के अग्रभाग में रख दिया गया। पुण्य से स्फुरायमान व्यक्ति को कौन नहीं मानता? ईशान इन्द्र ने उनके ऊपर धवलछत्र रख दिया। अमरेन्द्र सनतकुमार और माहेन्द्रपति उनके ऊपर चमर ढोरते हैं।

घत्ता—''जिन अणुओं से विश्व जीता गया है, उन्हीं से देव का शरीर निर्मित हुआ है''—इस बात का देर तक विचार करनेवाला इन्द्र विस्मित और पुलकित हो उठा॥ ११ ॥

१२

वह पुन: कहता है कि ''मेरा कर्ममल नष्ट हो गया है और मेरे अनेक नेत्रों का होना सफल हो गया है कि जो मैंने त्रिभुवन के परमेश्वर जिनेश्वर का यह रूप देख लिया है।'' यह घोषित कर उसने बार-बार भगवान् को देखा और फिर अपने ऐरावत को प्रेरित किया। परमेष्ठी जिनेन्द्र को लेकर, अप्सराओं और देवों के साथ वह भ्रमण करते हुए ग्रहोंवाले आकाश में चला। सात सौ नब्बे योजन धरती छोड़ने पर तारागणों का स्थान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उससे दस योजन ऊपर असह्य किरणों के प्रसारवाला शरद्कालीन सरोवरों को खिलानेवाला सूर्य परिभ्रमण करता है। उसके अस्सी योजन ऊपर चन्द्रमा निरन्तर परिक्रमण करता है। उससे चार योजन ऊपर अश्विनी आदि सत्ताईस नक्षत्र देखे जाते हैं। फिर वहाँ से उतनी ही दूरी पर बुध दिखाई देता है। वहीं मैं शुक्र और बृहस्पति का कथन करता हूँ। वहीं मैं मंगल और शनि को गिनता हूँ। इस प्रकार एक सौ दस योजन चलने पर उन्होंने शुद्ध आकाश पार किया। फिर वह एक हजार अट्ठानवे योजन जाता है। फिर इन्द्र एक सौ योजन जाता है। इतनी ही (सौ योजन) लम्बी और पचास योजन विस्तृत, आठ योजन ऊँची, हिम की तरह स्वच्छ अर्द्धचन्द्र के आकार की पाण्डुशिला जहाँ शोभित है, वहाँ पहुँचने पर, जय-जय-जय करते हुए देवेन्द्र ने पवित्र शरीर, तीनों लोकों का कल्याण करनेवाले परम जिन को उस शिला के ऊपर सिंहासन पर स्थापित कर दिया।

घत्ता—असह्य तेजवाले स्वर्ण के रंग के स्वामी उस पर विराजमान ऐसे शोभित हो रहे हैं, मानो मन्दराचल, लताओं को धारण करनेवाले वृक्षरूपी हाथों से शरीर को ढकता है ॥ १२ ॥

१३

जिननाथ को भावपूर्वक मानो वह हर्ष से अपनी लक्ष्मी दिखाता है, मानो फलभार से नमित वृक्षों से प्रणाम करता है। मानो उन पर चमरीमृग चमर ढोरते हैं। मानो कोयल सुन्दर शब्द में बोलती है, मानो स्फटिक मणियों की शिलाएँ स्थापित करता है।

वेग से झरनों के जल को लाता है और प्रभु के चरण-कमलों का प्रक्षालन करता है। हाथियों के संघर्षण से गिरे हुए चन्दनरस से जो प्रणय से विनयपूर्वक जैसे लीपता है। जो अपनी सित-असित अभिनव कमलरूपी आँखों से जैसे उनका रूप देखता है, नाचते हुए मयूरों से युक्त वह जैसे नाचता है, जिसमें गुनगुनाते हुए भ्रमर हैं, जैसे गाता है। मानो वह कुसुमों के आमोद से निश्वास लेता है, मानो वह रत्नरूपी दाँतों की पंक्तियों से हँसता है।

घत्ता—चम्पक की वास से मिश्रित सुन्दर मन्दराचल शिखर पर स्थित जिन ऐसे मालूम हुए मानो शाश्वत सुखवाला मोक्ष त्रिलोक के ऊपर स्थित हो॥ १३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

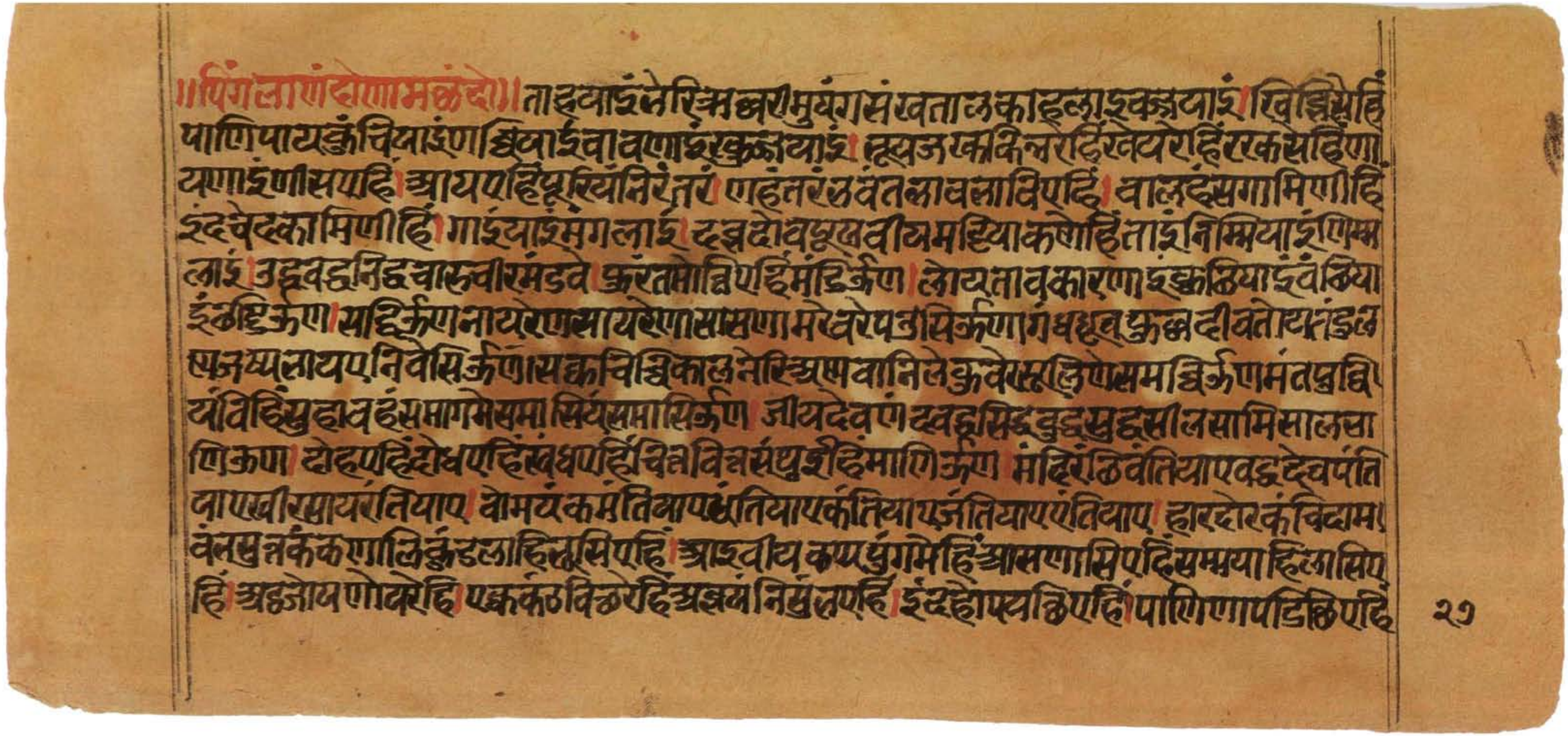

१४

इतने में तूर्यवादक देवों के द्वारा भेरी, झल्लरी, मृदंग, शंख, ताल और कोलाहल आदि वाद्य बजा दिये गये। अपने हाथ-पैर आकुंचित करते हुए वामन और कुबड़े नाचने लगे। आये हुए भूत, यक्ष, किन्नरों, विद्याधरों, राक्षसों, सैकड़ों नाग-नागिनियों के द्वारा अनुराग से भरकर निरन्तर आकाश गुँजा दिया गया। बालहंस के समान चलनेवाली इन्द्र और चन्द्र की महिलाओं के द्वारा मंगल गीत गाये गये। दर्भ, दूब, अपूप, बीज और मिट्टी के कणों से निर्मल मंगल रचे गये। ऊपर बँधे हुए चिकने और सुन्दर कपड़े के मण्डप में, चमकते हुए मोतियों से अलंकृत कर लोक-सन्ताप की कारणरूप कुत्सित इच्छाओं को छोड़कर, चतुर इन्द्र ने आदरपूर्वक शासन-देवों को आह्वान कर और सन्तुष्ट कर, गन्ध, धूप, फूल, दीप, जल, तन्दुल और अन्न आदि यज्ञांशों को रखकर, इन्द्र, अग्नि, यम, नैऋत्य, अर्णव, पवन, कुबेर और ईशान दिग्पालों की अर्चना कर, मंत्रपूर्वक जिनआगम में प्रतिपादित सुखद विधि का आश्रय लेकर, हे देव जियो, प्रसन्न होओ, बढ़ो, हे सिद्ध-बुद्ध-शुद्धाचरणवाले स्वामिश्रेष्ठ, यह कहकर दोहों, बोधकों, स्कंधकों, चित्रवृत्तोंवाली स्तुतियों से मानकर, मन्दराचल को छूनेवाली, तथा क्षीरसमुद्र तक फैली हुई, आकाश का अतिक्रमण करती हुई, दौड़ती हुई, ठहरती हुई, जाती हुई, आती हुई, बँधी हुई देवपंक्ति के द्वारा हार, दोर, स्वर्ण, करधनी, यज्ञोपवीत, कंगनपंक्ति और कुण्डल आभूषणों से अलंकृत, आसनों पर स्थित सम्यक् अभिलाषा रखनेवाले, आठ योजन लम्बे और एक योजन विस्तृत मेघपटल को नष्ट करनेवाले, लो यह कहते हुए, प्रथम और द्वितीय स्वर्ग के देवेन्द्रों के द्वारा हाथ से दिये गये, जिनसे जल की बूँदें गिर रही हैं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

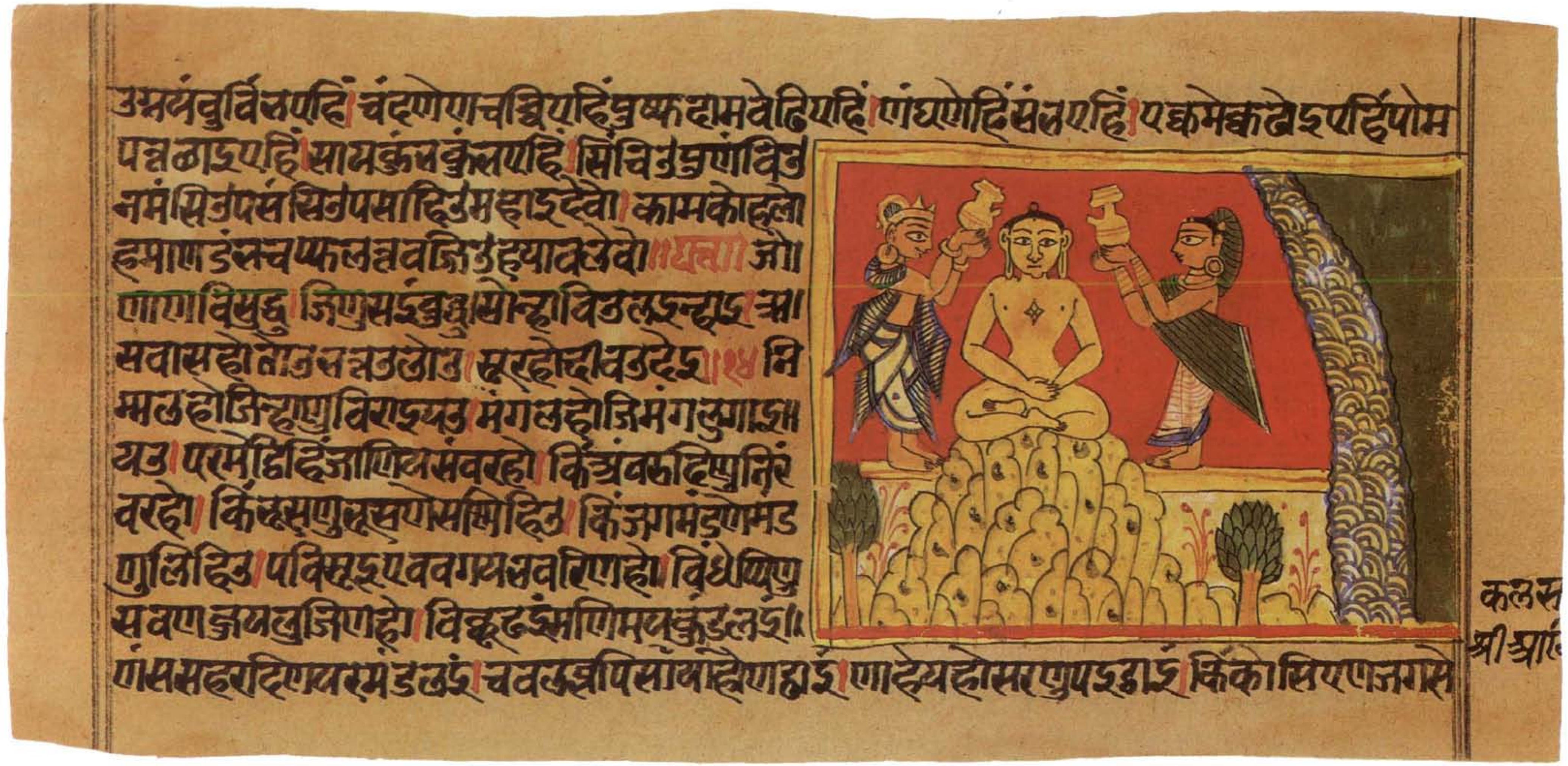

ऐसे चन्दन से चर्चित, पुष्पमालाओं से वेष्टित, जो मानो जल से भरे मेघों के समान हैं ऐसे एक-दूसरे के द्वारा ले जाये गये, कमल-पत्रों से ढके हुए स्वर्ण-कलशों से, काम, क्रोध, मोह, लोभ, मान, दम्भ और चपलता से रहित, पाप से दूर महान् आदिदेव (ऋषभ) को अभिषिक्त किया गया, पुनः पूजा गया, नमन किया गया, सराहा गया और प्रसाधित किया गया।

घत्ता—जो जिनेन्द्र ज्ञानविशुद्ध स्वयंबुद्ध हैं, उन स्नात को—उस समुद्र को जलस्नान कराता है! भक्त-लोक सूर्य को दीपक दिखाता है ॥ १४ ॥

१५

निर्मल को भी स्नान कराया गया। मंगल का भी मंगल गाया गया। संबर को जाननेवाले दिगम्बर परमेष्ठी को अम्बर वस्त्र क्यों दिया गया? जो भूषणस्वरूप हैं उन्हें भूषण क्यों पहनाया गया, जो जगमण्डन हैं उनपर मण्डन क्यों किया गया? संसार के ऋण से मुक्त जिनके दोनों कानों को वज्रसूची से बेधकर मणिमय कुण्डल पहना दिये गये मानो चन्द्र और दिनकर के मण्डल हों, जो मानो चंचल राहु से भागकर नाभेय की शरण में आये हों।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

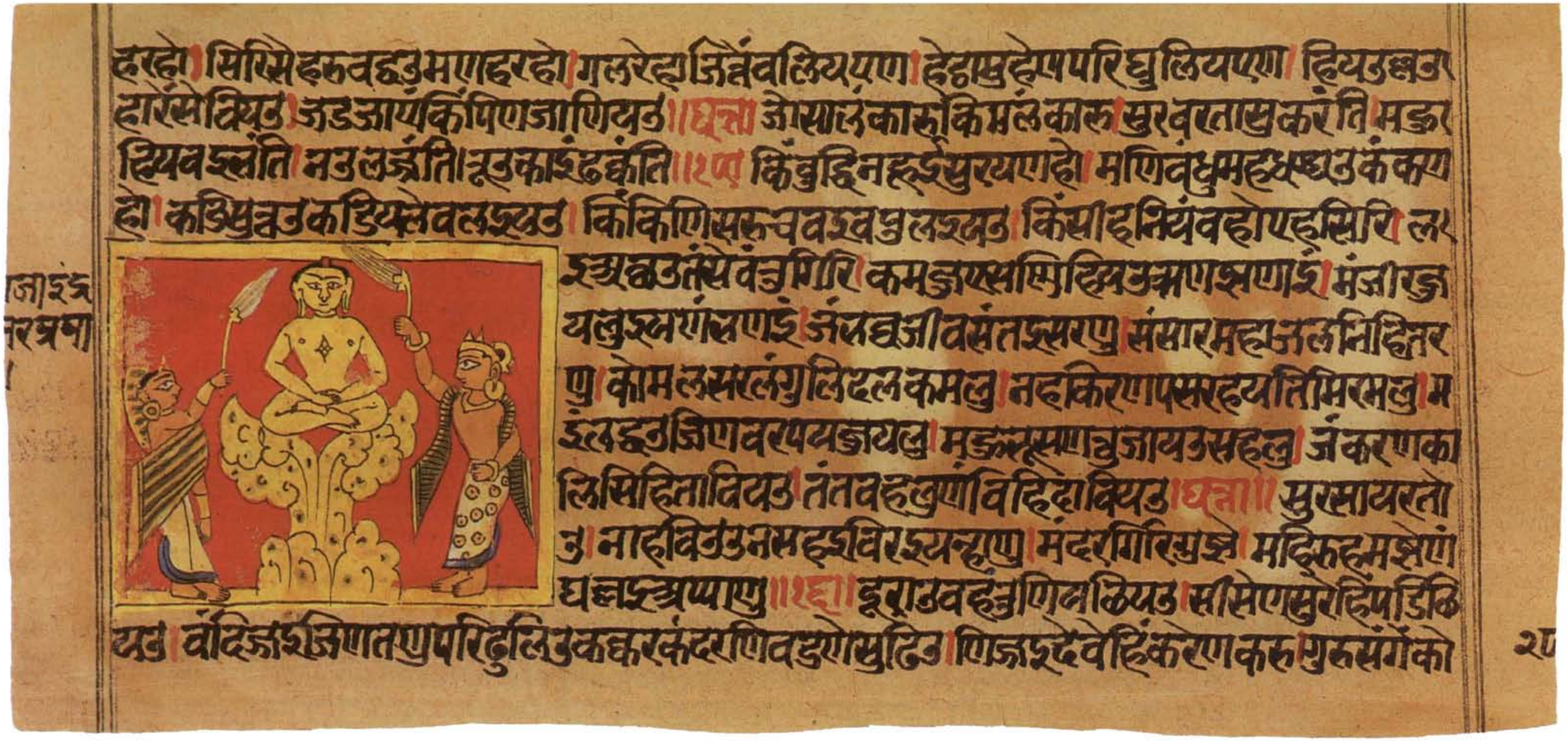

विश्वश्रेष्ठ सुन्दर ऋषभ के सिर पर इन्द्र ने मुकुट क्यों बाँध दिया? गले की रेखा से जीता गया, झुका हुआ अधोमुख आन्दोलित हार के द्वारा हृदय की सेवा की गयी, जो जड़जात (जड़ से उत्पन्न, और जल से उत्पन्न मोती) को कुछ भी अच्छा नहीं लगा।

घत्ता—जो स्वयं सालंकार हैं, देवता उसे अलंकार क्यों पहनाते हैं? मेरे हृदय में भ्रान्ति है कि उन्हें शर्म नहीं है, वे (उनके) रूप को क्यों ढकते हैं?॥ १५ ॥

१६

क्या देवों को बुद्धि नहीं उपजी कि उन्होंने कंकणों का महार्घ मणिबन्ध और कटिसूत्र कटितल में बाँध दिया। किंकिणी का स्वर रोमांचित होकर कहता है कि क्या सिंह के नितम्ब में यह शोभा है? लो यही कारण है कि वह पहाड़ की सेवा करता हुआ वहीं रहता है। दोनों चरणों में झन-झन करते हुए नूपुरों का जोड़ा यह कहता है कि जो भव्यजीवों की परम्परा के लिए शरणस्वरूप हैं, जो संसाररूपी महासमुद्र से तारनेवाले हैं, जो कोमल स्वरों और अँगुलियों के दल कमलवाले हैं, और (ज्ञानरूपी) सूर्य के प्रसार से तिमिरमल को नष्ट कर देते हैं, मैंने ऐसे जिनवर के चरणयुगल को पा लिया है, मेरा भूषण होना सफल हो गया। बनाये जाते समय मुझे जो आग में तपाया गया मानो विधाता के द्वारा दिखाया गया यही मेरे तप का फल है।

घत्ता—स्नान करानेवाला क्षीरसमुद्र का जल अपने स्वामी का वियोग सहन नहीं करता इसीलिए मन्दराचल से गुह्य वृक्षों के मध्य में अपने को डाल देता है ॥ १६ ॥

१७

देवों ने दूर से बहते हुए उसे देखा और अपने सिर से उसे अंगीकार कर लिया। जिन के शरीर से लुढ़का हुआ और कठोर गुफाओं में गिरने से दु:खित उसे देवों ने हाथों-हाथ ले लिया। गुरु के साथ कौन गुरु नहीं होता!

कमलपराग की धूल से धूसरित, केशर की लालिमा से पीला, वनगजों के गण्डस्थलों से पतित, गजकपोलों से झरते हुए मदजल से सुगन्धित, चलते हुए भ्रमरों से चित्रित नाना मणि-किरणों से मिश्रित स्नानजल ऐसा लगता है मानो सुमेरु पर्वत का पचरंगा दुपट्टा उड़ रहा हो। नभ में नभचरों, धरती पर मनुष्यों और पाताल में विषधरों ने सर्वज्ञ के गिरते, दौड़ते, ठहरते, विगलित होते, चंचल स्नानजल की वन्दना की।

घत्ता—गुरु की सेवा की इच्छा रखनेवाले चार प्रकार के देव हर्ष से कहीं भी जल का नमस्कार करते हैं। उठते-पड़ते सामने नाचते हुए वे बार-बार प्रणाम करते हैं॥ १७॥

१८

किसी ने बाजा बजाया, किसी ने श्रुतिमधुर गाना गाया, किसी ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

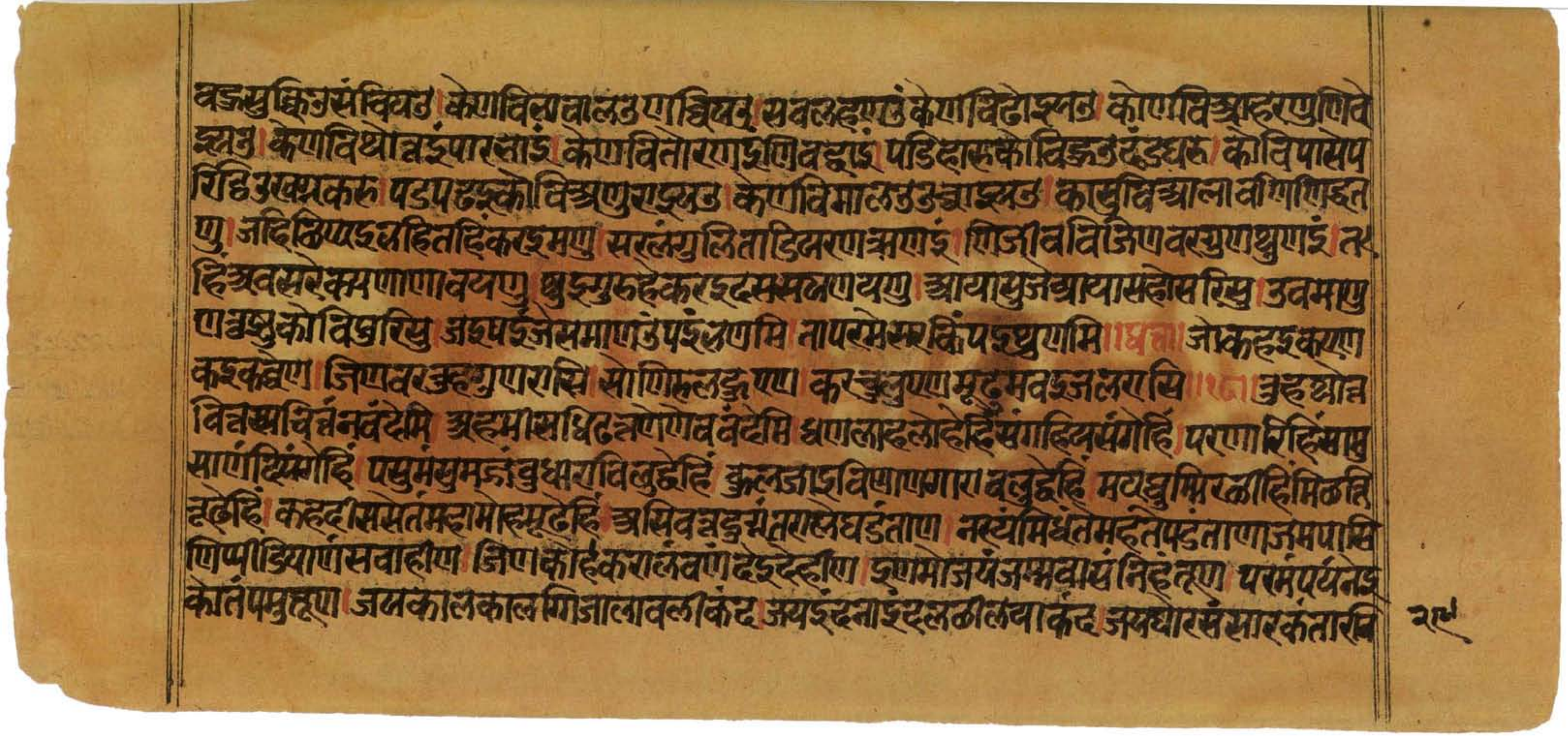

प्रचुर पुण्य का संचय किया। किसी ने भावपूर्ण नृत्य किया। किसी ने विलेपन भेंट किया। किसी ने आभूषण दिये, किसी ने स्तोत्र शुरू किये, किसी ने तोरण बाँधे। कोई दण्डधारी प्रतिहारी बन गया। कोई हाथ में तलवार लेकर पास खड़ा हो गया। धर्मानुराग से युक्त कोई सुन्दर पढ़ने लगा। किसी ने माला ऊँची कर ली। किसी की वीणा स्निग्धतर हो उठी। जहाँ-जहाँ वह स्पर्श करता है वहीं मन हो जाता है। स्वर और अँगुलियों से ताड़ित वह रुनझुन करती है, निर्जीव होते हुए भी जिनवर के गुणों की स्तुति करती है। उस अवसर पर सहस्रनयन इन्द्र अपने नाना मुख बनाकर गुरु की स्तुति करता है, ''आकाश आकाश के समान है, तुम्हारा उपमान कोई भी मनुष्य नहीं हो सकता। हे जिनवर, जब आप आपके ही समान कहे जाते हैं तो हे परमेश्वर, मैं आपकी क्या स्तुति करूँ?

घत्ता—हे जिनवर, जो स्वनिर्मित काव्य से तुम्हारी गुणराशि का कथन करता है वह मूर्ख अत्यन्त छोटे हाथरूपी करछल से जलराशि को मापना चाहता है॥ १८॥

१९

हे जिनवर, तुम्हारे स्तवन के आचरण में मैं अपना नवीन चित्त देता हूँ। हे ईश, मैं धृष्टता से ही तुम्हारी वन्दना करता हूँ। जो धनलाभ के लालची, संगृहीत का संग्रह करनेवाले, पर-स्त्रियों की हिंसा और अपहरण से आनन्दित होनेवाले, पशुमांस और मद्य की जलधारा में लुब्ध होनेवाले, कुल-जाति और विज्ञान के गर्व से अवरुद्ध, मद से घूमती हुई आँखोंवाले, मिथ्यात्वपर चढ़े हुए और महामूढ़ हैं, उनके द्वारा वह कैसे देखा जा सकता है। असिपत्रों से दुर्गम अन्तराल में घटित होते हुए, महान्धकारमय नरक में पड़ते हुए, यम के पास से अत्यन्त पीड़ित और सब प्रकार से हीन शरीरधारियों के लिए हे जिन, कौन हाथ का सहारा देता है? मेरे इस जगजन्मवास को नष्ट कर, तुम्हें छोड़कर कौन मुझे परमपद में ले जा सकता है? कालरूपी कालाग्नि की ज्वालावली के लिए मेघतुल्य तुम्हारी जय हो। इन्द्रों और नागेन्द्रों की लक्ष्मीरूपी लता के अंकुर आपकी जय हो। संसार के घोर कान्तार से निस्तार दिलानेवाले आपकी जय हो;

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

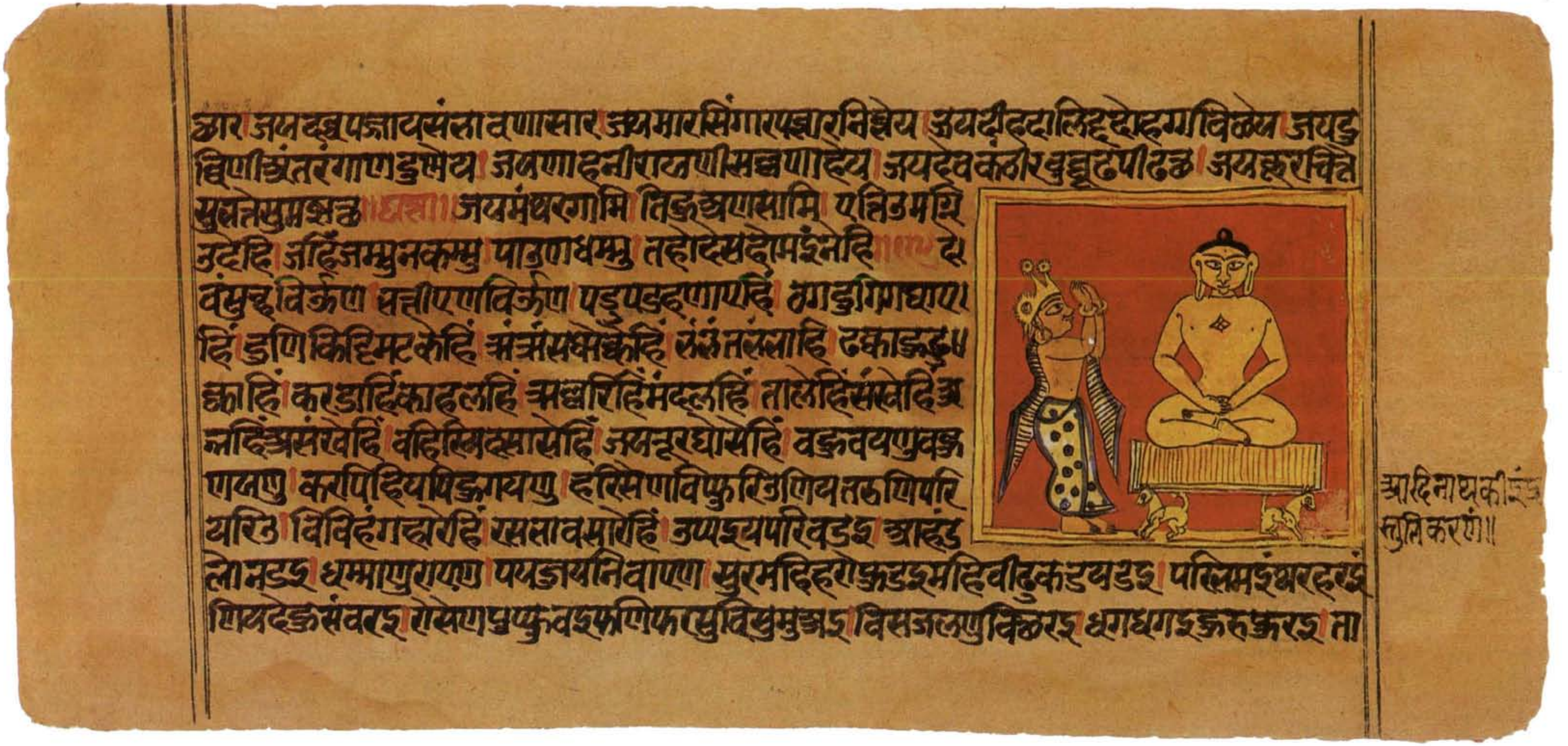

द्रव्यों और पर्यायों की सम्भावनाओं के सार, आपकी जय हो; काम के शृंगार के भार का भेदन करनेवाले आपकी जय हो; दीर्घ दारिद्र्य और दुर्भाग्य का छेदन करनेवाले आपकी जय हो। दुर्विनीत हृदयवालों के लिए अज्ञेय आपकी जय हो, वीतराग शल्यहीन हे नाभेयनाथ, आपकी जय हो। सिंहासन पर स्थित हे देव, आपकी जय। दुष्टचित्तों और भक्तों में मध्यस्थ चित्त, आपकी जय।

घत्ता—हे मन्थरगामी त्रिभुवनस्वामी, आपकी जय हो, इतना माँगा हुआ दीजिए कि जहाँ जन्म नहीं है, कर्म नहीं है, पाप नहीं है और न धर्म है उस देश में मुझे ले जाइए॥ १९॥

२०

देव को स्नान कराकर, भक्ति से प्रणाम कर, पटुपटह के नादों, थारी-दुगिग के आघातों, दुणिकिटिम और टक्कों, झंझा और सधोक्कों, भेभंत-भंभाहों, ढक्का और हुडुक्कों, करडों, काहलों, झल्लरियों, मद्दलों, ताल और शंखों और भी असंख्य दिशाओं को बहरा बना देनेवाले जयतूर्य-घोषों के द्वारा, जिसके अनेक मुख हैं, अनेक नेत्र हैं, जिसने हाथों से विशाल आकाश को आच्छादित कर रखा है, हर्ष से विह्वल तरुणीजन से घिरा हुआ ऐसा इन्द्र रसभावों से श्रेष्ठ विविध अंग निक्षेपों के द्वारा उछलता है, गिरता है, और धर्म के अनुराग से नृत्य करता है। पैरों के गिरने से सुमेरु पर्वत फट जाता है। धरतीपीठ कड़कड़ होता है। शेषनाग घूमता है, थर्राता है, अपना शरीर सम्हालता है, क्रोध से फुफकारता है, कठोर विष उगलता है, विष की ज्वाला फैलती है, धक-धक हुरहुर करती है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

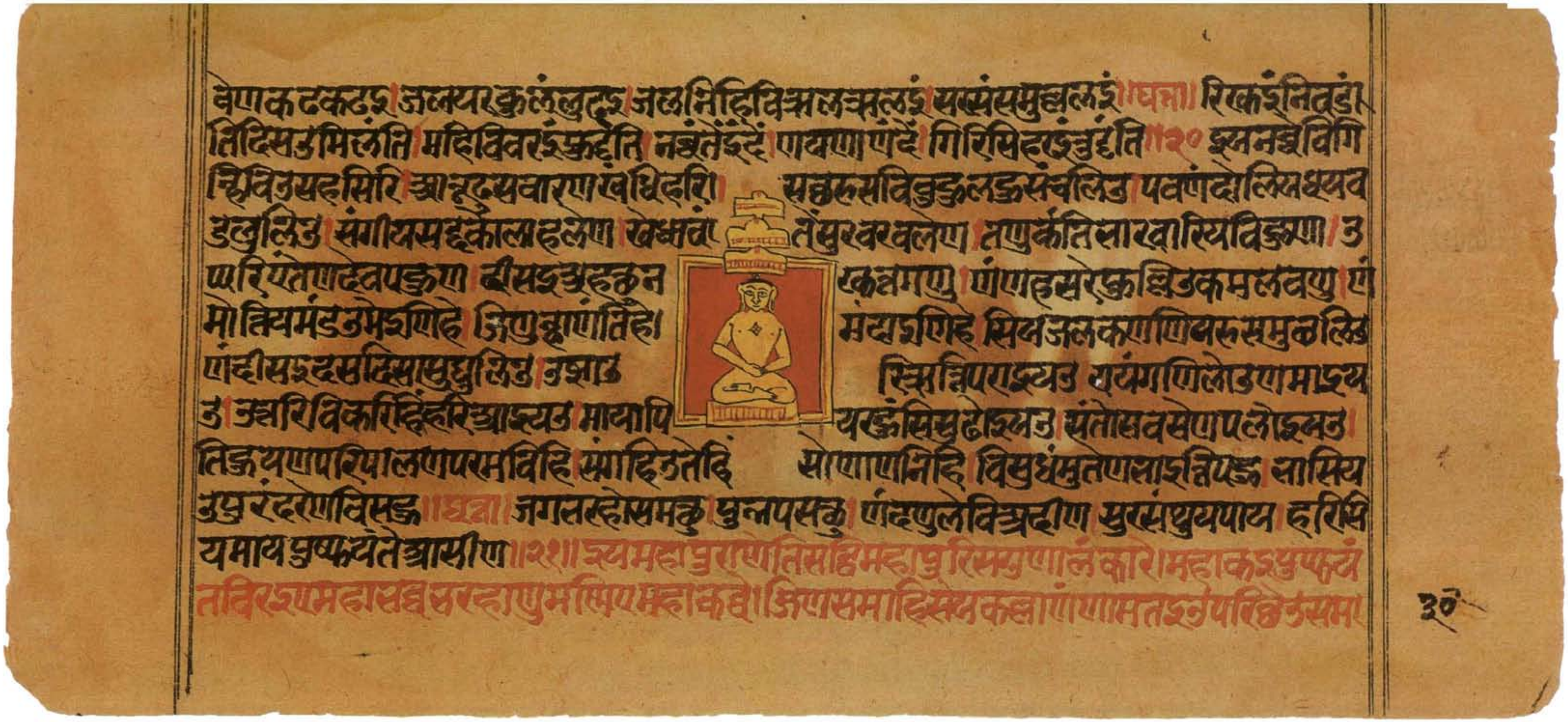

ताप से कड़कड़ करती है, जलचरसमूह को नष्ट करती है। समुद्र भी चमकता है, स्वेच्छा से उल्लसित होता है।

घत्ता—नक्षत्र टूटते हैं, दिशाएँ मिलती हैं, महीविवर फूटते हैं, नेत्रों के लिए आनन्ददायक इन्द्र के नाचने पर गिरि-शिखर टूट जाते हैं॥ २०॥

२१

इस प्रकार नृत्य कर और श्री ऋषभ को लेकर इन्द्र अपने ऐरावत के कन्धे पर चढ़ गया। अप्सराओं और देवों के साथ वह चला। वह पवन से आन्दोलित ध्वजपटों से चंचल था। संगीत के कोलाहल के शब्द के साथ सुरबल के आकाश में दौड़ने पर तथा शरीर की कान्ति के भार से चन्द्रमा को निवारण करनेवाले इन्द्र के ऊपर से आने पर नीचे स्थित नक्षत्रगण ऐसा दिखाई देता था मानो आकाशरूपी नदी में कमलवन खिला हो मानो धरती का मोतीमण्डप हो, मानो जिनके स्नान के अन्त में मन्दाकिनी का श्वेत जलकणसमूह उछल पड़ा हो और दसों दिशाओं में व्याप्त दिखाई दे रहा हो। वह शीघ्र अयोध्या नगरी में पहुँचा, लोक राजा के प्रांगण में नहीं समा सका। ऐरावत से उतरकर इन्द्र आया, और उसने माता-पिता को पुत्र दे दिया। ज्ञाननिधि उसने उनसे त्रिभुवन-परिपालन की विधि संगृहीत की। चूँकि उनसे (जिनेन्द्र से) धर्म शोभित है, इसलिए इन्द्र ने उन्हें 'वृषभ' कहा।

घत्ता—जगभार में समर्थ, पुण्य से प्रशस्त, और अदीन पुत्र को लेकर सुन्दर स्थान पर बैठे हुए, देवों से संस्तुत-चरण माँ हर्षित होती है॥ २१॥

इस प्रकार त्रिषष्टि पुरुषगुणालंकारवाले महापुराण में, महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित महाभव्य भरत द्वारा अनुमत इस महाकाव्य में जिनजन्माभिषेक कल्याण नामक तीसरा परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

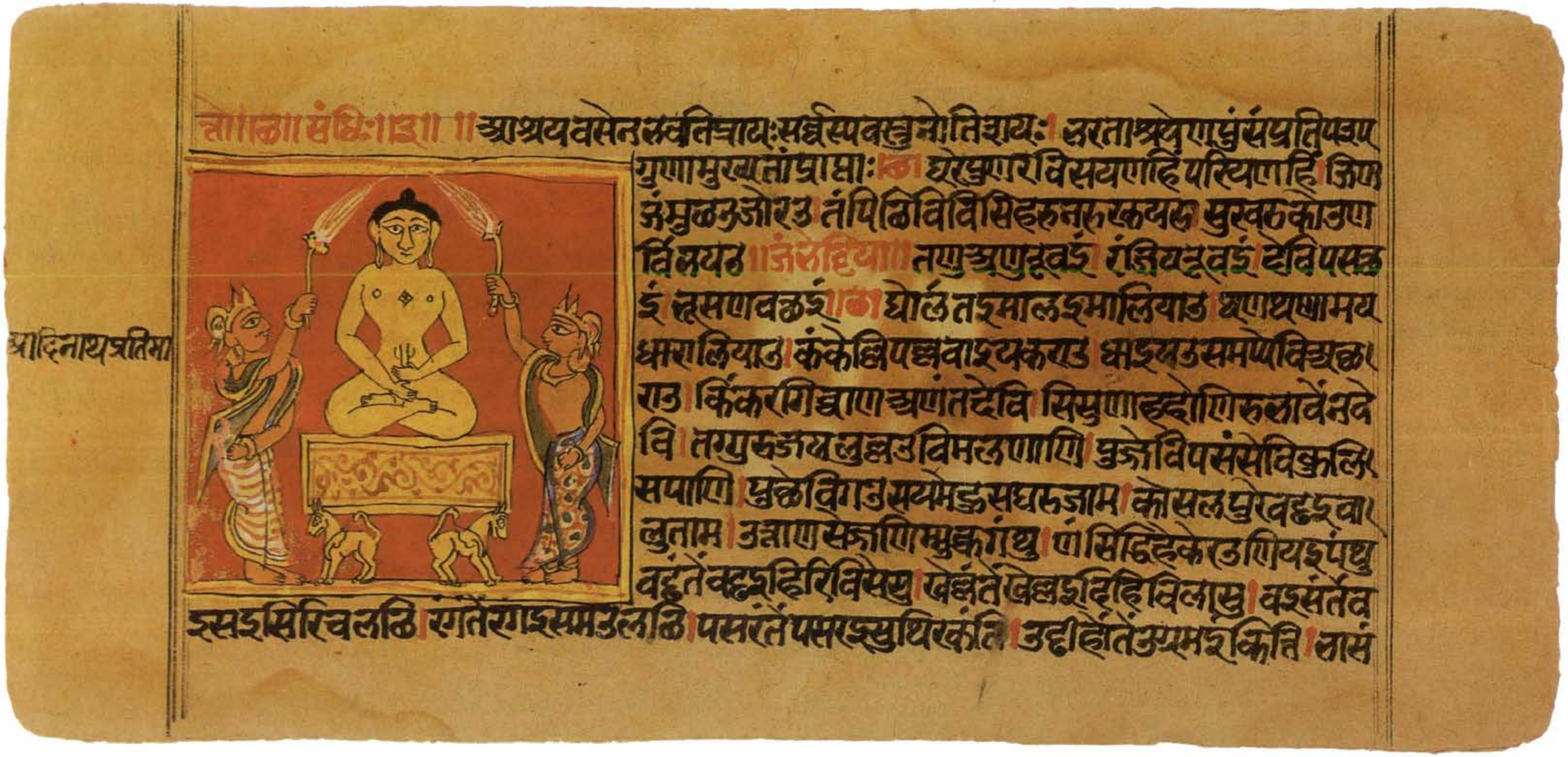

सन्धि ४

घर में फिर से स्वजनों और परिजनों के द्वारा जिन-जन्म का जो उत्सव किया गया उसे देखकर विषधर, नर, विद्याधर और देवेन्द्र कौन ऐसा था जो विस्मित नहीं हुआ?

१

शरीर के अनुरूप और रूप को रंजित करनेवाले प्रशस्त भूषण और वस्त्र देकर, मालती-मालाओं को घुमाती हुई, स्तनों में दूधरूपी अमृतधारावाली, अशोक वृक्ष के पल्लवों के समान हाथोंवाली अप्सराओं को धाय के रूप में सौंपकर, अनन्तदेवों को किंकर के रूप में देकर, अत्यन्त भाव से शिशु स्वामी को नमस्कार कर विमल ज्ञानवाले नाभिराज और मरुदेवी दोनों की पूजा और प्रशंसा कर और अनुमति लेकर वज्रपाणि (इन्द्र) अपने घर चला गया। अयोध्या में बालक दिन दूना रात चौगुना बढ़ने लगता है। सेज पर लेटा हुआ नग्न बालक ऐसा लगता है मानो सिद्धि के मार्ग को देख रहा हो। बालक के बढ़ने पर ऋद्धि विशेष बढ़ती है, खेलने पर धैर्य का विलास खेलने लगता है। उसके बैठने पर चंचल आँखोंवाली लक्ष्मी बैठ जाती है। चलने पर लक्ष्मी साथ चलती है। प्रसार करने पर स्थिर कान्ति फैलने लगती है। उसके खड़े होने पर कीर्ति उठ खड़ी होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

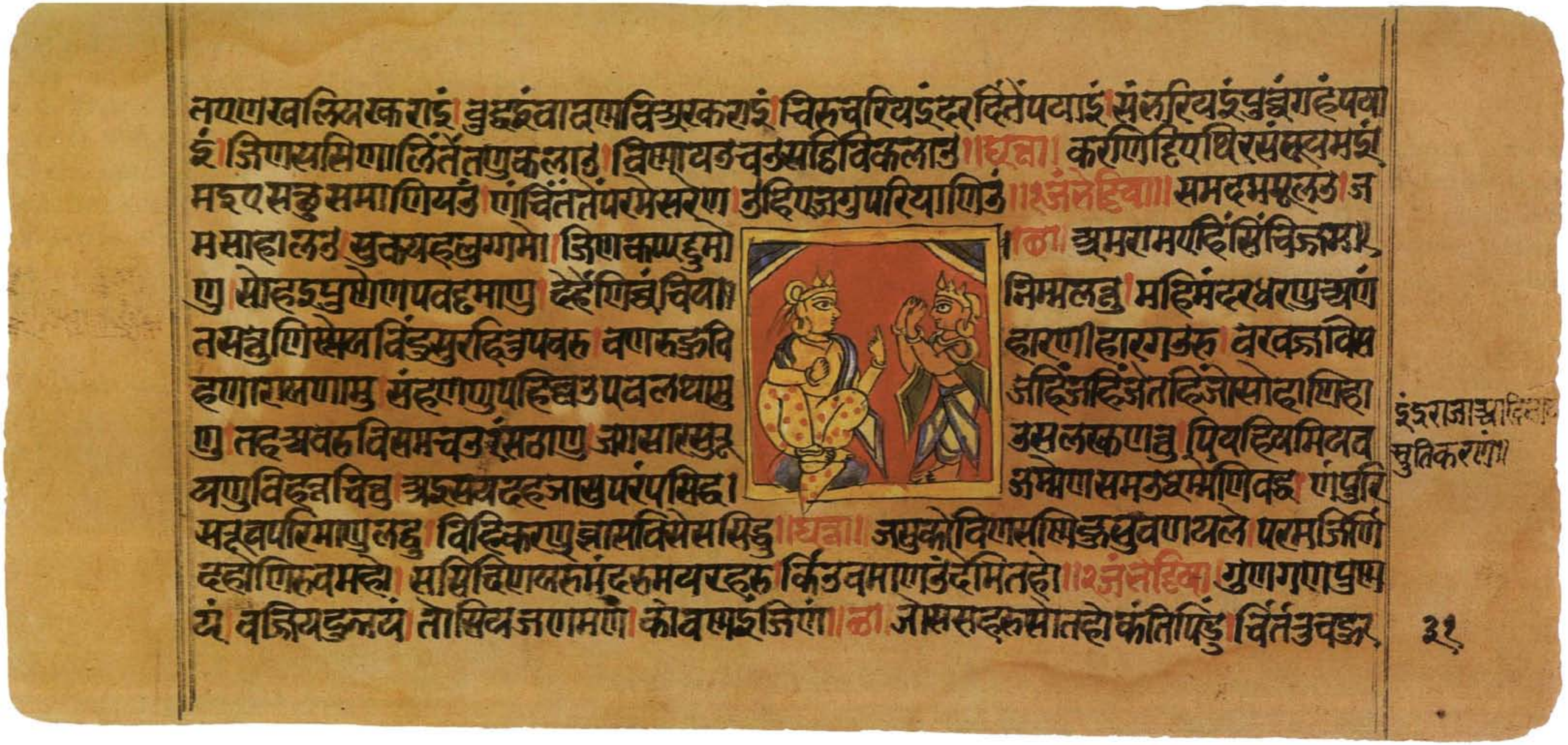

स्खलित अक्षर बोलने पर भी उसने बावन ही अक्षर जान लिये। धरती पर थोड़े-थोड़े पद रखते हुए चिर पूर्वांग-पद उसे स्मरण में आ गये। जिनरूपी चन्द्रमा के शरीर की कलाएँ ग्रहण करते ही उसने चौंसठ कलाओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया।

घत्ता—इन्द्रियों की वृद्धि से उनकी बुद्धि दृढ़ होती है, दृढ़ बुद्धि से वे शास्त्र का सम्मान करते हैं। और शास्त्र का चिन्तन करते हुए परमेश्वर ने अवधिज्ञान से विश्व को जान लिया॥ १॥

२

जिसका मूल समता और दम है, जिसकी यम-नियमरूपी शाखाएँ हैं। जिससे पुण्यरूपी फलों का उद्‌गम होता है, ऐसा वह जिनरूपी कल्पवृक्ष, देवों के अमृत से सींचा गया और पुण्य से बढ़ता हुआ शोभित है। उनके शरीर में नित्य निर्मलता है, और मन्दराचल को धारण करने की अनन्त शक्ति है; स्वेद बिन्दुओं से रहित, प्रचुर सुरभि है; जिनका रुधिर भी हार और नीहार की तरह गौर वर्ण है। श्रेष्ठ वज्रवृषभनाराच संहनन नाम का प्रबल शक्तिवाला उनका पहला शरीर-संघटन है। जहाँ-जहाँ भी देखो वहाँ शोभानिधान, उनका दूसरा समचतुरस्र संस्थान था। जग में श्रेष्ठ सुरूप और सुलक्षणत्व, प्रिय-हितमित वचन और एकनिष्ठ चित्त। जिनके जन्म के समय से ही निबद्ध प्रसिद्ध दस अतिशय हैं। मानो उन्होंने पुरुषरूप के परिमाण को प्राप्त कर लिया है (उसकी उच्चता को पा लिया है), और विधाता के निर्माण का अभ्यास विशेष उन्हें सिद्ध हो गया है।

घत्ता—निरुपम परम जिनेन्द्र के समान भुवनतल में कोई नहीं है, उनके लिए चन्द्रमा, दिनकर, मन्दर और समुद्र का क्या उपमान दूँ?॥ २॥

३

गुणगण से युक्त, दुर्नयों से रहित, जन-मन को सन्तुष्ट करनेवाले जिनका वर्णन कौन कर सकता है? जो चन्द्रमा है वह उनकी कान्तिपिण्ड का विचार करता हुआ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कलंकित और खण्डित हो गया। सूर्य उनके तेज से जीता जाकर मानो आकाश में घूमकर अस्त को प्राप्त होता है। जो सुमेरु पर्वत है वह उनका स्नानपीठ है, जो धरतीमण्डल है उसे उन्होंने ग्रहण कर लिया। जो जग है, वह उनके यश के प्रसार का स्थान है; जो नभ है, वह उनके ज्ञान का प्रमाण है; जो समुद्र है, वह उनके शरीर के प्रक्षालन का कुण्ड है। जो कामदेव है, उसने डर से अपना धनुष छोड़ दिया है; जो ऐरावत है, वह मदान्ध वाहन है। सिंह भी उनके सिंहासन से बाँध दिया गया है; कामधेनु पशु है, जिसने अपने हित के कारण को नष्ट कर दिया है; जो बाघ है, वह भी पापी जीव है; जो कल्पवृक्ष है वह भी काष्ठ (कष्ट) कहा जाता है। देव के समान कोई भी दिखाई नहीं दिया।

घत्ता—जहाँ देव, अनुचर, अप्सराएँ, दासियाँ और इन्द्र घर में काम करनेवाले हैं, और त्रिभुवन ही परमेश्वर का कुटुम्ब है, वहाँ मैं उनके विलास का क्या वर्णन करूँ?॥ ३॥

४

शैशव की क्रीड़ाशील जो लीलाएँ प्रभु ने दिखायीं वे किसे अच्छी नहीं लगीं! विविध क्रीड़ा-विलास रचनेवाले सुरवर कुमार उनके साथ खेलते हैं, जिन्होंने (जिनने) शरीर के तेज से सूर्यबिम्ब को पराजित कर दिया है, जिनका नितम्ब (कटि प्रदेश) घुँघरुओं की माला से अलंकृत है, जो कटिसूत्र से रहित और धूल-धूसरित हैं, जो सहज उत्पन्न कपिल केशों से जटा-युक्त हैं, ऐसे ऋषभ बालक को राजरानियों और देवों की इन्द्राणियों ने हाथों-हाथ लिया। जिसने भी उनका मुग्ध मुख देखा उसने अपने चिरसंचित पुण्यरत्न को जान लिया,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

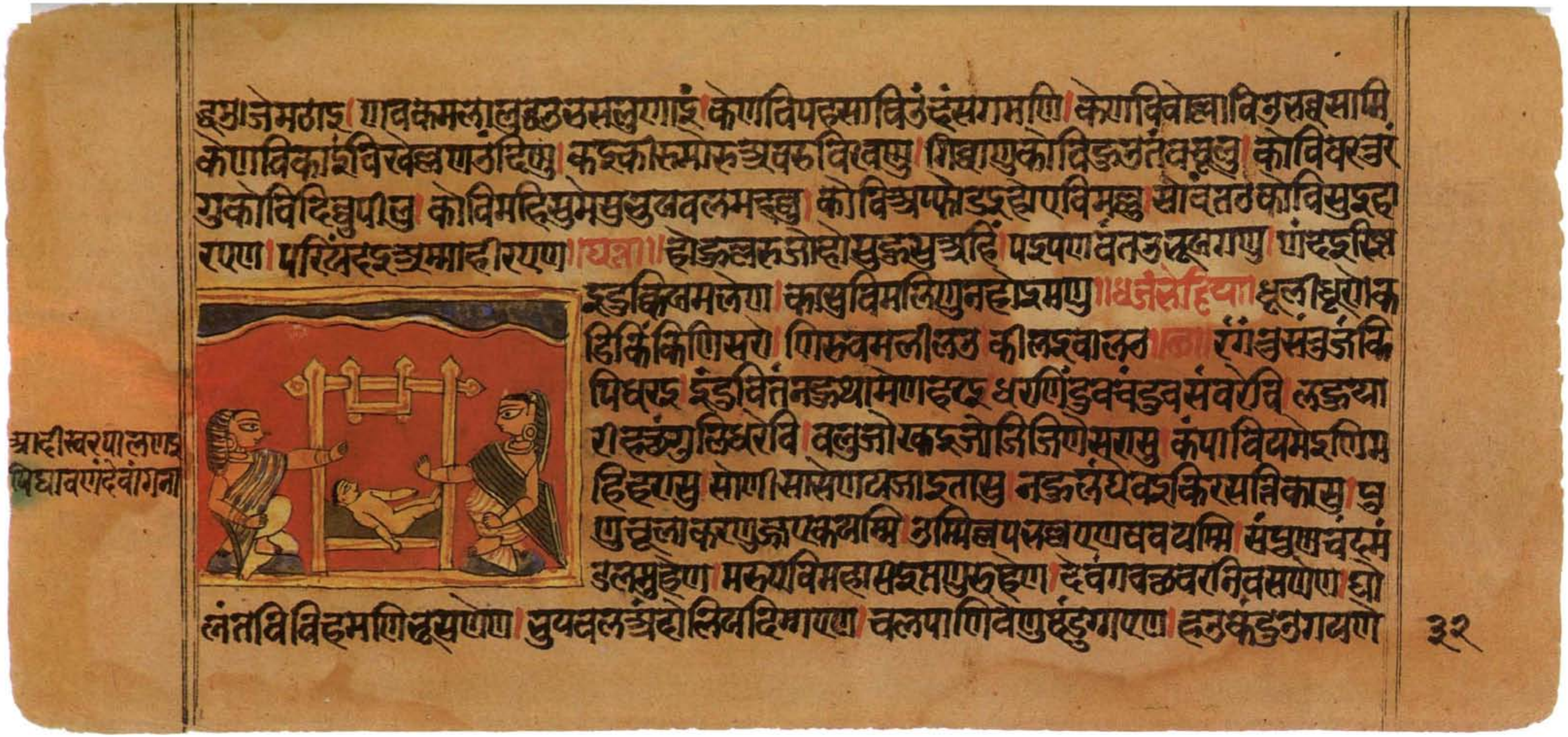

और वह वहीं (मुखकमल पर) निबद्ध होकर नवकमलों पर लुब्ध भ्रमर की भाँति रह गया। किसी ने उस हंसगामी को हँसाया, किसी ने उन्हें भव्य स्वामी कहा। किसी ने उन्हें कोई खिलौना दिया—कपि, कीर, मोर और किसी ने कोई दूसरा सुन्दर खिलौना। कोई देव मुर्गा बन गया, कोई श्रेष्ठ अश्व और कोई दिव्य गज। कोई मेष और महिष। कोई भुजबल में श्रेष्ठ मल्ल होकर ताल ठोकता है, सोते हुए बालक को कोई कानों को मधुर लगनेवाली लोरी गाकर झुलाता है।

घत्ता—हो-हो, तुम्हारी जय हो, सुख से सोओ, तुम्हें प्रणाम करता हुआ भूतगण प्रसन्न रहता है, ऋद्धि प्राप्त करता है, और पाप के मल से किसी का भी मन मलिन नहीं होता॥ ४॥

५

धूल से धूसरित, कटि में किंकिणियों का स्वरवाला और अनुपम लीलावाला बालक क्रीड़ा करता है, चलते-चलते जो कुछ भी पकड़ लेता है उसे इन्द्र भी अपनी पूरी शक्ति से नहीं छुड़ा पाता। उनकी छोटी-सी अँगुली पकड़ने के लिए धरणेन्द्र और चन्द्र भी समर्थ नहीं हो पाते। मेदिनी और महीधर को कँपानेवाले जिनेश्वर के बल का कौन आकलन कर सकता है? वह उनके निश्वास से ही उड़ जाता है, आकाश को लाँघने की शक्ति किसके पास है? फिर चूड़ाकर्म हो जाने पर भली नववय प्रकट होनेपर सम्पूर्ण चन्द्रमण्डल के समान मुखवाले, मरुदेवी महासती के पुत्र श्रेष्ठ, देवांग वस्त्र धारण करनेवाले, चंचल विविध आभूषणों से युक्त, बालक के द्वारा भुजक्रीड़ा से दिग्गज को हिलानेवाले, चंचल हाथ से वेणु के अग्रभाग से आहत गेंद आकाश में उछलती हुई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऐसी दिखाई देती है मानो देवेन्द्र के घर जा रही हो। जीव-रहित, परन्तु निर्दिष्ट मार्गवाला कौन गुणी की संगति से स्वर्ग प्राप्त नहीं करता? गिरती हुई बाल को वह चलाने के लिए ले जाता है और अपने समानवय बालकों को छूने तक नहीं देता। प्रहार-प्रहार में वह इस प्रकार जाता है जिस प्रकार दिशा की मर्यादा के सम्मुख सूर्य।

घत्ता—मानो पुरुष का रूप बनाने के लिए विधाता ने प्रतिबिम्ब संगृहीत किया था। जब वह नवयौवन को प्राप्त हुए तो नाग, नर और देवों के द्वारा पूजे गये॥ ५ ॥

६

स्वर्ण की तरह गोरे, समर्थ और ज्ञानरत, प्रजा की रक्षा करनेवाले और राजाओं के द्वारा वन्दित चरण। लक्ष्मीरूपी सुन्दरी के रमण के लिए विस्तीर्ण रंगभूमि, धरणेन्द्र की गोद में अपना शरीर रखते हुए, वरुण के ऊपर पैर स्थापित करते हुए, पवनदेव पर हथेली डालते हुए, प्रणाम करती हुई इन्द्राणी पर दृष्टि देते हुए, उर्वशी का सरस नाटक देखते हुए, कुबेर के चमरों से हवा किये जाते हुए, समभाव से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

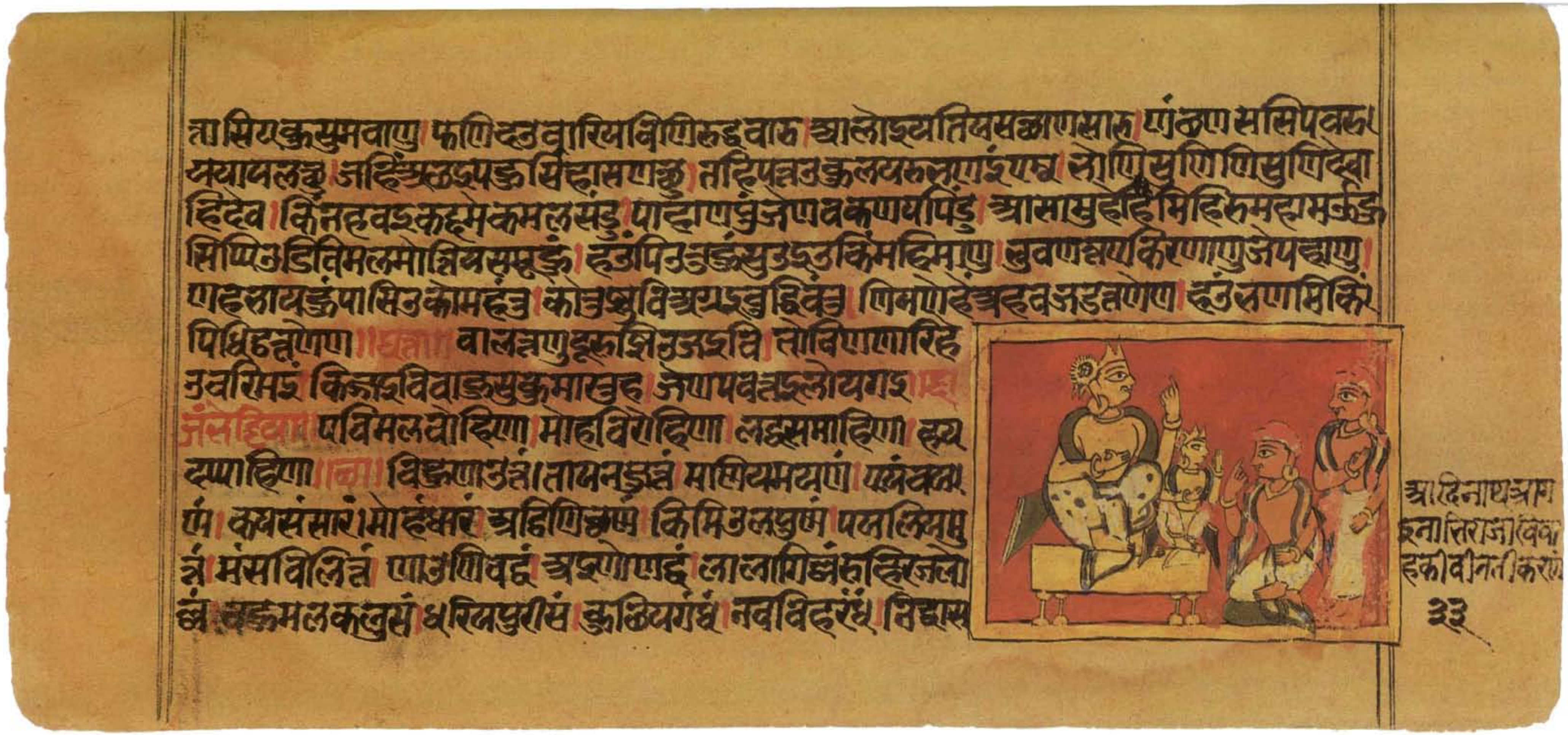

कामदेव को त्रस्त करते हुए, नागेन्द्ररूपी प्रतिहार से अवरुद्ध द्वारवाले, और देवताओं के स्थानसार को देखनेवाले प्रभु सिंहासन पर बैठे हुए ऐसे लगते थे मानो पूर्णचन्द्र महान् उदयाचल पर स्थित हो। तब कुलकर नाभिराज वहाँ आकर इस प्रकार कहते हैं—"हे देवाधिदेव, सुनिए, सुनिए, क्या कीचड़ में कमलसमूह नहीं होता? क्या पत्थरों के समूह में नवस्वर्ण-पिण्ड नहीं होता? दिशा के मुख में महान् किरणोंवाला सूर्य, विमल सीप-सम्पुट में मोती-समूह नहीं होता? मैं पिता, तुम पुत्र, यह कैसा अभिमान? तीनों लोकों में ज्ञान ही मुख्य है। आकाश मार्ग से बड़ा कौन है? तुम्हारे आगे बुद्धिमान् कौन है? अपने स्नेह से अथवा जड़ता से धृष्टतापूर्वक मैं कुछ कहता हूँ।

घत्ता—यद्यपि तुम्हारा बचपन दूर छूट गया है तब भी तुम्हारी मति स्त्रियों के ऊपर नहीं है। हे सुकुमार, विवाह कीजिए जिससे लोक की गति बढ़ सके"॥ ६॥

७

तब प्रबल बोधवाले, मोह के विरोधी, समाधि प्राप्त करनेवाले और मन के दर्प को दूर करनेवाले प्रभु बोले, "हे तात, काम का समर्थन करनेवाले ये शब्द युक्त नहीं हैं। संसार के बढ़ानेवाले मोहान्धकार से युक्त, हड्डियों से कसा हुआ, कृमिकुल से पूर्ण, प्रगलित मूत्रवाला, मांस से लिपटा, स्नायुओं से बद्ध, चर्म से लिपटा, लार को खानेवाला, रक्तजल से आर्द्र, प्रचुर मल से कलुष, मैले को धारण करनेवाला, कुत्सित गन्धवाला, नौ प्रकार के छन्दवाला, (यह शरीर) निद्रा में आसक्त होकर

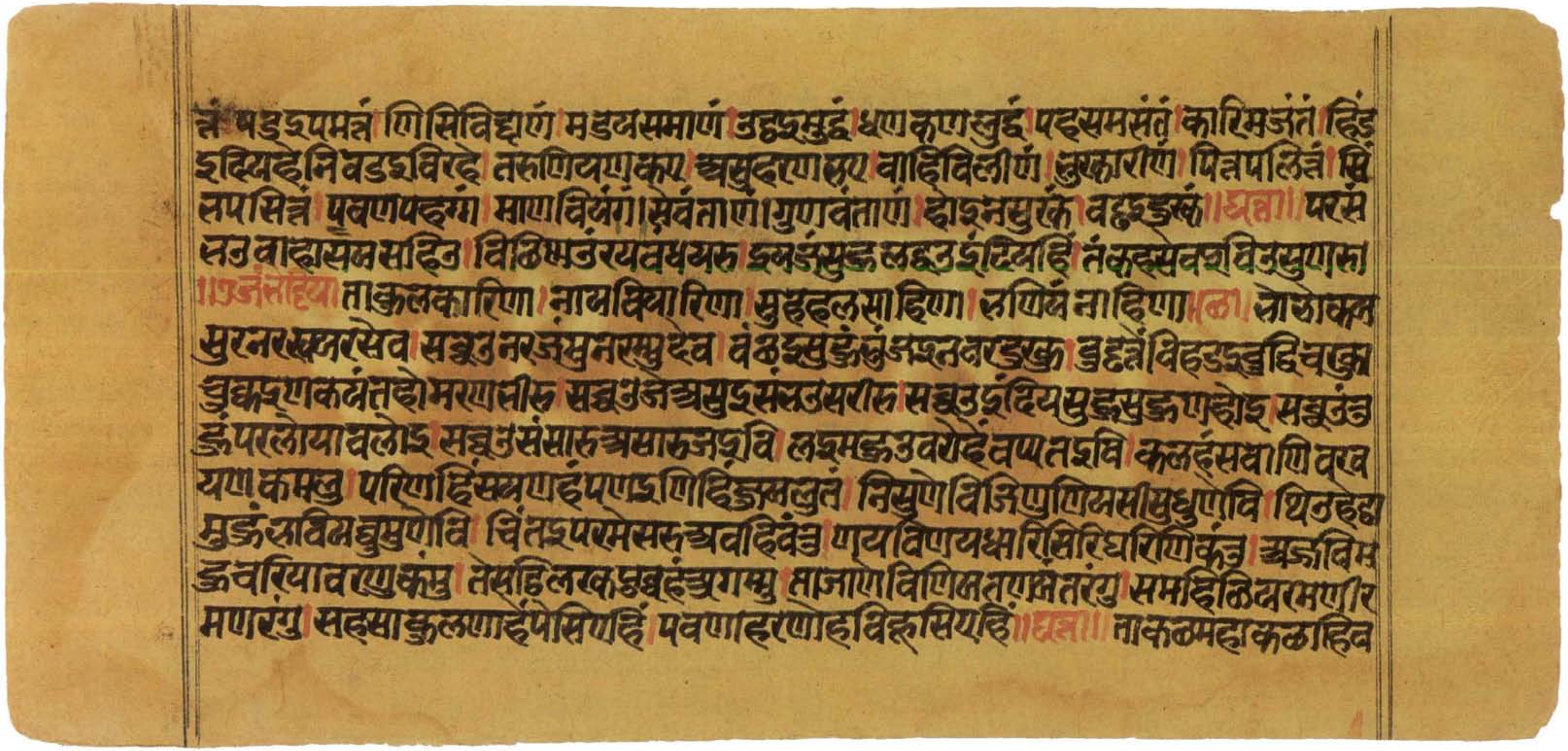

प्रमत्त की तरह पड़ जाता है रात में, सोये हुए मृतक के समान। (सवेरे) मूर्ख उठता है, धनकण से लुब्ध। कृत्रिम यन्त्र के समान, पथ के श्रम से थका हुआ, दिन में घूमता है। प्राणों को हरण करनेवाली युवतियों के विरह में पड़ता है। रोग से ग्रस्त, भूख से खिन्न, पित्त से प्रदीप्त, श्लेष्मा से युक्त, पवन से भग्न, मानव-स्त्रियों के शरीर का सेवन करते हुए गुणवानों को सुख नहीं होता, दुःख ही बढ़ता है।

घत्ता—दूसरे से उत्पन्न, सैकड़ों व्याधियों से युक्त, क्षायिक कर्मरूपी बन्ध का करनेवाला जो सुख इन्द्रियों से प्राप्त है, विद्वान् उसका सेवन क्यों करता है?"॥७॥

८

तब न्याय का विचार करनेवाले शुभफल के वृक्ष कुलकर स्वामी (नाभिराज) ने कहा—"सुर, नर और विद्याधरों ने जिनकी सेवा की है ऐसे हे देव, यह सच है कि मनुष्य-जन्म सुन्दर नहीं है, वह सुख चाहता है, परन्तु दुःख भोगता है। बड़े होनेपर बुद्धिरूपी आँख चली जाती है, मौत से डरता है, परन्तु यम से नहीं चूकता। सचमुच मनुष्य शरीर अपवित्रता से जन्मा है। सचमुच इन्द्रियसुख सुख नहीं होता। सचमुच तुम परलोक में सुख की इच्छा में कुशल हो। सचमुच यद्यपि संसार असार है तब भी हे सुभट, मेरे अनुरोध से सुन्दर हंस की तरह वाणीवाली श्रेष्ठ कमलमुखी दो प्रणयिनियों से प्रणयपूर्वक विवाह कर लो।" यह सुनकर ऋषभजिन अपना सिर हिलाते हुए और होनहार का विचार कर नीचा मुख करके स्थित हो गये। अवधिज्ञानी नय-विनय के विचारक लक्ष्मीरूपी गृहिणी के कान्त परमेश्वर अपने मन में सोचते हैं—"आज भी मुझमें चारित्रावरण कर्म है, जो तेरह लाख पूर्व तक अलंघ्य है।" तब अपने पुत्र के अन्तरंग को, यह जानकर कि वह रमणियों से रमण करने का इच्छुक है, कुलकर नाभिराज के द्वारा प्रेषित और रत्नाभूषण से विभूषित—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

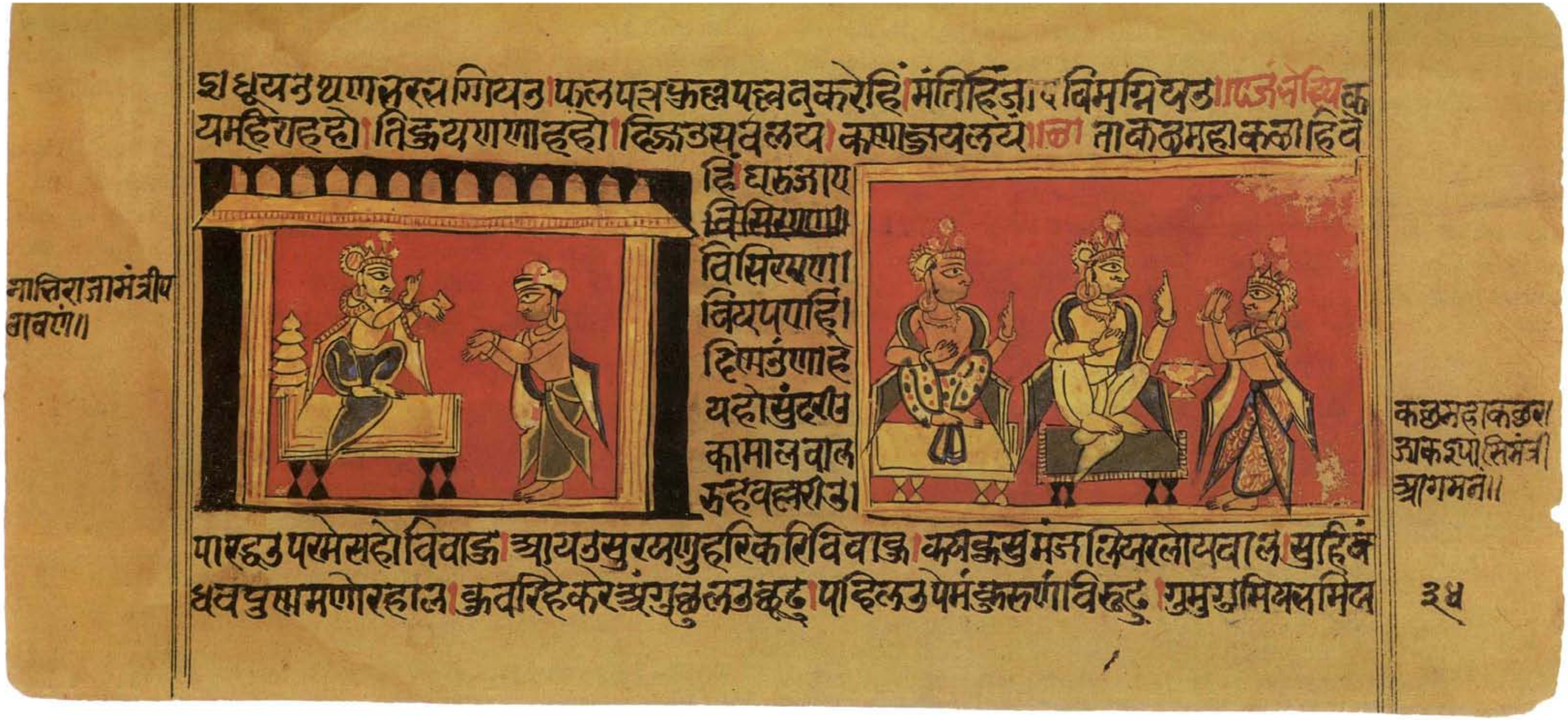

घत्ता—फल, पत्र, फूल और पल्लव हाथ में लिये हुए मन्त्रियों ने कच्छ और महाकच्छ राजाओं से उनकी स्तनभार से नम्र कन्याएँ माँगी ॥ ८ ॥

९

''भूमि की शोभा बढ़ानेवाले त्रिभुवननाथ को कंगनसहित अपनी दोनों कन्याएँ दो।'' तब कच्छ और महाकच्छ राजाओं ने घर जाकर, सिर से चरणों में प्रमाण करते हुए, नाभेय (ऋषभ) को काम की आलवाल (क्यारी) में उत्पन्न होनेवाली लताओं के समान वे सुन्दरियाँ दे दीं। परमेश्वर का विवाह प्रारम्भ हुआ। अश्व, गज और पक्षियों के वाहनवाला सुरगण विवाह में आया। कुसुमांजलि लिये हुए लोकपाल (विवाह में) आये। पुण्य से मनोहर सुधी बान्धवजन आये। कुमारियों के हाथ में अँगूठियाँ पहना दी गयीं, मानो पहला प्रेमांकुर फूटा हो, जिसमें गुनगुनाता हुआ चंचल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

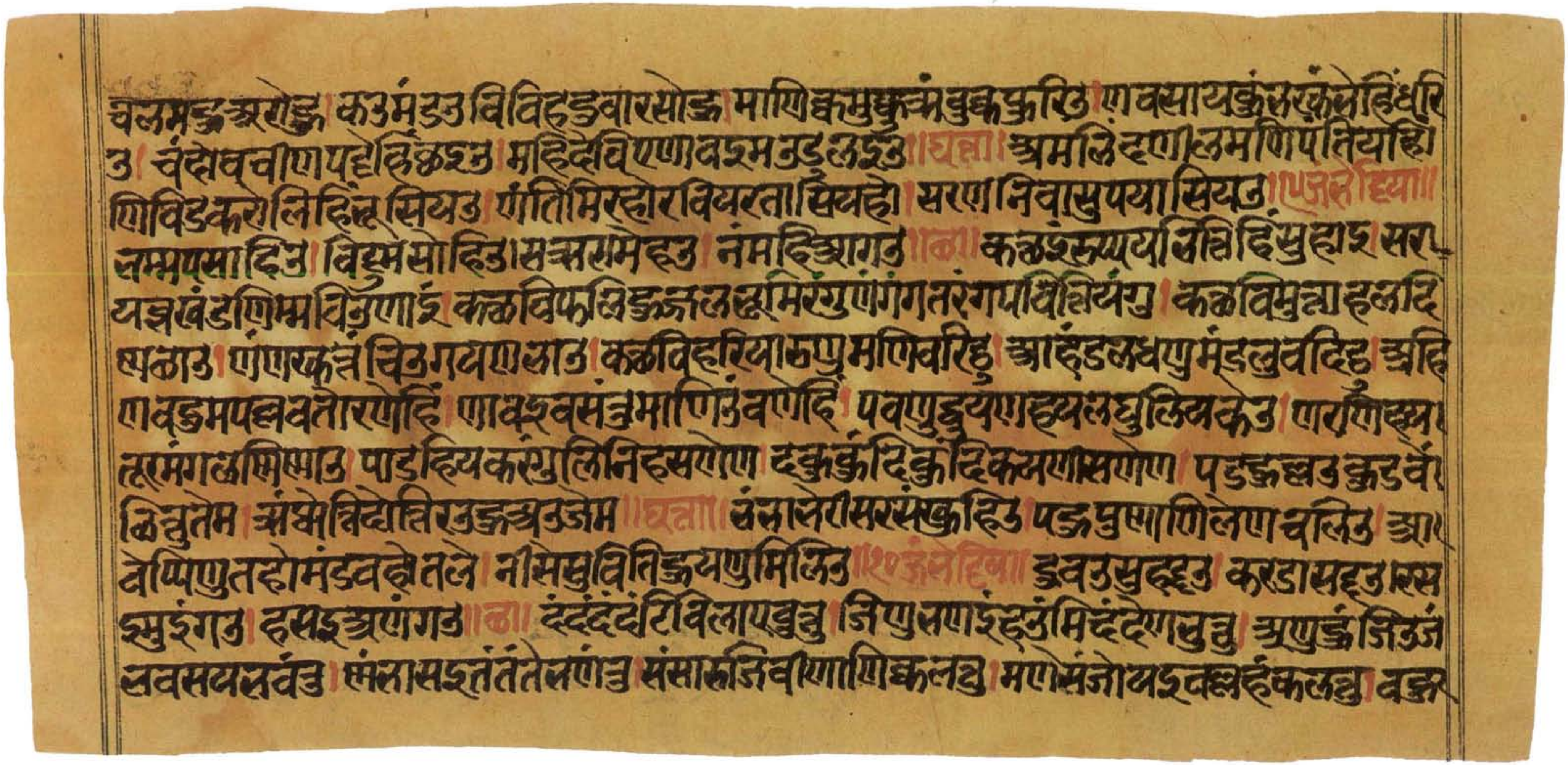

भ्रमरसमूह घूम रहा है, और जिसमें विविध द्वारों से शोभा है, ऐसा मण्डप बनाया गया, माणिक्य और मोतियों के गुच्छों से विस्फुरित, नव स्वर्णस्तम्भों पर आधारित। चन्द्र चीनांशुक से आच्छादित मानो धरतीरूपी देवी ने मुकुट बाँध लिया हो।

घत्ता—सघन किरणोंवाली, स्वच्छ इन्द्रनील मणियों की पंक्तियों से अलंकृत वह मण्डप ऐसा जान पड़ रहा था मानो रवि-किरणों से त्रस्त अन्धकार के लिए शरण-स्थल बना दिया गया हो॥ ९॥

१०

स्वर्ण से प्रसाधित, विद्रुम से शोभित वह ऐसा लगता है जैसे भूमिगत सन्ध्यामेघ हो। कहीं चाँदी की दीवालों से ऐसा लगता है जैसे शरद् के मेघ निर्मित कर दिये गये हों, कहीं स्फटिक मणियों से उज्ज्वल क्रीड़ाभूमि है, मानो पवित्र अंगवाली गंगा की तरंग हो; कहीं मोतियों द्वारा की गयी कान्ति है, मानो नक्षत्रों से युक्त आकाश-भाग हो। कहीं पर हरे-लाल मणियों से वरिष्ठ, वह इन्द्रधनुष मण्डल के समान है। अभिनव वृक्षों के पल्लव-तोरणों से ऐसा लगता है कि वनों ने वसन्त का उत्सव मनाया हो। हवा से उड़ती हुई पताकाएँ आकाशतल में व्याप्त हैं, मनुष्यों के द्वारा आहत तूर्यों की मंगलध्वनि हो रही है, पटहवादक की अँगुली के ताड़न, ढक-कुन्द-कुन्दक के शब्द और डण्डे से पटह इस प्रकार ताड़ित हुआ कि जिससे झंधोत्ति-दोत्ति शब्द हुआ।

घत्ता—भंभा और भेरियों के शब्दों से क्षुब्ध प्रभु पुण्यरूपी पवन से प्रेरित होकर चले। अशेष त्रिभुवन आकर उस मण्डप के नीचे मिल गया॥ १०॥

११

डिमडिम का शब्द होने लगता है। मृदंग बजता है, कामदेव हँसता है। टिविली दं-दं-दं-दं कहती है मानो जिन कहते हैं कि मैं भी नारीयुगल से भुक्त हूँ। सैकड़ों भवों में घूमते हुए जो उन्होंने भोगा है मानो, वही-वही-वही बोलते हुए यही कहते हैं। संसार ही वीणा का शब्द है जो मन में वल्लभ और कलत्र (पति-पत्नी) को जोड़ता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस कारण से बहुछिद्र बाँस को (बाँसुरी के रूप में) बेधा गया है, मानो वही वह मधुर स्वर में कह रहा है (कि वधू ही एकमात्र रमण-स्थल है)। वह मृदंग भी क्या जो भोग (हाथ की थाप) को प्राप्त न होता है, वह श्रेष्ठ होते हुए भी दूसरे का करप्रहार सहता है। काहल के शब्द फैल गये हैं मानो मुख के पवन के द्वारा वे दूर हटा दिये गये हैं। नि:श्वासों से शंख आपूरित हो गये, असंख्य बहरे-अन्धे-मूक और पंगु भी आपूरित (धन से सन्तुष्ट) हो गये हैं। कंसाल और ताल सलसल करते हैं, मिथुनों की तरह अलग होकर फिर मिलते हैं। दरवाजों पर लगे हुए वृत्त ऐसे मालूम होते हैं मानो मनुष्यरूपी वृक्ष के फूल हों।

घत्ता—प्रहार की प्रतिइच्छा रखनेवाले सन्नद्ध आतोद्य वाद्य इस प्रकार गरजते हैं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मानो जैसे जिननाथ के घर रतिरंग होने पर कामदेव का सैन्य हो॥ ११॥

१२

कोई अपने मुख को, कोई सखीजन को, कोई वधूवरों को और कोई घर को सजाती हैं। देवों की इन्द्राणियों और मनुष्यनियों ने कमलकरोंवाले सुन्दर वधू-वरों के ऊपर नमक क्यों उतारा? संजनितमान चामर भी गिर पड़े। मंगल और धवल गीत गाये जाने लगे। धवल चार कलश रख दिये गये। सूत्र से बँधे हुए वे ऐसे प्रतीत होते हैं कि जैसे निश्रुत (श्रुतरहित = मूर्ख) जड़ के संग को नहीं छोड़ते। तरुणियों के द्वारा उठाकर स्नान कराया गया,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

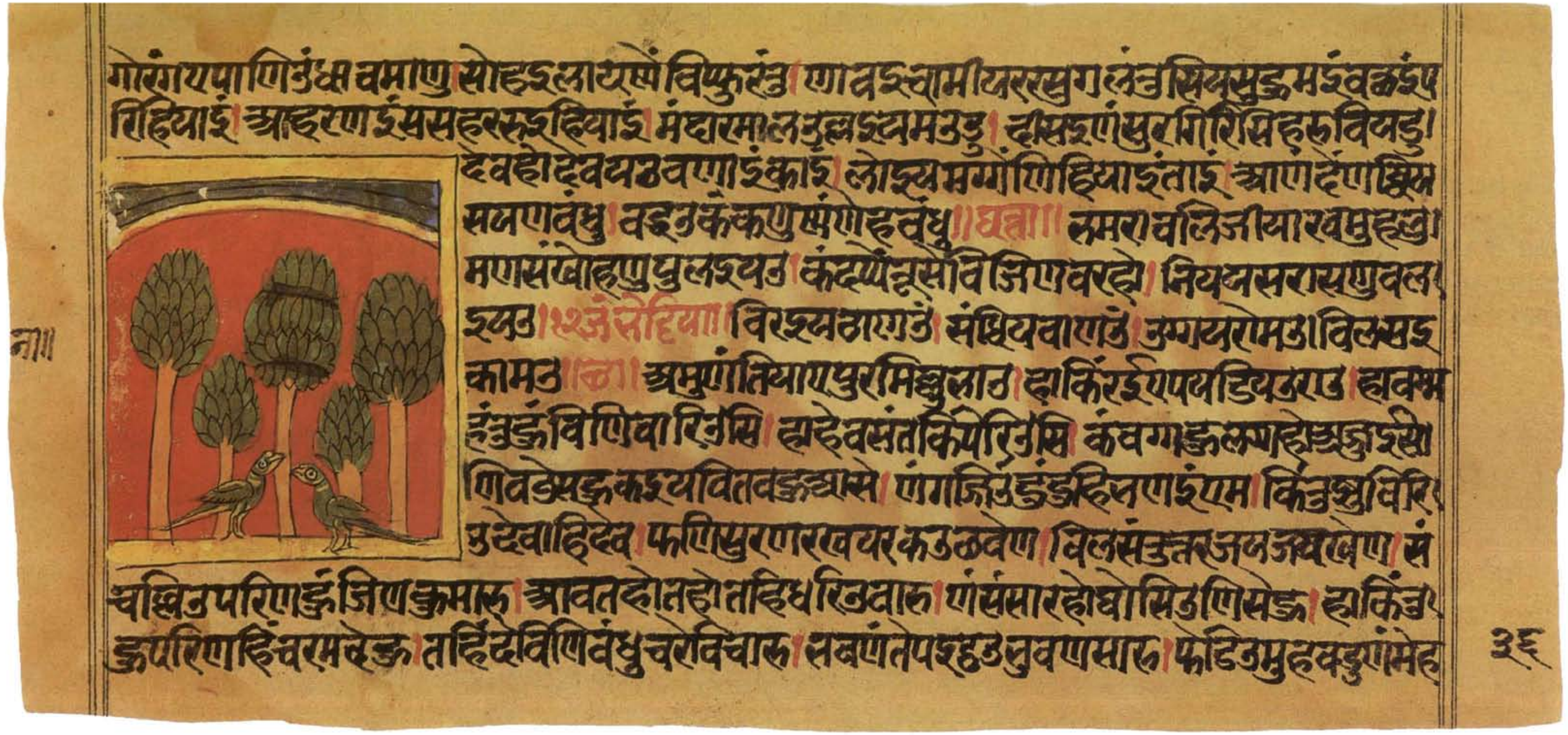

गोरे अंगों पर दौड़ता हुआ और सौन्दर्य से चमकता हुआ पानी ऐसा लगता है मानो द्रवित स्वर्णरस हो, सफेद और सूक्ष्म वस्त्र पहना दिये गये और चन्द्रकान्ति के समान कान्तिवाले आभरण भी। मन्दारमाला से युक्त मुकुट पहना दिया गया जो मानो विशाल सुरगिरि-शिखर के समान दिखाई देता है। देव के लिए देवताओं की स्थापना क्यों? फिर भी लोकाचार से वहाँ देवता स्थापित किये गये। स्वजन-बन्धु आनन्द से नाच उठे। स्नेह के बन्धन के प्रतीक रूप में कंकण बाँध दिया गया।

घत्ता—भ्रमरावली की डोरी के शब्द से मुखर मन के क्षोभ से पुलकित कामदेव ने क्रुद्ध होकर जिनवर के ऊपर अपना धनुष तान लिया॥ १२॥

१३

जिसने मुट्ठी बाँध ली है तथा बाणों का सन्धान कर लिया है, और जिसे रोमांच हो आया है, ऐसा कामदेव विलसित है। अफसोस है कि पूर्व के भाव को जानते हुए रति ने रागभाव को क्यों प्रकट किया? हे वसन्त, तुम भी निवारित कर दिये गये थे। हाँ, हे वसन्त, तुम क्यों प्रेरित हो रहे हो? क्यों उत्पात मचाते हो और ईश्वर के पीछे लगते हो? कभी भी तुम तप की ज्वाला में पड़ सकते हो। मानो गरजती हुई दुन्दुभि यह कहती है कि हे देवाधिदेव, क्या तुम्हारा भी शत्रु हो सकता है? नागों, सुरों और मनुष्यों के द्वारा किये गये उत्सव और बजते हुए तूर्य के जय-जय शब्द के साथ जिनकुमार ऋषभनाथ विवाह करने के लिए चले। आते हुए उन्हें दरवाजे पर रोक लिया गया मानो संसार से उन्हें मना कर दिया गया हो कि हे चरम-शरीरी, तुम क्यों विवाह करते हो? वहाँ नेग (निबन्ध) देकर और सुन्दर बात कर भुवनश्रेष्ठ वह भवन के भीतर प्रविष्ट हुए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

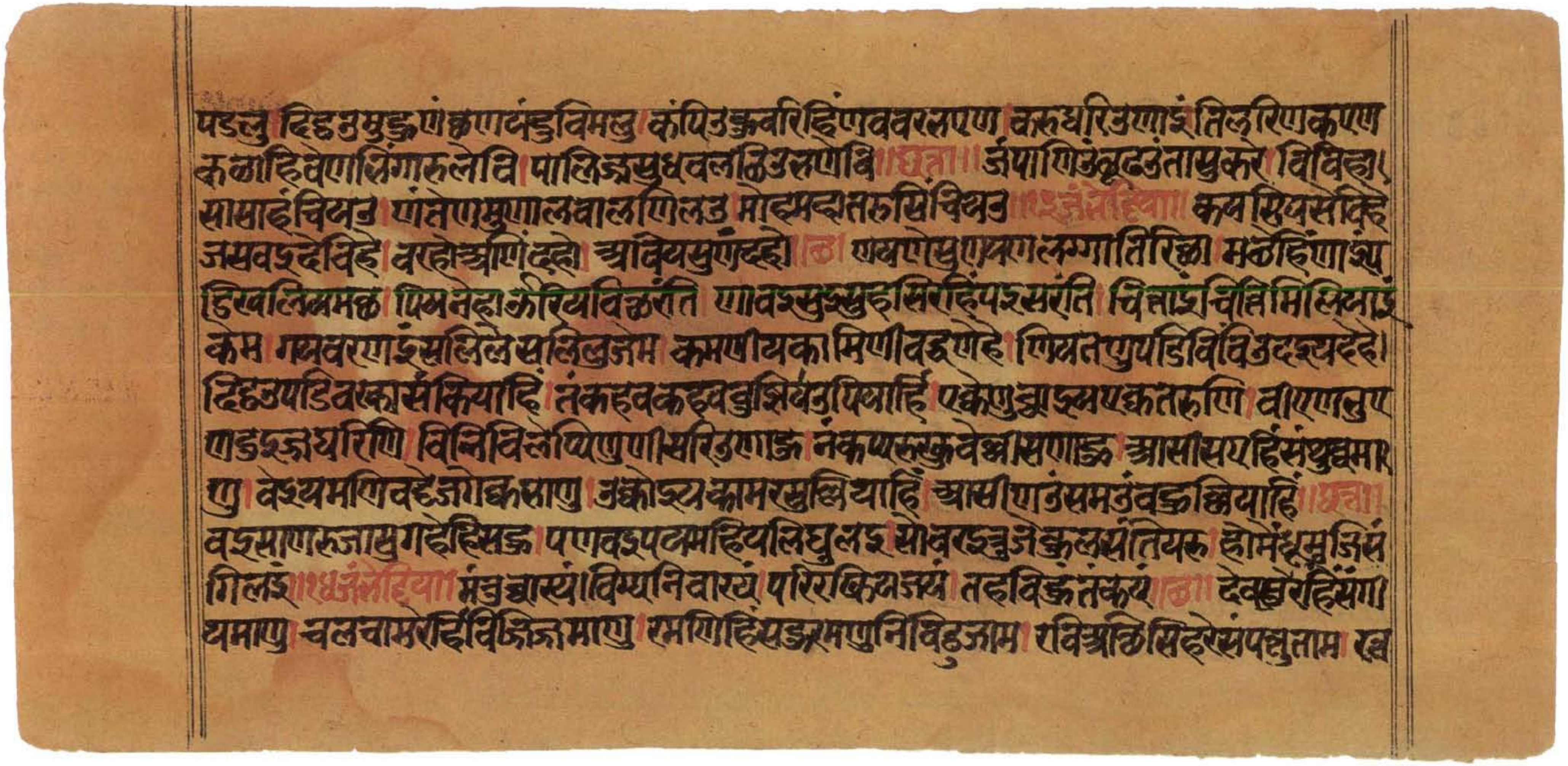

उन्होंने मुखपट खोला, मानो मेघपटल उघाड़ दिया हो, उन्होंने मुँह देखा मानो पूर्णचन्द्र देखा हो। नव वर के भय से कुमारियाँ काँप गयीं। स्नेह के ऋण के कारण उन्होंने उनका हाथ पकड़ लिया, कच्छ के राजा ने भृंगार लेकर और यह कहकर कि धवल आँखोंवाली इनका पालन करना।

घत्ता—जो उनके हाथ पर पानी छोड़ा उसने विविध आशाओंरूपी शाखाओं से सहित, और मनरूपी क्यारी में स्थित मोहमहावृक्ष को सींच दिया॥ १३॥

१४

उसने कहा—'लक्ष्मी से सेवित यशोवती देवी और अनिन्द्य सुनन्दा देवी का वरण करो।' उनके नेत्रों से तिरछे नेत्र इस प्रकार लग गये मानो जैसे मत्स्यों से मत्स्य प्रतिस्खलित हो गये हों, प्रिय के स्नेह से भरी हुई उनकी आँखें इस प्रकार फैलती हैं जैसे कानों के विवरों में प्रवेश करना चाहती हैं। चित्तों से चित्त इस प्रकार मिल गये जैसे गजवर से गजवर और नदियों के जल पानी (समुद्र) में मिल गये हों। सुन्दर स्त्रियों में जिसका स्नेह निबद्ध है ऐसे प्रिय के देह में उन्होंने अपना रूप प्रतिबिम्बित देखा। शत्रुपक्ष की आशंका रखनेवाली प्रियाओं ने बड़ी कठिनाई से उसे समझा। उन्होंने एक हाथ से एक तरुणी को उठा लिया और दूसरे से दूसरी तरुणी को। दोनों को लेकर स्वामी निकले, मानो लताओं से सहित कल्पवृक्ष हो। सैकड़ों आशीर्वादों से संस्तुत, विश्व के एकमात्र सूर्य, वह उत्पन्न कामरस से परिपूर्ण वधुओं के साथ बैठ गये।

घत्ता—दूसरे ग्रहों के साथ अग्नि जिनके चरणों पर गिरता है और धरती पर लौटता है, वही वर कुल की शान्ति करनेवाला है, होम करने से तो केवल धुआँ उत्पन्न होता है॥ १४॥

१५

यद्यपि वह विघ्नों को नष्ट करनेवाले और जग की रक्षा करनेवाले थे, फिर भी उन्होंने सीमित (मर्यादित) आचरण किया। देवों और असुरों द्वारा जिनके गीत गाये जा रहे हैं, जिनपर चंचल चमर ढोरे जा रहे हैं ऐसे वे रमणियों के साथ तब तक बैठे जब तक सूर्य अस्ताचल पहुँच गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

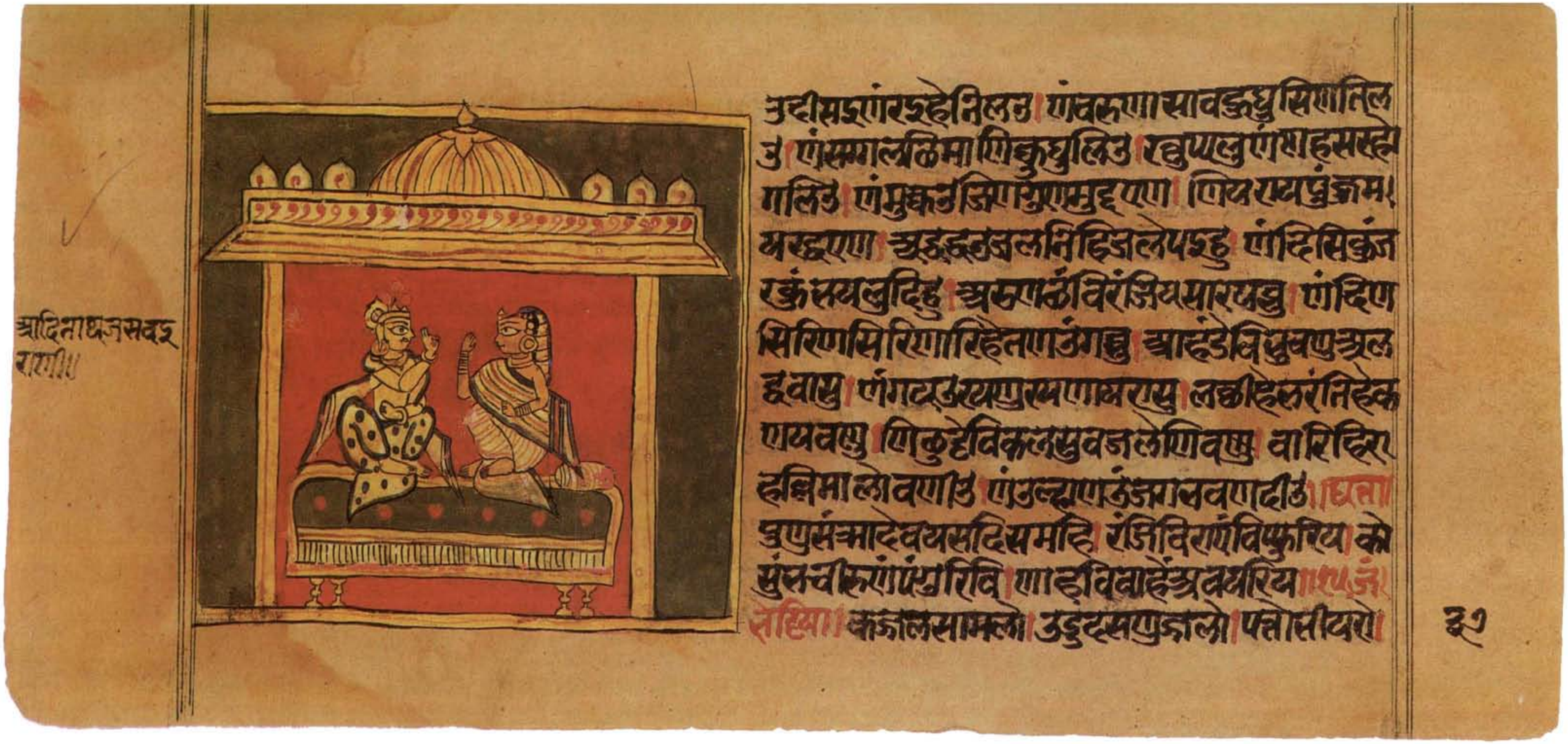

लाल-लाल वह ऐसा दिखाई देता है मानो रति का घर हो, मानो पश्चिम-दिशारूपी वधू का केशर का तिलक हो, मानो स्वर्ग की लक्ष्मी का माणिक्य गिर गया हो, मानो आकाश के सरोवर से लाल कमल गिर गया हो, मानो जिनवर में मुग्ध कामदेव ने अपने-आप रागसमूह छोड़ दिया हो, समुद्र के जल में प्रविष्ट सूर्य का आधा बिम्ब ऐसा मालूम हुआ है मानो दिग्गज का कुम्भस्थल हो, मानो अपने सौन्दर्य से समुद्र के जल को रंजित करनेवाला, दिनलक्ष्मी का गर्भ च्युत हो गया हो, मानो विश्व में घूमकर भी आवास नहीं पाने के कारण रत्न (सूर्यरूपी रत्न) समुद्र में चला गया, मानो याद करती हुई लक्ष्मी का स्वर्ण वर्ण का कलश छूटकर जल में निमग्न हो गया हो, मानो समुद्र की लहरों की लक्ष्मी के द्वारा लुप्त विश्वभवनरूपी दीप शान्त हो गया हो।

घत्ता—फिर सन्ध्यादेवता के समान धरती राग से रंजित होकर इस प्रकार चमक उठी, मानो अपनी लाल साड़ी पहनकर वह स्वामी के विवाह में आयी हो॥ १५॥

१६

तब काजल की तरह श्याम, नक्षत्ररूपी दाँतों से उज्ज्वल भयंकर तमरूपी निशाचर प्राप्त हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

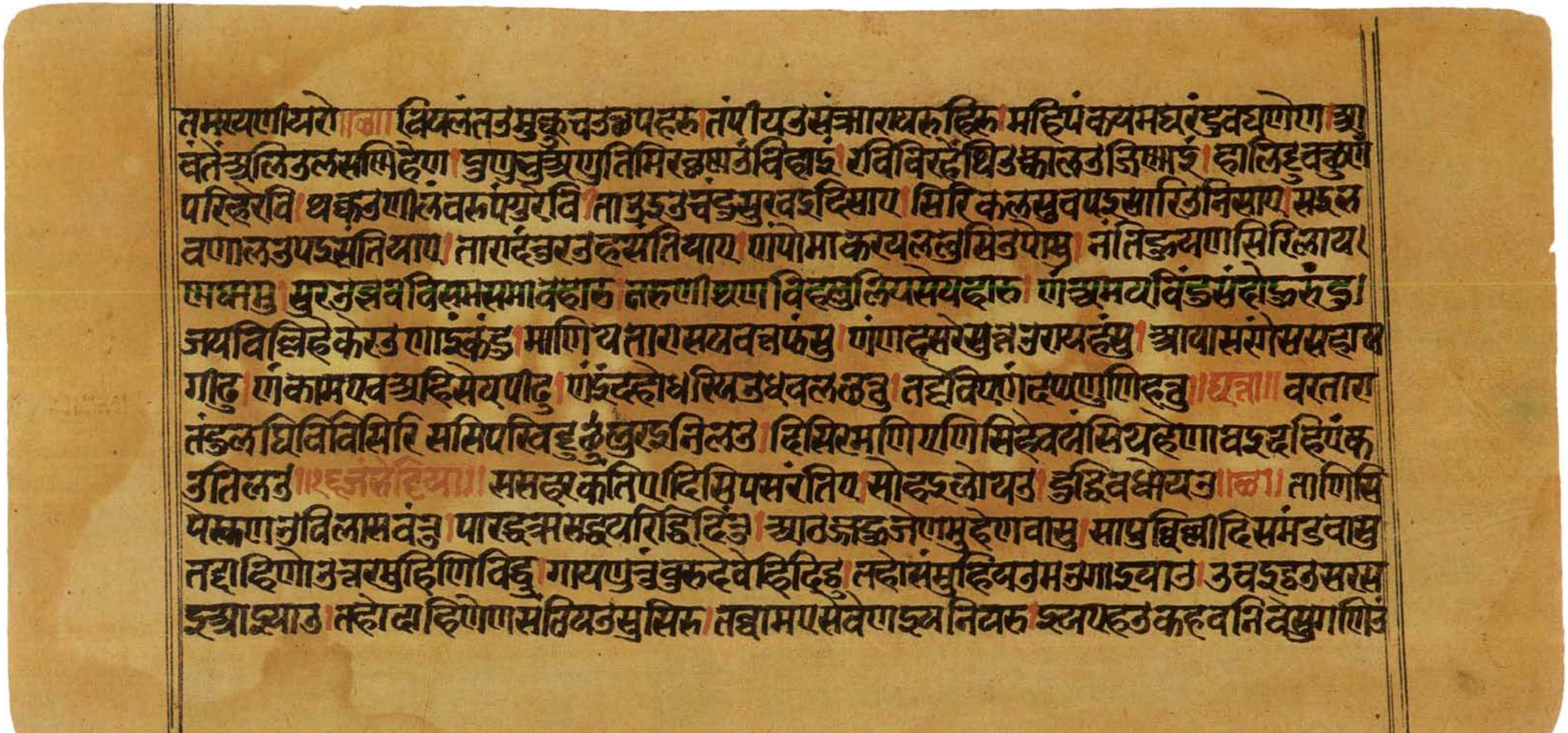

जिसने चौथे प्रहर को छोड़ दिया है, ऐसे विगलित होते हुए सन्ध्यारागरूपी रुधिर को उसी प्रकार पी लिया जिस प्रकार अलिकुल के समान काले आते हुए मेघ के द्वारा धरतीरूपी कमल का पराग पी लिया जाता है। फिर अन्धकार से आच्छन्न विश्व इस प्रकार शोभित है जैसे सूर्य के विरह से वह काला हो गया हो, और मानो वह अपना पीला वस्त्र छोड़कर तथा काला वस्त्र (नीलाम्बर) पहनकर स्थित हो। इतने में चन्द्रमा का उदय हुआ, मानो पूर्व दिशा ने निशा के लिए लक्ष्मी कलश का प्रवेश कराया हो कि जो (निशा) ताराओंरूपी दाँतों से हँसती हुई स्वयं (विश्वरूपी) भवन में प्रवेश कर रही हो। वह चन्द्र ऐसा मालूम होता है मानो लक्ष्मी के करतल से छूटा कमल हो, मानो त्रिभुवन की सौन्दर्य-लक्ष्मी का घर हो, मानो सुरत क्रीड़ा से उत्पन्न विषम श्रम को दूर करनेवाला युवतीजनों के स्तनतल पर हिलता हुआ स्वेदरूपी हार हो, मानो अमृत बिन्दुओं का सुन्दर समूह हो, मानो यशरूपी लता का अंकुर हो। मानो मणि तारारूपी कमल का स्पर्श हो, मानो आकाशरूपी नदी में सोया हुआ राजहंस हो, मानो आकाश के रंगमंच पर अपने स्वभाव से युक्त कामदेव का अभिषेकपीठ हो। मानो इन्द्र के लिए रखा गया धवलछत्र हो, मानो उसकी देवी (इन्द्राणी) के द्वारा धारण किया गया दर्पण हो।

घत्ता—रति का घर गोल-गोल चन्द्रमा ऐसा लगता है मानो दिशारूपी नारी ने श्रेष्ठ तारारूपी चावल छिटककर अपनी निशारूपी सहेली के सिर पर दही का टीका लगाया हो॥ १६॥

१७

दिशा में प्रवेश करते हुए चन्द्रमा की कान्ति से लोक ऐसा शोभित होता है जैसे दूध से धुला हुआ हो। तब रात्रि में विलास से युक्त, कामदेव की ऋद्धि को देनेवाला नाट्य प्रारम्भ हुआ। वाद्य जिस ओर रखे गये थे, वह पूर्व दिशा का मण्डप था। उसके दायें उत्तर में बैठे हुए तुम्बरु गायक देवों के द्वारा देखे गये। उनके सामने कोमल शरीरवाली सरस्वती आदि बैठी हुई थीं। उनके दायें सुषिर आदि वाद्यों के वादक बैठे हुए थे, उनके बायीं ओर वीणावादकों का समूह था। यह इस प्रकार धरती पर स्थानक्रम बताया गया,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी को अन्यत्र प्रत्याहार कहा जाता है। वाद्यों की मार्जन, सन्धारण और संमार्जन आदि कर्मारवी क्रिया कर सहसा कानों को सुख देनेवाले हिन्दोलराग से गान शुरू किया गया। फिर आनन्दित होती हुई उर्वशी, रम्भा, अहिल्या और मेनका आदि नर्तकियों ने स्थिरवर्ण छटक और धारा से (त्रयताल) युक्त प्रवेश किया।

घत्ता—जिन्होंने नवकुसुमों की अंजली छोड़ी है ऐसी, रंगशाला में प्रवेश करती हुई देवियों ने कामबाणों को छोड़ती हुईं कामदेव की धनुषलताओं के साथ लोगों को मोहित कर लिया॥ १७॥

१८

अभिनय में निपुण, भुजाओं में अप्सराओं को धारण कर इन्द्र नृत्य करता है, धरती हिल जाती है। नटों ने नाना प्रकार के चारी और बत्तीस अंगहारों की रचना की। एक-दूसरे की देह (शरीरावयव) की स्थापना से विभक्त, एक सौ आठ करणों (शरीर की विभिन्न भंगिमाओं) का प्रदर्शन किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

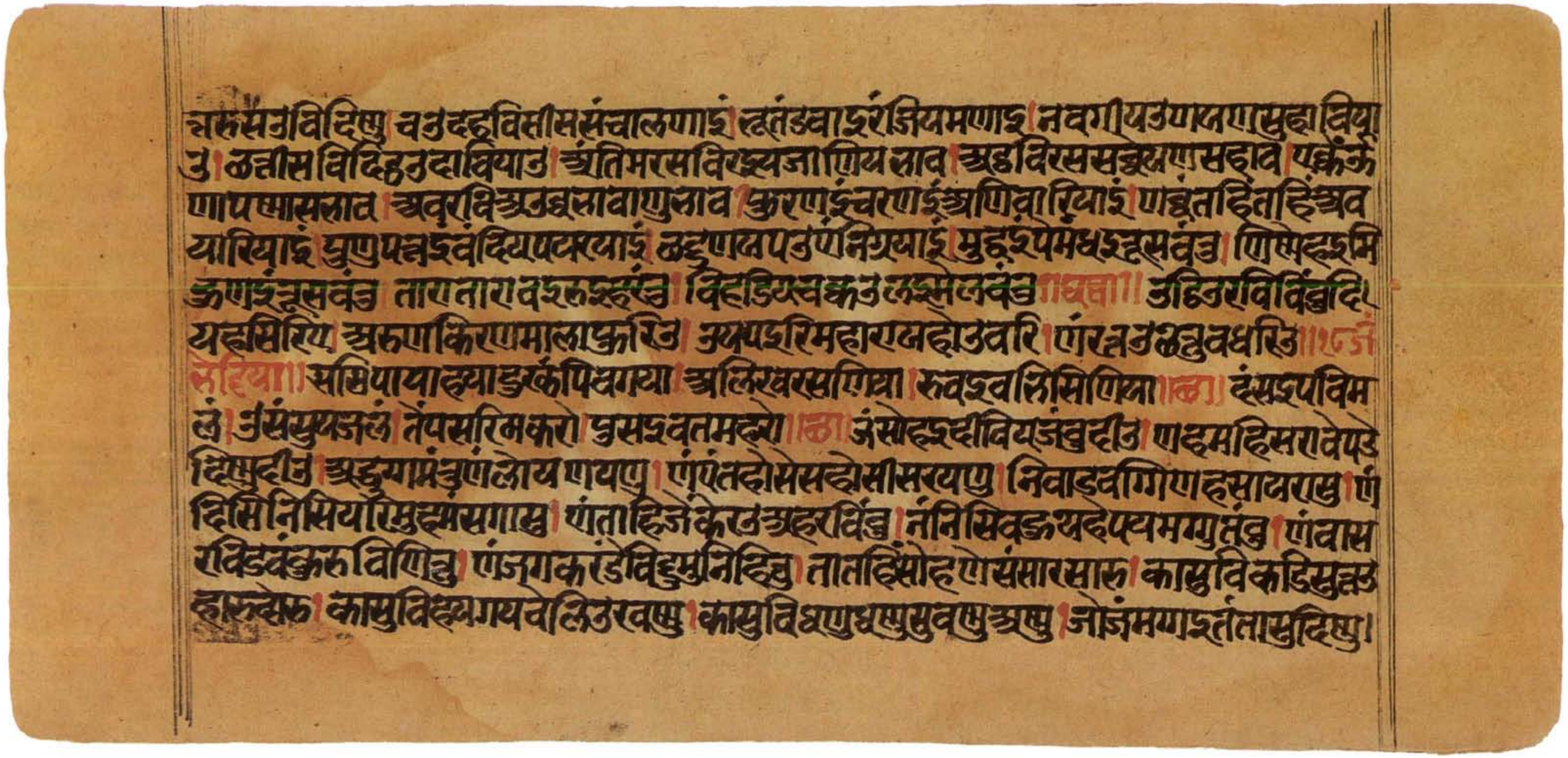

भौंहों के संचालन से मन को रंजित करनेवाला चौदह प्रकार का संचालन किया, तथा मनों को रंजित करनेवाले भौंहों के ताण्डव भी किये। नेत्रों को सुहावनी लगनेवाली नौ ग्रीवाएँ, तथा छत्तीस दृष्टियाँ भी प्रदर्शित की गयीं। अन्तिम रस (शान्त रस) से रहित, हाव उत्पन्न करनेवाले सचेतन स्वरूपवाले आठों रसों का (प्रदर्शन) किया गया। एक कम पचास अर्थात् उनचास (संचारी) भाव, तथा दूसरे और अपूर्व भाव (स्थायी भाव) और अनुभावों का भी प्रदर्शन किया। नृत्य करती हुईं उन्होंने अनिवारित स्फुरण, बलन आदि की अवतारणा की। फिर वन्दित पदरज को प्राप्त होती हुई छड्डुनक (ताल विशेष) के साथ चली गयीं। मुग्ध प्रेमान्धों को क्रुद्ध करता हुआ, स्नेहहीन जोड़ों को सन्तुष्ट करता हुआ, ताराओं और चन्द्रमा की कान्ति का अपहरण करता हुआ वियुक्त चक्रवाक समूह का मेल कराता हुआ—

घत्ता— अरुण किरणमाला से स्फुरित सूर्यबिम्ब अपनी दिवसश्री के साथ ऐसा उदित हुआ जैसे उदयाचलरूपी महाराज पर नवरक्त छत्र रख दिया गया हो॥ १८॥

१९

जो (कमलिनी) चन्द्र की किरणों (पादों = पैरों किरणों) से आहत होकर दु:ख को प्राप्त हुई थी, भ्रमरों के शब्दों से गुंजित ऐसी कमलिनी जैसे रो उठती है, और अपने प्रचुर ओसरूपी आँसुओं को दिखाती है, अन्धकार का हरण करनेवाला सूर्य मानो उसके आँसुओं को पोंछता है। जम्बूद्वीप में आलोकित वह (सूर्य) ऐसा शोभित होता है मानो आकाश और धरतीरूपी शराव-पुट में दीप रख दिया गया हो। मानो अधखुला लोकनेत्र हो, मानो आते हुए शेषनाग के सिर का रत्न हो, मानो आकाशरूपी सागर की वडवाग्नि हो, मानो दिशारूपी राक्षसी के मुँह का कौर हो, या मानो उस (दिशारूपी राक्षसी) का अधरबिम्ब हो। मानो निशारूपी वधू का आरक्त पदमार्ग हो, मानो दिवसरूपी वृक्ष का अंकुर निकल आया हो। मानो विश्वरूपी पिटारे में प्रवाल रख दिया गया हो। ऐसे उस महोत्सव में किसी को विश्वश्रेष्ठ कटिसूत्र, दोर (डोर) हार, किसी को हृदयगत सुन्दर वस्त्र, किसी को धन-धान्य, सुवर्ण और अन्न, जिसने जो माँगा उसे वह दिया गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

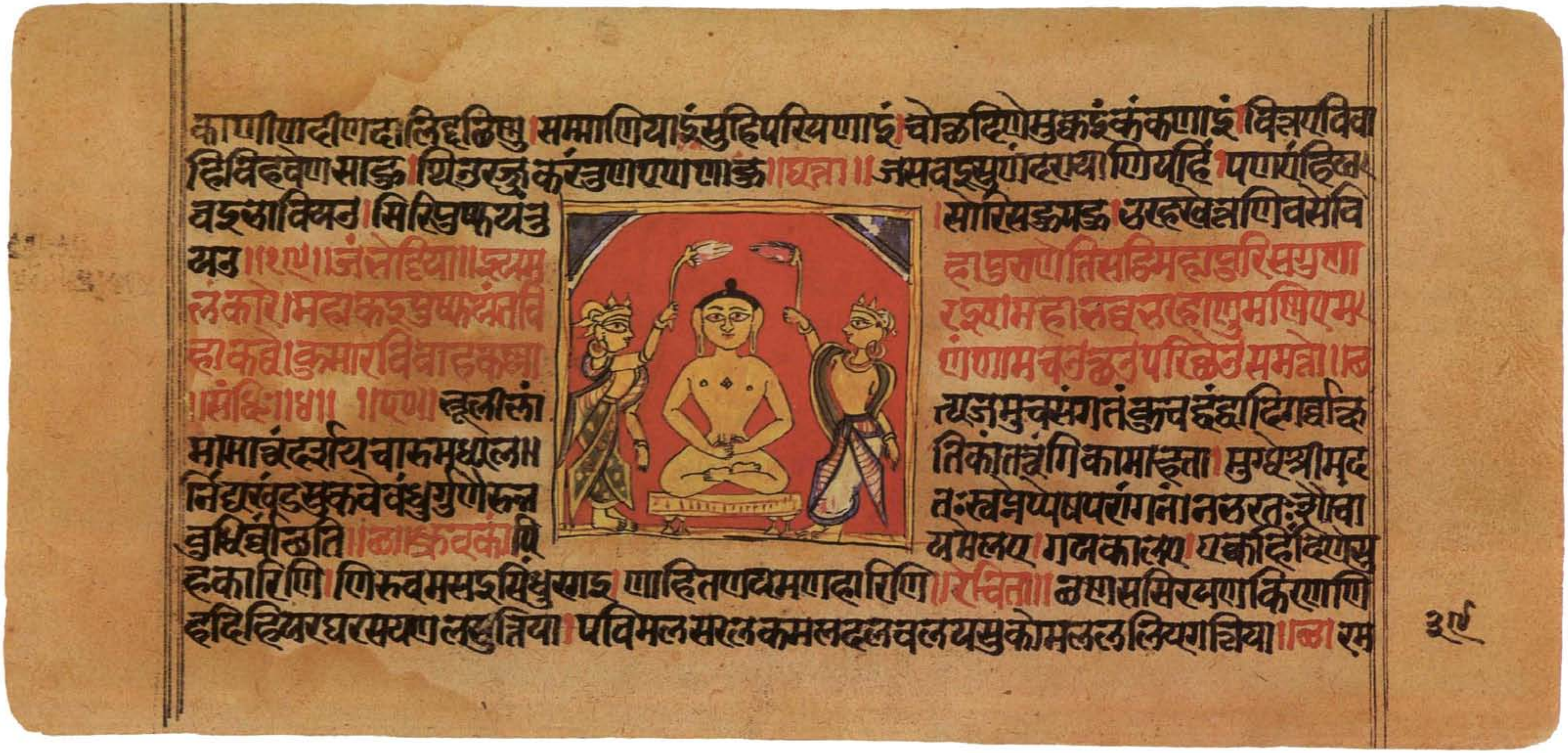

कानीनों और दीनों का दारिद्र्य दूर कर दिया गया। सुधी-परिजनों का सम्मान किया गया। चौथे दिन कंगन छोड़ दिया गया। वैभव के साथ अच्छी तरह विवाह हो जाने पर स्वामी न्याय के साथ राज्य करने लगे।

घत्ता—यशोवती और सुनन्दा रानियों के द्वारा प्रणय और हृदय से चाहे गये श्वेतपुष्प (जुही) के समान वह ऋषभ, भरतक्षेत्र के राजाओं के द्वारा सेवित हुए॥ १९॥

इस प्रकार त्रेषठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित तथा महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का कुमारीविवाह-कल्याण नाम का चौथा परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ४॥

सन्धि ५

१

प्रिय से मिलाप करानेवाले समय के बीतने पर एक दिन अनुपम सती शुभकारिणी, ऋषभनाथ की अत्यन्त प्रिय, गजगामिनी, स्वच्छ कमल-समूह के समान कोमल शरीरवाली, पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान शीतल शयनतल में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपने यश से अत्यधिक शोभित यशोवती इस प्रकार सो रही थी मानो नवकमलों पर हंसिनी सो रही हो। स्वप्न में उसने एक शैलराज देखा जिसके तट देव-बालाओं के पैरों के आलक्तक से आरक्त थे, जिसकी घाटियों के रन्ध्रों से गम्भीररूप से जल गिर रहा था, जिसके शिखर सिंहों और श्वापदों की गर्जनाओं से निनादित थे, अपने चन्द्रकान्त मणियों की आभा से जिसने सूर्यबिम्ब को जीत लिया था। जिसने हाथी-दाँतों से स्वर्णराग को निस्तेज कर दिया था। (फिर उसने देखा) निशा के अलंकारभूत चन्द्रमा को, पूर्वदिशा से निकलते हुए सूर्य को, भ्रमरों से गूँजते हुए कमलों से युक्त और अद्वितीय पराग से पीले सरोवर को, जो अत्यन्त वेगशील लहरों से दशों दिशाओं में चंचल है, जो जलों के स्खलन से गिरिशिखरों का प्रक्षालन करनेवाला है, जिसमें अमर्ष से भरे हुए मत्स्यों का उत्फाल शब्द उठ रहा है, ऐसे मत्स्यों और मगरों से भयंकर समुद्र को उसने देखा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

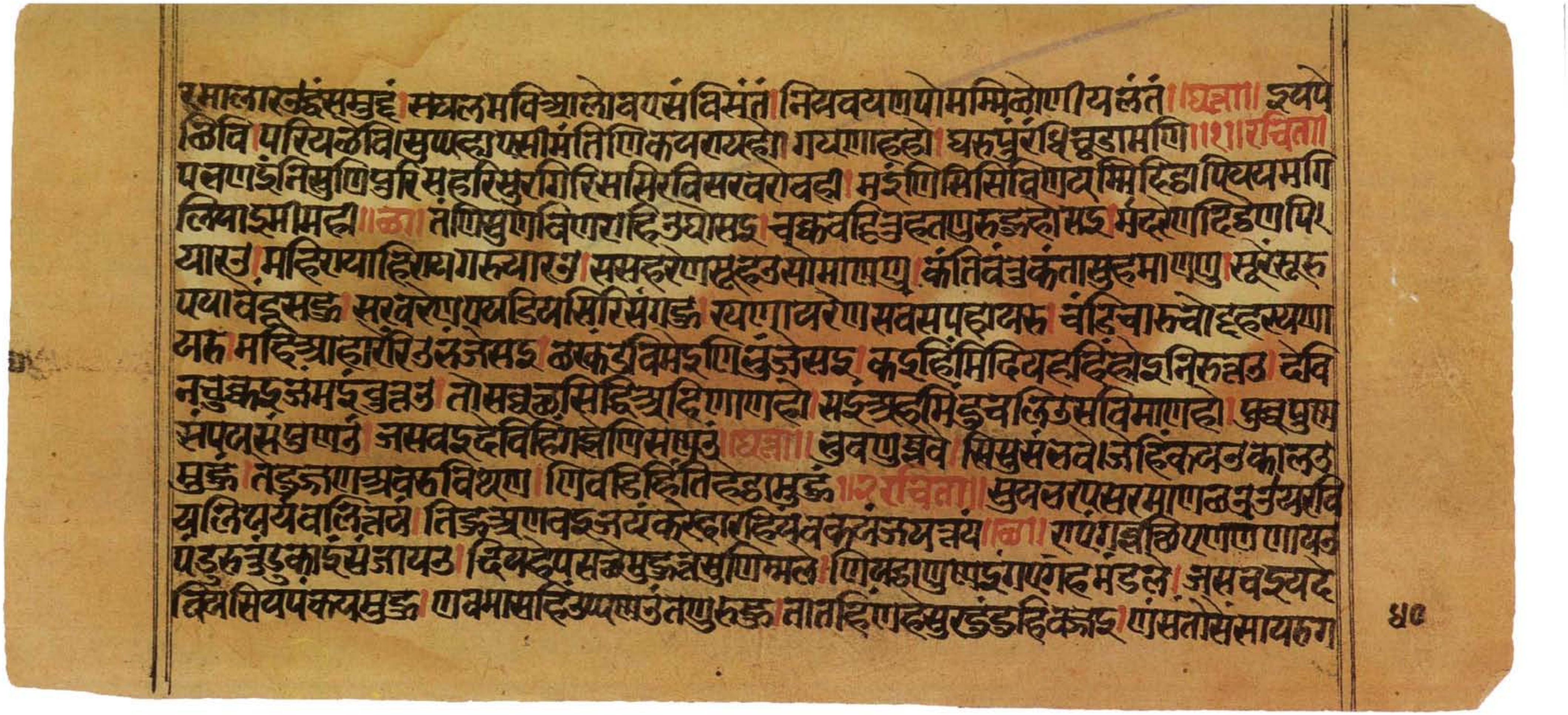

समस्त धरतीतल को अपने मुखरूपी कमल में प्रवेश करते हुए देखा।

घत्ता—यह देखकर इन्द्राणियों में श्रेष्ठ वह सीमन्तिनी प्रेम करनेवाले अपने स्वामी के भवन में सवेरे-सवेरे यह पूछने के लिए गयी॥ १ ॥

२

वह बोली—हे पुरुषश्रेष्ठ, सुनिए। मैंने रात्रि में स्वप्न में सुमेर पर्वत, चन्द्रमा, सूर्य, सरोवर, समुद्र और निगली जाती हुई धरती को, हे स्वामी, देखा है। यह सुनकर राजा घोषणा करते हैं—"तुम्हारे चक्रवर्ती पुत्र होगा, मन्दराचल को देखने से प्रियकारक महान् महाराजाधिराज होगा। चन्द्रमा को देखने से सुभग और सौम्य मुखवाला, कान्ता का सुख माननेवाला और कान्ति से युक्त होगा। सूर्य को देखने से शूरवीर और अपने प्रताप से असह्य होगा। सरोवर को देखने से उसका स्पष्ट लक्ष्मीसंग्रह होगा। समुद्र देखने से वह अपने वंश का सूर्य होगा, प्रचण्ड सुन्दर और चौदह रत्नों का आश्रय। पृथ्वी का अहार देखने से वह शत्रु का नाश करेगा और छह खण्ड धरती का भोग करेगा। कुछ ही दिनों में हे देवी, तुम्हारे पुत्र होगा, जो कुछ मैंने कहा है वह चूक नहीं सकता।" तब सर्वार्थसिद्धि नामक अपने विमान से चलकर पूर्वपुण्य की सम्पत्ति से भरपूर अहमिन्द्र स्वयं यशोवती देवी के गर्भ में आकर स्थित हो गया।

घत्ता—भुवन का उत्कर्ष है जिसमें ऐसे पुत्र का जन्म होने पर जिन्होंने अपना मुँह काला कर लिया, ऐसे दुर्जन और स्तन अपना मुख नीचा करके गिर गये॥ २ ॥

३

पुत्र के भार के प्रसार से क्षीण उदर की त्रिवलि समाप्त हो गयी। मानो तीनों लोकों को त्रिभुवनपति की विजय की चिह्नरेखा से रहित कर दिया गया हो। यह नहीं जाना जा सका कि गर्भ में स्थित राग से उसका मुख सफेद क्यों हो गया? प्रशस्त दिन, निर्मल मुहूर्त और ग्रहों के अपने-अपने स्थान पर स्थित होने पर नौ माह में यशोवती के विकसित मुखवाला सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुआ। तब आकाश में देवों की दुन्दुभि बज उठती है मानो सन्तोष से सागर गरजने लगता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मानो (लोगों के) दान देने पर हाथी वन में चले जाते हैं, मनुष्य हर्ष से क्यों उत्कण्ठित नहीं होते। मेघ सुगन्धित जल बरसाते हैं, दिशाओं के मुख अत्यन्त निर्मल हो जाते हैं, आकाश भी मल से रहित दिखाई देता है मानो नीले बर्तन को माँजकर खूब साफ कर दिया गया हो, या मानो मन्दराचल के दण्ड पर आधारित एक छत्र कुमार के ऊपर रख दिया गया है। ''ताराओं के समान मोतियों से विभूषित यह राजा सबसे श्रेष्ठ है,'' मानो धरती चारों ओर महानदियों के घोषों से कलकल करती हुई और दुष्टों को हटाती हुई यही कहती है।

घत्ता—सरोवर के कमलोंरूपी नेत्रों से तुम्हें देखती हुई (धरती) मुझे (कवि को) अच्छी लगती है, हवाओं से चंचल और आन्दोलित लतारूपी बाहुओं से मानो वह नृत्य करती है॥ ३॥

४

अपने गुणरत्नसमूह की किरण-मंजरी से राजवंश को धवलित करनेवाला और असामान्य पुण्य वृक्ष की शाखा से आश्रित वह राजहंस बड़ा होने लगा। नामकरण और चूड़ाकरण आदि उसका सब कुछ विशेष शोभा के साथ किया गया। जो माँ के यौवनरूपी फल के गुच्छे के समान, विह्वल लोगों के लिए कल्पवृक्ष के समान, सुधि-वचनामृत के लिए बिन्दु-प्रवेश के समान, मित्रों के चित्तों के संग्रह के लिए आश्रय-स्थान के समान, गुणों की प्रशंसा के लिए प्रकाशन मार्ग के समान, रोग और शोक से रहित स्वर्ग के समान, पिता के स्वभाव संचय के समान, बन्धुस्नेह के बन्धन से घिरे हुए के समान, अनुचर जनों के लिए चिन्तामणि के समान, शत्रुरूपी पर्वतों के सिरों के लिए गाज के समान,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

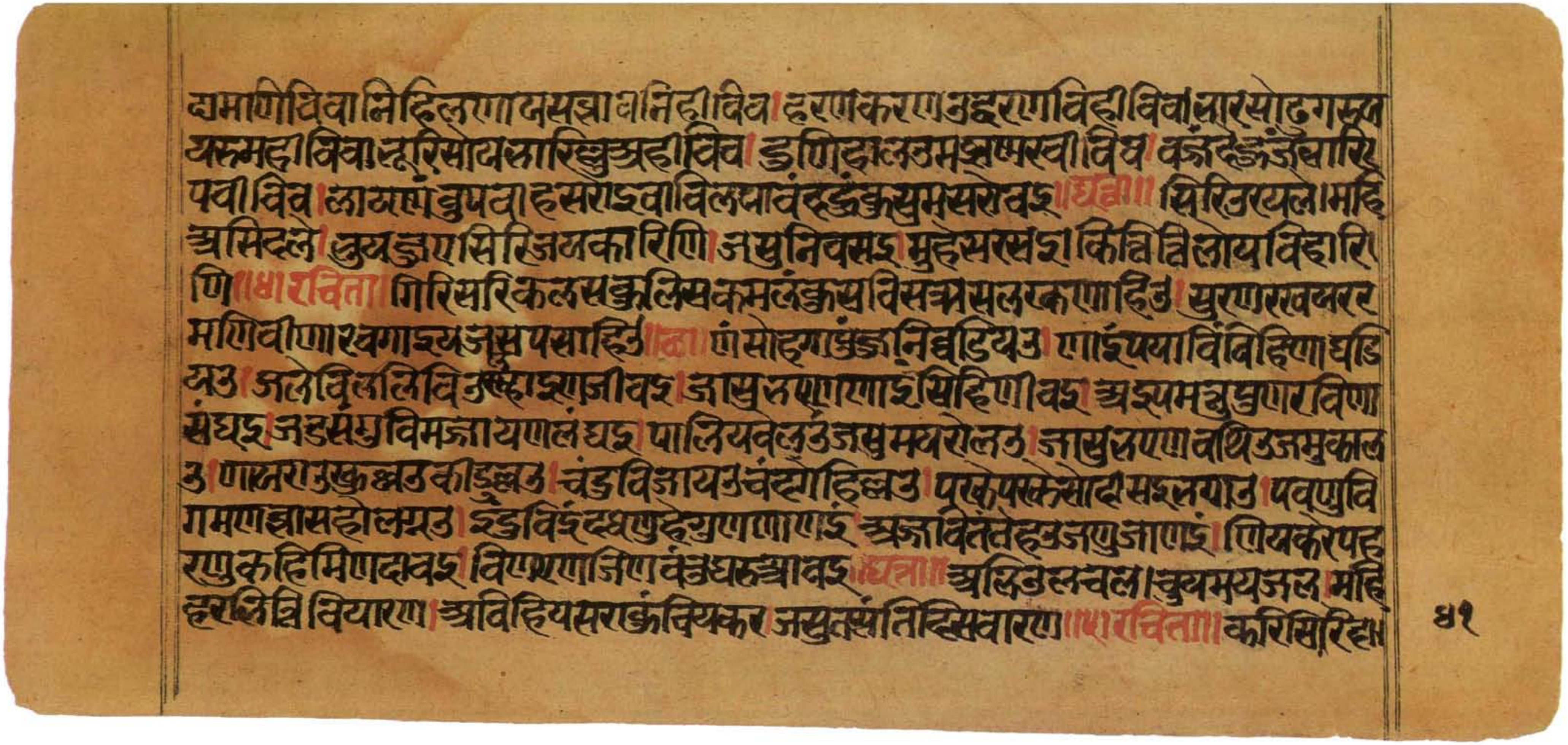

निखिल न्याय और सद्भाव की निधि के समान, नाश-निर्माण और उद्धार में विधाता के समान, भार सहन करनेवाली धरती के समान, भूरिभोग (प्रचुर फन/प्रचुर भोग) वाले नाग के समान, दुर्दर्शनीय मध्याह्न रवि के समान, इन्द्र के वज्र के समान वज्र शरीर, सौन्दर्य समुद्र के प्रवाह के समान, वनिता समूह के लिए कामदेव के समान था।

घत्ता—जिसके वक्ष:स्थल पर लक्ष्मी, असिदल पर धरती, बाहुओं में जय करनेवाली जयश्री और मुख में सरस्वती निवास करती है और जिसकी कीर्ति तीनों लोकों में विहार करनेवाली है॥ ४॥

५

जो गिरि, नदी, कलश, वज्र, कमल, अंकुश, वृषभ और मत्स्य के लक्षणों से अंकित है तथा जो सुरों, नरों एवं विद्याधरों की वनिताओं की वीणाध्वनि में गाया जाता है। जो यश से प्रसाधित है। जो मानो (कसौटी पर) कसा गया सौभाग्यपुंज है, मानो जिसे प्रयास से विधाता ने गढ़ा है, जिसके भय से आग जल-जलकर अंगार होती है, जीवित नहीं रहती, और अन्त में शान्त हो जाती है। समुद्र यद्यपि प्रमादी है, फिर भी (जिसके डर से) स्थिर नहीं रहता, जड़ का (जल, जड़) संग करने पर भी मर्यादा का उल्लंघन नहीं करता, जिस भरत की मर्यादा का समुद्र पालन करता है, जिसके भय से यम स्थिर हो गया है, जिसके लिए नागराज एक क्षुद्र क्रीड़ा है। चन्द्रमा भी जिसके लिए मयूरचन्द्र के समान है। वह (चन्द्रमा) पक्ष-पक्ष में क्षीण होता दिखाई देता है; और पवन भी जिसके भय से चलने का अभ्यास करने लगा है। इन्द्र भी अपने धनुष पर डोरी नहीं चढ़ाता, और आज भी लोग उसी रूप में जानते हैं। वह अपने हाथ में शस्त्र कभी नहीं दिखाता। वह विनय से विनम्र होकर घर आता है।

घत्ता—जो अलिकुल से चंचल हैं, जिनसे मदजल चू रहा है, जो पहाड़ों की दीवारों का विदारण करनेवाले हैं, जो गर्जना नहीं कर रहे हैं, जिनकी सूँडें टेढ़ी हैं, ऐसे दिग्गज जिससे त्रस्त रहते हैं॥ ५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

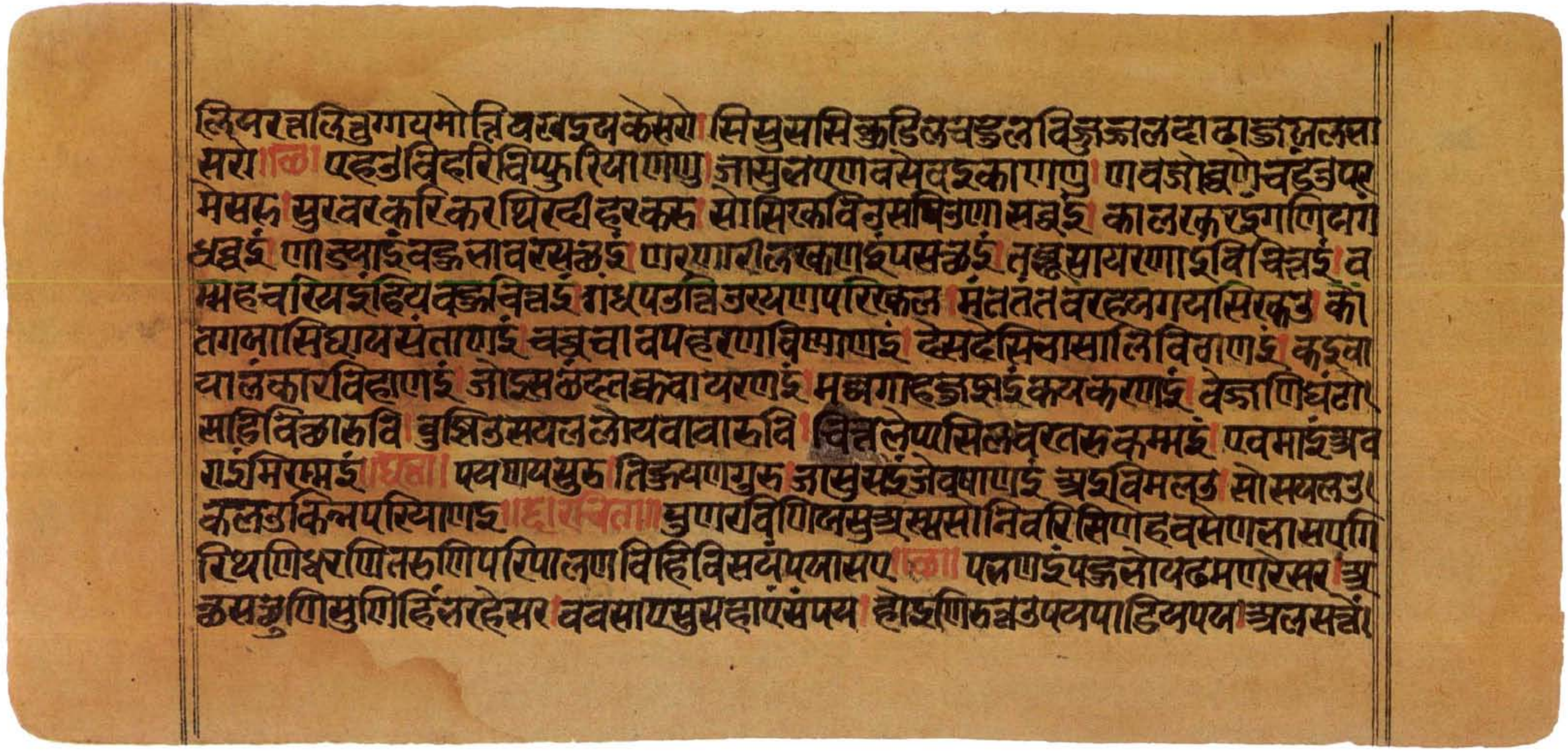

६

हाथियों के सिरों से दलित तथा रक्त से लिप्त निकले हुए मोतियों से जिसकी अयाल विजड़ित है, जो बालचन्द्र के समान कुटिल और चंचल बिजली के समान उज्ज्वल अपनी दोनों दाढ़ों से भास्वर है, ऐसा तमतमाते मुखवाला सिंह भी जिसके भय से जंगल का सेवन करता है। ऐरावत की सूँड के समान जिसके बाहु दीर्घ और स्थिर हैं ऐसा परमेश्वर भरत नवयौवन को प्राप्त होने लगा। उसके पिता ने उसे सब सिखाया। काले (स्याही से लिखित) अक्षर गवित गन्धर्व विद्या, विविध भाव और रस से परिपूर्ण नाटक, नर-नारियों के प्रशस्त लक्षण, उनकी भूषाओं के निर्माण, स्त्रियों के हृदय को चुरानेवाले कामशास्त्र के चरित, गन्ध की प्रयुक्तियाँ, रत्नपरीक्षा, मन्त्र-तन्त्र, श्रेष्ठ अश्व और गज की शिक्षाएँ, कोंत, गदा और तलवारों के आघातों की परम्परा, चक्र-धनुष-प्रहरणों के विज्ञान, देश-देशीभाषा-लिपि-स्थान, कवि वागलंकार-विधान, ज्योतिष-छन्द-तर्क और व्याकरण, आवर्तन-निवर्तन आदि करणों (पेचों) से युक्त मल्लग्राह युद्ध, वैद्यक-निघंटु, औषधियों का विस्तार और सर्वलोक-व्यवहार भी उसने समझ लिये। चित्रलेप, मूर्ति और काष्ठकला आदि दूसरे-दूसरे सुन्दर कर्म सीख लिये।

घत्ता—जिसके चरणों में देव नत हैं ऐसे त्रिभुवनगुरु (ऋषभ जिन) जिसे स्वयं शिक्षा देते हैं अत्यन्त विमल उन समस्त कलाओं को वह भरत क्यों नहीं जानेगा॥ ६॥

७

फिर वह राजर्षि ऋषभ स्नेह के वशीभूत होकर अपने पुत्र से कहते हैं और उसे गिरि हैं स्तन जिसके, ऐसी धरतीरूपी तरुणी के पालन करने की विधि और विषय बताते हैं। प्रभु कहते हैं—"हे प्रथम नरेश्वर भरतेश्वर, तुम अर्थशास्त्र सुनो! व्यवसाय और सहायक होने से सम्पत्ति होती है। प्रजा चरणों में नत रहती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

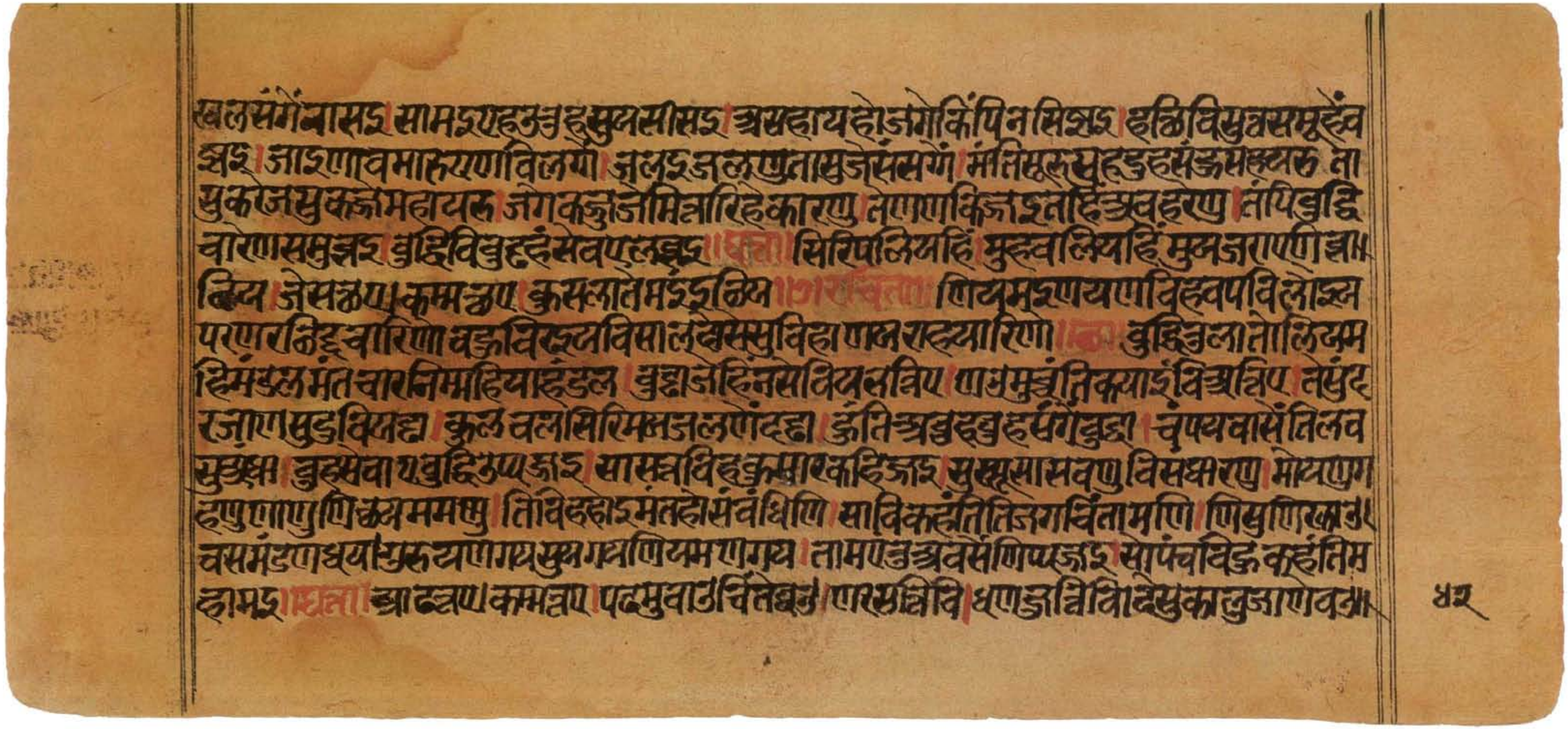

आलस्य और दुष्ट की संगति से वह नष्ट हो जाती है। हे पुत्र, तुम्हें मैं यह उपदेश देता हूँ। असहाय लोगों का विश्व में कुछ भी सिद्ध नहीं होता। धागों के समूह से हाथी भी बाँध लिया जाता है। हवा से लगकर नाव चली जाती है, और उसी हवा के संसर्ग से आग जल उठती है, मन्त्री यदि शूर, असह्य सहन करनेवाला पण्डित और मित्र है तो कार्य में उसका महान् आदर करना चाहिए, उसमें उसके साथ उपेक्षा का बर्ताव नहीं करना चाहिए, क्योंकि दुनिया में शत्रु और मित्र होने का कारण कार्य ही है। कार्य भी बुद्धि के द्वारा सम्भव और उत्पन्न होता है, बुद्धि भी वृद्धों की सेवा करने से मिलती है—

घत्ता—जिनके सिर सफेद हो चुके हैं, जिनके मुख टेढ़े हैं, जो जरा से निन्दित हैं उन्हों छोड़ो। जो स्वस्थ हैं, कर्म करनेमें कुशल हैं उन्हें मैं चाहता हूँ॥ ७॥

८

अपनी बुद्धिरूपी नेत्रों के वैभव से, शत्रुपक्ष के छिद्रों को देखनेवाले, स्वामी की शोभा बढ़ानेवाले चरपुरुष उसके द्वारा किये गये विशाल दोषों को ढकनेवाले होते हैं। अपनी बुद्धिरूपी तुला पर समस्त ब्रह्माण्ड को तौलनेवाले तथा मन्त्रप्रयोग से इन्द्र को पराजित करनेवाले वृद्धों की जिसने सेवा नहीं की है, ऐसे उन कुलमूर्खों को कुल, बल, श्री और मद की ज्वाला में दग्ध समझो। पण्डितों की संगति से मूर्ख भी पण्डित हो जाते हैं, उसी प्रकार जिस प्रकार 'चम्पा' की गन्ध से तिल सुगन्धित हो जाते हैं। पण्डितों की सेवा से बुद्धि उत्पन्न होती है, यह सेवा सात प्रकार की कही जाती है—शुश्रूषा, श्रवण, सन्धारण, मोदन, ग्रहण, ज्ञान और निश्चय मन (तर्क-वितर्क की शक्ति)। मन्त्र से संबंधित बुद्धि तीन प्रकार की होती है और जो तीनों लोकों में चिन्तामणि कही जाती है। हे इक्ष्वाकु कुल के मण्डन-ध्वज, सुनो—एक बुद्धि गुरुजन से प्राप्त होती है, दूसरी बुद्धि शास्त्र से और तीसरी अपने मन से उत्पन्न होती है। इससे मन्त्र अवश्य सिद्ध होता है। महामति मन्त्र को पाँच प्रकार का बताते हैं।

घत्ता—सुनो, कार्य को प्रारम्भ करने पर पहले कार्य की चिन्ता करनी चाहिए। मनुष्यशक्ति, धन, युक्ति तथा देशकाल को जानना चाहिए॥ ८॥

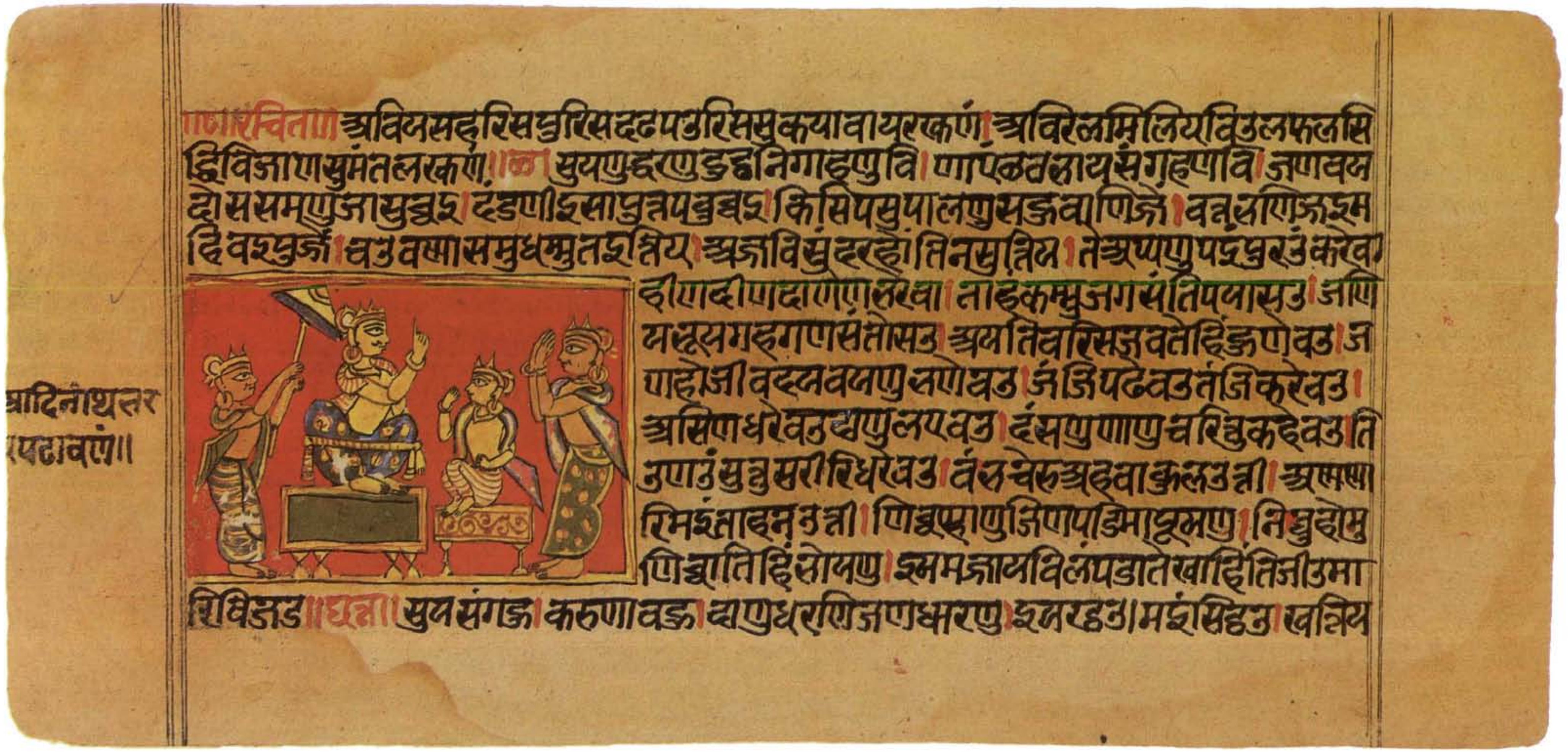

९

और भी, हे दृढ़पौरुष पुरुष, जिसमें अपाय का रक्षण किया गया है तथा अविरल रूप से विपुल फल की प्राप्ति हो, तुम ऐसे मन्त्र लक्षण को जानो। सुजन का उद्धार, दुष्टों का निग्रह, न्याय से करके रूप में छठे भाग को ग्रहण करना, जनपद के दोषों का शमन करना, इनका जो विचार करती है, हे पुत्र वह दण्डनीति कही जाती है। वाणिज्य के साथ कृषि और पशुपालन को राजाओं के द्वारा पूज्य ने वार्ता कहा है। चतुर्वर्ण आश्रम और धर्म त्रयीविद्या है। श्रोत्रिय (ब्राह्मण) आज भी सुन्दर नहीं होते। उन्हें तुम अपने से आगे रखना, दीन-हीनों को दान से सन्तुष्ट करना। उनका काम जग में शान्ति का प्रकाशन करना और भूतग्रहों को शान्ति करना है। अज तीन वर्ष के जौ को कहते हैं उनसे यज्ञ करना चाहिए, लोगों में जीवदया का प्रचार करना चाहिए। जो पढ़ा जाये उसी को किया जाना चाहिए। उन्हें दर्शन, ज्ञान और चारित्र कहना चाहिए। तीन डोरों का जनेऊ शरीर पर धारण करना चाहिए। ब्रह्मचर्य से रहना चाहिए, अथवा किसी कुल-पुत्री से विवाह करना चाहिए, उनके लिए मैंने दूसरी स्त्री नहीं बतायी। नित्य स्नान, जिनप्रतिमा का पूजन, नित्य होम करना, नित्यप्रति अतिथि को भोजन देना। लेकिन वे लम्पट और जड़ इस मर्यादा का उल्लंघन कर जीव मारकर खायेंगे।

घत्ता—श्रुतसंग्रह, करुणपथ, दान और धरती के लोगों का पालन करना, इस प्रकार मैंने क्षत्रिय कर्म की विचारणा की॥ ९ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

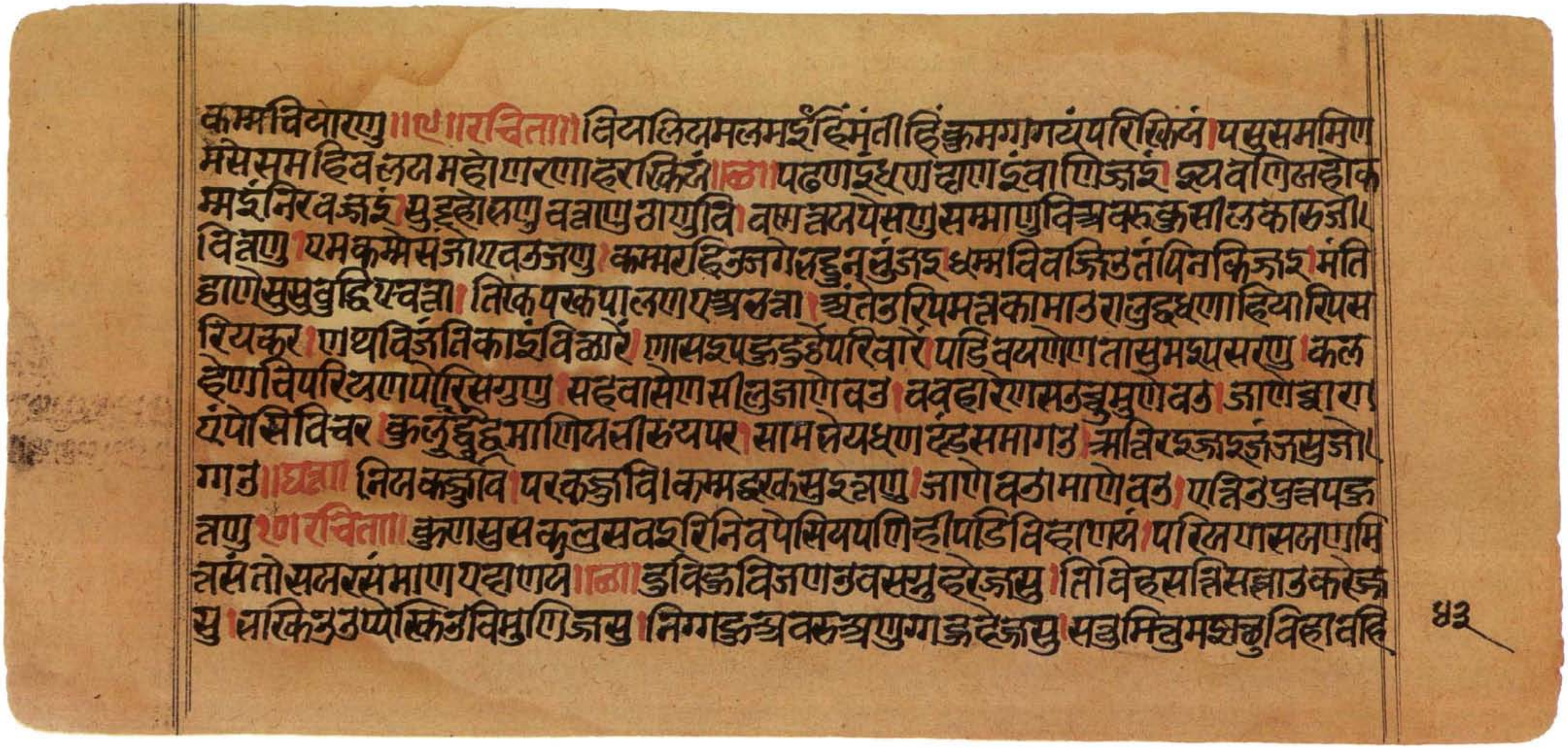

१०

विगलित पापबुद्धिवाले मन्त्रियों के द्वारा कुमार्ग में जानेवालों की रक्षा की जाये। हे नरनाथ, जिस प्रकार गाय, पशु आदि जानवरों का पालन किया जाता है उसी प्रकार इस समस्त धरती-मण्डल का परिपालन करना चाहिए। पढ़ना, हवन करना, दान देना और वाणिज्य यह वैश्यों का अनवद्य कर्म है। शूद्रों का काम है, वार्ता का अनुष्ठान और वर्णत्रय की आज्ञा मानना और उनका सम्मान करना। नटविद्या, शिल्प-आजीविका आदि के कामों में लोगों को लगाना चाहिए। दुनिया में भला आदमी बिना कर्म के भोग नहीं करता। लेकिन धर्म से रहित कर्म भी नहीं करना चाहिए, मन्त्री के स्थान में कुल एवं बुद्धि से हीन लोगों को नहीं रखना चाहिए, हिंसक और दुष्ट लोगों को ग्रामादि के पालन में नहीं रखना चाहिए। अन्त:पुर में प्रमादी और कामातुरों, लोभी और हाथ पसारनेवालों को भाण्डागार की रक्षा में नहीं रखना चाहिए। विस्तार से क्या, दुष्ट परिवार से राजा नाश को प्राप्त होता है, प्रतिवचनों से उसकी बुद्धि का प्रसार करना चाहिए, कलह में परिजनों का पुरुषार्थ गुण नहीं है। सहवास से ही शील को जानना चाहिए, व्यवहार से ही पवित्रता जानी जाती है। राजा को चाहिए कि वह चर भेजकर यह जाने कि शत्रु कितना क्रुद्ध, लोभी, घमण्डी और भीरु है। साम, भेद, धन और दण्ड के आने पर जो जिस योग्य हो वह उसके साथ शीघ्र करना चाहिए।

घत्ता—अपना कार्य, पराया कार्य और कार्याध्यक्षों की पवित्रता को जानना और मानना चाहिए। हे पुत्र, यही प्रभुत्व है॥ १०॥

११

पापबुद्धि रखनेवाले शत्रु राजाओं के प्रति प्रेषित चरपुरुषों का प्रतिविधान किया जाये। स्वजनों, परिजनों और मित्रों के लिए सन्तोष कर सम्मान दान देना चाहिए। जनता के दो प्रकार के उपसर्गों को दूर करना चाहिए, तीन प्रकार का शक्ति सद्भाव (मन्त्र, उत्साह और प्रभु शक्ति) करना चाहिए। क्षयग्रस्त और उपेक्षित का भी विचार किया जाये, निग्रह और अनुग्रह दोनों किये जायें। शत्रु-मित्र और मध्यस्थ का भी (राजा) विचार करे।

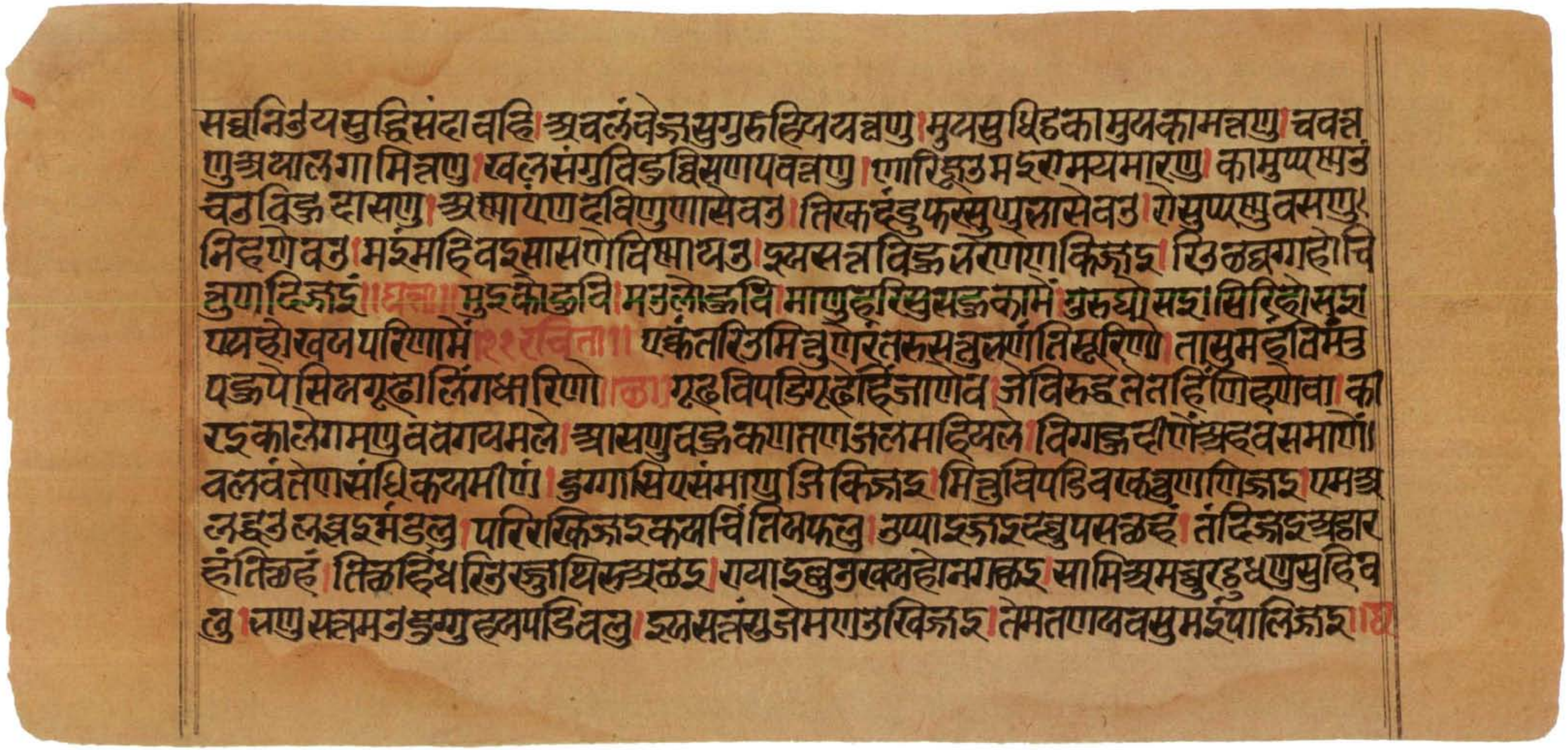

सब नियोगों में शुद्धि दिखायी जाये (अर्थात् जिसे जो काम करना है उसे वह काम दिखाया जाये), हृदय को गाम्भीर्य का सहारा लेना चाहिए। स्त्रियों को देखकर उनमें कामुकता छोड़ दी जाये। चपलता और असमय गमन छोड़ दिया जाये, दुष्ट की संगति और दुर्व्यसनों में प्रवर्तन भी। नारी, जुआ, मदिरा और पशुबध ये चारों दारुण और काम उत्पन्न करनेवाले हैं। अन्याय से धन का नाश नहीं करना चाहिए। तीखा दण्ड, कठोर भाषण और क्रोध का उत्पन्न होना—ये तीन व्यसन हैं जिन्हें मैं राजाओं के शासन में जानता हूँ। इन सात बातों को अधिक से न किया जाये, छह प्रकार के अन्तरंग शत्रुओं को भी हृदय में स्थान न दिया जाये।

घत्ता—क्रोध, मद, लोभ, मान और काम के साथ हर्ष को छोड़ो, गुरु घोषित करते हैं कि इनके नाश के फलस्वरूप श्री होगी॥ ११ ॥

१२

आचार्य कहते हैं कि राजा का मित्र निरन्तर रूप में एक देशान्तर में रहते हुए शत्रु हो जाता है। राजा के द्वारा प्रेषित विविध रूप धारण करनेवाले गूढ़पुरुष उसके रहस्य का भेदन कर देते हैं। गूढ़पुरुषों को भी प्रतिगूढ़ पुरुषों के द्वारा जानना चाहिए, और उनमें जो विरुद्ध हों उनको नष्ट कर देना चाहिए। निर्दोषकाल में (राजा को) गमन करना चाहिए। प्रचुर अन्नकण, तृण और जल से भरपूर महीतल में ठहरना चाहिए। हीन अथवा समान व्यक्ति के साथ युद्ध करना चाहिए, शक्तिशाली से दान देकर सन्धि करनी चाहिए, दुर्गाश्रित के साथ भी सन्धि करनी चाहिए, मित्र होते हुए भी शत्रुत्व को न जानने दिया जाये। इस प्रकार अलभ्य देशमण्डल प्राप्त कर लिया जाता है। उसके परिरक्षित होनेपर अभिलषित फल किया जाये। प्रशस्त लोगों को धन दिया जाये। उन्हें अठारह तीर्थ भी दिये जायें। तीर्थों से राज्य स्थिर रूप से रखा जाता है, और राज्यालय नष्ट नहीं होता। स्वामी, अमात्य, राष्ट्र, धन, सुधि, बल और कहो सातवाँ शत्रुबल का नाश करनेवाला दुर्ग। हे पुत्र, जिस प्रकार यह सप्तांग राज्य क्षय को प्राप्त न हो इस प्रकार वसुमती का पालन करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—इस प्रकार चक्रवर्ती की लक्ष्मी को धारण करनेवाले भरत को उसके अपने पिता ने यह बात सिखायी मानो सूर्य ने कमलाकर को विकसित किया हो॥ १२॥

१३

गुणरूपी मणियों की किरणों के प्रसारभार से शान्त हो गया है दुर्नयों का अन्धकारसमूह जिसका, ऐसा भरत, कुबेर, पवन, यम, शशि, सूर्य, अग्नि और वरुण की लीलाओं के समान लीलावाला हो गया। धर्म और अर्थ में कुशल तेजस्वी, हित-मित और मधुर बोलनेवाला, राजाओं द्वारा प्रशंसनीय, सज्जन, उत्साह से परिपूर्ण क्रोध-रहित पवित्र धीर, बलवान्, गम्भीर, बुद्धि और धैर्य का घर, समर्थ, जितेन्द्रिय, प्रत्युत्पन्नमति, विश्ववन्द्य, दूरदर्शी, अदीर्घसूत्री, पुरुषविशेषज्ञ, प्रसन्न, गुरुभक्त, स्थिर, स्मरणशील, पवित्र, व्रती, स्वच्छ, अकलुषित चित्त, अत्यन्त सुभग, वदान्य, मेधावी और सयाने, भारत के उस राजा का क्या वर्णन किया जाये?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसके बाद सर्वार्थसिद्धि विमान से आया वृषभसेन नाम से यशोवती देवी का दूसरा पुत्र हुआ, फिर और भी शत्रु का मर्दन करनेवाला अनन्तविजय पुत्र हुआ। और भी अनन्तवीर्य, फिर अच्युत वीर-सुवीर मतवाले गज के समान भुजाओंवाला।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

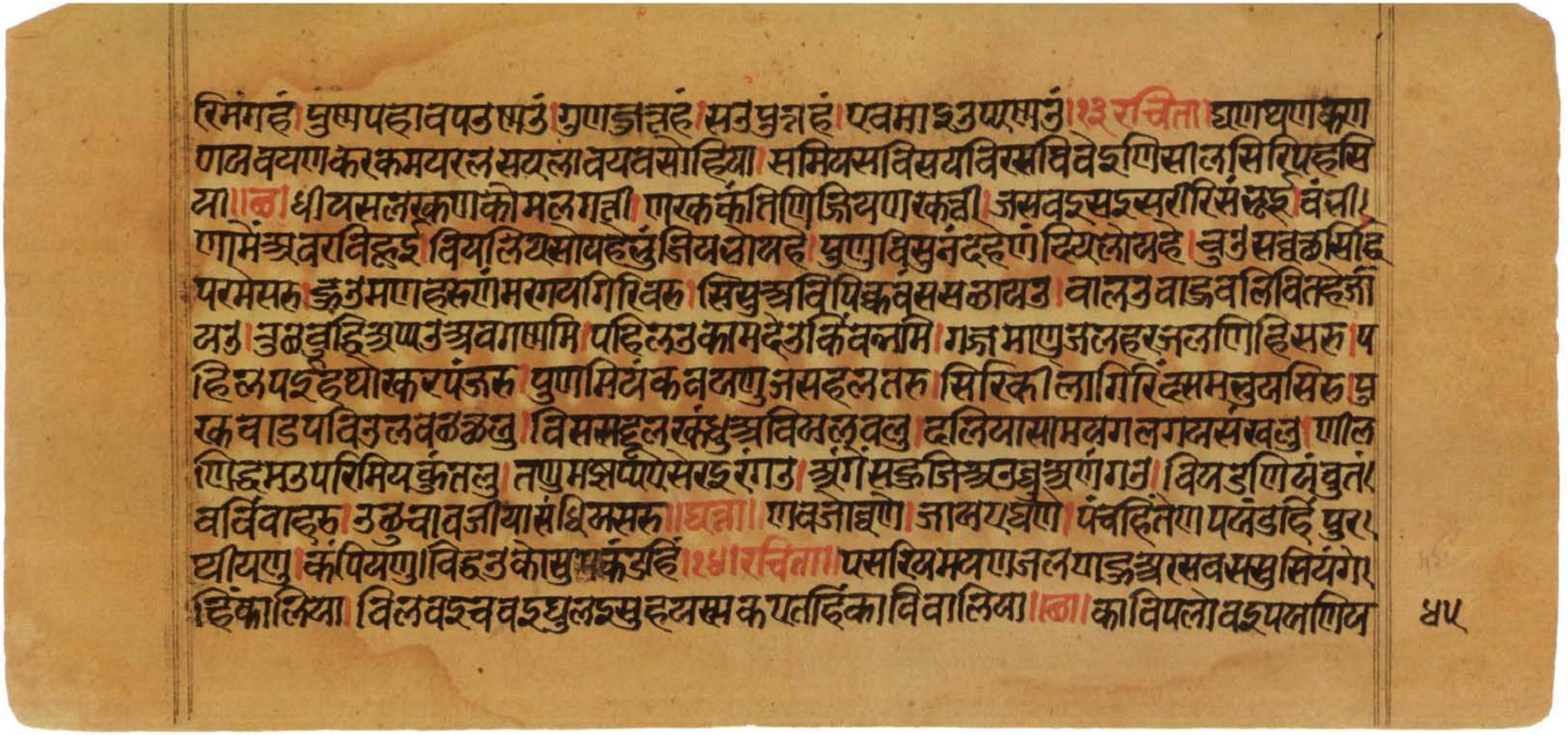

घत्ता—इसप्रकार उसके चरमशरीरी, अपराजित, पुण्य के प्रभाव से परिपूर्ण और गुणयुक्त सौ पुत्र उत्पन्न हुए॥ १३॥

१४

जो सघन स्तन, नयन, मुख, कर और चरणतल आदि समस्त अंगों से शोभित है, जिसने अपने विषयरूपी विष की विरस वेदना को शान्त कर दिया है, और जो शीलरूपी लक्ष्मी से शोभित है। ऐसी अपनी नखकान्ति से नक्षत्रों को जीतनेवाली, सुलक्षणा, कोमल शरीरवाली, ब्राह्मी नाम की एक और कन्या यशोवती सती के शरीर से जन्मी। शोक से रहित भोगों को भोगनेवाली, लोक को आनन्दित करनेवाली सुनन्दा से, सर्वार्थसिद्धि से च्युत सुन्दर परमेश्वर (बाहुबलि) हुए, मानो पन्नों का महीधर हो। नहीं पके हुए बाँस के समान कान्तिवाला शिशु बालक बाहुबलि वहाँ उत्पन्न हुआ। मैं अपने-आपको तुच्छ बुद्धि मानता हूँ। पहले कामदेव का क्या वर्णन करूँ! गरजते हुए मेघ और समुद्र के समान जिनका स्वर है, जिनके हाथ अर्गला के समान दीर्घ और लम्बे हैं, जिनका मुख पूर्णचन्द्र के समान है, जो यश के कल्पवृक्ष हैं, जिनके हाथ और सिर लक्ष्मी के क्रीड़ागज के समान हैं, जिनका वक्षस्थल नगर के किवाड़ों की तरह विशाल है, जिनके कन्धे वृषभ और सिंह के समान हैं, जिनका बल अस्खलित है, जिन्होंने आशारूपी मदगजों के गले की शृंखला चकनाचूर कर दी है, जिनके केश नीले स्निग्ध कोमल और परिमित हैं, जिनके शरीर के क्षीण मध्य प्रदेश में रति की रंगभूमि है, जो अंग (शरीर) के होते हुए भी अपूर्व अनंग (कामदेव) हैं। जिनके नितम्ब विकट हैं, बिम्बारूपी अधर आरक्त हैं, जो इक्षुदण्ड के धनुष और डोरी पर सर सन्धान करनेवाले हैं।

घत्ता—(ऐसे बाहुबलि के) सघन नवयौवन में आने पर, (कामदेव के) उन पाँच प्रसिद्ध प्रचण्ड बाणों से, कम्पित मनवाली नगर स्त्रियाँ बिद्ध हो उठीं॥ १४॥

१५

जो फैलती हुई कामरूपी आग के रस (प्रेम) से शोषित अंगों से काली हो चुकी है, ऐसी कोई बाला अपने प्रिय के लिए विलाप करती है, चलती है, गिरती है। कोई सन्तोष उत्पन्न करनेवाली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

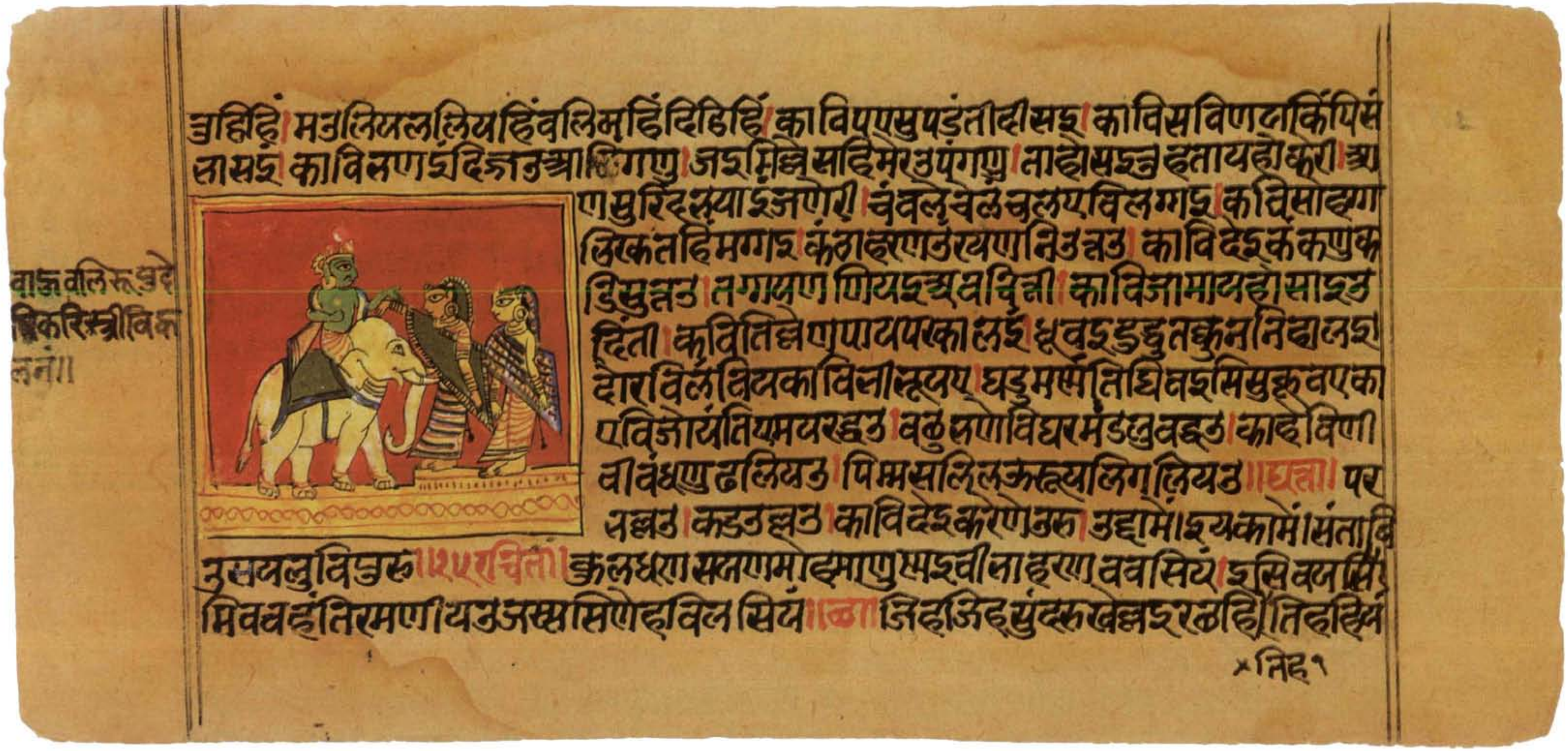

कोमल सुन्दर मुड़ती हुई नजरों से देखती है। कोई पैरों पर गिरती हुई दिखाई देती है, कोई विनयपूर्वक कुछ भी कहती है। कोई कहती है कि मुझे आलिंगन दो, यदि तुम मेरा आँगन छोड़ोगे तो तुम्हें पिता की देवेन्द्रों के लिए भयों को उत्पन्न करनेवाली कसमें हैं। कोई चंचला वस्त्रांचल से लग जाती है और वहाँ सौभाग्य की भीख माँगती है। कोई रत्नों से बना कण्ठाभरण, कंकण और कटिसूत्र देती है, कोई उद्भ्रान्त मन होकर उनमें नेत्र लीन करके देखती है, कोई जामाता को आलिंगन देती है; कोई तेल से पैरों का प्रक्षालन करती है, कोई (कढ़ी के लिए) छाछ नहीं देख पाती वह दूध को बघार देती है, कोई रस्सी से लटके हुए बालक को घड़ा समझते हुए भयानक कुएँ में डाल देती है; कामदेव को देखते हुए किसी के द्वारा बछड़ा समझकर कुत्ते को घर में बाँध लिया गया। किसी का नीवी-बन्धन खिसक गया, और प्रेमजल हृदयतल पर फैल गया।

घत्ता—कोई पैर में सुन्दर कड़ा और हाथों में नुपूर देती है। इस प्रकार सारा नगर मानो काम के द्वारा सताया गया॥ १५॥

१६

जिसमें कुलधन, स्वजन, मोह, मान, उन्नति और व्रीड़ा (लज्जा) के अपहरण की चेष्टा है, ऐसे उसके स्नेह विलास को स्त्रियाँ मुनिव्रत की तरह धारण करती हैं। वह सुन्दर कुमार गली में ज्यों-ज्यों खेलता है वैसे-वैसे सुन्दर आँखोंवाली स्त्रियों के हृदय का अपहरण करता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

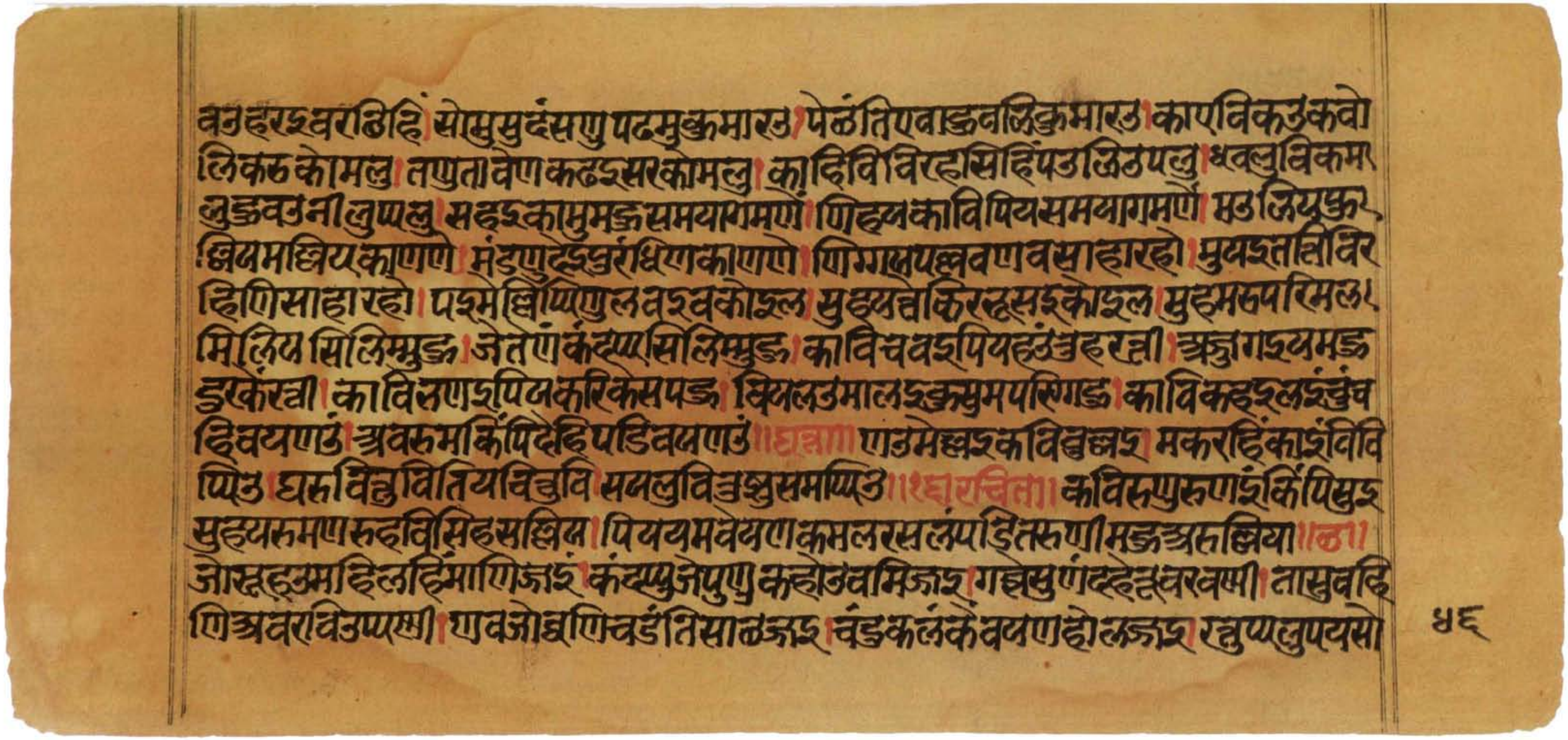

सौम्य सुदर्शन उस प्रथम कामदेव बाहुबलि को देखती हुई किसी के द्वारा गाल पर किया गया कोमल कर शरीर के सन्ताप से सरोवर जल निकालता है। विरह की ज्वाला से किसी का मांस दग्ध हो गया। और धवल कमल भी नीलकमल हो गया। वसन्त माह के आ जाने पर भी कोई स्त्री काम को सहन करती है, कोई प्रिय के आगमन पर भी (मान के कारण) आहत है। कानन (जंगल) में मुकुलित जूही खिल गयी है, कोई स्त्री मुख पर मण्डन नहीं करती। नव-सहकार वृक्ष के पल्लव निकल आये हैं, विरहिणी ने सहकार में अपनी शांति का त्याग कर दिया है। पति को छोड़कर कोयल की तरह आलाप करती है, सुन्दरता में (सुभगत्व) कौन धरती को विभूषित करता है? मुख पवन की सुगन्ध (परिमल) से मिले हुए जो भ्रमर हैं वे मानो कामदेव के बाण हैं। कोई कहती है—"हे प्रिय, मैं तुममें अनुरक्त हूँ, आज मेरी दुःख में रात बीती है।" कोई कहती है, "हे प्रिय, तुम मेरे बालों को बाँध दो, बँधा हुआ मालती का फूल गिर गया है।" कोई कहती है, "लो शीघ्र मुख चूम लो और किसी को तुम प्रतिवचन नहीं देना।"

घत्ता—कोई उसे नहीं छोड़ती और कहती है, "कोई भी बुरी बात मत करना। घर, धन और अपना चित्त भी सब कुछ तुम्हें समर्पित करती हूँ"॥ १६॥

१७

प्रियतम के मुखरूपी कमल के रस की लालची कोई तरुणीरूपी भ्रमरी कानों को सुख देनेवाला कुछ भी गुनगुनाती है, जो सुन्दर कामदेव महिलाओं के द्वारा माना जाता है उसकी उपमा किससे दी जाए? सुनन्दा के गर्भ से, रूप में रमणीय उसकी एक बहन और उत्पन्न हुई; नवयौवन में चढ़ती हुई वह अत्यन्त शोभित है; कलंक के कारण चन्द्रमा उससे लज्जित होता है। उसने चरणों की शोभा से रक्तकमल को

जीत लिया है, इसी कारण उसने अपने को पानी में छिपा लिया। भौंहों का टेढ़ापन, स्तनों की कठिनता, अधरों की अति लालिमा, एक बार गिरने के बाद आये हुए दाँतों की धवलिमा और नेत्रों की चंचलता लोगों को मारनेवाली है। उसके तुच्छ उदर के बीच में रहनेवाली नाभि की गम्भीरता, तथा सोने की जंजीर (करधनी) से दृढ़ता के साथ बँधे हुए परलोकविरोधी (परलोक की साधना करनेवालों के लिए बाधक) और आच्छादित नितम्बों की बढ़ती; सिर पर उगे हुए केशों की कुटिलता, पुरुषों के ऊपर मानस की कठिनता, देख लिया है दोष जिसने ऐसा (व्यक्ति) अवश्य अमध्यस्थ (पक्षपात करनेवाला) होता है, उसका मध्य (भाग) इसीलिए अमध्यस्थ की तरह दुर्बल हो गया। उसके पयोधर (स्तन) सघन मेघों को लुण्ठित कर देनेवाले हैं, उसकी मोतियों की चंचल हारावली जलकणों के समान है। उनके (मोतीरूपी जलकणों) द्वारा सींची गयी रोमराजि नयी लता के समान दिखाई देती है, ऐसा मेरे द्वारा कहा जाता है। इस रूप से विश्व नारियों में सुन्दर मानकर पिता ने उसका नाम सुन्दरी रख दिया।

घत्ता—इस प्रकार युद्ध में दुर्धर अनुपम रूपवाले एक सौ एक पुत्र और दो कन्याएँ सृष्टि के विधाता परमेष्ठी ऋषभनाथ के उत्पन्न हुए॥ १७॥

१८

महाशत्रुओं के समूह का मर्दन करनेवाले सभी पुत्र विश्वपति पिता के चरणों के मूल में, अनेक शास्त्रसमूह के धारण (अभ्यास) से परिणत बुद्धिवाले हो गये। भावपूर्वक सिद्धों को नमस्कार कर दायें और बायें हाथ से लिखकर

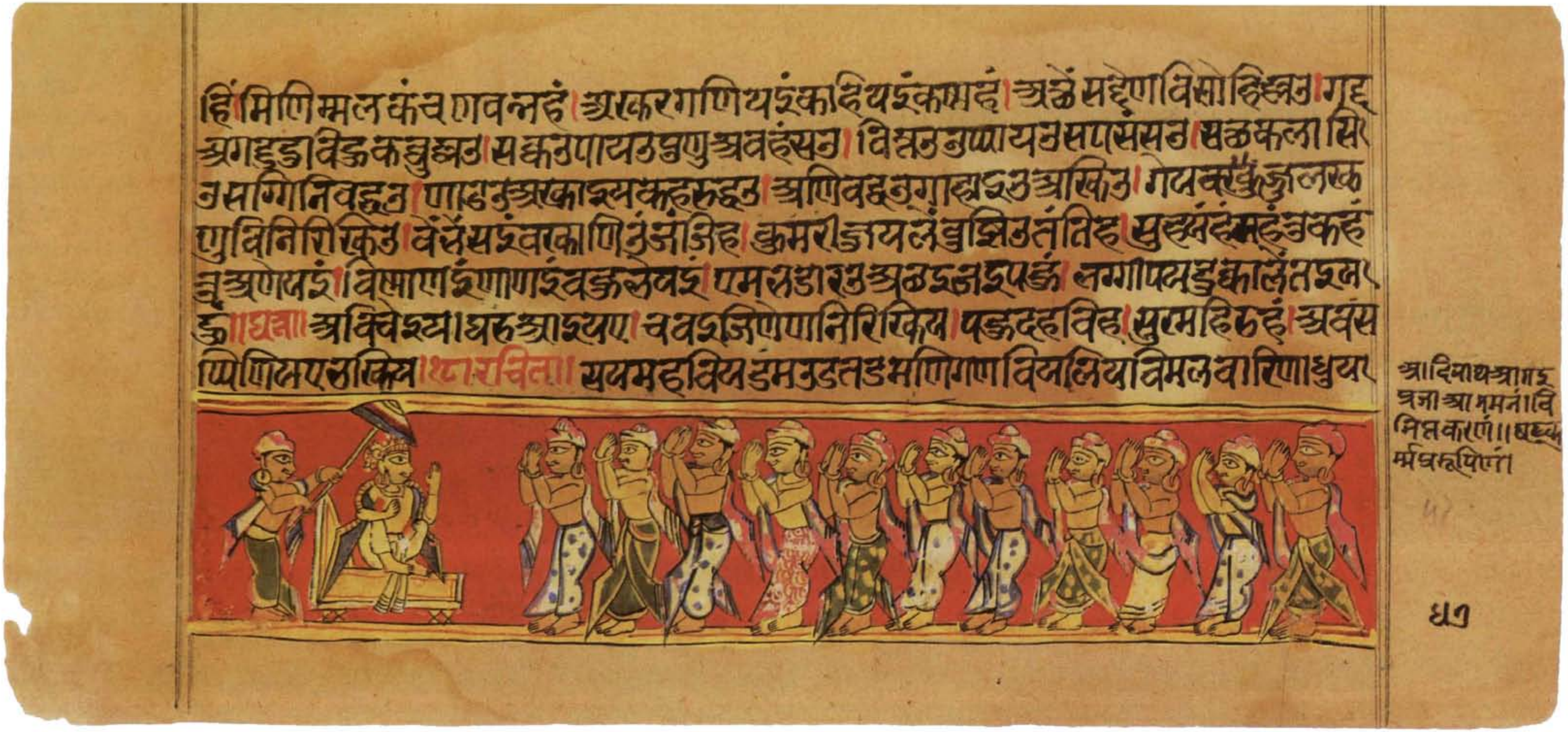

अक्षरों की गणना उन्होंने निर्मल स्वर्ण वर्ण की कन्याओं को बता दी। अर्थ से और शब्द से भी शोभित गद्य और अगद्य, दो प्रकार का काव्य, संस्कृत, प्राकृत और फिर अपभ्रंश, प्रशंसनीय उत्पाद्य वृत्त, शास्त्र और कलाओं से आश्रित सर्गबद्ध काव्य (प्रबन्ध काव्य), नाटक और कथा से समृद्ध आख्यायिका, अनिबद्ध गाथादि, मुक्तक काव्य कहा। गेय और वाद्यों के भी लक्षणों को देखा। आदिनाथ ने स्वयं जिस रूप में व्याख्या की, दोनों कुमारियों ने उसे उस रूप में ग्रहण कर लिया। अनेक शास्त्रों, बहुभेदवाले ज्ञान-विज्ञानों की व्याख्या करते हुए महान् और आदरणीय आदिनाथ जब इस प्रकार रह रहे थे कि तभी प्रजा दुष्काल से भग्न हो गयी।

घत्ता—नहीं जानते हुए वह (उनके) घर आकर कहती है कि 'हे प्रभु, अवसर्पिणी ने दस प्रकार के कल्पवृक्ष खा लिये हैं।' जिनेन्द्र ने इसे देखा॥ १८॥

१९

इन्द्र के विकट मुकुटतट के मणिगणों से झरते हुए पवित्र जल से धोये गये हैं

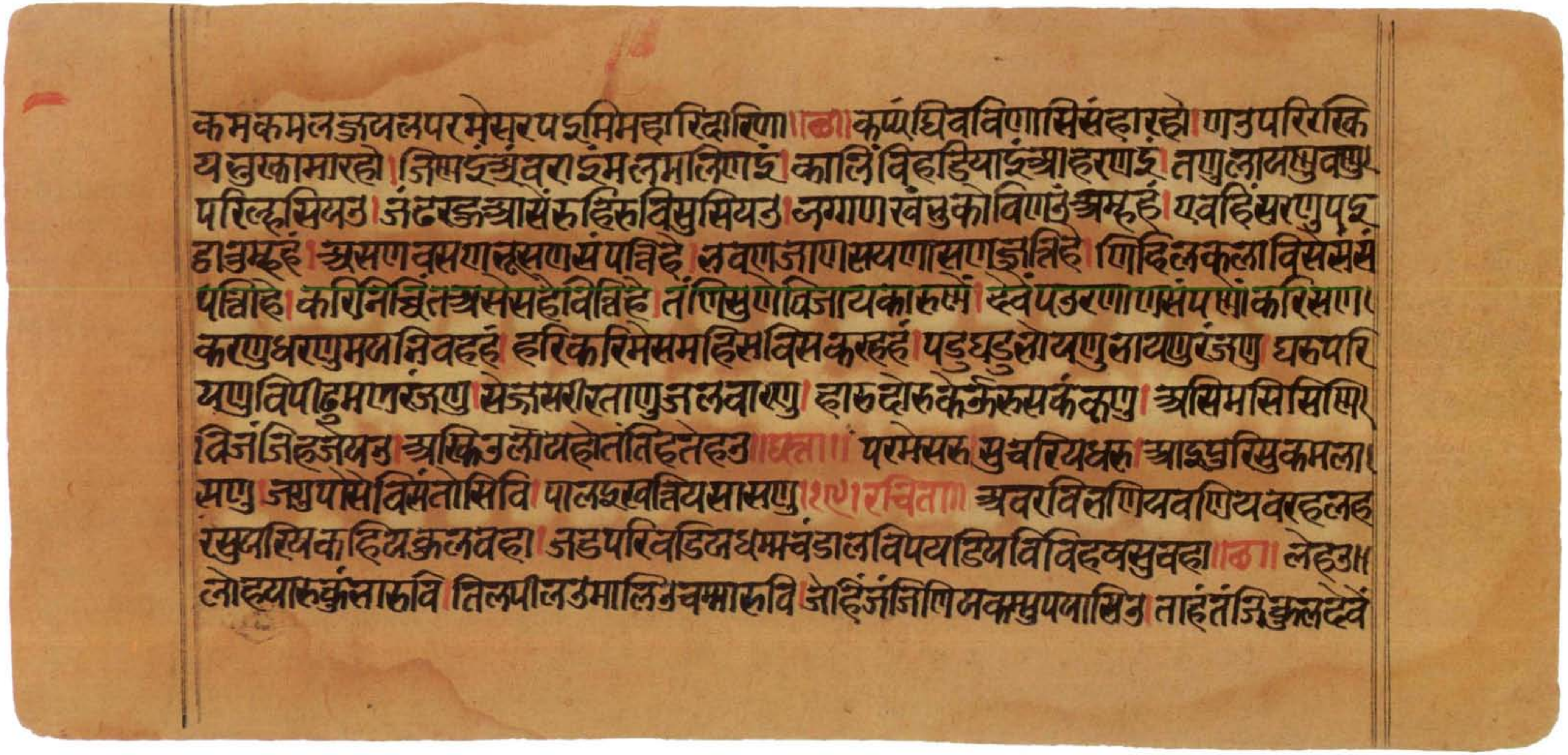

चरणकमलयुगल जिनके, ऐसे हे परमेश्वर, महान शत्रुओं का निवारण करनेवाले आपने भी, कल्पवृक्षों के नष्ट होने पर, प्रलय और भूखरूपी मारी से हमारी रक्षा नहीं की। वस्त्र मल से मैले और जीर्ण हो चुके हैं, समय के साथ आभरण नष्ट हो चुके हैं, शरीर का लावण्य और वर्ण चला गया है, पेट की आग से खून भी सूख गया है। इस समय हमारा आधारस्तम्भ कौन है? हम आपकी शरण में आये हैं। अशन, वसन, भूषण और सम्पत्तियोंवाली समस्त वृत्तियों से हमें निश्चिन्त करिए। यह सुनकर उत्पन्न हुई है करुणा जिन्हें ऐसे प्रचुर ज्ञान से सम्पूर्ण देव ने खेती करना, घोड़ा-हाथी-मेष-महिष-वृषभ और अरण्य आदि पशुओं की रक्षा करना, पट, घट, भोजन, भाजन, रंजन और घर बनाने की विधि, सुन्दर पीठशय्या, कवच, हार, दोर, कंचनसहित केयूर, असि-मषि आदि कर्म जो जिस प्रकार थे, उसकी वैसी व्याख्या की।

घत्ता—धरती को अच्छी तरह धारण करनेवाले आदिपुरुष ब्रह्म वह परमेश्वर विश्व को (जनों को) सन्तुष्ट कर और भेजकर क्षत्रिय शासन का पालन करने लगते हैं ॥ १९ ॥

२०

और भी अच्छे चरितवाले तथा कुलपथ का कथन करनेवाले वणिक् और किसान कहे जाते हैं। धर्म से पतित तथा तरह-तरह के पशुवध को प्रकट करनेवाले जड़ चाण्डाल भी। लेखक, लुहार, कुम्हार, तेली और चमार भी। जिन लोगों ने अपना जो कर्म प्रकाशित किया है, कुलदेव ऋषभ ने उन्हें वही घोषित कर दिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पल्लव, सैन्धव (सिन्धु), कोंकण, टक्क, हीर, कीर, खस, केरल, अंग, कलिंग, जालन्धर, वत्स, यवन,

कुरु, गुर्जर, वज्जर, द्रविड़, गौड़, कर्णाटक, वराट, पारस, पारियात्र, पुन्नाट, सूर, सौराष्ट्र, विदेह, लाड, कोंग, वंग,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

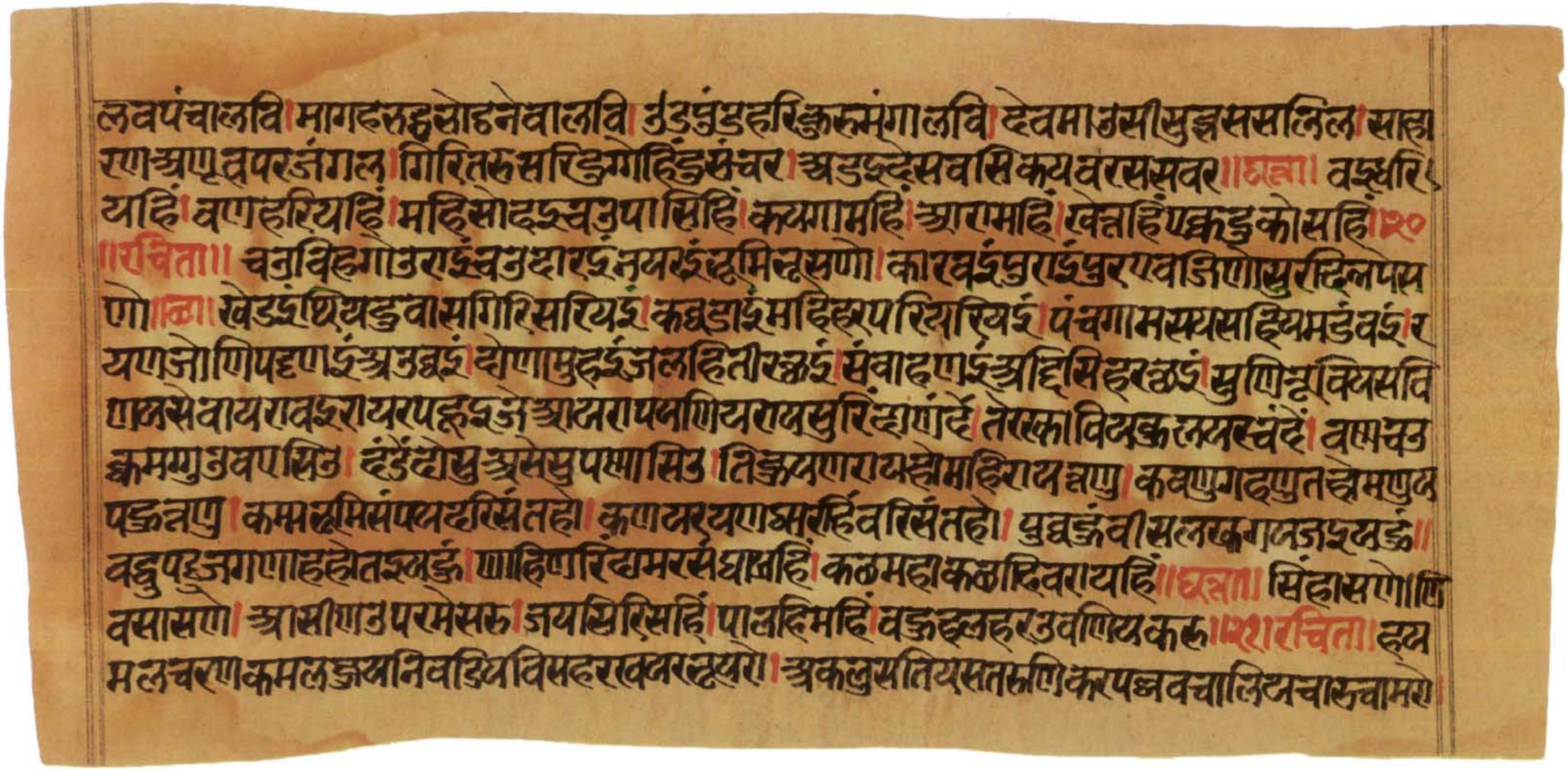

मालव, पंचाल, मागध, जाट, भोट, नेपाल, औण्ड्र, पुण्ड्र, हरि, कुरु, मंगाल, देवमातृक धान्य उत्पन्न करनेवाले, जलसहित धान्य उत्पन्न करनेवाले, साधारण (दोनों प्रकार के) अनूप और जंगली देश। पहाड़, वृक्षों और दुर्गों से दुर्गम, धरा को अधीन करनेवाले शवरों सहित अटवी देश।

घत्ता—वृत्तियों और वनों को धारण करनेवाले चारों ओर के पार्श्वभागों से रचित ग्रामों, उद्यानों, एक-दो कोसवाले क्षेत्रों से धरती शोभित है ॥ २० ॥

२१

भूमि के भूषण तथा इन्द्र को दी है आज्ञा जिन्होंने ऐसे पुरदेव जिनने चार प्रकार के गोपुर और द्वारवाले नगर और पुरों की रचना करवायी। नदियों और पर्वतों से दो ओर से घिरे हुए खेड़े, पहाड़ों से घिरे हुए कव्वड़ ग्राम, गाँवों सहित मण्डप, रत्नों की खदानवाले अपूर्व पट्टन, समुद्रों के तीर्थों पर स्थित द्रोणमुख, पर्वतों के शिखरों पर स्थित संवाहन तथा अच्छी तरह निरूपित और सविनय सेवा में तत्पर वैराट प्रभृति जो खदाने हैं उनकी, राजाओं और इन्द्रों को आनन्द देनेवाले कुलकर चन्द्र ऋषभ ने रक्षा करवायी। वर्णों के चार मार्ग का उपदेश किया। दण्डविधान से अशेष दोष को नष्ट कर दिया। उन त्रिभुवन राजा को धरती का राजत्व प्राप्त था, मनुष्यों की प्रभुता प्राप्त करने में कौन-सी बात थी। इस प्रकार कर्मभूमि की सम्पदा को दिखाते हुए, स्वर्ण और धन की धाराओं को बरसाते हुए जब बीस लाख पूर्व वर्ष बीत गये तब जगनाथ को नाभिराजा, अमरसमूह व कच्छ-महाकच्छ राजाओं के द्वारा राजपट्ट बाँधा गया।

घत्ता—सिंहासन और नृप-शासन में आसीन परमेश्वर, जिन्हें बहुत-से हलधर कर देते हैं, जो जय और लक्ष्मी की सखी धरती का पालन करते हैं ॥ २१ ॥

२२

जिनके निर्मल चरणों में विषधर, विद्याधर और मनुष्य प्रणत होते हैं, और जिन पर पवित्र देवस्त्रियाँ अपने करपल्लवों से चमर ढोरती हैं, ऐसे वह ऋषभ धरती का पालन करते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भोगभूमि के समाप्त होने पर भूख से कम्पित शरीर समस्त जन अपने करतल उठाकर जिस कारण से घर पर इक्षुरस पीने के लिए आये थे, उससे प्रभु का वंश इक्ष्वाकुवंश हो गया। सोमप्रभु को कुरु का राणा कहा गया इसलिए वह कुरुवंश का प्रधान हो गया। हरि को हरिकान्त कहकर उन्हें प्रशंसनीय हरिवंश का प्रथम पुरुष बना दिया गया। कश्यप को मघवा कहकर पुकारा गया और इस प्रकार उग्रवंश के मूल को प्रकाशित किया गया। और अकम्पन को श्रीधर कहा गया, नाथवंश में उसे पहला जानो। चौदहवें कुलकर के प्रियपुत्र, और मरुदेवी के मन और

नेत्रों को आनन्द देनेवाले, नागराज के शिरोमणि से आहत है पद-नूपुर जिनके, ऐसे आदरणीय वे कलत्र, पुत्र और अन्त:पुर के साथ तथा पूर्वकथित नरेश्वर कुलों से शोभित राज्य करने लगे।

घत्ता—आभा से भास्वर ऋषभेश्वर लक्ष्मी से योग्य भरत के साथ प्रजा का पालन करते हैं उसे न्याय का मार्ग दिखाते हैं॥ २२॥

इस प्रकार त्रेसठ पुरुषों के गुणों और अलंकारवाले इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा रचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का आदिदेव महाराज-पट्टबन्ध नाम का पाँचवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ५॥

सन्धि ६

दूसरे दिन अपने भवन में, सुरवरों से संस्तुत, सम्पत्ति का विधाता, नागों और दानवों तथा मनुष्यों के द्वारा सेवित आदरणीय ऋषभ दरबार में स्थित थे।

१

स्वर्णनिर्मित मणिसमूह से विजड़ित, प्रभा से भास्वर सिंहासन के आसन पर आसीन परमप्रभु ऋषभ का हमारे द्वारा क्या वर्णन किया जाये? गादी के आसन, विचित्र चमकते हुए वेत्रासन, रत्नों से जड़ित लोहासन और दण्डों से उन्नत दण्डासन दे दिये गये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

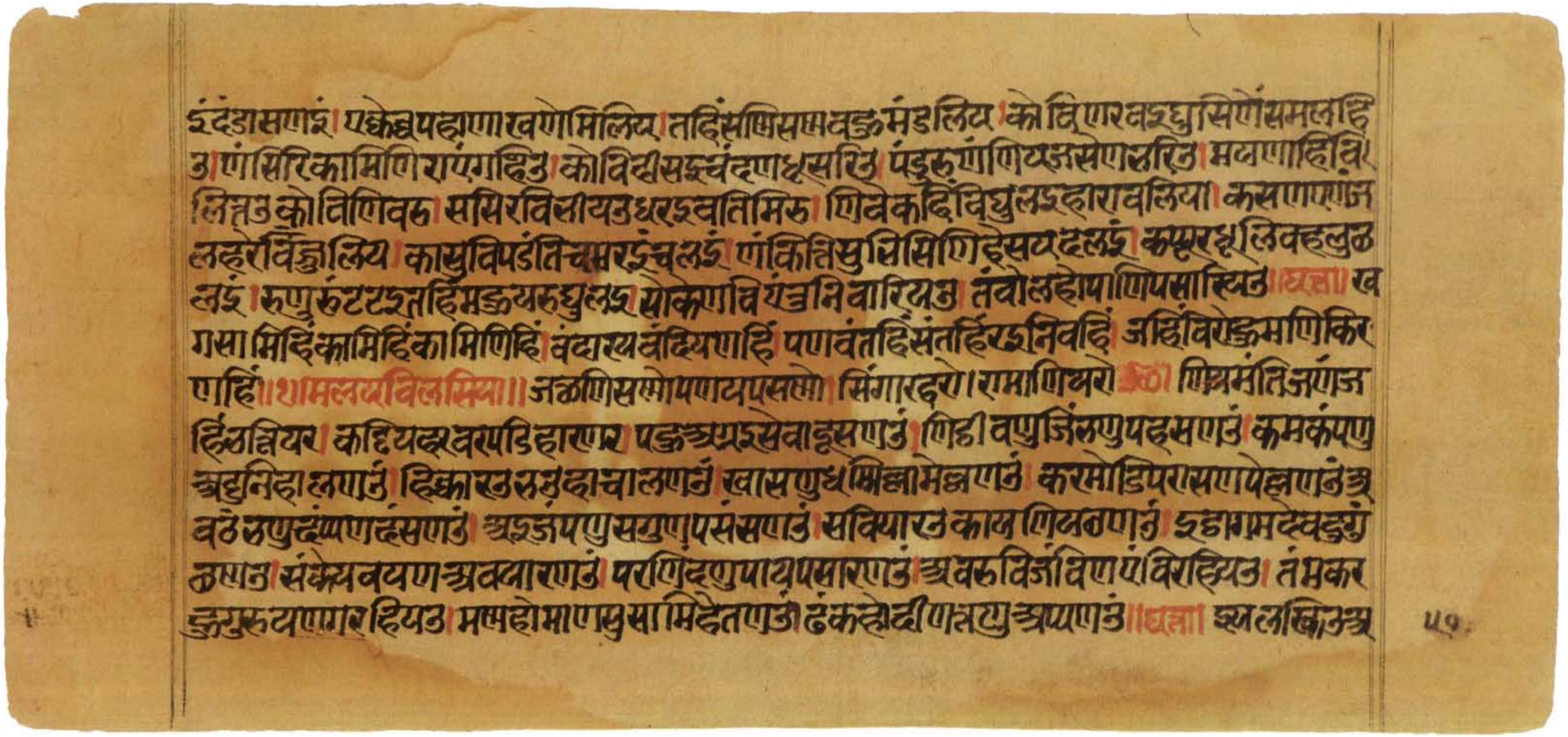

एक से एक प्रमुख राजा क्षणभर में इकट्ठे हो गये, और बहुत-से माण्डलीक राजा वहाँ आकर बैठ गये। कोई राजा केशर से चर्चित है मानो लक्ष्मीरूपी कामिनी के अनुराग से अधिगृहीत है। कोई राजा चन्दन से धूसरित सफेद दिखाई देता है मानो अपने ही यश से भरा हुआ हो। कस्तूरी से विलिप्त कोई राजा ऐसा जान पड़ता है कि जैसे सूर्य और चन्द्रमा के डर से अन्धकार को धारण कर रहा है। किसी राजा पर हारावली इस प्रकार व्याप्त है मानो काले बादल में बिजली हो। किसी पर चंचल चमर पड़ रहे हैं, जो ऐसे लगते हैं मानो कीर्तिरूपी कमलिनी के दल हों। उस दरबार में कपूर की प्रचुर धूल उड़ रही है, जिसमें मधुकर गुनगुनाता हुआ मँडरा रहा है। किसी ने आते हुए उसे हटा दिया गया और पान के लिए अपना हाथ फैलाया।

घत्ता—जहाँ विद्याधर स्वामियों, कामना रखनेवाले समस्त देवरूपी बन्दियों, तथा प्रणाम करते हुए रतिसमूहों और मणि-किरणों में विरोध है॥ १॥

२

जहाँ प्रणय से प्रसन्न शृंगार धारण करनेवाला स्त्रीसमूह बैठा हुआ है। जहाँ यष्टि धारण करनेवाले भक्तिनिष्ठ श्रेष्ठ प्रतिहारी मनुष्य लोगों का नियंत्रण करते हैं। राजा के सामने थूकना, जँभाई लेना और हँसना सेवा का दूषण माना जाता है। पैर हिलाना, तिरछा देखना, हकारना, भौंहों का संचालन करना, खाँसना, चोटी खोलना, हाथ मोड़ना, दूसरे के आसन को खिसकाना, सहारा लेना, दर्पण देखना, अत्यधिक बोलना, अपने गुणों की प्रशंसा करना, अत्यन्त विकारग्रस्त होना, शरीर को देखना, इष्ट, आगम और देव की निन्दा करना, पैर फैलाना (इसके सिवा) और जो विनय से रहित तथा गुरुजनों के द्वारा गर्हित बातें हैं, उन्हें नहीं करना चाहिए। राजा के आदमी को मानना चाहिए और अपनी दीनता को छिपाना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—मैंने ये सेवक के लक्षण कहे। परन्तु जो स्वाभिमानी है उसके लिए वन ही अच्छा। द्वारपाल के द्वारा प्रेरित दण्ड उसका (स्वाभिमानी का) अंग न छुए॥ २॥

३

सुरवर श्रेष्ठ आदरणीय ऋषभ जब इस प्रकार विराजमान थे, तबतक अवधिज्ञान को धारण करनेवाला तथा बारह सूर्यों के समान वज्र को धारण करनेवाला इन्द्र सोचता है कि परमेश्वर के द्वारा रमण किये गये बीस लाख पूर्व वर्ष कुमारकाल में बीत गये। और धरती का भोग करते हुए त्रेसठ लाख पूर्व वर्ष चले गये। लेकिन वह आज भी चंचल घोड़ों को देखते हैं। आज भी अपने मन में मतवाले हाथियों को मानते हैं, आज भी ध्वजसहित रथों को चाहते हैं, आज भी उनकी घर और अनुचर-समूह में रति है। आज भी वह कामसुख से विरक्त नहीं होते। आग को ईंधन से कौन शान्त बना सकता है, नदियों के जलों से समुद्र को कौन शान्त कर सकता है, भोग के द्वारा कौन जीव में धैर्य उत्पन्न कर सकता है? कर्म का विधान सबसे बलवान् होता है। जब देव जानते हुए भी मोहग्रस्त होते हैं तब किसी अज्ञानी को मैं क्या कहूँ?

घत्ता—रति से रंजित यह जग उन लोगों के लिए अच्छा लगता है कि जो और दूसरी युक्ति नहीं जानते। अपनी स्त्रियों और पुत्रों से मोहित यह जग नीचे से नीचे गिरता है॥ ३॥

४

दुष्ट और धृष्ट तृष्णा में तुम जलते हो, आज भी इस धन से तुम्हारी तृप्ति नहीं हो सकती।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आज भी भोगरति नष्ट नहीं होती, आज भी वह परम गति की चिन्ता नहीं करते। आज भी स्वामी का हृदय शान्त नहीं होता, वह मानव रमणियों से रमण करने में रमता है। अट्ठारह कोड़ा-कोड़ी सागर समय बीत गया है। धर्म और कर्म का अन्तर नष्ट हो गया है; दर्शन, ज्ञान और श्रेष्ठ चारित्र्य भी नष्ट हो गये हैं; आचार, पाँच महाव्रत, अणुव्रत, गुणव्रत और शिक्षाव्रत भी नष्ट हो चुके हैं। अर्हन्त भगवान् के द्वारा कहा गया नौ पदार्थों से युक्त अनादि सिद्धान्त आज प्रकाश नहीं पा रहा है—यह सोचकर इन्द्र ने यह जान लिया और अवधिज्ञान से प्रमाणित कर लिया कि स्वामी को आज भी चारित्रावरणी कर्म का उदय है, उसके शान्त होने पर ये निश्चितरूप से तप ग्रहण करेंगे। यदि पूर्ण आयुवाली नीलंजसा (नीलांजना) नाट्य करती है और उनके सामने निर्जीव होकर गिर पड़ती है तो यह उनके वैराग्य का कारण होगा, और इससे दो प्रकार संयम का उद्धार होगा। लोगों में जिनधर्म का प्रवर्तन होगा—इसप्रकार अपने मन में बार-बार विचार कर

घत्ता—रति की अधीन मृगनयनी नीलंजसा को इन्द्र ने कहा—"तुम जाओ और अनिन्द्य जिनेन्द्र के चरणकमलों के दर्शन कर उनके सामने नृत्य करो"॥४॥

५

तब ऊँचे स्तनोंवाली इन्द्र की रमणी (नीलांजना) रत्ननिर्मित घरोंवाली अयोध्या नगरी पहुँची। कृशोदरी वह आकाश-मार्ग से इस प्रकार आयी जैसे चंचल चमकती हुई बिजली हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

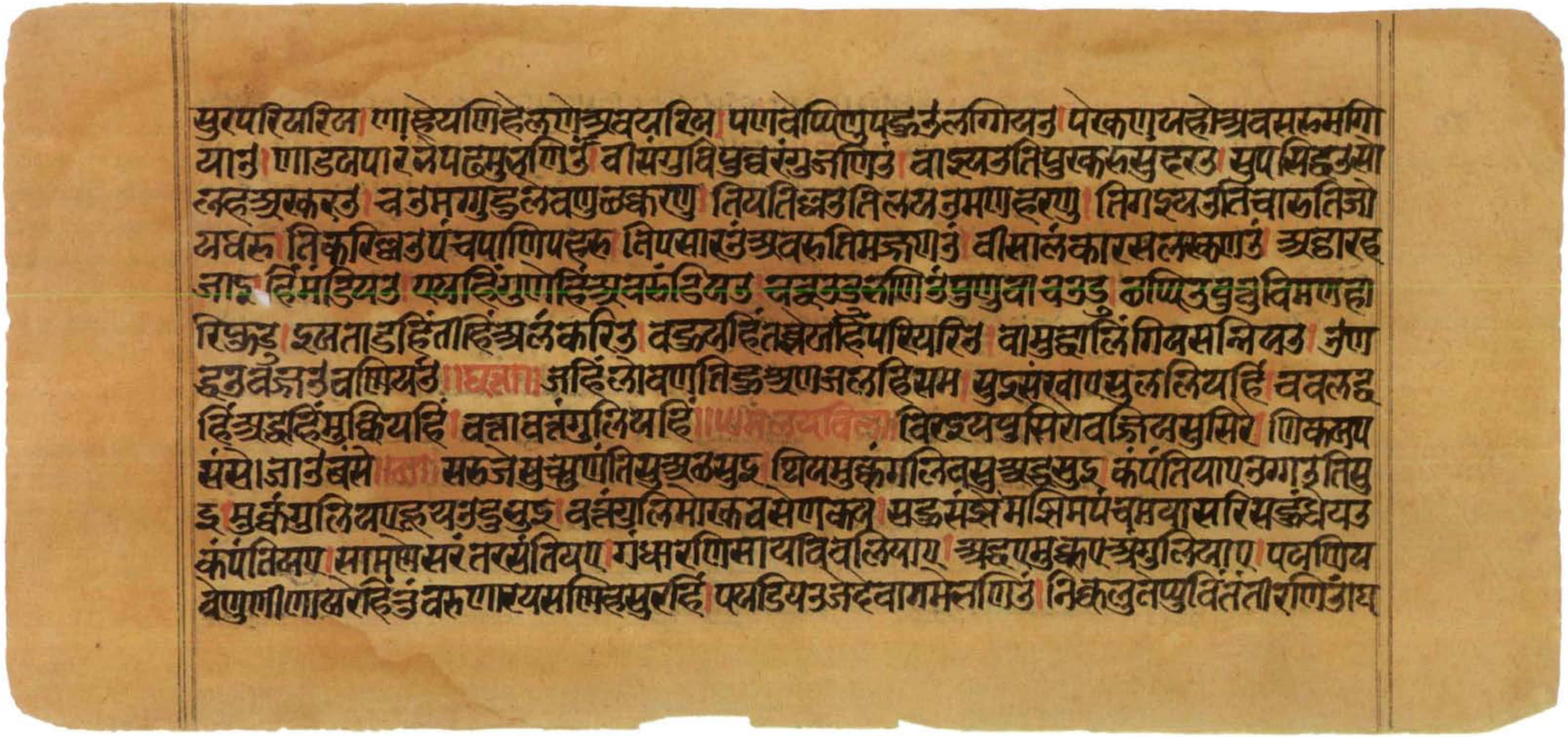

गान प्रारम्भ करनेवाले देवों से घिरी हुई वह नाभेय (ऋषभनाथ) के घर अवतरित हुई। प्रणाम कर उसने प्रभु की सेवा की और नाट्याभिनय का अवसर माँगा। सबसे पहले उसके नाट्य के प्रारम्भ में अभिनीत होनेवाले बीसों अंगों से परिपूर्ण पूर्व रंग का अभिनय किया। तीन प्रकार के सुन्दर पुष्कर वाद्य, तीन प्रकार के भाँड वाद्य (उत्तम, मध्यम और जघन्य), सुप्रसिद्ध सोलह अक्षरोंवाला, चार मार्ग, दुलेपन, छह करण, तीन यतियों सहित, तीन लयोंवाला, सुन्दर तीन गतिवाला, तीन चारवाला, तीन योग को करनेवाला, तीन प्रकार के करों से युक्त, पाँच पाणिप्रहार, त्रिप्रकार और त्रिप्रसार, और त्रिमज्जन (त्रिमार्जनक) इस प्रकार बीस अलंकारों के लक्षणों से युक्त, अट्ठारह जातियों से मण्डित और इन गुणों से आलंगित नृत्य का प्रदर्शन किया। और भी चच्चपुट, चाचपुट और सुन्दर छप्पयपुट; इन तीन तालों से अलंकृत और उनके अनेक भेदों से सहित, वाम, ऊर्ध्व और आलिंगत संज्ञाओंवाला अनवद्य वाद्य का मैंने वर्णन किया।

घत्ता—जहाँ द्विश्रुतिक त्रिश्रुतिक, और चतु:श्रुतिक श्रुति संख्याओं से सुललित चलबद्ध अर्धमुक्त और व्यक्त और अव्यक्त अँगुलियों के द्वारा करनेवाले आदरणीय देवों ने गीत प्रारम्भ किया॥ ५॥

६

विरति के नाशक, मनुष्यों के द्वारा प्रशंसित बाँस के सुषिर वाद्य से स्वर उत्पन्न हुआ। जिसके ध्वनित होने पर शाश्वत श्रुतियाँ (बाईस श्रुतियाँ षड्ज और मध्यम ग्रामों में-से प्रत्येक की बाईस) मुक्त अँगुली से आठ श्रुतियाँ, काँपती अँगुली से तीन श्रुतियाँ उत्पन्न हुईं और मुक्त अँगुली से दो श्रुतियाँ। व्यक्त अँगुली के छोड़ने के कारण षड्ज के साथ मध्यम और पंचम स्वर तथा सामान्य स्वरों की संज्ञा के समान काँपती हुई अँगुली से धैवत, गान्धार और विषाद स्वरों से संचालित, अर्धमुक्त ध्वनियाँ अँगुलियों के द्वारा नाना आदरवाले, तुम्बरु और नारद के समान देवों ने ठीक की गयी वीणा को उस प्रकार प्रकट किया जिस प्रकार आगम में बताया गया है। दो प्रकार के वीणावाद्यों (विष्कल और त्रिपंच)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

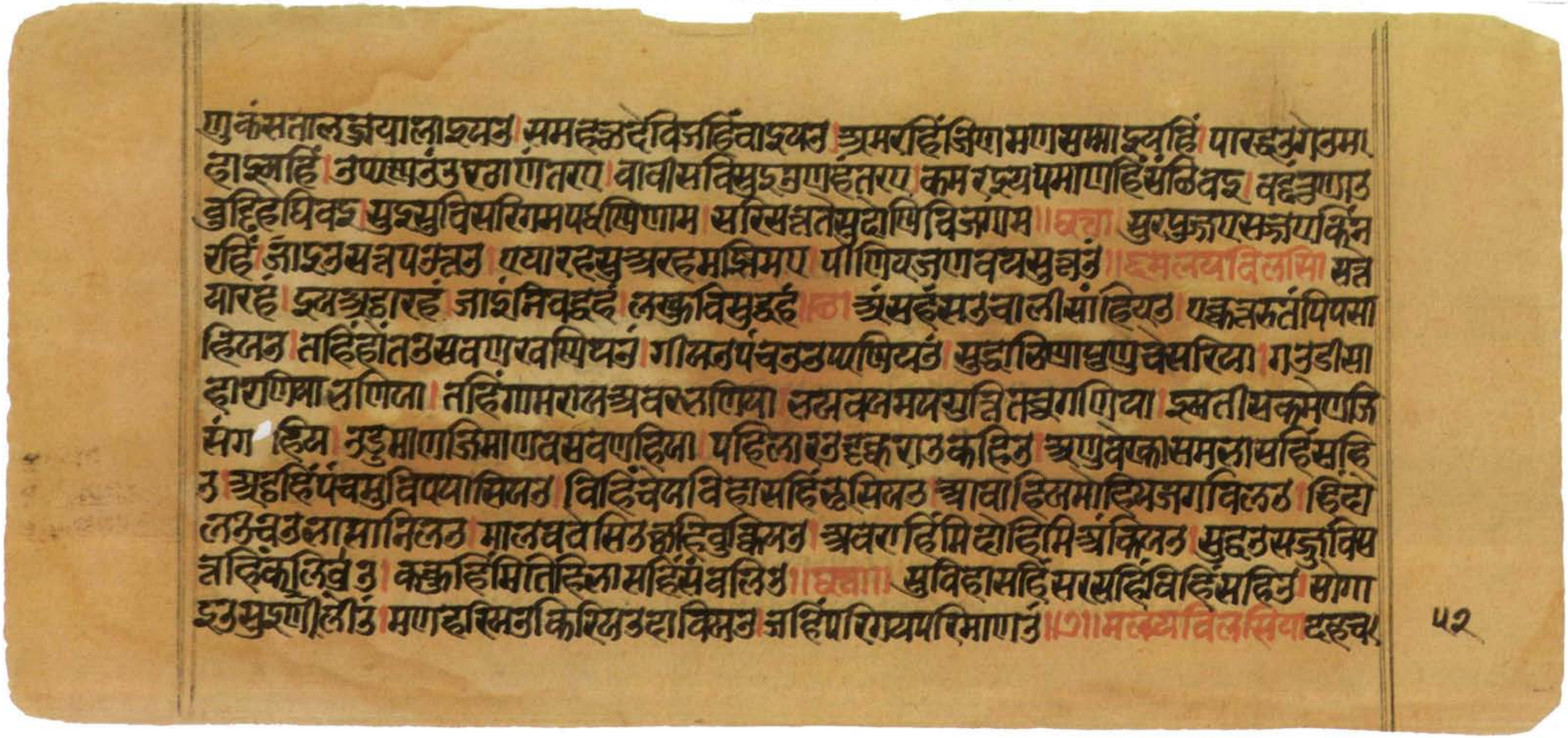

घन वाद्यों (कांस्यतालादि) के द्वारा अनेक तालों का एक साथ वादन हुआ। जिन भगवान् का मन में सम्मान करनेवाले महादरणीय देवों ने गीत प्रारम्भ किया। नाभिस्थान में उत्पन्न हुई वायु उर:स्थान में क्रमशः नाद बनकर, कर्णस्थान में बाईस श्रुतियाँ बनाती हैं, और क्रम से रचित प्रमाणों के द्वारा (अर्थात् क्रम से सात स्वरों का उच्चारण करने पर) बढ़ता हुआ नाद वृद्धि को प्राप्त होता है। इन बाईस श्रुतियों में सा रे ग म प ध नि नामक सात स्वर और दोनों ग्राम कहे (इनमें षड्ज ग्राम और मध्यम ग्राम हैं)।

घत्ता—देवों के द्वारा पूजित षड्ज में किन्नरों के द्वारा सात जातियाँ कही गयी हैं। और मध्यम ग्राम में लोगों के कानों को सुख देनेवाली ग्यारह जातियाँ कही गयी हैं। (इस प्रकार कुल अठारह जातियाँ होती हैं।) ॥ ६ ॥

७

सात और ग्यारह, इस प्रकार अट्ठारह जातियों में निबद्ध और लक्ष्य विशुद्ध अंगों के एक सौ चालीस भेद होते हैं, उनका भी प्रदर्शन किया गया। उनमें कानों को सुखद लगनेवाली पाँच प्रकार की गीतियाँ होती हैं, जो शुद्धा, भिन्ना, वेसरा, गौड़ी और साधारणा के रूप में जानी जाती हैं, इनमें और भी ग्राम राग कहे गये हैं। सात, पाँच, आठ, तीन और सात की संख्या से गिने जाते हैं इस प्रकार क्रमशः तीस भेदों का संग्रह किया। ये छह राग मानवों के कानों को सुख देनेवाले हैं, इनमें पहला राग टक्क राग कहा गया है, जो बारह भाषारागों से सहित है। आठ भाषारागों और दो विभाषारागों सहित पंचम राग का प्रदर्शन किया गया। समस्त विश्व की स्त्रियों को बाधित और मोहित करनेवाला हिन्दोलराग चार भाषारागों का घर है। मालव—कैशिक राग छह जातियों में कहा जाता है और वह दो भाषारागों में अंकित है। शुद्ध षड्ज सात जातियों में रचा जाता है।

घत्ता—इस प्रकार सरस सुविभास रागों के द्वारा विधिपूर्वक कानों को लीन करनेवाला वह (गान) गाया गया कि जिसमें सीमित परिमाणवाली सुन्दर क्रियाएँ दिखाई गयीं। ॥ ७ ॥

८

दस में चार का गुणा करने पर चालीस भाषारागों की संख्या जाननी चाहिए। विभाषाराग छह कहे गये हैं। विद्वानों के मन का रंजन करनेवाली, ग्यारह और दस, इस प्रकार कुल इक्कीस मूर्च्छनाएँ कही गयी हैं। जहाँ उनचास तानें कही जाती हैं, वहाँ मैं गीतारम्भ का क्या वर्णन करूँ? उनके संयोगों से विभिन्न रसों की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार विमल यशवाली नीलांजना नृत्य प्रारम्भ करती है। बताओ, वह किसकी दृष्टि को आकर्षित नहीं करती? नाचती हुई वह लोगों के हृदय का अपहरण कर लेती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

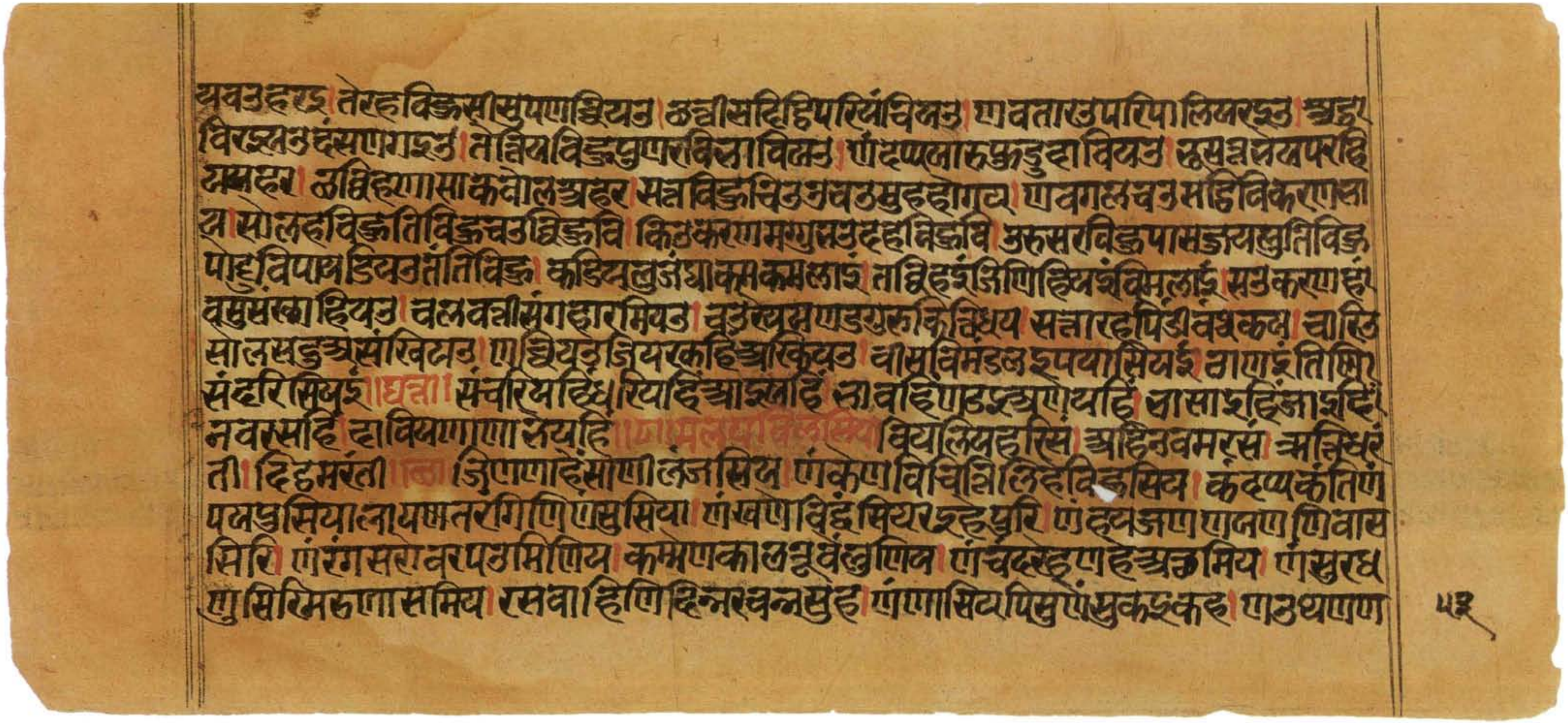

उसने तेरह प्रकार से सिर को नचाया। छत्तीस प्रकार से दृष्टि का संचालन किया, राग को पोषित करनेवाले नौ तारकों और आठों दर्शनगतियों की रचना की। फिर उसने तैंतीस भावों का प्रदर्शन किया। और फिर नौ नन्दों का प्रदर्शन किया। हृदय का हरण करनेवाला सात प्रकार का भ्रूसंचालन, छह प्रकार का नाक-कपोल और अधरों का संचालन, सात प्रकार का चिबुक और चार प्रकार का मुखराग, नौ प्रकार का कण्ठ और चौंसठ प्रकार के हस्त के भेदों का प्रदर्शन किया। सोलह, तीन और चार प्रकार के करण मार्ग और दस प्रकार के भुज-मार्ग बताये। उर के पाँच प्रकारों, पार्श्वयुगल के तीन प्रकारों और उदर के तीन प्रकारों को प्रकट किया। कटितल, जाँघों और चरण-कमलों का प्रदर्शन भी उनके अपने भेदों के साथ किया। इस प्रकार चंचल बत्तीस अंगहारों के साथ एक सौ आठ कारणों का प्रदर्शन उसने किया। चार प्रकार का रेचक, सत्तरह प्रकार के पिण्डी बन्धों का, कि जो नटराज के कीर्तिध्वज हैं, प्रदर्शन किया। इन्द्रियों को जीतनेवाले गणधरों के द्वारा बतायी गयी बत्तीस प्रकार की चारियों का नृत्य किया। उसने बीस प्रकार के मण्डल और तीन संस्थानों का सुन्दर प्रदर्शन किया।

घत्ता—धृति आदि संचारी भावों, स्थायी भावों, अनेक भाषाओं और जातियों, नाना भेदों के प्रदर्शक नवरसों से नीलांजना नृत्य करती है ॥ ८ ॥

९

शीघ्र ही हर्ष को विगलित करनेवाले नवम रस (शान्त रस) को वह धारण करती है, और ऋषभजिन उसे मरती हुई देखते हैं। जिननाथ ने उस नीलांजना को देखा, उन्हें लगा मानो सौन्दर्य की नदी सूख गयी हो, मानो क्षण-भर में रति की नगरी नष्ट हो गयी हो, मानो जन-नेत्रों में निवास करनेवाली श्री आहत हो गयी हो, मानो नाट्यरूपी सरोवर की कमलिनी को कालरूपी सर्प ने काट लिया, मानो चन्द्रलेखा आकाश में अस्त हो गयी; मानो इन्द्रधनुष की शोभा को हवा ने शान्त कर दिया हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न तो स्तन, न नृत्यगुण, न मुख और न संचित काम विपुल रमण, न केशभार, और न हारलता। मैं नहीं जानता सुन्दरी कहाँ गयी। नीलमणियों से विजड़ित आँगन सूना है, मानो बिजली से रहित मेघपटल हो। इन्द्र की रमणी मर गयी। यह देखकर उन्हें कुतूहल हुआ। हा-हा कहते हुए वह शोकग्रस्त हो गये। समूचा दरबार विस्मय में पड़ गया।

घत्ता—उस मृत्यु और करुणा से काँपते हुए भरत के पिता विस्मय से भर उठे। कुसुम के समान दाँतोंवाले और रति से मुक्त त्रिजगगुरु चुप हो गये॥ ९॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का निलंजसा-विनाश नामक छठा परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सन्धि ७

१

त्रिभुवन की सेवा करनेवाले ऋषभदेव ने विचार किया कि संसार में शाश्वत कुछ भी नहीं दिखाई देता, जिस प्रकार नीलांजना नवरसों का प्रदर्शन कर चली गयी उसी प्रकार दूसरा भी संसार से जायेगा॥ १॥

खंडय—अनेक शरीरों का नाश करनेवाले इस दारुण संसार में दो दिन रहकर कौन-कौन नरश्रेष्ठ नहीं गये। फिर परमेश्वर शमभाव को प्रकाशित करते हैं—धन इन्द्र-धनुष की तरह आधे पल में नष्ट हो जाता है। घोड़े-हाथी, रथ-भट, धवल छत्र, पुत्र और कलत्र कुछ भी शाश्वत नहीं हैं। जंपाण, यान, ध्वज, चमर उसी प्रकार नाश को प्राप्त होते हैं जिस प्रकार सूर्य का उदय होने पर अन्धकार चला जाता है। कमल के घर में निवास करनेवाली विमल लक्ष्मी नवजलधर के समान चंचल और विद्वानों का उपहास करनेवाली होती है। शरीर, लावण्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

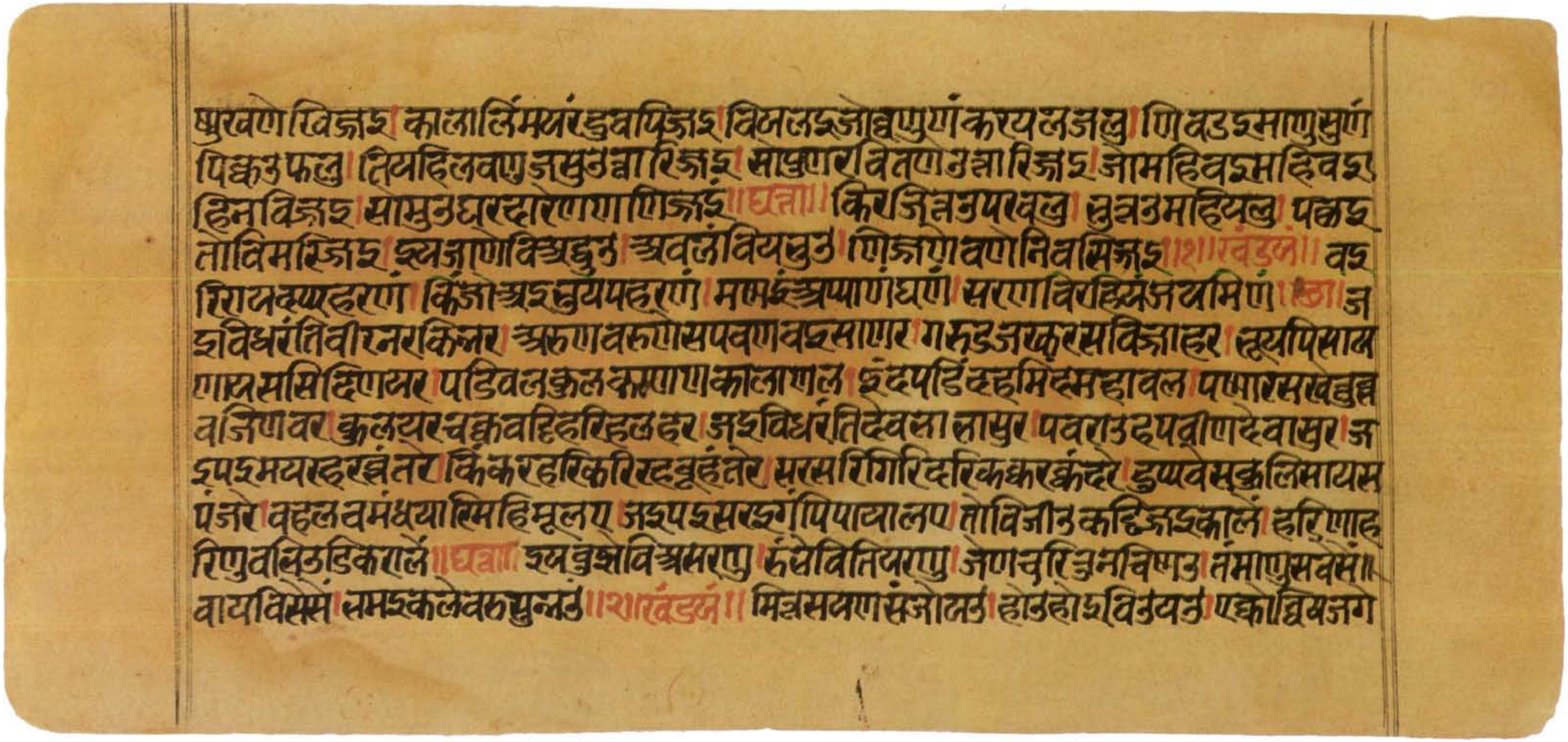

और रंग एक पल में क्षीण हो जाते हैं, कालरूपी भ्रमर उन्हें मकरन्द की तरह पी जाता है। यौवन इस प्रकार विगलित हो जाता है मानो अंजुली का जल हो। मनुष्य इस प्रकार गिर जाता है मानो पका हुआ फल हो। स्त्रियों के द्वारा जिसका नमक उतारा जाता है वही फिर तिनकों पर उतार दिया जाता है। जिस राजा को दूसरे राजा नमस्कार करते हैं, वही मरने पर घर की स्त्री के द्वारा नहीं पहचाना जाता है।

घत्ता—चाहे शत्रुबल जीता जाये या महीतल भोगा जाये, बाद में तब भी मरना होगा। इस प्रकार अध्रुवत्व (अनित्यता) को जानकर, और तप ग्रहणकर एकान्त वन में निवास करना चाहिए॥ १॥

२

शत्रुराज के दर्प को चूर-चूर करनेवाले हाथ और हथियार को क्या देखता है। अपने को समर्थ समझता है, यह जन शरणहीन है। यद्यपि इसे वीर नर, किन्नर, अरुण, वरुण, पवनसहित अग्नि, गरुड़, यक्ष, राक्षस, विद्याधर, भूत-पिशाच, नाग, चन्द्र, दिनकर, शत्रुओं के कुलरूपी कानन के लिए कालानल के समान इन्द्र, प्रतीन्द्र और अहमिन्द्र, पन्द्रह क्षेत्रों में उत्पन्न जिनवर, कुलकर, चक्रवर्ती, हलधर और नारायण इसे धारण करते हैं। शरीर की कान्ति से भास्वर तथा प्रवर आयुधों में प्रवीण देवासुर भी इस जीव को धारण करते हैं। यदि यह जीव समुद्र के भीतर, अनुचर (सैनिक), घोड़ों, हाथी और रथों के व्यूह में सरोवर-नदी, पहाड़-घाटी-कर्कश गुफा में, दुष्प्रवेश्य वज्र और लोहे के पंजर में प्रवेश करता है या चाहे अत्यधिक तमवाली धरती के मूल या पाताल में जाकर छिप जाता है तब भी वह काल के द्वारा उसी प्रकार निकाल लिया जाता है जिस प्रकार भृकुटियों से कराल सिंह के द्वारा हरिण।

घत्ता—यह अशरणभावना समझकर, मन-वचन और काय को रोककर जिसने चारित्र्य स्वीकार नहीं किया वह मनुष्य रूप में वायु से प्रेरित होकर व्यर्थ भ्रमण करता है॥ २॥

३

मित्र और स्वजन का संयोग होकर वियोग होता है, जग में यह जीव अकेला ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

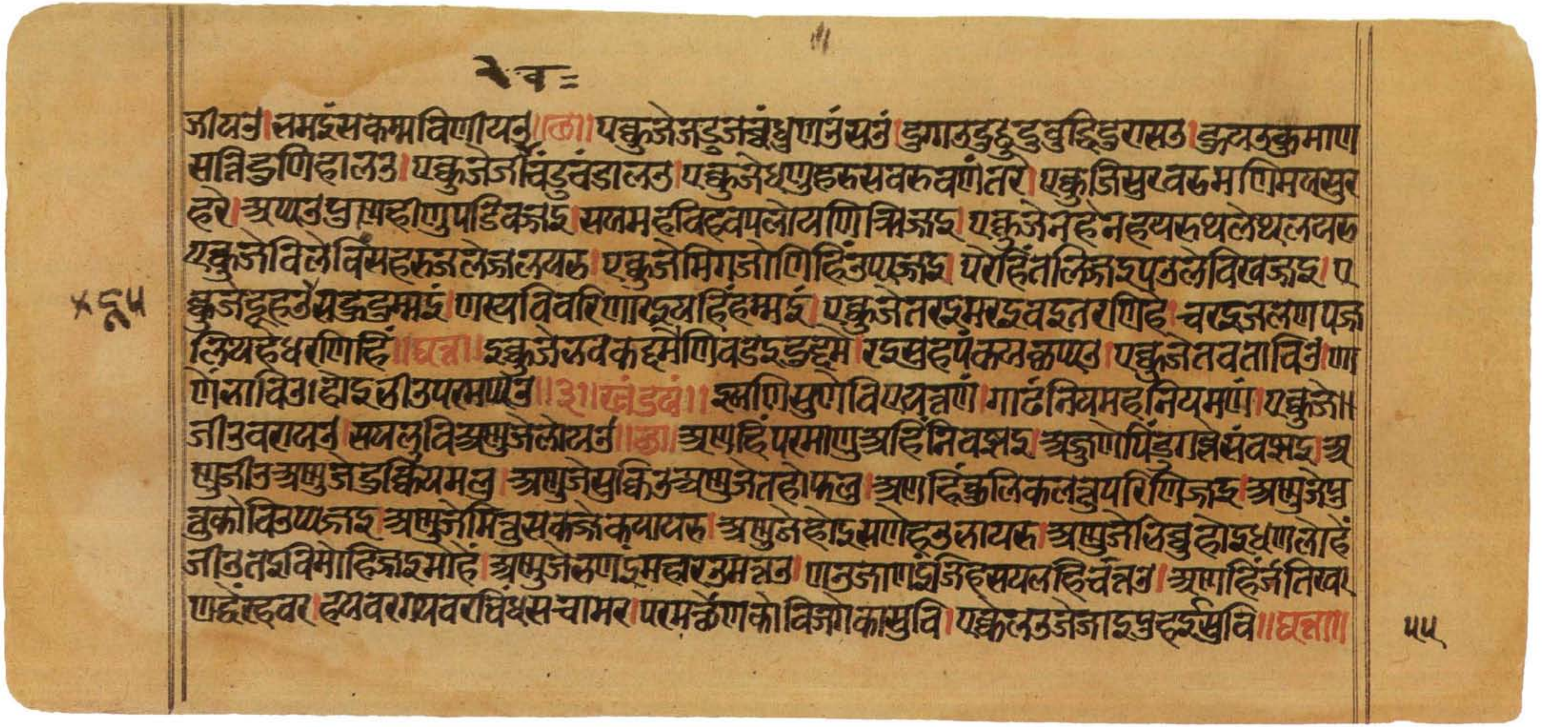

परिभ्रमण करता है अपने कर्म से विनीत होकर। एक जीव जड़ जन्मान्ध, नपुंसक, दुर्गत, दुष्ट, दुर्बुद्धि और दुराशय, कुमनुष्यत्व में होकर दुर्दर्शनीय होता है, एक जीव चण्ड और चाण्डाल होता है। एक वन के भीतर धनुर्धर भील होता है, एक मणिमय विमान में देव होता है, अपने को पुण्यहीन मानता है और इन्द्र के वैभव को देखकर क्षीण होता है। एक जीव आकाश में नभचर और दूसरा स्थल में स्थलचर। एक बिल में साँप और जल में जलचर। एक पशुयोनि में जन्म लेता है, और दूसरों के द्वारा खण्डित होकर तथा तलकर एक क्षण में खा लिया जाता है। एक दुर्भग, दुःसह और दुर्गति, नरकविवर में नारकियों के द्वारा मारा जाता है। अकेला ही तरता है, अकेला ही वैतरणी पार करता है और ज्वलित-प्रज्वलित धरती पर विचरण करता है।

घत्ता—जीव अकेला ही रतिसुख का भ्रमर बनकर दुर्दम, विश्वकीचड़ में पड़ता है। जो अकेला ही तप से संतप्त और ज्ञान से भाषित होकर परमात्मा बनता है॥ ३॥

४

इस प्रकार एकत्व भावना को सुनकर अपने मन को प्रगाढ़ रूप से नियमित करना चाहिए। बेचारा जीव अकेला है और समस्त लोक से भिन्न है। भिन्न परमाणुओं के द्वारा बाँधा जाता है और गर्भ में जो पिण्ड बँधता है वह भिन्न है। जीव भिन्न है और पापकर्ममल भिन्न है, पुण्य अलग है और उसका फल अलग है। अन्य के द्वारा कुल में स्त्री ले जायी जाती है। कोई दूसरा पुत्ररूप में उत्पन्न होता है। अपने कार्य में कृतादर मित्र दूसरा होता है, और स्नेही भाई दूसरा होता है। धन-लोभ से अन्य भृत्य होता है, (यह) जीव मोह के द्वारा मुग्ध होता है। मतवाला वह, अन्य को कहता है कि यह हमारा है। नहीं जानता कि किस प्रकार वह सबके द्वारा छोड़ दिया जाता है। आधे पल में रथवर, हयवर, गजवर और चामर सहित पताकाएँ दूसरी हो जाती हैं। परमार्थ में जग में कोई भी किसी का नहीं है। पृथ्वी का ईश (राजा) भी अकेला होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

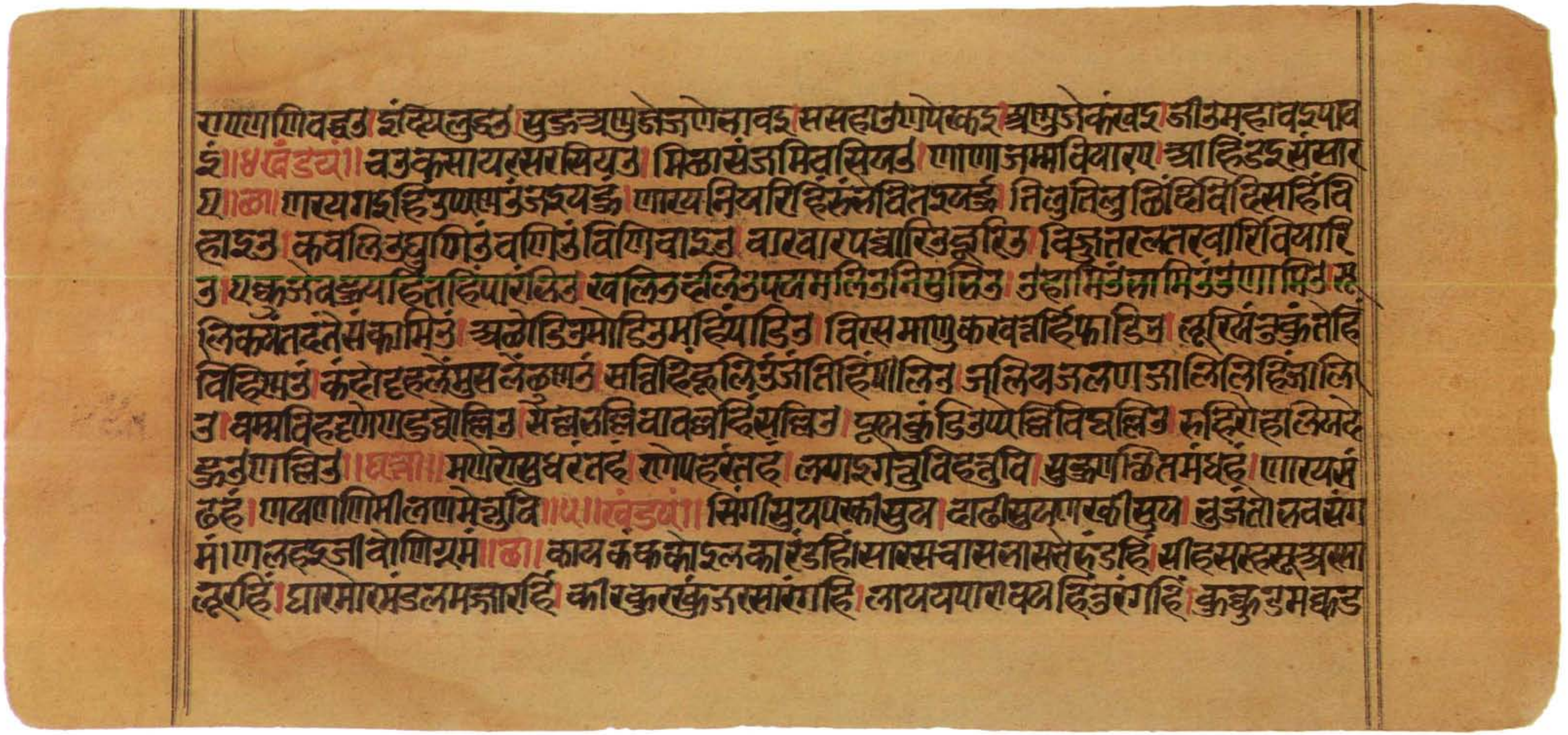

घत्ता—राग के द्वारा बाँधा गया इन्द्रियों से लुब्ध सुख भी मुझे अन्य प्रतीत होता है। अपने स्वभाव को नहीं देखता, दूसरे की आकांक्षा करता है इस प्रकार जीव महा आपत्ति पाता है॥ ४॥

५

चार कषायरूपी रस में आसक्त और मिथ्या संयम के वशीभूत होकर (यह जीव) नाना जन्मोंवाले संसार में घूमता है। जब यह नरकगति में उत्पन्न होता है, तब नारकीय समूह के द्वारा अवरुद्ध होकर तिल-तिल टुकड़े कर दिशाओं में विभक्त कर दिया जाता है। खाया, धुना, घायल किया और गिराया जाता है। बार-बार पुकारा जाता और भर्त्सित किया जाता। विद्युत की तरह चंचल तलवारों से विदारित किया जाता। अकेला ही बहुतों के द्वारा आक्रान्त, स्खलित, दलित, पदमर्दित और फेंका जाता है। नीचे किया जाता, घुमाया जाता, झुकाया जाता, शूली में और यम के दाँतों में। पछाड़ा और मोड़ा गया, धरती पर गिर पड़ता है। चिल्लाता हुआ करपत्रों (आरों) से फाड़ा जाता। भालों से विदारित टुकड़े-टुकड़े हो जाता। बड़े-बड़े ऊखलों में मूसलों से कूटा जाता। शक्तियों से पिरोया गया और यन्त्रों से पीड़ित किया जाता। जलती हुई आग की ज्वालाओं से जलाया जाता, मर्मभेदी अपशब्दों से बोला जाता, सेल, भालों और लौह-अंकुशों से छेदा जाता, पीप-कुण्ड में ढकेल दिया जाता, रक्त से शरीर नहा जाता।

घत्ता—इस प्रकार मन में क्रोध धारण करते हुए और युद्ध में प्रहार करते हुए उसका खण्डित शरीर होकर भी जा लगता है। इस प्रकार तम से अन्धे नारकीय समूह में पलमात्र का भी सुख नहीं है॥ ५॥

६

शृंगधारी पशुओं-पक्षियों, दाढ़वाले और नखवाले पशुओं में संसार के संगम को भोगता हुआ यह जीव निकल नहीं पाता। कौआ, बगुला, कोयल, चक्रवाक, सारस, चारभास, भैरुण्ड, सिंह, शरभ, सुअर, सालूर, घार, मोर, मण्डल, मार्जार (बिलाव), कीर, कुरर, कुंजर, सारंग, लावा, पारावत, तुरंग, मुर्गा, वानर,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

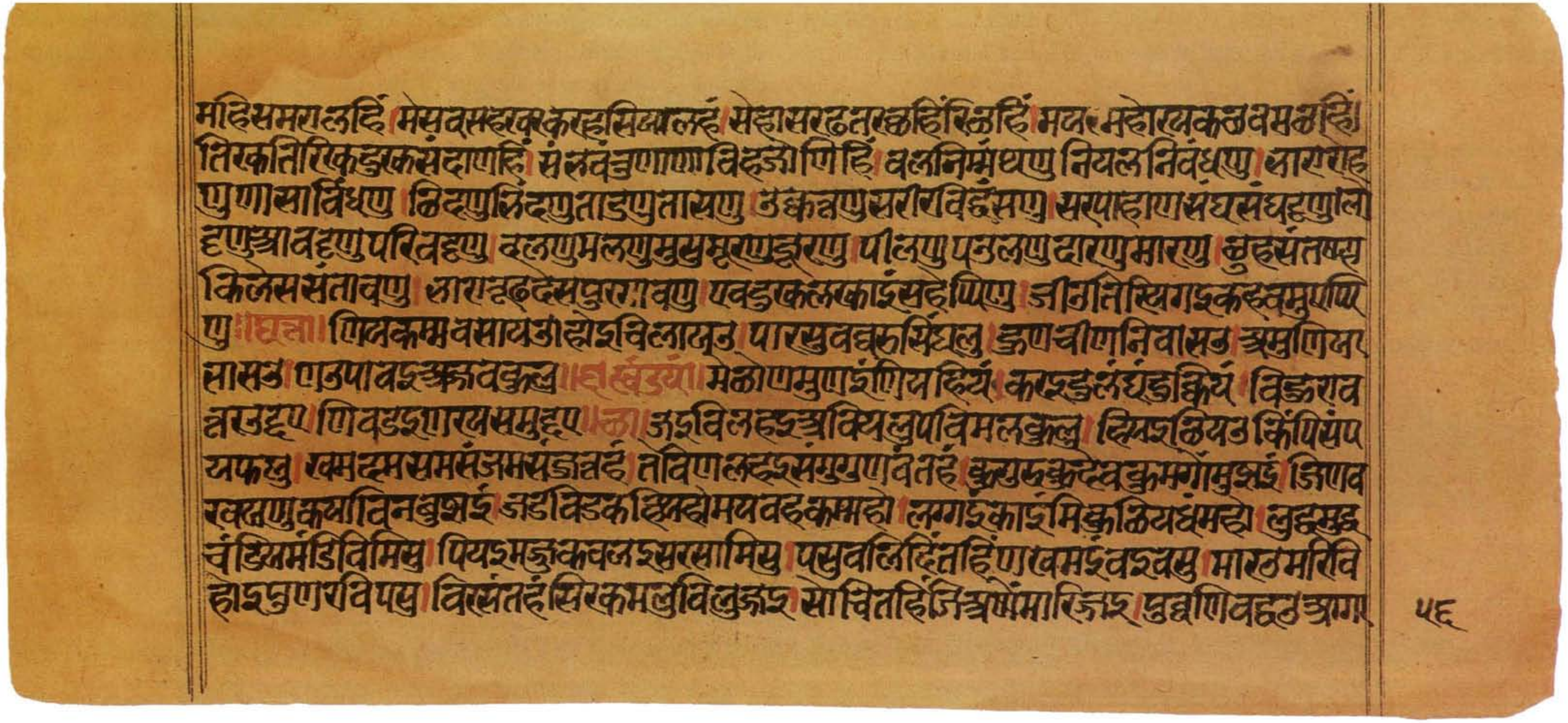

महिष, मराल, मेष, वृषभ, खर, करभ, शृगाल, सेढ, सरढ, तरच्छ, रीछ, मगर, महोरग, कच्छप और मत्स्यों आदि की तीखी तिर्यंच गति के दु:खों को देनेवाली नाना योनियों में उत्पन्न होता हुआ बल का नाश होना, बेड़ियों से जकड़ा जाना, भार का उठाना, नाना प्रकार के बन्धन, छेदन-भेदन-ताड़न, त्रासन-उत्कर्तन, शरीर का विध्वस्त होना, तीर और पत्थरों से संघर्षण, लोटना, घूमना-फिरना, दलन, मला जाना, मसला जाना, सताया जाना, पीड़ित होना, काटा जाना, फाड़ा जाना, मारा जाना, क्षुधा-तृष्णा के दु:खों का सन्ताप और भार से आरूढ़ होकर देश-पुर-गाँव में जाना, इस प्रकार लाखों दु:खों को सहनकर जीव किसी प्रकार तिर्यंक् गति छोड़कर—

घत्ता—अपने कर्म के वशीभूत भील, पारसीक (पारसी), बर्बर, सिंहल, हूण और चीन का निवासी होता है, मनुष्य की भाषा नहीं जाननेवाला वह आर्यकुल नहीं पाता॥ ६ ॥

७

म्लेच्छ भी अपना हित नहीं करता और वह अलंघ्य दुष्कृत करता है, तथा दु:खों के आवर्त से भयंकर नरकरूपी समुद्र में पड़ता है। उसके बाद यद्यपि वह अविकल अत्यन्त पवित्र कुल पाता है और मन के द्वारा चाहे गये कुछ सम्पत्ति के फल को पाता है, तब भी गुणवानों की संगति प्राप्त नहीं करता। कुगुरु, कुदेव और कुमार्ग में मुग्ध होता है, जिनवर के वचनों को कदापि नहीं समझता। मूर्खों और धूर्तों के द्वारा कहे गये पशुवधधर्म और किसी भी कुत्सित कर्म में लग जाता है, लोभी और मुग्ध वह चण्डिका का बहाना बनाकर मद्य पीता है और सरस मांस खाता है। यम पशुबलि देनेवालों को क्षमा नहीं करता, मारनेवाला मारकर फिर पशु होता है। जो चिल्लाते हुए पशुओं का सिरकमल काटता है, वह भी दूसरों के द्वारा वहाँ मारा जाता है। पहले का संचित कर्म आगे

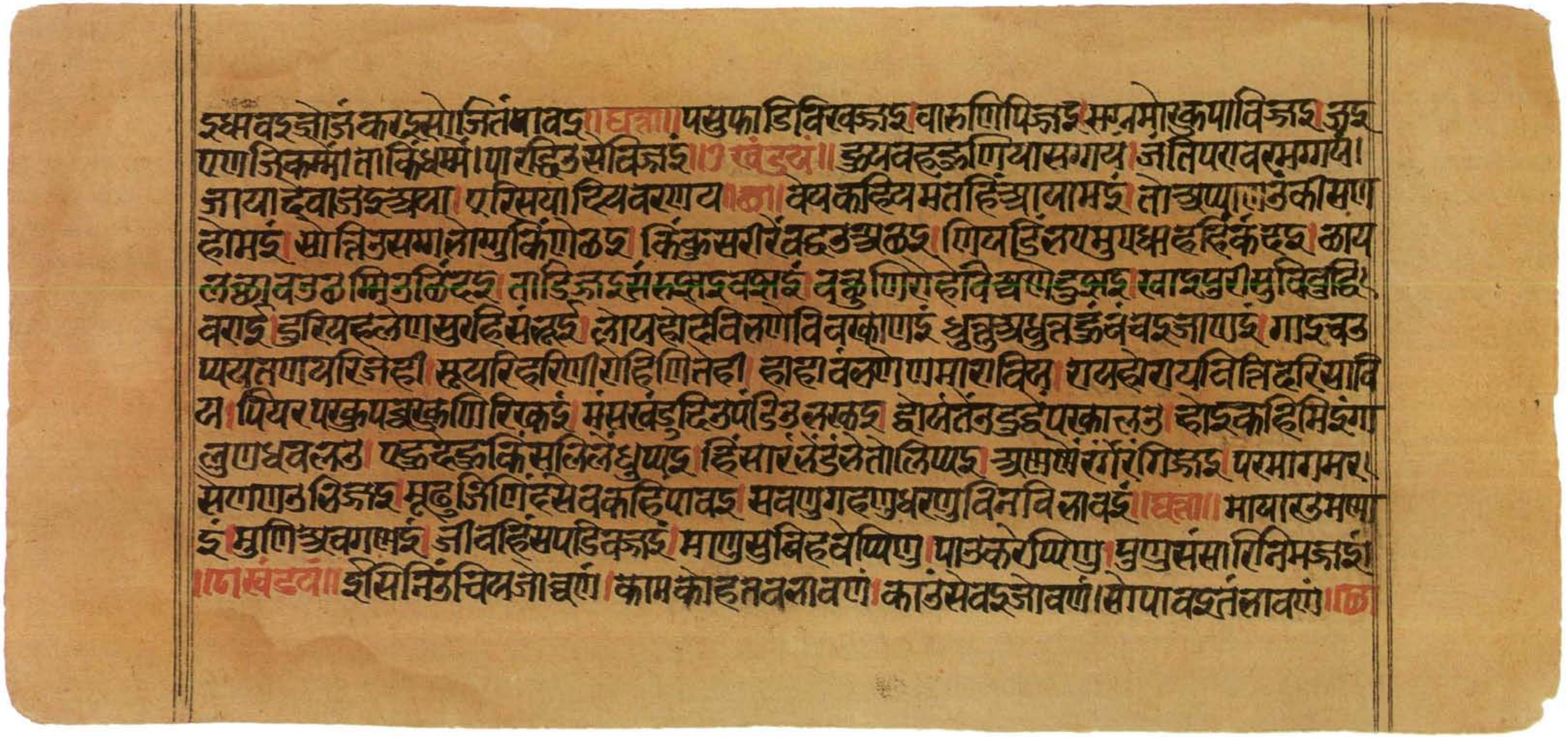

दौड़ता है, जो जैसा करता है वह वैसा ही पाता है।

घत्ता—पशु मारकर खाया जाता है, सुरा का पान किया जाता है और यदि इस कर्म से भी स्वर्ग-मोक्ष पाया जाता है, तो फिर धर्म से क्या? शिकारी की ही सेवा करनी चाहिए॥ ७॥

८

आग में होमे गये बकरे (अज) स्वर्ग और मोक्ष गये हैं और देव हुए हैं, यदि ब्राह्मणों का सिद्धान्त यह है तो वेदों में कथित मन्त्रों के द्वारा वह प्राणायाम आदि क्यों करता है? अपने को क्यों नहीं होम देता? श्रोत्रिय स्वर्ग और मोक्ष क्यों नहीं चाहता, खोटे शरीर से बँधा हुआ क्यों रहता है? अपना पुत्र मरने पर धाड़ मारकर रोता है, वंचक वह अज और उसके बच्चे का वध करता है, बेचारी गाय ताड़ित की जाती है, रोकी जाती है, बाँधी जाती है, बछड़े को रोककर अन्य के द्वारा दुही जाती है, मल खाती है। बुद्धिहीन और बेचारी पाप के फल से गाय हुई है, परन्तु देवी कहकर लोगों से उसकी व्याख्या करता है; धूर्तजन सीधे-सादे लोगों को ठगना जानता है। गाय जिस प्रकार चौपाया है और घास चरनेवाली है, उसी प्रकार सुअरनी, हरिनी और रोहिणी (मछली) भी। हा-हा, ब्राह्मणों के द्वारा वे मरवायी जाती हैं और राजा के लिए राजवृत्ति दरसायी जाती हैं, पितरपक्ष में स्पष्ट देखा जाता है कि द्विज विद्वान् मांसखण्ड खाते हैं, अंगार (कोयला) दूध से धोने पर भी कभी भी सफेद नहीं हो सकता। यह देह जो हिंसा के आरम्भ और दम्भ से लिप्त होती है, क्या पानी से धोयी जा सकती है? अन्य-अन्य रंगों में यह रंगी जाती है परन्तु परमागम के रस में यह नहीं भीगती। मूर्ख जिनेन्द्र की सेवा कैसे पा सकता है, उसे तो उसका सुनना, ग्रहण करना, धारण करना भी अच्छा नहीं लगता।

घत्ता—मायारत (मायावी) को मानता है, मुनि की अवहेलना करता है, जीव-हिंसा स्वीकार करता है, मनुष्य होकर भी पाप कर फिर संसार में डूबता है॥ ८॥

९

जो यौवन तथा काम-क्रोध से सन्तप्त भावना को थोड़ा नियन्त्रित कर वन में तप करता है वह उस भवनवासी स्वर्ग में जन्म लेता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

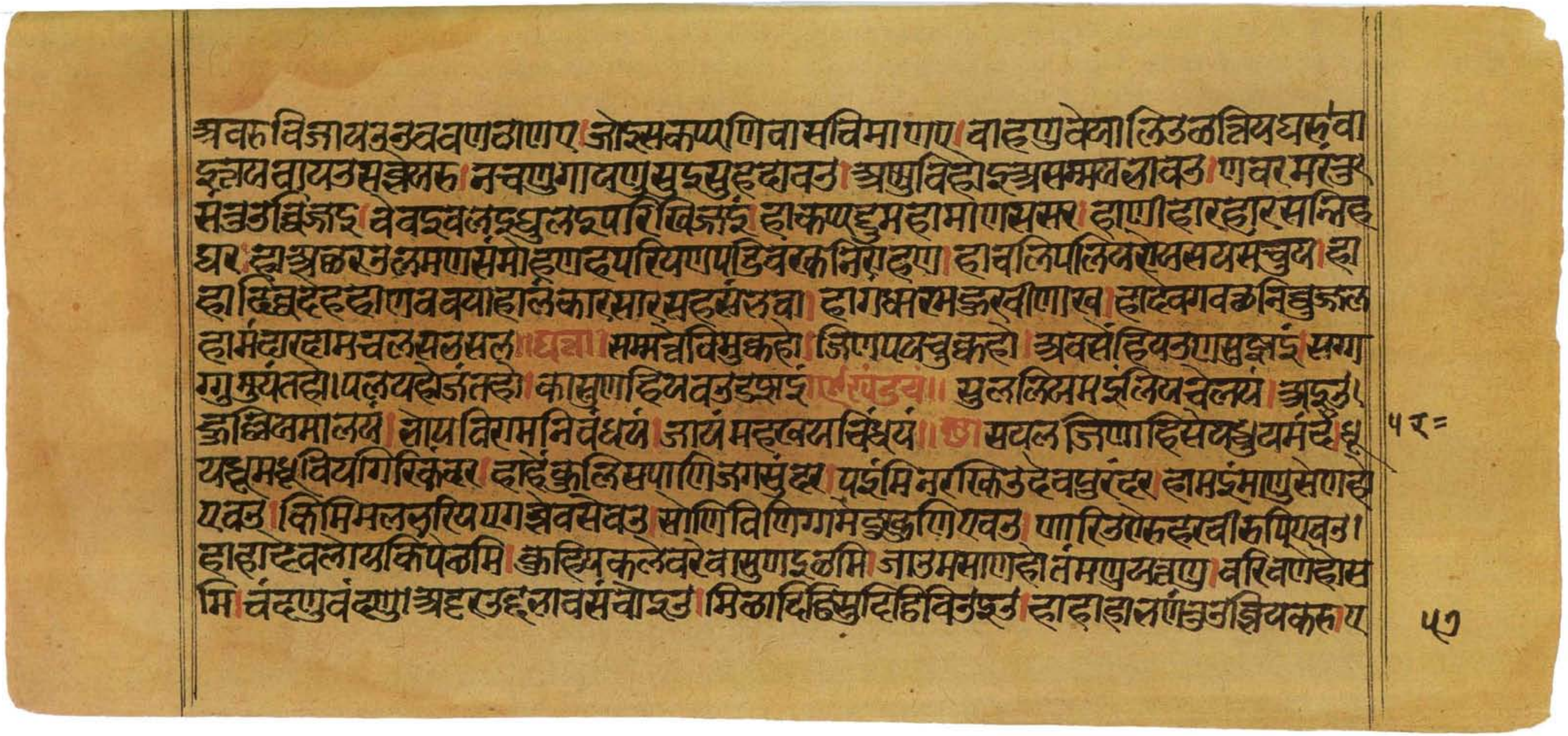

और दूसरा उपवन स्थान, तथा ज्योतिष कल्पवास विमानों में उत्पन्न हुआ वाहन वैतालिक छत्रधारी वाद्य बजानेवाला भाँड आदि होता है। कानों को सुख देनेवाला नृत्य और गायन करनेवाला असम्यक्‌वाला होता है। वह भी मरते हुए की चिन्ता करता है, काँपता है, चलता है और खेद को प्राप्त होता है। हाय, कल्पवृक्ष, हाय मानस सरोवर, हाय नीहार के समान घर। हाय अप्सरा कुल का मन सम्मोहन करनेवाले, हाय परिजन और प्रतिपक्ष का निरोध करनेवाले। इस त्रिबलि बुढ़ापा और सैकड़ों रोगों के संचय का नाश करनेवाले, हाय दिव्य देह और नव वय। हाय, सहोत्पन्न अलंकारश्रेष्ठ। हाय, मधुर वीणा रववाले गन्धार। हाय, नित्य उज्ज्वल देवांग। हाय, चंचल भ्रमर सहित मन्दारमाला।

घत्ता—सम्यक्त्व से विमुक्त और जिनपद से चूके हुए व्यक्ति का हृदय शुद्ध नहीं होता, स्वर्ग छोड़ते हुए या प्रलय को प्राप्त हुए किस व्यक्ति का शरीर नहीं जलता?॥ ९॥

१०

सुन्दर मैले-कुचैले वस्त्रों और अत्यन्त झुकी हुई मालावाले मेरे मृत्युचिह्न ही शरीर से विरक्त होने का कारण बन गये हैं, जिनेन्द्र के जन्माभिषेक में सुमेर पर्वत को धोनेवाले, और धूप-धूम्र से गिरि-गुफाओं को सुवासित करनेवाले हे इन्द्रदेव, तुमने भी मेरी रक्षा नहीं की। हाय, मुझे मनुष्य होना होगा तथा कृमियों और मल से भरे गर्भ में रहना होगा। गर्भ से निकलने पर दुःख देखना होगा? नारी के स्तन से निकलनेवाला दूध पीना होगा? हाय-हाय देवलोक, मैं तुम्हें कहाँ देखूँगा? नष्ट होनेवाले शरीर में मैं वास नहीं चाहता। वह मनुष्यत्व मरघट में जाये, अच्छा है मैं वन में चन्दन या वन्दन बृक्ष होऊँ। आठ प्रकार के रौद्रभावों से प्रेरित तथा सम्यक् दृष्टि से विरहित मिथ्यादृष्टि, हाय-हाय करता हुआ दोनों हाथ उठाये हुए,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

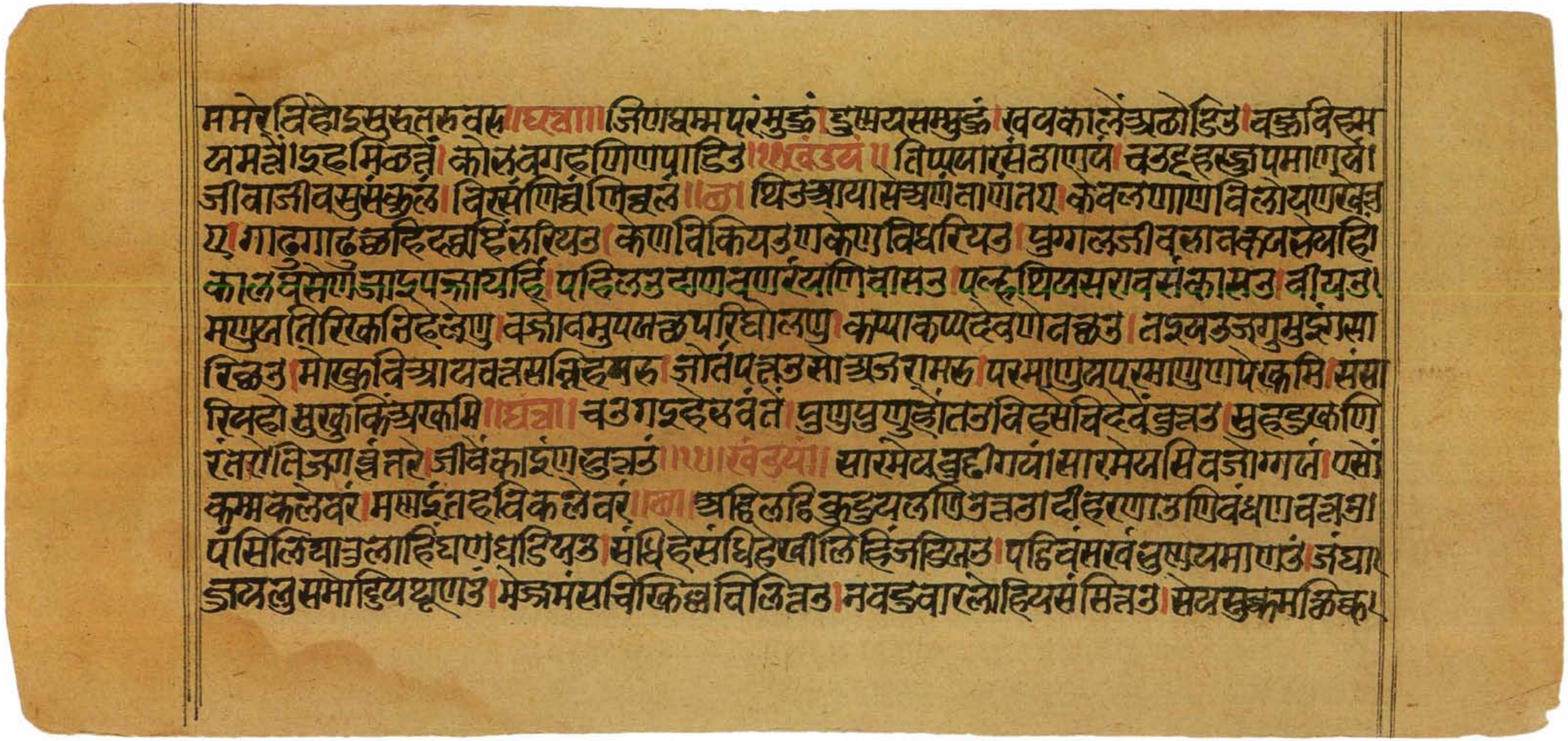

इस प्रकार मरते हैं और देव वृक्ष बनते हैं।

घत्ता—जिनधर्म से विमुख, दुर्नयों के प्रति उन्मुख क्षयकाल में नष्ट हुआ कौन मनुष्य विविध मदों से मत्त मिथ्यात्व के द्वारा गहन संसार में नहीं डाला जाता॥ १०॥

११

शराब आदि की आकृतिवाला और चौदह राजू प्रमाण, तथा जीव और अजीव (द्रव्यों) से अच्छी तरह व्याप्त यह विश्व नित्य और निश्चल है। अनादि-अनन्त तथा केवलज्ञान के अवलोकन का विषय आकाश में स्थित है। जो सघन रूप से छह द्रव्यों से भरा हुआ है। उसे किसी ने बनाया नहीं है, और न किसी ने उसे उठा रखा है। पुद्गल जीव और भाव से निर्मित पर्यायों से काल के वश से परिणमित होता रहता है। पहला (अधोलोक) दानव और नरकों का निवास है जो उलटे सकोरे के आकार का है। दूसरा (मध्यलोक) वज्र के समान मनुष्यों का घर है। जिसमें पदार्थों (जीवादिकों) की प्रवृत्तियाँ होती रहती हैं। तीसरा लोक (ऊर्ध्वलोक) मृदंग के आकार का है, और जिसमें कल्प-अकल्प देवों का निवास है। मोक्ष भी छत्ते के आकार का है जो वहाँ पहुँच जाता है, वह अजर-अमर है। संसारी के सुख का क्या वर्णन करूँ, मैं उसे परमाणुमात्र भी सुख नहीं देखता।

घत्ता—देव ने (गौतम गणधर ने) हँसकर कहा—चार गतियों में मरते हुए और बार-बार उत्पन्न होते हुए इस जीव ने सुख-दुःख से निरन्तर भरपूर इस त्रिलोक के भीतर क्या नहीं भोगा?॥ ११॥

१२

प्रचुर मेदा के बढ़ने पर यह जीव कुत्ता और शृंगाल के योग्य शरीरवाला बनता है। तब भी यह जीव संसार में उस शरीर को श्रेष्ठ मानता है। हड्डियोंरूपी लकड़ियों के ढाँचे पर निर्मित, लम्बी-लम्बी स्नायुओं से बँधा हुआ, पसलियोंरूपी तुलाओं से अच्छी तरह कसा हुआ, जोड़ों-जोड़ों पर कीलों से जड़ा हुआ, पीठरूपी बाँस के खम्भे पर उन्नत मानवाला, मुड़ी हुई थूनियों की तरह जाँघोंवाला, मज्जा और मांस की कीचड़ से लिपटा हुआ, रक्त से रँगे हुए नौ द्वारवाला, प्रस्वेद शुक्र और अस्थियों से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

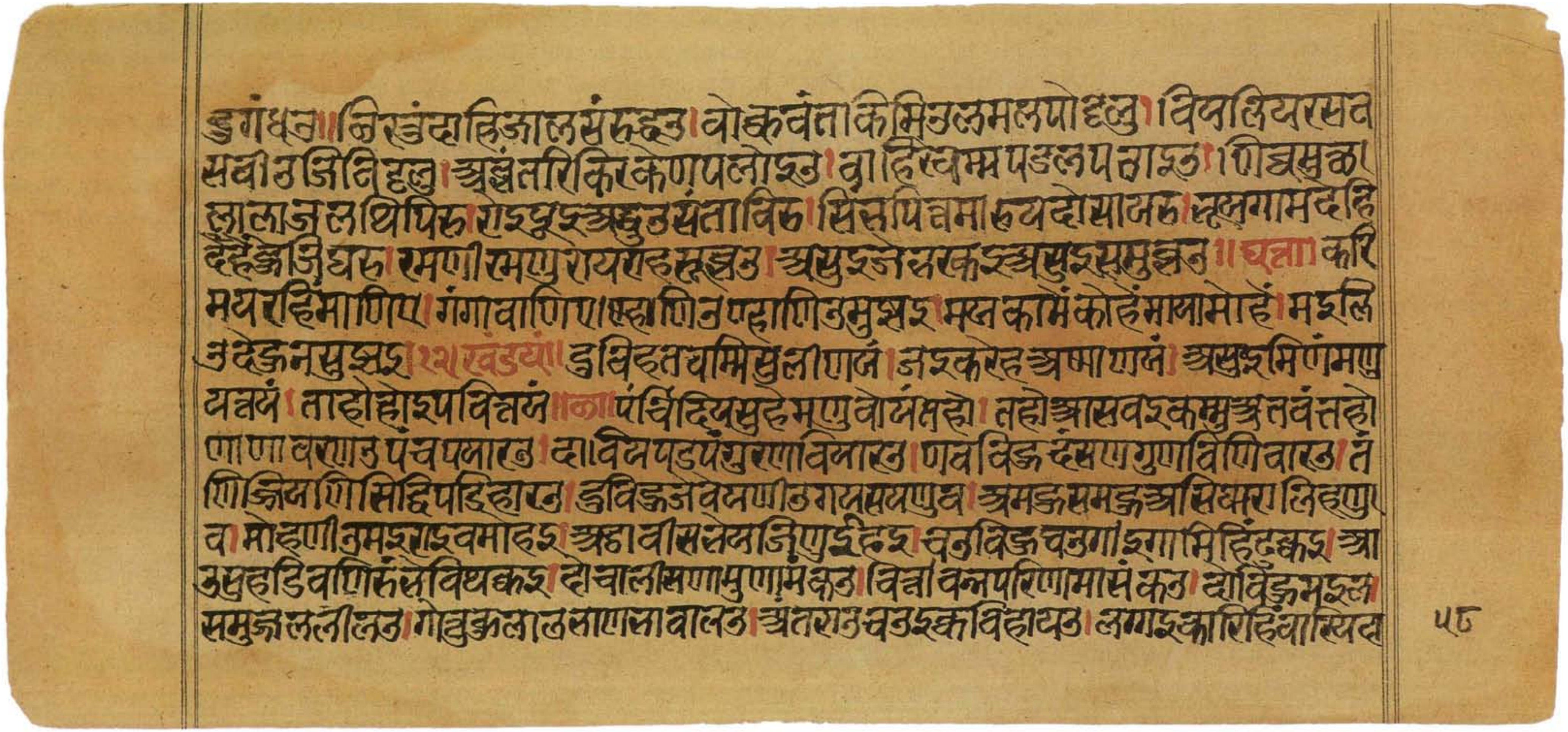

दुर्गन्धित, शिराओं के कृमिजाल से संरुद्ध, विपरीत ढंग से क्षरणशील कृमिकुल के मल का पोटला, विगलित रस और चर्बी से युक्त अपवित्र यह शरीर है। भीतर इसे किसने देखा? बाहर यह चर्मपटल से आच्छादित है। नित्य ही मूत्र-लाररूपी जल से चिपचिपा, रोगी, दुर्गन्धित और अत्यन्त सन्तापदायक। वात-कफ और पित्त के दोषों का आकर, पृथ्वी आदि चार महाभूतों के समूह का घर ही शरीर है। रमणी के रमण राग के हर्ष से आनन्दित यह जीव अपवित्रता से उत्पन्न चीजों को खाता है।

घत्ता—हाथियों और मगरों के द्वारा मान्य गंगा के पानी में नहा-नहाकर मोह को प्राप्त होता है। मद, काम, क्रोध, माया, मोह से अपवित्र यह शरीर शुद्ध नहीं होता॥ १२॥

१३

यदि वह दो प्रकार के तप में अपने को लीन करता है, तो यह अपवित्र मनुष्यत्व पवित्र होता है। पाँच इन्द्रियों के सुखों में मन को प्रेरित करते हुए, और तप नहीं करते हुए जीव के कर्म का आस्रव होता है। ज्ञानावरणी पाँच प्रकार का है, जो वस्त्र के समान आवरण (आच्छादन) दिखानेवाला है; गुणों का निवारण करनेवाला दर्शनावरणी नौ प्रकार का है; जो निर्जित और निषेध करनेवाले प्रतिहारी के समान है। रोगयुक्त शयन के समान वेदनीय दो प्रकार का है, जो मधुर-सहित और मधुर-रहित तलवार की धार को चाटने के समान सुखद और दुःखद है। मोहनीय कर्म मदिरा के समान मुग्ध करता है, जिन भगवान् उसके अट्ठाईस भेद बताते हैं। चार प्रकार का आयुकर्म चार गतियों में जानेवालों के द्वारा पहुँचता है और खोटक के समान वहीं अवरुद्ध होकर रह जाता है। नामकर्म बयालीस प्रकृतियों का होता है और वह चित्र के रंगों की परिणति के समान परिणामों से युक्त होता है। कुम्हार के बर्तनों के समान छोटे-बड़े आकारवाला गोत्रकर्म दो प्रकार का होता है—मलिन और समुज्ज्वल, (उच्चगोत्र और नीचगोत्र)। अन्तराय कर्म चार और एक—पाँच प्रकार का है जो करनेवाले को दान का निवारण करनेवाला होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

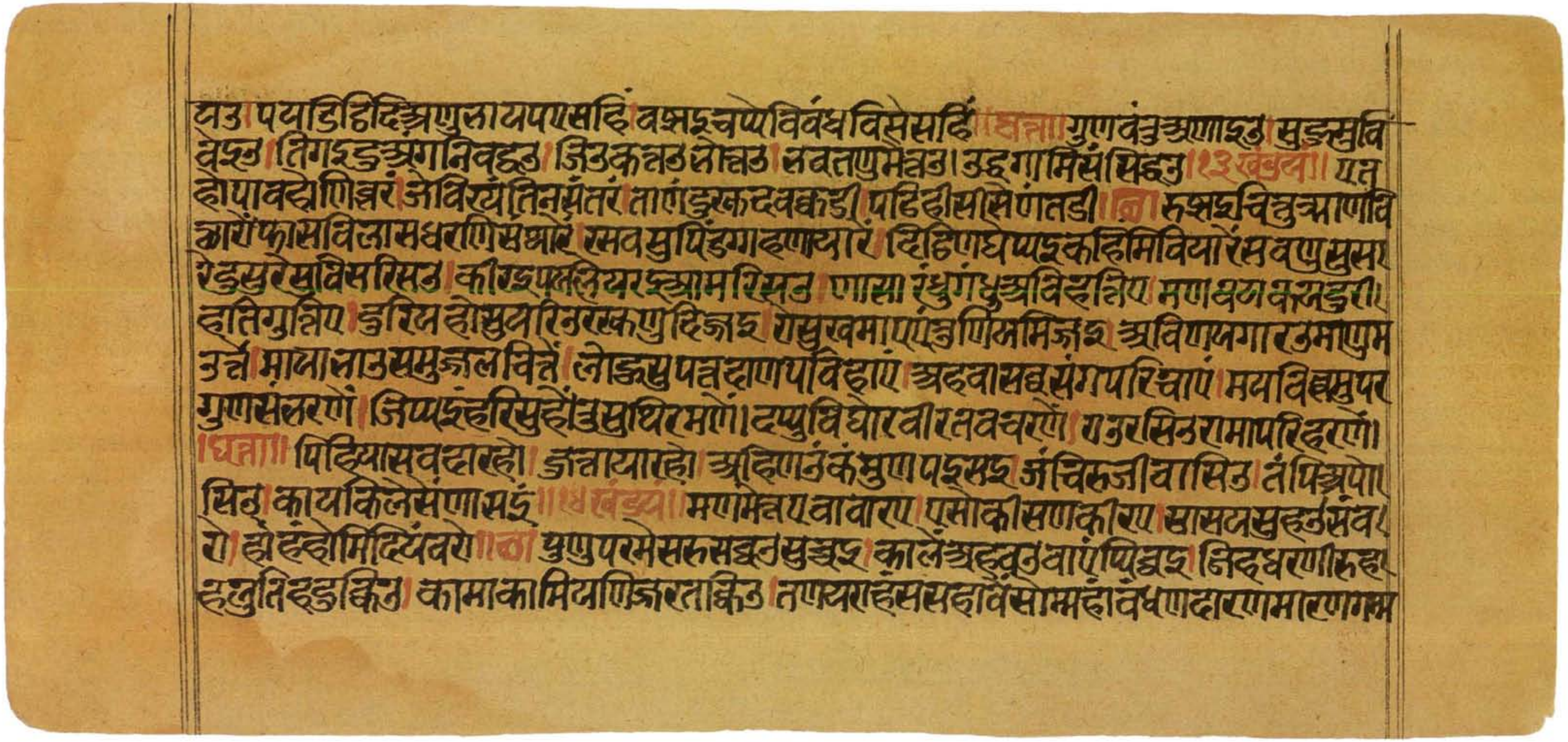

तथा प्रकृति-स्थिति-अनुभाग-प्रदेशवाले बन्ध विशेषों से बलपूर्वक जकड़ लेता है।

घत्ता—गुणवान्, अनादि सूक्ष्म विवेकी, दो शरीरों से निबद्ध (तैजस और कार्मण) त्रिगतिवाला यह जीव कर्ता और भोक्ता उत्पन्न शरीर मात्र ऊर्ध्वगामी और स्वयंसिद्ध है॥ १३॥

१४

आते हुए पाप का जो पूर्ण संवर नहीं करते, उनके ऊपर सिर पर बिजली की तरह असह्य वज्रपात होगा। ध्यान के विस्तार और धरती पर सोने से स्पर्शविलासी चित्त रुक जाता है, पशु के पिण्ड के समान आहार ग्रहण करने से रसना इन्द्रिय रुक जाती है, और वह दृष्टि विकारभाव से कुछ भी ग्रहण नहीं करती। कान सुन्दर और असुन्दर स्वरों में समान हो जाते हैं, वे नष्ट राग-द्वेषवाले कर दिये जाते हैं। और गन्ध के अविभाजन (सुगन्ध-दुर्गन्ध आदि) से नाक भी (वश में कर ली जाती है); तीन गुप्तियों (मन, वचन और काय) के द्वारा मन, वचन और काय की दुश्चेष्टाओं को (वश में करना चाहिए); सुचरित को पाप से संरक्षण दिया जाये, क्रोध होनेपर क्षमा से उसे नियमित किया जाये, मृदुता से अविनय करनेवाले मान को, और सरलचित्त से मायाभाव को, सुपात्र को दान देकर लोभ अथवा सब प्रकार का परिग्रह छोड़कर। दूसरे के गुणों की याद कर मद के विलास को और स्थिर मन से होते हुए हर्ष को जीतना चाहिए। घोर और वीर तप के आचरण से दर्प को और रसवन्ती स्त्री के परित्याग से राग को।

घत्ता—इस प्रकार जिसके आश्रवद्वार बन्द हैं ऐसे मुक्त आहार-विहारवाले जीव को कर्म का बन्ध नहीं होता, और जो पुराना संचित कर्म है अपोषित, वह काय-क्लेश के द्वारा नष्ट हो जाता है॥ १४॥

१५

मनोमात्र के द्वारा आचरण में ऐसा क्यों नहीं किया जाता कि शाश्वत सुखवाला संवर हो। "मैं दिगम्बर होता हूँ।" फिर परमेश्वर सच सोचते हैं कि समय अथवा उपाय से जिस प्रकार वृक्षों के फल पकते हैं, उसी प्रकार सकाम और अकाम निर्जरा से कल्पित पाप नष्ट होता है। स्वभाव से सौम्य शरीरधारियों, बन्धन, विदीरण और ताड़न आदि बातों को प्राप्त होते हुए,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

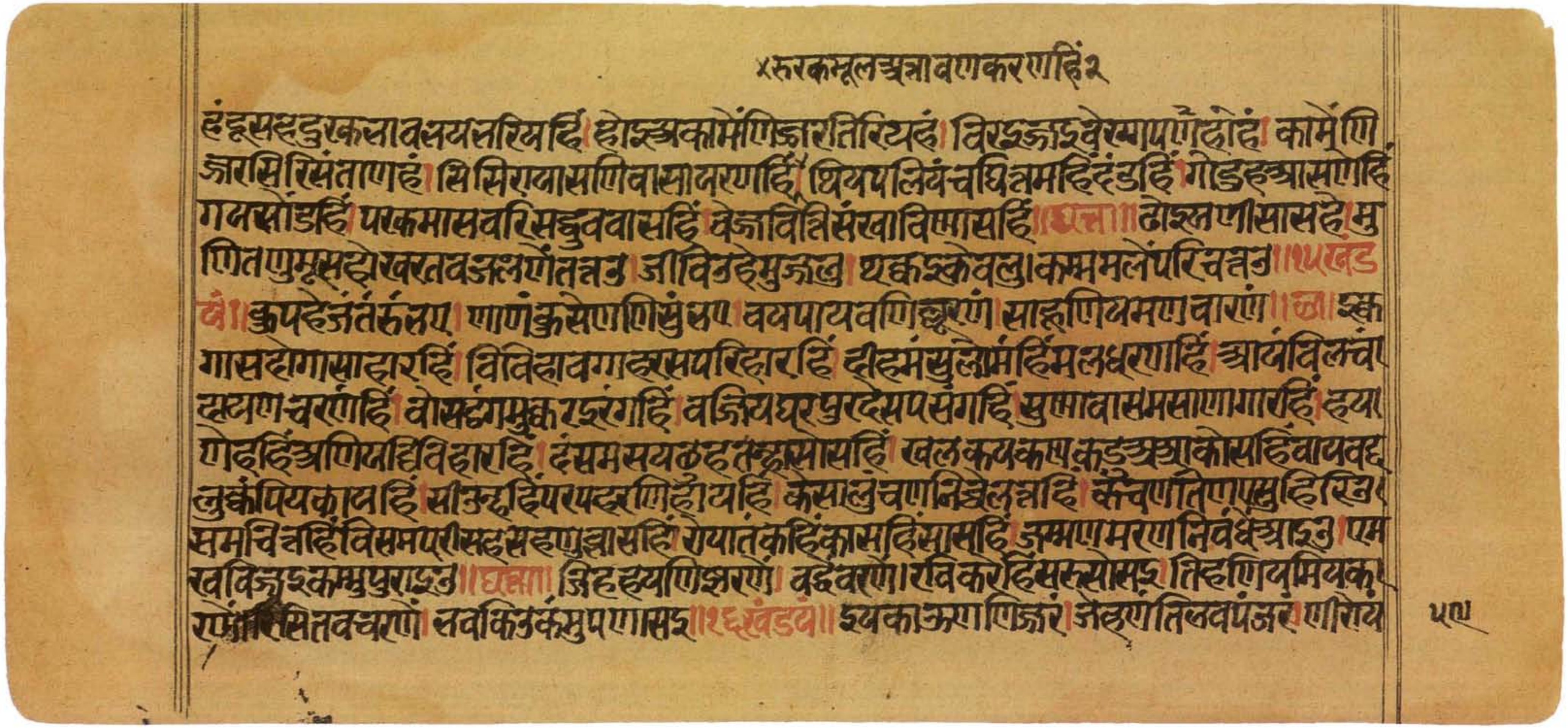

असह्य दु:ख भाव से भरे हुए तिर्यंचों की अनाम निर्जरा होती है। शिशिर में आकाश के नीचे निवास करनेवाले, वृक्षों के मूल में आतापन तपनेवाले, पर्यंकासनों में स्थित और महीदण्ड पर अपने को निक्षिप्त करनेवाले गोदुह और गजशौंड आसनोंवाले, पक्ष-माह और वर्ष के अन्त तक उपवास करनेवाले, देय और आहार की वृत्ति और संख्या की रचना करनेवाले, वैराग्य प्रधान ऋषि सन्तानों के द्वारा—

घत्ता—श्वास से चलते हुए मुनि के शरीररूपी धातुविशेष (मूषा) में तीव्र तपज्वाला से तपकर जीवन स्वर्ण की तरह उज्ज्वल और कर्ममल से मुक्त होकर केवली होकर रह जाता है॥ १५॥

१६

व्रतरूपी वृक्ष को विदारित करनेवाले अपने मनरूपी हाथी को साधु कुमार्ग में जाने से रोकता है और ज्ञानरूपी अंकुश से उसे वश में रखता है। एक या दो कौर आहार करनेवाला विविध अवग्रहों और रसों का परिहार करनेवाले लम्बी दाढ़ी और बालवाले मलधारी, आताम्र और चान्द्रायण तप का आचरण करनेवाले, कायोत्सर्ग से रतिरंग को छोड़नेवाले, घर, पुर और देश के प्रसंगों से दूर रहनेवाले, शून्य आवास और मरघटों को आवास बनानेवाले, स्नेह से रहित और अनियमित विहार करनेवाले, दंश-मशक, भूख और प्यास को सहन करनेवाले, दुष्टों के द्वारा किये गये कर्णकटुक आक्रोशवाले, वायु और बादलों से उत्कम्पित शरीर से युक्त मुनियों के द्वारा शीतोष्ण पर-प्रहार के समूहों, केशलोंच और अचेलकत्वों (दिगम्बरत्व), स्वर्ण और तृण, मित्र और शत्रु में समचित्तों, विषम परीषहों के सहन करने के अभ्यासों, रोगों से आक्रान्त खाँसी और श्वासों के द्वारा, जन्म और मृत्यु के प्रबन्ध में प्रवृत्त पुराने कर्मों का इस प्रकार क्षय किया जाता है।

घत्ता—जिस प्रकार झरना सूखने और पाल बँध जाने पर रवि की किरणों से सरोवर सूख जाता है, उसी प्रकार इन्द्रियों को नियमित करने और ऋषि के तप का आचरण करने से संसार में किया गया कर्म नष्ट हो जाता है॥ १६॥

१७

इस प्रकार निर्जरा कर भवरूपी कारागृह को नष्ट कर देते हैं, वे नीरोग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

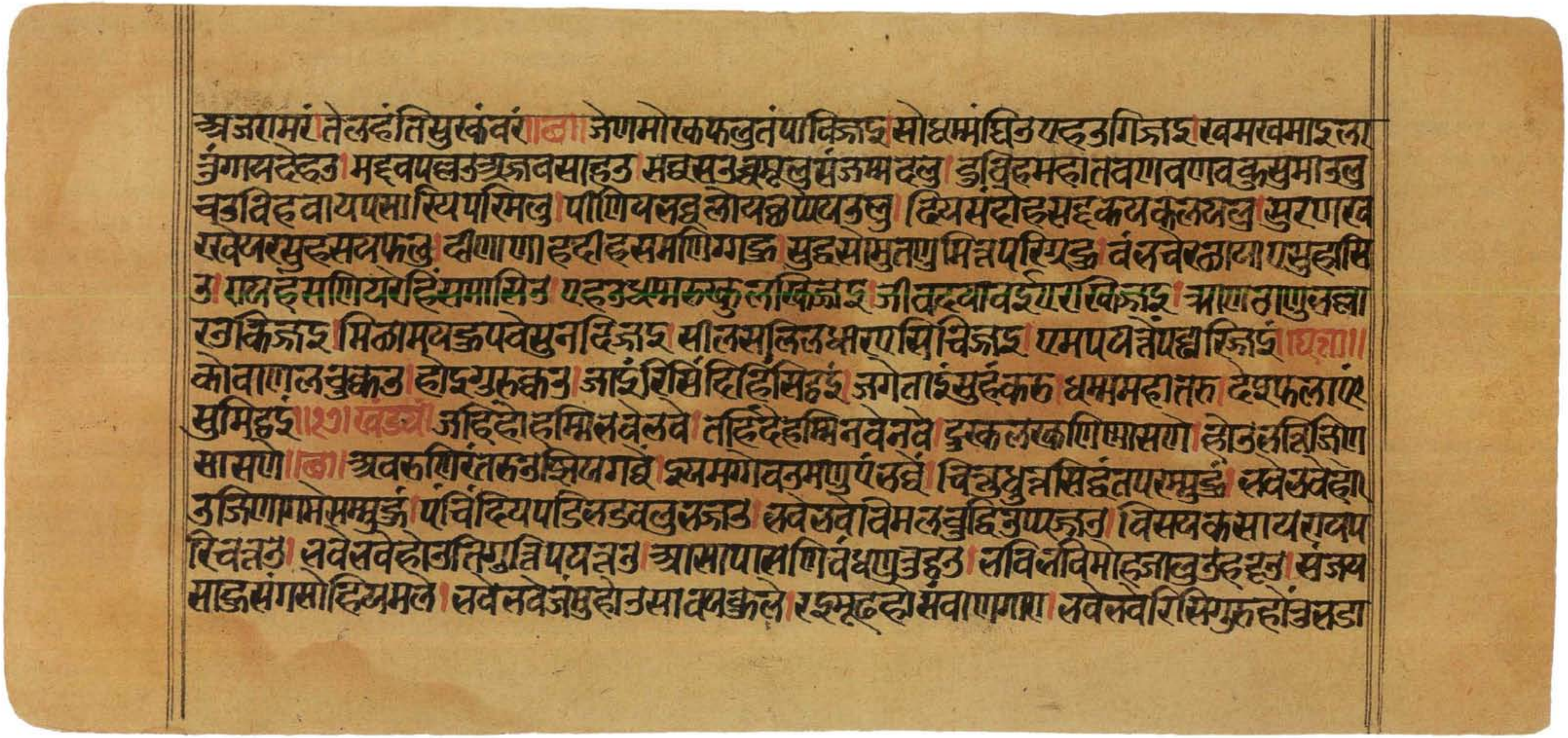

अजर-अमर श्रेष्ठ सुख प्राप्त करते हैं। जिससे मोक्षरूपी फल प्राप्त किया जाता है वह धर्मरूपी वृक्ष इस प्रकार वर्णित किया जाता है। उसका शरीर क्षमारूपी पृथ्वीतल से उत्पन्न है। मार्दव उसके पत्ते हैं, आर्जव उसकी शाखाएँ हैं, सत्य और शौच उसकी जड़ है, संयम उसका दल है, वह दो प्रकार के महातप रूपी नवकुसुमों से व्याप्त है, जिसका चार प्रकार के त्याग का परिमल प्रसारित हो रहा है और जो भव्य लोकरूपी भ्रमरकुल को प्रसन्न करता है, जिसमें मुनि समूह के शब्दों की कलकल ध्वनि हो रही है, जो सुरवर, विद्याधर और मनुष्यों को शतशुभ फल देनेवाला है, दीन और अनाथों के दीर्घ श्रम का निग्रह करनेवाला है, जो शुद्ध, सौम्य और शरीर मात्र का परिग्रह रखनेवाला है, जो ब्रह्मचर्य की छाया (कान्ति) से शोभित है, राजहंसों के समूह से समादृत है। इस धर्मरूपी वृक्ष को देखना चाहिए और जीवदयारूपी वृत्ति (बागड़) के द्वारा रक्षा करनी चाहिए। उसे ध्यानरूपी स्थाणु का सहारा देना चाहिए, मिथ्यात्वरूपी पशुओं को उसके पास प्रवेश नहीं देना चाहिए, शीलरूपी जल की धारा से उसका सिंचन करना चाहिए। इस प्रकार प्रयत्नपूर्वक उसे बढ़ाना चाहिए।

घत्ता—क्रोधरूपी ज्वाला से बचने पर यह धर्मरूपी वृक्ष शीघ्र बड़ा हो जाता है, जिनकी रचना ऋषीन्द्रों ने की है, जग में उन अत्यन्त मीठे फलों को यह शुभंकर धर्मरूपी महावृक्ष देता है ॥ १७ ॥

१८

मैं जन्म-जन्म में जहाँ होऊँ, वहाँ नये-नये शरीर में लाखों दुःखों का नाश करनेवाले जिनशासन की भक्ति हो। धूर्तों के सिद्धान्तों से पराङ्मुख चित्त जन्म-जन्म में जिनागम के सम्मुख हो। पंचेन्द्रिय प्रतिशत्रुओं का बल नष्ट हो, जन्म-जन्म में विमल बुद्धि उत्पन्न हो, विषयकषाय और राग भाव से परित्यक्त तीन गुप्तियाँ जन्म-जन्म में हों। जन्म-जन्म में आशापाश का बन्धन टूटे और मोहजाल कम हो। संयमी साधुओं के संग से शोधित श्रावक कुल में मेरा जन्म, जन्म-जन्म में हो। अनुरक्त मूर्खों को सम्बोधित करनेवाले आदरणीय ऋषि जन्म-जन्म में मेरे गुरु हों।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

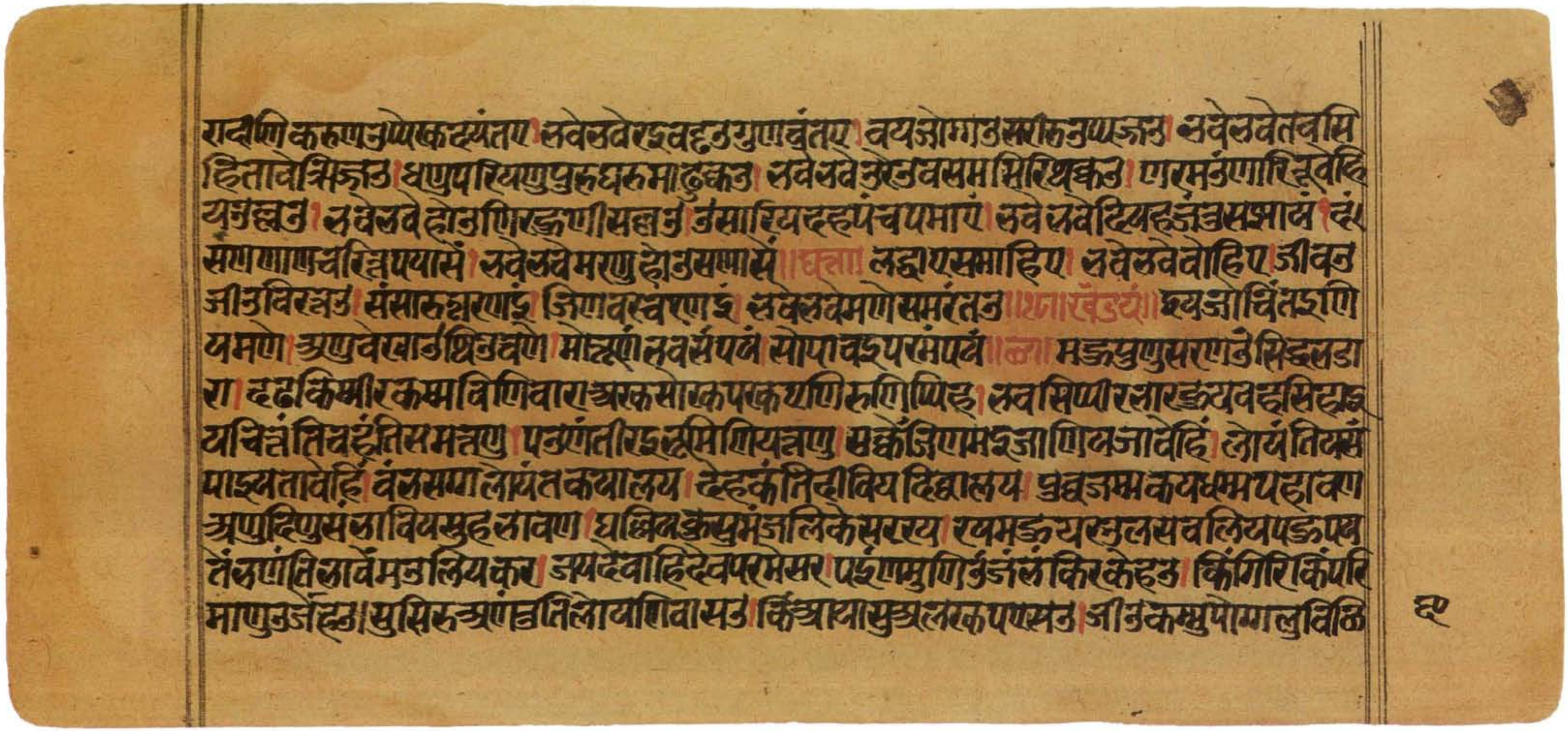

दीन में करुणा, दशाशून्य में उपेक्षा और गुणवान् में मेरी रति भव-भव में बढ़े। जन्म-जन्म में तप की आग से क्षीण मेरा शरीर व्रत के योग्य हो। जन्म-जन्म में धन-परिजन, पुर और घर उपस्थित न हो, उपशमश्री मेरे मन में स्थित हो। मेरा हृदय नारी के रूप में न रमे, भव-भव में वह निष्पाप और इच्छाओं से शून्य हो। पाँच प्रकार के प्रमादों को दूर हटानेवाले सत् ध्यान में जन्म-जन्म मेरे दिन जायें, दर्शन, ज्ञान और चरित को प्रकाशित करनेवाले संन्यास से मेरा मरण जन्म-जन्म में हो।

घत्ता—भव-भव में रत्नत्रय की एकता और प्राप्ति में विरक्त जीव जीवित रहे। संसार से उतारनेवाले जिनवर के चरणों को जन्म-जन्म में मन में स्मरण करता रहूँ॥ १८॥

१९

इस प्रकार जो वन में स्थित होकर अपने मन में अनुप्रेक्षाओं का चिन्तन करता है वह भव-सम्पदा को छोड़कर परमपद को प्राप्त करता है। मेरे लिए दृढ़ और विचित्र कर्मों का निवारण करनेवाले, इन्द्रियों के सुख वर्ग में अत्यन्त निस्पृह, संसाररूपी तृणभार के लिए अग्निज्वाला के समान, आदरणीय सिद्ध मेरे लिए शरण हों। यह सोचते हुए और सम्यक्त्व धारण करते हुए एवं रतिभूमि का निवर्तन करते हुए, जिनकी बुद्धि को जैसे ही इन्द्र ने जाना वैसे ही लौकान्तिक देव वहाँ आ पहुँचे। जिनका घर ब्रह्मस्वर्ग का लोकान्त था, जो शरीर की कान्ति से दिव्यालय को आलोकित करनेवाले थे, पूर्वजन्म में धर्म की प्रभावना करनेवाले, प्रतिदिन शुभभावनाओं की सम्भावना करनेवाले, और जो फेंकी गयी कुसुमांजलि की केशर रज में लीन मधुकर कुल से जिनचरणों को शवलित करनेवाले थे। भावपूर्वक हाथ जोड़कर वे कहते हैं—''हे देवाधिदेव परमेश्वर, आपकी जय हो। जिसको आप नहीं जानते, वह कैसा है, क्या गिरि के समान है, या परमाणु जैसा। अलोकाकाश और त्रिलोक का निवासभूत लोकाकाश क्या अलक्ष्य प्रदेश है? जीवकर्म पुद्गल का विस्तार,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

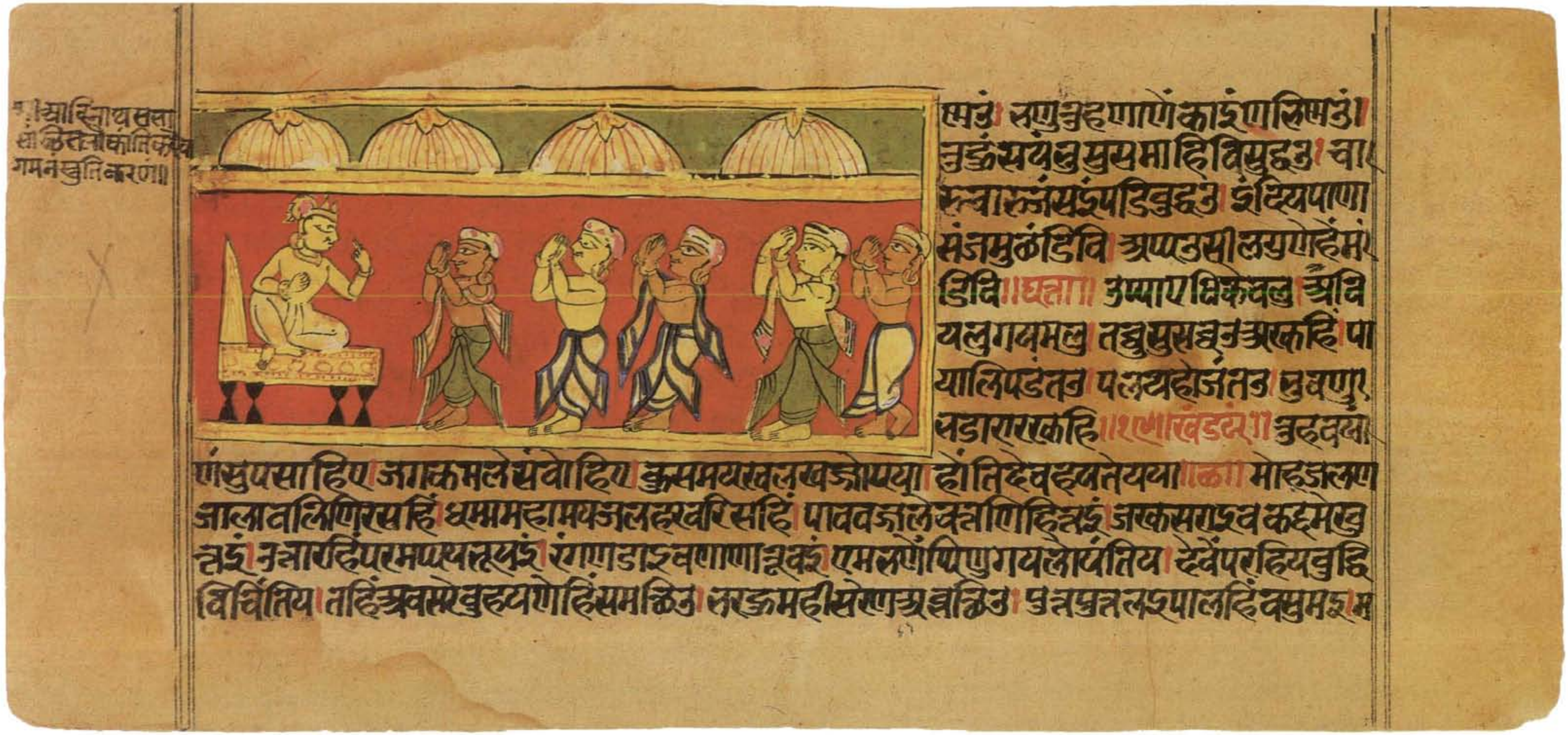

बताओ तुम्हारे ज्ञान को क्या ज्ञात नहीं है? अपनी समाधि से विशुद्ध तुम स्वयम्भू हो, यह सुन्दर हुआ जो आप स्वयं प्रबुद्ध हो गये, इन्द्रिय और प्राणों के संयम को छोड़कर, अपने आपको शीलगुणों से अलंकृत कर—

घत्ता—अविकल केवलज्ञान को प्राप्त कर गतमल सच्चा सत्त्व कहिए। पाताललोक में गिरते हुए और प्रलय को प्राप्त इस विश्व को, हे आदरणीय, बचाइए॥ १९॥

२०

आपकी वचनरूपी किरणों से प्रसाधित विश्वकमल के प्रबुद्ध होने पर, हे देव, मिथ्यामत और दुष्टरूपी खद्योत हततेज हो जायेंगे। मोहरूपी ज्वालावली को हटाइए, और धर्मामृतरूपी मेघों की वर्षा कीजिए। पापरूपी वज्रलेप से लिप्त बूढ़े गरियाल बैल के समान, (भव-) कीचड़ में फँसे हुए तथा रंगनट की तरह नानारूप धारण करनेवाले प्राणियों का उद्धार कीजिए।'' यह कहकर लौकान्तिक देव चले गये। दूसरे के कल्याण की बुद्धिवाले देव ने विचार किया। उस अवसर पर बुधजनों के द्वारा समर्थित भरत महीश्वर से अभ्यर्थना की, ''पुत्र, पुत्र, लो, अब तुम पृथ्वी का पालन करो,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मैं पाँचवीं गति (मोक्षगति) का साधन करूँगा।'' यह सुनकर कुमार बोला, ''हे देवदेव, यह क्या अयुक्त कहते हैं, तुम्हारे खाने से छोड़े गये आहार में जो सुख है, वह सुख भोजन के विस्तार में नहीं है; तुम्हारे आसन के निकट बैठने में जो सुख है वह सुख सिंहासन पर बैठने में नहीं है। तुम्हारे सामने दौड़ते हुए मुझे जो सुख है वह सुख हाथी के कन्धों पर जाते हुए नहीं है। तुम्हारे पैरों की छाया ने मुझमें जो सुख प्रकट किया है, छत्र की छाया से वह सुख मुझे प्राप्त नहीं है। मन्त्री और महासेनापति के द्वारा पूज्य तुम्हारे नहीं रहने पर, हे तात राज्य से क्या?''

घत्ता—यह जानकर जिनेश्वर ने विशेष रूप से कहा—''यदि तुम्हें राजा का पद अच्छा नहीं लगता तो जबरदस्ती भयंकर युद्ध कर मछली के द्वारा मछली की तरह एक दूसरे को खा जायेंगे॥ २०॥

२१

इसलिए तुम धरती का पालन करो, न्याय-अन्याय को देखो। राजा के शासन को स्वीकार करो—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

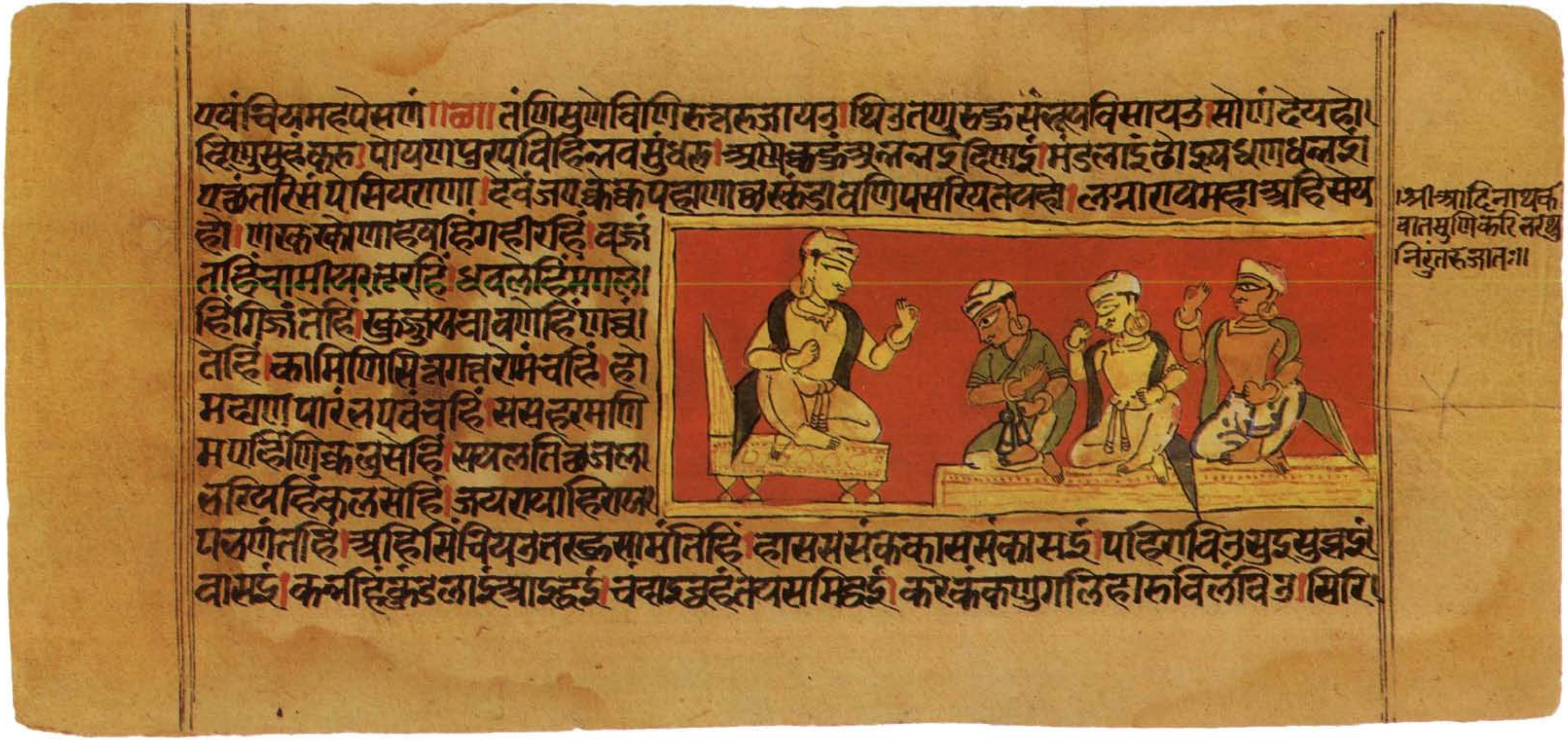

मेरा तुम्हें यह आदेश है।'' यह सुनकर भरत निरुत्तर हो गया। वह विषाद से खिन्न रह गया। सुनन्दा के पुत्र बाहुबलि को धरती विभक्त शुभ पोदन दिया गया। दूसरे-दूसरे पुत्रों को धन-धान्य से परिपूर्ण दूसरे-दूसरे मण्डल दिये गये। इस बीच राजाओं को प्रेषित किया गया, जो एक से एक प्रधान थे, छह खण्ड धरती में प्रसारित है तेज जिसका, ऐसे राज्याभिषेक में लग गये। मनुष्यों के हाथों द्वारा डण्डे (वादन-काष्ठ) से आहत, बजते हुए स्वर्ण तूर्यों, गाये जाते हुए धवल मंगल गीतों, नृत्य करते हुए कुब्जों और बौनों, स्त्रियों और मित्रों के शरीर रोमांचों, होम और दान के प्रारम्भ के विस्तारों तथा स्फटिक मणियों से निर्मित, निष्कलुष समस्त तीर्थों के जलों से भरे हुए कलशों के साथ 'जय राजाधिराज' कहते हुए सामन्तों ने भरत का अभिषेक किया। और हास्य चन्द्रमा और काश के समान (धवल) पवित्रता से बनाये गये वस्त्र उन्हें पहना दिये गये, सूर्य और चन्द्रमा के तेज से समृद्ध कुण्डल कानों में बाँध दिये गये; हाथों में कंगन और गले में हार पहना दिया गया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और सिर पर मधुकरों के मुखों से चुम्बित शेखर। रत्नकिरणों से चमकता हुआ कटिसूत्र कमर में छुरी के साथ बाँध दिया गया। उरतल पर सुन्दर ब्रह्मसूत्र (यज्ञोपवीत) चढ़ा दिया गया। तिलक तीसरे नेत्र के समान दिखाई दिया। सिंह, हाथी, चन्द्रमा और सूर्य के रूपों से निबद्ध विमल चिह्न (कुलचिह्न) उठा लिये गये। मल से रहित धवल छत्र ऐसे प्रतीत होते थे, मानो जिनेन्द्र की कीर्तिरूपी कमलिनी के कमल हों। मदगज, लक्षणोंवाले घोड़े, ग्रह और विचक्षण कानीन (कन्यापुत्र) पूजे गये।

घत्ता—स्वामी के इन अनुराग चिह्नों और आशीर्वाद वचनों के निर्घोषों के साथ राजाओं ने पट्ट ऊँचा किया और पृथ्वी के राजा श्री भरतकुमार को बाँध दिया॥ २१ ॥

२२

विश्व के द्वारा प्रशंसित तथा सिंहासन के शिखर पर आसीन वह ऐसा शोभित होता है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

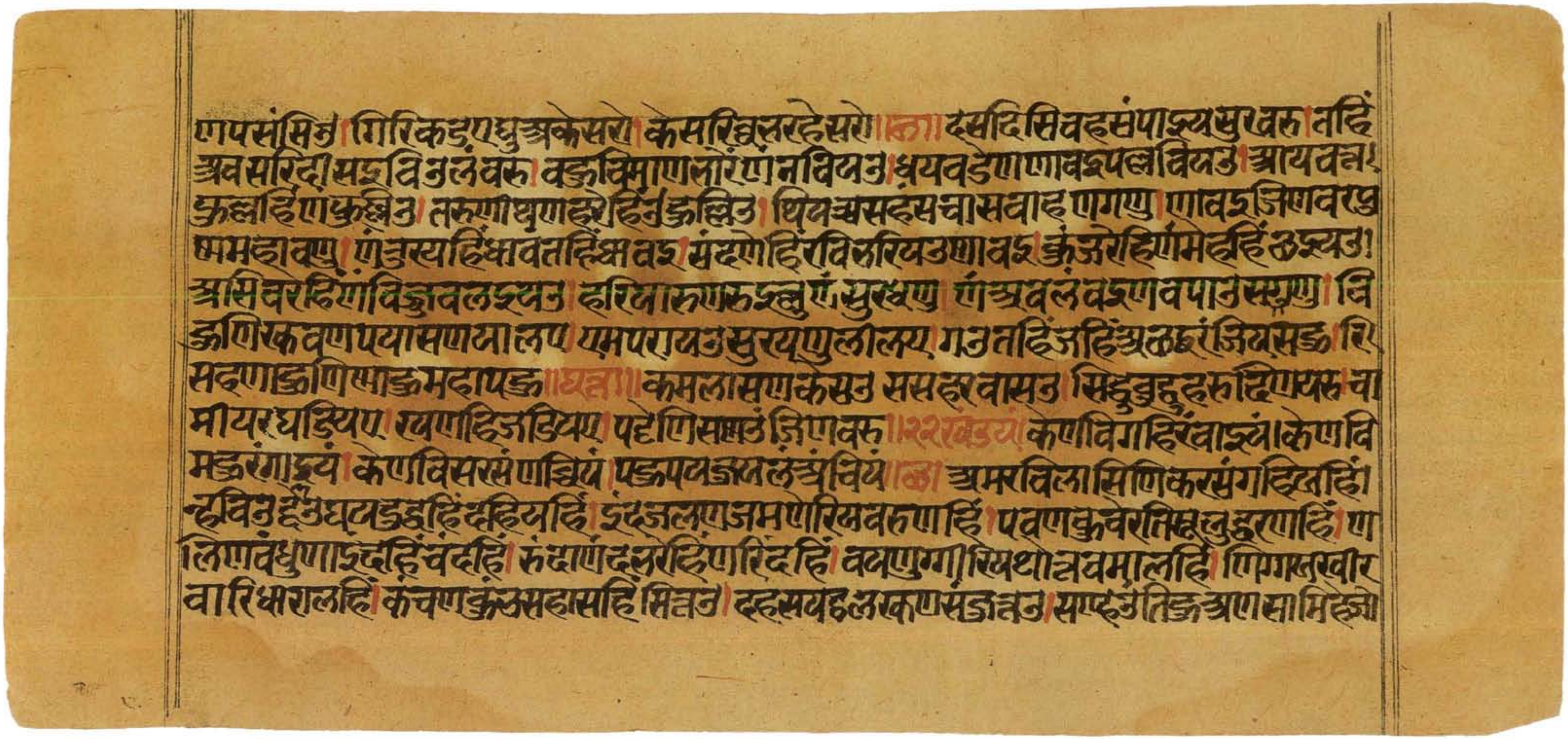

जैसे पर्वत शिखर पर अयाल हिलाता हुआ सिंह हो। जिसमें दसों दिशाओं के देव आये हुए हैं ऐसा विशाल आकाश उस अवसर पर ऐसा लगता था मानो अनेक विमानों के भार से झुक गया हो। ध्वजपटों से मानो पल्लवित हो उठा हो, फूलों से खिला हुआ आतपत्र हो, मानो तरुणीजन के स्तनोंरूपी फलों से अवनत हो। जिसमें मत्स्य, हंस और चातकगण स्थित हैं ऐसा आकाश, जिनवर के पुण्यरूपी महासमुद्र के समान दिखाई देता है। वह मानो दौड़ते हुए अश्वों से दौड़ता है, स्यन्दनों (रथों) द्वारा सूर्यों से भरा हुआ जान पड़ता है, हाथियों के द्वारा मेघों से आच्छादित और तलवारों के द्वारा बिजलियों से चमकता हुआ, हरी और लाल कान्तियों के द्वारा, इन्द्रधनुष के समान जान पड़ता है, जो मानो नवपावस के गुण को धारण करना चाहता है। इस प्रकार देव विविध लीलाओं के साथ वहाँ पहुँचे जहाँ सभा को रंजित करनेवाले सबके नाथ महाप्रभु ऋषभनाथ बैठे हुए थे।

घत्ता—ऋषभ जिनवर (जो विष्णु, केशव, सिद्धबुद्ध, शिव और सूर्य हैं) स्वर्ण रचित एवं रत्नजड़ित पट्ट पर आसीन थे॥ २२॥

२३

किसी ने गम्भीर वाद्य बजाया, किसी ने मधुर गाना गाया। किसी ने सरस नृत्य किया, और प्रभु के चरणकमलों की पूजा की। देवस्त्रियों के हाथों में धारण किये गये घी, दूध और दही से शरीर का स्नान कराया गया। इन्द्र, अग्नि, नैऋत्य और यम, वरुण, कुबेर, त्रिशूल धारण करनेवाले शिव, सूर्य, नागेन्द्र, चन्द्र तथा महाआनन्द से भरे हुए राजाओं के द्वारा, मुखों से निकलते हुए स्तोत्रों के कोलाहलों तथा दूध और जल की गिरती हुई हजारों धाराओं से युक्त हजारों स्वर्णकलशों से एक हजार आठ लक्षणों से युक्त जिनका अभिषेक किया गया। फिर शरीर में लगे हुए के समान जिनवर स्वामी के योग्य सूक्ष्म वस्त्र का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

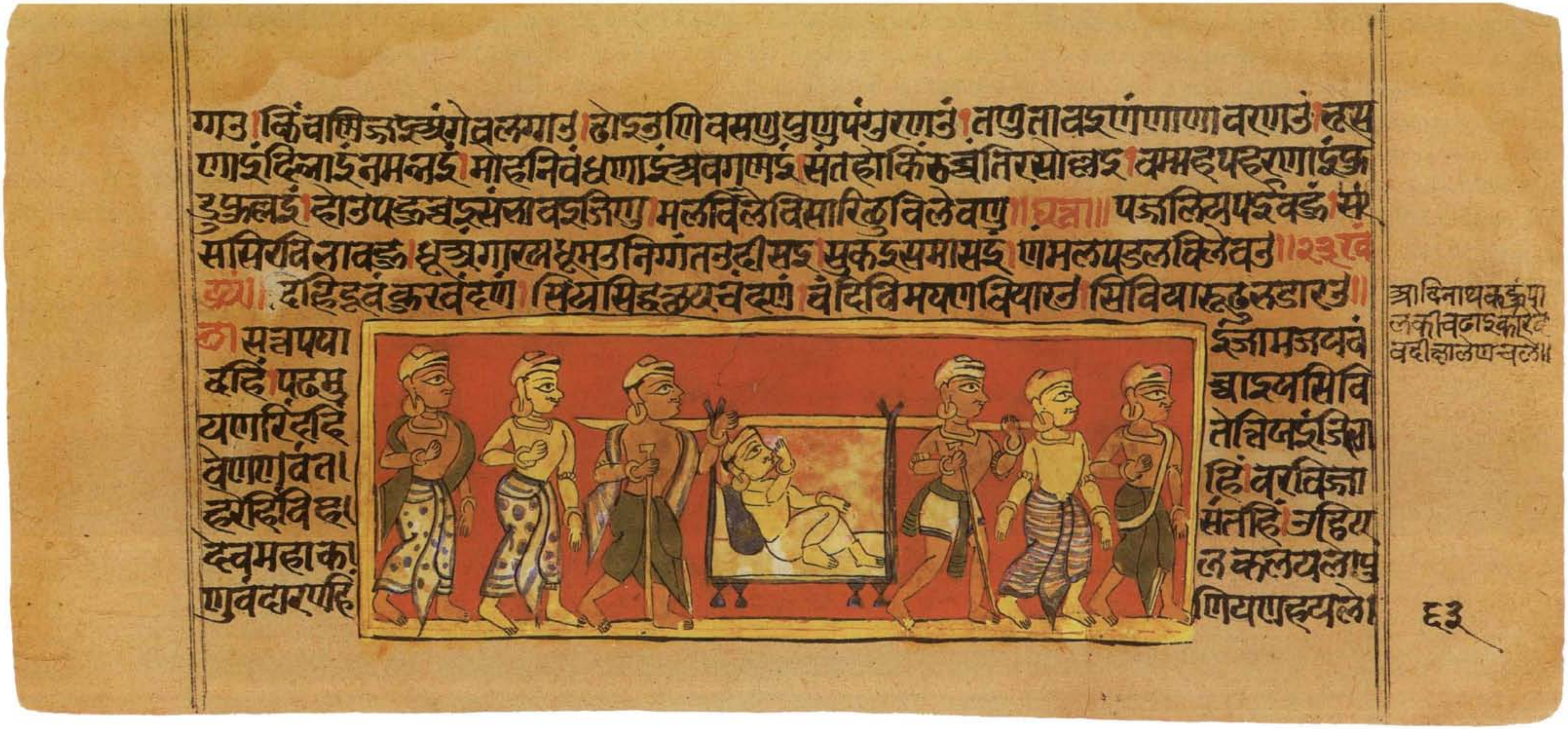

क्या वर्णन किया जाये? लाया गया और पहना गया वह, शरीर को इस प्रकार सन्तप्त करता है मानो ज्ञानावरण कर्म हो। दिये गये आभूषणों को वह स्वीकार नहीं करते, उनकी मोह के बन्धनों की तरह उपेक्षा करते हैं, रस से आर्द्र, काम के प्रहरण (शस्त्र) पुष्प सन्त को किस प्रकार अच्छे लग सकते हैं। यह काफी है। जिन विलेपन की सम्भावनाएँ, मलविलेप की सदृशता के रूप में करते हैं।

घत्ता—चन्द्रमा और सूर्य के समान कान्तिवाले प्रज्वलित प्रदीपों से निकलता हुआ धूप के अंगारों का धुआँ ऐसा दिखाई देता है मानो सुकवि मलपटल विशेष को बाँट रहा है॥ २३॥

२४

दही, दूर्वांकुर और चन्दन, श्वेत सिद्धार्थ (पीला सरसों) और रक्त चन्दन की वन्दना कर कामदेव का नाश करनेवाले आदरणीय ऋषभ पालकी में बैठ गये। अब विश्ववन्द्य नरेन्द्रों ने सात कदमों तक शिविका को उठाया। उतने ही कदम भावपूर्वक नमस्कार करते हुए और हँसते हुए विद्याधरों ने उठायी। हो रहा है देवों का महान् आकुल कुल-कुल शब्द जिसमें ऐसे आकाश में फिर देवगण उसे ले गये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

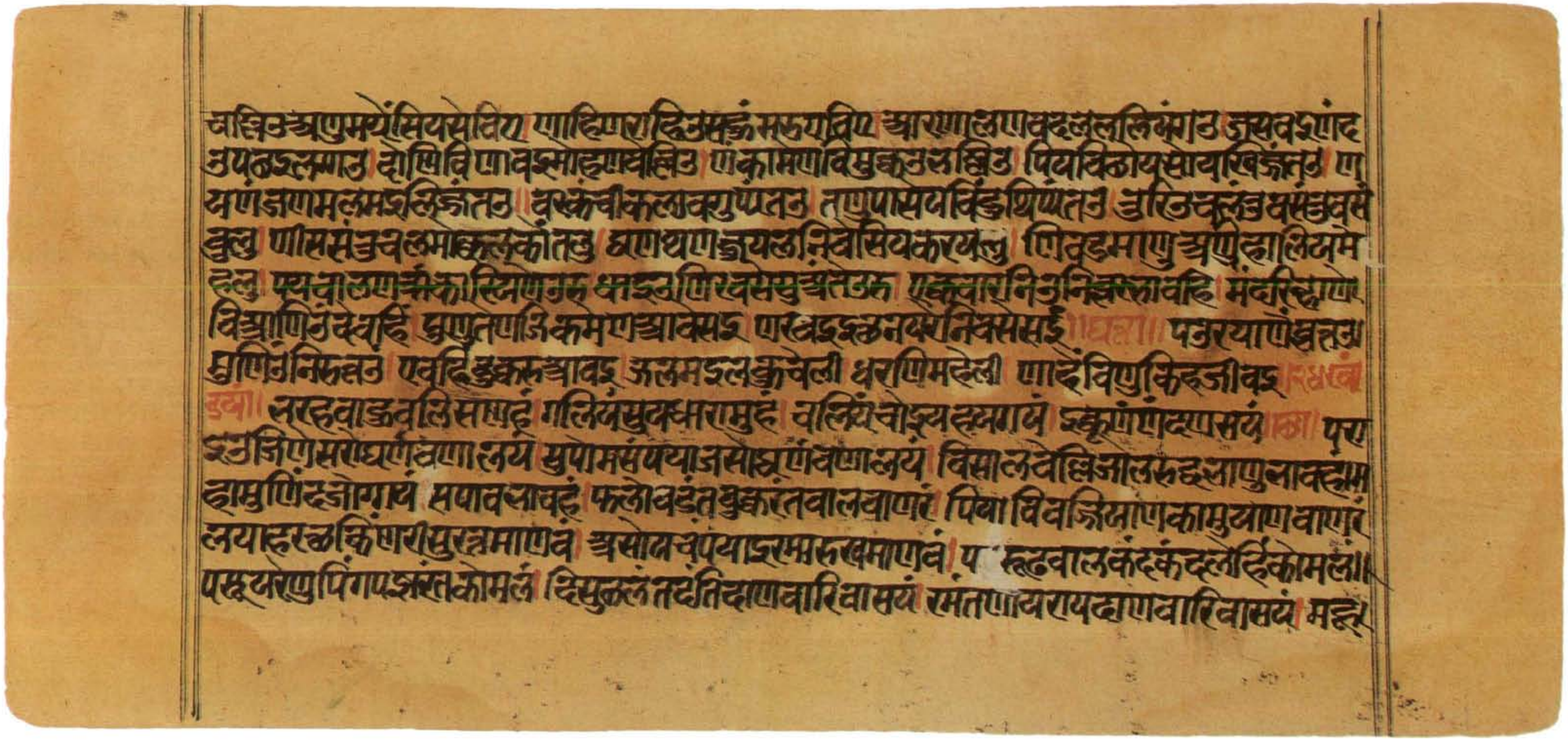

उसके पीछे-पीछे श्री से सेवित मरुदेवी के साथ नाभि राजा चले। कमल के नवदलों के समान सुन्दर अंगवाली यशोवती और सुनन्दा भी पीछे लग गयीं। मोह से नवेली दोनों ऐसी लगती थीं मानो काम ने दो बरछियाँ (भल्लियाँ) छोड़ी हों। प्रिय के विछोह के शोक से खेद को प्राप्त होता हुआ, नेत्रों के अंजनमल से मैला होता हुआ, श्रेष्ठ कटिसूत्रों के समूह से गिरता हुआ, शरीर के प्रस्वेद बिन्दुओं से आर्द्र होता हुआ, शीघ्र चलता हुआ, स्खलित होता हुआ, शिथिल नि:श्वास लेता हुआ, चंचल और बिखरे हुए बालोंवाला, सघन स्तन युगल पर करतल रखता हुआ, गिरने से धरती को कँपाता हुआ, पैरों के संचालन से नूपुरों को झंकृत करता हुआ समस्त अन्त:पुर दौड़ा। एक बार परिपूर्ण भावोंवाले देवों के द्वारा ले जाये गये थे और अभिषेक के बाद प्रासाद में ले आये गये थे। फिर इसी क्रम से वह आयेंगे और राजा ऋषभ इसी नगर में रहेंगे।

घत्ता—पौरजनों ने यह कहा और अपने मन में सोचा कि अब उनका आना कठिन है। जड़, मैले और खराब वस्त्र धारण करनेवाली धरतीरूपी महिला स्वामी के बिना कैसे जीवित रह सकती है॥ २४॥

२५

जो भरत और बाहुबलि के समान हैं, जिनके मुख से अश्रुधारा बह रही है, और जिन्होंने हाथी और घोड़ों को प्रेरित किया है, ऐसे एक कम सौ, अर्थात् निन्यानवे पुत्र चले। जिनेश्वर ऋषभ उस वन में पहुँचे, जो आम्र और नालक वृक्षों से सघन था, जो अच्छे पत्तोंवाले लक्ष्मी वृक्षों से शोभित था, जिसमें विशाल लताजाल से सूर्य की आभा का पथ रोक दिया गया था। जो महामुनियों के योग्य था, जो पापभाव का नाश करनेवाला था, जिसमें फलों के ऊपर गिरते हुए बाल वानरों की आवाजें हो रही थीं, जो अपनी प्रियतमाओं से रहित कामुकों के लिए बाणभेदन करनेवाले थे, जिसमें लतागृहों में रहनेवाली किन्नरियों से मनुष्य अनुरक्त हैं, अशोक और चम्पा वृक्षों की अत्यन्त रमणीय शोभा से नया दिखाई देता था, जो उगे हुए बालकन्दों के अंकुरों से कोमल है, जहाँ कुसुमों के पराग से मिश्रित जल बह रहा है, जो दिशाओं में उछलते हुए हाथियों के मदजलों से सुवासित है। क्रीड़ा करते हुए नागराजों, दानवों और शत्रुओं का जिसमें निवास है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

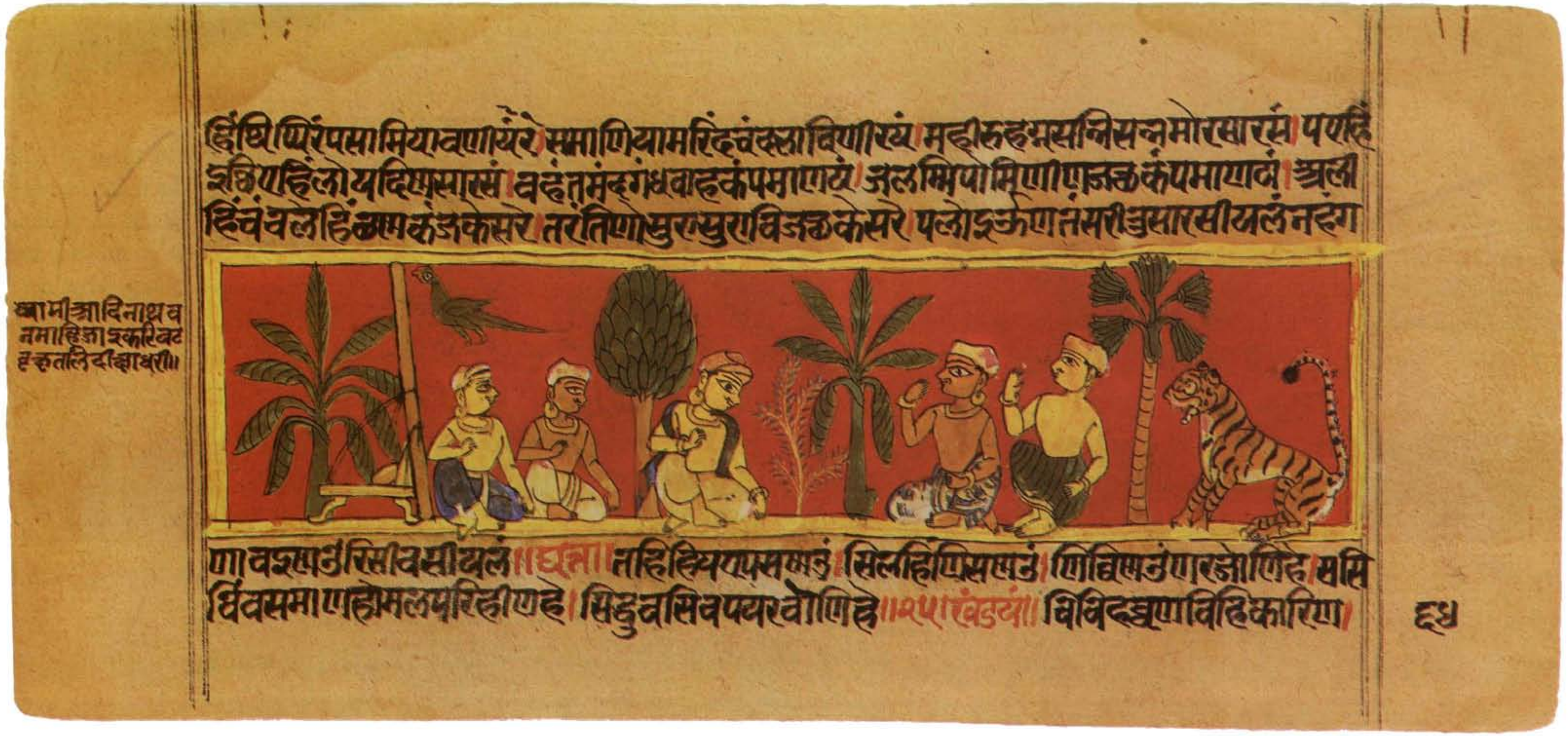

जो मधुओं से लथपथ है, जिसमें धरती की धूल शान्त है, जिसमें इच्छुक प्रजाओं को अपना धन दिया गया है, जो बहती हुई हवा से प्रकम्पमान है, जिसके जलाशयों में कमलिनियों की कोई सीमा नहीं है, जहाँ भ्रमरों से आच्छन्न तथा पराग से युक्त सरोवरों में कौन सुर और असुर नहीं तैरता, जो गंगा के तुषार की तरह शीतल था, ऐसे उस वन को देखकर जितेन्द्रिय ऋषि ऋषभनाथ आकाश के आँगन से उतरकर—

घत्ता—वहाँ शिलापर बैठे हुए हृदय में प्रसन्न वह मनुष्य योनि से उदासीन हो गये और सिद्ध के समान शशिबिम्ब के सदृश मल से रहित शिवपदभूमि के लिए उत्सुक हो उठे॥ २५ ॥

२६

विविध पूजा विधियों को करनेवाले

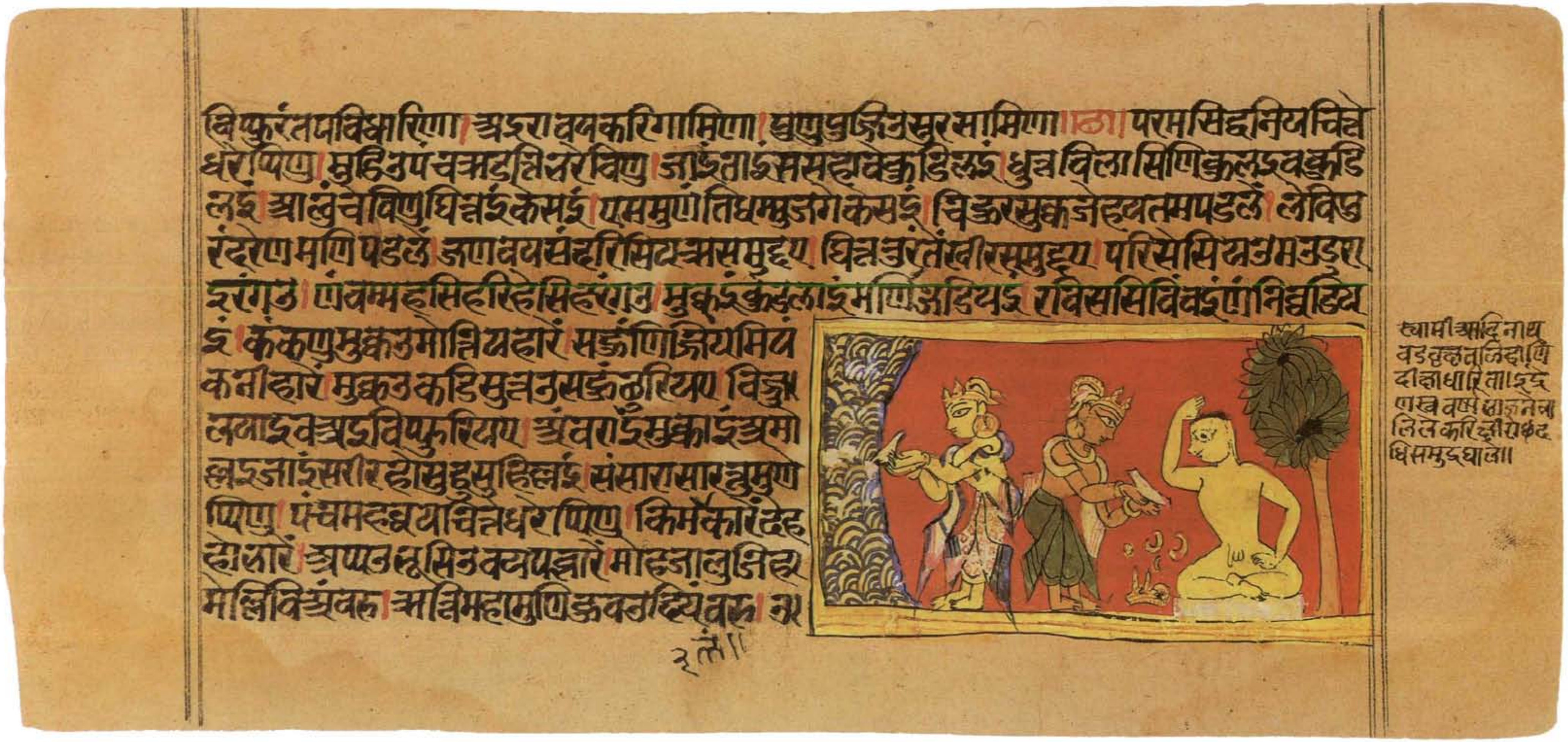

और चमकते हुए वज्र के धारक ऐरावतगामी इन्द्र ने फिर उनकी पूजा की। परमसिद्धों को अपने मन में धारण कर और शीघ्र ही पाँच मुट्ठियों में भरकर, जितने भी धूर्त विलासिनियों के समान कुटिल बाल थे, उन्हें उन्होंने उखाड़ दिया। संसार में इस प्रकार कौन लोग धर्म का स्वयं विचार करते हैं। जो केश उखाड़े गये थे, उन्हें तमसमूह को नष्ट करनेवाले मणिपटल में रखकर जनपदों को मत्स्यमुद्रा नहीं दिखानेवाले क्षीरसमुद्र में इन्द्र ने फेंक दिया। रति से क्रीड़ा करनेवाला मुकुट छोड़ दिया मानो कामदेव के शिखर का अग्रभाग फेंक दिया गया हो। मणिजड़ित कुण्डल छोड़ दिये गये मानो रवि और शशि के बिम्ब गिर गये हों। मोतियों के हार ने कंकण छोड़ दिया जैसे नीहार के साथ चन्द्रमा जीत लिया गया हो। क्षुरिका के साथ कटिसूत्र छोड़ दिया गया मानो आकाश में चमकती बिजली हो। अमूल्य वस्त्र छोड़ दिये गये जो शरीर के लिए अत्यन्त सुहावने लगते थे। संसार की असारता का विचार कर पाँच महाव्रतों को चित्त में धारण कर देह के भारस्वरूप अलंकार से क्या? व्रत के प्रभार से उन्होंने अपने को विभूषित किया। मोहजाल की तरह वस्त्रों को छोड़कर वह शीघ्र ही दिगम्बर महामुनि हो गये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वसन्त माह के कृष्णपक्ष की नौवीं के दिन उत्तराषाढ़ नक्षत्र में उन्होंने दो प्रकार का संयम अपने मन में स्वीकार कर लिया। इन्द्र, अग्नि और यम अपने घर चले गये। नियमों में स्थित स्वामी की प्रदक्षिणा कर और भी दूसरे लोग अपना माथा झुकाते हुए (चले गये)। पत्नियाँ जिनकी ओर स्नेहभाव से देख रही हैं ऐसे चालीस सौ राजा तत्काल दीक्षित हो गये। अजयमल्ल वह मधुपुर पहुँचे। बाहुबलि भी अपने नगर में चला आया। नेत्रों को आनन्द देनेवाले वृषभसेन आदि दूसरे पुत्र भी तथा प्रिय की विरहाग्नि से अत्यन्त सन्तप्त अशेष नारीजन भी लौट आया। यदि नागराज उसका वर्णन कर सका तो वह उन नाभिराज के साथ ही।

घत्ता—विश्व के लिए भयजनक युद्ध के नगाड़ों का स्वर भरत क्षेत्र की दिशाओं में गुँजाता हुआ पुष्पदन्त भरतेश्वर जाकर शत्रुओं के लिए अग्राह्य अयोध्या नगरी में स्थित हो गया॥ २६ ॥

इस प्रकार त्रेसठ शलाकापुरुषों के गुणों और अलंकारों से युक्त महापुराण के महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य में जिनदीक्षा ग्रहण कल्याण नाम का सातवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

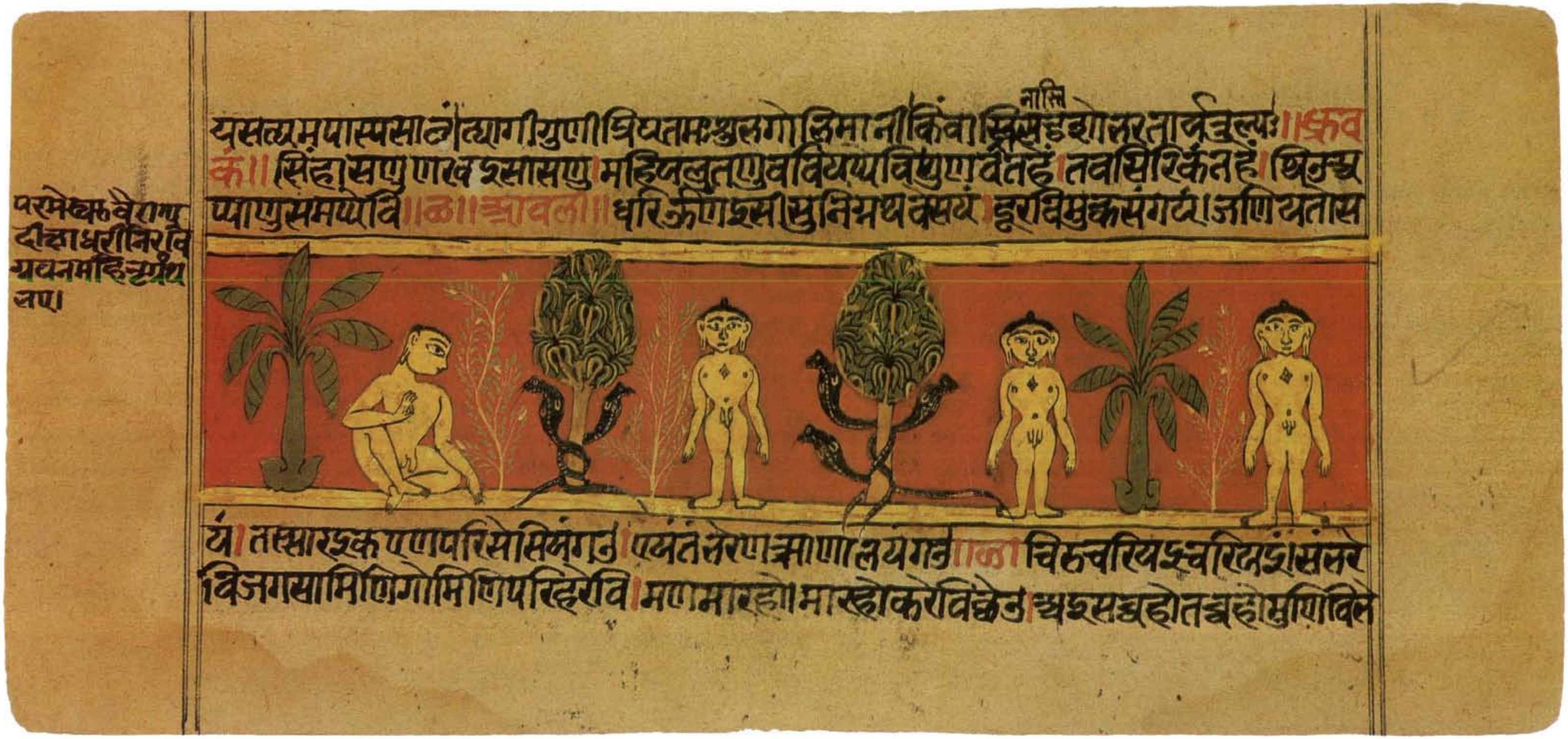

सन्धि ८

१

सिंहासन, नरपतिशासन, महीतल और शरीर का विचार नहीं करते हुए, गुणवती तपोलक्ष्मीरूपी कान्ता के लिए उन्होंने अपने आपको सौंप दिया। दूर से छोड़ दिया गया है परिग्रह जिसमें, तथा जो सन्तोष देनेवाला है, ऐसे परम दिगम्बर स्वरूप को धारण कर, शरीर की ममता छोड़नेवाले महामुनि ऋषभ, तपस्यारूपी कान्ता के लिए, एकनिष्ठ होकर ध्यानालय में चले गये। पुराने आचरित चरितों की याद कर, लक्ष्मी तथा धरती का परित्याग कर, मन मारनेवाले काम का अन्त कर, अत्यन्त सत्य तत्त्व का रहस्य समझकर,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

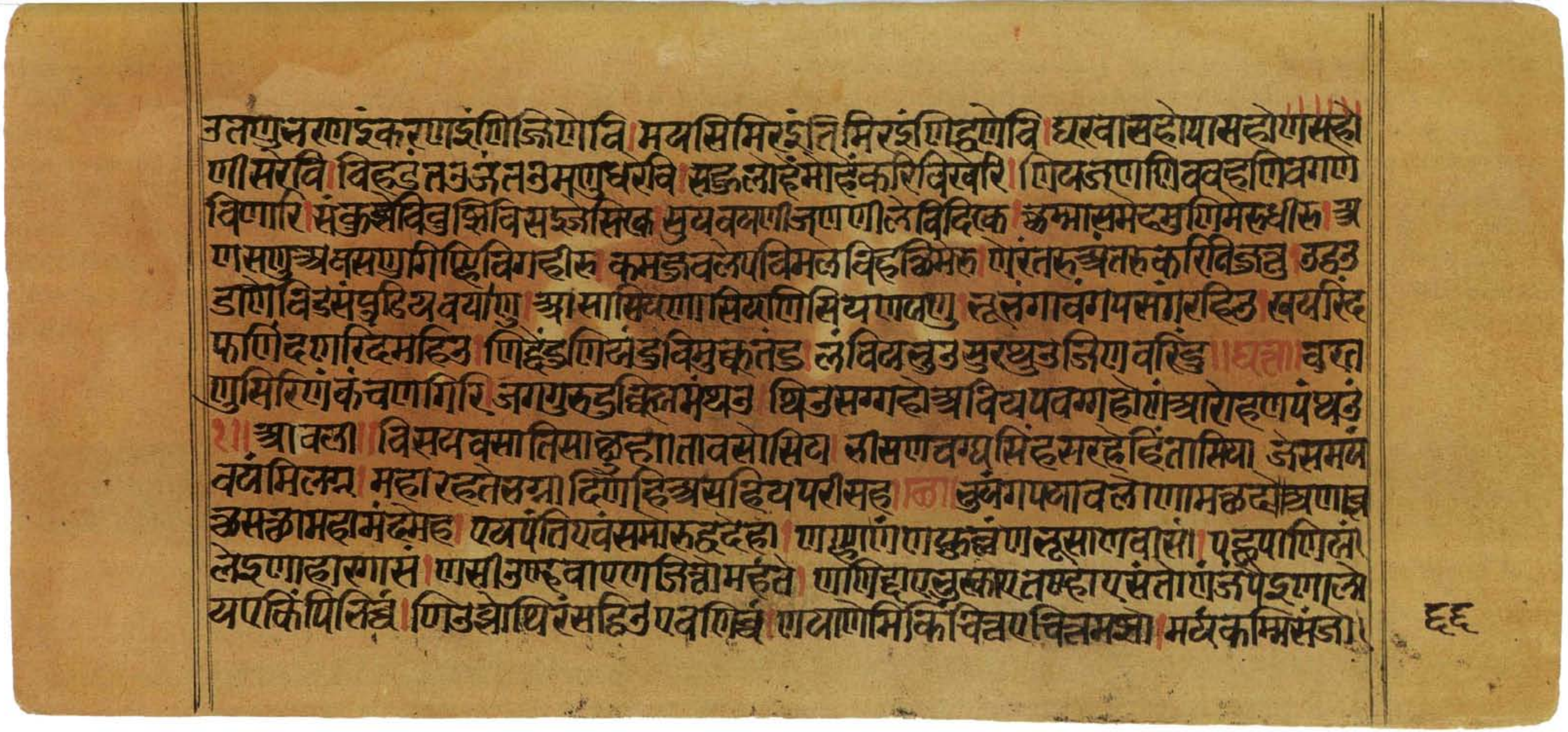

शरीर का पोषण करनेवाली इन्द्रियों को जीतकर, मद की सेना और अन्धकार को नष्ट कर, गृहवास के बन्धन से निकलकर, विघटित होते हुए मन को धारण कर, लोभ और मोह के साथ वैर का अन्त कर, नारी को अपनी माँ और बहन के समान समझकर, शंका छोड़कर स्वयं शिक्षाओं को समझते हुए, श्रुत वचनोंवाली जैन दीक्षा लेकर, छह माह की मर्यादावाला कठोर अनशन लेकर, मेरु के समान धीर और गम्भीर, पवित्र दोनों पैरों के मध्य एक बीता (बालिश्त) अन्तर रखकर, छिद्ररहित ओठपुट से मुख को बन्द कर, मुखपर आश्रित नाकपर नेत्रों को धारण कर, भ्रूभंग और कटाक्षों के प्रसंगों से रहित, नागेन्द्रों, विद्याधरेन्द्रों और नरेन्द्रों द्वारा पूजित, निर्द्वन्द्व, आलस्य से रहित लम्बे हाथ किये हुए मनुष्य-श्रेष्ठ वह जिनवरेन्द्र देवों के द्वारा संस्तुत थे।

घत्ता—श्रेष्ठ शरीर की शोभा में जो मानो कंचनगिरि के समान थे पापों का नाश करनेवाले वह जगद्‌गुरु इस प्रकार स्थित थे मानो वह स्वर्ग और मोक्ष के लिए चढ़ने का मार्ग हो॥ १॥

२

जिन महारथियों ने उनके साथ व्रत ग्रहण किये थे, विषयों के वशीभूत वे प्यास-भूख के सन्ताप से शोषित तथा भीषण बाघों, सिंहों और शरभों के द्वारा सन्त्रस्त होकर कुछ ही दिनों में परीषह नहीं सहने के कारण शीघ्र भ्रष्ट हो गये। शास्त्रों का अभ्यास नहीं करनेवाले महामन्द बुद्धि तथा श्रम से अवरुद्ध शरीरवाले वे इस प्रकार कहने लगे, ''न स्नान, न फूल, न भूषा और न वास, प्रभु न पानी लेते हैं और न आहार का कौर। वह महान् शीत और उष्ण हवा के द्वारा भी नहीं जीते जाते और न नींद, भूख और प्यास से श्रान्त होते हैं। किसी अनुचर से न बोलते हैं और न किसी भृत्य को देखते हैं, अपने हाथ ऊपर किये हुए वह इस प्रकार नित्य स्थित रहते हैं। मैं नहीं जानता कि वह अपने चित्त में क्या सोचते हैं? मुझे अत्यन्त दु:साध्य काम में लगा दिया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

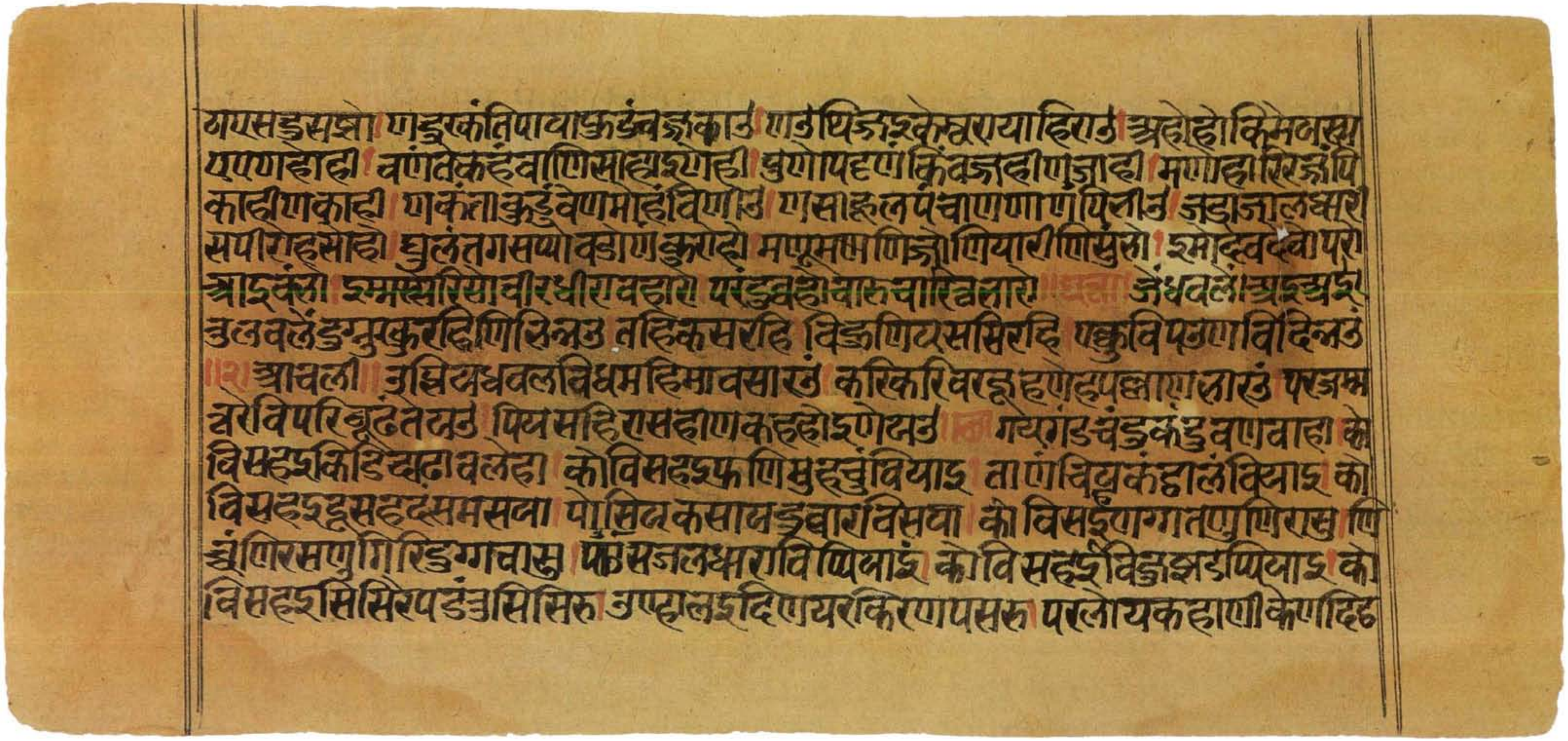

स्पष्ट ही वह वज्र शरीर हैं, उनके पैर नहीं दुखते। राजाधिराज वह कुछ भी उन्मार्जन नहीं करते। अरे, इससे इसका क्या होगा? वन में हम किस प्रकार दिन-रात बितायें? फिर ये नगर जायेंगे या नहीं जायेंगे? सुन्दर राज्य करेंगे या नहीं करेंगे? न तो कान्ता और कुटुम्ब के द्वारा उनमें मोह उत्पन्न होता है, और न वह सिंह तथा पंचानन से डरते हैं? वह ऐसे बटवृक्ष की तरह दिखाई देते हैं जो जटारूपी जाल धारण करता है, अपने प्रारोहों से शोभित है, और जिसके शरीर पर सर्प व्याप्त है। मनुओं के द्वारा पूज्य, मनुष्यों के निर्माता मनुष्यश्रेष्ठ यह देवदेव आदि ब्रह्मा हैं। धैर्यधीरों के भी धैर्य का अपहरण करनेवाला इनका ऐसा अत्यन्त दुर्वह सुन्दर चारित्रभार है।''

घत्ता—जहाँ अत्यन्त अतुल बलवाले धवल (बैल) ने अपने खुरों से दुर्ग को खोद डाला, वहाँ गरियाल बैल एक भी पैर नहीं रख सके॥ २॥

३

जिसने ऊँचे उठे हुए धवल ध्वजों की महिमा को हटा दिया है, दूसरे जन्म में जिसका प्रभाव विख्यात है, ऐसा श्रेष्ठ हाथियों के समूह के स्वामी का पर्याणभार, हे प्रियसखी! क्या रासभों के द्वारा ले जाया जा सकता है? कोई हाथियों के द्वारा कान और गण्डस्थल खुजाये जाने की बाधा सहन करता है। कोई सूअरों के दाढ़ों से विदीर्ण होने की बाधा सहन करता है, कोई नागमुखों से चूमा जाने और उनके गले में लपटने को सहन करता है, कोई असह्य डाँस और मच्छर को सहन करता है, कोई कषायों का पोषण करनेवाली दुर्वार विषयों को सहन करता है। कोई विवश होकर नग्नत्व को सहन करता है, कोई नित्य निराहार रहना और गिरिदुर्ग में रहना सहन करता है। कोई पावस जलधाराओं की अप्रिय बिजलियों की झपटों को सहन करता है। कोई शीतकाल में होनेवाली ठण्ड सहन करता है। उष्णकाल में सूर्य के किरण प्रसार को सहन करता है। परलोक की कहानी किसने देखी?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

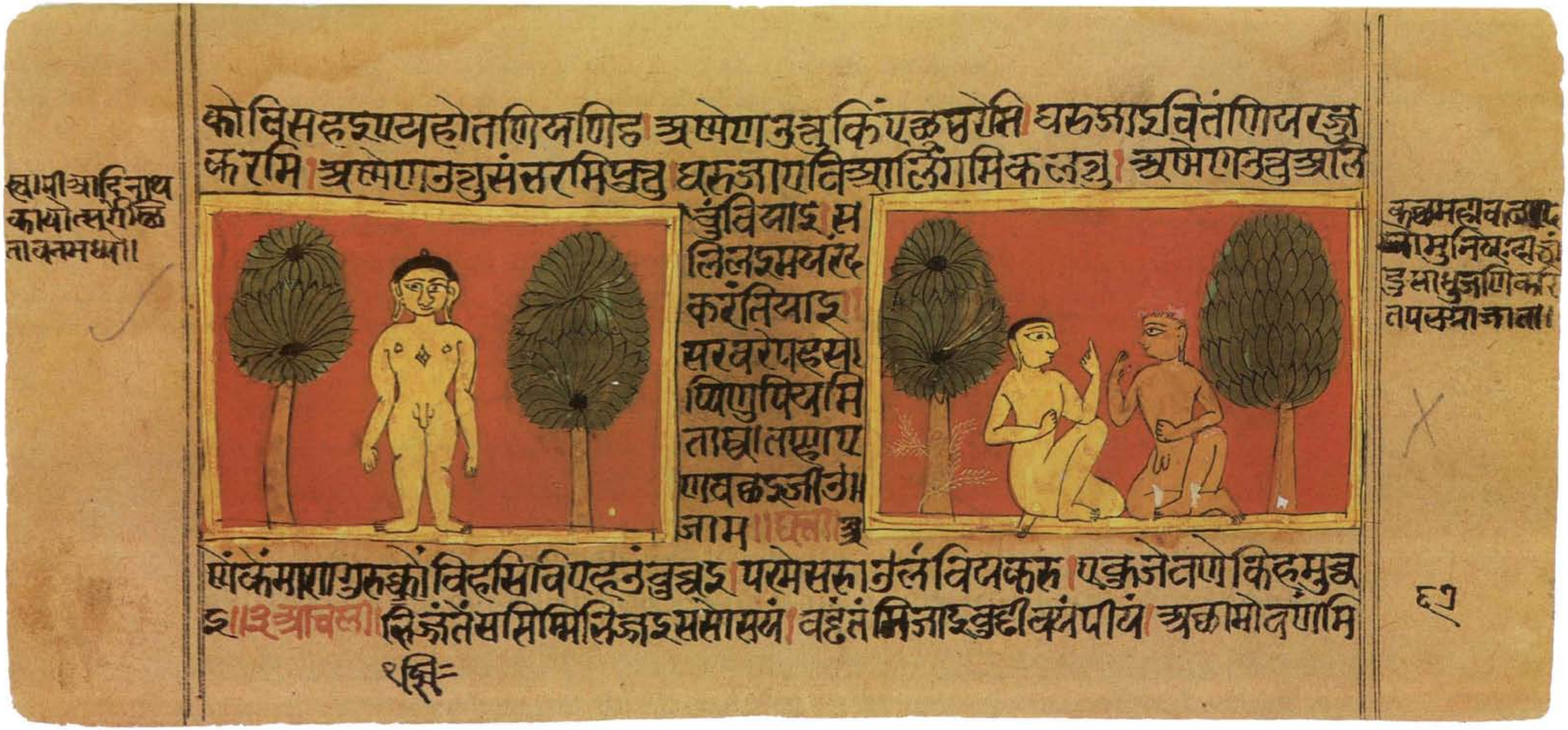

कौन इनकी तपस्या को सहन कर सकता है। किसी एक ने कहा—मैं यहाँ क्यों मरूँ? घर जाकर अपना राज करूँ? किसी एक ने कहा—मैं अपने पुत्र को याद करता हूँ, घर जाकर अपनी स्त्री का आलिंगन करता हूँ। किसी एक ने कहा—भ्रमरों से चुम्बित और मकरन्द से प्रतिबिम्बित जल को सरोवर में प्रवेश कर तबतक पीता हूँ कि जबतक प्यास नहीं जाती।

घत्ता—मान में श्रेष्ठ एक व्यक्ति ने कहा—अपने हाथ ऊपर किये हुए भगवान् को वन में अकेला किस प्रकार छोड़ दिया जाये?॥ ३॥

४

चन्द्रमा के क्षीण होने पर उसका शश (चिह्न) भी क्षीण हो जाता है और चन्द्रमा के बढ़ने पर वह भी बढ़ती के अपने प्रिय पद पर पहुँच जाता है। हम दण्ड सहन करते हैं, वन में ही रहें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

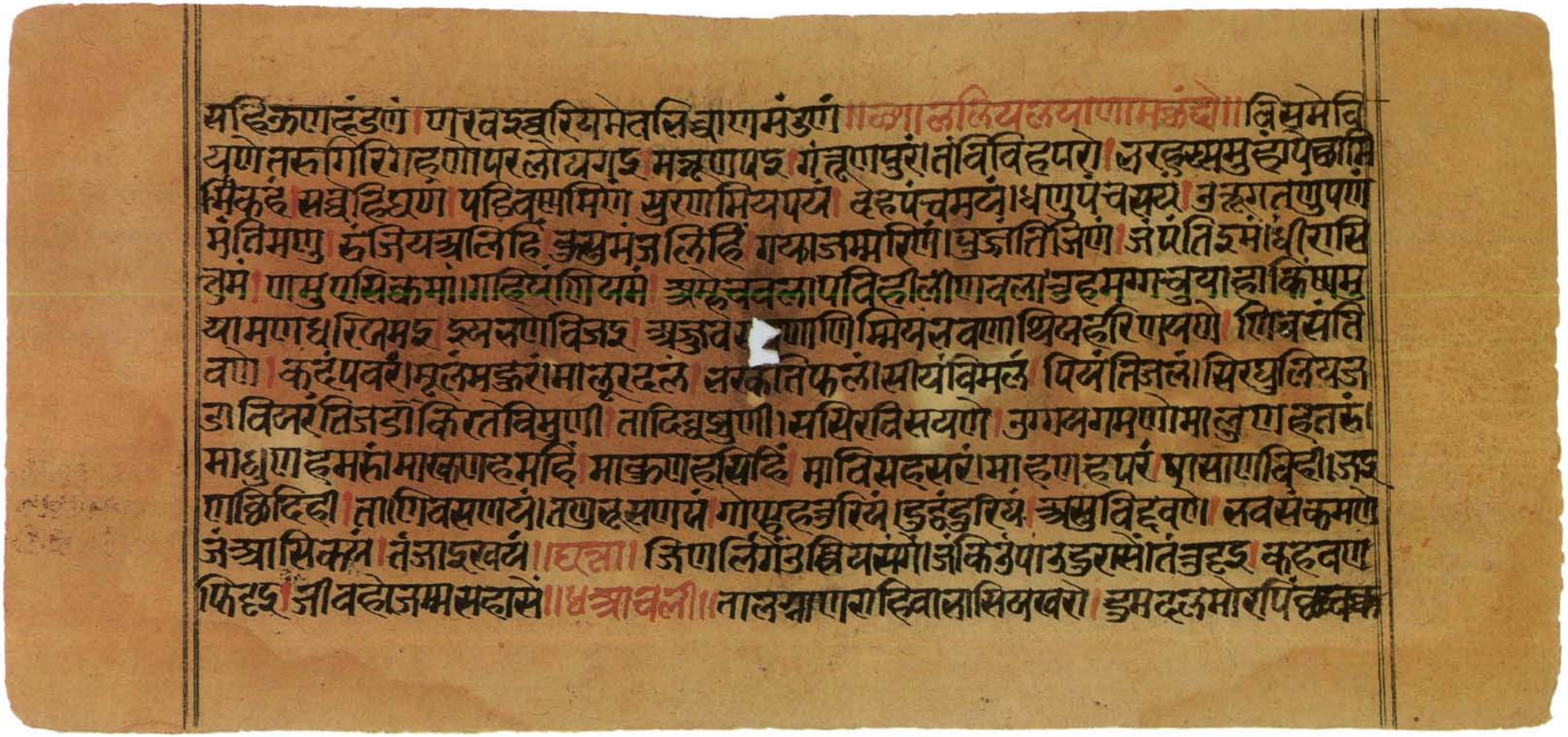

राजाओं का चरित ही भृत्यों के लिए अलंकारस्वरूप है। तरुओं से गहन विषम और विजन में परलोक से रति करनेवाले तुम्हें छोड़कर तथा विविध घरोंवाले अपने उस नगर में जाकर, भरत का मुख हम किस प्रकार देखेंगे? सबने उसके इस कथन को पूरी तरह स्वीकार कर लिया। सुरों से प्रणम्य हैं चरण जिनके ऐसे तथा काम को जलानेवाले उत्तुंग शरीर मनु (आदिनाथ) को वे प्रणाम करते हैं और भ्रमरों से गूँजती हुई कुसुमांजलियों के द्वारा जन्म-ऋण से मुक्त जिनकी पूजा करते हैं। वे इस प्रकार कहते हैं, "तुम धीर हो, तुम क्रम और गृहीत नियम को नहीं छोड़ते। हम चपल और नष्ट बल हैं। तुम्हारे मार्ग से च्युत होकर हाय हम मर क्यों नहीं गये!" इस प्रकार मन में गति को धारण करनेवाले सरल श्रमण मकान बनाकर हरिणसमूह से युक्त वन में रहने लगे। वे प्रवर कन्द, मधुर जड़ें, बेल का गूदा और फल खाते हैं, शीतल मधुर जल पीते हैं, सिर में व्याप्त जटाओंवाले वे मूर्ख विचरण करते हैं, जबतक वे मुनि बनते हैं, तब तक सूर्य और चन्द्रमा के शयन और उद्‌गम के स्थल आसमान में दिव्यध्वनि होती है कि वृक्षों को मत काटो, हवा को मत चलाओ, धरती मत खोदो, आग मत जलाओ, सरोवर में प्रवेश मत करो, दूसरों को मत मारो, यह विधि नहीं है। यदि धैर्य नहीं है, तो राजा के वसन और शरीर के आभूषण शीघ्र धारण कर लो। प्राणों का दलन करनेवाले संसार के परिभ्रमण में जो तुमने दुष्ट आचरण किया है, वह नष्ट हो जायेगा।

घत्ता—परिग्रह से शून्य जिनका वेश धारण कर, खोटी आशावाले तुमने जो पाप किया है, जीव का वह पाप, हजारों वर्षों तक न छूटता है और न नष्ट होता है॥४॥

५

इन अक्षरों (दिव्यध्वनि) के होने पर बहुत-से राजा पेड़ों के पत्ते और मयूरपिच्छ तथा वल्कल धारण कर दूसरे-दूसरे मुनि बन गये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिनवर के विरुद्ध विरोध निष्ठा से अधिष्ठित उन लोगों ने अपने नाना विचार और वेष बना लिये। तब कच्छप और महाकच्छप के दोनों पुत्र (नमि और विनमि), जो दुष्टों के लिए प्रतिकूल और सिरदर्द थे, कामिनीजन के साथ कामक्रीड़ा चाहनेवाले और मदोन्मत्त प्रचण्ड हाथियों की लीलावाले थे, शत्रु सेना की शक्ति को नष्ट करने में समर्थ थे, हाथ में तलवार लिये हुए उस स्थान पर आये, जहाँ दम्भ से रहित स्वयं आदिजिन प्रतिमायोग में स्थित थे। महान् शत्रुओं को पीड़ित करनेवाले उन्होंने उनकी उसी प्रकार परिक्रमा दी, जिस प्रकार चन्द्र-सूर्य जम्बूद्वीप की परिक्रमा देते हैं। आपस में बद्ध स्नेह और नाम से नमि-विनमि वे उनके पास उसी प्रकार बैठ गये जिस प्रकार पर्वत के निकट मेघ स्थित होते हैं। जयकार करके उन्होंने इस प्रकार कहा, "हे देव, आपने अपने पुत्रों को भूमि विभक्त करके दे दी, हम लोगों के लिए कुछ भी नहीं दिया। जिन्होंने क्षात्रधर्म का परिपालन किया है और जो अनुचरों के लिए आज्ञा का प्रेषण करनेवाले हैं, ऐसे आपने गोपद के बराबर भी भूमि नहीं दी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

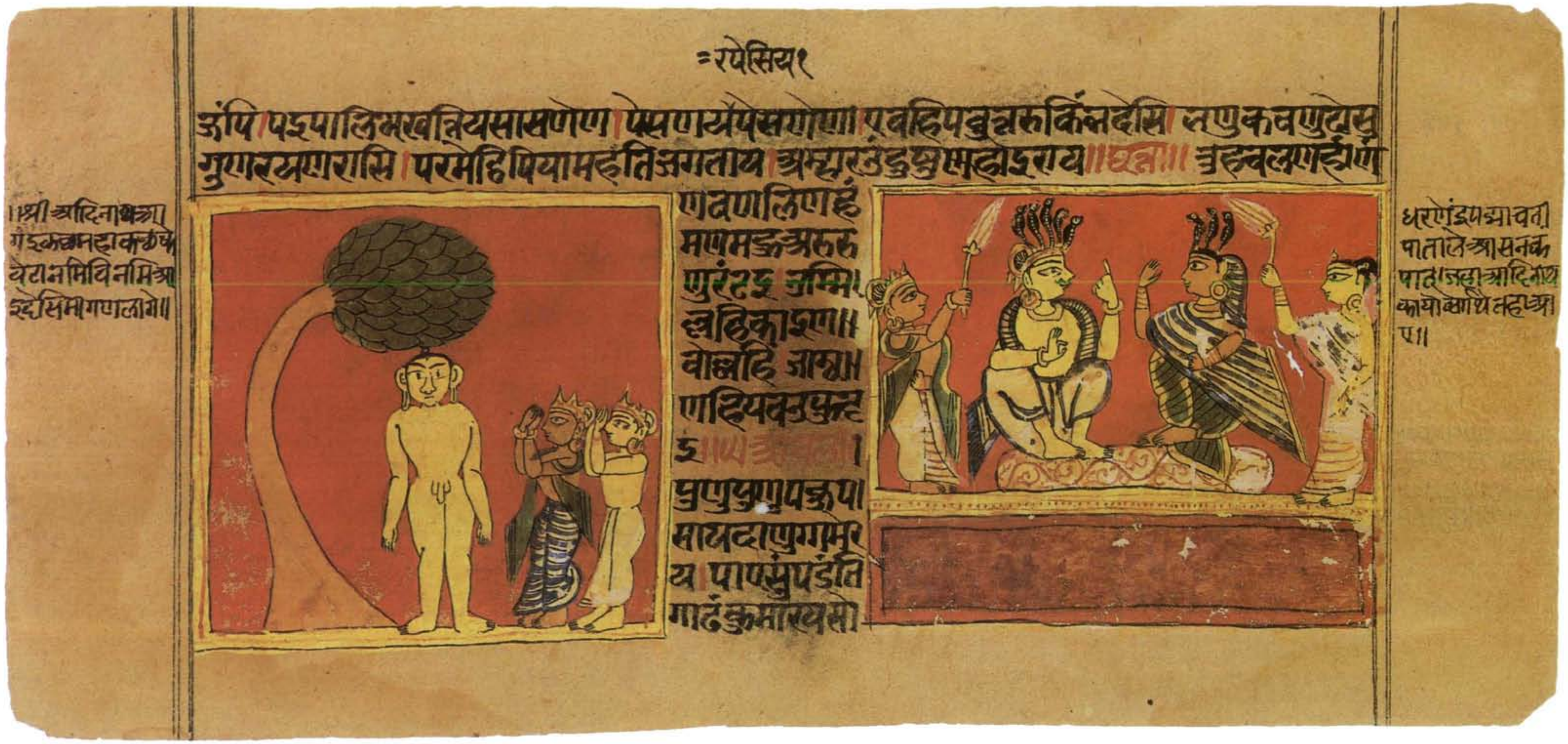

इस समय आप उत्तर तक नहीं देते। हे गुणरत्नराशि, बताइए इसमें हमारा क्या दोष है? हे परमेष्ठी, पितामह, त्रिजग पिता, हमारा राजा दुष्ट नहीं हो सकता।

घत्ता—नव कमलों के समान आपके चरणों में हमारा मनरूपी मधुकर गुनगुना रहा है जबतक हमारा हृदय नहीं फटता तबतक आप क्यों नहीं देखते और बोलते?'' ॥ ५ ॥

६

प्रभु में प्रसाद और दान उत्पन्न करने में लीन वे कुमार बार-बार उनके पैरों पर पड़ रहे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

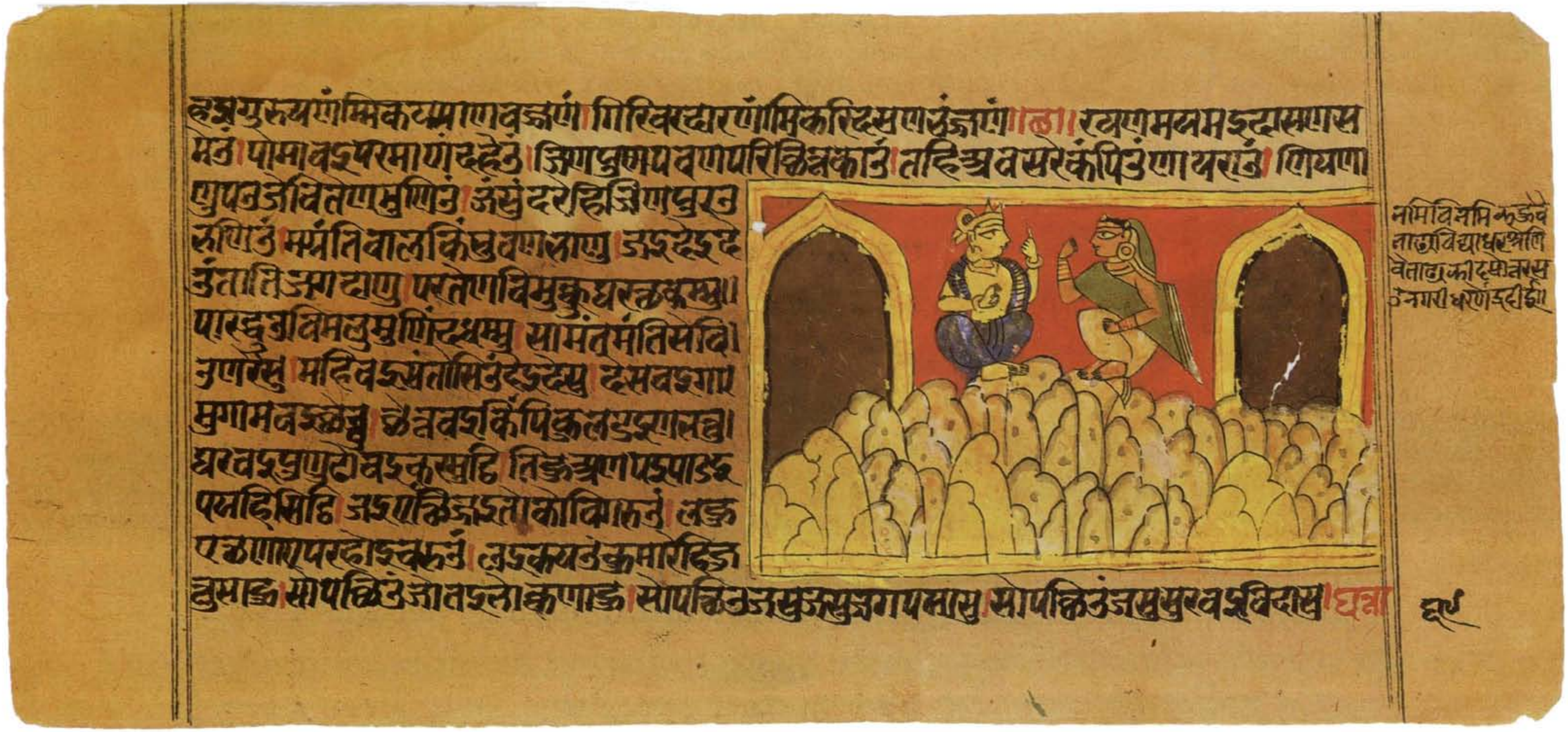

गुरुजन के प्रति किया गया उनका मान का परित्याग वैसा ही शोभित हुआ है जैसे गिरिवर के विदारण में हाथी के दाँतों का भंजन सोहता है। उस अवसर पर जिसका शरीर जिनवर के पुण्यरूपी पवन से स्पृष्ट है, और जो पद्मावती के आनन्द का कारण है ऐसा नागराज धरणेन्द्र अपने रत्नमय सिंहासन के साथ काँप उठा। अपने अवधिज्ञान का प्रयोग कर उसने जान लिया जो कुछ सालों (नमि और विनमि) ने जिनवर के सामने कहा था। भुवनसूर्य (ऋषभ जिन) से ये मूर्ख क्या माँगते हैं, वे जब देते हैं तो त्रिभुवन का दान कर देते हैं। परन्तु उन्होंने तो गृहस्थधर्म का त्याग कर दिया है और पवित्र मुनिधर्म प्रारम्भ कर दिया है। सामन्त और मन्त्रियों से सेवित नरेश अथवा राजा सन्तुष्ट होने पर देश देता है। देशपति ग्राम देता है, ग्रामपति क्षेत्र देता है, और क्षेत्रपति (खेत का मालिक) कुछ तो भी प्रस्थभर (एक माप) चावल देता है, और गृहपति (गृहस्थ) एक मुट्ठी चावल देता है। त्रिभुवनपति तो प्रजाओं के लिए सृष्टि प्रकट करता है। यदि प्रार्थना ही करनी हो तो किसी बड़े से की जाये, क्योंकि किसी छोटे से की गयी प्रार्थना से वह (प्रार्थना) सुन्दर होती है। लो, इन कुमारों ने अच्छा किया कि इन्होंने उनसे प्रार्थना की कि जो त्रिलोकनाथ हैं। उनसे प्रार्थना की जिनका यश विश्वप्रसिद्ध है। उनसे प्रार्थना की जिनका दास इन्द्र है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

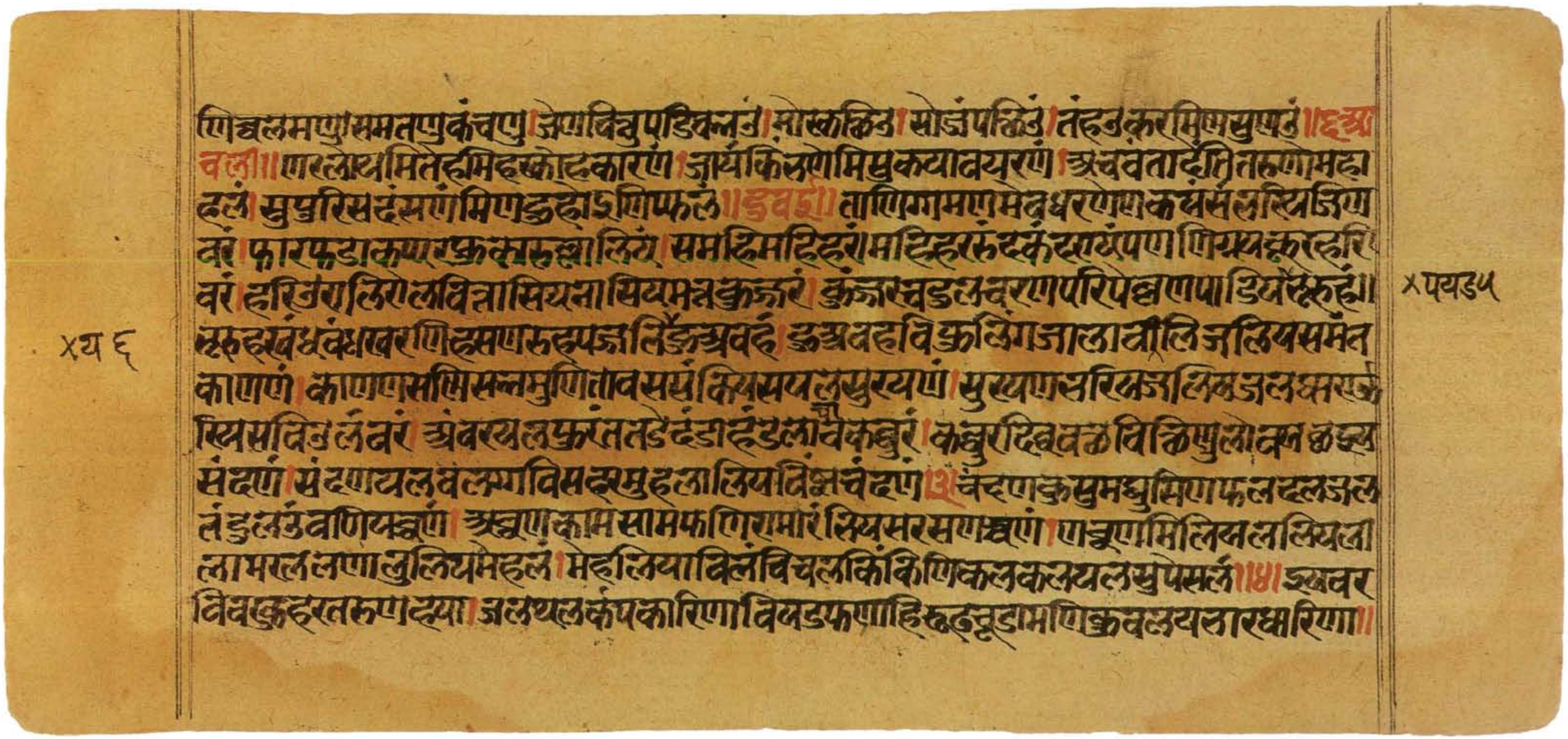

घत्ता—जो निश्चलमन हैं, तृण और कंचन में समभाव धारण करते हैं, जिन्होंने धन का परित्याग कर दिया है। चूँकि उन्होंने उन मोक्षार्थी से अभ्यर्थना की है, इसलिए मैं उन्हें अशून्य करता हूँ ॥ ६ ॥

७

वे (नमि-विनमि) मनुष्यलोक में हैं। मैं यहाँ हूँ। फिर भी वे क्षोभ के कारण हुए। इनसे पुण्य की क्या अवतारणा कहूँ? बिना कहे हुए ही वृक्ष महाफल देते हैं, सुपुरुष का दर्शन भी निष्फल नहीं होता। तब नागराज ने जिनवर का स्मरण किया और निर्गमन (कूच) किया। जिसमें फैले हुए फण समूहों के फूत्कार से धरती सहित पहाड़ों को हिला दिया गया है, महीधर की बड़ी-बड़ी गुफाओं के हिलने से क्रूर सिंहवर बाहर निकल पड़े हैं, जिसमें सिंहों की गर्जनाओं के शब्दों से मत्त हाथी त्रस्त और नष्ट हो गये हैं। हाथियों के चंचल पैरों के आघात से स्पष्ट रूप से वृक्ष उखड़ गये हैं। वृक्षों के स्कन्धों के बन्धों के तीव्र संघर्षण के कारण वृक्षों से आग प्रज्वलित हो उठी है, आग के स्फुलिंगों और ज्वालावलियों से समस्त कानन जल चुका है, जिसमें कानन में बैठे हुए मुनियों के सन्ताप से देवता आशंकित हो उठे हैं। देवजनों के द्वारा भरित मेघों की जलधाराओं से विशाल अम्बर आपूरित है। आकाशतल में चमकते हुए विद्युद्दण्डवाले इन्द्रधनुष से रंग-बिरंगापन है। जिसमें रंग-बिरंगे दिव्य वस्त्रों से विस्तीर्ण चँदोवों से रथ आच्छादित हैं, जिसमें रथों के तल भागों से लगे हुए विषधरों के मुखों से विन्ध्या के चन्दनवृक्ष चुम्बित हैं, जिसमें चन्दन-पुष्प-केशर-फल-दल-जल और अक्षत से पूजा की गयी है, जिसमें पूजा की कामना से नागराज की पत्नी पद्मावती के द्वारा सरस नृत्य प्रारम्भ किया गया है। जिसमें नृत्य में मिली हुई सुन्दर देवांगनाओं की करधनियाँ च्युत हैं, जो करधनियों से लटकती हुई किंकिणियों की कलकल ध्वनि से कोमल है। इस प्रकार वर-विवर कुहर वृक्ष आकाशतल को कम्पित करनेवाले, तथा विकट फनों पर अधिष्ठित चूड़ामणि पर पृथ्वीमण्डल का भार उठानेवाले,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

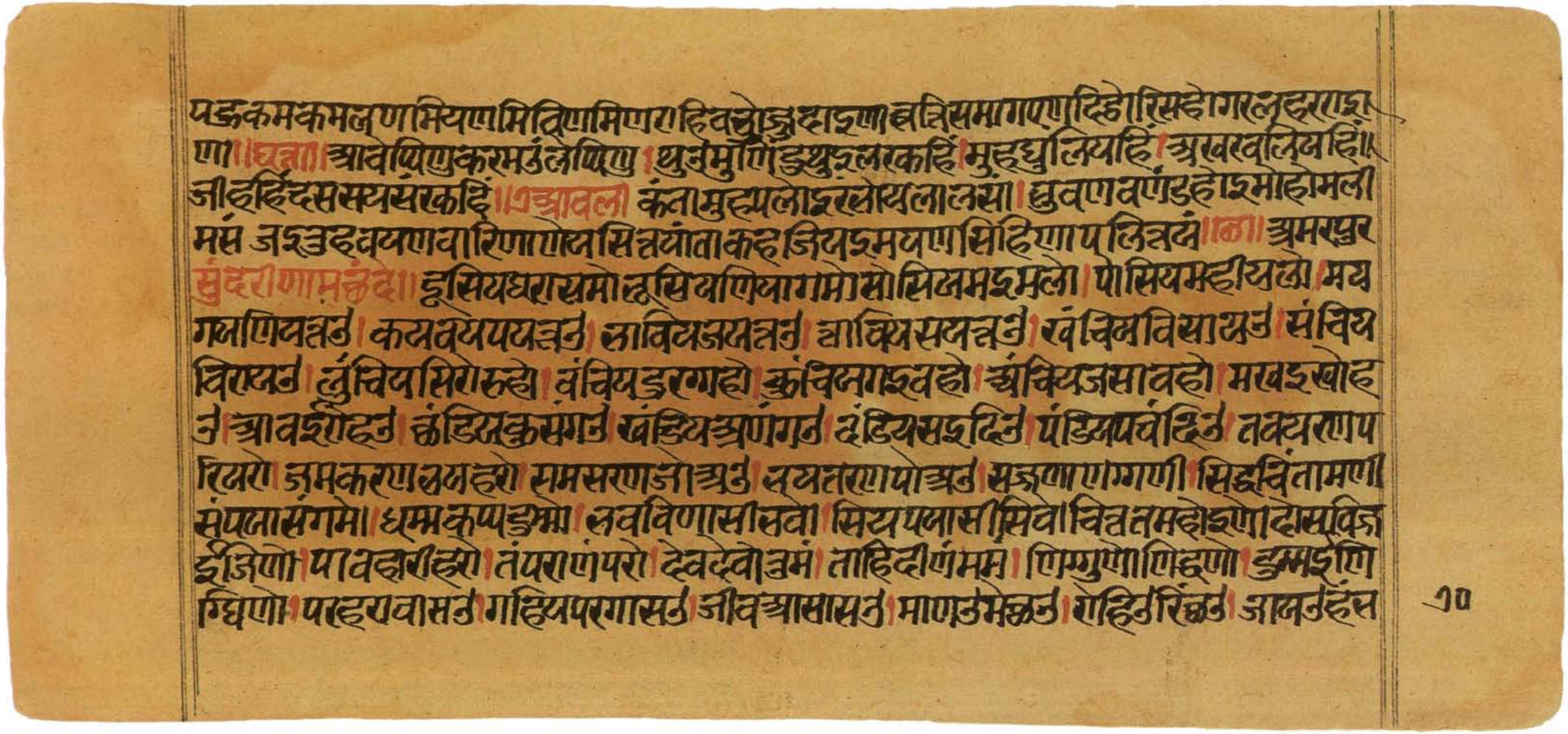

प्रभु चरणकमलों में नत नमि-विनमि राजाओं को आश्चर्य प्रदान करनेवाले, नागराज ने शीघ्र आकर ऋषभनाथ के दर्शन किये।

घत्ता—आकर, फन मोड़कर लाखों स्तुतियों और मुँह में घूमती हुई, अक्षरों की तरह सुन्दर दस हजार जिह्वाओं से स्तुति की॥७॥

८

यह भुवनरूपी वन, जो कान्ताओं का मुख देखनेवाला, भोग का लालची और मैला है, इसे मोह जलाकर खाक कर देता। यदि तुम्हारे वचनरूपी जल से यह नहीं सींचा जाता तो कामरूपी आग से प्रदीप्त यह विश्व कैसे जी सकता है? आप गृहस्थाश्रम को दूषित करनेवाले, अपने आगम को भूषित करनेवाले, बुद्धि के मैल को नष्ट करनेवाले, महातल का पोषण करनेवाले, मदरूपी गज को नियंत्रित करनेवाले, व्रतों का प्रवर्तन करनेवाले, भविष्य को जीतनेवाले, अपने शरीर को सन्तप्त करनेवाले, विषाद को नष्ट करनेवाले, विराग को संचित करनेवाले, केश लोंच करनेवाले, दुराग्रह से दूर रहनेवाले, गति के मार्ग को संकुचित करनेवाले, यश का पथ अंकित करनेवाले, लक्ष्मी को क्षुब्ध करनेवाले, आपत्तियों को रोकनेवाले, कुसंगति को छोड़नेवाले, काम को खण्डित करनेवाले, अपनी इन्द्रियों को दण्डित करनेवाले, पण्डितों के द्वारा वन्दनीय, तपश्चरण के परिग्रहवाले, यम को भय उत्पन्न करनेवाले, उपशम के घर, संसार तरण के पोत (जहाज), सच्चे ज्ञान में अग्रणी, सिद्ध चिन्तामणि, सम्पदा से असंगम करनेवाले, धर्म के कल्पवृक्ष, भव (संसार) का नाश करनेवाले भव, शिव को प्रकाशित करनेवाले शिव, चित्त के तम-समूह को नष्ट करनेवाले सूर्य, दोषों के विजेता जिन, पाप का हरण करनेवाले हर और श्रेष्ठों में श्रेष्ठ हे देवदेव, आप मुझ दीन का त्राण करें। मैं निर्गुण, निर्धन, दुर्मति, निर्घिन, दूसरे के घर में वास करनेवाला, दूसरों के घर का कौर खानेवाला, मैं मानव, म्लेच्छ, मत्स्य और रीछ हुआ हूँ, भव-भव में।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और रौरव नरक में नारकी हुआ हूँ। हे जिन, बीते समय में तुमसे जो मैंने प्रतिकूलता की थी, उसे मैंने क्रम से भोगा है।

घत्ता—इसप्रकार जिनकी वन्दना कर और अपनी निन्दा कर, नाग ने अपना तम (पापतम) धो लिया। और फिर विनमि है सहायक जिसका, ऐसे नमि महाराज का मुखरूपी चन्द्रबिम्ब देखा॥ ८॥

९

उन्होंने कहा, "हे सदा सुखकर सर्पराज, धरती फाड़कर आप वन में आये। हे सुशील, तुम हमारे सम्मुख क्यों हो और अपलक नेत्रों से मुख किसलिए देख रहे हो?" तब समस्त अमित नरेन्द्रों को सन्त्रस्त करनेवाला फणीन्द्र यह सुनकर बोला, "मैं भुवन में प्रसिद्ध नागराज हूँ, इन्द्र के द्वारा प्रणम्य त्रिजगत्तात, लोकोत्तम, कामदेव का अन्त करनेवाले यह हमारे स्वामी श्रेष्ठ हैं। जब यह राज्य छोड़कर विरक्त हुए तब इन्होंने मुझसे एक काम कहा था कि विकल और जड़ जीव का उद्धार करने के किसी काम से भेजे गये कोई नमि-विनमि नाम के दो जन आयेंगे, श्री और सुख की कामना रखनेवाले जो मुझसे कुछ माँगेंगे। तुम उन लोगों के लिए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

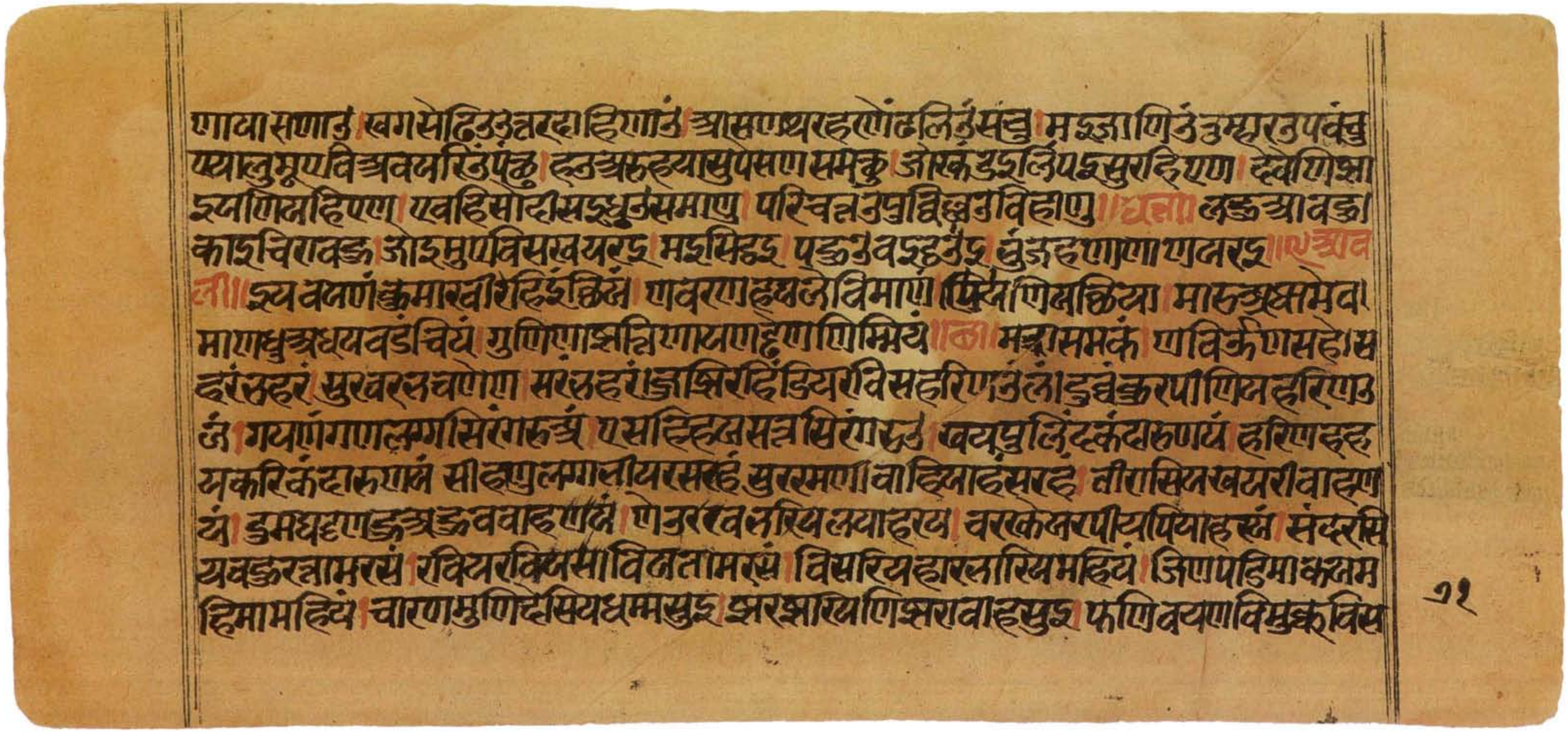

विजयार्ध पर्वत पर आश्रित उत्तर-दक्षिण विद्याधर श्रेणियाँ प्रदान कर देना। आसन के काँपने से मेरा शरीरबन्ध हिल गया, (उससे) मैंने तुम्हारा प्रपंच जान लिया। पाताल छोड़कर मैं यहाँ अवतरित हुआ हूँ, मैं अरहन्त देव की आज्ञा पूरी करने में समर्थ हूँ। अपने हृदय से ध्यान किया है जिन्होंने, ऐसे देव के द्वारा (ऋषभ) जो उन्हें खण्डित करता है या सुरभि से लेप करता है, वह इस समय निश्चित रूप से समान भाव से देखा जाता है, उन्होंने पहले का विधान (प्रशासन) छोड़ दिया है।

घत्ता—जल्दी आओ, देर क्यों करते हो, योगी को छोड़कर, प्रभु के द्वारा आदिष्ट और मेरे द्वारा निर्मित विद्याधरों सहित नगरियाँ हैं, उनका भोग करो''॥ ९॥

१०

इन वचनों को कुमार वीरों ने चाहा। केवल उन्होंने आकाश में विमान देखा। हवा से दौड़ते हुए और प्रकम्पित ध्वजपटों से अंचित जिसे, गुणी नागराज ने शीघ्र निर्मित किया था। अपने दोषों के प्रारम्भ का नाश करनेवाले (ऋषभ जिन) को नमन कर ऋषभनाथ का प्रिय आलपन न पानेवाले वे दोनों देव विमान के द्वारा विजयार्ध शैल पर ले जाये गये, जो सरोवर का जल धारण करनेवाला था, जिसमें युद्ध करते हुए वृषभ, सिंह और नकुल घूम रहे थे। हरिणों का समूह दुर्वांकुरों से प्रसन्न था, जिसके शिखर आकाश को छूते थे, महान्, जिसने अपनी औषधियों से प्राणियों के शिर और शरीर से रोग दूर कर दिया था, जो शवरों द्वारा उखाड़े गये मूलों से अरुण थे, जो सिंहों के नखों से आहत हाथियों के मस्तक से भयंकर थे, जहाँ भयंकर अष्टापद सिंहों का पीछा कर रहे थे, जिसमें सुररमणियाँ हंसरथों को हाँक रही थीं, जिसके तीर पर विद्याधरियों के वाहन स्थित थे। जिसमें वृक्षों के संघर्ष से उत्पन्न आग प्रज्वलित थी। जिसके लताघर नूपुरों की झंकार से झंकृत थे, और श्रेष्ठ विद्याधर अपनी प्रियाओं के अधरों का पान कर रहे थे, जो अपनी वधुओं में अनुरक्त देवों के सुख का प्रदर्शन कर रहा था, जिसमें रविकिरणों से कमल खिल रहे थे, जिसमें खोये हुए हारों से धरती पटी पड़ी थी, जो जिन भगवान् की प्रतिमाओं की महिमा से पूज्य था, जो चारणमुनियों के द्वारा उपदिष्ट धर्म से पवित्र था जिसमें झरझर निर्झरों का अबाध प्रवाह था, जिसमें नागों के मुखों से निकली हुई विषाग्नि शान्त थी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

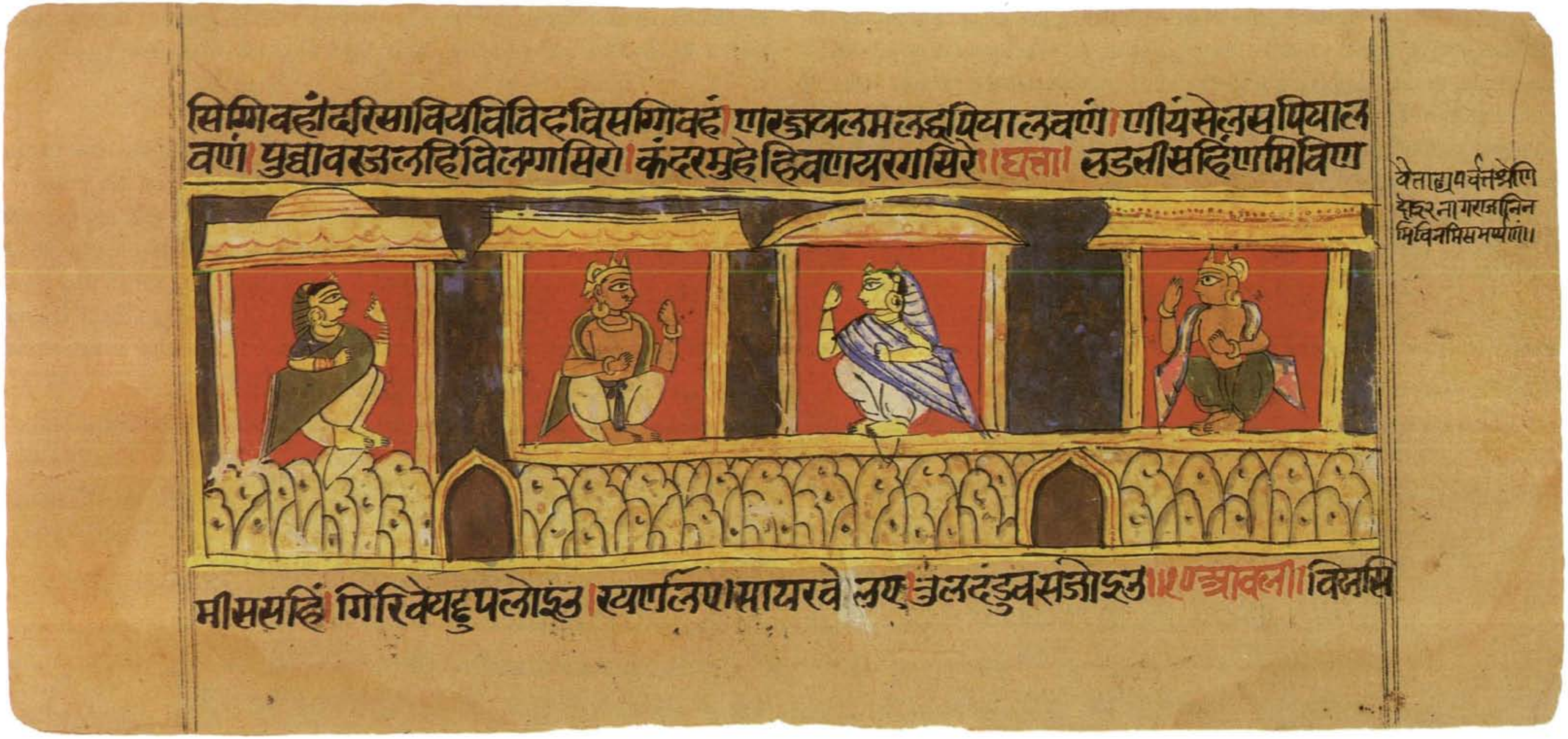

जिसकी घाटियों में पक्षियों द्वारा स्वर्गपथ दिखाया जा रहा था, जो प्रियाल वृक्षों के वनों से युक्त था। पूर्वी और पश्चिमी समुद्रों, डूबे हुए छोरोंवाला और गुफाओं के मुखों से वनचरों को लीलता हुआ—

घत्ता—भटों से भयंकर विजयार्द्ध पर्वत को नमि और विनमि ने इस प्रकार देखा, जैसे रत्नों के घर सागर-तट पर तुलादण्ड रख दिया गया हो॥ १०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

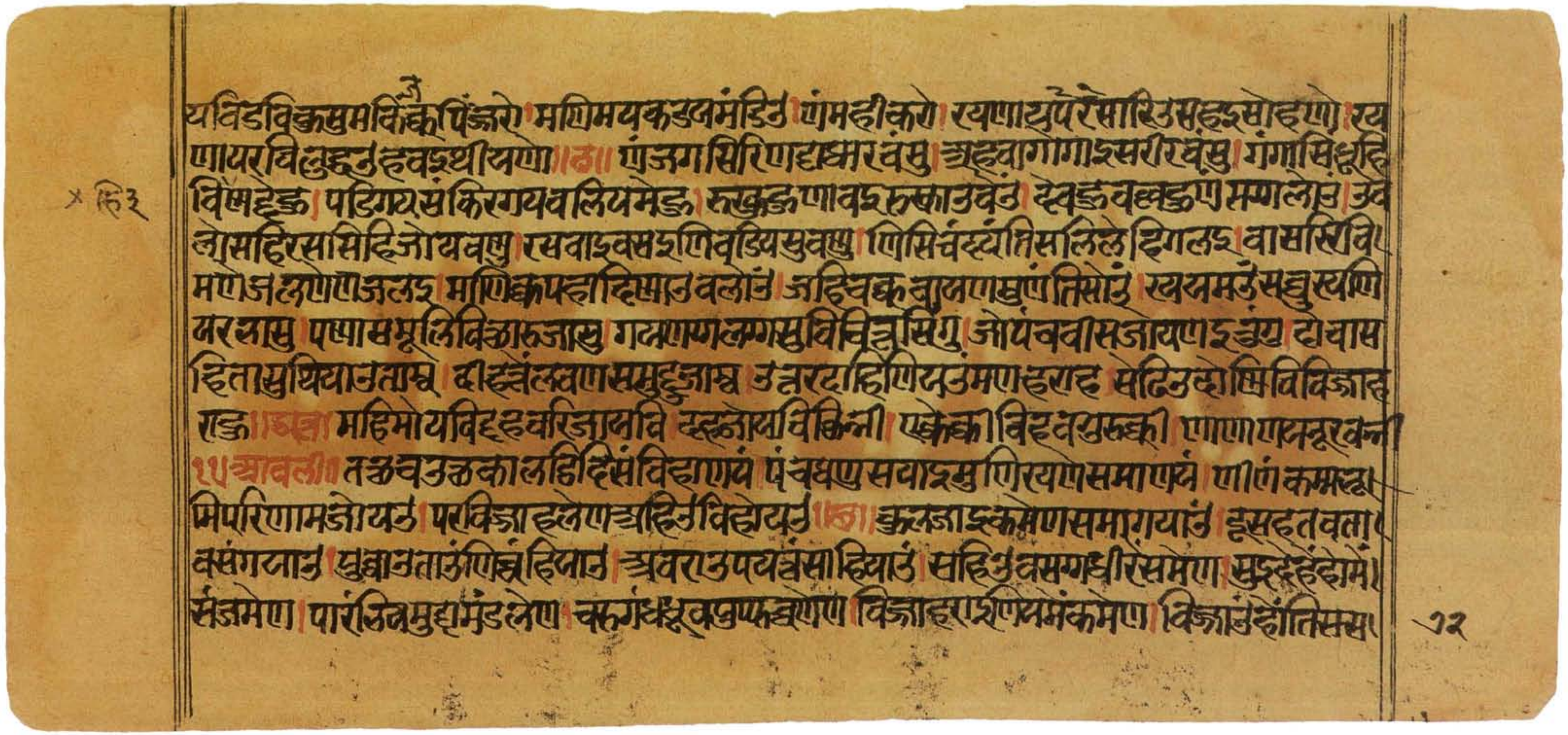

११

विकसित वृक्षों के पुष्पपराग से पीला और मणिमय कटक से शोभित वह विजयार्ध पर्वत मानो जैसे धरती का हाथ हो। रत्नाकर तक फैला हुआ शोभन जो ऐसा लगता है मानो (रत-नागर) विदग्ध पुरुष में स्त्रीजन हो। जो मानो विश्वश्री के नाट्य का आधारभूत बाँस हो, अथवा पृथ्वीरूपी गाय के शरीर का आधार हो; गंगा और सिन्धु नदियों के द्वारा जो खण्डित शरीर है, जिसमें प्रतिगजों की आशंका में गज मेघों को आहत करते हैं, वृक्षों के लिए जो पर्वत वृक्षायुर्वेद शास्त्र हो, देवों के लिए प्रिय जो मानो स्वर्गलोक हो। धातु पाषाणों के औषधि रस की आग से चमकते हुए रंगवाला जो, रसवादी की तरह स्वयं स्वर्णमय हो गया है। जो चन्द्रकान्त मणियों के जल से रात्रि में गल जाता है, और दिन में सूर्यमणियों की ज्वाला में जल उठता है। माणिक्यों की प्रभा से प्रकाश (अवलोकन) मिल जाने के कारण जहाँ चकवे शोक को नहीं जानते। जो समस्त रजतमय है, और चन्द्रमा की आभा के समान है, जिसका विस्तार पचास योजन है, जिसके विचित्र शिखर आकाश को छूते हैं, जो पचीस योजन ऊँचा है। लम्बाई में वह अपने दोनों किनारों से वहाँ तक स्थित है कि जहाँ तक लवण समुद्र है। जिसकी उत्तर-दक्षिण श्रेणियाँ सुन्दर विद्याधरों की हैं।

घत्ता—जो धरती को छोड़कर, दस योजन ऊपर जाकर दस योजन विस्तृत है, और नाना रत्नों से सुन्दर एक-एक वैभव में महान् है॥११॥

१२

वहाँ हमेशा चतुर्थकाल की स्थिति का संविधान है। मनुष्यों की ऊँचाई पाँच सौ धनुष प्रमाण है। जहाँ कर्मभूमि के समान कृषि आदि कर्म से उत्पन्न तथा श्रेष्ठ विद्याओं के फल से अधिक भोग हैं। कुलजाति के क्रम से आयी हुई, असह्य तपस्या के ताप से वश में आयी हुई पूर्व की विद्याएँ उन्हें नित्य रूप से प्राप्त हो गयीं और भी विद्याएँ उन्होंने (नमि-विनमि ने) प्रयत्न से सिद्ध कर लीं। उपसर्गों को सहन करने का धैर्य शम, पवित्र देह, होम, संयम, मुद्रामण्डल के प्रारम्भ करने से नैवेद्य, गन्ध, धूप और फूलों द्वारा अर्चा करने से नियम और व्रत करने से विद्याधरों को स्वभाव से विद्याएँ सिद्ध होती हैं।

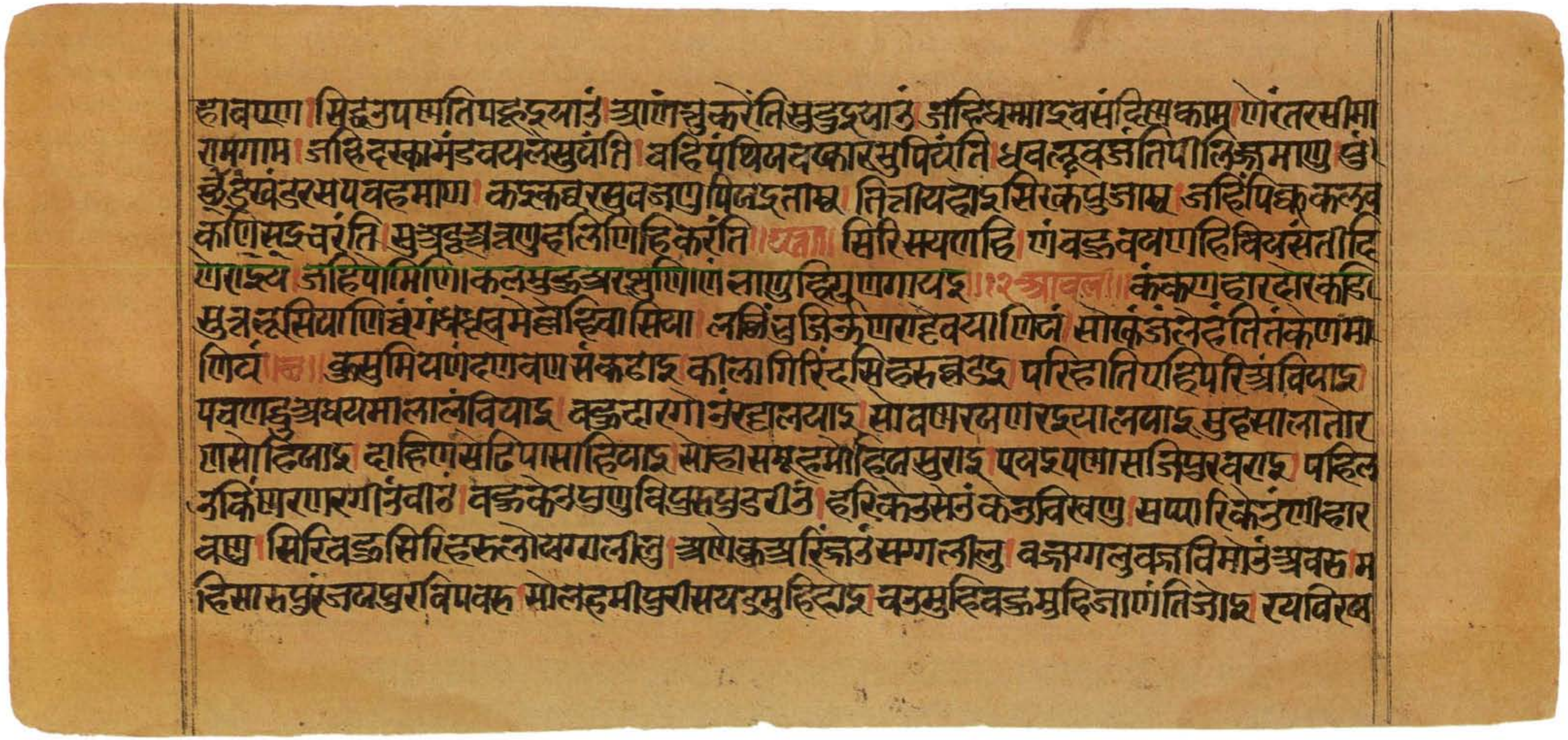

प्रज्ञप्ति आदि विद्याएँ उन्हें सिद्ध हो गयीं, और आकर उनकी आज्ञाओं का पालन करने लगीं। जहाँ सीमा उद्यानों से निरन्तर बसे हुए ग्राम धर्मों की तरह कामनाओं को पूरा करनेवाले हैं। जहाँ पथिक दाखों के मण्डपों के नीचे सोते हैं और द्राक्षारस पीते हैं। जहाँ बैलों के द्वारा संवाहित यन्त्रों के द्वारा पेरा गया पौंड़ों और ईखों का रस बह रहा है। जिसे कवि के काव्य रस की तरह जन तबतक पीते हैं कि जबतक तृप्ति से उनका सिर नहीं हिल जाता। जहाँ तोते पके हुए धान्यों के कणों को चुगते हैं और कृषक-स्त्रियों का दौत्य कार्य करते हैं।

घत्ता—जहाँ कमलिनी बहुत-से कमलों से दिन में इस प्रकार शोभित है मानो सुन्दर मधुर ध्वनि में सूर्य का गुणगान कर रही हो॥ १२॥

१३

कंगन-हार-दोर और कटिसूत्र से भूषित, नित्य गन्ध-धूप और पुष्पसमूह से सुवासित वहाँ के लोग जो विद्याओं से सम्पादित लक्ष्मी का उपभोग करते हैं और जो सुख प्राप्त करते हैं वह किसे मिला? उसकी दक्षिण श्रेणी में कुसुमित नन्दन वनों से व्याप्त, क्रीड़ा-गिरीन्द्रों के शिखरों से उन्नत तीन-तीन खाइयों से घिरे हुए, हवा से उड़ती हुई ध्वजमालाओं से शोभित बहुद्वार और गोपुरवाली अट्टालिकाओं से युक्त, स्वर्ण और रत्नों से निर्मित प्रासादोंवाले, मुख्य शालाओं और तोरणों से अंचित, यश में प्रसिद्ध, अपने सौन्दर्य-समूह से सुरवरों को मोहित करनेवाले ये पचास पुरवर हैं। पहला किन्नर, दूसरा नरग्रीव, फिर बहुकेतु, फिर पुण्डरीक नगर, फिर सुन्दर हरिकेतु, श्वेतकेतु, फिर सर्पारिकेतु और नीहारवर्ण। श्रीबहु, श्रीधर, लोहाग्रलोल तथा एक और स्वर्ग की तरह आचरण करनेवाला अरिंजय। वज्रार्गल, वज्रविमोद और धरती में श्रेष्ठ विशाल जयपुर। सोलहवीं भूमि शकटमुखी है, और भी चतुर्मुखी बहुमुखी नगरियाँ हैं, जिन्हें योगी जानते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

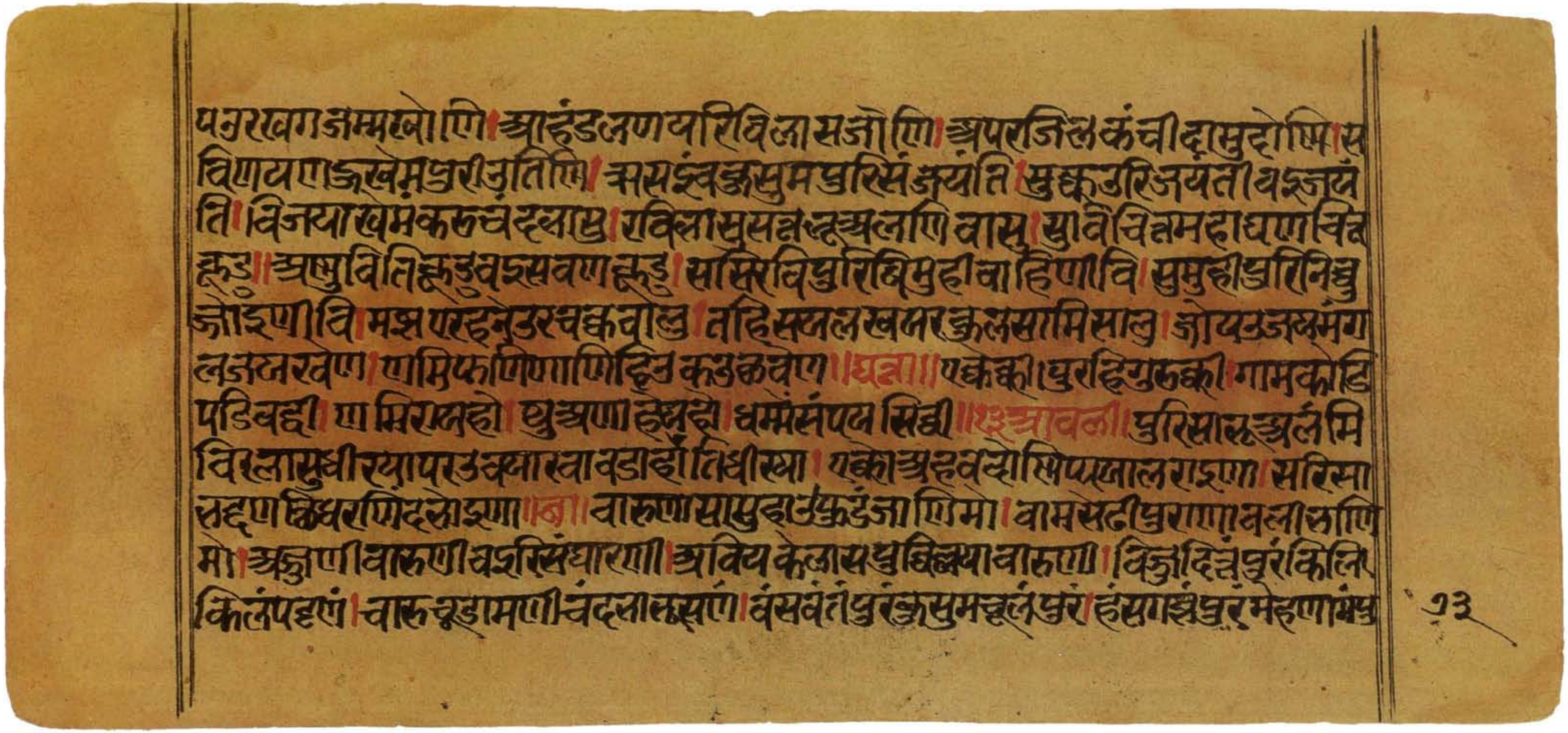

समविराग से प्रचुर विद्याधरों की जन्मभूमि और विलासयोनि आखण्डल नगरी है, दो और हैं अपराजित और काँचीदाम; संविनय, नभ और क्षेमंकरी ये तीन नगरियाँ और हैं; झसइंध, कुसुमपुरी, संजयन्त, शुक्रपुर, जयन्ती, वैजयन्ती, विजया, क्षेमंकर, चन्द्रभारा (सप्ततल भूमिनिवास), रविभास, सुविचित्र महाघन, चित्रकूट, और भी त्रिकूट, वैश्रवणकूट, शशिरविपुरी, विमुखी, वाहिनी, सुमुखीपुरी और नित्योद्योतिनी भी। और उसके बीच में रथनूपुर चक्रवालपुर है। उसमें समस्त विद्याधरों के स्वामीश्रेष्ठ नमि को नागराज ने उत्सव कर जय-जय मंगल के साथ प्रतिष्ठित कर दिया।

घत्ता—नगरों से विभक्त एक-एक नगरी करोड़ों ग्रामों से प्रतिबद्ध थी। इस प्रकार नाभेय ऋषभनाथ की स्तुति करनेवाले नमि राजा को धर्म से सम्पत्ति फिर हुई॥ १३॥

१४

भूतलपर ऐसे लोग विरल हैं जो सुधीजनों में रत, दूसरों के उपकार में चेष्टा करनेवाले और धीर होते हैं, एक या दो। पाताल के राजा नागराज धरणेन्द्र के समान भला आदमी नहीं है। पश्चिम दिशा के मुख से प्रारम्भ होनेवाली दक्षिण श्रेणी की पुराणावली को मैं अच्छी तरह जानता हूँ, और उनकी नामावली को कहता हूँ। अर्जुनी-वारुणी, वैरि-सन्धारिणी, और भी कैलास के पूर्व की वारुणी, विद्युद्दीप्त नगर, गिलगिल (गिलगित) नगर, चारुचूड़ामणि, चन्द्रमाभूषण, वंशवक्त्र, कुसुमचूलपुर, हंसगर्भ, मेघनामपुर,

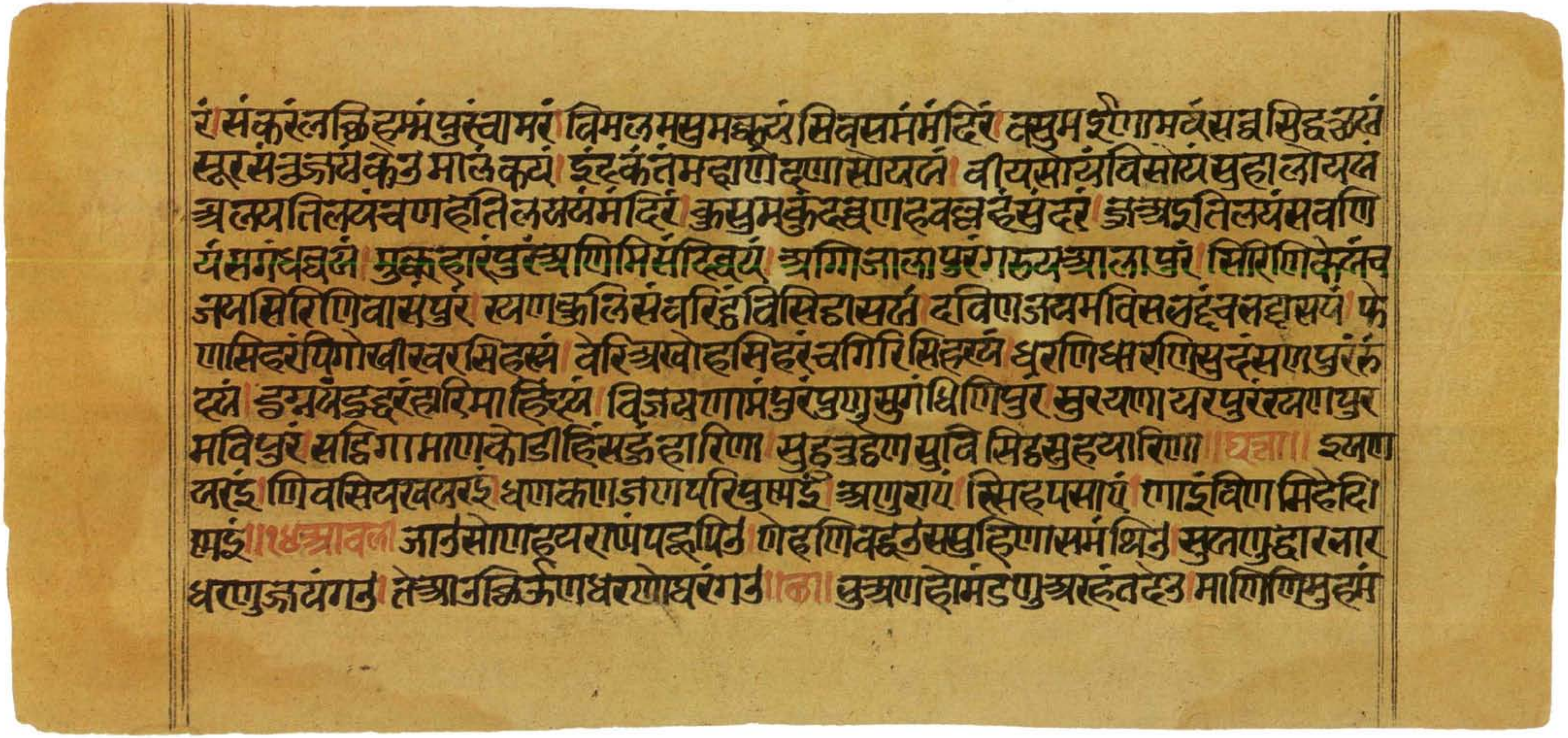

संकर, लक्ष्मी, हर्म्य, चामर, विमल, मसुक्कय, शिवसम मन्दिर, वसुमती सर्वसिद्धार्थ, सूर शत्रुंजय, केतुमाल-इन्द्रकान्त नभानन्दन, अशोक, बीतशोक, विशोक, शुभालोक, अलकतिलक, नभतिलक, सगन्धर्व, मुक्तहार, अनिमिष दिव्य, अग्निज्वालापुर, गरुज्वालापुर, श्रीनिकेत, जयश्री निवासपुर, रत्नकुलिश, वरिष्ठ, विशिष्टाशय, द्रविणजय, सभद्र और भद्राशय, फेनशिखर, गोक्षीरवर शिखर, वैरि-अक्षोभ शिखर, गिरिशिखर, धरणीधारिणी, विशाल सुदर्शनपुर, दुर्गय, दुर्धर, हारिमाहेन्द्र, विजयनाम और फिर सुगन्धिनीपुर और भी रत्नपुर ये साठ नगर, साठ करोड़ गाँवों के साथ, सन्तुष्ट मनोज्ञ तथा सुविशिष्ट और शुभ करनेवाले (नागराज धरणेन्द्र ने)।

घत्ता—नृपश्री और खेचरों से युक्त धन-कण और जन से परिपूरित ये नगर ऋषभ के प्रसाद से विनमि को प्रदान किये गये॥ १४॥

१५

वह विद्याधरों का प्रिय स्वामी हो गया, वह अपने हितैषियों के साथ स्नेहबद्ध रहने लगा। सुजनों के उद्धारभार को धारण करने के लिए उद्यत वह धरणेन्द्र उन दोनों से पूछकर अपने घर चला गया॥ १॥

भुवन के मण्डन अरहन्तदेव हैं, मानवियों का मुखमण्डन कामदेव है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

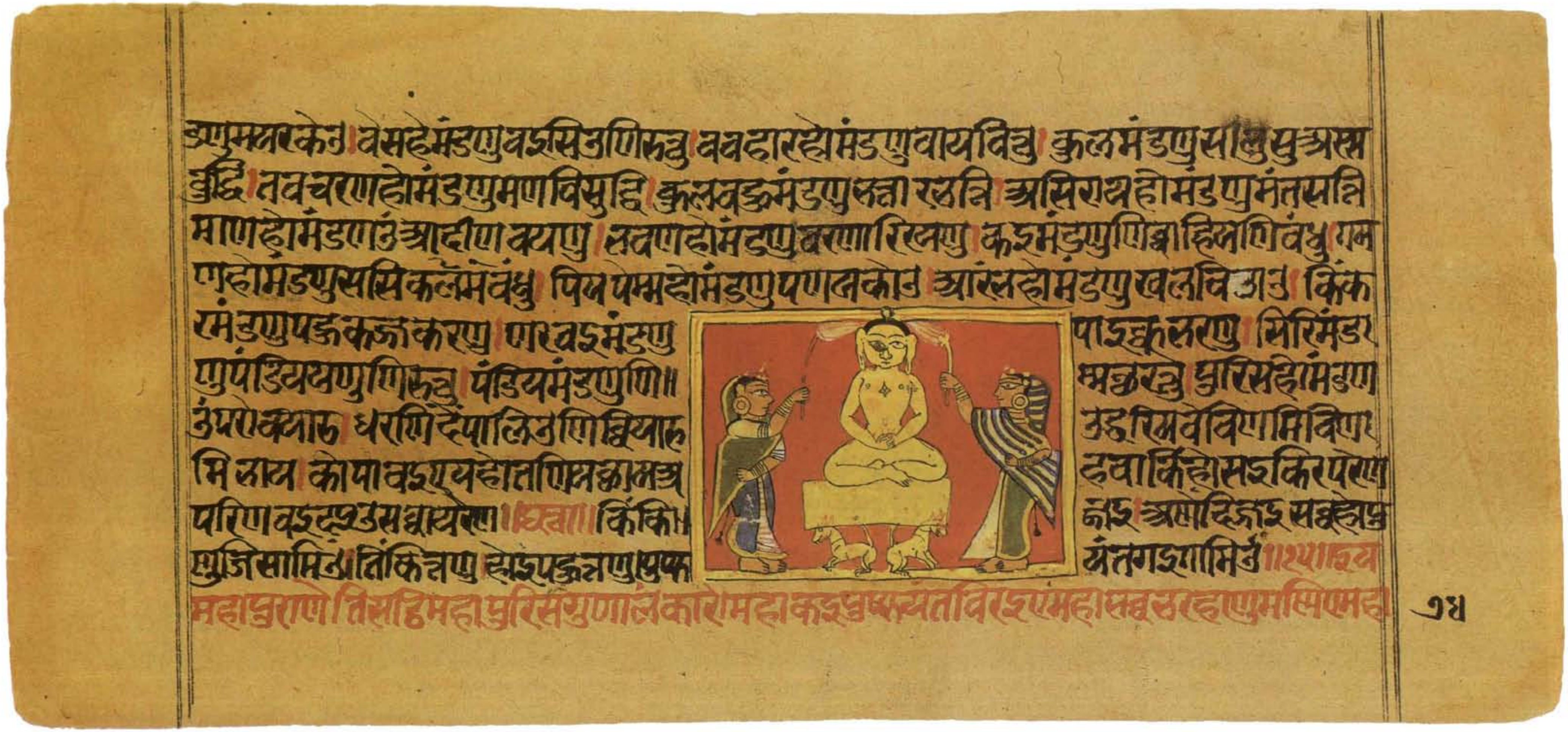

वेश्या का मण्डन निश्चय ही वेश्यावृत्ति है; व्यवहारी का मण्डन त्यागवृत्ति है; कुल का मण्डन शील है, शास्त्र का मण्डन बुद्धि है, तपश्चरण का मण्डन चित्त की विशुद्धि है, कुलवधू का मण्डन अपने पति की भक्ति है, राजा का मण्डन मन्त्र शक्ति है, मान का मण्डन अदैन्य वचन है, भवन का मण्डन श्रेष्ठ नारीरत्न है, कवि का मण्डन अपने प्रबन्ध का निर्वाह है। आकाश का मण्डन सूर्य और चन्द्र हैं, प्रियप्रेम का मण्डन प्रकोप है, प्रारम्भ का मण्डन खलवियोग है। किंकर का मण्डन अपने स्वामी का काम करना है। राजा का मण्डन प्रजा का भरण करना है। निश्चय से लक्ष्मी का मण्डन पण्डितजन हैं, और पण्डितजन का मण्डन मत्सरता से रहित होना है। पुरुष का मण्डन परोपकार है। जिसका पालन धरणेन्द्र ने निर्विकार भाव से किया है, ऐसे नमि और विनमि दोनों भाइयों का उद्धार कर दिया, उसकी शोभा को कौन पा सकता है। अथवा दूसरे से क्या हो सकता है? दैव ही सब रूप में परिणत हो सकता है।

घत्ता—दूसरा क्या देता है और क्या लेता है। पुण्य ही सबका स्वामी है। उसी पुण्य से भरत की कीर्ति प्रमुख और आकाशगामी है॥ १५॥

इसप्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा और महामन्त्री भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का नमि-विनमि राज्यप्राप्ति नाम का आठवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

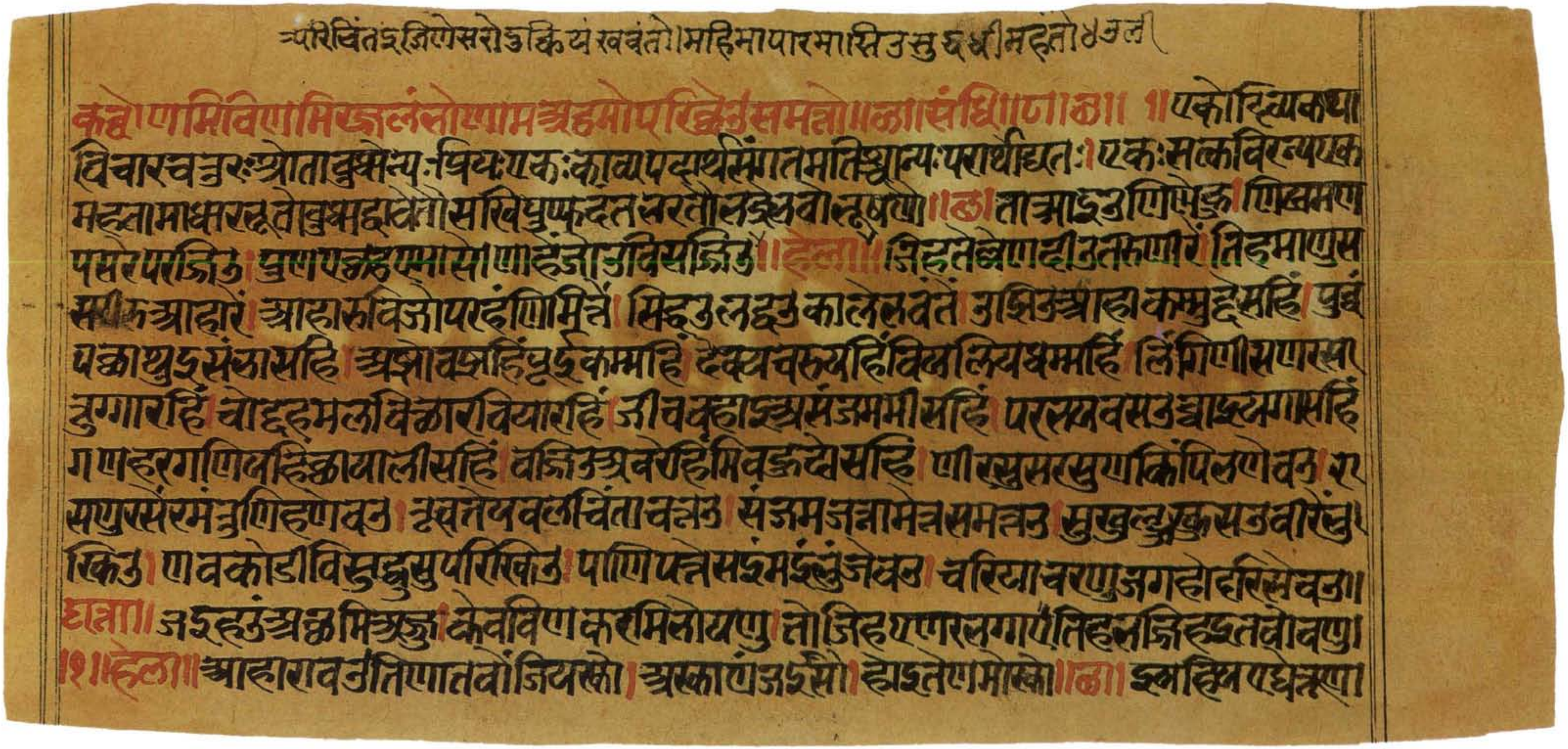

सन्धि ९

१

तब स्वामी ने अपने स्नेहहीन मन प्रसार का ध्यान किया, और उसे जीत लिया। छठा माह पूरा होने पर स्वामी ने अपना कायोत्सर्ग समाप्त कर लिया। महिमा की अन्तिम सीमा पर पहुँचे हुए शुद्ध बुद्धि, पापों का नाश करनेवाले महान् जिन सोचते हैं—जिस प्रकार तेल से दीपक और नीर से वृक्ष जीवित रहता है, उसी प्रकार आहार से मनुष्य शरीर जीवित रहता है। आहार भी वही जो दूसरे के निमित्त बना हो, सिद्ध हो और समय पर मिल जाये, जो आहार कर्म के उद्देश्यों से रहित हो, पहले और बाद, स्तुति की भाषा से शून्य हो, अधिक जल और चावलों के मिश्रण से रहित हो, विगलित धर्म देवचरुओं, लिंगी, दरिद्री मनुष्यों के दरिद्रतापूर्ण उद्‌गारों, चौदह प्रकार के मलों के विस्तार-विकारों, जीवों के वधादि के असंयमों के मिश्रणों, दूसरे के भय से उठाये हुए ग्रासों, इस प्रकार गणधरों के द्वारा कहे गये छयालीस और दूसरे बहुदोषों से रहित हो, और जिसे सरस-नीरस कुछ भी न कहा जाये, रस में स्वाद देनेवाली जीभ को रोका जाये, रूप-तेज-बल की चिन्ता से मुक्त, भोजन संयम की यात्रा के लिए ही किया जाये। रूखा-सूखा कांजी (मांड, दही-नमक-जीरा आदि डालकर बनाया गया एक खट्टा पेय) का बघारा हुआ, मन-वचन और काय, तथा कृत-कारित और अनुमोदन (नवकोटि विशुद्ध) से शुद्ध, अच्छी तरह परीक्षित, भोजन मैं पाणिरूपी पात्र से खाऊँ एवं चर्या का आचरण संसार को बताऊँ।

घत्ता—यदि मैं किसी प्रकार इसी तरह रहता हूँ और भोजन नहीं करता हूँ तो जिस प्रकार ये लोग नष्ट हो गये, उसी प्रकार दूसरा मुनिसमूह भी नष्ट हो जायेगा॥ १॥

२

आहार से व्रत होता है, व्रत से तप होता है और तप के द्वारा इन्द्रियाँ जीती जाती हैं। इन्द्रियों की विजय से सम होता है और सम से मोक्ष। अपने मन में यह स्वीकार कर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और योग के छोड़कर सिद्धार्थ नामक उस वन से परमेष्ठी ऋषभनाथ विहार करते हैं। चार हाथ धरती पर गजदृष्टि से देखते हुए पैर रखते हैं, जीवों को नहीं कुचलते। रमणीय नगरों और ग्रामों में उन्हें विनय और नय से भरे हुए नागरिक प्रणाम करते हैं। ग्रामीण अद्‌भुत रस में लीन होकर उन्हें देखते हैं, भय से काँप उठते हैं। दूसरे कहते हैं—"ये महाराज हैं, ये महादेव हैं। इन्होंने धन, स्वर्ण और धान्य दिया है, मण्डलों और महीतलों को बहुफलों से युक्त किया है। इनकी प्रवृत्ति सहसा उद्धार करती है।" यह सोचकर आर्द्र (ताजे) विविध फलदलों, भ्रमरों से अत्यधिक अभिराम नवकुसुम-मालाओं, कुंकुम,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

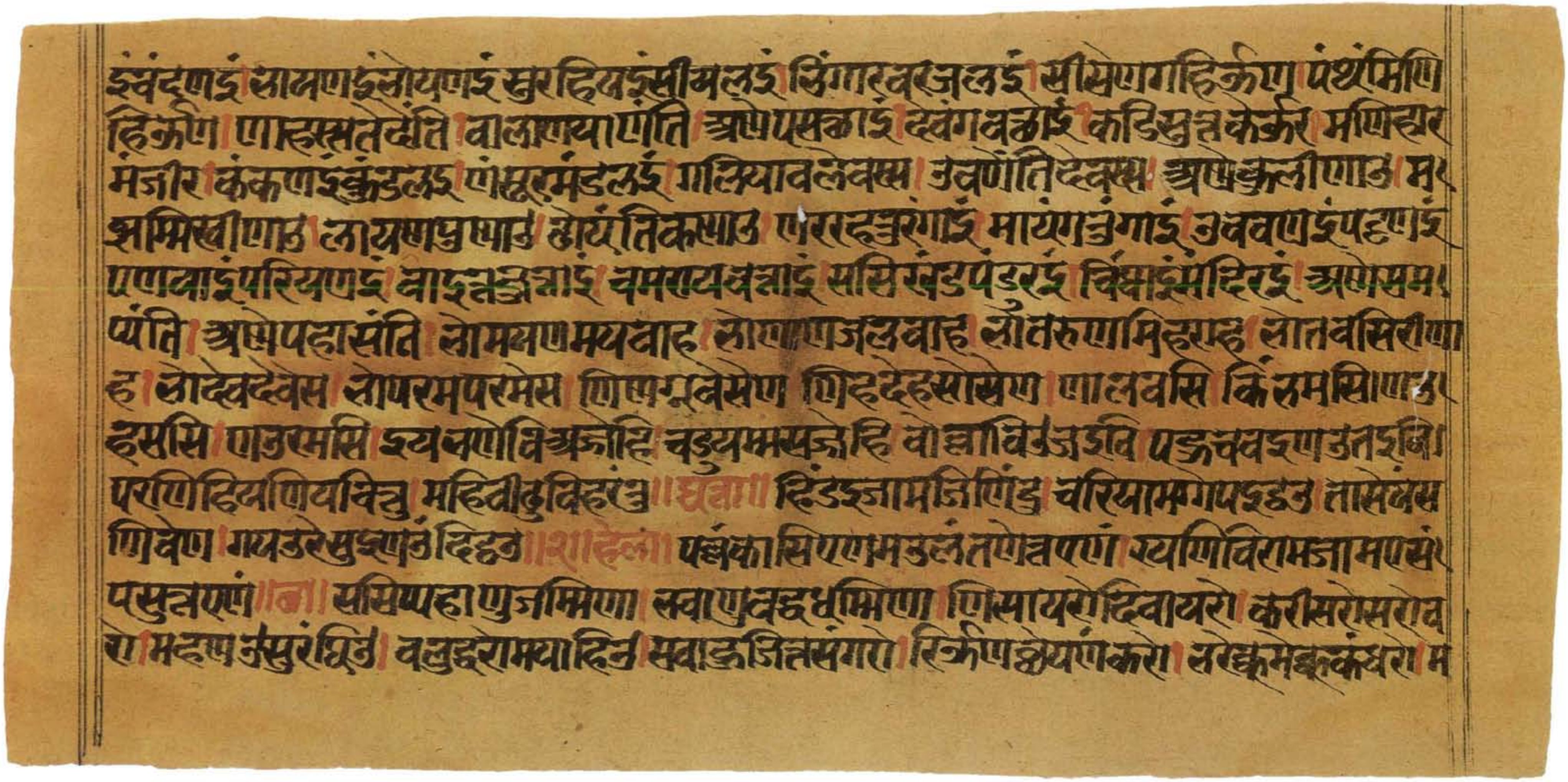

चन्दन, भाजन-भोजन, सुरभित चावल, भिंगारकों में उत्तम जलों को अपने सिरों पर लेकर, रास्ते में खड़े होकर स्वामी को उक्त चीजें देते हैं, वे अज्ञानी नहीं जानते। दूसरे प्रशस्त देवांग वस्त्र, कटिसूत्र, केयूर, मणिहार, मंजीर, कंगन, कुण्डल, (मानो सूर्यमण्डल हों) पाप से रहित देव के लिए लाते हैं, दूसरे लोग कुलीन कृशोदरी (मध्य में क्षीण), लावण्य से परिपूर्ण कन्याओं को भेंट में देते हैं, नर-रथ-तुरंग और गजों के समूह, पैने प्रहरण, उपवन, नगर, वाद्यों से युक्त चमर और आतपत्र (छत्र), चन्द्रमा और शंखों के समान सफेद ध्वज और प्रासाद दूसरे देते हैं, और दूसरे देते हैं, ''कामदेवरूपी मृग के आखेटक, ज्ञानरूपी जल के प्रवाह, तरुण सूर्य के समान आभावाले, हे तपश्री के स्वामी, हे देवदेवेश, हे परम-परमेश, दिगम्बर वेष अपने शरीर के शोषण से क्या होगा, क्यों नहीं बताते। न हँसते हो न रमण करते हो।'' यह कहकर चाटुकर्म से सज्जित आर्यों ने उन्हें बुलवाना चाहा परन्तु स्वामी तब भी नहीं बोलते। घर से अपने चित्त को हटानेवाले वह धरतीतल पर विहार करते हैं।

घत्ता—चर्यामार्ग में प्रवृत्त जब वह (आहार के लिए) घूमते हैं तभी राजा श्रेयांस ने हस्तिनापुर में स्वप्न देखा॥ २॥

३

पलंग पर सोते हुए, अपने नेत्र मलते हुए, रात्रि के अन्तिम प्रहर में सोमप्रभ के अनुज श्रेयांस ने स्वप्न देखा—चन्द्र-सूर्य-महागज-सरोवर-समुद्र-कल्पवृक्ष, बल से उत्कट सिंह, अपने बाहुओं से युद्ध को जीतनेवाला, शत्रु का छेदन करनेवाला, भार उठाने में समर्थ कन्धोंवाला,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

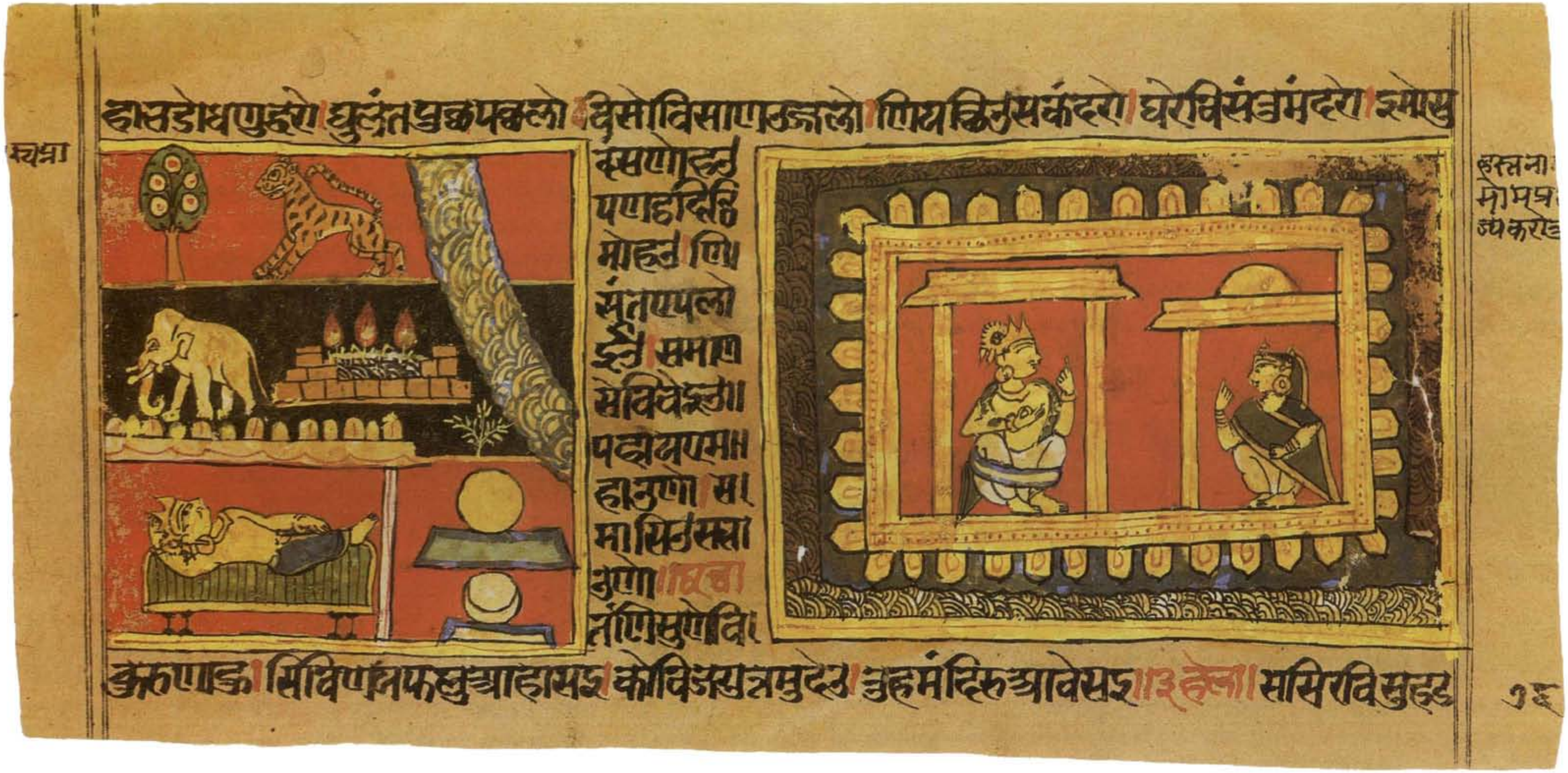

धनुर्धारी महासुभट। पूँछ का पिछला भाग हिलाता हुआ सींगों से उज्ज्वल वृषभ, और घर में प्रवेश करते हुए गुफासहित मन्दराचल को देखा। इस प्रकार दृष्टि के आकर्षण को समाप्त करनेवाले स्वप्नसमूह को उसने रात्रि के अन्त में देखा, उसने अपने मन में विचार किया। प्रभात के समय उसने महाआयुवाले अपने भाई (सोमप्रभ) से संक्षेप में कहा।

घत्ता—यह सुनकर कुरुनाथ स्वप्नफल का कथन करता है—कोई विश्व में उत्तम देव तुम्हारे घर आयेगा॥ ३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४

चन्द्र, रवि, सुभट, सिंह, सरोवर, समुद्र और वृषभ के गुणों से युक्त सचल मन्दराचल की तरह अपनी गति से महागज का उपहास करता हुआ, नीली जटाओं के समूह से व्याप्त, मेघमालाओं से श्याम पर्वत की तरह, ऐरावत की सूँड के समान बाहुवाला, लटकते हुए प्रारोहों से युक्त वटवृक्ष के समान वह, तब दूसरे दिन नगर में प्रविष्ट हुए। नर-नारियों ने निरंजन उन्हें देखा। दौड़ते हुए जनपद के सम्मर्दन और जय-जय शब्द से कलकल होने लगा। कोई कहता है—यहाँ देखिए जहाँ मैं अंजलि बाँधे हुए खड़ा हूँ। कोई कहता है—स्वामी, दया कीजिए, एक बार प्रत्युत्तर दे दीजिए। कोई कहता है—मेरे घर आइए, हे स्वामी! क्या भृत्य की भक्ति अच्छी नहीं लगती। जिस प्रकार चन्द्रमा नक्षत्र-नक्षत्र में विचरण करता है, विश्वपति भी घर-घर में प्रवेश करते हुए गृहिणी के गृह प्रांगण में आते हैं, तब उसने तात या भाई के समान देव को देखा, मन में सन्तोष धारण करते हुए वह बाहर आया। तात को प्रणाम करते हुए इस प्रकार कहता है—"स्नानघर में स्नान करिए, धोती-तेल और आसन रख दिया गया है, हे स्वामी! स्नान कीजिए और शरीर के उपकरण लीजिए सुन्दर वस्त्र, स्वर्ण के आभरण। आसनपट्ट पर बैठिए, और सरस सामग्री से युक्त भोजन कीजिए, यह तुम्हारे योग्य है, बुलवाये जाने पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

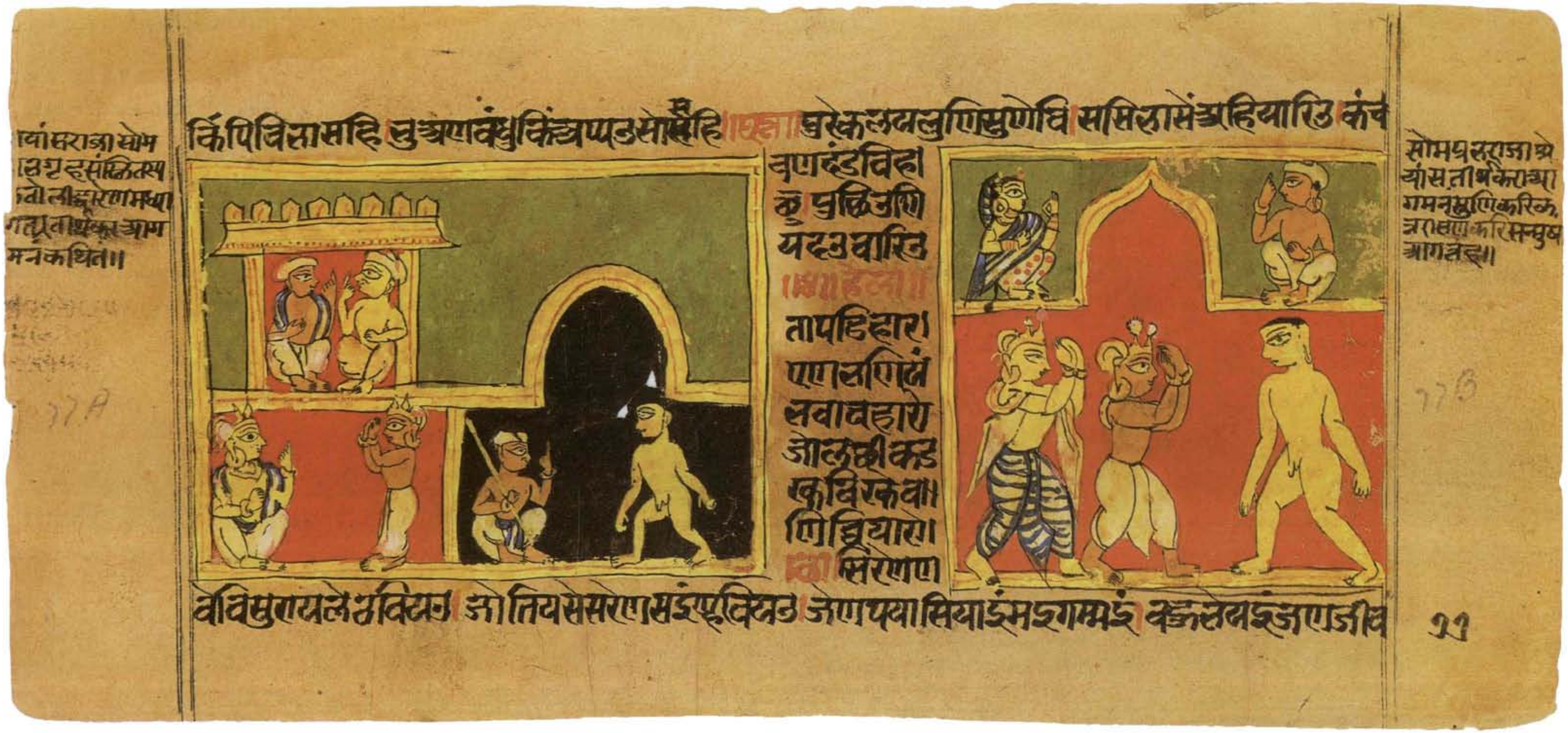

भी कुछ नहीं बोलते? हे भुवनबन्धु, अपने को क्यों सुखाते हैं?

घत्ता—नगर में कलकल सुनकर राजा सोमप्रभ ने स्वर्णदण्ड है हाथ में जिसके, ऐसे अपने द्वारपाल से पूछा ॥ ४ ॥

५

तब प्रतिहार ने कहा, ''भव का नाश करनेवाले जो लक्ष्मी के द्वारा कटाक्ष करने पर भी निर्विकार रहते हैं, इन्द्र ने सिर से प्रणाम कर जिन्हें मेरु पर स्थापित किया और स्वयं अभिषेक किया है, जिन्होंने नाना प्रकार के बुद्धिगम्य लोकजीवन कर्म प्रकाशित किये,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिन्होंने तुम्हें और भरत को धरती दी, और स्वयं नयी वृत्ति (मुनिवृत्ति) स्वीकार की, ऐसे वह त्रिलोक पितामह आये हैं।'' यह सुनकर सोमप्रभ उठा और श्रेयांसकुमार के साथ निकला। तब तक हाथ आये हुए, मानो दिग्गज हो, सामने आते हुए जिनवर को देखा, मानो वसुधारूपी अंगना ने हाथ फैला दिया हो, मानो आकाशरूपी सरिता में कमलों के लिए कृताग्रह सूर्य हो, मानो भव-भव का नाश करनेवाला विश्वरूपी भवन का खम्भा हो। स्वामी के स्नेह के भार से भरकर हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम किया। लब्धप्रशंस सोमप्रभ और श्रेयांस ने उनकी प्रदक्षिणा कर, हर्षाश्रुरूपी ओसकणों से सिक्त नेत्ररूपी कमलों से उन्हें देखा।

घत्ता—अत्यन्त प्रसन्न मुख होकर वह बात करना छोड़ देता है। उनको देखकर वह पूर्वभव के स्नेह को जान लेता है॥५॥

६

जिन भगवान् को देखकर कुमार श्रेयांस ने लोकश्रेष्ठ अशेष, स्ववासी दशेश श्रीमती और वज्रजंघ के जन्मान्तर के अवतार को ज्ञात कर लिया। मुनियों के लिए जो मुख्य अनन्त पुण्य को करनेवाला उत्तम आहारदान दिया था और जिसमें इन्द्र आया था, उसके मन में यह बात स्थित हो गयी। उसने फिर कहा, ''अहो, निश्चय ही मुझे ज्ञान हो गया है और मैंने प्राचीन वृत्तान्त जान लिया है। अजन्मा, अरागी, अप्रमेय, अमादी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

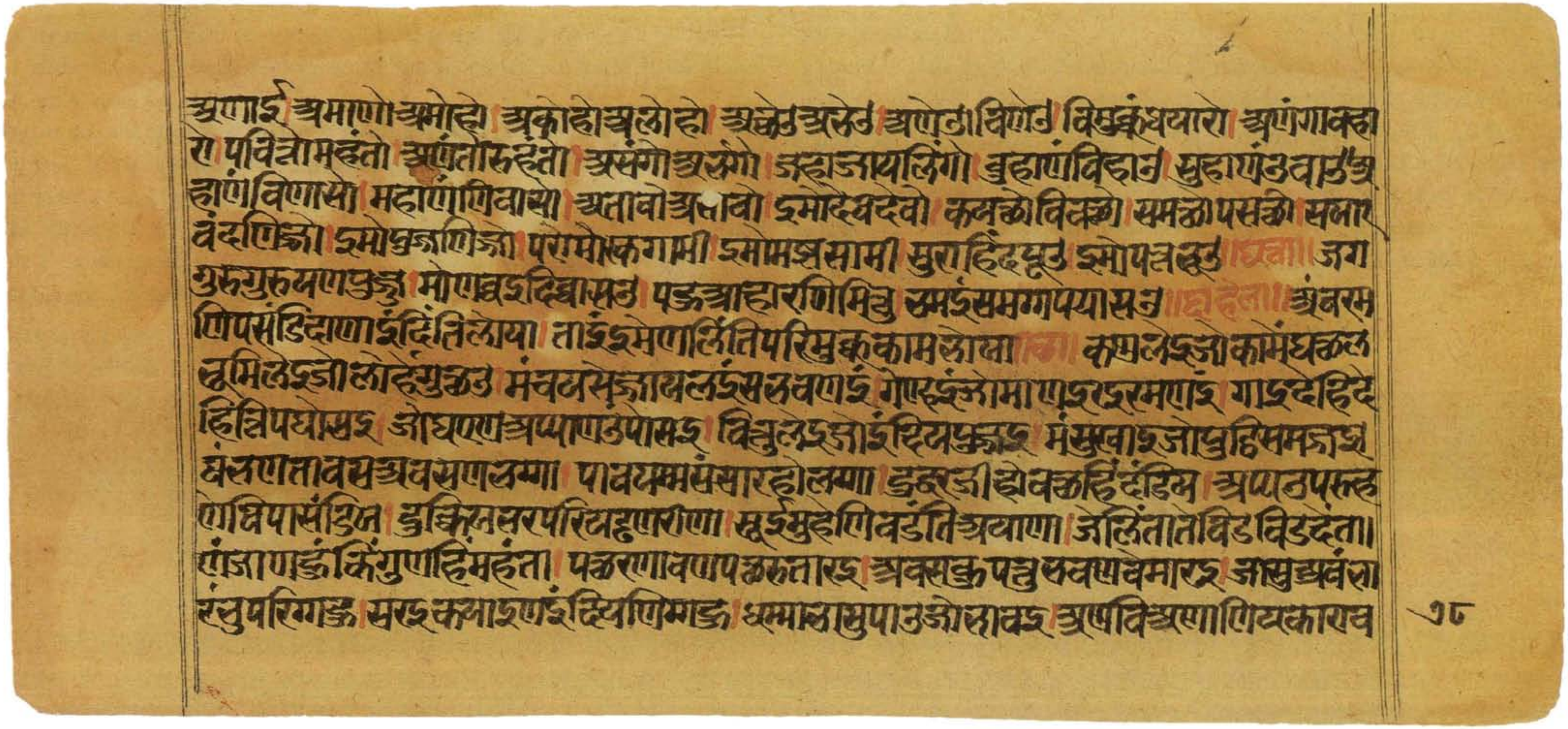

अमानी, अमोही, अक्रोधी, अलोभी, अच्छेद्य, अभेद्य, अनेक होकर भी एक, अन्धकार से विमुक्त, कामदेव के विध्वंसक, पवित्र, महान्, अनन्त, अरहन्त, असंग, अभंग, दिगम्बर, बुधों के विधाता, सुखों के साधन, पापों के नाशक, तेजों के निवास, क्रोधादि भावों से शून्य, पीड़ाहीन, ये देवदेव हैं। कृतार्थ, विवस्त्र, समर्थ और प्रशस्त, सदा वन्दनीय ये पूज्यनीय हैं। श्रेष्ठ मोक्षगामी ये मेरे स्वामी हैं। देवेन्द्र और अहीन्द्र के द्वारा पूज्य यह पात्रभूत (योग्य पात्र) हैं।

घत्ता—विश्वगुरु, गुरुजनों के पूज्य, मौनव्रती, दिशारूपी वस्त्र धारण करनेवाले, यतिमार्ग को प्रकाशित करनेवाले यह आहार के निमित्त घूम रहे हैं॥ ६॥

७

लोग उन्हें वस्त्र, मणि और स्वर्ण का दान देते हैं, परन्तु कामभोगों से मुक्त ये उन्हें नहीं लेते। जो काम से ग्रस्त है वह कन्या लेता है, भूमि वह लेता है कि जो लोभ से ग्रस्त है, भवन सहित खाट और शय्यातल वह ग्रहण करता है जो रतिक्रीड़ा को मानता है। गाय दो-गाय दो, ऐसा वह कहता है जो घी से अपने को पोषित करता है। धन वह लेता है जो इन्द्रियों की पूजा करता है। मांस वह खाता है जो अपनी चर्बी बढ़ाना चाहता है। ब्राह्मण और तपस्वी अपने व्यसनों से ही नष्ट हो गये और पापकर्मा वे संसार में फँस गये। दुर्धर जीभ और उपस्थ से पाखण्डी स्वयं को और दूसरों को नष्ट कर दण्डित हुए। पापों के भार की वृद्धि से क्षीण अज्ञानी जन्ममुख (संसार) में पड़ते हैं। जो लेते हैं वे विट और जो देते हैं वे विट। हम नहीं जानते, वे किन गुणों से महान् हैं। पत्थर की नाव पत्थर को नहीं तार सकती, अवश्य ही कुपात्र संसारसमुद्र में मारेगा। जिसके अब्रह्मचर्य, आरम्भ और परिग्रह है और जिससे कभी इन्द्रिय-निग्रह नहीं सटता, धर्म का आभास देनेवाला पाप जिसे अच्छा लगता है, और भी दूसरे अज्ञानियों से कराता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

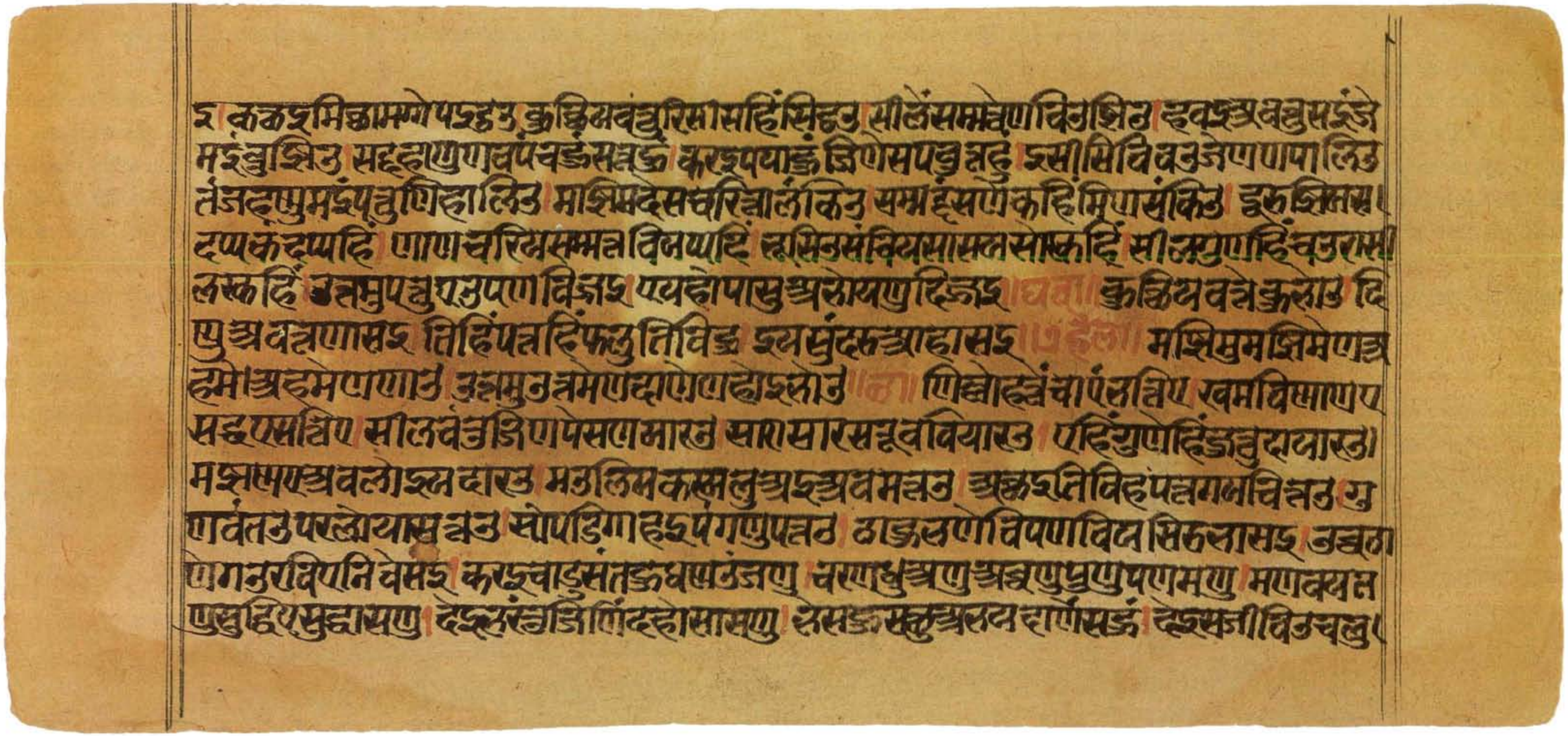

किसी मिथ्यामार्ग में प्रविष्ट हुए उसे ऋषीश्वरों ने कुत्सित पात्र कहा है। शील और सम्यक्त्व से रहित अपात्र होता है, यह बात मैंने स्वयं देख ली है। नौ, पाँच और सात तत्त्वों का श्रद्धान करता हुआ, जिनेश्वर के द्वारा उक्त पदार्थों में विश्वास करता है, परन्तु जिसने थोड़े से भी थोड़े व्रत का पालन नहीं किया मैंने उसे जघन्य पात्र के रूप में देखा है। मध्यम पात्र एकदेश चारित्र से शोभित होता है, और सम्यक्दर्शन में कहीं भी शंका नहीं करता, जो दर्प सहित कामदेव को उखाड़नेवाले ज्ञान-दर्शन और चारित्र्य के विकल्पों, शाश्वत सुख का संचय करनेवाले चौरासी लाख शीलगुणों से भूषित हैं ऐसे इन उत्तम पात्र को प्रणाम करना चाहिए, इसके लिए प्राशुक भोजन देना चाहिए।

घत्ता—कुपात्र को दिया गया दान कुभोग देता है। और अपात्र में दिया गया दान नष्ट हो जाता है, परन्तु पात्र को दान देने से तीन प्रकार का फल होता है, यह सुन्दर कहा जाता है ॥ ७ ॥

८

मध्यम से मध्यम, अधम से अधम फल जानना चाहिए। उत्तम दान से उत्तम भोग होता है। निर्लोभता, त्याग और भक्ति, क्षमा, विज्ञान और शुद्ध भक्ति इन गुणों से युक्त दाता (श्रेयांस) मध्याह्न (दोपहर) में द्वार देखता है। हाथ जोड़े हुए, अत्यन्त अप्रमादी, तीन प्रकार के पात्रों को चित्त में सोचते हुए, गुणवान्, परलोकासक्त वह वहाँ स्थित है, और आँगन में आये हुए उन्हें पड़गाहता है, 'ठहरिए' यह कहकर प्रणत शिर वह बोलता है, और गौरवपूर्ण उच्च स्थान में उन्हें ठहराता है, वह स्तुति करता है, ''सन्तों से लोक धन्य है।'' चरण धोना, अर्चा और फिर प्रणमन करता है। मन-वचन और काय की शुद्धि से शुद्धासन देता है। जिनेन्द्र के शासन की याद करता हुआ अभयदान के साथ औषधि और शास्त्र देता है अपने जीवन को चल और लघु मानकर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

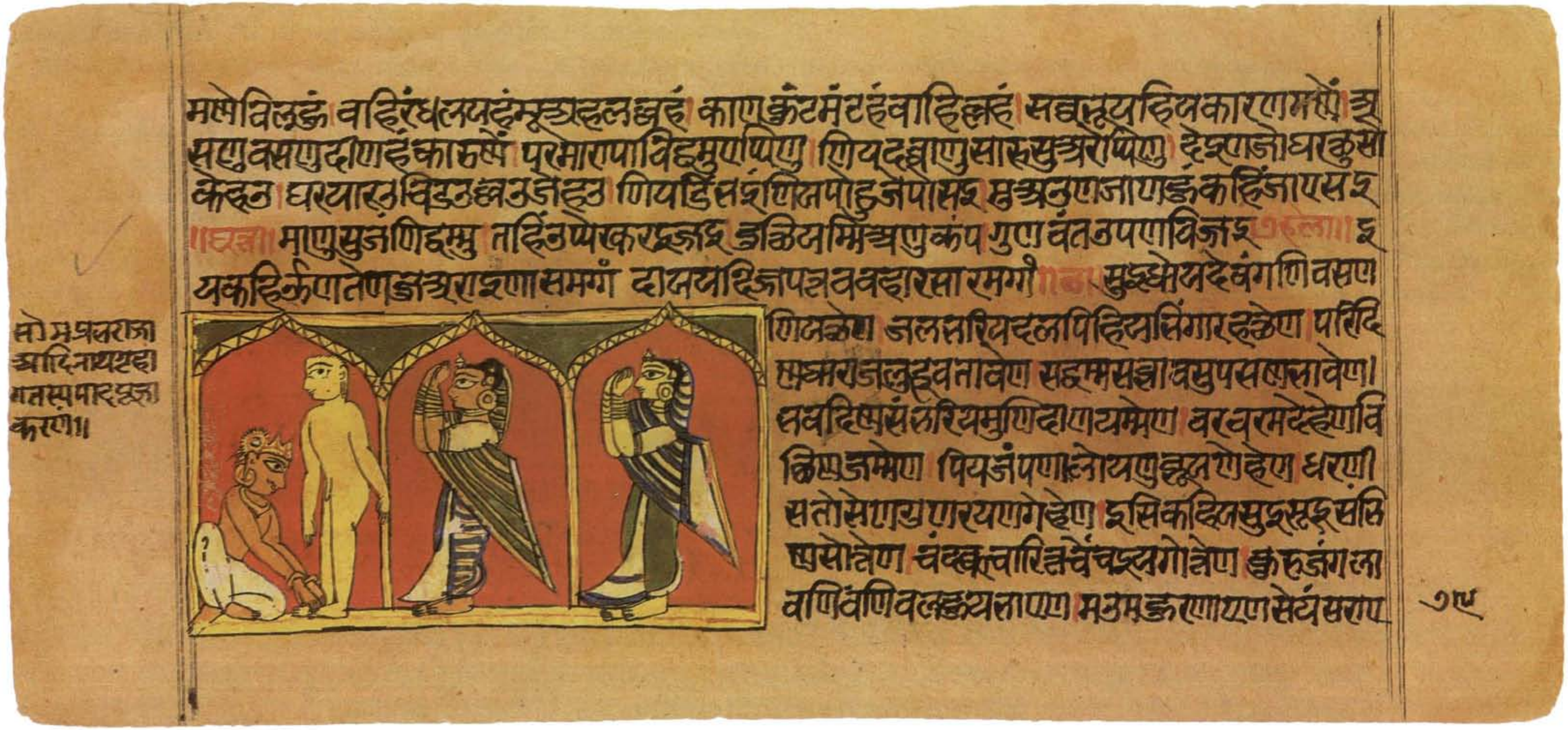

बहिरों, अन्धों, गूँगों, अस्पष्ट बोलनेवालों, काने, बेकार, उद्यमहीनों और व्याधिग्रस्त दीनों के लिए, गणनीय उसने सर्वप्राणियों के हित के कारणभूत कारुण्य से भोजन और वस्त्र दिये। परहिंसक और पापिष्टों को छोड़कर जो गृहस्थ अपने धन के अनुसार सोच-विचारकर दान नहीं करता, वह घर बनानेवाली उस गौरेया के समान है जो अपने बच्चे और अपना पेट पालती है और यह नहीं जानती कि मरकर कहाँ जायेगी।

घत्ता—जो मनुष्य धर्महीन है वहाँ उपेक्षा करनी चाहिए; जो दुस्थित हैं, उनमें अनुकम्पा करनी चाहिए और गुणवानों को प्रणाम करना चाहिए॥ ८॥

९

इसप्रकार उस युवराज ने दानकर्ता, दातव्य पात्र और व्यवहार का सारमार्ग समग्ररूप में कहकर पवित्र धोये हुए दिव्य वस्त्र पहनकर जल से भरा, पत्तों से ढका, भृंगार हाथ में लेकर, दी गयी जलधारा से ताप को दूर कर, जिसे सद्धर्म और श्रद्धा के वश से भाव उत्पन्न हो रहे हैं, पूर्वजन्म के स्मरण से जिसे पूर्वजन्म का मुनिदानकर्म याद आ गया है, जो श्रेष्ठ चरम शरीरी है, जिसने जन्म का उच्छेद कर दिया है, प्रिय कहने और देखने से जिसे स्नेह उत्पन्न हो गया है, जो धरती को सन्तोष देनेवाला गुणरूपी रत्नों का घर है, जिसके कान, ऋषि के द्वारा कथित शास्त्रों की सूची से छेदे गये हैं, जो चन्द्रार्क चारित्र्य से शोभित शरीर हैं, ऐसे कुरुजांगल राजा के अनुज मधुर और कोमल न्यायवाले श्रेयांस राजा ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

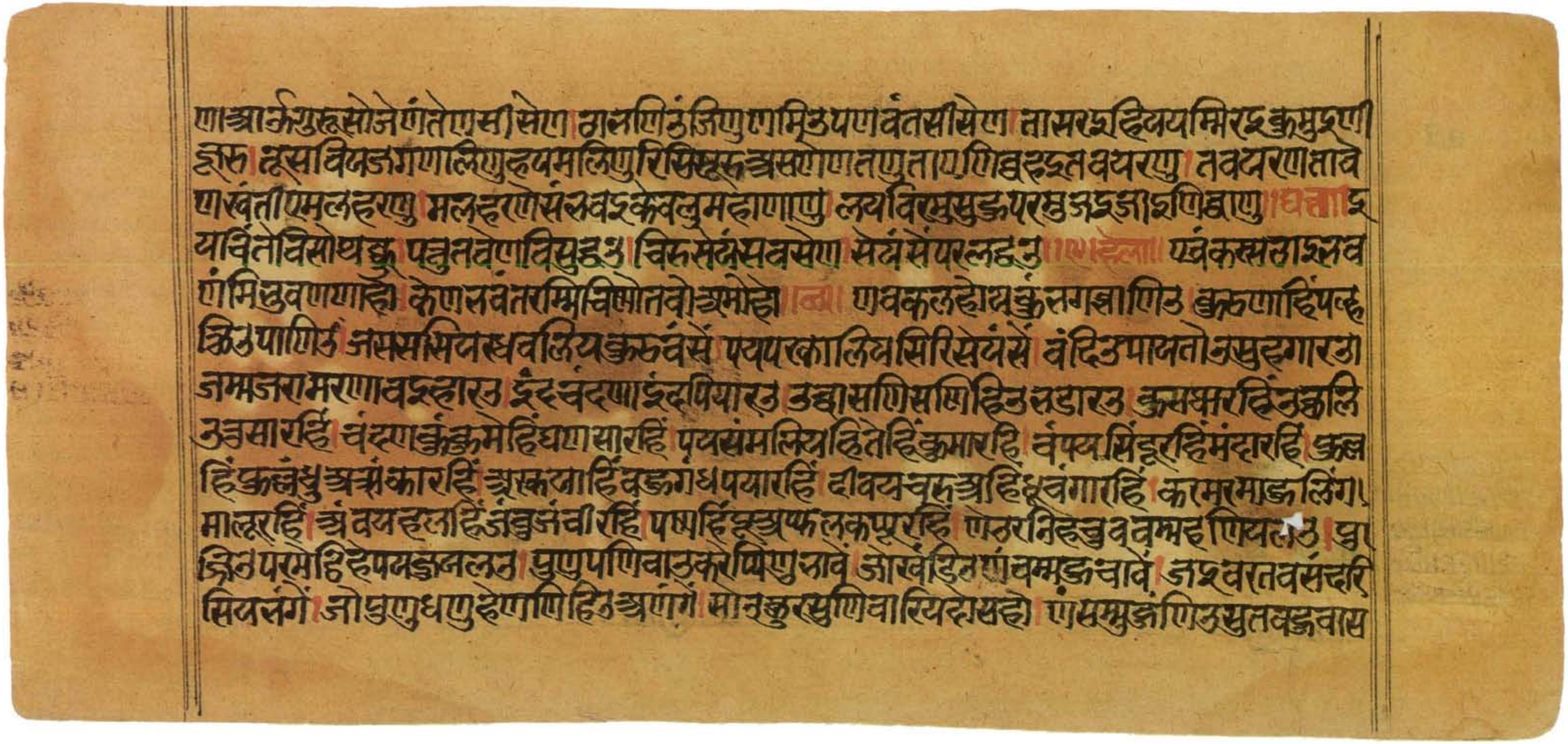

आये हुए उन गुरु को मस्तक झुकाकर 'ठा' (ठहरिए) कहा। रतिरूपी कुमुदिनी को सन्तापदायक विश्वकमल को खिलानेवाले हतमलिन वह ऋषिरूपी सूर्य अपने मन में सोचते हैं कि आहार से शरीर है, उससे तपश्चरण का निर्वाह होता है, तपश्चरण से ताप और क्षमा से पाप का नाश होता है। पाप नष्ट होनेपर महाज्ञान केवलज्ञान उत्पन्न होता है, और उससे अविनश्वर परम सुख होता है और मुनि निर्वाण-लाभ प्राप्त करता है।

घत्ता—इस प्रकार विचारकर तप से विशुद्ध पात्र वे वहाँ ठहर जाते हैं। और पुण्य विशेष के वश से श्रेयांस उन्हें पा लेता है॥ ९॥

१०

इसप्रकार भुवननाथ किसके भवन में ठहरते हैं, जन्मान्तर के अमोघ तप को किसने पहचाना। कुरुनाथ ने नवस्वर्ण के घट के भीतर से लाया गया पानी छिड़का। यश और चन्द्रकिरणों के समान धवलित कुरुवंश के श्री श्रेयांस ने पैरों का प्रक्षालन किया और जन्म, जरा तथा मृत्यु की आपत्ति का हरण करनेवाले शुभकारक चरणजल की वन्दना की। इन्द्र, चन्द्र और नागेन्द्रों के लिए प्रिय आदरणीय ऋषभ को ऊँचे आसन पर बैठाया गया। उछलते हुए हिमकणोंवाली जलधाराओं, भ्रमरों की गुंजार से युक्त सिन्दूरों और मन्दारपुष्पों, नाना गन्धवाले अक्षतों, दीपक चरुओं, धूपांगारों, करमर माडलिंगों और मालूरों, आम्रफलों, जम्बूजंबीरों, पत्रों, पूगफलों और कपूरों से, नूपुर के समान कामदेव की शृंखला से च्युत, परमेष्ठी के चरणकमल की पूजा की। फिर भावपूर्वक प्रणाम कर यतिवरों के तप में भंग का प्रदर्शन करनेवाले कामदेव के धनुष के द्वारा जो पुनः छोड़ा गया, और जो फिर से कामदेव के द्वारा धनुष पर नहीं धारण किया गया ऐसा वह इक्षुरस, मानो दोषों का निवारण करनेवाली तपरूपी आग में उपशम भाव को प्राप्त हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

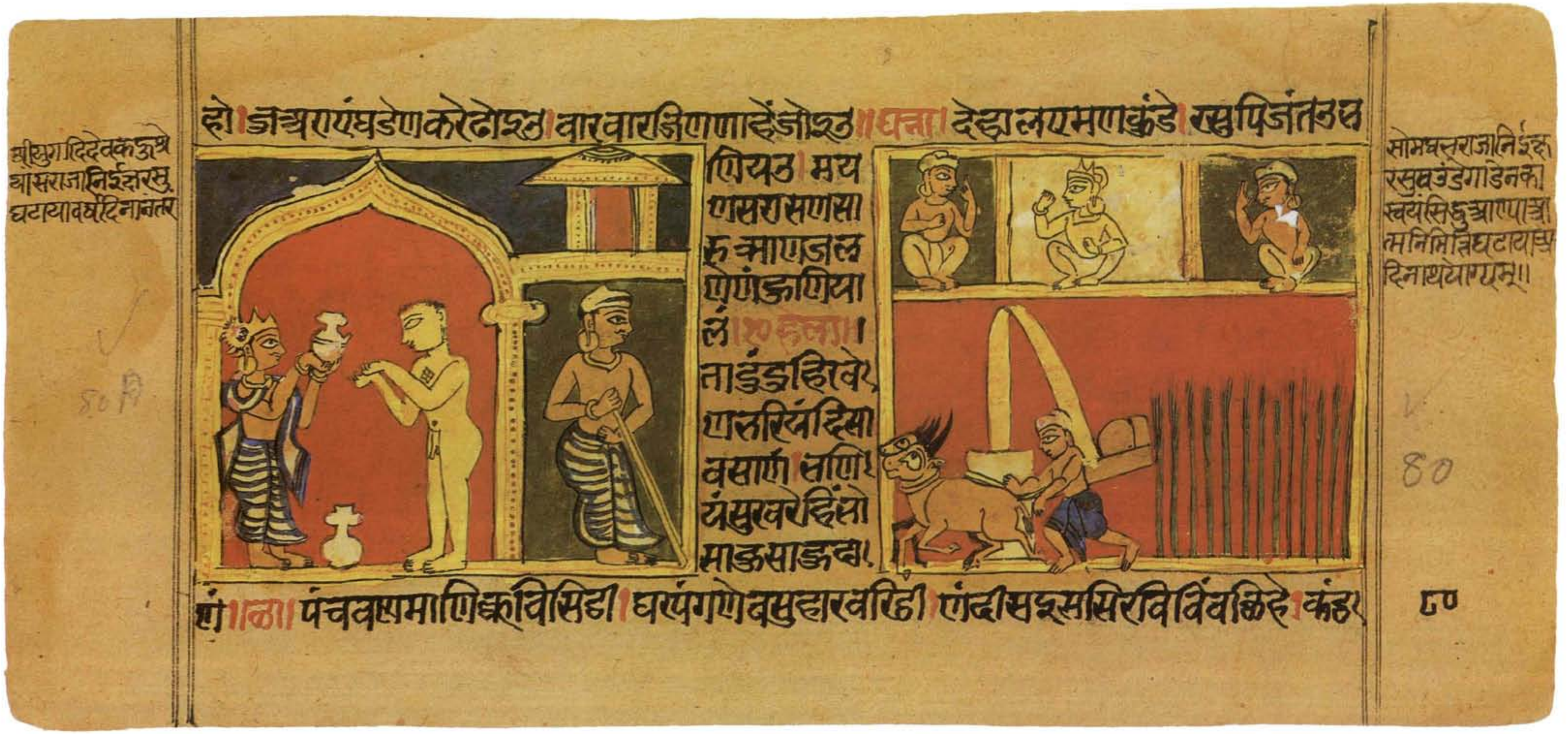

युवराज के द्वारा हाथ पर ढोया गया और जिननाथ के द्वारा बार-बार देखा गया।

घत्ता—देहरूपी घर के मनरूपी कुण्ड में पिये गये रस के बारे में यह कहा गया कि कामदेव के धनुष का सार ध्यान की आग में होम दिया गया॥ १०॥

११

तब नगाड़ों के शब्दों से दिशाओं के अन्त भर उठे। देवश्रेष्ठों ने कहा – "भो! बहुत अच्छा दान"। पाँच प्रकार के रत्नों से विशिष्ट धन की धारा उसके घर के आँगन में बरसी, जो मानो शशि और सूर्य के बिम्बों की आँखोंवाली

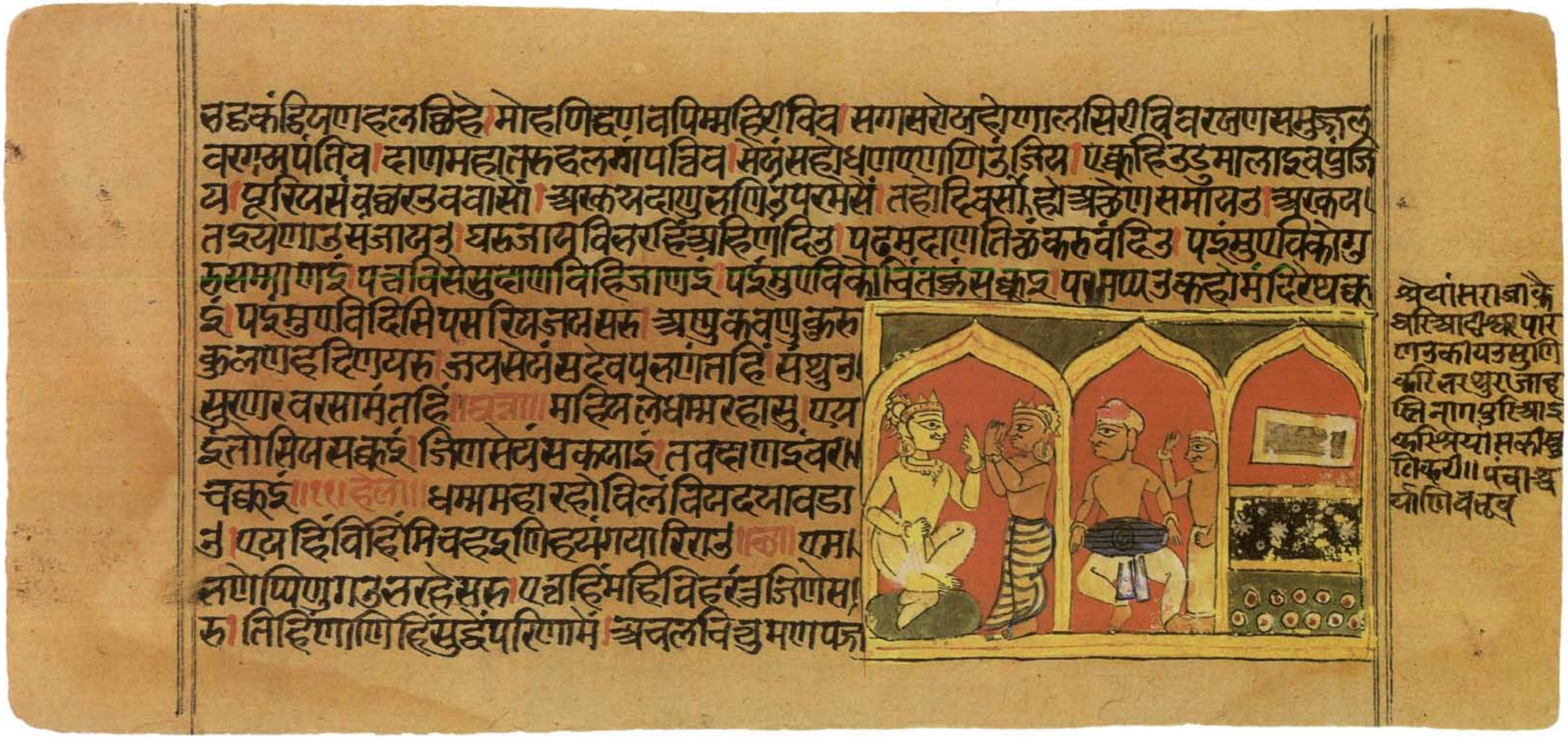

नभरूपी लक्ष्मी के कण्ठ से गिरी हुई कण्ठी हो, मोह से आबद्ध नवप्रेम की लज्जा के समान, स्वर्गरूपी कमल की मालश्री के समान, रत्नों से समुज्ज्वल उत्तम गजपंक्ति के समान, दानरूपी महावृक्ष की फल सम्पत्ति के समान, श्रेयांस के लिए कुबेर के द्वारा दी गयी (पिरोयी गयी) जो नक्षत्रमाला के समान एक जगह पुंजीभूत हो गयी हो। एक साल का उपवास पूरा करनेवाले परमेश्वर ने उसे अक्षयदान कहा। उस दिन से अक्षय तृतीया नाम सार्थक हो गया। घर जाकर भरत ने श्रेयांस का अभिनन्दन किया, और उस प्रथमदान तीर्थंकर की वन्दना की और कहा - ''तुम्हें छोड़कर और कौन गुरु का सम्मान कर सकता है; तथा पात्र विशेष की दानविधि जान सकता है! तुम्हें छोड़कर कौन सोच सकता है; किसके घर में परमात्मा ठहर सकते हैं! दिशाओं में अपने यश का प्रसार करनेवाले तुम्हें छोड़कर और दूसरा कौन कुरुकुलरूपी आकाश का सूर्य हो सकता है? हे श्रेयांसदेव! जय'' - यह कहते हुए सुरवर और नरवर सामन्तों ने उनकी संस्तुति की।

घत्ता—धरती तल पर धर्मरूपी रथ के ऋषभ जिन और श्रेयांस के द्वारा बनाये गये व्रत और दानरूपी ये सुन्दर चक्र, देवेन्द्र को भी सन्तोष देनेवाले हैं॥ ११॥

१२

''लगी हुई हैं दयारूपी पताकाएँ जिसमें, ऐसा कामदेवरूपी राजा का नाश करनेवाला धर्मरूपी महारथ इन दोनों के द्वारा (व्रत और दान) से चलता है।'' यह कहकर भरतेश्वर चला गया। यहाँ जिनेश्वर धरती पर विहार करने लगे। तीन ज्ञानों, शुद्ध परिणाम और मन:पर्यय ज्ञान से अचल चित्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

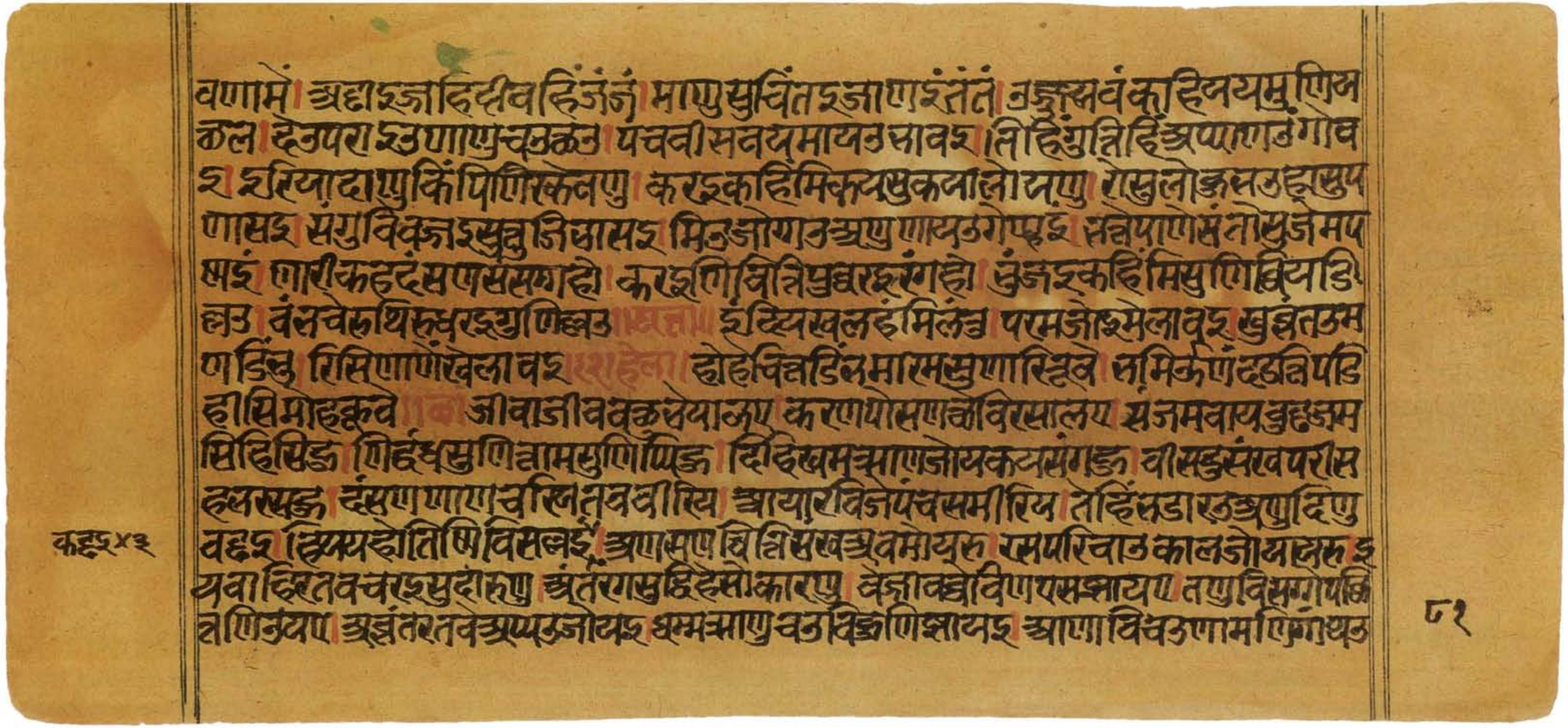

वह इस ढाई द्वीप में मनुष्य जो-जो सोचता है, उसे जानते हैं। ऋजु और वक्र हृदय के द्वारा विचारित अर्थ को जाननेवाला चौथा ज्ञान स्वामी को प्राप्त हो गया। वे पचीस व्रतों की भावना करते हैं, तीन गुप्तियों से अपनी रक्षा करते हैं, वे ईर्यादान करते हैं और कुछ निक्षेपण करते हैं और कृत-सुकृत की आलोचना करते हैं। रोष, लोभ, भय और हास का नाश करते हैं, संग का त्याग करते हैं, सूत्रों की व्याख्या करते हैं, मित योग्य और अनुज्ञात भोजन हाथ में ग्रहण करते हैं, और सन्तोष मानते हैं। नारियों की कथा दर्शन और संसर्ग तथा पूर्वरति के रंग से निवृत्ति करते हैं, कहीं भी अत्यन्त निर्विकार आहार ग्रहण करते हैं, और गुणों से युक्त ब्रह्मचर्य धारण करते हैं।

घत्ता—इन्द्रियरूपी खलों को मिलने पर परमयोगी उन्हें ध्यान में मिलाते हैं, और क्षुब्ध होते हुए मनरूपी बालक को ज्ञान से खिलाते हैं॥ १२॥

१३

हे चित्तरूपी बालक, तू नारीरूप में रमण मत कर। रमण करके तू शीघ्र ही मोहकूप में पड़ेगा कि जो (मोहरूप या नारीरूप) जड़ और चेतन वस्तुओं के भेद के आश्रयरूप, इन्द्रियों का पोषण करनेवाला तथा विरसता का घर है। जिनके व्रतों की अग्नि, संयम की वायु से वृद्धि को प्राप्त हुई है, जो परिषहों से रहित हैं, तामस भाव से दूर हैं, और स्पृहा से शून्य हैं, जिन्होंने दर्शन, ज्ञान, चरित्र और तप को पुष्ट किया है और जो पाँच प्रकार के आचार हैं, उन्हें प्रेरित किया है। इन आचारों से आदरणीय जिन प्रतिदिन बढ़ते हैं और हृदय से तीन प्रकार की शल्यों को दूर करते हैं; अनशन, वृत्तिसंख्या, अवमौदर्य, रसपरित्याग, त्रिकालयोग का आदर इस प्रकार वह बारह प्रकार के कठोर तप का आचरण करते हैं, जो अन्तरंग चित्तशुद्धि का कारण है। वैयावृत्य, विनय, सद्ध्यान, कायोत्सर्ग और प्रायश्चित-नियोजन इस प्रकार आभ्यन्तर तप में आत्मा को युक्त करते हैं। चार प्रकार धर्मध्यान करते है। शब्दोच्चरण से रहित, आज्ञाविचय (द्वादशांग आगमों का हृदय में चिन्तन)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

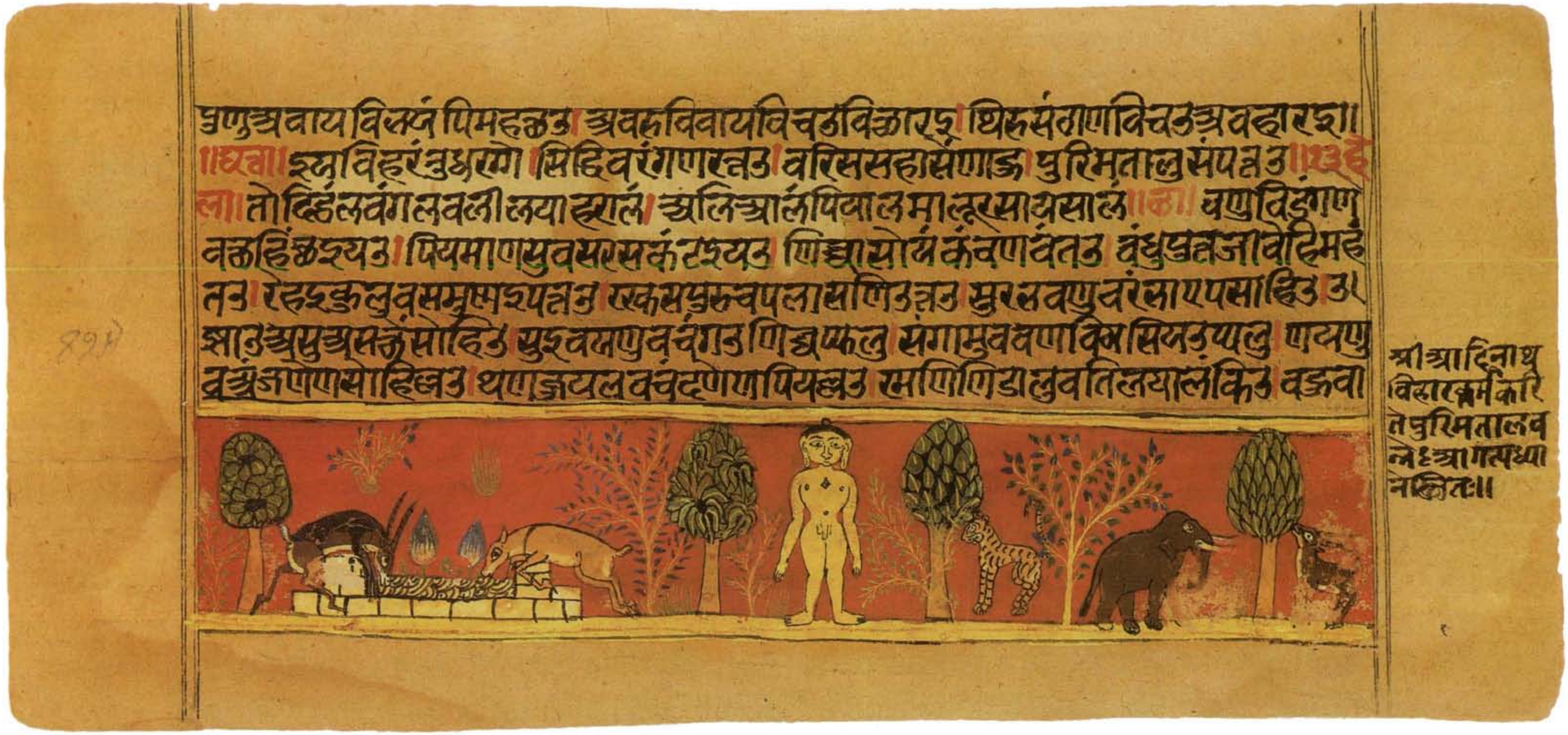

और फिर महार्थक अपायविचय (मिथ्यादर्शन, ज्ञान, चारित्रादि से जीव की रक्षा का उपाय हो, इस प्रकार का चिन्तन); और भी वह विपाकविचय का विस्तार करते हैं (कर्मविपाक का चिन्तन करना) और वह लोक संस्थान (लोक की संस्थिति का चिन्तन) की अवधारणा करते हैं।

घत्ता—इस प्रकार सिद्धिरूपी वरांगना में अनुरक्त प्रभु धरती के अग्रभाग पर विहार करते हुए एक हजार वर्ष में पुरिमतालपुर पहुँचे॥ १३॥

१४

उन्होंने लवंग-लवली लतागृहों और भ्रमरों से युक्त प्रियाल, मालूर, साय और सालवृक्षों से युक्त वन देखा, जो प्रिय मानुष की तरह, विडंग पथ्यों (विडंग वृक्षोंरूपी आभरणों से; विटों (कामकों) के अंगों के आभरणों) से आच्छादित था, जो नित्य अशोक और कांचन वृक्षों से (प्रिय मानुष पक्ष में, शोक रहित और कंचन से) युक्त था, जो बन्धु-पुत्रों के जीवन से (वन पक्ष में वृक्ष विशेष) महान् था। जो कुल के समान समुन्नति को प्राप्त होकर शोभित था। वह निशाचर-नगर की तरह पलास से युक्त (पलाश वृक्षों से युक्त, मांस भोजन से युक्त) था। जो सुर भवन के समान रम्भादि (अप्सराओं, वृक्षों) से प्रसाधित था। अयोध्या के समान सुयसत्थों (शुकसमूहों, छात्रसमूहों) से सहित था। जो श्रुतिवचन के समान (नित्य फलवाला और सुन्दर) था, संग्राम की तरह वन वियसियउप्पलु (जल में विकसित कमलवाला; व्रणों से ऊपर उछलते हुए मांसवाला) था, नयन के समान जो अंजन (आँजन वृक्ष विशेष) से शोभित था, जो स्तनयुगल के समान चन्दन (वृक्ष विशेष और चन्दन) से प्रिय था, रमणी के ललाट की तरह तिलक (वृक्ष विशेष और तिलक) से अंकित था,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

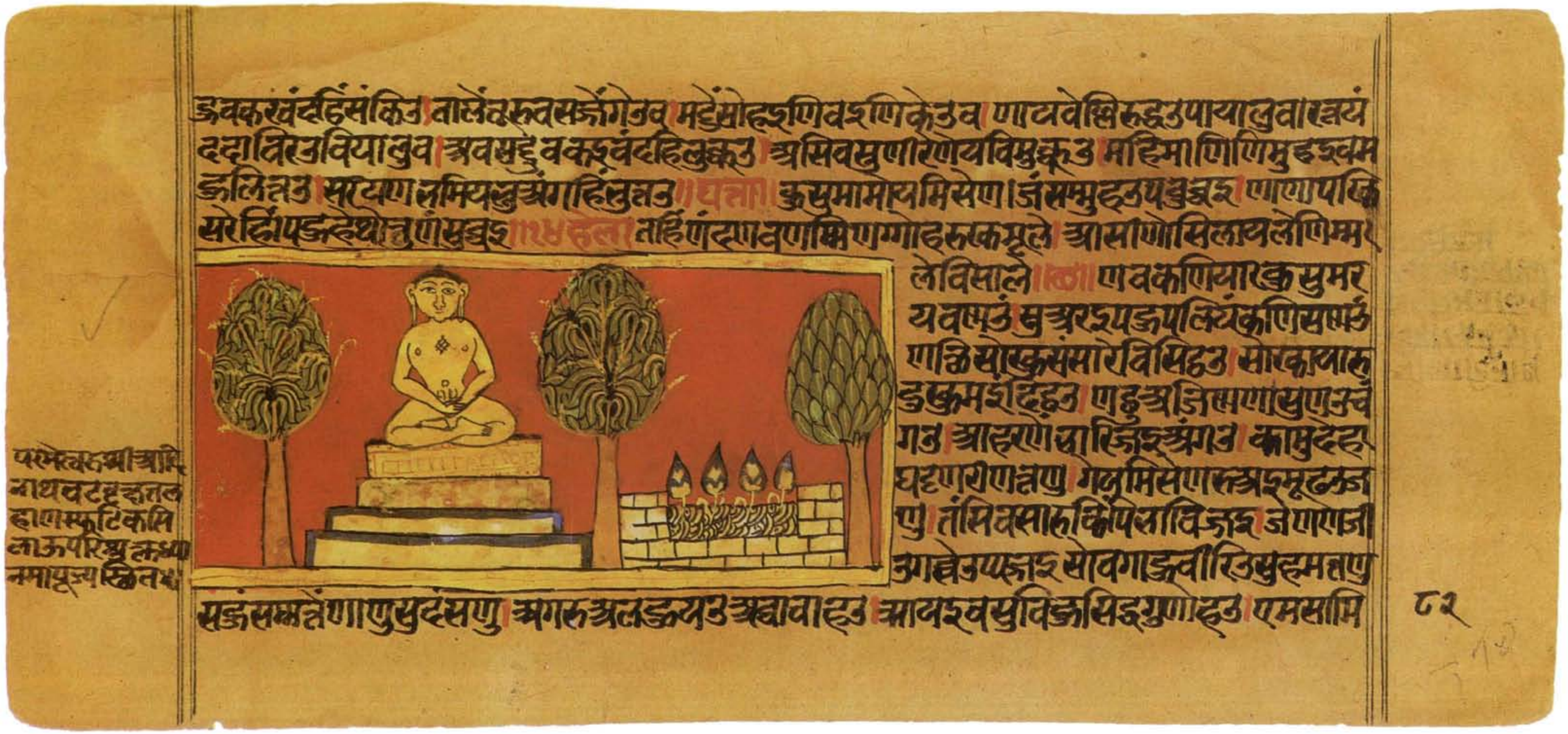

जो सहस्रबाहु की तरह करवृन्दों (करों तथा करौंदी वृक्षों) से व्याप्त था; जो तूर्य के समान ताल (वृक्ष और ताल) से, और सज्ज (सर्ज वृक्ष विशेष एवं षड्ज स्वर) से गीत के समान, और मद्द (वृक्ष और जबर्दस्ती का युद्ध) से नृपति के भवन के समान शोभित था, जो नागबेल्लि (नागों की पंक्तियों और लता विशेषों) से पाताल की तरह; तथा सन्ध्या की तरह रत्तयन्द दाविरउ (लाल चन्द्रमा दिखानेवाला, रक्तचन्दन दिखानेवाला) था। जिसे अपशब्द के समान कविवृन्दों (कवि समूह, वानर समूह) ने छिपा रखा था। जो तलवार के समान (सुनीर से मुक्त) नहीं था। महीरूपी भामिनी के मुख के समान जो मधु से लिप्त था, और रत्नों से सहित भुजंगों (साँपों एवं गुण्डों) से भुक्त था।

घत्ता—जो कुमुदों के आमोद के बहाने वह उद्यान जो कुछ कहता है, वह मानो नाना पक्षियों के स्वरों के द्वारा प्रभु का स्तोत्र कहता है॥ १४॥

१५

उस नन्दनवन में वटवृक्ष के नीचे विशाल चट्टान पर बैठे हुए, नये कनेर की कुसुमरज के समान रंगवाले तथा पद्मासन में स्थित प्रभु सोचते हैं —"संसार में विशिष्ट सुख नहीं है, सुख के आकार में मैंने दु:ख ही देखा है। अक्षय का नाश करनेवाला यह नाट्य अच्छा नहीं है। गहनों से शरीर का भार बढ़ाता है, काम देह का संघर्षण और क्षय। गीत के बहाने मूर्ख जीव रोता है। इसलिए उसे शिवश्रेष्ठ की भावना करनी चाहिए कि जिससे यह जीव दुबारा जन्म न ले। वह अवगाह, वीर्य, सूक्ष्मत्व, समत्व, ज्ञान, दर्शन, अगुरुलघुत्व और अव्याबाधत्व सिद्धों के इन आठ गुणों के समूह का ध्यान करते हैं। इस प्रकार स्वामी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोक्षमार्ग की सम्भावना कर अप्रमत्त गुणस्थान में लगते हैं (आरोहण करते हैं), वहाँ जैसे ही दस प्रकृतियों[1] से मुक्त होते हैं, वैसे ही वे एक क्षण में आठवें अपूर्वकरण गुणस्थान में आरूढ़ हो गये। वह पहले शुक्लध्यान में लीन हो गये, वितर्कविचार लक्षण और श्रुतज्ञान से सहित उसमें लीन मुनि ऋषभ ने सविभक्त अनिष्ट छत्तीस प्रकृतियाँ जीत लीं। फिर सूक्ष्म साम्पराय (१०वाँ गुणस्थान को प्राप्त कर) और उसके ध्यान से लोभ को समाप्त कर, वह 'उपशान्त कषाय' हो गये। कतकफल जैसे जल में होता है, उसी प्रकार वह हो गये। फिर वह क्षीण कषाय गुणस्थान में स्थित हो गये और दूसरे शुक्लध्यान में अवतीर्ण हुए। सोलह प्रकार की प्रकृतियों के रज का नाश करनेवाले शुक्लध्यान का एकत्व वितर्क भेद।

घत्ता—त्रेसठ प्रकृतियों के नाश होने पर मनरहित परमात्मा के स्वभाववाले अनिन्द्य और ज्ञानस्वरूप हो गये॥ १५॥

१. अनन्तानुबन्धी आदि १० प्रकृतियाँ।

१६

तब ऋषभ जिनने तीन लोकों को एक स्कन्ध के रूप में देखा। अन्धकार और प्रकाश से रहित अलोकाकाश को (देखा)। क्रम से अर्थों की प्रतीति करानेवाली इन्द्रियों की बाधा से रहित तथा भावाभाव प्रमाणवाले एक केवलज्ञान से वह सूक्ष्म दूर और पास के द्रव्यों को देख लेते हैं और सबको जान लेते हैं। प्रचुर किरण परम्परा से जिस प्रकार सूर्य शोभित होता है, उसी प्रकार केवलज्ञान से केवली ऋषभ जिन शोभित हैं। उस अवसर पर बीस, तीन और जो दूसरे नौ कहे जाते हैं, गर्व नहीं सहन कर सकनेवाले ऐसे अनिन्द्य देवेन्द्रों के आसन काँप उठे। शाखाओं के हाथोंवाले कल्पवृक्ष नाच उठे। स्वर्ग-स्वर्ग में उत्पन्न हो रहे, दसों दिशापथों को आपूरित करनेवाले घण्टों के टंकार-शब्दों के साथ, शाखाओं के हाथोंवाले कल्पवृक्ष जैसे नृत्य करते हैं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और पुष्पों का विसर्जन करते हैं। ज्योतिषवासी देवों के द्वारा आहत नगाड़ों की ध्वनियों से कानों को कुछ भी सुनाई नहीं देता। व्यन्तर देवों ने पट-पटह बजाये, सिंहनाद और गजनाद होने लगा। शंखों की ध्वनि से नाग क्षुब्ध हो गये। इसी प्रकार एक से दूसरे देव सम्बोधित हुए।

घत्ता—अनन्त गुणों से युक्त ज्ञानरूपी चन्द्र के उदित होने पर बहुविध तूर्यों के आहत होने पर विश्वरूपी समुद्र गरज उठा॥ १६॥

१७

तब इन्द्र ने अपने मन में विचार किया और भ्रमर समूह को प्रसन्न करनेवाला ऐरावत गजेन्द्र वेग से वहाँ पहुँचा। जिसकी कान्ति हार, नीहार, गंगा और तुषार के समान उज्ज्वल है; जिसके नख अर्धेन्दु और विद्रुम के समान लाल हैं; जिसका गंडस्थल, कर्णतल से झिरते हुए मदजल से काला है, जिसका कुम्भस्थल सुमेरु पर्वत के शिखर के समान है, जो काम की चिन्ता के समान गतिवाला, कामरूप और चंचल है।

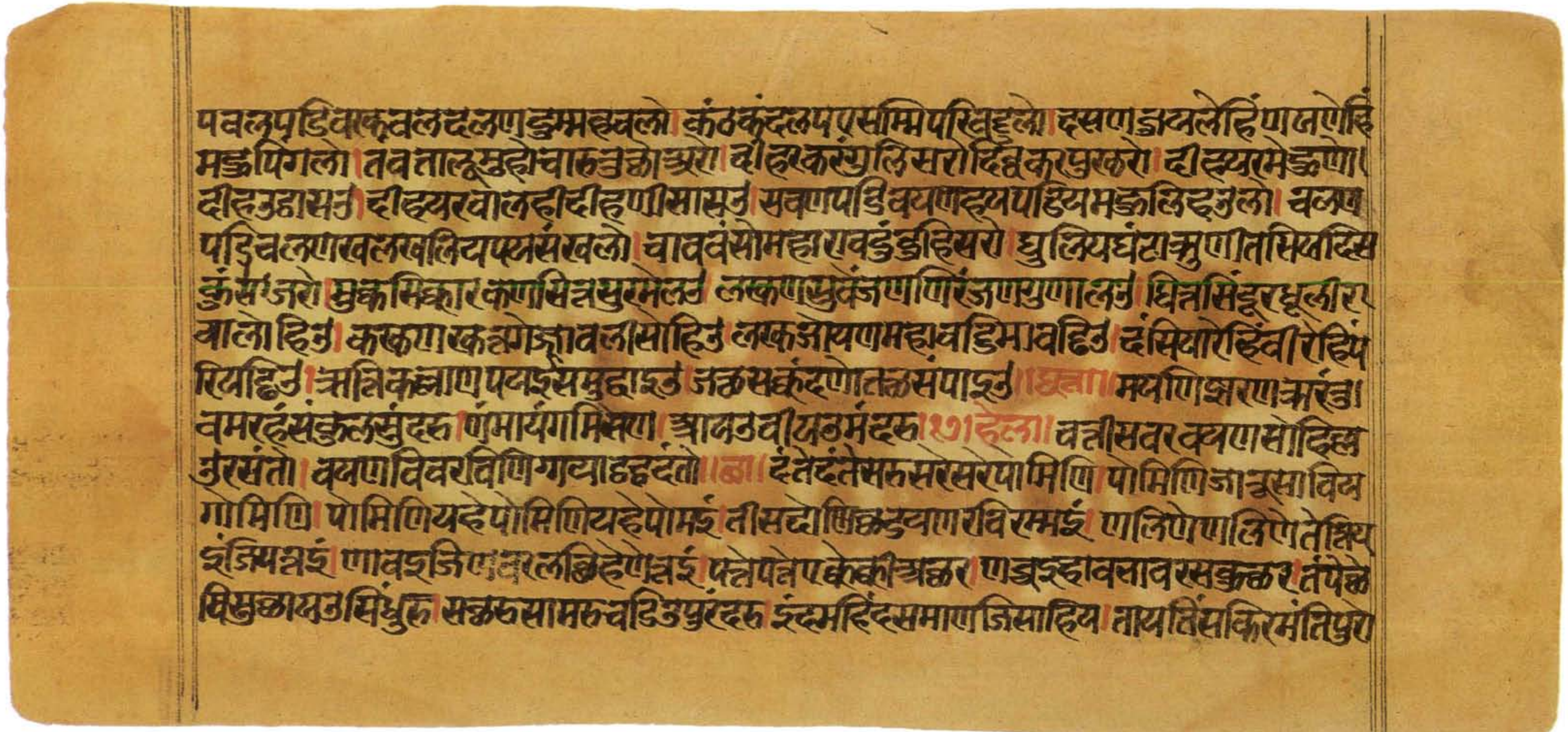

जिसमें प्रबल प्रतिपक्ष की सेना के दलन का दुर्दम बल है, जो कण्ठ और कपाल प्रदेश में गोल आकृतिवाला है; जो दशनों और दोनों नेत्रों से मधुपिंगल है, जो लाल तालु और मुखवाला है; सुन्दर और तुच्छ उदरवाला है, तथा दीर्घ कर और अंगुलियोंवाला। सरोवर के समान जिसकी श्रेष्ठ सूँड है। जिसकी दीर्घ शिश्न और दीर्घ चिबुक है। जिसकी दीर्घ पूँछ और दीर्घ निःश्वास हैं। जिसके कानों के पल्लवों से आहत पवन से मधुकरकुल गिर पड़ता है, जिसके चलने और मुड़ने से पैरों की शृंखलाएँ झनझना उठती हैं, धनुषवंशीय, जो दुन्दुभियों के समान महान् स्वरवाला है। जिसपर घण्टों की ध्वनियाँ हो रही हैं, जिससे दिग्गज भयभीत हैं, जिसने शीत्कार के जलकणों से देवसमूह को आर्द्र कर दिया है, जो लक्षणों, व्यंजनों और निरंजन गुणों का घर है, जो फेंकी गयी धूलि से लाल है, जो नक्षत्रमाला की (घण्टावलियों) गीतावलि से शोभित है, जो एक लाख योजन की महावृद्धि से विशाल है, जो महावतों और वीरों के द्वारा परिवर्धित है, ऐसा वह कल्याणवाला महागज दौड़ा, और वहाँ पहुँचा जहाँ इन्द्र विद्यमान था।

घत्ता—मद का निर्झर बहाता हुआ, चमरोंरूपी हंसकुलों से सुन्दर वह ऐसा प्रतीत होता है मानो गज के बहाने दूसरा मन्दराचल आया हो॥ १७॥

१८

बत्तीस वरमुखों से शोभित गरजता हुआ प्रत्येक मुख-विवर से निकले आठ-आठ दाँतोंवाला। प्रत्येक दाँत पर सरोवर। सरोवर में कमलिनी, कमलिनी वह, जो महालक्ष्मी को सन्तोष देनेवाली थी, कमलिनी-कमलिनी में कमल थे। तीस और दो, बत्तीस कमल थे जो भ्रमरों से सुन्दर थे। कमलिनी-कमलिनी में उतने ही पत्ते थे, जैसे जिनवर लक्ष्मी के नेत्र हों। पत्ते-पत्ते पर एक-एक अप्सरा है। हाव-भाव और रस में दक्ष वह नृत्य करती है। उस सुन्दर कान्तवाले गज को देखकर, अप्सराओं और देवों के साथ इन्द्र उस पर आरूढ़ हो गया। जो इन्द्र के सामानिक देव कहे जाते हैं, ऐसे तैंतीस प्रकार के मन्त्री, पुरोहित,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्पर्शदेव, देवेशकुमार और असिवर धारण करनेवाले आत्मरक्षक और अनीकदेव दुर्गान्तपालों की तरह लोकपाल, किल्विष, पाटहिक (ढोलवादक), प्रियकारक, अभियोग और कर्मकार देव चले। और भी प्रचुर, अनेक प्रकार की विपुल प्रजा के समान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

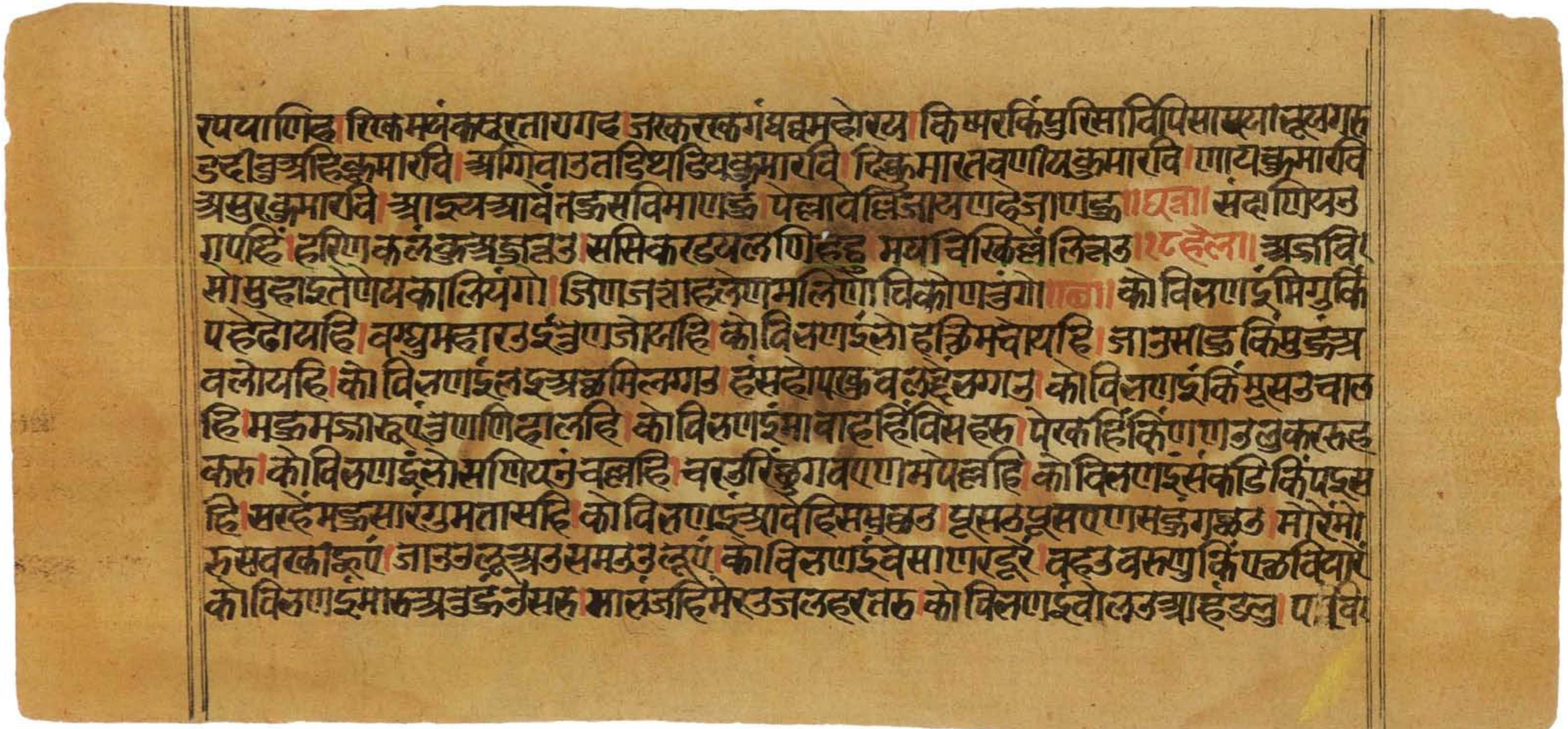

ऋक्ष, चन्द्र, तारा, ग्रह, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, महोरग, किन्नर, किंपुरुष, पिशाच, भूत, गरुड़, दीपकुमार, उदधिकुमार, अग्निवायु, तडित् और स्तनितकुमार, दिक्कुमार, स्वर्णकुमार, नागकुमार और असुरकुमार भी आये। अपने-अपने विमानों से आते हुए आकाश में विमानों की रेलपेल मच गयी।

घत्ता—गजों द्वारा संघट्टित और सूँड से रगड़ा गया चन्द्रमा मद की कीचड़ से लिप्त हो गया, उसे मृगलांछन कहना गलत है॥ १८॥

१९

आज भी इसीलिए वह काले अंग से शोभित है। जिनवर की यात्रा के फल से कौन मलिन व्यक्ति ऊँचा नहीं होता? कोई कहता है - ''मृग को पथ में क्यों लाते हो। क्या मेरे आते हुए बाघ को नहीं देखते?'' कोई कहता है—''तुम हाथी को प्रेरित मत करो। यह सिंह है, मुँह क्या देखते हो''। कोई कहता है—''लो मैं यह हूँ। हंस का पक्ष बैल से नष्ट कर दिया है''। कोई कहता है—''चूहे को क्यों चलाते हो, क्या मेरे आते हुए बिलाव को नहीं देखते''। कोई कहता है—''विषधर को मत चलाओ, रक्तरंजित हाथवाले नकुल को नहीं देखते''। कोई कहता है—''तुम धीरे-धीरे चलो, रीछ। गवय से मत भिड़ो''। कोई कहता है—''भीड़ में प्रवेश मत करो। अपने शरभ से मेरे सारंग को पीड़ित मत करो।'' कोई कहता है—''आओ हम अच्छी तरह चलें। तोते तोते के साथ चले। स्वपक्षीभूत मोर के साथ मोर, और उलूक के साथ उलूक''। कोई कहता है—''वैश्वानर (आग) से दूर रहनेवाले वरुण को आगे बढ़ाओ, यहाँ विचार करने से क्या?''। कोई कहता है—''हे पवन, इस समय तुम्हारा अवसर है, तुम मेरे मेघतरु को भग्न मत करो।'' कोई कहता है—''हे इन्द्र! बोलो,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आकाश देवों से भरा हुआ है, इसलिए हम बाद में आयेंगे, और जिनवर के चरण-कमलों की वन्दना करेंगे।''

घत्ता—किसी देवी के द्वारा हाथ में लिया गया नीलकमल दिखाई देता है, मानो वह मुकुटों के अग्रभाग में लगे चन्द्रमणि किरणों के द्वारा हँसा जा रहा हो॥ १९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

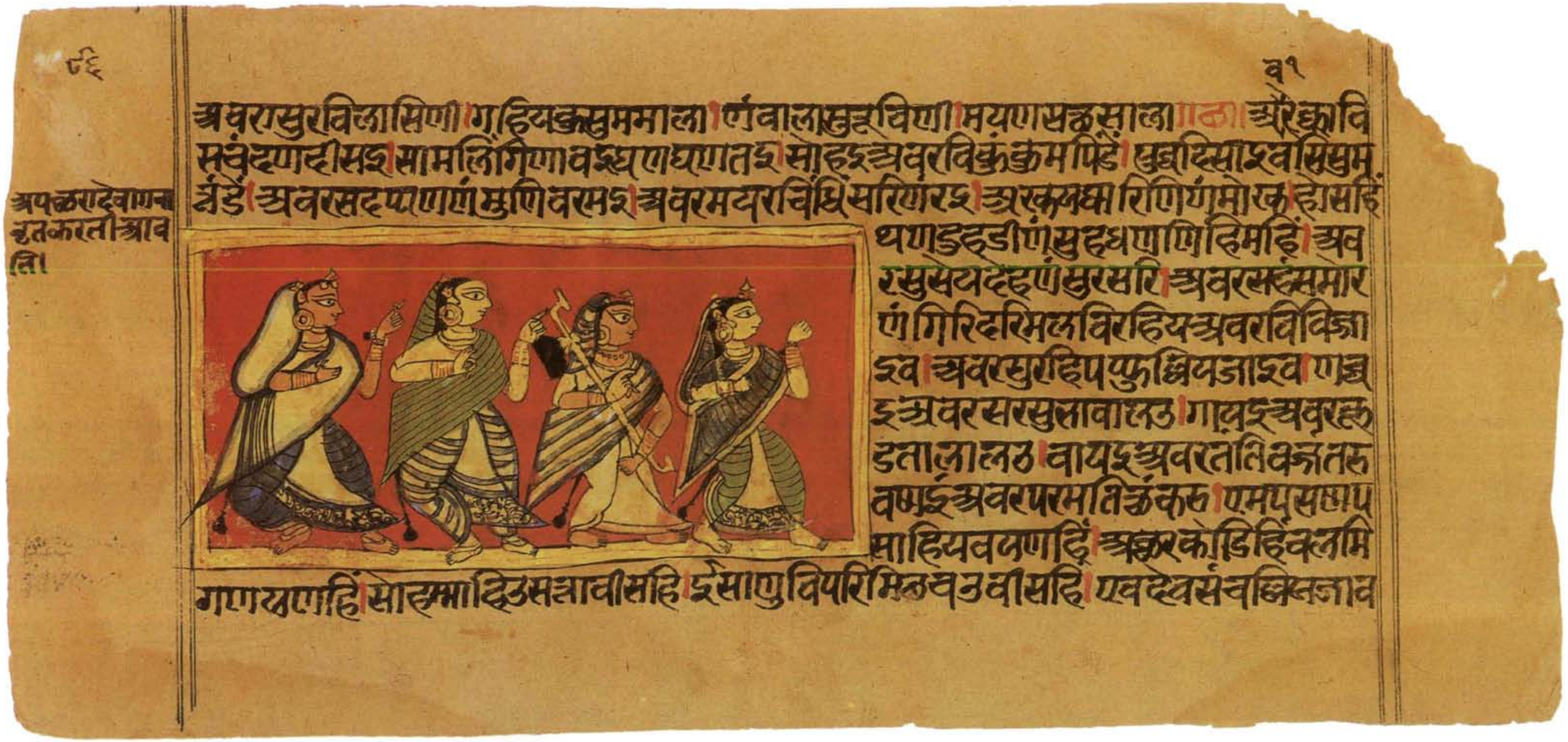

२०

एक दूसरी देवविलासिनी हाथ में कुसुममाला लिये हुए ऐसी ज्ञात होती है मानो कामदेव की सुन्दर छोटी-सी शस्त्रशाला हो। एक और स्त्री चन्दन सहित दिखाई देती है मानो मलयगिरि के तटबन्ध पर लगी हुई वनस्पति हो। एक दूसरी केशरपिण्ड से इस प्रकार मालूम होती है मानो बालसूर्य से युक्त पूर्व दिशा हो। एक और दूसरी दर्पण सहित ऐसी मालूम होती है मानो मुनिवर की मति हो। एक और दूसरी कामदेव के चिह्न से रति के समान जान पड़ती थी। अक्षत (चावल, जिसका कभी क्षय न हो) धारण करनेवाली कोई ऐसी मालूम हो रही थी मानो मोक्ष की सखी हो। ऊँचे स्तनोंवाली कोई ऐसी मालूम होती थी मानो शुभधन (कलश) वाली भूमि हो। एक और प्रस्वेदयुक्त शरीरवाली ऐसी लगती थी मानो गंगानदी हो। एक और हंस तथा मयूर से सहित ऐसी लगती थी मानो गिरिघाटी हो। एक और मल से रहित, विद्या के समान थी। एक और खिली हुई जूही पुष्प की तरह सुरभित थी। एक और सरस और भावपूर्ण नृत्य करती है, एक और कूटतान में भरकर गाती है। एक और वीणा वाद्यान्तर बजाती है, एक और परम-तीर्थंकर का वर्णन करती है। इस प्रकार प्रसन्न और प्रसाधित मुखों और चंचल मृग नेत्रोंवाली सत्ताईस करोड़ अप्सराओं से घिरा हुआ सौधर्म्य इन्द्र, तथा चौबीस करोड़ अप्सराओं से घिरा हुआ ईशान इन्द्र चला। इस प्रकार जबतक देव चले,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

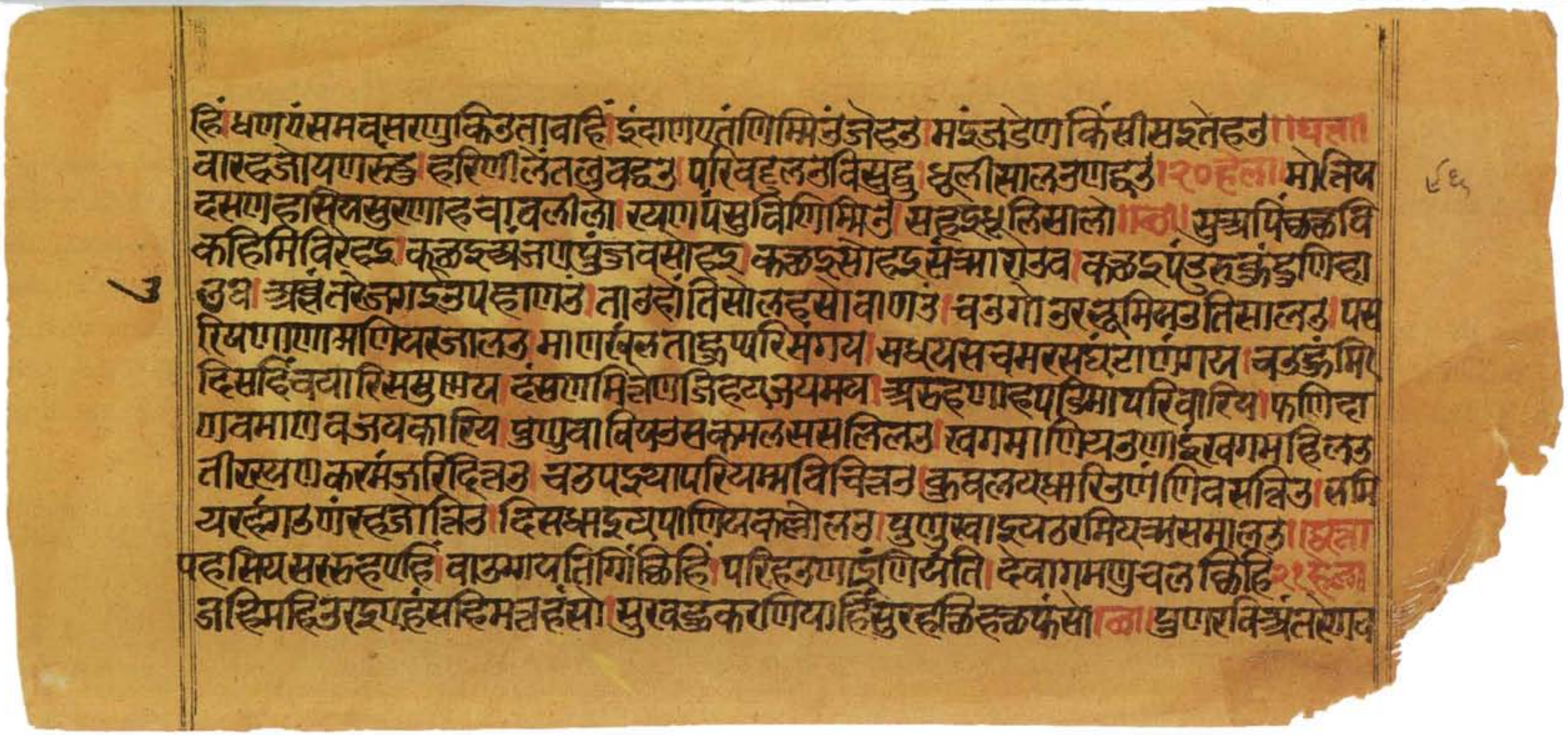

तबतक कुबेर ने समवसरण की रचना कर दी। इन्द्र की आज्ञा से उसने जिस प्रकार उसे बनाया, मुझ जड़ कवि द्वारा उसका किस प्रकार वर्णन किया जा सकता है?

घत्ता—बारह योजन विशाल जिसका तलभाग इन्द्रनील मणियों से निबद्ध था, गोल विशुद्ध वेष्टित परकोटेवाला॥ २०॥

२१

अपने मोतियों के दाँतों से इन्द्रधनुष की लीला का उपहास करनेवाला रत्नधूल से रचित धूलिसाल शोभित था। कहीं पर तोतों के पंखों की छवि से शोभित होता है, कहीं पर अंजन के समूह के समान शोभित है, कहीं पर सन्ध्याराग के समान शोभित है। कहीं पर कुन्दपुष्पों के समूह के समान सफेद है। उसके भीतर एक के ऊपर एक तीन पीठ हैं, उनमें सोलह सोपान हैं। चार गोपुरों से भूषित तीन परकोटे हैं, जिनमें तरह-तरह के मणियों के जाल फैले हुए हैं। उसके ऊपर मानस्तम्भ है। ध्वजों, चामरों और घण्टों से युक्त जो मानो गज हों। चारों दिशाओं में चार समुन्नत मानस्तम्भ स्थित हैं, जो दर्शनमात्र से जय के मद का अपहरण करनेवाले हैं। जो अरहन्तनाथ की प्रतिमाओं से घिरे हुए हैं और जिनका नाग, दानव और मनुष्य जयजयकार कर रहे हैं। फिर जल और कमलों सहित सुन्दर वापियाँ हैं। पक्षियों के द्वारा मान्य, जो ऐसी लगती हैं मानो खग महिला हों। जो तीरों में विजड़ित रत्नों की किरणरूपी मंजरियों से आलोकित और चतुष्पथों के रचना कर्म से विचित्र हैं। जो मानो कुवलयधारक (कमल, पृथ्वीरूपी मण्डल) नृपशक्ति है, जो मानो भ्रमितरथ (चक्रवाक, रथ का पहिया) रथ की युक्ति है। दिशाओं को छूनेवाली, पानी की लहरोंवाली, और क्रीड़ा करती मछलियों से युक्त खाई है। रत्नों की धूलि से विनिर्मित तथा अपने मुक्तारूपी दाँतों से इन्द्र के धनुष की लीला का उपहास करनेवाला जिसका परकोटा सोह रहा था। कहीं पर शुकपंखों की छविवाला शोभित होता है, और कहीं अंजन समूह के समान शोभित होता है। कहीं सन्ध्याराग की तरह लोहित (आरक्त) है, कहीं पर कुन्दपुष्पों के समूह के समान सफेद है। उसके भीतर एक के ऊपर एक तीन पीठ हैं और उनकी सोलह-सोलह सीढ़ियाँ हैं, चार गोपुरों से भूषित त्रिशालाएँ हैं जो नाना प्रकार के मणियों के किरणजाल से प्रसरणशील हैं, उनके ऊपर मानस्तम्भ हैं जो मानो ध्वजों, चामरों और घण्टों से सहित गज हैं। वे चारों दिशाओं में चार खड़े हुए हैं जो देखने मात्र से जय के अहंकार को चूर-चूर करनेवाले हैं। अरहन्तनाथ की प्रतिमाओं से घिरे हुए तथा नागों, दानवों और मनुष्यों के द्वारा जयजयकार किये जाते हुए। फिर वहाँ कमलों और वापिकाओं से सहित वापिकाएँ हैं, जो मानो पक्षियों के द्वारा मान्य खग स्त्रियाँ हों। जो तीरों के रत्नकिरणों की मंजरियों से दीप्त, चारों ओर की सीढ़ियों की परिक्रमा से विचित्र हैं। जो मानो नृपशक्ति की तरह कुवलय (नीलकमल, भूमिमण्डल) को धारण करनेवाली, तथा रथ की युक्ति की तरह घूमते हुए रथांगों (चक्रवाकों और चक्रों) वाली थीं। जो दिशाओं में दौड़ते हुए जलों की लहरों से रमण करती हुई मत्स्यमालाओं से युक्त थीं।

घत्ता—हँसते हुए कमलों तथा हवा के लिए बाहर आते हुए मत्स्यों के बहाने जो अपनी चंचल आँखों से मानो देवागमन देख रही हैं॥ २१॥

२२

जहाँ रति के द्वारा (काम), हंसिनियों के द्वारा मत्त हंस और सुरवधुओं की हथिनियों के द्वारा ऐरावत की सूँड का स्पर्श चाहा जा रहा है। भीतर फूलों की घर नवद्रुम लताएँ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुणरवि अंतरि णवदुमवेल्लिउ कुसुमालउ णं वम्महभल्लिउ।
पत्तिहिं रत्तउ णं वरवेसउ फलणमियउ णं सुहिपरिहासउ।
कंटइयउ णं पिययममिलियउ णच्चंति व मारुयसंचलियउ।
णं वरकइवायउ कोमलियउ लाडालावहुं पासिउ ललियउ।
वित्थरियउ अहिणवरससारउ णं कामुयमईउ सवियारउ।
का वि वेल्लि तहिं वेढइ कंचणु सयल वि णारि समीहइ कंचणु।
लग्गी का वि ललंति असोयइ जिह तृय तिह किर रमइ असोयइ।
लग्गी का वि गंपि पुण्णायहु होइ णियंबिणि फुडु पुण्णायहु।
क वि मायंदहुं संगु ण खंचइ णिवरोहिणिहि लील णं संचइ।

घत्ता—किसलयदलफलगोंछु चलचंचुइ णिल्लूरइ।
अमरु कीरवेसेण तेत्थु को वि रइ पूरइ॥ २२॥

२३

हेला—चिंतियवेसधारिणो जणियकामभावा।
वेल्लीवणलयाहरे जहिं रमंति देवा॥ १॥

मानो काम की भल्लिकाओं के समान हैं। जो पत्रों (पत्तों और पत्ररचना) से मुक्त मानो वरवेश्या हैं। जो सुधीजनों के परिहास के समान फलों से नमित हैं। जो प्रियतम से मिले हुए के समान कंटकित (रोमांचित) हैं, हवा से संचालित होने के कारण जो जैसे नृत्य कर रही हैं। जो मानो श्रेष्ठ कवि की वाणी के समान कोमल हैं, जो लाटालंकार के आलापों से भी अधिक सुन्दर हैं। जो अभिनव रससार की तरह विस्तृत हैं, जो मानो कामुकों की मतियों की तरह विकारों से युक्त हैं। वहाँ पर कोई लता चम्पक वृक्ष को घेर लेती है, (ठीक भी है) सभी नारियाँ स्वर्ण की आकांक्षा रखती हैं, चाहती हुई कोई लता अशोक वृक्ष से लग जाती है, और जिस प्रकार स्त्री अशोक (शोकरहित) मनुष्य से रमण करती है, उसी प्रकार रमण करती है। कोई लता जाकर पुन्नाग वृक्ष से लग गयी, और स्फुट रूप से पुन्नाग (श्रेष्ठ पुरुष) की गृहिणी बन गयी। कोई मायंद (आम्रवृक्ष) के साथ नहीं लगती मानो वह चन्द्रमा और रोहिणी की लीला को धारण करती है।

घत्ता—कोई देवता शुक के रूप में पत्तों, दलों और फल के गुच्छों को अपनी चंचल चोंच से नोचता है, और इस प्रकार अपनी कामना को पूरी करता है॥ २२॥

२३

अपनी इच्छा के अनुसार वेश धारण करनेवाले, तथा जिन्हें कामभाव उत्पन्न हो रहा है, ऐसे देवता जहाँ लतावनों के लताघरों में रमण करते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुणु हिरण्णरइयउ रुइरिद्धउ णं जिणेण वयपरियरु बद्धउ।
अप्पवेसु णं कामकडक्खहु गुरुपायारु पारु णं दुक्खहु।
जहिं चउगोउराइं संविहियइं जहिं बहुमंगलदव्वइं णिहियइं।
अट्ठोत्तरसयसंखासद्दइं णव वि णिहाणइं हयदालिद्दइं।
तहिं विंतर पडिहारसमत्था भीयरकुलिसगयासणिहत्था।
पुणु पणिहिउ उहयम्मि विसालउ चउदिसु दो दो णाडयसालउ।
ताउ तिभूमिउ णवरसजुत्तउ णाइं पउत्तिउ सुकइपउत्तउ।
बहुवज्जउ वइरायरभूमिउ आयउ णं ओलग्गहुं सामिउ।

घत्ता— उहयदिसहिं कुहिणीहि पुणु वि कया वि ण णिट्ठिय॥
दो दो दिण्णसधूव तहिं धूवहड परिट्ठिय॥ २३॥

२४

हेला—दीसइ गयणमंडले णीलधूमरेहा।

फिर विशाल प्राकार, स्वर्ण से रचित और कान्ति से युक्त जो ऐसा लगता था मानो जिन भगवान् ने अपने व्रतों का परिकर कस लिया हो। जो काम के कटाक्षों के लिए अप्रवेश्य था, और जो मानो दुखों का अन्त था। जहाँ चार गोपुर-द्वार बनाये गये थे, जहाँ अनेक मंगल द्रव्य रखे हुए थे। एक सौ आठ संख्या शब्दोंवाले तथा दारिद्र्य का अपहरण करनेवाली नौ निधियाँ। जहाँ भयंकर वज्र और गदाएँ हाथ में लिये हुए व्यन्तर देव प्रातिहार्य का काम करने में समर्थ थे। फिर मार्गों के दोनों ओर चारों दिशाओं में दो-दो विशाल नाटकशालाएँ थीं। जो नवरसों से युक्त तीन भूमियोंवाली थीं, सुकवियों के द्वारा कही गयी उक्तियों के समान। अनेक वाद्यों से युक्त वैराग्यभूमियाँ थीं जो मानो स्वामी की सेवा के लिए आयी थीं।

घत्ता—मार्ग की दोनों दिशाओं में अपनी-अपनी धूप देनेवाले दो-दो धूपघट स्थित थे जो कभी भी समाप्त नहीं होते थे॥ २३॥

२४

आकाशमण्डल में नीली धूमरेखा ऐसी दिखाई देती है

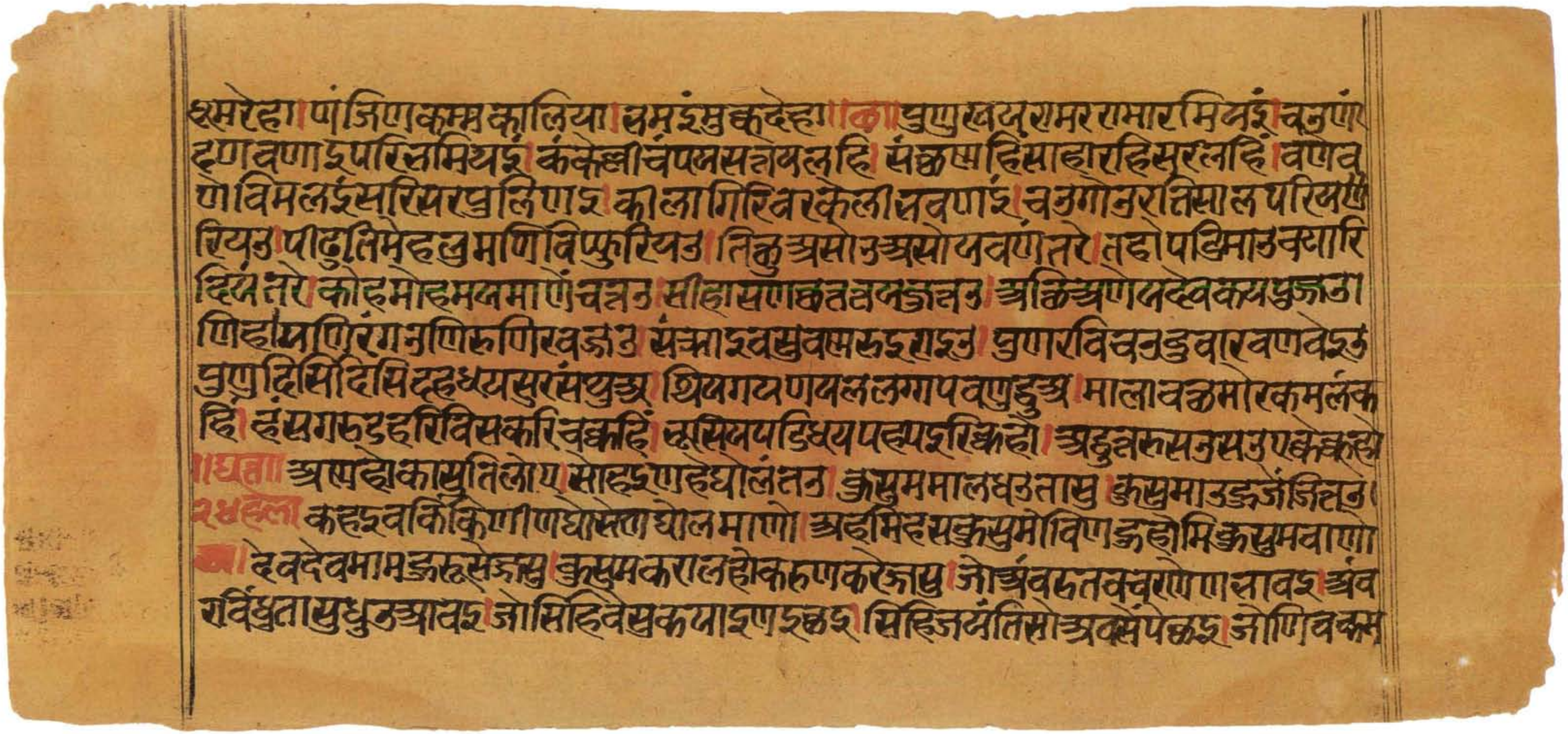

मानो जिनके कर्म से काली वह मुक्त देह घूम रही हो। फिर विद्याधरों और देवों की स्त्रियाँ जिनमें रमण करती हैं ऐसे चार नन्दन वन रच दिये गये। प्रत्येक वन में नदी और सरोवर के किनारे हैं, क्रीड़ा पर्वत श्रेष्ठों पर केलीभवन हैं। चार गोपुर और तीन परकोटों से घिरा हुआ तीन मेखलाओंवाला तथा मणियों से चमकता हुआ पीठ है। वहाँ अशोकवन के भीतर अशोक हैं, चारों दिशाओं में वहाँ प्रतिमाएँ हैं। क्रोध, मोह, मद एवं मान से रहित जो सिंहासन और तीन छत्रों से युक्त हैं। जिनकी अनेक देवों से पूजा की गयी है, जिन्होंने काम को नष्ट कर दिया है, और जो पापरहित हैं। सन्ध्या के समान स्वर्णकान्ति से निर्मित, फिर भी चार द्वारवाली बनदेवियाँ हैं। फिर दिशा-दिशा में देवताओं से संस्तुत, आकाश को छूती हुई, हवा से उड़ती हुई दस ध्वजाएँ स्थित हैं। माला, वस्त्र, मोर, कमलों, हंस, गरुड़, हरि, वृषभ, गज और चक्रों से भूषित पटध्वजों की प्रभा से प्रचुर एक-एक पर एक सौ आठ ध्वज हैं।

घत्ता—आकाश में उड़ती हुई कुसुममाला ध्वजा त्रिलोक में क्या किसी दूसरे के लिए सोह सकती है, केवल उसके लिए सोह सकती है कि जिसने कामदेव को जीत लिया है॥ २४॥

२५

मानो वह ध्वज किंकिणियों के आन्दोलित घोष से कहता है कि मैं वहाँ कुसुमसहित होकर भी कुसुमबाण (कामदेव) नहीं हूँ। हे देवदेव, मुझ पर क्रोध मत कीजिए। कुसुमों से कराल मुझपर करुणा करें, जो अम्बर (वस्त्र) तपश्चरण में अच्छा नहीं लगता, उसके लिए निश्चित रूप से वस्त्रध्वज आता है; जो स्त्रीवेष को कभी भी नहीं चाहते वह मयूरपताका अवश्य देखता है;

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

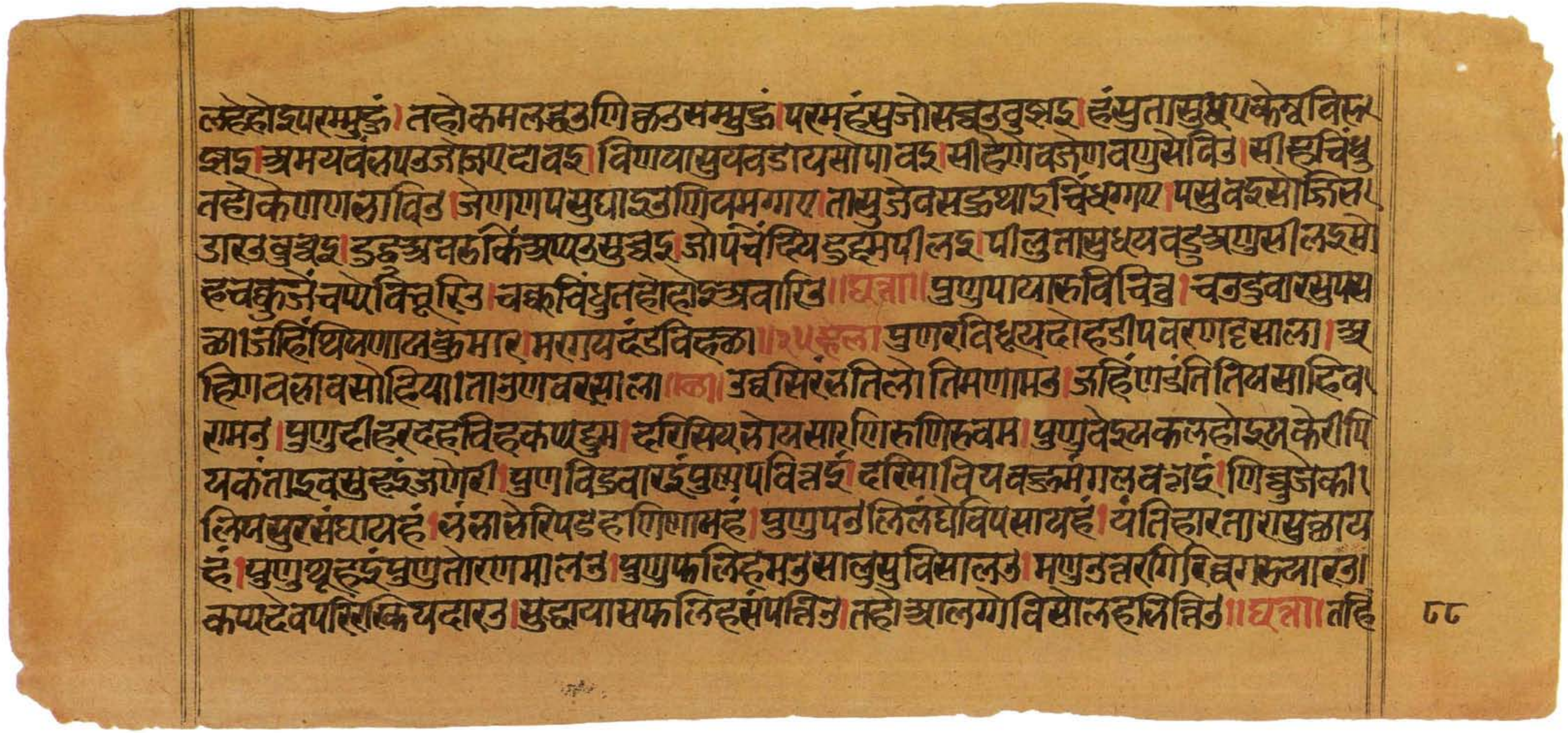

जो राजारूपी कमल से पराङ्मुख है उसके सम्मुख निश्चय ही कमलध्वज हैं। जो सच्चे परमहंस समझे जाते हैं ध्वज में उनका हंस से कैसे विरोध हो सकता है। जो अमृत ब्रह्मपद दिखाता है, वह गरुड़ध्वज पाता है, सिंह के ही समान जिसने वन की सेवा की है सिंहध्वज उन्हें क्यों अच्छा नहीं लगता? जिन्होंने अपने मार्ग में पशु का आघात नहीं किया उनके लिए ध्वज के अग्रभाग में बैल स्थित है। वही आदरणीय पशुपति कहे जाते हैं, क्या और कोई दूसरा दुष्ट अपने को क्यों शिव समझता है? जो दुर्दम पाँच इन्द्रियों को पीड़ित करता है, गज उनके ध्वजपट का अनुशीलन करता है। जिसने मोहचक्र को चाँपकर चूर-चूर कर दिया, बिना किसी प्रतिवाद के चक्र उसका चिह्न होगा।

घत्ता—फिर चार द्वारोंवाला प्रशस्त और विचित्र परकोटा था। जहाँ पन्नों के दण्ड हाथ में लिये हुए नागकुमार देव खड़े हुए थे॥ २५॥

२६

फिर जिसमें धूप के दो घट हैं, ऐसी विशाल नाट्यशाला है। नवरसाला (नौ रसोंवाली) वह, अभिनव भावों से अत्यन्त शोभित है। जहाँ इन्द्र की उर्वशी, रम्भा, तिलोत्तमा नामक नर्तकियाँ नृत्य करती हैं। फिर लम्बे दस कल्पवृक्ष हैं, श्रेष्ठ भोगों को प्रदान करनेवाले अत्यन्त अनुपम। फिर स्वर्ण की वेदिका है जो प्रिय कान्ता के समान सुख देनेवाली है। फिर बहुमंगल द्रव्यों को बतानेवाले द्वार हैं। जिनमें नित्य देवसमूह क्रीड़ा करता है और भंभा, भेरि और नगाड़ों का निनाद हो रहा है ऐसे हारों और तारों के समान स्वच्छ प्रासादों की पंक्ति और प्रतोली लाँघकर मणियों के तोरणमालाओं से युक्त स्तूप हैं। फिर स्फटिकमय विशाल साल (परकोटा), मानुषोत्तर पर्वत के समान विशाल, जिसका द्वार कल्पवासी देवों के द्वारा रक्षित है। वहाँ से लेकर शुद्धाकाश के समान स्फटिक मणियों से बनी हुई सोलह दीवालें हैं।

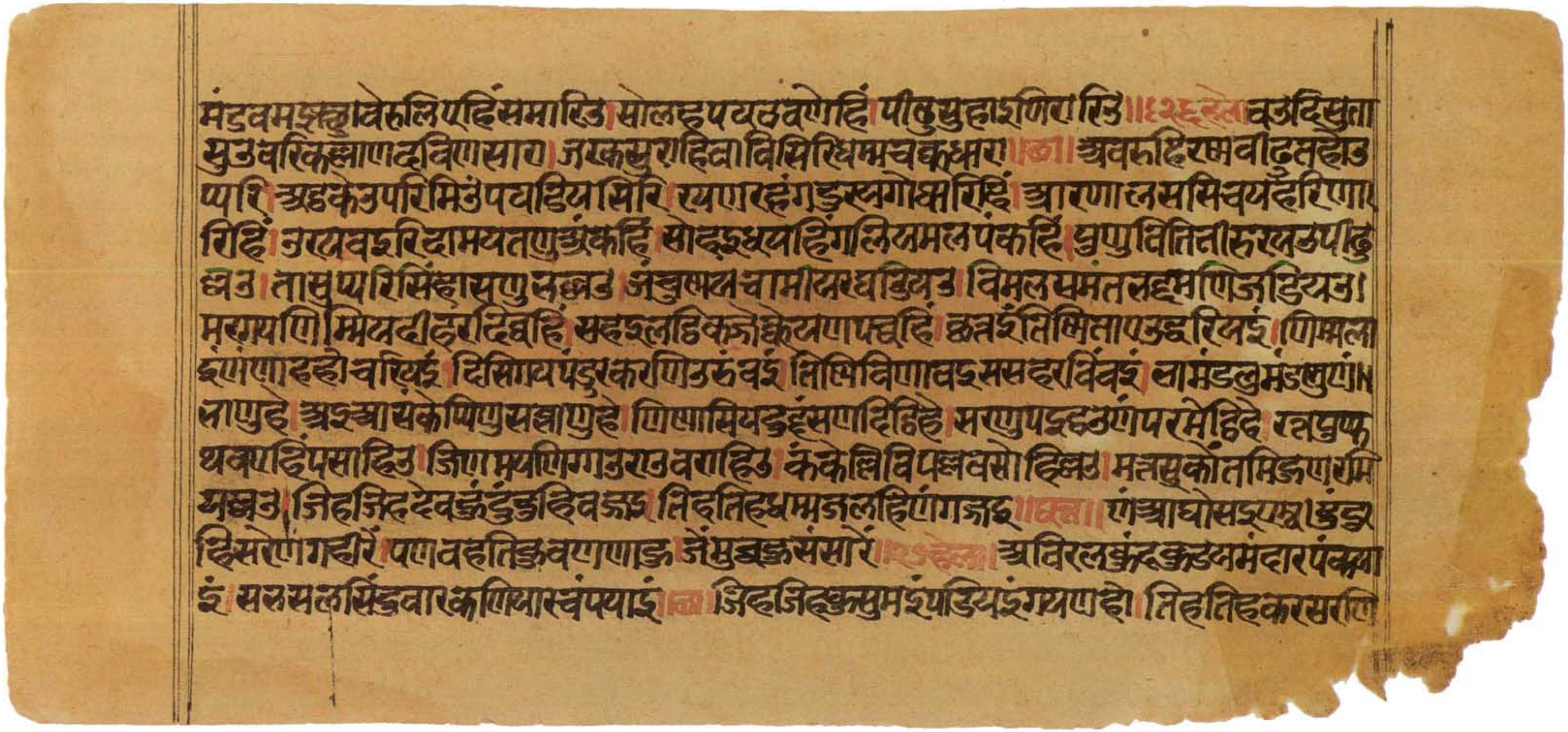

घत्ता—उनके ऊपर वैदूर्यमणियों से निर्मित मण्डप का मध्यभाग है, सोलह पद स्थापनाओं के द्वारा जिसका पीठ अत्यन्त शोभित है ॥ २६ ॥

२७

उसके ऊपर चारों दिशाओं में कल्याण और धन में श्रेष्ठ तथा श्री और धर्मचक्र को धारण करनेवाले यक्ष और इन्द्र थे। उसके ऊपर एक और हिरण्यपीठ था, अपनी शोभा को प्रकट करता हुआ वह आठ ध्वजों से घिरा हुआ। चक्रवाक, हाथी, बैल, कमल, शोभा वस्त्र और सिंह, मयूर और पुष्पमालाओं से चिह्नित ध्वजों से जो शोभित है। फिर भी तीन किनारों से (एक के ऊपर एक) पीठ निर्मित है। उसके ऊपर सुन्दर सिंहासन है। स्वर्ण और चाँदी से निर्मित और समन्तभद्रमणि से जड़ा हुआ। जिसकी यष्टि (हाथ टेकने की लकड़ी) मरकत मणियों से निर्मित स्फटिक मणियों की गाँठों से शोभित है। उसके ऊपर तीन छत्र उठे हुए थे जो नाभेय के चरित के समान सुन्दर थे। दिग्गजों के समान सफेद किरण-समूहोंवाले वे चन्द्रबिम्ब की तरह शोभित हैं। भामण्डल मानो सूर्य का मण्डल है। जो मानो राहु से अत्यन्त भयभीत होकर दुर्दर्शनीयों की दृष्टि का नाश करनेवाले परमेष्ठी की शरण में आ गया। अथवा जो लाल फूलों के गुच्छों से प्रसाधित, तथा जिनके मन से निकले हुए राग के समान शोभित है। जिसमें प्रसन्न पक्षियुग्म हैं, ऐसे पल्लवों से शोभित क्रीड़ा करते हुए अशोक वृक्ष के समान। जैसे-जैसे देव के लिए दुन्दुभि बजती है, वैसे-वैसे मानो धर्मरूपी समुद्र गरजता है।

घत्ता—मानो वह गम्भीर दुन्दुभि के स्वर से इस प्रकार घोषित करता है कि यदि संसार से मुक्त होना चाहते हो तो त्रिभुवननाथ को प्रणाम करो॥ २७॥

२८

अविरल कुन्द, कुटक, मन्दार, कमल, भ्रमरसहित सिन्दुवार, कणिकार (कनेर) और चंपकपुष्प जैसे-जैसे आकाश से गिरते हैं वैसे-वैसे कामदेव के हाथ से तीर गिरने लगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

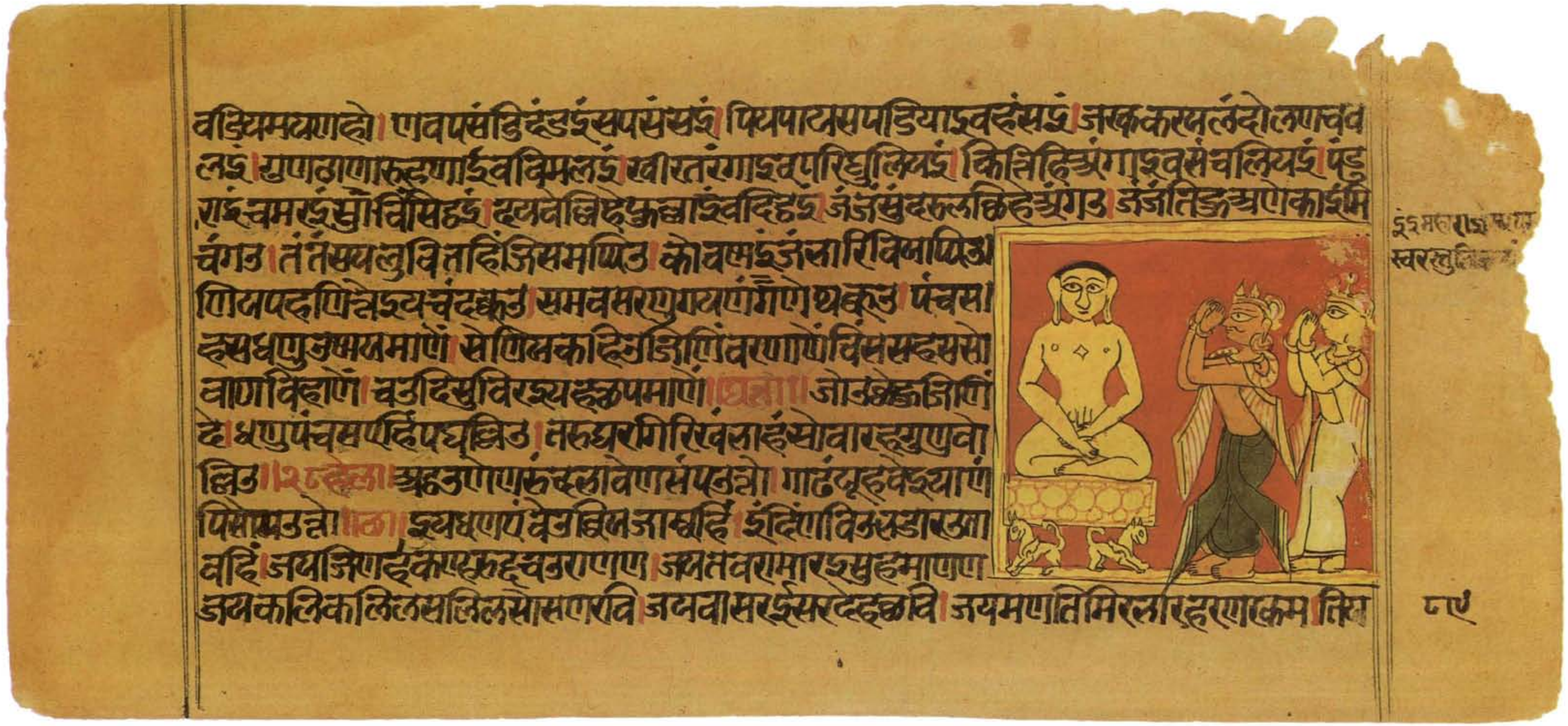

नव स्वर्णमय दण्डोंवाले, यक्षों के करतलों के आन्दोलन से चपल सफेद सुविशिष्ट और प्रशंसित चमर स्वर्णबन्धन में पड़े हुए हंसों, क्षीरसागर की आन्दोलित लहरों, कीर्ति के चंचल अंगों, और दयारूपी लता के फूल के समान दिखाई दिये। लक्ष्मी का जो-जो सुन्दर अंग है और विश्व में जो-जो भला है, वह सब वहीं समर्पित कर दिया। इन्द्र की रचना का वर्णन कौन कर सकता है? अपनी प्रभा से सूर्य और चन्द्रमा को निस्तेज करनेवाला—समवसरण पाँच हजार धनुष ऊँचाई के मान से आकाश में स्थित था। हे श्रेणिक, यह मैंने जिनवर के ज्ञान से कहा।

घत्ता—जो ऊँचाई जिनेन्द्र के द्वारा पाँच सौ धनुष कही गयी है वनवृक्ष गिरि (पर्वत), खम्भे (पताकाओं के), उससे (ऋषभ जिनकी ऊँचाई से) बारह गुना अधिक ऊँचे हैं ॥ २८ ॥

२९

और इनकी मोटाई (ऊँचाई से) आठ गुनी जाननी चाहिए। खम्भों और वेदिका के विषय में भी यह समझना चाहिए। इस प्रकार कुबेर ने जब रचना की, तभी इन्द्र ने आदरणीय जिन को नमस्कार किया—"हे जिन, कृष्ण, रुद्र, चतुरानन! आपकी जय हो, तपश्रीरूपी रामा से रतिसुख माननेवाले आपकी जय हो। कलि के पापोंरूपी जलों को सोखने के लिए सूर्य, आपकी जय हो, सूर्य के समान शरीर कान्तिवाले आपकी जय हो, मन के अन्धकारभार का हरण करनेवाले आपकी जय हो,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवों के किरीट और मुकुटों से अलंकृत चरण अपकी जय हो। त्रिशल्यरूपी लतावन का उच्छेदन करनेवाले आपकी जय हो, कन्दर्प के दर्परूपी भट का मर्दन करनेवाले आपकी जय हो, क्रोधरूपी कलंक का कीचड़ दूर करनेवाले आपकी जय हो, मानरूपी पर्वत के शिखर चूर-चूर करनेवाले आपकी जय हो, माया के पापभाव को नष्ट करनेवाले आपकी जय हो। लोभरूपी अन्धकार को उड़ानेवाले आपकी जय हो। तृष्णारूपी राक्षसी को मारनेवाले आपकी जय हो। सात भयरूपी कुरंगों का विदारण करनेवाले आपकी जय हो। मदरूपी मयगल के लिए सिंह के समान आपकी जय हो। विश्वबन्धु और तीन गर्वों को नष्ट करनेवाले आपकी जय हो। प्रथम पुरुष, परमात्मा, शंकर, ऋषभनाथ और तीर्थंकर आपकी जय हो।

घत्ता—भरत को आलोकित करनेवाले तथा सूर्य-चन्द्र के समान शोभित पचासों इन्द्रों ने इसप्रकार जिनेश्वर की वन्दना की॥ २९॥

इसप्रकार श्रेष्ठ पुरुषों के गुणों और अलंकारों से युक्त इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का ऋषभ केवलज्ञान उत्पत्ति नाम का नौवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ९॥

सन्धि १०

१

जन्म, भय और मरण के ऋण को समाप्त करनेवाले जिन परमेश्वर की इन्द्र ने स्तुति की—"हे समवशरण से घिरे हुए शान्त परमात्मा जिन मुझपर प्रसन्न हों। हे प्रभु, न तो तुम्हें वन्दना से सन्तोष होता है, और न तुम निन्दा से मत्सर धारण करते हो; तब भी जो नत नहीं होते, या नत होते हैं, तुम उनके दुःखसमूह और सुखसमूह का विस्तार करते हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

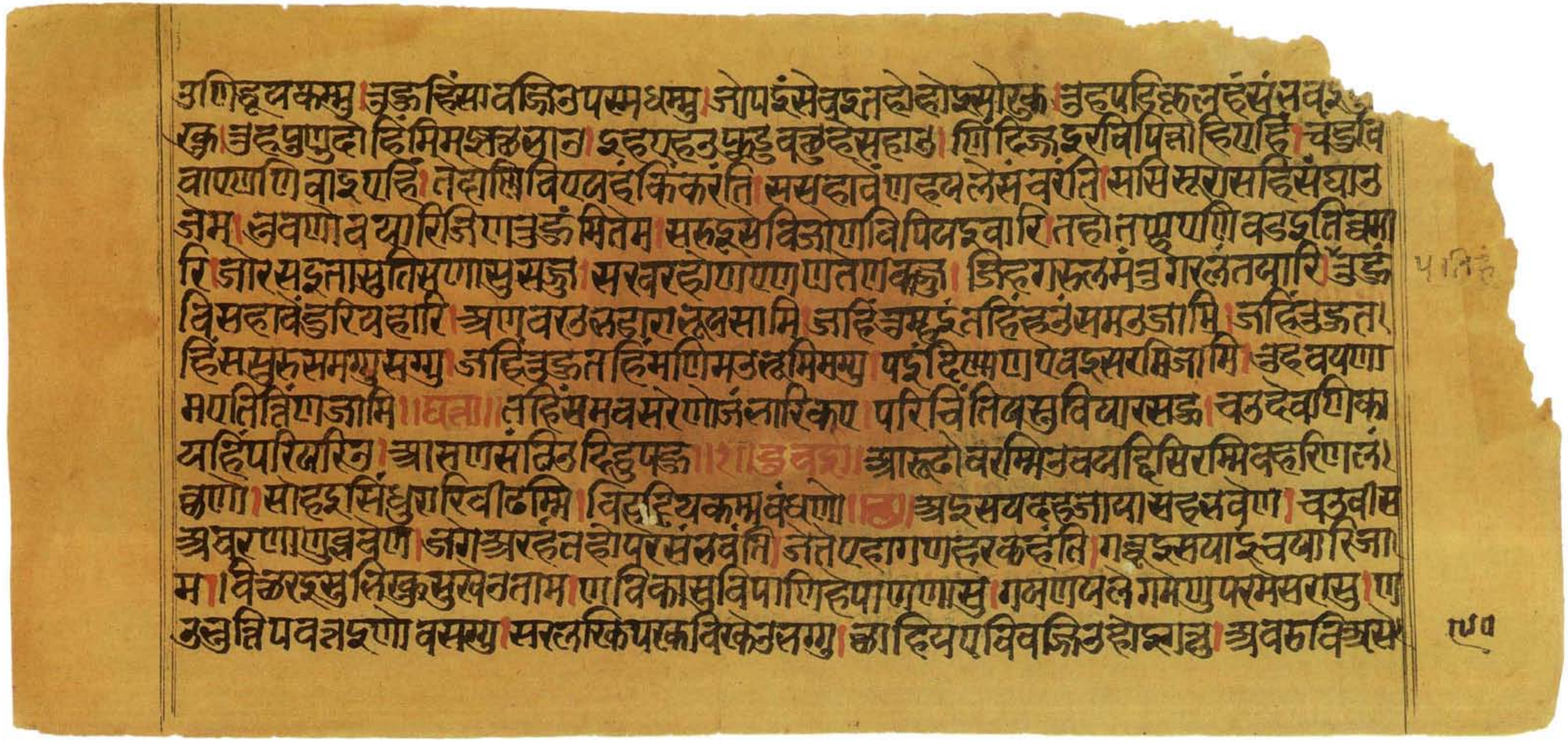

तुम काम को नष्ट करनेवाले वीतराग हो, तुम हिंसा से रहित परमधर्म हो। जो तुम्हारी सेवा करता है उसे सुख मिलता है, जो तुमसे प्रतिकूल है उसे दुःख होता है; परन्तु तुम दोनों में मध्यस्थभाव धारण करते हो, यह ऐसा स्पष्ट रूप से वस्तु का स्वभाव है। अधिक पित्तवालों के द्वारा सूर्य की निन्दा की जाती है, वायु से पीड़ितों के द्वारा चन्द्रमा की निन्दा की जाती है। परन्तु वे दोनों (सूर्य-चन्द्र) इन लोगों का क्या करते हैं, वे तो अपने स्वभाव से आकाशतल में विचरण करते हैं। जिस प्रकार चन्द्रमा-सूर्य और औषधि का संघात संसार का उपकारी है, उसी प्रकार हे जिन तुम भी उपकारी हो। जो सरोवर को दोष लगाकर पानी नहीं पीता उसपर प्यास के मारे 'तीव्रमारि' आ पड़ती है। जो पानी पी लेता है उसकी प्यास का शीघ्र नाश हो जाता है। सरोवर का न इससे प्रयोजन और न उससे प्रयोजन। जिस प्रकार गरुड़ का मन्त्र विष का अन्त करनेवाला होता है, उसी प्रकार तुम भी स्वभाव से पाप का हरण करनेवाले हो। हे अनवरत भूत स्वामी, जहाँ तुम वहाँ मैं भी साथ जाता हूँ (जाऊँगा)। जहाँ तुम हो वहाँ देवों सहित समग्र स्वर्ग और मणिमय भूमिमार्ग हैं, वहीं मैं भी हूँ।''

घत्ता—इन्द्र द्वारा निर्मित उस समवशरण में जिन भगवान् दूसरों की कल्याण कामना से संचरण करते हैं और वे सुर-नर तथा तिर्यंचों का शुभ करने का धर्म कहते हैं॥ १॥

२

श्रेष्ठ सिंहासन की पीठ पर विराजमान, कर्मबन्धन का नाश करनेवाले जिन ऐसे शोभित हैं जैसे उत्तम उदयाचल के शिखर के ऊपर चन्द्रमा हो। जन्म के साथ उनके दस अतिशय हुए थे, ज्ञान के उत्पन्न होने से चौबीस और अतिशय उत्पन्न हो गये। जग में जो केवल अरहन्तों के होते हैं, उन्हें (अतिशयों को) गणधर इस प्रकार कहते हैं—'जहाँ तक चार सौ कोश होते हैं, वहाँ तक सुभिक्ष और सुक्षेत्र रहता है। किसी भी प्राणी का प्राणनाश नहीं होता। परमेश्वर का आकाश में गमन होता है, न उनमें भुक्ति की प्रवृत्ति होती है, और न उनपर उपसर्ग होता है; उनकी सरल आँखों के पलक नहीं झपते। उनका शरीर छाया से रहित है, उनके पास समस्त विद्याओं का ऐश्वर्य होता है,

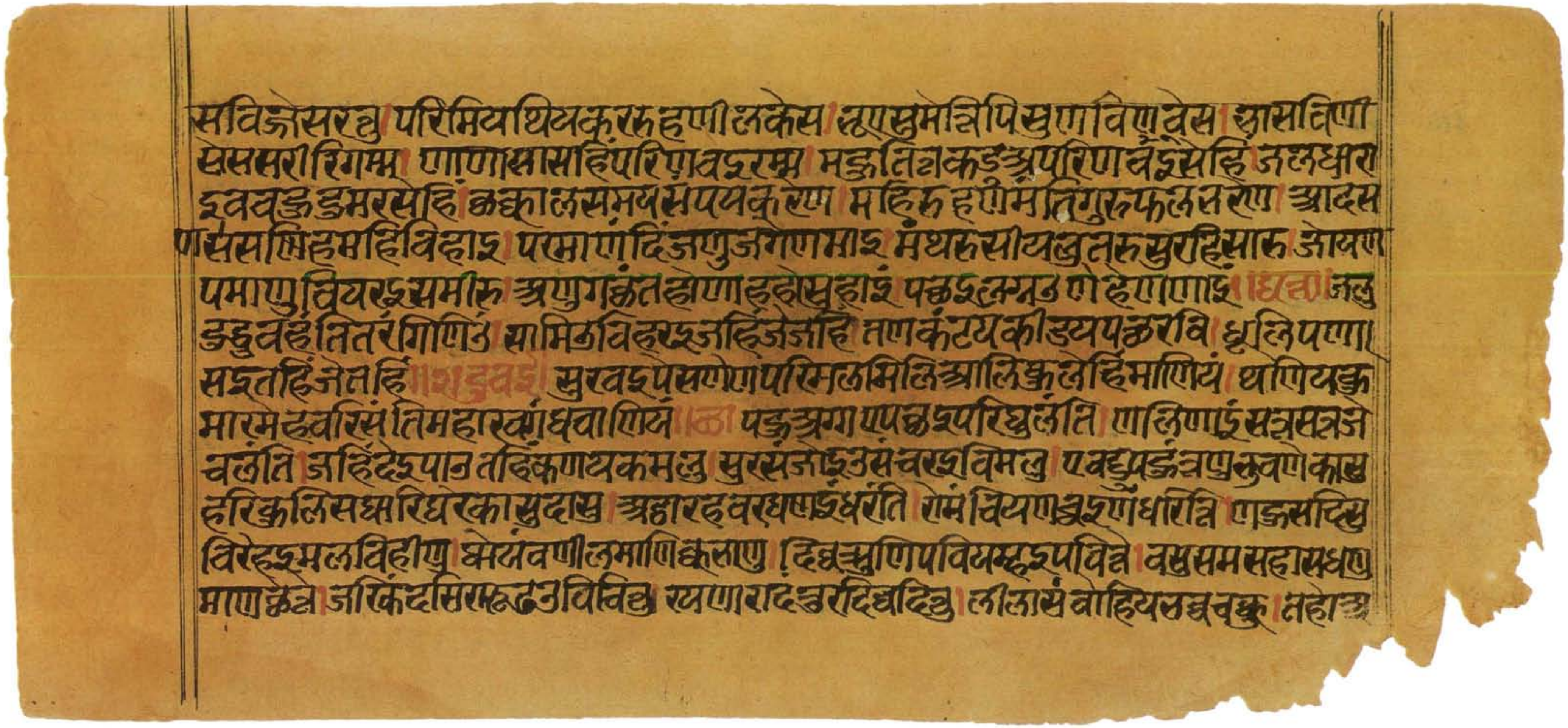

उनकी अँगुलियाँ सीमित रहती हैं। बाल नीले, प्राणियों के प्रति मैत्रीभाव, दुष्टों के प्रति द्वेषभाव नहीं। समस्त शरीर से निकलती हुई सुन्दर भाषा, जो नाना भाषाओं में परिणत हो जाती है, उसी प्रकार, जिस प्रकार जल की धारा परिणमन के वश से नाना वृक्षों के द्वारा मीठी, कड़वी और तीखी हो जाती है। छहों ऋतुओं में समृद्ध करनेवाले वृक्ष फलों के भार से धरती पर झुक जाते हैं। धरती दर्पण के समान दिखाई देती है। परम आनन्द से लोग जग में नहीं समाते। मन्थर शीतल वृक्षों की सुगन्ध का जिसमें सार है ऐसी हवा एक योजन तक बहती है, स्वामी के पीछे जाती हुई ऐसी शोभित होती है, मानो स्नेह से उनके पीछे लग गयी हो।

घत्ता—नदियाँ जलरूपी दूध प्रवाहित करती हैं। जहाँ-जहाँ स्वामी विहार करते हैं वहाँ-वहाँ की तृण, काँटे, कीड़े और पत्थर तथा धूल नष्ट हो जाती है॥ २॥

३

इन्द्र के आदेश से स्तनितकुमार मेघ, परिमल से मिले हुए भ्रमरकुलों से सम्मानित उत्तम गन्धवाला जल बरसाते हैं॥ १॥

प्रभु के आगे-पीछे शोभित होते हुए सात-सात कमल चलते हैं। वे जहाँ पैर रखते हैं वहाँ देवों के द्वारा संयोजित विमल स्वर्णकमल चलता है। भुवन में इतनी बड़ी प्रभुता किसकी कि जिसके घर में वज्र धारण करनेवाला इन्द्र दास है। धरती अट्ठारह श्रेष्ठ धान्यों को धारण करती है, मानो रोमांचित होकर नाच रही हो। मलविहीन आकाश भी दिशाओं सहित इस प्रकार शोभित है जैसे पानी से धोया गया नीलम और माणिक्यों का पात्र हो। पवित्र दिव्यध्वनि प्रवर्तित होती है, जो आठ हजार धनुष बराबर मानवाले क्षेत्र में प्रसारित होती है। यक्षेन्द्र के सिर पर स्थित विचित्र रत्नों की आराओं से लाल, सूर्य के बिम्ब के समान, तथा लीला से भव्य जन-समूह को सम्बोधित करनेवाला

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

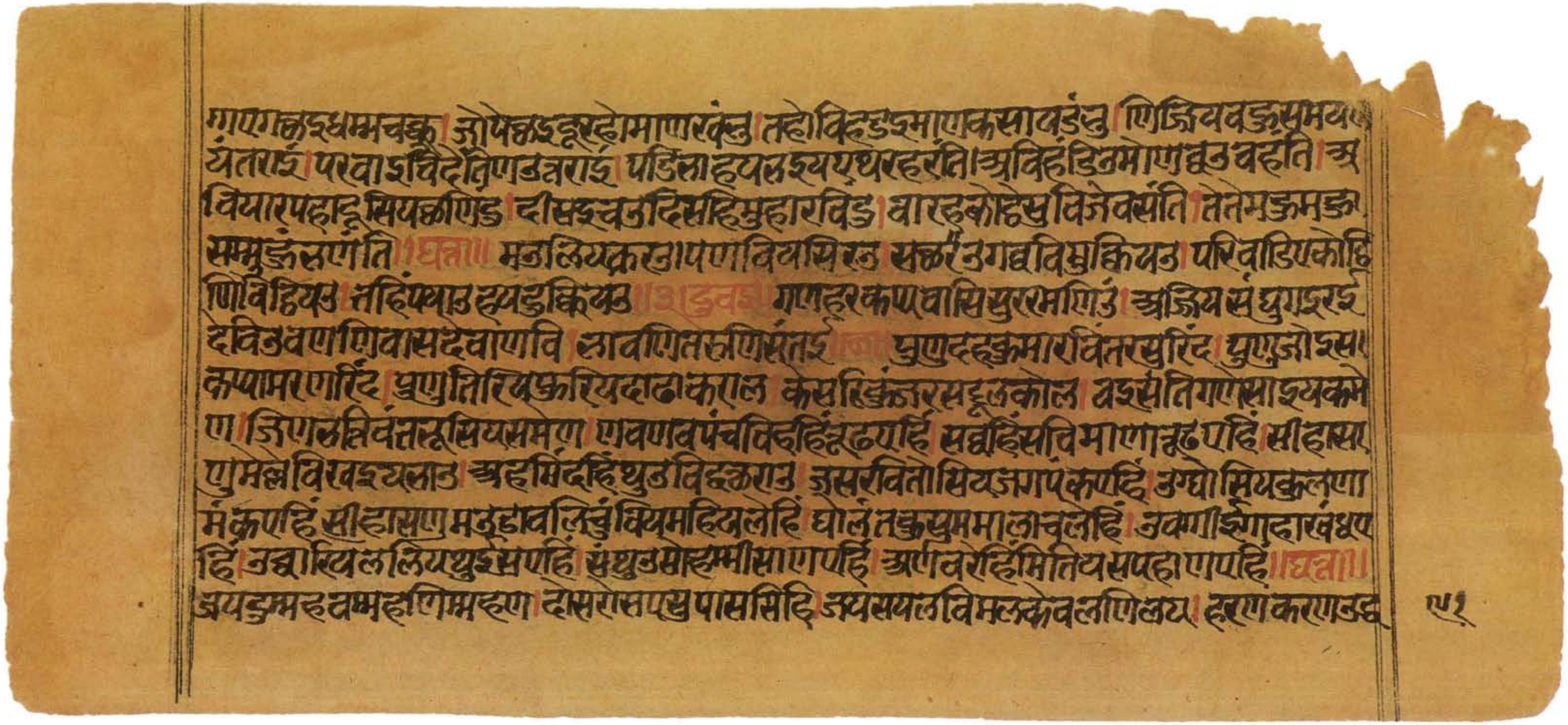

धर्मचक्र उनके आगे-आगे चलता है। जो दूर से भी मानस्तम्भ को देख लेता है उसके मानकषाय का दम्भ नष्ट हो जाता है। जिसमें अनेक मतों के तर्कों को जीत लिया गया है ऐसे उत्तर परवादी भी नहीं देते। प्रतिभा से आहत वे भय से काँप उठते हैं और अखण्ड मौन धारण करते हैं। अविकारी, अपनी प्रभा से पूर्ण चन्द्र को फीका करनेवाला उनका मुखकमल चारों दिशाओं में दिखाई देता है। बारह कोठों में जो बैठते हैं वे कहते हैं कि मुख मेरे सामने है।

घत्ता—हाथ जोड़े हुए प्रणत सिर गर्व से रहित स्वच्छ, नष्ट हो गये हैं पाप जिसके, ऐसी प्रजा परम्परा के अनुसार कोठे में बैठ गयी॥ ३॥

४

गणधर कल्पवासी देवों की स्त्रियाँ। आर्यिका संघ, ज्योतिष्क देवों की स्त्रियाँ; व्यन्तरदेवों की स्त्रियाँ, और भवनवासी देवों की देवियों की पंक्ति। फिर दस कुमार, फिर व्यन्तरेन्द्र। फिर ज्योतिषदेव, कल्पवासी देव और नरेन्द्र। फिर तिर्यंच। विकट दाढ़ों से विकराल सिंह, गज, शार्दूल, कोल और गणधर आदि क्रम से बैठते हैं, जिनभक्ति से भरित और श्रम से भूषित। नव-नव पाँच प्रकार से प्रसिद्ध अपने-अपने विमानों में बैठे हुए अहमिन्द्रों ने राग को ध्वस्त करनेवाले सिंहासन छोड़कर जिनेन्द्र भगवान् की स्तुति की। अपने यशरूपी सूर्य से विश्वरूपी कमल को खिलाते हुए, अपने कुल का नाम और चिह्न बताते हुए, मुकुटों की कतारों से महीतल को चूमते हुए, पुष्पों की चंचल मालाएँ हिलाते हुए, गाथा और स्कन्धक गाते हुए, सैकड़ों सुन्दर स्तुतियों का उच्चारण करते हुए सौधर्म और ईशान इन्द्रों तथा दूसरे देवप्रमुखों के द्वारा उनकी स्तुति की गयी।

घत्ता—दुर्मद कामदेव को जीतनेवाले दोष और क्रोधरूपी पशुपाश के लिए अग्नि के समान समस्त विमल केवलज्ञान के घर और मिथ्यादर्शनादि का अपहरण और सम्यक्‌दर्शनादि का उद्धार करनेवाले हे विधाता, आपकी जय हो॥ ४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

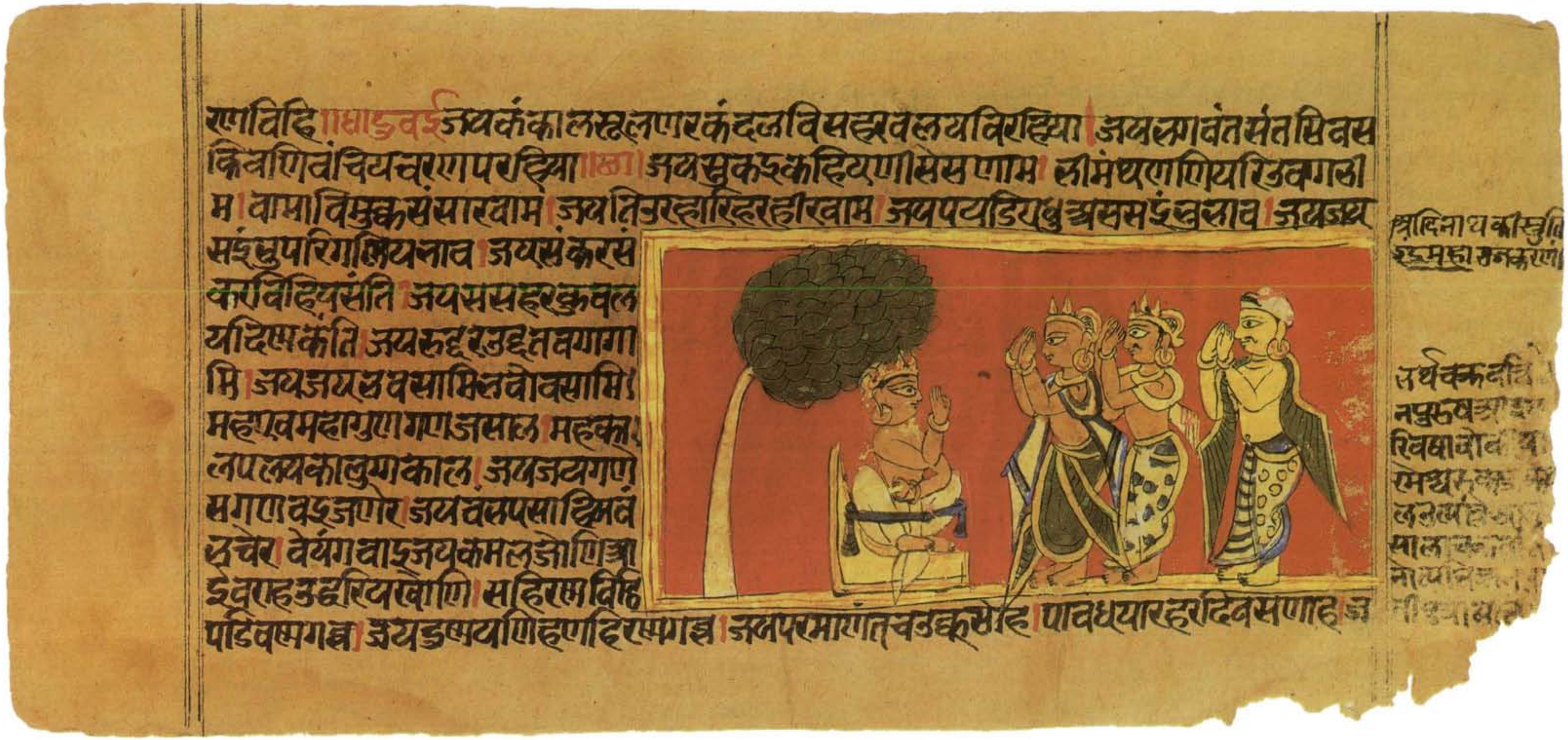

५

कंकाल, त्रिशूल, मनुष्यकपाल, साँप और स्त्री से रहित, आपकी जय हो। हे भगवान्, सन्त, शिव, कृपावान्, मनुष्यों के द्वारा वन्दित चरण और दूसरों का भला करनेवाले आपकी जय हो। सुकवियों के द्वारा कथित अशेष नामवाले, भय को दूर करनेवाले, अपने अन्तरंग शत्रुओं के लिए भयंकर आपकी जय हो। स्त्री से विमुक्त संसार के लिए प्रतिकूल त्रिपुर (जन्म, जरा और मरण) का अपहरण करनेवाले, धैर्य के धाम हे हर आपकी जय हो। शाश्वत स्वयम्भूभाव को प्रकट करनेवाले और पदार्थों के ज्ञाता आपकी जय हो; शान्ति के विधाता और सुखकर आपकी जय हो, कुवलय (पृथ्वीमण्डल, कुमुदमण्डल) को कान्ति प्रदान करनेवाले आपकी जय हो। उग्रतप के लिए अग्रगामी आपकी जय हो, हे भवस्वामी और जन्म को शान्त करनेवाले आपकी जय हो। महान् गुणसमूह के आश्रय हे महादेव, आपकी जय हो। प्रलयकाल के लिए उग्रकाल, महाकाल आपकी जय हो। गणपतियों (गणधरों) को जन्म देनेवाले आपकी जय हो, ब्रह्मचर्य की साधना करनेवाले ब्रह्म आपकी जय हो। सिद्धान्तवादी ब्रह्मा, धरती का उद्धार करनेवाले आदिवराह, जिनके गर्भ के समय स्वर्णवृष्टि हुई है, ऐसे तथा दुर्नय का हनन करनेवाले हे हिरण्यगर्भ, आपकी जय हो। चार परम अनन्त चतुष्टयों की शोभावाले, अज्ञान का अपहरण करनेवाले हे सूर्य, आपकी जय हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

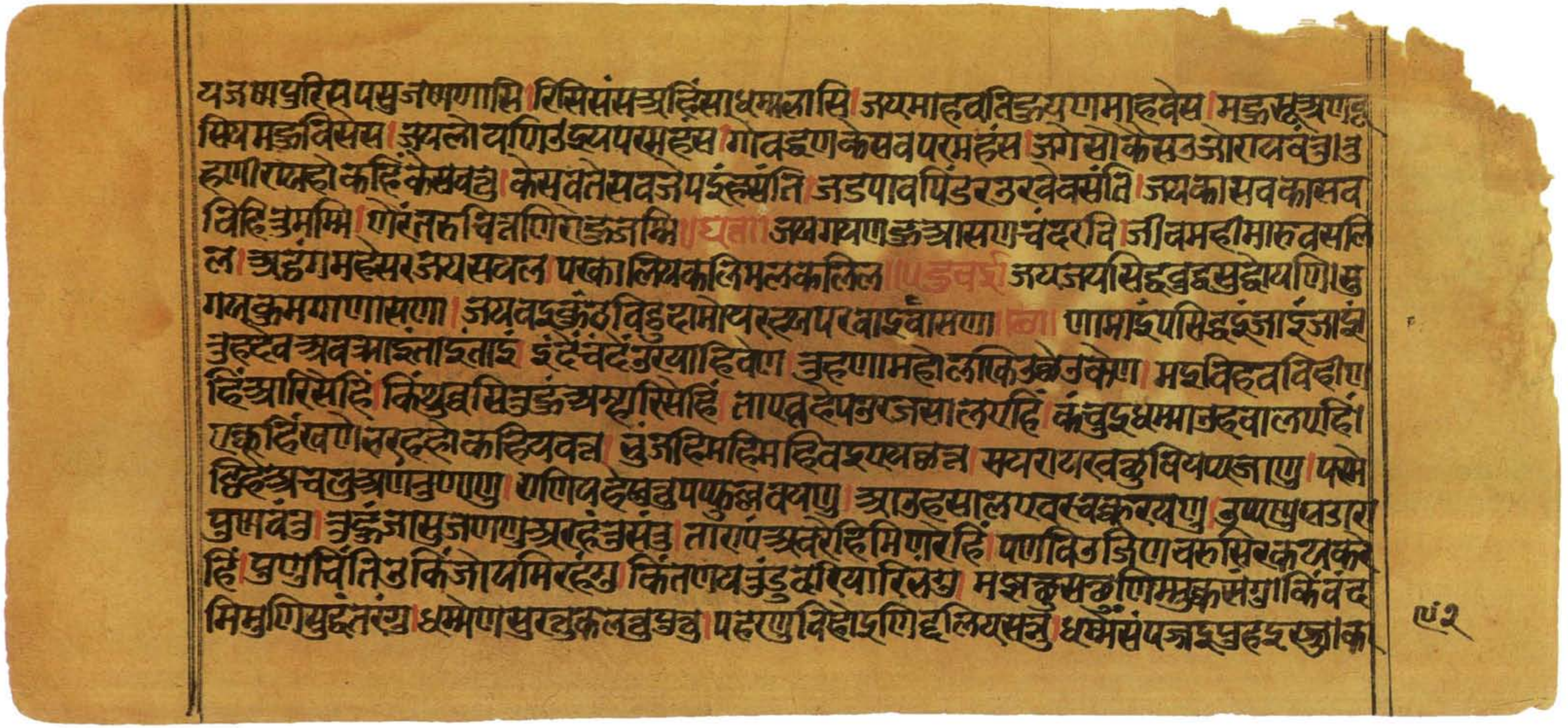

पशुयज्ञों का नाश करनेवाले, ऋषियों के द्वारा प्रशंसनीय, अहिंसाधर्म का कथन करनेवाले यज्ञपुरुष! आपकी जय हो। त्रिभुवन के माधवेश, माधव और मधुविशेष को दूषित करनेवाले मधुसूदन! आपकी जय हो। लोक का नियोजन करनेवाले परमहंस, गोवर्द्धन, केशव और परमहंस आपकी जय हो। विश्व में वह केशव है जो रागवाला है, तुम विरागी के केशवत्व कैसे हो सकता है? विश्व में शव कौन है, शव वे हैं जो तुम्हारा उपहास करते हैं। जो जड़ और पापशरीर हैं वे रौरव नरक में रहते हैं। हे कासव! तुम्हारी जय हो, तुम में मृतक का आचार (शवविधि) कैसा? जिसके चित्त में निरन्तर निरोध है।

घत्ता—हे गगन, अग्नि, चन्द्र, रवि, मेघ, मही, मारुत, सलिल आपकी जय हो। सबके कलियुग के मल और पाप को प्रक्षालित करनेवाले अष्टांग महेश्वर, आपकी जय हो॥५॥

६

शुद्ध, बुद्ध, शुद्धोदन, सुगत और कुमार्ग का नाश करनेवाले आपकी जय हो। वैकुण्ठ, विष्णु, दामोदर, परवादियों के संस्कारों को नष्ट करनेवाले आपकी जय हो। हे देव, आपके जो-जो नाम हैं वे सब सफल नाम हैं। इन्द्र, चन्द्र और शेषनाग किसने तुम्हारे नामों का अन्त पाया? मति वैभव से रहित और अव्युत्पन्न हम-जैसे लोगों के द्वारा तुम्हारी स्तुति कैसे हो सकती है? तब कंचुकी धर्म और आयुधों के रक्षकों ने एक ही क्षण में भरत से यह बात कही, "हे राजन्, आप एकछत्र धरती का उपभोग करें। परमेष्ठी ऋषभ को सचराचर पदार्थों को जाननेवाला अनन्त केवलज्ञान उत्पन्न हुआ है। रानी को खिले हुए मुखवाला पुत्र हुआ है, और आयुधशाला में श्रेष्ठ चक्ररत्न उत्पन्न हुआ है। हे आदरणीय, आप पुण्यवान् हैं जिसके पिता अरहन्त सन्त हैं।" तब राजा भरत और दूसरे मनुष्यों ने अपने सिरों से हाथ लगाते हुए जिनवर को प्रणाम किया। फिर उसने सोचा कि पहले मैं क्या देखूँ? दृप्त शत्रुओं का नाश करनेवाला चक्र देखूँ या पुत्र का मुख! या मध्यस्थ स्वच्छ परिग्रह-शून्य शुद्ध-अन्तरंग मुनि की वन्दना करूँ! धर्म से ही देवत्व, कलत्र, पुत्र और शत्रुओं का नाश करनेवाला अस्त्र उत्पन्न होता है। धर्म से ही पृथ्वी का राज्य होता है।

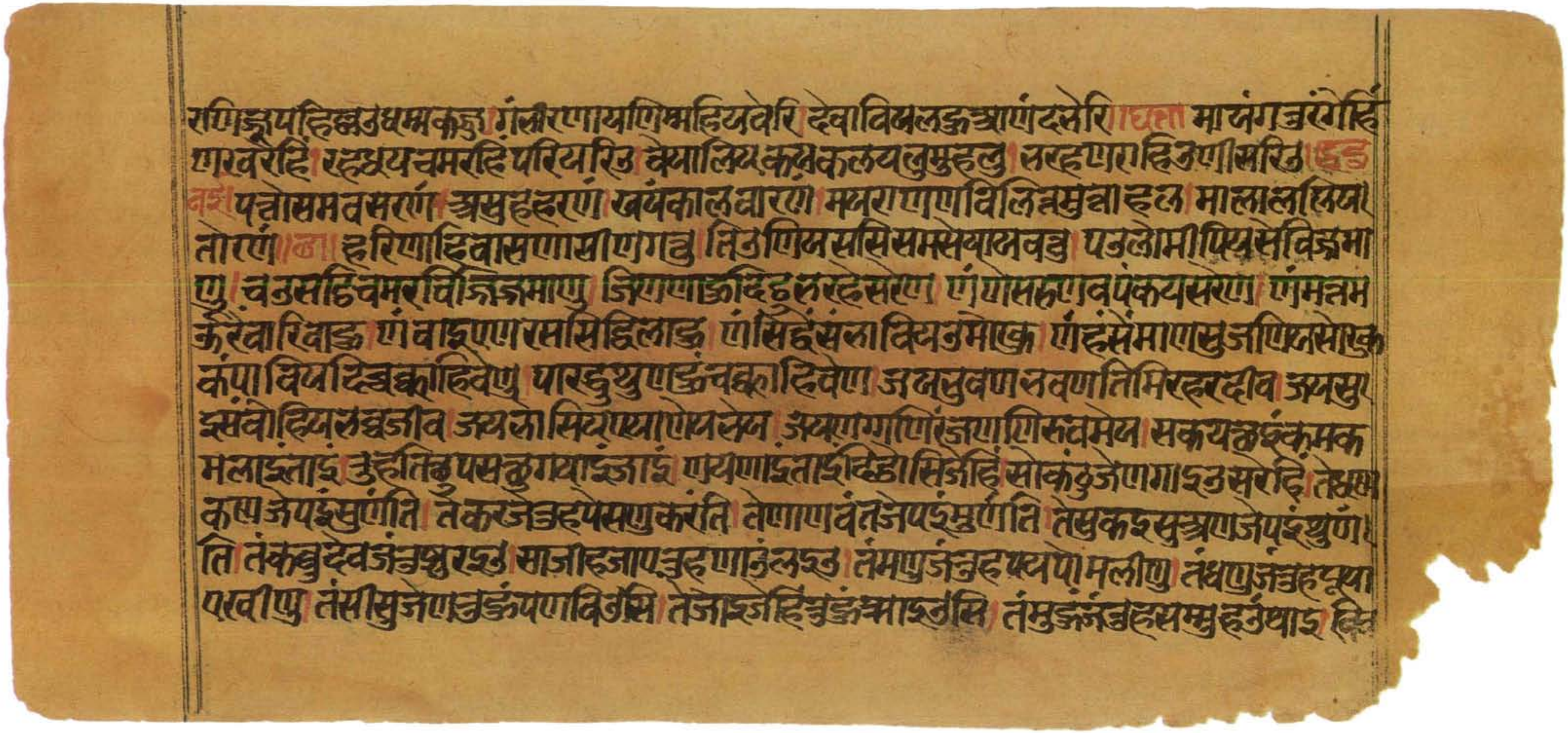

इसलिए पहले धर्मकार्य करना चाहिए। तब उसने गम्भीर नाद से शत्रुओं का संहार करनेवाली आनन्दभेरी बजवा दी।

घत्ता—गज, तुरंगों, नरवरों, रथध्वज और चमरों से घिरा हुआ, और वैतालिकों के द्वारा किये गये कलकल से मुखर राजा भरत चला॥ ६॥

७

वह क्षयकाल का निवारण करनेवाले और अशुभ का हरण करनेवाले तथा जिसमें मगर के मुख की आकृति से निकले हुए मोतियों की माला से चंचल तोरण हैं, ऐसे समवशरण में पहुँचा। सिंहासन पर आसीन शरीर, चन्द्रमा की तिगुनी सफेदी के समान आतपत्र (छत्र) वाले इन्द्र के द्वारा सेवित, जिनके ऊपर चौंसठ चमर ढोरे जा रहे हैं, ऐसे जिननाथ को भरतेश्वर ने इस प्रकार देखा मानो नवकमलवाले सरोवर ने सूर्य को देखा हो। मानो मतवाले मयूर ने मेघ को, मानो रसायन निर्माता ने रस के सिद्धिलाभ को, मानो सिद्ध ने सम्भावित मोक्ष को, मानो हंस ने सुख देनेवाले मानस-सरोवर को। दिशाओं के लोकपालों को कँपानेवाले चक्राधिप भरत ने स्तुति प्रारम्भ की, "विश्वरूपी भवन के अन्धकार के दीप, आपकी जय हो, आगम से भव्य जीवों को सम्बोधित करनेवाले आपकी जय हो। एकानेक भेदों को बतानेवाले आपकी जय हो। हे दिगम्बर, निरंजन और अनुपमेय आपकी जय हो। वे चरणकमल कृतार्थ हो गये जो तुम्हारे प्रशस्त तीर्थ के लिए गये। वे नेत्र कृतार्थ हैं जिन्होंने तुम्हें देखा, वह कण्ठ सफल हो गया जिसने स्वरों से तुम्हारा गान किया। वे कान धन्य हैं जो तुम्हें सुनते हैं, वे हाथ कृतार्थ हैं जो तुम्हारी सेवा करते हैं। वे ज्ञानी हैं जो आपका चिन्तन करते हैं, वे सज्जन और सुकवि हैं जो तुम्हारी स्तुति करते हैं। हे देव, वह काव्य है जो तुममें अनुरक्त है। जीभ वह है जिसने तुम्हारा नाम लिया है। वह मन है जो तुम्हारे चरण-कमलों में लीन है। वह धन है जो तुम्हारी पूजा में समाप्त होता है, वह सिर है जिसने तुम्हें प्रणाम किया है। योगी वे हैं जिनके द्वारा तुम्हारा ध्यान किया गया। वह मुख है जो तुम्हारे सम्मुख स्थित है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

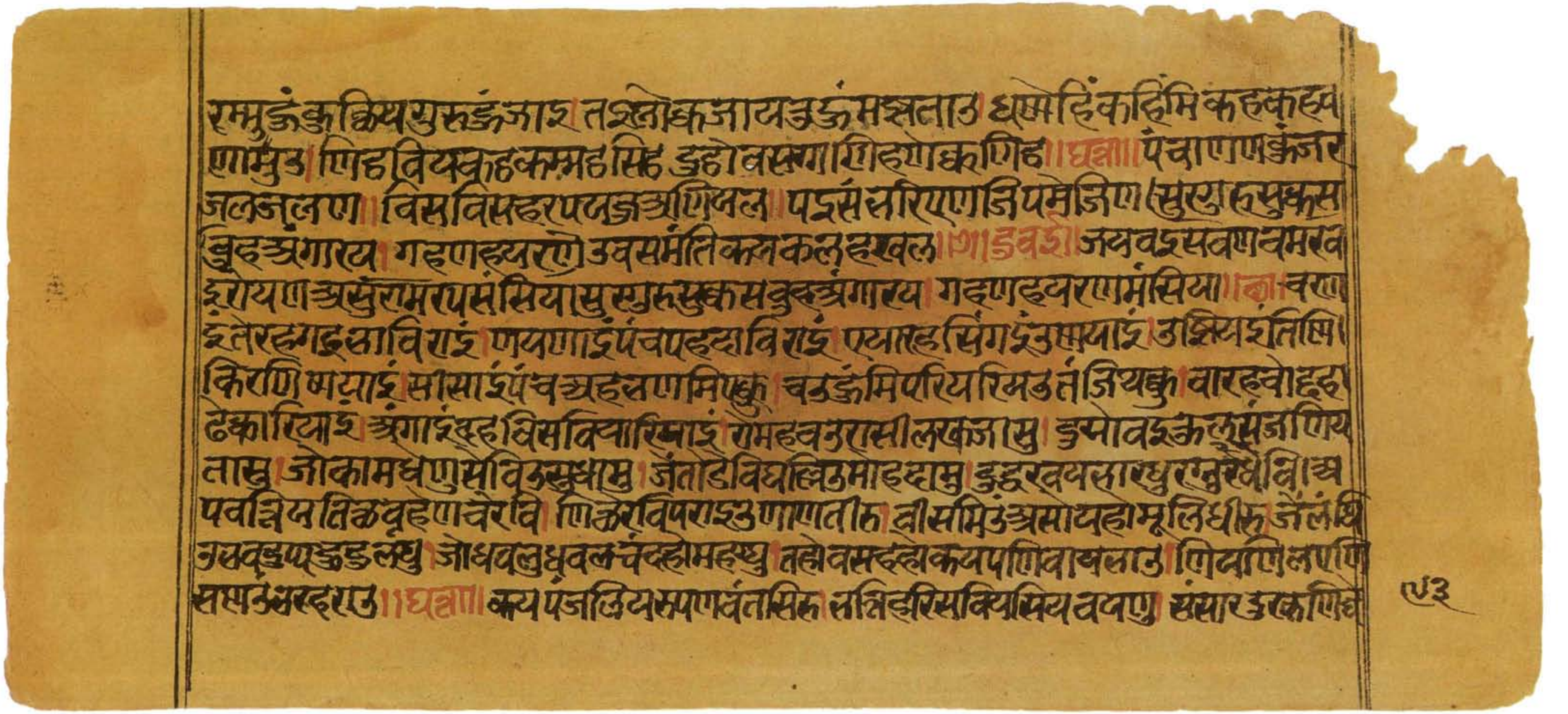

जो विपरीत मुख हैं वे कुगुरुओं के पास जाते हैं। हे त्रैलोक्य पिता, तुम मेरे पिता हो। धन्यों के द्वारा तुम किसी प्रकार ज्ञात हो? दुष्ट आठ कर्मों का नाश करनेवाले तथा दुष्ट उपसर्गों को नाश करने में एकनिष्ठ हे श्रेष्ठ परम जिन—

घत्ता—सिंह, गज, जल, अग्नि, विष, विषधर, रोग, बेड़ियाँ और कलह करनेवाले दुष्ट तुम्हारी याद करने से शान्त हो जाते हैं॥ ७॥

८

कुबेर, असुरेन्द्र, असुर और अमरों से प्रशंसित, बृहस्पति, शुक्र, बुध, मंगल आदि ग्रहों और नभचरों द्वारा प्रणम्य आपकी जय हो। तेरहगति भावनाएँ (पाँच महाव्रत, पाँच समितियाँ और तीन गुप्तियाँ) जिसके चरण हैं, प्रभा से दीप्त पाँच ज्ञान जिसके नेत्र हैं, सम्यक्त्वादि ग्यारह गुणस्थान जिसके सींग हैं, तीन शल्य, जिसके (मिथ्यादर्शन-ज्ञान और चारित्र) स्कन्ध कुटी और मस्तक हैं, पाँच महाव्रत अथवा एक अहिंसाव्रत जिसका सिर है, चारों ओर से घिरा हुआ जो वहीं स्थित है, बारह अंग और चौदह पूर्व, जिसका ढेक्कार शब्द है, विद्वानों के द्वारा विचारित, उत्तम क्षमादि जिसके अंग हैं। चौरासी लाख योनियाँ जिसके रोम हैं ऐसे उसके लिए दुष्ट गोपति समूह उत्पन्न हो गया। जो कामधेनु है, जिसके सुधाम की सेवा की है, जिसने मोहरूपी रस्सी तोड़कर फेंक दी है। और जो दुर्धर व्रतभार के धुराग्र को धारण कर, जो प्रवर्तित नहीं हुआ। ऐसे तीर्थ पथपर चलकर और पार कर ज्ञान के तीर पर पहुँचा है, और जो धीर अशोक वृक्ष के नीचे विश्राम कर रहा है, जिसने संसार के अलंघ्य पथ को पार कर लिया है, जो धवल, धवलसमूह में महाआदरणीय है उसके प्रति प्रणतभाव प्रदर्शित करते हुए भरतराज अपने कोठे में बैठ गया।

घत्ता—हाथों की अंजलि जोड़ते हुए, सिर से प्रणाम करते हुए तथा भक्ति और हर्ष से प्रफुल्लमुख भरत संसार दुःख से विरक्त भव्यजनों को देखकर उनमें जा मिला॥ ८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

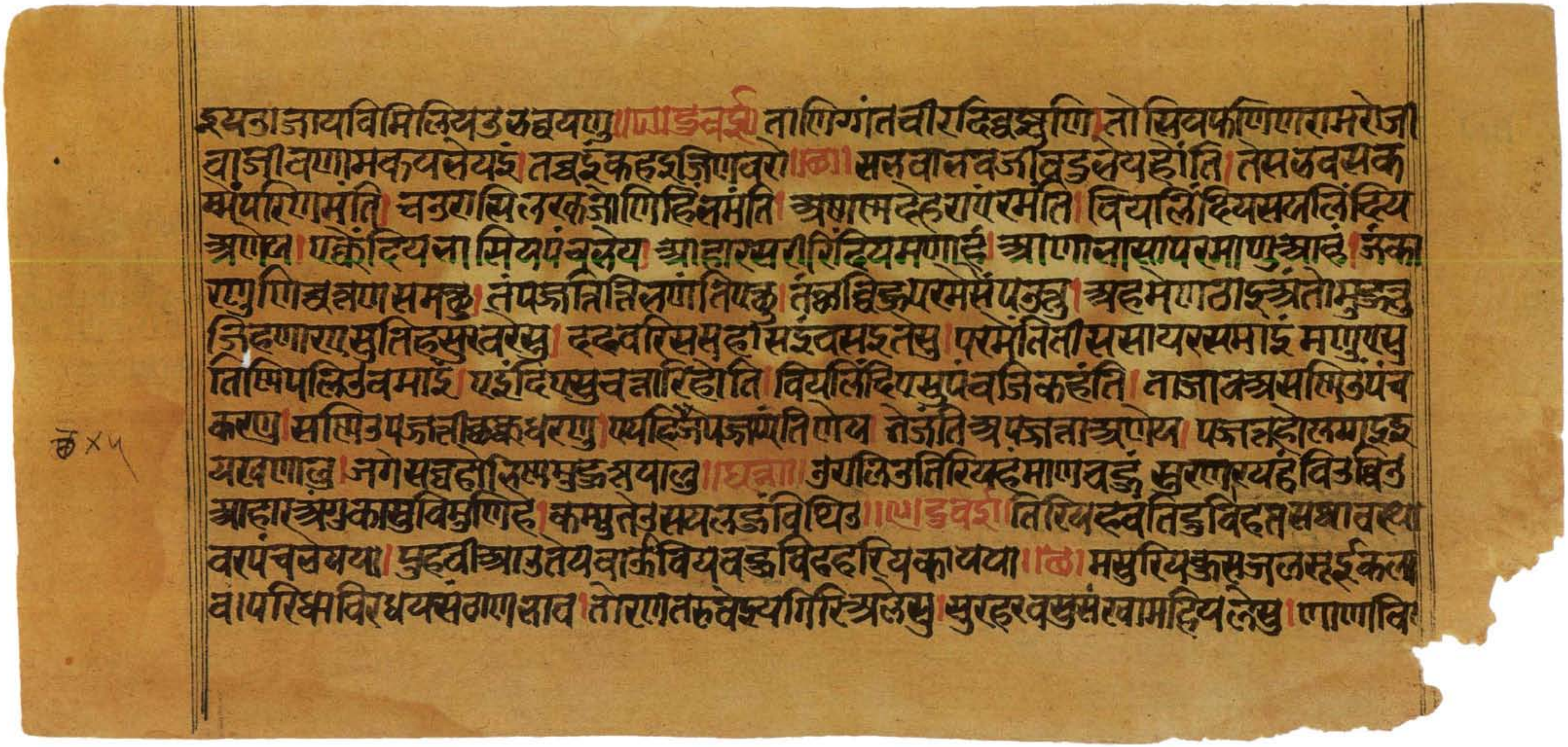

९

तब निकलती हुई धीर दिव्य ध्वनि से नाग, नर, अमर को सन्तुष्ट करनेवाले जिनवर जीव-अजीव नाम से भेदवाले तत्त्वों का कथन करते हैं—सभव और अभव (जन्मा और अजन्मा) जीव दो प्रकार के होते हैं। इनमें सभी जीव अपने कर्म के अनुसार परिणमन करते हैं। चौरासी लाख योनियों में परिभ्रमण करते हैं। एक-दूसरे के शरीर से अनुराग करते हैं। विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय अनेक होते हैं। एकेन्द्रिय के पाँच भेद होते हैं, जो कारण रचना करने में समर्थ होता है उसे पर्याप्ति कहते हैं। परमेश्वर जिनने उसे छह प्रकार का कहा है। पर्याप्ति के पूर्व होने का काल एक अन्तर्मुहूर्त है। जिस प्रकार नारकियों में उसी प्रकार देवों में (जघन्य आयु के रूप में) जीव दस हजार वर्ष जीवित रहता है। उत्कृष्ट आयु तैंतीस सागर प्रमाण है और मनुष्यों में तीन पल्य बराबर आयु होती है। एकेन्द्रिय जीवों के चार पर्याप्तियाँ हैं और विकलेन्द्रिय जीवों के पाँच इन्द्रियाँ कही जाती हैं। असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के पाँच पर्याप्तियाँ हैं और संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के छह। और इनके द्वारा जिनका कथन नहीं होता वे अपर्याप्तक जीव के रूप में जाने जाते हैं। पर्याप्तक जीव के लिए एक क्षण का समय लगता है। विश्व में सभी पर्याप्तियों में एक अन्तर्मुहूर्त काल लगता है।

घत्ता—तिर्यंच और मनुष्यों का औदारिक शरीर होता है, देव और नारकियों का वैक्रियक शरीर। आहारक शरीर, तैजस और कार्मण शरीर सभी के होते हैं॥ ९॥

१०

तिर्यंच दो प्रकार के होते हैं—त्रस और स्थावर। स्थावर पाँच प्रकार के होते हैं—पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक। जो क्रमशः मसूर, जल की बूँद, सूइयों का समूह और उड़ती हुई ध्वज के आकार के होते हैं। तोरण, वृक्षवेदिका, गिरितल, देवविमान, आठ प्रकार की भूमियों में नाना प्रकार के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समुद्रों, नदियों, सरोवरों, जिनवर-भूमियों में और भी दूसरे-दूसरे क्षेत्रों में लोकान्त तक स्थित आकाशतल में, अति सरस रस और जल के आशयों में इनका एक क्रम से निवास होता है। बालुका (रेत) खरजल से भी नहीं भिदती, और जो कोमल मिट्टी सींचने पर जल्दी बँध जाती है। इस प्रकार दो प्रकार की मिट्टी पाँच रंग की होती है, और दूसरे से मिलने पर दूसरे रंग की हो जाती है।

घत्ता—काली, लाल, हरी, पीली, सफेद और भी धूसरित (मटमैली)। इस प्रकार पाँच पृथ्वीकाय की मृदु धरती के पाँच रंगों का मैंने कथन किया॥ १०॥

११

स्वर्ण, ताम्र, मणि और चाँदी आदि खर पृथ्वियाँ कही जाती हैं।

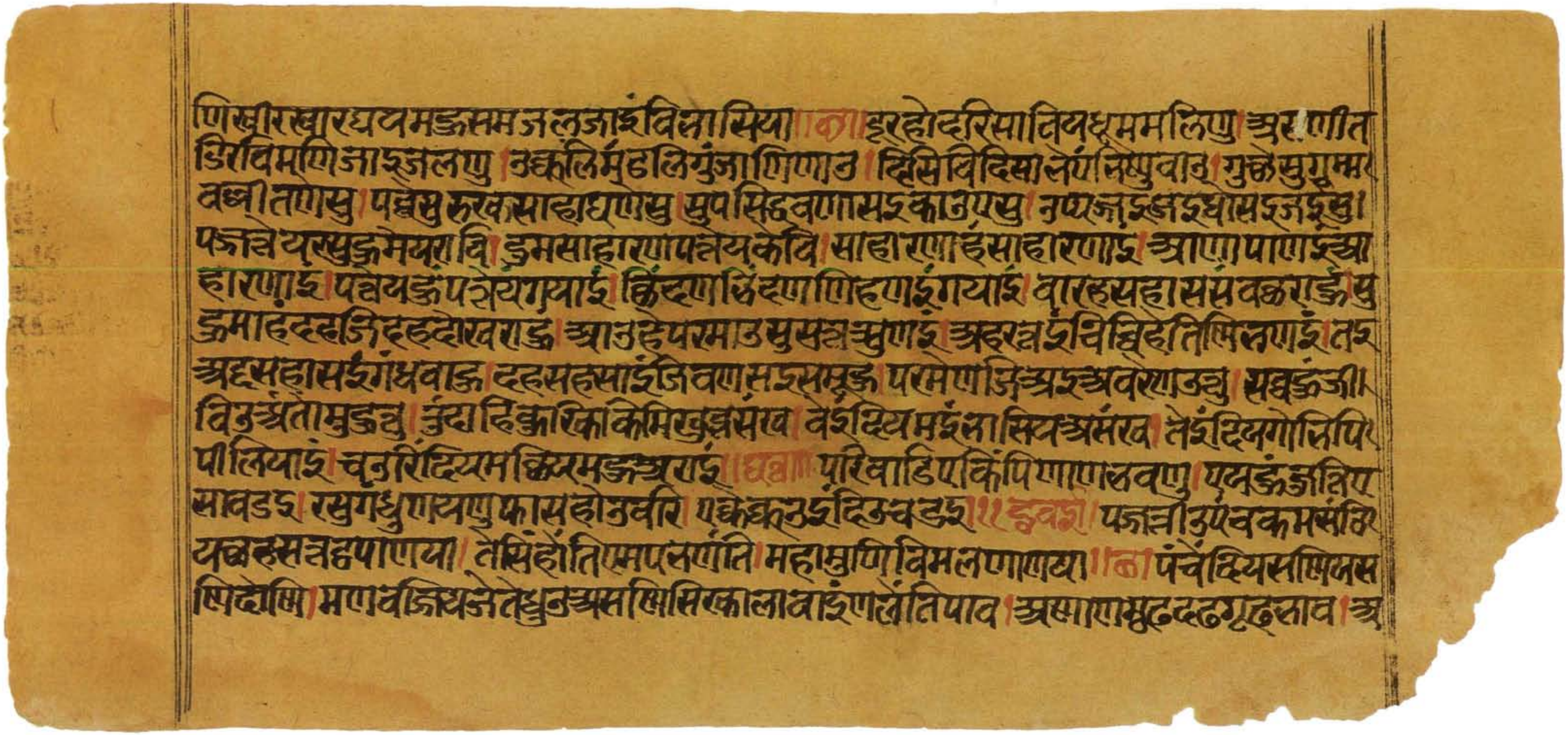

वारुणी, क्षीर, खार, घृत, मधु आदि जल-जातियाँ कही जाती हैं। वज्र, बिजली, सूर्य और मणि को दूर से धूम्र का प्रदर्शन करनेवाली आग समझो। उत्कलि (तिरछी बहनेवाली वायु), मण्डली (गोलाकार बहनेवाली वायु), गुंजा (गूँजनेवाली वायु), इस प्रकार दिशा-विदिशा के भेद से वायु कई प्रकार की होती है। गुच्छों, गुल्मों, लताशरीरों, पर्वों में, वृक्ष-शाखाओं आदि में शुद्ध वनस्पतिकाय जीव उत्पन्न होते हैं, लोक में ऐसा यतिवर कहते हैं। ये पर्याप्तक, अपर्याप्तक तथा सूक्ष्म और स्थावर होते हैं। कोई वनस्पतिकायिक जीव साधारण और प्रत्येक भी होते हैं। साधारण प्रकार के वनस्पति जीवों का श्वासोच्छ्वास और आहार साधारण होता है और प्रत्येक जीवों का अलग-अलग होता है जो छेदन-भेदन और निधन को प्राप्त होते हैं। सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीवों की दस हजार; खर पृथ्वीकायिक जीवों की बीस हजार वर्ष आयु है। जलकायिक जीवों की आयु सात हजार वर्ष, अग्निकायिक जीवों की तीन दिन, वायुकायिक जीवों की तीन हजार वर्ष, वनस्पतिकायिक जीवों की दस हजार वर्ष आयु होती है। यह परम आयु कही गयी। अत्यन्त निकृष्ट या जघन्य आयु सब जीवों की अन्तर्मुहूर्त मात्र कही गयी है। गण्डूपद, कुक्षी, कृमि, शम्बूक, शंख आदि दो इन्द्रिय जीवों को मैंने असंख्य कहा है। तीन इन्द्रिय वीरबहूटी, पिपीलिका आदि, चार इन्द्रिय जीव मच्छर और भ्रमर इत्यादि।

घत्ता—परम्परा से इनमें युक्ति से कुछ भी ज्ञानचेतना उत्पन्न होती है। स्पर्श, रस, गन्ध, दृष्टि, (श्रोत) इनमें से एक-एक इन्द्रिय पर चढ़ती है॥ ११॥

१२

दो इन्द्रिय जीव के पर्याप्तक अवस्था में छह प्राण होते हैं, तीन इन्द्रिय जीव के पर्याप्तक अवस्था में सात प्राण होते हैं और अपर्याप्तक अवस्था में पाँच प्राण होते हैं, चार इन्द्रिय जीव के पर्याप्तक अवस्था में आठ प्राण होते हैं, और अपर्याप्तक अवस्था में छह प्राण होते हैं, उनके लिए इस प्रकार विमल ज्ञानवाले महामुनि कहते हैं। पाँच इन्द्रिय जीव संज्ञी-असंज्ञी दोनों होते हैं, जो मन से रहित हैं वे निश्चितरूप से असंज्ञी होते हैं, वे शिक्षा और बातचीत ग्रहण नहीं कर पाते, अज्ञान के आच्छादन के कारण उनका मूढ़भाव दृढ़ होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

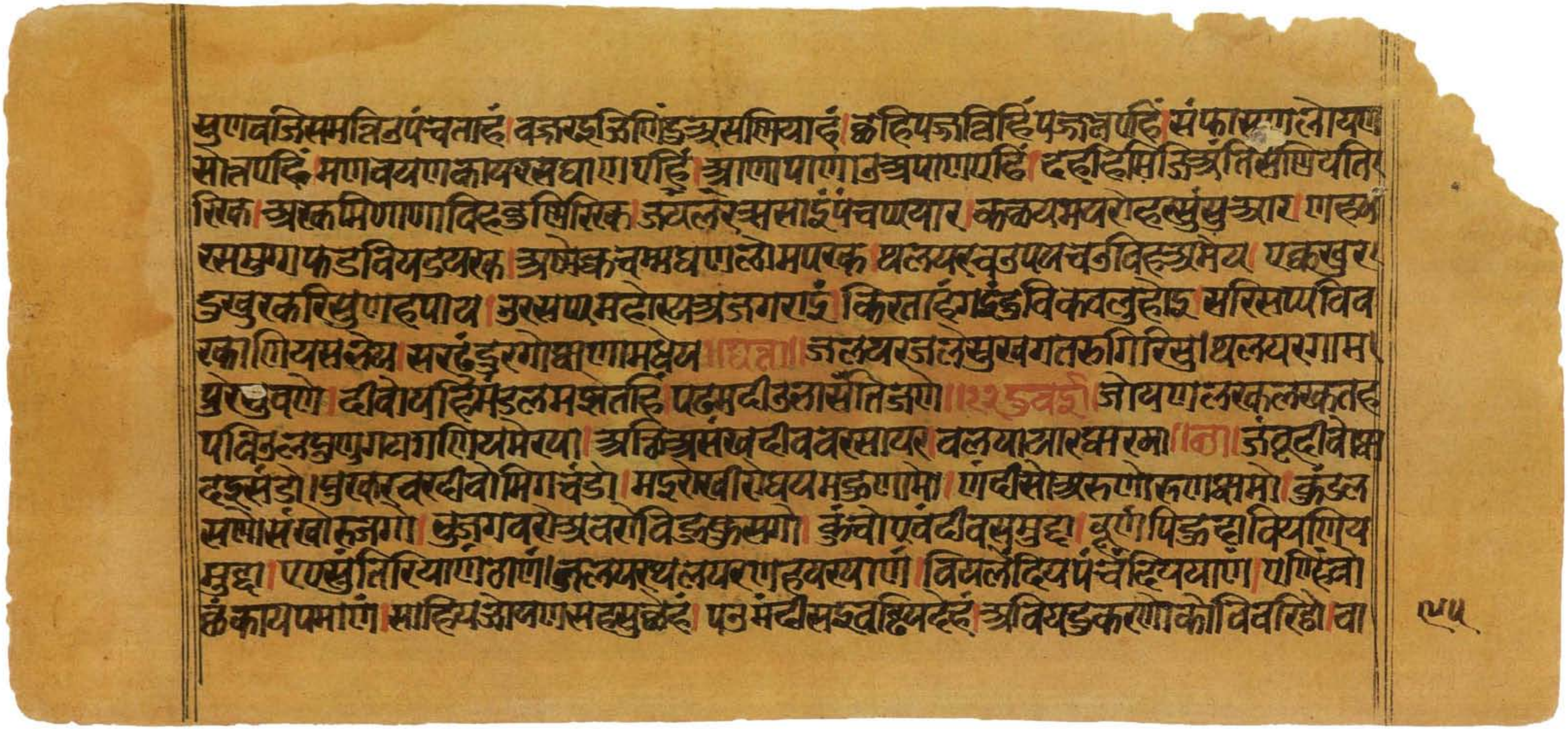

असंज्ञी पाँच इन्द्रिय पर्याप्तक जीव के नौ प्राण होते हैं। सम्पूर्ण छह पर्याप्तियों, स्पर्श, लोचन और श्रोत्रों, मन-वचन-काय-रसना-घ्राण-श्वासोच्छ्वासों और आयु इन दस प्राणों से संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच जीवित रहते हैं। दुर्दर्शनीय नाना प्रकार से उनका मैं वर्णन करता हूँ। जलचर पाँच प्रकार के होते हैं—मछली, मगर, उहर, कच्छप और सुंसुमार। नभचर भी सम्पुट, स्फुट और विकट पक्षवाले होते हैं। दूसरे घने चमड़े और विलोम पक्षवाले होते हैं। थलचर चौपाये चार प्रकार के होते हैं—एक खुर, दो खुर, तथा हाथी और कुत्तों के पैरवाले। उरसर्प, महोरग और अजगर इनका क्या, हाथी इनके कौर में समा जाता है। भुजसर्पों का भी भेदों के साथ वर्णन किया जाता है। ये सर, ढुंढ़र और गोधा नामवाले होते हैं।

घत्ता—जलचर जलों में, नभचर वृक्षों-पहाड़ों में और थलचर ग्राम-नगरों में निवास करते हैं। द्वीप और समुद्रमण्डल के मध्य जिनों के द्वारा प्रथम द्वीप कहा जाता है॥ १२॥

१३

पिछले गणित की मर्यादा के विचार से एक लाख योजन विस्तारवाला अत्यन्त विशाल जो असंख्य द्वीप और श्रेष्ठ सागरों के वलय आकार को धारण करनेवाला जम्बूद्वीप, धातकीखण्ड, पुष्करवरद्वीप, वारुणीद्वीप, क्षीरवरद्वीप, धृतवरद्वीप, मधुवरद्वीप (इक्षुवर), नन्दीश्वरद्वीप, अरुणवरद्वीप, अरुणाभास, कुण्डलद्वीप, शंखवरद्वीप, रुचकवरद्वीप, भुजगवरद्वीप, कुशगवरद्वीप, क्रौंचवरद्वीप—इस प्रकार द्वीप समुद्र हैं, जो दुगुने विशाल और अपना आकार प्रकट करनेवाले हैं। इन द्वीपों में तिर्यंचों का निवास है। अब मैं जलचर, थलचर, नभचर और विकलेन्द्रियों एवं पंचेन्द्रियों के शरीर का प्रमाण कहता हूँ। साधिक एक हजार योजन का विस्तारवाला पद्म (कमल) है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवि य दुकरणो को वि वरिट्ठो बारहजोयणदीहो दिट्ठो।
होइ तिकोसो तिकरणवंतो चउकरणिल्लो जोयणमेत्तो।
घत्ता—लवणण्णवि कालण्णवि विउले होंति सयंभूरमणि झस।
सेसेसु णत्थि जिणभासियउ सेणिय णउ चुक्कइ अवस॥ १३॥

१४

दुवई— जाणसु जोयणाइं अट्ठारह लवणसमुद्दमच्छया।
णव वरसरीमुहेसु छत्तीस जि कालोए दिसच्छया॥ १॥

अवसाणमहण्णवि जे वहंति ते जोयण पंचसयाइं होंति।
गयणंगणचरहं थलंभचरहं संमुच्छिमगब्भसरीरधरहं।
कइवयचावइं काह मि गणंति तणुमाणु एम मुणिवर भणंति।
कासु वि संमुच्छिमजलयरासु पज्जत्तिल्लहु जोयणसहासु।
जलगब्भजम्मि मवियाइं ताइं पंच जि जोयणइं सयाहयाइं।
एयहं तीहिं मि संमुच्छिमाहं परिवज्जियपज्जत्तीकमाहं।
अक्खिउ जिणेण दीसइ विअत्थि परमेणोगाहण णरविहत्थि।
थलगब्भयदेहि तिगाउयाइं परमेण माणभावहु गयाइं।
सुहमहु बायरहुं मि धुवु पवण्णु अंगुलअसंखभायउ जहण्णु।

दो इन्द्रिय (शंख) बारह योजन लम्बा देखा गया है। तीन इन्द्रिय (चिऊँटी) तीन कोस का है। चार इन्द्रिय (भौंरा) एक योजन प्रमाणवाला है।

घत्ता—लवणसमुद्र, कालसमुद्र और विशाल स्वयम्भूरमण समुद्र में मत्स्य होते हैं, शेष समुद्रों में नहीं होते। हे श्रेणिक, जिनवर के द्वारा कहा गया कभी गलत नहीं हो सकता॥ १३॥

१४

लवणसमुद्र के मत्स्य अठारह योजन के होते हैं। गंगा आदि नदियों के प्रवेश-मुख में नौ योजन के होते हैं, तथा कालोद समुद्र में नदी-प्रवेश-मुख में अठारह योजन और मध्य समुद्र में छत्तीस योजन लम्बे होते हैं। अवसान (अन्तिम स्वयम्भूरमण) समुद्र में जो मत्स्य बहते हैं वे पाँच सौ योजन के होते हैं। आकाश के आँगन में विचरनेवालों, थल और आकाश में चलनेवालों, संमूर्छन और गर्भज जन्म धारण करनेवालों का शरीर मान कई धनुषों का गिना जाता है, इस प्रकार मुनिवर कहते हैं। किन्हीं पर्याप्तक जलचरों का शरीरमान एक हजार योजन का मापा जाता है। इस प्रकार पर्याप्ति क्रम से शून्य इन संमूर्छन जीवों की अवगाहना जिनेन्द्र भगवान् के द्वारा एक वालिस्त की कही गई है। गर्भधारी थलचरों की अवगाहना तीन गव्यूति (छः कोश) परम मान से होती है। सूक्ष्म बादर जीवों की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता— जगि सुहुमणिगोयसमब्भवहं अवि यसमत्तहुं ण वि रहिउ।
णिक्किट्ठु कुसुमयंतें पहुणा उत्तिमु जलयराहुं कहिउ॥ १४॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे तिरिक्खोगाहणो णाम दसमो परिच्छेओ सम्मत्तो॥ १०॥

॥ संधि॥ १०॥

संधि ११

पुणु इंदियभेउ वम्महपसरणिवारएण। भासियउ असेसु लोयहु रिसहभडारएण॥ ध्रुवकं॥

१

जाणइ सण्णिउ जो पज्जत्तउ पुट्ठउ सुणइ सद्दु गयसोत्तिउ।
णिल्लोयणतिउ पुट्ठपविट्ठउ रूवु णियच्छइ अप्परिमट्ठउ।
फासु गंधु रसु णवहि जि भावइ बारहजोयणेहिं सुइ पावइ।
सत्तेतालसहस्सइं दिट्ठिट्ठइं अवरु वि दोण्णि सयइं तेसट्ठइं।
चक्खिंदियहु विसउ वक्खाणिउ जेहउ केवलणाणें जाणिउ।
गंधगहणु अइंवत्तसमाणउं सवणु वि जवणालीसंठाणउं।
दिट्ठिइ पडिम णिएज्ज मसूरी अक्खिय जीह खुरुप्पायारी।
सहरियतसदेहेसु पयासउ फासु अणेयरूवविण्णायउ।
समचउरंसु ठाणु सुरसत्थहु हुंडु वि णारयगणहु अहत्थहु।

घत्ता—विश्व में सूक्ष्म निगोद में जन्म लेनेवाले अपर्याप्त जीवों को भी उन्होंने गुप्त नहीं रखा। कामदेव का नाश करनेवाले उन्होंने जलचरों की उत्कृष्ट और जघन्य अवगाहना का कथन किया है।

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का तिर्यंच अवगाहन नामक दसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ १०॥

सन्धि ११

फिर काम के प्रसार का निवारण करनेवाले आदरणीय ऋषभ जिन ने अशेष लोक के इन्द्रिय भेद का कथन किया।

१

जो संज्ञी पर्याप्तक जीव है वह स्पष्ट श्रोत्रगत शब्द को सुनता है। नेत्रों को छोड़कर तीन इन्द्रियाँ (स्पर्श, रसना और घ्राण) स्पृष्ट (छुए हुए) और प्रविष्ट को दूर से जान लेती हैं। आँख अस्पष्ट रूप को देखती है। स्पर्श, गन्ध और रस को वे नौ योजन दूर से जान लेती हैं। कान बारह योजन दूर से जान लेते हैं। दृष्टि (आँख) का इष्ट-विषय सैंतालीस हजार दो सौ त्रेसठ योजन है। यह चक्षु इन्द्रिय विषय का व्याख्यान किया, जैसा कि केवलज्ञान से जाना गया। गन्धग्रहण (नाक का अन्तरंग) अतिमुक्तक पुष्प के समान है। और कान (अन्तरंग) जौ की नली के समान है। आँख में मसूर की आकृति जानना चाहिए; और जीभ को अर्धचन्द्रमा के समान कहा जाता है। हरी वनस्पति और त्रसों के शरीरों में प्रकाशित स्पर्श को अनेक रूपों से जाना जाता है। देवसमूह का शरीर समचतुरस्र संस्थान होता है।

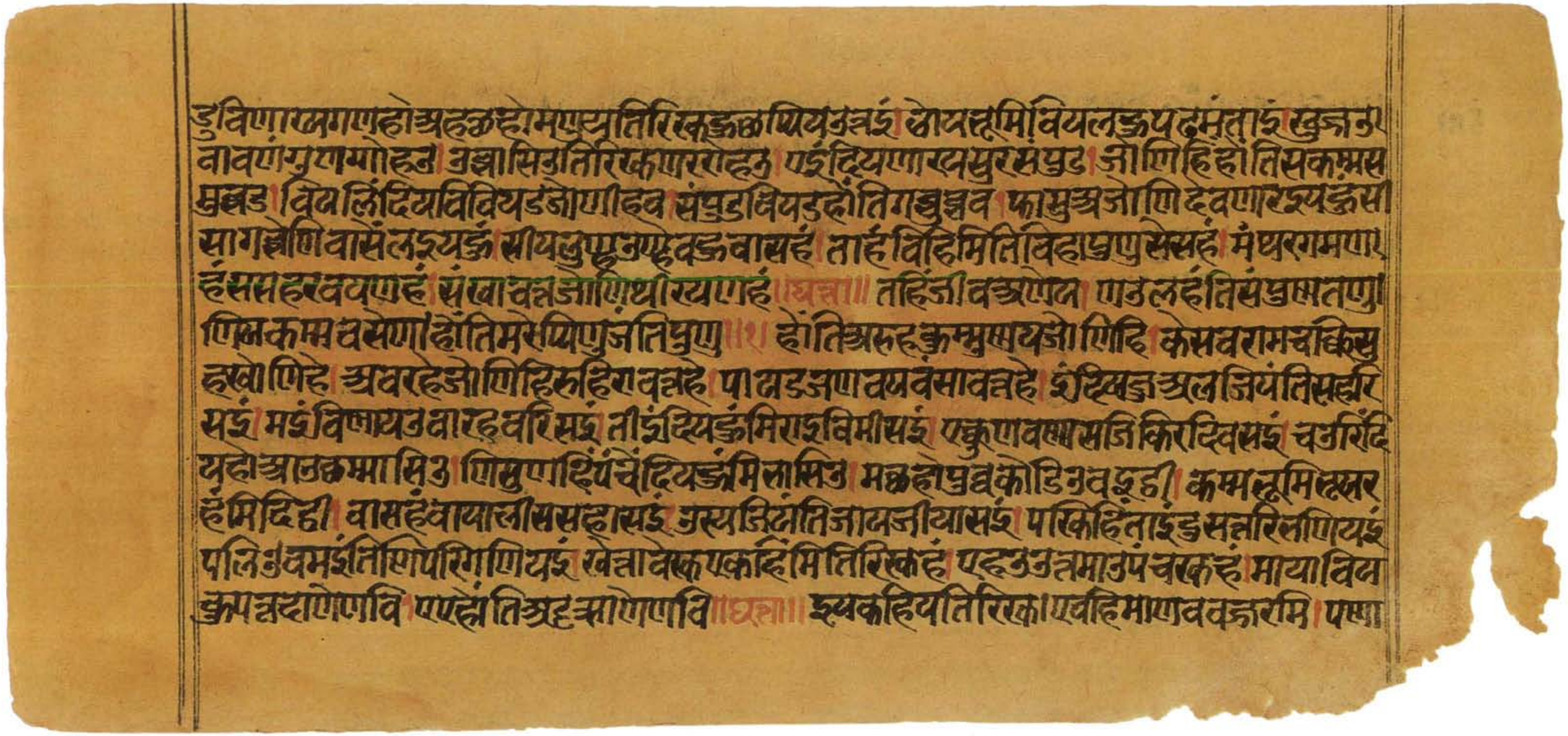

अधोलोक में स्थित नारकियों का हुंड शरीर होता है। मनुष्य और तिर्यंचों के छहों संस्थान होते हैं। भोगभूमियों का प्रथम अर्थात् समचतुरस्र संस्थान और विकलेन्द्रियों का अन्तिम अर्थात् हुंड संस्थान होता है। कुब्जक, बावनांग और न्यग्रोध को तिर्यंचों और मनुष्यों का रोधक कहा जाता है। एकेन्द्रिय और नारकीय सुसंवृत योनि में उत्पन्न होते हैं और अपने कर्म में उद्भट होते हैं। विकलेन्द्रिय भी विवृत योनि में होते हैं, गर्भ से उत्पन्न होनेवाले संवृत और विवृत योनियों में उत्पन्न होते हैं। देव नारकीय अचित्त योनि में होते हैं। गर्भ में निवास करनेवाले मिश्रित योनि भी ग्रहण करते हैं, किसी की उष्ण योनि होती है और किसी की शीतल। तैजसकायिक जीवों की उष्ण योनि होती है, देवों और नारकियों की तीनों योनियाँ (उष्ण, शीत और मिश्र) होती हैं। शेष की तीन योनियाँ होती हैं। मन्थर गमन करनेवाली चन्द्रमुखी स्त्री रत्नों के शंखावर्तक योनि होती है।

घत्ता—संसार में अनेक जीव सम्पूर्ण शरीर ग्रहण नहीं कर पाते, अपने कर्म के वश से जो उत्पन्न होते हैं और मरकर चले जाते हैं ॥ १ ॥

२

शुभ भूमि कूर्मोन्नत योनियों में अर्हन्त, केशव, राम और चक्रवर्ती आदि उत्पन्न होते हैं। और गर्भयोनि के वंशपत्र आकार में शेष प्राकृत मनुष्य उत्पन्न होते हैं। मैंने जान लिया है कि दो इन्द्रिय जीव प्रसन्नतापूर्वक बारह वर्ष तक जीवित रहता है। तीन इन्द्रिय जीव भी रात्रियों सहित उनचास दिन ही जीवित रहता है। चार इन्द्रियोंवाले जीवों की आयु छह माह की होती है। सुनो, पंचेन्द्रियों की भी आयु बतायी गयी है। मत्स्य की एक पूर्व कोटी वर्ष आयु बतायी गयी है। कर्मभूमिज तिर्यंचों की भी एक करोड़ पूर्व वर्ष आयु होती है। साँप जीवन की आशावाले बयालीस हजार वर्ष जीते हैं। पक्षी बहत्तर हजार वर्ष जीवित रहते हैं। मनुष्यों और तिर्यंचों की जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट आयु एक पल्य, दो पल्य, दो पल्य और तीन पल्य गिनी गयी है। क्षेत्र की अपेक्षा कहीं पंचेन्द्रिय तिर्यंचों की यह उत्तम आयु है। मायावी ये कुपात्रदान और आर्तध्यान से भी होते हैं।

घत्ता—इस प्रकार तिर्यंचों की आयु कही। अब मनुष्यों की आयु कहता हूँ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

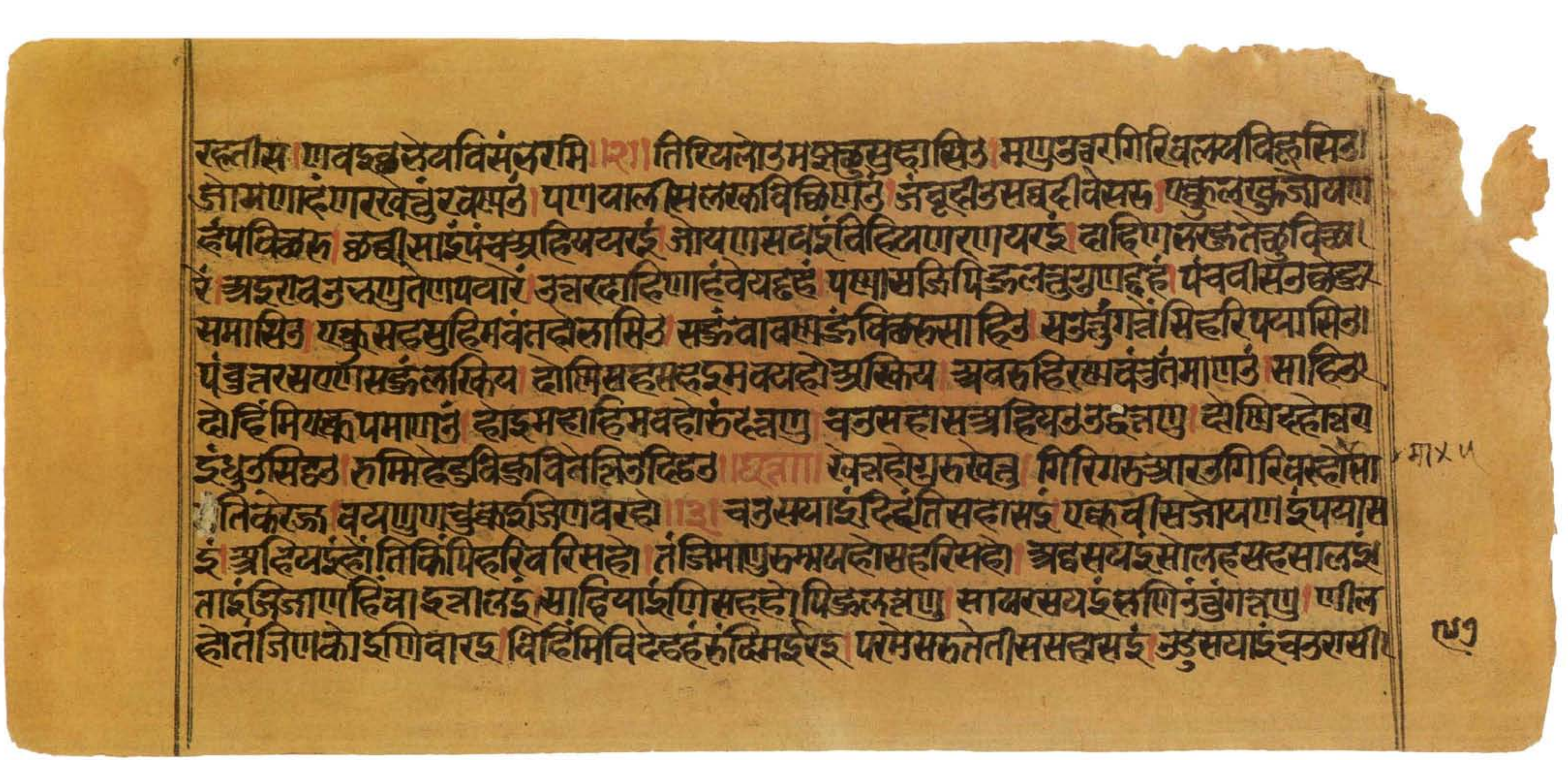

उनके पन्द्रह, तीस, नब्बे और छह भेदों को याद करता हूँ॥ २॥

३

लोक के मध्य में तिर्यक् (तिरछा) रूप में फैला हुआ और मनुष्योत्तर गिरिवलय से विभूषित पैंतालीस लाख योजन विस्तारवाला मनुष्य क्षेत्र है। एक लाख योजन विस्तार का जम्बूद्वीप सबसे श्रेष्ठ है। कुछ अधिक पाँच सौ छब्बीस योजन (५२६$^{६}/_{१९}$ योजन) वाले जिसमें मनुष्यों के नगर और नगरियाँ निर्मित हैं। दक्षिण भरत का विस्तार पाँच सौ छब्बीस योजन है, उत्तर में इतना ही विस्तार ऐरावत क्षेत्र का है। भरतक्षेत्र में उत्तर से लेकर दक्षिण तक, गुणों से भरपूर पचास योजन चौड़ाईवाला विजयार्ध पर्वत है। उसकी ऊँचाई पच्चीस योजन कही गयी है। हिमवन्त कुलाचल एक हजार बावन (१०००$^{१२}/_{१९}$) योजन विस्तारवाला है, ऊँचाई में सौ योजन है, शिखरी पर्वत भी इतना है। दूसरा हैमवत क्षेत्र दो हजार एक सौ पाँच, पाँच बटा उन्नीस (२१०५$^{५}/_{१९}$) योजनवाला कहा जाता है और दूसरा हैरण्य (हिरण्यवत्) क्षेत्र इसी मानवाला है, दोनों को एक प्रमाणवाला कहा गया है। महाहिमवत् कुलाचल का विस्तार चार हजार दो सौ दस, दस बटा उन्नीस ४२१०$^{१०}/_{१९}$) योजन। (उसकी ऊँचाई दो सौ योजन) कहा गया है। रुक्मि कुलाचल का भी मान इसी प्रकार देखा गया है।

घत्ता—क्षेत्र से चौगुना क्षेत्र और पर्वत से चौगुना पर्वत है, इसमें भ्रान्ति मत करो। जिनवर का वचन कभी चूक नहीं सकता। (गलत नहीं हो सकता)॥ ३॥

४

हरिक्षेत्र कुछ अधिक आठ हजार चार सौ इक्कीस, एक बटे उन्नीस योजन प्रकट किया गया है; रम्यक क्षेत्र का विस्तार भी इतना ही है। निषध पर्वत का विस्तार सोलह हजार आठ सौ बयालीस दो बटे उन्नीस योजन है। उसकी ऊँचाई चार सौ योजन कही गयी है। नील कुलाचल का भी विस्तार और ऊँचाई इतनी ही है, उसका कोई निवारण नहीं कर सकता। दोनों (अर्थात् निषध और नील कुलाचल) मिलकर विदेह क्षेत्र के विस्तार की रचना करते हैं, जो तैंतीस हजार छह सौ चौरासी, चार बटा उन्नीस (३३६८४$^{४}/_{१९}$) योजन है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

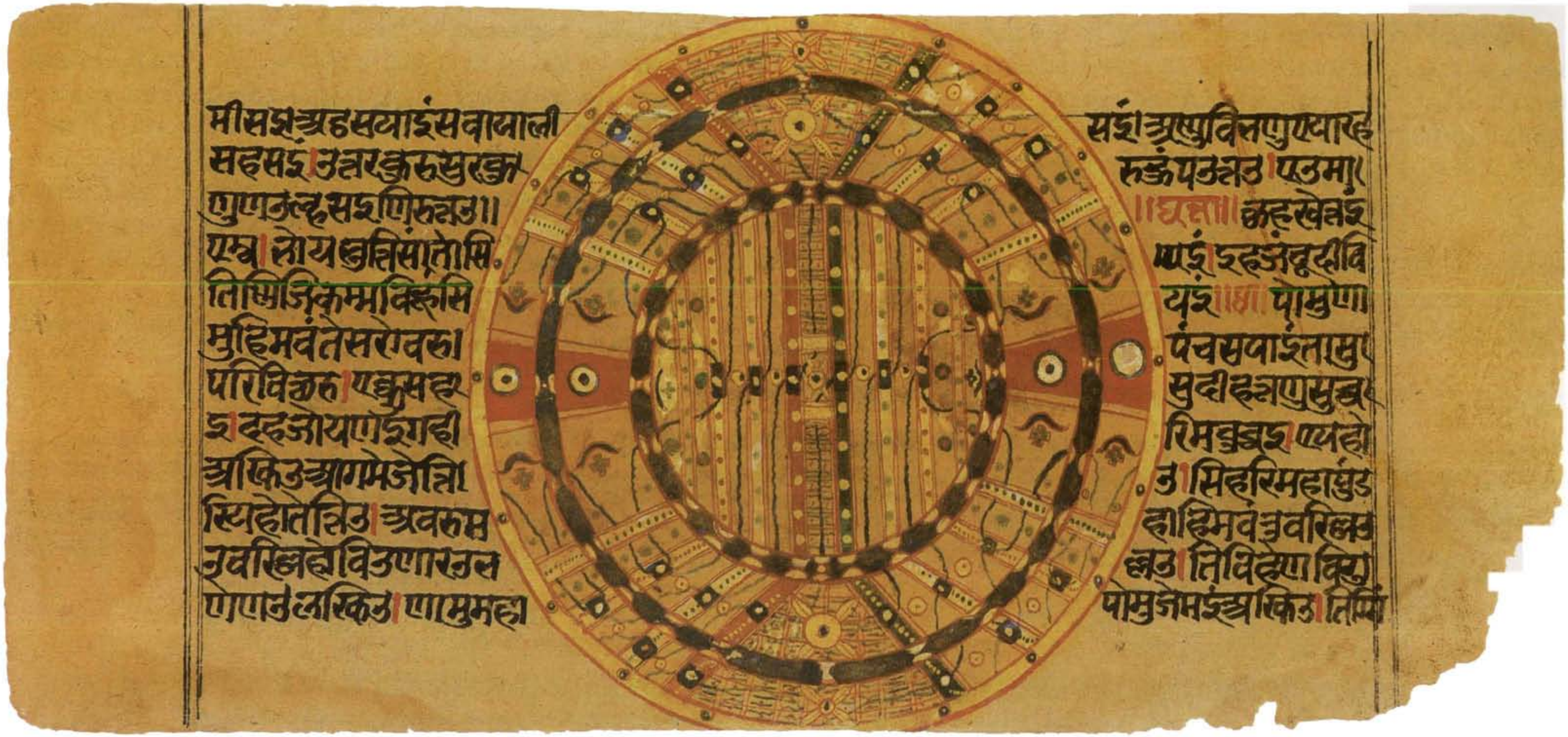

और भी उत्तरकुरु तथा दक्षिणकुरु का विस्तार ग्यारह हजार आठ सौ बयालीस योजन कहा गया है, निश्चय ही यह मान कम नहीं होता।

घत्ता—भोगभूमि से सन्तुष्ट रहनेवाले ये छह क्षेत्र हैं। इस जम्बूद्वीप में कर्मभूमि से विभूषित तीन क्षेत्र हैं ॥ ४ ॥

५

हिमवत् पर्वत पर पद्म नाम का सरोवर है, उसका परिविस्तार पाँच सौ योजन है, एक हजार योजन लम्बाई कही जाती है और दस योजन गहराई। इस पद्म सरोवर का आगम में जितना विस्तार कहा शिखरी कुलाचल पर स्थित महापुण्डरीक सरोवर का भी यही विस्तार है। तथा श्रेष्ठ महाहिमवान् उससे दुगुना। उसके ऊपर पद्म सरोवर से तीन रूप से दुगुना महापद्म नाम का सरोवर है अर्थात् उसकी र चौड़ाई-गहराई पद्म से दुगुनी है, यह मैंने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

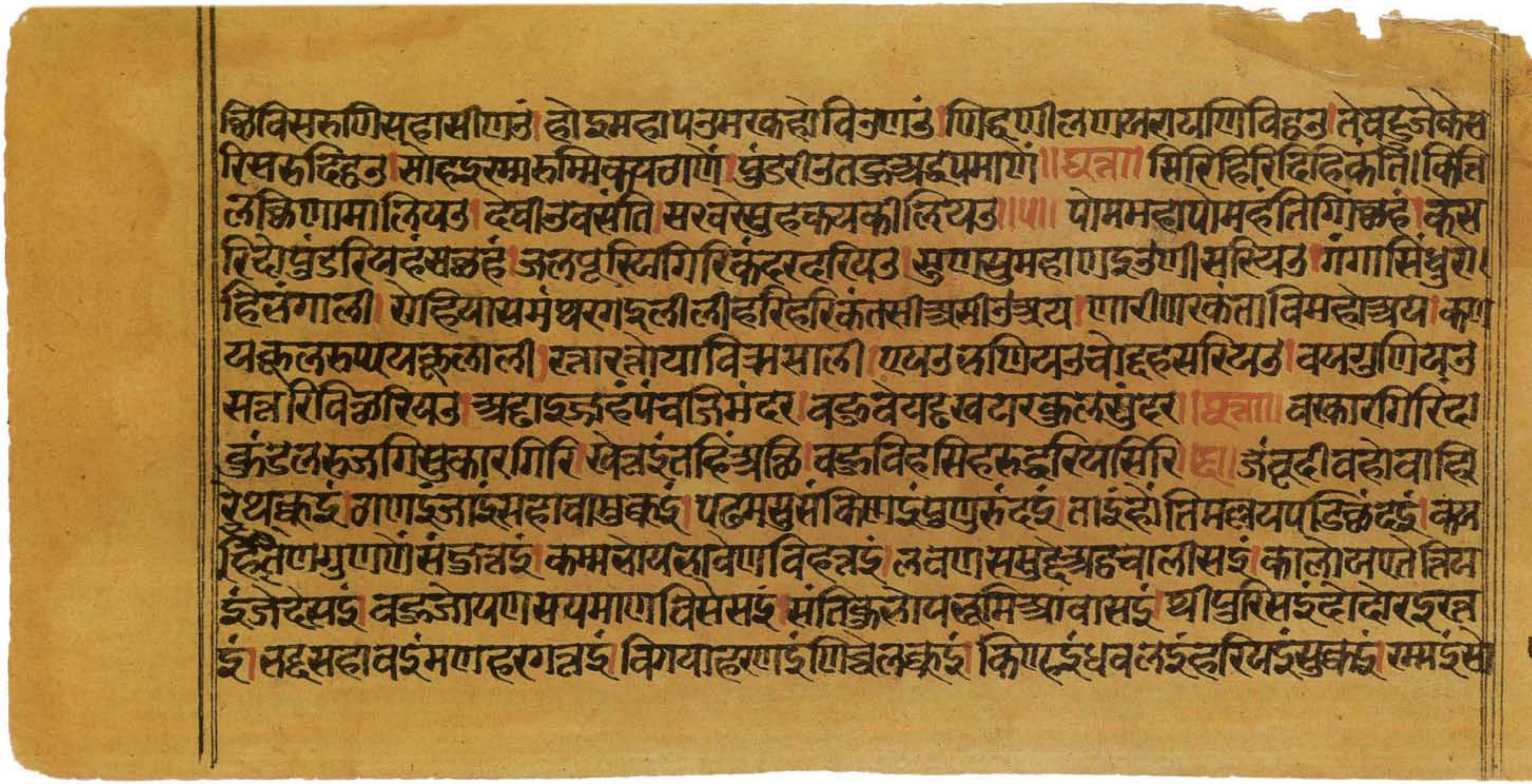

निषध पर्वत पर स्थित तिगिंच्छ सरोवर महापद्म नाम के सरोवर से दुगुना होता है। स्निग्ध नील नगराज पर स्थित केशरी सरोवर भी उतना ही बड़ा है। रमणीय रुक्मी पर्वत पर स्थित पुण्डरीक सरोवर उससे आधा है।

घत्ता—श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि और लक्ष्मी नाम की पुण्य क्रीड़ा करनेवाली देवियाँ सरोवरों में रहती हैं ॥ ५ ॥

६

सुनो—पद्म, महापद्म, तिगिंच्छ, केशरी, पुण्डरीक और महापुण्डरीक स्वच्छ सरोवर हैं। उनसे अपने जल से पहाड़ी गुफाओं और घाटियों को आपूरित करनेवाली महानदियाँ निकली हैं—गंगा, सिन्धु, लहरोंवाली रोहित, मन्थरगामिनी रोहितास्या, हरि, हरिकान्ता, सीता, सीतोदा, महाजलवाली नारी और नरकान्ता। स्वर्णकूला और रूप्यकूला तथा मत्स्यों से भरपूर रक्ता और रक्तोदा। ये चौदह नदियाँ कही गयी हैं। इनमें पाँच का गुणा करने पर सत्तर हो जाती हैं। ढाई द्वीप (जम्बूद्वीप, धातकीखण्ड और आधा पुष्करद्वीप) में पाँच मन्दराचल हैं जो विजयार्ध पर्वत और विद्याधरकुलों से सुन्दर हैं।

घत्ता—क्षेत्रों के अन्तर्गत वक्षार गिरीन्द्र, कुण्डल, रुचकगिरि और इष्वाकारगिरि हैं जो अपने विविध शिखरों पर श्री को धारण करते हैं ॥ ६ ॥

७

जम्बूद्वीप के बाहर, अपने स्वभाव को नहीं छोड़नेवाले बहुत-से अन्तर्द्वीप हैं। पहला सुसंकीर्ण, दूसरा रुन्द। वे शराव (सकोरे) के आकार के हैं, और उत्तम, मध्यम तथा जघन्य इन तीन भेदों से युक्त कर्मभूमि के भाव से (अपनी चेष्टा से फलादि का आहार ग्रहण करनेवाले) विभक्त हैं। लवण समुद्र में अड़तालीस और कालोद समुद्र में भी उतने ही देश हैं। सैकड़ों योजनों के मान से विशिष्ट, कुभोगभूमियों के आवास वहाँ हैं। रति में अनुरक्त वहाँ दो-दो स्त्री-पुरुष हैं, भद्रस्वभाव और सुन्दर शरीरवाले, आभरण और वस्त्रों से रहित, काले-सफेद-हरे और लाल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रम्य-सौम्य और नित्यप्रसन्न, जिनका जिननाथ ने शास्त्रों में कथन किया है।

घत्ता—यहाँ कोई एकऊरुधारी है तो कोई पूँछ और सींग धारण करनेवाला है। ये पूर्व दिशा में शोभित होते हैं। उत्तर दिशा में निर्भाष (बिना भाषा के) मनुष्य होते हैं॥७॥

८

शष्कुलि के समान कानवाले, कानों के आच्छादनवाले, लम्बे कानवाले और खरगोश के कानवाले खोटे मनुष्य भी रहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

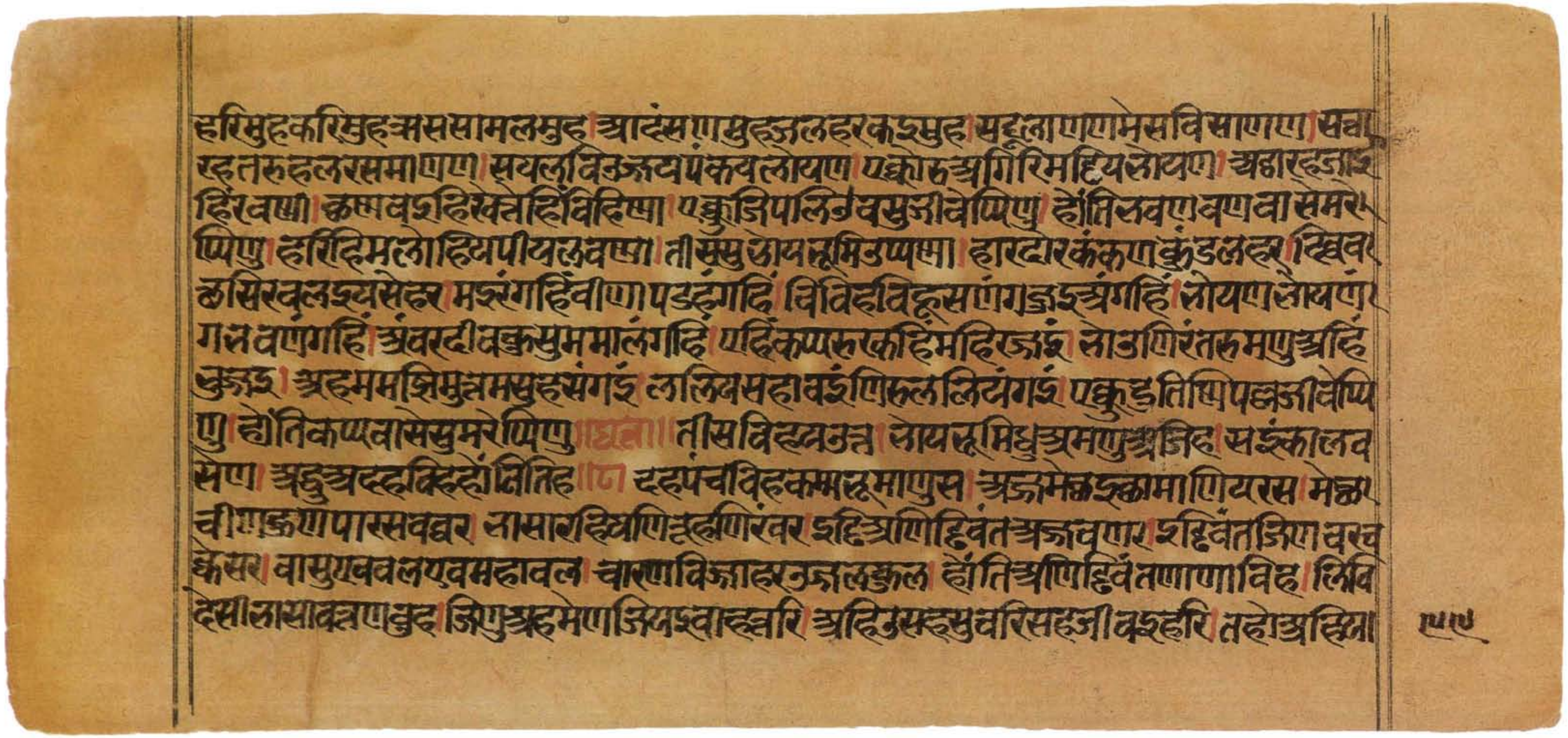

अश्वमुख, गजमुख और मत्स्य के समान श्याम मुख, दर्पणमुख, मेघमुख, वानरमुख, सिंहमुख, मेषमुख और वृषमुखवाले, जो सत्रह प्रकार के फलों का आहार ग्रहण करते हैं। सभी अत्यन्त सीधे और कमल के समान आँखोंवाले, एक पैरवाले पहाड़ी मिट्टी का भोजन करते हैं। अठारह जातियोंवाले ये छियानवे क्षेत्रों में विभक्त हैं। ये एक ही पल्य जीवित रहते हैं और मरकर भवनवासी और व्यन्तर होते हैं। हरित, सफेद, लाल और पीले रंगों के रत्नों से विजड़ित तीस भोगभूमियाँ फैली हुई हैं जिनमें हार, डोर, कंकण और कुण्डलों को धारण करनेवाले दिव्य वस्त्रधारी सिर पर शेखर बाँधे हुए देव रहते हैं। मद्यांग, वीणा-पटहांग (तूर्यांग), विविध भूषणांग, ज्योतिरंग, भाजनांग, भोजनांग, भवनांग, अम्बरद्वीपांग (प्रदीपांग) और कुसुममाल्यांग, कल्पवृक्षों से जिसकी धरती शोभित है। और जहाँ मनुष्य निरन्तर भोग करते रहते हैं। अधम, मध्यम और उत्तम सुखों से युक्त सुन्दर स्वभाववाले और सुन्दर अंगोंवाले होते हैं। एक-दो या तीन पल्य जीवित रहकर और च्युत होकर कल्पवासी देवों में उत्पन्न होते हैं।

घत्ता—जिसप्रकार मनुष्यों की तीस भोगभूमियाँ निश्चित रूप से बतायी गयी हैं, उसी प्रकार उससे आधी अर्थात् पन्द्रह कर्मभूमियाँ होती हैं ॥ ८ ॥

९

पन्द्रह कर्मभूमियों के मनुष्य आर्य और म्लेच्छ होते हैं, जो अपनी इच्छा के अनुसार रस का भोग करते हैं। म्लेच्छ चीन, हूण, पारस, बर्बर, भाषारहित, निर्वस्त्र और विवेकहीन। आर्य लोग ऋद्धिसहित और ऋद्धिरहित होते हैं। इनमें ऋद्धि से परिपूर्ण जिनेश्वर और चक्रवर्ती होते हैं। वासुदेव, बलदेव, महाबल, चारण और विद्याधर आर्यकुल में होते हैं। ऋद्धियों से रहित मनुष्य नाना प्रकार के होते हैं जो लिपि और देशी भाषा बोलनेवाले और पण्डित होते हैं। जिन (अर्थात् अन्तिम तीर्थंकर महावीर) बहत्तर वर्ष जीवित रहे हैं, हजार से अधिक वर्ष नारायण जीते हैं, उससे अधिकतर

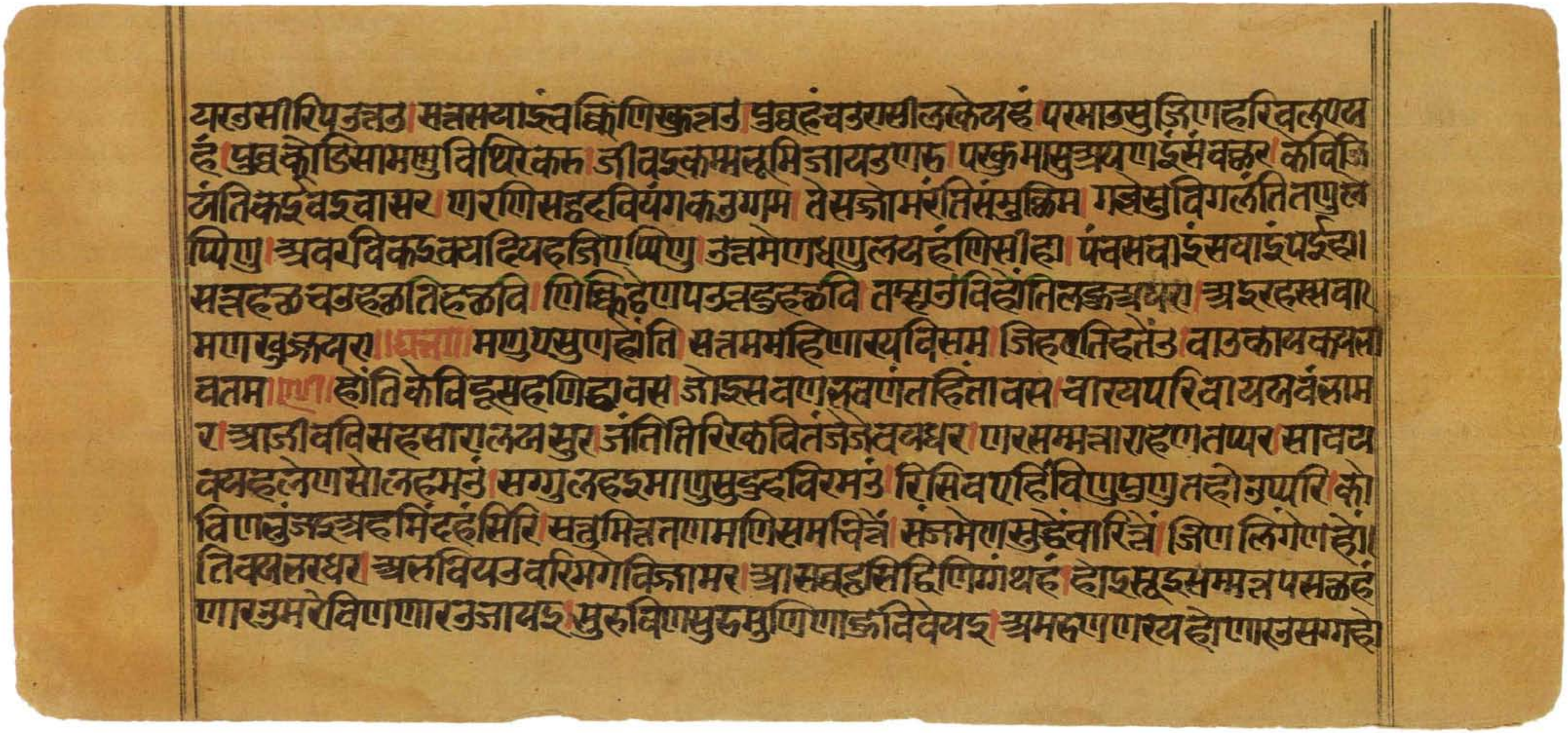

वर्ष बलभद्र का जीना कहा गया है। उससे सात सौ वर्ष अधिक चक्रवर्ती निश्चित रूप से जीते हैं। जिन, नारायण और बलभद्र की परम आयु चौरासी लाख वर्ष पूर्व होती है। कर्मभूमि में उत्पन्न हुआ स्थिरकर मनुष्य एक पूर्वकोटि सामान्य जीवन जीता है। कोई मनुष्य पक्ष, मास, छह माह और एक वर्ष तथा कुछ दिन जीते हैं। शरीर के पसीने आदि से उत्पन्न होनेवाले जो सम्मूर्च्छन जीव होते हैं, वे जल्दी मर जाते हैं। कुछ शरीर लेकर गर्भ में गल जाते हैं, दूसरे कुछ दिन जीवित रहकर मर जाते हैं। दूसरे नृसिंह (नरश्रेष्ठ) सवा पाँच सौ धनुष ऊँचे होते हैं, निकृष्ट रूप से सात हाथ, चार हाथ, तीन हाथ और दो हाथ भी होते हैं। इससे भी छोटे कद के मनुष्य होते हैं, अत्यन्त लघु, बौने और कुबड़े।

घत्ता—जिसप्रकार सातवें नरक के विषम जीव सीधे मनुष्ययोनि में उत्पन्न नहीं होते। उसी प्रकार वायुकायिक और अग्निकायिक जीव भी सीधे मनुष्ययोनि में जन्म नहीं लेते॥ ९॥

१०

कोई तापस असह्य निष्ठा के कारण ज्योतिष और व्यन्तर भवनों में उत्पन्न होते हैं। आहिंडक, परिव्राजक, ब्रह्म स्वर्ग में देव होते हैं और आजीवक सहस्त्रार स्वर्ग में उत्पन्न होते हैं। व्रत धारण करनेवाले तिर्यंच भी वहीं जाते हैं। सम्यक्त्व की आराधना करने में तत्पर मनुष्य श्रावक व्रतों के फल से सोलहवाँ स्वर्ग प्राप्त करता है और दु:ख से विश्राम पाता है, लेकिन उसके ऊपर मुनिव्रतों के बिना कोई भी अहमिन्द्र की श्री का भोग नहीं कर सकता। अपने चित्त में शत्रु और मित्र के प्रति समता भाव धारण करनेवाले संयम और शुद्ध चारित्र्य और जिनलिंग से, व्रतों का भार धारण करनेवाले अभव्य उपरिम ग्रैवेयक में देव होते हैं। सम्यक्त्व से प्रशस्त निर्ग्रन्थों की उत्पत्ति सर्वार्थ-सिद्धि तक होती है। नारकीय मरकर नरक में नहीं जाता। और देव मरकर देव नहीं बनता, यह विवेचन मुनिनाथ करते हैं। जीव नरक से सीधे स्वर्ग नहीं जाता और स्वर्ग से नरक नहीं जाता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

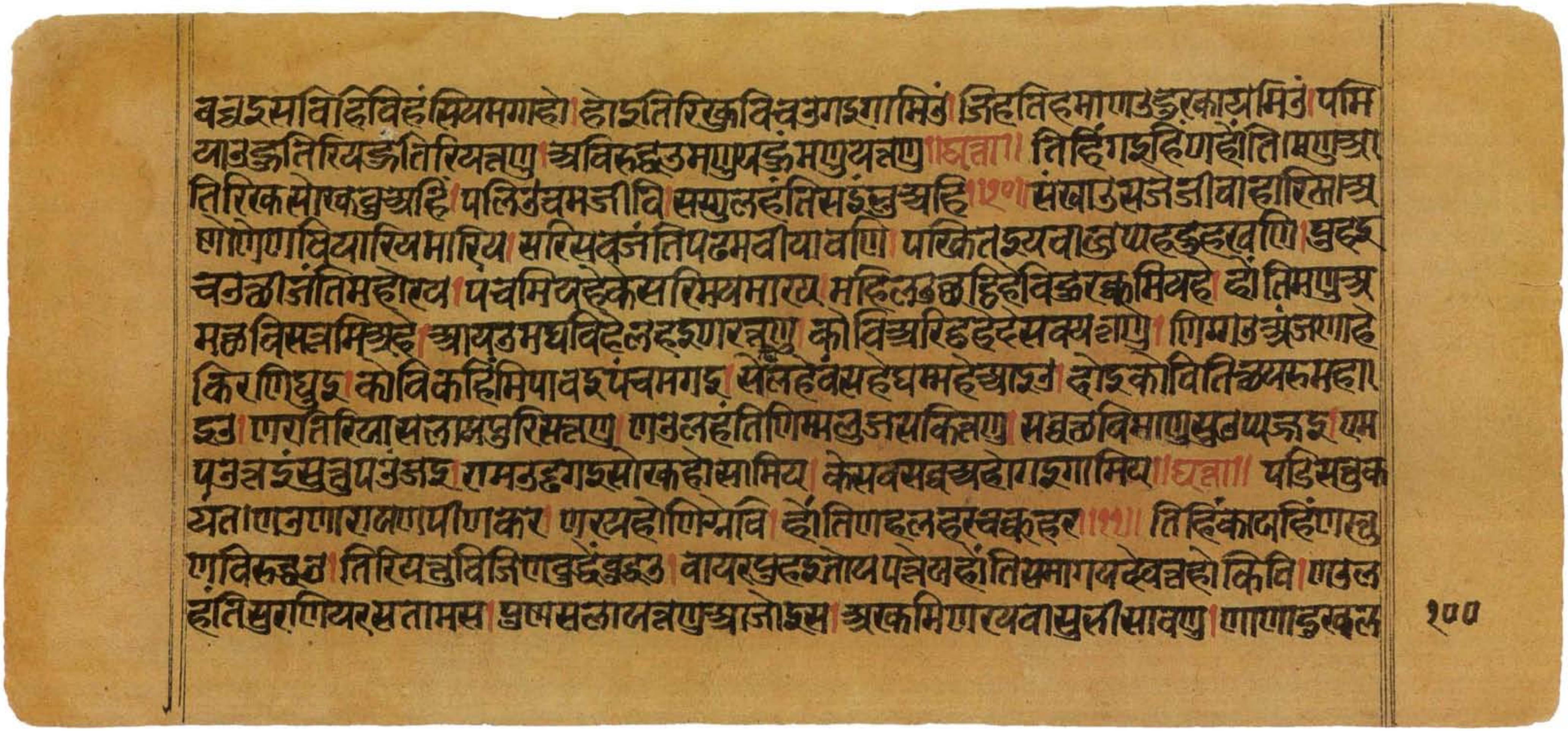

क्योंकि वे अपनी विधि से मार्ग (पुण्य और पाप का मार्ग) नष्ट करनेवाले होते हैं। तिर्यंच चारों गतियों में जानेवाला होता है, जिस प्रकार तिर्यंच, उसी प्रकार दु:ख से पीड़ित मनुष्य चारों गतियों में जा सकता है। सीमित आयुवाले तिर्यंचों का तिर्यंचत्व और मनुष्यों का मनुष्यत्व अविरुद्ध है, अर्थात् एक दूसरे की योनि में जा सकते हैं।

घत्ता—सुख से च्युत मनुष्य और तिर्यंच, अपने द्वारा उपार्जित पुण्य से तीन गतियों (नरक, तिर्यंच और मनुष्य) में उत्पन्न नहीं होते, एक पल्य के बराबर जीकर स्वर्ग प्राप्त करते हैं॥ १०॥

११

जो संख्यात आयु का जीवन धारण करनेवाले हैं और एक दूसरे को विदारित करते और मारते हैं ऐसे सरीसर्प पहले और दूसरे नरक में जाते हैं। पक्षी दु:ख की खान तीसरे बालुकाप्रभ नरक में जाते हैं। महोरग चौथे नरक में जाते हैं। पशुओं को मारनेवाले सिंह पाँचवें नरक में जाते हैं। महिलाएँ दु:ख से व्याप्त छठे नरक तक जाती हैं। मच्छ और मनुष्य सातवें नरक तक जाते हैं। कोई छठे नरक से आकर मनुष्यत्व प्राप्त करता है। कोई पाँचवें नरक से आकर देशव्रत धारण करता है। कोई चौथे नरक से आकर निर्वेद को धारण करता है। कोई मोक्ष गति प्राप्त करता है। तीसरे-दूसरे और पहले नरक से आया हुआ कोई जीव, महान् तीर्थंकर होता है। मनुष्य पर्याय में स्त्रियाँ शलाकापुरुषत्व को प्राप्त नहीं करतीं इसलिए वे निर्मल यश और कीर्ति को भी प्राप्त नहीं करतीं। मनुष्य सब कहीं उत्पन्न हो सकता है। सूत्र रूप में यह बात कही जाती है। जितने राम (बलभद्र) हैं वे ऊर्ध्व गतिवाले और सुख के स्वामी हैं, जितने केशव (नारायण) हैं, वे नरकगामी हैं।

घत्ता—जो यम की तरह प्रतिशत्रु हैं, (प्रति नारायण) और स्थूलकर नारायण नहीं हैं, वे नरक से निकलकर हलधर और चक्रधर नहीं होते॥ ११॥

१२

तीन कायिक (अर्थात् पृथ्वी, जल और वनस्पतिकायिक) जीवों के लिए मनुष्यत्व विरुद्ध नहीं है, और तिर्यंचत्व भी नहीं, ऐसा जिनबुद्ध ने ज्ञात किया है। पृथ्वी, जल और प्रत्येक वनस्पति में देव च्युत होकर जन्म ले सकते हैं। ज्योतिषपर्यन्त तामसिक देवसमूह शलाकापुरुषत्व को प्राप्त नहीं कर सकता। अब मैं भीषण नरकावास का कथन करता हूँ जो भीषण और नाना प्रकार के लाखों दु:खों को दिखानेवाला है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

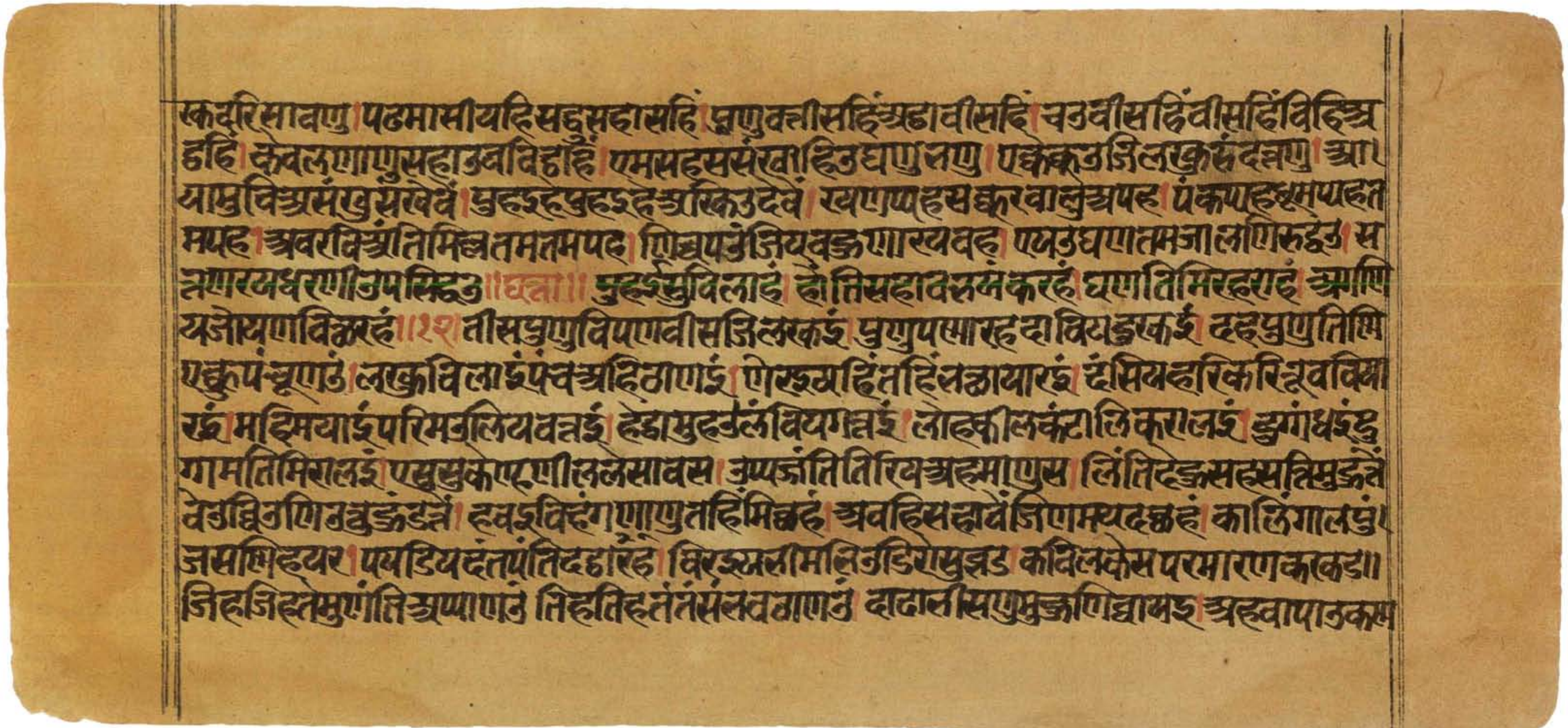

इनमें प्रथम नरक का विस्तार एक लाख अस्सी हजार योजन है। फिर क्रमश: बत्तीस हजार, अट्ठाईस हजार, चौबीस हजार, बीस हजार, सोलह हजार और आठ हजार योजन विस्तार है जो केवल ज्ञानियों द्वारा उपदिष्ट है। इस प्रकार खर और पंकभाग (रत्नप्रभा नरक) का हजार अधिक एक लाख योजन पिण्डत्व (विस्तार) है। प्रत्येक भूमिका असंख्य आयाम है, जिसे देव ने संक्षेप में कहा है। रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तम:प्रभा और भी अन्तिम तमतम:प्रभा है जिसमें नित्य नारकीयों का वध किया जाता है। इस प्रकार ये अत्यन्त सघन तमजाल से निबद्ध सात नरकभूमियाँ प्रसिद्ध हैं।

घत्ता—इन भूमियों के बिल स्वभाव से भयंकर होते हैं, सघन अन्धकारों के घर अगणित योजनों के विस्तारवाले होते हैं ॥ १२ ॥

१३

इनके क्रमश:, तीस और फिर पच्चीस लाख और फिर दु:ख देनेवाले पन्द्रह लाख, फिर दस लाख, तीन लाख, फिर पाँच कम एक लाख अर्थात् निन्यानबे हजार नौ सौ पंचानवे, और अन्तिम नरक के पाँच बिल होते हैं। इनमें नारकीय जीव भस्त्राकार के होते हैं, सिंहों और हाथियों के रूपों का विदारण दिखाते हुए। जहाँ राजाओं के मुख सब ओर से बन्द हैं, अधोमुख लटके हुए शरीरवाले। लोहे की कीलों और काँटों से भयंकर। दुर्गन्धित और दुर्गम अन्धकार से भरे हुए। इनमें अत्यन्त कृष्ण लेश्या के कारण मनुष्य या तिर्यंच उत्पन्न होते हैं। सहसा एक मुहूर्त में शरीर धारण करते हैं, जो हुंडक आकार वैक्रियक शरीर होता है। वहाँ मिथ्यादृष्टियों का विभंगज्ञान होता है और जो जिनमत में दक्ष सम्यग्दृष्टि होते हैं उन्हें सम्यक् अवधिज्ञान स्वभाव से होता है। काले अंगारों के समूह के समान काले, दाँतों को प्रकट करनेवाले और ओठों को चबानेवाले, अपनी भौंहे भयंकर करनेवाले और क्रोध से उद्धत, कपिल बालोंवाले और दूसरों को मारने में कठोर। जिस प्रकार वे अपने बारे में सोचते हैं, उस प्रकार वह स्थान उनके लिए उत्पन्न हो जाता है। दाढ़ों से भयंकर अपना मुँह फाड़ते हैं, अथवा पाप किसका क्या घात नहीं करता!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—अधोमुख होकर वे शीघ्र असिपत्र पर गिर पड़ते हैं। स्वयं को मारते हैं, दूसरे को मारते हैं और युद्ध में दूसरे के द्वारा मारे जाते हैं॥ १३॥

१४

उनका कोई मध्यस्थ या उपकार करनेवाला मित्र नहीं होता। जो-जो दिखाई देता है वह दुश्मन होता है। वहाँ के क्षेत्रस्वभाव को क्या कहा जाय? जो श्रुतकेवली के समान है उसके द्वारा भी वर्णन नहीं किया जा सकता। सुई के समान तृण हैं और चलने में कठिन धरती। उष्ण, शीत और प्रचण्ड पवन। जिसे हाथ में लेने मात्र से जीव मर जाता है, वैतरणी नदी का ऐसा वह जल विष है, उसे क्या पिया जा सकता है! जहाँ वृक्षों के पत्ते हाथ, पैर, मुख और शरीर को खण्डित कर देनेवाले तलवार के समान हैं। जिनके फल वज्र की मूठ की तरह कठोर हैं। शरीर को चूर-चूर कर देनेवाले वे ऊपर गिरते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

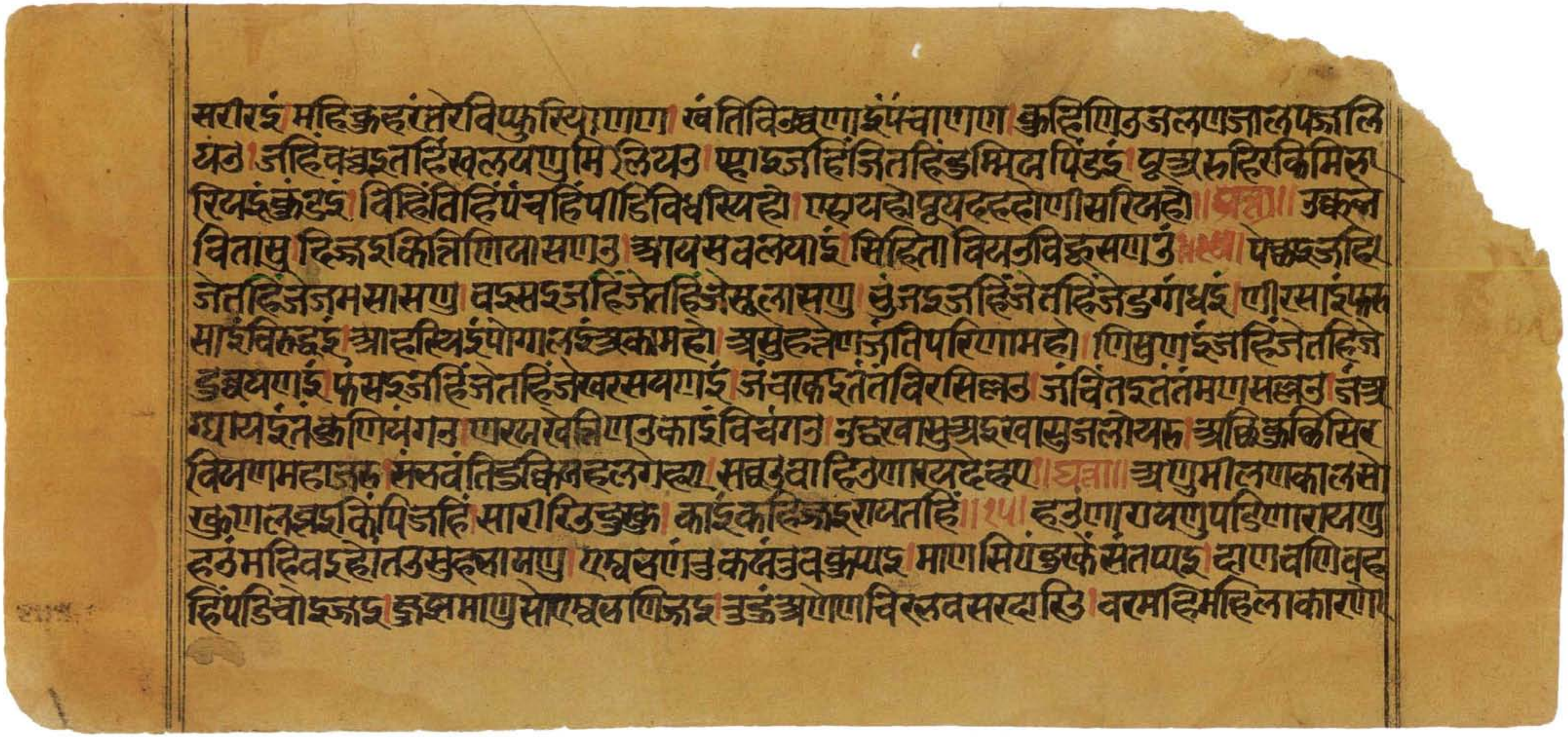

पहाड़ों की गुफाओं में से तमतमाते हुए मुखवाले विक्रिया से निर्मित सिंह खा जाते हैं। जहाँ के मार्ग अग्निज्वालाओं से प्रज्वलित हैं, वह जहाँ जाता है, उसे दुष्ट मिलता है। जहाँ वह स्नान करता है वहीं पीब, रुधिर और कीड़ों से भरे हुए कुण्ड और पीड़ित शरीर मिलते हैं। दो-तीन-पाँच व्यक्तियों द्वारा पीड़ित कर वह पकड़ लिया जाता है और पीब के सरोवर से नहाकर (उसे)—

घत्ता—काटकर चमड़े का परिधान दिया जाता है। तपाये हुए लोहे के कड़े उसके आभूषण होते हैं॥ १४॥

१५

वह जहाँ देखता है वहीं यम-शासन है। जहाँ बैठता है वहीं पर शूलासन है। जहाँ भोजन करता है वहीं दुर्गन्ध है। नीरस कठोर और विरुद्ध। जो चखता है वह विरस लगता है, जो सोचता है वही मन की चिन्ता बन जाता है। जो सूँघता है वह बुरी गन्धवाला होता है, नारकीय क्षेत्र में कुछ अच्छा नहीं होता। ऊर्ध्व श्वास, अति खाँसना, जलोदर, आँखों, पेट और सिर का दर्द तथा महाज्वर ये सब होते हैं। पापों के फलों के घर नारकीय की देह में सब-कुछ व्याधि है।

घत्ता—पलक मारने के समय तक का भी सुख जहाँ नहीं मिलता, हे राजन्, वहाँ शरीर के दुःख का क्या वर्णन किया जाए?॥ १५॥

१६

'मैं नारायण हूँ, मैं प्रतिनारायण हूँ, मैं सुखभाजन राजा हूँ' ऐसा कहते हुए उस पर यम क्रुद्ध हो जाता है; और वह मानसिक दुःख से सन्तप्त हो उठता है। दानव समूह के द्वारा वह प्रेरित किया जाता है और युद्ध करते हुए; उससे उस प्रकार कहा जाता है, 'तुम्हारा इसके द्वारा सिर फाड़ा गया था; श्रेष्ठ महिला और धरती के लिए मारे गये थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

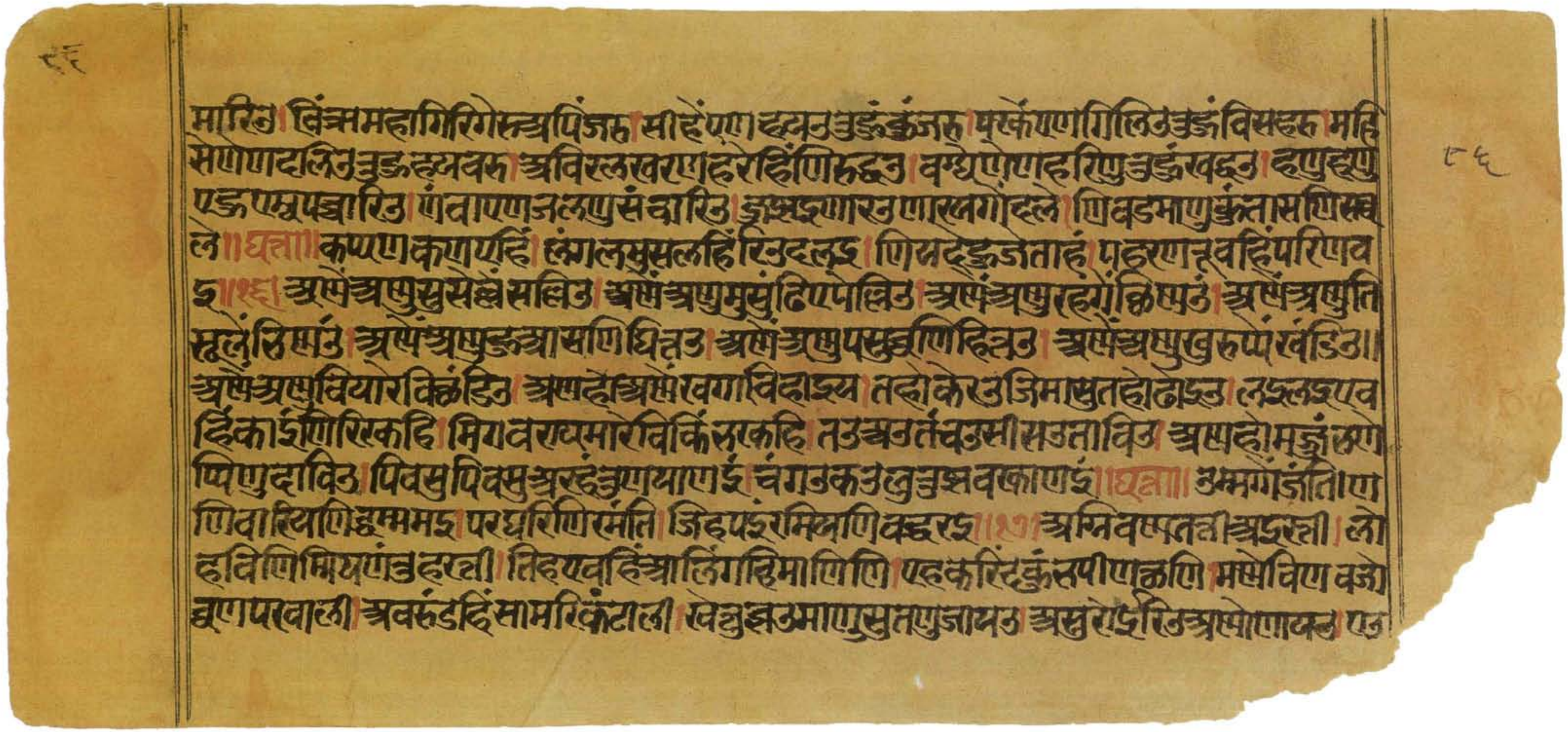

इस सिंह के द्वारा विंध्य महागिरि के गैरिक (गेरु) से पिंजर तुम गज मारे गये थे। तुम विषधर इस गरुड़ के द्वारा निगले गये थे। तुम अश्ववर इस भैंसे के द्वारा विदीर्ण हुए थे। बाघ के द्वारा उसके अविरल नखों से तुम हरिण खाये गये थे। इस प्रकार तुम इसको मारो-मारो, वह इस प्रकार बोला, मानो वायु ने ज्वाला को प्रज्वलित कर दिया हो। नारकियों की लड़ाई में नारकीय लड़ते हैं और भालों के आसन तथा सब्बलों पर गिरते हैं।

घत्ता—काटनेवाली शलाकाओं, हलों और मूसलों से वह शत्रु को नष्ट करता है। उसका शरीर उन अस्त्रों के रूपों में परिणमित हो जाता है॥ १६॥

१७

एक के द्वारा दूसरा सेल से पीड़ित किया गया, एक के द्वारा दूसरा मुंसुडि (शस्त्र विशेष) से ठेला गया। एक के द्वारा दूसरा त्रिशूल से छेद दिया गया। एक के द्वारा दूसरा चक्र से काट दिया गया। एक के द्वारा दूसरा आग में फेंक दिया गया, एक के द्वारा दूसरा पशु के समान काट दिया गया। एक के द्वारा दूसरा खुरपे से खण्डित कर दिया गया, एक के द्वारा दूसरा विदीर्ण करके छोड़ दिया गया है। एक के द्वारा दूसरा तलवार से विभक्त कर दिया गया और उसी का मांस उसे खाने को दिया गया कि लो-लो, इस समय क्या देखते हो, तुमने बेचारे पशुओं को मारकर क्यों खाया था? तप्त लोहा, ताँबा और सीसा तपाया गया, और एक दूसरे के लिए मद्य के रूप में दिखाया कि पियो-पियो, तू अरहन्त को नहीं जानता, तुम्हारा कौल सुन्दर व्याख्यान देता है।

घत्ता—धर्महीन मति खोटे मार्ग पर जाते हुए तुमने अपना निवारण नहीं किया। और जिससे तुमने रति बाँधकर दूसरे की स्त्री का रमण किया है॥ १७॥

१८

अग्निवर्णा, संतप्त अत्यन्त लाल लोहे से बनी हुई मानो यह तुम में अनुरक्त हो। गजराज के कुम्भ के समान पीन स्तनोंवाली मानिनी का आलिंगन करो, नवयौवना पर-बाला मानकर इस कटीली शाल्मली का आलिंगन करो। क्षेत्र से उत्पन्न मानसिक शरीर से उत्पन्न असुरों से प्रेरित और अन्य के द्वारा उन्नमित

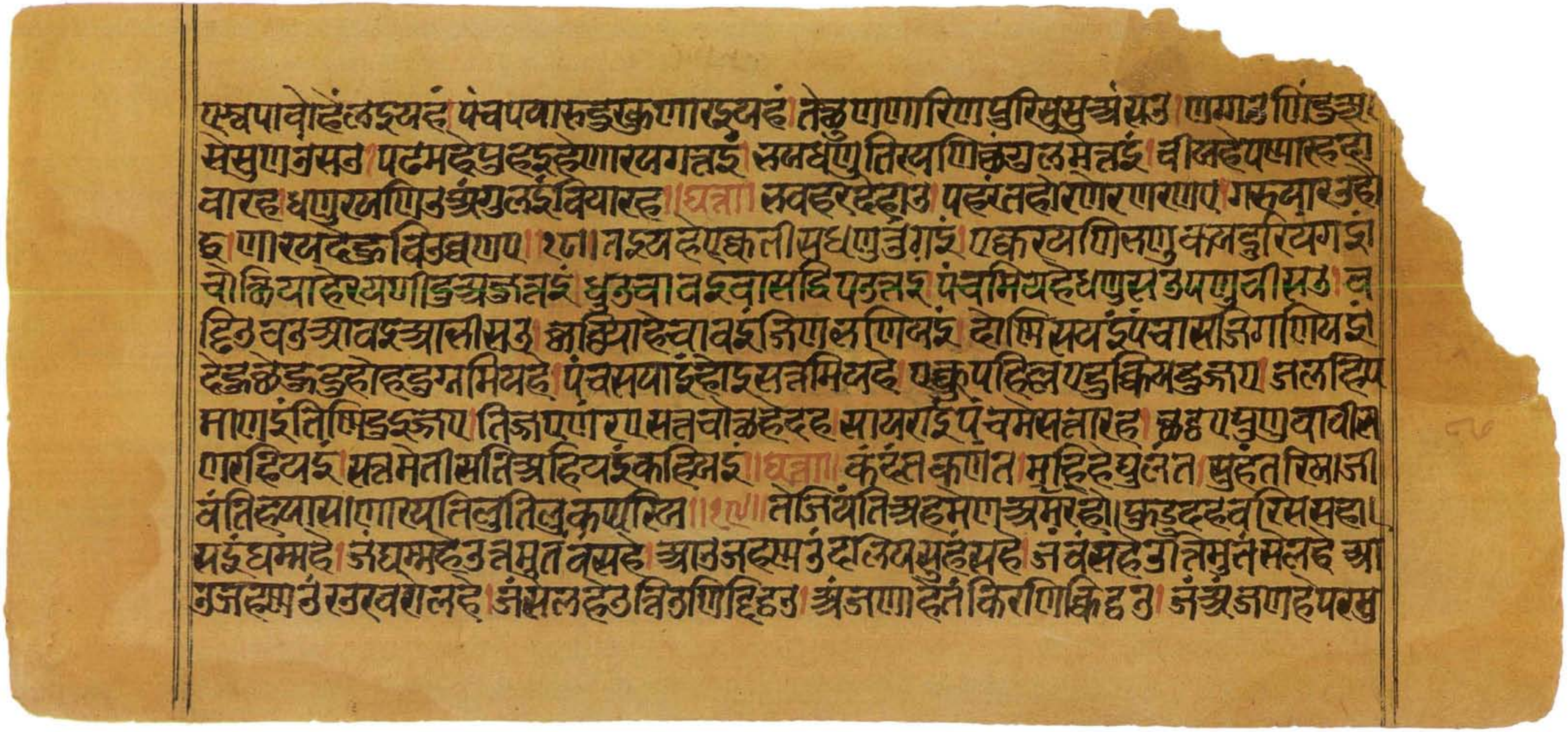

पाँच प्रकार का दुख पापों के समूह से गृहीत नारकीयों को होता है। वहाँ न नारी है, न पुरुष है, और न सुन्दर शरीरावयव है, नंगा, निन्दनीय और अशेष नपुंसक। प्रथम भूमि में नारकीय का शरीर सात धनुष तीन हाथ और छह अंगुल का होता है। दूसरी भूमि में पन्द्रह धनुष छह हाथ और बारह अंगुल होता है।

घत्ता—अरतिजनक युद्ध में जन्म को धारण करनेवाली देह से प्रहार करते हुए विक्रिया के द्वारा नारकीय का शरीर भारी हो जाता है॥ १८॥

१९

तीसरी भूमि में इकतीस धनुष एक हाथ और दो अंगुल ऊँचा शरीर होता है। चौथी भूमि में बासठ धनुष और दो हाथ ऊँचा। पाँचवीं भूमि में एक सौ पच्चीस धनुष ऊँचा शरीर होता है। इस प्रकार शरीर बढ़ता जाता है और आपत्ति भी भीषण होती जाती है। छठी भूमि में जिनेन्द्र भगवान् के द्वारा कथित दो सौ पचास धनुष ऊँचाई होती है। दुःख के समूह से दुर्गम सातवीं भूमि में शरीर की ऊँचाई पाँच सौ धनुष होती है। दुष्कृतों से अजेय पहले नरक में एक सागर प्रमाण आयु होती है, दूसरे में तीन सागर, तीसरे नरक में सात सागर, चौथे नरक में दस सागर, पाँचवें नरक में सत्तरह सागर, छठे नरक में बाईस सागर प्रमाण रहते हैं और सातवें नरक में तैंतीस सागर प्रमाण आयु होती है।

घत्ता—आक्रन्दन करते, चिल्लाते हुए सुख से रहित नारकीय जीव हताश होकर जीते हैं, और तिल-तिल एक-दूसरे को काट देते हैं॥ १९॥

२०

वे नारकीय उस असुन्दर धर्मा धरती में जघन्य आयु से दस हजार वर्ष जीवित रहते हैं। जो धर्माभूमि की उत्तम आयु है वह सुखों के आशयों को नष्ट करनेवाली वंशाभूमि की जघन्य आयु है। जो वंशाभूमि की उत्तम आयु है वह रौरव ध्वनियों से युक्त मेघा की जघन्य आयु है। जो मेघा की उत्तम आयु बतायी गयी है वह अंजना की निकृष्ट आयु है। जो अंजना की उत्तम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

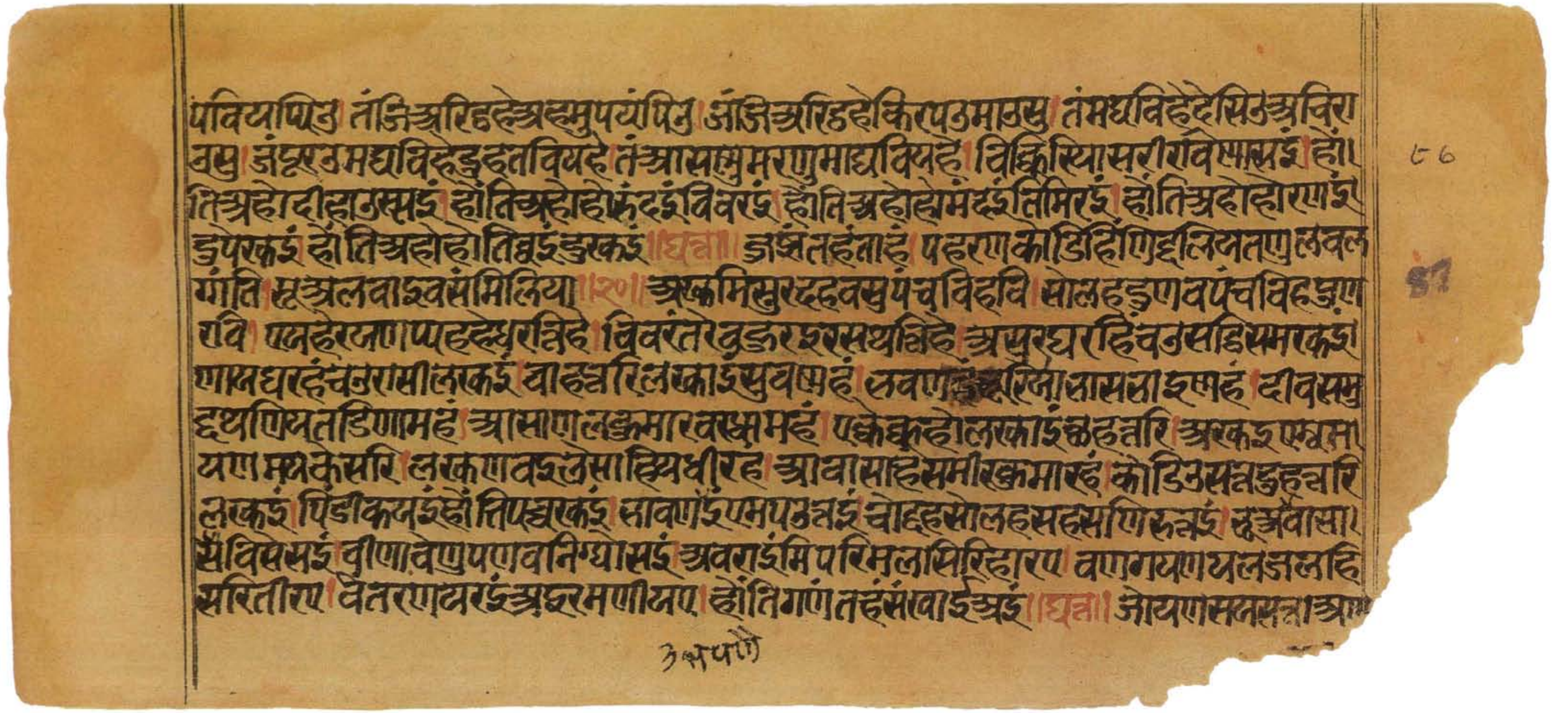

आयु कही गयी है वह अरिष्टा की जघन्य आयु कही गयी है। जो आयु अरिष्टा की उत्तम है वही मघवा की अचिरायु (जघन्य) कही गयी है। दुःख से सन्तप्त मघवा की जो पूरी (उत्कृष्ट) आयु है, वह माघवी नरकभूमि में आसन्नमरण (जघन्य आयु) है। इस प्रकार (ऊपर से) नीचे-नीचे विक्रिया शरीर की रचना और दीर्घ आयुवाले बिल होते जाते हैं। नीचे-नीचे बड़े-बड़े बिल होते हैं, नीचे-नीचे सघन अन्धकार हो जाता है। नीचे-नीचे दुर्दर्शनीय युद्ध होता है। नीचे-नीचे तीव्र दुःख होता है।

घत्ता—युद्ध करते हुए उनके करोड़ों शस्त्रों से दलित शरीरकण मिले हुए पारद कणों की तरह प्रतीत होते हैं॥ २०॥

२१

मैं दस, आठ, पाँच, सोलह, दो, नौ और फिर पाँच प्रकार के देवों का वर्णन करता हूँ। प्रचुर रतिरस की स्थितिवाली इस रत्नप्रभा भूमि के विवर के भीतर (खर और पंक भाग में) अवधिज्ञानियों या सर्वज्ञों के लिए प्रत्यक्ष असुरवरों के चौसठ लाख एवं नागकुमारों के चौरासी लाख भवन हैं। सुपर्णकुमारों के प्रचुर आभा से व्याप्त बहत्तर लाख, द्वीपकुमारों, उदधिकुमारों, स्तनितकुमारों, विद्युत्कुमारों, दिक्कुमारों और अग्निकुमारों के नौ लाख साठ हजार भवन हैं। इस प्रकार भवनवासियों के कुल मिलाकर सात करोड़ बहत्तर लाख प्रत्यक्ष भवन हैं। भवनवासी देवों का इस प्रकार कथन किया गया है। भूतों और राक्षसों, वीणा, वेणु और प्रणव के निर्घोषों से युक्त सोलह और चौदह हजार आवास विशेष होते हैं। दूसरे विशिष्ट तथा विमल लक्ष्मी को धारण करनेवाले देव वन, आकाशतल, समुद्र और सरोवरों के किनारों पर निवास करते हैं। व्यन्तरों के सुन्दर निवास गिनती करने पर संख्यातीत हैं।

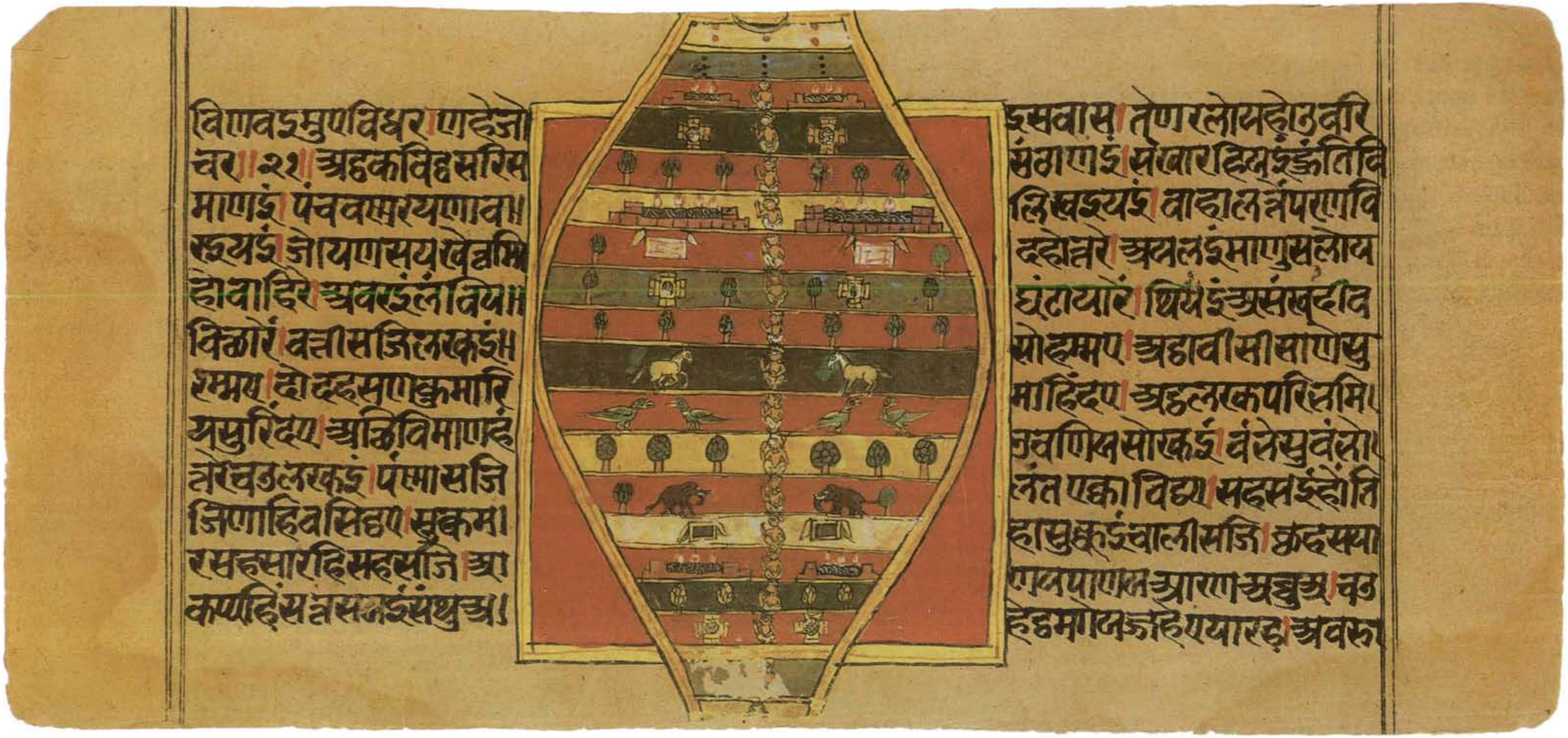

घत्ता—आकाश में सात सौ नब्बे योजन की ऊँचाई पर ज्योतिषदेवों का वास है। ये मनुष्यलोक के ऊपर विचरण करते हैं॥ २१॥

२२

इनके आधे कवीट (कपित्थ) के समान आकारवाले संख्याहीन विमान होते हैं जो पाँच प्रकार की रंगावलियों से विजड़ित और प्रचुरता से निर्मित एक सौ दस योजन के पटल क्षेत्र में, मनुष्यलोक के बाहर अतल लोक में स्थित हैं। दूसरे विमान (वैमानिक देवों के विमान) लम्बे घण्टों के आकारवाले तथा असंख्य द्वीपों में विस्तारवाले जिनचैत्य हैं। सौधर्म स्वर्ग में बत्तीस लाख, सुन्दर ईशान स्वर्ग में अट्ठाईस लाख, सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्ग में (जिनमें इन्द्र परिभ्रमण करते हैं) क्रमशः बारह लाख और आठ लाख, ब्रह्म और ब्रह्मोत्तर स्वर्ग में सुखपूर्ण चार लाख, लान्तव और कापिष्ठ स्वर्ग में पचास हजार जिन-चैत्यघर हैं। शुक्र और महाशुक्र में चालीस हजार, शतार और सहस्रार में छह हजार होते हैं; आनत और प्राणत स्वर्गों तथा आरण-अच्युत में सात सौ कहे जाते हैं।[1] अधोग्रैवेयक में एक सौ ग्यारह,

१. ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर ४ लाख (क्रमशः १९००० + १०४०००), लौकान्तिक और कापिष्ठ (क्रमशः २५०४२ + २४५८ = ५०००) शुक्र-महाशुक्र (२००२० + १९९८०) शतार और सहस्रार (३०१९ + २९८१) आणत-प्राणत आरण और अच्युत (पहले दो ४४० + अन्तिम दो २६० = ७००)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

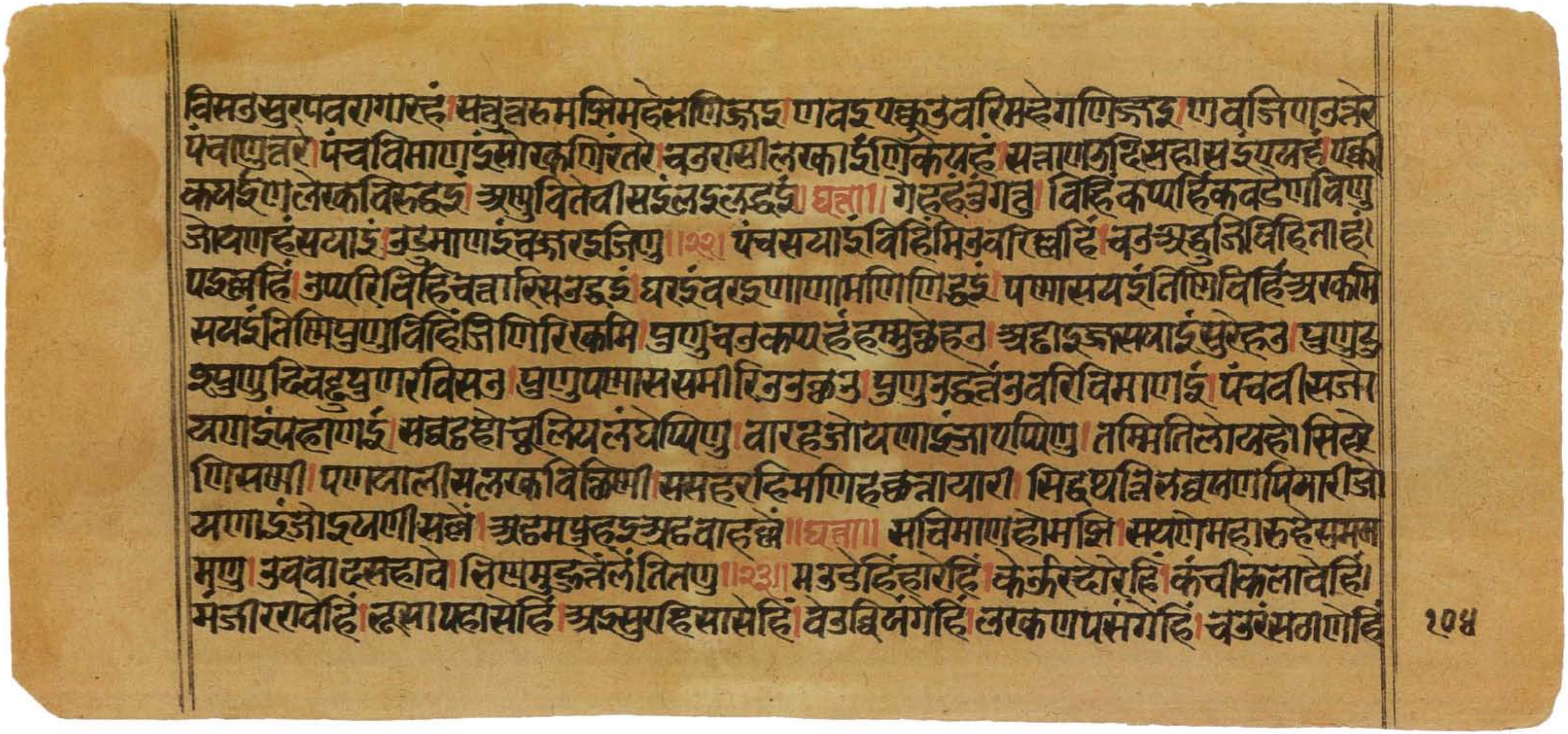

मध्य ग्रैवेयक में एक सौ सात, ऊर्ध्व ग्रैवेयक में इक्यानवे, नौ अनुदिशों में नौ और सुख से निरन्तर भरपूर पाँच अनुत्तरों में पाँच (चैत्यगृह हैं)। इस प्रकार चौरासी लाख सत्तानवे हजार तेईस निकेतन हैं। इनको एकीकृत करने में विरोध नहीं है।

घत्ता—बिना किसी प्रकार के कपट के जिन भगवान् कहते हैं कि दोनों स्वर्गों की ऊँचाई सात सौ योजन है॥ २२॥

२३

उससे ऊपर के कल्पों में घरों की ऊँचाई पाँच सौ योजन, उससे ऊपर के दो कल्पों में साढ़े चार सौ योजन, उससे ऊपर के दो कल्पों में चार सौ योजन, उससे ऊपर के दो कल्पों में साढ़े तीन सौ योजन, उससे ऊपर के दो कल्पों में तीन सौ योजन और उससे ऊपर के चार कल्पों में अढ़ाई सौ योजन देवगृहों की ऊँचाई है। उससे ऊपर तीन अधोग्रैवेयकों में दो सौ योजन, उससे ऊपर तीन मध्यग्रैवेयकों में डेढ़ सौ योजन, उससे ऊपर तीन उपरिम ग्रैवेयकों में सौ योजन, ऊपर-ऊपर अनुदिशों में पचास योजन और अनुत्तरों में पच्चीस योजन ऊँचाई है। सर्वार्थसिद्धि की चूलिका को लाँघकर बारह योजन जाने पर वहाँ त्रिलोक के ऊपर शिखर पर स्थित पैंतालीस लाख योजन विस्तीर्ण चन्द्रमा और हिम के समान छत्राकार भव्यजनों के लिए प्यारी सिद्धों की भूमि अर्थों से प्रचुर आठवीं पृथ्वी है।

घत्ता—अपने विमान के भीतर अत्यन्त मूल्यवान् शयन में एक समय से लेकर उपपाद स्वभाव से जो भिन्न मुहूर्त में शरीर ग्रहण कर लेता है॥ २३॥

२४

उसमें मुकुटों, हारों, केयूरों, दोरों, कांचीकलापों, मंजीर शब्दों, वेशभूषा के प्रसाधनों, अतिसुरभित साँसों, वैक्रेयक शरीरों, लक्षण प्रसंगों, समचतुरस्र संस्थानों,

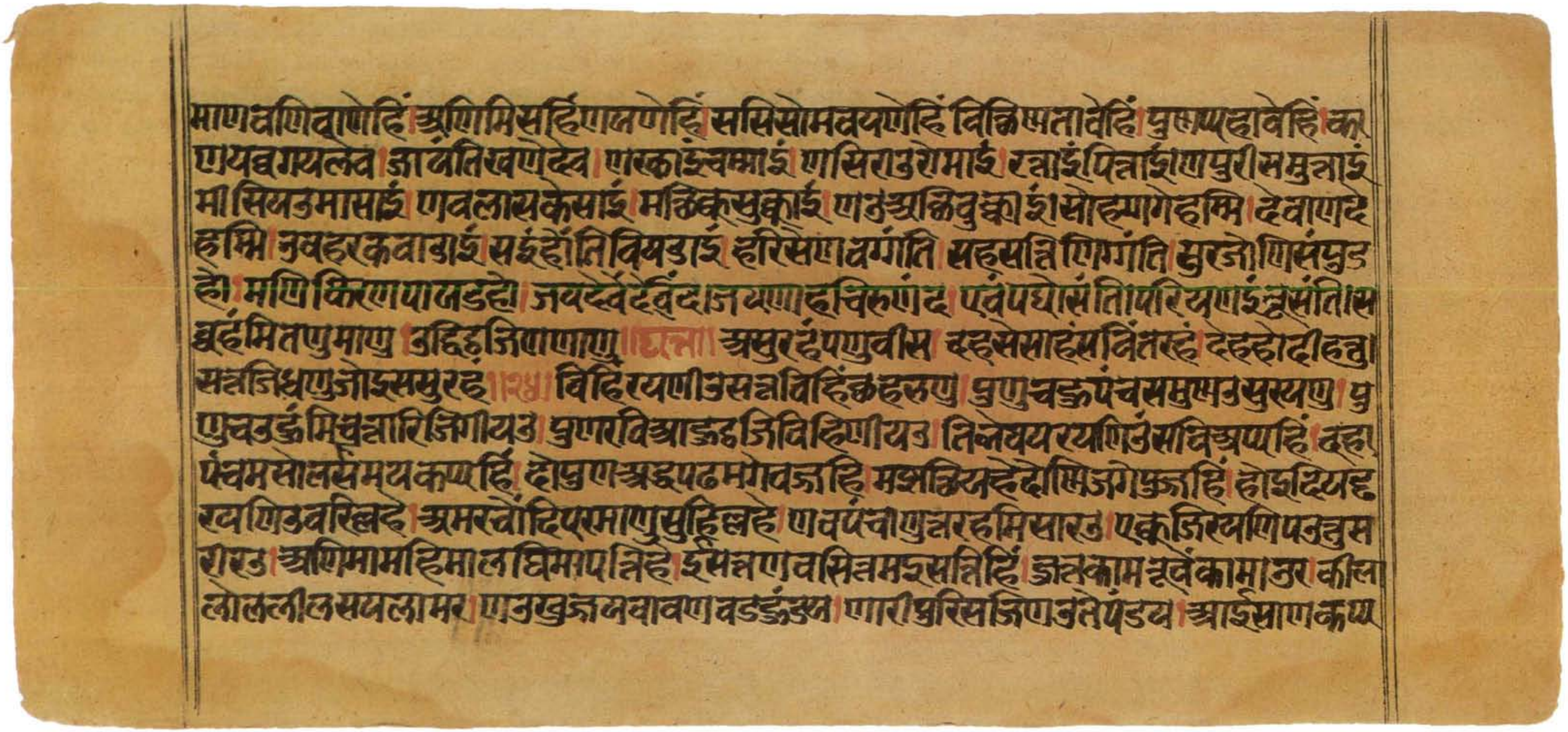

मानवी आकारों, अपलक नेत्रों, चन्द्रमा के समान सौम्य मुखों और सन्तापशून्य पुण्य-प्रभावों से स्वर्ण के समान विकार से रहित देव एक क्षण में उत्पन्न होते हैं। सौधर्म स्वर्ग के देवों के शरीर में नखचर्म और सिर में रोम नहीं होते। न रक्त न पित्त, और न पुरीष और न मूत। न मसें, न मांस और न दाढ़ी केश होते हैं। न उनके मस्तिष्क में शुष्कता होती है और न कलेजा (यकृत) होता है। उनके वासगृहों के किवाड़ स्वयं खुल जाते हैं। (इस प्रकार) मणिकिरणों से आलोकित देवयोनि-विमानों से देव अचानक निकल पड़ते हैं और हर्ष से उछलने लगते हैं, "हे देव-देवेन्द्र, आपकी जय, हे स्वामी, आपकी जय। आप प्रसन्न हों" यह घोषणा करते हैं और परिजनों को सन्तुष्ट करते हैं। इन सबके शरीरों का मान जिनज्ञान के द्वारा निर्दिष्ट है।

घत्ता—भवनवासियों में असुरकुमारों की ऊँचाई पच्चीस धनुष और व्यन्तरों सहित शेष देवों के शरीर की ऊँचाई दस धनुष तथा ज्योतिष देवों के शरीर की सात धनुष है॥ २४॥

(वैमानिक देवों में) सौधर्म और ईशान इन दोनों स्वर्गों में शरीर की ऊँचाई सात हाथ, सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्ग में छह हाथ, फिर ब्रह्म और ब्रह्मोत्तर, लान्तव और कापिष्ठ स्वर्गों में पाँच हाथ ऊँचे देवजन होते हैं। शुक्र, महाशुक्र, शतार और सहस्रार स्वर्ग में चार हाथ, और फिर आनत और प्राणत स्वर्ग में साढ़े तीन हाथ होते हैं; आरण और अच्युत इन दो स्वर्गों में तीन हाथ। प्रथम ग्रैवेयक (अधोग्रैवेयक) के विमानों में (३) ढाई हाथ; विश्वपूज्य मध्यम ग्रैवेयक के विमानों में दो हाथ। ऊपर के अर्थात् अन्तिम ग्रैवेयक के तीन सुखद विमानों और (अनुदिशों) के देवसमूह का परिमाण डेढ़ हाथ, विजयादिक पाँच अनुत्तर विमानों का श्रेष्ठ शरीर एक हाथ-प्रमाण कहा गया है। अणिमा, महिमा, लघिमादि शक्तियाँ ईशित्व, वशित्व और गतिशील के द्वारा, युक्त कामरूप से आतुर समस्त देव क्रीड़ा से चंचल लीलावाले होते हैं। वे कुबड़े, वामन, न्यग्रोध संस्थानवाले और हुंड (विकल-अवयववाले) नारी-पुरुष और नपुंसक नहीं होते। च्युति (च्यवन) पर्यन्त देवांगनाओं के साथ गमन आदि ऐशान स्वर्ग तक सम्भव है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

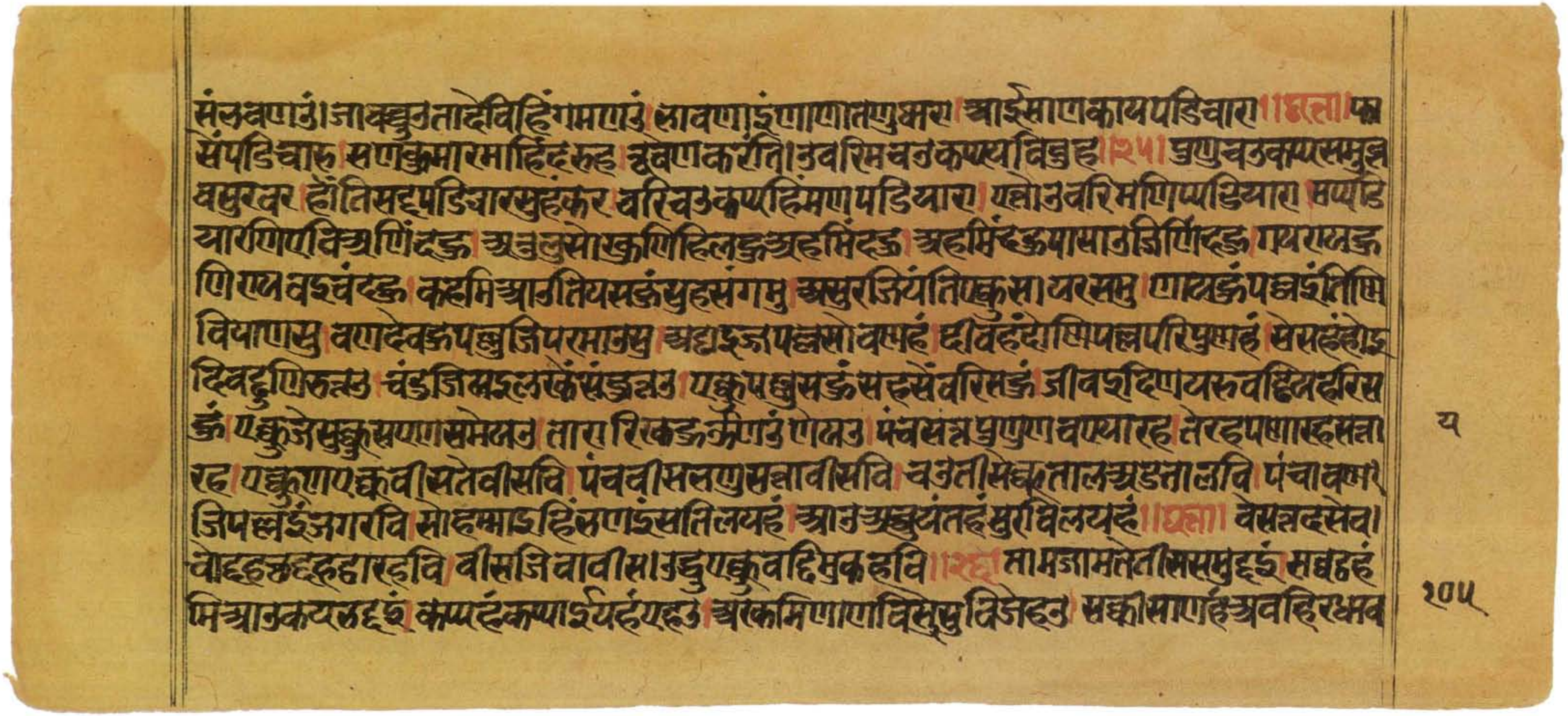

नाना शरीर धारण करनेवाले भवनवासी देवों से लेकर ईशान स्वर्ग तक शरीर से कामसेवन किया जाता है।

घत्ता—सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्ग में स्पर्श से कामसेवन होता है; उससे ऊपर के चार स्वर्गों (पाँचवें से आठवें स्वर्ग तक) में देव-रूप देखकर काम की शान्ति करते हैं ॥ २५ ॥

२६

फिर चार स्वर्गों (नौवें से लेकर बारहवें तक) में शुभ शब्द-कामसेवन होता है। उसके बाद चार स्वर्गों (१६वें स्वर्ग तक) मन के विचारों से कामसेवन होता है। यहाँ से ऊपर के देव काम से रहित होते हैं। काम को नियन्त्रित कर अनिन्द्य निखिल अहमिन्द्रों को अतुल सुख होता है। अहमिन्द्रों की तुलना में गत राग और त्रिभुवनपतियों और वन्दनीय जिनेन्द्र का सुख होता है। देवों को सुख का संगम करानेवाली आयु का कथन करता हूँ। असुर एक सागर के बराबर जीते हैं। नागकुमारों की तीन पल्य आयु जानो। व्यन्तर देवों की उत्कृष्ट आयु एक पल्य ही है। सुपर्णकुमारों की आयु ढाई पल्य होती है। पुण्य से परिपूर्ण द्वीपकुमारों की दो पल्य होती है। और शेष की डेढ़ पल्य होती है। चन्द्रमा एक लाख वर्ष अधिक एक पल्य जीवित रहता है। सूर्य हर्ष को बढ़ानेवाले एक हजार वर्ष अधिक एक पल्य जीवित रहता है। सौ वर्ष अधिक एक पल्य शुक्र जीता है, ताराओं और नक्षत्रों की कुछ कम एक पल्य (अर्थात् नक्षत्रों की आधा पल्य, तारों की चौथाई पल्य) जानो। फिर सौधर्मादि प्रत्येक स्वर्ग में क्रम से सौधर्म में पाँच पल्य, ऐशान में सात पल्य, सानत्कुमार में नौ पल्य, माहेन्द्र स्वर्ग में ग्यारह पल्य, ब्रह्म स्वर्ग में तेरह पल्य, ब्रह्मोत्तर में पन्द्रह पल्य, लान्तव में सत्रह पल्य, कापिष्ठ में उन्नीस पल्य, शुक्र में इक्कीस पल्य, महाशुक्र में तेईस पल्य, शतार में पच्चीस पल्य, सहस्रार में सत्ताईस पल्य, आनत में चौंतीस पल्य, प्राणत में इकतालीस पल्य, आरण में अड़तालीस पल्य और अच्युत में पचपन पल्य आयु होती है। इस प्रकार विश्वसूर्य जिन भगवान् सौधर्म आदि स्वर्गों की वनिताओं और अच्युतादि स्वर्गों की देवांगनाओं की आयु का कथन करते हैं।

घत्ता—दो, सात, दस, चौदह, अठारह, बीस, बाईस उससे ऊपर एक-एक सागर अधिक ॥ २६ ॥

२७

वहाँ तक कि जहाँ तक, सर्वार्थसिद्धि में कल्याण करनेवाले देवों की तैंतीस सागर आयु है। कल्प और कल्पादिक स्वर्ग के देवों के जैसा ज्ञान विशेष है, वैसा कथन करता हूँ। सौधर्म और ईशान स्वर्ग के देवों के अवधिज्ञान की गति वहाँ तक है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

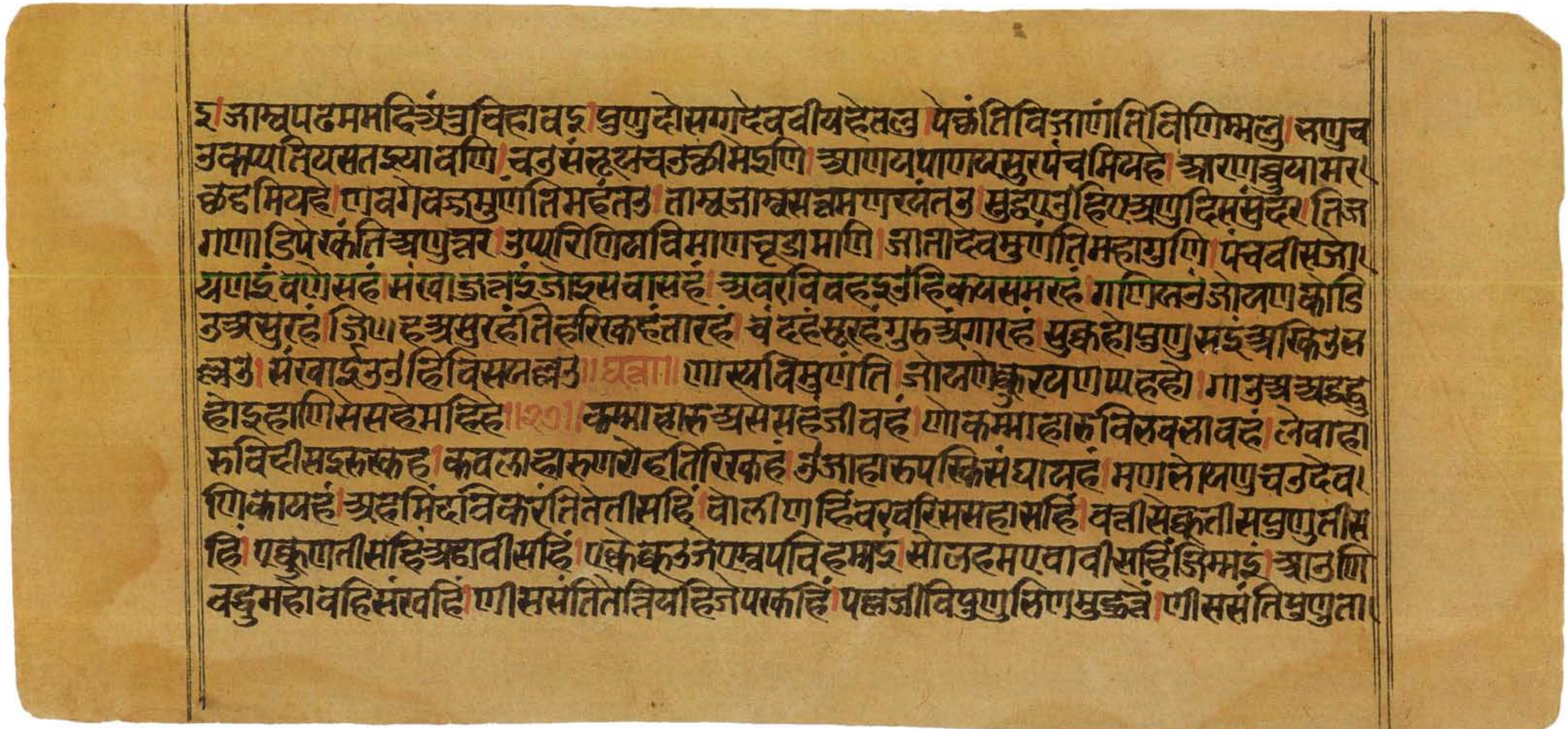

कि जहाँ तक पहली भूमि धर्मा का अन्त है। फिर दो स्वर्ग के देव (सानतकुमार और माहेन्द्र) दूसरी नरकभूमि तक निर्मल देखते हैं और जानते हैं, फिर चार स्वर्ग के देव (ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव और कापिष्ठ), तीसरी भूमि फिर चार स्वर्गों से सम्भूत (शुक्र, महाशुक्र, सतार, सहस्रार) देव चौथी भूमि, आणत-प्राणत स्वर्ग के देव पाँचवीं धरती को, आरण-अच्युत स्वर्ग के देव छठी भूमि तक जानते हैं। नौ ग्रैवेयक के महान् देव वहाँ तक जानते हैं जहाँ तक साँतवाँ नरक है। अनुदिश के सुन्दर देव त्रिजग की नाड़ी को अपने शुद्ध अवधिज्ञान से जान लेते हैं। महागुणवान् अनुत्तरदेव ऊपर, अपने विमान के शिखर तक जानते हैं। व्यन्तर देवों का अवधिज्ञान पच्चीस योजन तक जानता है। ज्योतिषदेवों का अवधिज्ञान संख्यायुक्त होता है; और भी युद्ध करनेवाले असुरदेवों का अवधिज्ञान एक करोड़ योजन होता है। जिस प्रकार असुरों का उसी प्रकार नक्षत्रों और तारों, चन्द्रों, सूर्यों, गुरु और मंगल ग्रहों का। शुक्र का भी मैंने संख्याधिक विशेष अवधि बताया।

घत्ता—नारकीय भी रत्नप्रभा भूमि में एक योजन तक देख लेते हैं, शेष भूमि में आधी-आधी गव्यूति की हानि होती है ॥ २७ ॥

२८

कर्म का आहार सब जीवों के लिए होता है, शरीरयुक्त जीवों का नोकर्म का आहार (छह पर्याप्तियों और तीन शरीरों के योग्य पुद्गलों का ग्रहण) होता है। लेपाहार वृक्षों में भी दिखाई देता है। मनुष्यों और तिर्यंचों का कवलाहार होता है। औद्य आहार पक्षी-समूह का होता है। चारों देव-निकायों का मानसिक आहार होता है। अहमिन्द्र भी क्रमशः तैंतीस हजार उत्तम वर्ष बीत जाने पर मानसिक आहार ग्रहण करते हैं। फिर बत्तीस, इकतीस, तीस, उनतीस, अट्ठाईस; इस प्रकार एक-एक घटाते हुए सोलहवें स्वर्ग में देव बाईस हजार वर्षों में आहार (मानसिक) ग्रहण करते हैं। जितने सागरों की संख्या में उसकी आयु होती है, उतने ही पक्षों में वे निश्वास लेते हैं। पल्यजीवी देव एक भिन्न मुहूर्त में अथवा भिन्न मुहूर्तों में तीन मुहूर्तों से ऊपर और नौ मुहूर्तों के नीचे कभी निश्वास लेता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

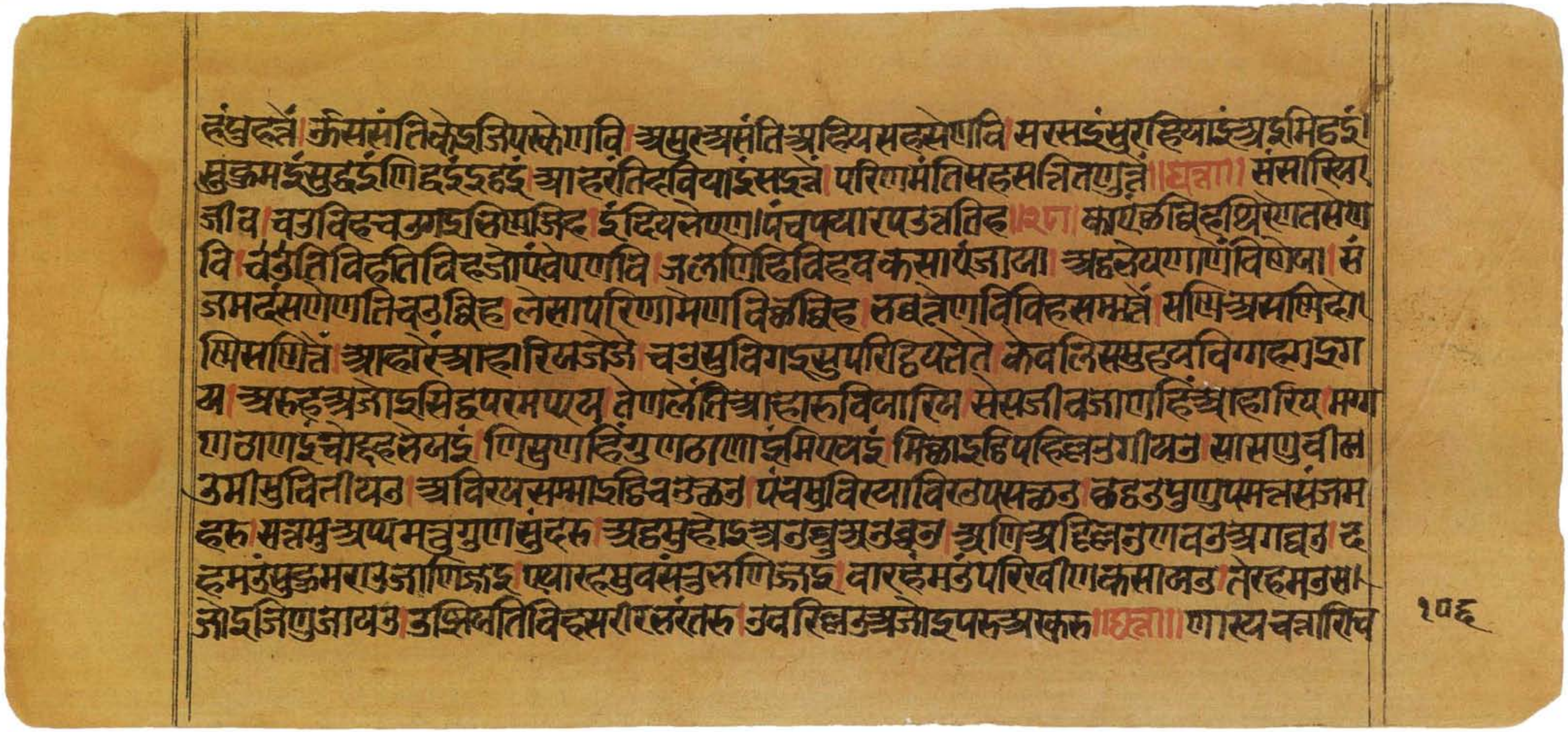

कोई एक पक्ष में श्वास लेते हैं। असुर एक हजार वर्ष में भोजन करते हैं। सरस-सुरभित अत्यन्त मीठा सूक्ष्म शुद्ध स्निग्ध इष्ट जो द्रव्य चित्त खाये जाते हैं वे शीघ्र ही शरीररूप में परिणत हो जाते हैं।

घत्ता—संसारी जीव जिस प्रकार चार गतियों से भिन्न होने के कारण चार प्रकार के होते हैं, उसी प्रकार इन्द्रिय भेद से पाँच प्रकार के होते हैं॥ २८॥

२९

जीव चपल और स्थिर स्वभाववाले योग से छह प्रकार का, तीन प्रकार के योगों और वेदों (पुल्लिंग आदि) से तीन प्रकार का और कषायों से चार प्रकार का होता है। ज्ञान से उसके आठ भेद हैं। संयम और दर्शन से तीन और चार भेद हैं, लेश्याओं के परिणाम से भी छह प्रकार हैं। भव्यत्व और सम्यक्त्व के विचार से दो-दो भेद हैं (भव्य-अभव्य, सम्यक्दृष्टि-असम्यग्दृष्टि), संज्ञा से संज्ञी और असंज्ञी दो भेद हैं। जो-जो शरीर से आहार ग्रहण करनेवाले हैं, वे चारों गतियों में प्रतिष्ठित हैं। समुद्घात[१] करनेवाले और विग्रहगति में जानेवाले अर्हन्त, अयोगी सिद्ध, परमात्मा होते हैं, वे आहार ग्रहण नहीं करते। शेष जीवों को आहारक समझना चाहिए। मार्गणा और गुणस्थानों से भी जीव के चौदह भेद होते हैं। अब इन गुणस्थानों को सुनिए—इनमें मिथ्यादृष्टि पहला गाया जाता है। सासन—सासादन दूसरा, मिश्र तीसरा, अविरत (असंयत) सम्यक्दृष्टि चौथा, देश-संयत पाँचवाँ। प्रमत्त संयम धारण करनेवाला छठा। गुणों से सुन्दर अप्रमत्त सातवाँ, अपूर्व-अपूर्वकरण आठवाँ, गर्वरहित अनिवृत्तिकरण नौवाँ, सूक्ष्म-साम्पराय को दसवाँ समझना चाहिए, उपशान्त कषाय ग्यारहवाँ कहा जाता है। परिक्षीणकषाय बारहवाँ कहा जाता है, तेरहवाँ सयोगकेवली कहा जाता है, तीन प्रकार के शरीरभार से रहित (औदारिक, तैजस और कार्मण) सबसे ऊपर अयोगकेवली परम सिद्ध होता है।

१. दण्ड-कपाट-प्रतर-पूरण के द्वारा जब केवली त्रैलोक्य का मरण करते हैं उस समय वह अनाहारक होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

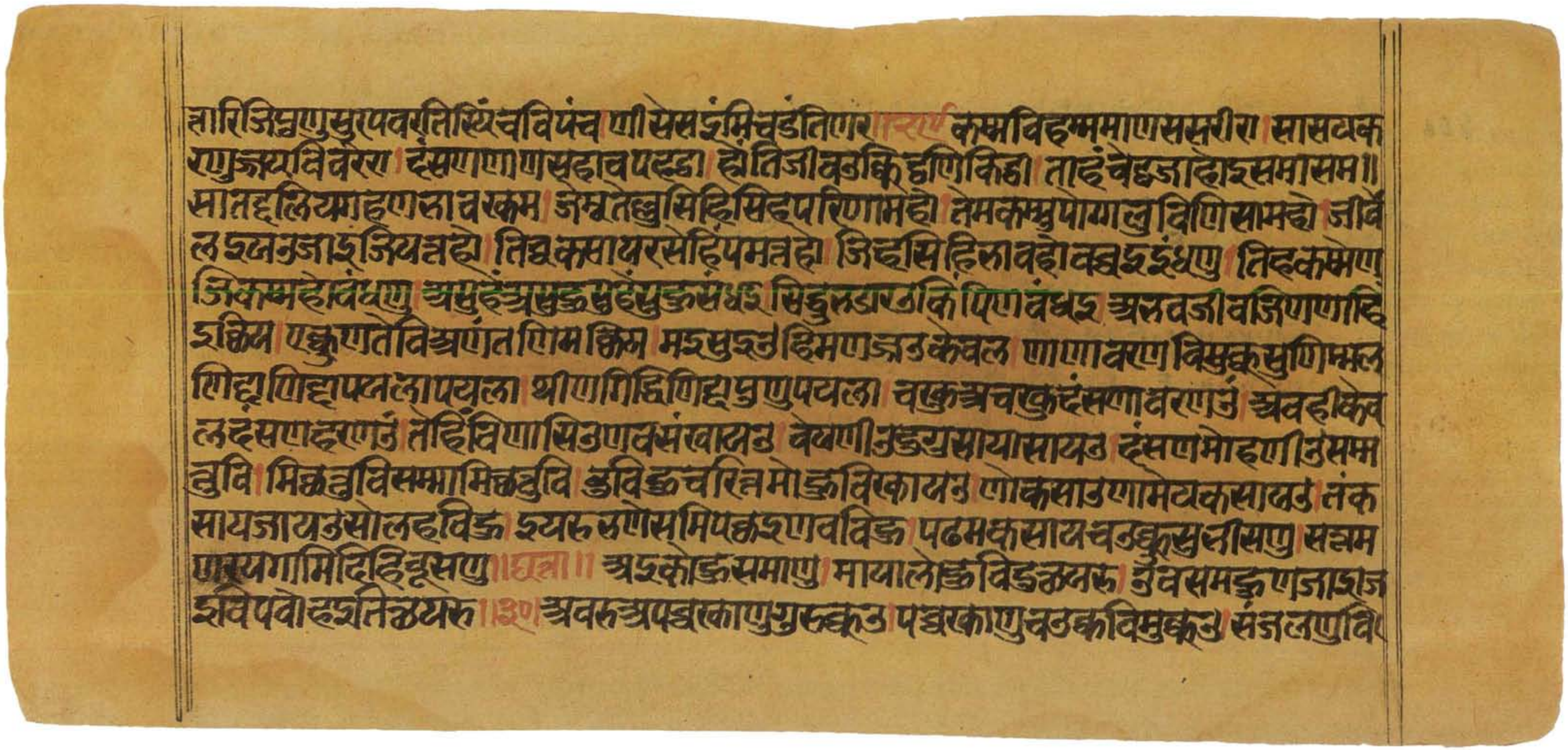

घत्ता—नारकियों के चार गुणस्थान होते हैं और देवों के भी चार होते हैं। तिर्यंच पाँचवें गुणस्थानों तक चढ़ सकते हैं। मनुष्य समस्त गुणस्थानों में चढ़ सकता है ॥ २९ ॥

३०

कर्मों से आहत होकर संसारी जीव, शाश्वत परिणामों में उद्यत होते हुए भी विपरीत आचरणवाला हो जाता है। इस प्रकार दर्शन, ज्ञान और स्वभाव से युक्त जीव उत्कृष्ट और निकृष्ट दो प्रकार के होते हैं। और इससे जो उनकी सम-विषम चेष्टाएँ होती हैं जीव उस प्रकार के भावों को ग्रहण करने में सक्षम होता है। (तरह-तरह के कर्मपरिणामों को ग्रहण करता है)। जिस प्रकार तेल, आग और उसकी ज्वालाओं के अनुसार परिणमन करता है, उसी प्रकार कर्म पुद्गल भी भावों के अनुरूप परिणमन करते हैं। इस प्रकार तीव्र कषायों के रसों से प्रमत्त जीवन को यह जीव धारण करता है, जिस प्रकार ईंधन अग्निभाव को प्राप्त होता है, उसी प्रकार कर्म से कर्म का बन्धन होता है। अशुभकर्म से अशुभकर्म का और शुभकर्म से शुभकर्म की सन्धि होती है परन्तु सिद्ध भट्टारक कुछ भी बन्धन नहीं करते। जिननाथ के द्वारा अभव्यजीव भी चाहे (सम्बोधित किये) जाते हैं, वे एक नहीं, अनेक देखे जाते हैं। मति-श्रुति-अवधि-मन:पर्यय तथा केवलज्ञानावरण। केवलज्ञान जो अत्यन्त निष्कल और नाना आवरणों से मुक्त है। निद्रा, अनिद्रा, प्रचला, अप्रचला, स्त्यानगृद्धि, निद्राप्रचला, चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण और केवलदर्शनावरण उन्होंने नष्ट कर दिया। सातावेदनीय और असातावेदनीय के दुर्ग को, दर्शनमोहनीय (सम्यक्त्व प्रकृति, मिथ्यात्व प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृति), चारित्र मोहनीय दो प्रकार का विख्यात है (कषाय वेदनीय और नोकषाय वेदनीय) उसमें कषाय वेदनीय सोलह प्रकार का है, और दूसरे का, जो नौ प्रकार का है, मैं बाद में वर्णन करूँगा। पहला जो कषाय चक्र (अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ) है, वह भाग्य के लिए दूषण और सातवें नरक का कारण है।

घत्ता—अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया और लोभ भी अत्यन्त दुस्तर होता है। वह उपशम को प्राप्त नहीं होता, भले ही तीर्थंकर उसको सम्बोधित करें ॥ ३० ॥

३१

दूसरा अप्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभकषाय भी भारी होती है। प्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया और लोभ भी चार हैं। उन्होंने जलते हुए-से संज्वलन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

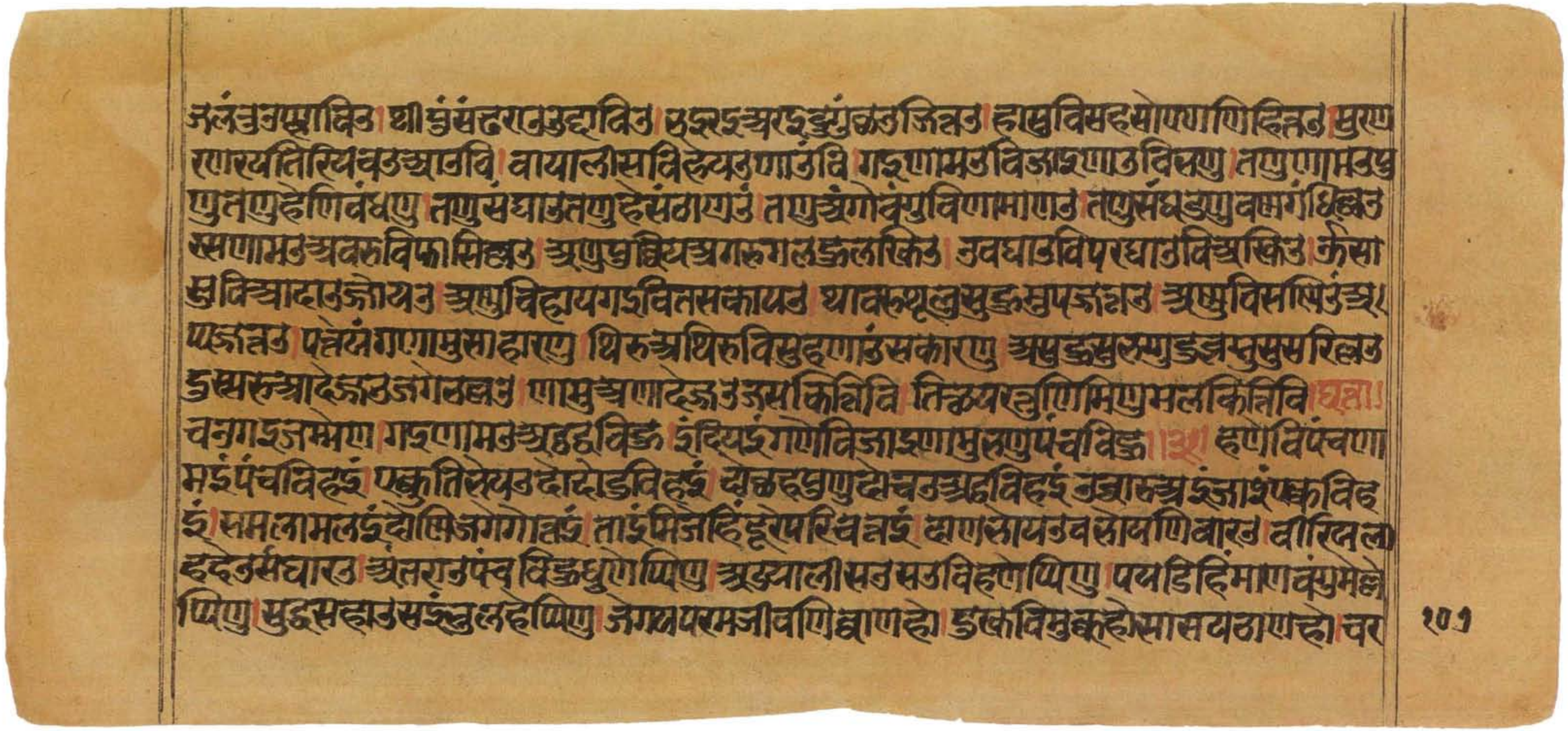

क्रोध, मान, माया और लोभ को भी शान्त कर दिया। स्त्रीत्व और पुरुषत्व के भाव को उड़ा दिया। भय, रति, अरति, जुगुप्सा को उन्होंने जीत लिया। शोक के साथ हास्य को भी समाप्त कर दिया। सुर, नर, नरक और तिर्यंच इन चार आयु कर्मों को भी और बयालीस भेदवाले नाम कर्म को भी, गतिनाम और जातिनाम, शरीरनाम और शरीरसंरचना, शरीर संस्थान, शरीर अंगोपांग और निर्माण, शरीर का बन्धन, वर्ण-गन्ध, रस-स्पर्श, आनुपूर्वी, अगुरुलघु भी लक्षित किया। उपघात और परघात भी कहा गया। उच्छ्वास, आतप, उद्योत, विहायोगति, त्रसकाय, स्थावर, स्थूल, सूक्ष्म, पर्याप्त और भी अपर्याप्त माना जाता है। प्रत्येक शरीर, साधारण शरीर, स्थिर-अस्थिर, सकारण शुभ-अशुभ, सुभग, दुर्भग, सुस्वर और दुस्वर। आदेय भी जग में भला होता है, अनादेय यश:कीर्ति, अयश:कीर्ति और तीर्थंकरत्व।

घत्ता—चार गतियों में जन्म के नाम से गति नामकर्म आठ का आधा चार होता है। इन्द्रियों के लेने से जाति नामकर्म पाँच प्रकार का है॥ ३१ ॥

३२

इस प्रकार पाँच प्रकार के पाँच नामों [अर्थात् (१) औदारिक आदि पाँच शरीरों का संघात, (२) कृष्ण-नील-पीतादि पाँच वर्ण, (३) कटु-तिक्त आदि पाँच रस, (४) औदारिकादि शरीर-निबन्ध, (५) औदारिकादि पाँच शरीर, औदारिक वैक्रियक और आहारक शरीर के अंगोपांग (एक के त्रिभेद) दो प्रकार दो (सुभग, दुर्भग, प्रशस्त, अप्रशस्त), दो छह, (समचतुरस्र, वल्मीक, न्यग्रोध, कुब्ज, वामन, हुंड संस्थान और वज्रर्षभनाराच, वज्रनाराच, नाराच, असंप्राप्त, अस्पृष्ट आदि संघट्टन), दो-चार (नरकादि गतियाँ और गत्याद्यनुपूर्वियाँ), आठ प्रकार (कर्कश-मृदु, गुरु-लघु, शीतोष्ण-स्निग्ध, सूक्ष्म और स्पर्श नाम), की प्रकृतियाँ जो नाम उच्चारण करनेपर एक-एक प्रकार की हैं। संसार में गोत्र भी ऊँच-नीच दो प्रकार का है, जिनको उन्होंने दूर से त्याग दिया है। दान भोग-उपभोग का निवारण करनेवाला, वीर्य और लाभ के कारणों का संहार करनेवाले पाँच प्रकार के अन्तराय को नष्ट कर, इस प्रकार एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों को ध्वस्त कर, प्रकृतियों से मानवशरीर को मुक्त कर, स्वयम्भू शुद्ध स्वभाव प्राप्त कर, जो जीव दु:ख से विरहित शाश्वत स्थान में गये हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

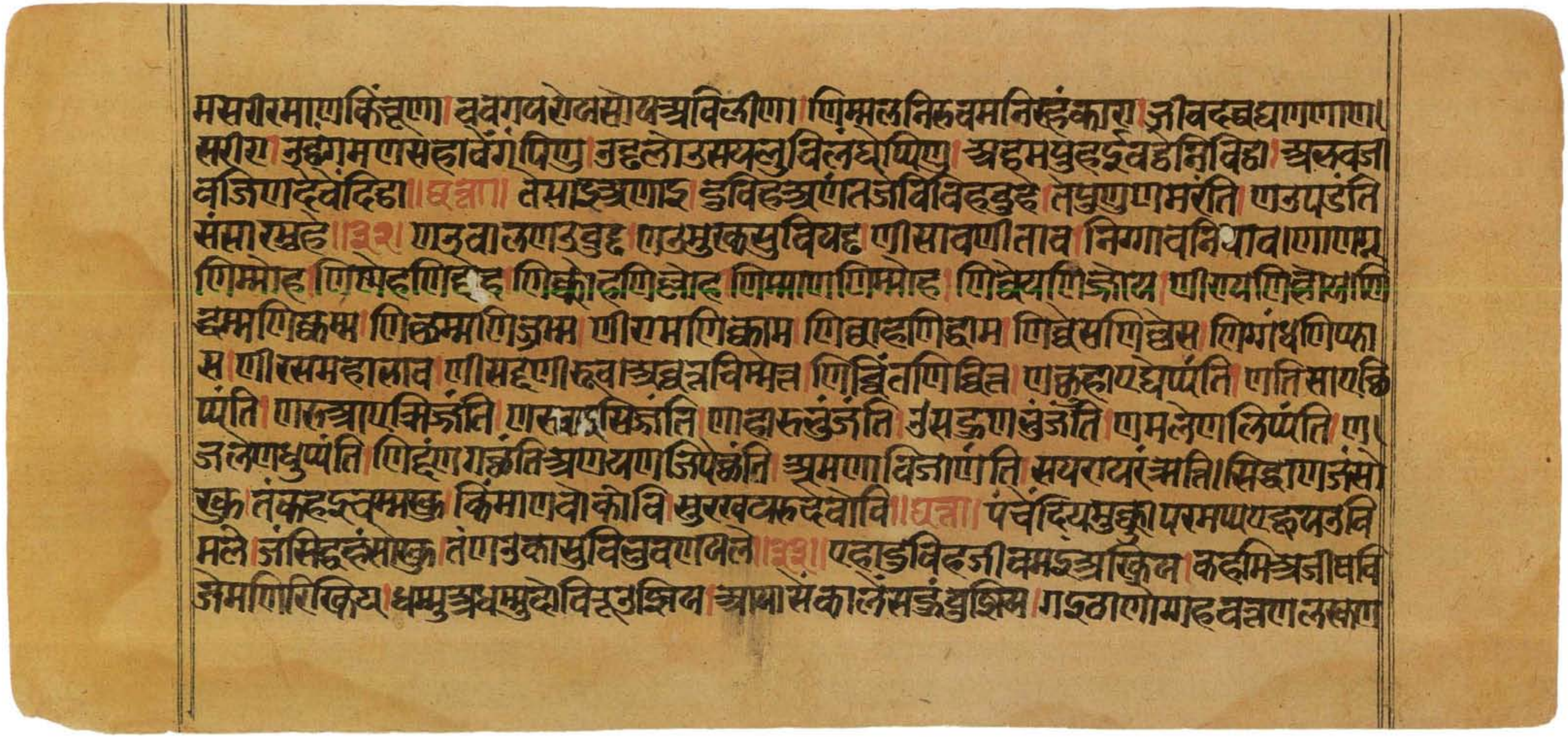

वे चरमशरीरी किंचित् न्यून, रोग-शोक से रहित सिद्ध-स्वरूप नहीं छोड़ते हुए निर्मल अनुपम निरहंकार जीव द्रव्य से सघन और ज्ञानशरीरी, ऊर्ध्वगमन स्वभाव से जाकर समस्त ऊर्ध्वलोक को लाँघकर आठवीं धरती की पीठ (मोक्षपीठ) पर आसीन हो गये, ऐसे अजन्मा जीवों को जिन भगवान् ने देख लिया।

घत्ता—अनन्त वे आदि और अनादि के भेद से दो प्रकार के विविध दुःखवाले संसार के मुख में फिर से नहीं पड़ते, उनकी मृत्यु नहीं होती॥ ३२॥

३३

वहाँ न बालक हैं, न वृद्ध, न मूर्ख हैं और न पण्डित हैं, जो शाप और तप रहित। गर्व और पाप से रहित, काम और इन्द्रिय बोध से शून्य, देहचेतना और स्नेह से रहित, क्रोध और लोभ से रहित, मान और मोह से रहित, वेद और योग से रहित, नीराग और निर्भोग, निर्धर्म-निष्कर्म, क्षमा और जन्म से रहित, स्त्री और काम से रहित, बाधा और घर से रहित, द्वेष और लेश्या से दूर, गन्ध-स्पर्श से शून्य, नीरस महाभाववाले, शब्द और रूप से हीन, अव्यक्त चिन्मात्र, निश्चिन्त निर्वृत्त, जो भूख से ग्रहण नहीं किये जाते, जो प्यास से नहीं छुए जाते, जो रोगों के द्वारा क्षीण नहीं होते और न रति से दुःख को प्राप्त होते हैं। आहार नहीं लेते, औषधि का प्रयोग नहीं करते। मल से लिप्त नहीं होते और न जल से धुलते हैं, नींद को प्राप्त नहीं होते, जो बिना आँखों के भी देखते हैं, बिना मन के जान लेते हैं, शीघ्र ही सचराचर विश्व को। सिद्धों को जो सुख है क्या उसे कोई चर्म चक्षुओंवाला मनुष्य, देव या विद्याधर कह सकता है।

घत्ता—पाँच इन्द्रियों से मुक्त विमल परम पदों में सिद्धों को जो सुख होता है वह सुख विश्वतल में किसी को भी नहीं होता॥ ३३॥

३४

इस तरह दो प्रकार के जीवों का मैंने कथन किया। अब मैं अजीव का कथन करता हूँ जैसाकि मैंने देखा है। धर्म, अधर्म, आकाश और काल के साथ रूप से रहित हैं ऐसा समझना चाहिए। गति, स्थिति, अवगाहन और वर्तना लक्षणवाले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

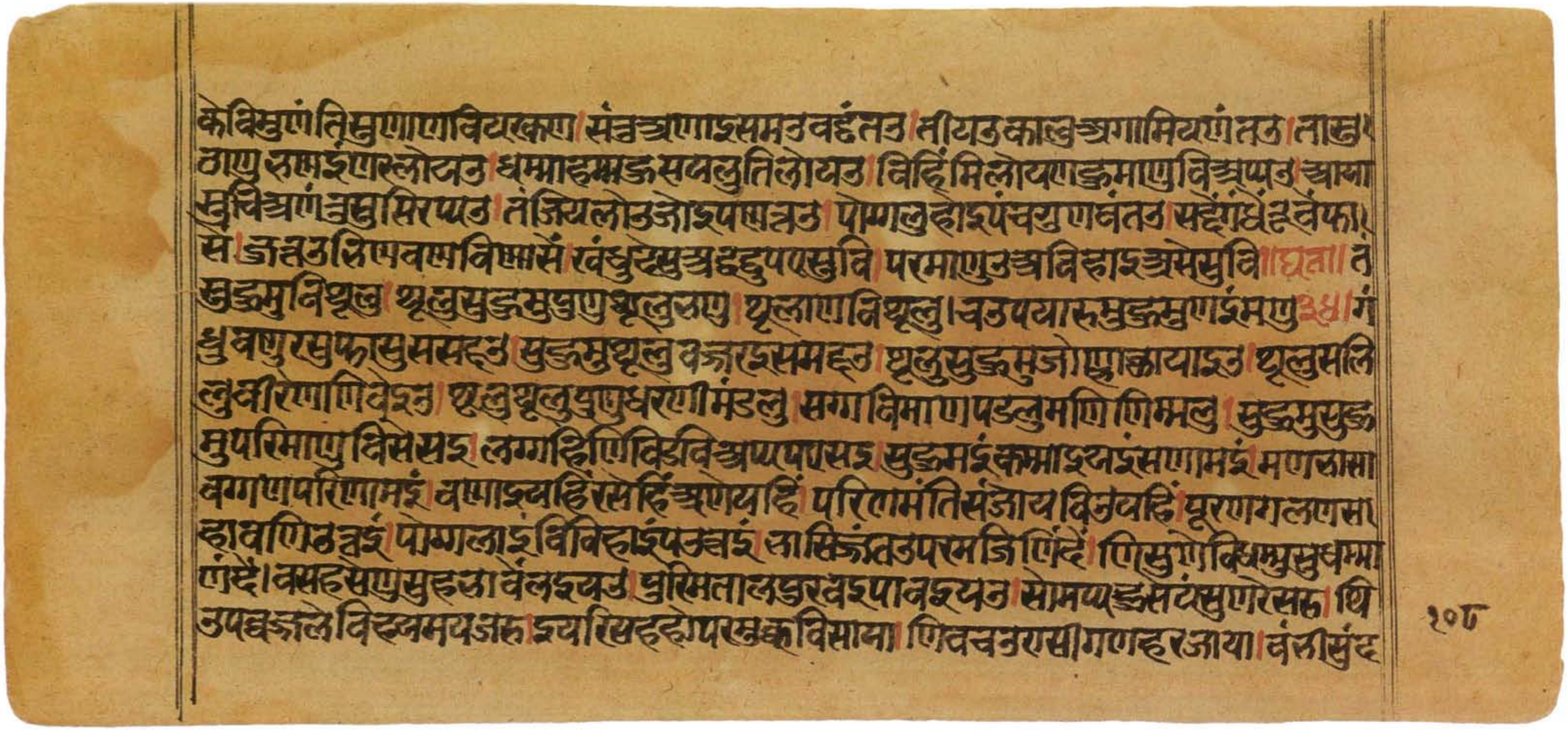

इनको कोई विलक्षण सुज्ञानी ही जानते हैं। काल सान्त और अनादि है। वर्तमान, आगामी और भूत—ये काल के तीन भेद हैं। उसका (व्यवहार काल) समस्त नरलोक स्थान है। धर्म और अधर्म समस्त त्रिलोक में व्याप्त हैं। उन दोनों से लोकाकाश व्याप्त है। आकाश भी अनन्त है और शुषिर के स्वरूपवाला है। अलोकाकाश वह है जो योगियों के द्वारा ज्ञात है। पुद्गल पाँच गुणवाला होता है। शब्द, गन्ध, रूप, स्पर्श और भिन्न-भिन्न रंग-रचनाओं से युक्त स्कन्ध देश-प्रदेश के भेद से तीन प्रकार का है। परमाणु अशेष अविभाज्य हैं।

घत्ता—पुद्गल के छः प्रकार हैं—सूक्ष्मसूक्ष्म, सूक्ष्म, सूक्ष्मस्थूल, स्थूलसूक्ष्म, स्थूल, स्थूलस्थूल ऐसा मेरा मन मानता है।

३५

गन्ध-वर्ण-रस-स्पर्श-शब्द सूक्ष्म स्थूल मार्दववाला कहा जाता है। स्थूल सूक्ष्म ज्योत्स्ना छाया और आतप, स्थूल जैसे पानी ऐसा वीर (महावीर) ने कहा है स्थूलस्थूल धरती मण्डल मणि निर्मल स्वर्ग विमान पटल हैं। सूक्ष्म नाम सहित सभी कर्म मन भाषा वर्गणा और परिणामों, अनेक रसों-रंगों, संयोग-वियोगों से परिणमन करते हैं। पूरण-गलन आदि स्वभाव से युक्त पुद्गल अनेक प्रकार के कहे गये हैं—इसप्रकार परमजिनेन्द्र द्वारा कथित धर्म को धर्म के आनन्द से सुनकर, वृषभसेन ने शुभभाव से ग्रहण किया। उसने पुरिमतालपुर में प्रव्रज्या ग्रहण की। सोमप्रभ श्रेयांस नरेश मदज्वर को नष्ट करनेवाली प्रव्रज्या लेकर स्थित हो गये। इस प्रकार विषाद से रहित चौरासी गणधर ऋषभ जिनवर के हुए; ब्राह्मी-सुन्दरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैसी कान्ताएँ महाआदरणीय संघ की आर्यिकाएँ बनीं। लेकिन दर्शन मोहनीय कर्म से अवरुद्ध एक मरीचि नाम का भरत का पुत्र प्रतिबुद्ध नहीं हो सका। वह उन्हें छोड़कर कन्द का आहार करनेवाला कच्छादि का मुनिपद ग्रहण कर तपस्वी बन गया। लेकिन मोक्षमार्ग पर चलनेवालों में अनन्तवीर्य सबसे अग्रणी हुआ।

घत्ता—श्रावक श्रुतकीर्ति और श्राविका देवी प्रियंवदा। भरत के द्वारा पूज्य ग्रहनक्षत्र, जिन भगवान् में रत हैं॥ ३५॥

इसप्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाकव्व भरत द्वारा अनुमत ग्यारहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ११॥

सन्धि १२

शत्रुवरों के निर्दलन, क्षात्रधर्म के उद्धार, विकलित जनों को सहारा देने, ढाढस और धरती के लिए भरत ने त्रिलोक लक्ष्मी और विजय प्राप्त करानेवाला प्रस्थान किया॥ १॥

१

शीघ्र ही शरद् ऋतु के आगमन पर धुल गये हैं सूर्य-चन्द्र जिसमें ऐसा आकाश अप्रमाण (सीमाहीन) हो उठा, जो ऐसा दिखाई देता है मानो शरद् के मेघरूपी दही-खण्ड के लिए ब्रह्मा के द्वारा झुका दिया गया हो। मानो विश्वरूपी घर में तारारूपी मोतियों के गुच्छों से स्निग्ध नील चन्दोवा बाँध दिया गया हो,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

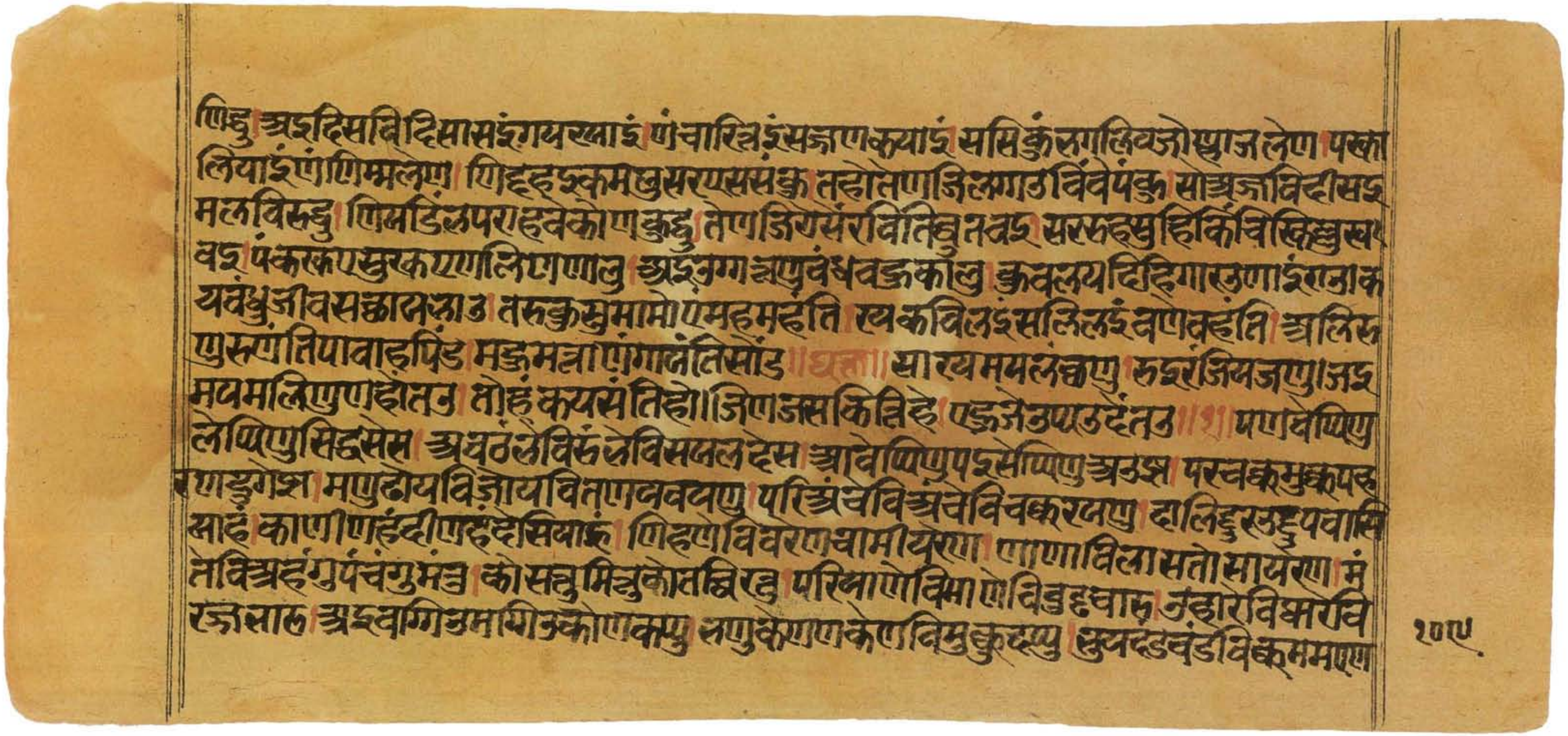

दशों दिशाएँ रज से इस प्रकार अत्यन्त शून्य हो गयीं (निर्मल हो गयीं) मानो सज्जनों के निर्मल चरित्र हों। मानो वे चन्द्ररूपी घड़े से प्रगलित ज्योत्स्नारूपी निर्मल जल से प्रक्षालित कर दी गयी हों। शरद् में शशांक—चन्द्रमा कमल को जलाता है, इसीलिए उसका (कमल का) शरीर-पंक उसी को (चन्द्रमा को) लग गया। वह (सूर्य) आज भी मल-विरुद्ध दिखायी देता है, अपने बच्चे के पराभव से कौन क्रुद्ध नहीं होता? क्या इसी क्रोध से सूर्य तीव्र तपता है, और कमलबन्धु (सूर्य) कीचड़ को सुखाता है, कीचड़ के सूखने से कमलों के नाल (मृणाल) सूख जाते हैं, अत्यन्त उग्रता बन्धुओं के लिए भी काल सिद्ध होती है। जिसने अपने बन्धुओं के प्राणों के लिए सुन्दर छाया का भाव किया है, ऐसा चन्द्रमा राजा की तरह कुवलय (कुमुदों और पृथ्वीरूपी मण्डल) के लिए भाग्यकारक होता है। कुसुमों के आमोद से वृक्ष महक रहे हैं। पराग से पीले जल वन में बह रहे हैं। पाप के समान रंगवाले अर्थात् काले रंग के भ्रमर गुनगुना रहे हैं, मानो मधु से मत्त मद्यप गा रहे हों।

घत्ता—अपनी कान्ति से जनों को रंजित करनेवाला शरद् का चन्द्रमा, यदि मृग के लांछन से मैला नहीं होता, तो मैं (कवि पुष्पदंत) उसकी शान्ति का विधान करनेवाले जिन भगवान् के यशरूपी चन्द्रमा से उपमा देता॥ १॥

२

सिद्धों को प्रणाम कर और शेष तिल (निर्माल्य) लेकर समस्त देशों पर बलपूर्वक आक्रमण कर, उन्हें स्थापित कर और शत्रुमण्डल के द्वारा छोड़े गये अस्त्रों के लिए दुर्ग्राह्य अयोध्या में प्रवेश कर, मन को लगाकर, पुत्र का मुख देखकर और चक्ररत्न की परिक्रमा और अर्चना कर प्रवासियों, परदेशियों और कन्यापुत्रों का भयंकर दारिद्र्य, स्वर्णदान के द्वारा समाप्त कर, अभंग पंचांग मन्त्र की मन्त्रणा कर कौन शत्रु है, कौन मित्र है, और कौन विरक्त (मध्यस्थ) है? यह जानकर वृद्ध मन्त्रियों के आचार को मानकर और विचारकर राज्य-भार देकर (वह चला) बताओ, उसने अतिगर्वित किससे कर नहीं माँगा, किस-किसने गर्व नहीं छोड़ा? भुजदण्डों के प्रचण्ड विक्रम और मदवाले उसके द्वारा

छह खण्ड धरतीमण्डल के लिए लाखों गम्भीर तूर्य बजवा दिये गये, दुर्दर्शनीय रक्षक आहतमद हो उठे। युद्ध करनेवाले देवों के शरीर थर-थर काँप उठे। उनके कान बहरे हो गये। असुरेन्द्रों और नागेन्द्रों की प्रियाएँ और विपुल पाताललोक काँप उठे। पहाड़ और धरतीतल टूट-फूट गये। नदियों के चमकते हुए जल मु गये। स्थिर भाववाले देवों को शंका उत्पन्न हो गयी। शब्दों से आहत सूर्य और चन्द्रमा डोल उठे।

घत्ता—त्रिजग का विमर्दन करनेवाले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

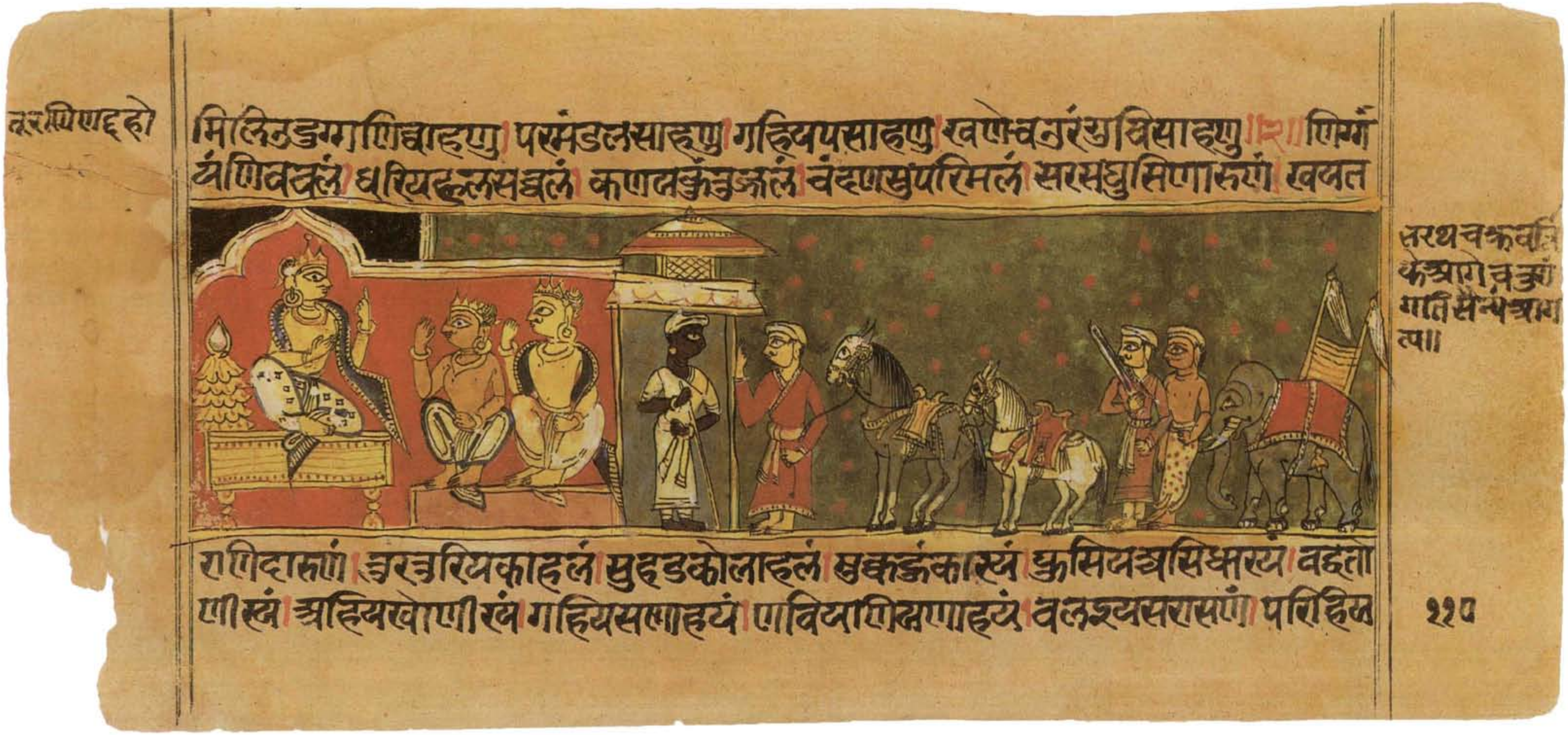

उस तूर्य शब्द के साथ दुर्गों को ध्वस्त करनेवाला, शत्रुमण्डल को सिद्ध करनेवाला, साधनों से युक्त चतुरंग सैन्य भी जा मिला॥ २॥

३

जिसने हल-सब्बल ग्रहण किया है, जो स्वर्णकुन्तलों से उज्ज्वल है, जो चन्दन से सुरभित है, सरस केसर से आरक्त है, प्रलयकाल के सूर्य के समान भयंकर है, जिसमें तुरु-तुरिय और काहल वाद्य बज रहे हैं, सुभटों का कोलाहल हो रहा है, हुंकार शब्द छोड़ा जा रहा है, तलवार की धारें चमक रही हैं, जो तूणीर (तरकस) बाँधे हुए हैं, जो शत्रु में अत्यन्त आसक्त है, जिसने कवच धारण कर रखे हैं, जिसने अपने स्वामी के लिए प्रणाम किया है, जिसने धनुष को मोड़ रखा है, जिसने आभूषण पहन रखे हैं,

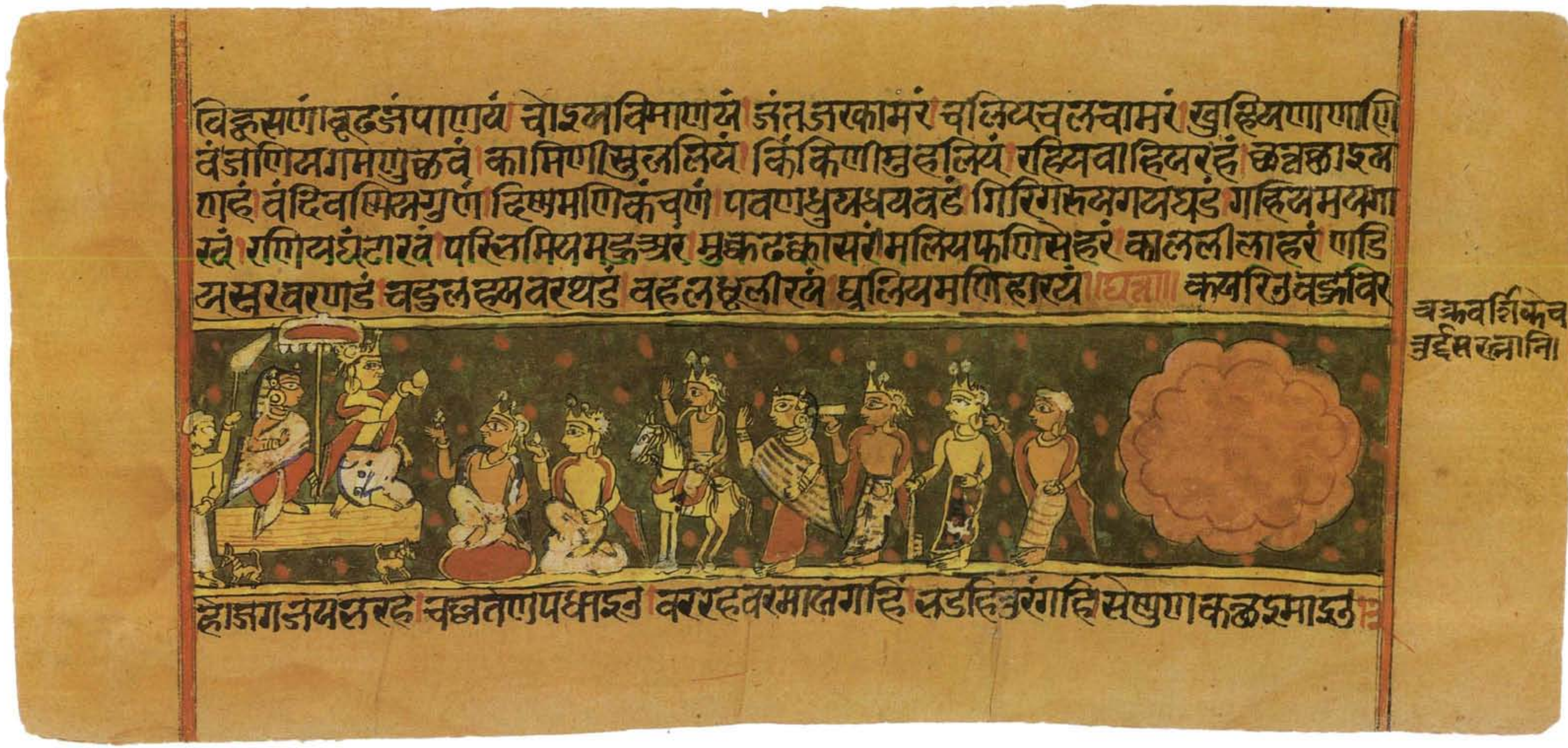

जो जंपाण धारण किये हुए हैं, जो विमानों को प्रेरित कर रही है, जिसमें यक्ष और देव चल रहे हैं, जिसमें चंचल चमर चल रहे हैं, जिसने अनेक राजाओं को क्षुब्ध किया है, जिसने प्रस्थान का उत्सव किया है, जो स्त्रियों से सुन्दर है, किंकिणियों से मुखर है, जिसमें सारथियों के द्वारा रथ हाँके जा रहे हैं, जिसमें छत्रों से आकाश आच्छादित है, जिसमें चारणों के द्वारा गुणों का गान किया जा रहा है, जिसमें मणिकंकणों का दान किया जा रहा है, पवन से ध्वजपट उड़ रहे हैं, जिसमें गजघटा गिरिवर के समान भारी है, जिसने मद के गौरव को ग्रहण किया है, जिसमें घण्टों का शब्द हो रहा है, जिसमें भ्रमर घूम रहे हैं, जिसमें ढक्का की ध्वनि हो रही है, जिसमें नागों के फणामणि चूर-चूर हो गये हैं, जो काल की लीला को धारण करता है, जिसमें देवरूपी नट नचाये जाते हैं, जिसमें श्रेष्ठ अश्वों की घटा चंचल है, जिसमें अत्यधिक धूलिरज है, जिसमें मणिमय हार व्याप्त हैं, ऐसा राजसैन्य चल पड़ा।

घत्ता—जिसने शत्रुवधुओं को विरह उत्पन्न किया है और जो विश्वयश से भरित है, ऐसे राजा के चलते ही सैन्य दौड़ा और श्रेष्ठ रथों, गजों, भटों और अश्वों के द्वारा वह कहीं भी नहीं समा सका॥ ३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

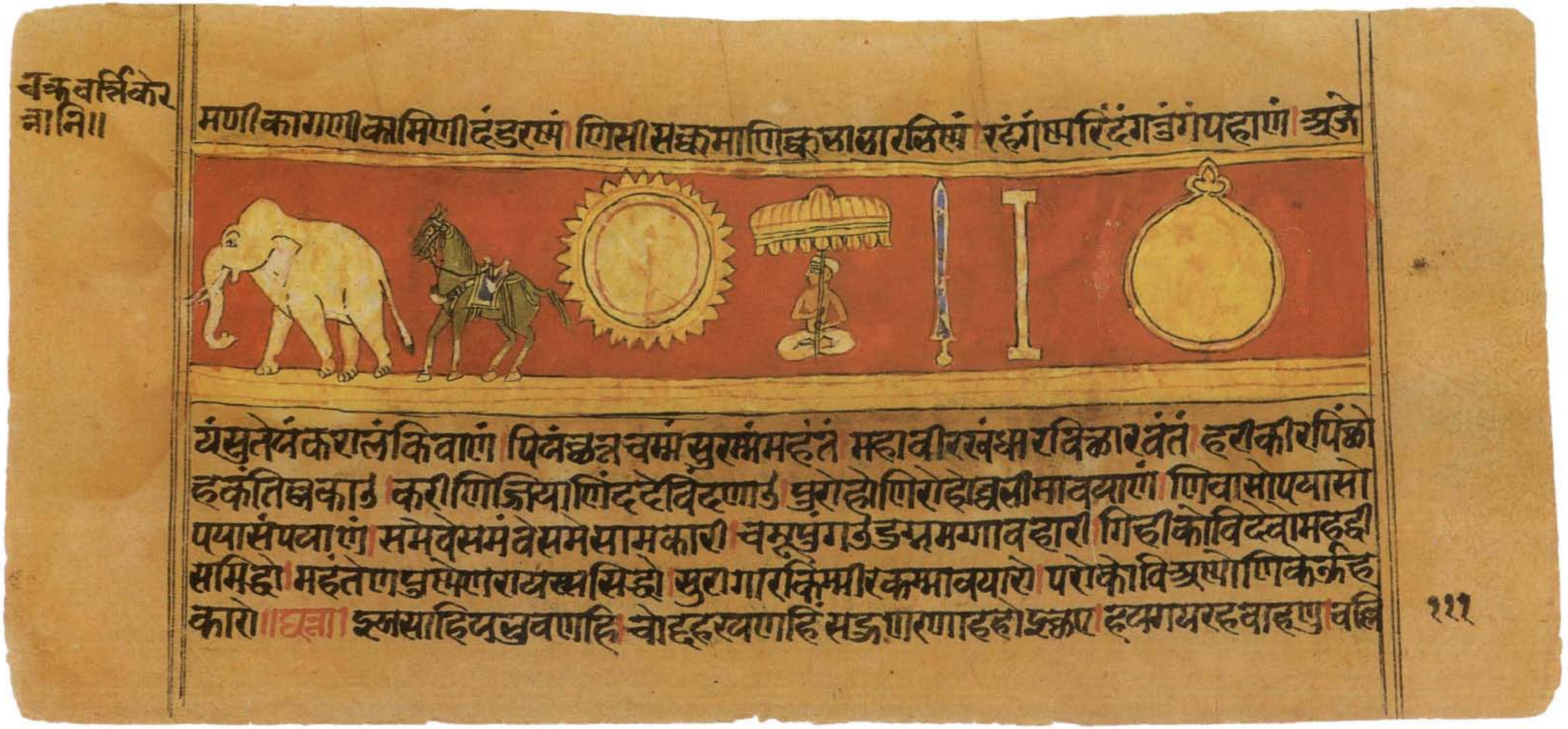

४

काकणी मणि, कामिनी, दण्डरत्न, सूर्यकान्त और चन्द्रकान्त मणियों की कान्तियों से मिश्रित चक्रवर्ती के शरीर की ऊँचाईवाली भारी अजेय तेजस्वी भयंकर कृपाण, पीत छत्र, महावीर के स्कन्धावार के समान विस्तारवाला महान् सुन्दर चर्म, हरे कीरों के पंखों के समूह के समान कान्तिवाला, और देवेन्द्र के अनिन्द्य नागराज को जीतनेवाला गज, भयंकर आपत्तियों का निरोध करनेवाला और प्रजाओं की सम्पदाओं का निवास और प्रकाशित करनेवाला पुरोहित, समता में विषमता और विषमता में समता स्थापित करनेवाला तथा दुर्गमार्गों का अपहरण करनेवाला सेनापति, महाऋद्धियों से समृद्ध कोई देव गृहपति, महापुण्य से राजा को सिद्ध हुआ। देवगृहों के लिए विचित्र कर्मों का अवतरण करनेवाला श्रेष्ठ कोई सूत्रधार अर्थात् स्थपति उसे सिद्ध हुआ।

घत्ता—जिसने चौदह भुवनों को सिद्ध किया है, ऐसे चौदह रत्नों के साथ, राजा के चक्र के पीछे हय-गज और रथ वाहन हैं जिसमें ऐसी समस्त सेना इच्छापूर्वक चली॥४॥

५

मणियों के रथवर पर आरूढ़ राजा ऐसा जान पड़ता था मानो नभ में इन्द्र हो। जिसका बाहुयुगल दृढ़ और कठोर है, वक्षस्थल अत्यन्त विकट है, जिसने अपने बल से कुलपर्वत को तोल लिया है, उस पुरुषसिंह के विषय में क्या कहूँ! उसके कन्धे सिंह के समान हैं जो बहरे और अन्धों का बन्धु है, जिसके केश भ्रमर के समान नीले हैं जो त्रिलोक का प्रतिमल्ल है, ऐसा वह भरतेश, दूर्वांकुर, दही, चन्दन और शेषाक्षत (तिल) तथा मंगलघोष के साथ इस प्रकार चला मानो मनुष्य के रूप में कामदेव हो। ध्वज से ध्वज प्रतिस्खलित हो गया। मनुष्य अश्वों से कुचल गया। गज अपना कण्ठ धुनने लगा। महावत धरती पर गिर पड़ा। भय से भरा हुआ, बैल के द्वारा फेंका गया। पात्र टूट-फूट गये। गोधन चूर्ण-चूर्ण हो गये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

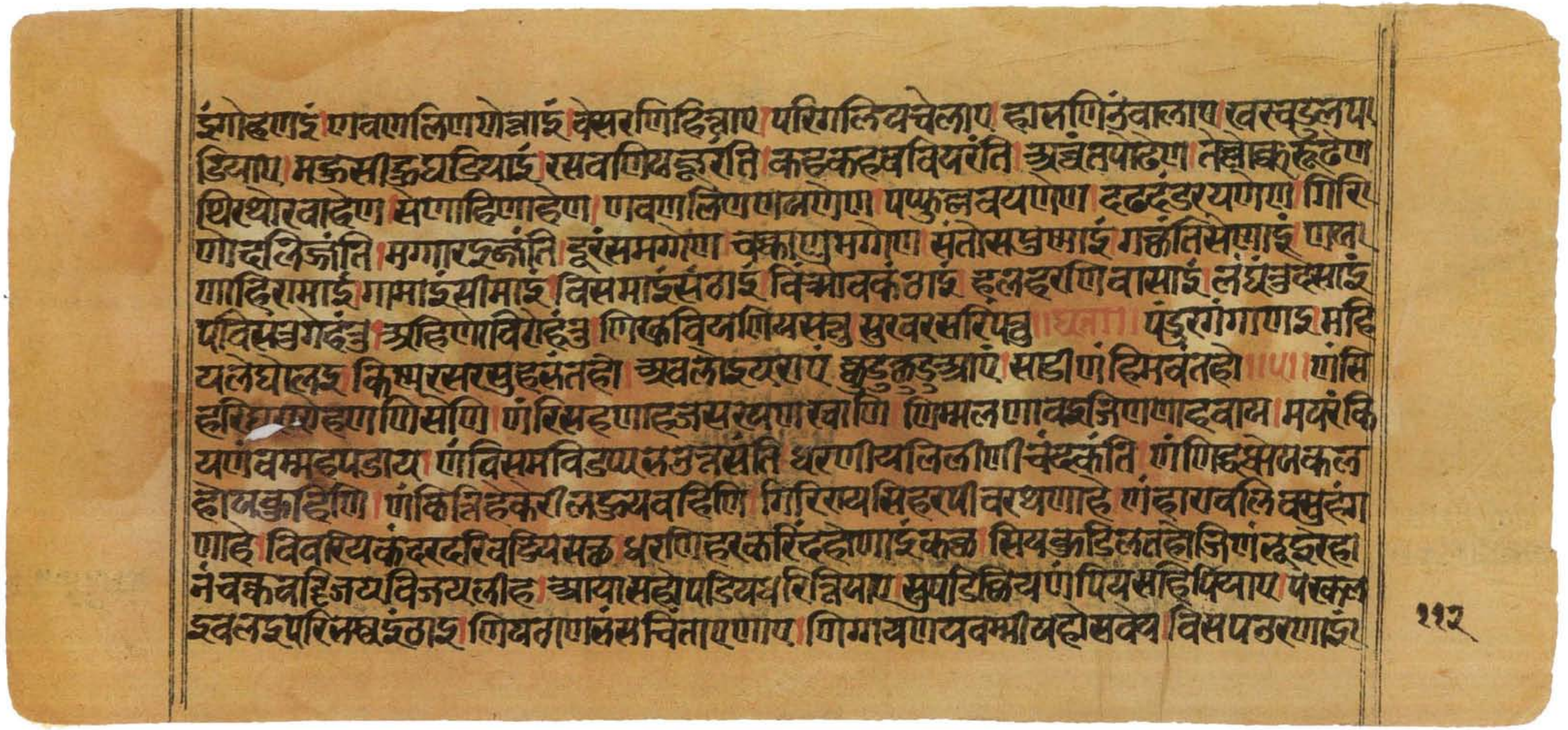

जिसके नेत्र नवनलिन के समान हैं, जिसकी साड़ी खिसक गयी है, खच्चर पर बैठी हुई ऐसी बाला ने 'हा' कहा। गधे के पतन से गिरी हुई तथा मधुसुरा से चेष्टा करनेवाली उस बाला के द्वारा लोग काम से घायल होते हैं और बड़ी कठिनाई से चल पाते हैं। अत्यन्त प्रौढ़, त्रिलोक में प्रसिद्ध स्थिर स्थूल बाहुवाले प्रफुल्लमुख सेनापति ने दण्डरत्न से पहाड़ों को विदीर्ण किया तथा मार्गों का निर्माण किया। चक्र का अनुगमन करते हुए सन्तोष से परिपूर्ण सैन्य अपने मार्ग से दूर तक जाता है, नेत्रों के लिए सुन्दर ग्राम—सीमाओं, विषम निम्नोन्नत भूमियों, विन्ध्या के उपकण्ठों, कृषकों के निवासभूत देशों को लाँघता हुआ, घरों में प्रवेश करता हुआ, नागों को विरुद्ध करता हुआ, तथा जिसने अपने शत्रु का नाश कर दिया है ऐसा सैन्य गंगा नदी पर पहुँचा।

घत्ता—सफेद गंगानदी को आगत राजा ने इस प्रकार देखा मानो वह किन्नरों के स्वरसुख से भ्रान्त धरती पर फैली हुई हिमवन्त की साड़ी (धोती) हो॥५॥

६

मानो वह पहाड़ के घर पर चढ़ने की नसैनी हो, मानो ऋषभनाथ के यशरूपी रत्नों की खदान हो, मानो जिननाथ की पवित्र वाणी हो; मानो मकरों से अंकित कामदेव की पताका हो; मानो राहु के विषम भय से पीड़ित चन्द्रमा की कान्ति धरती तल पर व्याप्त हो; मानो स्निग्ध निर्मल चाँदी की गली (पगडण्डी) हो; मानो कीर्ति की छोटी बहन हो, हिमालय के शिखर जिसके स्तन हैं, ऐसी वसुधारूपी अंगना की मानो वह हारावली हो; प्रगलित विवरों और घाटियों में गिरती हुई स्वच्छ वह (गंगा) ऐसी मालूम होती है, मानो पहाड़रूपी करीन्द्र की कच्छा हो। सफेद और कुटिल वह मानो उसकी भूतिरेखा हो, मानो चक्रवर्ती की विजयलेखा हो, मानो आकाश से आयी हुई प्रिय धरती की चिर प्रतीक्षित सखी हो। वह स्खलित होती है, मुड़ती है, परिभ्रमण करती है, स्थित होती है, जैसे मानो अपने स्थान से भ्रष्ट होने की चिन्ता उसे हो। वह मानो सफेद नागिन के समान, पर्वत की वाल्मीकि (बिल) से वेगपूर्वक निकली है, और विष (जल/जहर) से प्रचुर है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिसे हंसावलियों के वलय शोभा प्रदान कर रहे हैं, ऐसी वह मानो उत्तर दिशारूपी नारी की बाँह हो।

घत्ता—जो अनेक रत्नों का विधान है और अत्यन्त सुन्दर है, ऐसे गम्भीर समुद्ररूपी पति से, धवल, पवित्र और मन्थर चालवाली गंगानदी स्वयं जाकर मिल गयी॥ ६ ॥

७

जहाँ मत्स्यों की पूँछों से आहत, सीपियों के सम्पुटों से उछले हुए मोती, प्यास से सूखे कण्ठवाले चातकों के द्वारा जलबिन्दु समझकर ग्रहण कर लिये जाते हैं, जलकाकों द्वारा सफेद जल दिया जाता है मानो अन्धकारों के समूहों के द्वारा चन्द्रमा का प्रकाश पिया जा रहा हो। फिर वही (जल) लाल कमलों के दलों की कान्ति से ऐसा शोभित होता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मानो सन्ध्याराग की कान्ति से शोभित हो। जहाँ क्रीड़ारत कीरकुल ऐसे जान पड़ते हैं, मानो स्फटिक मणियों की भूमि पर मरकत मणि हों। जिसकी लहरें कंकहार और नीहार की कान्तिवाली हैं, उनमें हंस पक्षी भी ज्ञात नहीं होते। जहाँ, जो अप्सरा पानी से सफेद अपने बहते हुए दुपट्टे को नहीं देख पाती, उसके द्वारा परिधान अपने हाथ से पकड़ लिया जाता है और कहती है—"हे माँ, यहाँ स्नान हो चुका।" जिसमें मातंगों (गजों और चाण्डालों) को दान का स्नेह (चिकनापन और राग) बहता है, और जिसमें तपस्वी भी अपने शरीर को डालते हैं। जड़ (मूर्ख और जल) के साथ विद्वान् भी मूर्ख हो जाता है, जहाँ लक्ष्मी के आवास में साँप शयन करते हैं। जो साँप और धनवान् सविष तथा बहुप्रिय (वधुओं के प्रिय या अनेक के प्रिय) हैं, उन्हें भी वह धन की आशा से धारण करती है। जिन भगवान् के जन्माभिषेक के समय दिव्यांगना के घन स्तनयुगल से निकली हुई जो जिनेन्द्र भगवान् के स्नानाभिषेक के प्रारम्भिक दिन से बह रही है,

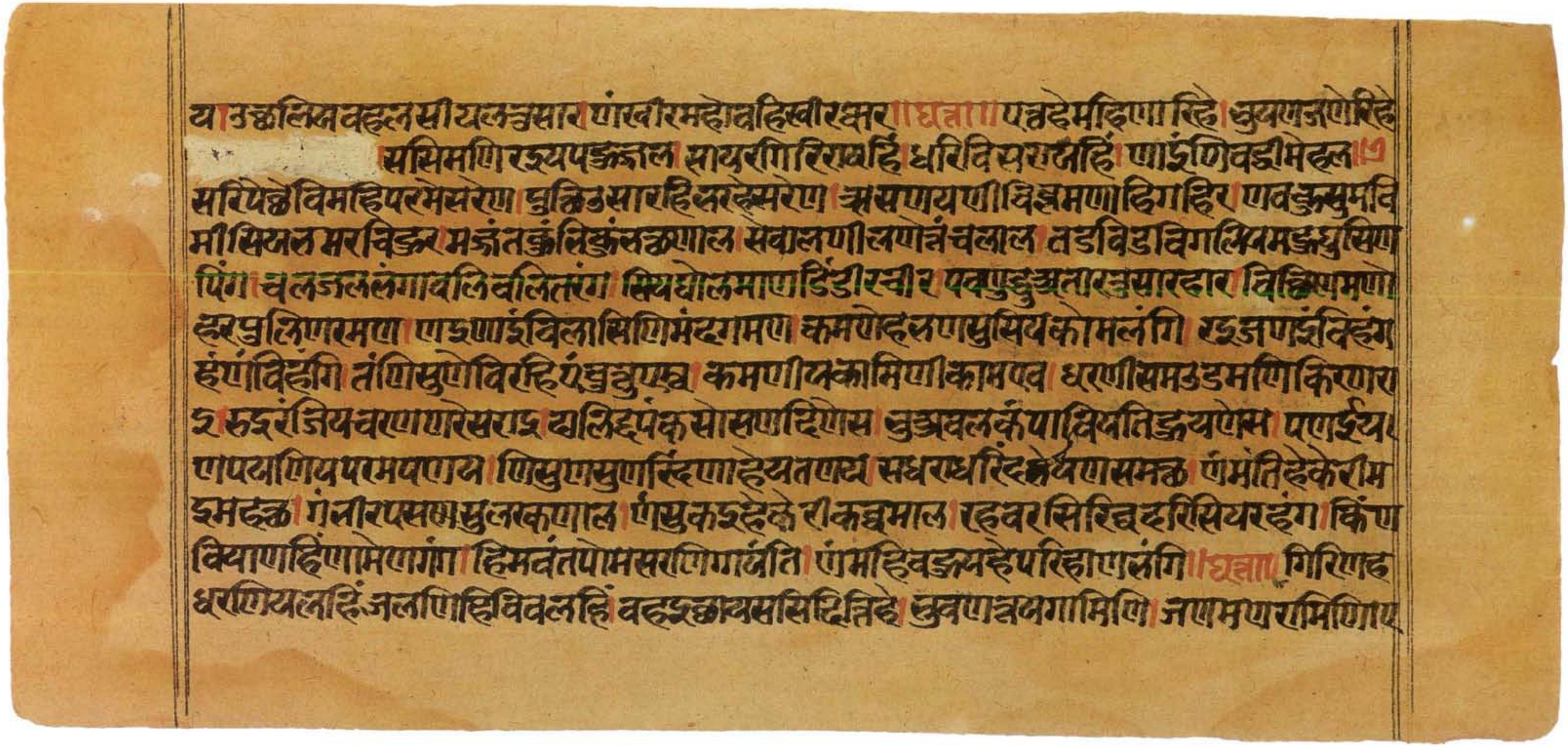

जिसमें प्रचुर शीतल हिमकण उछल रहे हैं, ऐसी वह मानो क्षीरसमुद्र की क्षीरधारा के समान जान पड़ती है।

घत्ता—सरागी समुद्र और हिमालय दोनों ने मानो मिलकर चन्द्रकान्त मणियों की प्रभा से उज्ज्वल इसे (गंगा को) पकड़कर विश्व को जन्म देनेवाली इस धरतीरूपी नारी से मेखला के रूप में बाँध दिया है॥ ७॥

८

नदी को देखकर धरती के परमेश्वर भरतेश्वर ने सारथि से पूछा—"मत्स्यों के नेत्रवाली, जलावर्तों की नाभि से गम्भीर, नवकुसुमों से मिले हुए भ्रमरों के केशोंवाली, डूबते हुए गजों के कुम्भों के स्तनोंवाली, शैवाल के नीले नेत्रांचलों से अंचित, किनारों के वृक्षों से विगलित मधुकेशर से पीली, चंचल जलों की भृंगावली से मुड़ी हुई तरंगोंवाली, सफेद और फैले हुए फेन के वस्त्रोंवाली, हवा से हिलते हुए स्वच्छ हिमकणों के हारवाली, विस्तृत सुन्दर पुलिनों से सुन्दर, यह नदी मन्द चलनेवाली विलासिनी के समान जान पड़ती है, यह श्वेत कोमलांगी कौन है? बताओ। यह विहंगी (पक्षिणी) की तरह विहंगों से प्रेम करती है।" यह सुनकर सारथि बोला—"हे सुन्दर कामिनियों के लिए कामदेव के समान, राजाओं के मुकुटमणियों की किरणों से शोभित, कान्ति से रंजित प्रथम चक्रवर्ती राजन्, दारिद्र्यरूपी कीचड़ के शोषण के लिए दिनेश्वर, अपने भुजबल से त्रिभुवन ईश को कँपानेवाले, प्रणयिनी स्त्रियों से परम प्रणय करनेवाले हे नाभेयतनय राजन्, सुनिए—क्या आप नहीं जानते कि यह गंगा नाम की नदी है, मन्त्री की महार्थवाली मति की तरह जो पृथ्वी के धरणीन्द्रों (राजाओं-पर्वतों) का भेदन करने में समर्थ है; गम्भीर, प्रसन्न और सुलक्षणों वाली जो मानो सुकवि की काव्यलीला के समान है। और रथश्री की तरह रथांग (चक्रवाक और चक्र) को दिखानेवाली है। हिमवन्त सरोवर से निकलनेवाली जो मानो धरतीरूपी वधू के चलने की भंगिमा है।

घत्ता—यह पर्वत, आकाश, धरणीतलों और समुद्र के विवरों की शोभा धारण करती है। तीनों लोकों में परिभ्रमण करनेवाली जनमनों के लिए सुन्दर यह चन्द्रमा की दीप्तिवाली तुम्हारी कीर्ति के समान है॥ ८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

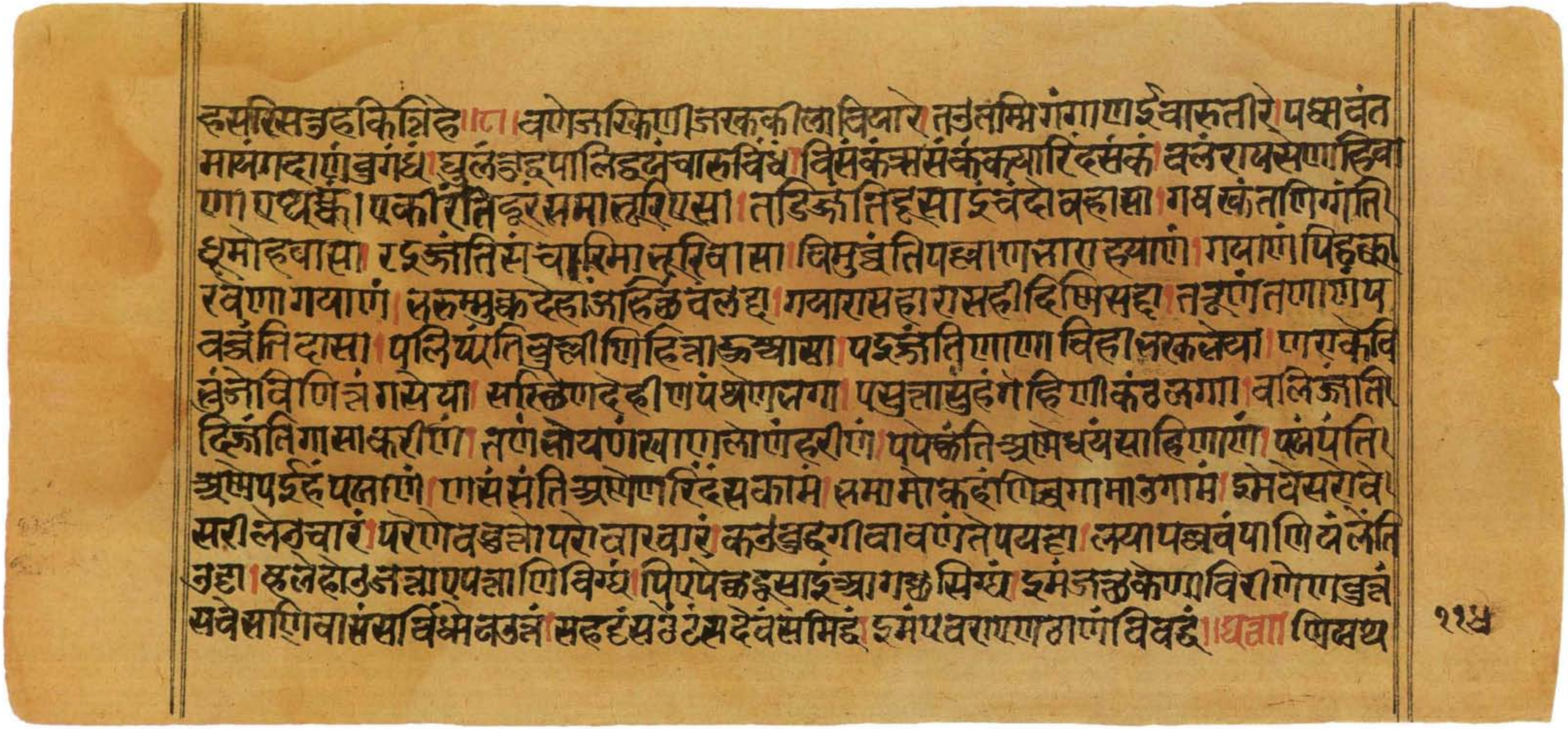

९

जिसमें यक्षिणियों और यक्षों का क्रीड़ाविकार है ऐसे उस वन में, गंगानदी के सुन्दर तट पर राजसेनाध्यक्ष की आज्ञा से सैन्य ठहर गया। वह सैन्य दौड़ते हुए महागजों के मदजल से गन्धयुक्त था, उड़ती हुई तथा बाँस लगी हुई पताकाओं से सहित था, जो बैलों और यश से अंकित था। उसकी समतल भूमि दूर-दूर तक फैली हुई थी। कपड़ों के तम्बू और मण्डप फैला दिये गये थे। जिनके गवाक्षों से धूम-समूह निकल रहा था, ऐसे तथा संचार योग्य प्रचुर गन्धवाले निवास बनाये गये। अश्वों के जीन खोल दिये गये। और ढक्कार शब्दों से आते हुए गजों के भी। भार से मुक्त है शरीर जिनका, ऐसे बैल भी इच्छापूर्वक चले गये। गर्दभी के लिए शब्द करते हुए गर्धभ भी चल दिये। वृक्षों और घास के लिए दास दौड़ रहे थे। चूल्हों में दी गयी आग जल उठी। नाना प्रकार के भक्ष्यभेद बनाये जाने लगे। कितने ही लोग भोजन कर, तथा शरीर के पसीने से रहित होकर, समान दीर्घ पथ से थके हुए, गृहिणियों के गले से लगकर सुख से सोये हुए थे। हाथियों को घास देकर सन्तुष्ट किया जा रहा था। घोड़ों के लिए तृण, भोजन और खाननमक दिया जा रहा था। कोई अपने साथियों से पूछ रहा था, कोई लम्बे मार्ग के बारे में बात कर रहा था। कोई राजा के काम की प्रशंसा नहीं करते हुए कह रहे थे कि हम दिन-प्रतिदिन एक गाँव से दूसरे गाँव कहाँ तक घूमें? यह खच्चर और खच्चरी और चारा लो—ऐसा एक ने दूसरे से कहा। अपनी गरदनें ऊपर करके ऊँट जंगल में चले गये और वहाँ लताओं के पत्ते तथा पानी लेने लगे। ''हे प्रिय, अच्छा हुआ, यात्रा से निर्विघ्न आ गये। तम्बुओं को देखो और शीघ्र आओ।'' वेश्याओं के निवास से सहित, अपने-अपने चिह्नों से उपयुक्त, हर्षयुक्त, तम्बुओं और देवों से सहित, यह इस प्रकार का स्थान राजा ने बनवाया है। इस प्रकार किसी खिन्न व्यक्ति (सैनिक) ने कहा।

घत्ता—अपने स्थपति के द्वारा विरचित और मणिसमूह से विजड़ित सौधतलपर बैठा हुआ राजा भरत ऐसा मालूम हो रहा था, मानो स्वर्ग से स्वयं उतरकर सुरवरों में सुन्दर इन्द्रदेव आकर बैठा हो॥ ९॥

१०

जितने भी सामन्त और महासामन्त एवं महामाण्डलीक राजा थे वे भी इकट्ठे हुए। सेनाध्यक्ष के द्वारा निर्दिष्ट और राजप्रसाद से पुलकित वे निवास में ठहर गये। रात हुई, फिर अपनी किरणों के जाल से चमकता हुआ सूर्य उग आया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गजमद-मल से मैला होता हुआ, घोड़ों के लार-जल से गीला होता हुआ, छत्रों के अन्धकार से आच्छादित हुआ, शस्त्र की चमक में दिखाई देता हुआ, झल्लरी और भेरी के शब्दों से गरजता हुआ, सुन्दर कामिनी जनों के द्वारा गाया जाता हुआ,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

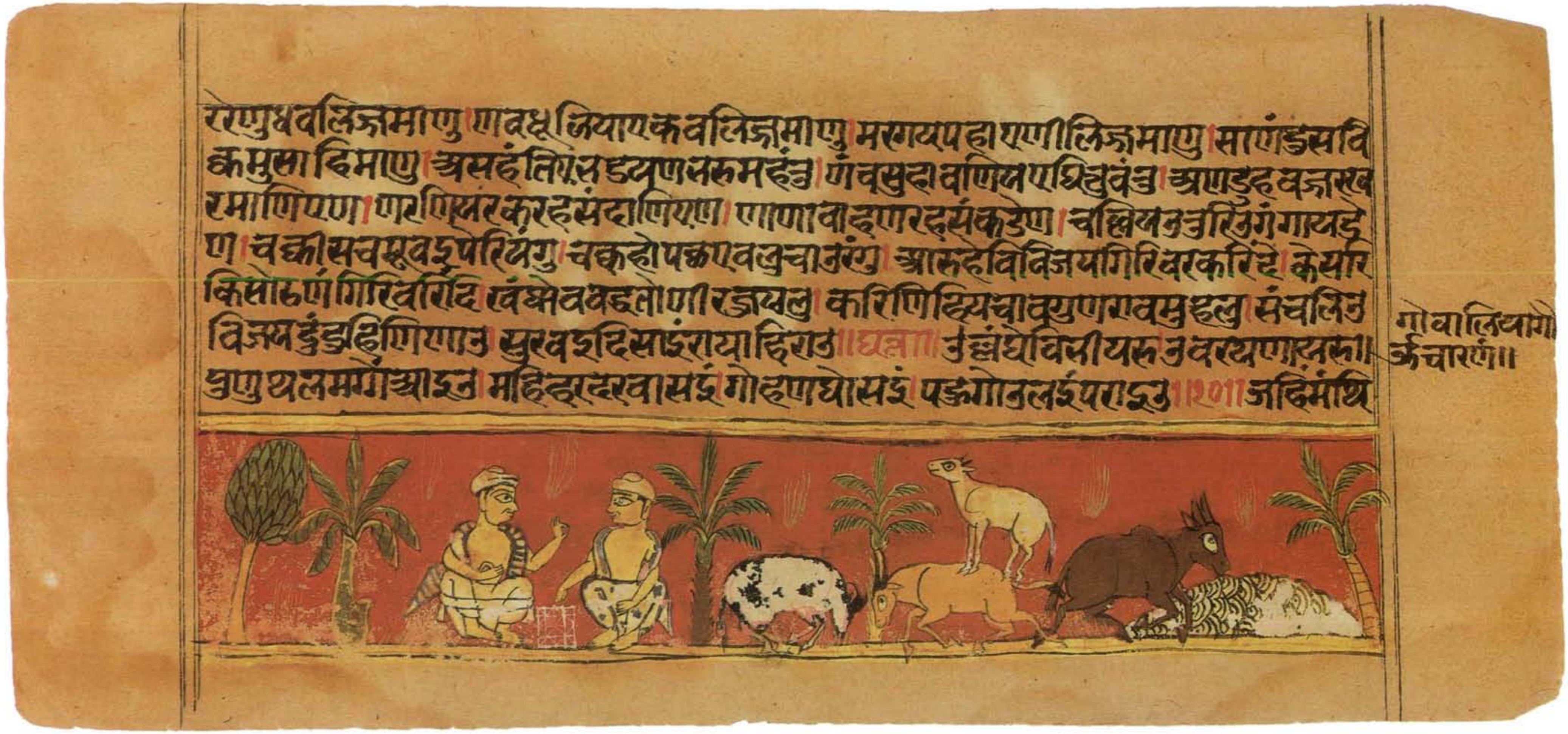

कपूर की धूल से धवल होता हुआ, वन की धूलों से ग्रस्त होता हुआ, मरकत मणियों से नीला होता हुआ, सानन्द पराक्रमी और स्वाभिमानी वह सैन्य जो महान् भटजन के भार को सहन न करने के कारण मानो वसुधारूपी वनिता के द्वारा पित्त की तरह उगल दिया गया हो। जो बैलों, खच्चरों और गधों के द्वारा मान्य है, नरसमूहों और ऊँटों के द्वारा अवलम्बित है, और नाना वाहनों तथा रथों से संकीर्ण है ऐसे गंगातट के किनारे-किनारे, चक्रवर्ती के सेनापति के द्वारा प्रेरित चतुरंग सेना रथ के पीछे-पीछे चली। राजाधिराज भरत भी गिरिवर पर सिंहकिशोर की तरह, विजयगिरि नामक गजवर पर आरूढ़ होकर, अपने कन्धों पर तूणीरयुगल बाँधे हुए और हाथ में लिये हुए धनुष की प्रत्यंचा के शब्द से मुखर होता हुआ नगाड़ों के शब्दों के साथ पूर्व दिशा की ओर चला।

घत्ता—भयंकर उपसमुद्र को पार कर वह फिर स्थलमार्ग पर आया। वह राजा पहाड़ों की घाटियों में बसे हुए गोधन घोषवाले गोकुलों में पहुँचा॥ १०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११

जहाँ अत्यन्त गाढ़ा दही बिलोया जाता है। अत्यन्त घनत्व किसी के लिए भी हितकारी नहीं होता। जहाँ गोपी ने मन्थक (मथानी) को खींच लिया है, वैसे ही जैसे गुणों से प्रिया के द्वारा प्रिय खींच लिया जाता है। सघन शब्द करते हुए मंदरीक (साँकल) से चाँपकर पकड़ा हुआ वह मन्थानक घूमता है। ''हो-हो, हला, गोपी मेरे साथ रमण करती है; लेकिन यह मथानी तुम्हारी कामपीड़ा शान्त नहीं कर सकती, इसे मत खींच।'' रस्सी से खींची गयी मथानी के द्वारा मानो इस प्रकार गाया जाता है? अत्यन्त मथे जाने से शिथिल शरीर क्या केवल दही ही स्नेह छोड़ देता है, दूसरा कोई स्नेह नहीं छोड़ता? जहाँ तक (छाछ) इसी प्रकार छोड़ दिया जाता है। ग्रामीणजन तक्र (तर्क, विचार, और छाछ) से क्या करते हैं? जहाँ पथिक घी-दूध पीते हैं और पथ के काम से मुक्त होकर सोते हैं। जहाँ गोपी ने नरप्रमुख को देखकर बछड़े की जगह कुत्ते को बाँध दिया। अपचित्त (अस्त-व्यस्त-चित्त) और प्रिय में लीन हुई गोपी ने घी छोड़ दिया और तक्र तपा दिया।

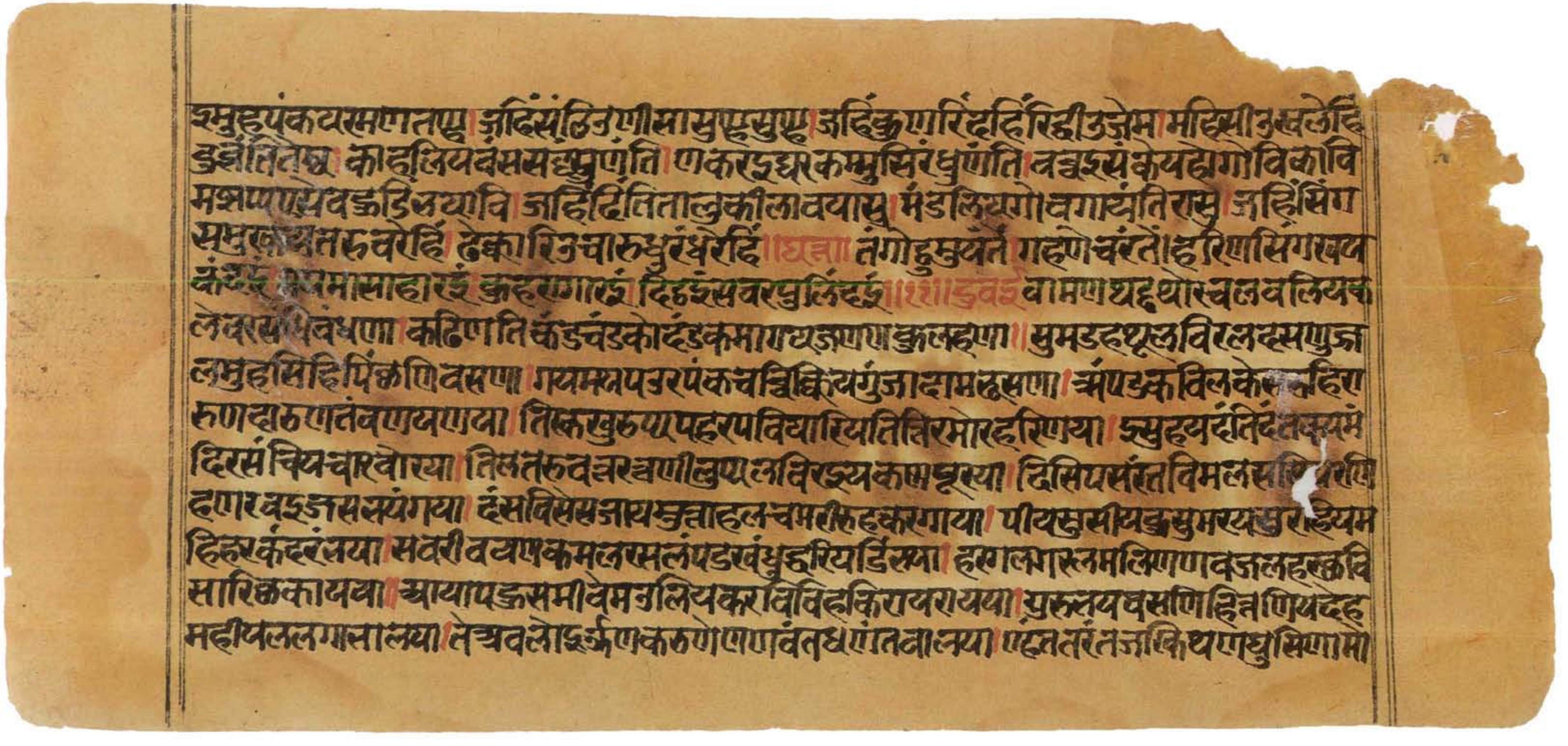

जहाँ राजा के मुखरूपी कमल से रमण करने की इच्छा रखनेवाली वधू गर्म उच्छ्वासों के साथ बैठी हुई थी। जहाँ खोटे राजाओं की ऋद्धि के समान भैंसें, खलों (खलों और दुष्टों) के द्वारा दुही जाती हैं। कोई गोपी काहल और वंशी का शब्द सुनती है, वह घर का काम नहीं करतीं और सिर धुनती हैं। कोई गोपी कृशोदरी और अनेक बच्चोंवाली होकर भी संकेत स्थान के लिए जाती है। जहाँ क्रीड़ा का अवकाश देनेवाली ताली बजाते हुए गोप मण्डलाकार होकर रास गाते हैं। जहाँ अपने सींगों से तरुवरों को उखाड़नेवाले वृषभों के द्वारा गम्भीर ढेक्का शब्द किया जाता है।

घत्ता—ऐसे उस गोकुल को छोड़कर, हरिण के सींगों और उखाड़ी हुई जड़ोंवाले शवर पुलिन्दों से गहन वन में जाते हुए उन्होंने पशुओं के मांसाहारों और पहाड़ों के मकानों को देखा॥ ११॥

१२

बौने तथा सघन स्थूल बल से जिनके शरीरों के जोड़ गठित हैं; कठोर बाणों से प्रचण्ड धनुष जिनका कुलक्रमागत पितृकुलधन हैं; छोटे स्थूल और विरल दाँतों से उज्ज्वल, जिनके मुखपर, मयूर पंख का आच्छादन है, गजमद की प्रचुर कीचड़ में सनी हुई गुंजामालाएँ ही जिनके आभूषण हैं, जो घुँघराले और कपिल केशों तथा खून से लाल और भयंकर आताम्र नेत्रोंवाले हैं; जिन्होंने तीखे खुरपों के प्रहारों से विदीर्ण कर मोरों और हरिणों को मार डाला है; जिन्होंने तीरों से आहत हाथियों के दाँतों से निर्मित घरों में अचार और बेर इकट्ठे कर रखे हैं, जिन्होंने ताल वृक्ष के पत्तों, लाल और नीले कमलों के कर्णफूल बना रखे हैं, जो दिशाओं में फैले हुए विमल चन्द्र के समान राजा के यश से भयभीत हैं, जिनके हाथों में वंश-विशेष में उत्पन्न मोती और चमरी गाय के बाल हैं, जो सुशीतल और कुसुमरजों से सुरभित महीधरों की गुफाओं का जल पीते हैं, जो शवरियों के मुखरूपी कमलों के रस के लम्पट और कन्धों पर अपने बच्चों को उठाये हुए हैं, जो शिव के कण्ठविष के समान मलिन (श्याम) और नवमेघों की छवि के समान शरीरवाले हैं, ऐसे विविध किरातराज हाथ जोड़े हुए राजा भरत के पास आये। भारी भय से जिन्होंने अपने शरीर और भालतल को धरती पर लगा रखा है, तथा जो अपने बालकों को झुका रहे हैं, ऐसे उन भील राजाओं को करुणापूर्वक देखकर वह राजा अपने परिजन के साथ उस गंगा नदी के द्वार पर पहुँचा, कि जिसमें नहाती और तैरती हुई यक्षिणियों के स्तन-केशर के आमोद से भ्रमर इकट्ठे हो रहे हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

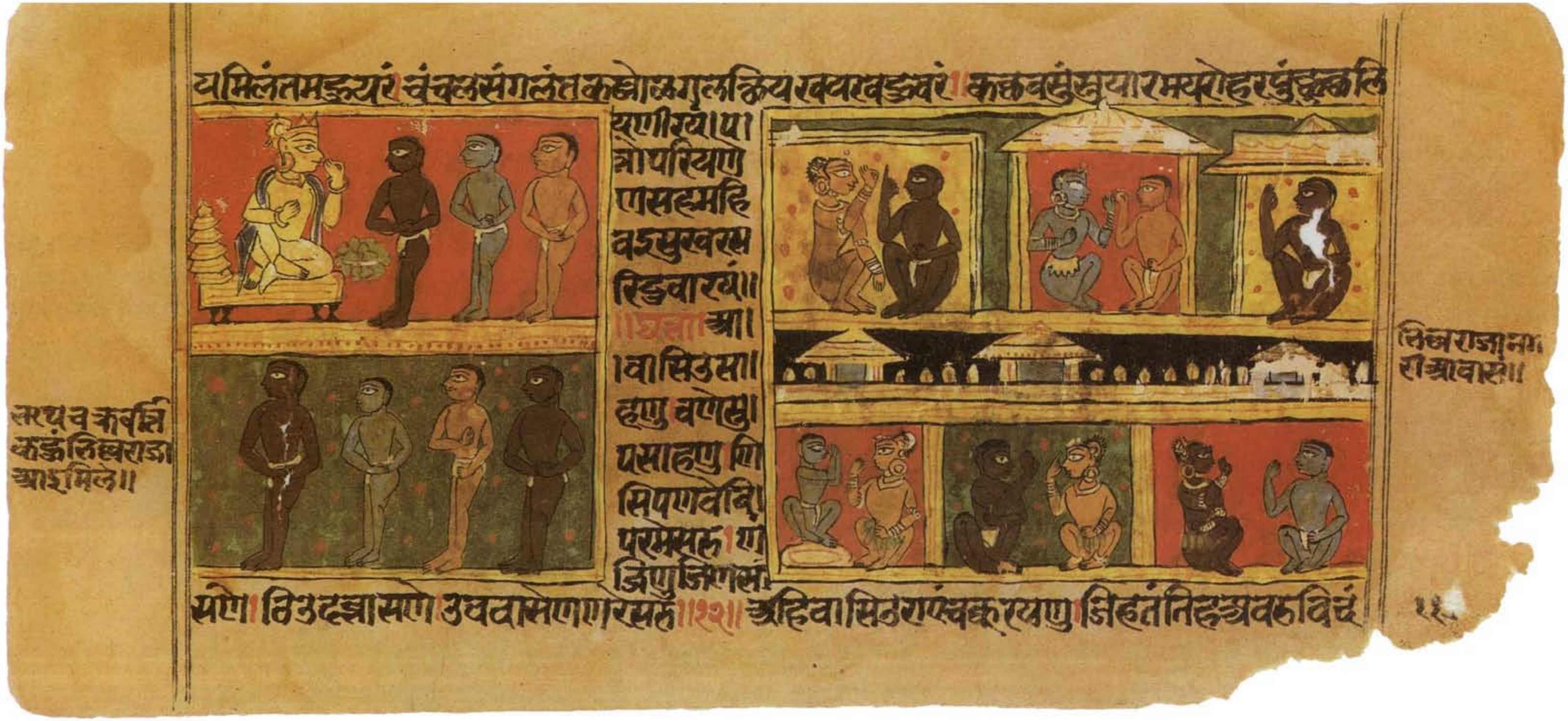

जिसमें चंचल और संघटित लहरों के द्वारा विद्याधर-वधुओं को उछाल दिया गया है। जिसमें कच्छप, शिंशुमार, मगर और मत्स्यों की पूँछों से जल उछल रहा है।

घत्ता—सुन्दर प्रसाधनों से युक्त सैन्य वन में ठहर गया। रात्रि में परमेश्वर को प्रणाम कर राजा भरत उपवासपूर्वक दर्भासन पर इस प्रकार बैठ गया, मानो जिन भगवान् जिनशासन में स्थित हो गये हों॥ १२॥

१३

राजा ने चक्ररत्न की पूजा की। जिस प्रकार उसकी की, उसी प्रकार दूसरे दण्डरत्न की पूजा की।

शुक के रंगवाले अभंग अश्वरत्न, और लौह शृंखलाओं से अलंकृत गजरत्न की (पूजा की)। आकाश में सूर्य निकल आया। वह पुरुषरत्न (भरत) अपने रथ पर आरूढ़ हो गया। वीरों के द्वारा प्रशंसनीय, कतिपय मनुष्यों के साथ, (मानो जैसे मानसरोवर के पंक में राजहंस हो) प्रहरणों (शस्त्रों) से परिपूर्ण, अत्यन्त महान् घूमते हुए रथचक्रों से चिक्कार करता हुआ, चंचल फहराते हुए पंचरंगे ध्वजों से सुन्दर, नाना मणिकिरणों से आलोकित, लटकती हुई किंकिणियों से रुनझुन करता हुआ, देवेन्द्रों के मन में भय उत्पन्न करता हुआ, वह रथ, जिन्होंने समुद्र के जल में अपने पैरों को धोया है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिनके मुँह के सम्मुख तरंगें व्याप्त हैं (आन्दोलित हैं); जो सारथि की चर्मयष्टियों (कोड़ों) से आहत हैं, ऐसे हवा के वेगवाले अश्वों के द्वारा खींचा गया। छह खण्ड धरती के स्वामी राजा भरत ने समुद्र को देखा।

घत्ता—वह समुद्र हर्ष से गरजता है, भरत की सेवा करता है। प्रभु किसके लिए अच्छे नहीं लगते। पवन से आहत लहरों रूपी अपनी सुन्दर हाथरूपी डालों से मानो रत्नाकर नृत्य कर रहा है॥ १३॥

१४

जैसे वह मोतीरूपी अक्षत फेंक रहा है, जल ऐसा मालूम होता है मानो अर्घांजलि का जल हो। भय के कारण जैसे उसने राजा (भरत) की मर्यादा ग्रहण कर ली हो, जैसे वह पानी के भीतर के पहाड़ दिखा रहा हो। मानो चलते हुए और जल-मानवरूपी अनुचरों की अँगुलियों से स्फुरित जलमदगज, प्रवर प्रवाल और माणिक्य उपहार में दे रहा हो; मानो किनारों के लतागृह दिखा रहा हो। मानो बड़वानलरूपी प्रदीप जला रहा हो, मानो घेरकर जम्बूद्वीप की रक्षा कर रहा हो। जिस प्रकार शंखों को बजाता है, उसी प्रकार शंखों को धारण करता है, प्रभु की आज्ञा से किंकर क्या नहीं करता? जिसमें विविध जलचरों के शब्द हो रहे हैं, मानो ऐसे बड़वामुखों से वह कहता है कि हे राजन्! आपको विद्रुम की लालिमा से क्या प्रेम? कि जिसके पिता त्रिलोक पितामह हैं। हे महीपति, आप अपनी तीखी भल्लिका की ओर न देखें, आपकी बात मेरे लिए मर्यादा की रेखा है। मैं जबतक यहीं स्थिर होकर रहता हूँ तबतक महीतल का उल्लंघन नहीं करूँगा। मैं अब आपकी मुद्रा से अंकित समुद्र हूँ। इसलिए मुझपर कुछ भी भयंकर ईर्ष्या नहीं करिए।

घत्ता—वह अपना खारापन नहीं छोड़ता।

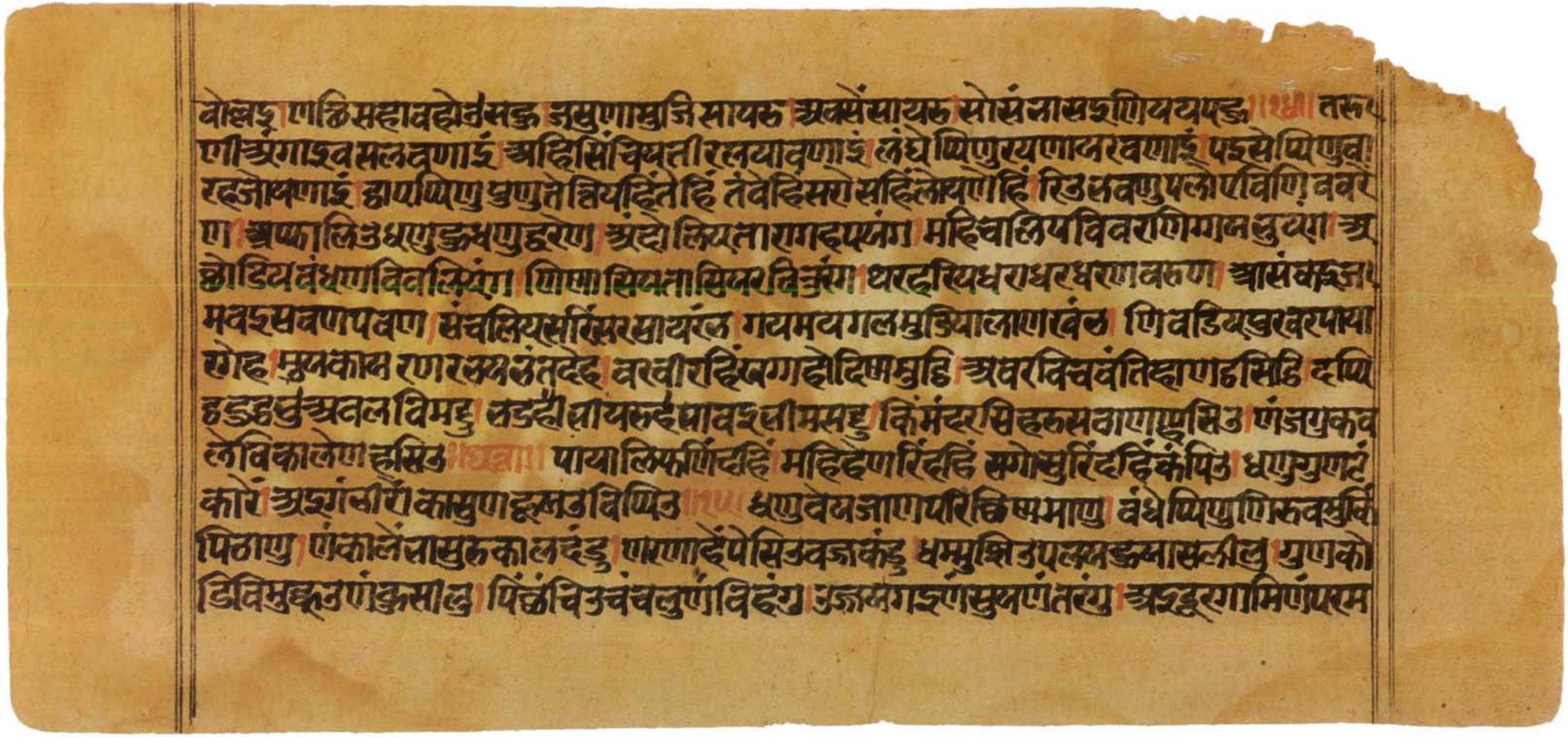

लोग यह क्यों कहते हैं कि स्वभाव की दवा नहीं होती। जिसका नाम समुद्र है (सायर-सागर); वह अवश्य ही अपने स्वामी से सायर (सादर) बात करता है॥ १४॥

१५

जो तरुणियों के अंगों की तरह सलवण (लावण्यमय, सौन्दर्यमय) है, और जिसके किनारों के लतावन सिंचित हैं, ऐसे समुद्रजलों में बारह योजन तक प्रवेश कर और वहीं स्थित होकर अपने लाल-लाल तथा क्रोध से भरे हुए नेत्रों से शुभ भवन को देखकर धनुर्धारी राजा ने अपने धनुष को आस्फालित किया। उससे तारा ग्रह और पतंग (सूर्य) आन्दोलित हो उठे। जिसमें बिलों से नाग निकल आये हैं, ऐसी धरती चलित हो गयी। अपने बन्धनों को खींचते हुए और काँपते हुए शरीरवाले सूर्य के घोड़े त्रस्त होकर नष्ट हो गये। पर्वत धरण (इन्द्र) और वरुण थर्रा उठे। यम, वैश्रवण और यम आशंकित हो उठे। नदी, सरोवर और समुद्र का जल संचालित हो उठा, जिनके आलानस्तम्भ मुड़ गये हैं ऐसे मैगल हाथी भाग गये; पुरवर, परकोटे और घर गिर पड़े। भय से भ्रान्त-शरीर कायर नर मर गये। श्रेष्ठ वीरों ने अपनी तलवारों पर दृष्टि डाली। दूसरे कहने लगे कि हा, सृष्टि नष्ट हो गयी। दर्पिष्ठ, दुष्ट! बाहुबल का मर्दन करनेवाला, योद्धाओं को डरानेवाला वह भयंकर शब्द ऐसा लगता है कि क्या मन्दराचल का शिखर अपने स्थान से खिसक गया है? क्या विश्व को निगलने के लिए काल ने अट्टहास किया है?

घत्ता—पाताललोक में नागेन्द्र और धरती पर नरेन्द्र तथा स्वर्ग में सुरेन्द्र काँप उठे। अत्यन्त गम्भीर धनुष की डोरी की टंकार से किसका हृदय भयाक्रान्त नहीं हुआ?॥ १५॥

१६

धनुर्वेद के अनुसार ज्ञात और निश्चित मानवाला बाण राजा भरत ने किसी अनुपम स्थान को लक्ष्य बनाकर प्रेषित किया, मानो काल ने भास्वर कालदण्ड प्रेषित किया हो। प्रलय की आग की लीलावाला वह बाण धम्मुज्झित (धर्म और डोरी से मुक्त), कुशील की तरह मानो गुणकोटि से (गुणों की परम्परा से मुक्त, डोरी और धनुष से मुक्त), विमुक्त वह (बाण) मानो विहंग (पक्षी) की तरह, पिच्छ (पंख और पुंख) से सहित था, सुजन के हृदय की तरह अत्यन्त सीधी गतिवाला था, परम ज्ञान की तरह अत्यन्त दूर तक गमन करनेवाला था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुक्लध्यान की तरह अत्यन्त शुद्धिवाला था, भुजंग की तरह अत्यन्त बड़े आकारवाला था, दुष्ट के प्रसंग की तरह प्राणों का अत्यन्त अपहरण करनेवाला था। वह बाण अत्यन्त गुणी (मुनि और धनुष से) से विमुख होकर इस प्रकार गया मानो खोटे शास्त्रों की भक्ति से आहत मनुष्य हो, लोभी के चित्त के समान वह अति लोह घडिउ (अत्यन्त लोभ, और लेह से रचित) था। वह विद्याधरत्व की तरह मानो आकाश में अत्यन्त गमन करनेवाला था। मानो चरमशरीरी की तरह शीघ्र मोक्षगामी था। मानो नदीप्रवाह की तरह अत्यन्त कठिन भेदनवाला था, वही (तच्चिय) नदीप्रवाह और महान् तात्त्विक की तरह ठाणालउ (नावों से युक्त और नमनशील) था, वह मानो हुंकार से प्रेरित सुमन्त्र था।

घत्ता—भरत ने हरित और नीले मणियों से रचित मागधराज के घर में स्वर्णपुंख से उज्ज्वल तीर फेंका,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो ऐसा लग रहा था मानो अपनी कान्ति से काजल को पराजित करनेवाले यमुना नदी के जल में शतदल कमल खिला हुआ हो॥ १६॥

१७

भौंहों के भंग से भयंकर भृकुटी धारण करनेवाला, विस्फुरित दाँतों से ओठों को चबाता हुआ, हजारों देवयुद्धों में भयंकर दुर्दर्शनीय शत्रुओं को क्षय करनेवाला

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

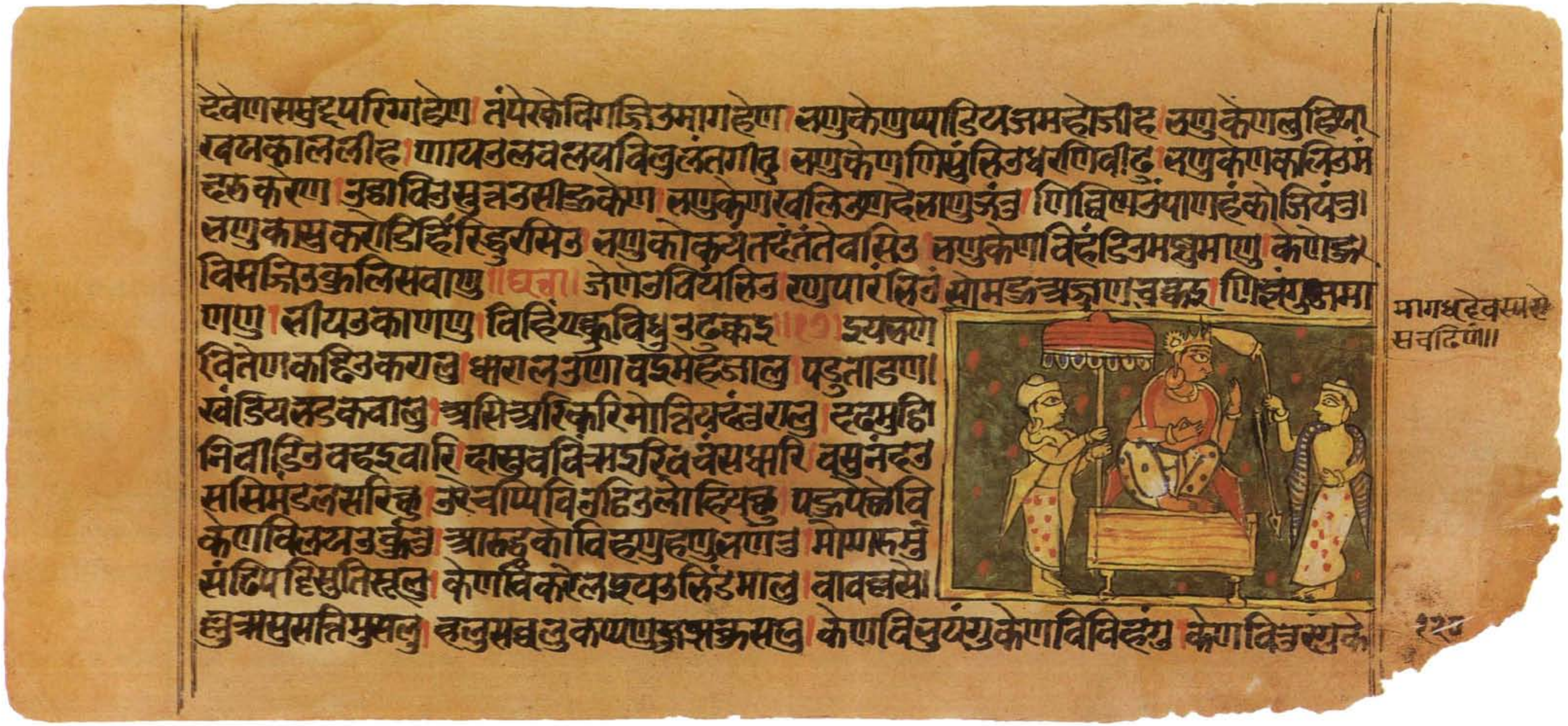

और समुद्र का परिग्रह करनेवाला वह मागधदेव उस तीर को देखकर गरज उठा। वह बोला—''बताओ यम की जीभ किसने उखाड़ी, बताओ क्षयकाल की रेखा को किसने पोंछा? बताओ नागकुल के वलय के द्वारा गृहीत धरिणीपीठ को किसने नष्ट कर दिया? बताओ किसने हाथ से मन्दराचल उठाया? सोते हुए सिंह को किसने जगाया? बताओ आकाश में जाते हुए सूर्य को स्खलित किसने किया? कौन जीते जी अपने प्राणों से विरक्त हो गया? बताओ किसके सिर पर कौआ बोला है? बताओ यम के दाँतों के भीतर कौन बसा हुआ है? किसने मेरे मान को भंग किया है? किसने यहाँ यह वज्रबाण छोड़ा है?

घत्ता—जिसने यह तीर फेंका है और युद्ध प्रारम्भ किया है, वह आज मुझसे नहीं बच सकता, अनिष्ट यममुख या भयंकर कानन, दोनों में से एक, निश्चित रूप से उससे भेंट करेगा॥ १७॥

१८

यह कहकर उसने कुशल आघात से जिसने योद्धा समूह को नष्ट किया है, जो शत्रुरूपी गज के मोतीरूपी दाँतोंवाली है, ऐसी भयंकर तलवार इस प्रकार निकाल ली जैसे धारावर्षी मेघजाल हो। मजबूत मुट्ठियों से पीड़ित जो दास की तरह जल धारण करती है, जो विन्ध्याचल के समान वंश (बाँस और कुटुम्ब) को धारण करनेवाली है, चन्द्रमण्डल के समान उस तलवार को अपने उर में चाँपकर, लाल-लाल आँखोंवाला मागधेश वसुनन्द उठा। स्वामी को देखकर किसी ने भाला ले लिया, कोई 'मारो-मारो' कहता हुआ क्रुद्ध हो उठा। किसी ने मुद्‌गर, भुशुण्डी, फरसा, त्रिशूल, हल और भिन्दिमाल अपने हाथ में ले लिया। किसी ने वावल्ल, सेल, झस, शक्ति, मूसल, हल, सव्वल और युद्धकुशल कम्पन ले लिया। किसी ने भुजंग, किसी ने विहंग (गरुड़), किसी ने तुरंग,

किसी ने मातंग (गज), किसी ने जीभ हिलाता हुआ बाघ, किसी ने तीव्र नखों के समूहवाला सिंह, किसी ने ऊँट और श्वापद को प्रेरित किया। कोई तबतक रथसहित युद्ध में दौड़ा।

घत्ता—जिन्होंने कुल की शान्ति स्थापित की है ऐसे मागध-मन्त्रियों ने प्रणाम कर उस तीर को उठाया

और पूर्ण चन्द्रमा के समान मुखवाले उन्होंने स्वच्छ नेत्रों से राजा भरत के उस तीर को देखा॥ १८॥

१९

उसने (मागधेश वसुनन्द ने) उसमें लिखे हुए हस्ताक्षर देखे—''जो देव, मनुष्य, विद्याधर और देशान्तर के विविध निधियों के स्वामी तथा अपने कालपृष्ठ नामक धनुष पर तीर साधे हुए, ऋषभनाथ के पुत्र राजा भरत को नमस्कार नहीं करते, वे निश्चित ही दो खण्ड होकर मरेंगे।'' तब अवधिज्ञान का प्रयोग कर और अपने मन में प्रसन्न होकर, उन्होंने अपने स्वामी को जाकर वह तीर दिखाया और कहा कि ''दुष्टजनों को चूर-चूर करनेवाला चक्रवर्ती राजा धरती पर उत्पन्न हो गया है। हे मगधराज, युद्ध के आग्रह से क्या? शस्त्र छोड़ो, क्यों ग्रह से प्रवंचित होते हो। यदि आज आप उसे स्वीकार नहीं करते, तो हे देव, न तो तुम हो और न हम लोग। तुम अकेले नहीं, हे देव, दूसरे भी सैकड़ों देवों ने उसके घर में दासता स्वीकार कर ली है, जो भाग्य में लिखित है, उसका क्या विषाद करना? प्रणाम करके राजाधिराज से भेंट की जाये।'' इन शब्दों से उसने अपना घमण्ड वैसे ही छोड़ दिया जैसे मन्त्र के प्रभाव से साँप स्थित हो गया हो।

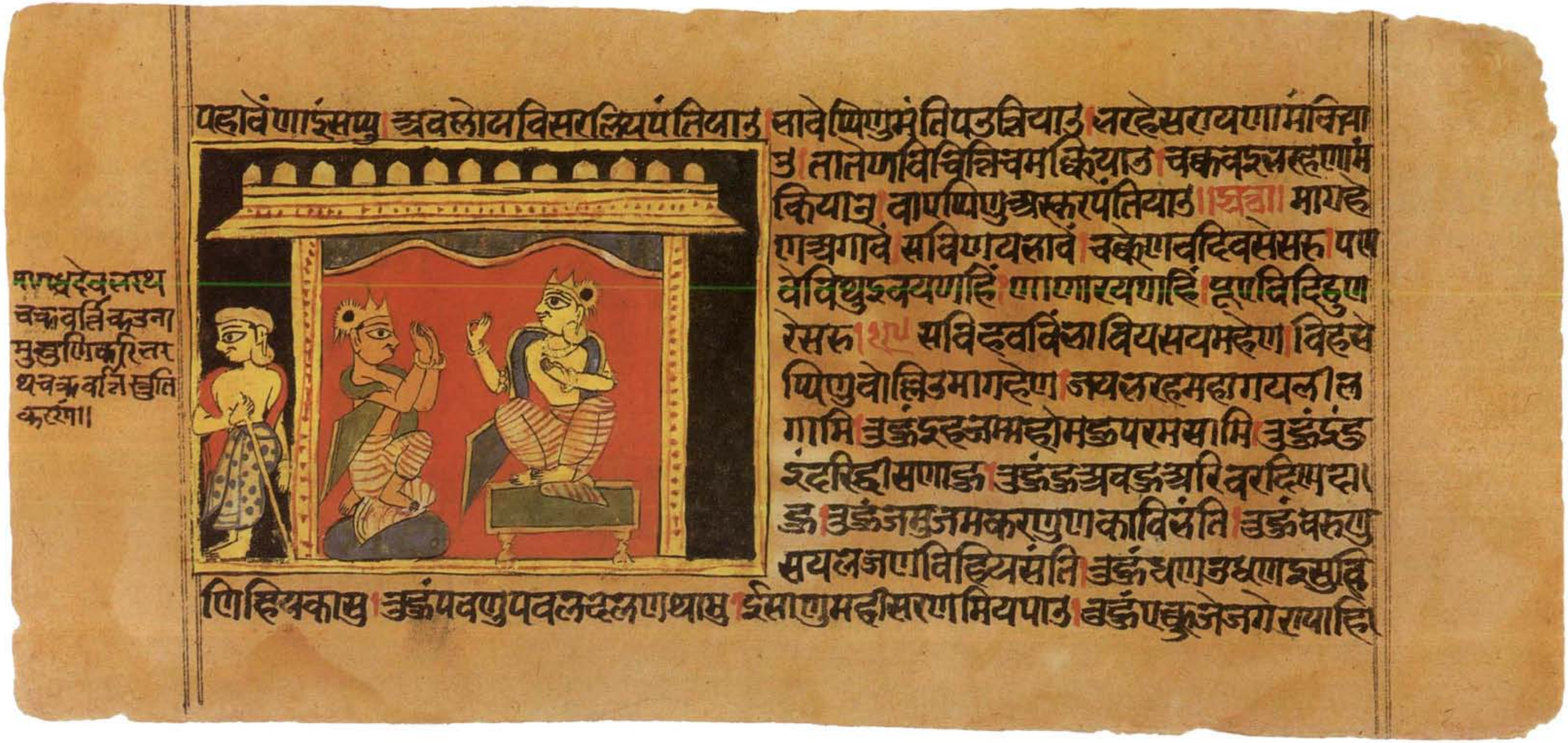

बाण की सरल पंक्तियाँ पढ़कर तथा मन्त्रियों के वचनों का विचार कर—

घत्ता—गर्वरहित मागध नरेश ने विनयभाव से प्रणाम कर और नाना रत्नों और स्तुति-वचनों से पूजा कर राजा को उसी प्रकार देखा, जिस प्रकार चक्रवाक के द्वारा सूर्य देखा जाता है॥ १९ ॥

२०

अपने वैभव से इन्द्र को विस्मित करनेवाले मगध ने हँसकर कहा—''हे महागजलीलागामी! आपकी जय हो, आप मेरे इस जन्म के स्वामी हैं, इन्द्र और कुबेर के स्वामी आप इन्द्र हैं। शत्रुप्रवर को दाह देनेवाले आप अग्नि हैं, आप दम और यमकरण हैं, इसमें किसी प्रकार की भ्रान्ति नहीं है। सुधियों के लिए निहित काम, आप धन देनेवाले कुबेर हैं, प्रबल शत्रुदल का दलन करने की क्षमता रखनेवाले पवन हैं? राजाओं को अपने चरणों में झुकानेवाले ईशानेन्द्र हैं। आप ही विश्व में एकमात्र राजाधिराज हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुम्हारी असिवररूपी जलधारा से कौन-कौन, शत्रुराजारूपी वृक्ष हरियछाय (जिनकी छाया/कान्ति छीन ली गयी है, ऐसे तथा हरी-भरी कान्तिवाले) नहीं हुए। आपकी असिजलधारा से विश्व में किसकी साँस (श्वास और सस्य) नहीं बढ़ी? आपकी असिरूपी जलधारा से अत्यधिक जलवाला होते हुए भी समुद्र त्रस्त हो उठता है और अपना गर्व छोड़ देता है। आपकी असिरूपी जलधारा से शत्रुओं की अनेक आँखों के अश्रुबिन्दु और अधिक हो गये। तुम्हारी असिरूपी जलधारा से कुल में नित्य ही अशोक मुक्त-भोग हो गया।

घत्ता—हे भरत प्रजापति और प्रथम महीपति, पृथ्वीनाथों के द्वारा चाहे जाते, चरणों में प्रणाम करते हुए उनके द्वारा आप वैसे ही सेवित हैं, जैसे कि ताराओं और नक्षत्रों के द्वारा जिन तथा सूर्यचन्द्र सेवित हैं ॥ २० ॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त महापुरुष में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का मागध प्रसाधन नाम का बारहवाँ अध्याय समाप्त हुआ ॥ १२ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

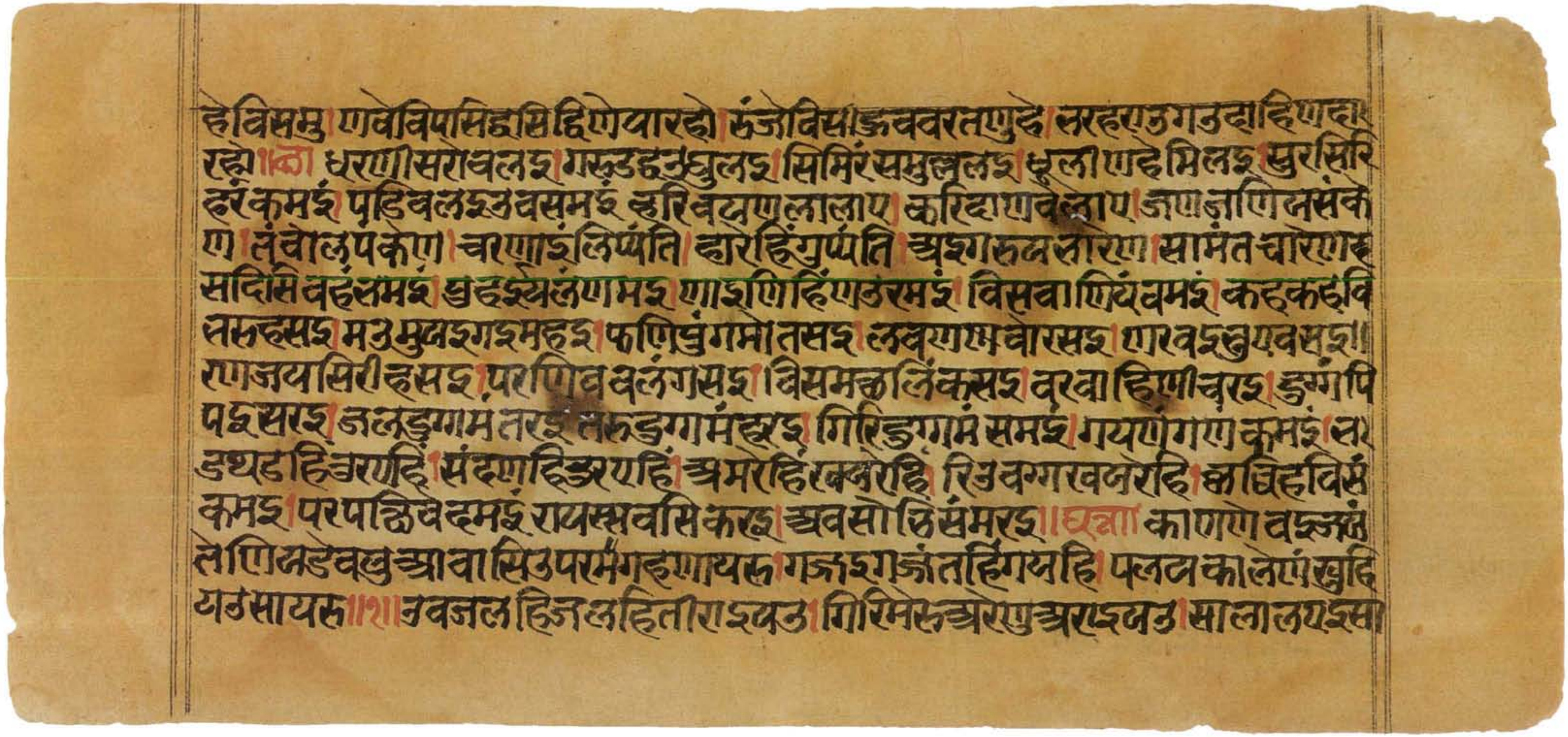

सन्धि १३

आक्रमण करने में विषम मागधराज को सिद्धकर तथा प्रसिद्ध सिद्धि के नेता जिन भगवान् को प्रणाम कर, सिंह के समान गर्जनाकर, राजा भरत ने दक्षिण द्वार के वरदामा तीर्थ के लिए प्रस्थान किया।

१

राजा चलता है। गरुड़ध्वज फहराता है। सेनाएँ तेज गति से चलती हैं, धूल आकाश में छाती है। सुरलक्ष्मी के घर का अतिक्रमण करती हैं। वह घोड़ों के मुखों की लारों, हाथियों की मद-जल-रेखाओं से प्रतिबल सेनाओं को शान्त करती हैं। लोगों को शंका उत्पन्न करनेवाले पानों (ताम्बूलों) की कीचड़ से पैर लथपथ हो जाते हैं, हारों में उलझ जाते हैं। अत्यन्त भारी भार से तथा सामन्तों के चलने से दसों दिशापथ घूमने लगते हैं, पृथ्वीतल झुक जाता है। नागिनें रमण नहीं करतीं, विष की ज्वाला उगलने लगती हैं। किसी प्रकार भार सहन करती हैं, मद छोड़ देती हैं, कहीं भी जाना चाहती हैं। नागराज त्रस्त होता है। लवणसमुद्र गरजता है। रण-विजय श्री राजा के हाथ में निवास करती है और हँसती है। शत्रु-राजाओं के सैन्य को ग्रस्त करती है, विषम-स्थलों को चूर-चूर करती है; श्रेष्ठ सेना चलती है, दुर्ग में प्रवेश करती है जलदुर्ग को पार करती है, तरुदुर्गों का अपहरण करती है। गिरिदुर्गमों को शान्त करती है। गगनांगन का अतिक्रमण करती है; भटघटाओं, घोड़ों, रथों, गजों, देवों, विद्याधरों, शत्रुवर्ग के विद्याधरों के द्वारा छह प्रकार की सेना संक्रमण करती है और शत्रुराजा का दमन करती है, राजा को वश में लाती है। जो सेना वश में नहीं होती वह प्राणों से वियुक्त होती है।

घत्ता—वैजयन्त के निकट वन में उसने शत्रु को ग्रहण करनेवाली सेना को ठहरा दिया, जो गजों के गरजने पर इस प्रकार लगती है, मानो प्रलयकाल में समुद्र क्षुब्ध हो उठा हो ॥ १ ॥

२

उपसमुद्र वैजयन्त और समुद्र के किनारों पर ठहरा हुआ पहाड़ की गेरू की धूल से शोभित वह सैन्य शाल वृक्षों के घरों में नृत्यशालाओं से सहित था,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तालवृक्षों के घर में तूर्यों के तालों से महनीय था, ऊँची अटवी में वह बलात्कार करनेवाला था, रक्ताशोक वृक्ष की गोद में अशोक को धारण कर रहा था। चम्पक वृक्षों में वह स्वर्ण से युक्त था। पुन्नागप्रवर में श्रेष्ठ चरितवाला था। शिरीष वृक्षों में शिरीष (मुकुट) से प्रसादित था। अनेक वंशावृक्षों में जो नृवंशों से विराजित था, अपने सुन्दर रूप में स्थित वह वेश्याभवन के समान था, भुजंग वृक्षों से सहित होने पर उसमें लम्पट घूम रहे थे, मयूरों के सुन्दर शब्दों में

वह मंगल ध्वनि से गम्भीर था। नदियों के कूटतटों पर वह क्रूर शत्रुओं के वध में आदर करनेवाला था। शाकवृक्षों से सहित होनेपर प्रभु के साथ वह विषादहीन था। मातंग (आम्रवृक्ष) में स्थित होने पर वह लक्ष्मी और चन्द्रमा के समान था। कवि (राजा विशेष) के छिपने पर वह कवियों के द्वारा प्रशंसनीय था, जो हरिवर के निकट होनेपर हरिवर से भूषित था। दूसरों की लक्ष्मी को ग्रहण करने में उत्कण्ठित समस्त सैन्य इस प्रकार वन में ठहर गया। सूर्य अस्त हो गया। दिशाएँ अन्धकार से भर उठीं। राजा रात में उपवास में स्थित हो गया।

घत्ता—पृथ्वी के स्वामी ने निज कुलचिह्नों, धनुषों और चक्रों की पूजा की। महान् शत्रुओं का हरण करनेवाले मन्त्र का ध्यान किया। उस द्वीप के किवाड़ खुलकर रह गये॥ २॥

३

उसी अवसर पर सूर्य उग आया। भरतेश ने जिनवरेन्द्र को नमस्कार किया। उसने शीघ्र अपना रथ इस प्रकार हाँका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

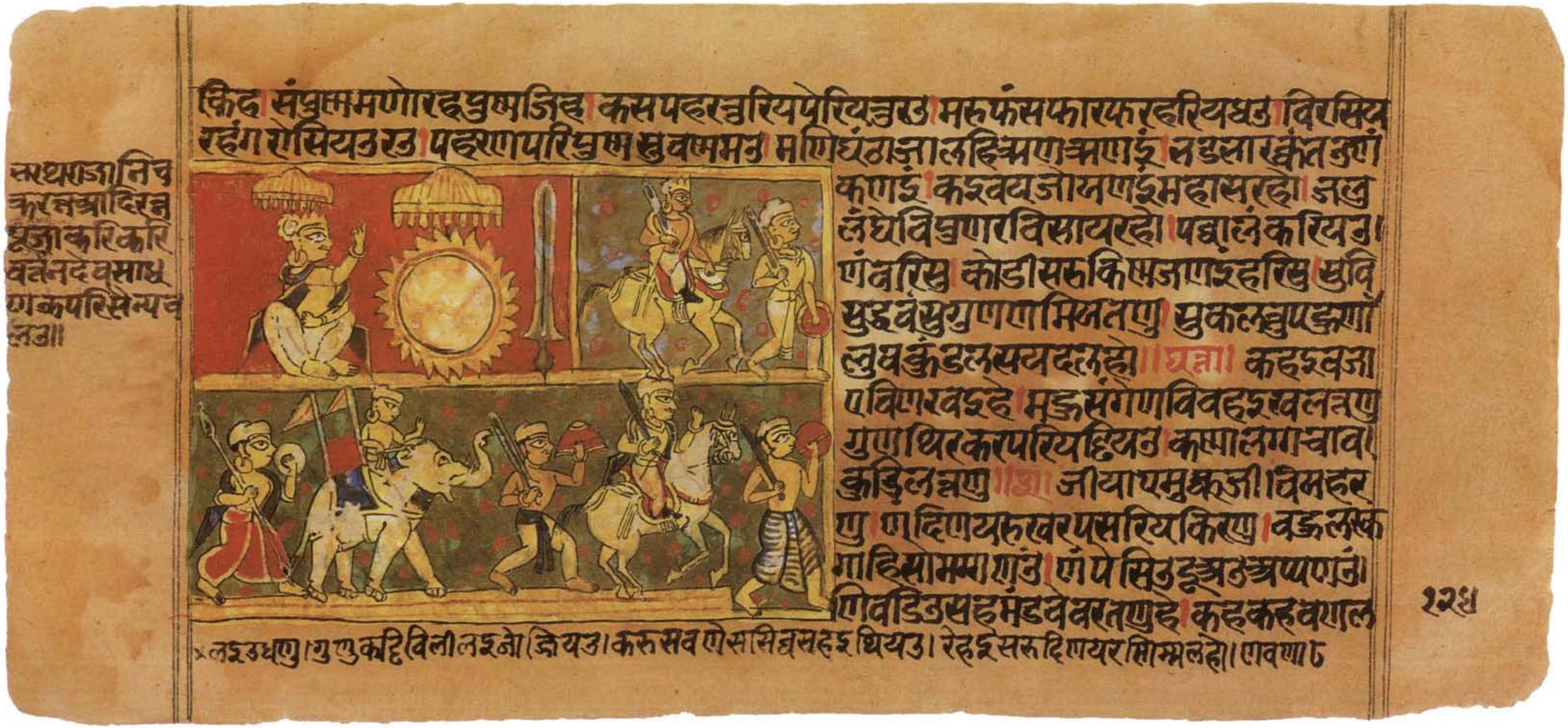

कि जैसे सम्पूर्ण सुन्दर पुण्य हो। कोड़ों के प्रहारों से घोड़े शीघ्र प्रेरित हो गये, हवा के स्पर्श के विस्तार से ध्वज फहरा उठे। शब्द करते हुए चक्रों से साँप क्षुब्ध हो उठे। रथ प्रहरणों से परिपूर्ण और स्वर्णमय था। मणियों के घण्टाजालों से जो झनझना रहा था, मानो योद्धाओं के भार से आक्रान्त होकर शब्द कर रहा हो, महासर (जल या स्वर) वाले समुद्र के जल को कई योजनों तक लाँघने के बाद राजा ने धनुष हाथ में ले लिया। कोटीश्वर (धनुष) क्या पर्व की तरह, पर्वालंकृत (उत्सवों से अलंकृत/गाँठों से अलंकृत) हर्ष उत्पन्न नहीं करता। वह सुकलत्र की तरह सुविशुद्ध वंश (कुलीन बाँस) था, तथा उसका शरीर गुणों से (दया नम्रतादि गुण/डोरी) से नमित था। डोरी खींचकर कानों तक लीलापूर्वक ले जाया गया हाथ ऐसा शोभित हो रहा था, मानो श्रवण नक्षत्र में चन्द्रमा स्थित हो। उसपर तीर इस प्रकार सोह रहा था जैसे सूर्य से निर्मल (विकसित) कुण्डलरूपी शतदल पर नव दण्ड नाल हो।

घत्ता—डोरी और स्थिर हाथ से आकर्षित कानों तक लगा हुआ वह (तीर) जैसे जाकर राजाओं से धनुष की कुटिलता कहता है कि वह मेरे साथ भी दुष्टता धारण करता है॥ ३॥

४

ज्या (प्रत्यंचा) से विमुक्त जो जीवन का हरण करता है, मानो प्रखर प्रसरित किरणोंवाला सूर्य हो। वह मानो मार्गण (बाण/याचक) है जो बहुलक्ष्यग्राही है। मानो अपना प्रेषित दूत है। वह जाकर वरदामतीर्थ के राजा के सभामण्डप में गिर पड़ा। उसके शरीर में किसी प्रकार लगा भर नहीं।

स्वर्णपुंख से आलोकित उसे राजा ने उठाकर देखा। देवों और दानवों की दर्पलीला का अपहरण करनेवाले राजा के नाम के ये अक्षर उसने उसमें देखे—"अरविन्द और चन्द्रमा के समान विमलमुख आदि जिनेश्वर के पुत्र मुझ भरत की जो-जो सेवा नहीं करता वह चाहे नाग, नर और अमर हो, मुझसे मरेगा।" तब उस राजा ने भी इसकी इच्छा की और अपने थोड़े पुण्य की निन्दा की। वह स्वयं वहाँ गया जहाँ राजा भरत सागर के मध्य में तीरों से अंचित था।

घत्ता—अपना नाम, गोत्र और कुल बताकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसने शत्रु का प्रतिहार करनेवाले धरती के राजा को प्रणाम किया। देवों को भी तुच्छ धर्म के फल से लक्ष्मी हाथ लग जाती है ॥ ४ ॥

५

इन्दीवर के समान नेत्रवाला स्वच्छ मन बरतनु की धरती पर अपने शरीर को झुकाते हुए वह कहता है—"तुम्हारा शरीर युद्धों का निग्रह करनेवाला है, तुम्हारा सन्धान पूजा का कारण है। हे स्वामी, तुमने जिस पर सर-सन्धान किया है उसके शरीर की सन्धियाँ गीध खा जाता है। जिसका पिता स्वयं अनिन्द्य जिनेन्द्र हैं, हे स्वामी! पुण्यों के बिना तुम्हें कौन पा सकता है? लो यह हारावलि, स्वीकार करो, मानो यह धरती पर पड़ी हुई तारावलि है। लो देवभूमि के वृक्षों (कल्पवृक्षों) से उत्पन्न नित्य नव-नव पुष्प लीजिए। नूपुर लें, कंकण लें, घन-घन दिव्य शस्त्र लें।

श्रेष्ठ दिव्यांग वस्त्र लें, दूध की तरंगों की तरह चामर स्वीकारें, जिस प्रकार जीव के लिए अभ्युद्धरण है, उसी प्रकार तुम्हीं मेरे लिए शरण हो।'' यह सुनकर भरत ने कहा, ''इसे और दूसरे को मैंने बन्धनमुक्त किया, इसे लेकर अपने घर आओ और मेरे आज्ञाकारी होकर रहो।''

घत्ता—''मेरा राजा यश से पूरित किया करता है, द्रव्यविलास और विस्तार का क्या वर्णन करूँ? विश्व में अभिमान धन ही उत्तम है, क्या यह वचन तुमने नहीं सुना''॥५॥

६

खिले हुए वृक्षों के रस को दरसानेवाली, शुकसमूह के पंखों की कतार से कुतूहल उत्पन्न करनेवाली द्वीप की सुहावनी सीमाओं को ग्रहण कर, वरतनु देव को जीतकर,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फिर जय के नगाड़ों के शब्दों से मिली हुई सेना राजा के साथ चली। वह पश्चिम दिशा के सम्मुख दौड़ी। सर्वत्र वह कहीं भी नहीं समा सकी। घोड़ों के मुखों से निकलते हुए फेन से उज्ज्वल वह सर्वत्र भटघटा व्याप्त भी। सर्वत्र हाथियों के मदजलों से सिंचित थी। सर्वत्र ध्वजमालाओं से अंचित थी। सर्वत्र गीतावलि से मुखरित थी। सर्वत्र चारण-समूह से ध्वनित थी। सर्वत्र छत्रों से दिशाएँ अवरुद्ध थीं। सर्वत्र सुरभि का रसगन्ध प्रसरित था। सर्वत्र भ्रमर मंडरा रहे थे, सर्वत्र चंचल चमर चल रहे थे। सर्वत्र विद्याधरों का संचार हो रहा था। सर्वत्र स्त्रियाँ गीत गा रही थीं। सर्वत्र ही कामदेव विलसित था।

घत्ता—वृक्षों को मलते, पहाड़ों को दलते, जल को सोखते हुए राजा के द्वारा निवेदित

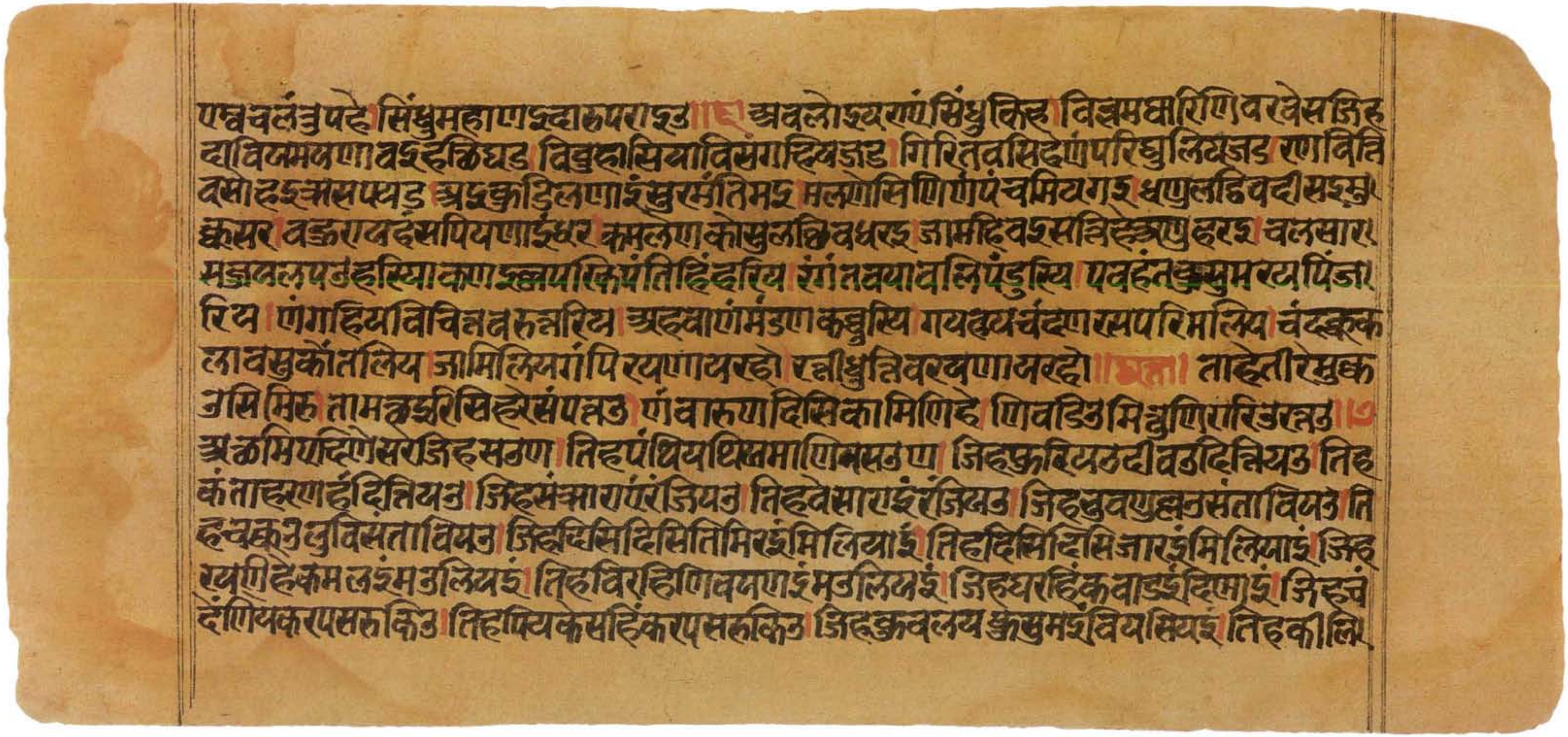

सन्य रास्त म चलता हुआ सिन्धु महानदा क द्वार पर पहुचा॥ ६ ॥

७

भरत ने सिन्धु नदी को इस प्रकार देखा, जैसे विभ्रम को धारण करनेवाली वरवेश्या हो। जैसे मद का प्रदर्शन करनेवाली हस्तिघटा हो, विबुधों (देवों/पण्डितों) के आश्रित होते हुए भी जिसने जड़ (मूर्ख/जल) संगृहीत कर रखा है। वह वन की आग की तरह है जो परिघुलियजड (जिसमें जड़ नष्ट हो गया/जल घुल गया है), वह युद्धवृत्ति झसपयड (जिसमें प्रकट है मछली और तलवार) की तरह शोभित है। जो मानो बृहस्पति की मति की तरह अत्यन्त कुटिल है, जो मानो मोक्षगति की तरह मल का नाश करनेवाली है, जो धनुर्यष्टि की तरह मुक्तसर (मुक्त बाण और मुक्त तीर) है, जिसके लिए धरा की तरह अनेक राजहंस (श्रेष्ठ राजा और हंस) प्रिय हैं, जो कमल की तरह कोशलक्ष्मी को धारण करती है, जो राजा की शक्ति का अनुसरण करती है, चंचल सारसरूपी पयोधरों को धारण करनेवाली जो शुक के पंखों की कतारों से हरित है (हरी है) खेलते हुए बलाकाओं से जो सफेद है, बहते हुए कुसुमों के परागों से जो नीली है, मानो जिसने विचित्र श्रेष्ठ उत्तरीय धारण कर रखा है, अथवा जो शृंगार के कारण रंग-बिरंगी है। गज, अश्व के चन्दन के (लेप के) रस से मिश्रित और मयूरपिच्छों के कुन्तलों वाला जा जाकर रत्नाकर स उसा प्रकार मिल जाता ह, जिस प्रकार काइ स्त्रा नागरजन स मिल जाता ह।

घत्ता—उसके किनारे भरत ने डेरा डाला, इतने में सूर्य अस्ताचल पर पहुँच गया। मानो पश्चिम दिशारूपी कामिनी में अत्यन्त अनुरक्त मित्र (सूर्य) गिर पड़ा हो॥ ७॥

८

दिनेश्वर के अस्त होने पर जिस प्रकार पक्षी स्थित हो गये उसी प्रकार शकुन को माननेवाले पथिक भी स्थित हो गये। जिस प्रकार दीपकों की दीप्तियाँ स्फुरित हो उठीं उसी प्रकार कान्ताओं के अधरों और नखों की दीप्तियाँ भी। जिस प्रकार सन्ध्याराग से लोक रंजित हो उठा, उसी प्रकार वह वेश्या राग से। जैसे विश्व सन्तापित हुआ, उसी प्रकार चक्रकुल भी। जिस प्रकार दिशा-दिशा में अन्धकार मिल रहे थे, उसी प्रकार दिशा-दिशा में जार मिल रहे थे। जिस प्रकार रात्रि में कमल मुकुलित हो गया, उसी प्रकार विरहिणियों के मुख मुकुलित हो गये थे। जिस प्रकार घरों में किवाड़ दे दिये गये थे, उसी प्रकार प्रियों को आलिंगन दिये गये थे। जिस प्रकार चन्द्रमा अपनी किरणों का प्रसार कर रहा था, उसी प्रकार प्रिया के केशों में करप्रसार किया जाता था। जिस प्रकार कुमुद कुसुम विकसित हो गये, उसी प्रकार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

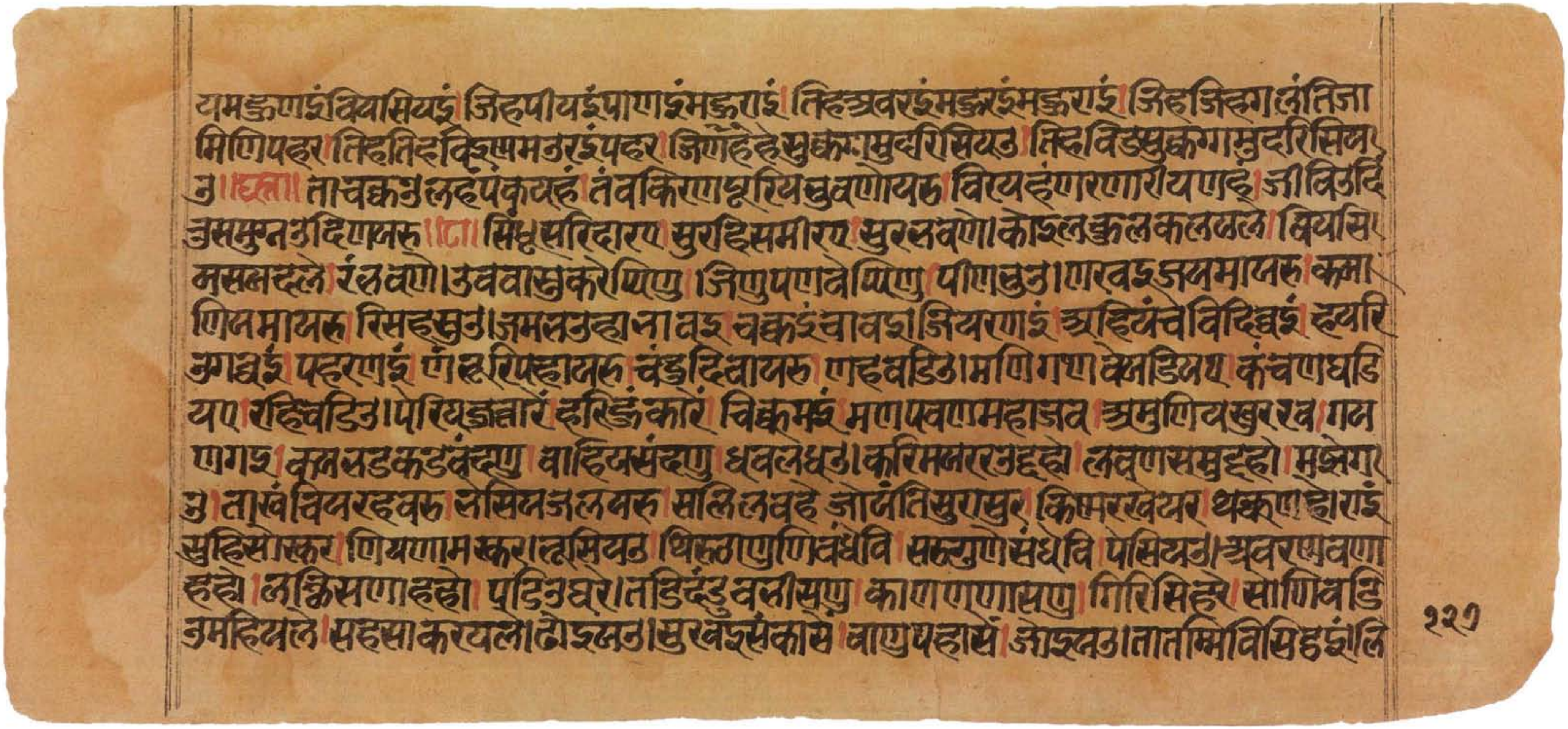

क्रीड़ा करते हुए जोड़े विकसित थे। जिस प्रकार मधुर पानी पिया जाता था, उसी प्रकार मधुरस के समान मधुर अधर पिये जाते थे। जिस-जिस प्रकार रात्रि के प्रहर समाप्त हो रहे थे, उसी-उसी प्रकार कोमल रति के प्रहर भी बीत रहे थे। जिस प्रकार आकाश में शुक्र नक्षत्र उगा हुआ दिखाई दे रहा था, उसी प्रकार विट में शुक्र (वीर्य) का उद्‌गम दिखाई दे रहा था।

घत्ता—तब चक्रकुलों, पंकजों और विरत नर-नारीजनों को जीवनदान देता हुआ तथा अपनी रक्त किरणों से भुवनलोक को आपूरित करनेवाला सूर्य उदित हुआ॥ ८॥

९

सिन्धु नदी के द्वार पर सुरभित पवनवाले सुरभवन में कोकिलकुल के कलकल से पूर्ण तथा खिले हुए कमलदलवाले रम्भावन में उपवास कर और जिनकी वन्दना कर स्थूलबाहु विजयलक्ष्मी का सम्पादन करनेवाला, अपने ऐश्वर्य को बढ़ानेवाला ऋषभपुत्र राजा भरत, यम की भौंहों के समान भयंकर चक्र और युद्ध को जीतनेवाले धनुष और शत्रुओं का गर्व हरण करनेवाले प्रहरणों की पूजा कर मणि समूह से जड़ित और स्वर्णनिर्मित रथ पर इस प्रकार चढ़ गया मानो अत्यन्त प्रकाश फैलाता हुआ प्रचण्ड सूर्य आकाश में आ पड़ा हो। जोतनेवालों से प्रेरित, हुंकारों से तीक्ष्णमति, मन और पवन के समान महावेगवाला, खुरों के शब्दों को नहीं गिननेवाला गगनगति, भटसमूह का मर्दन करनेवाला चपलध्वज, रथ को भगाता हुआ अश्व, जलगज और मगरों से रौद्र लवण समुद्र के मध्य गया। तब जलचरों को भयभीत करता हुआ रथ जलपथ में स्थित हो गया। आकाश में सुर, असुर, किन्नर, विद्याधर और यक्ष देखने लगे। राजा ने कानों के लिए सुखकर अपने नामाक्षरों से विभूषित तीर स्थिर स्थान को लक्ष्य बनाकर और डोरी पर चढ़ाकर प्रेषित किया। वह लक्ष्मी से सनाथ पश्चिम समुद्र के घर में जाकर इस प्रकार गिरा जिस प्रकार वन का नाश करनेवाला भीषण विद्युद्दण्ड गिरिशिखर पर गिरा हो। धरती पर पड़े हुए तीर को सहसा हाथ में ले लिया और इन्द्र के समान राजा प्रभास ने बाण को देखा। तब उसने उसमें लिखे हुए विशिष्ट अक्षरों को पढ़ा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो मानो मात्रावृत्तवाले मात्राओं से युक्त नागर अक्षर हों। ''मैं दानवों का मर्दन करनेवाला ऋषभ का पुत्र चक्रवर्ती हूँ। यदि तुम मुझ भरत को विश्व में भय उत्पन्न करनेवाली प्रियकारी और पराभव करनेवाली सेवा करते हो तो जीवित रह सकते हो, नहीं तो तुम विजयश्री को माननेवाले मेरी तलवार के पानी को निश्चित रूप पिओगे।'' उसने उसे इस प्रकार बाँचा और अपना काम समझ लिया। वह वहाँ गया जहाँ देवेन्द्र के समान पृथ्वी का राणा स्थित था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपनी कान्ति को छोड़ देनेवाले राजा प्रभास ने भरत को इस प्रकार देखा जिस प्रकार शुभ परिणाम भव्य ने प्रणामपूर्वक अरहन्त को देखा हो।

घत्ता—श्रेष्ठ वाहनों में चलनेवाले उस वसुन्धरानाथ को कुसुम, कल्पवृक्षों के फल, रत्न, वस्त्र और भूषण उसने प्रदान किये॥ ९॥

१०

गंगा और सिन्धु नदियों के द्वारा अपनी सीमा निश्चित कर पूर्व और पश्चिम दिशा में प्रवेश कर उसने वैरभाव धारण करनेवालों को परिस्थापित किया। विजयार्ध पर्वत के ऊपर स्थित अत्यन्त सम्पन्न, दोषों से प्रचुर उन म्लेच्छ खण्डों को तलवार से जीतकर, आर्यखण्ड में दण्ड स्थापित कर मालव, मागध, बंग, अंग, गंग, कलिंग,

कोंग, पारस, बब्बर, गुर्जर, वराड, कण्णाड (कर्णाटक), लाट, आभीर, कीर, गान्धार, गौड़, नेपाल, चोड (चोल), चेदीस, (चेदि), चेर, मरु, दुन्तरणी, पांचाल, पण्डि (पाण्ड्य), कोंकण, केरल, कुरु, कामरूप, सिंहल, प्रभूत, जालन्धर, यादव और पारियात्र के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजाओं को जीतकर, समस्त प्रत्यन्तवासियों को लेकर, अपनी मुद्रा देकर, खेल-खेल में तीन खण्ड धरती जीतकर, तलवार अपने हाथ में लेकर सेना की सहायता से भरत विजयार्द्ध पर्वत के सम्मुख चला। कुछ दिनों में वह उस पर्वत के शिखर पर इस प्रकार पहुँचा जैसे मन मोक्ष पर पहुँचा हो। उसने पर्वत देखा। सुस्वर उसने सुसरोवर, और पर्वत ने राजा को देखा। रथ सहित उसने भीमसरोवर (मानसरोवर) नष्ट कर दिया, और पूजा सहित उसने मधुयुक्त को। कटक (सेना) से अंकित उसने कण्टकित भाग को, तुंग उसने तुंग को, गुरु (महान्) वंश में उत्पन्न उसने गुरुवंश को, स्थिर ने स्थावर को, प्रतिगर्जन करनेवाले गज ने गरजते हुए गज को, ऊर्ध्वध्वज और तुरंग सहित उसने हिनहिनाते अश्व को, प्रतिज्ञा पालन करनेवाले उस श्रावक ने अत्यन्त श्वापदों को और राजा ने राजा को विजय के लिए नष्ट कर दिया।

घत्ता—पूर्व और पश्चिम समुद्र तक फैला हुआ पर्वत अपनी लम्बाई से ऐसा शोभित है, मानो तीन-तीन खण्डों के लिए दैव ने भूमि का सीमादण्ड स्थापित कर दिया हो॥ १०॥

११

उस अवसर पर गुहाद्वार से दूर, जहाँ सुर-तरुवरों के कारण सूर्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

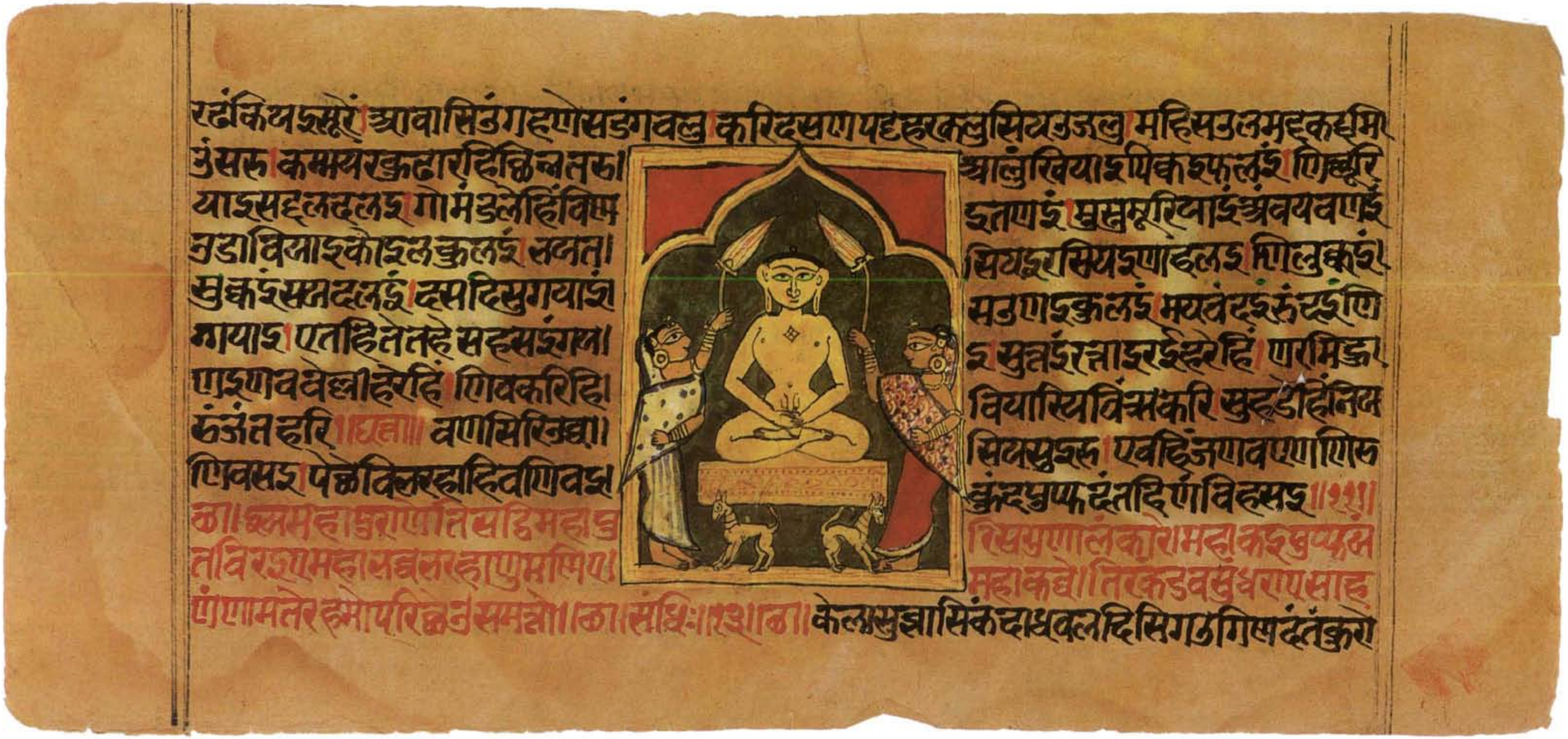

ढका हुआ था, ऐसे गहन वन में षडंग सेना ठहरा दी गयी। वहाँ जल हाथियों के दाँतों के प्रहार से कलुषित था, सरोवर भैंसों के समूह के मर्दन से कीचड़मय था, वृक्ष काटनेवालों के कुठारों से छिन्न थे। पके फल चख लिये गये, आर्द्र पत्ते तोड़ लिये गये, गोमण्डलों के द्वारा घास चर लिया गया, आम्रवन मसल दिये गये, कोकिलकुल उड़ा दिये गये, भय से त्रस्त होकर भील चिल्लाने लगे। कमल तोड़कर छोड़ दिये गये। भ्रमरकुल उड़कर दसों दिशाओं में चले गये। सुन्दर मृगकुल भाग गये, यहाँ-वहाँ सहसा तितर-बितर हो गये। रतिघरों में और नवलताघरों में अनुरक्त नरमिथुन सो रहे थे। राजा के हाथियों ने विन्ध्या के गज को विदीर्ण कर दिया। और गरजते हुए सिंह को सुभटों ने मार डाला।

घत्ता—वनश्री अच्छी तरह उजाड़ दी गयी, इस समय जनपद यहाँ निवास करेगा, यह देखकर भरताधिप राजा मानो कुन्दपुष्पों के द्वारा हँस रहा था॥ ११ ॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणांलकारवाले इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा रचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का त्रिखण्ड वसुन्धरा प्रसाधक नाम का तेरहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ १३ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सन्धि १४

जिसने मगधराज को जीता है और अपने भुजबल से प्रभास को दलित किया है, ऐसे वरतनु के मद को चूर करनेवाले भरतेश ने परम शत्रु-राजाओं को नष्ट करनेवाले सेनापति को आदेश दिया।

१

दुवई—तीन खण्ड धरती को जीतनेवाला राजा जब अपने शिविर के साथ निवास कर रहा था तभी कानों में कुण्डल पहने हुए मणिशेखर नाम का देव वहाँ आया। अपने मुखरूपी चन्द्रमा की किरणों से दिशाओं को धवलित करनेवाला वह प्रणामपूर्वक बोला — ''नवमेघ के समान गूँजती हुई मधुर और सुन्दर वाणीवाले तथा भुवन का भार उठानेवाले हे अत्यन्त अद्वितीय सज्जन,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा विजयार्ध पर्वत पर विजय करनेवाले हे देव, उत्तरदिशा में जो देव मनुष्य-सूर्य और तीन खण्ड धरती है यह भी तुम्हारी है। प्रचण्ड शत्रुओं को खण्डित करनेवाले कुलमण्डन हे नाभेयतनय देव, तुम यदि पर्वत के गुहाद्वार को खोलते हो, वज्र के तीव्र दण्डप्रहार से उसे प्रताड़ित करते हो, तो हे आदरणीय, मार्ग हो जायेगा! तुम्हारा पुण्य महान् दिखाई देता है कि विजयार्ध पर्वत के शिखर के अग्रभाग पर रहनेवाला मैं भी, जिसका दास हो गया हूँ।'' तब राजा भरत ने सेनापति का मुख देखा। यशोवती के पुत्र ने उसे आदेश दिया — ''हे मेघेश्वर, मेरा कहा करो। निश्चित रूप से तुम पहाड़ के किवाड़ को प्रताड़ित करो। वह अच्छी तरह विघटित होकर उसी प्रकार खुल जाये जिस प्रकार आहत दुर्जन का मन फूट जाता है।'' अपने स्वामी के मनोरथ को पूरा करने के लिए उत्कण्ठित वह (सेनापति) 'जो प्रसाद' यह कहता हुआ उठा। तरुण तोते के शरीर और पन्ने के समान हरे तथा नाना प्रकार के गमन के विलासों से भरे हुए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

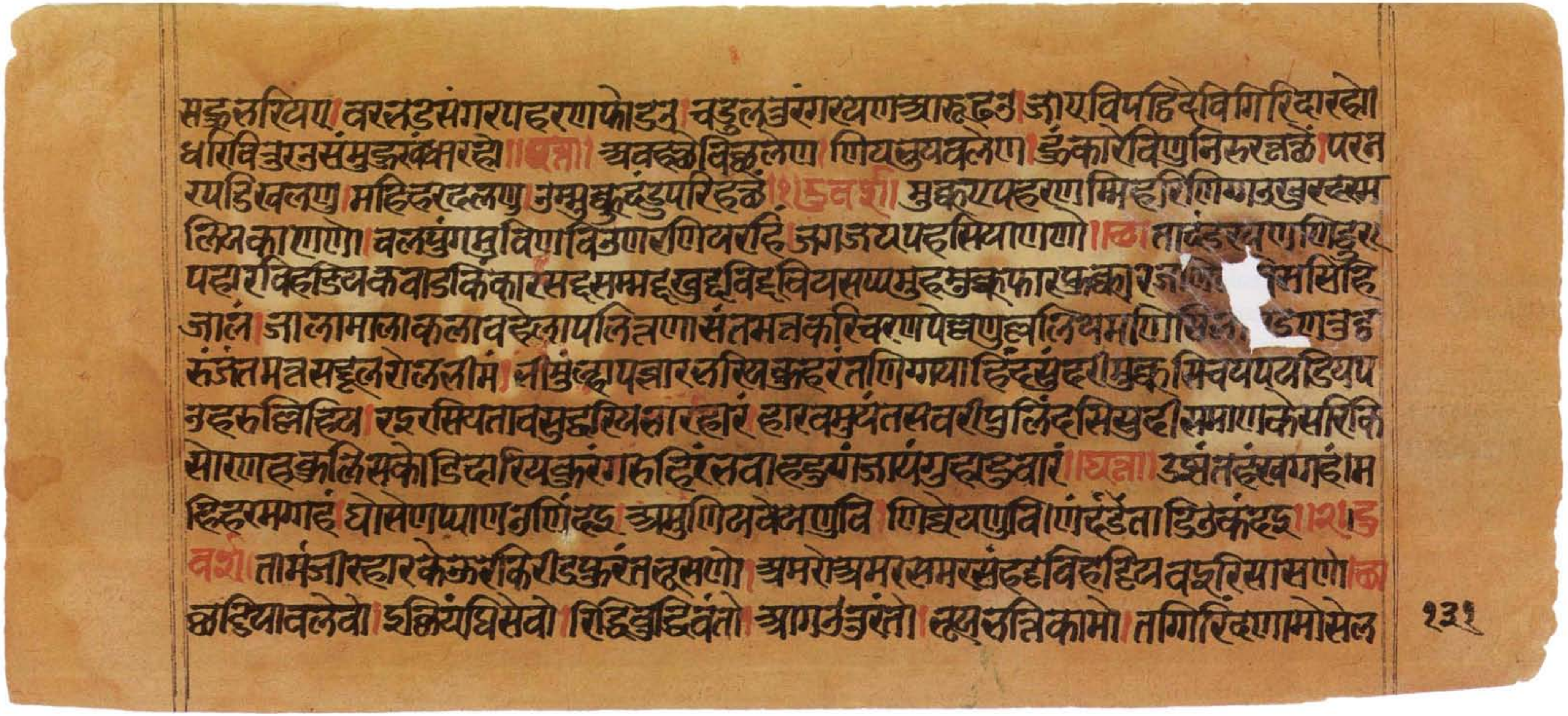

उस चंचल अश्वरत्न पर श्रेष्ठ योद्धाओं के युद्ध में प्रहारों से प्रौढ़ वह सेनापति आरूढ हो गया। जाकर गिरिद्वार को पीठ देकर स्कन्धावार के सम्मुख अश्व को थामकर—

घत्ता—लाल-लाल आँखोंवाले उसने हुंकारते हुए (उस दरवाजे को) हटाने के लिए शत्रुमनुष्यों को प्रतिस्खलित और पहाड़ को चूर-चूर करनेवाला वह दण्डरत्न पूरे वेग से फेंका॥ १॥

२

अस्त्र के फेंके जाने पर अपने खुरों से वन को रौंदता हुआ अश्व चला। जिसका मुख विश्व-विजय के लिए हँसता हुआ है, ऐसा बल में श्रेष्ठ भी वह नरसमूह के द्वारा नम्र बना दिया गया। तब दण्डरत्न के निष्ठुर प्रहार से विघटित किवाड़ों के किंकार शब्द के कोलाहल से क्षुब्ध और दलित साँपों के मुखों से छोड़ी गयी फूत्कारों से विषाग्नि की ज्वाला जल उठी, ज्वालामालाओं से एक साथ प्रदीप्त और नष्ट होते हुए, हाथियों के पैरों की चपेट से उछलती हुई मणिशिलाओं के पतन से क्रुद्ध और गरजते हुए सिंहों के शब्दों से जो भयंकर हो उठा। भयंकर ताप के भार से भरित गुफाओं के भीतर से निकलती हुई अहीन्द्र सुन्दरियों (नागिनों) के द्वारा मुक्त सिचय (वस्त्र, केंचुल) से प्रकट हुए स्तनों से विदारित हृदयवाले रतिरसिक तपस्वियों के चरित्रभार के हरण को जो धारण किये हुए है। 'हा' रव (शब्द) कहते हुए शबरी पुलिन्दों के शिशुओं के द्वारा देखे गये सिंह किशोरों के नखरूपी वज्र कोटि के द्वारा विदारित हरिणों के रक्तरूपी जल के प्रवाह से वह गुहाद्वार दुर्गम हो उठा।

घत्ता—दग्ध होते हुए पक्षियों, पहाड़ों के पशुओं के घोष से वह (सेनापति) अपनी निन्दा करता है कि वेदना को नहीं जाननेवाला अचेतन भी यह दण्डरत्न से ताड़ित होने पर आक्रन्दन करता है॥ २॥

३

तब मंजीर, हार, केयूर और किरीट के चमकते हुए आभूषणों वाला तथा देवताओं के युद्ध में संघर्ष के द्वारा जिसने शत्रुशासन समाप्त कर दिया है, ऐसा देव अहंकार छोड़कर चरणों की सेवा चाहता हुआ ऋद्धि और बुद्धि से सम्पन्न शीघ्र वहाँ आया। प्रचुर भक्ति का अभिलाषी विजयार्ध नामक,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सेलसिंगवासो सुद्धसेयवासो।
वंदिओ णरिंदो तेण वीरचंदो।
हारमिंदुधामं दिव्वपुप्फदामं।
कंकणं किरीडं कुंभमंभणीडं।
पंडुरं पसत्थं चारु हारि वत्थं।
कुंजरारिवूढं हेमरण्णवीढं।
हित्तकंजलीलं भम्मदंडणालं।
सव्वलोयमोल्लं कित्तिवेल्लिफुल्लं।
चामरेण जुत्तं णिम्मलायवत्तं।
हासहंसवण्णं राइणो विइण्णं।
मंगलं पहाणं तित्थतोयण्हाणं।
रुक्खरोहियासे तम्मि भूपएसे।

शैल के अग्रभाग का निवासी और शुद्ध श्वेत वस्त्रधारण करनेवाला। उसने वीरश्रेष्ठ नरेन्द्र की वन्दना की। चन्द्रमा की तरह स्वच्छ हार, दिव्यपुष्पदाम, कंकण, मुकुट, जल का नीड़ — घट, सफेद धवल प्रशस्त सुन्दर उत्तम वस्त्र, स्वर्णनिर्मित सिंहासन, कमल की लीला का हरण करनेवाला स्वर्णदण्डनाल, चामरों से सहित निर्मल आतपत्र कि जो मानो कीर्तिरूपी लता का फूल था, जिसका मूल्य समस्त लोक था और जो हास और हंस के रंग का था, राजा को दिया। तीर्थ में जल का स्नान ही मुख्य और मंगलमय होता है। वृक्षों से आच्छादित देवदार वृक्षवाले उस भूमिप्रदेश में वह राजा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अच्छिओ छमासं देवदारुवासं।
वल्लरीललंतं माणियं वणंतं।
णिग्गयग्गिजालं मंदधूममालं।
मुक्कदीहसासं णं महीहरासं।
दावियंधयारं तं गुहादुवारं।
णट्ठताववेयं सिट्ठमग्गभेयं।
लग्गसीयवायं सीयलं च जायं।

घत्ता—चंदणचच्चियउ कुसुमंचियउ ता पेसिउ पालियखत्तें॥
आरासयफुरियउ सुरपरियरिउ संचलियउ चक्कु पयत्तें॥ ३॥

छह माह रहा। लताओं से शोभित उस वन का उसने आनन्द लिया। जिसकी अग्निज्वाला शान्त हो चुकी है, धूममाला मन्द पड़ चुकी है, जो दीर्घ साँसें छोड़ रहा है मानो पर्वत का मुख हो, जो अन्धकार को दिखा रहा है, ऐसे उस गुहाद्वार का तापवेग समाप्त हो गया, उसमें मार्ग का भेद बन गया, हवा ठण्डी लगने लगी और वह शीतल हो गया।

घत्ता—तब चन्दन से चर्चित, फूलों से अंचित सौ आराओं से चमकता हुआ देवों से घिरा हुआ चक्र उसने भेजा। वह भी प्रयत्नपूर्वक चला॥ ३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४

दुवई—पुणु चक्काणुमग्गलग्गंतमहाभडकरितुरंगयं।
चलियं साहणं पि रहभमियरहंगाहयभुयंगयं॥

वसहकरहखरवरवलइयभरु हरिखुरदलियमलियवणतणतरु।
मयगलमयजलपसमियरयमलु दसदिसिमिलियमणुयकयकलयलु।
कसझसमुसलकुलिससरकरयलु जणवयपयभरपणवियमहियलु।
असिवरसलिलपवहधुयपरिहवु सतिलयविलयवलयखणखणरवु।
मसिणघुसिणरससुपुसियउरयलु पवणपहयधयचयचियणहयलु।

४

चक्र के पीछे लगे हुए महाभट, हाथी और तुरंग हैं जिसमें, ऐसी तथा रथों के घूमते हुए पहियों से सर्पों को आहत करती हुई सेना चली। जिसमें बैलों, ऊँटों और खच्चरों द्वारा भार ढोया जा रहा है, घोड़ों के खुरों से वन के तृण-तरु चकनाचूर हो गये हैं, मदवाले गजों के मदजल से रजोमल शान्त हो गया है, दसों दिशाओं में मिले हुए लोगों का कलकल शब्द हो रहा है, जिसके हाथ में कशा, झस, मूसल और तीर हैं, जिसने जनपदों के पदभार से धरती को झुका दिया है, असिवरों के जलप्रवाह में पराभव धो दिया गया है, तिलक सहित चूड़ियों के समूह का खन-खन शब्द हो रहा है, मसृण केशररस से उर-तल सुपोषित है, जिसमें पवन से आहत ध्वजसमूह से आकाश आच्छादित है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चवलचमरवियलणपसरियकरु परिमललुलियललियमहुलिहसरु।
मरुवहविगयखयरसुरवरघरु अमरिसकसणपिसुणजयसिरिहरु।
सहपरिभमियजिमियसुरमियसहु पहुसुहजणणकहियमणहरकहु।
पहरविहुरु सुमरिवि मयभययरु णिवबलु गिलइ व गुहमुहगिरिवरु।

घत्ता—तेण जि रिउमहहो मग्गियपहहो घरु आयहु फणिवहुलालिउ॥
भरहहु भयवसेण सगुहामिसेण णियहियवउं दक्खालिउ॥ ४॥

५

दुवई—कज्जल(णीलबहलतमपडलविणासियणयणमग्गए।)

चंचल चामरों को हिलाने के लिए हाथ उठे हुए हैं, परिमल पर झूमते हुए सुन्दर भ्रमरों का स्वर हो रहा है, आकाशमार्ग से जिसमें देवों और विद्याधरों के घर (विमान) छोड़ दिये गये हैं, जो अमर्ष, कठोर और दुष्टों की विजयश्री का अपहरण करनेवाली है, जिसमें सुरसभा साथ रहती, घूमती और खाती है, जिसमें स्वामी के लिए शुभ करनेवाली कथाएँ कही जा रही हैं, प्रहार से जो विधुर है, ऐसा मद और भय उत्पन्न करनेवाला राजा का सैन्य स्मरण कर गुहा के मुख-विवर को जैसे निगल रहा है।

घत्ता—इसी कारण मानो रास्ता भोगनेवले शत्रुओं में महान् और घर आये हुए भरत के लिए डरकर अपनी गुहा के बहाने बहुत से नागों से सुन्दर उसने अपना हृदय दिखा दिया॥ ४॥

५

काजल

और नील के समान प्रचुर तमपटल से जिसमें नेत्रों का मार्ग नष्ट हो गया है, महीधर के ऐसे गुहादुर्ग में सेना मुख से नहीं जा पा रही थी—यह सोचकर कागणी मणि लेकर सेनाप्रमुख ने सूर्य-चन्द्र अंकित कर दिये। वे विवर की दीवालों पर इस प्रकार शोभित हुए मानो जैसे राजा की कीर्ति की आँखें हों। किरणसमूह से उन्होंने अन्धकार-समूह हटा दिया और रात्रि में दिन अत्यन्त रूप से सोहने लगा। सेना चलती है। जय का नगाड़ा बजता है, मानो प्रलयकाल में समुद्र गरज रहा है। उठते हुए प्रतिशब्दों से गम्भीर गजघटा के घण्टों की टंकारों, रथों से छोड़ी गयी चीत्कारों, दौड़ते हुए हुंकारों के द्वारा मानो महीधर का विवरमार्ग फूट पड़ता है और कोलाहल से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रिभुवन जैसे ध्वस्त होना चाहता है। इन्द्र-वरुण-वैश्रवण अफसोस करते हैं, धरती किसी प्रकार भार को सहन करती है। समुद्र किसी प्रकार धरती पर नहीं बहता, मन्दराचल किसी प्रकार अपने स्थान से नहीं डिगता, चन्द्रमा और सूर्य दोनों आकाश में काँपते हैं। नीला असहाय कैलास भी हिलने लगता है। इस प्रकार चलता हुआ सैन्य दिखाई देता है, वह आधी गुफा के धरती तल पर पहुँच जाता है।

घत्ता—शत्रु के मद का नाश करनेवाले राजा के परिवार के पथ में जाने पर नाग, शंख, कौलिय और कर्कोट जाति के नागों को मन में शंका हो गयी और उन्होंने अपना मुख टेढ़ा कर लिया॥ ५॥

६

वहाँ निवास करनेवाले किंनर, गरुड़, भूत, किंपुरुष, महोरग, यक्ष, राक्षस और व्यन्तर कौन-कौन देवता प्रभु के वश में नहीं हुए। उस समय पर्वत के मध्य में, जिनमें सुन्दर कारण्ड (हंस) और भेरुण्ड लीला में रत हैं,

जलों के आवर्तों में मीनावलियाँ क्रीड़ा कर रही हैं, जो तट में लगे हुए फेनसमूह से उग्र हैं, ऐसी समुन्मग्ना और निमग्ना नामवाली पर्वतराज के मध्य से निकलनेवाली, जल की लहरावलियों से वक्र दो नदियाँ राजा के रास्ते के बीच आकर इस प्रकार स्थित हो गयीं, मानो जैसे महानागराज की दो नागिनें हों जो मानो मत्स्यों से उत्कट सिन्धु नदी के लिए जा रही हों। तब अभग्न दुर्गों से निस्तार दिलानेवाले, कुशल स्थपतिरत्न के द्वारा निर्मित सेतुबन्ध से नदियों के श्रेष्ठ तीरों को बाँधकर, नगर में सेना का संचार जानकर, घाटियों के द्वारा मान्य पानी को लाँघकर श्रेष्ठ उस पार के आधार को पार कर—

घत्ता—जिसमें देव रमण करते हैं ऐसी पहाड़ की गुफा में से निकलता हुआ अलंकार सहित सैन्य इस प्रकार शोभित हो रहा था जैसे मुँह से निकलता हुआ महायोग्य सुकवि का काव्य हो॥ ६ ॥

७

भरत के निकलने पर नगाड़ों की ध्वनियों से म्लेच्छ मण्डल काँप उठा। शत्रुसेना के दलन के लिए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

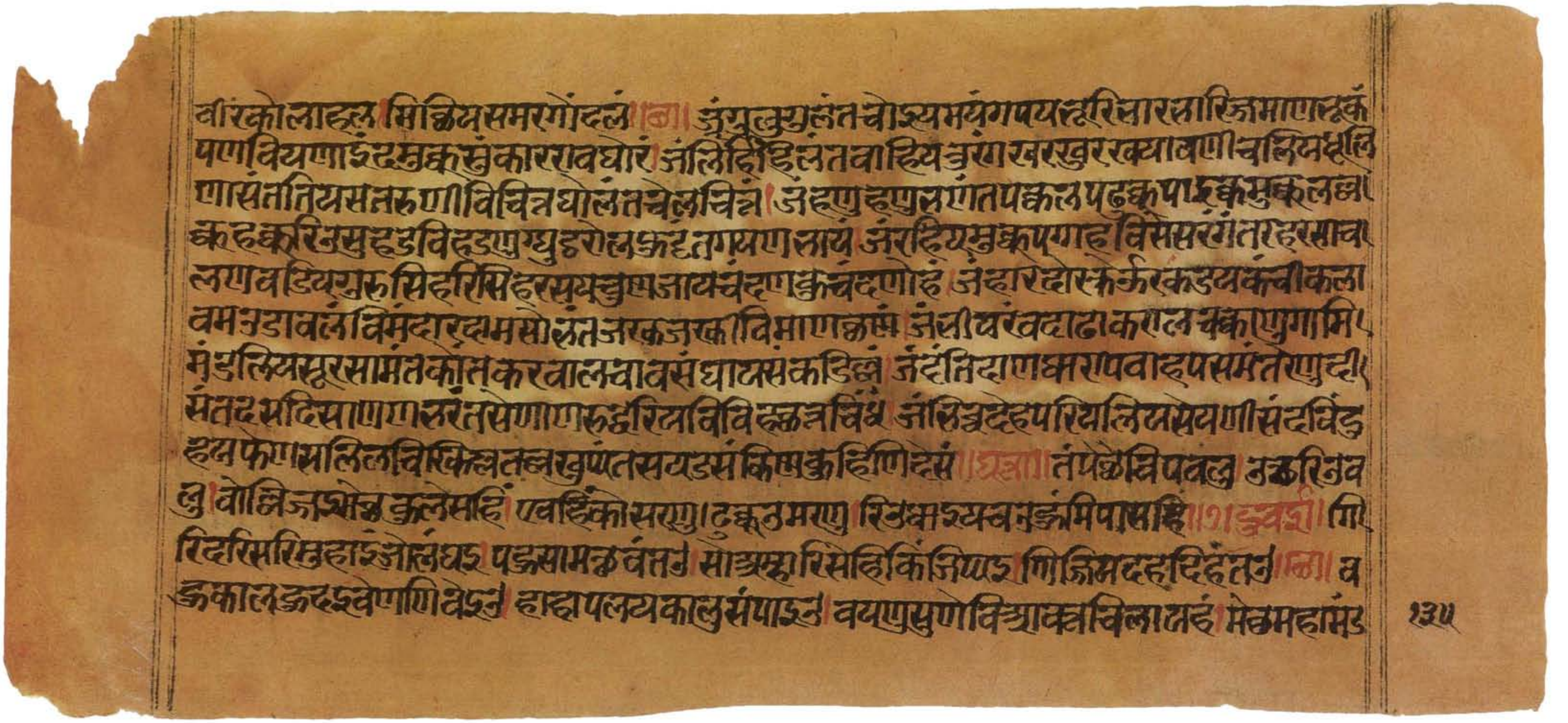

वीरों में कोलाहल होने लगा, युद्ध की भिड़न्त चाही जाने लगी। चिंघाड़ते हुए और चलाये जाते हुए हाथियों के पैरों के भूरिभार के दबाव से उत्पन्न भूकम्प से नमित नागराजों के द्वारा मुक्त फूत्कार शब्दों से जो भयंकर हो उठा है। हिनहिनाते हुए और चलाये गये घोड़ों के तीखे खुरों से खोदी गयी धरती से उठी हुई धूल से नष्ट होती हुई देवांगनाओं के वस्त्र और चित्र विचित्र हो रहे हैं। मारो-मारो कहते हुए समर्थ और प्रौढ़ पैदल सेना के द्वारा मुक्त भयंकर हुंकारों से शत्रुसुभटों के विघटन से उठे हुए शब्दों से आकाशमार्ग विदीर्ण हो गया है। रथिकों द्वारा छोड़ी गयी विशेष लगाम से चलते हुए रथों से डगमगाती हुई धरती पर गिरे हुए पहाड़ों के शिखरों से चन्द्रमा और रक्त चन्दन-वृक्षों का समूह चूर्ण-चूर्ण हो गया है। हार-दोर-केयूर-कटक-करधनी-कलाप और मुकुटों पर अवलम्बित मन्दार मालाओं से शोभित यक्ष तथा यक्षिणियों के विमानों से जो आच्छादित है; जो श्रेष्ठ आराओं से कराल चक्रों का अनुगमन करते हुए माण्डलीक सूर सामन्त भालों, तलवारों और चाप समूह से संकीर्ण और भयंकर है। गजों के मदजल के धाराप्रवाह से धूल के शान्त हो जाने पर, दिखाई पड़नेवाले दसों दिशाओं के मुखों को भरते हुए सैनिक नरों द्वारा विविध छत्रचिह्न उठा लिये गये हैं। जहाँ अनुचरों के शरीर से परिगलित स्वेद निर्झर की बूँदों और अश्वों के फेन-जलों से गीले तलभाग में गड़ते (खचते हुए) शकटों से मार्गप्रदेश संकीर्ण हो चुका है।

घत्ता—(ऐसी) उस प्रबल सेना को आक्रमण करते हुए देखकर म्लेच्छकुल के राजाओं ने कहा—"अब कौन शरण है, मरण आ पहुँचा है, चारों ओर शत्रु दौड़ रहा है॥ ७॥

८

जो सामर्थ्यवान् राजा गिरिघाटियों और नदियों के मुखों का उल्लंघन करता है, दसों दिग्गजों को जीतनेवाला है, ऐसा राजा हम-जैसे लोगों से कैसे जीता जा सकता है? हा-हा, बहुत समय के बाद दैव से निवेदित प्रलयकाल आ पहुँचा।" इस प्रकार म्लेच्छ महामण्डल के अधिराजों, आवर्त तथा किलातों के वचन सुनकर

धीर मन्त्री ने कहा—''आपत्ति के समय 'हा' नहीं करना चाहिए, जिस प्रकार जीवन में जो प्राप्त हो उस सबको सहन करना चाहिए,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हतभाग्य विधाता से कोई नहीं बचता। जहाँ युद्ध होगा वहाँ मारकाट अवश्य होगी। इसलिए धैर्य ही मनुष्य का मण्डन है। दूसरे की सेना का विदारण करनेवाले जो विषधर हैं, वे तुम्हारे आदरणीय कुलदेव हैं। हे स्वामीश्रेष्ठ, तुम उनका सद्‌भाव से स्मरण करो। भय से क्या, और बल के गर्व से क्या?'' उन म्लेच्छ राजाओं ने भी इन वचनों को समझ लिया। उन्होंने मेहमुख नामक नागों का अपने मन में ध्यान किया, जो विकट फनों के समूह से उद्‌भट, विष की ज्वालाओं से गिरितट के वटवृक्षों को दग्ध करनेवाले उठते हुए धुएँ के समान मैले, अपने शिरोमणियों की किरणों से दिशाओं को आलोकित करनेवाले थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्घ्य पुष्पों की रसवास से दौड़कर आते हुए वे शीघ्र चिलबिलाते हुए वहाँ पहुँचे।

घत्ता—विषधरों के राजा सर्प ने कहा — "क्या ग्रह-नक्षत्रों को गिरा दूँ? जिसमें सुरवर क्रीड़ा करते हैं ऐसे मानसरोवर के क्या कमल तोड़ लाऊँ"?॥ ८॥

९

तब म्लेच्छराज ने नागों से कहा—"जिसमें गजवर गरज रहे हैं, और तरुणीजन द्वारा स्वर्ण चामर ढोरे जा रहे हैं, ऐसी इस शत्रुसेना को मार डालो।" तब नागों ने स्कन्धावार के ऊपर विद्या से दिन-रात वर्षा शुरू कर दी। पशुकुल त्रस्त होता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

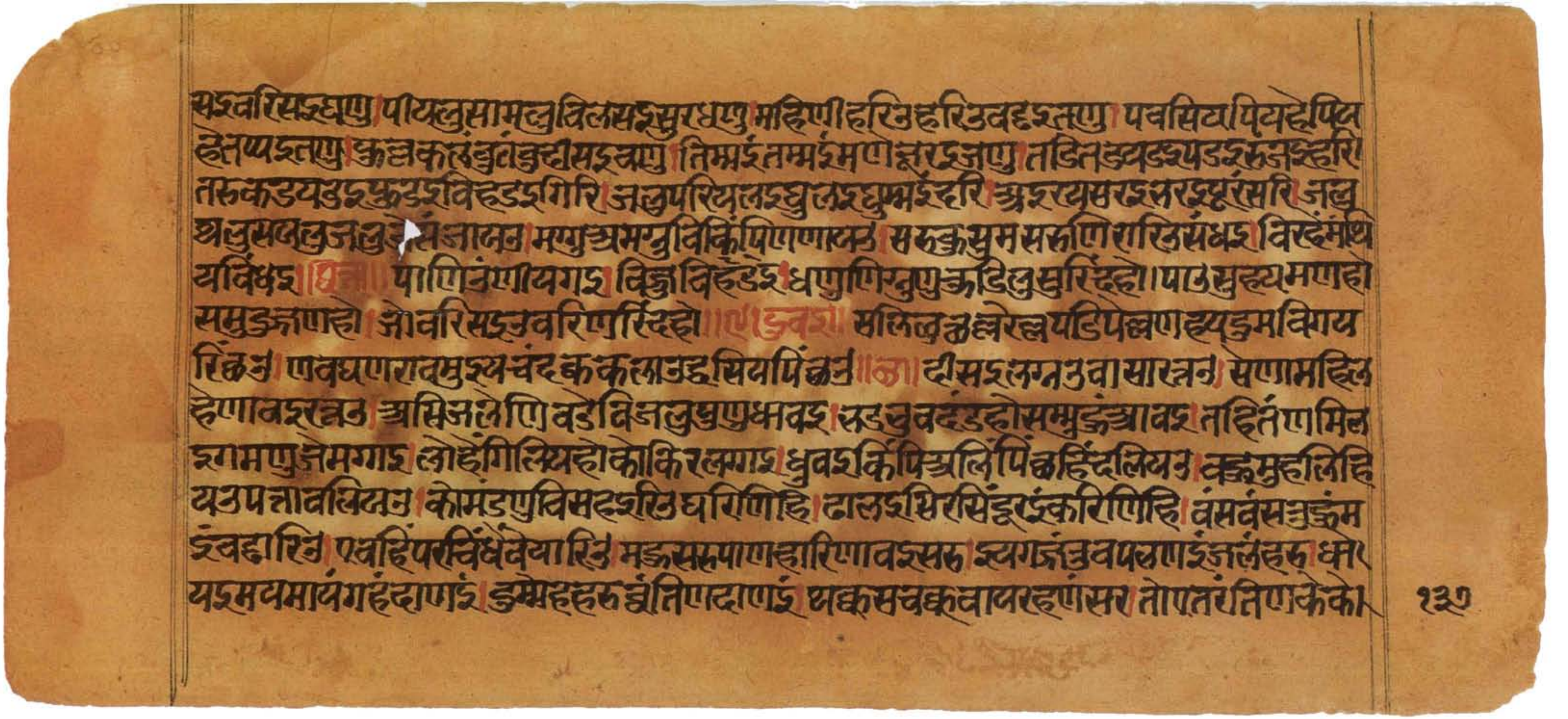

घन-कुल गरजता है और बरसता है, पीला और श्यामल इन्द्रधनुष शोभित है। मही निखर उठी है, हरी घास बढ़ रही है, प्रोषित-पतिकाओं का मन पिय के लिए सन्तप्त हो रहा है, बान खिले हुए कदम्ब वृक्षों से आरक्त दिखाई देते हैं, गीला-गीला होकर जन-मन में खेद को प्राप्त होता है, बिजली तड़-तड़ पड़ती है, सिंह गरजता है, वृक्ष कड़-कड़ करके टूटते हैं, पहाड़ विघटित होता है। जल बहता है, फैलता है, घाटी में घूमता है। वेग से दौड़ता है, नदी पूर से भरती है, जल और थल सब कुछ जलमय हो गया। मार्ग-अमार्ग कुछ भी नहीं मालूम पड़ता। कामदेव अपने तीर का अच्छी तरह सन्धान करता है और विरह से पीड़ित पथिक को विद्ध करता है।

घत्ता—पानी निम्नगति है, बिजली भी जलाती है, देवेन्द्र का धनुष निर्गुण और कुटिल है। पावस हतमन दुर्जन के समान है कि जो राजा के ऊपर बरस रहा है॥ ९॥

१०

जिसमें जल की धाराओं की रेलपेल से वृक्ष आहत हैं और पशु चले गये हैं, जिसमें नवमेघों की ध्वनि से अपने चन्द्रकलाप फैलाकर मयूर नाच रहे हैं, ऐसी वर्षा ऋतु आ गयी दिखाई देती है, जैसे वह सेनारूपी महिला पर आसक्त हो। तलवार के जल (की धार) पर गिरकर पानी फिर दौड़ता है, और योद्धाओं के भुजदण्डों के सम्मुख आता है, वह वहाँ भी नहीं ठहरता और वहाँ से जाना चाहता है, लोभ से ग्रस्त कौन किससे लगता है, वह भ्रमरों के पंखों से दलित होकर वधुओं के मुखों पर लिखित पत्रावली को कुछ-कुछ धोता है। शत्रु की गृहिणी के मण्डन को कौन सहन करता है, वह हथिनियों के सिरों का सिन्दूर ढोर देता है। "हे ध्वजदण्ड, तुम्हें मैंने बड़ा किया है इस समय दूसरों के ध्वजचिह्नों से शोभित हो, मेरा सर (स्वर) अब प्राणहारी (प्राण धारण करनेवाला/प्राण हरण करनेवाला) सर (सर/तीर) के समान है।" मानो मेघ गरजते हुए इस प्रकार कह रहा है। वह मैगल गजों के मदजल को धोता है, मानो दुष्ट मेघों के लिए दान अच्छा नहीं लगता। चक्रवाक सहित रथ ठहर गये हैं मानो सरोवर हों, पानी में कौन-कौन मनुष्य नहीं तिरते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजा का पुरोहित तब कहता है—''हे देव, लोक उपसर्ग से अवरुद्ध है, इसका कोई प्रतिविधान करना चाहिए, पानी का निवारण करनेवाले चर्मरत्न की चिन्ता की जाये।''

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

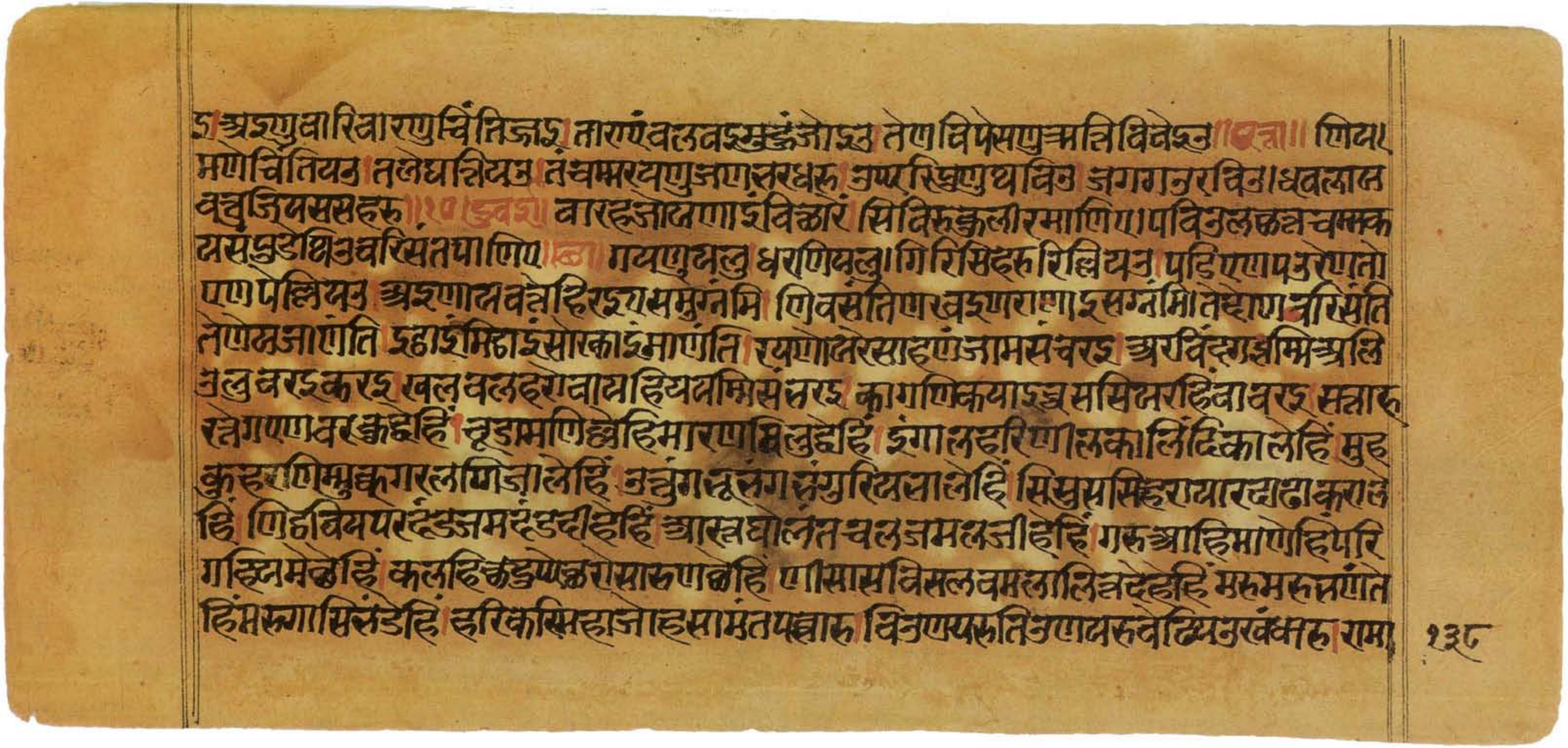

तब राजा ने सेनापति का मुख देखा, वह भी शीघ्र आदेश समझ गया।

घत्ता—अपने मन में विचारकर, जनों के भार को धारण करनेवाले चर्मरत्न को उसने तलभाग में डाल दिया। और ऊपर जग के गौरव, चन्द्रमा को जीतनेवाले धवल आतपत्र स्थापित कर दिया॥ १०॥

११

मत्स्यों के द्वारा मान्य पानी में वह शिविर बारह योजन तक विस्तृत विशाल छत्र और चर्म निमित्त सम्पुट में वर्षाकाल के समय स्थित हो गया। गिरते हुए प्रचुर पानी के दबाव से आकाशतल, धरणीतल और गिरिशिखर जलमय हो गये। लेकिन चर्मरत्न और आतपत्रों के सम्पुट में राजा के लोग इस प्रकार रह रहे थे, मानो स्वर्ग में स्थित हों। मेघ बरसते हैं, वे यह नहीं जानते। वे इष्ट और मीठे सुखों को मानते हैं। रत्नों के भीतर सेना चलती है और जो कमलों के गर्भ में भ्रमरकुल की तरह रति करती है। वह शत्रु की शक्ति के हरण का उपाय अपने मन में सोचता है और कागणी के द्वारा निर्मित सूर्य और चन्द्र की किरणों का प्रयोग करता है। सात दिन-रात बीत जाने पर चूड़ामणि धारण करनेवाले मारने के लिए विरुद्ध, कोयला-हरि-नील-कालिन्दी और काल के समान काले, मुँहरूपी कुहर से विषाग्नि ज्वालाओं को ऊँचे भ्रूभंगों से भंगुरित (टेढ़े) भालवाले शिशु चन्द्रमा के आकार की दाढ़ों से विकराल, दूसरों के दण्ड को नष्ट करनेवाले यमदण्ड के समान दीर्घ, आरक्त चंचल लपलपाती दो जीभोंवाले, भारी अभिमानवाले, म्लेच्छों का परिग्रहण (आश्रय) लेनेवाले, कलह के इच्छुक दुर्दर्शनीय और क्रोध से आरक्त नेत्रोंवाले, निश्वासों के विषकणों के भाल से चन्द्रमा को आलिप्त करनेवाले, मारो-मारो कहते हुए साँपों के द्वारा, अश्वगजों, महायोद्धाओं और सामन्तों के प्रभारवाले स्कन्धावार दुहरा-तिहरा घेर लिया गया।

Jain Education International
For Private & Personal Use Only

www.jainelibrary.org

तब रमणियों के लिए सुन्दर संग्राम में चतुर-देवाधिदेव के पुत्र भरत ने क्रुद्ध होकर—

घत्ता—शत्रुपुरुष के लिए अजेय जय का वीरपट्ट (राजा ने) स्वयं बाँध लिया, मानो विषधरवरों और नवजलधरों पर युग का क्षय करनेवाला कृतान्त ही क्रुद्ध हो उठा हो॥ ११॥

१२

तब सोलह हजार यक्षामरों के द्वारा विरचित पवनों के द्वारा मेघ उसी प्रकार नष्ट हो गये,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार चंचल हरिणों के स्वामी (सिंह) से गज नष्ट हो जाते हैं। चक्र से शत्रु महायोद्धा इस प्रकार छिन्न हो गये, मानो देव ने दिशावलि छिटकी हो। यह देखकर नाग डरकर भाग गये। नवधन चले गये और वह बिजली चली गयी। तब म्लेच्छ राजाओं ने करुणापूर्वक रोना शुरू कर दिया कि द्विजिह्वों ने यह क्या किया? जो विष से भरे होते हैं उनमें क्या सज्जनता हो सकती है? जो टेढ़ी गतिवाले हैं उनका क्या गुणकीर्तन? छिद्रों का अन्वेषण करनेवालों से कौन प्रसन्न हो सकता है? जो हवा का पान करते हैं, उनसे दूसरों का क्या पोषण होगा? चरण (चारित्र/पैर) से रहित कौन यश पा सकता है? नित्य भुजंगों (गुण्डों और साँपों) को नीचता ही आ सकती है। युद्ध के जीत लेने पर राजा घननाद गरजा, राजा ने घननाद को भी बुलाया। अपने सिरों के चूड़ामणियों से भूमि का भाग छूते हुए, दूर से पैरों में नमस्कार करते हुए, हिरण्य वस्तु-समूह का दान करते हुए आवर्त और किरात राजाओं ने राजा से भेंट की।

इस प्रकार म्लेच्छराज को साधकर हर्ष से उछलता हुआ वह सिन्धु नदी के किनारे-किनारे फिर से चला। जब राजा हिमवन्त के निकट पहुँचा तब आदरणीय सिन्धु देवी आयी। वह नदी नहीं, दिव्य स्वरूप धारण करनेवाली देवी थी, जो परमेश्वरी सिन्धुकूट में निवास करती थी। राजा को देखकर उसे भद्रासन पर बैठाकर कलश हाथ में लिये हुए प्रशस्त—

घत्ता—जलचर ध्वजवाली सिन्धु देवी ने अभिषेक कर दोनों हाथ जोड़कर उसकी स्तुति की। और उस भरताधिप के लिए नव पुष्पों पर स्थित मधुकरोंवाली पुष्पमाला अर्पित की॥ १२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणों और अलंकारों वाले इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य में आवर्त-किलात प्रसाधन नाम का चौदहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥ १४ ॥

सन्धि १५

सिन्धु नदी को छोड़कर और ऋषभ जिनेन्द्र को प्रणाम कर राजा भरत अमरेन्द्रों को भय-रस उत्पन्न करता हुआ चला।

१

सेना और सेनापति से घिरा हुआ हिमवन्त को अपने अधीन कर वह चल पड़ा। जिसमें कुरुवंश के स्वामी राजा प्रमुख हैं ऐसी सेना पूर्व की ओर मुख किये हुए शोभित है।

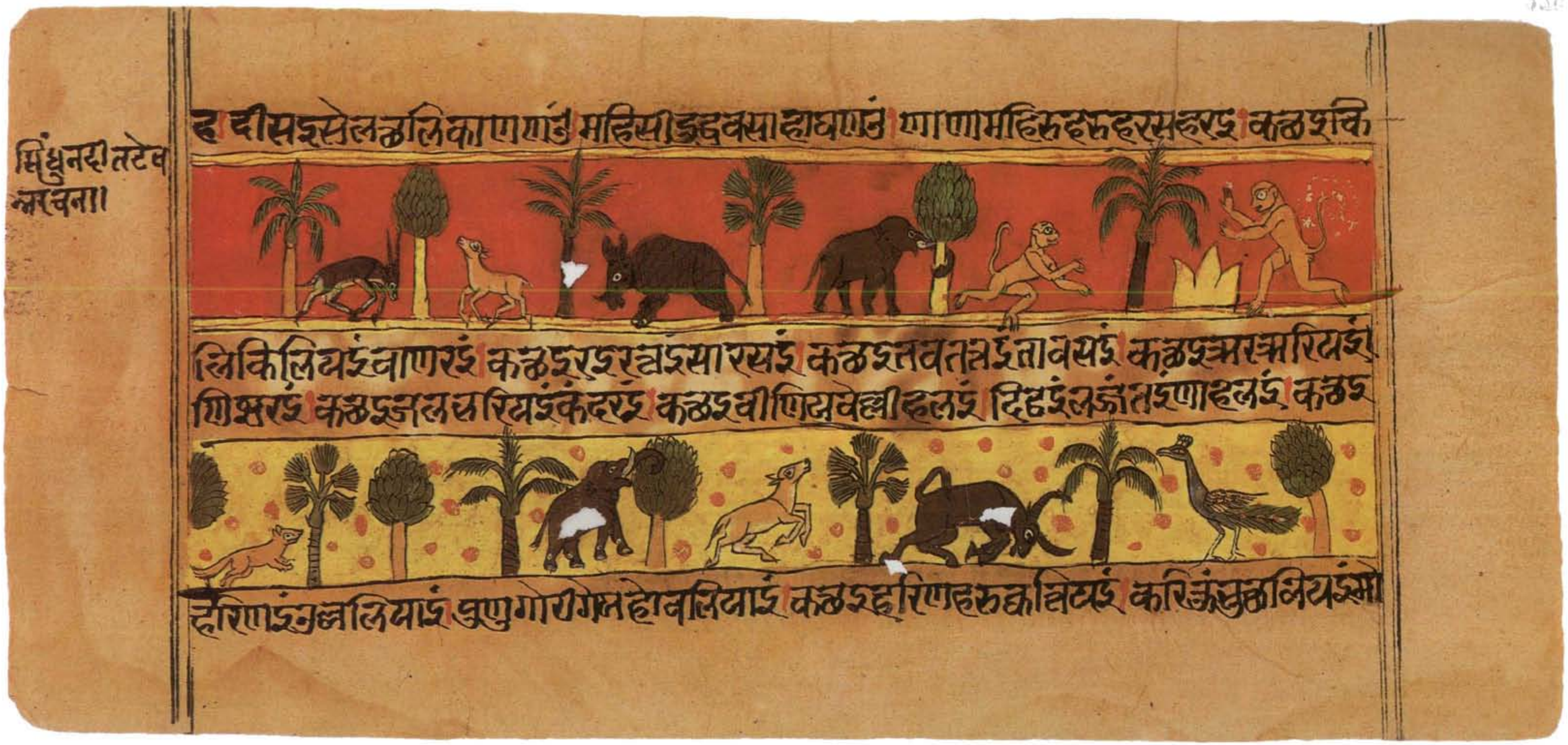

शैल के स्थल में कानन इस प्रकार दिखाई देता है मानो महिषी के दूध के समान साहाघन (शाखाओं और दुग्ध-धारा से सघन) है, कहीं पर नाना वृक्षों के फलरस को चखनेवाले वानर किलकारियाँ भर रहे हैं, कहीं सारस रति में रक्त हैं, कहीं तपस्वी तप से सन्तप्त हैं, कहीं निर्झर झर-झर बह रहे हैं, कहीं गुफाएँ जल से भरी हुई हैं, कहीं झुके हुए बेलफल हैं जो भीलों के द्वारा भग्न होते हुए दिखाई देते हैं, कहीं हरिण चौकड़ी भर रहे हैं, फिर गौरी के गीत से मुड़ते हैं, कहीं पर सिंह के नखों से उखाड़े गये मोती हाथियों के गण्डस्थलों से उछल रहे हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहीं पर यक्षणियों की ध्वनिलहरी सुनाई देती है, कहीं पर विद्याधरी के हाथों की वीणा रुनझुन कर रही है। कहीं पर भ्रमरकुलों के द्वारा गुंजन किया जा रहा है, और कहीं पर शुक 'किं किं' बोल रहा है।

घत्ता—कहीं पर किन्नरियों के द्वारा कानों को प्रिय लगनेवाला नाग, नर और सुरलोक में श्रेष्ठ ऋषभनाथ चरित गाया जा रहा है॥ १॥

२

जहाँ सुर-असुरों की रति शृंखलाएँ निक्षिप्त हैं ऐसे हिमवन्त के कूटतल के धरातल पर नवचम्पक कुसुमों से सुवासित छह अंगोंवाले सैन्य को ठहरा दिया गया। बहुत-सी रस्सियों से तम्बू ठोक दिये गये, हजारों युद्धपटह बजा दिये गये।

गजशाला और नाट्यशालागृह और प्रवरशालागृह खड़े कर दिये गये। दोनों ओर उत्कीर्ण काष्ठों से युक्त अश्वशाला ऐसी मालूम होती थी मानो सुमुण्डित घटदासी हो।

मणिमय मण्डपों के घर स्थापित कर दिये गये, और भी दूसरे घर निर्मित कर दिये गये। दुर्वार वैरियों के मद पर प्रहार करनेवाले अस्त्रों को अधिष्ठित और भूषित कर दिया गया। अपने चन्द्रमारूपी चूड़ामणि को दिखानेवाली रात्रि में उपवास स्वीकार कर स्वयं भरत कुशासन पर सो गया। सवेरे आकाश में नक्षत्रों को ढकनेवाला दिनाधिप उग आया। राजा ने धनुष अपने हाथ में ले लिया, मण्डल राणा ने खूब क्रीड़ा की। रथ के अग्रभाग पर चढ़ते हुए उसने शंका नहीं की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

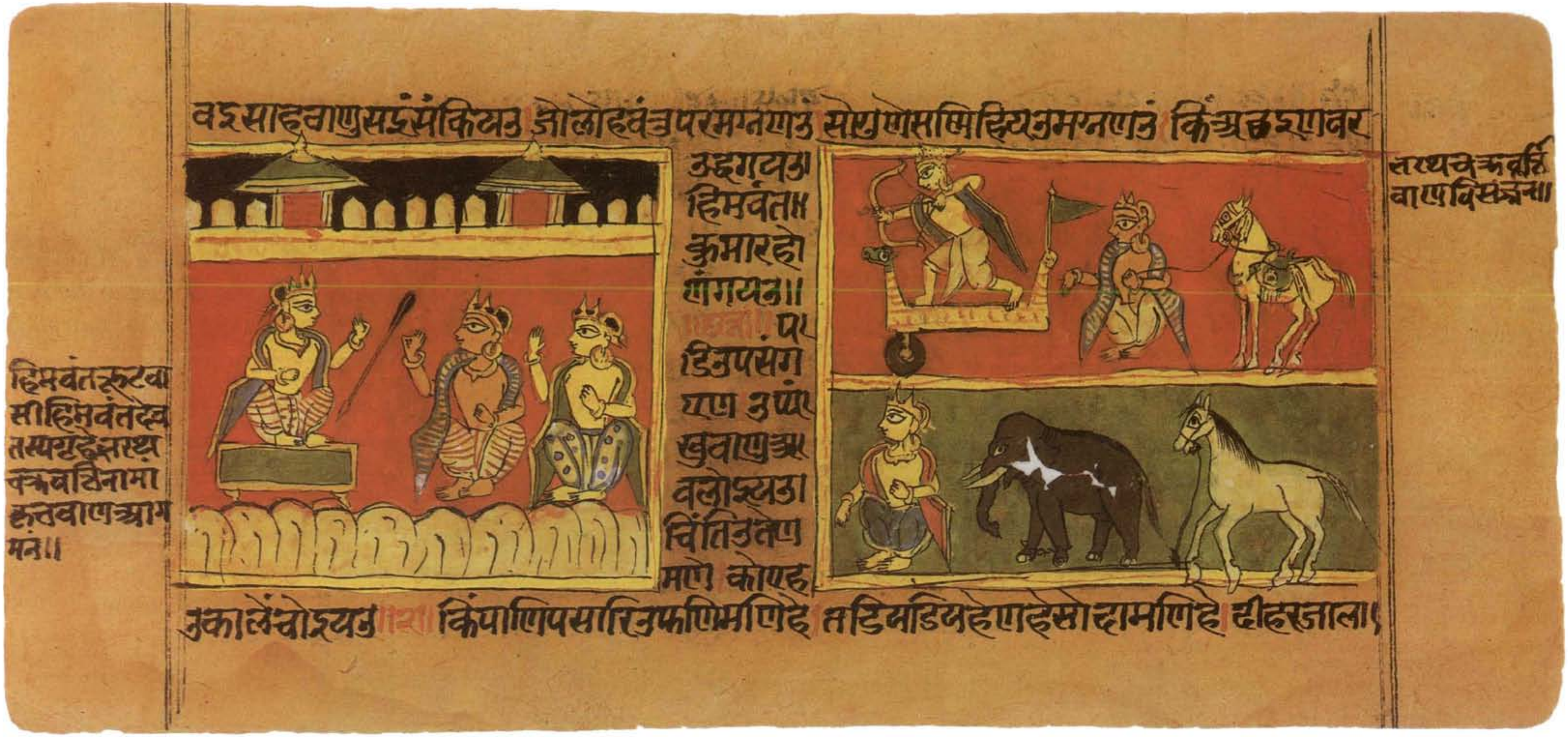

उसने स्वयं वैशाख-स्थान किया।[१] जो लोहवन्त (लोभ और लोहे से युक्त) ऐसे उस मग्गण (बाण और याचक) को गुणि (डोरी/गुणी व्यक्ति) पर रख दिया गया। क्या वह रहता है, नहीं केवल वह ऊपर गया मानो हिमवन्त कुमार के पास गया हो।

घत्ता—अपने आँगन में पड़े हुए पुंख सहित बाण को उसने देखा और अपने मन में विचार किया यह कौन है जिसे काल ने प्रेरित किया है?॥ २॥

३

क्या उसने नागमणि के लिए हाथ फैलाया है, या आकाश में कड़कती हुई बिजली के लिए ? दीर्घ ज्वालमालाओं

१. बायें पैर और घुटने को धरती पर रखकर, दूसरे के ऊपर उठाना बैशाख स्थान कहलाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

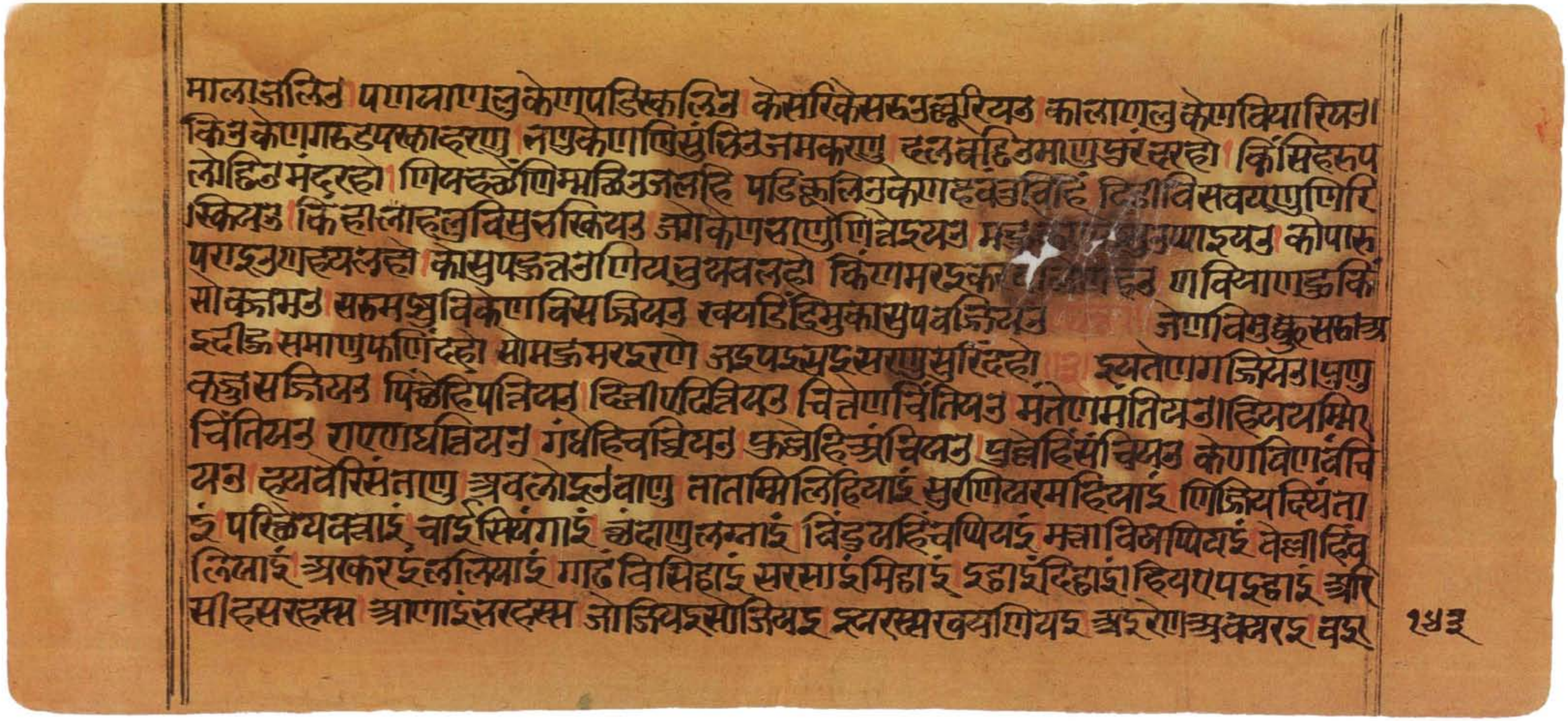

से प्रज्वलित प्रलयाग्नि को किसने छेड़ा है ? सिंह की अयाल को किसने उखाड़ा है ? कालानल को किसने क्षुब्ध किया है? किसने गरुड़ के पंखों का अपहरण किया है? बताओ किसने जमकरण को नष्ट करना चाहा है? किसने देवेन्द्र का मान चूर-चूर किया है, क्या उसने मन्दराचल के शिखर को उलटाया है? किसने अपने हाथ से समुद्र का मन्थन किया है, होते हुए भाग्य को किसने प्रतिकूल कर लिया है? दृष्टि और विषमुख किसने देखा है? किसने हालाहल विष खाया है? विश्व में सूर्य को निस्तेज किसने बनाया? मुझे किसने क्रोध उत्पन्न किया है? आकाशतल के पार कौन जा सका है? अपने बाहुबल के लिए अत्यन्त पर्याप्त कौन है? क्या वह तलवार से आहत होकर भी नहीं मरता? हम नहीं जानते कि क्या वह वज्रमय है? मुझे किसने यह तीर विसर्जित किया? किसका क्षय का नगाड़ा बज उठा है?

घत्ता—जिसने नागेन्द्र के समान अति दीर्घ लम्बा तीर छोड़ा है वह युद्ध में मुझसे मरेगा, भले ही वह देवेन्द्र की शरण में चला जाये?॥ ३ ॥

४

उसने इस प्रकार गर्जना की और फिर अपना काम सम्हाला। उसने वैरी परम्परा का अन्त करनेवाले बाण को देखा, जो पुंखों से पत्रित, दीप्ति से दीप्त, चित्र से चित्रित और मन्त्र से मन्त्रित था, जो हृदय में सोचा गया और राजा (भरत) के द्वारा छोड़ा गया था। गन्ध से चर्चित, फूलों से अंचित और पुण्यों से संचित उसे कोई नहीं बाँध सका। तब उसमें लिखे हुए सूरसमूह के द्वारा महनीय, दिग्गजों को जीतनेवाले निर्णायक वागेश्वरी देवी के अंगस्वरूप छन्दों में रचित, बिन्दुओं से युक्त मात्राओं से रचित, पंक्तियों में मुड़े हुए सुन्दर, सघन रूप से लिखे गये सरस और मीठे और इष्ट, सुन्दर अक्षरों को उसने देखा। वे हृदय में प्रवेश कर गये। ''शत्रुरूपी सरभ के लिए सिंह के समान भरत की आज्ञा से जो जीता है वही जीता है, दूसरे का क्षयकाल शीघ्र आ जाता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यम भी निश्चित रूप से मरता है।'' बार-बार उस पत्र को देखकर और इस प्रकार उसे पढ़कर युद्ध को शान्त करनेवाले दूसरे देवों के साथ—

घत्ता—चामरों, स्वर्णदण्डों, रत्नों, मोतियों के द्वारा और अपने भुजदण्डों से प्रणाम करते हुए उसने चक्रवर्ती से भेंट की॥ ४॥

५

राजा ने रत्नों से पूजा कर हिमवन्त कुमार को विसर्जित कर दिया। वह दासता स्वीकार कर चला गया। त्रिभुवन में जय प्राप्त करनेवाला राजा भरत सिंह की गर्जना से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

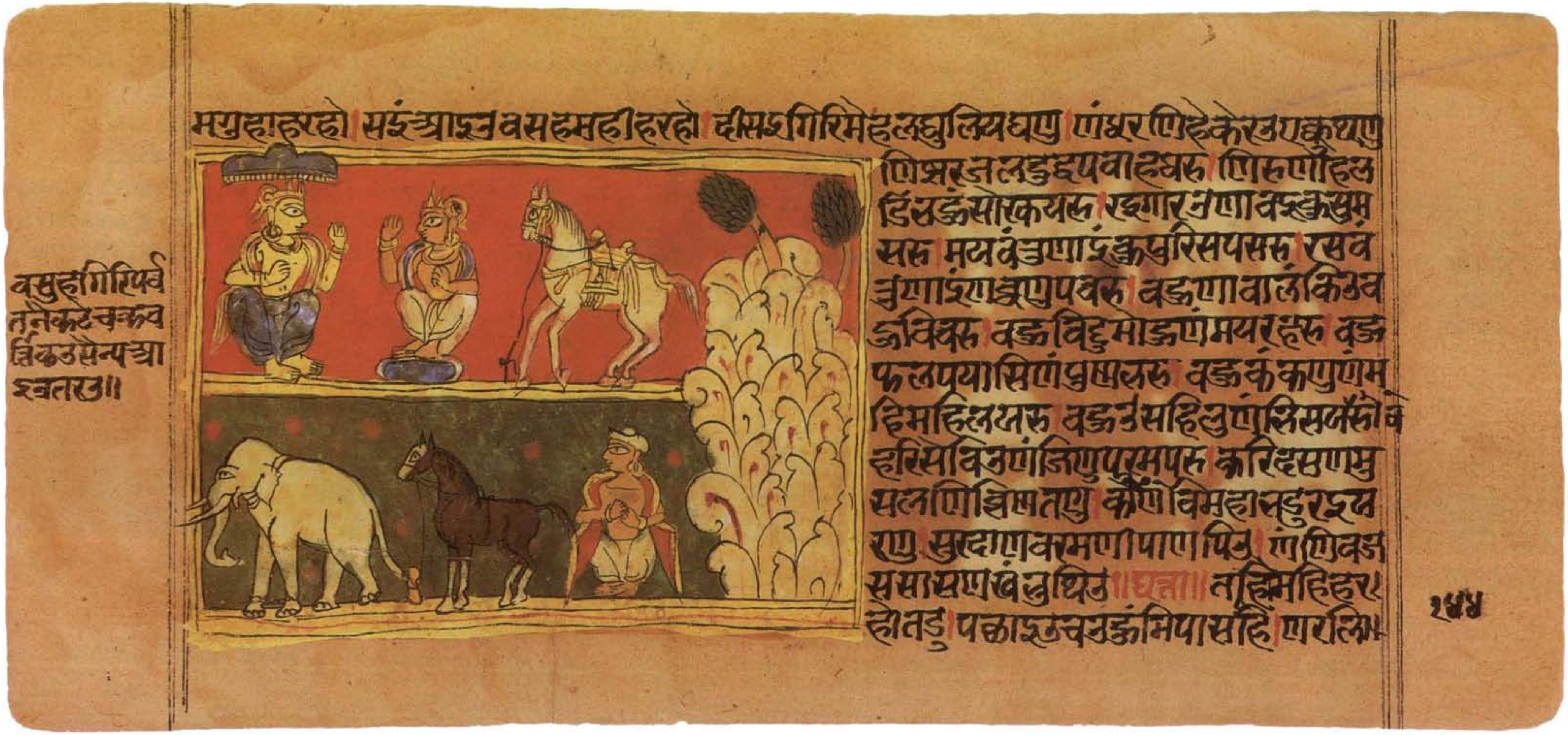

भयंकर गुहारूपी घरवाले वृषभ महीधर के निकट आया। पहाड़ की मेखला से व्याप्त घन ऐसा दिखाई देता है मानो धरती का एक स्तन हो। निर्झर के जलरूपी दूध के प्रवाह को धारण करनेवाला जो भीलों के बच्चों के लिए अत्यन्त सुखकर है, कामदेव के समान रतिकारक है, कुपुरुष के प्रसार के समान मदवाला है, प्रवर नृत्य के समान रसमय है, बहुत-से नामों से अलंकृत बहुविवर (बहुछिद्रवाला, बहुत श्रेष्ठ पक्षियोंवाला) है। जो मानो बहुविद्रुमोघ (प्रवालौघ, विशिष्ट द्रुमौघ) वाला समुद्र है, जो मानो बहुपुण्य प्रकाशित करनेवाला पुण्य का भार है, मानो अनेक कंकणवाला धरतीरूपी महिला का हाथ है, जो मानो वैद्य की तरह कई औषधियोंवाला है। जो मानो हरि-सेवित (देवेन्द्र और सिंह) जिनवर हो। हाथियों के दाँतों के मूसलों से आहत शरीर जो मानो कोई युद्ध करनेवाला महासुभट हो। देव, दानव और मनुष्यों की पत्नियों के लिए प्राणप्रिय जो मानो जिनवर के शासन का स्तम्भ स्थित हो।

घत्ता—उस महीधर का तट चारों ओर से

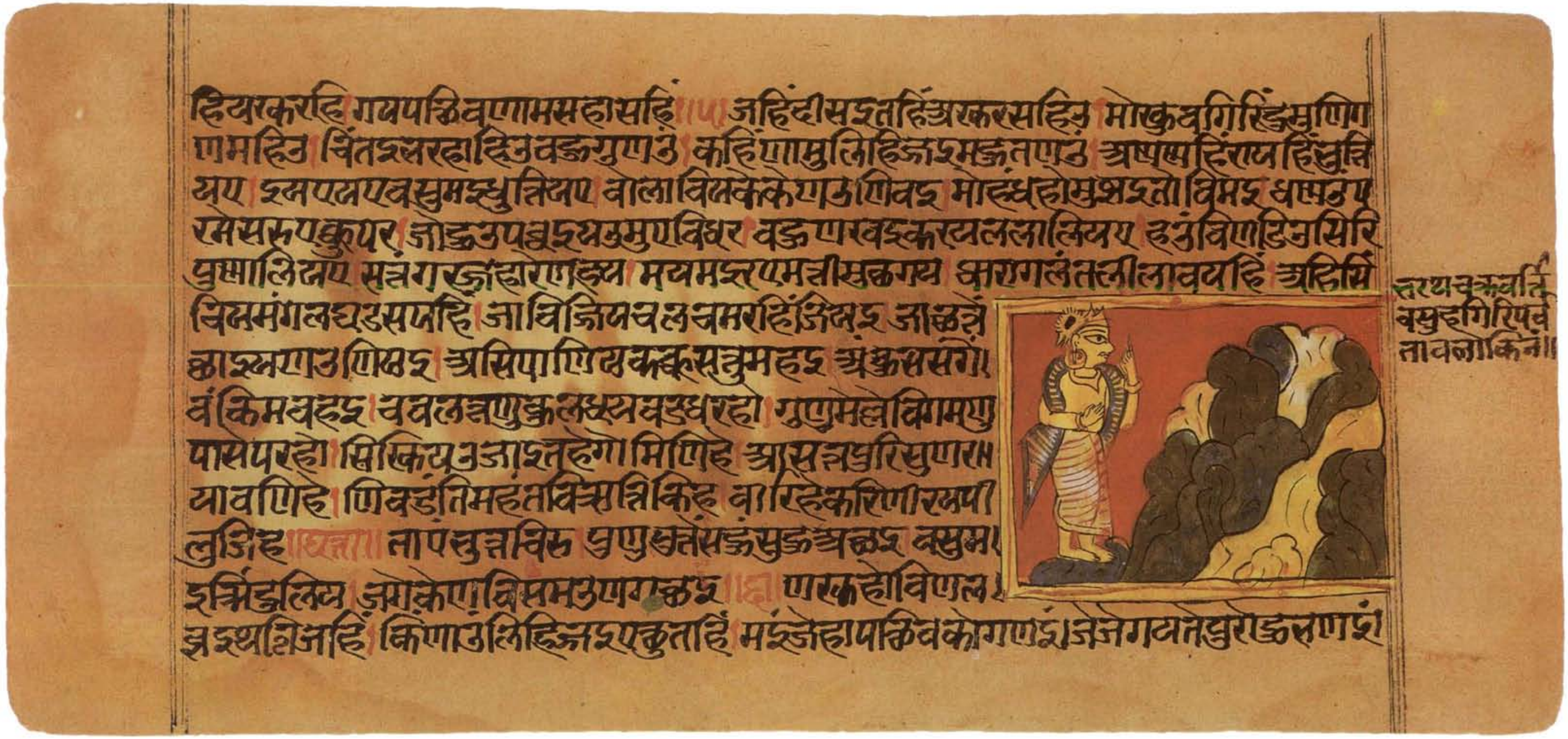

मनुष्यों के द्वारा लिखे गये अक्षरों और विगत राजाओं के हजारों नामों से आच्छादित था॥५॥

६

जहाँ दिखाई देता है वहाँ अक्षर सहित है, वह पर्वत मोक्ष की तरह मुनिगण के द्वारा पूज्य है। बहुगुणी भरत अपने मन में सोचता है कि मेरा नाम कहाँ लिखा जाए ? दूसरे-दूसरे राजाओं के द्वारा भोगी गयी इस धूर्त धरती के द्वारा कौन-कौन राजा अतिक्रमित (त्यक्त) नहीं हुए ? तब भी मोहान्ध मेरी मति मूर्छित होती है ? केवल एक परमात्मा धन्य हैं जो धरती छोड़कर प्रव्रजित हुए। अनेक राजाओं के हाथों से खिलायी गयी इस लक्ष्मीरूपी वेश्या से मैं प्रवंचित किया गया। सप्तांग राज्यभार से यह आहत है, मदरूपी मदिरा से मत्त और मूर्छा को प्राप्त है। धाराओं में गिरते लीलारूपी जलोंवाले सैकड़ों मंगल घटों से अभिसिंचित है, जो चंचल चमरों के द्वारा हवा की जाती हुई जीवित रहती है, जो छत्रों से आच्छादित होने के कारण नहीं देख पाती, तलवार के जल की कर्कशता को महत्त्व देती है। अंकुश के साथ टेढ़ी चलती है, कुलध्वजों के श्रेष्ठ पदों की जो चंचलता को धारण करती है, और जो गुण छोड़कर दूसरे के पास जाती है। शिक्षित भी पुरुष इस धरती में आसक्त होकर नरकभूमि में जाता है। बड़े-बड़े लोग भी शीघ्र किस प्रकार गिर पड़ते हैं जिस प्रकार हथिनी में अनुरक्त हाथी गड्ढे में गिर पड़ता है।

घत्ता—पिता के द्वारा बहुत समय तक भोगी गयी यह फिर पुत्र के साथ सुखपूर्वक रहती है। यह धरती वेश्या के समान किसी के भी साथ नहीं जाती॥६॥

७

जहाँ एक नख के लिए भी स्थान नहीं है, वहाँ-यहाँ मैं अपना नाम कहाँ लिखूँ ? मेरे-जैसे राजा को कौन गिनेगा, जो-जो राजा जा चुके हैं, उन्हें पुरोहित कहता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

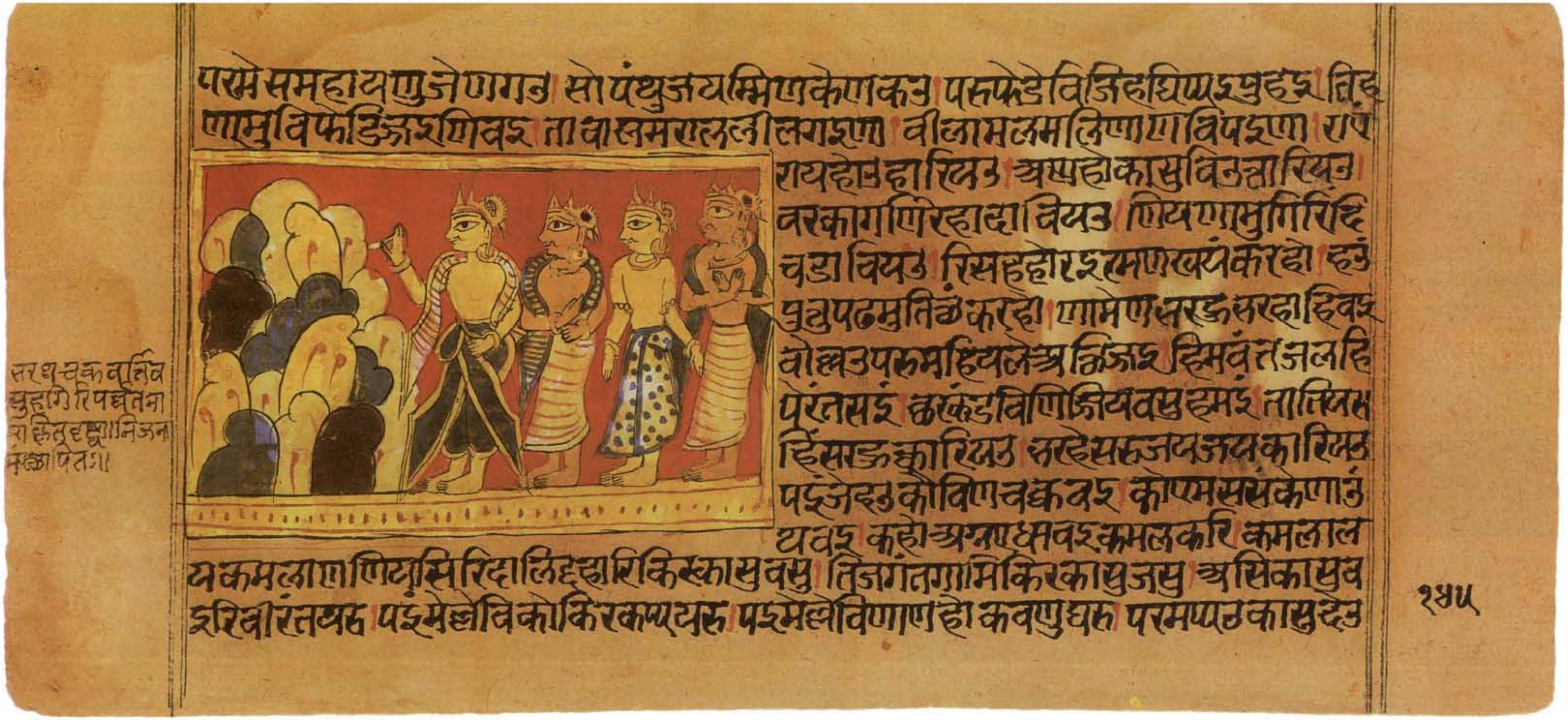

जिस रास्ते परमेश्वर महाजन (ऋषभ) गये हैं, जग में उस मार्ग का अनुसरण किसी ने नहीं किया। दूसरे को नष्ट कर जिस प्रकार धरती ग्रहण की जाती है हे राजन्, उसी प्रकार नाम भी मिटाया जाता है। तब बालहंस के समान लीलागतिवाले तथा लज्जारूपी मल से मलिन स्वामी राजा ने किसी राजा की अवधारणा अपने मन में की और किसी दूसरे राजा का नाम उतार दिया (मिटा दिया), तथा हाथ के कागणी मणि की रेखा से प्रदीप्त अपना नाम पहाड़ पर चढ़वा दिया कि "मैं काम का क्षय करनेवाले प्रथम तीर्थंकर ऋषभ जिन का पुत्र हूँ, नाम से भी भरत, जो धरतीतल पर श्रेष्ठ भरताधिपति कहा जाता है, और मैंने हिमवन्त समुद्रपर्यन्त छह खण्ड धरती को स्वयं जीता है।" तब देवों ने साधुकार किया और भरत का जयजयकार किया कि तुम्हारे समान कोई चक्रवर्ती नहीं है, कौन इस प्रकार चन्द्रमा में अपना नाम अंकित करता है, कमल हाथ में लिए कमल में निवास करनेवाली और कमलमुखी लक्ष्मी किसके आगे-आगे दौड़ती है? किसका धन दारिद्र्य का अपहरण करनेवाला है? किसका यश त्रिलोकगामी है? किसकी तलवार शत्रु का ध्वंस करनेवाली है? तुम्हें छोड़कर कौन कल्पवृक्ष है ? तुम्हें छोड़कर ज्ञान का घर कौन है? और किसका पिता परमात्मा देव है?

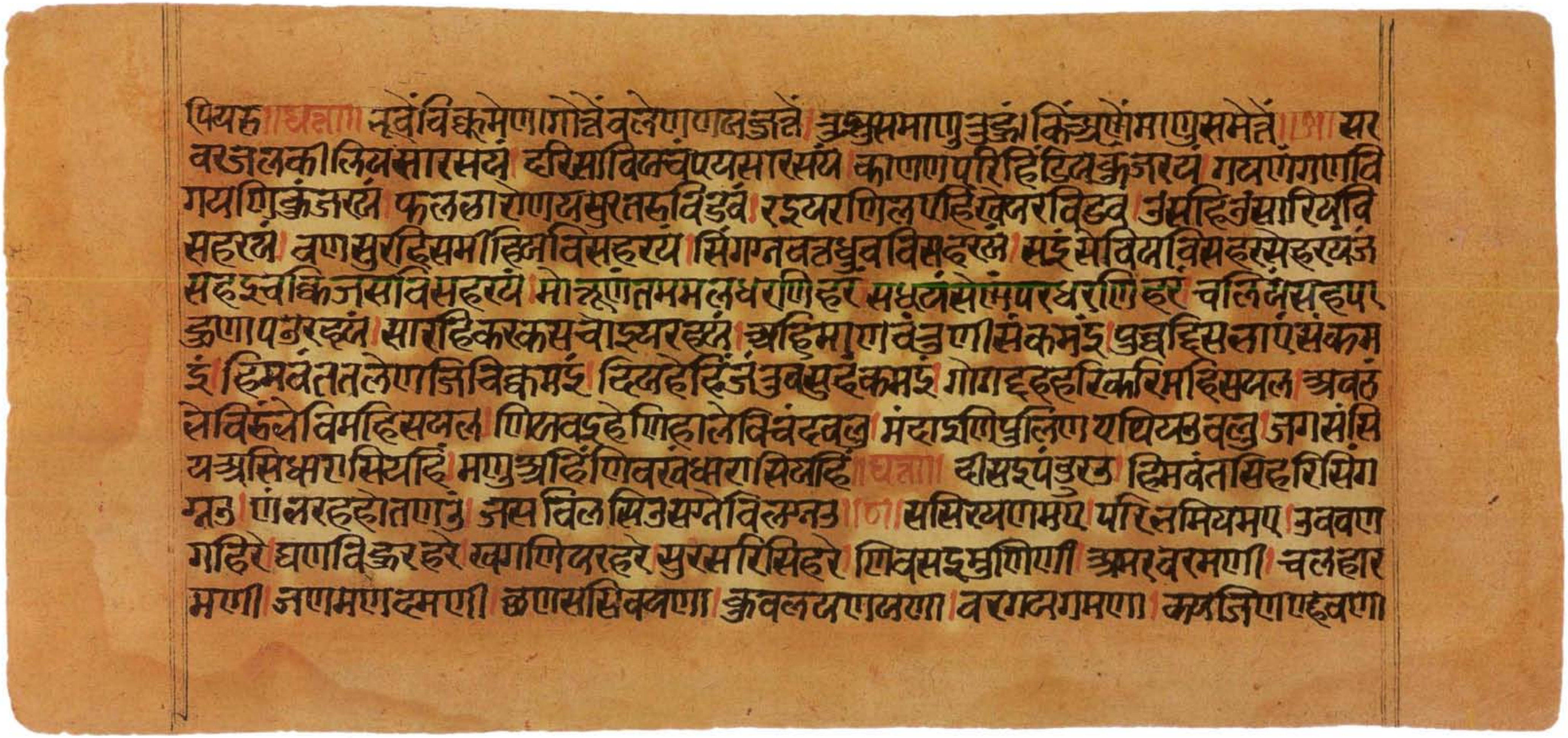

घत्ता—रूप, विक्रम, गोत्र, बल और न्याय-युक्ति में तुम तुम्हारे समान हो दूसरे मनुष्य मात्र से क्या? ॥ ७ ॥

८

जिसमें (पर्वत में) सारस सरोवरों में क्रीड़ा कर रहे हैं, चम्पक वृक्षों की लक्ष्मी दिखाई दे रही है, कानन में गज परिभ्रमण कर रहे हैं, कुंजों का पराग आकाश के आँगन में छा गया है, कल्पवृक्ष फलों के भार से नत हो गये हैं, सुखकर लतागृहों में विद्याधर विट हैं, औषधियों से नाग हटा दिये गये हैं, वन सुरभियाँ (गायें) वृषभरति को चाह रही हैं, ऐसे उस स्वच्छ पर्वत को छोड़कर, ध्वजसहित दूसरों की धरती छीननेवाली, प्रचुर अश्वोंवाली और सारथियों के द्वारा हाँके गये रथों से युक्त सेना अपने प्रभु के साथ चली। अभिमानी और नि:शंक मति वह पूर्व दिशा की ओर प्रस्थान करता है। वह हिमवन्त के तलभाग से जाता है। और जाते हुए कुछ ही दिनों में धरती का अतिक्रमण कर जाता है। जिसमें गौ, गर्दभ, गज और महिषदल हैं, ऐसी समस्त भूमि का आश्रय लेकर और रौंधकर सैन्य अपने स्वामी का चन्द्रबल देखकर मन्दाकिनी नदी के किनारे ठहर गया। विश्व में प्रसिद्ध तलवारों की धाराओं के समान निर्मल राजा की छावनियों में स्थित अनुगामी सैनिकों से—

घत्ता—हिमवन्त पहाड़ के शिखर का सफेद अग्रभाग ऐसा दिखाई देता है मानो भरत का स्वर्ग में लगा हुआ यशविलास हो ॥ ८ ॥

९

जो चन्द्रकान्त मणियों से युक्त है, जिसमें पशु विचरण करते हैं, जो उपवनों से गम्भीर है, जिसमें बादलों से रहित घर हैं, जो पक्षि-कुल को धारण करती है, ऐसी गंगा के शिखर पर गुणी इन्द्राणी निवास करती है। चंचल हारमणिवाली जो लोगों के मन का दमन करनेवाली है। पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान मुखवाली जो कमलनयनी है। उत्तम गज के समान चलनेवाली, जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक करनेवाली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अत्यन्त सुन्दरी स्थूल स्तनोंवाली, कमलों के समान चरणवाली, सिर में फूल गूँथनेवाली, प्रसरित पुलकवाली, व्यन्तरकुल में उत्पन्न हुई,

तिलक की रचनावाली, कामदेव की घर, जिसके चरणों पर नर नत हैं, ऐसी चंचल मकरध्वजवाली, मुनियों की बुद्धि के समान पवित्र हिम-किरणों की तरह धवल—

घत्ता—गंगा नाम की नेत्रों को प्यारी लगनेवाली सती सुरसुन्दरी थी, जिसने अपने रूप और यौवन से देवों को आश्चर्य में डाल दिया था॥ ९॥

१०

नरपति के गुणों से विस्फुरित चरित को हृदय में धारण कर, त्रिवली तरंगोंवाली देवी गंगा तुरन्त चली। सालंकार धीर भुवन में विख्यात

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंगल हाथ में लेकर वह प्रीतिभाव से राजा के समीप पहुँची। दु:स्थितों के मित्र, परकल्याण से युक्त विश्वगुरु के पुत्र, कमलनयन, उत्तम सत्त्ववाले, गुरुजनों के भक्त, विवेकशील, भेद को जाननेवाले, दानकर्त्ता, संग्राम करनेवाले, दुष्टकुल के लिए प्रचण्ड, दण्ड का प्रदर्शन करनेवाले, कान्ति और लक्ष्मी के स्वामी, रमणियों के द्वारा काम्य, प्रकटनाम, लज्जा की श्री से रहित भरत को उसने देखा। फिर भक्ति से भरी हुई कुसुम हाथ में लिये हुए, स्तोत्रों की वाणी में प्रणाम करते हुए, आशीर्वाद देते हुए उस स्त्री ने—

घत्ता—राजा के सिर पर अमृत से भरा हुआ कलश इस प्रकार उड़ेल दिया मानो पश्चिम दिशा में स्थित चन्द्रमा पर पूर्णिमा ने कलश उड़ेल दिया हो॥ १०॥

११

सैन्य को आनन्द देनेवाला कड़ा हाथ में, और हाथ जोड़कर सिर पर मुकुट रख दिया। नीहार के समान सुन्दर हार और माणिक्यों का ब्रह्मसूत्र हिमवन्त पर्वत की शिखरेश्वरी देवी गंगा नदी ने दिया। जिस प्रकार ब्रह्मसूत्र ब्रह्मपुत्र को शोभा देता है, आचार से च्युत दूसरे आदमी को शोभित नहीं होता। दी गयी क्षुद्रघण्टिकाओं से गूँजती हुई करधनी,

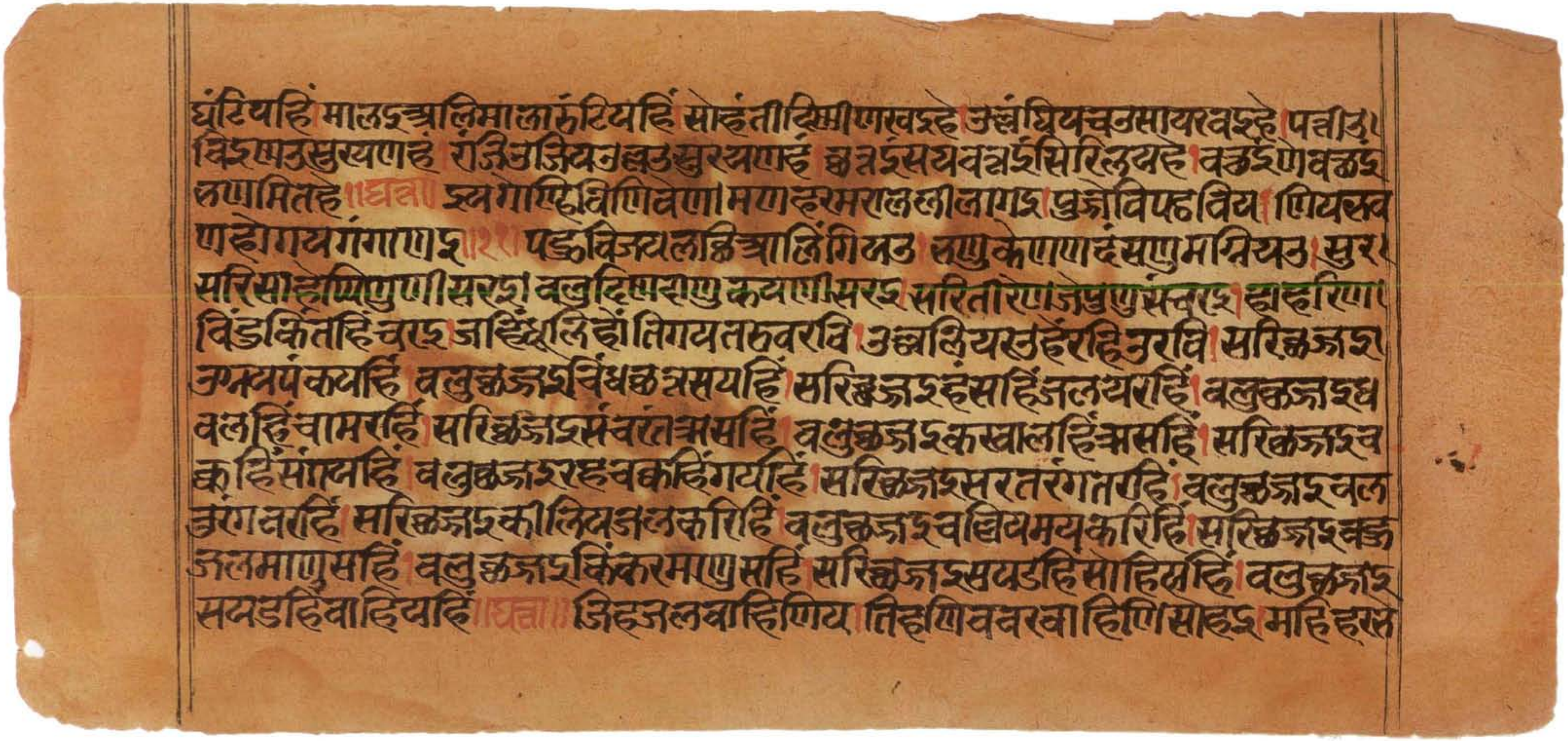

भ्रमरमाला से निनादित सुमनमाला, चारों समुद्रपतियों का अतिक्रमण करनेवाले राजा को शोभा देती है। देवरत्नों की मालाएँ दी गयीं। देवजनों के हृदय प्रसन्न हो गये। कमल ही उस लक्ष्मीलता गंगा के छत्र, वेष और वस्त्र थे।

घत्ता—इस प्रकार उन्हें ग्रहण कर राजा ने सुन्दर हंस के समान चालवाली गंगानदी की पूजा कर उसे भेज दिया, वह अपने घर चली गयी॥ ११॥

१२

विजयरूपी लक्ष्मी से आलिंगित उस स्वामी का दर्शन बताओ किस-किसने नहीं माँगा। गंगानदी को प्रसन्न कर दरिद्रों से प्रेम करनेवाला और दान देनेवाला सैन्य वहाँ से कूच करता है। हरिणसमूह वहाँ क्या चर सकता है, कि जहाँ वृक्ष और पेड़ धूल हो जाते हैं, उछलती हुई धूल से सूर्य ढक गया है। उगे हुए कमलों से नदी शोभा पाती है और सेना रंग-बिरंगे सैकड़ों छत्रों से। नदी, हंसों और जलचरों से शोभा पाती है, और सेना धवल चमरों से। नदी शोभित है, तैरती हुई मछलियों से, और सेना शोभित है तलवारों तथा झस अस्त्रों से। नदी शोभित है संगत जलावर्तों से, सेना शोभित है रथचक्रों और गजों से। नदी शोभित है स्वरों और तरंगों के भार से, सेना शोभित है श्रेष्ठ जल तुरंगों से। नदी शोभित है क्रीड़ा करते हुए जलगजों से, सेना शोभित है चलते हुए मैगल गजों से। नदी शोभित है बहु जलमानुसों से, सेना शोभित है किंनर मानुसों से। नदी अपने तटों से शोभित है, सेना शोभित है चलाये हुए शकटों से।

घत्ता—जिस प्रकार जलवाहिनी (नदी) शोभित है, उसी प्रकार महीपतिवाहिनी (राजा की सेना) शोभित है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महीधरों (पर्वतों) का भेदन करनेवाली इन दोनों से कहाँ-कौन नहीं डरता?॥१२॥

१३

जहाँ पर निर्गम प्रवेश कहा जाता है, कुछ दिनों में राजा वहाँ पहुँचा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विजयार्ध पर्वत की दुर्गम पश्चिम दिशा में जहाँ तिमीस गुहा थी। मृगों के मार्ग में लगे हुए हैं व्याघ्र जिसमें ऐसी पूर्व की कंडय गुहा के निकट सैन्य इस प्रकार ठहर गया, मानो जैसे गिरिकुहर की ऊष्मा हो। निधियों के स्वामी ने सेनापति से कहा—'लो तुम्हारे योग्य आदेश दे रहा हूँ, दण्डरत्न से किवाड़ को फिर इस प्रकार आहत करो जिससे वह खुलकर रह जाए। तुरंग सेना के साथ शीघ्र जाओ और इस प्रत्यन्त देश को सिद्ध कर शीघ्र आओ। मैं यहाँ छह माह रहूँगा और तुम्हारे लौटने पर जाऊँगा।' तब असिधारा के जल से अपने यशरूपी वस्त्र को धोनेवाले सेनाप्रमुख महायोद्धा ने—

घत्ता—पूर्व क्रम के अनुसार अश्वरत्न पर चढ़कर और क्रुद्ध होकर वज्रदण्ड से गिरिगुहा के किवाड़ को आहत किया॥ १३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४

जिस प्रकार जिन भगवान् के दर्शन से पापपटल, जिस प्रकार सूर्य के उद्‌गम से अन्धकार-मल, जिस प्रकार शुद्ध स्वभाव से काम, जिस प्रकार दुष्टता से स्नेहभार दूषित होता है, जिस प्रकार सुकवीन्द्र के समागम से कुकवि विघटित हो जाता है, उसी प्रकार शीघ्र वह किवाड़ विघटित हो गया। वहाँ जो भयंकर शब्द हुआ उसके भय से कौन नहीं थर्रा उठा? वहीं शिखरस्थल पर श्रीनृत्यमाल नाम का देव अपना घर बनाकर रहता था। प्रतिहार ने उसे राजा को दिखाया, वह चरणकमलों को देखकर प्रसन्न हो गया। सेनापति ने म्लेच्छ धरती सिद्ध कर ली और उसे विजय-लक्ष्मी की सहेली सिद्ध हो गयी। आकर उसने प्रभु के चरणों में नमस्कार किया। वहाँ रहते हुए भरत के छह माह बीत गये।

घत्ता—लेकिन वह गुहाकुहर राजा के जाने के योग्य नहीं हो सका। उसे सब कुछ शीतल दिखाई दिया, जैसे पराया कार्य हो॥ १४॥

१५

तब मन्त्रियों ने राजा से कुछ भी छिपाकर नहीं रखा और परमात्मा (ऋषभ) के पुत्र (भरत) से कहा—"तुम्हारी मन्थरगतिवाली माता यशोवती के वे दो भाई हैं, कुमारवर, नाम से नमि और विनमि, धीर-वीर और युद्धभार उठाने में समर्थ। वे इस अविचल गिरिमेखला (पर्वतश्रेणी) के विद्याधरपति होकर रहते हैं। झुकी हुई शाखाओं और खिले हुए वनोंवाली यहाँ पचास साठ विद्याधर पट्टियाँ हैं। और वह उतने ही करोड़ उद्दाम गाँवों को धारण करने के कारण विभक्त हैं। वे (दोनों भाई) वहाँ भोग करते हैं, रहते हैं, दिन बिताते हैं और तुम्हारे पिता ऋषभ जिन को प्रणाम करते हैं।"

यह सुनकर राजा भरत ने युद्ध की धुरा से अलंकृत गणबद्ध सुर वहाँ भेजे। वे गये। और उन्होंने विद्याधरपति से कहा कि छह खण्ड भूमिमण्डल का विजेता चक्रवर्ती राजा भूमितल पर उत्पन्न हो गया है। और जो भुवनाधिपति ऋषभनाथ है, उसके पुत्र भरत का तुम शीघ्र अनुगमन करो, अभिमान और घमण्ड छोड़ दो।

घत्ता—यदि पार्थिववृत्ति नहीं, तो स्वजनवृत्ति स्वीकार कर लो, क्योंकि दोषी चाहे गुरु हों या अपने गोत्रवाले, वह दण्ड प्रयोग करता है॥ १५॥

१६

तब वे बन्धु के स्नेह और भय को समझ गये। विद्याधर राजाओं ने अपना काम समझ लिया। उनका धीर हृदय भी काँप गया। उन्होंने प्रणय और न्याय से निवेदन किया—"अपने शरीर के तेज के प्रवाह से आकाश को पीला कर देनेवाले देव-देव ऋषभ जिस प्रकार हैं, उसी प्रकार भरत भी हम लोगों के लिए आराध्य हैं, बताओ सूर्य के ऊपर कौन तपता है? बताओ आग के ऊपर कौन जलता है? बताओ पवन के ऊपर कौन चलता है? बताओ मोक्ष के ऊपर कौन-सी गति है? बताओ भरत के ऊपर कौन राजा है?" यह घोषित करने पर उसके द्वारा विसर्जित पूजनीय अमरकुल आये,

महाशब्दवाले नगाड़े बज उठे। सैकड़ों कुलचिह्न उठा लिये गये; अश्व, गज और रथ हाँक दिये गये। अपने-अपने परिजनों को बुला लिया गया। शीघ्र ही वे दोनों भाई निकले, दिशारूपी दीवालों के चित्रयानों से भरे हुए।

घत्ता—विद्याधरों के अनुचरों, घिरे हुए अपने रत्नविमानों से मानवाले वे वहाँ आये, जहाँ राजा निवास कर रहा था॥ १६ ॥

१७

हाथ जोड़े हुए और सिर से प्रणाम करते हुए नमि और विनमि राजाओं ने राजा से कहा—"हे नृप, आप हमारे कुल स्वामी हैं, आपको देखने से हमारी आँखों को सुख मिलता है, आपको देखने से आपत्ति दूर हो जाती है, आपको देखने से लक्ष्मी घर में प्रवेश करती है। कामदेव को नष्ट करनेवाले परम जिनेश्वर तुम्हारे पिता के आदेश से स्वर्ण और मणियों से निर्मित घरोंवाले अत्यन्त रमणीय विद्याधर-पुरवर, अत्यन्त स्नेह के कारण हमें दिये गये थे,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

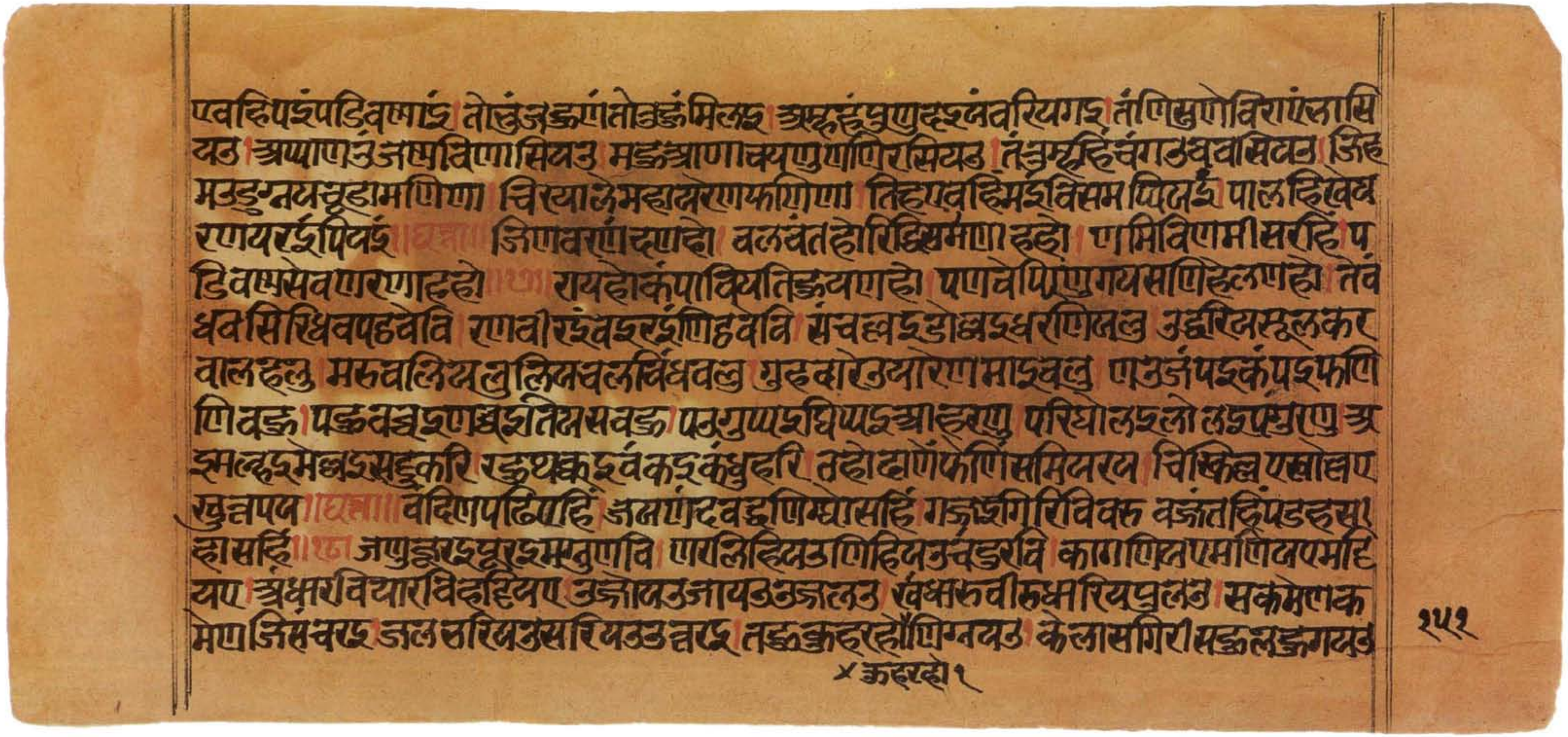

यदि इस समय आप इन्हें देते हैं तो हम इनका भोग करते हैं, नहीं तो आप ही इनको ले लें, हम फिर दिगम्बर दीक्षा ग्रहण करते हैं।'' यह सुनकर राजा बोला, ''जो तुमने अपनापन नष्ट नहीं किया, मेरे आज्ञावचन को नहीं टाला, यह तुमने अच्छा किया। मुकुट में उत्पन्न है चूड़ामणि जिसके, ऐसे महादरणीय धरणेन्द्र ने पूर्वकाल में जिस प्रकार समर्पित किये थे, उसी प्रकार मैं भी समर्पित करता हूँ, अपने प्रिय विद्याधर नगरों का तुम पालन करो।''

घत्ता—इस प्रकार नमि और विनमीश्वर के द्वारा जिनवर के पुत्र बलवान् और ऋद्धि से सम्पन्न नरनाथ भरत की सेवा स्वीकार कर ली गयी॥ १७॥

१८

वे दोनों त्रिभुवन को कँपानेवाले राजा को प्रणाम कर अपने घर चले गये। लक्ष्मी के स्वामी अपने उन दोनों भाइयों को भेजकर तथा युद्ध में धीर शत्रुओं को नष्ट कर जिसने शूल, करवाल और हल उठा रखा है और जो हवा से चलते-उड़ते चंचल ध्वजोंवाला है, ऐसा सैन्य चलता है, धरती हिल जाती है। उधर गुहाद्वार में सैन्य नहीं समाता। नागसमूह काँप उठता है परन्तु कुछ कहता नहीं। प्रभु चलता है, देववधू नृत्य करती है। पैर जमाती है, आभरण ग्रहण करती है, घूमती है, साड़ी हिलाती है। हाथी धीरे-धीरे चलता है, और शब्द करता है, रथ रुक जाता है, और घोड़ा गर्दन टेढ़ी करता है। गज के दान (मदजल) और घोड़े के फेन से रज शान्त हो जाती है। परन्तु कीचड़-भरे गड्ढे में पैर फँस जाता है।

घत्ता—वन्दीजनों के द्वारा पठित जय हो, प्रसन्न रहो, बढ़ो, आदि शब्दों के घोषों और बजते हुए सहस्रों नगाड़ों से गिरिविवर गरजने लगता है॥ १८॥

१९

लोग पीड़ित हो उठते हैं, परन्तु मार्ग समाप्त ही नहीं होता। तब मनुष्य के द्वारा लिखित सूर्य-चन्द्र रख दिये गये, अन्धकार के विकार को नष्ट करनेवाली मट्टिय कठिन कागणीमणि के द्वारा उजला प्रकाश कर दिया गया। स्कन्धावार और वीर भरत पुलकित हो उठा। वह सेतुबन्ध के द्वारा क्रम से चलता है और जल से भरी हुई नदी पार करता है। उस पर्वत की गुफा से निकलकर शीघ्र ही वह कैलास गिरीश पर पहुँच गया।

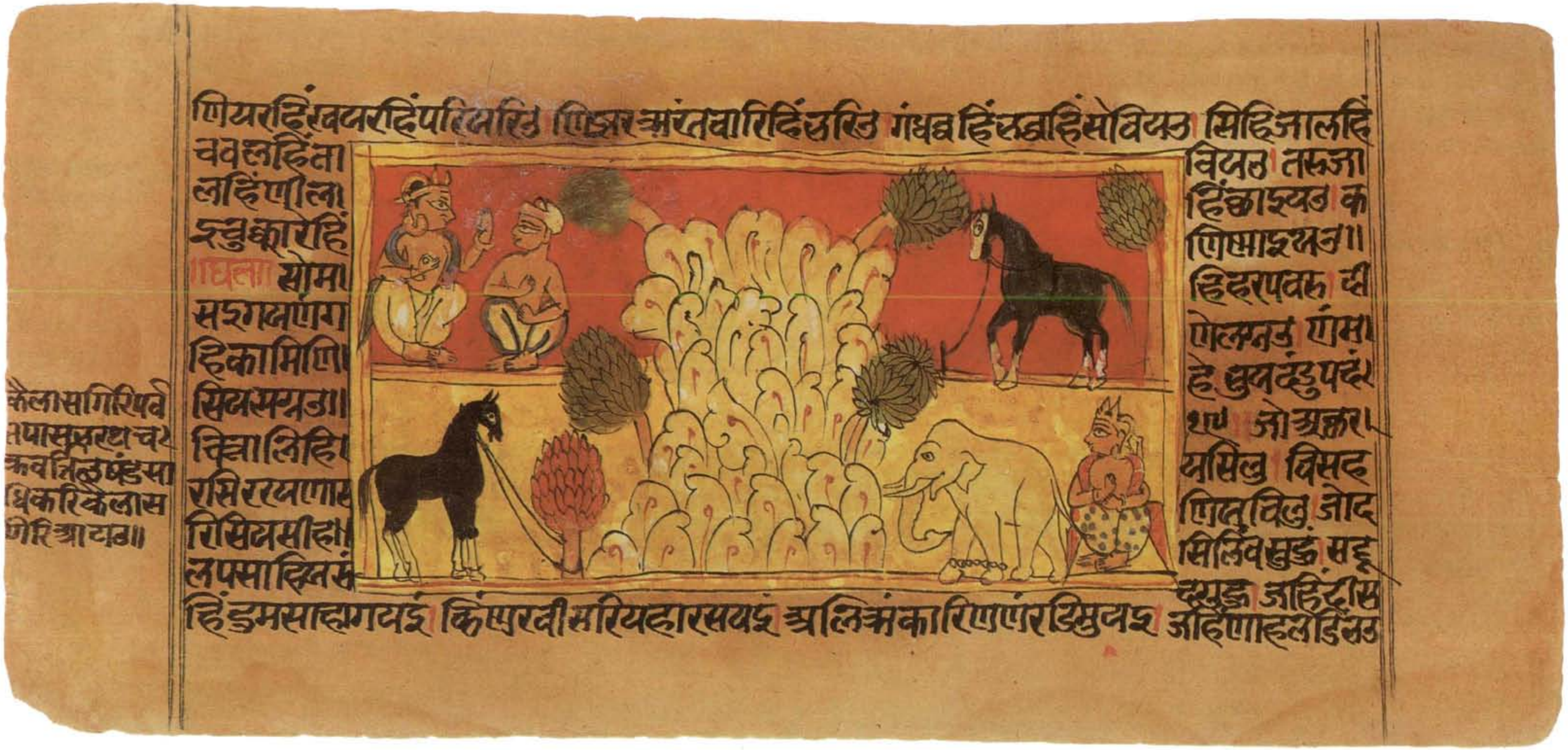

सुर-समूहों और विद्याधरों से घिरा हुआ निर्झरों के झरते हुए जलों से भरा हुआ भव्य गन्धर्वों के द्वारा सेवित, चंचल अग्निज्वालाओं से सन्तप्त, हरे वृक्ष-समूहों से आच्छादित वानरों की आवाजों से निनादित—

घत्ता—वह प्रवर महीधर आकाश से लगा हुआ ऐसा दिखाई देता है मानो धरतीरूपी कामिनी का स्वर्ग को दिखानेवाला भुजदण्ड हो॥ ११ ॥

२०

जिसकी चट्टानें अप्सराओं के चित्रों से लिखित हैं, जिसके बिल विषधरों के शिरोमणियों से आलोकित हैं, जो सिंह शावकों को सुख देनेवाला है, जिसकी विशाल गुफाएँ सिंहों से प्रसाधित हैं, जहाँ वृक्षों की शाखाओं पर किन्नरों के द्वारा विस्तृत सैकड़ों हार दिखाई देते हैं, जहाँ भ्रमर झंकारों से अपना गान नहीं छोड़ता, जहाँ भील का बच्चा सुख से सोता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहाँ अप्सराओं के द्वारा बिना किसी ईर्ष्याभाव के शबरियों के रूप की सराहना की जाती है, जहाँ मणिभित्तियों में अपने ही प्रिय (स्वजन) को देखकर पट्टरानियों के द्वारा सापत्न्यभाव धारण किया जाता है। जहाँ मरकतमणि के पृष्ठ (खण्ड) को दूब का समूह मानकर तरुण हरिण दौड़ता है, जहाँ साँप चन्दनवृक्ष को छोड़कर सोती हुई विद्याधर वधू को (चन्दनवृक्ष) जानकर उसके मुख के श्वासवास को पीता है दूसरे भुजंग की भी यही बुद्धि हो रही है।

घत्ता—जहाँ यममहिष को देखकर यक्षिणी का सिंह क्रोध नहीं करता, जिन भगवान् के माहात्म्य से प्रतिपक्ष और पक्ष में क्षमाभाव दिखाई देता है ॥ २० ॥

२१

जहाँ इन्द्रनील मणि की कान्ति से रंजित मयूर को मार्जार नहीं जान सका। जहाँ शीलधनवाले संयमी मुनि को भी यह शंका होती है कि यह मोती है या हिमकण। जहाँ औषधिरूपी दीप प्रज्वलित है, और रात्रि में शबरसमूह सुख से चलता है। जहाँ मुनियों के संग से शुक समूह गुणगण से मण्डित और पण्डित हो गया है। जहाँ जिननाथ ने जीवदया घोषित कर दी है, जहाँ पशु भी और किरात भी धर्म में रत हैं। जिसके तट की सेवा देवहथिनी करती है, जहाँ चक्रेश्वरी का गरुड़ भ्रमण करता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पद्मावती का हंस कटाक्ष मारता है। जहाँ वरुण का मगर देखा जाता है, जिसके तीर पर पवन का मृग और मयूर मेंढे के साथ क्रीड़ानिरत हैं।

जहाँ बारह कोठों से अधिष्ठित स्वयं समवसरण स्थित है।

घत्ता—उस कैलास गिरिवर के नीचे धरणीश ने अपना शिविर ठहरा दिया मानो मन्दराचल के चारों ओर तारागण स्थित हों॥ २१ ॥

२२

तब शुद्धमति राजा भरत मणि, मुकुट, पट्ट और भूषण धारण करनेवाले ऐरावत की सूँड के समान दीर्घ बाहुवाले, कण्ठ में मुक्तामालाएँ धारण किये हुए, नव कुसुमों की अंजलियों को उठाये हुए, अपने शरीर के तेज से वनस्थली को उजला बनाते हुए, शान्त और कलह का शमन करते हुए कुछ राजाओं के साथ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

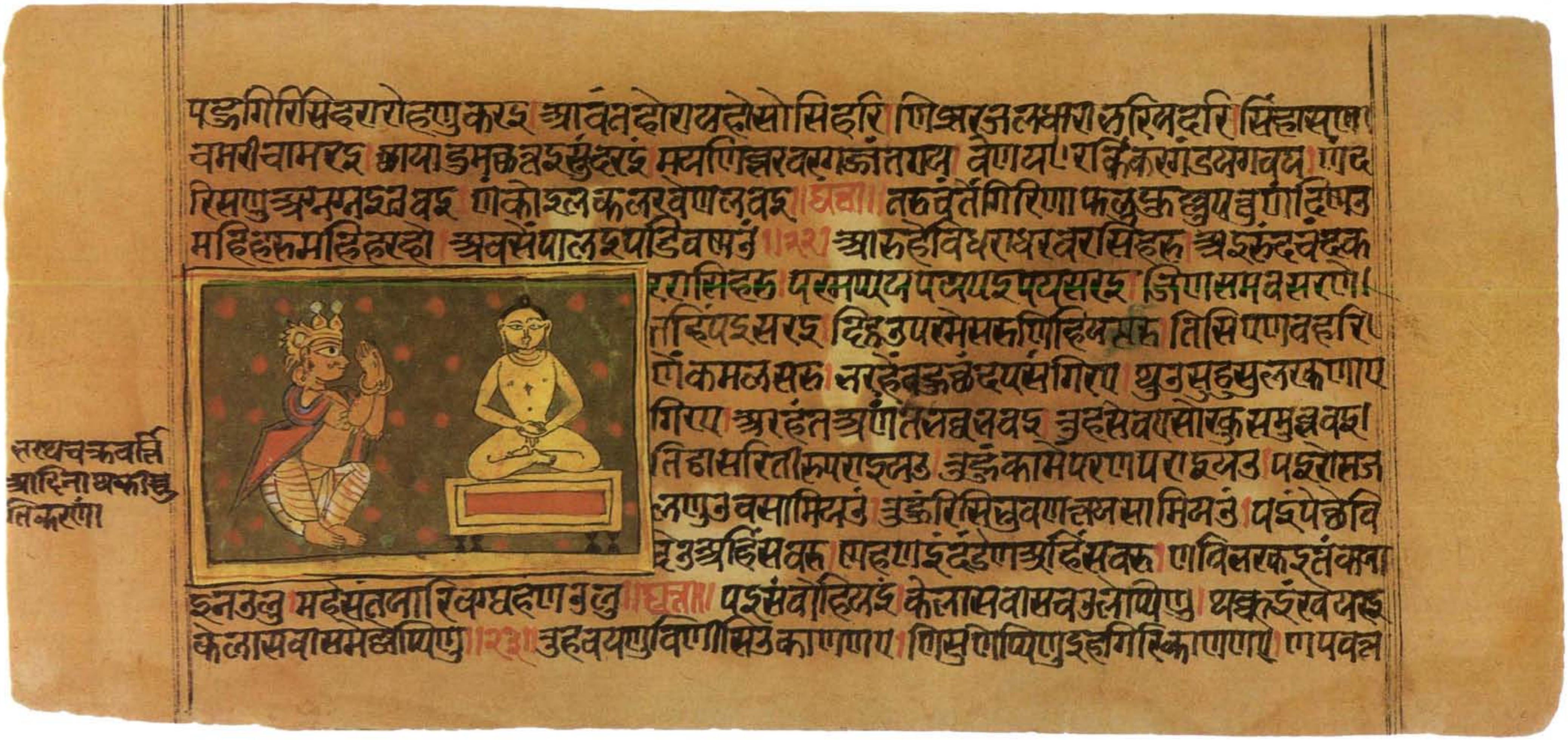

कैलास पर्वत के शिखर पर आरोहण (चढ़ाई) करता है। निर्झरों की जलधाराओं से जिसकी घाटी भरी हुई है, ऐसा वह पर्वत आते हुए राजा के लिए सिंहासन, चमरी, चामर, सुन्दर छायाद्रुमरूपी छत्र, मदनिर्भर गरजते वर गज, गंडक (गैंडे)-गवय आदि वनचररूप किंकरों को उपहाररूप में आगे-आगे स्थापित करता है, मानो कोयल कलरव में आलाप करती है।

घत्ता—वृक्षवाले गिरि ने मानो फल-फूल और पत्ते उसे दे दिये मानो महीधर (राजा) महीधर (पर्वत) की स्वीकृति का अवश्य पालन करता है ॥ २२ ॥

२३

अत्यन्त विशाल चन्द्रमा की किरण राशि का हरण करनेवाले पर्वत शिखर पर चढ़कर परमात्मा का पुत्र प्रवेश करता है और जहाँ समवसरण है वहाँ पहुँचता है। कामदेव का नाश करनेवाले परमात्मा को उसने इस प्रकार देखा जैसे प्यासे हरिण ने कमलसरोवर को देखा हो। तब भरत ने तरह-तरह के छन्दों के प्रस्तारवाली सुलक्षण वाणी में खूब स्तुति की - हे अरहन्त अनन्त, भव्यरूपी नक्षत्रों के चन्द्रजिन, तुम्हारी सेवा से सुख होता है, तुम तृष्णारूपी नदी के तीर पर आ गये, परन्तु काम तुम्हारे पास नहीं पहुँचा। तुमने क्रोध की ज्वाला को शान्त कर दिया है। हे ऋषि, तुम भुवनत्रय के स्वामी हो, हे अहिंसाश्रेष्ठ देव, तुम्हें देखकर शबर दण्ड से साँप को नहीं मारता। उसे नकुल भी कभी नहीं खाता और व्याघ्रों का समूह, महिषों का अन्त करनेवाला नहीं होता।

घत्ता—हे कैलासवासी, आपके द्वारा सम्बोधित खेचर कैलास पर रहने का व्रत लेकर, कैलासवास (मद्यभाजन और मद्य पीने की आशा) छोड़कर स्थित हैं ॥ २३ ॥

२४

हे ब्रह्मन्, तुमसे निकले हुए वचन सुनकर इस गिरि-कानन में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहीं भी वध नहीं होता। हे परलोक पथ को दिखानेवाले, आपकी जय हो। यहाँ सिंह और शरभ एकसाथ रहते हैं, मयूरों के च्युत पंखों में शबरी निवास करती है। हे स्वामी, उसने आपसे व्रत ग्रहण कर लिया है अत: वह श्वापदों के लिए (वध के) गीत नहीं गाती। हे स्वामी, तुमने मार्जारों को मांसगृद्धि (लोभ) और मधु (सुरा) के मार्जारों (मद्यपों) को मदिरा, जारों को परदारा का निवारण कर दिया। तुम विद्यारतों के अच्छे स्वामी हो। हे स्वामी, आदमी का जो पाप और झूठ भ्रमर और अंजन का अनुकरण करता है (पाप लिप्त होता है) उसे मुँह से निकलते ही तुम पकड़ लेते हो। हे देव, आपके होने पर आकाश देवताओं से व्याप्त हो जाता है।

घत्ता—इस प्रकार अमरों, असुरों, मनुजों, पक्षियों, नक्षत्रों और नागों के द्वारा वन्दित पंचेन्द्रियों को जीतनेवाले परमेश्वर की भरत के द्वारा स्तुति की गयी॥ २४॥

इसप्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित तथा महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का उत्तर भरत प्रसाधन नामक पन्द्रहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ १५॥

सन्धि १६

जिनवर के चरणकमलों को प्रणाम कर और कैलास से उतरकर पृथ्वी का स्वामी भरत अपने निवास साकेत के सम्मुख चला।

१

सूर्य के समान कर्णकुण्डल और रत्नों की मेखलावाले, मुकुटपट्ट धारण किये हुए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और गले में हार पहने हुए मण्डलेश्वर, विद्याधर, सुर और मनुष्य चले। गिरि-स्थल एक पल में समतल हो गया। कौन-कौन जल-कीचड़मय नहीं हुआ? कौन-कौन-सा वन चूर-चूर नहीं हुआ? कौन-कौन तृण धूल नहीं हुआ। किस-किस देशान्तर को उन्होंने नहीं लाँघा? किस-किस दुर्ग का आश्रय नहीं लिया? किस-किस आयुध को नहीं देखा? किस-किस शत्रु-सेना का प्रतिपतन नहीं किया? किस-किस श्रेष्ठ वाहन को नहीं चलाया? किस-किस शत्रुमण्डल को नहीं साधा? स्वर्णदण्डों से अलंकृत है प्रतिहार जिसमें, प्रभु के ऐसे स्कन्धावार के आने पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुर-स्त्रियाँ अपने आभरण ग्रहण कर रही हैं। कोमल देवांग वस्त्र पहने जा रहे हैं। केशर का छिड़काव किया जा रहा है। कपूर से रंगोली (रंगावलि) की जा रही है। भ्रमरसहित कुसुम फेंके जा रहे हैं, देववृक्षों (कल्पवृक्षों) के पल्लव-तोरण बाँधे जा रहे हैं। घर-घर में जिनपुत्र का गान किया जा रहा है। दूध, दही, तिल और चन्दन, दर्पण, कलश धारण किये जा रहे हैं। दूसरी देव-कन्याओं द्वारा मंगलघोष किया जा रहा है। यक्षेन्द्र, खगेन्द्र और मानवेन्द्रों के साथ सुरेन्द्रों के द्वारा प्रशंसा की जा रही है। गजवर के कन्धे पर बैठा हुआ सुन्दर चमर धारण करनेवाली स्त्रियों के द्वारा हवा किया जाता हुआ—

घत्ता—समस्त धरती को तलवार से जीतकर साठ हजार वर्षों तक दिग्विजय-विलास करने के बाद भरत राजा अयोध्या नगरी में प्रवेश करता है॥ १॥

२

विजयश्री की लीला धारण करनेवाला, क्षण-क्षण में प्रदीप्त होनेवाला, और पैनी धारवाला राजा का चक्र रत्ननिर्मित पुरवर में प्रवेश नहीं करता। चक्र स्थित हो गया, वह नगर में प्रवेश नहीं कर सकता,

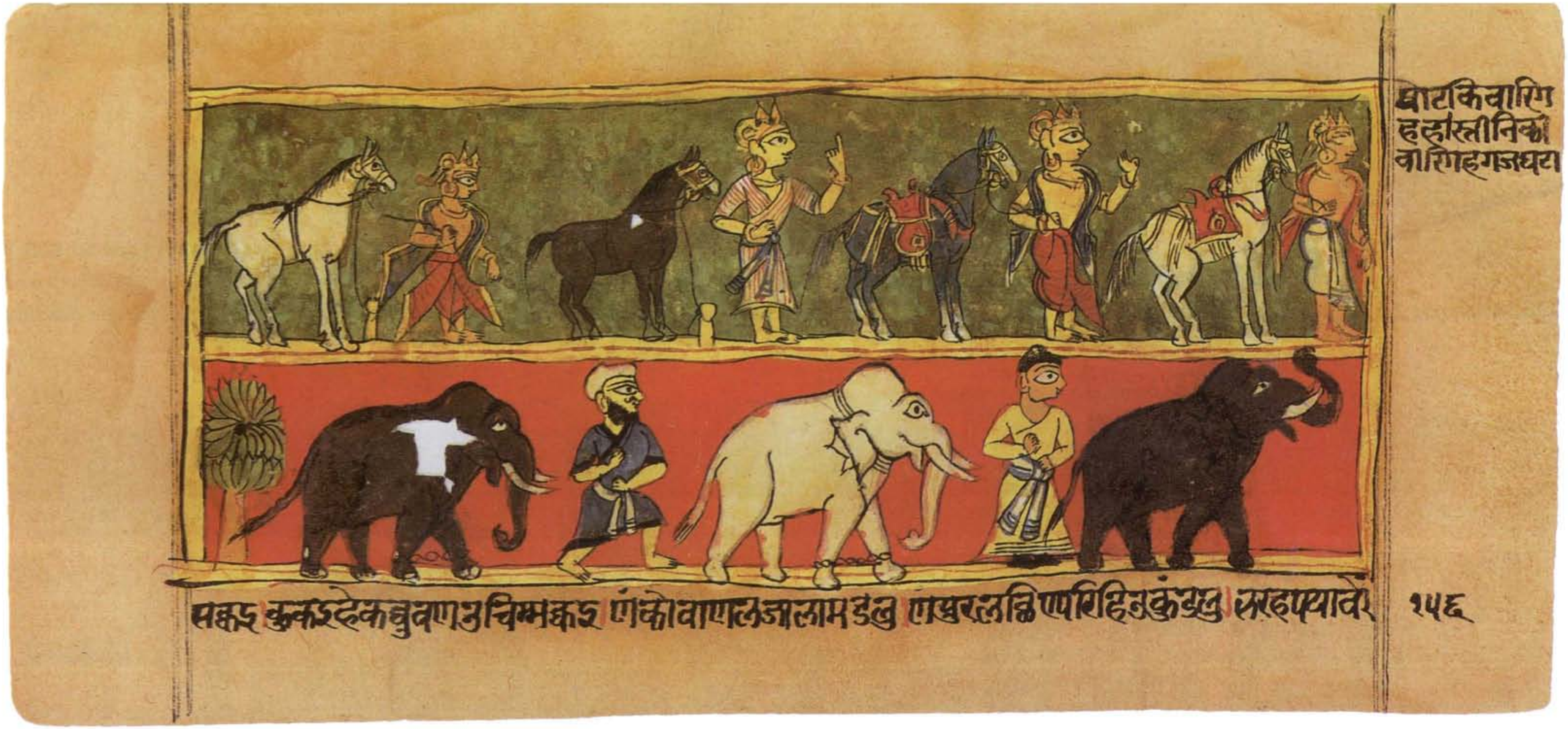

कुकवि के काव्य की तरह चमत्कार उत्पन्न नहीं करता। मानो कोपरूपी आग का ज्वालामण्डल हो, मानो नगरलक्ष्मी ने कुण्डल पहन लिया हो। भरत के प्रताप से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

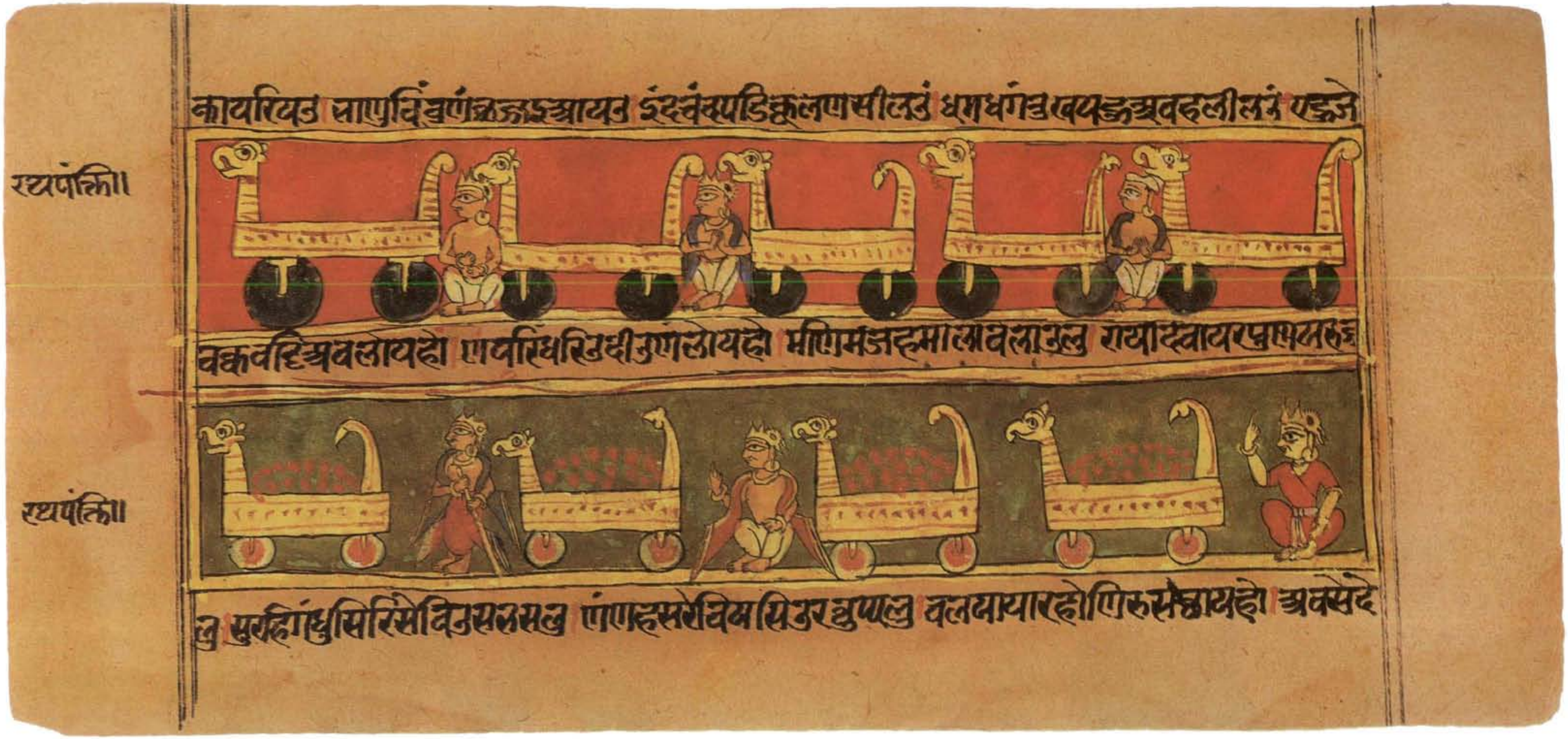

कायर हुआ मानो आया हुआ भानुबिम्ब शोभित है। इन्द्र और चन्द्रमा को प्रतिकूल करनेवाला मानो धकधक करता हुआ प्रलय काल की लीला के समान है। इस चक्रवर्ती को देख लो मानो लोक ने (इसके लिए) नगर में दीपक रख दिया है। मणियों की किरणमालाओं के ठहरने का तट, राजारूपी दिवाकर के पुण्यरूपी हाथों (करों) से उज्ज्वल, सुरभित गन्ध और लक्ष्मी से सेवित तथा भ्रमर-सहित जो चक्र मानो आकाशरूपी नदी का रक्त कमल है। वलय की आकृतिवाले सुन्दर कान्ति से युक्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसके लिए धरती अवश्य कर देगी।

घत्ता—वह चक्र नगरी में प्रवेश नहीं करता, उसी प्रकार जिस प्रकार सैकड़ों कपटों से भरा हुआ धूर्त का विकारग्रस्त हृदय वेश्या में प्रवेश नहीं करता॥ २॥

३

मानो जैसे नाग-नर और देवों द्वारा प्रशंसित, यश से विभूषित और गुणगण समूह से दीप्त, सज्जन का स्वच्छ चरित्र, दुर्विनीत मानसवाले दुष्ट मनुष्य में प्रवेश नहीं करता। सूर्य का अतिक्रमण करनेवाला वह चक्र बाहर ऐसा स्थित हो गया मानो दैव ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसे कीलित करके छोड़ दिया हो। निश्चित रूप से चक्र घर में प्रवेश नहीं करता, मानो अन्याय से उपार्जित धन पवित्र घर में प्रवेश नहीं कर रहा हो, जैसे सती का चित्त पर-पुरुष के अनुराग में, जैसे स्वतन्त्रता दूसरों की दासता में, जैसे मायावी स्नेह-बन्धन में मित्र के समान, पात्रदान में पापी के चित्त के समान, अरुचि से पीड़ित व्यक्ति में दिये गये भात के समान, रति से व्याकुल मनुष्य की नयी विवाहित दुलहिन के समान, शुद्ध सिद्ध मण्डल में यमकरण के समान, पथ्य का सेवन करनेवालों में रोग के विस्तार के समान, दुर्बल और धनहीन के घर में शरण के समान, पाप से मलिन मन में पण्डितमरण के समान, उपशान्त व्यक्ति में क्रोधपूर्ण आचरण के समान, निर्विकार में शरीर की भूषा के समान, निशा-समय के आगमन में सूर्योदय के समान, बुढ़ापे में तरुणीजन के रमण के समान, पुण्यहीन में जिनगुणों के स्मरण के समान, निर्धन और निर्गुण व्यक्ति में विह्वल के उद्धार के समान—

घत्ता—चक्र स्थिर हो गया, पुरवर में वह प्रवेश नहीं करता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

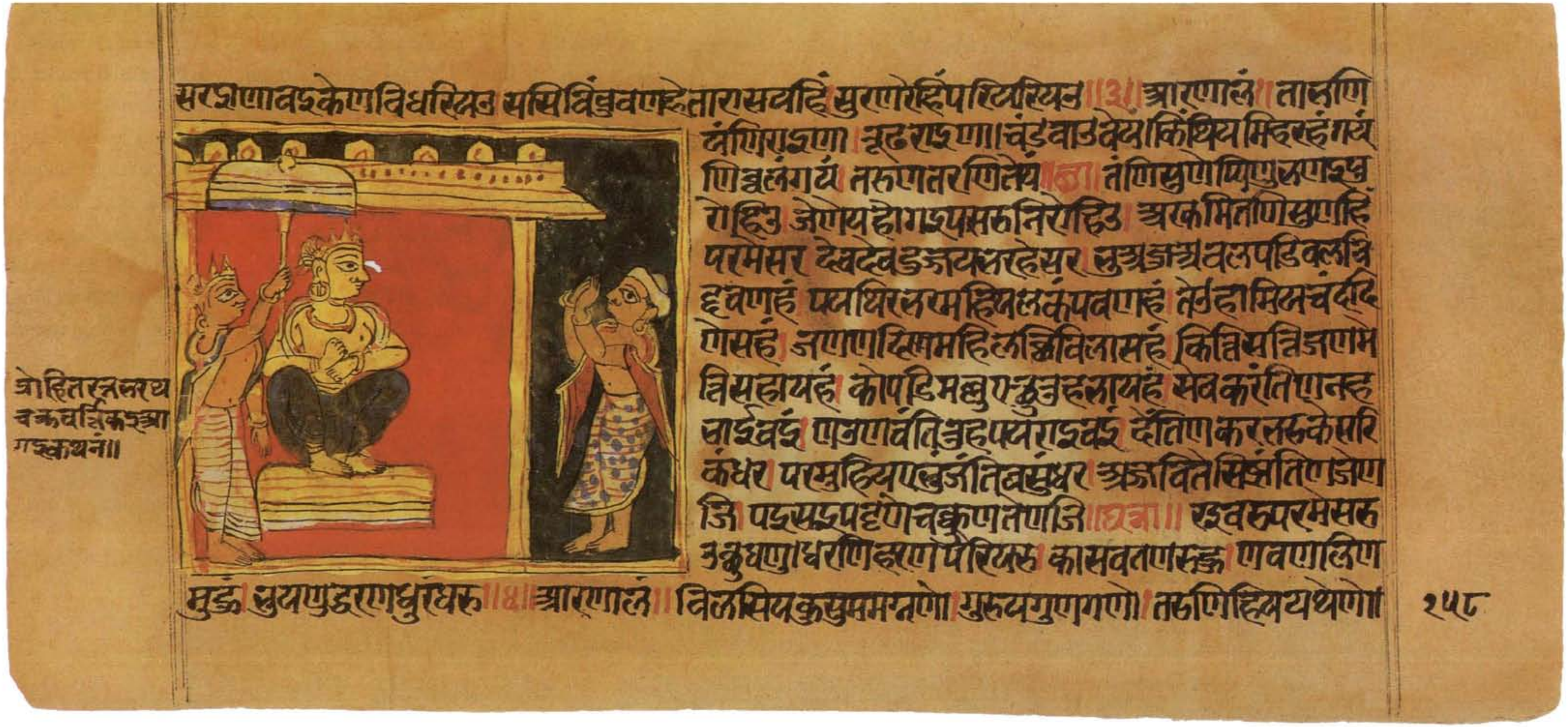

जैसे किसी ने उसे पकड़ लिया हो। सुरवरों से घिरा हुआ वह ऐसा लगता है जैसे आकाश में तारागणों से घिरा हुआ चन्द्रमा हो॥ ३॥

४

तब प्रसिद्ध मनुष्य राजा भरत ने कहा—"प्रचण्ड वायु के समान वेगवाला, तरुण तरणि के समान तेजवाला यह चक्र निश्चलांग क्यों हो गया?" यह सुनकर पुरोहित बोला—"जिस कारण से इसके गति-प्रसार का निरोध हुआ है उसे मैं बताता हूँ। हे नरेश्वर, देव-देव, हे दुर्जेय भरतेश्वर, सुनिए, जिन्होंने अपने बाहुबल से शत्रुओं का दमन किया है, पैरों के भार से धरती-तल को कँपाया है, तेज से सूर्य और चन्द्र को पराजित किया है, पिता ने जिन्हें महीलक्ष्मी का विलास दिया है तथा कीर्ति, शक्ति और जनमात्रा जिनकी सहायक है, ऐसे तुम्हारे भाइयों का यहाँ प्रतिमल्ल कौन है? नखों की कान्ति से प्रदीप्त तुम्हारे चरणकमलों को वे नमस्कार नहीं करते। सिंह के समान कन्धोंवाले जो तुम्हें कर नहीं देते, वे व्यर्थ ही धरती का उपभोग करते हैं। जिस कारण से वे आज भी सिद्ध नहीं हो सकते हैं उसी कारण चक्र नगर में प्रवेश नहीं कर रहा है।

घत्ता—कामदेव परमेश्वर इक्षुधनुष (इक्षुधन) से युक्त धरती के अपहरण और युद्ध के परिकरवाला, कासव (ऋषभदेव का एक पूर्व पुरुष) का पुत्र, नवकमलमुखी और भुवन के उद्धार में धुरन्धर॥ ४॥

५

कामदेव से विलसित, भारी गुणों से युक्त, युवतियों के हृदय को चुरानेवाला,

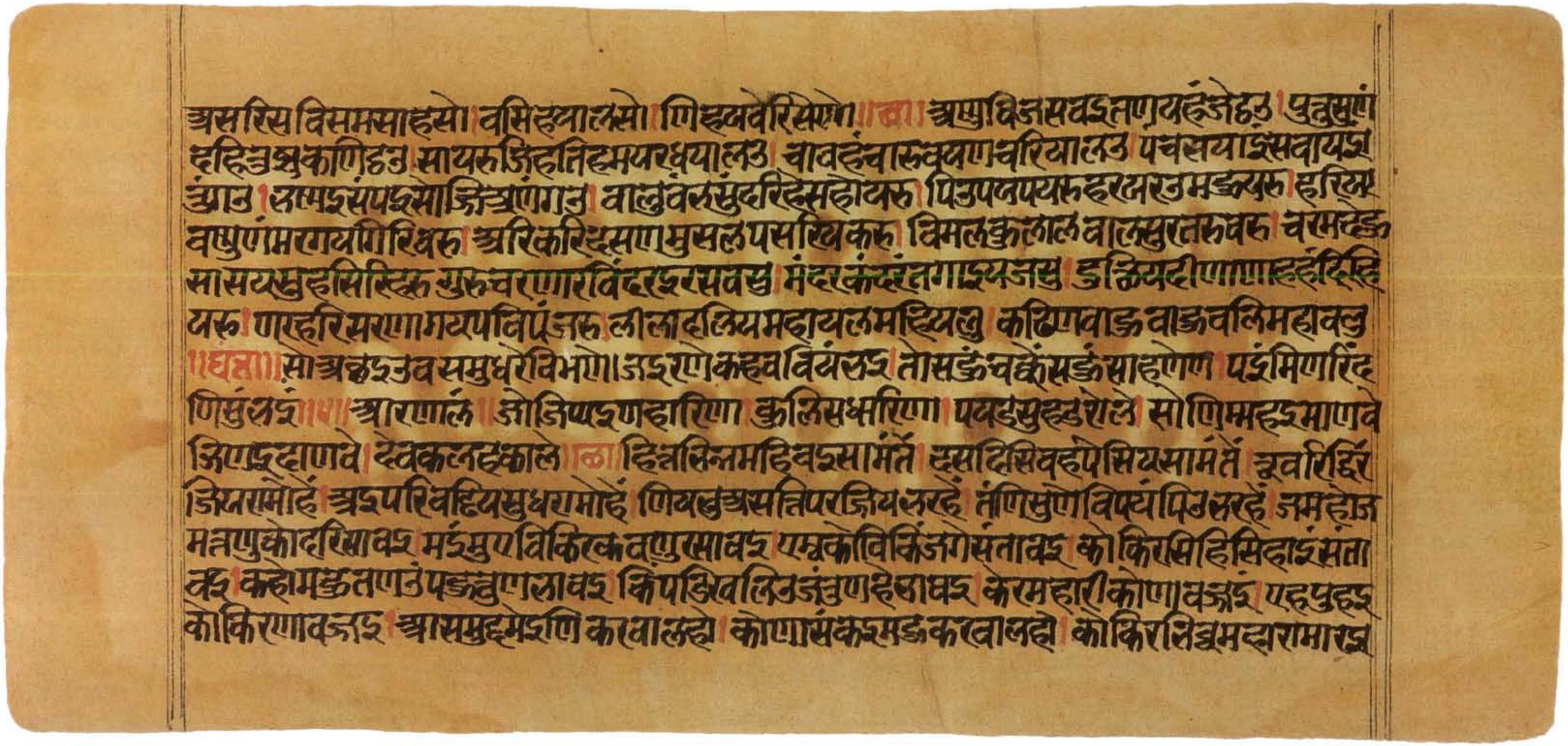

असामान्य विषम साहसवाला, वशी, आलस्य को नष्ट कर देनेवाला और शत्रुसेना को समाप्त कर देनेवाला। और भी यशोवती के पुत्रों से जेठा परन्तु तुमसे छोटा, सुनन्दा का पुत्र, जिस प्रकार कामदेव, उसी प्रकार मकरध्वजालय (मकररूपी ध्वजों का घर, कामदेव का घर), सुन्दर मुख, चारित्र का आश्रय, और सवा पाँच सौ धनुष ऊँचा, उसी को इस समय कामदेव कहा जाता है, ब्राह्मी-सुन्दरी का भाई, पिता के चरणरूपी कमलों में रत भ्रमर, श्याम शरीर जैसे मरकत का पहाड़ हो, शत्रुरूपी गजों के दाँतोंरूपी मूसलों के लिए हाथ फैलानेवाला, पवित्र कुलरूपी आलबाल (क्यारी) का कल्पवृक्ष, चरमशरीरी तथा शाश्वत सुखश्री को धारण करनेवाला, गुरु के चरणकमलों के प्रेम-रस के अधीन, पर्वतों की गुफाओं तक जिसका यश गाया जाता है, दुस्थित दीन और अनाथों का भाग्यविधाता, मनुष्य श्रेष्ठ, शरणागतों के लिए वज्रपंजर (वज्रकवच), महापर्वतों और मदवाले महागजों को खेल-खेल में दलित कर देनेवाला। दृढ़बाहु और महाबली बाहुबलि।

घत्ता—वह मन में उपशम भाव धारणकर स्थित है। यदि वह कहीं भी युद्ध में भड़क उठता है तो चक्र के साथ, सेना के साथ हे राजन्, वह तुम्हें भी नष्ट कर देगा"॥५॥

६

प्रकट है सुभट शब्द जिसका, ऐसे उत्तम वज्र धारण करनेवाले से जो नहीं जीता जा सकता, जो मनुष्य में सम्मान पाता है, कलहकाल में देव और दानव को जीतता है। जिसने महीपति सामन्तों को पकड़ लिया है और उखाड़ दिया है, जिसने दसों दिशाओं में अपने सामन्त भेजे हैं, जिसने अपनी रूपऋद्धि से रमणी-समूह को रंजित किया है, जिसमें पृथ्वी का मोह अत्यन्त बढ़ रहा है, जिसने अपने बाहुबल से भरत क्षेत्र को पराजित कर दिया है, ऐसे भरत ने यह सुनकर कहा—"यम को यमत्व कौन दिखाता है? मुझे छोड़कर पृथ्वीपति कौन है? इस प्रकार जग में कौन सन्ताप पहुँचा सकता है? आग की ज्वालाओं से कौन अपने आपको सन्तप्त करना चाहता है? किसे मेरी प्रभुता अच्छी नहीं लगती? आकाश में स्खलित होकर जाते हुए किसे अच्छा लगता है? कौन मेरी सेवा नहीं ग्रहण करता? यह धरती कौन नहीं अर्जित करना चाहता? समुद्र-पर्यन्त धरती से कर वसूल करनेवाली मेरी तलवार से कौन आशंकित नहीं होता? कौन मेरे अनुचरों को मारता है?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कौन प्रतिकार करता है और मुझे भी मारता है? कामदेव का वर्णन करने से क्या? नहीं प्रणाम करते हुए किसका सिर दर्प से गिरता है?''

घत्ता—यह कहकर राजा ने अविनय के कारण अमनोज्ञ समस्त सब प्रकार की सम्पत्ति धारण करनेवाले शत्रुओं को कठोर लेख दिया॥ ६॥

७

तब जनों के लिए सुन्दर दूत, जहाँ द्रुमदलों के सुन्दर तोरण हैं, गज चिंग्घाड़ रहे हैं, और जिनका भूमिप्रदेश ढका हुआ है, ऐसे नृपकुमारों के आवास पर गये। स्वामीश्रेष्ठ के उन पुत्रों को प्रणाम करते हुए उन्होंने विनय के साथ निवेदन किया—''सुर-नर और विषधरों में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

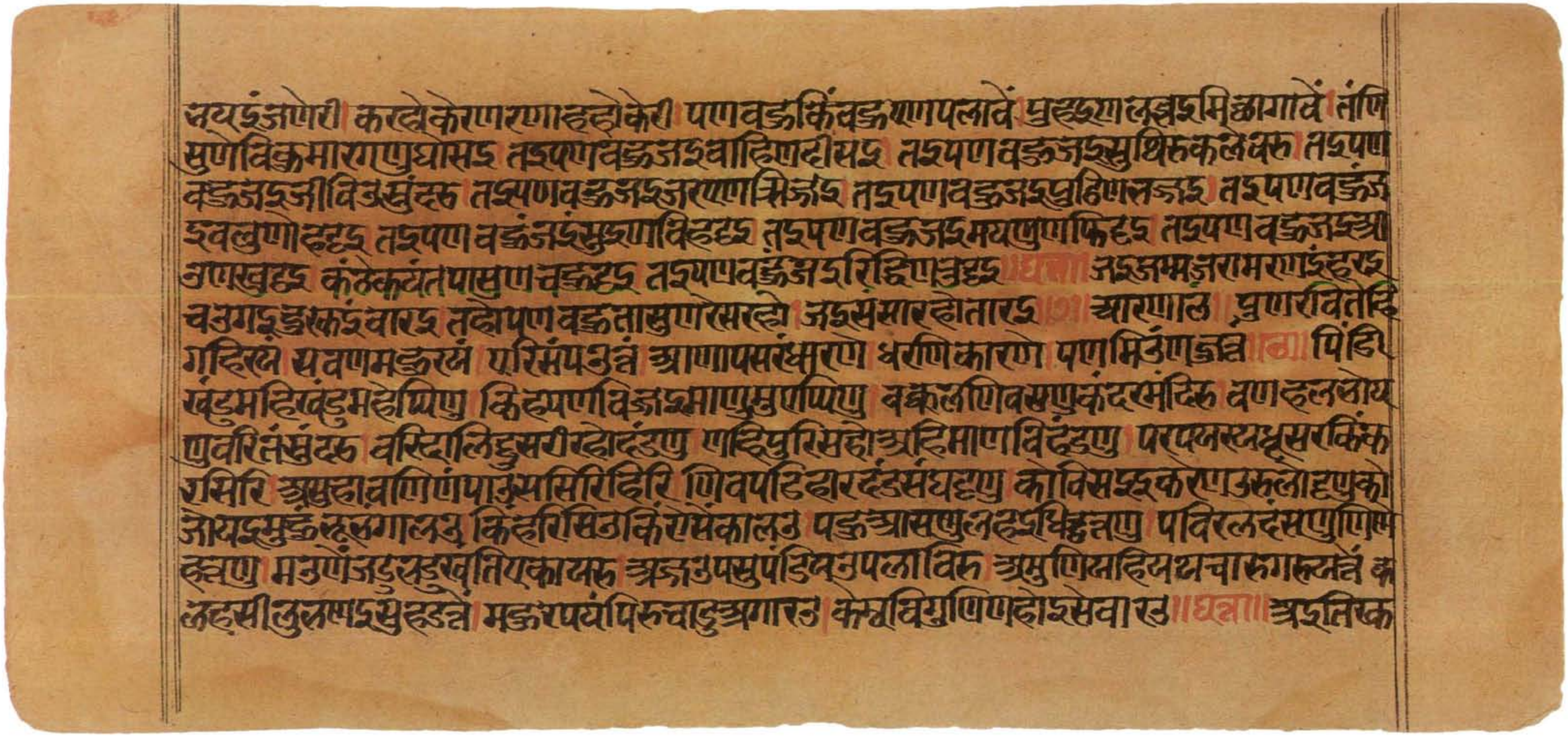

भय उत्पन्न करनेवाले राजा की सेवा करो और उन्हें प्रणाम करो, बहुत प्रलाप से क्या? मिथ्या गर्व से धरती प्राप्त नहीं की जा सकती।'' यह सुनकर कुमारगण घोषित करता है—''हम तब प्रणाम करते हैं यदि उसमें कोई व्याधि दिखाई नहीं देती। तब प्रणाम करते हैं यदि उसका शरीर पवित्र है। तब प्रणाम करते हैं यदि उसका जीवन सुन्दर है। तब प्रणाम करते हैं यदि वह जरा से क्षीण नहीं होता। तब प्रणाम करते हैं यदि वह पीठ देकर नहीं भागता, तो प्रणाम करते हैं यदि उसका बल नष्ट नहीं होता, तो प्रणाम करते हैं यदि उसकी पवित्रता नष्ट नहीं होती, तो प्रणाम करते हैं यदि कामदेव नष्ट नहीं होता, तो प्रणाम करते हैं यदि काल समाप्त नहीं होता, तो प्रणाम करते हैं यदि गले में यम नहीं लगता और ऋद्धि समाप्त नहीं होती।

घत्ता—यदि वह जन्म-जरा और मरण का अपहरण करता है, चार गतियों के दु:ख का निवारण करता है और संसार से उद्धार करता है तो हम उस राजा को प्रणाम करते हैं।''॥७॥

८

उन्होंने और भी गम्भीर कानों के लिए मधुर इस प्रकार कहा कि धरती के लिए और आज्ञा का प्रसार करने के लिए प्रणाम करना उचित नहीं है। शरीर-खण्ड या धरती के खण्ड को महत्त्व देकर और मान छोड़कर क्यों प्रणाम किया जाये? वल्कलों का पहनना, गुफाओं का घर, और बनफलों का भोजन सुन्दर है। दारिद्र्य और शरीर का खण्डन अच्छा, परन्तु मनुष्य का अभिमान को खण्डित करना ठीक नहीं। किंकररूपी नदी दूसरों के पदरज से धूसरित है। पावस की श्री को धारण करनेवाली असुहावनी है। राजाओं के प्रतिहारों के दण्डों का संघर्षण और हाथ-उर को स्पर्श करना कौन सहे? भौंहों से टेढ़ा मुख कौन देखे कि वह प्रसन्न है या क्रोध से काला है, यदि राजा के निकट है तो वह ढीठपन को प्राप्त होता है, यदि कभी-कभी दर्शन करता है तो स्नेहहीन समझा जाता है, मौन रहने से जड़ (मूर्ख) और शान्ति से रहने पर कायर, सीधा रहने पर पशु और पण्डित होने पर प्रलाप करनेवाला, अपने हृदय की सुन्दर गुरुता को न समझनेवाली शूरवीरता से कलहशील कहा जाता है और मीठा बोलने पर चापलूस। इस प्रकार सेवा में रत व्यक्ति किसी भी प्रकार गुणी नहीं होता।

घत्ता—अत्यन्त तीखे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

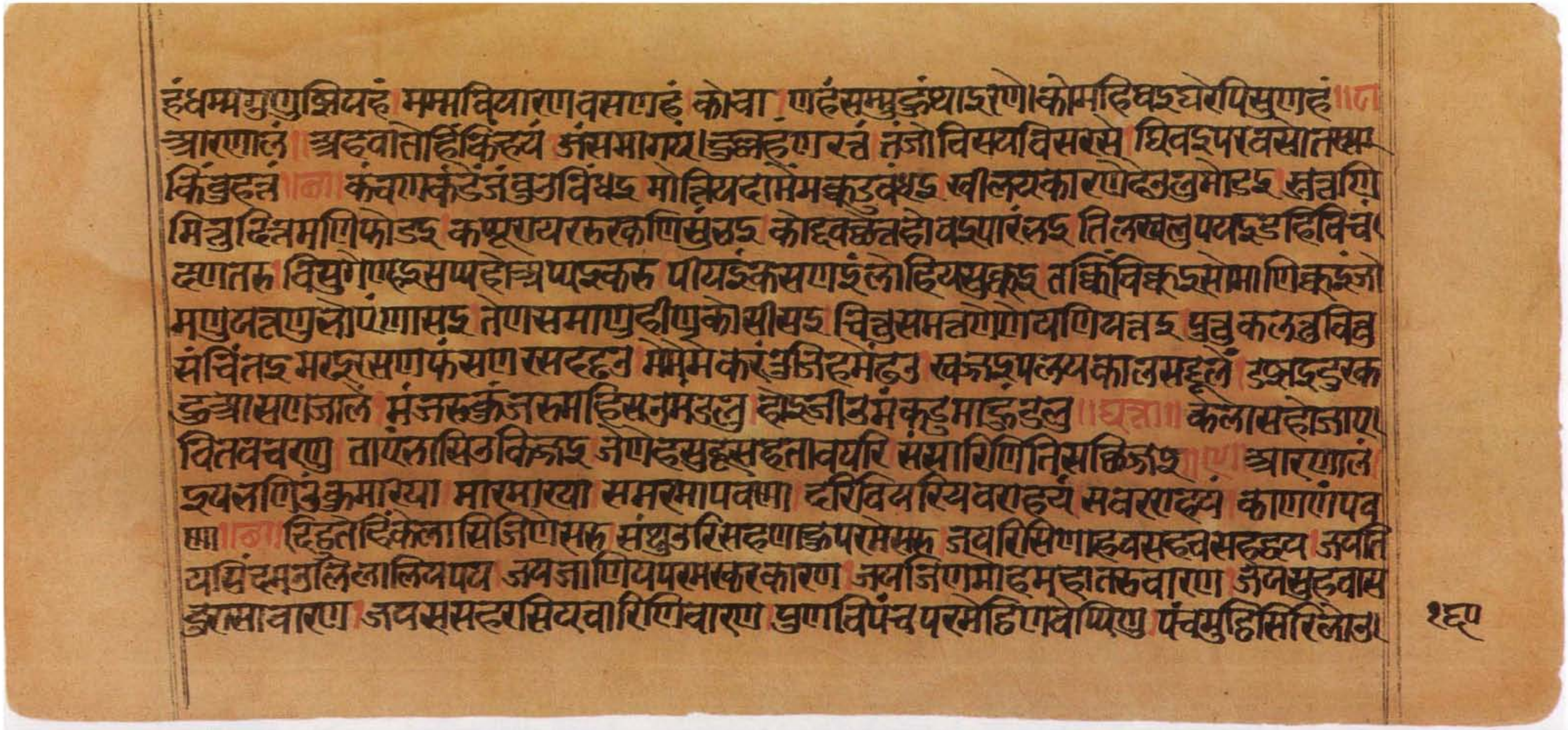

धर्मरूपी गुण से रहित/डोरी से रहित, वम्म (मर्म/कवच) के विदारण के स्वभाववाले बाणों के सम्मुख रण में और दुष्टों के सम्मुख राजा के घर में कौन खड़ा रह सकता है?॥८॥

९

अथवा उनसे क्या, जिन्होंने प्राप्त दुर्लभ मनुष्यत्व को नष्ट कर दिया। और जो उसे परवश होकर नष्ट करता है, उसका क्या पाण्डित्य? वह स्वर्ण के तीर से सियार को बेधता है, मोती की माला से बन्दर को बाँधता है, कील के लिए देवकुल को तोड़ता है, सूत्र के लिए दीप्त मणि को फोड़ता है, कपूर और अगुरु वृक्ष को नष्ट करता है और (उनसे) कोदों के खेत की बागर बनाता है। चन्दन वृक्ष को जलाकर तिल-खलों की रक्षा करता है। साँप को हाथ में लेकर उससे विष ग्रहण करता है। पीले, काले, लाल और सफेद माणिक्यों को छाछ में बेचता है, जो मनुष्यत्व को भोग में नष्ट करता है उसके समान हीन व्यक्ति कौन कहा जाता है! जो अपने चित्त को समता में नियोजित नहीं करता, पुत्र-कलत्र और धन की चिन्ता करता है, रसना और स्पर्श रस में दग्ध होकर उसी प्रकार मर जाता है जिस प्रकार मे-मे-मे करता हुआ मेंढक मरता है। प्रलयकालरूपी सिंह के द्वारा खाया जाता है, दुःखरूपी आग की ज्वाला से जला दिया जाता है। यह जीव मार्जार, कुंजर, महिष, कुक्कुर, बन्दर और सर्प विशेष उत्पन्न होता है।

घत्ता—पिता के द्वारा कहे गये तप को कैलास पर्वत पर जाकर करना चाहिए, जिसके कारण अत्यन्त सन्तापकारी संसार के प्रति तृष्णा क्षीण होती है॥९॥

१०

यह कहकर काम को मारनेवाले उपशमरूपी लक्ष्मी के धारक और प्रसन्नकुमार, जिसकी गुहाओं में वराह विचरण करते हैं और जो शवरों की शोभा से युक्त है ऐसे वन में चले गये। उन्होंने कैलास पर्वत पर जिनेश्वर के दर्शन किये और परमेश्वर ऋषभ की स्तुति की—"हे वृषभ वृषभध्वज, आपकी जय हो। देवों के मुकुटों से ललितचरण आपकी जय हो। परम अक्षयपद के कारणस्वरूप आपकी जय हो। मोहरूपी महावृक्ष का निवारण करनेवाले हे जिन, आपकी जय हो। सुख में वास करनेवाले, दुराशा का निवारण करनेवाले आपकी जय हो। चन्द्रमा के समान श्वेत छत्रवाले आपकी जय हो।" फिर पाँच परमेष्ठियों को नमस्कार कर, पाँच मुट्ठी केशलोंच

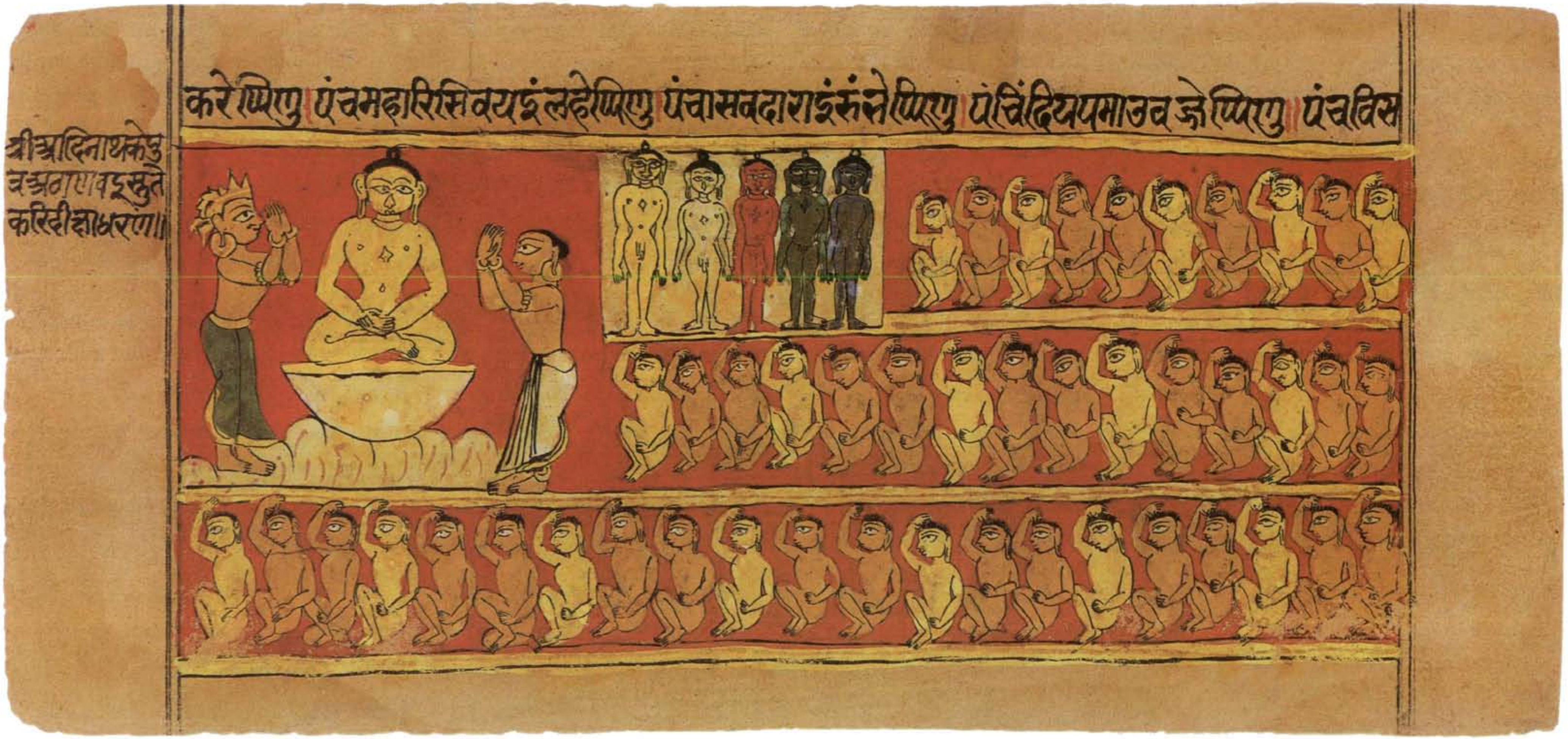

कर, पाँच महामुनियों के पाँच महाव्रत लेकर, पाँच आस्रव के द्वारों को रोककर, पाँच इन्द्रियों के प्रमादों को छोड़कर,

कामदेव के पाँच बाणों को त्यागकर, पाँच आचारश्रेष्ठों को पाकर, दस प्रकार के धर्मों को धारण कर—

घत्ता—मनरूपी तीर को दृढ़ गुण (गुण डोरी) में रखकर मोक्ष के सम्मुख प्रेषित किया। इस प्रकार अरहन्त ऋषभ के सन्त पुत्रों ने आत्मा को चारित्र से विभूषित किया॥ १०॥

११

तब दूत राजा भरत के घर आया और बोला—"हे राजन् सुनो, शील के सागर तुम्हारे भाई, हे देव आज ही मुनि हो गये हैं। एक बाहुबलि ही दुर्मति है, न तो वह तुम्हें प्रणाम करता है और न तप करता है।" यह सुनकर पुरोहित ने भट, सामन्त और मन्त्रियों के लिए उपयुक्त यह कहा—"उसके (बाहुबलि के) पास कोश, देश, पदभक्त, परिजन, सुन्दर अनुरक्त अन्तःपुर, कुल, छल-बल, सामर्थ्य, पवित्रता, निखिलजनों का अनुराग, यशकीर्तन, विनय, विचारशील बुधसंगम, पौरुष, बुद्धि, ऋद्धि, देवोद्यम, गज, राजा, जंगम, महीधर, रथ, करभ और तुरंगम हैं। जबतक वह अर्थशास्त्र का अनुसरण नहीं करता और जबतक सैकड़ों सहायकों को नहीं बनाता, जबतक दुष्टों की संगति और क्षात्रधर्म के निर्मूलन के मार्ग में नहीं लगता।

घत्ता—जब तक वह धनुष हाथ में नहीं लेता, तरकस युगल को नहीं बाँधता और भाल तथा कान तक निमज्जित होनेवाली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डोर पर तीर का सन्धान नहीं करता॥ ११॥

१२

जबतक महायुद्ध में समर्थ शत्रु तुम्हें युद्ध में नहीं मारता और जबतक तीखी तलवार हाथ में लिये हुए वह तुम्हारी निराकुल धरती का अपहरण नहीं करता, तबतक आप उसके पास दूत भेजें। यदि वह प्रणाम करता है तो उसका पालन किया जाये, नहीं तो फिर बाहुबलि को पकड़ लिया जाये और बाँधकर कारागार में डाल दिया जाये।'' जब उसने (पुरोहित ने) यह मन्त्रणा दी तो राजा ने उसके पास दूत भेजा। वह दूत अपने स्वामी में अनुरक्त शत्रु का विध्वंस करनेवाला सुभट, सुलक्षण, सौम्य, सुदर्शन, देश-जाति और कुल से सिद्ध-प्रसिद्ध, पण्डित, चतुर, प्रभु की लक्ष्मी से समृद्ध, विविध विषय और भाषाओं का बोलनेवाला, उत्तर को देख लेनेवाला और महिमा से महान्, तेजस्वी, प्रभु का तेज रखनेवाला, मधुरभाषी, आदरयुक्त और अजेय था। अपने वाहन को प्रेरित कर दूत चल दिया और कई दिनों में पोदनपुर नगर पहुँचा। जहाँ वनतरुओं की शाखाओं से मधु निकल रहा था, चंचल अशोक वृक्षों के पत्ते हिल रहे थे। अत्यन्त लम्बे प्रवास के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

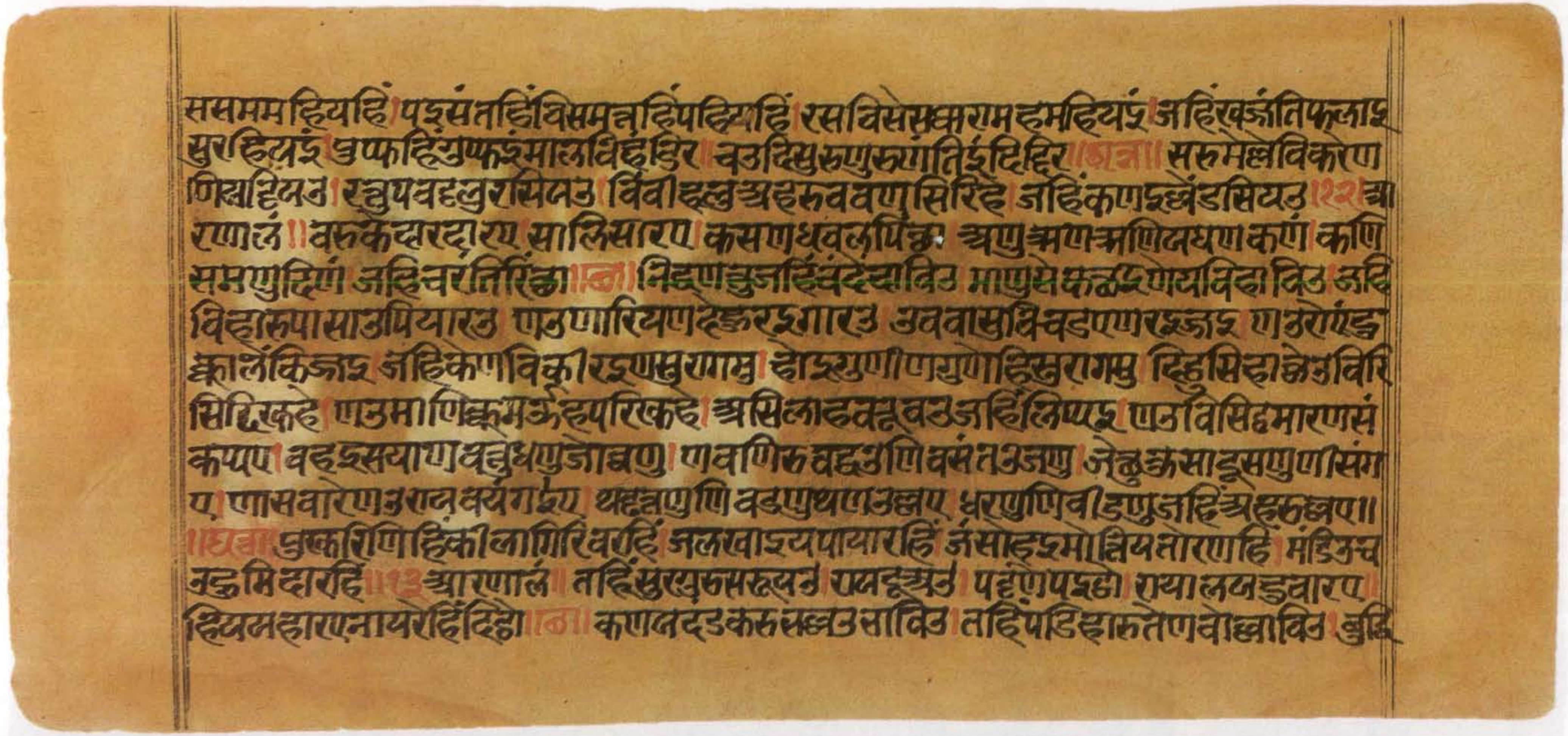

श्रम से सब ओर से प्रवेश करते हुए पथिकों के द्वारा रस विशेष की धारा से महकते हुए जहाँ सुरभित फल खाये जाते हैं। पुष्पों के द्वारा मालाएँ गूँथी जाती हैं और भ्रमणशील मधुकर चारों दिशाओं में गुनगुना रहे हैं।

घत्ता—जहाँ शब्द करके और चोंचरूपी कर से खींचकर रसीले लाल-लाल वनश्री के अधर के समान कुंदरु फल को शुक ने काट खाया॥ १२॥

१३

धान्य के श्रेष्ठ खेतों के मार्ग में काले और सफेद बालवाले रीछ झनझनाते हुए घन कणों वाले धान्य को प्रतिदिन चुगते हैं। जहाँ निर्धनता (स्निग्धत्व) चन्द्रमा के द्वारा दिखायी जाती है, मनुष्य में निर्धनता दिखाई नहीं देती। जहाँ विहार शब्द प्रासादों में प्रियकारक होता है, प्रेम उत्पन्न करनेवाला नारीजन के कण्ठ विहार (हाररहित) नहीं है। जहाँ चटक (गौरैया) के द्वारा उपवास (गृहों के भीतर वास) किया जाता है, वहाँ के लोग रोग और दुष्काल के कारण उपवास नहीं करते। जहाँ किसी के द्वारा सुरागम नहीं किया जाता (मदिरापान), गुणियों के गुणों से सुरागम (देवागम) होता है। जहाँ मुनि दीक्षा में ही शिखा-उच्छेद होता है। माणिक्यों की किरण परीक्षा में शिखाच्छेद नहीं होता है। जहाँ लेपकर्म में असिलाभवरूप (अमूर्त से उत्पन्न रूप) होता है, विशिष्ट मारण संकल्प में नहीं। जहाँ वन और यौवन सदैव नवत्व धारण करते हैं, निरुपद्रव रूप से रहते जन नवत्व धारण नहीं करते (पुरानी व्यवस्था का त्याग नहीं करते)। जहाँ अनासंग (संसार से विरक्त) मुनियों के लिए कुसादूषणु (पृथ्वी और लक्ष्मी दूषण) है, अश्वारोही और राज्यपद को प्राप्त व्यक्ति के लिए पृथ्वी और लक्ष्मी दूषण नहीं है। जहाँ स्तनों में सघनता और पतन है, वहाँ लोगों में सघनता और पतन नहीं है। जहाँ अधरों में धरण (पकड़ा जाना) और निष्पीड़न है, वहाँ के जनों में ये बातें नहीं हैं।

घत्ता—जो पुष्करिणियों, क्रीड़ागिरिवरों, जलखाइयों, प्राकारों तथा मोतियों के तोरणोंवाले चारों द्वारों से अलंकृत-शोभित है॥ १३॥

१४

ऐसे उस पोदनपुर नगर में बृहस्पति के समान रूपवाला राजदूत प्रवेश करता हुआ राज्यालय के सुन्दर द्वार पर लोगों के द्वारा देखा गया। वहाँ स्वर्णदण्ड धारण करनेवाले सुन्दर विचारशील आश्चर्यचकित एवं बुद्धिमान् प्रतिहार से वह बोला—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"राजा से कहो कि द्वार पर प्रभु का दूत खड़ा है।" यह सुनकर लाठी हाथ में लिये हुए मस्तक से प्रणाम कर प्रतिहार कुमार से कहता है—"द्वार पर राजा का दूत स्थित है, हे स्वामी अवसर है कि 'हाँ-ना' कुछ भी कह दें।" तब कामदेव बाहुबलि ने कहा—"मना मत करो। भाई के अनुचर को शीघ्र प्रवेश दो।" तब यष्टि धारण करनेवाले प्रतिहारी ने यश से निर्मल प्रसन्न मुखमण्डल दूत को प्रवेश दिया। सभा के बीच बैठे हुए बाहुबलीश्वर को दूत ने इस रूप में देखा मानो इन्द्र हो। हस्तकमलों की अंजलि जोड़कर उसने संस्तुति की—"तुमने अपने परिणाम से किसको वश में नहीं कर लिया!

घत्ता—तुम्हारी धनुष-डोरी के टंकार से किसने मान नहीं छोड़ दिया! हे कामदेव, तुमने अपने पाँच ही तीरों से समस्त त्रिलोक को जीत लिया"॥ १४॥

१५

"काम और भोगों को जिन्होंने भोगा है ऐसे लोग, कहे गये श्रुतिमधुर प्रिय वचन और जग का विमर्दन करनेवाले तुम्हारे विजय के नगाड़ों का शब्द नहीं सुनते। हे रतिरूपी रमणी के वर कामदेव, आपकी जय हो। भ्रमरबाला की डोरी पर सर-सन्धान करनेवाले आपको देखकर

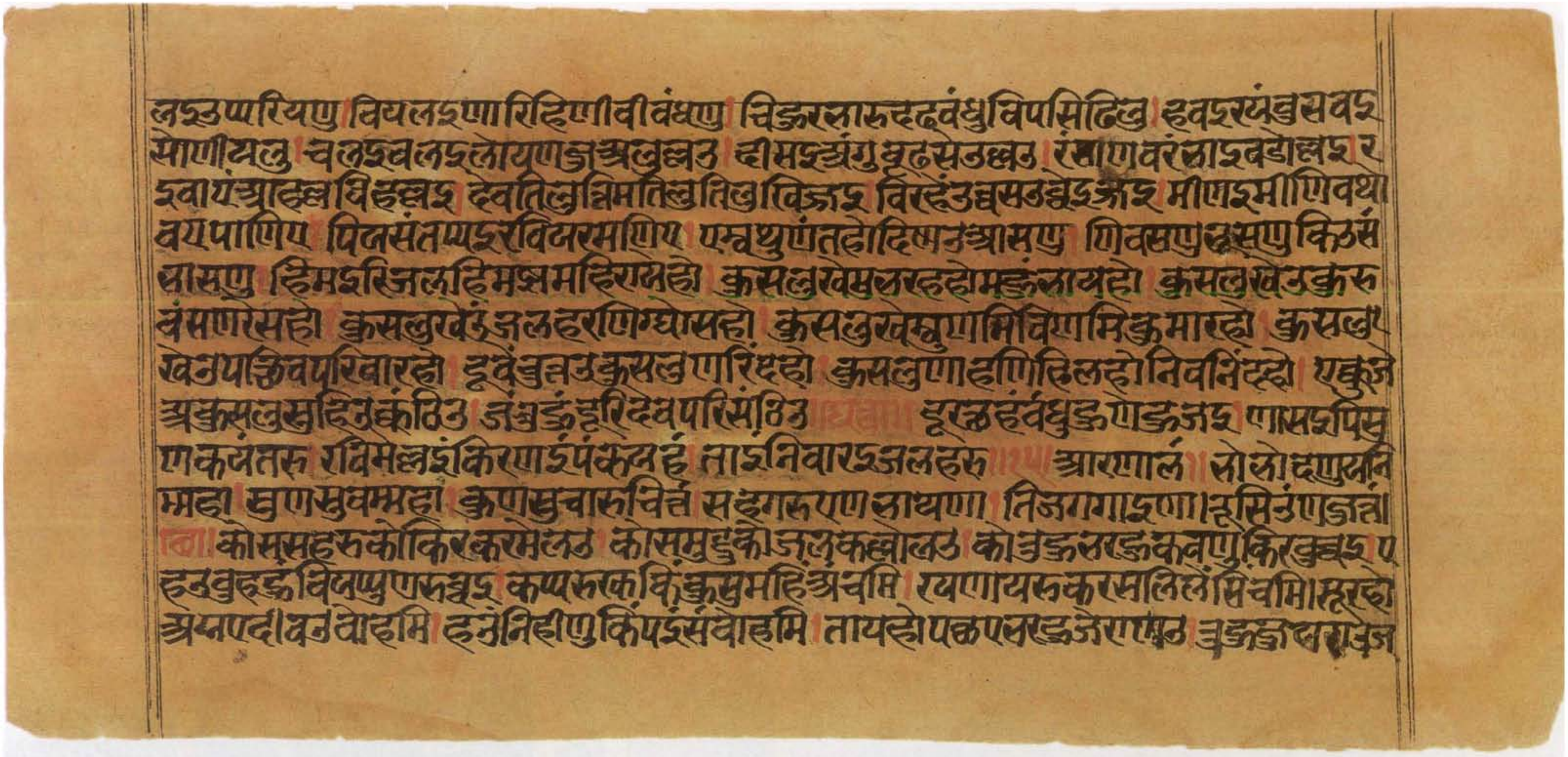

नारी के ऊपर का वस्त्र गिर जाता है, और नीवि-निबन्धन खुल जाता है। पक्का बँधा हुआ भी केशभार खुल जाता है, रज होने लगता है, श्रोणीतल खिसक जाता है। नेत्रयुगल चंचल होकर मुड़ने लगता है, शरीर पसीना-पसीना हो जाता है। रम्भा नवकदली की तरह हिलने लगती है, रति की हवा से और अधिक कँपने लगती है। हे देव, तिलोत्तमा क्षण-क्षण खेद को प्राप्त होती है और विरह से उर्वशी खेद को प्राप्त होती है। हे स्वामी, मेनका थोड़े पानी में मछली की तरह सूर्य की किरणों के सन्ताप से सन्तप्त हो उठती है।'' इस प्रकार स्तुति करते हुए दूत को उसने आसन, वसन और भूषण दिये और सम्भाषण किया—''हिमगिरि से लेकर समुद्रपर्यन्त महीराज मेरे भाई भरत का कुशल-क्षेम तो है? कुरुवंश के राजा का कुशल-क्षेम तो है! समुद्र के समान निर्घोषवाले (उनका) कुशल-क्षेम तो है! नमि-विनमि कुमार का कुशल-क्षेम तो है, राजा के परिवार का कुशलक्षेम तो है!'' दूत बोला—''हे राजन्, कुशल-क्षेम है, समस्त राजसमूह का कुशलक्षेम है। सुधीजनों में उत्कण्ठा पैदा करनेवाला एक ही अकुशल है और वह यह कि हे देव आप बहुत दूर हैं।

घत्ता—दुष्टों के द्वारा अन्तर पैदा कर देने पर दूरस्थ भाइयों का स्नेह नष्ट हो जाता है, सूर्य कमलों के लिए किरणें भेजता है परन्तु जलधर उनका निवारण कर देता है॥ १५॥

१६

हे दानवों को नष्ट करनेवाले कामदेव, सुनो और अपना चित्त सुन्दर बनाओ। त्रिलोक को सतानेवाले अपने बड़े भाई से रूठना ठीक नहीं। चन्द्रमा कौन और उसकी किरणों का समूह कौन? समुद्र कौन और उसकी जलतरंगें कौन? तुम कौन और भरत कौन? पण्डितों को यह विकल्प (या भेदभाव) अच्छा नहीं लगता। क्या मैं कल्पवृक्ष की फूलों से पूजा करूँ? क्या समुद्र को हाथ के जल से सींचूँ? क्या सूर्य के आगे दीप जलाऊँ, मैं हीन हूँ, क्या तुम्हें सम्बोधित करूँ? तात (ऋषभ) के बाद भरत राजा है और तुम भुवन में एकमात्र प्रधान युवराज हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

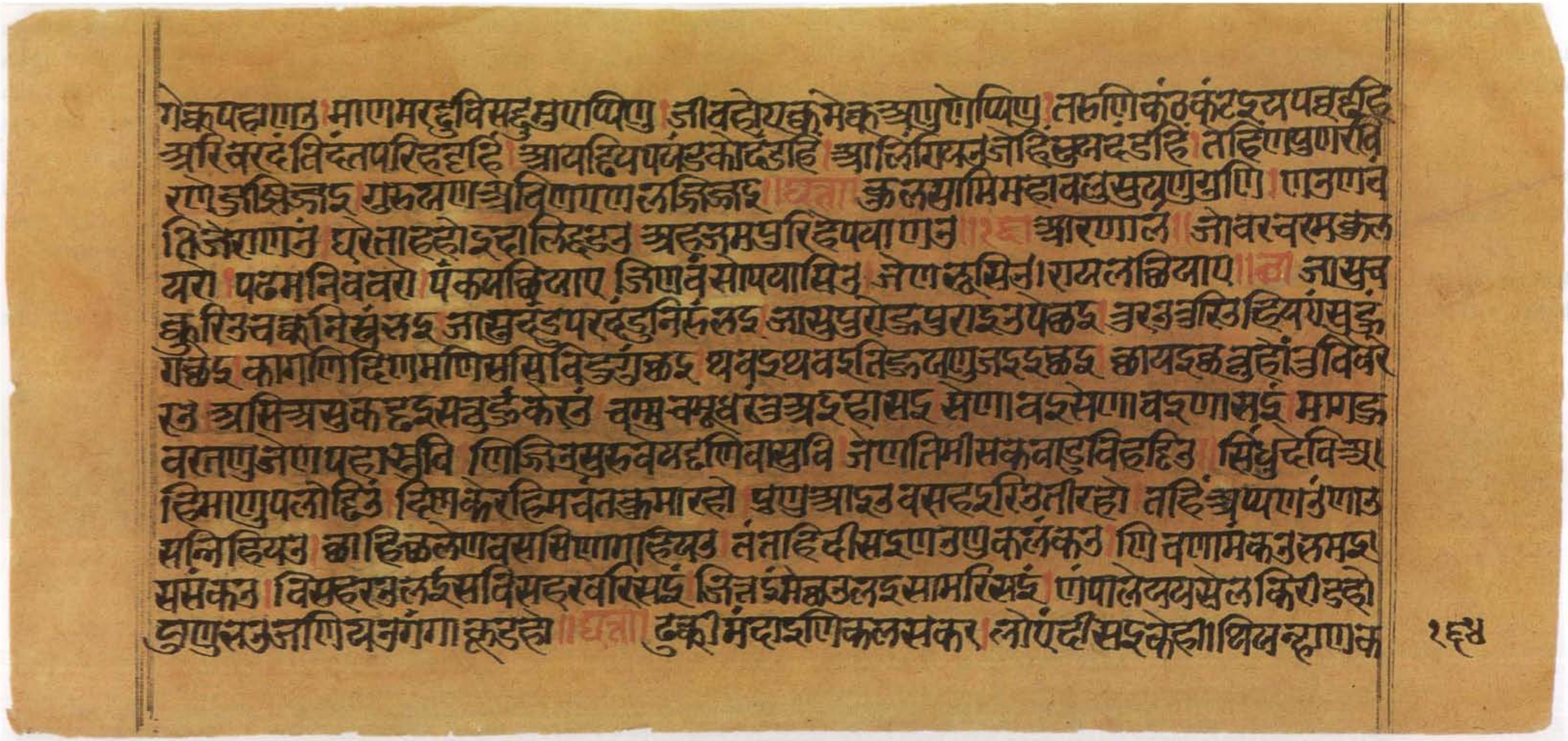

अत: चित्तभेद, मान और अहंकार छोड़कर जीव को एकमेक मानकर, तरुणीजनों के कण्ठों को कण्टकित करनेवाले, शत्रुरूपी गजों के दाँतों को परिभ्रष्ट करनेवाले, प्रदीर्घ धनुषों को आकर्षित करनेवाले जिन बाहुओं से (जिस भरत का) आलिंगन किया है उन्हीं बाहुओं से उसके साथ युद्ध में नहीं लड़ा जाना चाहिए, गुरुजन में अविनय से लज्जित होना चाहिए।

घत्ता—जो राजा, कुलस्वामी, महाबल, सुजन और गुणी व्यक्ति को नमस्कार नहीं करते उनके घर में दरिद्रता बढ़ती है और उनका यमपुरी के लिए प्रस्थान होता है॥ १६॥

१७

जो परम चरमशरीरी कुलकर है, पहला राजा है, जिसने जिन के वंश को प्रकाशित किया है, और कमलनयनी राजलक्ष्मी से भूषित किया है। जिसका चक्र शत्रुचक्र को नष्ट कर देता है, जिसका दण्ड शत्रुदण्ड को रोक देता है, जिसका मंत्री आगे की बात देख लेता है, जिसका तुरग हृदय के साथ दौड़ता है, जिसका कागणी मणि सूर्य और चन्द्रमा की भी अपेक्षा नहीं रखता, जिसका स्थपति चाहे तो त्रिभुवन की रचना कर सकता है। विरुद्ध होने पर वह छत्र छा लेता है, और शत्रुओं के तलवार से प्राण निकाल लेता है। चमू (सेना) को पकड़ते हुए उसका वर्म अत्यन्त शोभित होता है, जिसने मागध और वरतनु को जीत लिया है और विजयार्ध पर्वत निवासी देव को भी जीत लिया है। जिसने तिमिस्रा के किवाड़ों को विघटित कर दिया और सिन्धु देवी का अभिमान चूर-चूर कर दिया। हिमवन्त कुमार को आज्ञा (अधीनता) देकर फिर वह कैलास पर्वत के तट पर आया। वहाँ उसने अपना नाम लिखा, जिसे छाया के छल से चन्द्रमा ने ग्रहण कर लिया, वही नाम चन्द्रमा में दिखाई देता है वह कलंक नहीं है, राजा भरत के नाम से अंकित होकर चन्द्रमा सशंकित परिभ्रमण करता है। मेघकुलों को बरसानेवाले, नागकुलों और अमर्ष से भरे हुए म्लेच्छकुलों को जिसने जीत लिया है, और मानो जिसने हिमशिखर के मुकुटवाले गंगाकूट को भी भय उत्पन्न कर दिया है।

घत्ता—कलश हाथ में लेकर गंगानदी वहाँ पहुँची, लोगों को वह ऐसी दिखाई दी जैसे स्नान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

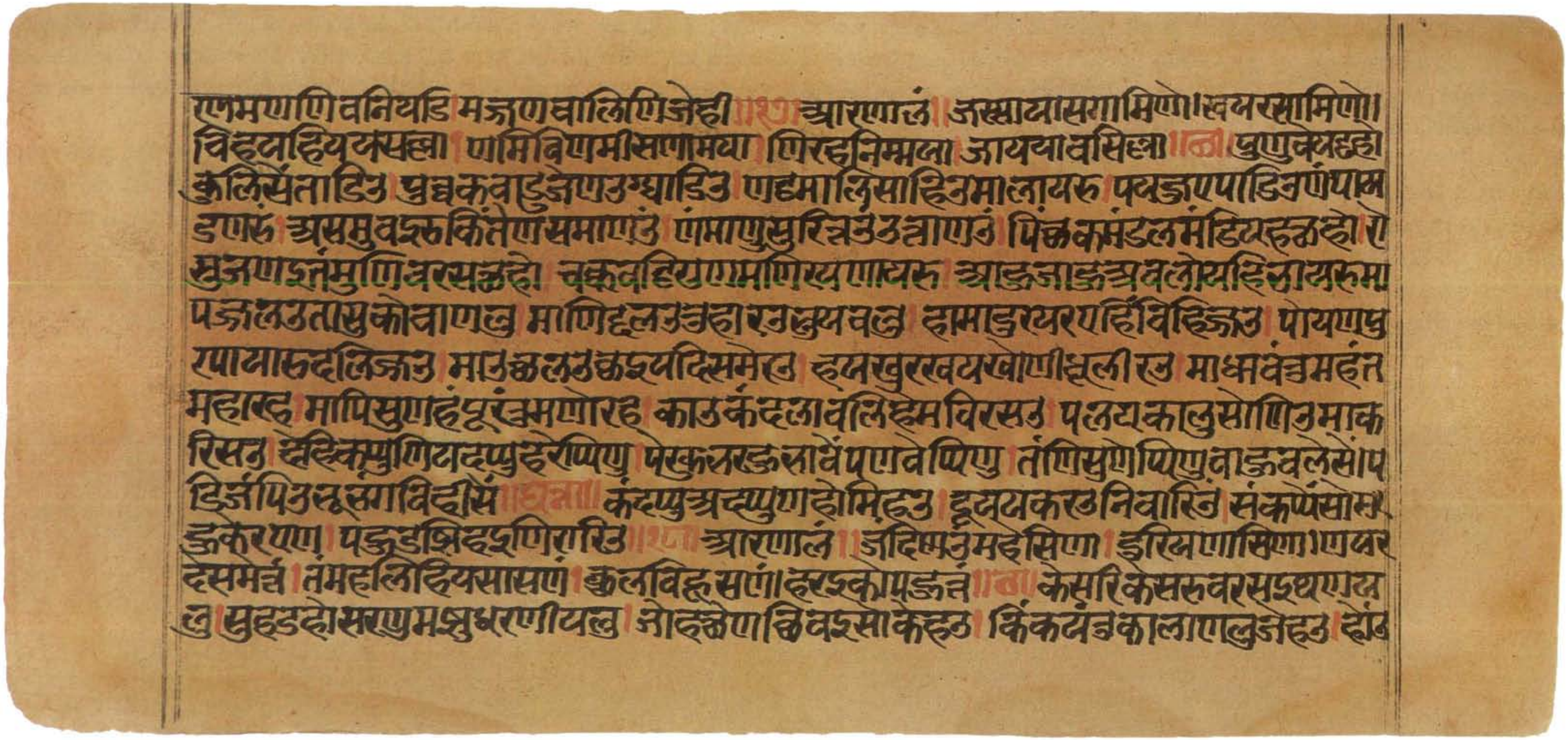

करने की इच्छा रखनेवाले राजा के निकट स्नान करानेवाली दासी खड़ी हो॥ १७॥

१८

आकाशगामी नमि-विनमि नाम के विद्याधर स्वामी हृदय में शल्य धारण कर, बिना किसी के मद के जिसके वशीभूत हो गये, जिसने फिर विजयार्ध पर्वत को वज्र से आहत किया, जिसने पूर्वकिवाड़ का उद्घाटन किया, जिसने नृत्यमाल को सिद्ध किया और मालाकर को एक प्राकृतजन की तरह अपने दोनों पैरों में गिरने के लिए बाध्य किया। उसके साथ असम (विषम) वैर क्या, जो ऊर्ध्वमुख मनुष्य को रिक्त करता है वह पिच्छी और कमण्डल से मण्डित हाथवाले मनुवर-समूह को भी क्रोध उत्पन्न कर देता है। वह गुणरूपी मणियों का समुद्र चक्रवर्ती है। आओ भाई को चलकर देखें। उसके क्रोध की आग न भड़के और तुम्हारा बाहुबल न जले, हा तुम हाथी के दाँतों से विभक्त न हो, पोदनपुर के परकोटे नष्ट न हों, दिशा की मर्यादाओं को आच्छादित करनेवाला, घोड़ों के खुरों से क्षत धरती का धूल समूह न उछले, महान् महारथ न दौड़े, दुष्टों के मनोरथ पूरे न हों। मनुष्यों के कपाल के ऊपर कौआ न बोले। प्रलयकाल रक्त को न खींचे? इसलिए दर्पहीन होकर कर दो, और भावपूर्वक प्रणाम कर भरत से मिलो।'' बाहुबलीश्वर यह सुनकर भौंहों के संकोच से भयंकर होकर बोला—

घत्ता—''मैं कन्दर्प (कामदेव) हूँ, अदर्प (दर्पहीन) नहीं हो सकता। मैंने दूत समझकर मना किया। मेरे संकल्प से वह राजा निश्चित रूप से दग्ध होगा॥ १८॥

१९

पापों को नाश करनेवाले महर्षि ऋषभ ने जो सीमित नगर देश दिये हैं वह मेरे कुलविभूषित लिखित शासन है, उस प्रभुत्व का कौन अपहरण करता है? सिंह की अयाल, उत्तम सती के स्तनतल, सुभट की शरण और मेरे धरणीतल को जो अपने हाथ से छूता है, मैं उसके लिए यम और कालानल के समान हूँ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

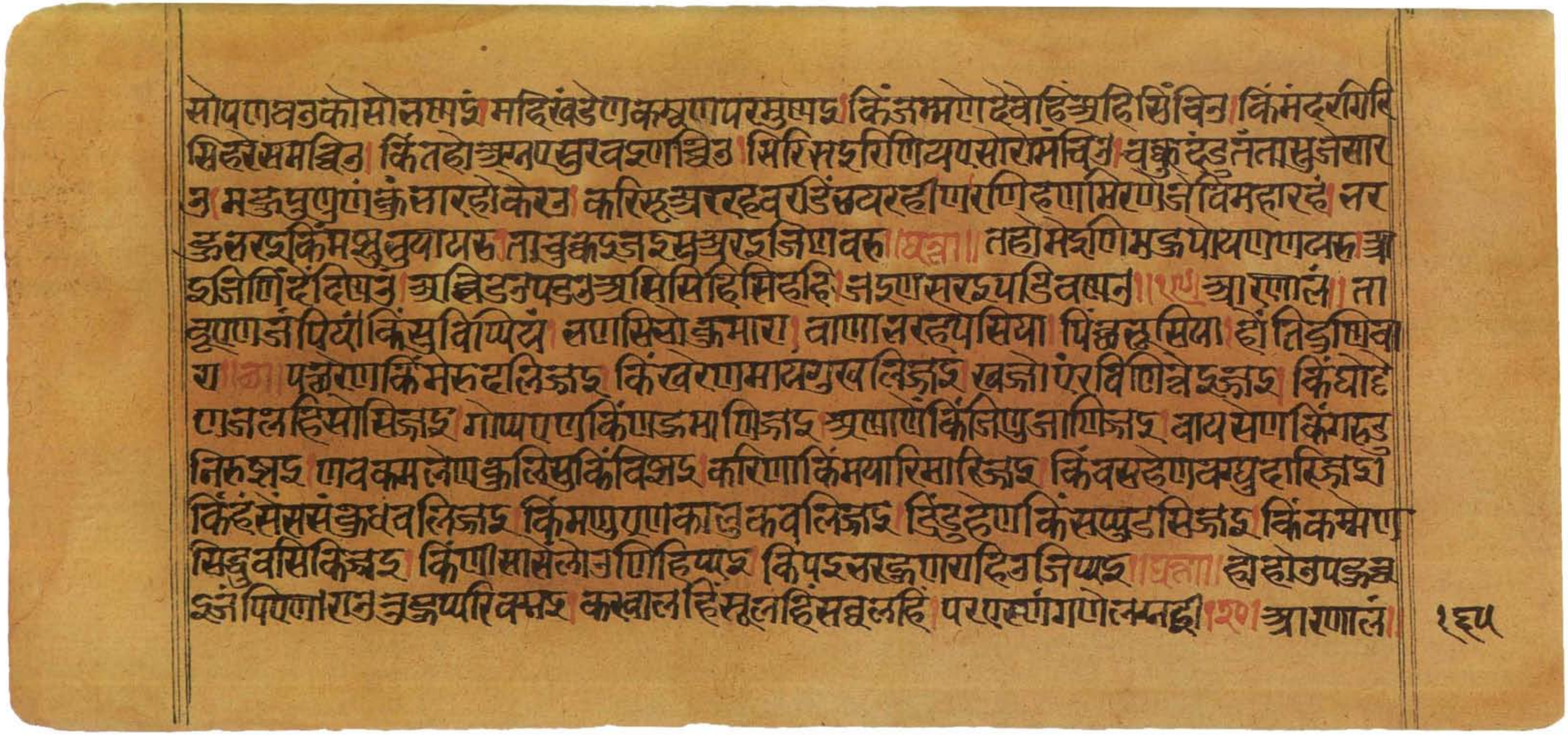

मैं उसे प्रणाम करूँ, वह कौन है? धरतीखण्ड से कौन-सी परम उन्नति कही जाती है। क्या जन्म के समय, देवों ने उसका अभिषेक किया? क्या सुमेरु पर्वत पर उसकी पूजा की गयी? क्या उसके सामने सुरपति नाचा? वह स्वेच्छाचारिणी लक्ष्मी से इतना रोमांचित क्यों है? वह चक्रदण्ड उसी के लिए श्रेष्ठ हो सकता है, मेरे लिए तो वह कुम्हार का चक्का है। हाथीरूपी सुअरों और रथवररूपी छकड़ों के जो भी महारथी मनुष्य हैं, उनको मैं मारूँगा? भरत मेरे भुजाभार का क्या अपहरण करेगा? वह तभी बच सकता है कि जब जिनवर की याद करता है?

घत्ता—उसकी धरती और मेरा पोदनपुर नगर, दोनों आदिजिनेन्द्र ने दिये। यदि वह स्वीकार किये हुए को नहीं मानता, तो वह तलवार से लड़ता हुआ, अग्नि की ज्वाला में पड़ेगा"॥ १९॥

२०

तब दूत ने कहा—"हे कुमार, यह अप्रिय क्या कहते हो? भरत के द्वारा प्रेषित पुंखविभूषित तीर दुर्निवार होंगे। पत्थर से क्या सुमेरु पर्वत दला जा सकता है? क्या गधे से हाथी स्खलित किया जा सकता है। जुगनू के द्वारा क्या सूर्य निस्तेज किया जा सकता है? क्या घूँट से समुद्र सोखा जा सकता है, गोपद से क्या आकाश मापा जा सकता है? अज्ञान से क्या जिन को जाना जा सकता है, कौए के द्वारा क्या गरुड़ रोका जा सकता है। नवकमल से क्या वज्र को बेधा जा सकता है? हाथी के द्वारा क्या सिंह मारा जा सकता है? क्या बैल के द्वारा बाघ विदीर्ण किया जा सकता है? क्या मनुष्य के द्वारा काल कवलित किया जा सकता है? मेंढक के द्वारा क्या साँप डसा जा सकता है, क्या कर्म के द्वारा सिद्ध को वश में किया जा सकता है? क्या विश्वास से लोक को आहत किया जा सकता है? क्या तुम्हारे द्वारा भरत नराधिप जीता जा सकता है?

घत्ता—हो-हो, बकने से क्या समर्थ हुआ जा सकता है? राजा तुम्हारे ऊपर आक्रमण करता है, करवालों शूलों और सब्बलों के द्वारा सवेरे तुम से रणांगण में मिलेगा"॥ २०॥

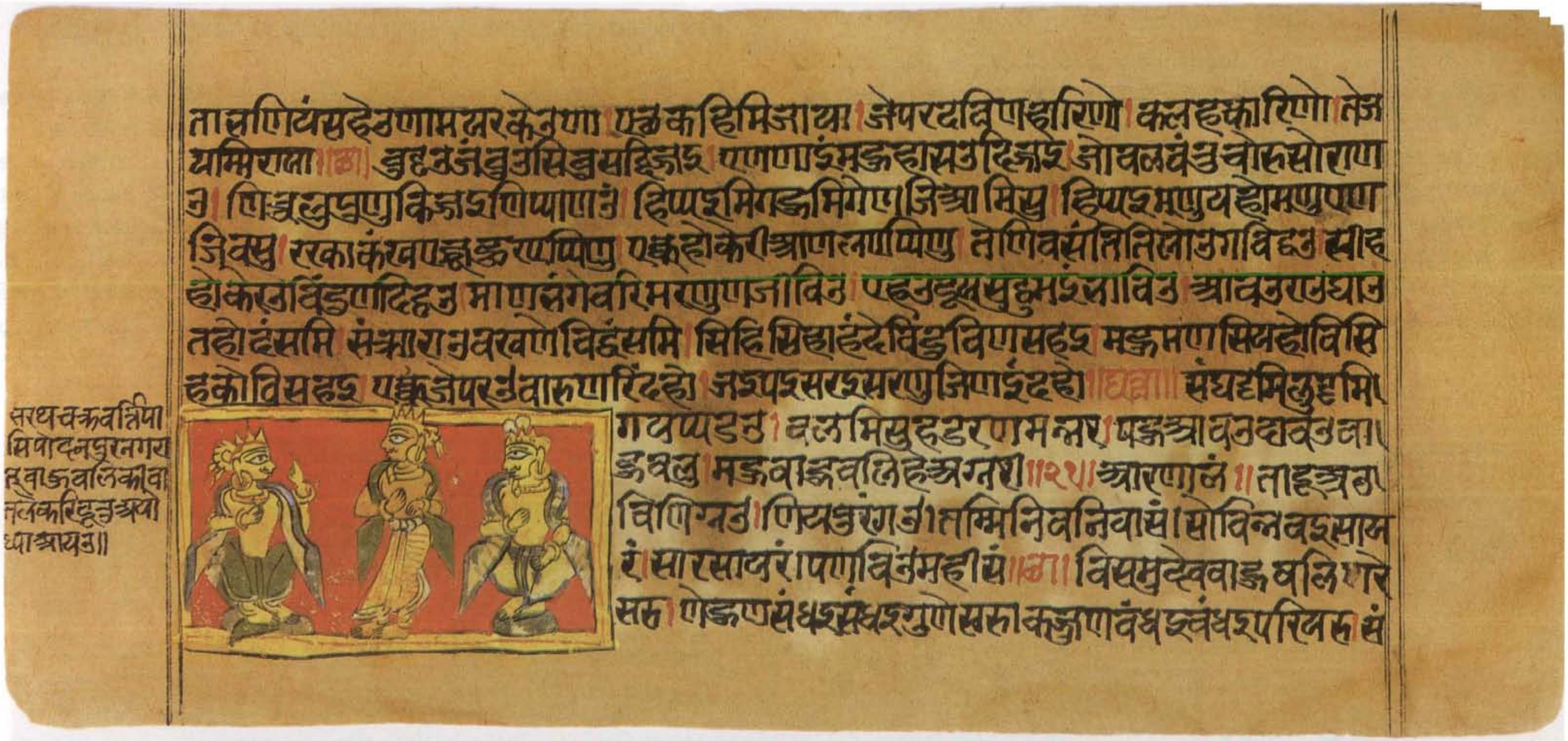

२१

तब कामदेव बाहुबलि युक्ति के साथ कहता है—"चाहे यहाँ, या और कहीं विश्व में जो कलह करनेवाले और दूसरों का धन अपहरण करनेवाले हैं, वे ही राजा हुए हैं? बूढ़ा सियार शिव की बात करता है, जैसे यह मुझे हँसी प्रदान करता है, जो बलवान् चोर है वह राजा है, और जो निर्बल हैं वे निष्प्राण कर दिये जाते हैं। पशु के द्वारा पशु का मांस अपहृत किया जाता है और मनुष्य के द्वारा मनुष्य के धन का अपहरण किया जाता है। रक्षा की आकांक्षा से व्यूह रचकर एक की आज्ञा लेकर वे राजा निवास करते हैं। लेकिन यह बात त्रिलोक में गवेषित है कि सिंह का कोई समूह दिखाई नहीं देता। मानभंग होने पर मर जाना अच्छा है, जीना नहीं। हे दूत, यह बात मुझे बहुत अच्छी लगती है। भाई आये, मैं उसे आघात दिखाऊँगा और सन्ध्याराग की तरह एक क्षण में उसे नष्ट कर दूँगा। आग की ज्वालाओं को देवेन्द्र भी नहीं सह सकता, मुझ कामदेव के बाण को कौन सहता है? राजा का एक ही परोपकार हो सकता है कि यदि वह जिनेन्द्र की शरण में चला जाये।

घत्ता—संघर्ष करूँगा, गजघटा को लोटपोट करूँगा और रणमार्ग में सुभटों को दलन करूँगा। राजा आये और मुझ बाहुबलि के आगे बाहुबल दिखाये" ॥ २१ ॥

२२

तब दूत अपने नगर के लिए गया और वहाँ राजा के निवास पर लक्ष्मी और पृथ्वी के आकर राजा से सादर निवेदन करता है—"हे देव, बाहुबलि नरेश्वर विषम है, वह स्नेह नहीं बाँधता, गुण पर तीर बाँधता है (संधान करता है); वह कार्य नहीं बाँधता, अपना परिकर बाँधता है;

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वह सन्धि नहीं चाहता, युद्ध चाहता है। वह तुम्हें नहीं देखता, अपना भुजबल देखता है; आज्ञा का पालन नहीं करता, अपने कौशल का पालन करता है; मान नहीं छोड़ता, भयरस छोड़ता है; दैव की चिन्ता नहीं करता, वह अपने पौरुष की चिन्ता करता है; वह शान्ति नहीं चाहता, वह गृहकलह चाहता है; वह धरती नहीं देता, बाणावलि देता है; वह तुम्हें प्रणाम नहीं करता, मुनिसमूह को प्रणाम करता है; वह अंग नहीं निकालता, अपनी तलवार निकालता है; हे देव, भाई तुम्हें पोदनपुर नगर नहीं देता, परन्तु मैं जानता हूँ कि वह रण-भोजन देगा, वह रत्नों और गजरत्नों को उपहार में नहीं लेता वह मनुष्य-वक्षों के रत्नों को लेगा।

घत्ता—वह परम्परा कुलक्रम गुरु द्वारा कथित क्षात्रधर्म नहीं समझता, मर्यादाविहीन सामर्ष वह शत्रु अवश्य युद्ध करेगा'' ॥ २२ ॥

२३

इतने में दिनमणि (सूर्य) खिसक गया, मानो गगनरूपी कामिनी का चूड़ामणि हो, जैसे यामिनी ने शान्ति से शोभित उसे अस्ताचल के प्रति निवेदित किया हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

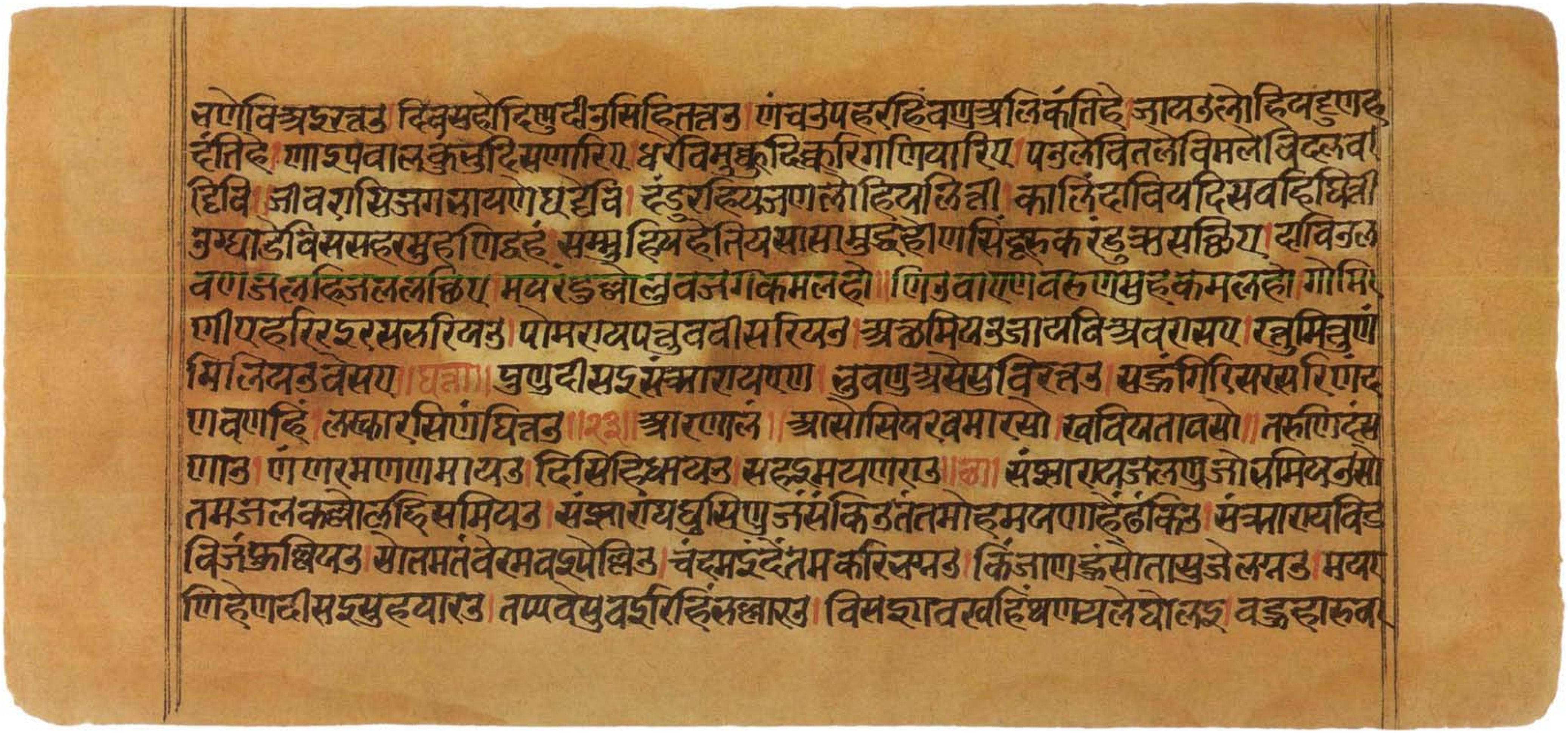

'प्रवेश मत करो' यह कहने के लिए जैसे उसने दिवस के लिए आग से सन्तप्त दीप दिया हो, मानो चार प्रहर तक अभिक्रान्त करते हुए नभरूपी गज से बन लोहू से लाल हो उठा। जैसे दिशारूपी नारी ने प्रवालों का घड़ा धारण कर दिग्गज की हस्तिनी के ऊपर फेंक दिया हो, मानो विश्वरूपी भाजन में फैलकर तलकर दलकर चूर-चूरकर और घोंटकर काल ने, दण्डरहित जनरक्त से लिप्त जीवराशि दिशापथ में फेंक दी हो, मानो सामने आयी स्निग्ध पूर्वदिशारूपी मुग्धा का चन्द्रमुख उघाड़कर, मछलियों की आँखोंवाली लवणसमुद्र की जलरूपी लक्ष्मी ने उसे सिन्दूर का पिटारा दिया हो, मानो पवन ने वरुण के मुख कमल, और विश्वरूपी कमल का चंचल पराग उड़ा दिया हो अथवा गोपिनी के द्वारा कृष्ण की क्रीड़ा-रस से भरा हुआ पद्मराग पात्र भुला दिया गया हो, पश्चिम दिशा में जाकर लाल सूर्य अस्त हो गया, जैसे वेश्या ने उसे निगल लिया हो।

घत्ता—पुनः अशेष भुवन सन्ध्याराग से आरक्त दिखाई देता है मानो पहाड़ों, घाटियों, नदियों और नन्दनवनों के साथ वह लाक्षारस में डुबा दिया गया हो॥ २३॥

२४

क्षमारूपी रस को सोख लेनेवाला, तापसों का नाशक, युवतियों को पीड़ित करनेवाला मदनराज चूँकि मनुष्य मन में नहीं समाता हुआ, मानो दिशाओं में दौड़ रहा है। सन्ध्याराग रूपी जो आग घूम रही थी उसे अन्धकाररूपी जलतरंगों के द्वारा शान्त कर दिया गया, जिस सन्ध्यारागरूपी केशर की आशंका की गयी थी, उसे तमःसमूहरूपी सिंह ने ढक दिया। सन्ध्यारागरूपी जो वृक्ष खिला हुआ था उसे अन्धकाररूपी गजराज ने उखाड़ डाला, चन्द्रमारूपी मृगेन्द्र ने अन्धकाररूपी गज को भगा दिया। क्या वही उसके जानुओं (घुटनों) को लग गया जो मृगलांछन के रूप में शुभ करनेवाला दिखाई देता है। तल्पवेश में जो शत्रुओं को अच्छा लगता है। गवाक्षों से प्रवेश करता है, स्तनतल पर गिरता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

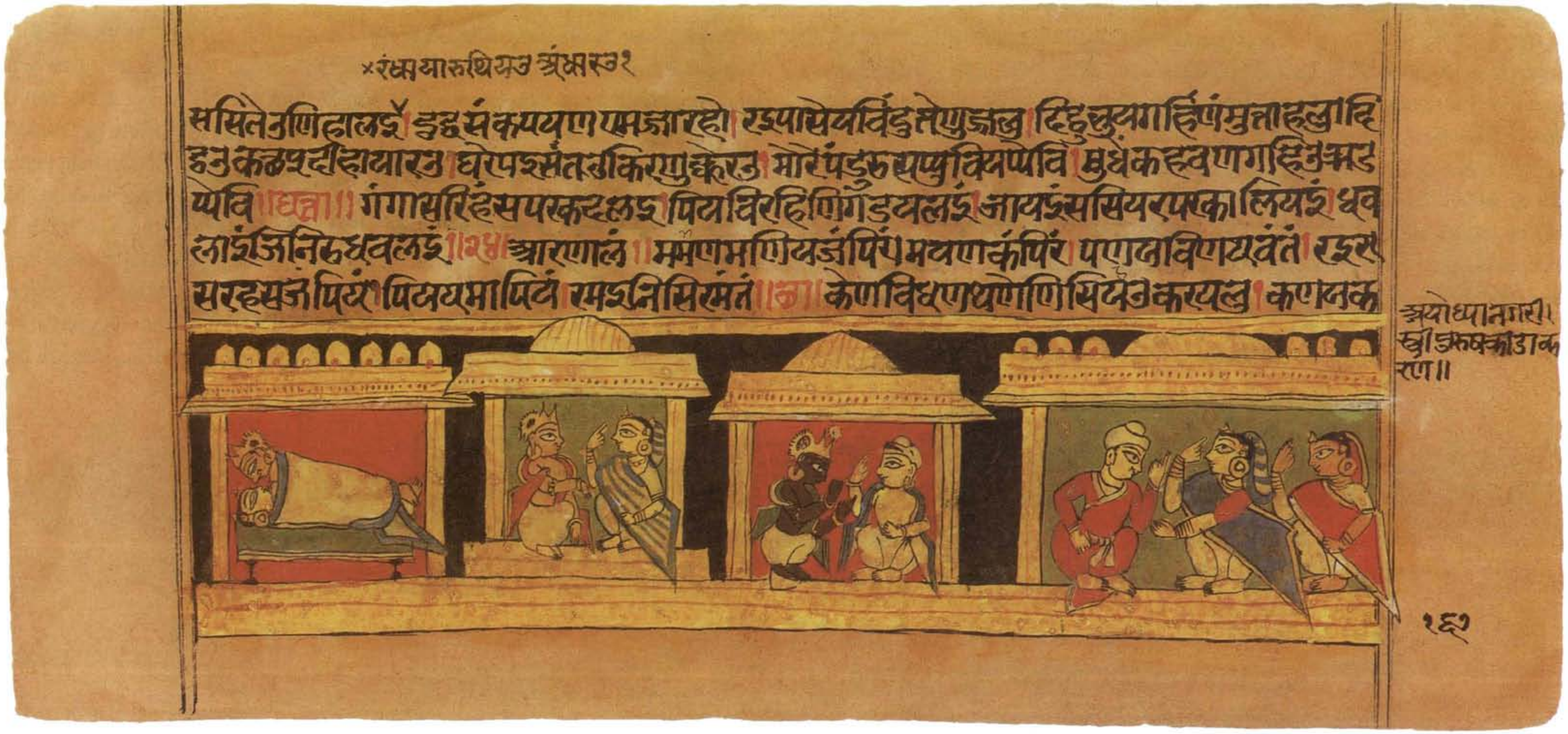

शशि का तेज अनेक हारों के समान दिखाई देता है, अँधेरे में रन्ध्राकार दिखाई देता है, और मार्जारों के लिए दूध की आशंका उत्पन्न करता है, उससे (चन्द्रमा) रति का प्रस्वेद जल उज्ज्वल दिखाई देता है, जो मानो सर्पिणी के मोती के समान जान पड़ता है। कहीं पर घर में दीर्घ आकार में प्रवेश करता हुआ किरण-समूह दीख पड़ता है, मयूर ने उसे सफेद साँप समझकर किसी प्रकार झपटकर खाया भर नहीं।

घत्ता—गंगा नदी, हंसों के पक्षदल और प्रिय से विरहिताओं के गण्डतल एक तो धवल थे ही, परन्तु चन्द्रमा की किरणों से प्रक्षालित होकर वे और भी धवल हो उठे॥ २४॥

२५

अपने मन में कामदेव का जाप करते हुए काम से काँपते हुए प्रणय से बिनीत, रतिरस और हर्ष से रंजित, रमणशील प्रिय से प्रियतमा रात में रमण करती है। किसी ने सघन स्तन पर अपना करतल रख दिया,

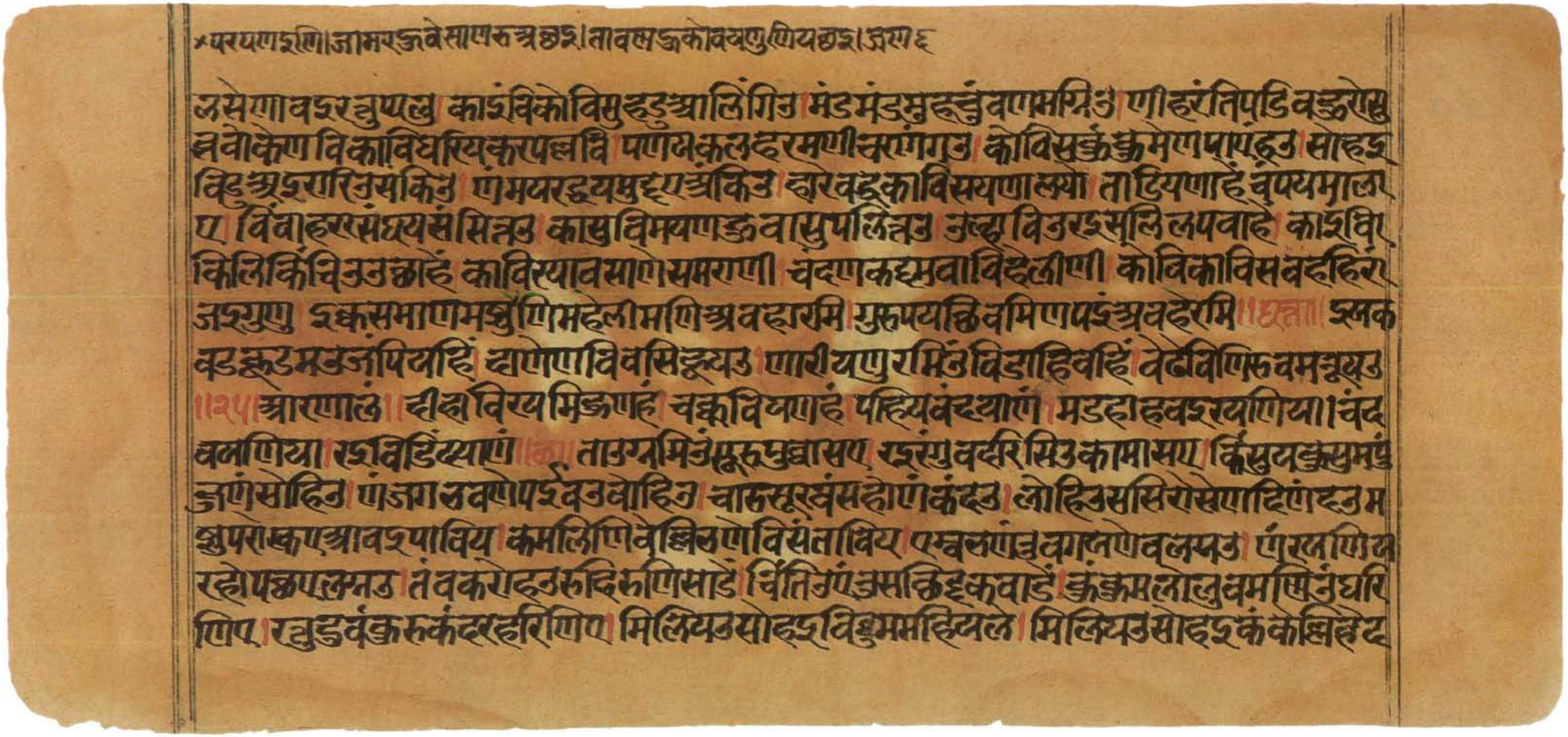

मानो स्वर्णकलश पर लाल कमल हो। किसी के द्वारा कोई सुभग (प्रिय) आलिंगित किया गया, और बलपूर्वक मुख-चुम्बन माँगा गया। प्रतिवधू (सपत्नी) के कारण क्रोध उत्पन्न होने के कारण बाहर जाती हुई किसी को किसी ने करपल्लव में पकड़ लिया। प्रणयकलह में रमणी-चरण में पड़ा हुआ कोई केशरसहित पैर से आहत किया गया। थोड़ी देर के लिए शत्रु के रूप में शंकित किया गया कोई विट शोभित है, मानो वह कामदेव की मुद्रा से अंकित हो। शयनतल में हार से बँधी हुई कोई प्रिया, स्वामी द्वारा चम्पकमाला से ताड़ित की गयी। बिम्बाधरों के रसरूपी घी से सींची गयी किन्हीं की कामाग्नि भड़क उठी, जिसे रतिरूपी जल के प्रवाह से शान्त किया गया। किसी ने उत्साह से किलकिंचित् किया। कोई रति के अवसान में श्रम से खिन्न चन्दन की कीचड़ की बावड़ी में लीन हो गयी। कोई गुणी किसी को शपथों से समझाता है कि दूसरे की प्रणयिनी मेरे लिए माता के समान है। जब तक यह वेश्यावर है, तब तक अन्य का मुख कौन देखता है! अन्य महिला को मैं मन में माता के रूप में धारण करता हूँ, गुरु के चरण को छूता हूँ कि तुम्हारी उपेक्षा नहीं करूँगा।

घत्ता—इस प्रकार विटराजों द्वारा कपट-कूट और कोमल उक्तियों तथा दान से वशीभूत कर अनुपम रूपवाला नारीजन का आलिंगन कर रमण किया गया॥ २५॥

२६

रमण करते हुए जोड़ों, चक्रवाक पक्षियों और पथिकसमूह और रत विटराज के लिए चन्द्रमुखी लम्बी भी रात छोटी लगी। तब पूर्वदिशा में सूरज उग आया, जो काम की आशा से रतिरंग (कामदेव) के समान दिखाई दिया, मानो पलाशपुष्पों का समूह शोभित हो, मानो विश्वरूपी भवन में प्रदीप प्रबोधित कर दिया गया हो, सुन्दर सूर्य मानो वंश का अंकुर हो। मानो दिनेश चन्द्रमा के क्रोध से लाल हो उठा हो कि यह पापी (चन्द्रमा) मेरे परोक्ष में आता है और कमलिनी को लता कहकर (समझकर) सताता है। ऐसा कहकर जैसे वह आकाश से लग जाता है मानो निशाचरों के पीछे लग गया हो। निशाचर ने लाल किरण-समूह को रुधिर समझा, लेकिन गृहिणी ने छेदवाले किवाड़ों से आते हुए उसे (किरण-समूह) केशरपराग माना, गुफा में रहनेवाली हरिणी ने लाल दुर्वांकुर समझा। लाल कमल में मिला हुआ वह शोभित है, अशोक के पत्तों में मिला हुआ शोभित है। जनों के अधरों में मिला हुआ शोभित है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

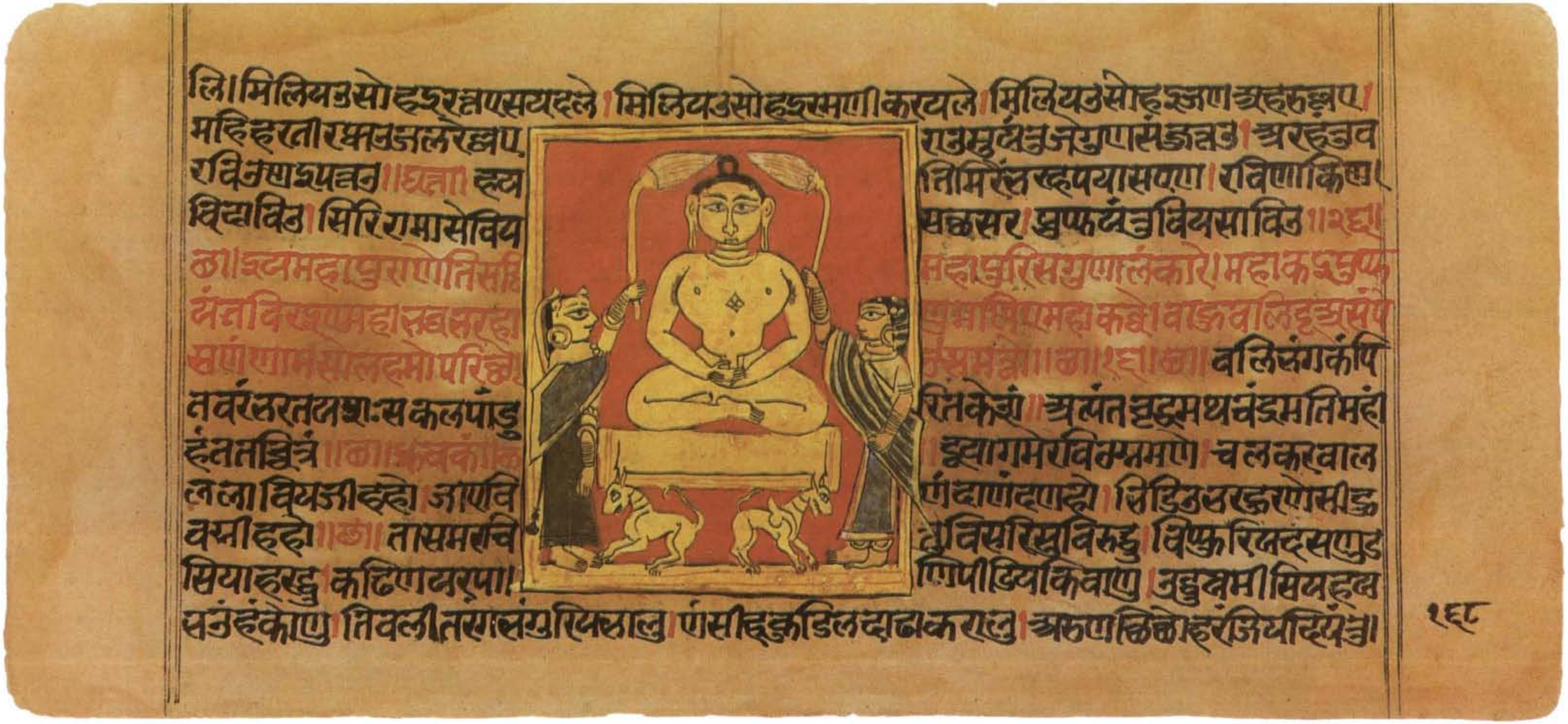

वह राग (लाल रंग) महीधरों के तट और जल की लहरियों में दौड़ा। इस प्रकार 'राग' (रागभाव और लालिमा) छोड़ते हुए और गुणों से संयुक्त अरहन्त के समान सूर्य भी उन्नति को प्राप्त हुआ।

घत्ता—भरत के प्रसाद से अन्धकार को नष्ट करनेवाले सूर्य ने क्या नहीं दिखाया। लक्ष्मीरूपी रमा से सेवित स्वच्छ सरोवर और पुष्पों को विकसित कर दिया॥ २६॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुण और अलंकारोंवाले इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का बाहुबलि-दूत-संप्रेषणवाला सोलहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ १६॥

सन्धि १७

दूत के आगमन और सूर्य के उदय होने पर, जिसकी चंचल तलवाररूपी जीभ लपलपा रही है उस नन्दानन्दन (बाहुबलि) से भरत रण में उसी प्रकार भिड़ गया जिस प्रकार सिंह से सिंह भिड़ जाता है।

१

तब युद्ध के लिए कृतमन, अद्वितीय विरुद्ध विस्फारित दाँतों से नीचे का ओठ चबाता हुआ, अपने कठोरतर हाथ से कृपाण को पीटता हुआ, उद्धत मिली हुई आहत भौंहों के कोणवाला, त्रिबलि तरंग से भंगुरित भालवाला वह ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो कुटिल दाढ़ों से कराल (भयंकर) तथा अपनी लाल-लाल आँखों की आभा से दिगन्त को रंजित करनेवाला सिंह हो।

मानो धकधक करती हुई प्रलय की ज्वाला हो। दूत के शब्दों से जिसका क्रोध बढ़ गया है ऐसा वह राजाधिराज क्रोध से कहता है—"पिता के सुन्दर बचनों की याद कर, यदि मैं किसी प्रकार कुमार को रण में मारता नहीं हूँ, तो उसे पकड़कर और अवरुद्ध कर उसी प्रकार कर दूँगा जिस प्रकार बेड़ियों से जकड़ा हुआ हाथी रहता है। मेरे क्रुद्ध होने पर देव और अदेव मेरी सेवा करते हैं, फिर वह मेरी सेवा क्यों नहीं करता?" इस प्रकार गरजकर, अपनी तलवार से देवेन्द्र को त्रस्त करनेवाला महान् नरेन्द्र भरत उठा। तब मुकुटबद्ध तथा केयूर और कण्ठाभरणों से आन्दोलित माण्डलीक राजा चले। जिनके स्वर्ण के करधनी-समूह धरती पर गिर रहे हैं ऐसे अत्यन्त भीषण वे इस प्रकार स्थित हो गये जैसे कालस्वरूप ही हों। एक से एक प्रमुख गिरीन्द्र की तरह धीर वे वीर शीघ्र राजा के साथ तैयार हो गये।

घत्ता—तैयार होते हुए उस योद्धाजन से कोई स्त्री कहती है—"यदि तुम मेरा कोई उपकार मानते हो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

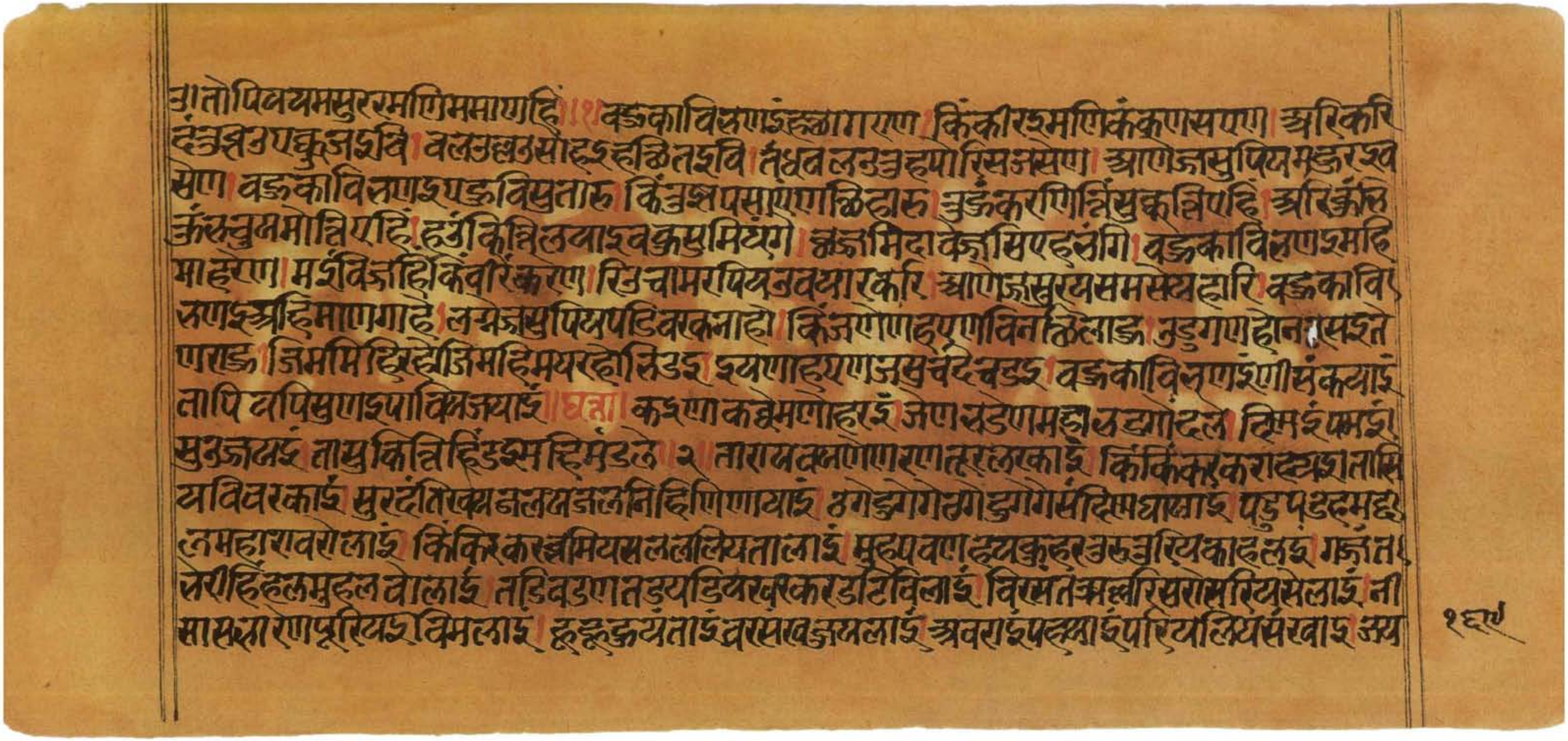

तो हे प्रियतम, सुर-रमणी को मत पसन्द करना''॥ १ ॥

२

कोई वधू कहती है—''हाथ में आये हुए सैकड़ों मणिकंकणों से क्या, हाथीदाँत का बना एक कड़ा यदि हाथ में सोहता है, उस धवल कड़े को हे प्रिय! तुम अपने पौरुष और यश तथा मेरे प्रेम के वश से ले आना।'' कोई वधू कहती है—''यह स्वच्छ हार क्या तुम्हारे प्रसाद से मेरे पास नहीं है? तुम्हारे हाथ की तलवार के द्वारा उखाड़े गये और शत्रुगजों के कुम्भस्थलों से गिरे हुए मोतियों से कुसुमित अंगोंवाली मैं कीर्तिलता की तरह शोभित होऊँ, तुम मुझे यह भंगिमा दिखाओ।'' कोई वधू कहती है—''महिमा का हरण करनेवाले चीर या हाथ से मुझे हवा क्यों करते हो? हे प्रिय रजश्रम और स्वेद का हरण करनेवाला शत्रु का चामर ले आना।'' कोई वधू कहती है—''तुम अभिमानी शत्रुपक्ष के स्वामी से लड़ना। छोटे आदमी को मारने में कोई लाभ नहीं, यही कारण है कि राहू नक्षत्रगणों से रुष्ट नहीं होता। वह इसीलिए सूर्य से लड़ता है, इसीलिए चन्द्रमा से लड़ता है, बलवान् के मारे जाने पर यश चन्द्रमा पर चढ़ता है।'' कोई वधू कहती है कि निशंक दुष्टों को सतानेवाले ही जय प्राप्त करनेवाले होते हैं।

घत्ता—जिस कवि ने सुन्दर काव्य में और भट ने महासुभटों के युद्ध में अपने सरल पद—उद्यत पद दिये हैं उसी की कीर्ति महीमण्डल में घूमती है॥ २ ॥

३

तब राजा के आदेश से अनुचरों के हाथों से आहत विपक्ष को सन्त्रस्त करनेवाले लाखों रणतूर्य बज उठे। ऐरावत प्रलयमेघ और समुद्र के स्वरोंवाले धगधग-गिदुगिदु-गिगि करते हुए आघात दिये जाने लगे। पटु-पटह और मृदंग के महाशब्दों का कोलाहल हो रहा था, किंकरों के हाथों से घुमाये हुए सुन्दर ताल होने लगे, मुँह की हवा से तुर-तुर करते हुए काहलों का कोलाहल होने लगा, गूँजती हुई भेरियों के साथ हल-मूसलों के बोल होने लगे। बिजली के गिरने से तड़तड़ करते हुए विशाल करट और टिविलि (बज उठे)। बजती हुई झल्लरियों के स्वर से पर्वत उखड़ने लगे। निश्वासों के भार से पूरित विमल और श्रेष्ठ शंखयुगल हू-हू-हू करने लगे।

जय-विजय श्रीकामिनी और सुख की आकांक्षा रखनेवाले और भी असंख्य शंख बजा दिये गये। शब्द करते हुए रुंज शंख, भें-भें करते हुए भेंभा शंख बज उठे। नाग, मही, समुद्र और मेघों को हिलाती हुई कवचों से शोभित सेनाएँ चलीं। योद्धाओं के द्वारा मुक्त अश्वखुरों से धरती का अग्रभाग आहत हो उठा। चंचल धूलि से कपिल रंग की तलवारें चमक रही थीं। बल में श्रेष्ठ योद्धा मिले हुए और मण्डलाकार थे। हाथ में भाले लिये हुए पैदल सिपाही दौड़ रहे थे। रथों के चक्रों की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

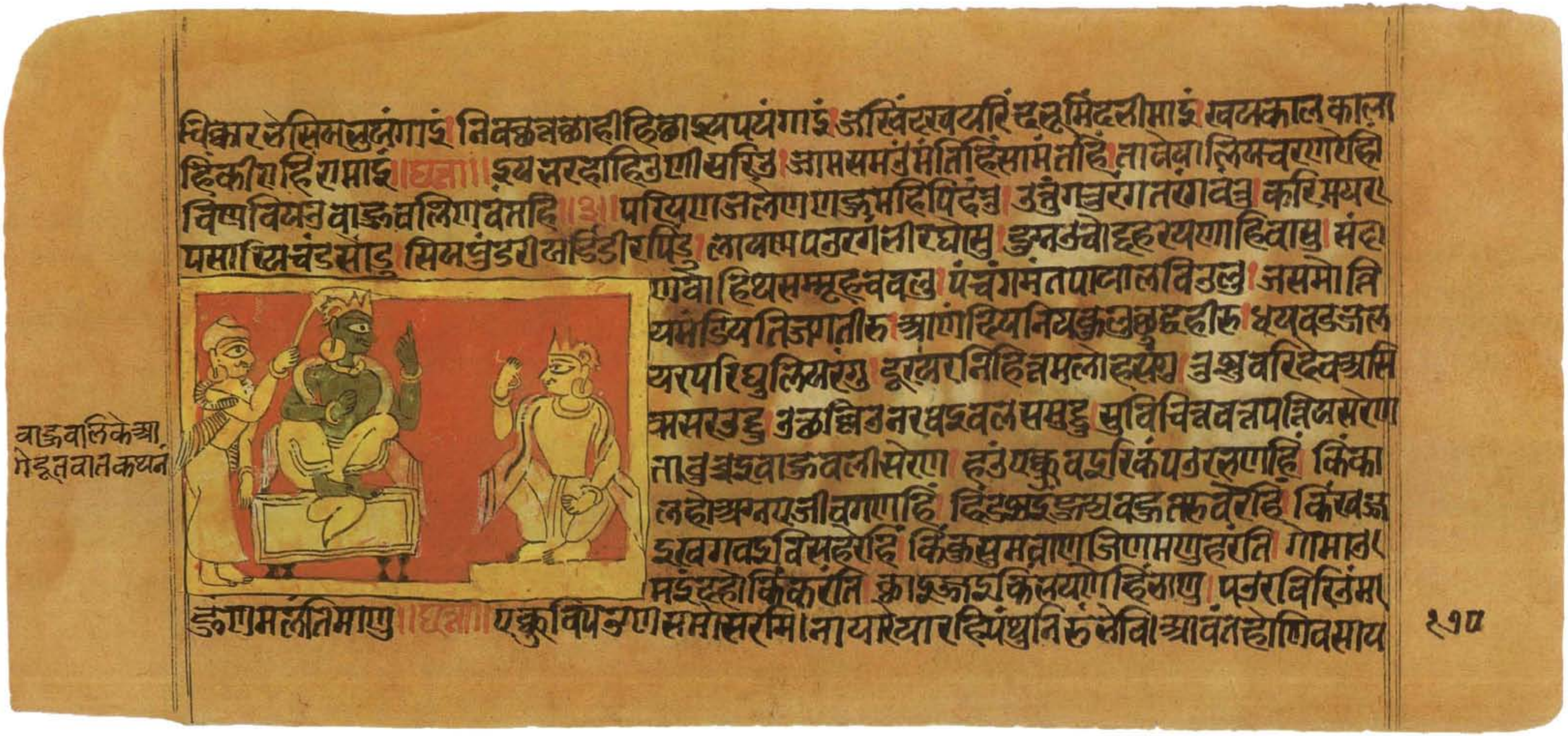

चिक्कारों से भुजंग भयभीत हो उठे। नृपछत्रों की छाया से सूर्य आच्छादित हो गया। जो यक्षेन्द्रों, विद्याधरेन्द्रों और मानवेन्द्रों से भयंकर और क्षयकाल की क्रीड़ा को अपनी क्रीड़ा से विराम देनेवाली थी।

घत्ता—इस प्रकार जब भरताधिप मन्त्रियों और सामन्तों के साथ निकला तब बैतालिकों और चारणों ने प्रणाम करते हुए बाहुबलि से निवेदन किया॥ ३॥

४

''हे देव, तुम्हारे ऊपर सैन्यरूपी समुद्र उछल पड़ा है, जो परिजनरूपी जल से धरती और आकाश को ढकता हुआ, उत्तुंग तुरंगरूपी तरंगों से युक्त, हाथीरूपी मगरों से अपनी प्रचण्ड सूँड उठाये हुए, श्वेत छत्रों के फेन-समूह से युक्त लावण्य (सौन्दर्य और खारापन) के प्रचुर गम्भीर घोषवाला, दुर्गम चौदह रत्नों से अधिष्ठित, रथों के बोहित्थ-समूह से चपल, पंचांग मन्त्ररूपी पाताल से विपुल, यशरूपी मोतियों से त्रिजगरूपी तीर को मण्डित करनेवाला, अपने कुलरूपी चन्द्र को आनन्दित करता हुआ, ध्वजपटों के जलचरों से व्याप्त शरीर, अन्यायरूपी मलसमूह को दूर करनेवाला तथा तलवाररूपी मत्स्यों से भयंकर है।'' तब सुविचित्र पुंखों से विभूषित तीरोंवाले बाहुबलीश्वर ने कहा—''ऐसा क्यों कहते हो कि मैं अकेला हूँ और शत्रु बहुत हैं? क्या तुम काल के आगे जीव की गिनती करते हो, क्या आग तरुवरों के द्वारा जलायी जा सकती है? क्या नागों के द्वारा गरुड़ खाया जा सकता है? क्या काम के बाण जिनमन का हरण कर सकते हैं? सियार सिंह का क्या कर सकते हैं? क्या नक्षत्रों के द्वारा सूर्य आच्छादित किया जा सकता है? प्रवर शत्रु भी मेरा मान मलिन नहीं कर सकता।

घत्ता—मैं एक भी पैर नहीं हटूँगा, और नाग के आकार के तीरों से मार्ग को अवरुद्ध कर लूँगा। आते हुए राजारूपी समुद्र

के लिए मैं सरवरों की कतारों से तट बाँध दूँगा''॥४॥

५

प्रलयसूर्य के समान तेजस्वी श्री बाहुबलीश्वर देव गरजते हुए तैयार होते हैं। अपने बाहुबल की स्थिरता और बनावट देखकर किसी योद्धा का रोमांच ऊँचा हो गया, उसके हृदय में लोहवंत (लोहे से निर्मित और लोभयुक्त) कवच उसी प्रकार नहीं समा सका जिस प्रकार कापुरुष। जय के अभिलाषी किसी ने छुरी अपनी करधनी के सूत्र से बाँध ली। किसी ने संग्राम-दीक्षा की इच्छा की और किसी ने तीर चलाने की परम शिक्षा की। किसी ने धनुष की डोरी को कहीं चाँपा, मानो कुटिल भाववाले खलजन को चाँपा हो। किसी योद्धा ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तरकस युगल इस प्रकार बाँध लिया मानो गरुड़ ने अपने पक्षयुगल को दिखाया हो। किसी ने अपनी प्रचण्ड तलवार निकाल ली मानो मेघ ने विद्युद्दण्ड का प्रदर्शन किया हो। कोई योद्धा कहता है आज मैं शत्रु को मारूँगा और स्वामी को निष्कण्टक राज्य दूँगा। स्वामी तुच्छ है और शत्रु प्रवर है, तो मैं भी धीर हूँ, हे सुन्दरी, क्या विचार करना? जल्दी अपना हाथ दो और आलिंगन करो; कौन जानता है फिर संयोग कहाँ हो? मैंने अपने जिन हाथों से प्रभु का प्रसाद लिया है आज मैं उन्हीं हाथों से युद्ध करूँगा?

घत्ता—कोई महासुभट कहता है कि हे कान्ते! छोड़ो-छोड़ो, मैं कुछ भी सुन्दर (अच्छा) नहीं करूँगा। बाहर निकलकर मैं अपने शिर के दान से राजा के ऋण का शोधन करूँगा॥ ५॥

६

कोई सुभट कहता है कि जिनके मुख में घाव कर दिये गये हैं, ऐसे गजसूँडों से यदि मेरे उरतल का भेदन कर दिया जाता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

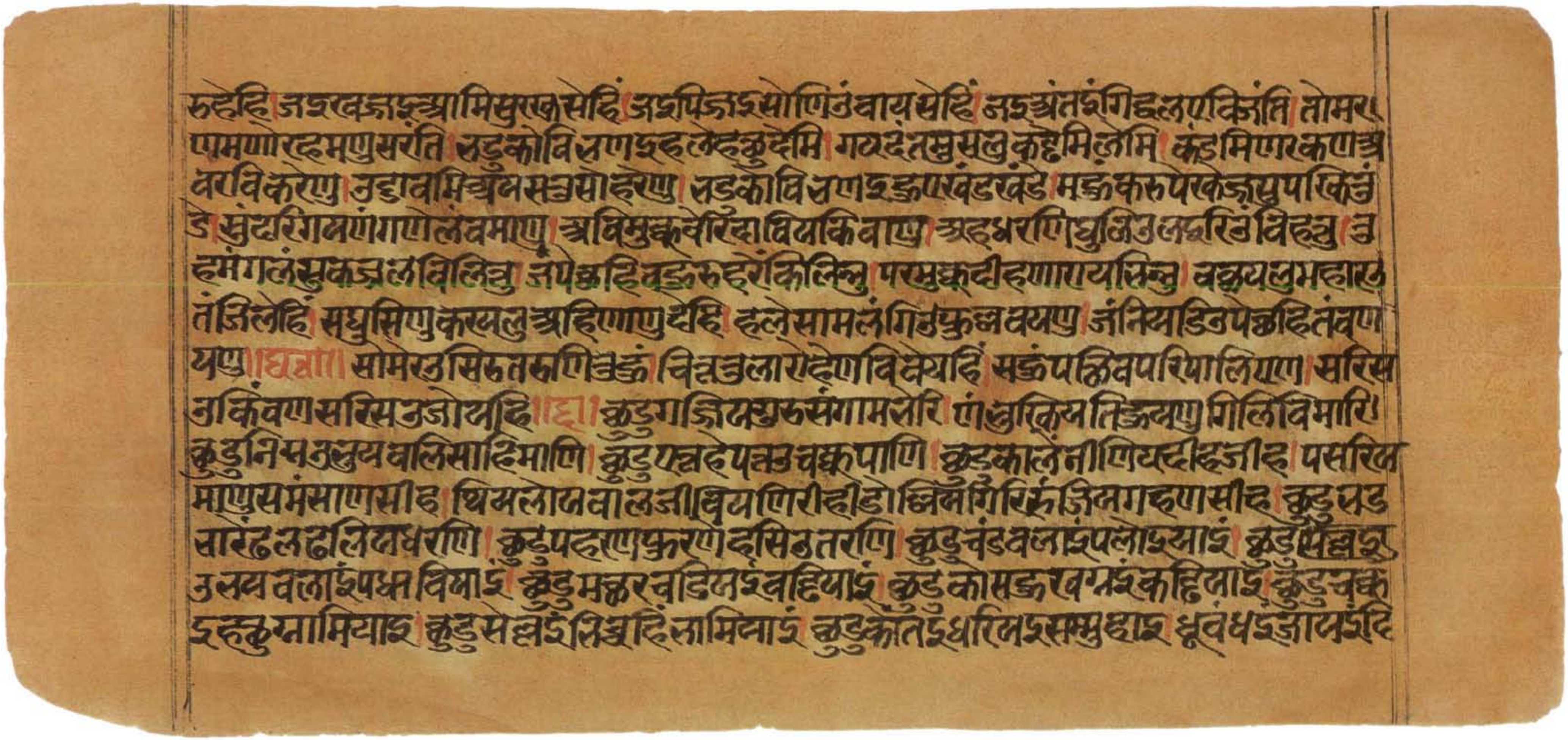

यदि राक्षसों के द्वारा मेरा आमिष खा लिया जाता है, यदि कौओं के द्वारा रक्त पी लिया जाता है, यदि गीध आँतों को लेकर चले जाते हैं तो मेरे मरण का मनोरथ पूरा हो जाता है। कोई सुभट कहता है कि लो मैं हाथ देता हूँ, मैं गजदाँतों के मूसल निकालकर लाऊँगा। योद्धा-समूह और हाथियों को चूर-चूर कर मैं अयशरूपी भूसा की धूल उड़ाऊँगा? कोई सुभट कहता है—हे सुन्दरी, आकाशरूपी आँगन में लम्बमान (लम्बा फैला हुआ) जिसने शत्रु को नहीं छोड़ा है, और तलवार का प्रदर्शन किया है, ऐसे मेरे हाथ को, टुकड़े-टुकड़े होने पर तुम पक्षी के मुख में देखोगी? अथवा शत्रु के द्वारा विभक्त, धरती पर पड़े हुए तुम्हारे मंगलाश्रुओं और काजल से लिप्त, अत्यधिक रुधिर से आर्द्र, छोड़े गये लम्बे-लम्बे तीरों से विदीर्ण यदि तुम मेरे वक्ष:स्थल को देखो तो उसे ले लेना और अपने केशर-सहित हाथ की पहचान देना। हे श्यामलांगी, यदि तुम मेरे खिले हुए चेहरे और रक्तनेत्रोंवाले—

घत्ता—मेरे सिर को गिरा हुआ देखो, तो तुम उसे अपने चित्तरूपी तराजू पर तौलकर पहचान लेना और स्वयं देख लेना कि वह राजा का परिपालन करनेवाले के सदृश है या नहीं है?॥ ६ ॥

७

शीघ्र ही संग्रामभेरी बज उठी मानो मारी त्रिभुवन को निगलने के लिए भूखी हो उठी हो। स्वाभिमानी बाहुबलि शीघ्र ही निकल पड़ा। शीघ्र ही इस ओर चक्रवर्ती आ गया। शीघ्र ही काल ने अपनी लम्बी जीभ प्रेरित की और मनुष्यों के मांस को खाने की इच्छा से उसे फैला लिया। जीवन से निरीह होकर लोकपाल स्थित हो गये। पर्वत हिल उठे और जंगल में सिंह दहाड़ उठे। शीघ्र ही योद्धाओं की मार से धरती डगमगा गयी। शीघ्र ही अस्त्रों की प्रभा से सूर्य का उपहास किया जाने लगा। शीघ्र ही प्रचण्ड सेनाएँ देखी गयीं, शीघ्र उभयबल दौड़ने लगे। ईर्ष्या से भरे चरित बढ़ने लगे। शीघ्र ही म्यानों से तलवारें निकाल ली गयीं, शीघ्र ही चक्र हाथ से चलाये जाने लगे, शीघ्र ही भृत्यों के द्वारा सेल घुमाये जाने लगे। शीघ्र ही भाले सामने धारण किये गये, दिशाओं के मुख धुएँ से अन्धे हो गये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शीघ्र ही मुट्ठी में लकुटदण्ड ले लिये गये, शीघ्र ही पुंख सहित तीर डोरी पर चढ़ा लिये गये। शीघ्र ही कायरों के प्राण काँप (थरथरा) गये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शीघ्र ही रथ और विमान लाये गये। शीघ्र ही महावतों के पैरों से हाथी प्रेरित कर दिये गये। शीघ्र ही घुड़सवारों द्वारा तुरंग चला दिये गये।

घत्ता—शीघ्र ही धरती के लिए सेनाएँ जबतक एक दूसरे पर आक्रमण करती हैं तबतक अपने हाथ उठाकर मंत्री उन दोनों के भीतर प्रविष्ट हुए और बोले॥ ७॥

८

''दोनों सेनाओं के बीच जो बाण छोड़ता है, उसे श्री ऋषभनाथ की शपथ।'' यह सुनते ही सेनाएँ हट गयीं और चढ़े हुए धनुष उतार लिये गये। यह सुनकर हर्ष से आपूरित बजते हुए तूर्य हटा लिये गये। यह सुनकर धाराओं का उपहास करनेवाली तलवारें म्यान के भीतर रख ली गयीं। यह सुनकर चमकते हुए सघन कवच-निबन्धन खोल दिये गये। यह सुनकर मतवाले प्रतिगजों की वरगन्ध से लुब्ध और क्रुद्ध गज अवरुद्ध कर लिये गये। यह सुनकर ईर्ष्याभाव से भरे हुए फड़फड़ाते हुए अश्व रोक लिये गये। रथ रह गये, लगाम खींच ली गयी। बेधते हुए अनेक योद्धाओं को मना कर दिया गया।

घत्ता—युद्ध की साज-सामाग्री को दूर हटाती हुई, गुरुजनों की शपथ से रोकी गयी दोनों सेनाएँ कलकल शब्द को छोड़कर इस प्रकार स्थित हो गयीं जैसे दीवाल पर चित्रित कर दी गयी हों॥ ८॥

९

अपने सिरों से प्रणाम करते हुए, दोनों हाथ जोड़े हुए, उत्पन्न होते हुए क्रोध को शान्त करते हुए मन्त्रियों ने मधुर शब्दों में दोनों से निवेदन किया—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

''आप दोनों चरमशरीरी हैं, आप दोनों विजयलक्ष्मी के घर हैं, आप दोनों अस्खलित प्रतापवाले हैं, आप दोनों गम्भीर वाणीवाले हैं, आप दोनों विश्व को धारण करने की शक्तिवाले हैं, आप दोनों ही रमणियों के लिए सुन्दर हैं, आप दोनों देवों से भी प्रचण्ड हैं, आप दोनों धरतीरूपी महिला के बाहुदण्ड हैं। आप दोनों राजा के न्याय में कुशल हैं, आप दोनों अपने पिता के चरणरूपी कमलों के भ्रमर हैं, आप दोनों ही जनता के नेत्र हैं। इसलिए आप हमारे पक्ष को पसन्द करें। तीखे आयुधों की धार से विदीर्ण अनुचर-समूह के मारे जाने से क्या? उन बेचारों को दण्डित करने और नारी समूह को विधवा बनाने से क्या? दोनों के बीच मध्यस्थ होकर आयुध छोड़कर और क्षमाभाव धारण करें।

घत्ता—हे राजन्, देखिए और युक्तियुक्त कहा हुआ इतना कीजिए—तुम दोनों में धर्म और न्याय से नियुक्त तीन प्रकार का युद्ध हो॥ ९ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

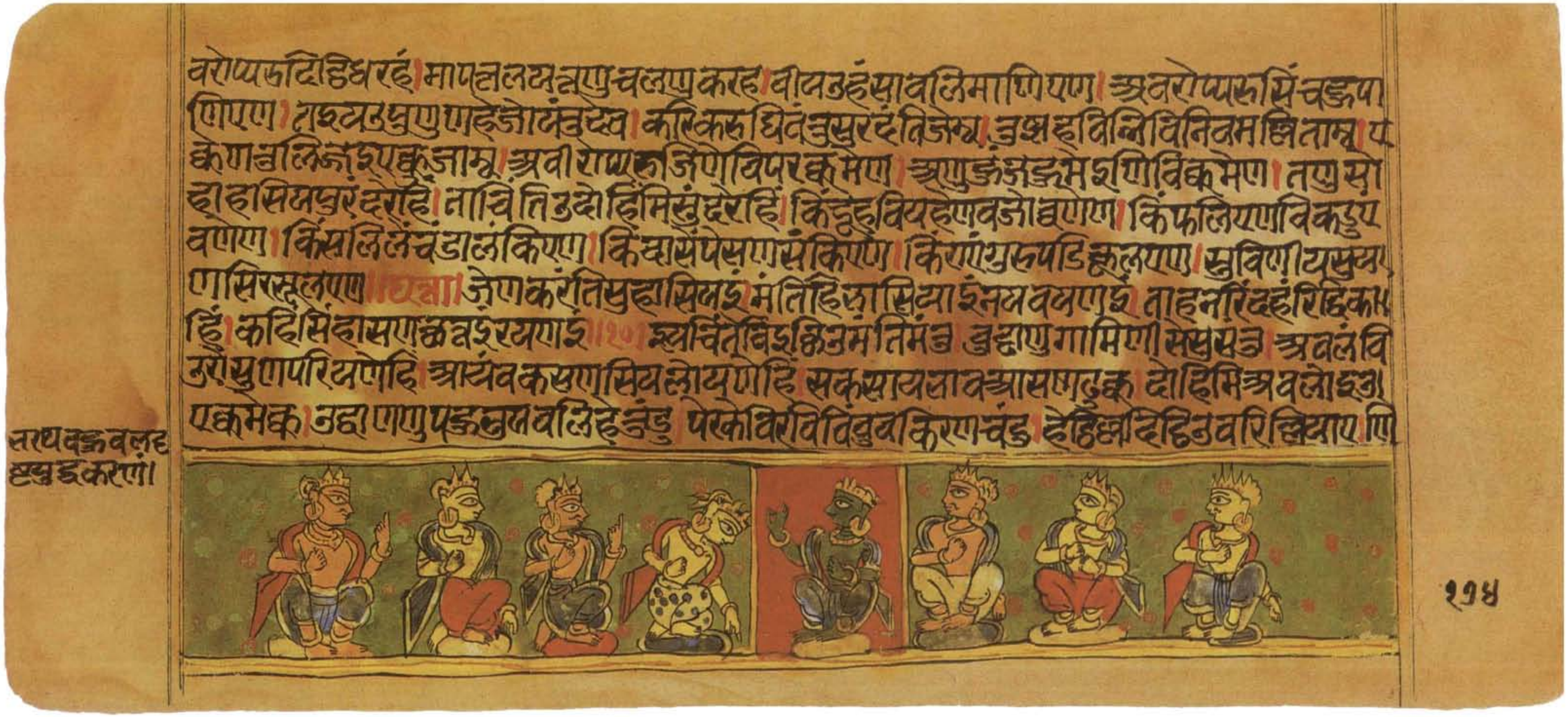

१०

पहला—एक-दूसरे पर दृष्टि डालो, कोई भी अपने पक्ष्म की पलकों को न हिलाये; दूसरा—हंसावली के द्वारा सम्मानित पानी के द्वारा एक-दूसरे को सींचो; तीसरे—आकाश में देवता देखते हैं और जिस प्रकार ऐरावत सूँड को पकड़ता है, आप दोनों राजमल्ल तब तक मल्लयुद्ध करें कि जबतक एक के द्वारा दूसरा हरा न दिया जाये। पराक्रम से एक दूसरे को जीतकर पराक्रम से कुलगृह-श्री को ग्रहण करें।" तब अपने शरीर की शोभा से इन्द्र का उपहास करनेवाले दोनों सुन्दरों ने अपने मन में विचार किया कि अनिष्ट करनेवाले नवयौवन से क्या? फले हुए कड़ुवे वन से क्या? चाण्डाल से अलंकृत जल से क्या? आदेश से शंकित रहनेवाले दास से क्या, गुरु से प्रतिकूल और अत्यन्त विनीत सुजन शिर को पीड़ा पहुँचानेवाले राजा से क्या?

घत्ता—जो मंत्रियों के द्वारा भाषित, सुभाषित और नीतिवचन नहीं करते उन राजाओं की ऋद्धि कहाँ, और सिंहासन, क्षत्र एवं रत्न कहाँ? ॥ १० ॥

११

यह विचारकर उन्होंने मन्त्री की मन्त्रणा पसन्द की। वृद्धाश्रित सबकुछ उत्तम होता है। लाल, सफेद एवं श्वेत लोचनवाले परिजनों ने क्रोध का आलम्बन नहीं लिया। कषायभाव से वे एक-दूसरे के निकट पहुँचे, दोनों ने एक-दूसरे को देखा। राजा भरत ऊँचा मुख किये बाहुबलि का मुख देखता है, जैसे किरण प्रचण्ड रविबिम्ब को देखता है। ऊपर की अविचलित दृष्टि से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

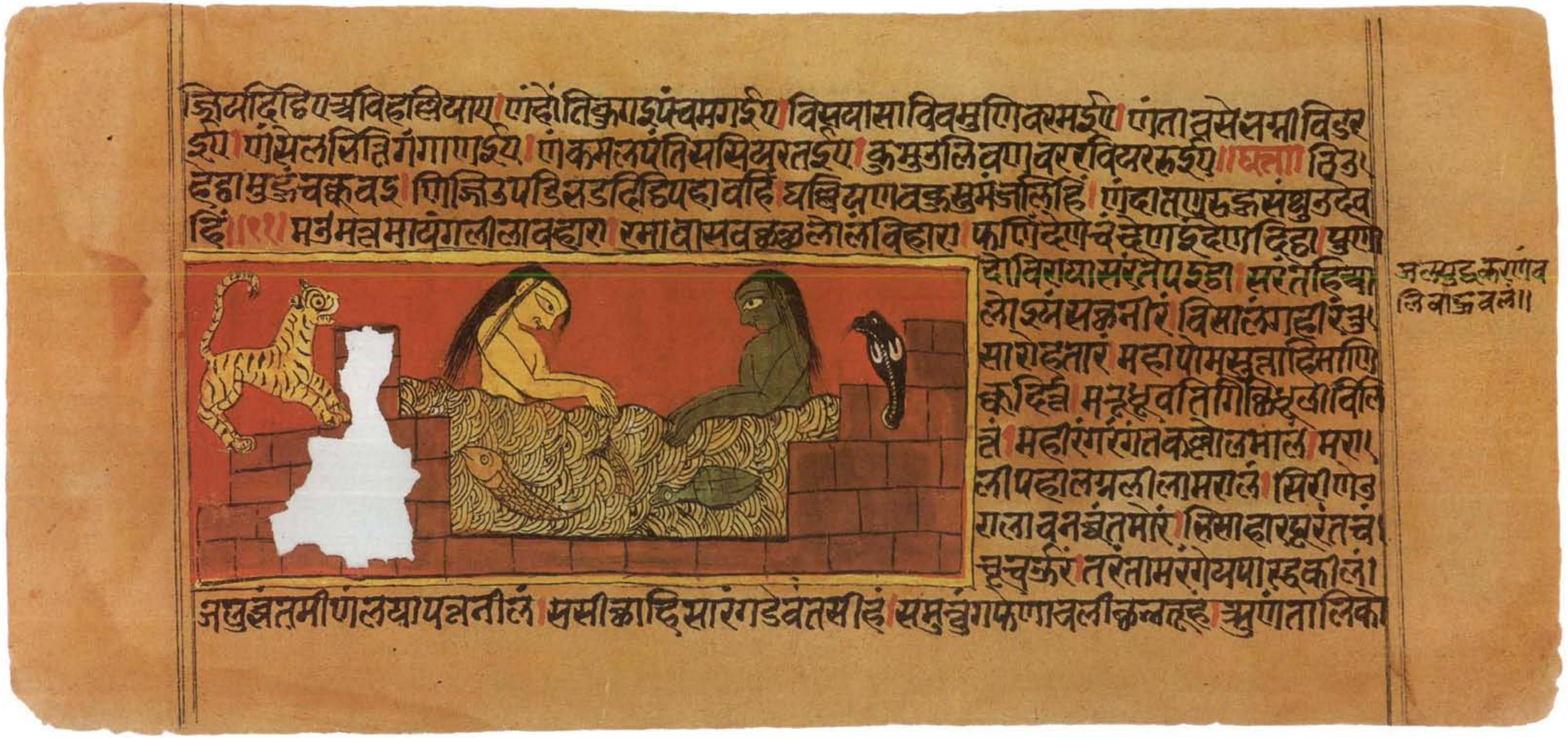

नीचे की दृष्टि जीत ली गयी, मानो होती हुई कुगति पाँचवीं गति से, मानो मुनिवरों की मति से, विषयाशा मानो, विट की रति से तपस्विनी और मानो गंगा नदी से पर्वत की दीवार भग्न हो गयी हो। मानो चन्द्रकिरणों की परम्परा से कमलपंक्ति, मानो रवि की कान्ति से कुमुदों की पंक्ति मुकुलित हो गयी हो।

घत्ता—प्रतिभट की दृष्टि के प्रभावों से पराजित चक्रवर्ती नीचा मुख करके रह गया, नव-कुसुमांजलियाँ डालते हुए देवों ने सुनन्दा के पुत्र बाहुबलि की संस्तुति की॥ ११॥

१२

मतवाले गजों की लीला का अपहरण करनेवाले तथा लक्ष्मी के निवासघरस्वरूप जिनके वक्ष पर हार आन्दोलित हैं ऐसे वे दोनों राजा फिर सरोवर के भीतर प्रविष्ट हुए और उन्हें नागेन्द्रों, चन्द्र और इन्द्र ने देखा। प्रवेश करते हुए स्वच्छ नीर देखा, जो विशाल, गम्भीर और हिमकणों के समूह की तरह निर्मल था। हवा से उड़ती हुई पराग-धूलि से लिप्त था, जिसकी तरंगमाला भूमिरूपी रंगमंच पर क्रीड़ा कर रही थी, जहाँ लीला में हंस हंसनियों के पथ में लगे हुए थे, लक्ष्मी के नूपुरों के आलाप पर मयूर नृत्य कर रहे थे, जहाँ मृणाल के आहार से चकोर की चोंच भरी हुई थी, अमर तैर रहे थे, जिसमें सुन्दर क्रीड़ा प्रारम्भ की गयी थी, जल से मछलियाँ निकल रही थीं, जो लता पत्रों से नीला था, जिसमें चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब के हरिण पर सिंह झपट रहा था। उठती हुई फेनावली से तट ढके हुए थे, गूँजते हुए भ्रमरों का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

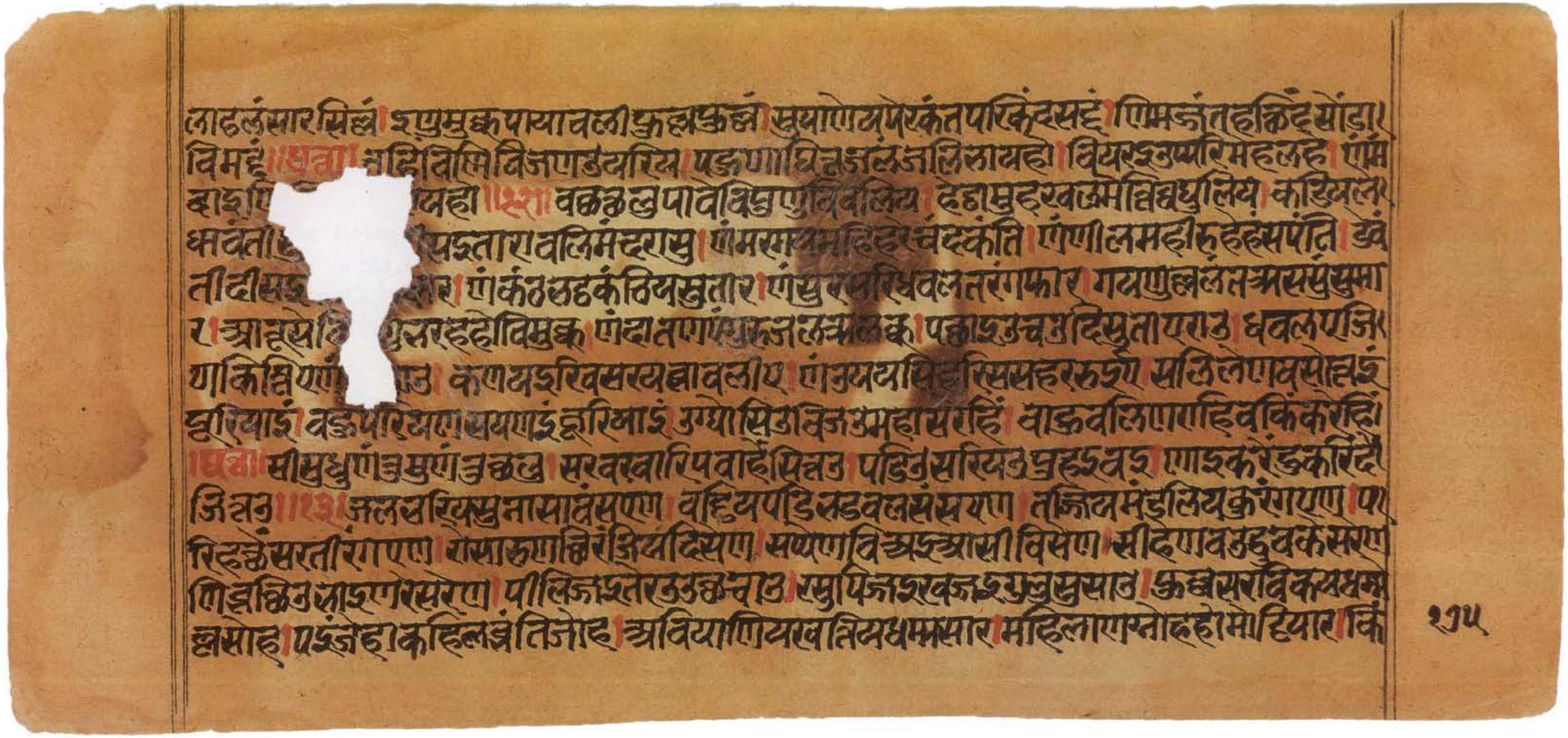

कोलाहल हो रहा था, जो सारसों से भरा हुआ था, सूर्य से मुक्त किरणावली से फूल खिले हुए थे, जिसमें अनेक पक्षीन्द्रों और यक्षेन्द्रों को शब्द सुनाई दे रहा था और जो डूबते हुए गजों की सूँडों से मर्दित था।

घत्ता—ऐसे उस सरोवर में वे दोनों उतरे। स्वामी ने अपने भाई के ऊपर जल की धारा छोड़ी मानो हिमालय से गंगानदी धरती के ऊपर आ रही हो॥ १२॥

१३

वक्षस्थल पाकर वह फिर मुड़ी और दुष्ट की मित्रता की तरह नीचा मुख कर गिर पड़ी। उस सुन्दर के कटि तट पर दौड़ती हुई ऐसी मालूम हो रही ती, जैसे मन्दराचल पर तारावली हो। मानो मरकत महीधर पर चन्द्रमा की कान्ति हो, मानो नील वृक्ष पर हंस पंक्ति हो, हिलती हुई धारा ऐसी मालूम होती थी, मानो कण्ठ से भ्रष्ट स्वच्छ हार हो, मानो चंचल लहरों से विस्फारित गंगानदी हो, कि जिसमें आकाश तक मत्स्य और शिंशुमार उछल रहे थे। तब क्रुद्ध होकर सुनन्दा के पुत्र बाहुबलि ने भरत के ऊपर भारी जलधारा छोड़ी। उसने राजा को चारों ओर से आच्छादित कर लिया, मानो जिनेन्द्र भगवान् की कीर्ति ने तीनों लोकों को ढक लिया हो, मानो शरद् की मेघावली ने स्वर्णगिरि को, मानो चन्द्रमा की किरणमाला ने उदयाचल को ढक लिया हो। जल से नवस्रोत पूरे हो गये, बहु परिजन और स्वजन पीड़ित हो उठे। तब बाहुबलि राजा के अनुचरों ने महास्वरों में विजय की घोषणा कर दी।

घत्ता—अपना सिर पीटता और छल छोड़ता हुआ तथा सरोवर के जलप्रवाह से अभिसिंचित पृथ्वीपति भरत हटाया गया। पृथ्वीपति भरत उसी प्रकार जीत लिया गया जिस प्रकार हाथी से हाथी जीत लिया जाता है॥ १३॥

१४

जिसकी नाक की नली जल से भर गयी है, जिसे प्रतियोद्धा के बल में संशय बढ़ गया है, जिसने माण्डलीक राजारूपी भी हरिणों को छोड़ दिया है, ऐसे नरेश्वर भरत ने बेग से तीर पर जाकर क्रोध से लाल आँखों से दिशा को रंजित करते हुए अत्यन्त विषदाढ़वाले सर्प के समान अथवा अयाल उठाये हुए सिंह के समान भाई की भर्त्सना की—"जो अपने ईख के धनुष को पीड़ित कर उसका रस पीता है, और सुस्वादु गुड़ खाता है और जिसके पुष्परूपी तीर भी चोटी की शोभा करनेवाले हैं ऐसा तुम्हारे जैसा योद्धा कहाँ पाया जा सकता है? क्षत्रियों के श्रेष्ठ धर्म को नहीं जाननेवाले, महिलाओं और अपने ग्रामप्रमुख का अहंकार रखनेवाले तुम्हें

मेरा मुख देखने से क्या, जीवितों को पानी देने से क्या? ओ आओ और मुझे इस तरह बाहुयुद्ध दो जिससे दोनों का अन्तर स्पष्ट हो जाये।'' तब जिनपुत्र बाहुबलि बोला—''तुम व्यर्थ बोलते हो, मेरे धनुष-बाण का उपहास क्यों करते हो, हे देव, जानते हुए भी तुम व्यर्थ बोलते हो, प्रियविरह से उद्विग्न के समान तुम क्यों नहीं रोते? महिलाओं का साथी मैं स्वजनमार्ग (शयनमार्ग) में हूँ, लेकिन तलवार निकल आनेपर मैं योद्धाओं का योद्धा हूँ।

घत्ता—यदि तुम स्वजनत्व मानते हो तो हे आदरणीय, धरती क्यों माँगते हो? हे राजन्, अपने धनकणों के मद से विवश किये गये सभी लोग विपरीत हो उठते हैं''॥ १४॥

१५

उस समय महेन्द्र शिरोमणि दोनों भाई अपने पैरों के अग्रभाग को रगड़ते हुए बाहुयुद्ध करने लगे। दोनों ही कुलीन और मान में महान् पृथ्वी के कारण (लड़ गये)। दोनों ही प्रधान और महाबल-मल्ल। दोनों ही संकुचित कुण्डलों से अलंकृत कपोल, दोनों ही क्रुद्ध और प्रचण्ड अपने बाहु फैलाये हुए, चिरायु, चन्द्रमा के समान प्रसिद्ध नाम, विक्रम से युक्त नराधिप की कामनावाले और समर्थ, लक्ष्मी और रति के आश्रय, महारथी आभा से युक्त और सूर्य की तरह तेजस्वी। शंकारहित गरुड़ और मत्स्य के चिह्नवाले, पंक से रहित, और यश की किरणों से पुण्यरूपी चन्द्रमा को प्रसाधित करनेवाले थे। वे दोनों मिलते हैं, मिलकर हाथ पकड़ते हैं। हाथ पकड़कर देह से लगकर गिरते हैं। गिरते हुए मजबूत पकड़ करते हैं और कमर और गले को रुद्ध कर रह जाते हैं। विरुद्ध भी पकड़ को बल से छुड़ा लेते हैं, छूटकर उठकर शीघ्र मुड़ते हैं, और समर्थ बाहुयुद्ध के सैकड़ों विधान (दाँव-पेच) जैसे चाँपना, काढ़ना, बेठन (लिपटना) आदि करते हैं। दोनों ही धीर और अस्खलित अंगवाले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा निरंकुश हैं, जैसे मदान्ध महागज हों। पैरों के भार से धरती उन्होंने नहीं छोड़ी। शब्द से दिग्गज दु:खी हो गये, फलों से उन्नत वृक्षों की पीठ छिन्न हो गयी, पक्षी आकाश में चले गये, वनचर खिन्न हो उठे, क्रूर नागराज वहीं संकुचित हो गये—चल नहीं सके, और भील घाटियों और गुफाओं में छिप गये। उस समय मानिनियों के मान और मद का हनन करनेवाले मनुष्यों और देवों के संग्राम में जय प्राप्त करनेवाले, ऐरावत की सूँड के समान बाहुवाले अनिन्द्य जिनेन्द्र और सुनन्दा के पुत्र ने प्रभु के हाथ को हाथ से पीड़ित कर दूसरे स्थिर हाथ से पकड़कर आक्रमण कर—

घत्ता—कुमार ने राजा को उसी प्रकार उठा लिया, जिस प्रकार नागों की स्त्रियों (नागिनों) से जिसकी गुफाएँ सेवित हैं, ऐसे मन्दराचल को अपनी इच्छा के कुतूहल मात्र से इन्द्र ने उठा लिया हो॥ १५॥

१६

मानो सुपुत्र ने अपने वंश का उद्धार किया हो, मानो कमलाकर ने राजहंस को उठा लिया हो, मानो शुभ परिणाम ने भव्य जीव को, मानो सुजन-समूह ने सुकवि के काव्य को, मानो मुनिवर स्वामी ने व्रत विशेष को, मानो किसी श्रेष्ठ राजा ने देश को, मानो गमन व्यापार ने बालसूर्य को, मानो पवन ने चम्पक कुसुम की धूल को, मानो कामशास्त्र ने कामाचार को,

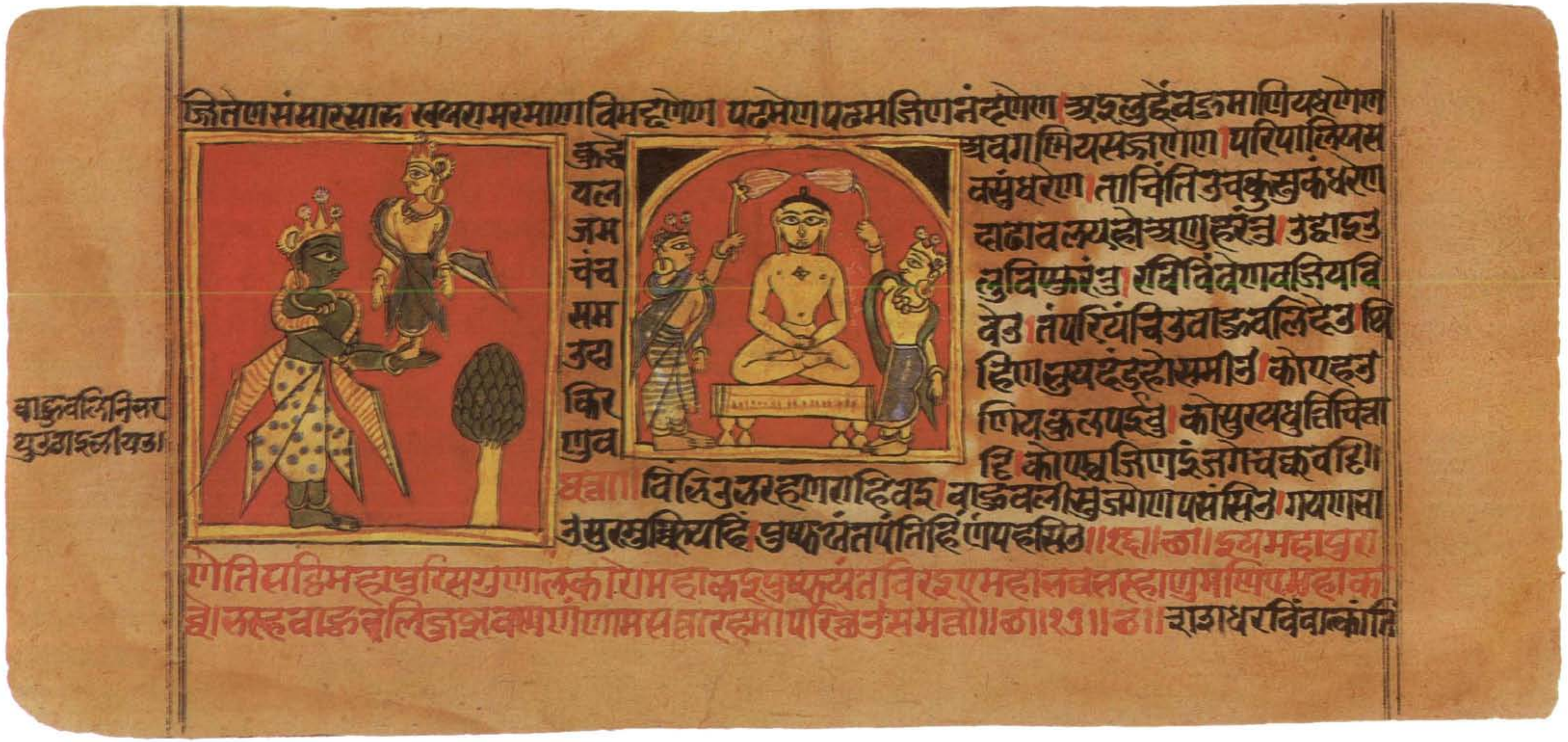

या मानो उसी ने संसार के सार को उठा लिया हो। तब विद्याधर और अमरों के मान का मर्दन करनेवाले, अत्यन्त लोभी, धन को सब कुछ समझनेवाले, सज्जन की अवहेलना करनेवाले, समस्त धरती के पालक अच्छे कन्धोंवाले जिनेन्द्र के प्रथम पुत्र भरत ने चक्र का ध्यान किया। वह यम के दंष्ट्रावलय का अनुकरण करता हुआ चंचल और स्फुरायमान हो उठा और रविबिम्ब के समान उसने विषम वेग को जीतनेवाले बाहुबलि के देह की प्रदक्षिणा की, तथा उनके दायें हाथ के पास जाकर स्थित हो गया। ऐसा अपने कुल का प्रदीप कौन हुआ है? सुरति में धूर्त चित्रों का अनुकरण करनेवाला कौन है? इस प्रकार विश्व में चक्रवर्ती को कौन जीत सकता है?

घत्ता—भरत नराधिप विस्मित हो उठा। बाहुबलीश्वर की विश्व ने प्रशंसा की। देवों के द्वारा बरसाये गये कुन्दकुसुमों की पंक्तियों से मानो आकाश का भाग हँस उठा॥ १६॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का भरत-बाहुबलि युद्ध-वर्णन नाम का सत्रहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ १७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सन्धि १८

उस धीर ने आकाश लाँघ लिया, मन्दराचल को चला दिया, सागर को माप लिया और ब्रह्मा के (आदिनाथ के) पुत्र भरत को हाथ में बालक की तरह उठाकर फिर से स्थापित कर दिया।

१

जब बाहुबलि ने प्रभु को अधोमुख देखा तो उसे लगा मानो हिम से आहत शरीर कमल-सरोवर हो, जैसे दावानल से दग्ध कान्तिरहित वृक्ष हो, वह कहता है—"मैं ही निकृष्ट हूँ जिसने अपने ही गोत्र के स्वामी भरत को अपमानित किया। हा! मेरे बाहुबल ने क्या किया कि जो वह सुधियों का दुर्नय करनेवाला बना। धरतीरूपी वेश्या का उपभोग किसने नहीं किया? यह उक्ति ठीक ही है कि राज्य पर वज्र पड़े। राज्य के लिए पिता को मारा जाता है, भाई लोगों में विष का संचार किया जाता है, जिस प्रकार भ्रमर गन्ध से नाश को प्राप्त होता है, उसी प्रकार राज्य से जीव विनाश को प्राप्त होता है। भट, सामन्त, मन्त्र, मन्त्री आदि के रूप में किया गया विभाजन विचार करने पर सब पराया प्रतीत होता है। चावलों के माँड़ के लिए अज्ञानी राजा नरक में क्यों पड़ते हैं? इस राज्य में आग लगे, यही (राज्य ही) सबसे बड़ा दु:ख है। यदि इसमें सुख होता तो पिताजी इसका परित्याग क्यों करते? सुख की निधि भोगभूमि, सम्पत्ति पैदा करनेवाले वे कल्पवृक्ष और वे कुलकर राजा कहाँ गये?

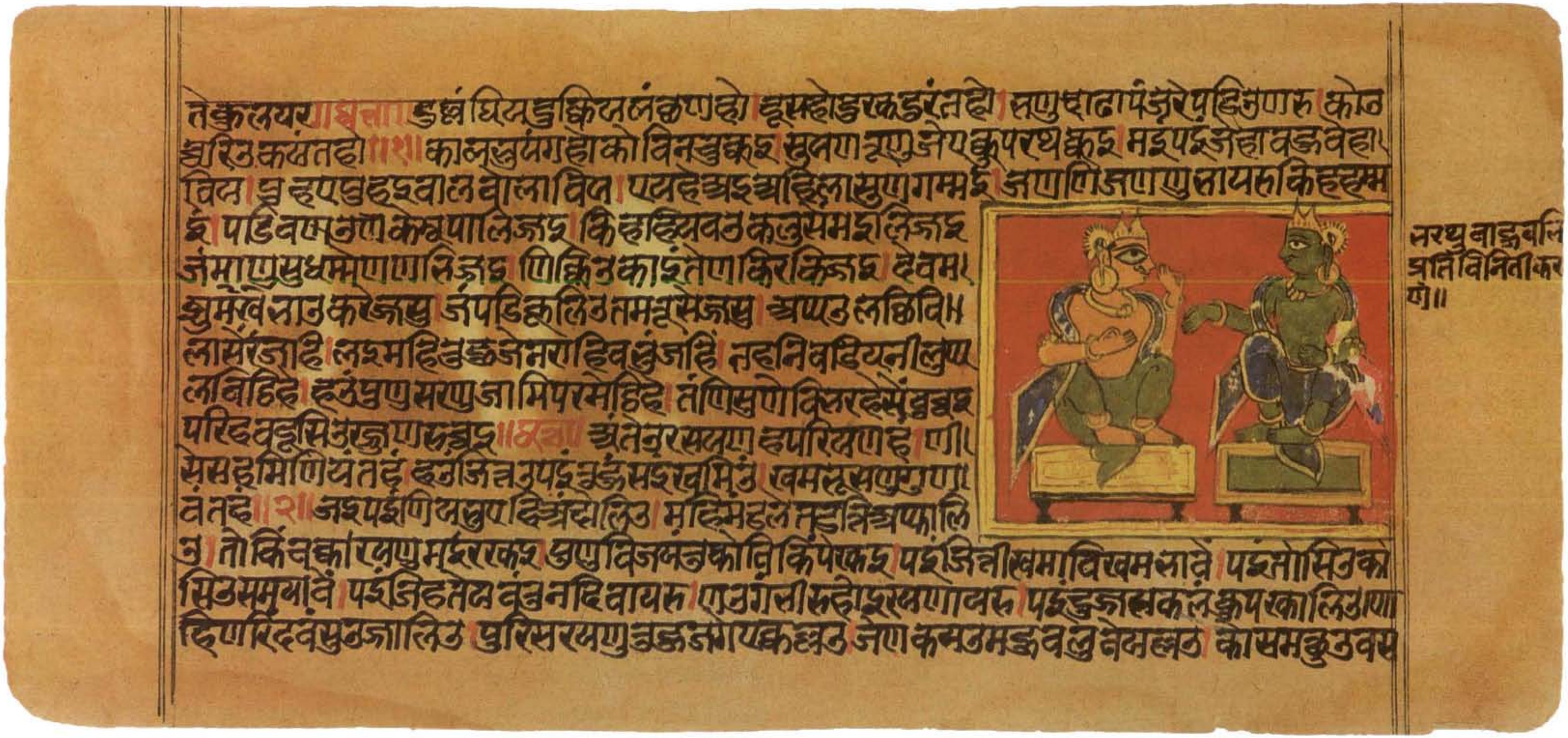

घत्ता—दुर्लंघ्य पापों से लांछित असह्य दुःखों और पापोंवाले यम की दाढ़ों में पड़ा हुआ कौन मनुष्य उबर सका है?॥ १ ॥

२

कालरूपी महानाग से कोई नहीं बचता, केवल एक सुजनत्व बच रहता है। मैंने तुम जैसे बहुतों को प्रवंचित किया है। पृथ्वी के लिए पृथ्वीपालों पर अतिक्रमण किया है। फिर भी इसमें अभिलाषा समाप्त नहीं होती। इसके लिए जननी, जनक और भाई की हत्या क्यों की जाती है, जो स्वीकार कर लिया है उसका परिपालन क्यों नहीं किया जाता? अपने हृदय को पाप से मैला क्यों किया जाता है? यदि मनुष्य धर्म में अनुरक्त नहीं होता तो वह निकृष्ट है, उससे क्या होगा? हे देव, मुझ पर क्षमाभाव कीजिये और जो मैंने प्रतिकूल आचरण किया है उस पर क्रुद्ध मत होइए। अपने को लक्ष्मीविलास से रंजित कीजिए, वह धरती आप ही लें, और इसका भोग करें। मैं, जिन पर आकाश से नीलकमलों की वृष्टि हुई है, ऐसे परमेष्ठी आदिनाथ की शरण में जाता हूँ।'' यह सुनकर भरतेश्वर ने कहा—''पराभव से दूषित राज्य मुझे अच्छा नहीं लगता।

घत्ता—अन्तःपुर, स्वजनों, परिजनों और शेष लोगों के देखते हुए मैं तुम्हारे द्वारा जीता गया और तुम्हारे द्वारा स्वयं क्षमा किया गया। तुम गुणवानों में क्षमाभूषण हो ॥ २ ॥

३

जब तुमने मुझे अपने बाहुओं से आन्दोलित किया और लड़ करके भूमि पर पटक दिया, तो चक्ररत्न मेरी क्या रक्षा करता है? फिर जीवित रहते हुए कोई क्या देखता है? तुमने अपने क्षमाभाव से क्षमा को जीत लिया, तुमने अपने प्रताप से कौशिक (इन्द्र) को भी सन्तुष्ट कर लिया। तुम जितने तेजस्वी हो, दिवाकर भी उतना तेजस्वी नहीं है। समुद्र भी तुम्हारे समान गम्भीर नहीं है। तुमने अपयश के कलंक को धो लिया है और नाभिराज के कुल को उज्ज्वल कर लिया है। तुम विश्व में अकेले पुरुषरत्न हो जिसने मेरे बल को भी विकल कर दिया। कौन समर्थ व्यक्ति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शान्ति को स्वीकार करता है? विश्व में किसके यश का डंका बजता है? तुम्हें छोड़कर त्रिभुवन में कौन भला है? दूसरा कौन प्रत्यक्ष कामदेव है? दूसरा कौन जिनपदों की सेवा करनेवाला है और दूसरा कौन नृपशासन की रक्षा करनेवाला है?

घत्ता—शशि सूर से, मन्दर मन्दराचल से और इन्द्र इन्द्र से उपमित किया जाता है, परन्तु हे नन्दादेवी-पुत्र, एक (केवल) तुम्हारा दूसरा प्रतिमान (उपमान) दिखाई नहीं देता'' ॥ ३ ॥

४

''जो तुमने दुर्वचनों से मेरी निन्दा की, जो दृष्टि से क्रोधपूर्वक देखा, जो सरोवर के पानी से मुझे सिक्त किया, और जो लड़ते हुए ठेलकर गिरा दिया; हे मेरे भाई, उसके लिए तुम मुझे क्षमा करो, आओ और अयोध्या के लिए जाओ, तुम आज भी सिंहासन पर बैठो, मैं तुम्हारे भाल पर पट्ट बाँधूगा। यह अर्ककीर्ति तुम्हारा जीवन होगा। इस समय राज्य करते हुए मैं लजाता हूँ। अब मैं परम दीक्षा ग्रहण करूँगा। इस समय इन्द्रियों के प्रपंच को छोड़ूँगा। मैं इस समय पुण्य या पाप का आदर नहीं करूँगा। इस समय कर्मों के निबन्धन को नष्ट करूँगा। इस समय योग से प्राणों का विसर्जन करूँगा।

घत्ता—हे भाई, मैं वनवास में प्रवेश करूँगा। धरती के मोह रस से भ्रान्त अपयश के भाजन इस जीवन को जीने से क्या?'' ॥ ४ ॥

५

''सज्जन की करुणा से सज्जन द्रवित होता है।'' यह सुनकर भरतानुज बाहुबलि कहता है—''जब मैं शैशव में तुम्हारे साथ खेलता था, तब क्या तुमने मुझे नहीं उठाया था!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मेरा और तुम्हारा कौन-सा पराभव! मेरा-तुम्हारा कौन-सा महायुद्ध! जितने भी लोग गये हैं वे बहाने की खोज करके गये हैं, उनको भोग ऐसे लगे जैसे विष हो। वहाँ भी तुम्हारा कोई दोष नहीं है, तुम जग में महान् और वन्दनीय हो। यदि इस समय तुम धरती की इच्छा नहीं करते तो जिसने तुम्हें यह दी है, वह उसी को दो।'' उस अवसर पर मन्त्रियों ने मना किया, और भूमिनाथ को अपने शब्दों में सम्बोधित किया। महाबलि अपने पुत्र को परम्परा में स्थापित कर चले गये और कैलास पर जा पहुँचे।

घत्ता—नरेन्द्रश्री और धरती को छोड़ते हुए और वन को जाते हुए महान् अभिमानी विषण्णमन राजा भरत को मन्त्रियों द्वारा बलपूर्वक अयोध्या ले जाया गया॥५॥

६

यह कैलास पर्वत पर अत्यन्त दूर से सिर से प्रणाम करते हुए बाहुबलीश्वर ने निष्ठा में निष्ठ; अनिष्ट का नाश करनेवाले, दुष्ट आठ कर्मों के नाशक जिनवर को देखा। बड़ी-बड़ी दाढ़ों-ओठोंवाले क्रोधी और पापियों, अधोमुख बैठे हुए घमण्डियों, कुण्ठित प्रमाणवादियों और मांस खानेवाले, मद्य पीनेवाले चाण्डालों के द्वारा जो नहीं देखे जाते, ऐसे जिन भगवान् की शब्दों से निकलती हुई जय-जयकार ध्वनि करनेवाले कुमार ने स्तुति की—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

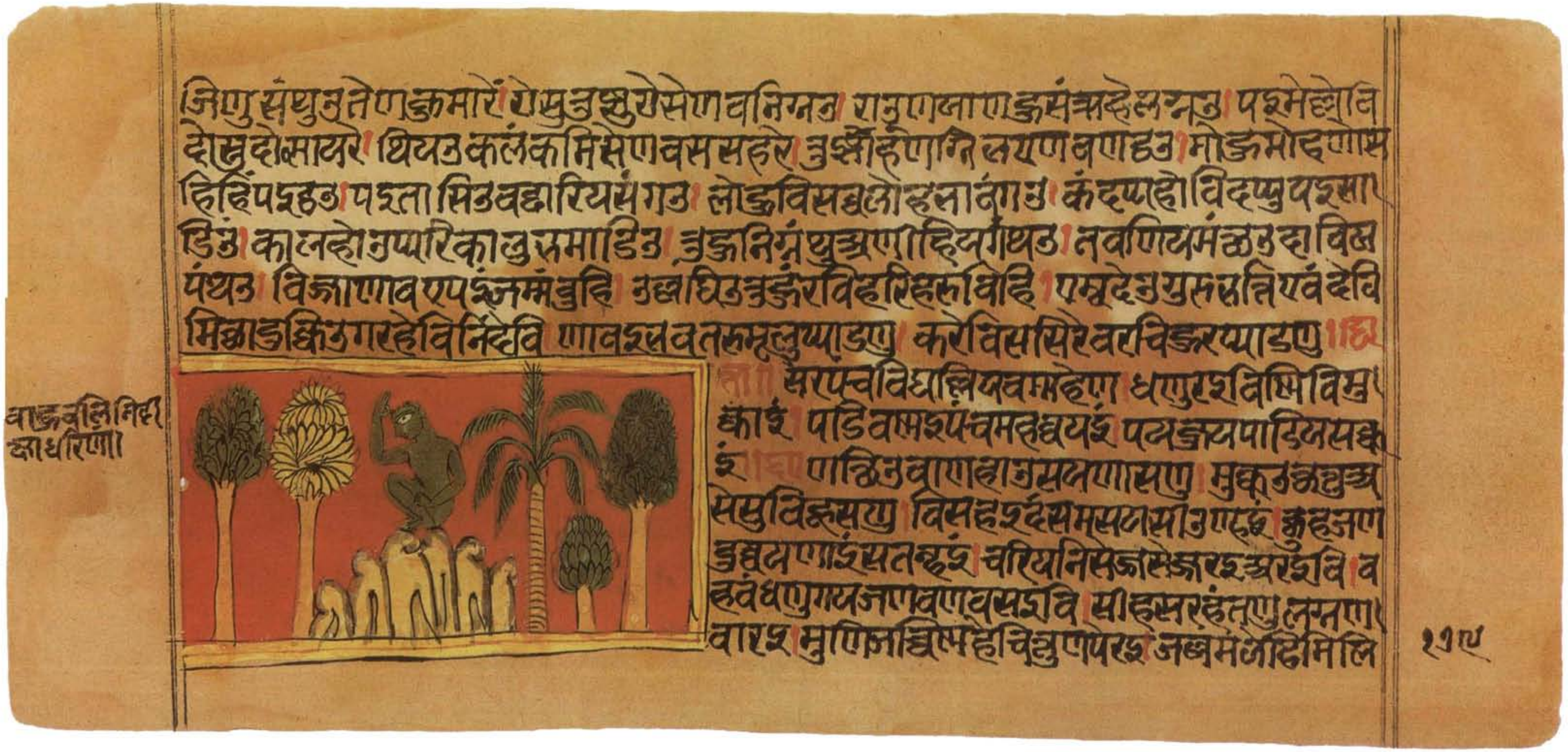

"हे देव, क्रोध तुम्हारे क्रोध से ध्वस्त हो गया, मैं जानता हूँ राग भी सन्ध्या से जा लगा, दोष भी तुम्हें छोड़कर चन्द्रमा में स्थित हो गया है, वह उसमें कलंक के रूप में दिखाई देता है। तुम्हारी ध्यानरूपी अग्नि के भय से नष्ट हुआ मोह औषधियों में प्रवेश कर गया है। तुमने शत्रुसंगम को बढ़ानेवाले, सब के (स्वर्णादि के) प्रति लोभ बढ़ानेवाले लोभ को सन्त्रस्त कर दिया है। कामदेव के दर्प को तुमने नष्ट कर दिया, और काल के ऊपर काल को घुमा दिया। आप परिग्रह को नहीं चाहनेवाले निर्ग्रन्थ हैं, आप तप के नियम में स्थित और पथ-प्रदर्शक हैं। विद्यारूपी नाव से तुमने जन्मरूपी समुद्र को लाँघ लिया, तुमने रवि, हरि, शिव और ब्रह्मा को पार कर लिया।" इस प्रकार भारी भक्ति से वन्दना कर मिथ्यादुष्कृतियों को बुरा-भला कह और निन्दित कर, जैसे संसाररूपी वृक्ष के मूल को उखाड़ने के लिए अपने सिर के बालों को उखाड़कर—

घत्ता—उन्होंने अपने पाँचों बाण डाल दिये, काम और रति दोनों को छोड़ दिया, और जिनसे इन्द्र चरणों में आकर पड़ता है, ऐसे पाँच महाव्रतों को उन्होंने स्वीकार किया॥ ६॥

७

न तो उनके पास जूते हैं, न शयन और आसन। उन्होंने अशेष आभूषण और छत्र भी छोड़ दिये। वह दंशमशक, शीत और उष्णता सहन करते हैं। क्षुधा, लोगों के दुर्वचन (क्रोध) और तृष्णा सहन करते हैं। चर्या, निषद्या, शय्या, स्त्री, अरति, लोगों के चले जाने और वन में रहने पर, बधबन्धन, सिंह-शरभ और तृण के शरीर से लगने पर भी वह निवारण नहीं करते, मुनि याचना में भी अपने चित्त को नहीं लगाता, सूखे-पसीने और मलसमूह (मैल) से लिप्त होने पर भी वह स्थित रहते हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्रत सत्कार वह कुछ भी नहीं चाहते। अशुभ और शुभ में वह समता भाव धारण करते हैं, विविध आतंक और रोगों की अवहेलना करते हैं, लोगों के द्वारा लगाये गये दोषों से भी वे मूर्च्छित नहीं होते। मुनियों में श्रेष्ठ अदर्शन और अलाभ (परीषह) प्रज्ञा परीषह भी वह आदरणीय सहन करते हैं। व्रत-समिति और इन्द्रियों का निरोध, केशलोंच, अचेलकत्व, वासयोग, स्नान का त्याग, धरती पर शयन, दाँत नहीं धोना और मर्यादा के अनुसार भोजन करना।

घत्ता—वन में निवास करते हैं, सैकड़ों दुःख उठाते हैं, सहते हैं, बोलते नहीं, थोड़ा खाते हैं। सीमित नींद लेते हैं, मन को जीतते हैं, वैराग्य की भावना करते हैं॥७॥

८

इस प्रकार कठोर चरित का आचरण करते हुए धरती पर वे विहार करते हुए वन के भीतर प्रविष्ट हुए। वहाँ वे एक वर्ष तक हाथ लम्बे करके स्थित रहे। मानो लताओं के वेष्टनों से वृक्ष को घेर लिया हो। उनके अंग पर पैरों से सींग घिसते हुए हरिणों का खाज-खुजलाना होता है। उनके वक्ष पर नागमणि विराजित है, और बहुत से विषधरों से हार की तरह आचरण कर रहा (हार-जैसा लग रहा है)।

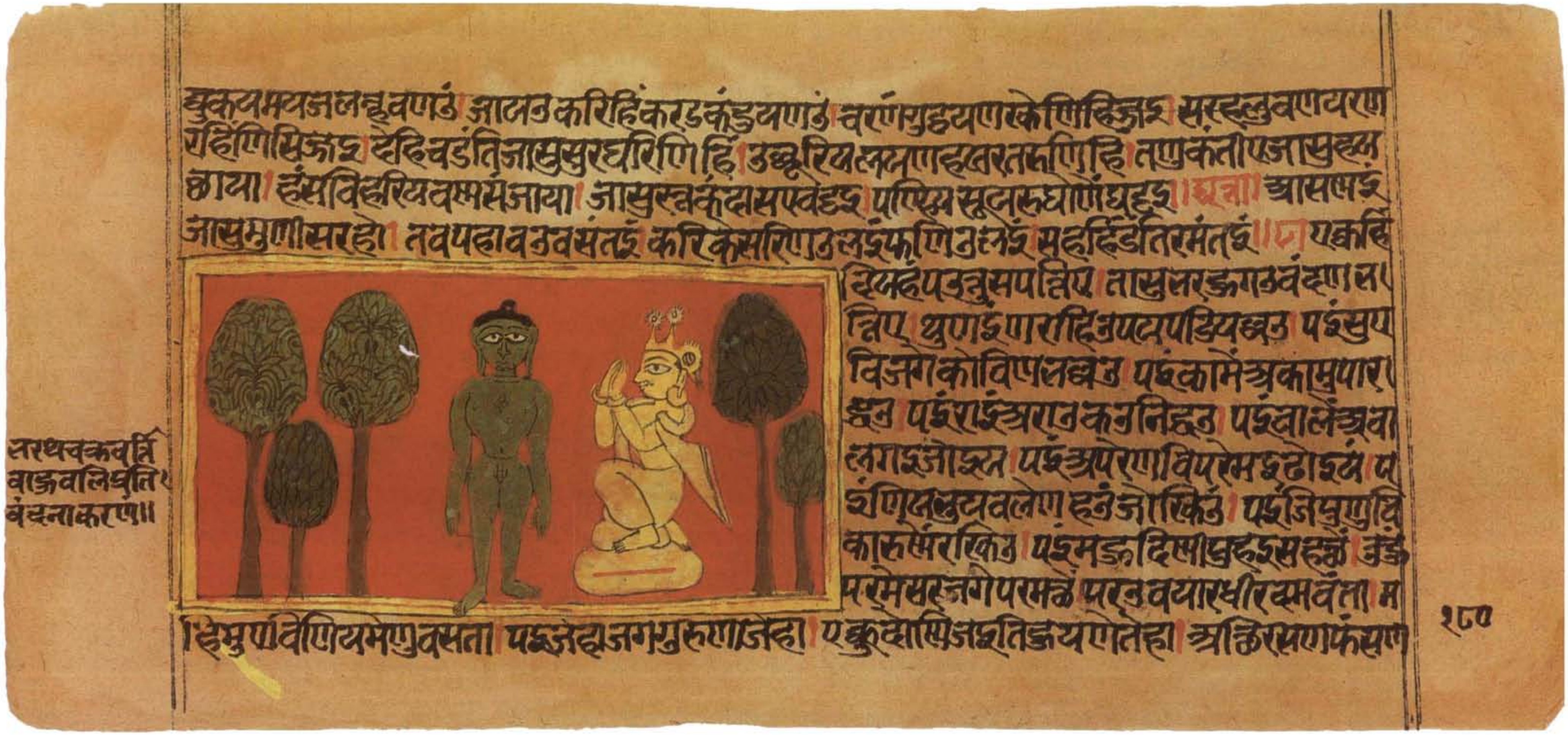

उनका शरीर हाथियों की मदजलों से स्नान करनेवाली सूँडों के खुजाने का साधन हो गया। उनके चरणों के अँगूठों के नख पर तीरफलक रखे जाते हैं और वनचर मनुष्यों द्वारा पैने किये जाते हैं। सुरबालाएँ और नभचर तरुणियाँ उनकी देह पर चढ़ जाती हैं और लताओं को तोड़ती हैं। उनकी शरीर की कान्ति से निष्प्रभ होकर हंस भी हरे रंग के हो गये हैं। उसकी रक्त कन्द के समान एड़ी है जिससे सूअर (जंगल के पशु-पक्षी) अपनी नाक रगड़ता है।

घत्ता—उसी मुनीश्वर के तप के प्रभाव से शान्त पास बैठे हुए सिंह और गज, नागकुल और नकुल साथ-साथ रमण करते हैं और घूमते हैं॥ ८॥

९

एक दिन भरत अपनी पत्नी के साथ उन बाहुबलि की वन्दना-भक्ति के लिए गया। पैरों में पड़कर राजा उसकी स्तुति करता है—"आपको छोड़कर जग में दूसरा अच्छा नहीं है, आपने कामदेव होकर भी अकामसाधना प्रारम्भ की है। स्वयं राजा होकर भी अराग (विराग) से स्नेह किया है, बालक होते हुए भी आपने पण्डितों की गति को देख लिया है। अपर (जो पर न हो) होते हुए भी आपने पर (अरहन्त) में अपनी मति लगायी है। तुमने अपने बाहुबल से मुझे माप लिया है। और तुम्हीं ने फिर करुणाभाव से मेरी रक्षा की है। तुमने अपने हाथ से मुझे धरती दी है, वास्तव में तुम्हीं जग में परमेश्वर हो। दूसरों का उपकार करने में धीर और शान्त। जो धरती का परित्याग कर अपने नियम में स्थित हो गये। तुम्हारे-जैसे और विश्वगुरु ऋषभनाथ-जैसे मनुष्य इस दुनिया में एक या दो होते हैं। लेकिन हम-जैसे रसना और स्पर्श

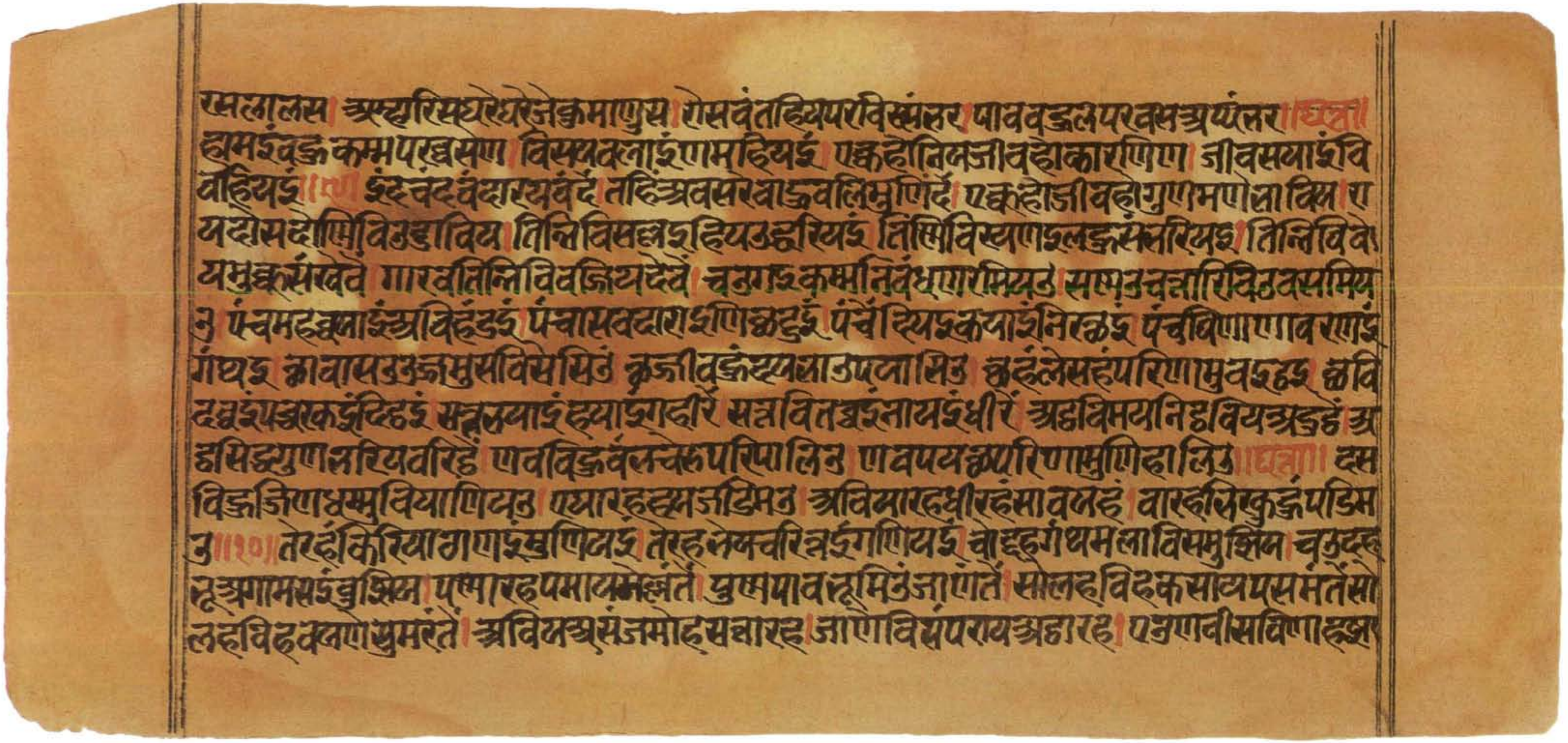

की लालसा रखनेवाले खोटे मानुष घर-घर में हैं। क्रोधी, दूसरों का हरण करनेवाले, विष से भरे पापबहुल, पराधीन और अपने को भरनेवाले।

घत्ता—हा! मैंने बहुकर्मों के परवश होकर विषयबलों को नष्ट नहीं किया और एक अपने जीव के लिए सैकड़ों जीवों का बध किया"॥ ९॥

१०

उस समय इन्द्र, चन्द्र और देवों के द्वारा वन्दनीय बाहुबलि मुनीन्द्र ने एक जीव के ही गुण का चिन्तन अपने मन में किया। राग और द्वेष दोनों को उड़ा दिया। हृदय से तीनों शल्यों को निकाल दिया। और तीन रत्नों (सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र्य) को अपने मन में उत्पन्न किया। संक्षेप में उन्होंने तीनों प्रकार के दम्भ छोड़ दिये। देव ने तीन गौरव छोड़ दिये। चार गतियों और कर्मों के निबन्धन में रमनेवाली चारों संज्ञाओं को शान्त कर दिया। उनके पाँच महाव्रत अखण्डित थे और पाँच आस्रव-द्वार नष्ट हो चुके थे। उन्होंने पाँचों इन्द्रियों को व्यर्थ कर दिया था और पाँच ज्ञानावरण की ग्रन्थियों को भी। विशेष रूप से छह आवश्यकों में उद्यम किया था। छह प्रकार के जीवों में दयाभाव प्रकाशित किया था। छहों लेश्याओं के परिणाम शान्त हो गये, छहों द्रव्य प्रत्यक्ष दिखाई देने लगे। गम्भीर उन्होंने सातों भयों को समाप्त कर दिया, उस धीर ने सातों तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त कर लिया। सदय उसने आठों मदों का नाश कर दिया, उस वरिष्ठ ने आठों सिद्ध गुणों का स्मरण कर लिया। उसने नौ प्रकार के ब्रह्मचर्य का परिपालन किया, नवपदार्थ परिमाण को देख लिया।

घत्ता—दस प्रकार के जिनधर्म को और अविकारी धीर श्रावकों की जड़मति को नष्ट करनेवाली ग्यारह प्रतिमाओं तथा मुनियों की बारह प्रतिमाओं को जान लिया॥ १०॥

११

उन्होंने तेरह प्रकार के क्रिया-स्थानों को समझ लिया और तेरह प्रकार के चारित्रों को गिन लिया, चौदह परिग्रह-मलों को छोड़ दिया, प्राणियों के चौदह भेदों को जान लिया है। पन्द्रह प्रमादों को छोड़ते हुए पुण्य-पाप की भूमि को जानते हुए सोलह प्रकार की कषायों को शान्त करते हुए, सोलह प्रकार के वचनों में रमण करते हुए और भी सत्तरह असंयम मोहनीय, अट्ठारह सम्पराय मोहनीय, उन्नीस प्रकार के नाह-ध्यान (नाथध्यान),

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बीस असमाधिस्थानों, इक्कीस मन्द अपवित्र कार्यों और बाईस असाध्य परिसहों को सहकर। तेईस सूत्रकृतांग-सूत्र और चौबीस जिनतीर्थों में होते हुए, पच्चीस भावनाओं को धारण करते हुए, छब्बीस क्षेत्रों को देखते हुए, सत्ताईस मुनिगुणों को स्मरण करते हुए, अट्ठाईस मूलगुणों को अपने मन में समर्पित कर प्रवर आचारकल्प के प्रति अर्पित कर, उनतीस दुष्कृत सूत्रों, तीस बलवान् मोहस्थानों और इकतीस मल-पापों को नष्ट करते हुए और बत्तीस जिनगुणों का मनन करते हुए—

घत्ता—स्थिर शुक्लध्यान की अवतारणा कर चार घातिया कर्मों को नष्ट कर दिया। मुनिवर को केवलज्ञान उत्पन्न हो गया और उन्होंने लोकालोक को देख लिया॥ ११ ॥

१२

तब देवेन्द्र के साथ देव चले। साँप धरणेन्द्र के साथ आये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजा लोग नरेन्द्र के साथ दौड़े। तारागण चन्द्रमा के साथ चले। उन्होंने कषाय और विषाद को नष्ट करनेवाले आदरणीय बाहुबलि की स्तुति की—"आपने राजचक्र को तिनके के समान समझा, कर्मचक्र को ध्यानाग्नि में आहुत कर दिया और देवचक्र आपके सामने दौड़ता है, चक्रवर्ती का चक्र सुन्दर नहीं लगता। हे मुनि, आपको देखने से राग नहीं बढ़ता, आपको छोड़कर कौन निश्चितरूप से नष्ट होती हुई और विधुर समुद्र के विवर में पड़ती हुई जीवराशि को नरक से निकाल सकता है? पृथ्वीश्वर ने काम की आसक्ति से दीक्षा लेकर कामदेव को जीत लिया। तुम्हारे समान किसे कहा जा सकता है? आप मुण्ड केवलियों में प्रमुख हैं।" इस प्रकार बुद्धि से समर्थ इन्द्र ने स्तुति करते हुए आधे पल में विक्रिया से—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

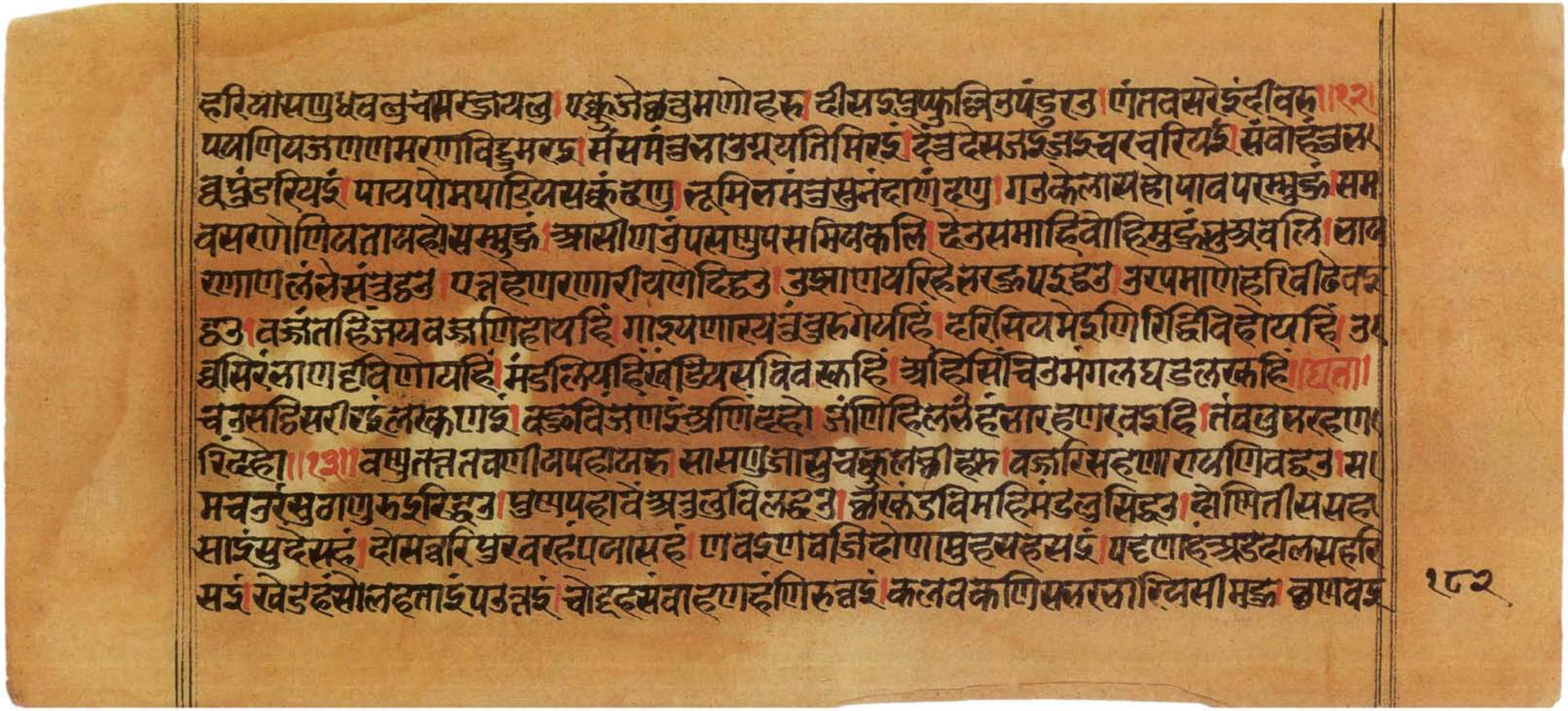

घत्ता—पद्मासन चपल चमरयुगल एक ही सुन्दर छत्र जो ऐसा दिखाई देता है मानो तपरूपी नदी में इन्दीवर हो॥ १२॥

१३

जन्म और मृत्यु के प्रेम और भय को नष्ट करनेवाले भावों में उत्पन्न होनेवाले अन्धकार को शान्त करते हुए, एकदेशचारित्र और सकलदेशचारित्र प्रदान करते हुए, भव्यरूपी कमलों को सम्बोधित करते हुए, चरणकमलों में इन्द्र को झुकाते हुए, सुनन्दानन्दन पाप से पराङ्मुख बाहुबलि भूमि पर विहार करते हुए कैलास पर्वत पर गये। अपने पिता के समवसरण में सम्मुख बैठे हुए पाप को नष्ट करनेवाले हे बाहुबलि! मुझे ज्ञान और समाधि प्रदान करें। तब भाई को ज्ञानलाभ (होने) से सन्तुष्ट और नर-नारीजन के द्वारा देखे गये भरत ने अयोध्या नगरी में प्रवेश किया और अपने वक्ष:स्थल के समान ऊँचे सिंहासन पर बैठ गया। बजते हुए जय-विजय वाद्यों, गाये जाते हुए नारद-तुम्बुरु के गीतों, दिखाये जाते हुए धरती के ऋद्धि विभागों, उर्वशी और रम्भा के नृत्य-विनोदों के साथ एकत्रित हुए राजा के पक्षसमूहों के द्वारा लाखों मंगल-कलशों से उसका अभिषेक किया गया।

घत्ता—अनिन्द्य शरीर पर चौंसठ लक्षण और बहुत-से व्यंजन चिह्न थे, जो समस्त भारत-नरेश्वरों का बल था, उतना बल अकेले भरतराज के पास था॥ १३॥

१४

जिसका रंग तपे हुए स्वर्ण और सूर्य के समान था, जिसका शासन चक्र और लक्ष्मी की शोभा धारण करता था, जिसका शरीर वज्रवृषभ नाराच बन्ध और समचतुरस्र संस्थानवाला तथा कान्ति से समृद्ध था। पुण्य के प्रभाव से उसने अतुल को प्राप्त कर लिया और छह खण्ड धरती भी सिद्ध हो गयी। साठ हजार सुदेश थे, बहत्तर हजार श्रेष्ठ नगर थे। निन्यानवे हजार द्रोणामुख गाँव थे और अड़तालीस हजार पट्टन थे। सोलह हजार खेड़े और निश्चित रूप से संवाहन, धान्य के अग्रभागों के भार से दबे हुए क्षेत्रवाले छियानवे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

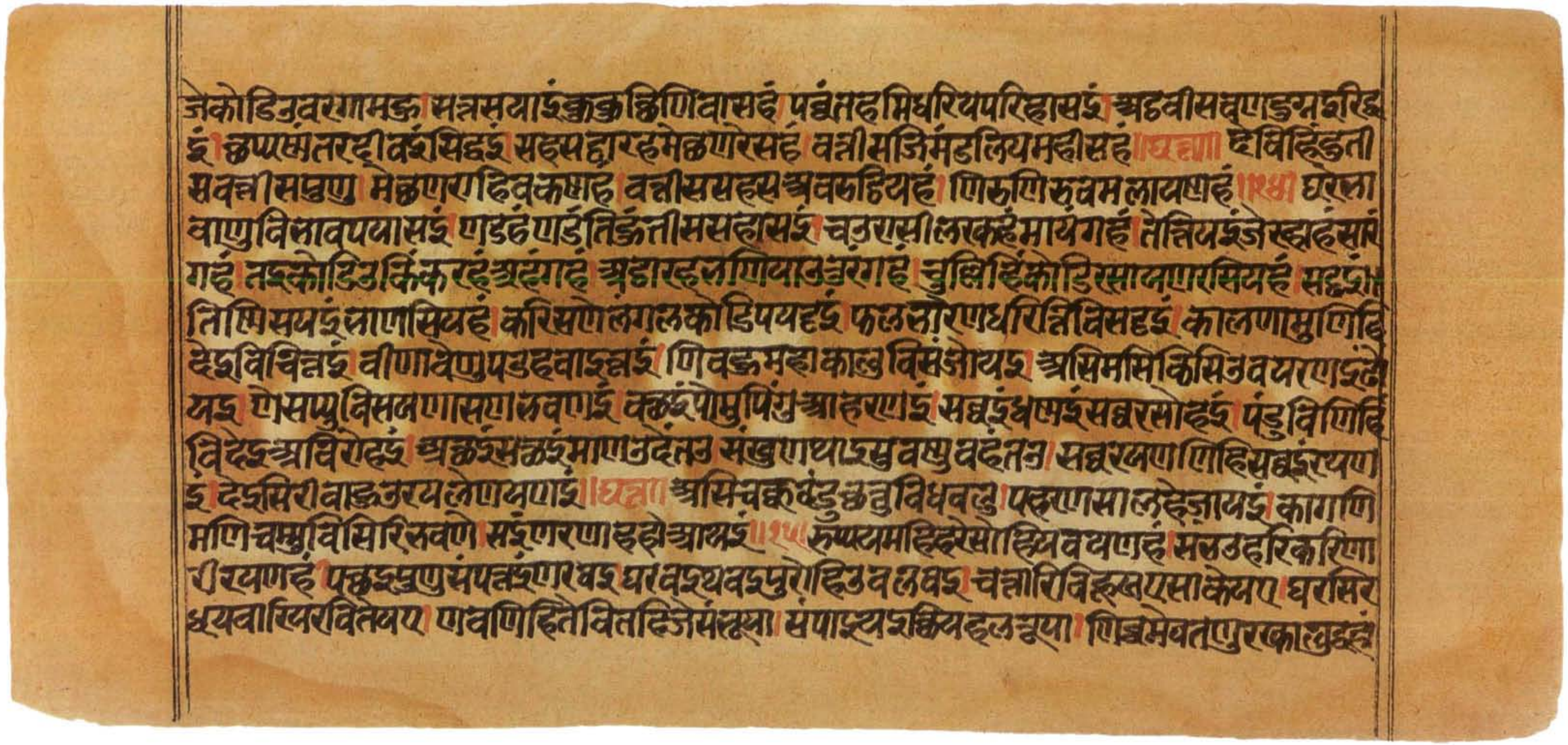

करोड़ उत्तम गाँव थे। सात सौ रत्नों की खदानें, उनमें से पाँच तो दूसरों का उपहास करनेवाली, अट्ठाईस हजार समृद्ध वनदुर्ग थे और छप्पन अन्तरद्वीप सिद्ध हुए। अठारह हजार म्लेच्छ राजा और बत्तीस हजार माण्डलीक राजा।

घत्ता—म्लेच्छ नराधिपों के द्वारा दी गयीं बत्तीस (दो और तीस) फिर बत्तीस हजार और भी अत्यन्त अनुपम लावण्यवती, अविरुद्ध म्लेच्छ राजाओं के द्वारा दी गयीं बत्तीस हजार स्त्रियों से युक्त था॥ १४॥

१५

उसके घर भाव और अनुभाव का प्रदर्शन करनेवाले बत्तीस हजार नट नृत्य करते थे। चौरासी लाख हाथी, तैंतीस लाख चक्रसहित रथ, तीन करोड़ अभंग अनुचर, अठारह करोड़ घोड़े, एक करोड़ चूल्हे, तीन सौ साठ सुन्दर रसोई बनानेवाले रसोइये। खेती में एक करोड़ रथ चलते थे। फलों के भार से धरती फूटी पड़ती थी। 'काल' नाम की निधि विविध फल-फूल और विचित्र वीणा, वेणु और पटह आदि वाद्य देती थी। 'महाकाल निधि' भी राजा के लिए असि, मसि, कृषि आदि उपकरणों का संयोजन करती थी। 'पाण्डु निधि' नाना रंग के ब्रीहि (शालि) तथा प्रमुख अनेक प्रकार के धान्य प्रदान करती थी। 'नैसर्प निधि' शयन, अशन और भवन आदि देती थी। 'पद्म निधि' वस्त्र, 'पिंगल निधि' आभरण और 'माणव निधि' अस्त्र-शस्त्र देती थी। स्वर्ण ढोते हुए 'शंखनिधि' नहीं थकती थी। समस्त 'रत्ननिधि' सब प्रकार के रत्नों और लक्ष्मी उसके उर-तल पर अपने नेत्र प्रदान करती थी।

घत्ता—असि, चक्र, दण्ड, धवल छत्र उसकी आयुधशाला में उत्पन्न हुए। कागणी मणि और चर्म मणि भी अपने आप राजा के भाण्डागार में आ गये॥ १५॥

१६

विजयार्ध पर्वत पर शोभित मुख अश्व, गज और स्त्रीरूपी रत्नों की उत्पत्ति हुई। उसके बाद राजा को गृहपति, स्थपति, पुरोहित और सेनापति प्राप्त हुए। अपने गृह शिखरों के ध्वजों से सूर्य के तेज का निवारण करनेवाले ये चार रत्न साकेत में उत्पन्न हुए। जो नवनिधियाँ थीं वे भी उसे प्राप्त हुईं कि जो अभिलषित फलरूपों को सम्पादित करनेवाली थीं। जहाँ पर देहरक्षा में दक्ष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

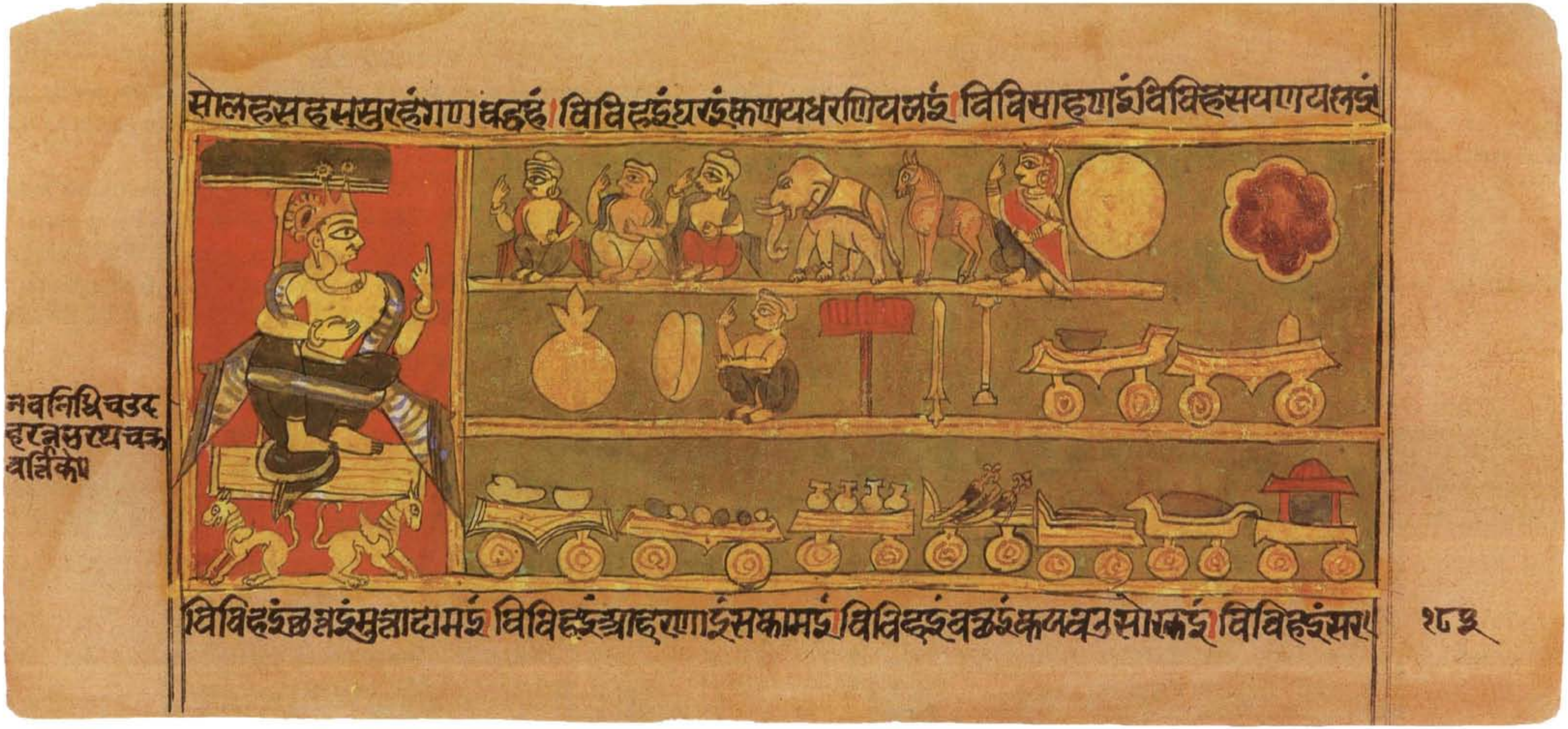

गणबद्ध सोलह हजार देवों के विविध घर और स्वर्णधरणीतल थे, विविध आसन और विविध शयनतल थे। विविध छत्र, मुक्तामालाएँ, चित्त में अनुराग उत्पन्न करनेवाले विविध आभरण, शरीर को सुख देनेवाले विविध वस्त्र और विविध सरस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

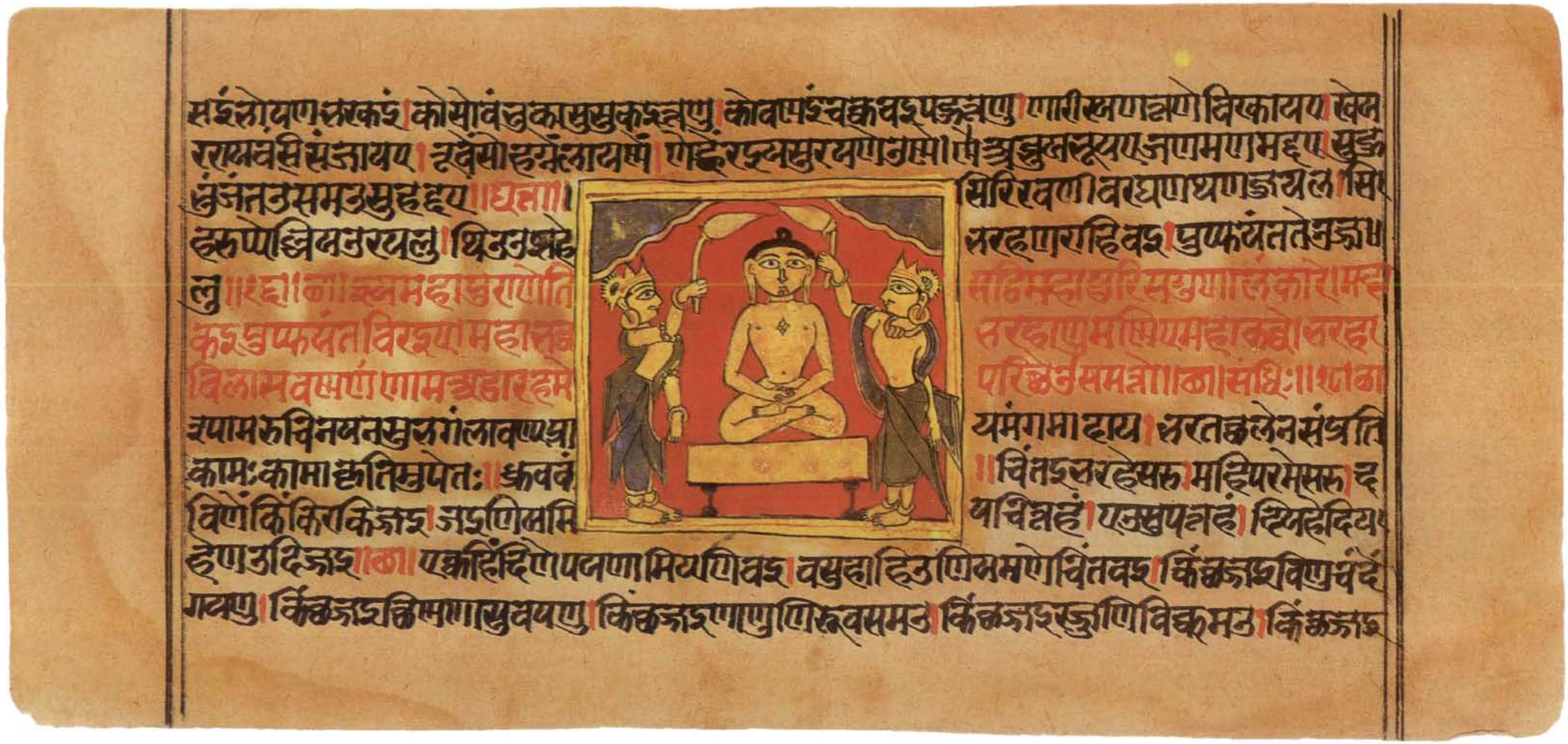

भोजन। वह कौन-सा विधाता है, वह कौन-सा सुकवित्व है? चक्रवर्ती की प्रभुता का वर्णन कौन कर सकता है? स्त्रीरूपी रत्नत्व के लिए विख्यात, विद्याधर कुल में उत्पन्न आश्चर्य के रूप में उत्पन्न जन-मन का मर्दन करनेवाली सुभद्रा के साथ रूप, सौभाग्य, लावण्य और काम के नैपुण्य की रचना के द्वारा सुख भोगता हुआ—

घत्ता—जिसका वक्ष:स्थल लक्ष्मीरूपी रमणी के श्रेष्ठ सघन स्तनयुगल के शिखरों से पीड़ित है ऐसा भरत अयोध्या में रहने लगा॥ १६॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा रचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का भरत-विलास वर्णन नामवाला अठारहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ १८॥

सन्धि १९

धरती का परमेश्वर भरतेश्वर विचार करता है कि यदि संयत चित्तवाले सुपात्रों को दिन-प्रतिदिन यह नहीं दिया जाता तो धन का क्या किया जाये?

१

एक दिन राजाओं को अपने पैरों में झुकानेवाले उस पृथ्वीश्वर ने अपने मन में विचार किया—"क्या आकाश चन्द्रमा के बिना शोभा पा सकता है? क्या नकटा मुँह शोभा देता है, क्या उपशम भाव के बिना ज्ञान शोभा देता है? क्या पराक्रम के बिना राज्य शोभा देता है?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्या पुत्रविहीन कुल शोभा पाता है? क्या पका हुआ कड़वा फल शोभा पाता है। क्या भीरु व्यक्ति की गर्जना शोभा पाती है? क्या वेश्या की लज्जा शोभा पाती है? क्या मृतक के आभूषण शोभा पाते हैं? क्या अविनीत का रूठना शोभा पाता है? क्या हिम से आहत कमलवन शोभा पाता है? क्या जलविहीन घन शोभा पाता है? क्या दूसरों के अधीन जीव व मनुष्य शोभा पाता है? क्या तृष्णा रखनेवाले का धन शोभा पाता है?

घत्ता—बुधजनों का कहना है कि जो धन गुणवान्-बुद्धिवान् सुपात्र को नहीं दिया जाता मनुष्य का वह संचित धन पाप का कारण है और मरने के बाद वह एक पैर भी नहीं जाता ॥ १ ॥

२

(कृपण व्यक्ति) न नहाता है, न लेप करता है, और न वस्त्र पहनता है, सघन स्तनोंवाले स्त्री-समूह को भी नहीं मानता। जिसके पास जौ के डण्ठलोंवाले तुष के भार से युक्त, कठोर कुलथी के कण और एक द्रोणी अलसी का तेल है, ऐसा कंजूस व्यक्ति अपने लोगों को निकालकर रहता है। अपने मन में व्यापक लोभ धारण कर, वह बड़े भारी महोत्सव के दिन दीन की तरह खाता है। लोगों को प्रिय लगनेवाले पात्र को हाथ में लेकर ऋण माँगता हुआ नगर में घूमता रहता है। अत्यन्त सड़ी हुई सुपाड़ी को वह इस प्रकार खाता है कि जिससे एक सुपाड़ी में ही सारा दिन समाप्त हो जाये। पाँचों इन्द्रियों के अर्थों से युक्त अपने को स्वयं लोभियों के द्वारा वंचित किया जाता है। पुराने कपड़ों की लँगोटी पहननेवाले और कठोर सिरवाले कंजूस लोग धनवान् होते हुए दरिद्र होते हैं। वे पास आती हुई नियति को नहीं जानते। अपने हाथ से अपने हाथ का विश्वास नहीं करते। वह बाँधता है, छोड़ता है, फिर बार-बार मापता है। फिर धन को गुह्य-प्रदेशों में रख देता है, वह साठ की संख्या पूरी नहीं होती उसे कैसे भरूँ?

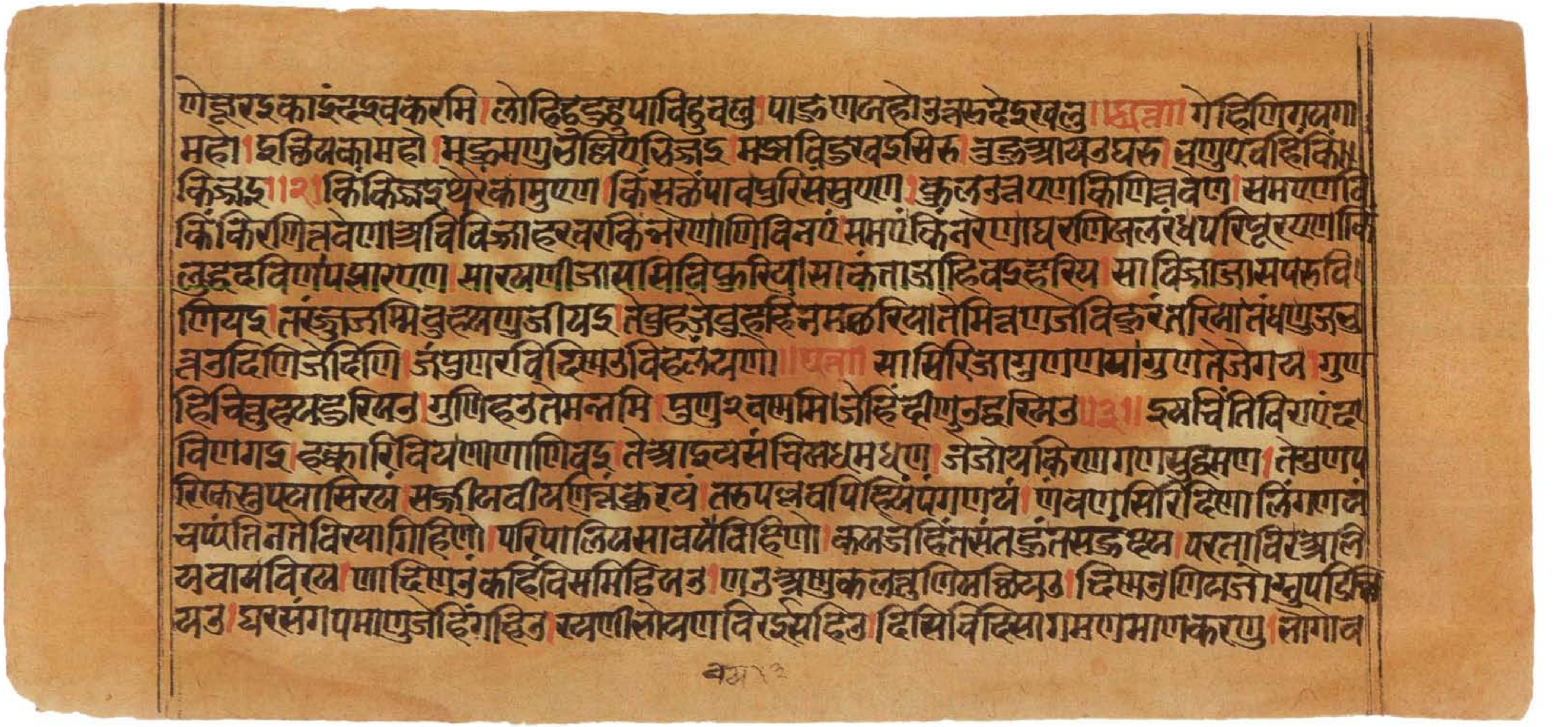

अपने मन में पीड़ित होता है कि हे दैव, क्या करूँ? लोभी, दुष्ट, पापी और चंचल वह अतिथि को उत्तर देता है–

घत्ता—घरवाली गाँव गयी है, काम की इच्छा रखनेवाला मेरा मन जैसे भाले से भिद रहा है, मेरे सिर में पीड़ा है, तुम घर आये हो, बताओ मैं इस समय क्या करूँ?॥ २॥

३

बूढ़े कामुक व्यक्ति से क्या किया जा सकता है? पापी पुरुष के द्वारा सुने गये शास्त्र से क्या? लज्जा से शून्य कुलीन पुत्र से क्या? बिना तप के सम्यक्त्व से क्या? उदासीन विद्याधर और किन्नर से क्या? घमण्डी से क्या? धरणीतल के छिद्रों को सम्पूरित करनेवाले, लोभी के धन के बढ़ने से क्या? रात वही है जो चन्द्रमा से आलोकित है, स्त्री वही है जो हृदय से चाहती हो, विद्या वही है जो सब कुछ देख लेती है। राज्य वही है जिसमें विद्वान् जीवित रहता है, पण्डित वे ही हैं जो पण्डितों से ईर्ष्या नहीं करते, मित्र वे ही हैं जो संकट में दूर नहीं होते। धन वही है जो दिन-दिन भोगा जाये, और जो फिर दीन-विकलजनों को दिया जाये।

घत्ता—लक्ष्मी वही जो गुणों से नत हो, गुण वे जो गुणियों के साथ जाते हैं, चित्त वह जो पापरहित होता है। मैं गुणी उनको मानता हूँ, और बार-बार कहता हूँ कि जिनके द्वारा दीनों का उद्धार किया जाता है।''॥ ३॥

४

धन की गति का इस प्रकार विचार कर राजा ने अनेक राजाओं को बुलवाया। वे आये जो धर्मधन का संचय करनेवाले और योगक्रिया-समूह से शुद्ध मनवाले थे। जो गुणों की परीक्षा से प्रकाशित हैं, जिनमें सजीवरूप बीज नित्य अंकुरित हैं, जो वृक्षों के पल्लवों से आच्छादित हैं, ऐसे प्रांगण को, कि जिसका मानो वनश्री ने आलिंगन दिया है, जो विरक्त गृहस्थ नहीं रौंधते, जो श्रावकों की व्रत विधि का परिपालन करनेवाले हैं, जिन्होंने त्रसजीवों के प्रति दया की है, जो दूसरों को सन्ताप देनेवाली झूठ बात से विरत हैं, जिन्होंने नहीं दिये गये की कभी भी इच्छा नहीं की, न जिन्होंने दूसरे की स्त्री को कभी देखा, जिन्होंने अपने गृह संग के प्रमाणस्वरूप ग्रहण किया है, जो रात्रिभोजन की विरति से सहित हैं। जिसने दिशा और विदिशा में जाने का परिमाण किया है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

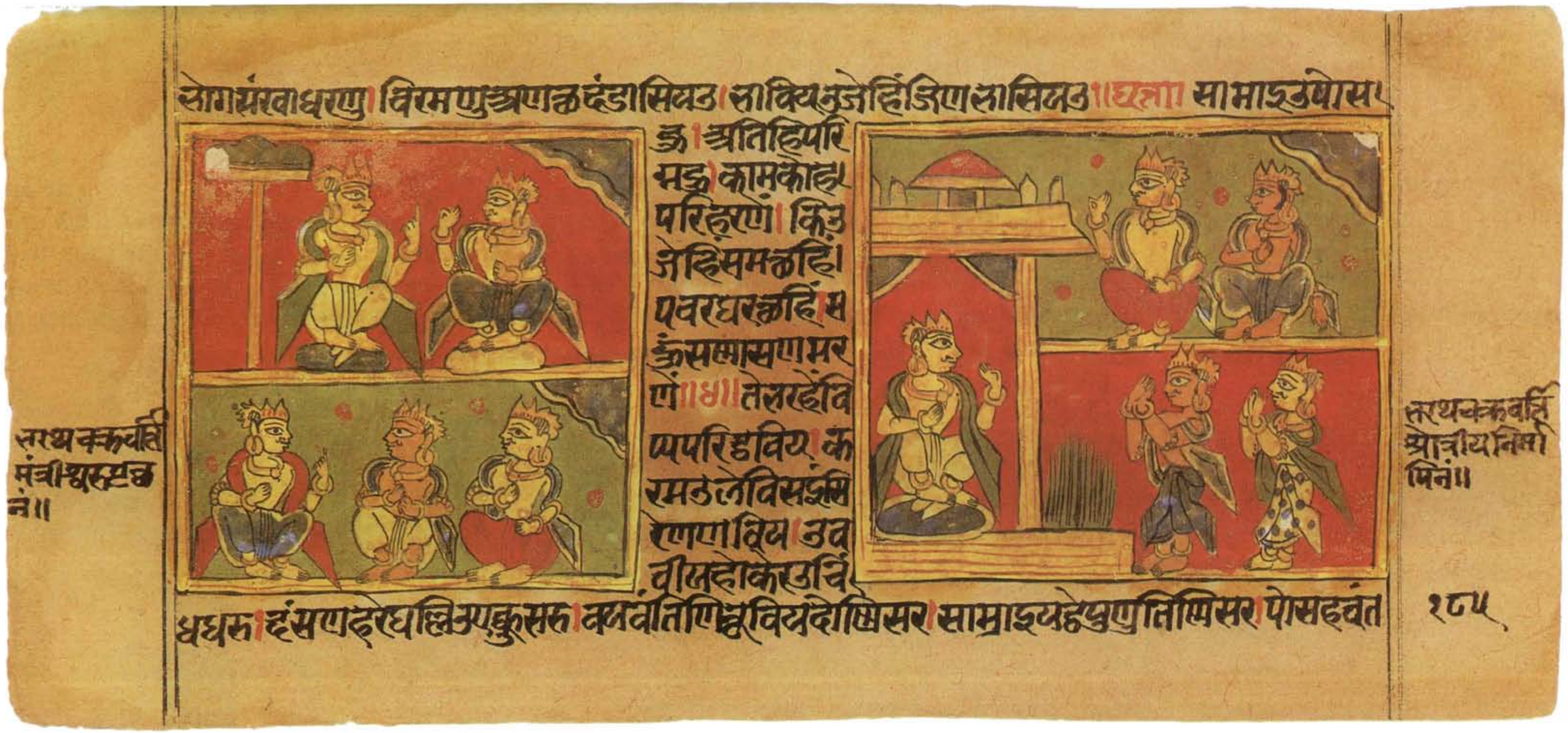

भोगोपभोग की संख्या निर्धारित की है। अनर्थदण्ड के आश्रय से जिन्होंने विराम लिया है और जिन्होंने जिनेन्द्र भगवान् द्वारा भाषित का विचार किया है।

घत्ता—सामायिक, प्रोषधोपवास, अतिथिपरिग्रह तथा काम-क्रोध का परिहार किया है॥४॥

५

ऐसे उन ब्राह्मणों को भरत ने प्रतिष्ठित किया, और हाथ जोड़कर सिर से नमस्कार किया। उन्हें यज्ञोपवीत का चिह्न धारण करनेवाला बनाया। सम्यग्दर्शन धारण करने पर एक व्रत, पाँच अणुव्रत लेने पर दो व्रत निरूपित किये गये, सामायिक से युक्त होने पर तीन,

प्रोषधोपवास करने पर चार, सचित्ताचित्त से विरत होने पर पाँच, रात्रिभोजन के त्याग पर छह, दृढ़ ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने पर सात, आरम्भ का परित्याग करने पर आठ और अपरिग्रह करने पर नौ, अनुमोदन छोड़ने पर दस, कामदेव को नष्ट करने और उद्दिष्ट का त्याग करने पर ग्यारह इस प्रकार राजा ने सुखपूर्वक ये द्विजवर बनाये। चूँकि वे व्रत द्वादशविध तप या ब्रह्म की जय घोषित करते हैं इसलिए उन्हें ब्राह्मण कुल में घोषित किया गया।

घत्ता—और भी जितने मनुष्य नीति के वश में थे, ऋषभ ने उन्हें क्षत्रिय घोषित किया। भरत ने भी जिन की पूजा करनेवाले और धर्म का प्रिय करनेवाले को ब्राह्मण बना दिया॥ ५॥

६

वाणिज्य करनेवाला वणिक जाना गया, हल धारण करनेवाला कृषक कहा गया,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ब्राह्मण वह है जो जिनवर की पूजा करता है, ब्राह्मण वह है जो सुतत्त्व का कथन करता है, वह ब्राह्मण है जो दुष्ट कथन नहीं करता, ब्राह्मण वह है जो पशु का वध नहीं करता, ब्राह्मण वह है जो हृदय से पवित्र है, वह ब्राह्मण है जो मांस-भक्षण नहीं करता, वह ब्राह्मण है जो स्वजन में बकवास नहीं करता। वह ब्राह्मण है जो लोगों को सुपथ पर लगाता है, वह ब्राह्मण है जो सुन्दर तप तपता है, वह ब्राह्मण है जो सन्तों को नमस्कार करता है, वह ब्राह्मण है जो मिथ्या नहीं बोलता, वह ब्राह्मण है जो मद्य नहीं पीता, वह ब्राह्मण है जो कुगति का निवारण करता है, वह ब्राह्मण है जो जिन भगवान् के द्वारा उपदेशित त्रेपन क्रियाओं से भूषित है।

घत्ता—जो तिल, कपास और द्रव्य विशेषों को होमकर देवों और ग्रहों को प्रसन्न करता है, पशु और जीव को नहीं मारता, मारनेवाले को मना करता है। पर को और स्वयं को समान समझता है॥ ६॥

७

जिस प्रकार उस एक ब्राह्मण को जानते हो, उसी प्रकार लाखों ब्राह्मणों को समझो। उन्हें वर्णाश्रम की परम्परा में सबसे ऊपर रखा गया, गुणों के गणना-भेद से उन्हें माना गया। उन्हें शुद्धभाववाली सैकड़ों उत्तम कन्याएँ विभूषित करके दी गयीं, उन्हें नदियों के दूरवर्ती किनारे दिये गये जो श्रीसुखमय थे और जलों से सिंचित थे। उन्हें मणिरत्नों की राशियाँ दी गयीं। कटिसूत्र, कड़े और मुकुट आदि दिये गये। उन्हें मनमोहन घड़ा भरकर दूध देनेवाली गायें दी गयीं। उन्हें देशान्तर, अश्व, गज, रथ और सफेद छत्र दिये गये। उन्हें चन्द्रमा को जीतने वाले, धान्यकणों से भरे हुए विविध घर दिये गये। उन्हें करभार धारण करनेवाली धरती

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

और शासन के द्वारा लिखित अग्रहार नगर दिये गये। आराम, ग्राम सीमाएँ, और सर राजा के द्वारा प्रदान किये गये।

घत्ता—आदिजिनेन्द्र के पुत्र भरत ने ब्राह्मणों के लिए कृषि से रमणीय भूमि और बैल (गाय) इस प्रकार दिये कि जिससे कि वह नष्ट न हो, और इसीलिए आज भी समस्त राजसमूह के द्वारा दान दिया जाता है ॥ ७ ॥

८

दूसरे दिन अपने शयनकक्ष में राजा ने रात्रि के पिछले प्रहर में एक अशुभ स्वप्नावलि देखी जो आगामी दोषयुक्ति के समान मिली हुई थी। प्रात:काल वह सज्जित होकर गया और कैलास पर्वत पर जाकर उसने ऋषभजिन की पूजा और स्तुति की—"हे परमेश्वर परमपर जिन, तुम चिन्तामणि और कल्पवृक्ष हो, तुम अमृतमय सरस रसायन हो, युद्ध में लब्धजय तुम कामदेव हो, तुम कामधेनु और अक्षयनिधि हो,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

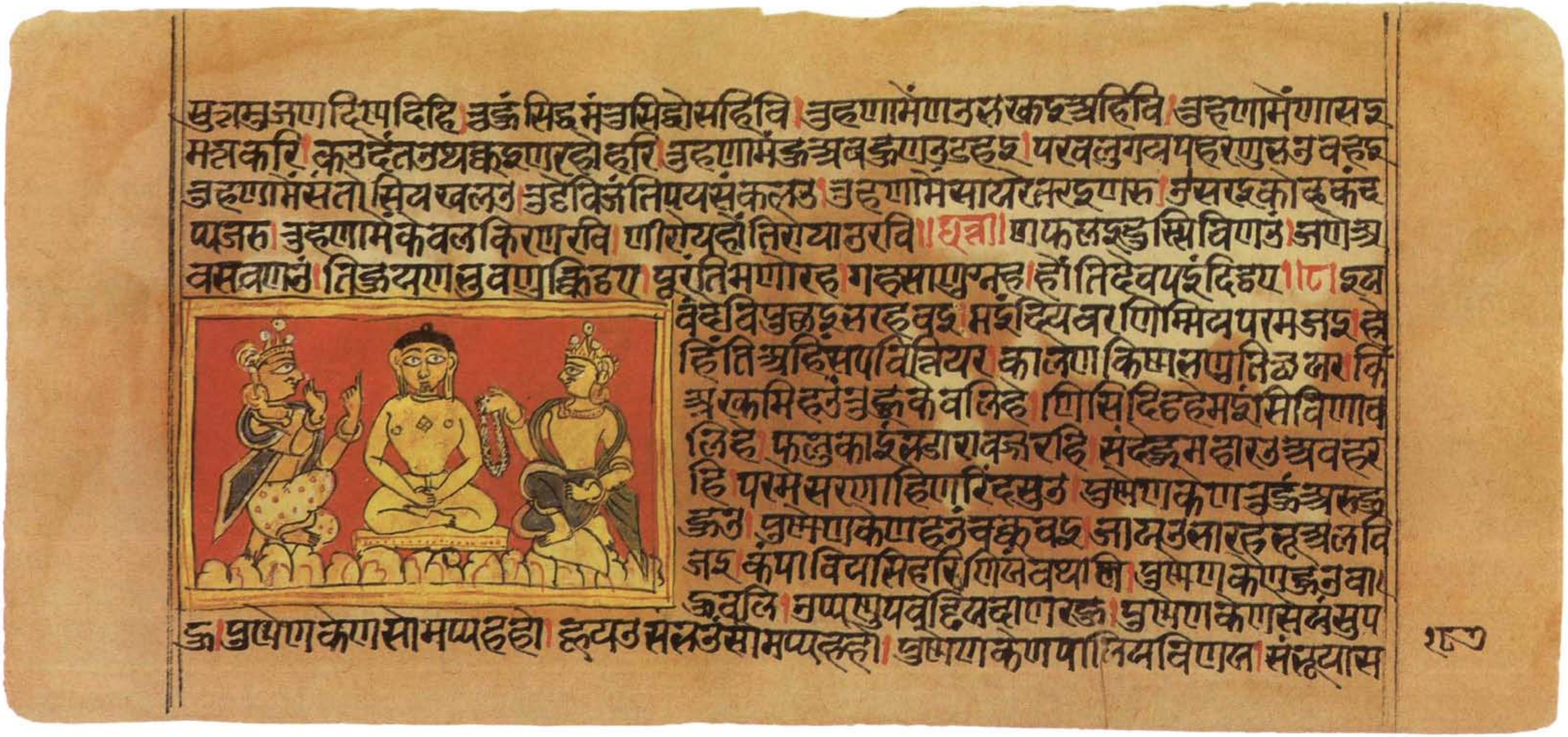

तुम जनों के भाग्यविधाता पुरुषोत्तम हो। तुम सिद्धमंत्र और सिद्धौषधि के समान हो, तुम्हारे नाम से साँप तक नहीं काटता। तुम्हारे नाम से मतवाला गज भाग जाता है। पैर रखता हुआ भी सिंह मनुष्य से डर जाता है। तुम्हारे नाम से आग नहीं जलाती, गदा-प्रहरण से युक्त शत्रुसेना भय धारण करती है। तुम्हारे नाम से खल सन्तुष्ट हो जाते हैं, और पैरों की शृंखलाएँ टूट जाती हैं। तुम्हारे नाम से मनुष्य समुद्र तर जाता है। और क्रोध-काम का ज्वर हट जाता है। हे केवलज्ञान किरणोंवाले रवि, तुम्हारे नाम से रोगातुर मनुष्य नीरोग हो जाते हैं।

घत्ता—दुःस्वप्न नहीं फलता, और न अपश्रवण फलता है, त्रिभुवनरूपी भवन में उत्कृष्ट तुम्हें देख लेने पर मनोरथ सफल हो जाते हैं, और ग्रह भी सानुग्रह हो जाते हैं''॥८॥

९

इस प्रकार वन्दना करके, भरत (क्षेत्र) का अधिपति भरत पूछता है—''हे परमयति, मैंने ब्राह्मणवर्ण की रचना की है। वे भविष्य में समय के साथ अहिंसा की प्रवृत्तिवाले होंगे या नहीं? हे तीर्थंकर, बताइए? आप केवलज्ञानी को मैं क्या बताऊँ? रात्रि में मेरे द्वारा देखी गयी स्वप्नावलि का क्या फल होगा? हे आदरणीय देव, कहिए और मेरा सन्देह दूर कीजिए? हे परमेश्वर नाभिराज के पुत्र, तुम किस पुण्य से अरहन्त हुए हो? किस पुण्य से मैं चक्रवर्ती तथा भारतभूमि तल का विजेता हूँ? पर्वत के नितम्बतट को कँपानेवाला बाहुबलि किस पुण्य से बलवान् हुआ? किस पुण्य से दानरूपी रथ का प्रवर्तन करनेवाला श्रेयांस राजा उत्पन्न हुआ? किस पुण्य से सोमप्रभ के समान सोमप्रभ राजा का जन्म सम्भव हुआ? किस पुण्य से तुम्हारे सभी पुत्र विनय का पालन करनेवाले हुए?''

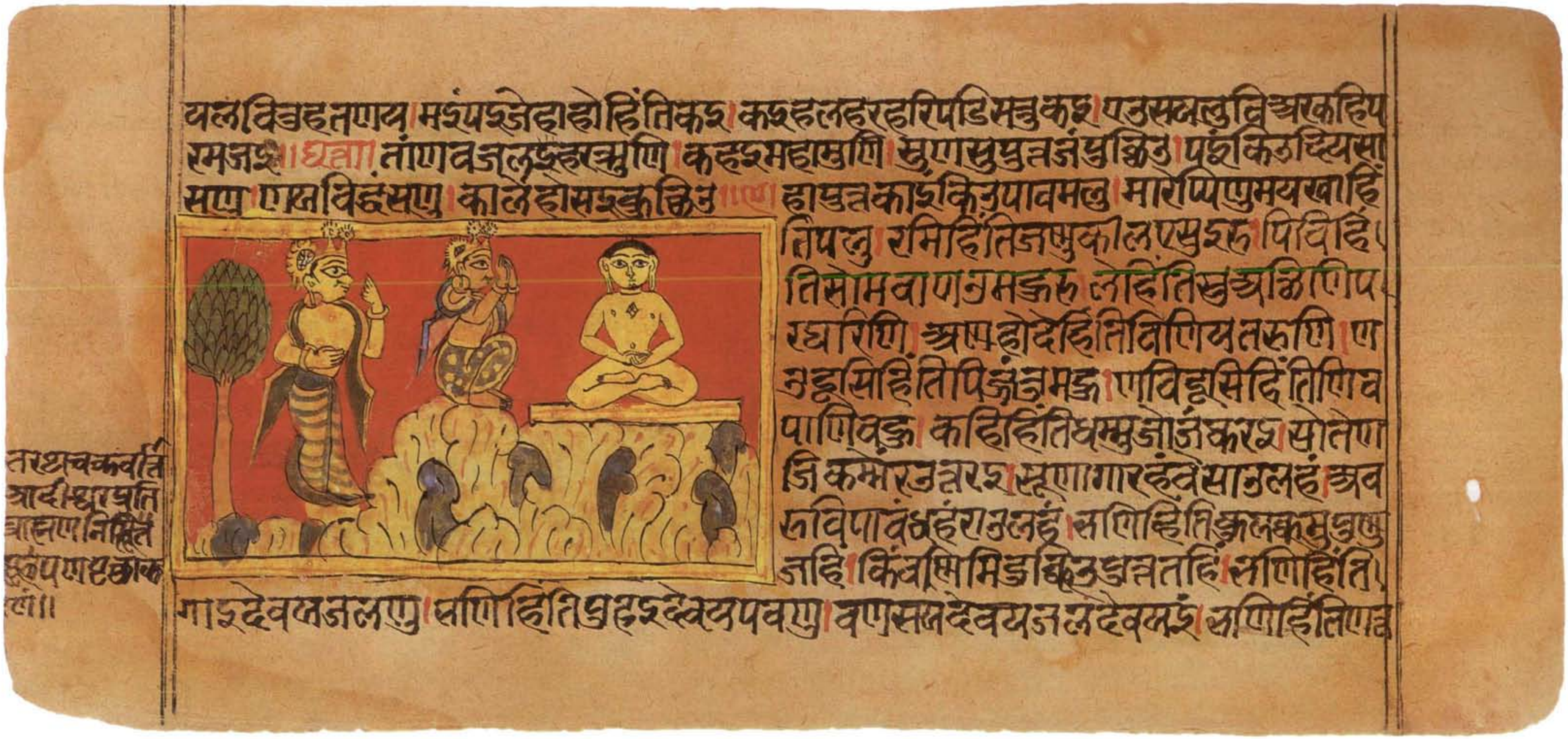

घत्ता—तब नवमेघ के समान ध्वनिवाले महामुनि ऋषभ कहते हैं—''हे पुत्र, तुमने जो पूछा है वह सुनो। तुम्हारे द्वारा निर्मित द्विजशासन समय के साथ कुत्सित न्याय और नाश करनेवाला हो जायेगा''॥ ९॥

१०

''हे पुत्र, पापकार्य क्यों किया। ये लोग (ब्राह्मण) पशु मारकर उसका मांस खायेंगे। यज्ञ में रमण करेंगे, स्वच्छन्द क्रीड़ा करेंगे, मधुर सोमपान करेंगे। पुत्र की कामिनी परस्त्री का ग्रहण करेंगे, और दूसरों के लिए अपनी पत्नी देवेंगे, मद्यपान करते हुए भी दूषित नहीं होंगे। हे राजन्, प्राणिवध से भी वे दूषित नहीं होंगे। वे जो करेंगे उसी को धर्म कहेंगे, और वह भी उसी कर्म से तरेगा। शून्यागारों, वेश्याकुलों और भी पापों से अन्धे राजकुलों के कुलकर्मी को जहाँ धर्म कहा जायेगा, हे पुत्र वहाँ मैं पाप का क्या वर्णन करूँ! वे गाय और आग को देवता कहेंगे। पृथ्वी और पवन को देवता कहेंगे, वनस्पति को देवता और जल को देवता कहेंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

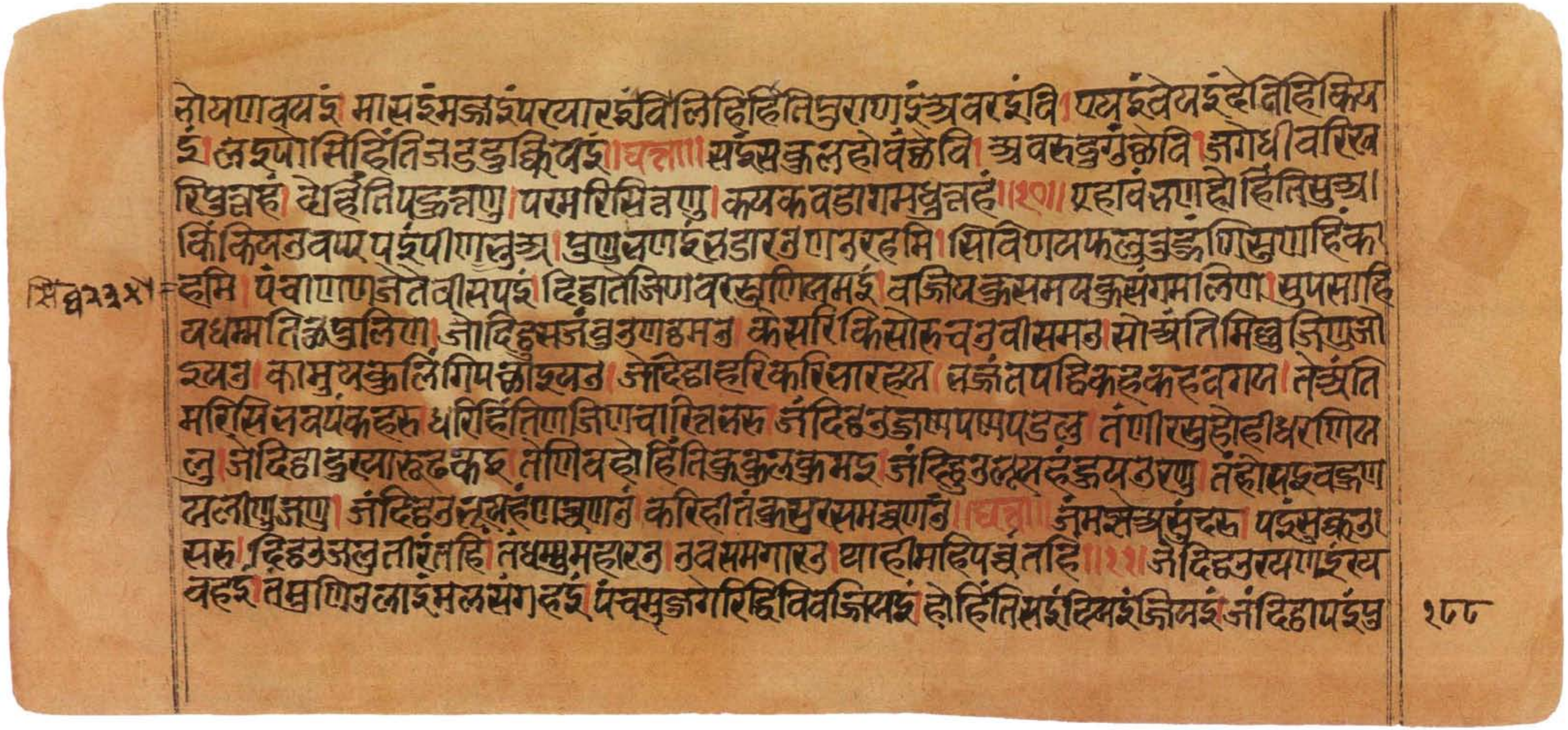

मांस के नित्य भोजन को व्रत कहेंगे, मद्य और परस्त्रियों के साथ। और दूसरे-दूसरे पुराण वे लिखेंगे। देवी के द्वारा यह-यह किया गया, लो इस प्रकार मूर्ख पापों का पोषण करेंगे।

घत्ता—स्वयं अपने कुलों को चाहकर, दूसरे के कुल की निन्दा कर धीवरी पुत्र (व्यास), गर्दभी पुत्र (दुर्वासा) जैसे कपटपूर्ण आगमों की धूर्तता करनेवालों को परम ऋषित्व और प्रभुत्व देंगे॥ १०॥

११

हे पुत्र, ये ब्राह्मण इस प्रकार होंगे। स्थूल बाँहोंवाले तूने इनका निर्माण क्यों किया?'' आदरणीय जिन पुन: कहते हैं—''मैं छिपाकर कुछ भी रखूँगा नहीं। स्वप्नावलि का फल भी कहता हूँ, सुनो। तुमने जो तेईस सिंह देखे, मैंने जान लिया कि वे जिनवर देखे हैं, जो खोटे सिद्धान्तों और खोटी संगति की मलिनताओं से वर्जित और धर्मतीर्थ के पुलिन को प्रसाधित करनेवाले हैं। जो तुमने जम्बूक सहित नष्टमद सिंह शावक को देखा है वह तुमने अन्तिम चौबीसवें तीर्थंकर को देखा है—जो कामुक और खोटे लिंगधारियों का आच्छादन करनेवाले हैं। और जो तुमने भार से आहत भग्नपीठवाले जाते हुए अश्वों और गजों को देखा है, वे भवरूपी कीचड़ को हरण करनेवाले अन्तिम मुनि हैं, जो चारित्र के भार को धारण नहीं करेंगे। तुमने जो जीर्ण पत्रपटल देखा है, वह यह कि धरणीतल नीरस हो जायेगा। जो तुमने गजों पर आरूढ़ वानरों को देखा है, उससे राजा खोटे कुल और खोटी मति के होंगे। और जो तुमने उल्लुओं में हुआ युद्ध देखा, उससे लोग बहुत-से नयों में लीन हो जायेंगे। जो तुमने भूतों का नाचना देखा, उससे खोटे देवों की पूजा की जायेगी।

घत्ता—जो तुमने बीच में असुन्दर और सूखा सरोवर और किनारों के अन्त में जल देखा, उससे हमारा उपशम करानेवाला धर्म धरती के किनारों पर होगा॥ ११॥

१२

जो तुमने धूलधूसरित मणिरत्न देखे, वे मल से सहित मुनिकुल हैं, पाँचवें काल में ये ऋद्धियों से रहित स्वेन्द्रिय चेतना (विद्या) वाले होंगे। और जो तुमने कपिल को पूजित होते हुए देखा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

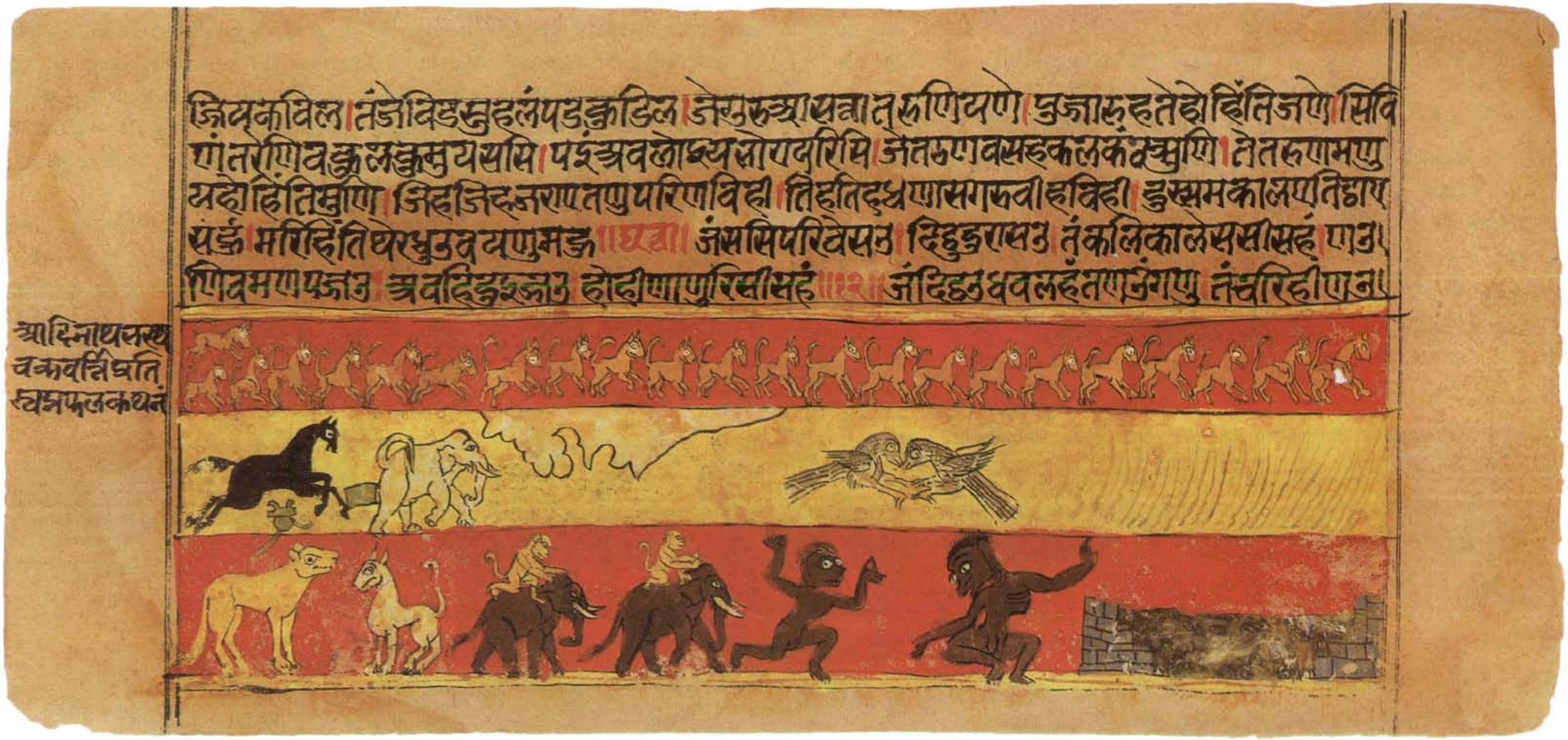

वे विट सुख-लम्पट और कुटिल जन हैं। जो गुरु तरुणीजन में आसक्त हैं वे लोगों में पूजा के पात्र होंगे। हे राजर्षि, जो तुमने स्वप्न में नृपकुल कुमुदचन्द्र देखा और जो कलकण्ठध्वनिवाले तरुण बैल देखे, उससे तरुणजन मुनि होंगे, जैसे-जैसे बुढ़ापे में शरीर परिणत होगा, वैसे ही वैसे लोगों में भारी धनाशा होगी। दुषमा काल में मुनि लोग तृष्णा के साथ मरेंगे यह मेरा ध्रुव-कथन है।

घत्ता—और जो तुमने दुष्ट फलदायी चन्द्र परिवेश देखा है, वह हे नवनृप, कलिकाल में शिष्यों सहित मुनियों का मन:पर्ययज्ञान और दूसरा अवधिज्ञान होगा॥ १२॥

१३

जो तुमने बैलों का गण देखा है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उससे एक भी श्रमण विचरण नहीं करेगा। यति लोग दुषमा काल की गति जानकर समूह में विचरण करेंगे। जो तुमने स्वप्न में दिनकर-मण्डल को ढँका हुआ देखा है, वह मेघों से अन्धकारमय है, और केवलज्ञान सामने से हटा लिया गया है; और जो तुमने सूखा पत्र-पुष्प-फलरहित वृक्ष देखा है वह नर-नारियों का दुश्चरित का भार है। पुत्र पिता के वचनों का उल्लंघन करनेवाले होंगे। स्त्रियाँ दूसरे में रति करनेवाली होंगी। दूसरे लोग कुछ भी किया हुआ सहन नहीं करेंगे, कुमारीपुत्र, दीन और खल घर-घर में होंगे। मित्र वैर निकालनेवाले होंगे। पीपल, बबूल और खदिर (खैर) वृक्ष होंगे एकदम विरस। मुनि भी कषाय बाँधनेवाले होंगे।''

घत्ता—जैसे-जैसे भुवनकमल रवि जिन कहते हैं और वचन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समर्पित करते हैं, वैसे-वैसे भरत में अन्धकार नष्ट होता है, और कुन्दपुष्प के समान उनके दाँतों की कान्ति दसों दिशाओं में प्रसरित होती है॥ १३॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों वाले इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का भरतविनय और संशयोच्छेदन नाम का उन्नीसवाँ अध्याय समाप्त हुआ॥ १९॥

सन्धि २०

"ऋषभ के द्वारा भरत से (पहले) जो कुछ कहा गया, उसे मैं इस समय छिपाकर नहीं रखूँगा। सुनो, मैं त्रिषष्टि पुराण कहता हूँ।"

१

तब वहाँ ऋषभदेव ने इस प्रकार कहा- "हे मनुष्य, देवपुत्र सुनो, पुराण में त्रिलोक-देश-पुर-राज्य-तीर्थ-तप-दान-शुभ-प्रशस्त गतिफल आठों आरम्भिक पुण्यस्थान आदि बातें कही जाती हैं। जिसमें द्रव्य स्थित रहते हैं और दिखाई देते हैं उसे लोक कहा जाता है। उसे न तो किसी ने बनाया है, और न वह किसी के द्वारा धारण किया गया है। वह निरन्तर जीव-अजीवों से भरा हुआ है, चल और अचल वह अपने स्वभाव से रचित है। तथा आकाश में स्थित होते हुए भी वह गिरता नहीं है। लेकिन मूर्ख जड़जनों को इसका कारण बताते हैं कि सृष्टि करनेवाले देव ने इस लोक का निर्माण किया है। पृथ्वी, पवन, अग्नि, जल और लोक के उपादान द्रव्य यदि नहीं हैं तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

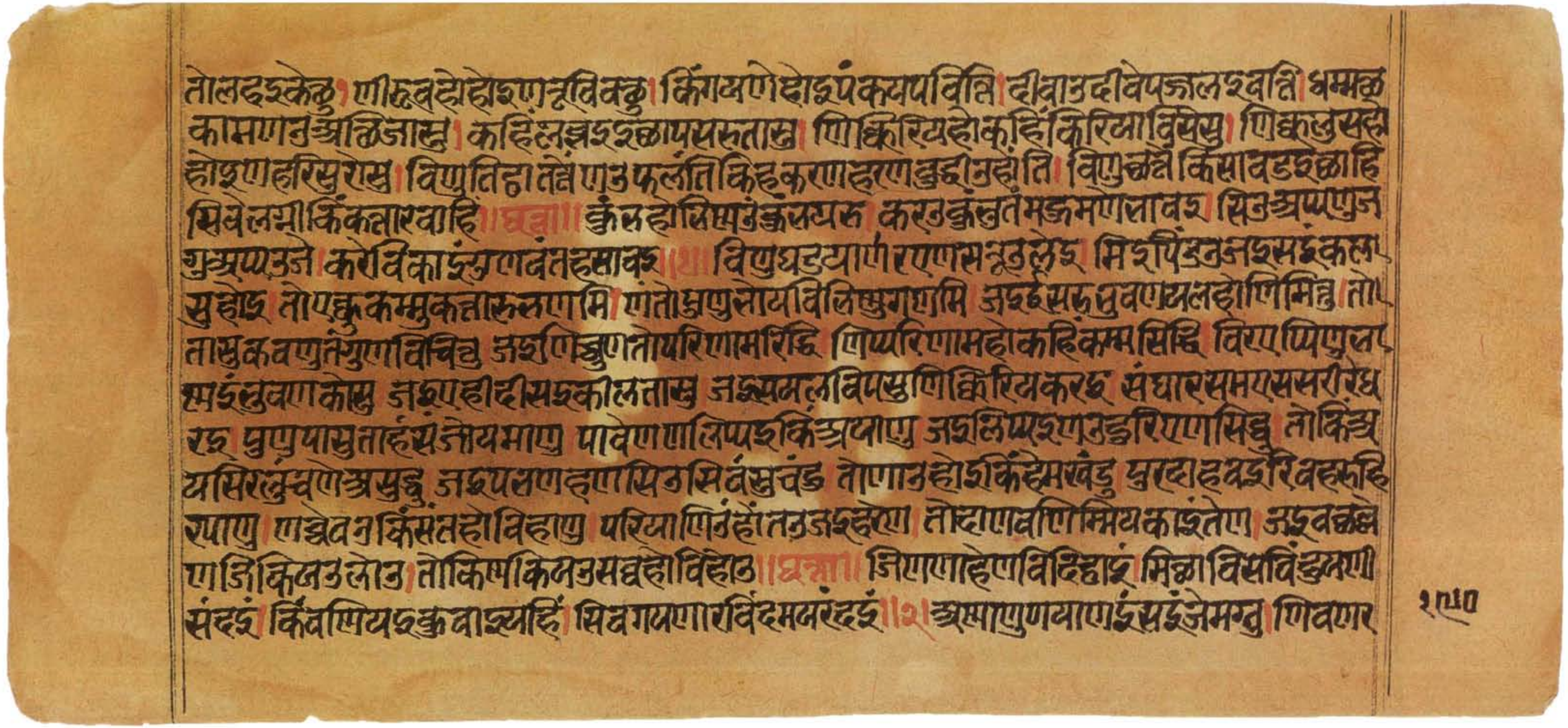

वह स्रष्टा उन्हें कहाँ पाता है? निराकार से क्या कोई वस्तु हो सकती है? क्या आकाश में कमलों की रचना हो सकती है। दीपक से दीपक में बाती जलती है? परन्तु जिसमें धर्म, अर्थ और काम नहीं है, उसमें इच्छा का प्रसार कैसे हो सकता है? निष्क्रिय में क्रिया विशेष कैसे हो सकती है? जो निष्पाप है, उसमें हर्ष और क्रोध नहीं हो सकता। तृष्णारूपी तंत्र के बिना फल नहीं हो सकते। उसके बिना (करना-हरना) आदि बुद्धियाँ नहीं हो सकतीं। क्या बिना छत्र के छाया आ सकती है? शिव को कर्ता की व्याधि किस प्रकार लग गयी?

घत्ता—घड़े से भिन्न कुम्भकार घड़े को बनाता है, यह बात मुझे जँचती है। शिव अपने से विश्व की रचना करता है, फिर गुणवानों को शाप क्यों देता है?॥ १ ॥

२

घड़ा यदि बिना कुम्भकार के स्वरूप ग्रहण कर लेता है, और मिट्टी का पिण्ड स्वयं कलश हो जाता है, तो मैं कर्ता और कर्म को एक कहता हूँ और नहीं तो भेद से दोनों को भिन्न मानता हूँ। यदि ईश्वर भुवनतल का निमित्त है तो उसका कर्त्ता कौन है? यदि वह नित्य है तो उसमें परिणामवृद्धि नहीं हो सकती। परिणामरहित के कर्मसिद्धि कैसे हो सकती है? भुवनकोष की रचना कर यदि वह उसे नष्ट कर देता है, यदि उसकी ऐसी क्रीड़ा है, यदि वह समस्त जग और जीवों को निष्क्रिय होकर भी बनाता है, और संहार के समय अपने शरीर में धारण कर लेता है, उनके बन्धन का संयोग करता हुआ वह पाप से लिप्त नहीं होता? तो क्या वह अज्ञानी है? यदि वह सिद्ध है और पाप से लिप्त नहीं होता तो फिर ब्राह्मण का शिर काटने से वह अशुद्ध क्यों है? यदि यह कहते हो कि शिव नहीं शिव का अंश चण्ड होता है, तो क्या हेमखण्ड नाग हो सकता है? (वह कहलायेगी शिवकला ही) नगरदाह, शत्रुवध, रक्तपान और नृत्य करना क्या यह सन्तों का विधान है? यदि शिव के द्वारा परित्राण किया जाता है, तो उसने फिर दानवों की रचना क्यों की? यदि उसने वत्सलभाव से लोक की रचना की तो उसने सबके लिए विशिष्ट भोग क्यों नहीं बनाये?

घत्ता—जिससे मिथ्यात्वरूपी विष की बूँदें झरती हैं, कुवादियों के ऐसे शिवरूपी आकाश-कमल के मकरन्दों को जिन भगवान् ने नहीं देखा है, उनका क्या वर्णन किया जाये!॥ २ ॥

३

अज्ञानी स्वयं अपना मार्ग नहीं जानता,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

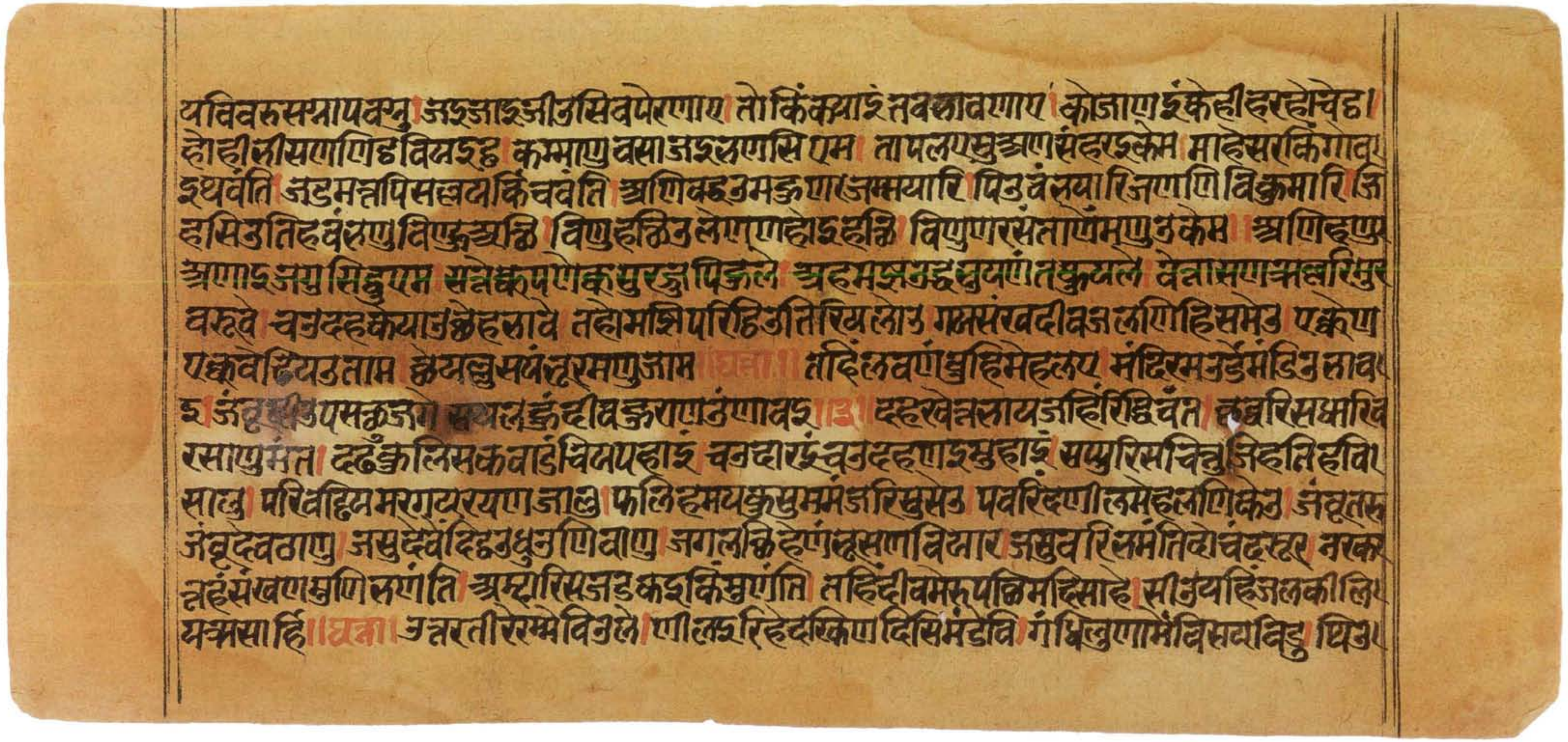

नरक-विवर-स्वर्ग और अपवर्ग यदि जीव के लिए शिव की प्रेरणा से होते हैं तो फिर की गयी तप की भावना से क्या? कौन जानता है कि शिव की चेष्टा कैसी है, क्या वह इष्ट को नष्ट करनेवाली भीषण होगी? यदि यह कहते हो कि वह कर्म के अनुसार होती है, तो वह स्वजनों का प्रलय में संहार क्यों करता है? शैव उसे गोपति (इन्द्रियों का स्वामी) क्यों कहते हैं? जड़, पिशाच और मत्त असम्बद्ध ये मुझसे क्या कहते हैं? नर जन्म देनेवाला पिता ब्रह्मचारी है और माता भी कुमारी है। जिस प्रकार शिव, उसी प्रकार ब्रह्मा और विष्णु भी नहीं हैं। हस्तिकुल के बिना हाथी नहीं हो सकता। इसी प्रकार बिना मनुष्य परम्परा के मनुष्य कैसे? इसप्रकार जग अनादि-निधन सिद्ध हो गया।'' सात, एक, पाँच और एक रज्जू विस्तारवाले क्रमश: अधोलोक, मध्यलोक, ऊर्ध्वलोक (ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर स्वर्ग तक) और उसके आगे के लोक का भूतल है। अधोलोक वेत्रासन के समान, मध्यलोक झल्लरी और ऊर्ध्वलोक मृदंग के समान, कुल चौदह रज्जू प्रमाण ऊँचा है। उसके मध्य में तिर्यंच लोक बसा हुआ है, जो असंख्य द्वीपों और समुद्रों से सहित है। एक ने एक को वहाँ तक घेर रखा कि जहाँ तक स्वयम्भूरमण समुद्र है।

घत्ता—उसमें लवण समुद्र की मेखला से घिरा हुआ और मन्दराचल के मुकुट से शोभित सब द्वीपों में श्रेष्ठ जग में प्रसिद्ध जम्बूद्वीप है ॥ ३ ॥

४

उसके ऋद्धि-सम्पन्न दस क्षेत्रभाग हैं (भरत, हैमवत, हरि, रम्यक, हैरण्यवत और ऐरावत, पूर्वविदेह, अपरविदेह, कुरु और उत्तरकुरु)। श्रेष्ठ शिखरवाले छह कुलधर पर्वत हैं। दृढ़ वज्र किवाड़ों से जिनके पथ अंचित (नियंत्रित) हैं ऐसे चार द्वार और चौदह नदीमुख हैं। वहाँ जम्बूदेव का स्थान जम्बूवृक्ष है जो सत्पुरुष के चित्त की तरह विशाल है, जिसकी मरकत रत्नों की शाखाएँ फैली हुई हैं, जो स्फटिकमय कुसुम मंजरियों से शोभित है और प्रवर इन्द्रनील मणियों के फलों का घर है, जिसके निर्माण संस्थान को निश्चित रूप से देवों द्वारा देखा गया है। उसके ऊपर दो चन्द्र-सूर्य घूमते हैं, जो मानो निश्चित रूप से विश्वरूपी लक्ष्मी के भूषणविकार हैं। नक्षत्रों की संख्या मुनि नहीं बताते, तो फिर हम जैसे जड़कवि उसका क्या विचार कर सकते हैं? उस द्वीप के सुमेरु पर्वत की पश्चिम दिशा में सीतोदधि है जिसमें मत्स्य जल-क्रीड़ा करते हैं।

घत्ता—उसके रम्य और विशाल दक्षिण तटपर, नीलगिरि की उत्तर दिशा को अलंकृत कर गंधेलु नाम का विषयविड है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो मानो धरतीरूपी वधू को आलिंगित करके स्थित है ॥ ४ ॥

५

जो पारिजात, चम्पक, कदम्ब, मुचकुन्द, कुन्द, मंदार, सार और सैरन्ध्र के पुष्पों की गन्ध से गुनगुनाती हुई भ्रमरावली, और मिलते हुए बया, मयूर, कीर, कलहंस, कुरु, कारण्ड तथा कोयलों के शब्दों से सुन्दर हैं ॥ १ ॥

मदवाले हाथियों के गण्डस्थल से झरते हुए मदरूपी घी के बिन्दुओं से रंग-बिरंगे जल में विचरण करती और नहाती हुई देवांगनाओं के स्तनों के केशर से पीले हुए फेन से जिसके सरोवरों के किनारे शोभित हैं ॥ २ ॥

जिसके सीमामार्ग विविध धान्यफलों से झुके हुए क्षेत्रों के कणों के सुरभित परिमल के आमोद से चंचल पक्षियों के समूह से क्रुद्ध कृषकबाला के द्वारा किये गये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छू-छू करने के कलरव के प्रति कान देने के कारण, स्थिर चरणवाले हरिणों से आच्छन्न हैं॥ ३॥

जहाँ पर धान्य, कंगु, जौ, मूँग और उड़द से सन्तुष्ट और मन्द-मन्द जुगाली करते हुए गौ-महिष-समूह से दुहे जाते हुए दूध-दही और घी की वापिकाओं में पथिकजन स्नान कर रहे हैं॥ ४॥

जहाँ के गोठ पूर्णचन्द्र की किरणों से सुन्दर निशा में क्रीड़ा करते हुए गोपाल और गोपालनियों के द्वारा गाये गये गेयरस के वश से दु:खी वधुओं के द्वारा मुक्त नि:श्वासों के सन्ताप से नष्ट होती हुई गोष्ठियों से शोभित हैं॥ ५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहाँ वृषभों के सींगों से क्षत गड्ढेवाली धरती से उछलते हुए सरस स्थलकमलों (गुलाब) के मन्द पराग-समूह से पीले और ऊँचे वटवृक्षों के आरोहों-प्रारोहों और शाखाओं पर झूलती हुई यक्षिणियों के कारण निकटवर्ती पामर जनसमूह लुप्त हो गया है ॥ ६ ॥

जहाँ पक्षियों की चोंचों से आहत पड़े हुए पके आमों के गुच्छों के लिए दौड़ते हुए वानरों के द्वारा मुक्त धीर बुक्कार ध्वनियों से त्रस्त और भागती हुई राजरमणियों के पैरों के अग्रभाग से गिरे हुए नूपुरों की लगी हुई हेमरत्न-किरणों से लताघरों के मध्यभाग स्फुरित हैं ॥ ७ ॥

जिसके भूप्रदेश, मुर्गों की क्रीड़ा विस्तार की उड़ान की सीमा में बसे हुए गाँव, पुर,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

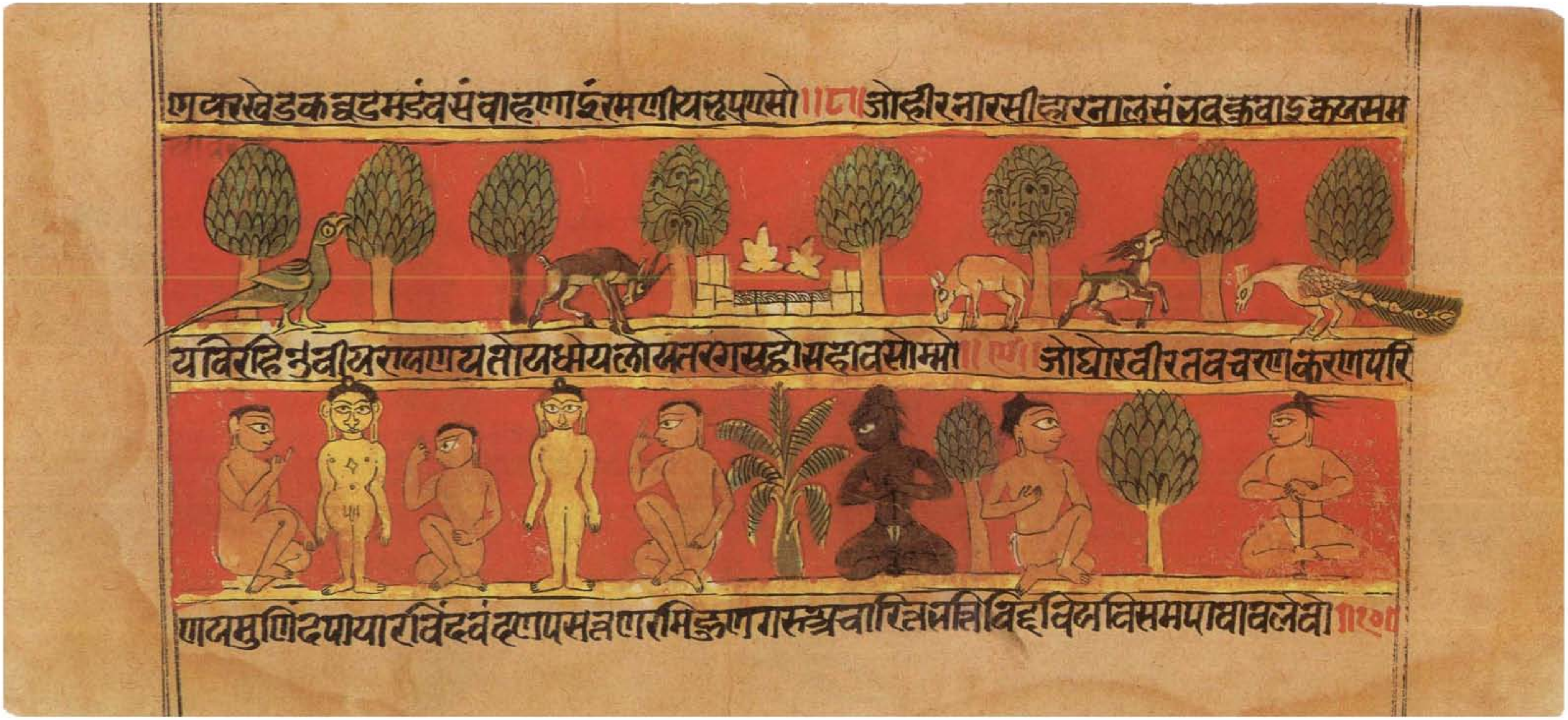

नगर, खेड़ा, कव्वड़, मडंब, संवाह और ज्ञानियों से रमणीय हैं ॥ ८ ॥

जो शंकर, नरसिंह, ब्रह्मा और कुवादियों के द्वारा रचित सिद्धान्तों से शून्य है तथा वीतराग के नयरूपी जल से धोये गये लोगों के अन्तरंगों से शुद्ध है और स्वभाव से सौम्य है ॥ ९ ॥

घोर और वीर तपश्चरण के करने में परिणत मुनीन्द्रों के चरणकमलों के वन्दन में लगे हुए नरयुग्मों की महान् चरित्र-भक्ति से जिसने पापमल के अवलेप को नष्ट कर दिया है ॥ १० ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—जहाँ मध्य में स्थित विजयार्ध पर्वत ऐसा दिखाई देता है मानो पृथ्वी को मापते हुए विधाता ने रजत दण्ड स्थापित कर दिया हो॥ ५॥

६

उसकी उत्तर श्रेणी में, जहाँ विद्याधर रमण करते हैं, ऐसी अलकापुरी नाम की नगरी है, जो खिले हुए कमलों के परागवाले परिखा जल से घिरी हुई है जो शत्रुपक्ष के चित्त को क्षुब्ध करनेवाले परिधान से शोभित है। बँधे हुए रत्नों से विचित्र प्राकाररूपी स्वर्ण कटिसूत्र, नाना द्वारों, मणि-तोरणों से ऐसी मालूम होती है मानो कण्ठ के आभूषणों से शोभित हो। नन्दनवनरूपी नीलकेशवाली वह नगरी ऐसी मालूम होती है जैसे कोई अपूर्व वेश्या अवतरित हुई हो। जहाँ शिखरमणियों से आकाशतल को चूमनेवाले सात भूमियोंवाले घर हैं, मानो वह नगरी धूप के सुन्दर धुएँ से निश्वास लेती है, मानो मुक्तावलीरूपी दाँतों से हँसती है, मानो भ्रमरों की झँकार से हँसती स्वरों को गिनती है, मानो विशाल गवाक्षों के कानों से सुनती है। उसके ध्वजपट ऐसे हैं मानो अपने करतल

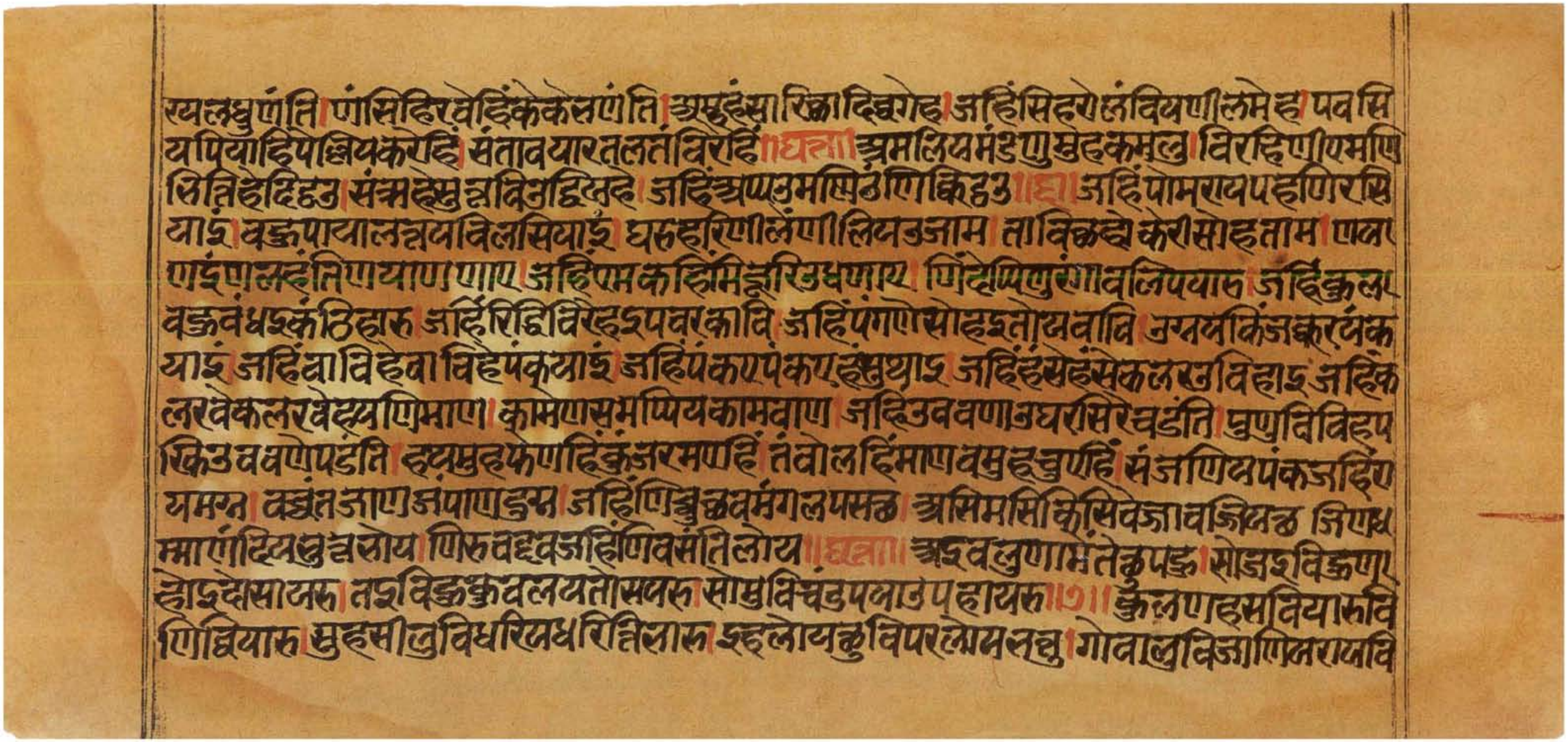

को हिला रही है, मानो मयूर के स्वरों के बहाने वह कहती है कि हमारे समान दिव्य गेह कौन-कौन हैं? जहाँ गृहशिखरों पर अवलम्बित नीले मेघ पीड़ित करों और आरक्त हस्ततलोंवाली प्रोषितपतिका स्त्रियों के लिए सन्तापदायक हैं।

घत्ता—सन्ध्या समय, सोकर उठी हुई विरहिणी ने शृंगार से रहित अपने मुखकमल को मणिमय दीवाल पर देखा और अपने को निकृष्ट समझा॥ ६॥

७

जहाँ वधुओं के पैरों के आलक्त विलास, पद्मराग मणियों की प्रभाओं से हटा दिये गये हैं। घर जबतक हरे और नीले मणियों से नीले हैं, तबतक नेत्र काजल की शोभा धारण नहीं कर पाते, नम्रमुखी स्त्रियाँ इस कारण जहाँ दुखी होती हैं। जहाँ रंगावली के प्रकारों की निन्दा करती हुई कुलवधू कण्ठ में हार बाँधती है। जहाँ प्रवर ऋद्धि शोभित होती है, जहाँ प्रत्येक आँगन में बावड़ियाँ हैं, प्रत्येक बावड़ी में निकलते हुए परागों की रज से शोभित कमल हैं। जहाँ प्रत्येक कमल पर हंस स्थित है, और प्रत्येक हंस का जहाँ कलरव शोभित है, जहाँ प्रत्येक कलरव में मनुष्य के मान को आहत करनेवाला कामबाण कामदेव ने समर्पित कर दिया है। जहाँ उपवन से आकर गृहों के शिखरों पर पक्षी बैठते हैं, और फिर वापस वन में चले जाते हैं। जहाँ अश्व-मुखों के फेनों, गजमदों, और मनुष्यों के मुखों से च्युत ताम्बूलों से राजमार्ग में कीचड़ उत्पन्न हो गयी है। जिसमें चलते हुए यान, जम्पान और दुर्ग हैं। जहाँ मंगल से प्रशस्त नित्य उत्सव होते हैं, जहाँ असि, मषी, कृषि और विद्या से अर्थ कमाया जाता है। जहाँ लोग जिनधर्म से आनन्दित होकर भोग भोगते हुए बिना किसी उपद्रव के निवास करते हैं।

घत्ता—वहाँ अतिबल नाम का प्रभु है, यद्यपि वह दोषाकर [चन्द्रमा/दोषों का आकर] नहीं है, फिर भी वह कुवलय (पृथ्वीमण्डल) को सन्तोष देनेवाला है, सौम्य होकर भी सूर्य की तरह प्रचण्ड है॥ ७॥

८

जो कुलरूपी नभ में सवियार (सविकार और सविता, सूर्य) होकर भी निर्विकार था, शुभशील होकर भी धरती के भार को धारण करनेवाला था। इस लोक में रहते हुए भी परलोक का भक्त था, गोपाल (गायों, धरती का पालक) होकर भी राज्यवृत्ति को जाननेवाला था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

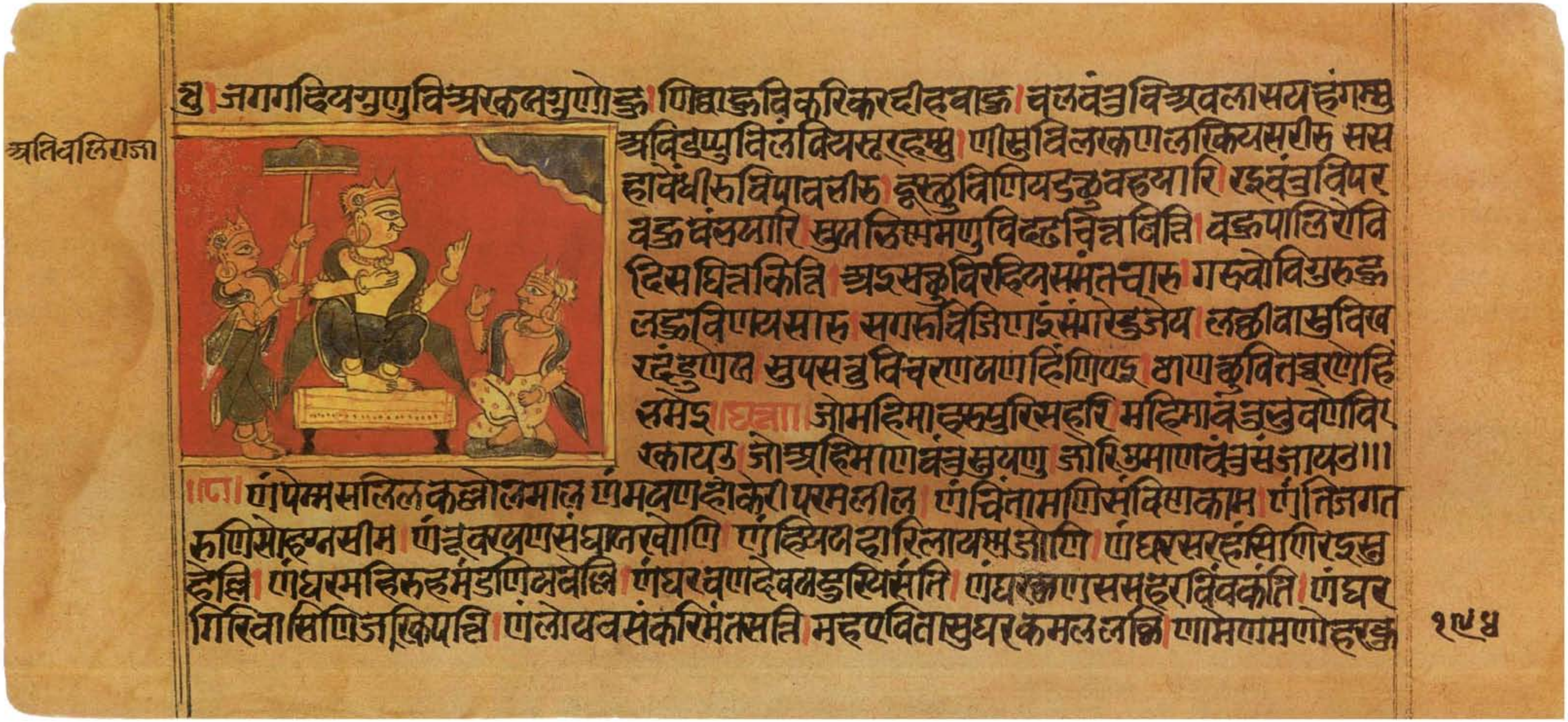

जग के द्वारा गृहीत-गुण होने पर भी जो अक्षयगुण-समूहवाला था। जो निर्वाह (बिना बाँह, बिना बाधा) होकर भी गज की सूँड के समान बाहुवाला था। जो बलवान् होकर भी सैकड़ों अबलों के द्वारा गम्य था। राहु न होते हुए भी (अविडप्प) जो सूर्य के तेज का उल्लंघन करता था, (फिर भी विटात्मा नहीं था), ईश नहीं होते हुए भी उसका शरीर लक्षणों से लक्षित था। अपने स्वभाव से धीर होते हुए भी वह पापों से भीरु था। दूर होकर भी वह निकट था। शत्रु का नाश करनेवाला और रतिवन्त होकर भी परवधुओं के लिए ब्रह्मचारी था, श्रुत (काम और शास्त्र) में पूर्णमन होते हुए भी जो दृढ़चित्तवृत्तिवाला था, जो बहुपालितों (वेश्या को ग्रहण करनेवाला होकर भी) दूसरे पक्ष में (वधूपालक होकर) दिशाओं में कीर्ति फैलानेवाला था। स्वच्छ होकर भी वह स्वमन्त्राचार से रक्षित था। गुरु (महान्) होकर भी गुरुओं के प्रति छोटा और विनयशील था। संग्राम में अजेय होते हुए भी वह संगर (रोगसहित) होकर भी युद्ध में जीतनेवाला था। लक्ष्मी का निवास होते हुए भी वह तीव्रदण्ड को जानता था। सुषुप्त (अत्यन्त सोता हुआ, अत्यन्त नीतिवाला) होकर भी चरों के नेत्रों से देखता था। एक स्थान पर स्थित होकर भी वह उनके नेत्रों से घूमता था।

घत्ता— जो पृथ्वीरूपी लक्ष्मी का घर, पुरुष श्रेष्ठ महिमावान् और विश्व में विख्यात था। जो अभिमानवाला, सुजन और शत्रु के लिए मानवाला था॥ ८॥

९

उसकी मनोहरा नाम की कमलनयनी गृहकमल की लक्ष्मी महादेवी थी, जो मानो प्रेमसलिल की कल्लोलमाला, मानो कामदेव की परमलीला, मानो कामनाएँ पूरी करनेवाली, चिन्तामणि, मानो तीनों लोकों की रमणियों की सौभाग्यसीमा, मानो रूप-रत्नों के समूह की खान, मानो हृदय का हरण करनेवाली लावण्य योनि, मानो घररूपी सरोवर की रतिसुख देनेवाली हंसिनी, मानो घररूपी वृक्ष को अलंकृत करने की लता, मानो पापों को शान्त करनेवाली घररूपी वन की देवता, मानो घररूपी पूर्णचन्द्र की पूर्ण बिम्बकान्ति, मानो घररूपी गिरि में रहनेवाली यक्षपत्नी और मानो लोगों को वश में करनेवाली मन्त्रशक्ति थी।

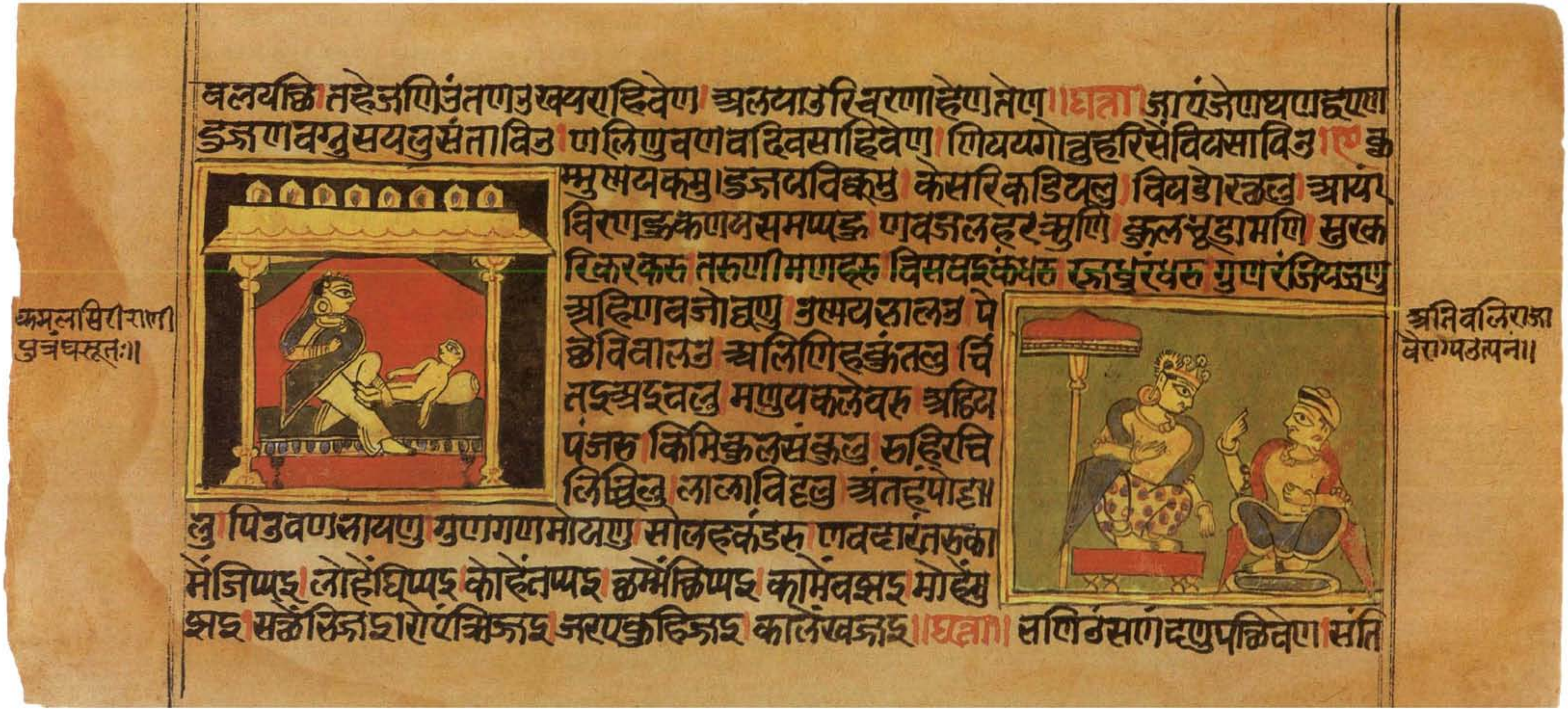

अलकापुरी की धरती के स्वामी उस विद्याधर को एक पुत्र उत्पन्न हुआ।

घत्ता—उस पुत्र के उत्पन्न होने से समस्त दुर्जनसमूह पीड़ित हो उठा। लेकिन उसका अपना गोत्र हर्ष से उसी प्रकार विकसित हो गया जिस प्रकार नव दिवस के अधिपति सूर्य से कमल विकसित हो जाता है ॥ ९ ॥

१०

कूर्म की तरह उन्नत क्रम (चरण), अजेय पराक्रमी, सिंह के समान कटितलवाले, विकट उरस्थल वाले स्वर्णप्रभ—नवमेघ की ध्वनिवाले, कुल के चूड़ामणि, ऐरावत की सूँड के समान हाथवाले, तरुणियों के लिए सुन्दर, वृषभराज के समान कन्धोंवाले, राज्य में धुरन्धर, गुणों से जनों को रंजित करनेवाले, अभिनव यौवन और उन्नत भालवाले अपने पुत्र को देखकर, भ्रमरों के समान बालोंवाले राजा अतिबल ने विचार किया— ''मनुष्य का शरीर हड्डियों का ढाँचा है, कृमिकुल से व्याप्त, रुधिर से बीभत्स, लार से घिनौना, आँतों की पोटली और मरघट का पात्र, पक्षियों का भोजन, सोलह गुफाओं और नौ द्वारवाला है। यह काम से जीत लिया जाता है, लोभों से ग्रहण किया जाता है, क्रोध से तपता है, क्षमा से ठण्डा होता है, कर्म से बँधता है, मोह से मूर्च्छित होता है, सत्य से भिदता है, रोग से क्षीण होता है, जरा से नष्ट होता है, काल खा जाता है।''

घत्ता—राजा ने तब अपने पुत्र से कहा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

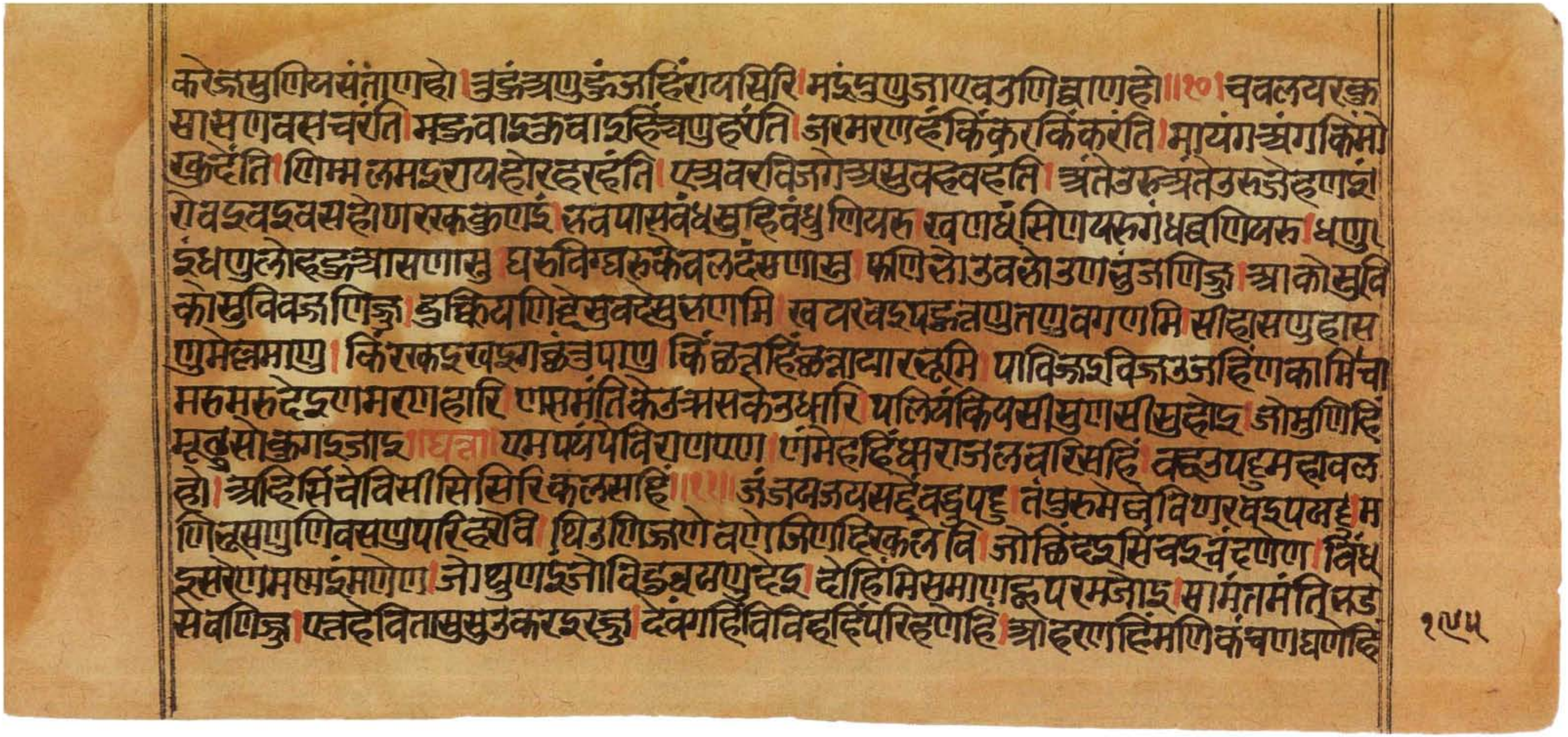

''अपनी परम्परा में तुम शान्ति स्थापित रखना। तुम राज्यश्री का भोग करो, मैं अब निर्वाण के लिए जाऊँगा।''॥ १० ॥

११

चंचल लोग, कुसासणवश (कुशा/कोड़े के शासन के वशीभूत) होते हैं, (दूसरे पक्ष में चार्वाक आदि दर्शनों के खोटे शासन में चलनेवाले होते हैं)। मेरी बाणी कुवादियों का हरण करनेवाली है। (दूसरे पक्ष में, मेरे वाजि कुवाजियों का अनुसरण करते हैं) जरा और मरण के लिए अनुचर क्या करते हैं, हे पुत्र! क्या हाथी मुझे मोक्ष देते हैं? निर्मलमति राजा के रथ रह जाते हैं, परन्तु ये और दूसरे जग में अशुभ होते हैं। अन्तःपुर अन्तःकरण में आघात करता है। वह रोता है परन्तु यम से रक्षा नहीं करता। संसाररूपी पाश का बन्धन सुधियों का बन्धनसमूह गन्धर्वलोक की तरह एक क्षण में ध्वस्त हो जाता है। नाग के फन की तरह भोग भी भोगने योग्य नहीं हैं। आक्रोश और कोश दोनों ही परित्याग करने योग्य हैं, देश को मैं दुष्कृत के उपदेश के समान मानता हूँ, और विद्याधर की प्रभुता को तृण के तुल्य समझता हूँ। सिंहासन को मैं 'हा' इस स्वन (शब्द) को करता हुआ समझता हूँ क्या वह क्षय को प्राप्त हुए प्राणों को बचा सकता है? क्या छत्रों से मुक्तिरूपी शिला पायी जा सकती है कि जहाँ पर विद्या की कामना नहीं रहती। मरणधारी को चामर भी हवा नहीं देते और न केतु और कामदेव शमन करते हैं। बाल सफेद होनेपर शिष्य नहीं होता, जो मुनियों के प्रति मूढ़ है, वह खोटी गति में जाता है।''

घत्ता—राजा अतिबल ने यह कहकर, धारावाहिक जल की वर्षा करनेवाले श्वेत श्रीकलशों से अभिषेक कर, महाबल को राजपट्ट बाँध दिया॥ ११ ॥

१२

जब जय-जय शब्द के साथ पट्ट बाँध दिया गया, तो राजा नगर का परित्याग कर चला गया। मणिमय आभूषण और वस्त्र छोड़कर वह दीक्षा लेकर निर्जनवन में स्थित हो गया। कोई उसे छेदे या चन्दन से सींचे, सर से बेधे या मन से माने, कोई स्तुति करे या दुर्वचन कहे, वह परयोगी दोनों में समान रूप से स्थित हो गया। यहाँ पर सामन्त, मन्त्री और भटों के द्वारा सेवनीय उसका पुत्र राज्य करता है, देवांग विविध वस्त्रों, मणि-कांचन से सघन अलंकारों,

कामिनियों के स्तन-शिखरों के आलिंगनों, उद्यानों, यानों, वाहनों, वीणाओं और पुष्कर वाद्यों के द्वारा बजाये गये स रि ग म प ध नी स्वर गानों के द्वारा भोगासक्त उसका, उच्छलित और आहत घटिकारूपी आरों का पालन करनेवाला काल बीतने लगा। उसका पहला मन्त्री भ्रान्ति को नष्ट करनेवाला महामति था, और दूसरा संभिन्नमति था। तीसरा स्वयंमति और चौथा विश्वप्रसिद्ध स्वयंबुद्ध।

घत्ता—उसने राजा से कहा—"क्या तरुतृणों से आग, अनेक नदियों के जलों से समुद्र तथा विषय सुखों से बेचारा जीव तृप्त होता है?"॥ १२ ॥

१३

जिस प्रकार अँगुलियों के खुजलाने से खुजली बढ़ती है, उसी प्रकार मुनि के सम्भाषण-प्रियमुखदर्शन के द्वारा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नित्यप्रति सेवित किया जानेवाला काम अत्यन्त प्रमाणहीन हो जाता है। लोभ से महान् लोभ बढ़ता है, अहंकार से तीव्र क्रोध बढ़ता है, नयहीन व्यक्ति को देखकर मान बढ़ता है, दूसरे से प्रवंचना करने पर मायाविधान बढ़ता है। अनुबन्ध से रति और मोह बढ़ता है, इस प्रकार जीव धर्मद्रोह करके राजा बनता है और फिर कुत्ता बनता है। संसार में किसका राज्याभिमान रहा! जो काम की व्याधि उत्पन्न होती है उससे कम्पन के साथ शरीर सन्तप्त होता है। कहीं से भी लायी गयी सुमानिनी जाया के द्वारा वह काम-व्याधि शान्त की जाती है। वह नारी स्वभाव से दुर्गन्धित और चटुल होती है, अन्य में आसक्त धनगम्य और कुटिल होती है।

घत्ता—भूख शरीर में लगती है जो शीघ्र भड़ककर शरीर को जला देती है, मैंने यह अच्छी तरह देख लिया कि शान्त करने की विधि शरीर में नहीं है, वह परवश है॥ १३॥

१४

स्पर्श इन्द्रिय के रस के अधीन पृथ्वी में घूमकर कुछ लोग गाते हैं, कुछ लोग नाचते हैं, कुछ बाँचते हैं, कुछ वर्णन करते हैं, कोई सीते हैं, कोई धुनते हैं, कोई धन के लिए पढ़ते हैं और लिखते हैं। कोई खेती करते हैं, कोई अस्त्र धारण करते हैं और कोई चाटुकर्म से दूसरे हृदय का अपहरण करते हैं। आते हुए विशिष्ट व्यक्ति को सहन नहीं करते,

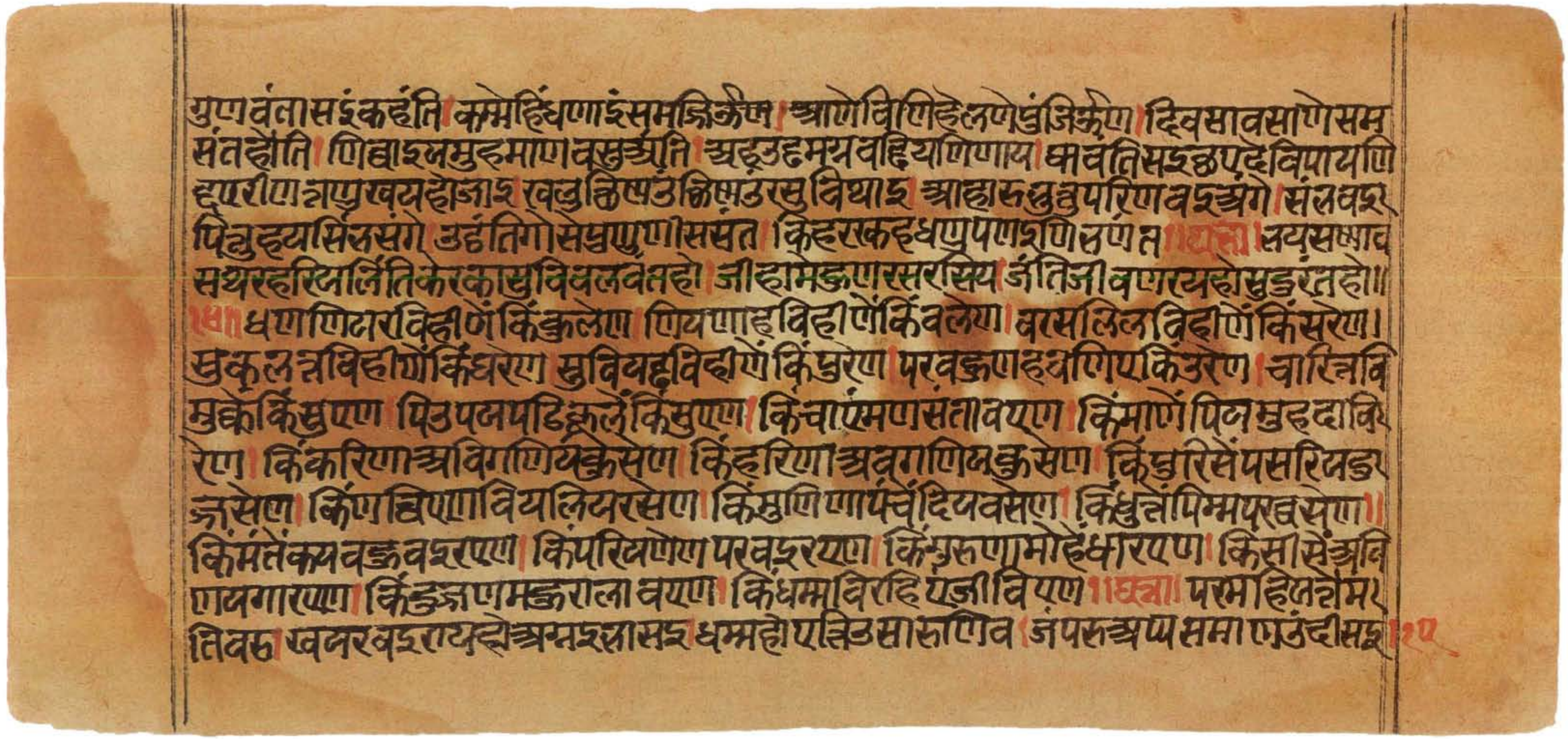

अपने आपको गुणवान् कहते हैं। नाना कर्मों से धन को अर्जित कर, लाकर अपने घर में इकट्‌ठा कर, दिन के अंश में श्रम से थक जाते हैं, मुँह फाड़कर आदमी सो जाते हैं। बढ़ रहा है घुरघुर शब्द जिनमें, ऐसी दोनों हवाएँ स्वेच्छा से नीचे और ऊपर के मार्गों से जाती रहती हैं, नींद से उनकी थकान दूर होती है, खल (खली) तो चर्वित होते-होते रस बन जाता है, लेकिन खाया हुआ आहार शरीर में परिणत होता है और श्लेष्म के साथ पित्त बन जाता है। सवेरे उठकर पुन: नि:श्वास लेते हैं, और अपनी पत्नियों से कहते हैं कि धन की रक्षा किस प्रकार करें?

घत्ता—डर के कारण किसी भी बलवान् की आज्ञा थर-थर काँपते हुए स्वीकार करते हैं। इस प्रकार जिह्वा और मैथुन के रस का आस्वाद लेनेवाले जीव पापपूर्ण नरक में जाते हैं॥ १४॥

१५

धनरहित कुल से क्या? अपने स्वामी से रहित सेना से क्या? श्रेष्ठ जल से रहित सरोवर से क्या? सुकलत्र से रहित घर से क्या? पण्डित से विहीन नगर से क्या, परस्त्रियों के नखों से क्षत उर-स्थल से क्या? चारित्र से रहित शास्त्र से क्या? पिता के चरणों के प्रतिकूल पुत्र से क्या? मन को सन्ताप पहुँचानेवाले त्याग से क्या? प्रिय को मुँह दिखानेवाले मान से क्या? अंकुश को नहीं माननेवाले गज से क्या? चाबुक को नहीं माननेवाले अश्व से क्या? जिसका अपयश फैल रहा है ऐसे मनुष्य से क्या? रस से विगलित नृत्य से क्या? पंचेन्द्रियों के वशीभूत पुत्र से क्या? प्रेम के परवश होनेवाले धूर्त से क्या? परवधू का रमण करनेवाले व्यक्ति से क्या? दूसरे की वधू से रमण करनेवाले परिजन से क्या? मोहान्धकारवाले गुरु से क्या? अविनय करनेवाले शिष्य से क्या? मीठा आलाप करनेवाले दुर्जन से क्या? धर्म से रहित जीवन से क्या?

घत्ता—प्रसन्नमति स्वयंबुद्धि विद्याधरराज से आगे पुन: कहता है—"हे राजन्, धर्म का इतना सार है कि पर अपने समान दिखाई दे जाये?॥ १५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

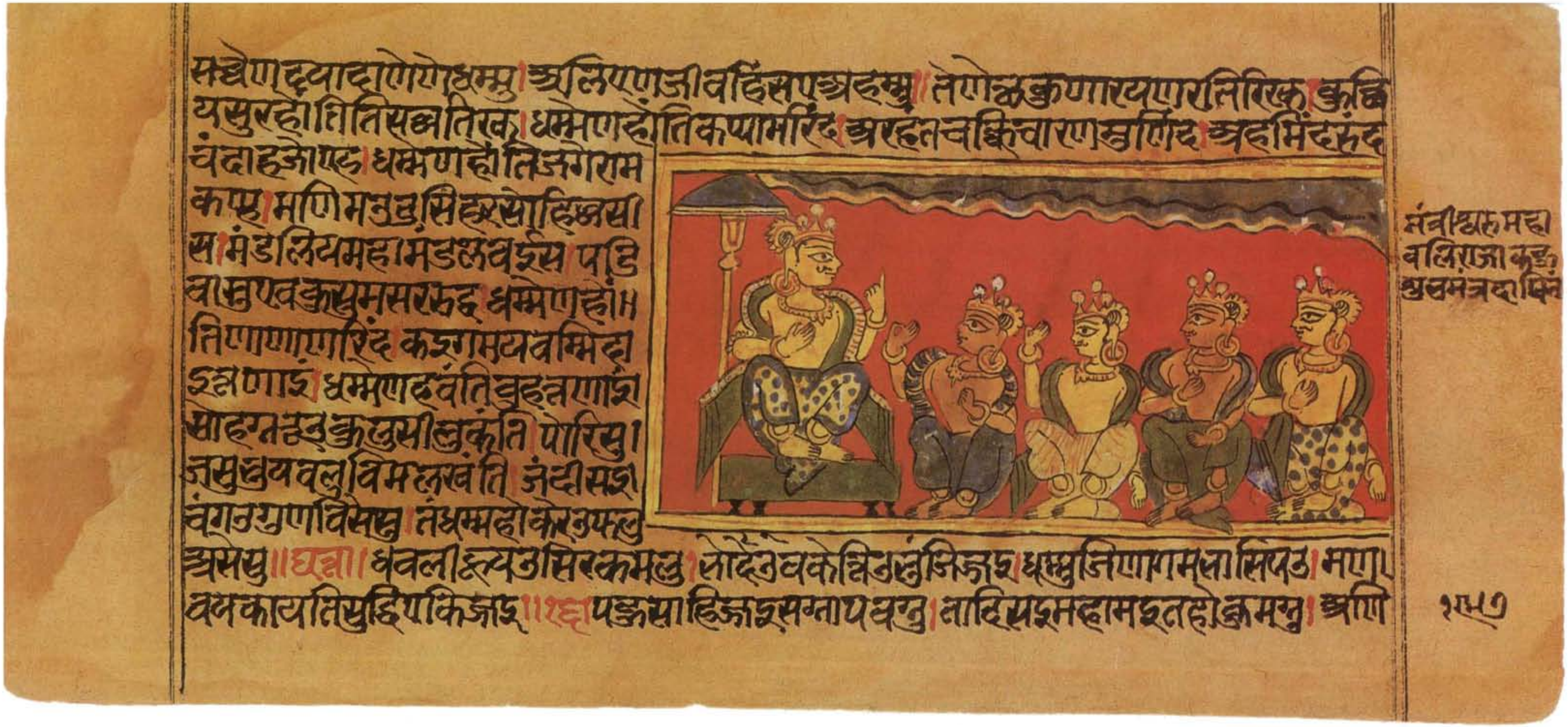

१६

सत्य और दया-दान से धर्म है, झूठ जीव हिंसा से अधर्म है। उसी से यहाँ पर खोटे मनुष्य (अधार्मिक मनुष्य), नारकीय, तिर्यंच और तीन शल्यों से पीड़ित खोटे देव होते हैं। धर्म से कल्पवासी देव होते हैं, अरहंत, चक्रवर्ती, चारण और मुनीन्द्र होते हैं। धर्म से विश्व में, विशाल चन्द्रमा के समान कान्तिवाले अहमिन्द्र और राम-कृष्ण होते हैं, जिनके सिर पर मणिमय मुकुट शोभित हैं ऐसे माण्डलीक और महामण्डलपतियों के स्वामी होते हैं। प्रतिवासुदेव, कामदेव, रुद्र और नाना प्रकार के राजा धर्म से होते हैं। धर्म से सिद्धान्तवेत्ता, वाग्मी और वादी पण्डित पैदा होते हैं। सौभाग्य, रूप, कुल, शील, कान्ति, पौरुष, यश, भुजबल, विमल शान्ति आदि जो-जो भला गुण विशेष दिखाई देता है, वह समस्त धर्म का अशेष फल है।

घत्ता—हे देव, सिररूपी कमल सफेद हो गया है, कितना भोग भोगा जायेगा? मन, वचन और काय की शुद्धि से जिनशास्त्रों में भाषित धर्म किया जाये॥ १६॥

१७

हे स्वामी, स्वर्ग और अपवर्ग को सिद्ध करना चाहिए। तब महामति मन्त्री कुमार्ग की शिक्षा देता है कि

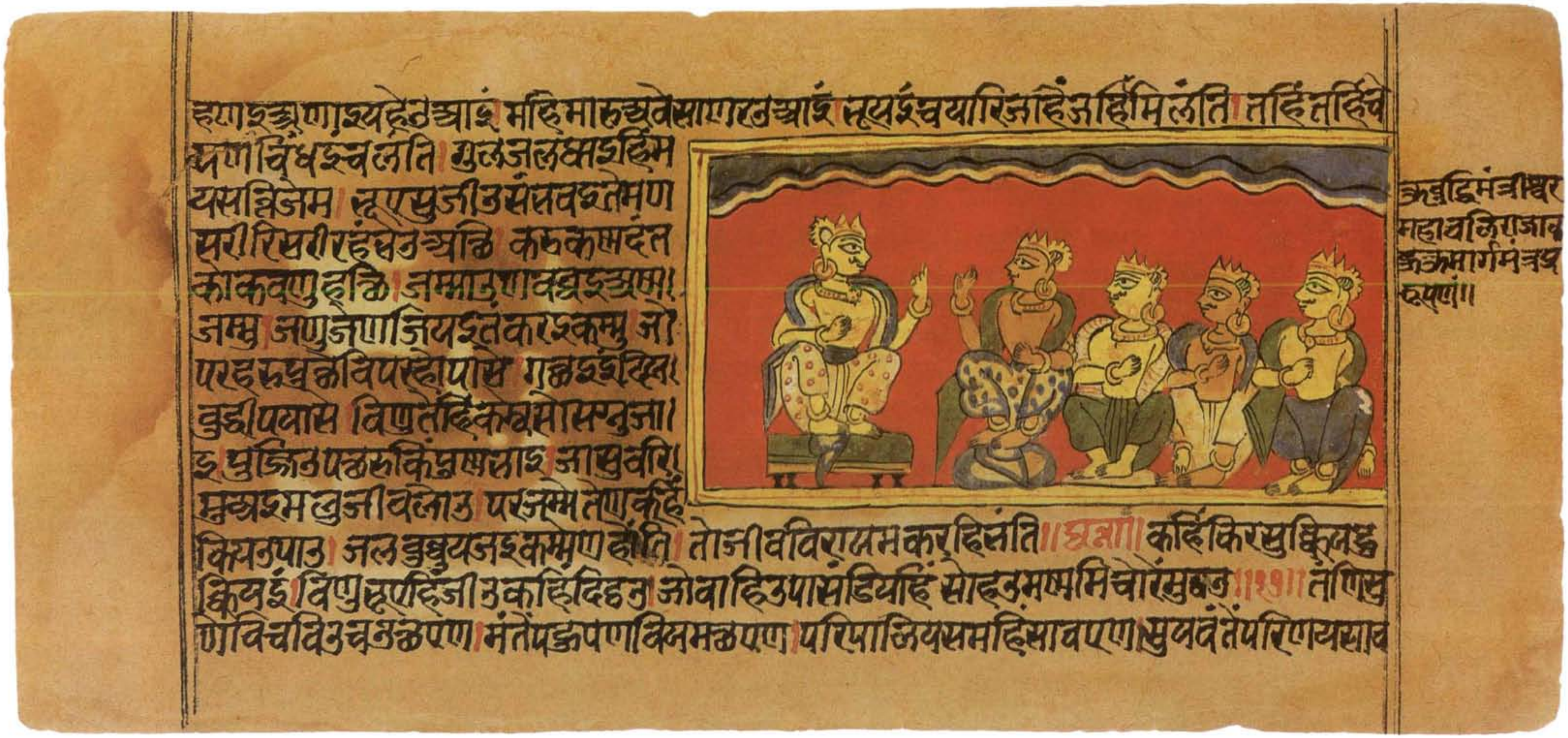

अनिधन-अनादि और अहेतुक पृथ्वी, पवन, अग्नि और जल— ये चार महाभूत जहाँ-जहाँ मिलते हैं वहाँ-वहाँ चेतना के चिह्न प्रकट होते हैं। गुण, जल और मिट्टी में जिस प्रकार मदशक्ति उत्पन्न होती है उसी प्रकार इन भूतों में जीव उत्पन्न होते हैं। आत्मा और शरीर में भेद नहीं है। बताओ सूँड, कान या दाँत में कौन हाथी है? जीव एक जन्म से दूसरे में नहीं जाता। मनुष्य जिस कर्म से जीवित रहता है, वही करता है। जो दूसरे से पूछकर, अपनी इन्द्रियों और बुद्धि के प्रकाश से दूसरे के पास जाता है, बिना इनके (इन्द्रियों और बुद्धि के प्रकाश के बिना) स्वर्ग कैसे जाता है? पुण्यभाव से पत्थर की पूजा क्यों की जाती है जिसके (धरती या पत्थर के) ऊपर जीवलोक मल का त्याग करता है, दूसरे जन्म में उसने क्या पाप किया? जल के बुद्बुद यदि कर्म से होते हैं तो जीव भी कर्म से होते हैं। हे राजन्, इसमें भ्रान्ति मत करो।

घत्ता—पुण्य-पाप किसके? बिना भूतों (पृथ्वी-जलादि) के जीव कहाँ दिखाई दिया? पाखण्डियों के द्वारा जो बहकाया जाता है, मैं समझता हूँ वह चोरों के द्वारा ठगा गया॥ १७॥

१८

यह सुनकर मन्त्रियों में चौथे स्वयंबुद्धि ने जो शान्ति और अहिंसा धर्म का पालन करता है, शास्त्रज्ञ है और पक्का श्रावक है, राजा को मस्तक से प्रणाम करते हुए कहा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

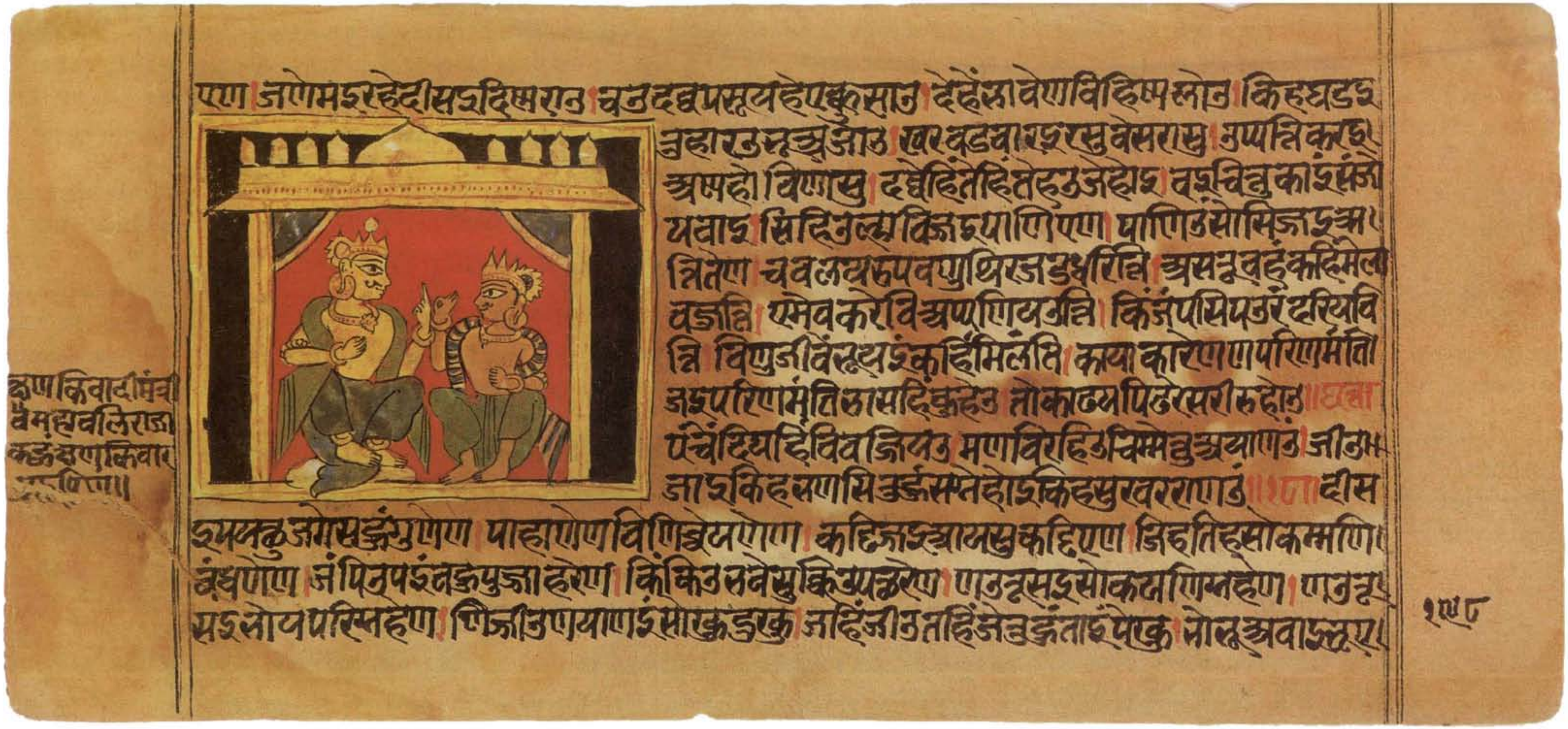

''चार द्रव्यों से उत्पन्न मदिरा से लोगों में एक ही स्वाद और मद दिखाई देता है, लेकिन लोक, देह और भाव से भिन्न हैं (जबकि भूतचतुष्टय से उत्पन्न होने के कारण उसे एक होना चाहिए)। तुम्हारा भूतयोग किस प्रकार निर्मित होता है? उन द्रव्यों से वह वैसा ही होगा। हे संयोगवादी, यह विचित्रता कैसी? आग पानी से शान्त होती है, और पानी शीघ्र उसके द्वारा (आग) सोख लिया जाता है। पवन चंचल है, धरती स्थिर और जड़ है, इस प्रकार एक-दूसरे से भिन्न स्वरूपवालों की मिलाप-युक्ति कहाँ? बिना जीव (चेतना) के जीव कहाँ मिलते हैं; वे शरीर के आकार के रूप में परिणत नहीं हो सकते। यदि परिणत होते हैं, तो तुम कुकारण कहते हो, और तब काढ़े के पिण्ड में शरीर उत्पन्न होना चाहिए।

घत्ता—पाँच इन्द्रियों से विवर्जित मन से रहित, चैतन्यमात्र अज्ञानी जीव किस प्रकार उत्पन्न हो सकता है, और किस प्रकार स्वर्ग में सुरवरों का इन्द्र होता है? तुम्हीं बताओ?॥ १८॥

१९

जग में पदार्थ गुण के साथ दिखाई देता है, जिस प्रकार निश्चेतन चुम्बक पत्थर के घर्षण से आग प्रकट होती है, उसी प्रकार कर्मों के बन्ध से जीव पैदा होता है। तुमने जो कहा कि बहुपूजा को धारण करनेवाले पत्थर से क्या दुनिया में पुण्य किया जाता है? निग्रह करनेवाले से वह क्रोध नहीं करता है, और न भोगों का परिग्रह करनेवाले से सन्तुष्ट होता है। निर्जीव वह न तो सुख जानता है और न दुःख। जहाँ जीव हैं, वहीं तू उनके द्वारा (सुख-दुःख के द्वारा) देखा जाता है। हे भूतवादी, तू भूतों के द्वारा भुक्त है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

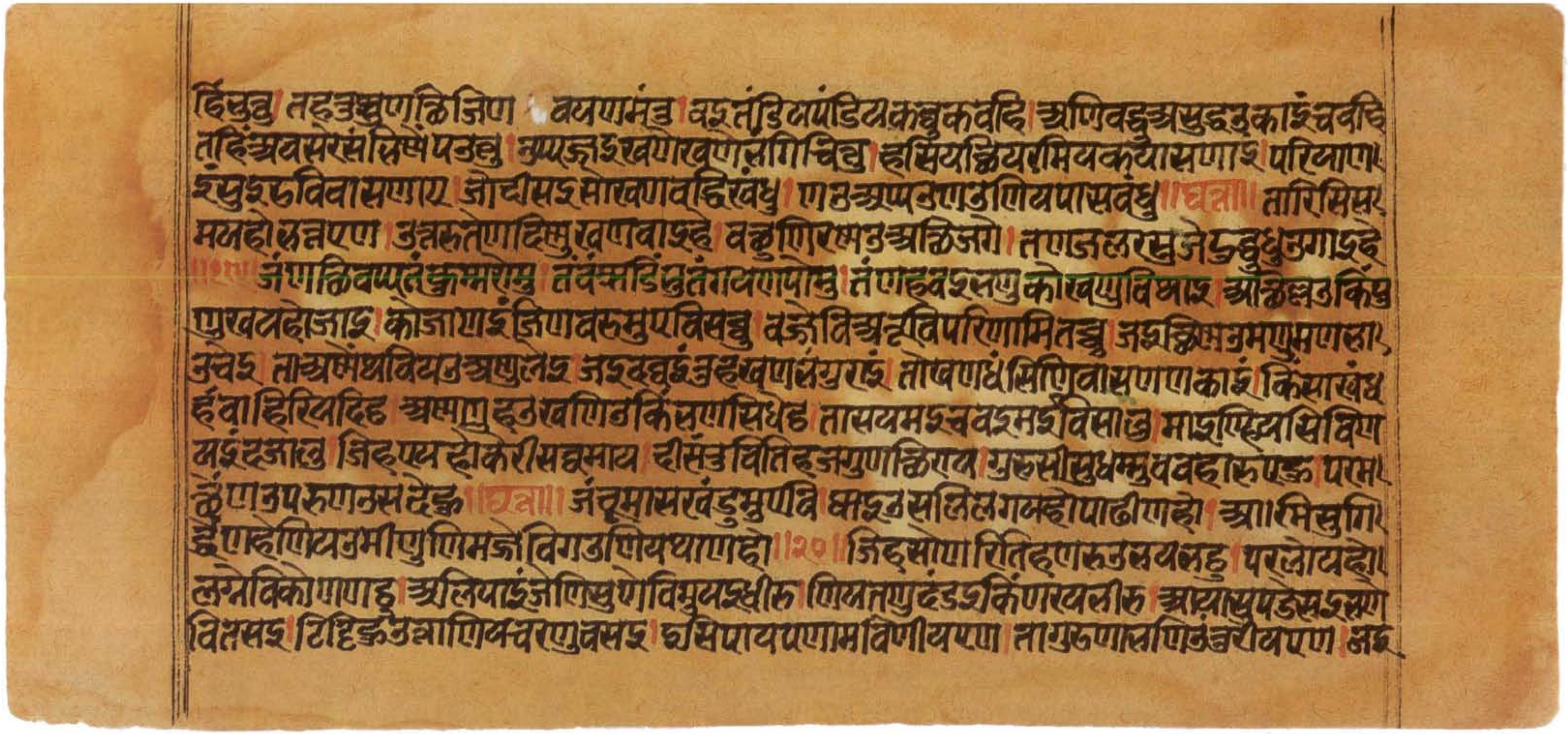

तू जिनवर के वचनों का रहस्य नहीं जानता। हे वितण्डावादी पण्डित, तुम काव्य क्यों करते हो, अनिबद्ध और असंगत कथन क्यों करते हो?'' उस अवसर पर सम्भिन्न मंत्री जी ने कहा—''जीव जिस क्षण में उत्पन्न होता है, वह क्षण विनश्वर है। हँसना, इच्छा करना, रमण करना, भोजन करना आदि को संस्कार से बहुत समय तक जाना जाता है। जो दिखाई देता है वह क्षणवर्ती स्कन्ध है। हे राजन, न तो आत्मा है और न पाशबन्ध कर्म है।''

घत्ता—तब मुनि-सिद्धान्त के उस भक्त ने क्षणवादियों को उत्तर दिया-संसार में बिना अन्वय (परम्परा) की कोई वस्तु नहीं है। गायों के शरीर का जलरस ही दूध बनता है॥ १९॥

२०

यदि बेचारी वस्तु नहीं है, तो कछुए के रोम, वन्ध्या का पुत्र और वह आकाशकुसुम भी हो, यदि वे नहीं होते तो बताओ एक क्षण के लिए कौन स्थित होता है और जो अस्तित्वयुक्त है वह पुन: क्षय को प्राप्त क्यों होता है। जिनवर को छोड़ सत्य को कौन जानता है? जीवादि को छोड़कर तत्त्व परिणामी होता है। यदि कटा हुआ मन मन के भाव को जान लेता है, तो अन्य के द्वारा स्थापित मन को अन्य ले लेगा। यदि तुम्हारे सब द्रव्य क्षणभंगुर हैं तो फिर वासना क्षण में नाश होनेवाली क्यों नहीं है? क्या वह स्कन्धों (रूप, विज्ञान, वेदना, संज्ञा और संस्कार) से वासना बाहर है? तो हे धूर्त! तुमने अननुभूत को क्षणिक क्यों कहा? तब विशाल बुद्धिवाला स्वयंमति कहता है—''मृगतृष्णा, स्वप्न और इन्द्रजाल जिस प्रकार होते हैं, उसी प्रकार यह सब इसकी माया है? अत: हे राजन्! दिखाई देता भी विश्व वास्तव में नहीं है। गुरु-शिष्य और धर्म तथा यह व्यवहार वास्तव में नहीं है और न स्वदेह है।

घत्ता—सियार मांसखण्ड छोड़कर जल में उछलती हुई मछली के ऊपर दौड़ा। मांस को गीध आकाश में ले गया और मछली डूबकर अपने स्थान को चली गयी॥ २०॥

२१

जिस प्रकार सियार उसी प्रकार मनुष्य भी दो प्रकार से भ्रष्ट होता है। परलोक के लिए लगकर कौन नष्ट नहीं होता। झूठी बातें सुनकर (मनुष्य) धैर्य छोड़ देता है और इस प्रकार नरक-भीरु अपने शरीर को दण्डित करता है। आकाश गिर पड़ेगा, यह सोचकर त्रस्त होता है, 'टिट्टिभ अपने पैर ऊँचे करके रहता है।' तब मुनि के चरणों में प्रणाम से विनीत चौथे मन्त्री ने कहा,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

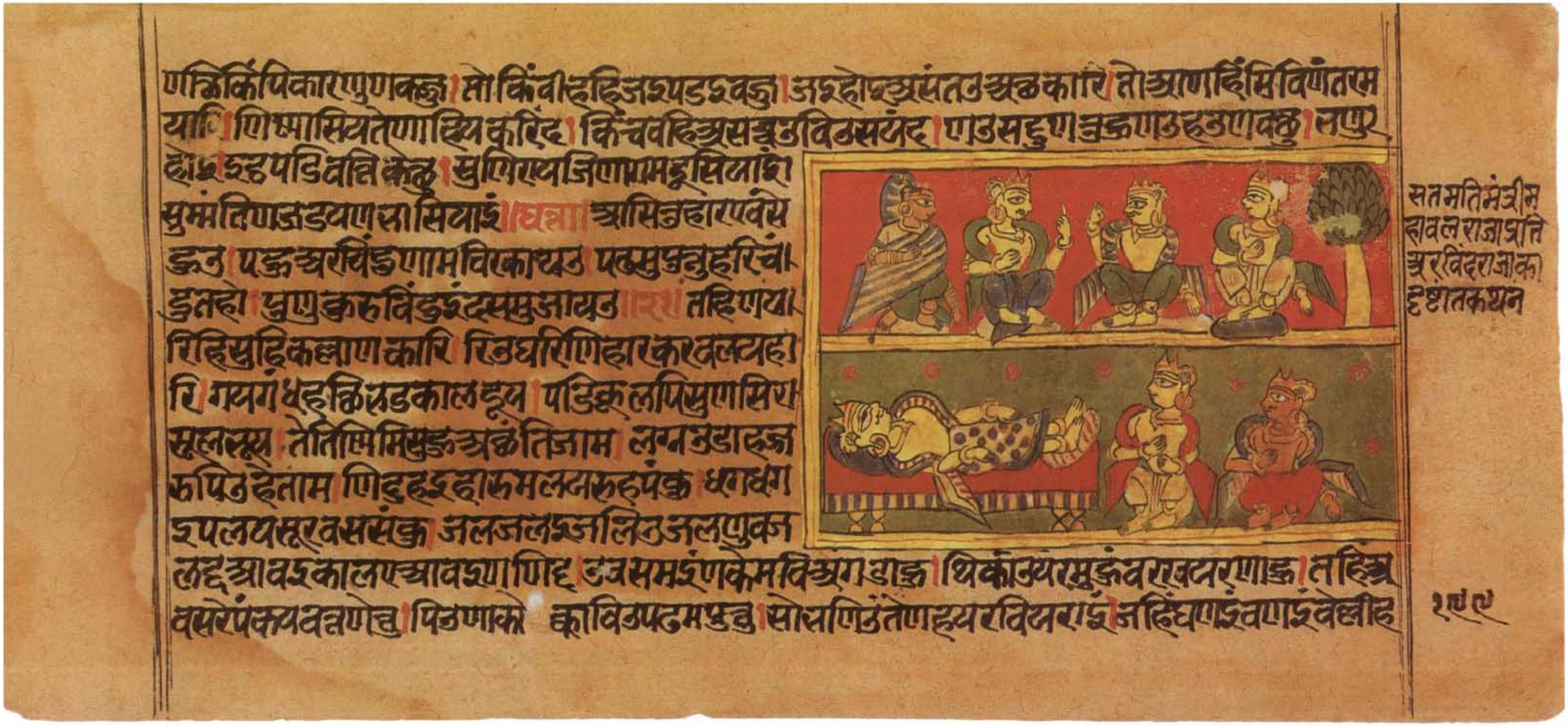

''यदि कोई कारण और कार्य नहीं है, तो जब वज्र गिरता है, तो डरते क्यों हो? यदि जो चीज नहीं है, वह अर्थकारी हो सकती है तो स्वप्न के भीतर सिंह को ले आओ? उससे अहितरूपी गजराज को नष्ट कर दो, हे विद्वानों में श्रेष्ठ, तुम असत्य क्यों कहते हो? न शब्द है, न तुम हो, न मैं हूँ और न वस्तु तो बताओ इष्टप्रवृत्ति कैसे होती है! जिनागम में कही गयी बातों को सुनो, जड़जनों के द्वारा भाषित नहीं सुनना चाहिए।

घत्ता—तुम्हारे वंश में अरविन्द नाम का विख्यात राजा हुआ है। उसका पहला पुत्र हरिश्चन्द्र था, और दूसरा इन्द्र के समान कुरुविन्द हुआ॥ २१ ॥

२२

शत्रु-गृहिणियों के हार और करवलयों का अपहरण करनेवाली तथा शुभकल्याण करनेवाली गन्ध हाथियों से रहित उस नगरी में, योद्धाओं के लिए कालदूत, प्रतिकूल शत्रुओं के सिर के लिए शूल के समान वे तीनों साथ रहते थे। इतने में पिता के लिए दाहज्वर उत्पन्न हो गया। हार और चन्दन का लेप उसे जलाता। चन्द्रमा उसे प्रलयसूर्य के समान धकधक करता है। गीला वस्त्र अग्निज्वाला की तरह जलाता है। आपत्ति के समय नींद नहीं आती। उसका अंगदाह किसी भी प्रकार शान्त नहीं होता। वह श्रेष्ठ विद्याधर राजा अपना मुँह कातर (दीन) करके रह गया। उस अवसर पर पिता ने कमल के समान मुख-नेत्रवाले अपने पहले पुत्र को बुलाया। उसने उससे कहा—''जहाँ सूर्य की किरणों को आहत करनेवाले सघन वन और लताघर हों,

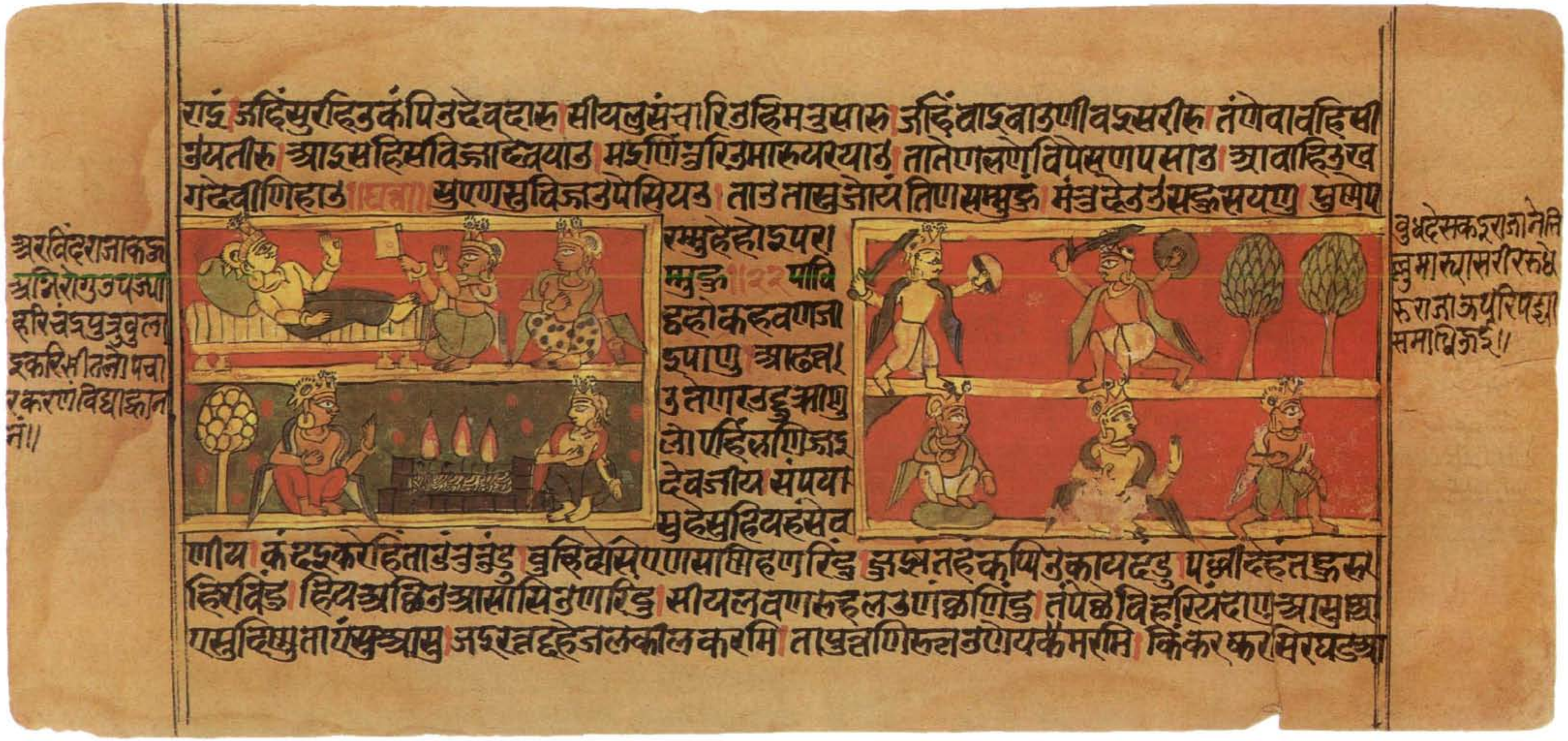

जहाँ सुगन्धित काँपता हुआ देवदारु हो, और जहाँ शीतल हिम तुषार चल रहा हो, और जहाँ हवा बहती हो और शरीर को शान्ति देती हो, ऐसे शीतल जल के तटपर मुझे ले चलो। पवनवेगवाली अपनी विद्या को आदेश दो कि वह मुझे तुरन्त ले जाये।'' तब उसने 'जो आज्ञा' कहकर विद्याधर देवी-समूह को पुकारा।

घत्ता—पुत्र ने अपनी विद्याएँ भेज दीं। लेकिन वे उसके सम्मुख नहीं देखतीं। मन्त्र, देव, औषध, स्वजन पुण्य के पराङ्मुख होने पर पराङ्मुख हो जाते हैं॥ २२॥

२३

पापी के किसी प्रकार प्राण-भर नहीं जाते। उसने रौद्र ध्यान प्रारम्भ कर दिया कि सम्पत्ति सुख में लोगों के द्वारा कहा जाता है कि सुधीजनों के द्वारा सेवनीय हे देव! तुम जिओ। अपने हाथों से पेट को पीटता हुआ, दु:खकथन के साथ राजा चिल्लाता है। लड़ती हुईं दोनों छिपकलियों के शरीर कट गये, उनके शरीर के मध्य से रक्त की बूँद गिरी, उससे अरविन्द आश्वस्त हुआ। रक्तकण ऐसा शीतल लगा जैसे पूर्णचन्द्र हो। यह देखकर उसने अपने पुत्र हरिश्चन्द्र को आदेश दिया- ''यदि मैं रक्त-सरोवर में जलक्रीड़ा करता हूँ तो हे पुत्र! मैं निश्चित रूप से नहीं मरता हूँ। अनुचरों के हाथों और सिररूपी घटकों के द्वारा लाये गये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खरगोश, मेंढ़ा, महिष और हरिणों के खून से गड्ढा खोदकर इस प्रकार भर दो कि जिससे मैं कल उसमें स्नान कर सकूँ।''

घत्ता—हिंसा-वचन और विधि सुनकर कुरुविन्द पिता को हाथ जोड़कर चला गया। सवेरे उसने बावड़ी बनवायी और कृत्रिम रक्त से भर दी॥ २३॥

२४

सन्तुष्ट होकर राजा उसमें घुसा। स्नान करते हुए उसने जान लिया कि यह रक्त नहीं निश्चित रूप से लाक्षारस है। मायावी इस पुत्र को मैं मारता हूँ। उसके मन में पाप की धूल प्रवेश कर गयी। उसने अपनी भीषण छुरी निकाल ली, मानो गज के प्रति बूढ़ा गज विरुद्ध हो उठा हो। उसके पीछे दौड़ता हुआ, गिरिराज की तरह ऊँचा वह राजा फिसल कर गिर पड़ा, और अपने ही हाथ की छुरी से अंग कट जाने के कारण मरकर नरक गया। सुधी के शोक से भग्न बन्धुवर्ग में हा-हाकार मच गया। और भी तुम अपने वंश के चिह्न को सुनो। जो मानो रूप में स्वयं कामदेव था, ऐसा बहुत पहले दण्डक नाम का शत्रुओं को दण्डित करनेवाला, दण्ड धारण करनेवाला राजा था। उसका अन्याय से रहित पुत्र मणिमाली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपने कुलरूपी आकाश का सूर्य था। हे देव, वह (दण्डक राजा) लम्बे समय तक धनराशि के ऊपर अपना हाथ फेरता हुआ—

घत्ता—पुत्र और स्त्री को अपने मन में धारण कर और आर्तध्यान से मरकर जिसमें विविध द्रव्यभार एकत्रित हैं ऐसे अपने भण्डार में अजगर हुआ॥ २४॥

२५

वह अपनी दाढ़ों और दाँतों से दलन करता, जो घर में प्रवेश करता उसे डँसता। जिसमें चन्द्रकान्तमणि के जल से रचित शिखरों के अग्रभाग से स्नान किया जाता है, ऐसे भवन में प्रवेश करते हुए अपने पुत्र मणिमालि को, अपने पूर्वजन्म का स्मरण करनेवाले विषधर ने देख लिया। उसने अपने फन गिराकर उसे अभयदान दिया। तब विद्याधर राजा के पुत्र मणिमालि ने सोचा कि यह मेरा कोई पूर्वजन्म का सम्बन्धी है, नहीं तो मदान्ध यह मुझे क्यों नहीं काटता! फिर उसने जाकर मुनि से पूछा। उन्होंने कहा— ''राजा दण्डक असमाधि से मरकर साँप हुआ है। क्या तुम अपने पिता को नहीं जानते?'' यह सुन प्रिय के स्नेह और करुणा से कम्पित मन राजपुत्र ने अपने घर आकर, कर्मों का नाश करनेवाला जिननाथ का धर्म उससे कहा। उसे समझकर साँप ने संन्यास ले लिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मरकर वह स्वर्ग गया, और उसका सर्पत्व चला गया। जिसने अपना पूर्वजन्म जान लिया है ऐसे उस देव ने उत्सव के साथ गुरुपूजा की। आकर मणिमाला का हार दिया। नगर और देश ने कथावतार जान लिया। वह हार आज भी तुम्हारे गले में है, मानो मेरुपर्वत के गले में तारासमूह हो।

घत्ता—यह सुनकर महाबल ने पुष्पदन्त के समान अन्धकार को दूर करनेवाले कान्तिमय हार को देखकर हँसते हुए मन्त्री का आलिंगन कर लिया॥ २५॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा रचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का वितण्डा पण्डित बुद्धि विखण्डन नाम का बीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ २०॥

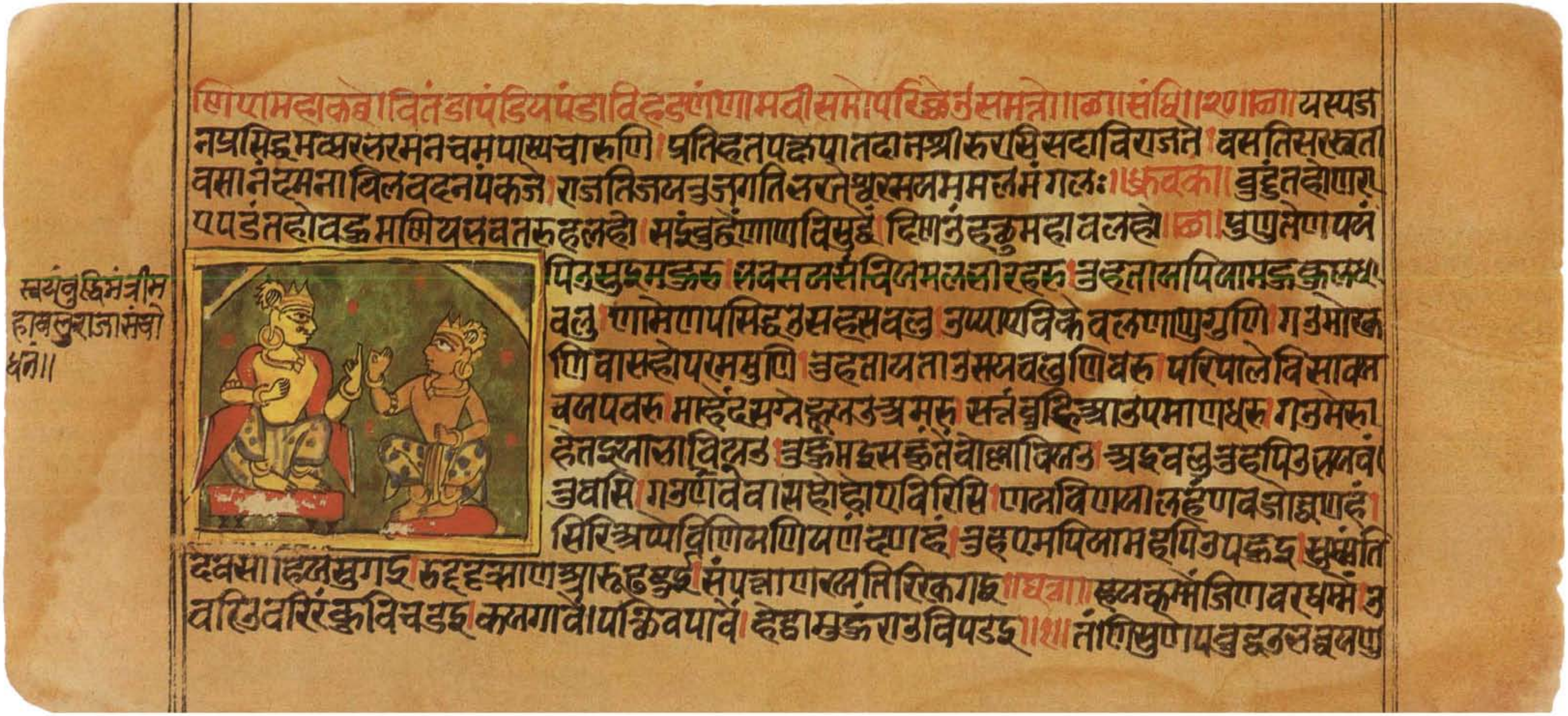

सन्धि २१

संसाररूपी वृक्ष के फल को सब कुछ माननेवाले राजा अरविन्द के रक्तकुण्ड में डूबने और नरक में जाने पर स्वयंबुद्धि ने महाबल के लिए अपना सहारा दिया।

१

फिर उसने कानों को मधुर लगनेवाली यह बात कही कि सैकड़ों जन्मों के मलभार को दूर करनेवाले कुलश्रेष्ठ तुम्हारे पिता के पितामह सहस्रबल नाम से प्रसिद्ध थे। वे परम गुणी मुनि बनकर तथा केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष को प्राप्त हुए। तुम्हारे पिता के पिता नृपश्रेष्ठ शतबल श्रावकव्रत-समूह धारणकर माहेन्द्र स्वर्ग में देव हुए। उनकी आयु सात सागरप्रमाण है। उस समय हम लोग सुमेरु पर्वत पर गये। वहाँ उन्होंने मेरे साथ तुमसे कहा—भयभीत तुम्हारा जितेन्द्रिय पिता मुनि होकर बनवास के लिए चला गया। हे देव, इस प्रकार न्याय और विनय के घर नवयौवन से युक्त, अपने-अपने पुत्रों को लक्ष्मी सौंपकर तुम्हारे पितामह-पिता प्रभृति लोग मोक्ष को सिद्ध करनेवाले सुने जाते हैं। (लेकिन तुम्हारे पिता) रौद्र-आर्त्तध्यान से आरूढ़ आभा के कारण नरक और तिर्यंचगति को प्राप्त हुए।

घत्ता—कर्मों को आहत करनेवाले जिनवर के धर्म से रंक भी ऊपर-ऊपर जाता है। हे नृप, जबकि गर्व करनेवाले पाप से राजा नरक में (अधोमुख) गिरता है॥ १॥

२

यह सुनकर वह भव्यजन प्रबुद्ध हो गया,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

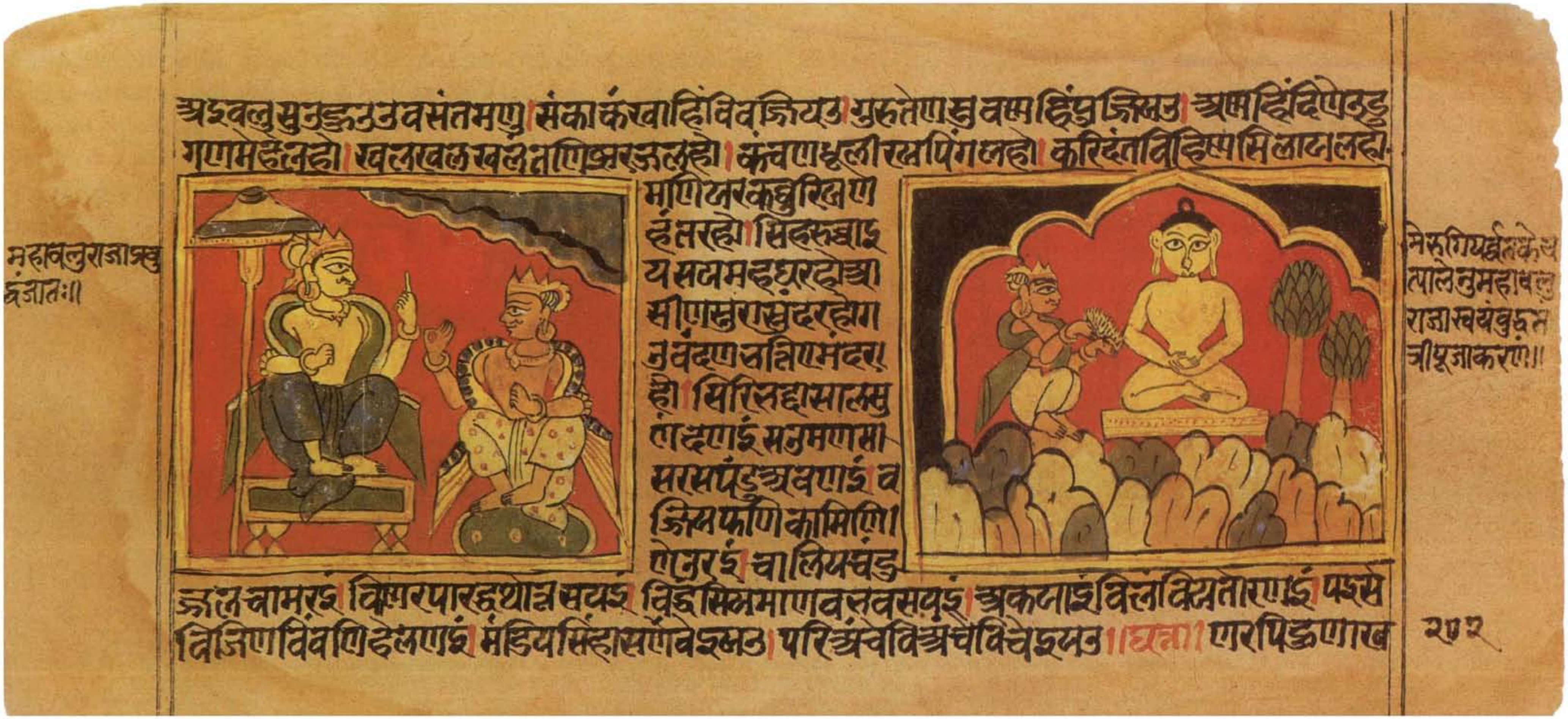

अतिबल का पुत्र उपशान्त मन हो गया। तब शंकाओं और आकांक्षाओं से रहित गुरु की उसने अच्छे शब्दों में पूजा की। एक दूसरे दिन, वह नक्षत्र-गण जिसकी मेखला है, जिसमें खल-खल करता हुआ निर्झरों का जल बह रहा है, जो स्वर्णधूलि रस से पीला है, जिसकी चट्टानें गजदन्तों से विदीर्ण हैं, जिसका आकाश मणियों की किरणों से चितकबरा हो गया है, जिसके शिखरों को इन्द्र-विमानों ने उठा रखा है, जो आसीन देवों और असुरों से सुन्दर है, ऐसे सुमेरु पर्वत की वन्दना-भक्ति के लिए गया। जिनमें श्रीभद्रसाल नन्दनवन हैं तथा सौमनस सरस पाण्डुकवन हैं, जिनमें नागराज की कामिनियों के नूपुरों का स्वर हो रहा है, जिनमें चन्द्रमा के समान उज्ज्वल चमर ढोरे जा रहे हैं, किन्नरों के द्वारा सैकड़ों स्तोत्र प्रारम्भ किये जा रहे हैं, जो मनुष्यों के जन्म-जन्मांतरों को नष्ट करनेवाले हैं, जो अकृत्रिम हैं, जिनमें तोरण लटके हुए हैं, ऐसे जिनप्रतिमाओं के मन्दिरों में प्रवेश कर उसने सिंहासनों और वेदियों को अलंकृत किया तथा चैत्य (प्रतिमा) की परिक्रमा और पूजा की।

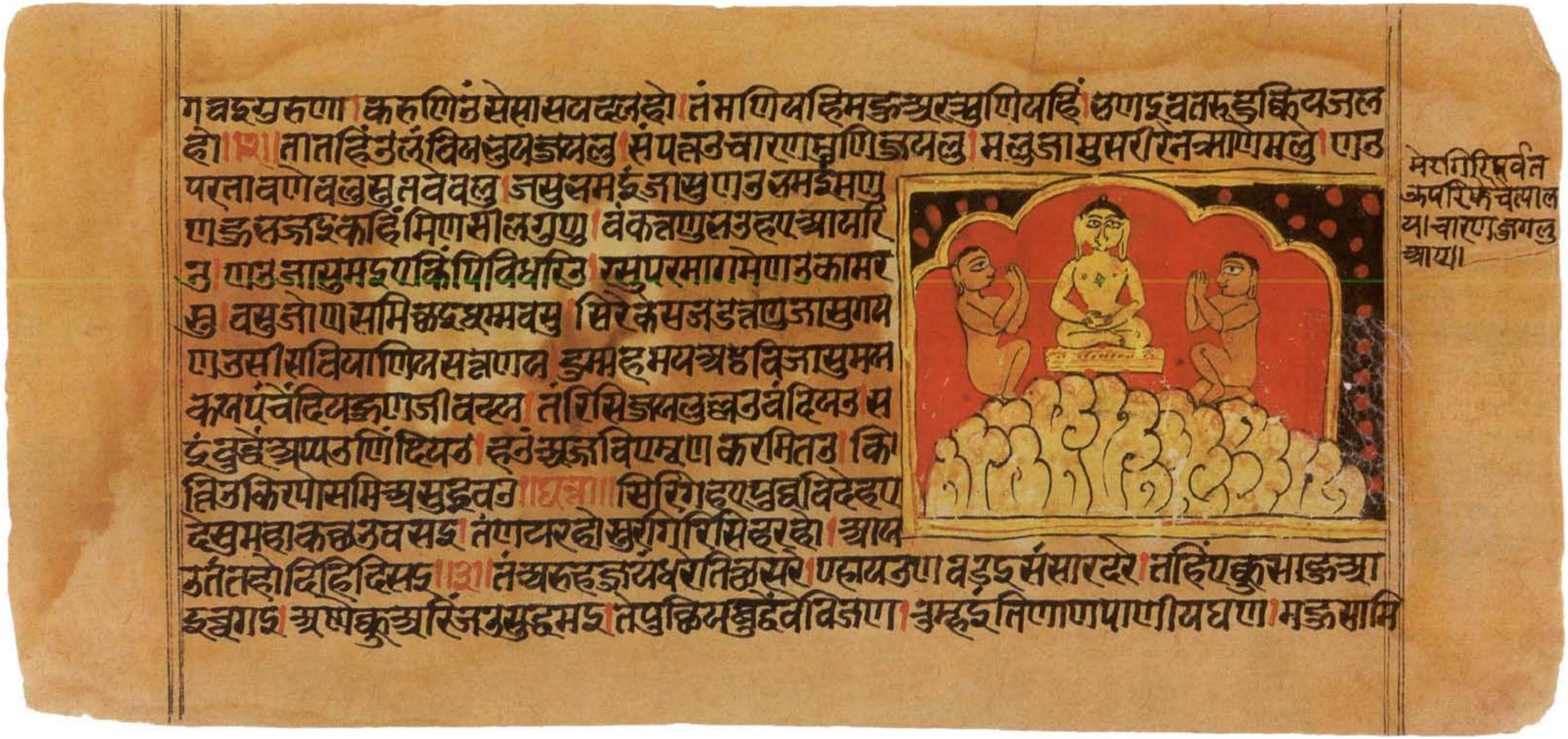

घत्ता—नरश्रेष्ठ, विद्याधर राजाओं के गुरु ने निर्माल्य का कमल अपने हाथ में ले लिया, जो मानो सुन्दर मधुकर ध्वनियों से कह रहा था कि पापरूपी जल से तर॥ २॥

३

उस अवसर पर अपने दोनों हाथ उठाये हुए चारणयुगल मुनि वहाँ आये। उनके शरीर पर मल था, परन्तु उनके ध्यान में मल नहीं था। दूसरों को सताने के लिए उनके पास बल नहीं था, उनके सुतप में बल था। जिनका यश भ्रमण करता था, जिनका मन भ्रमण नहीं करता था। आकाश भग्न होता था, उनका शीलगुण नष्ट नहीं होता था। उनकी भौंहों में टेढ़ापन दिखाई देता था, उनकी मति में कहीं भी वक्रता नहीं थी। उन्हें परमागम में रस आता था, उनमें कामरस नहीं था। वे धर्म के वशीभूत थे, वे धन नहीं चाहते थे। जिनके सिर में बालों की जड़ता जा चुकी थी, परन्तु सात नयों को जाननेवाला उनका मस्तिष्क जड़ता को प्राप्त नहीं हुआ था। जिनके आठों दुर्मद नष्ट हो चुके थे, परन्तु उन्होंने पाँच इन्द्रियों पर कभी दया नहीं की। ऐसे उन दोनों चारण मुनियों की उसने वन्दना की। स्वयंबुद्धि अपनी निन्दा करने लगा—मैं आज भी इस प्रकार तप नहीं कर रहा हूँ। मैं अपवित्रता का कितना पोषण कर रहा हूँ!

घत्ता—लक्ष्मी के घर पूर्व विदेह में महाकच्छप नाम का देश है। सुमेरु पर्वत के समान शिखरवाले उस नगर से आया हुआ वह चारणयुगल मुनि उसे समझाता है॥ ३॥

४

जो युगन्धर अर्हन्त के तीर्थरूपी सरोवर में स्नान कर लेता है, वह संसार की ज्वाला में नहीं पड़ता। उस युगल में एक मुनि का नाम आदित्यगति था और दूसरे का शुद्धमति अरिंजय। स्वयंबुद्धि ने उन दोनों से पूछा कि आप लोग तीन ज्ञानरूपी जलों के मेघ हैं, मेरे स्वामी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

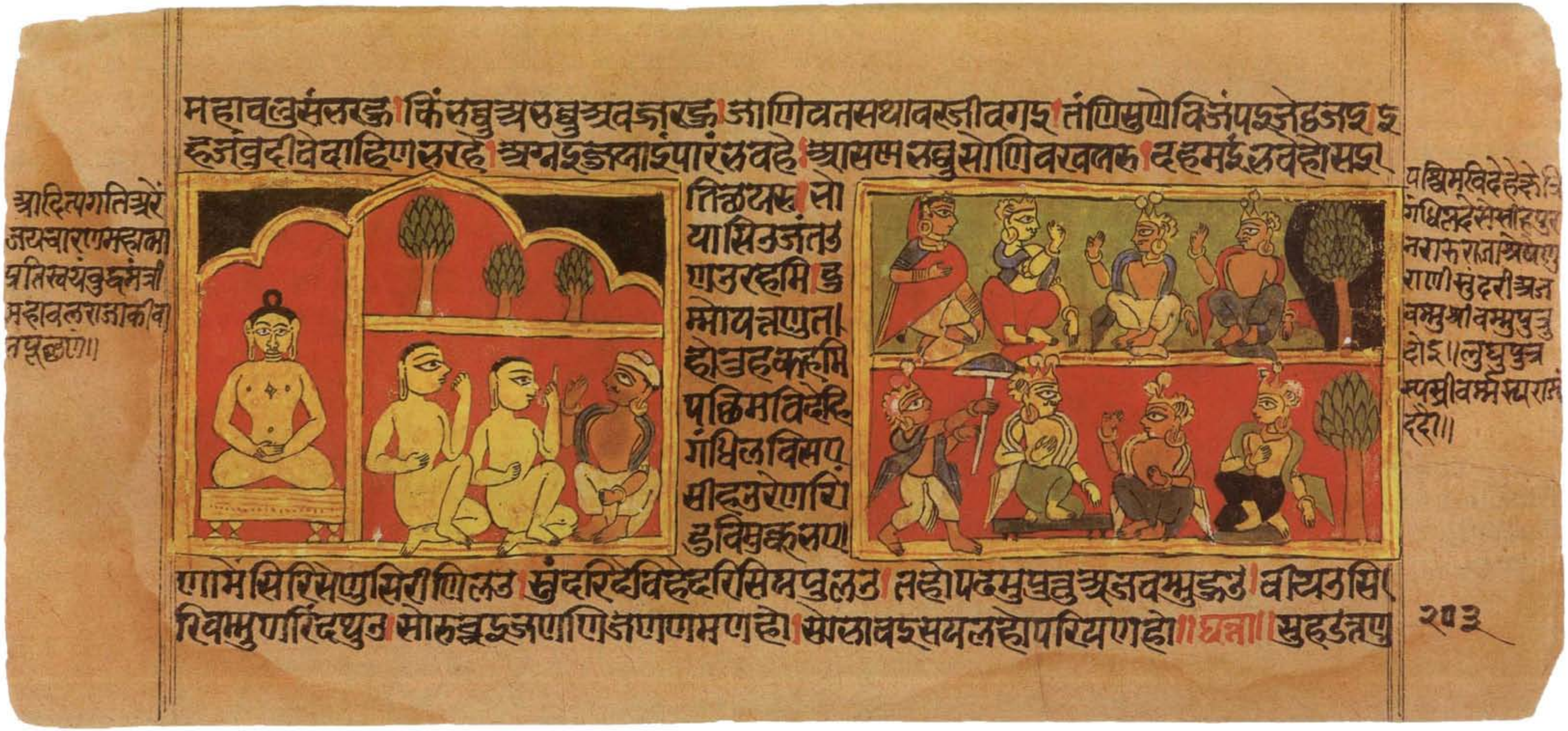

महाबल के बारे में बताइए कि वह भव्य है या अभव्य? यह सुनकर त्रस और स्थावर जीवों की गति को जाननेवाले उनमें से जेठे मुनि कहते हैं—''इस जम्बूद्वीप के दक्षिण भारत में आगे प्रथम कर्मभूमि का प्रवेश होने पर वह आसन्न भव्य विद्याधर राजा दसवें भव में तीर्थंकर होगा। उसका जैसा भोगाशय है उसे छिपाऊँगा नहीं, उसका दुर्मोदपन तुम्हें बताऊँगा। पश्चिम विदेह के गन्धिल्ल देश में भय से रहित सिंहपुर में श्री का आश्रय श्रीषेण नाम का राजा था जो अपनी पत्नी सुन्दरीदेवी को पुलक उत्पन्न करता था। उसका पहला पुत्र जयवर्मा हुआ और दूसरा श्रीवर्मा जो मनुष्यों के द्वारा संस्तुत था। वह अपने माता-पिता के मन को अच्छा लगता और समस्त परिजन उसे चाहते।

घत्ता—सुभटत्व और बुद्धि के अशेष बुधपन को समुद्र के पानी में डाल दो। गुणगण को क्या माना जाता है, और सज्जन का वर्णन किया जाता है? संसार में पुण्य ही भला होता है ॥ ४ ॥

५

राज्य में रति छोड़ते हुए व्रत लेते और परमगति प्राप्त करते हुए राजा ने एक बात बहुत बुरी की—अपने छोटे बेटे को राज्य दे दिया। तब जयवर्मा ने अपने मन में विचार किया कि दैव के नियंत्रण को कौन ठुकरा सकता है! दैवहीन का सब कुछ चंचल होता है। दैवहीन के कार्य में सारा संसार ठंडा होता है, दैवहीन के प्रणाम करने पर भी कौन गिनता है, निर्दैव का कहा हुआ कौन सुनता है, दैवहीन के लिए भरा हुआ सरोवर सूख जाता है। भाग्यहीन के लिए भाई भी शत्रु हो जाता है, दैवहीन के लिए देवता भी वर नहीं देते। उसके रोग के प्रसार को दवाई भी नहीं रोकती। हाथ में आया हुआ सोना भी गिर जाता है। दैवहीन के घर और गृहिणी दोनों नष्ट हो जाते हैं। माता-पिता भी स्नेह नहीं करते। उद्यम करने के लिए वह अपना दमन करता है लेकिन क्या दैवहीन व्यक्ति के पास लक्ष्मी जाती है!

घत्ता—चाहे वह आकाश लाँघें चाहे पहाड़ की शरण ले, वह जो-जो करता है वह सब निष्फल जाता है। शरीर को नष्ट करनेवाले व्यवसाय से क्या? दैव ही सबसे बड़ा होता है ॥ ५ ॥

६

यह सोचता हुआ अपनी निन्दा करता हुआ, वैराग्य धारण करता हुआ कामदेव को नष्ट करता हुआ, पिता से कहता हुआ लक्ष्मी के स्वाद को नष्ट करता हुआ जो कामदेव से उत्पन्न है, सदैव सबका अभिलषणीय है, जो यश से निर्मल है, जो मुग्धा के द्वारा जीता गया है, दयालुओं को शान्त करता हुआ, तथा शमभाव से अपने यौवन को शान्त करते हुए वह वन के लिए चला गया। उस वन में जहाँ सुअरों के द्वारा अंकुर खाये जा रहे हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मेघ शिखरों से लगे हैं, जो स्वरों से आवाज कर रहा है, जो बड़े-बड़े बाँसों से युक्त हैं, जो लताओं और प्रियाल लताओं से सहित है, जो शबरियों के लिए प्रिय है, जिसमें अंकुर निकल रहे हैं, जिसमें बिचित्र अंकुरों का समूह है, जिसमें भ्रमर गन्ध का पान कर रहे है, जिसमें नागराजों का अधिवास है, जो मधु से आर्द्र है और दावानल से प्रज्वलित है, जहाँ पीलू वृक्ष बढ़ रहे हैं। पीलु (गज) गर्जना कर रहे हैं, जहाँ शीत-गर्मी होती है, जो तपस्वियों के लिए हितकारी है, जो पवित्र और प्रसन्न है, जहाँ आहारादि अनेक संज्ञाएँ नष्ट कर दी गयी हैं, जिसमें मृत्यु की आशा समाप्त हो चुकी है, जिसमें दिशाएँ खिली हुई हैं, जिसमें अवकाश शान्त है, और जिसकी दिशाओं में तपस्वी हैं।

घत्ता—सिंहों से अवस्थित उस कानन में कुकर्म को शान्त करनेवाले जयवर्मा ने पापों को नष्ट करनेवाले आदरणीय भट्टारक को इस प्रकार देखा जैसे वह मोक्ष के पथ हों॥ ६॥

७

जिसका तीर्थगमन अथवा कायोत्सर्ग, जिसका धर्म-कथन अथवा मौन। जिसका इन्द्रिय-युद्ध अथवा परम करुणा, जिसकी अर्हत्-चिन्ता अथवा शास्त्रशरण, जिसकी योगनिद्रा अथवा जागरण। जिसके लिए दुष्ट के द्वारा किया गया दुःख

अथवा तपश्चरण। जिसका धरती पर सोना, अथवा काठ या तृण पर। जो मन के मल के बिना शरीर का मल धारण करते हैं अथवा जिसका जिनेन्द्र के द्वारा कहा गया उपवास होता है, अथवा जिनके द्वारा शुद्ध आहार ग्रहण करते हैं ऐसे उन दुर्मद कामदेव का नाश करनेवाले स्वयंप्रभ को प्रणाम कर श्रीषेण के पुत्र के द्वारा चाहा गया अनगार धर्म स्वीकार कर लिया गया। शीघ्र ही उसने केशलोंच कर लिया। शीघ्र ही उसने इन्द्रियों के विकारों को रोक लिया। तब इतने में महीधर नाम का विद्याधर राजा परममुनि को प्रणाम करने के लिए आया।

घत्ता—जँपानों और विविध विमानों से आकाशतल छा गया। नव प्रव्रजित (नया संन्यास लेनेवाले) ने विस्मित होकर उसे बार-बार देखा॥ ७॥

८

उसने यह निदान बाँधा कि जिस कुल में इस प्रकार की ऋद्धि हो वहाँ मेरा जन्म हो। यदि मेरा मुनिधर्म का कुछ भी फल है तो शत्रुओं का नाश करनेवाला मेरा राज्य हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इतने में उसी क्षण एक काला साँप पहाड़ के विवर में से निकला और उसके हाथ में काट खाया। धाराओं में खून बह निकला, और उसका शरीर धरती पर लोटपोट हो गया। गुरु ने संसार के बन्धन को काट देनेवाले पाँच परम अक्षरोंवाला मन्त्र उसे सुनाया। विष ने उसके प्राणों की शक्ति नष्ट कर दी। और उसका जीव कुछ उपशम भाव धारण करता हुआ चला गया। और अलकापुर में राजा के घर रानी मनोहरा के उदर से उत्पन्न हुआ। वही यह महाबल है भोगरसवाला। अपने निदान के अधीन होने के कारण वह इसे नहीं छोड़ता।

घत्ता—मिथ्यात्व मन की कुटिलता और निदान के निबन्धन से यह विश्व सन्तप्त है और आपत्ति उठाता है वैसे ही जैसे बन्धन से वनगज-कुल॥८॥

९

नास्तिकतावादी दुर्मति सम्भिन्नमति महामति और स्वयंमति आदि मन्त्रियों ने भुजदण्डों से चाँपकर आत्मा को कीचड़ में डाल दिया था, आपने निकालकर पवित्र जल से नहला दिया है और उठाकर सिंहासन पर स्थापित कर दिया है। आज रात तुम्हारे स्वामी ने एक सपना देखा है, उसने पाप नष्ट कर दिया है। सोकर उठने के बाद कुछ भी नहीं बोलता। राजा चिन्ता से व्याकुल बैठा है। जो निमित्त देखा है वह किसी से नहीं कहता वह तुम्हारे आने की बाट देख रहा है। तुम शीघ्र ही राजा के घर जाओ, उसी प्रकार जिस प्रकार घूमता हुआ इन्दीवर के पास जाता है। यदि वह राजा स्वप्न नहीं कहता तब पहला सपना तुम्हीं कह देना। और लो उसकी क्षय नियति आ पहुँची अब वह केवल एक

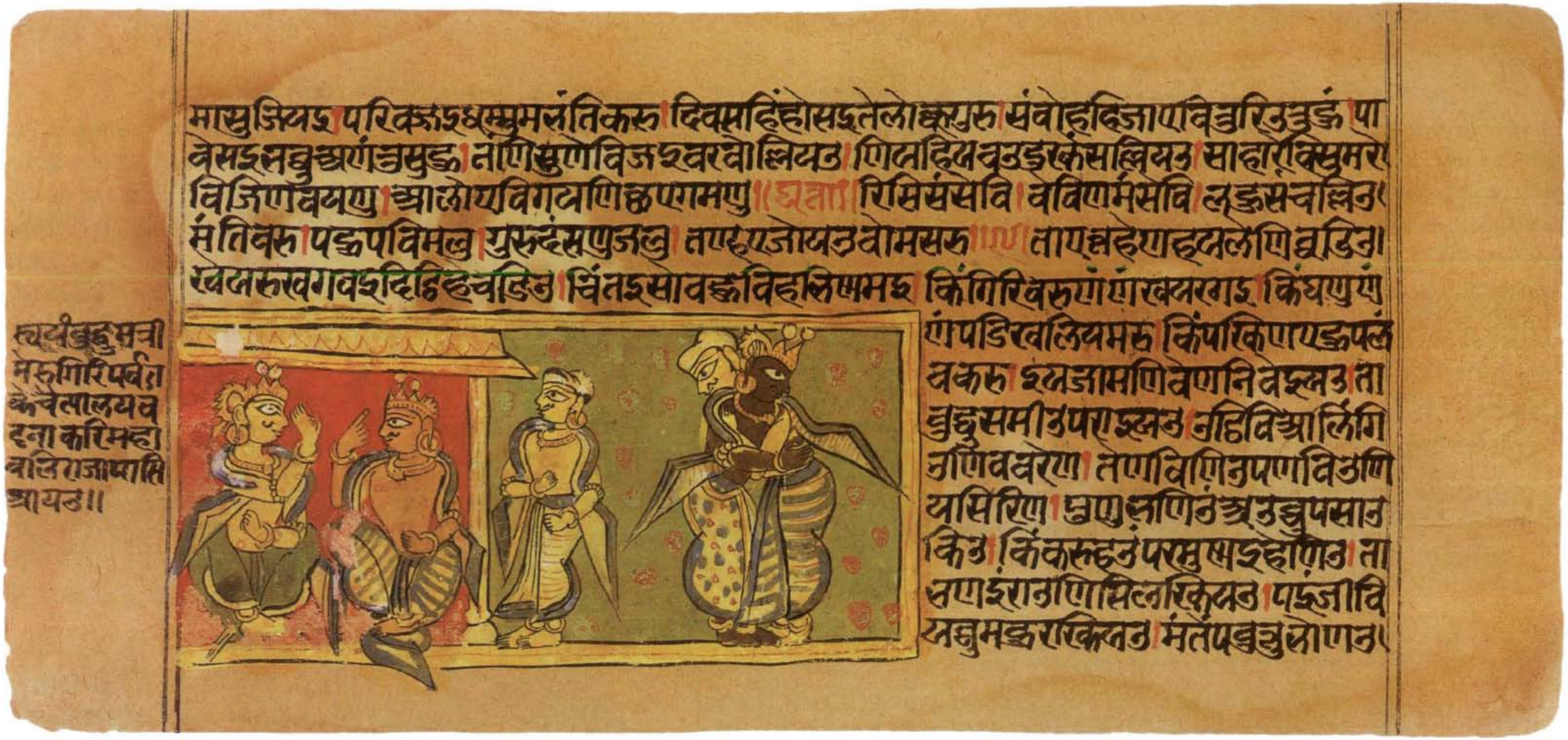

माह जीवित रहेगा। तुम भ्रान्ति मत करो। वह धर्म स्वीकार कर लेगा और कुछ ही दिनों में त्रिलोक-गुरु हो जायेगा। तुम शीघ्र जाकर उसे सम्बोधित करो। वह भव्य अनन्त सुख प्राप्त करेगा।'' मुनिवर के इन बोलों को सुनकर उसने दुःख से पीड़ित अपने हृदय को ढाढस देकर और जिन-वचन की यादकर जाने की इच्छा से आकाश को देखकर।

घत्ता—दोनों मुनियों की प्रशंसा कर और नमस्कार कर मन्त्रीवर शीघ्र चला। प्रभु, पवित्र गुरु दर्शन-जल की इच्छा करता है और आकाशरूपी सरोवर देखता है ॥ ९ ॥

१०

इतने में आकाश में आता हुआ विद्याधर राजा की दृष्टि में आया। भिन्नमति वह तरह-तरह से सोचता है? कि क्या है गिरिवर है? नहीं-नहीं यह आकाशतल गति है! क्या घन है? नहीं-नहीं प्रतिहतपवन है! क्या पक्षी है? नहीं नहीं, यह लम्बे हाथोंवाला है! इस प्रकार जबतक वह क्रम से जानता है तबतक पास आये हुए स्वयंबुद्ध को उसने पहचान लिया। नृपवर ने उठकर उसका आलिंगन किया, अपने सिर से राजा ने भी उसको प्रणाम किया और बोला— ''आपने अपूर्व प्रसाद किया, मुझ दास को आप इतनी उन्नति पर ले गये।'' तब राजा रात में देखा हुआ स्वप्न उसे बताता है कि तुम्हारे द्वारा मेरा जीवन बचाया गया है। मन्त्री बोला—''मैं छिपाकर नहीं रखूँगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

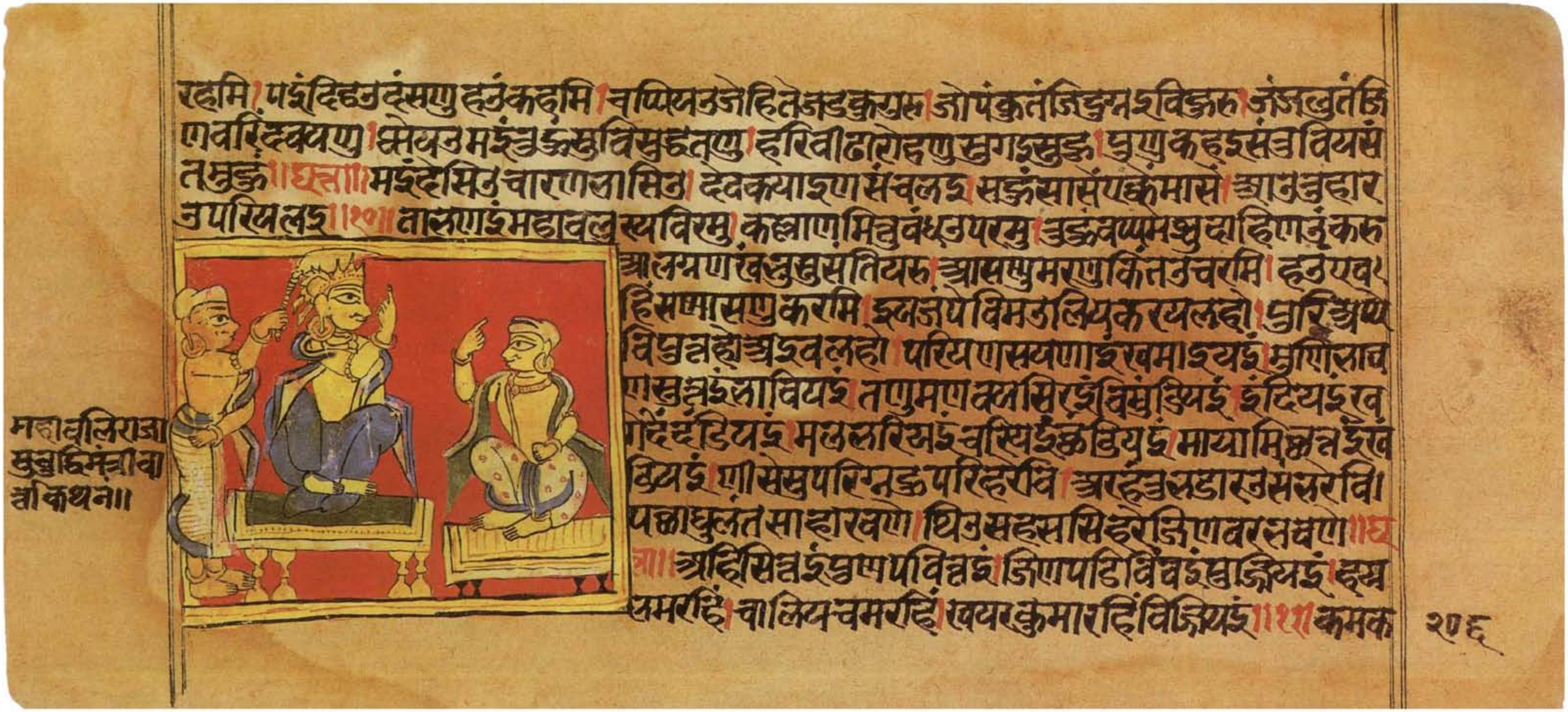

तुमने जो स्वप्न देखा है उसे मैं कहता हूँ। जिन्होंने तुम्हें चाँपा है वे खोटे गुरु हैं। जो कीचड़ है, वह दुर्गति का कष्ट है, जो जल है वह जिनवर का वचन है, सुविशुद्धतम तुम्हें मैंने धोया है और जो सिंहासन पर आरोहण है, वह सुगति का सुख है। फिर वह, विकसित मुख उससे कहता है?

घत्ता—मैं कहता हूँ कि चारणमुनि द्वारा कहा गया हे देव, कभी भी झूठ नहीं हो सकता। श्वास के साथ, एक माह में तुम्हारी आयु परिसमाप्त हो जायेगी॥ १०॥

११

तब, पाप से शान्त महाबल कहता है—'तुम मेरे कल्याणमित्र और परम बन्धु हो। तुम मेरे पिता और दाएँ हाथ हो, शान्ति करनेवाले आधार-स्तम्भ हो। मेरी मृत्यु निकट है, अब तप क्या करूँगा? मैं इस समय संन्यास से मरता हूँ। इस प्रकार कहकर हाथ जोड़े हुए अपने पुत्र अतिबल को राज्य देकर उसने परिजनों से क्षमा माँगी। मुनिभावना के सूत्रों की भावना की। शरीर-मन-वच और सिर को भी मूँड लिया, विद्याधर राजा ने इन्द्रियों को भी दण्डित किया। पाप से भरे आचरण छोड़ दिये, माया-मिथ्यात्वों को खण्डित किया। समस्त परिग्रह का परिहार कर आदरणीय अरहन्त की याद कर आन्दोलित सहकार वन में सहस्रशिखर जिनमन्दिर में जाकर स्थित हो गया।

घत्ता—शुद्ध पवित्र जिन-प्रतिमाओं की जिनपर भ्रमरों को उड़ाते हुए चमरों से विद्याधर कुमारियों के द्वारा हवा की जा रही है, उसने अभिषेक और पूजा की॥ ११॥

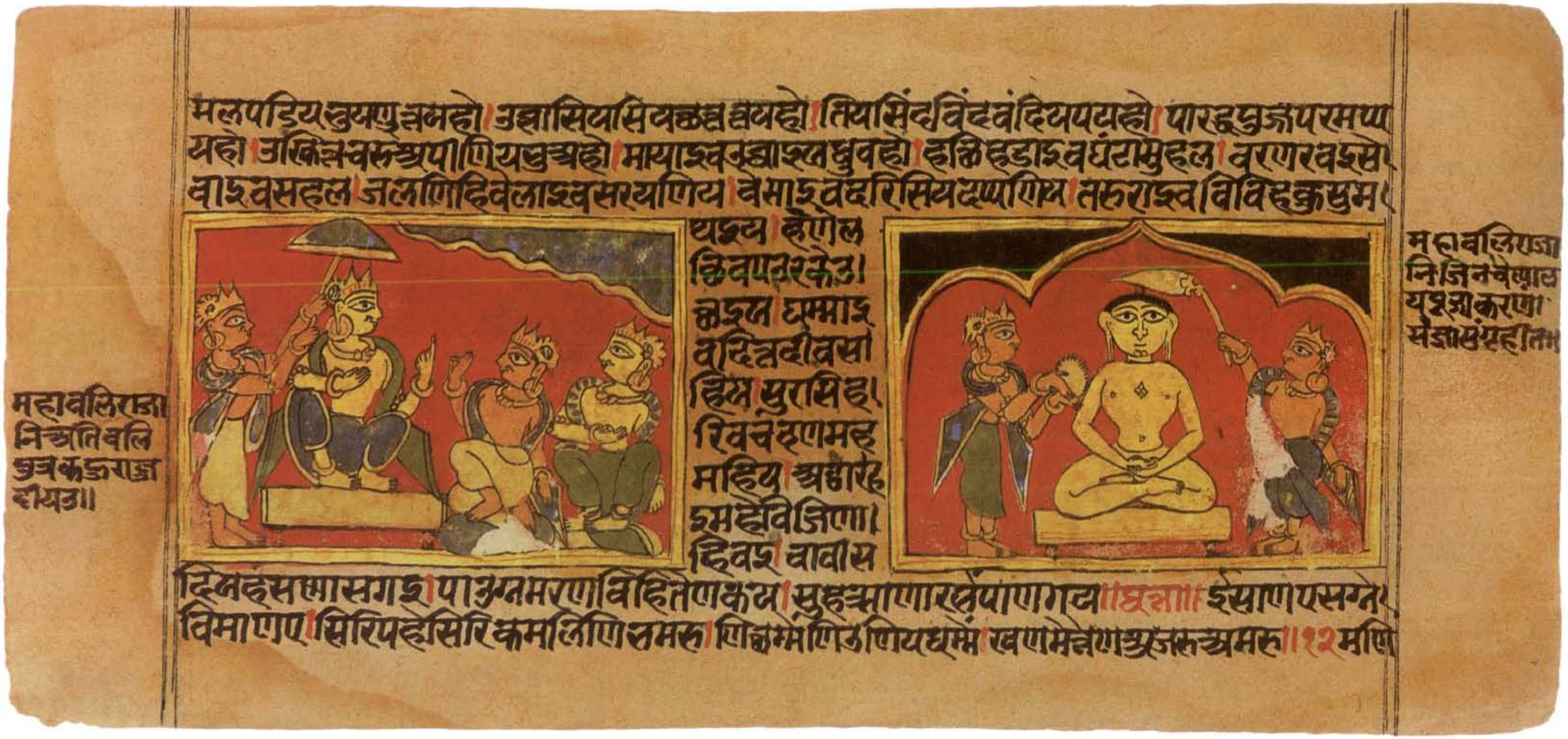

१२

जिनके चरण-कमलों में भुवनत्रय पड़ता है, जिनके ऊपर तीन छत्र स्थित हैं, जिनके चरण देवेन्द्र-समूह द्वारा वन्दित हैं, ऐसे परमपद में स्थित जिन की उसने पूजा प्रारम्भ की। उसने अपने स्थूल हाथों में नैवेद्य ले लिया, उसने माता के समान धूय (कन्या और धूप) ऊँची कर ली। जो पूजा, हस्तिघटा के समान घण्टाओं से मुखरित थी, श्रेष्ठ राजा की सेवा की तरह सफल, समुद्र की वेला के समान स्वरयुक्त, वेश्या के समान दर्पण दिखानेवाली, वृक्षपंक्ति की तरह विविध कुसुमों और फलों से स्थापित, आकाश की लक्ष्मी के समान प्रचुर केतुओं (पताकाओं और ग्रहों) से आच्छादित है, जो प्रथम नरक-भूमि की तरह दीप्त दीयों (द्वीपों, दीपों) से सहित है। जो देव-पर्वत की तरह चन्दन से सुवासित है। आठ दिन तक जिन की पूजा कर और बाईस दिन तक संन्यास गति से उसने संलेखना-मरणविधि की और शुभध्यान का आरम्भ करने पर उसके प्राण चले गये।

घत्ता—इस प्रकार मायारहित स्वधर्म के द्वारा श्रीरूपी कमलिनी का भ्रमर वह राजा एक क्षण में ईशान स्वर्ग के श्रीप्रभ विमान में युवा देव हो गया॥ १२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

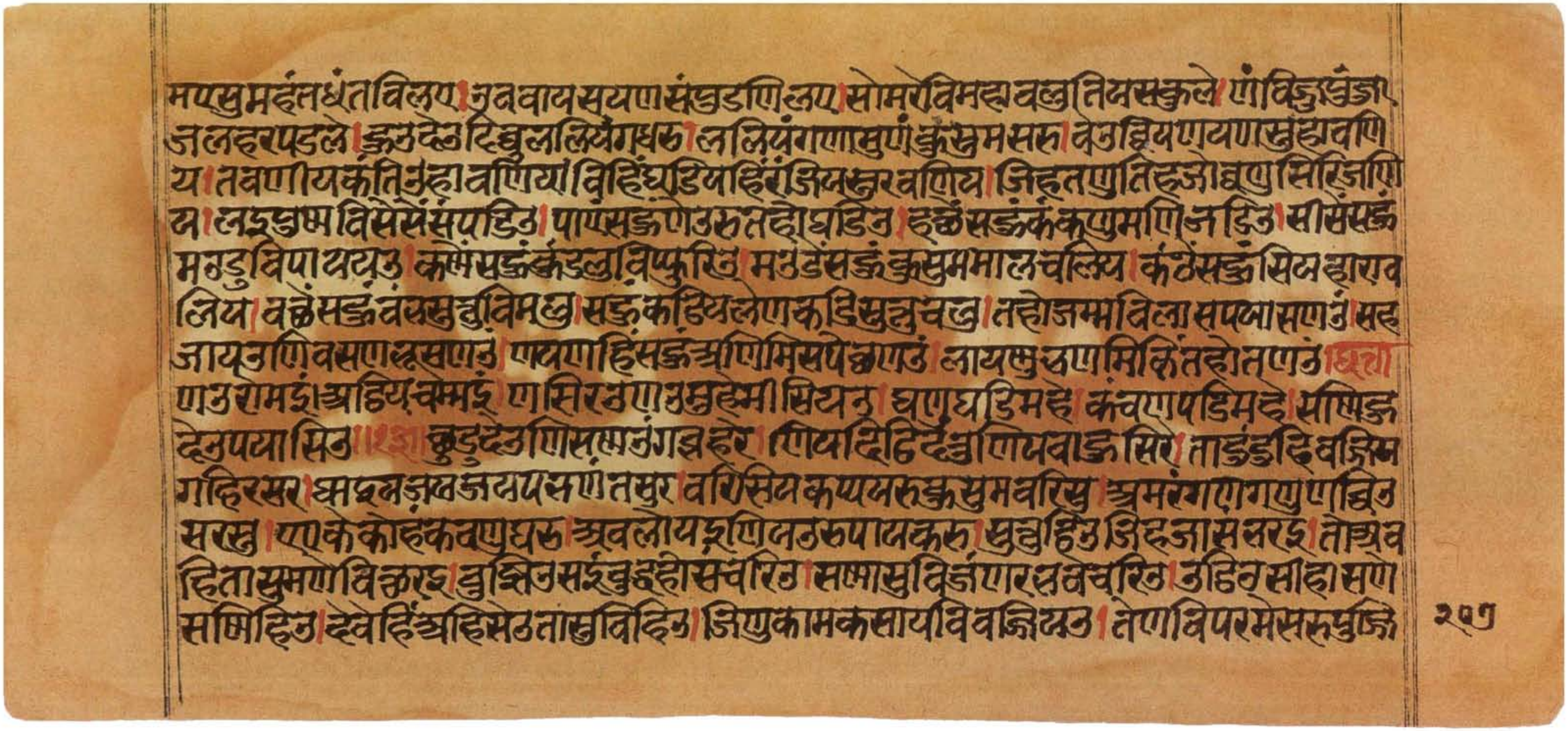

१३

वह महाबल मरकर अत्यन्त महान् और अन्धकार को नष्ट करनेवाले मणिमय संपुट निलय में देवकुल में उत्पन्न हुआ मानो मेघपटल में विद्युत्समूह उत्पन्न हुआ हो। वह दिव्य ललितांग देव हुआ, ललित अंग धारण करनेवाला मानो कामदेव हो। वैक्रियक नेत्रों से सुहावना, स्वर्ण की दीप्ति का तिरस्कार करनेवाला। दो घड़ी में ही उसने सुरवनिताओं को रंजित कर दिया, जैसा उसका शरीर था वैसी ही उसकी यौवनश्री उत्पन्न हुई थी। और पुण्य के कारण यह भी हुआ, पैरों के साथ उसके नूपुर भी गढ़ दिये गये, हाथ के साथ मणि विजड़ित कंगन और सिर के साथ मुकुट भी प्रकट हो गया। मुकुट के साथ कुसुममाला भी चढ़ गयी और कण्ठ के साथ श्वेत हारावली। वक्ष के साथ पवित्र ब्रह्मसूत्र। और कटितल के साथ चंचल कटिसूत्र। इस प्रकार उसके जन्मविलास को प्रकाशित करनेवाले वस्त्र और भूषण साथ-साथ उत्पन्न हुए। उसके नेत्रों के साथ अपलक दर्शन था, मैं उसके लावण्य का क्या वर्णन करूँ?

घत्ता—उसके न रोम थे न हड्डियाँ और चमड़ा, न तिल? और न मुँह में मूँछें। घनों से निर्मित कंचनप्रतिमा के समान उसकी देह प्रकाशित थी॥ १३॥

१४

शीघ्र ही वह देव अपने बाहुओं और सिर पर दृष्टि डालता हुआ गर्भगृह में बैठ गया। तब गम्भीर स्वर में दुन्दुभि बज उठी। और देवता 'जय-जय' शब्द के साथ दौड़े। कल्पवृक्षों ने कुसुमवृष्टि की, देवांगना समूह ने सरस नृत्य किया। ये कौन हैं, मैं कौन हूँ, यह कौन-सा घर है? वह अपने पैर, हाथ और उर देखता है? सन्तुष्ट होकर वह जैसे ही याद करता है कि उसके मन में अवधिज्ञान फैलने लगता है। उसने जान लिया कि उसने स्वयंबुद्धि के द्वारा प्रेरित संन्यास मनुष्य जन्म में किया था। उसे उठाकर सिंहासन पर स्थापित कर दिया गया, और देवों ने उसका अभिषेक किया। उसने भी काम और कषायों से रहित परमेश्वर जिन की पूजा की।

उर से अपने पीन स्तनों को प्रेरित करनेवाली चालीस सौ अप्सराएँ उसके पास थीं। नक्षत्रों की कान्ति के समान नखोंवाली महादेवी स्वयंप्रभा और कनकप्रभा थीं। पूर्वभव में शुद्धव्रतों का पालन करनेवाली कनकलता, सुभाषिणी और विद्युल्लता। वह इनके साथ सुख से वहाँ रहता है, और एक पक्ष में साँस लेता है।

घत्ता—शुभस्वादवाला श्रेष्ठ एक सागर की श्रेष्ठ आयुवाला। एक हजार वर्ष बीतने पर एक बार खाता है और जीवित रहता है॥ १४॥

१५

वह सात हाथ ऊँचा। शुभ करनेवाला वह किसके द्वारा नहीं चाहा गया।? उसकी एक पल्य आयुवाली पत्नी है जो बेल के समान पीन स्तनोंवाली है, जो बहुत समय के बाद उसे मिली, एक और स्वयंप्रभा अवतरित हुई। कामदेव ने उसके ओठों में रस, दृष्टि की श्वेतता में अपना यश, उसके नाभिदेश में अपनी गम्भीरता, उसकी दोनों भौंहों में कुटिलता, स्तनयुगलों में कठिनता, इस प्रकार अपने को स्थापित कर लिया। जिसमें विद्याधर क्रीड़ा करते हैं, ऐसी मन्दिर की गुफाओं, कुण्डलगिरि के विवर में, उस ललितांग देव के रतिक्रीड़ा और शारीरिक भोग में दिन बीत गये।

घत्ता—गौतम गणधर कहते हैं कि हे श्रेणिक महानृप, सुनो पुराने ऋषियों द्वारा कहे गये पुराण को बहुत समय बीत जाने पर, पुष्पदन्त तीर्थंकर की गति याद आती है॥ १५॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुण-अलंकारों से युक्त महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का महासंन्यास मरण और ललितांग-उत्पत्ति नाम का इक्कीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ २१॥

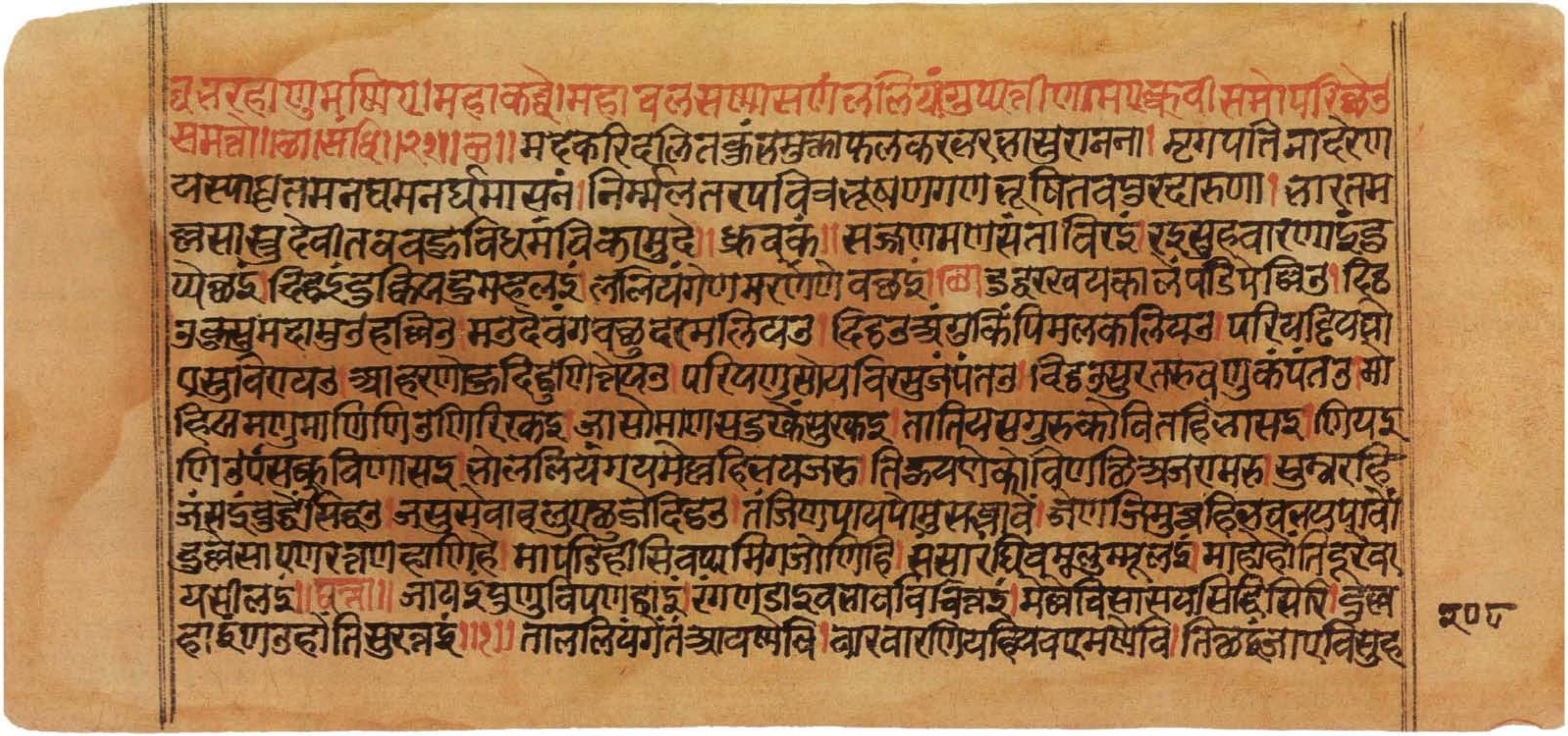

सन्धि २२

सज्जनों के मन को सन्ताप देनेवाले, रतिसुख का निवारण करनेवाले दुर्दर्शनीय, पापरूपी वृक्ष के फलों, मरणरूपी चिह्नों को ललितांग ने देखे।

१

दुर्धर क्षयकाल से आहत, मुरझायी हुई माला उसने देखी। कोमल देवांग वस्त्र कुछ मैले हो गये, उसका शरीर मल से काला हो गया। उसका भोगों में वैराग्य बढ़ गया। आभरणों का समूह निस्तेज हो गया। शोक से खिन्न रोता हुआ परिजन और काँपते हुए कल्पवृक्ष उसे दिखाई दिये। मोहित मन वह जैसे ही मानिनी को देखता है वह मानसिक दु:ख से सूखने लगता है। उस अवसर पर कोई देवगुरु उससे कहता है—''नियति के नियोग से इन्द्र भी नाश को प्राप्त होता है। हे ललितांग देव, भयज्वर छोड़ दो। त्रिभुवन में अजर और अमर कोई नहीं है। जैसा कि स्वयंबुद्ध ने कहा था, यहाँ भी जिसका सेवाफल दिखाई देता है, उन जिनचरणों को सद्भाव से याद करो जिससे संसार में किये गये पाप से मुक्त हो सको। हे सुभट, खोटी लेश्या से मनुष्यत्व की हानि करनेवाली पशु योनि में मत पड़ो। संसाररूपी वृक्ष की जड़ों को नष्ट करनेवाले व्रत और शील तुमसे दूर न हों।

घत्ता—भाव की विचित्रताएँ रंगनट की तरह उत्पन्न होती हैं और फिर नष्ट हो जाती हैं, शाश्वत मोक्षलक्ष्मी को छोड़कर सुरति चेतनाएँ (कृतिभावनाएँ) दुर्लभ नहीं होतीं (अर्थात् उन्हें पाना आसान है)॥ १॥

२

ललितांग उन शब्दों को सुनकर और बार-बार अपने मन में मानकर तथा तीर्थों में जाकर शुभ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीर्थंकर और परमशुभ करनेवाले चरणों की चम्पक पुष्पों से, कुवलय (पृथ्वीमण्डल) का उद्धार करनेवाले की कुवलय पुष्पों से, शुभ के कारण और कुन्द के समान दाँतवाले की कुन्द पुष्पों से, कामदेव से दूर रहनेवाले की सिन्दूर से, कलत्र की आशा का नाश करनेवाले की मन्दार पुष्पों से, स्वाधीन और शरीर को जीतनेवाले की वासन्ती पुष्पों (अतिमुक्तक) से, मुनिसमूह का परिग्रह करनेवाले की जुही पुष्पों से; जो तीनों लोकों में तिलक (श्रेष्ठ) समझे जाते हैं, और जिनका मेरु पर अभिषेक किया जाता है, उनका तिलक पुष्पों से, बन्ध का नाश करनेवाले का बन्धूक पुष्पों से, अशरीरग्राही केवलज्ञानवाले का वकुल पुष्पों से, शीलरूपी सुसलिलवाले का कपूरों से, आक्रन्दन को शाश्वतरूप से शान्त करनेवाले का चन्दनों से, निधिघटों को दिखानेवाले का धूपघटों से, त्रैलोक्यदीपक का दीपकों से, लक्ष्मीरूपी लता के वृक्ष का मालती पुष्पों से, उसने पवित्र अर्हंत जिन की पूजा की। और अच्युत कल्प जिनालय में जाकर चैत्यवृक्ष के नीचे यतिवर का ध्यान कर, ललितांग ने एक क्षण में अपने प्राण छोड़ दिये। पुण्य के नष्ट होने से उसका शरीर विलीन हो गया।

घत्ता—जम्बूद्वीप का अलंकार मनुष्य की जननी, चिन्तित शुभ को प्रदान करनेवाली, जनभूमि पुष्कलावती नाम की नगरी सुमेरुपर्वत के पूर्व विदेह में है॥ २॥

३

उसमें क्रूर शत्रुसमूह को नष्ट करनेवाला उत्पलखेट नाम का नगर है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जहाँ शाखाओं का उद्धरण केवल नन्दनवन में है, आनन्द से रहनेवाले वहाँ के लोगों में उद्धार की आवश्यकता नहीं है। जहाँ लोग विनय से नम्रमुख रहते हैं, वहाँ केवल ऊँट ही अपना मुख ऊँचा रखनेवाला है। जहाँ हाथ में कंगन और पैरों में नुपूर बाँधा जाता है, वहाँ और कोई दु:ख से व्याकुल नहीं है। जहाँ तेली के घर में बिना स्नेह के खल देखे जाते हैं, और सब लोग सुजन सस्नेही हैं। जहाँ व्याधि चित्रकारों द्वारा दीवालों पर लिखी जाती है, नरसमूह के द्वारा शरीर में कोई बीमारी नहीं देखी जाती। जहाँ व्याकरण में ही सर-सन्धान (स्वर सन्धि) देखा जाता है शत्रु के लिए भयंकर राजयुद्ध में सरसन्धान नहीं देखा जाता। जहाँ हरि (अश्व) हयवर है, वहाँ नारीगण हतवर नहीं हैं। जहाँ बाँस छिद्रसहित है, वहाँ के लोग छिद्र-सहित नहीं हैं। जहाँ कुनट में रस का क्षय है, बाजार मार्गों में रसक्षय नहीं है। जहाँ तलवारों का ही पानी अपेय है, वहाँ के सरोवरों और नदियों का पानी अपेय नहीं है। जहाँ अंजन नेत्रों में है, वहाँ के तपस्वियों में अंजन (पाप) नहीं है। जहाँ णायभंय (नागभंग-न्यायभंग) गारुड़ मन्त्र में हैं, धन के उपार्जन में जहाँ न्याय का भंग नहीं है। जहाँ संकर शिव है, वहाँ वर्णव्यवस्था में संकर नहीं है। जहाँ ग्वाल दोहक (दूध दुहनेवाले) हैं, वहाँ के अनुचर द्रोही नहीं हैं। जहाँ हाथी को ही मातंग कहा जाता है, वहाँ लोग माया को प्राप्त नहीं होते।

घत्ता—लोग सज्जन के साथ कलह नहीं करते, कोई भी अप्रिय नहीं बोलता। जहाँ प्रांगण-प्रांगण और वापिकाओं में कल-हंसों की गति का प्रसार देखा जाता है ॥ ३ ॥

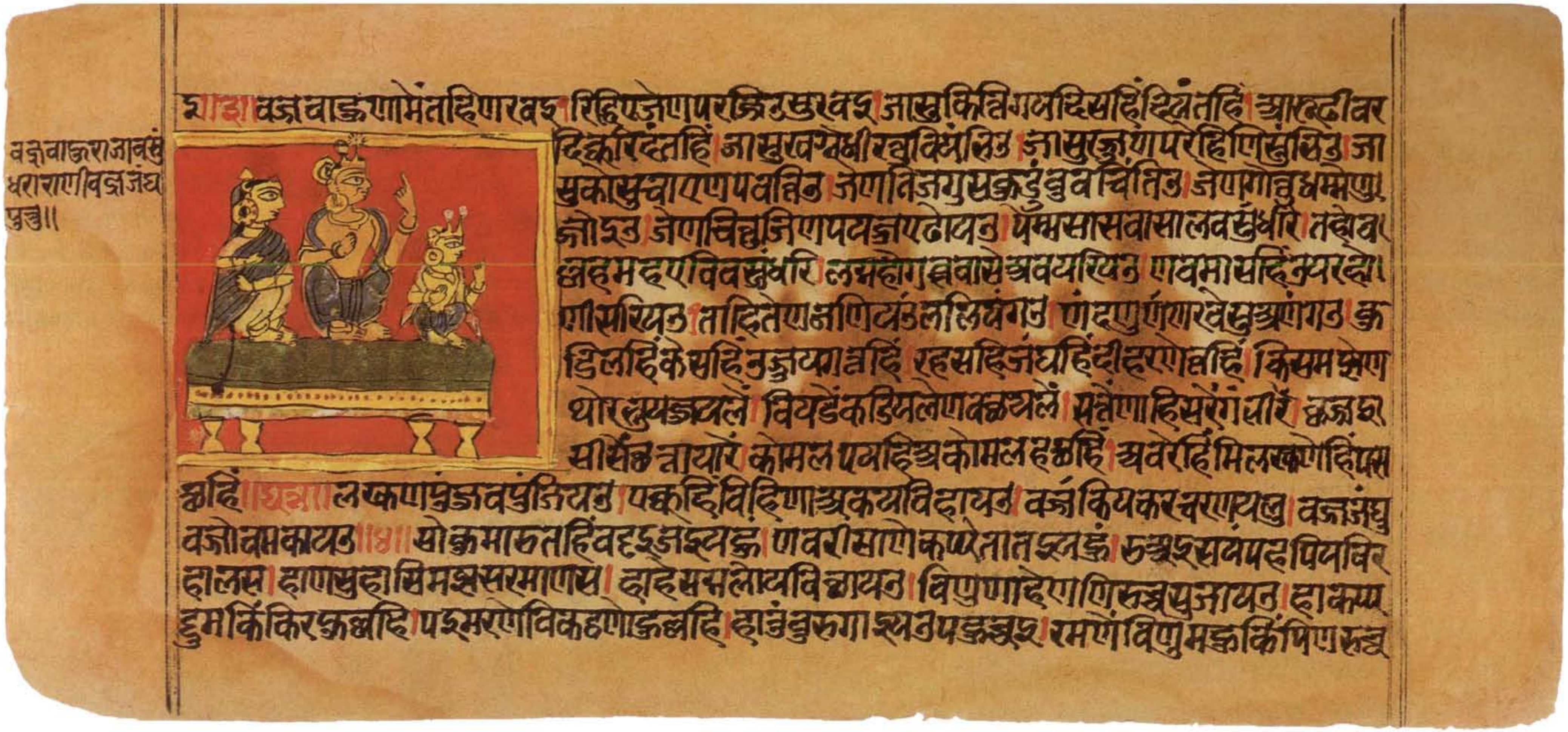

४

उसमें वज्रबाहु नाम का राजा है, जिसने वैभव में इन्द्र को मात दे दी है। जिसकी कीर्ति दसों दिगन्तों में फैल गयी है और श्रेष्ठ दिग्गजों पर आरूढ़ है, जिसकी तलवार से शत्रु का अन्त हो चुका है, जिसका राज्य शत्रु के द्वारा नष्ट नहीं किया जा सकता, जिसका कोश त्याग से पवित्र है। जिसने त्रिजग की अपने कुटुम्ब के समान चिन्ता की है, जिसने अपने कुल को धर्म से उद्योतित किया है, जिसने अपना चित्त जिन-चरण-युगल में लगाया है, जो उसकी वसुन्धरा नाम की देवी है, जो प्रेमरूपी धान्य के लिए वर्षायुक्त भूमि है। (वह ललितांग) स्वर्ग से उसके गर्भवास में अवतरित हुआ और नौ माह में उसके उदर से बाहर आया। उससे वज्रजंघ ने ललितांग को पुत्ररूप में जन्म दिया जो मानो मनुष्यरूप में कामदेव था। घुँघराले बालों से ऋजुक (सीधा-सरल) शरीर था। वेगशील जाँघोंवाला, दीर्घ नेत्रवाला था। क्षीण मध्यभाग, स्थूल भुजयुगल, विशाल कटितल और वक्ष:स्थल से नाभि शोभित था। गम्भीर स्वर, छत्र के आधारस्वरूप शिर, कोमल चरणों और परुष हाथों तथा दूसरे-दूसरे प्रशस्त लक्षणों से जो—

घत्ता—लक्षणों के समूह को बिना कोई विभाग किये विधाता ने एक जगह पुंजीभूत कर दिया था। वज्र से अंकित चरणकमलवाला वज्र-समान शरीर वह वज्रजंघ था॥ ४॥

५

जब वह कुमार वहाँ बढ़ने लगा, तभी उस केवल ईशान स्वर्ग में, प्रिय के विरह से पीड़ित स्वयंप्रभा विलाप करती है, मुझे मानसरोवर अच्छा नहीं लगता, हा! स्वर्गलोक फीका पड़ गया है, स्वामी के बिना मैं परवश हो गयी हूँ। हा कल्पवृक्ष! तुम क्यों फूलते हो, पति के मरने पर कष्ट मुझे छेदे डालता है। हा तुम्बरु! तुम्हारा गायन पर्याप्त हो चुका है, प्रिय के बिना मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ललितांग को मैं कहाँ देखूँ? हा, हे स्वामी! किस प्रकार कहाँ रहूँ? होनेवाली भवितव्यता को कौन टाल सकता है; यह कर्म देव से भी बलवान् है! मेरु के समान वर्णवाली, तपस्वी स्त्री के समान आसक्ति को अल्प करके वह सुन्दरी मन्दराचल गयी। सौमनस वन की पूर्वदिशा के जिन-मन्दिर में जिन-प्रतिमा को सिर पर धारणकर मर गयी। वहीं पूर्व-विदेह में कमलों और सरोबरों से युक्त सफेद घरोंवाली पुण्डरीकिणी नगरी है।

घत्ता—जहाँ गृहशिखर पर नृत्य करते हुए तथा नवजलकणों का आस्वाद करनेवाले मयूर ने गृहशिखरों के ऊपर लटकते हुए मेघों को चूम लिया॥५॥

६

जो रचना में सुन्दर है, जिसके प्रासाद आकाशतल को छूते हैं, जो मुनीन्द्रों के द्वारा सौम्य है, जिसमें जिनके द्वारा उपदेशित धर्म है, जो धन से समृद्ध और यश से प्रसिद्ध है, जो शास्त्रों से प्रबुद्ध और व्रतों से विशुद्ध है, जो सघन उद्यानों से युक्त है और विशाल बस्तीवाला है, जिसमें प्राकार (परकोटे) और दुर्ग हैं। जिसमें अनेक मार्ग हैं। जिसमें अनेक प्रकार के कई द्वार हैं। जो जनों से महार्थवती है और कृत्यों से कृतार्थ है, जो भय से विमुक्त और सदैव चोरों से रहित है उस नगरी में लक्ष्मी से अप्रमेय

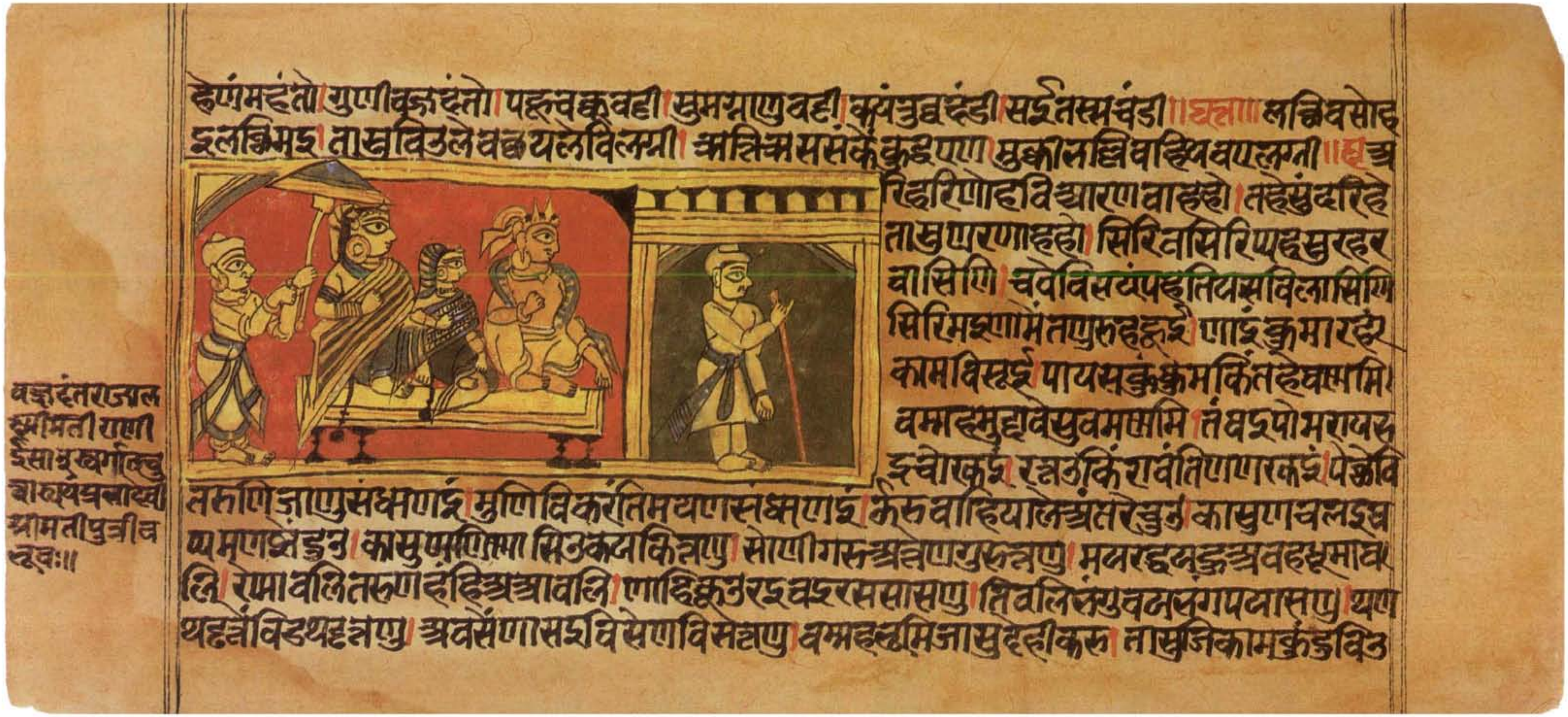

महान् से महान् गुणी वज्रदन्त नाम का चक्रवर्ती राजा है जो सन्मार्ग का अनुकरण करनेवाला है। कृतान्त के समान वह दण्ड धारण करता है और उसकी प्रिय पत्नी सती है।

घत्ता—लक्ष्मीवती वह लक्ष्मी के समान उसके विशाल वक्षस्थल पर लगी हुई शोभित है, मानो जैसे क्रुद्ध कामदेव के द्वारा मुक्त भल्ली के समान हृदय में जा लगी हो॥ ६॥

७

शत्रुरूपी हरिणसमूह को विदारण के लिए व्याधा के समान उस राजा का उस सुन्दरी से श्री के समान, श्रीप्रभ सुरविमान में निवास करनेवाली स्वयंप्रभदेव से विलास करनेवाली (स्वयंप्रभा) श्रीमती नाम की कन्या हुई, जो कुमारों के लिए कामसूची के समान थी। कुंकुम सहित उसके पैरों का क्या वर्णन करूँ, मैं उसे कामदेव की मुद्रा का अवतार मानता हूँ। पद्मराग मणियों की कान्ति की तरह चोखे और लाल उसके चरण क्या नक्षत्रों की तरह शोभित नहीं होते। उस तरुणी के घुटनों के जोड़ों को देखकर मुनि लोग भी कामदेव का सन्धान कर रहे हैं, उसके उररूपी अश्व-क्रीड़ा-स्थल के भीतर गिरी हुई किसकी बेचारी मनरूपी गेंद नहीं चलने लगती! उसकी करधनी की गुरुता को देखकर किसका गुरुत्व और यश नष्ट नहीं हुआ! उसकी हृदयावली और रोमावली युवकों के लिए कामदेव की अग्नि की धूम्रावली थी। उसका नाभिरूपी कूप रतिरस का शासन था। और त्रिवलिभंग उसकी उम्र के भंग का प्रकाशन था। उसके स्तनों की सघनता से विटों की सघनता (दुष्टता) अवश्य नष्ट होगी, विष से विष अवश्य नष्ट होता है। जिसका शरीर कामदेव की भूमि था, और उसका हाथ शुभ कामकुण्ड के रूप में स्थित था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—कोकिल के कण्ठ के समान उसके कण्ठ को देखकर कौन उत्कण्ठित नहीं हुआ। उस मुग्धा का मुखरस शुभ सुवर्ण की सिद्धि करनेवाला सिद्धरस के रूप में प्रतिष्ठित था॥ ७॥

८

अनेक रंगोंवाले नेत्रों से राग करनेवाला अनुरक्त विश्व उस समय एकरंग का हो गया। भौंहों की वक्रता से उसने किसकी धूर्तता और वक्रता का अपहरण नहीं किया! उसका केशपाश अंगोपांग-प्रदेशों के निकट आते हुए दूसरों के चित्तों के लिए पाश के समान था। जिसके रूप का बृहस्पति भी वर्णन नहीं कर सकता। नागराज भी जिसका वर्णन नहीं कर सकता। वह जब आँखें बन्द किये हुए, श्रीगृह में सातवीं भूमि पर, चन्द्र-किरणों से हिमकणों को ग्रहण करती हुई अलसाये अंगविलास को धारण करती हुई रात्रि में सोयी हुई थी कि मनहर उद्यान में यशोधर नामक जिनवर आये। देवसमूह कहीं भी नहीं समा सका। वीणा-वंश और मृदंगों के निनादों, नाना स्तोत्रवृत्तों की स्तुति शब्दों से भारी कोलाहल उठा। उससे कन्या का निद्राभार खुल गया।

घत्ता—वहाँ देवों को देखते हुए उसके जन्मावरण एक क्षण के लिए हट गये। स्वर्ग के जन्मान्तरों को याद कर उसके मन में ललितांग की लीलाएँ बैठ गयीं॥ ८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९

हे ललितांग देव! यह कहती हुई, अपना सिर पीटती हुई धरती पर गिर पड़ी। मूर्च्छित उसे पानी की धारा से सींचा गया। चंचल चमरों की हवा से आश्वस्त हुई। अत्यन्त दुबली वह निःश्वास लेती हुई उठी, प्रिय के वियोग की अनुभूति से खिन्न। कामदेव उसके आठों अंगों को जलाता है। डाला हुआ कष्टकर गीला वस्त्र जलता है, मलयपवन प्रलयानल जान पड़ता है, भूषण हाथ में ऐसा लगता है जैसे सन बँधा हुआ हो। जहाँ चित्त के सौ टुकड़े हो गये हों वहाँ शीतल शतदल से क्या किया जाये! स्नान शोकस्नान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के समान उसे अच्छा नहीं लगता, वस्त्र को वह व्यसन के समान समझती है, प्राणों के आहार की तरह वह आहार ग्रहण नहीं करती। नन्दनवन को वह प्रेतवन समझती है। फूल नेत्र की फुली के समान असुहावना लगता है, ताम्बूल भी बोल की तरह सन्तापदायक है। पुर यमपुर के समान और घर भी अरतिकर है। कोकिल का मधुर आलाप मानो विष है। गीत का स्वर ऐसा लगता है जैसे शत्रु के द्वारा मुक्त तीर हो। चन्दनादि का लेप स्वबल-घातक के समान धैर्य हरण करनेवाला था। चन्दन विरह की ज्वाला के लिए ईंधन था। सहेलियों ने जाकर राजा से निवेदन किया।

घत्ता—(अपनी पत्नी) लक्ष्मीवती के साथ आकर लम्बी बाँहोंवाले नरवरनाथ ने प्रियस्मरण से दु:खित मन कन्या को देखा॥ ९॥

१०

मुग्धा पूर्वजन्म के वर को याद करती है—क्या जानें कि वह सुर, नर या किन्नर है? इस प्रकार परिणामों की प्रवृत्ति का विचार कर पण्डिता धाय के लिए पुत्री समर्पित कर जब राजा अपने घर गया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

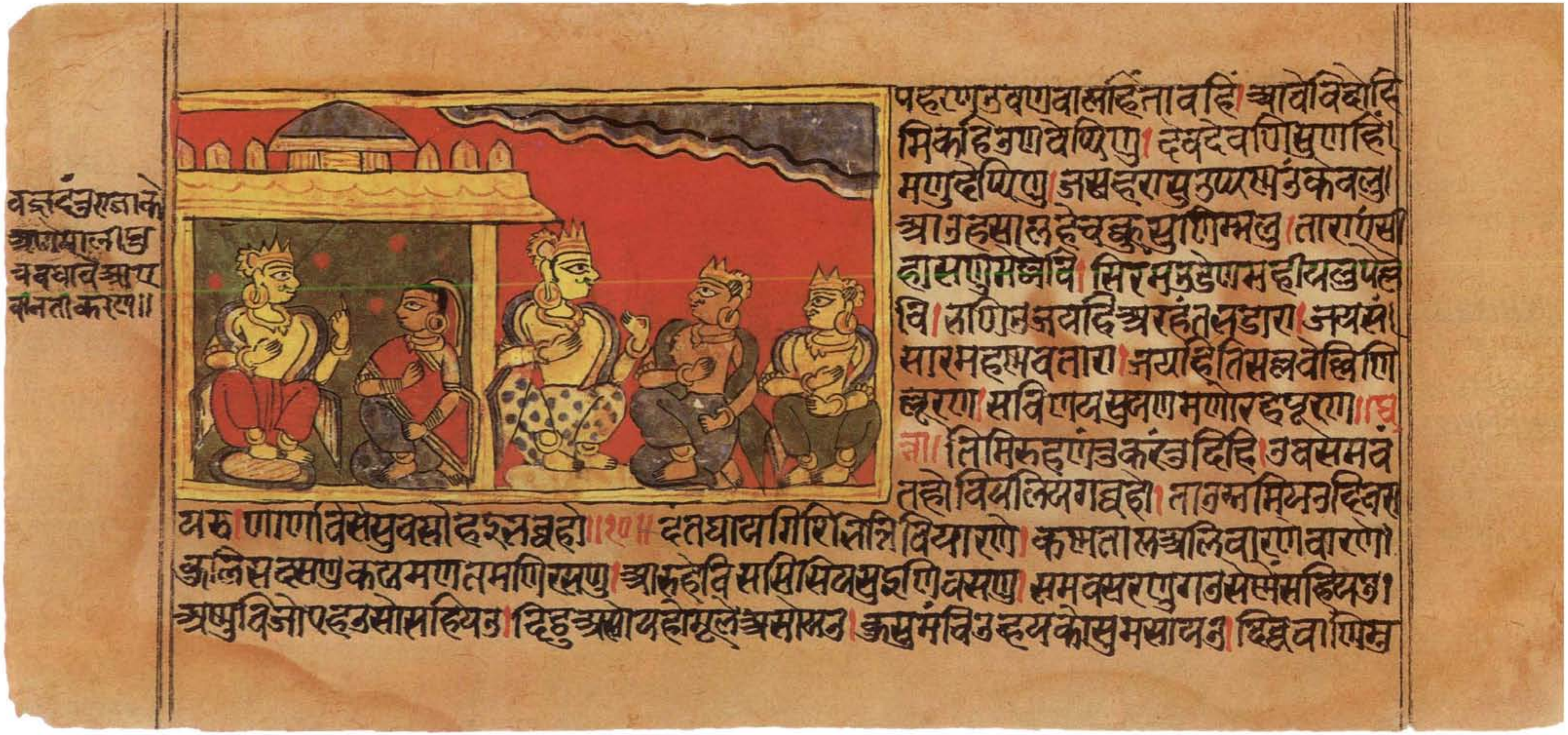

तो प्रहरण और उपवन के पालक वहाँ आये। दोनों ने प्रणाम कर राजा से निवेदन किया— "हे देव, ध्यान देकर सुनिए, यशोधर को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ है, और आयुधशाला में निर्बाध चक्ररत्न की प्राप्ति हुई है।" तब राजा सिंहासन छोड़कर सिरमुकुट से धरती छूकर बोला— "हे अरहन्त भट्टारक! आपकी जय हो, संसार समुद्र से पार लगानेवाले आपकी जय हो, त्रिशल्यों की लताओं को नष्ट करनेवाले आपकी जय हो, विनीत और सुजनों के मनोरथ पूरे करनेवाले।"

घत्ता—तब इतने में अन्धकार का नाश करता हुआ, उपशान्त और गर्व को विगलित करनेवालों के लिए भाग्य का विधान करता हुआ दिवसकर (सूर्य) उग आया जो भव्यों के लिए ज्ञान विशेष के समान शोभित है॥ १०॥

११

जिसने अपने दाँतों के आघात से गिरिभित्तियों को विदारण कर दिया है, और जो कानों के ताड़पत्रों से भ्रमरों को उड़ा रहा है ऐसे हाथी पर बैठकर वज्र के समान दाँतवाला, अपने मन के अन्धकार का निवारण करनेवाला, चन्द्रमा के समान श्वेत और निर्मल वस्त्र पहने हुए वह सेना के समवसरण के लिए गया। दूसरा भी यदि ऐसा है, तो वह आत्मा का हित करनेवाला है। अशोक उनको उसने अशोकवृक्ष के नीचे बैठे हुए देखा, कुसुमशायक (कामदेव) को नष्ट करनेवाले वह कुसुमों से अंचित, दिव्यवाणीवाले मुनि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्वाण के ईश्वर विकाररहित सिंहासन पर आसीन श्रेष्ठ। चलचामरों से युक्त, नित्य देवों से सेवनीय, भामण्डल के दीप्तिमण्डल से आलोकित, उनका दुन्दुभि का शब्द दुःखित शब्द का निवारण करनेवाला था। लोक में श्रेष्ठ और संसार का उद्धार करनेवाले। क्षतों को आश्रय देनेवाले तीन छत्रों से युक्त स्त्री रहित और त्रिकाल को स्वयं जाननेवाले। विश्व में वही ब्रह्मा-केशव और शिव है, जो नाम से तीर्थनाथ यशोधर है। उन अनिन्द्यदेव की उसने भाव से वन्दना की। बढ़ते हुए विशुद्ध भाव से राजा को अवधिज्ञान उत्पन्न हो गया। उसको समस्त रूपी द्रव्यों का ज्ञान हो गया।

घत्ता—कनक रस से विद्ध होकर जिस प्रकार लोहा स्वर्णरूप में बदल जाता है, उसी प्रकार जिनेन्द्र भाव से ध्यान करनेवाले भव्य जीव को ज्ञानभाव प्राप्त हो जाता है॥ ११॥

१२

राजा, अपने प्रभु की वन्दना कर घर आया और अपनी कन्या को गोद में बैठाया। सन्तप्त हो रही उसे उसने मना किया कि हे पुत्री! स्नेह करने से कभी तृप्ति नहीं होती। राजा कहता है—मैं तुम्हें बहुत समय से जानता हूँ कि जब अच्युत स्वर्ग में मैं सुरवर था। तुम दूसरे स्वर्ग के विमान में निवास करनेवाली थीं। तुम ललितांग देव की स्त्री थीं। और इस समय तुम अत्यन्त मधुर बोलनेवाली और प्राणप्यारी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हमारी कन्या हुई हो। तुम दुबली मत होओ, वह तुम्हें मिलेगा और हार की तरह दोनों स्तनों के बीच व्याप्त होगा। बाला की बुद्धि लज्जा से आच्छादित हो गयी। फिर उसने (पिता ने) धाय को इशारा कर दिया। इस प्रकार दृष्टान्त और कहानियाँ कहकर उस राजा ने दिग्विजय के लिए कूच किया।

घत्ता—नागराज अपना शरीर संकुचित कर थर्रा उठा, डरकर वह कुछ भी नहीं बोला। राजा के चलने पर अश्व-गज-रथ और मनुष्यों के पैरों से पददलित होकर धरती काँप उठती है॥ १२॥

१३

राजा के चले जाने पर, चंचल तमाल-ताल और ताली वृक्षों से सघन, नव अशोक वन में महावृक्षों को बहुत समय तक संचालित कर और कोमल हाथरूपी कमल से शरीर को सहलाकर वह स्फटिक शिलातल पर बैठी हुई थी। एक दिन, जिसने अपना हाथ गालों पर रख छोड़ा है और जिसके सफेद गण्डतल पर बालों की लटें चंचल हैं, ऐसी नवकदली के पिण्ड के समान कोमल उस बाला से धाय ने पूछा— "हे पुत्री! हे पुत्री, तुम मौन छोड़ो। हे पुत्री, पुत्री! कृश शरीरलता को अलंकृत करो। हे पुत्री, पुत्री! अपने को क्यों दण्डित करती हो! पान के बीड़े को अपने दाँतों के अग्रभाग से खण्डित करो। हे आदरणीये, तुम रहस्य छिपाकर क्यों रखती हो? क्या तुम अपना मर्म मुझसे भी नहीं कहतीं।"

घत्ता—यह सुनकर राजपुत्री निःश्वास लेती हुई अपना जन्म प्रकाशित करती है, (और कहती है) लता के लिए धरती के समान तू मेरे लिए जननी है। हे माँ, तुमसे क्या नहीं कहा जा सकता!॥ १३॥

१४

मेरु के पूर्व में धातकी खण्ड में पूर्व विदेह के गन्धिल्ल देश में,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

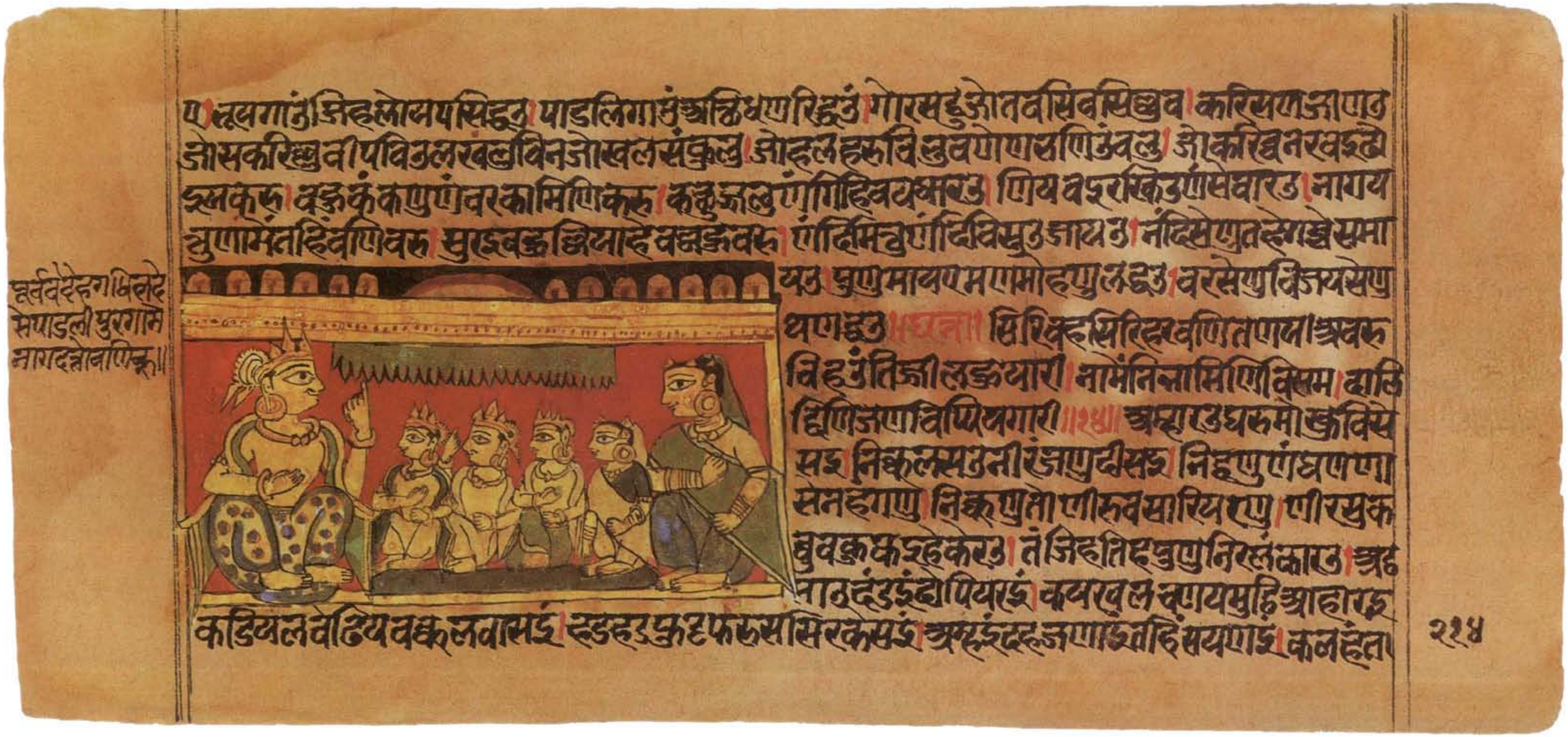

भूतग्राम (शरीर) की तरह प्रसिद्ध धन से समृद्ध पाटली गाँव है, जो वशी तपस्वी के समान गोरसाढ्य (गोरस और वाणीरस से युक्त) है, जो हस्तिपालक के समान, करिसन-जानउ (कर्षण और हाथी के शब्द के जानकार) हैं, विशाल खलियानों से भरपूर होते हुए भी खलजनों से दूर हैं, हलधर होते हुए भी जिसे बलराम नहीं कहा जाता, जो हाथी के समान राजा के लिए ढोइय कर (कर देनेवाला, सूँड पर ढोनेवाला) है, जो मानो उत्तम कामिनी का हाथ था, वरकंकणु (बहुजल-धान्य से युक्त और स्वर्णवलय से युक्त) कच्छ से उज्ज्वल जो मानो गिरिपथ की धारा के समान था, जो सेवक में रत के समान, निजवइ (अपने स्वामी, अपनी मेंढ़) की रक्षा करनेवाला था। उसमें नागदत्त नाम का वणिक् था, जो सुरति के समान अपनी वधू का प्रियवर था। उसके नन्दी और नन्दीमित्र पुत्र हुए। नन्दीसेन भी उसके गर्भ में आया, फिर माता के मनमोहन, धरसेन (धर्मसेन) और विजयसेन पुत्र हुए।

घत्ता—और भी उसकी पत्नी से श्रीप्रभा (श्रीकान्ता), श्रीधर (मदनकान्ता) पुत्रियाँ हुईं, तीसरी मैं सबसे छोटी नाम से निर्नामिका विषम दरिद्रा और लोगों का बुरा करनेवाली ॥ १४ ॥

१५

हमारा घर मोक्ष से विशेषता रखता था। वह निष्कलश (कालुष्य और कलशों से रहित), नीरंजन (शोभा और कलंक से रहित) दिखाई देता है। मेघ के नष्ट होनेपर, नभ के आँगन के समान विद्धणु (धन और घन से रहित) तूणीर के समान जो निष्कण (अन्नकण) सारियरणु (युद्ध का निर्वाह करनेवाला, ऋण से निर्वाह करनेवाला) था। जो कुकवि के काव्य की तरह नीरस था, और जिस प्रकार वह, उसी प्रकार यह भी अलंकारों से रहित था। आठ भाई-बहन। पीतल के दो हण्डे। खल और चनों की मुट्ठी का आहार करनेवाले। कमर तक वल्कलों के वस्त्र पहने हुए, निकले हुए स्फुट होठ, सफेद केशराशि। उस घर में हम दस लोग थे, आपस में

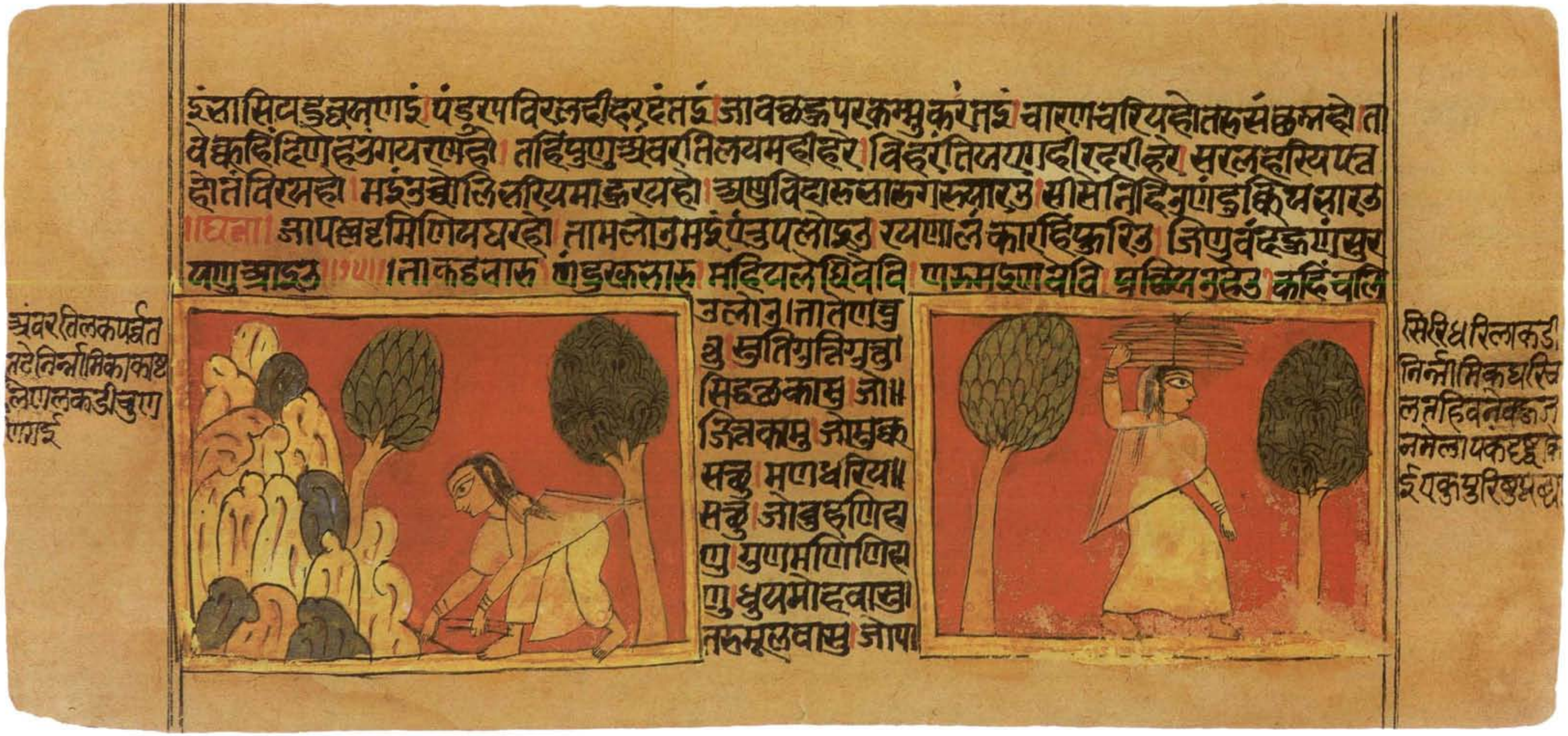

लड़ते हुए और कठोर शब्द करते हुए। सफेद बड़े विरल लम्बे दाँतोंवाले हम दूसरों का काम करते हुए रह रहे थे। जिसमें हाथी विचरण करते हैं और जो पेड़ों से आच्छादित हैं, ऐसे उस जंगल में एक दिन मैं गयी। वहाँ गम्भीर घाटियों को धारण करनेवाले अम्बरतिलक महीधर में घूमते हुए मैंने ताम्र और माहुर के हरे पत्तों से झोली भर ली। और भी भारी लकड़ियों का भारी गट्ठा सिर पर रख लिया, मानो दुःखों का भार हो।

घत्ता—जैसे ही मैं अपने घर लौटती हूँ तब मैं लोगों को आते हुए देखती हूँ। रत्नों और अलंकारों से चमकते हुए सुरजन मानो जिनवर की वन्दना करने के लिए आये हों॥ १५॥

१६

उस लकड़ी के भार को, मानो दुःखों के भार की तरह धरती पर रखकर, एक आदमी को नमस्कार कर कारण पूछा कि लोग कहाँ जा रहे हैं। तब उसने कहा—''जो तीन गुप्तियों से युक्त, सिद्धार्थकाम और जितकाम हैं, जो परिग्रह से रहित, शास्त्रों को मन में धारण करते हैं, जो पण्डितों के लिए कोष हैं, गुणरूपी मणियों की खदान हैं, जिन्होंने मोहपाश धो दिया है, जो तरुमूल में निवास करते हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

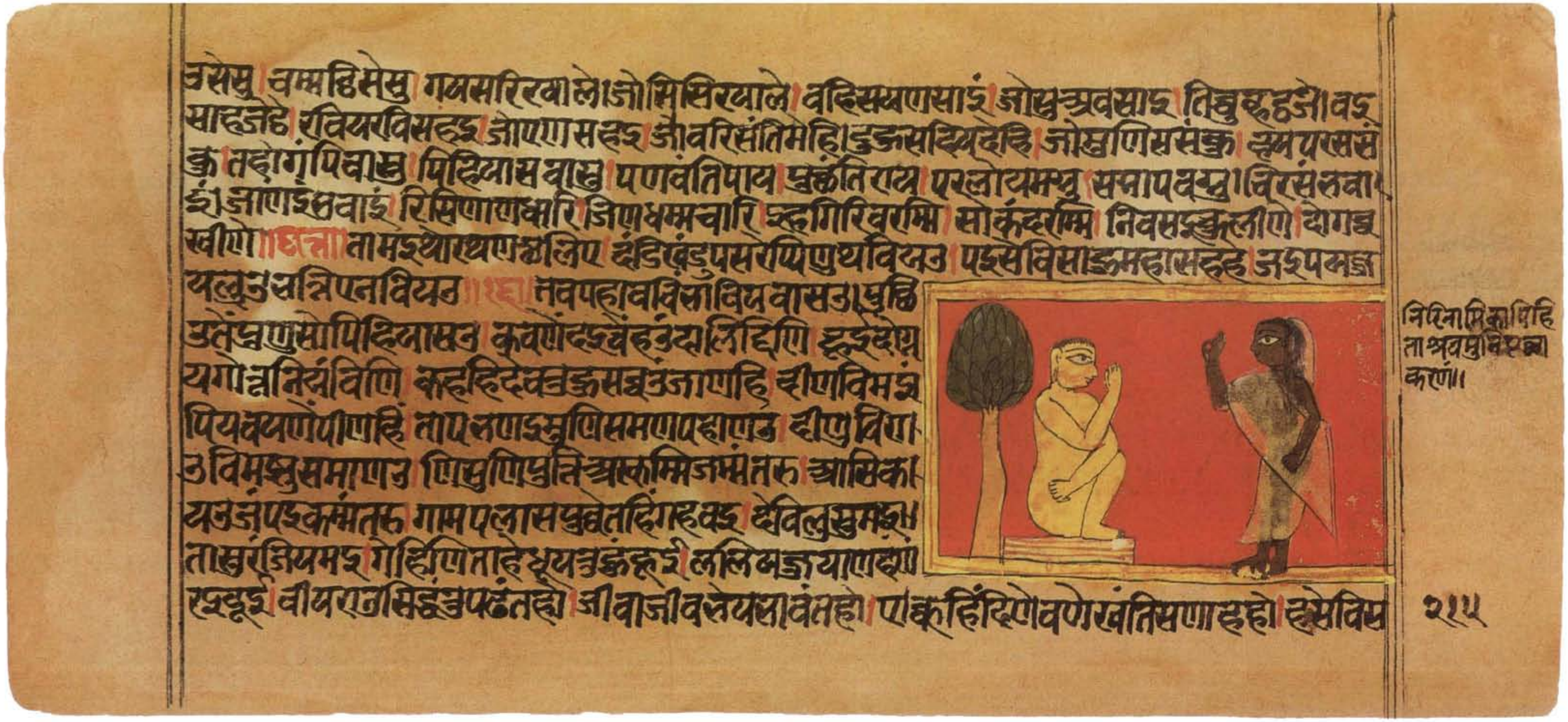

जो पाप से रहित हैं, जिनकी चमड़ी और हड्डियाँ ही शेष बची हैं, जो नदियों के वेग से रहित शिशिरकाल में बाहर शयन-आसन करते हैं, जो षड् आवश्यक कार्य करते हैं, जो तीव्र उष्णता से महान् वैशाख और जेठ में रविकिरणों को सहन करते हैं, योग से शोभित होते हैं, जो मुनि शशांक (मुनिचन्द्र) दूसरों की शंका को दूर करते हैं। ऐसे पिहितास्त्रव मुनि के वास पर जाकर राजा पैर पड़ते हैं और परलोक का मार्ग तथा स्वर्ग-अपवर्ग के विषय में पूछते हैं। वह पूर्व के जन्मों को जानते हैं। ऋषि ज्ञानधारी हैं और जिनधर्म का आचरण करते हैं, वे इस गिरिवर की धरती में लीन दुर्गतियों के नष्ट करनेवाली कन्दरा (गुफा) में रहते हैं।''

घत्ता—तब स्थूल स्तनोंवाली मैंने अपना जीर्ण-शीर्ण वस्त्र फैलाकर स्थापित किया और महासभा में प्रवेशकर साधु के चरणकमलों को भक्तिपूर्वक नमस्कार किया॥ १६ ॥

१७

अपने तप के प्रभाव से इन्द्र को प्रभावित करनेवाले पिहितास्त्रव मुनि से उन लोगों ने पूछा कि मैं किस दैव से दरिद्र और नीचगोत्र की स्त्री हुई? हे देव बताइए, आप सच जानते हैं, दीन भी मुझे प्रिय वचन से प्रसन्न करिये। तब श्रमणगणों में प्रमुख वे कहते हैं कि दीन और राजा, दोनों मुझे समान हैं। हे पुत्री! सुनो, मैं जन्मान्तर कहता हूँ। दूसरे जन्म में तुमने जो कर्मान्तक किया था। पलाश गाँव में वहाँ एक गृहपति था देवल नाम का। मति रंजित करनेवाली उसकी सुमति नाम की पत्नी थी। उसकी कन्या तू हुई। किसान-कन्या होते हुए भी तू युवकों के लिए मानो रति की दूती थी। वीतराग सिद्धान्त को पढ़ते हुए, जीव और अजीव के भेद का विचार करते हुए, शान्ति से युक्त समाधिगुप्त मुनिनाथ की हँसी उड़ाते हुए, एक दिन वन में

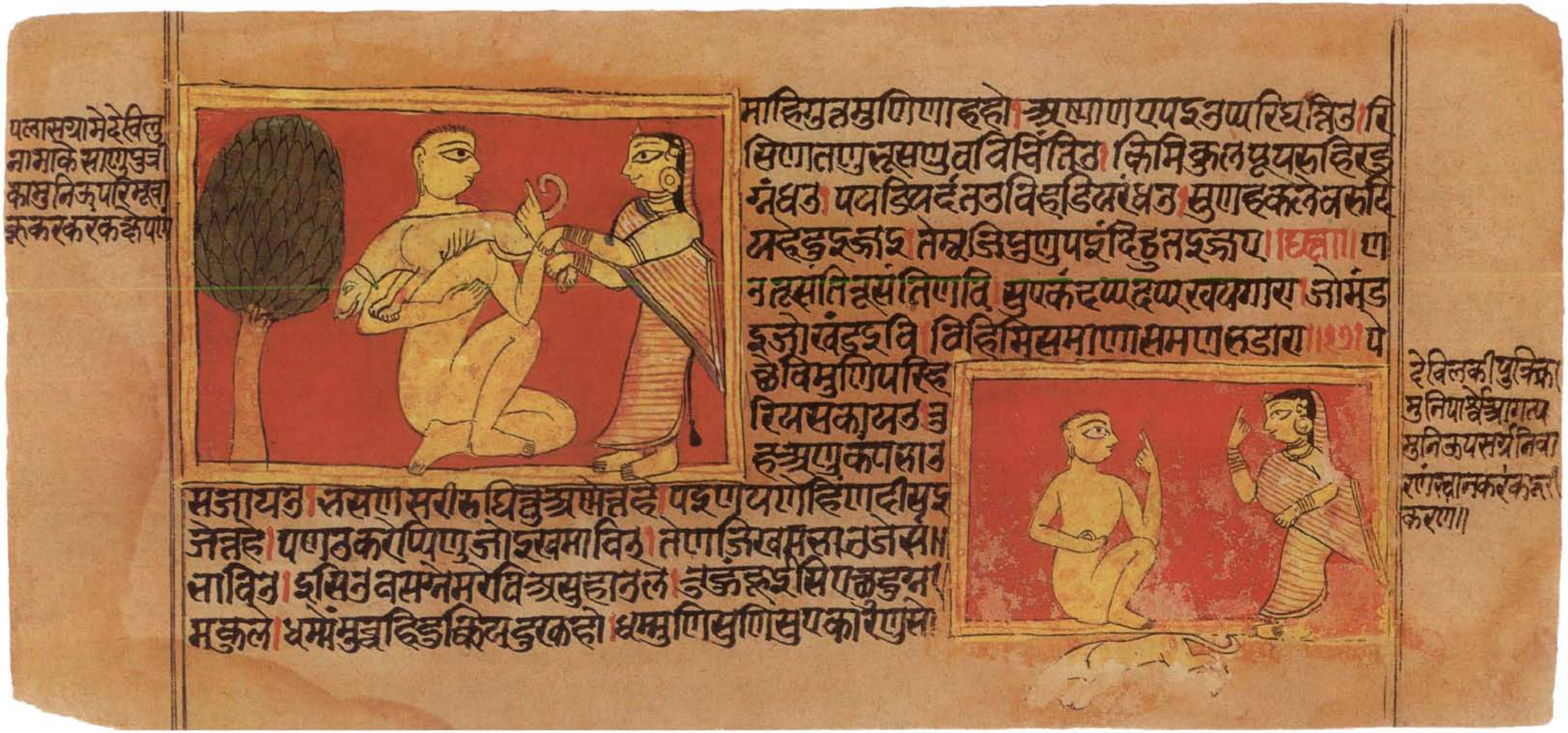

तूने कृमिकुल पीपरुधिर से दुर्गन्धित, निकले हुए दाँतोंवाला और खण्डित और छेदोंवाला कुत्ता उन पर फेंका। लेकिन मुनि ने उसे शरीर का आभूषण समझा। दूसरे दिन भी और तीसरे दिन भी तूने कुत्ते के शरीर को उसी प्रकार देखा।

घत्ता—पवित्र तथा काम के दर्प को नष्ट करनेवाले मुनि न तो सन्तुष्ट होते हैं और न अप्रसन्न होते हैं, चाहे कोई अलंकृत करे और चाहे खण्डित करे, दोनों में ही आदरणीय श्रमण समान रहते हैं॥ १७॥

१८

मुनि को अपने शरीर के प्रति त्यागभाव देखकर तुम्हारे मन में दयाभाव उत्पन्न हुआ। तुमने उस कुत्ते के शरीर को वहाँ फेंक दिया, जहाँ वह आँखों से दिखाई न दे। प्रणाम करके तुमने योगी से क्षमा माँगी। उन्होंने भी क्षमाभाव दे दिया। इस प्रकार थोड़े से समताभाव से मरकर अशुभ से पूर्ण यहाँ इस नीच कुल में उत्पन्न हुई। पाप का दुःख धर्म से ही जा सकता है। सुख के कारण पवित्र धर्म को सुनो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

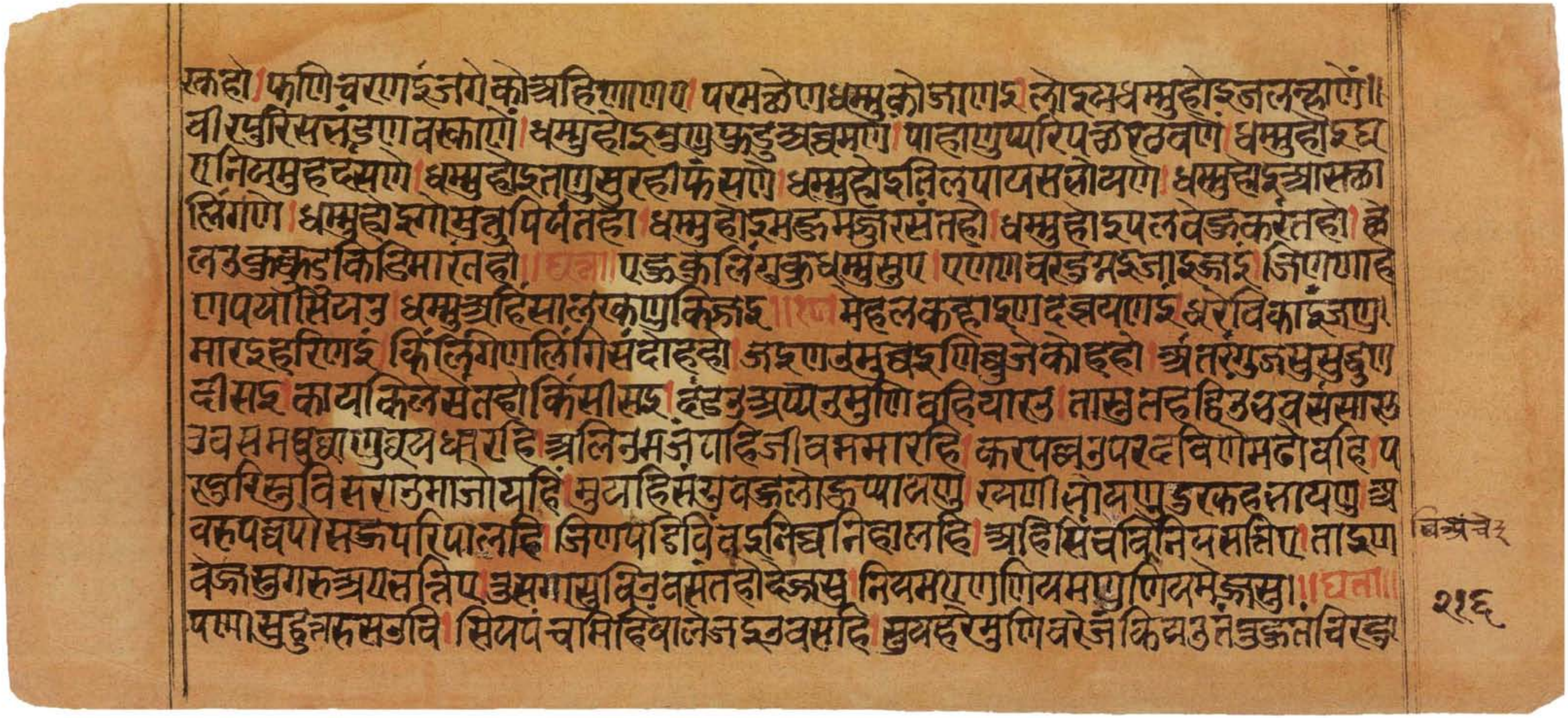

संसार में साँप के पैरों को कौन जानता है? परमार्थ रूप से धर्म को कौन जानता है? लौकिक धर्म होता है जल में स्नान करने से, वीर पुरुषों के युद्धों का वर्णन करने से, धर्म होता है बार-बार आचमन करने से, पहाड़ के ऊपर पत्थर की स्थापना करने से। धर्म होता है घी में अपना मुँह देखने से। धर्म होता है गाय का शरीर छूने से। धर्म होता है तिल और पायस भोजन करने से। धर्म होता है पीपल के वृक्ष का आलिंगन करने से। धर्म होता है गोमूत्र पीने से। धर्म होता है मधु और मद्य के रसास्वादन से। धर्म होता है मांस का बंधन करने से। धर्म होता है बकरा, मुर्गा और सुअर को मारने से।

घत्ता—हे पुत्री, यह कुलिंग और कुधर्म है, इससे केवल नरक गति में जाया जा सकता है, इसलिए जिननाथ के द्वारा प्रकाशित अहिंसा लक्षण धर्म का आचरण करना चाहिए॥ १८॥

१९

मेखला, कृष्णाइन (काले मृग का चमड़ा) और दर्भांकुर धारण करने के लिए लोग मृगों को क्यों मारते हैं? मुनियों के समूह के चिह्न से क्या, जबकि यदि वह नित्य ही क्रोध से मुक्त नहीं होता। जिसका अन्तरंग शुद्ध दिखाई नहीं देता शरीरक्लेश से उसका क्या होगा? मुनि की विधि करनेवाला स्वयं को दण्डित करे, उसका भवसंसार वहीं स्थित है? उपशम से पूर्ण और अणुव्रतधारियों से झूठ मत बोलो, जीव को मत मारो, करपल्लव में दूसरे के धन को मत ढोओ। परपुरुष को रागदृष्टि से मत देख, बहु लोभ को उत्पन्न करनेवाले संग को छोड़ दे, रात्रिभोजन दुःख का कारण है, और भी पर्व के उपवास का पालन करो, जिन-प्रतिमाओं के प्रतिदिन दर्शन करो, अपनी शक्ति से अभिषेक और पूजा कर उन्हें भारी भक्ति के साथ प्रणाम करो। उपशान्त को भी तृष-ग्रास दो। नियम से अपने मन का नियमन करो।

घत्ता—हे बाले, यदि तू शुक्ल पंचमियों में १५० उपवास करती है तो श्रुतधारी उन मुनि पर तूने जो किया है, वह तेरा चिर पाप नष्ट हो जाता है॥ १९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०

मुनियों के शरीर में परम सम निवास करता है, उनकी निन्दा करनेवालों की दुर्गति विलसित होती है। चूड़ामणि को क्या पैरों में रखना चाहिए? जो वन्दनीय हैं क्या उनकी निन्दा करनी चाहिए! जो तूने उस जन्म में, दुश्चिन्तित-दुर्बोल और पाप किया था, इस समय यदि तुम कर सकती हो तो, गत गर्व बार-बार पश्चात्ताप से तप कर उसे नष्ट कर दो। परन्तु मेरे पापसमूह में पाप का निवर्तन कैसा? कि जिसने गुरुओं के साथ भी दुष्टता की। माया-मोह को छोड़कर मन का शोध कर इस प्रकार अपनी निन्दा और गर्हा कर, ऋषिपति की वन्दना कर अपने निवास पर गयी, और हे सखी, मैं उपवास में लग गयी (श्रीमती धाय से कह रही है।) जब मेरे पास कुछ भी धन नहीं था, तब भी मुझ दरिद्रा ने उस समय सुपात्रों को प्रतिदिन खल दान में दिया और सर्वजीवों के प्रति दुष्टता का भाव छोड़ दिया। मैंने दमनपुष्प से जिनवर की पूजा की और दुर्लभ (कठिनाई से प्राप्त) तेल से दीया जलाया।

घत्ता—चाहे इन्द्र पूजा करे, या चाहे राजा या निर्धन पूजा करे। श्रीमती कहती है, यदि मन में निर्मल भक्ति है तो उसका एक ही फल है, ऐसा मैं कहती हूँ॥ २०॥

२१

इस प्रकार वहाँ पर मैं बहुत समय तक जीकर गुरु के उपदेश का अंशमात्र पालकर फिर आहार और शरीर छोड़कर, पाँच परम अक्षरों की याद कर मैं मर गयी और जाकर, जिसमें देवता रमण करते हैं, ऐसे श्रीप्रभ नाम के ईशान विमान में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ललितांग देव की, अपनी द्युति से चन्द्र-प्रभा को जीतनेवाली मैं स्वयंप्रभा नाम की महादेवी हुई। प्रियतम के मरने पर छह माह जीवित रहकर और स्वर्ग से च्युत होकर इस समय यहाँ उत्पन्न हुई हूँ। प्रिय को स्मरण करते हुए मुझे चन्द्रमा सन्तप्त करता है। देह में लगा हुआ चन्दन अच्छा नहीं लगता। कामदेव आठों अंगों को जलाता है, इन्द्रिय के चिह्न से क्या तुम नहीं जानती! यह कहकर उसने पट बुलवाया और स्वामी का चित्र बनाकर धाय को बताया। वहीं पर उसने अपना पुराना रूप चित्रित किया और चमकते हुए वस्त्र के भीतर रख दिया। दूसरी-दूसरी क्रीड़ा-परम्पराओं, नदी-सरोवर और गिरिवर स्थानों को भी उसने लिखा। और भी उसने उसमें रति की रहस्य क्रीड़ाओं और धूर्तता के गूढ़ भयों को अंकित कर दिया। यहाँ रहती हुई, यहाँ रमण करती हुई यह मैं हूँ और यह वह है। यह कहकर उसने कुछ भी गोपनीय नहीं रखा। सुन्दरी ने अपना दिल बता दिया।

घत्ता—हे पण्डिते! तुम मेरा प्राणप्रिय ला दो, मेरी काम की व्याधि शान्त कर दो। नक्षत्रों की तरह उज्ज्वल और कोई दूसरी स्त्री मेरे समान मति में भारी नहीं है, तुम याद करो॥ २१॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारोंवाले इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य में निर्नामिका धर्मलाभ नाम का बाईसवाँ अध्याय समाप्त हुआ॥ २२॥

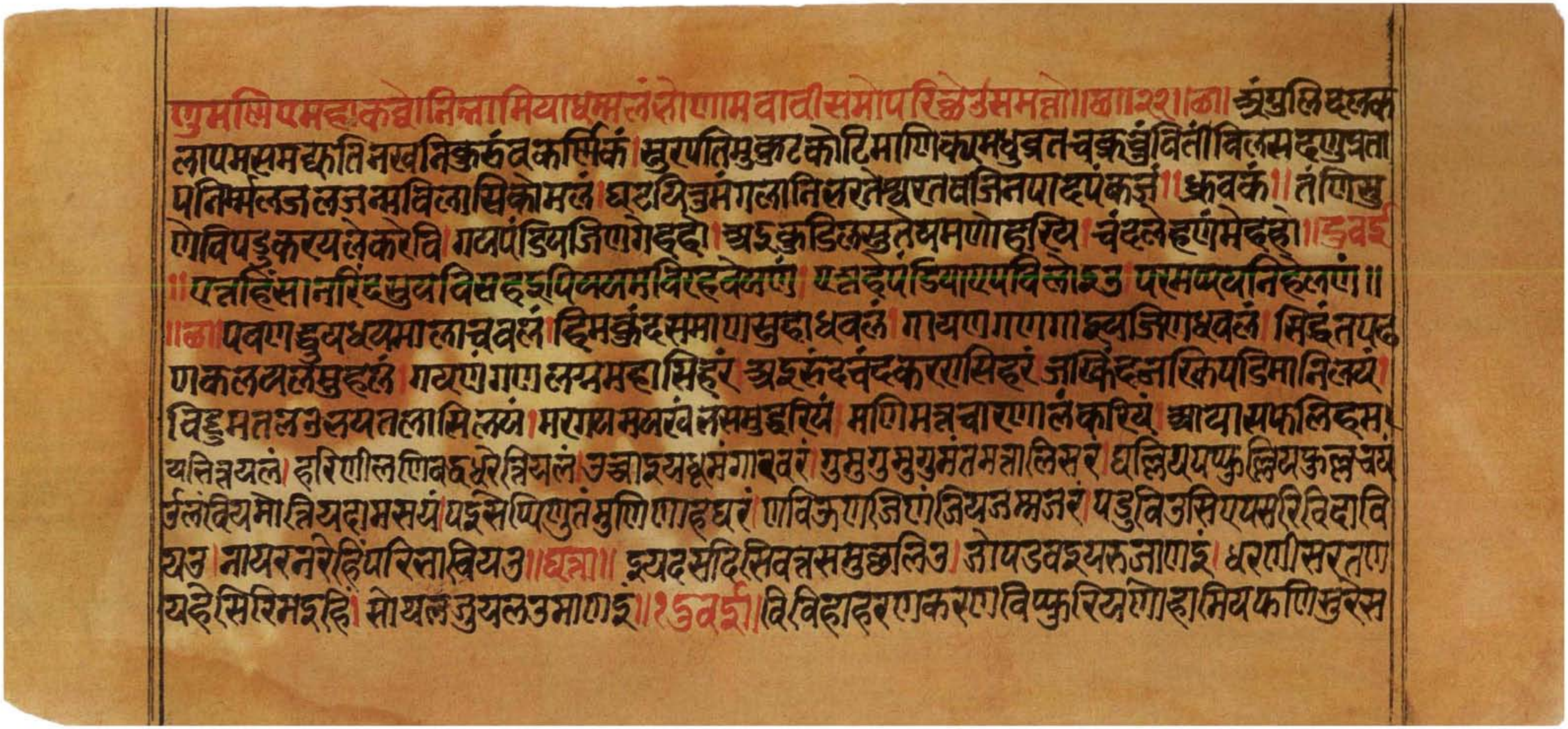

सन्धि २३

यह सुनकर चित्रपट को हाथ में लेकर वह धाय जिन मन्दिर के लिए गयी। मानो अतिकुटिल, तेजवाली और सुन्दर चन्द्रलेखा मेघ के लिए निकली हो।

१

यहाँ वह राजपुत्री प्रियतम की विरहवेदना सहन करती है, और वहाँ पण्डिता धाय ने जिनमन्दिर के दर्शन किये। जो पवन से उड़ती हुई ध्वजमाला से चपल तथा हिम और कुन्द पुष्प के समान सुधा से धवल था। जिसमें गायक-समूह द्वारा जिन भगवान् के धवलगीत गाये जा रहे हैं, जो सिद्धान्तों के पठन के कल-कल शब्द से मुखर है, जिसके शिखर आकाश प्रांगण को छूते हैं, जो अत्यन्त विशाल चन्द्रमा की किरण राशि को धारण करता है, जो यक्षों और यक्षिणियों की प्रतिमाओं का घर है, जहाँ तलशिला विद्रुमों से रचित है। जो मरकतमणियों के खम्भों पर आधारित है, मणिमय मत्तराजों से अलंकृत है। जिसका भित्तितल आकाश के स्फटिक मणियों से निर्मित है और भूमितल हरे और नील मणियों से रचित है। जहाँ अंगारवर में धूप खेई जा रही है, जिसमें गुनगुनाते हुए भ्रमरों का स्वर हो रहा है, जहाँ चढ़ाये गये पुष्पित पुष्पों का समूह है, जहाँ सैकड़ों मोतियों की मालाएँ लटक रही हैं, ऐसे मुनिनाथ के उस घर में प्रवेश कर जन्म-जरा को जीतनेवाले जिन को नमस्कार कर, उस धाय ने चित्रपट को फैलाकर दिखाया। नागर-नरों को वह बहुत विचार किया।

घत्ता—इस प्रकार दशों दिशाओं में यह बात फैल गयी। जो चित्रपट के वृत्तान्त को जानता है वह श्रीमती के स्तनयुगल को मानेगा (आनन्द लेगा)॥१॥

२

विविध आभरणों की किरणों के विस्फुरण से नागों और देवेन्द्रों को तिरस्कृत करनेवाले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नरवरेश्वर हाथियों और ऊँचे घोड़ों पर बैठे हुए चले। जिसने श्वेतता में सफेद शरद् को पराजित कर दिया है, जिसमें विरक्तों का निवास है, जिसने नरक का निवारण किया है, जो पापों का हरण करनेवाला है, और जो सुभव्यों के लिए वरदान देनेवाला है, ऐसे उस जिनमन्दिर में राजा लोग पहुँचे। उन्होंने वह चित्रपट देखा। उनके मन में कामदेवरूपी नट नाच उठा। उसे देखकर, अपना कल्याण चाहनेवाला बताओ, कौन-सा राजा वहाँ ऐसा था कि रोमांचित न हुआ हो। किसी ने कहा—"यह कन्या रंग में उजली और लता की तरह कोमल है। सुन्दरी यह बाला, इसका नाम ललिता और भ्रमर के समान काले बालोंवाली

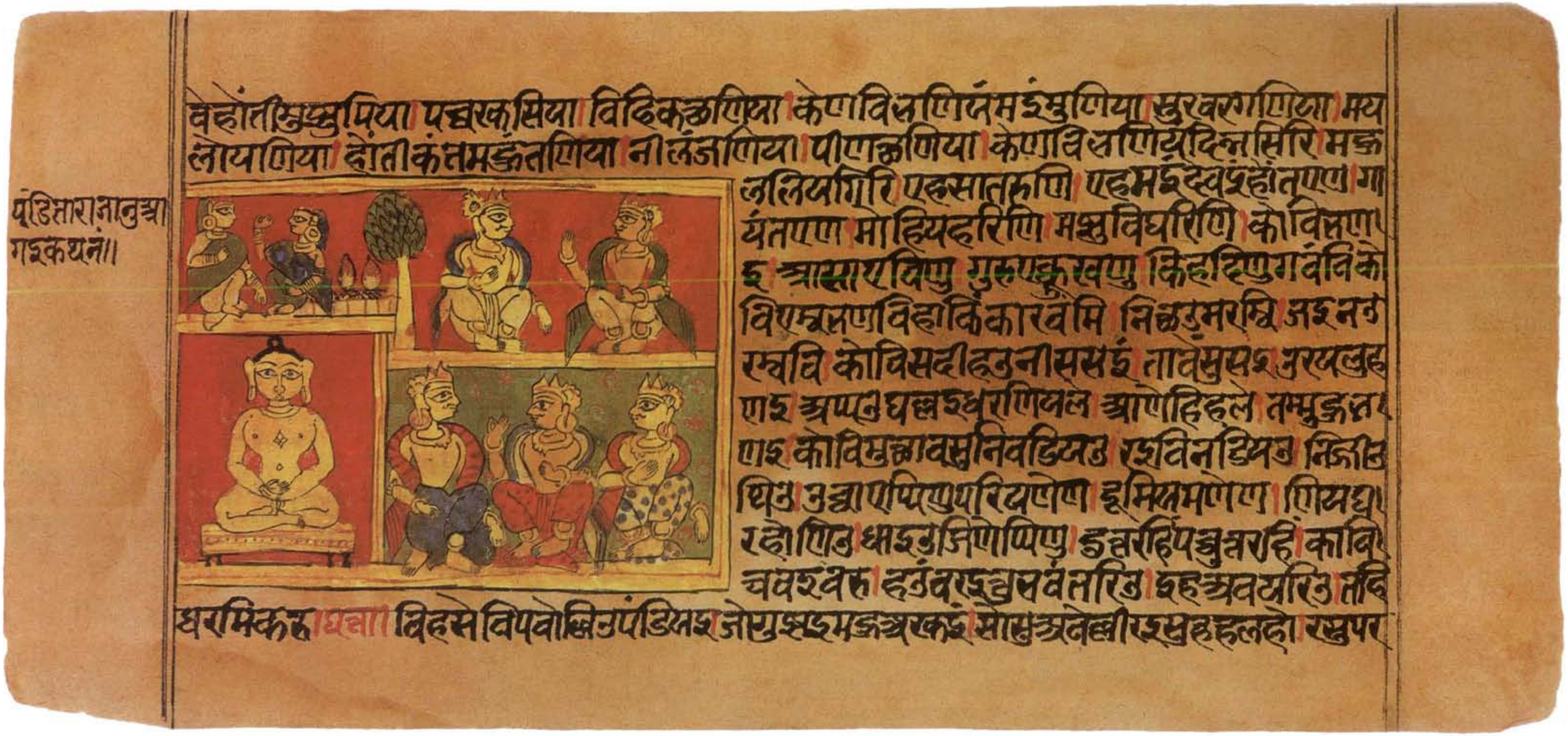

पूर्वभव में यह मेरी प्रिया थी। यह साक्षात् लक्ष्मी, विधाता न जाने इसे कहाँ ले गया।'' किसी ने कहा—''मैंने जान लिया है कि देवेन्द्रों के द्वारा मान्य यह मृगनयनी पीनस्तनोंवाली नीलांजना मेरी कान्ता थी।'' किसी ने कहा—''दिन की शोभा, यह मेरुपर्वत, यह वह तरुणी। यहाँ मैंने देव होते हुए और गाते हुए इस हरिणी को मोहित कर लिया था।'' कोई कहता है—''आशा के बिना एक क्षण भारी हो रहा है, दिन कैसे बिताऊँ!'' कोई कहता है—''हा! क्या करूँ? निश्चय ही मरता हूँ यदि इससे रमण नहीं करता।'' कोई लम्बी साँस लेता है, ताप से सूखता है और अपना उरतल पीटता है। अपने को धरती-तल पर गिरा लेता है। हे सखी! उसे ले आओ, बार-बार कहता है। कोई मूर्च्छा के वश होकर गिर पड़ा, और रति से प्रवंचित होकर उसने प्राण छोड़ दिये। दु:खित मन परिजन उसे उठाकर अपने घर ले गये। उस धाय को जीतने के लिए उत्तरों और प्रत्युत्तरों से कोई वर कहता है कि ''जन्मान्तर का वर मैं हूँ, उसका हाथ पकड़ने के लिए यहाँ अवतरित हुआ हूँ।''

घत्ता—तब उस पण्डिता ने हँसकर कहा—जो मुझे गुह्य बातें बतायेगा, वह सुतारूपी लता के रतिरूपी फल का रस वास्तव में चखेगा॥ २॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३

अथवा, श्रेष्ठ रमणी के रूप से रंजितमन, जो मनुष्य झूठ बोलेगा, कामदेव के तीरों से भिन्न उसे वह स्वीकार नहीं करेगी और वह नरकवास में प्रवेश करेगा। तब अत्यन्त विरह से भरे हुए इस काल में कुमारी का सघन स्तन यौवन आनेपर, छहखण्ड धरती को जीतकर देवों, विद्याधरों और सूर्य को निस्तेज करता हुआ अपने गजवर को प्रेरित कर राजा आ गया। उसने पुर में प्रवेश किया और अपने घर आया। मधुर आलाप और प्रणयभाव से उसने चिरसन्तप्त अपनी कन्या से कहा—''हे पुत्री! तुम शोक मत करो, लो स्वीकार करो, स्नान-विलेपन-कंगन और परिधान। गुरुजनों को रंजित करो, भोजन करो, वाद्य बजाओ, नाचो-गाओ, अक्षर पढ़ो, पक्षियों को पढ़ाओ, तुम्हारा मुख तीनों लोकों में भला है, यदि मैं उसे नहीं देखता तो मैं जीवित नहीं रहूँगा।'' तब, पिता के कथन को कुमारी ने मान लिया। वह फिर आकर और प्रणामकर बैठ गयी। विरह से दु:खी पास बैठी हुई उसका आलिंगनकर और सिर चूमकर, नेत्रों को आनन्द देनेवाले राजा ने कहा—''मैं एक अत्यन्त पुराना सुन्दर कथानक कहता हूँ। हे कामदेव की लक्ष्मी कृशोदरी, तुम सुनो।

घत्ता—पहले यहाँ पुण्डरीकिणी नगर में, इस जन्म से पूर्व पाँचवें जन्म में, मैं नित्योत्सववाले कुल में अर्धचक्रवर्ती का पुत्र हुआ था॥ ३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४

चन्द्रकीर्ति नाम से, सुमित्रवर जयकीर्ति से विभूषित। पिता की मृत्यु होने पर, मैं चिरकाल तक भूमि और लक्ष्मी से आलिंगित रहा। अनुपम शुभ रातों से हर्षित मनवाले हम दोनों ने बहुत समय तक राज्य का भोग किया। अन्त समय हम दोनों लक्ष्मी को छोड़कर प्रीतिवर्धन वन में प्रवेश कर, जिसने चन्द्रसेन गुरु के चरणों की सेवा की है ऐसे उद्गतकुरु के निर्जन वन में तप किया। दोनों ने पापबुद्धि का निवारण किया और शायद साथ ही समय की गति पूरी की। दोनों ही माहेन्द्र स्वर्ग में देव हुए,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

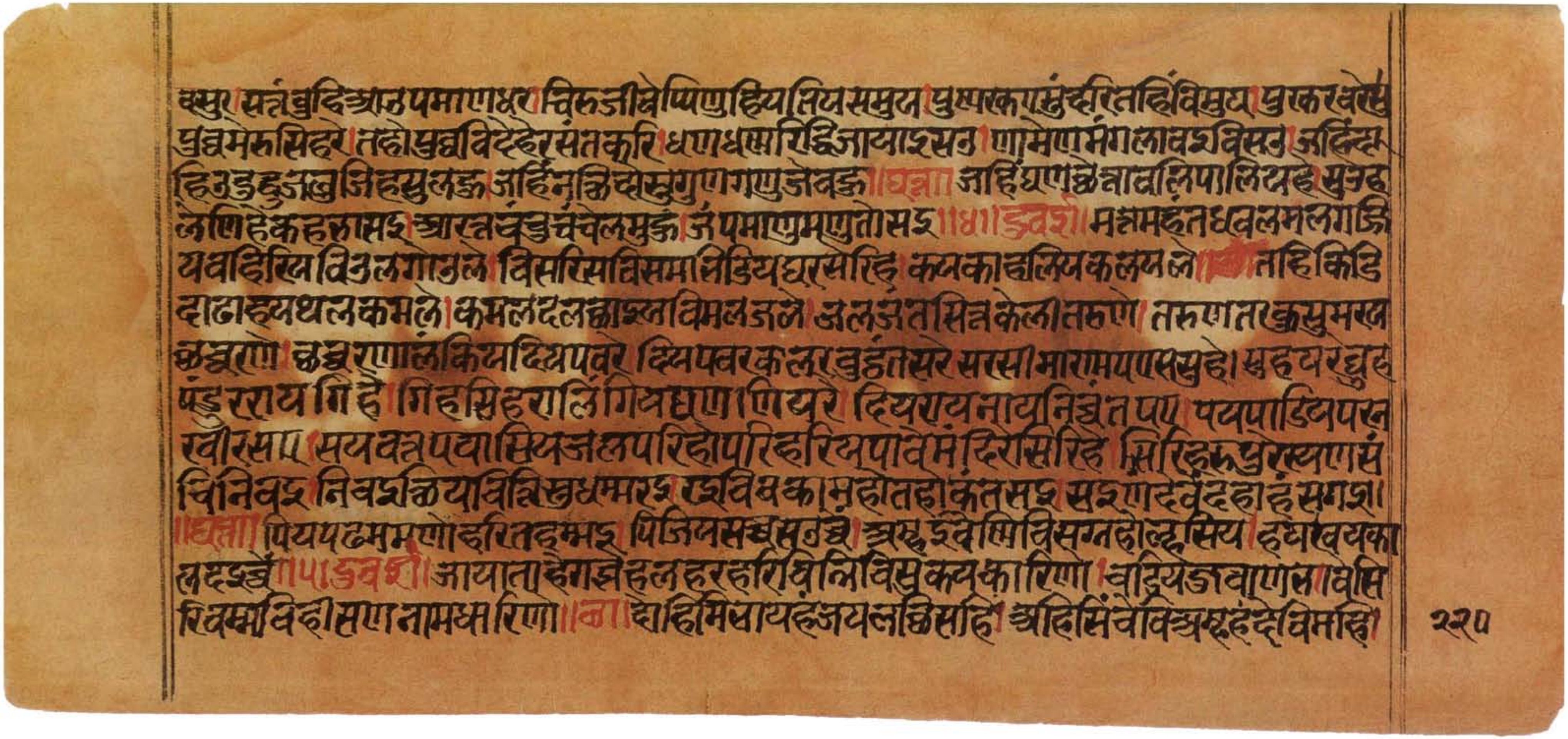

सात सागर प्रमाण आयुवाले। देवों के द्वारा स्तुत वहाँ बहुत समय तक जीवित रहकर, पुण्य का क्षय होने पर, हे सुन्दरी, वहाँ भी मृत्यु को प्राप्त हुए। पुष्करार्ध द्वीप में पूर्व मेरु के शिखर के पूर्व विदेह में जहाँ सब रसों का अन्त है, धन-धान्य और ऋद्धि से अतिशय महान् मंगलावती देश है। जहाँ दही और दूध जल के समान सुलभ हैं; जहाँ बहुत-से गुण हैं, दोष एक भी नहीं है।

घत्ता—जहाँ तोता सघन खेतों को रखानेवाली कृषक बाला से कथा कहता है। लाल-लाल चोंचवाला वक्रमुख कुछ कहता हुआ मन को सन्तोष देता है॥४॥

५

जिसमें विशाल मतवाले बैलों के गरजने से विपुल गोकुल बहरे हो गये हैं, और जहाँ असामान्य और विषम लड़ते हुए भैंसों के कारण ग्वालों द्वारा कोलाहल किया जा रहा है, जहाँ सुअरों की दाढ़ों से स्थलकमल (गुलाब) आहत हैं, कमलों के दलों से विमल जल आच्छादित हैं, जलयन्त्रों से कदली के तरुण वृक्ष सींचे जाते हैं, जहाँ पर तरुण तरुओं की कुसुम-रेणु पर षड्चरण (भ्रमर) हैं, जहाँ द्विज प्रवर (ब्राह्मण और पक्षी) पठन-पाठनादि आचरणों से सहित हैं, जहाँ सरोवर में द्विज प्रवरों (पक्षिश्रेष्ठ, ब्राह्मणश्रेष्ठ) का कलरव हो रहा है, जो सरोवरों, सीमाओं और उद्यानों से शुभ है और जो शुभतर चूने से सफेद हैं, जो गृहशिखरों से मेघसमूह का आलिंगन करता है, ऐसे उस राजगृह में रत्नसंचयपुर नगर है, जिसमें राज्य न्याय से प्रजा निश्चिन्त है, जिसमें सैकड़ों शत्रु राजाओं को चरणों में झुका लिया गया है, जिसकी जल-परिखाएँ कमलों से आच्छादित हैं, जो पापों से रहित और लक्ष्मी का घर है, ऐसे उस नगर का राजा श्रीधर था जो राजा की वृत्ति की इच्छा रखता था। सुधर्म में रत, कामदेव की कान्ता-रति के समान, या मानो देवेन्द्र की हंसगामिनी इन्द्राणी हो।

घत्ता—वह देवी नाम से जैसे मनोहरा थी, वैसे ही सत्य और पवित्रता में भी मनोहर थी। हत क्षयकालरूपी दैत्य के कारण हम दोनों भी स्वर्ग से च्युत हुए॥५॥

६

पुण्य करनेवाले हम दोनों उनके गर्भ से हलधर (बलभद्र) और हरि (वासुदेव) उत्पन्न हुए। श्रीवर्मा और विभीषण नाम के दोनों यौवन को प्राप्त हुए। हम दोनों भाइयों का अभिषेक कर एवं विजयलक्ष्मी की सखी मही हमें देकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पिता सुधर्म मुनि की शरण में चले गये और उन्होंने घोर वीर तपश्चरण किया। उत्पत्ति-जरा और मरण का उन्होंने नाश कर दिया, और सिद्धावस्था को प्राप्त करानेवाला केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। मेरी माता (मनोहरा) ने शीघ्र ही स्वर्ण को तृण के समान समझ लिया। क्योंकि जो राग से मुक्त है उसके लिए घर ही वन है। तथा नववधू के आलिंगन का स्वाद करनेवाले रागी के लिए थण्डिल (जन्तुरहित भूमि) भी स्तनस्थल हैं। गिरि की गुफा या घर क्या करता है? यदि वह पाप परिणाम नहीं करे तो! यह विचार कर मनोहरा जिनवर का ध्यान करती हुई अपने भवन में रहने लगी। मानो उसने कठोर तप स्वीकार कर लिया और जन्मान्तर के पापों को धो डाला। वह संन्यासिनी पंचगुरु का ध्यान कर स्वर्ग में ललितांग देव हुई।

घत्ता—लक्ष्मी का भोग करता हुआ और भोग की तृष्णा की व्याकुलता से मरकर विभीषण राजा नरक के महा विलय में उत्पन्न हुआ, समय के साथ किसका अन्त नहीं होता!॥ ६॥

७

लक्ष्मी और सरस्वती के सहवास के समान विधाता ने उसे चूर-चूर करके फेंक दिया। विनाश के हाथी के दाँतों से ठेला गया वह सुखाधिप उखड़े हुए कल्पवृक्ष के समान था। उसके शव को देखकर मैं दुख से व्याकुल हो गया। शोक की ज्वाला से देहरूपी वृक्ष जल गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हे चक्रपाणि, हे प्राणप्रिय, हे भाई, तुमने अवहेलना क्यों की? मेरे अच्छे भाई दामोदर बोलो, हा! एक बार मुझे सान्त्वना दो, सुर-राजा-कुबेर-पृथ्वीपति और चक्रवर्ती क्या हे आदरणीय! मरते हैं? मैं मिथ्याभाव से ग्रस्त था। मैंने शव को कन्धे पर रख लिया। मैं उसे छूता हूँ। उसके साथ हँसता हूँ। मैं कहता हूँ कि मुझे प्रत्युत्तर दो। मैं मतिमूढ़ कुछ भी याद नहीं कर पाता और नगर-ग्राम-सीमा और अरण्यों में विचरण करता हूँ। उस अवसर पर माँ का दूत, मधुर बोलनेवाला ललितांग देव आया। वह भयपूर्वक बैल को प्रेरित करता हुआ रास्ते में स्थित हो गया। वह यन्त्र से रेत को पेरता है। मैंने उससे कहा—अपनी शक्ति नष्ट मत करो क्या पानी से नवनीत (लोणी) निकलता है? क्या दासीपुत्री में प्रेम हो सकता है? क्या बालू से तेल निकल सकता है? यह सुनकर वह देव बोला—हे सुभट, यदि तुमने यह बात जान ली—

घत्ता—तो तुम यह बात क्यों नहीं जान पाते कि हे हलधर, तुम क्यों शोक मना रहे हो? जो लोग मर चुके हैं, उन नरवरों को क्या तुमने फिर से जीवित होते हुए देखा है?॥ ७॥

८

हे पुत्र! तुम हाहाकार क्यों कर रहे हो, अपने को धीरज देकर चलो। धीर के आधार को लेकर चलनेवाले वीर विशाल विश्व को गोपद के समान समझते हैं। भाई-भाई, क्या पुकारते हो? याद करो मैं तुम्हारी माँ हूँ। तुम्हारे घर में रहकर तप किया, उसी से देवभव में जन्मी। यह कहकर वह देव अपने घर चला गया, मैंने चक्रवर्ती मुख देखा। सचमुच मैंने उसे निश्चेतन जाना। चिता बनाकर आग ले आया। शीघ्र ही वासुदेव का संस्कार किया और पुत्र को अपने राज्य में स्थापित कर दिया। तथा व्रत और संयम का भार उठाने में धुरन्धर युगन्धर मुनि के पास जाकर दीक्षा ले ली। पाँच इन्द्रियरूपी गजों को पीड़ित किया और सिंहविक्रीड़ित तप किया। फिर सर्वतोभद्र तप किया और मिथ्यात्व की जड़ता समाप्त कर दी। अनशन के विधान में जो कुछ कहा गया है, चार प्रकार की आराधना को मैंने सम्पन्न किया। मैं अर्हत् को बार-बार याद कर मर गया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

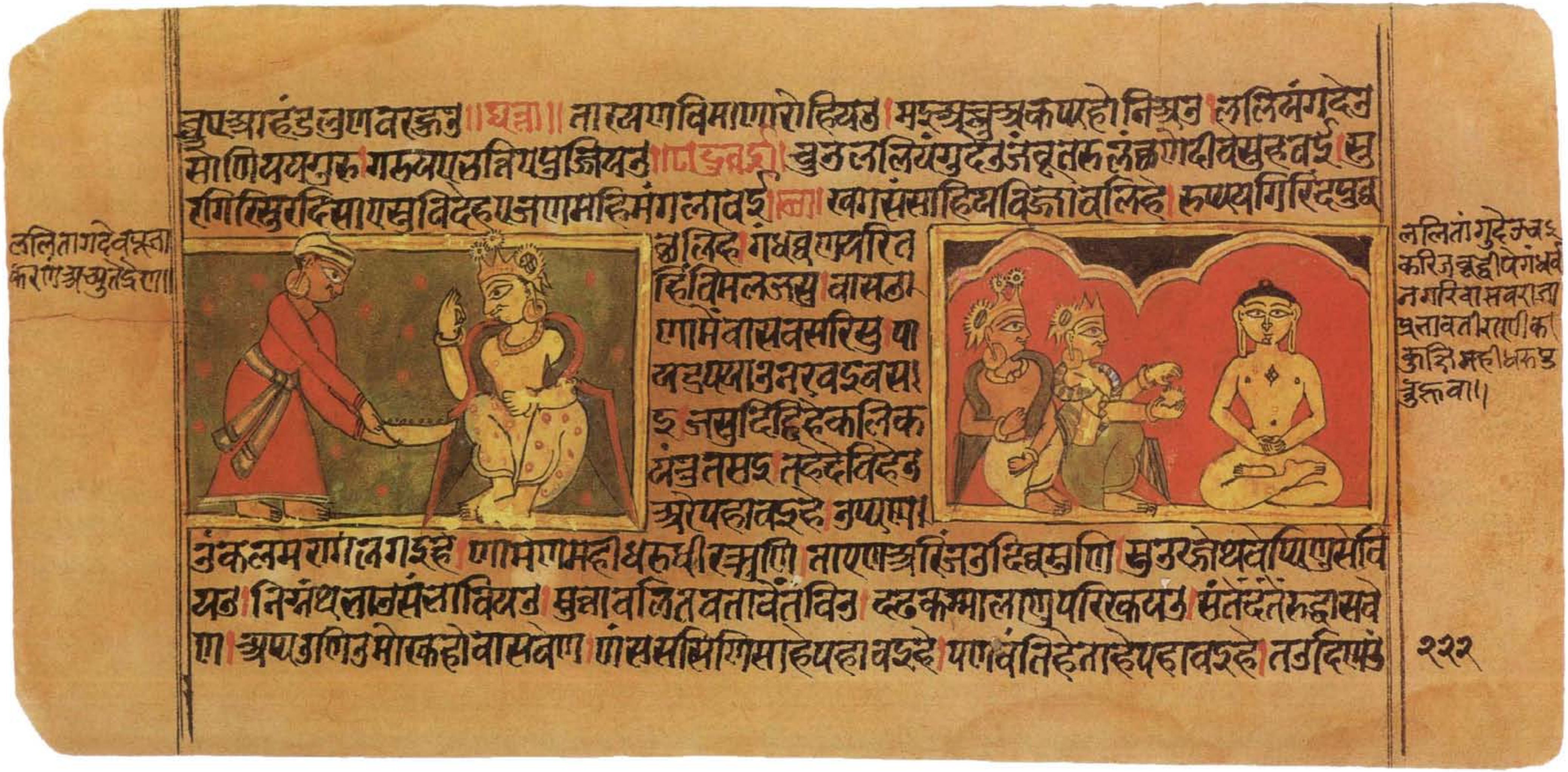

और केवल अच्युत स्वर्ग में उत्पन्न हुआ।

घत्ता—तब रत्नविमान में आरोहित (बैठाकर) मुझे अच्युत स्वर्ग में ले जाया गया। अपने उस गुरु ललितांग देव की भारी भक्ति से पूजा की॥ ८॥

९

ललितांग देव च्युत हुआ। जम्बूद्वीप के मेरुपर्वत की पूर्वदिशा के विदेह क्षेत्र में सुखवती मनुष्य भूमि मंगलावती है। उसके विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में, जहाँ विद्याधर विद्यावली सिद्ध करते हैं, गन्धर्व नगरी है। उसमें इन्द्र के समान विमल यशवाला वासव नाम का राजा है। प्रकट प्रतापवाला वहाँ निवास करता है जिसकी दृष्टि से कलि यम डरता है। उसकी कलहंसगामिनी प्रभावती नाम की देवी के उदर से ललितांग महीधर नाम से गम्भीर ध्वनि पुत्र हुआ। पिता ने पुत्र को राज्य में स्थापित कर दिव्य मुनि अरिंजय की सेवा की और दिगम्बरत्व की दीक्षा ग्रहण कर ली। मुक्तावली नामक तप के ताप से उसने अपने को तपाया और दृढ़ कर्ममल को नष्ट किया। शान्त दाँत-आस्रव को रोकनेवाले वासव स्वयं मोक्ष चले गये। प्रकाशपूर्ण चन्द्रमा से युक्त रात्रि में प्रणाम करती हुई उस रानी प्रभावती के लिए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

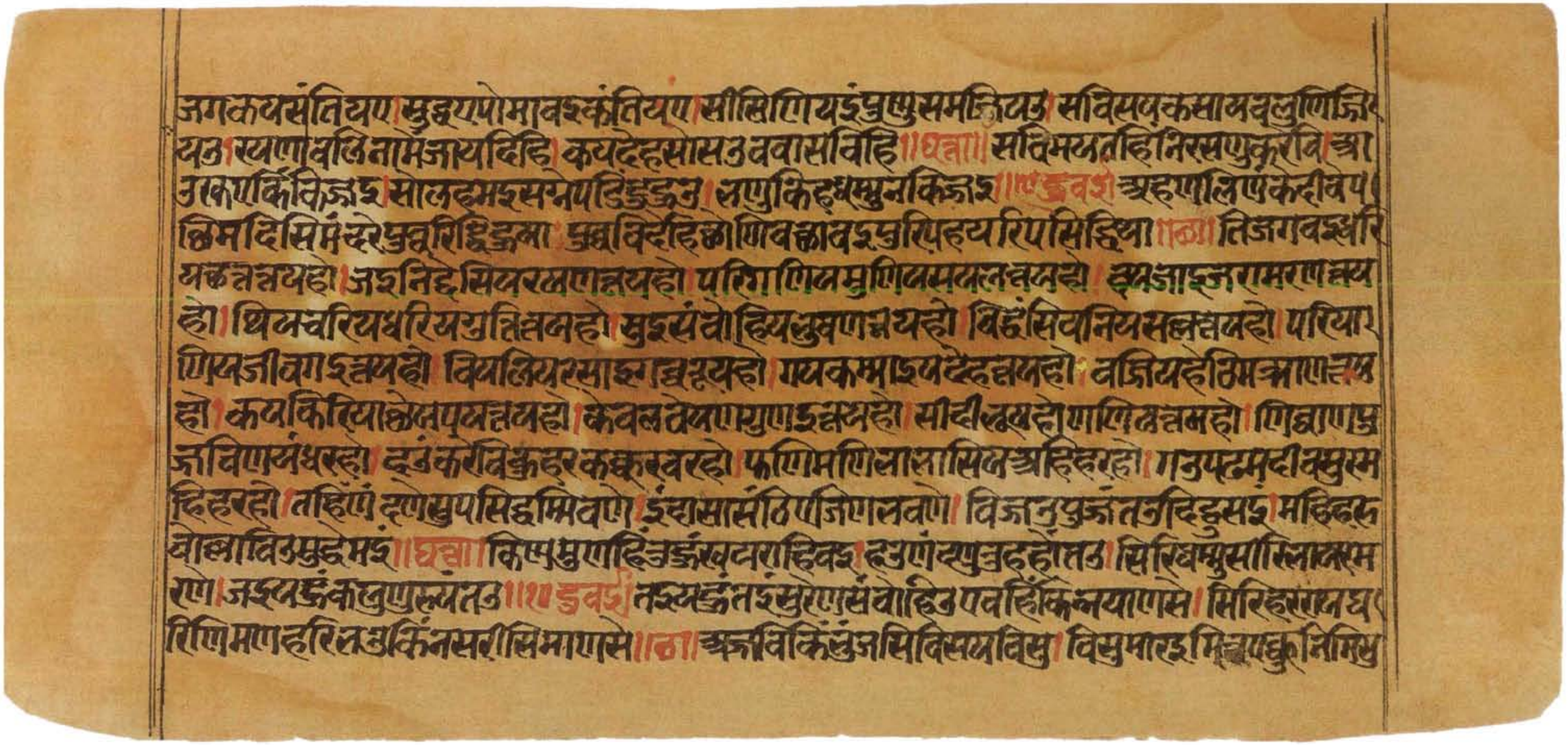

विश्व में शान्ति स्थापित करनेवाली आर्यिका पद्मावती कान्ता ने तप प्रदान किया। शिष्या ने पुण्य का समार्जन किया और अपनी विषयकषाय की शक्ति को जीत लिया। की गयी है देह शोषण की उपवास विधि जिसमें, ऐसे भाग्यजनक रत्नावली उपवास उसने किया।

घत्ता—वह भी वहाँ अनशन कर मृत्यु को प्राप्त हुई, आयु का क्षय होने पर क्या जीवित रहा जा सकता है? वह सोलहवें स्वर्ग में प्रतीन्द्र हुई। बताओ फिर धर्म क्यों नहीं किया जाता!॥ ९॥

१०

पुष्कर द्वीप की पश्चिम दिशा में मन्दराचल के पूर्व, पूर्वविदेह की भूमि पर वत्सकावती देश है। उसमें प्रभाकरी नाम की प्रसिद्ध नगरी है। जिन्होंने त्रिजगपति के तीन छत्रों को धारण किया है, जिन्होंने जग को तीन रत्नों का उपदेश दिया है, जिन्होंने तीनों कालों को परिगणित किया और समझा है, जिन्होंने जन्म-जरा और मृत्यु का नाश किया है। जिन्होंने आगम से तीनों भुवनों को सम्बोधित किया है, स्थिर चर्या से जिन्होंने तीन गुप्तियों को धारण किया है, जिन्होंने जीव की तीनों गतियों को जान लिया है[1]। जिन्होंने रसादि में तीनों गर्वों को नष्ट कर दिया है, जिनके तीनों शरीर (कार्मिक, औदारिक और तैजस) जा चुके हैं, जिसमें नीचे के तीनों ध्यान छोड़ दिये हैं, जिन्होंने क्रियाछेदोपस्थापना का प्रयत्न किया है, जो केवलज्ञान गुण से युक्त हैं, जो कभी शिथिल नहीं हुए, जो अपने यत्न में लीन हैं, ऐसे विनयधर स्वामी और पर्वत शिखर की पूजा कर, मैं जिसमें नागों के फणमणियों की कान्ति से प्राचीन देवधर आलोकित हैं, प्रथम द्वीप के ऐसे सुमेरु पर्वत पर गया था। वहाँ सुप्रसिद्ध नन्दनवन की पूर्व दिशा में स्थित जिनभवन में विद्या की पूजा करते हुए मैंने स्वयं राजा को देखा और उससे कहा—

घत्ता—हे विद्याधर राजा, क्या तुम मुझे नहीं जानते कि मैं तुम्हारा पुत्र था श्रीवर्मा नामका, कि जब बलभद्र भाई के मरने पर मैं रो रहा था॥ १०॥

११

तब तुम देव ने मुझे सम्बोधित किया था। उस समय क्या तुम यह नहीं जानते। श्रीधर राजा की गृहिणी मनोहरा के जन्म को क्या तुम मन में याद नहीं करते। आज भी विषयरूपी विष का भोग क्यों करते हो। हे मित्र, यह विष एक क्षण में मार देगा।

१. पाणिभुक्ता, लांगली और गोमूत्रिका।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

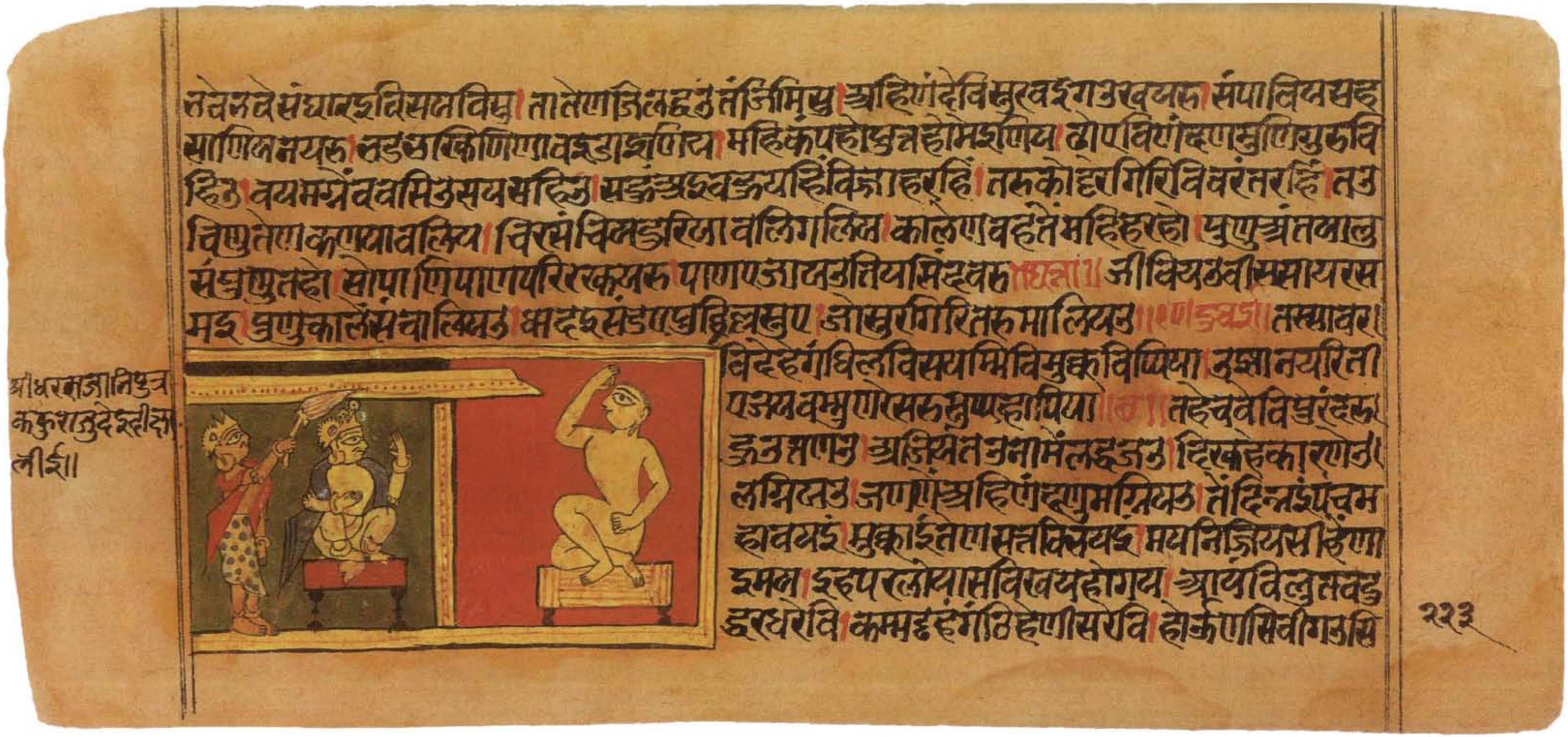

विषय-विष भव-भव में संहार करता है। तब उसी ने इस बात को ग्रहण कर लिया। सुरवरराज का अभिनन्दन कर विद्याधर सहसा अपने नगर आ गया। डाइन के समान योद्धाओं का भक्षण करनेवाली अपनी भूमि, अपने पुत्र महिपंक को देकर मुनिरूपी गुरु के द्वारा बताये गये उग्र व्रतमार्ग में अपने हित के लिए व्यवसाय करने लगा। तरु कोटर-गिरि-विवरों में रहनेवाली बहुत-सी विद्याधरियों के साथ उसने कनकावली व्रत ग्रहण कर लिया। और उसकी चिरसंचित पापावलि गल गयी। समय बीतने पर उस महीधर का अन्तकाल आ गया। प्राणियों के प्राणों की रक्षा करनेवाला वह राजा प्राणत स्वर्ग में देवेन्द्र हुआ।

घत्ता—वह बीस सागरपर्यन्त वहाँ जीवित रहा और काल के साथ वह वहाँ से चला। धातकी खण्ड में तरुओं से आछन्न जो पूर्व मेरु है॥ ११॥

१२

उसके पश्चिम विदेह के गन्धिल्ल देश में, अप्रिय चीजों से मुक्त अयोध्या नगरी है। उसका राजा जयवर्मा है और उसकी प्रिया सुप्रभा है। वहाँ से आकर वह इन्द्र उन दोनों का पुत्र हुआ, अजितंजय नाम से विजय प्राप्त करनेवाला। राजा दीक्षा के पीछे पड़ गया। पिता ने (मुनि) अभिनन्दन से याचना की। उन्होंने उसे पाँच महाव्रत दिये। उसने सातों भयों को छोड़ दिया। मृगों को विजित करनेवाले सिंह से जैसे सिंह नष्ट हो जाते हैं, वैसे ही उसकी भी इहलोक और परलोक की आशाएँ नष्ट हो गयीं। कठोर आचाम्ल तप का आचरण कर कर्म की आठों गाँठों को नष्टकर वह शिवी होकर, शिवपद के लिए चला गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

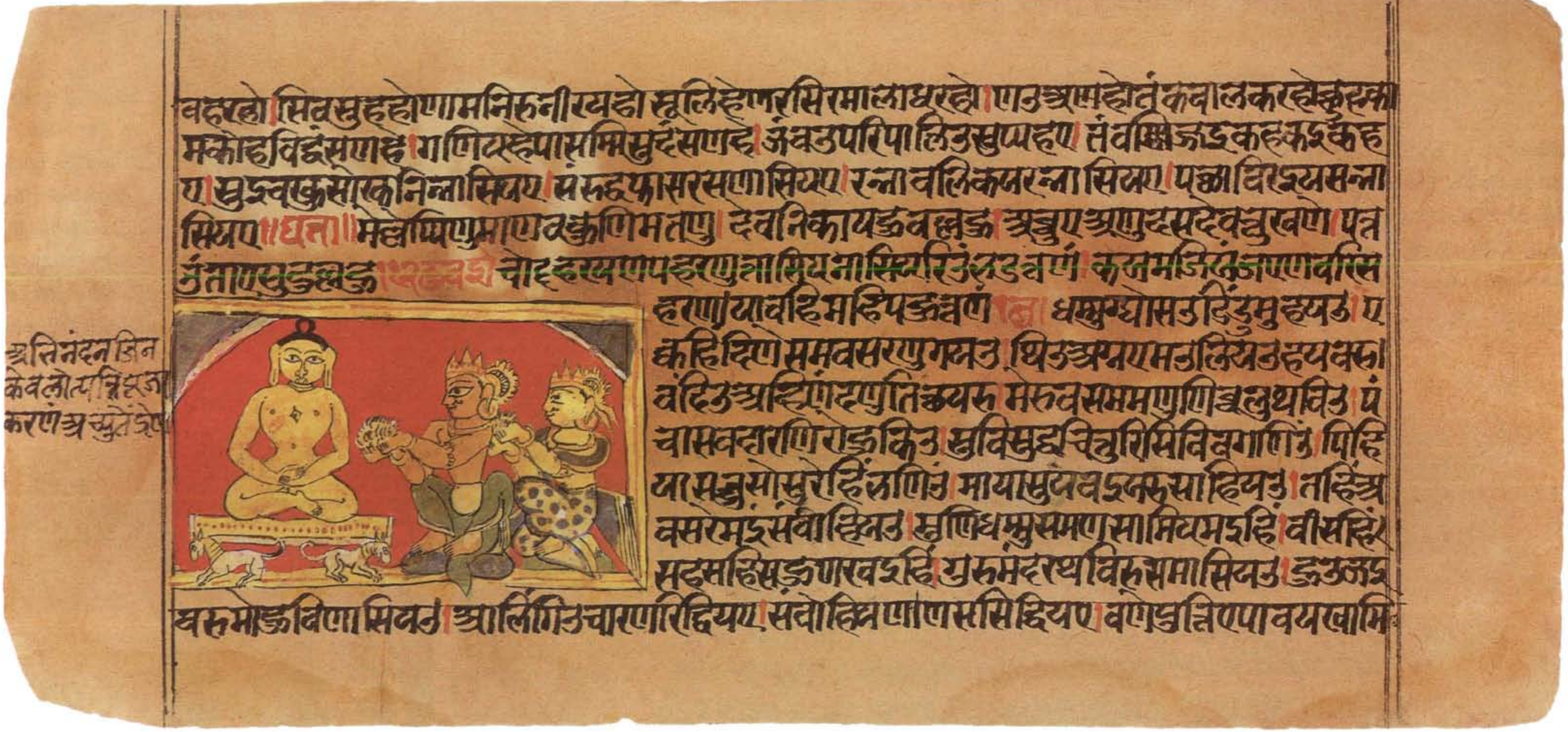

निरामय सुख का नाम ही शिव है। किसी दूसरे त्रिशूली नरमुण्डों की माला धारण करनेवाले हाथ में कपाल लेनेवाले का नाम शिव नहीं है। क्षुधा, काम और क्रोध का नाश करनेवाली सुदर्शना के पास सुप्रभा ने व्रत का पालन किया, उसका वर्णन कविकथा के द्वारा कैसे किया जा सकता है? कानों और आँखों के सुखों का नाश करनेवाले स्पर्श और रसना इन्द्रियों के स्वाद पर अंकुश लगानेवाले रत्नावली व्रत और रत्नत्रय से युक्त और बाद में संन्यास धारण करनेवाली—

घत्ता—उसने मनुष्य के कुनिमित्तों को छोड़ते हुए सुदुर्लभ देवनिकाय के अच्युत स्वर्ग में अनुदिश विमान में देवत्व प्राप्त कर लिया॥ १२॥

१३

चौदह रत्नों और प्रहरणों से शत्रुओं के सुभटत्व को त्रस्त और ध्वस्त करनेवाली धरती की प्रभुता अजितंजय ने क्षेत्र विभाग और पर्वतादि की अवधि बनाकर की। धर्म की घोषणा करनेवाली डुगडुगी पिटवाकर वह एक दिन समवसरण में गया। अपने दोनों हाथ जोड़कर उसने तीर्थंकर अभिनन्दन की वन्दना की और उनके आगे बैठ गया। वह मेरु के समान निश्चल मन स्थित था। उसने पाँचों आस्रवों के द्वारों को रोक लिया। विशुद्ध चित्त वह मुनि के समान समझा गया। वह देवों के द्वारा पिहितास्रव कहा गया। मैंने उस अवसर पर माता और पुत्र का वृत्तान्त कहा और उसे सम्बोधित किया। मुनिधर्म को सुनने के कारण शान्त मतिवाले बीस हजार राजाओं के साथ, यह गुरुमन्दर मुनि की शरण में गया और मुनि होकर उसने मोह का नाश कर दिया। चारण ऋद्धियों और सर्वावधिज्ञान की संसिद्धि से आलिंगित हुआ। क्षमा को प्राप्त करनेवाली वणिक् पुत्री

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

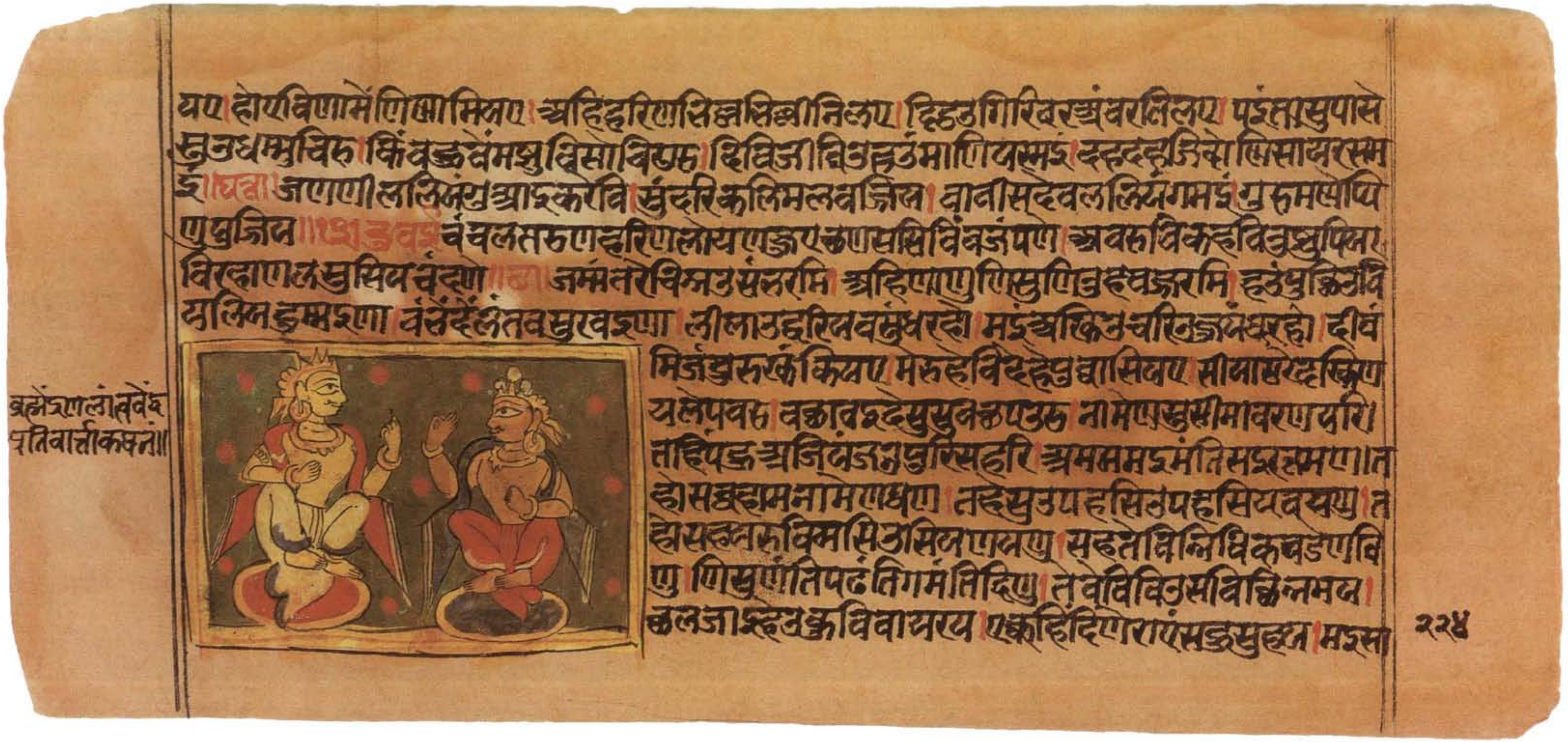

तूने निर्नामिका नाम से होकर साँप, हरिण, भील और भीलनियों के घरस्वरूप अम्बरतिलक पर्वत में उन्हें देखा। उनके पास बहुत समय तक धर्म सुना। बहुत कहने से क्या, वही मेरे भी गुरु हैं। स्वर्ग में हम दोनों रमण को मानते हुए, दस-दस सागर (बीस सागर) जिये।

घत्ता—हे सुन्दरी जननी, (पहला ललितांग देव) कलिमल से रहित करने के लिए आयी और बाईसवें देव ललितांग को मैंने गुरु मानकर पूजा है॥१३॥

१४

चंचल और तरुण हरिण के नेत्रों के समान द्युतिवाली, चन्द्रमा के बिम्ब के समान कही जानेवाली और विरह की महाग्नि से चन्दन को सुखा देनेवाली हे प्रिये, तेरी और भी कहानी है। मुझे जन्मान्तर का वृत्तान्त याद आ रहा है, उसका अभिज्ञान सुनो, मैं तुम्हें बताता हूँ। विगलित है दुर्मति जिसकी, ऐसे ब्रह्मेन्द्र, लान्तव, सुरपति के द्वारा पूछे जाने पर मैंने लीला से वसुन्धरा का उद्धार करनेवाले युगन्धर का चरित कहा। जम्बूद्वीप के सुमेरु पर्वत के पूर्व विदेह में सीता नदी के दक्षिण तट पर वत्सकावती देश है, जो वृक्षों से प्रचुर है। उसमें सुसीमा नाम की श्रेष्ठ नगरी है। उसका राजा पुरुष श्रेष्ठ अजितंजय था। उसका मन्त्री अमृतमति स्वच्छन्द मनवाला था। उसकी सत्यभामा नाम की पत्नी थी। उसका पुत्र प्रहसित, प्रहसित मुखवाला था। उसका मित्र विकसित था, जिसकी आँखें श्वेत थीं। वे दोनों बिना किसी कपट के साथ-साथ सुनते-पढ़ते हुए दिन बिता रहे थे। वे दोनों ही विद्वान् थे और घमण्ड से दूर थे। छल-जाति-हेतु और कुविवाद में प्रवीण थे। एक दिन दोनों मित्र राजा के साथ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

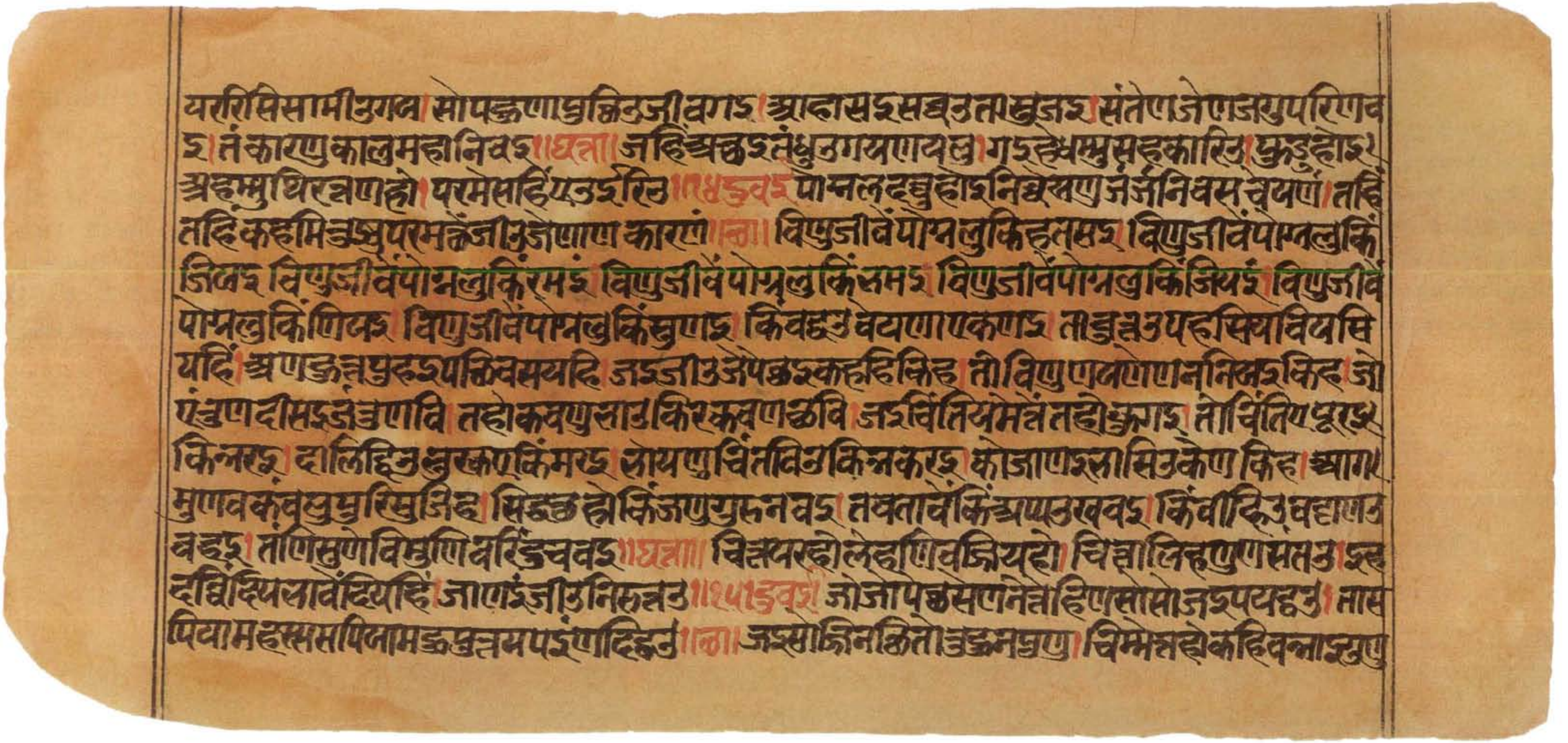

मतिसागर ऋषि के पास गये। राजा ने उससे जीवगति पूछी। मुनि उसे सब कुछ बताते हैं। जिसके रहने से जग परिणमन करता है, हे महानृपति, उसका कारण काल है।

घत्ता—जहाँ वह काल विद्यमान है वह निश्चय से आकाशतल है। गति का सहकारी धर्मद्रव्य है और स्थिरता का स्पष्ट कारण अधर्मद्रव्य है। ऐसा परमेश्वर ने कहा है ॥ १४ ॥

१५

पुद्‌गल द्रव्य अचेतन होता है, हे नृप! जो-जो सचेतन है, मैं तुझसे कहता हूँ कि वहाँ-वहाँ वास्तव में जीव ही ज्ञान का कारण है। बिना जीव के क्या पुद्‌गल त्रस्त होता है? बिना जीव के क्या पुद्‌गल हँसता है? बिना जीव के क्या पुद्‌गल रमण करता है? बिना जीव के क्या पुद्‌गल भ्रमण करता है? बिना जीव के क्या पुद्‌गल जीवित रहता है? बिना जीव के क्या पुद्‌गल देख सकता है? बिना जीव के क्या पुद्‌गल सुनता है? क्या वेदना से विद्ध होकर चिल्लाता है? इस पर पृथ्वी और राजा की श्री का अनुभव करनेवाले प्रहसित और विकसित ने कहा—यदि जीव ही देखता है और कथा कहता है, तो बिना आँखों के वह क्यों नहीं देखता? जो न आते हुए दिखाई देता है और न जाते हुए उसका कैसा भाव और कैसी छवि? यदि चिन्तामात्र से उसे कुगति होती है, तो वह चिन्ता क्यों करता है, अपनी कामना पूरी क्यों नहीं करता? 'दरिद्र' भूख से क्यों मरता है, वह चिन्तित किया गया भोजन क्यों नहीं करता? कौन जानता है किसने क्या कहा है? आगम नव कम्बल पुरुष (नया कम्बल या नौ कम्बल) के समान है। सिद्धान्त के लिए लोग गुरु को प्रणाम क्यों करते हैं? तप के ताप में स्वयं को क्यों नष्ट करते हैं? क्या दूसरा मार्ग नहीं है? यह सुनकर, मुनिवर कहते हैं—

घत्ता—जिस प्रकार लेखनी से रहित चित्रकार का चित्र लेखन नहीं है, उसी प्रकार जीव द्रव्येन्द्रियों और भावेन्द्रियों को निश्चित रूप से जानता है ॥ १५ ॥

१६

नेत्रों के द्वारा जो-जो नहीं देखते, यदि वह-वह पदार्थ नहीं है, तो हे पुत्र! अपने पितामह के पितामह को तुमने नहीं देखा। यदि वह भी नहीं है, तो फिर तुम भी नहीं हो, चिन्मात्र में वर्णादि गुण कैसे हो सकते हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

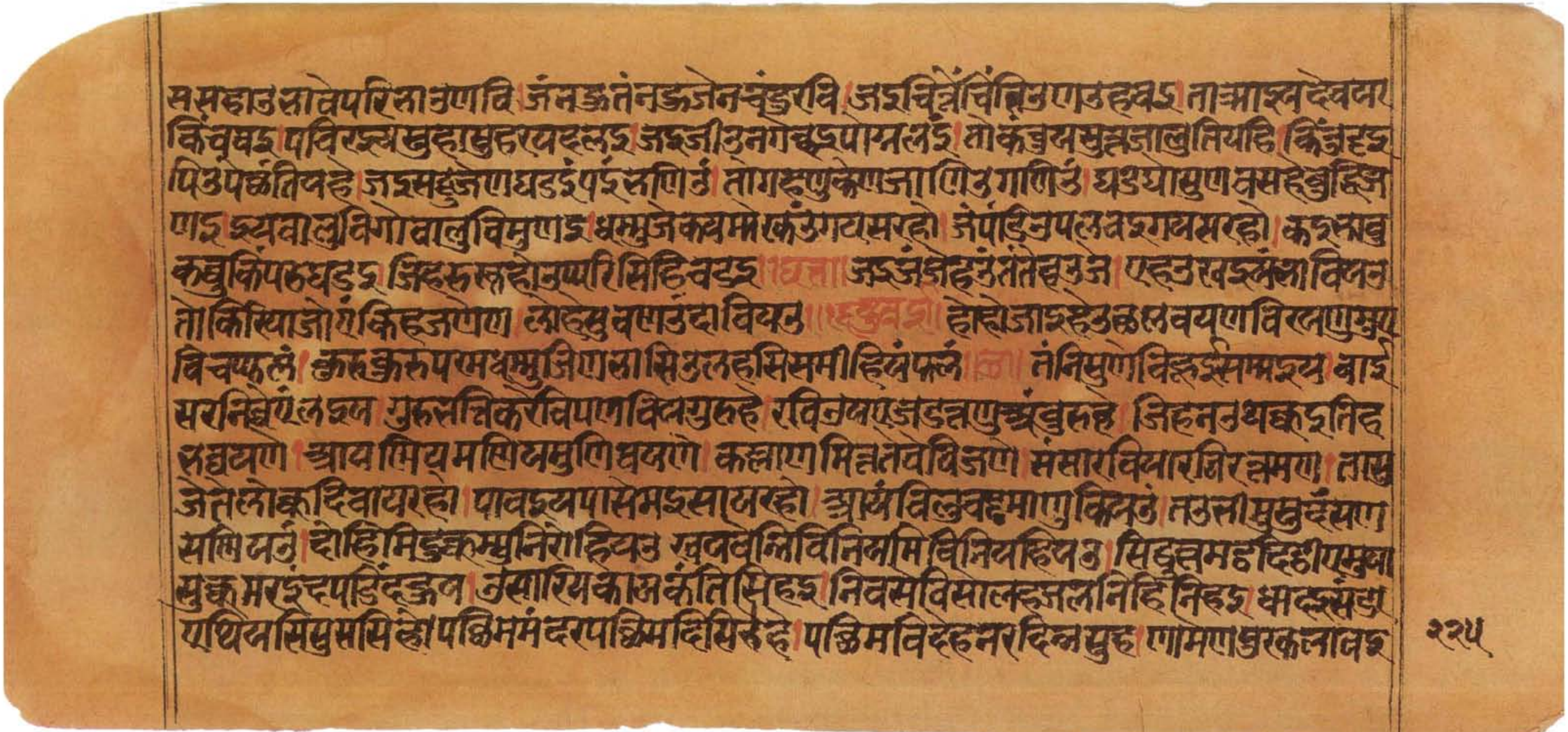

उसमें स्वभाव, परभाव और भाव भी नहीं है, जो नभ है, वह नभ ही है, चन्द्रमा रवि नहीं है, यदि चित्त के द्वारा वृत्ति उत्पन्न नहीं होती तब ध्यान किया गया देवता क्या कहता है? यदि शुभ-अशुभ कर्मदल की रचना करनेवाले पुद्गलों को जीव ग्रहण नहीं करता, तो प्रिय को देखती हुई स्त्रियों का कंचुकी का सूत्रजाल क्यों टूट जाता है? जो तुमने यह कहा कि आगम ही घटित नहीं होता, तो ग्रहण को किसने जाना और गिना? घट शब्द बैल में बुद्धि पैदा नहीं करता (अर्थात् घट शब्द से बैल का अर्थ ग्रहण नहीं होता) यह बात तो बाल-गोपाल भी जानता है। गत सर (कामदेव से रहित) का धर्म ही चारित्र है, जो मोक्ष करता है। लेकिन पण्डित अर्थात् वितण्डावादी, गतसर (गत बाण) में धनुष की योजना करता है, कविभाव काव्य की रचना किस प्रकार करता है, जिस प्रकार पेड़ के ऊपर मयूर चढ़ जाता है।

घत्ता—और जो तुम लोगों ने यह सम्भावना की है जो जैसा है, वह वैसा ही होता? तो फिर लोगों के द्वारा क्रिया योग के द्वारा लोहे से सोना कैसे बना दिया जाता है?॥ १६ ॥

१७

हो-हो, जाति हेतु छलपूर्ण वचन की चपल रचना छोड़कर, जिन के द्वारा कथित धर्म का आचरण करो मनचाहा फल प्राप्त करोगे। यह सुनकर उन्हें सन्मति हुई। दोनों वादीश्वर वैराग्य को प्राप्त हुए। भारी भक्ति कर गुरु के लिए प्रणाम किया। जिस प्रकार सूर्योदय होने पर कमलों की जड़ता चली जाती है, उसी प्रकार मुनि वचनों को सुनने और माननेवालों में जड़ता का भाव नहीं रहता। वे दोनों ही कल्याणमित्र संसार का विचार करते हुए विरक्त हो गये। तथा उन्हीं त्रिलोक दिवाकर मतिसागर मुनि से दीक्षा ग्रहण कर ली। उन्होंने आचाम्ल, वर्धमान और सुदर्शन नाम के भीषण तप किये। दोनों ने दुष्कर्म का विरोध किया और अपने हित का नियमन कर दोनों ने उसे नष्ट कर दिया। आगमों में प्रतिपादित चार प्रकार के आहारों के त्याग और उत्तम दृष्टि से वे मृत्यु को प्राप्त कर शुक्र स्वर्ग में इन्द्र तथा प्रतीन्द्र हुए। अन्तिम समय अपनी शिखाज्योति नष्ट करनेवाले वे दोनों सोलहसागर पर्यन्त वहाँ निवास कर, धातकी खण्ड द्वीप में शिशु-चन्द्रमा के समान शुभ्र पश्चिम सुमेरु की पश्चिम दिशा में पश्चिम विदेह में जनों को सुख देनेवाली पुष्कलावती नाम की वसुधा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—उसमें पुण्डरीकिणी नाम की नगरी है। उसमें धनंजय नाम का राजा रहता था। उसकी पत्नी जयसेना थी, जो मानो कामदेव की सेना थी, और दूसरी पत्नी यशस्वती थी॥ १७॥

१८

वे दोनों इन्द्र और प्रतीन्द्र, जो मानो चन्द्रमा के समान शुभ्र तथा भ्रमण करनेवाले, पावस के विनाश के समय प्रवेश करते हुए मेघ हों, आकर उनके पुत्र हुए। राक्षसों का श्रेष्ठ शत्रु प्रहसित इन्द्र जयसेना का पुत्र बलभद्र हुआ और प्रतीन्द्र विकसित अपने निदान के कारण तपश्चरण से तुच्छ भोगों को नष्ट करनेवाला यशस्वती का पुत्र नारायण हुआ। वैसे ही जैसे पहाड़ को चीरता हुआ नदी का वेग। महाबल और अतिबल नामवाले तीनों लोकों के मंगल स्वरूप लक्ष्मी का भोग करते हुए उनमें-से नारायण मर गया। अतिबल होते हुए भी वह काल के ऊपर नहीं था। अपने भाई का अन्त देखकर महाबल बलभद्र ने अपने मन को मुक्त नहीं छोड़ा। वन में प्रवेश कर कामदेव के शब्द सुनकर समाधिगुप्त मुनि के पैरों में प्रणाम कर, तप लेकर और मरकर प्राणत स्वर्ग में देवेश्वरत्व कर बीस सागर आयु के बाद पुन: वहाँ से च्युत हुआ, अन्तराय के द्वारा कौन नहीं प्रवंचित किया जाता? पूर्वोक्त द्वीप के भागान्तर में ही (अर्थात् धातकी खण्ड के पूर्वविदेह में) जिसमें सूर्य तपता है, ऐसी वत्सकावती नाम की भूमि है। उसमें प्रभाकरी नगरी है। जनों से संकुल, उसमें महासेन राजा की देवी वसुन्धरा है।

घत्ता—कामदेव से मदालस उस देवी के गर्भवास का सेवन कर चौदहवें स्वर्ग का कल्पवासी इन्द्र मनुष्य रूप में उत्पन्न हुआ॥ १८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

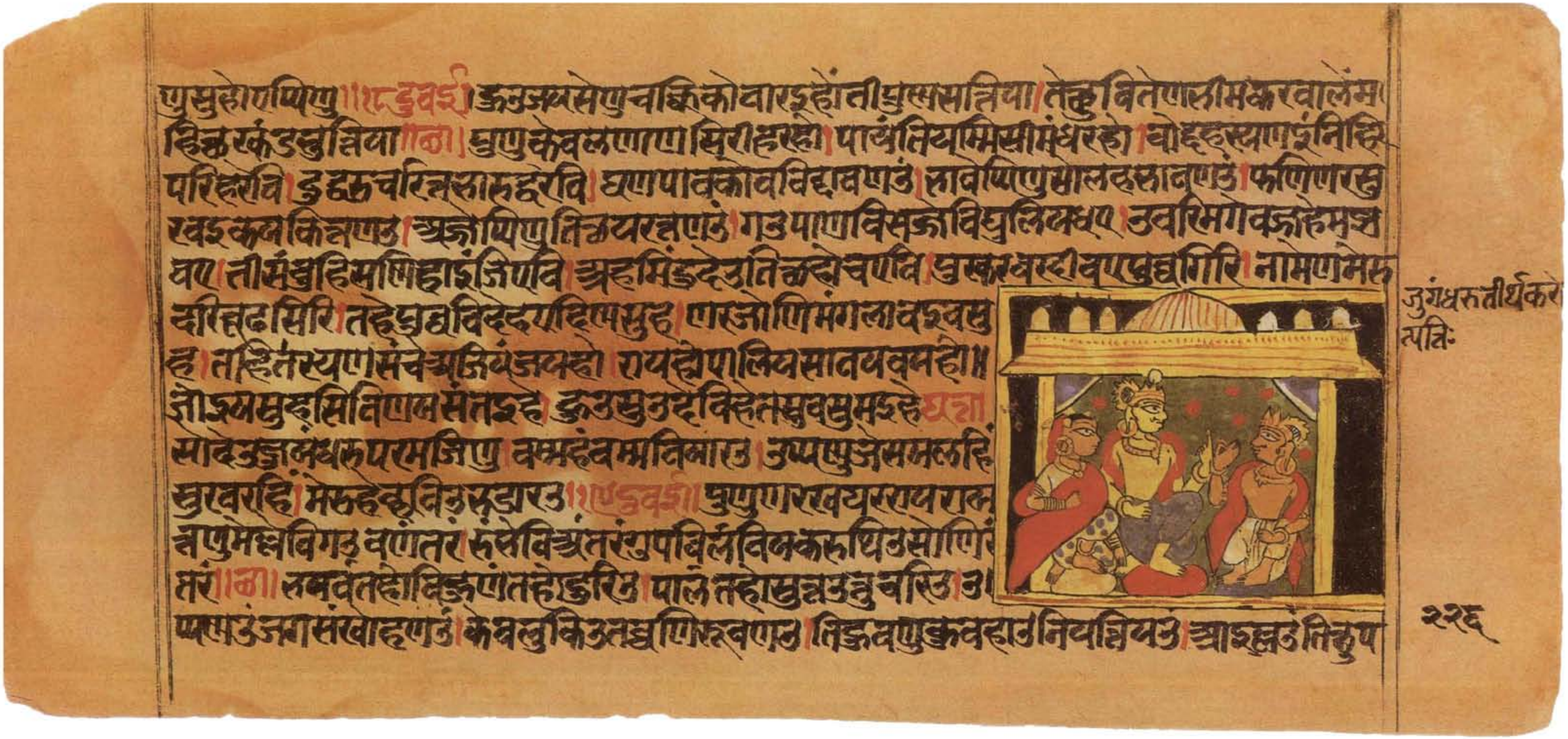

१९

वह जयसेन चक्रवर्ती हुआ। होती हुई पुण्यशक्ति का निवारण कौन कर सकता है? वहाँ भी उसने अपनी भयंकर तलवार से छह खण्ड धरती का उपभोग किया। फिर केवलज्ञानरूपी श्री को धारण करनेवाले सीमन्धर स्वामी के चरणों के मूल में चौदह रत्नों और निधियों को छोड़कर दुर्धर चरित्रभार उठाकर, विद्युत की तरह विद्रवित होकर, सोलह भावनाओं का ध्यान कर, नाग-नर और देवेन्द्र जिसका कीर्तन करते हैं, ऐसे तीर्थंकरत्व का अर्जन कर, प्राणों का विसर्जन करते हुए, उड़ती हुई पताकाओं से युक्त मध्यम ग्रैवेयक विमान में अहमेन्द्र हुआ। वहाँ पर तीस सागरप्रमाण आयु जीकर, वह अहमेन्द्र च्युत होकर पुष्कर द्वीप के पूर्व विदेह में मेरसिरि और व्यूढसिरि नाम का गिरि है, उसके पूर्व विदेह में सुख देनेवाली मनुष्यभूमि मंगलावती नाम की वसुधा है। वहाँ रत्नसंचय नाम के नगर में श्रावक व्रतों का पालन करनेवाले राजा अजितंजय का, सुन्दर स्वप्नावली को देखनेवाली वसुमती देवी का वह पुत्र हुआ।

घत्ता—वह देव कामदेव के मर्म का निवारण करनेवाला युगन्धर परम जिन उत्पन्न हुआ। समस्त सुरवरों ने मेरुपर्वत पर आदरणीय उनका अभिषेक किया॥ १९॥

२०

वे फिर नर और विद्याधर राज का राजपाट छोड़कर वन के लिए चले गये। अपने मन को रोककर हाथ लम्बे किये हुए वह लगातार स्थित रहे। ज्ञानवान् पाप को नष्ट करते हुए, आगमोक्त चरित्र का पालन करते हुए उन्हें संसार में क्षोभ उत्पन्न करनेवाला और तत्त्वों का निरूपण करनेवाला केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। उन्होंने मुख्य तीर्थ का

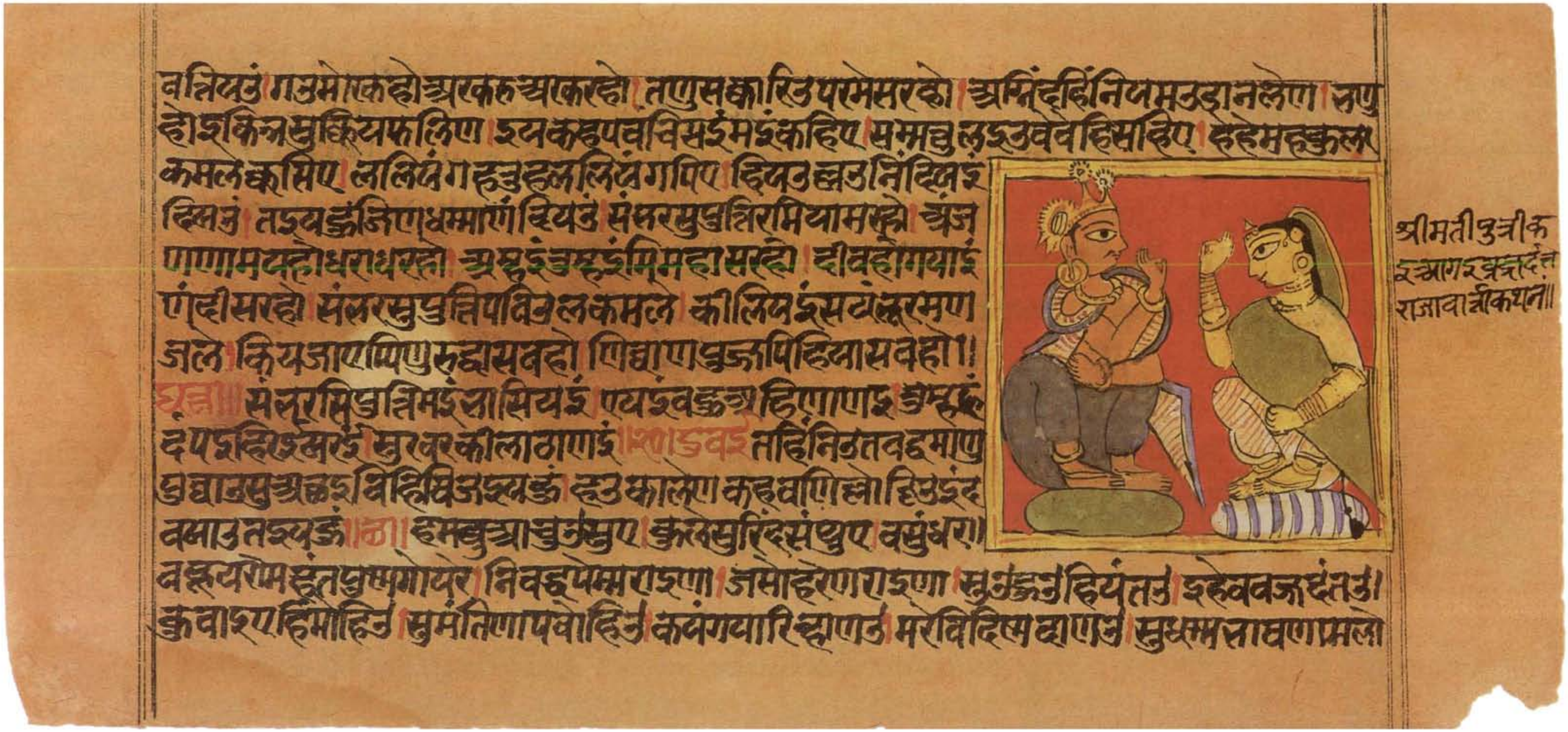

प्रवर्तन किया, और त्रिभुवन को कुपथ पर जाने से रोका। अविनश्वर वह अक्षय मोक्ष के लिए गये। परमेश्वर के शरीर का संस्कार, अग्नीन्द्र के द्वारा अपने मुकुट की आग से किया गया। बताओ पुण्य के फल से क्या नहीं होता? इस प्रकार मेरे कथा-प्रपंच करने पर देवों ने अपने हित में सम्यक्त्व ग्रहण कर लिया। हे-हे मेरे कुल-कमल की एकमात्र श्री लिलतांग प्रिये, तुम्हारे ललितांग का इन्द्रियों की निन्दा करनेवाला हृदय उस समय जिनधर्म से आनन्दित हो गया। हे पुत्री, तुम, जिसमें देव रमण करते हैं, ऐसे अंजना नाम के पर्वत को याद करती हो। हम और तुम, महासरोवरवाले नन्दीश्वर द्वीप गये थे। पुत्री तुम याद करती हो, प्रचुर कमलोंवाले स्वयम्भूरमण समुद्र के जल में हमने क्रीड़ा की थी। और फिर जाकर, आस्रव को रोक देनेवाले पिहितास्रव की निर्वाण पूजा की थी।

घत्ता—हे पुत्री, मेरे द्वारा कहे गये इन बहुत-से अभिज्ञानों को तुम याद कर रही हो? तुम दम्पति ने जिन रतिगृह और सुरवर के क्रीड़ा-स्थानों को भोगा था॥ २०॥

२१

वहाँ जब तुम्हारे पूर्व आयु के नियुत का आधा, अर्थात् पचास हजार वर्ष आयु शेष बची, और जब दोनों वहाँ थे, तब काल ने किसी प्रकार मुझे हटा दिया। हे पुत्री, स्वर्ग से च्युत होकर मैं सुरेन्द्र संस्तुत कुल में पुण्यों से प्रत्यक्ष रानी वसुन्धरा के उदर से रानी से बद्धप्रेम राजा यशोधर का सुन्दर पुत्र हुआ, यहीं वज्रदन्त नाम का। जो कुवादियों के द्वारा गुम कर दिया गया था परन्तु सुमन्त्री ने उसे प्रबोधित कर लिया था। जिनेन्द्र का अभिषेक करनेवाला, दान देनेवाला सुधर्म की भावना से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खगाहिवो महाबलो । इज्झसज्झणाणाणए । सिरिप्पहे विमाणए । ललियंगुहणामउ । सव्व

वज्जित्तकामउ । कंठसुरोडवी समो । महंतुकूसमूलिमो । पियहु सा ।
अणामिया । गयानणाखवाणिया । डमंपित्तम्पिङ्खिया । पहुयत्र
तिमिङ्खिया । दिवायुरस्सरणं यहा । सुलखणा सयपहा । कयंतचंडि
माहुर । उहंपिउतदिमउ । वरुप्पलाएखंडए । पुरंविचित्तमाडए । पलंव
यारवाहुणो । तिवस्सकूडवाहुणो । सुवप्पवप्पकायूने । कलंगणा
पजायणे । रविप्पहाडलंघउ । मयच्छिवज्जजंघउ । पिकेसुयासुहंक
र । मुहेसु हीणतपरा । समीवरुमिमंडले । वसंतितसु कोमले । सुरा
लयाउज्झाइन्ना । रमाचईपजाइया । उमसयंपहायरी । महंसुया
किसोयरी । वरंवरं विहाविहा । किरखणा विहा विही । पिमागमंपया सिहा दिणाहिंता ।
हिंसा ना सिद्दा । सिरीमई पन्नासियं । तएमइंपया सियं । सरामिहं परंसवं । विरंपिताप्रनंसवं ।
॥ घत्ता ॥ सुणि सणियच्चासि समासियउ । सरहहो रिसहजिणेंदे । नवकुंदपुफ्फसंताहि हसंवि ॥ २२७
फुणु सुयलणियनरिंदे ॥ २३ ॥ छ ॥ इयमहापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपु

सन्धि २४

पुत्र और परिजनों के साथ वह मुझे लोचन-सुख देगा। हे पुत्री! सुनो, राजा जो तुम्हारा मामा है, (वह) आज आयेगा।

१

तुम अपना मुखकमल मलिन मत करो। हे पुत्री, आज सुन्दर सवेरा हुआ है। आज मैं आये हुए विनयशील अतिथि वज्रबाहु के लिए करणीय करूँगा। तुम शोक के क्लेशरूपी पंक को धो डालो। हे पुत्री, तुम आज अपने पति को देखो। वे माननीय आये हैं, मैं उन्हें मानता हूँ और शीघ्र आधे मार्ग तक जाकर उन्हें घर लाता हूँ। मैं जाता हूँ, यह कहकर जैसे ही राजा गया वैसे ही पण्डिता भवन पर पहुँची। उसने मुनियों को भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

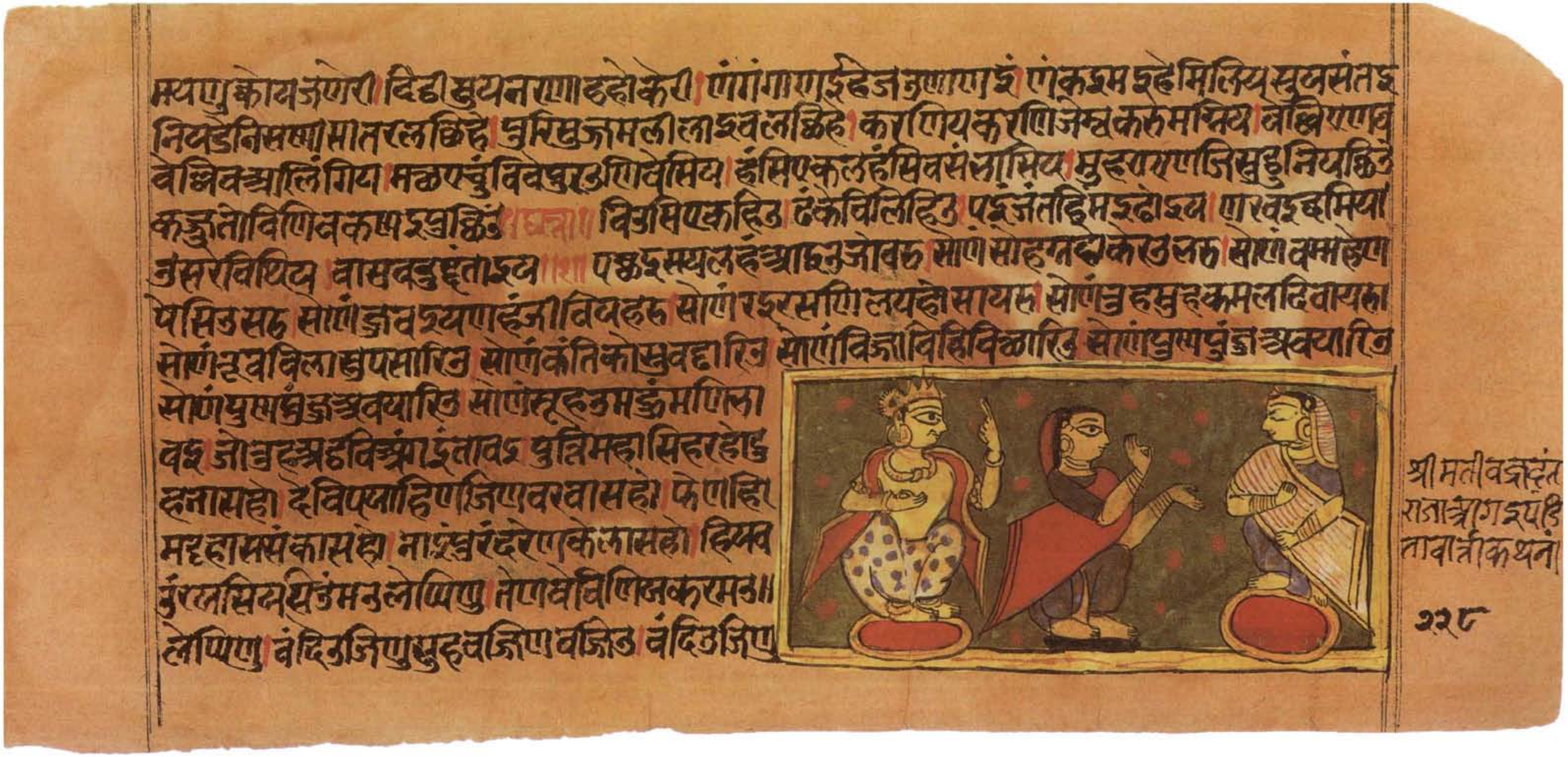

काम की उत्कण्ठा उत्पन्न करनेवाली राजा की कन्या को देखा। (वह उससे इस प्रकार मिली) जैसे यमुना नदी गंगा नदी से या श्रुत-परम्परा कवि की मति से मिली हो। चंचल आँखोंवाली उसके पास वह इस प्रकार बैठी जैसे लक्ष्मी के पास पुरुष की उद्यम लीला हो। हथिनी के द्वारा हथिनी से जिस प्रकार कर (सूँड) माँगी जाती है, उसने हाथ माँगा, जैसे एक लता दूसरी लता का आलिंगन करती है, उसी प्रकार एक ने दूसरी का आलिंगन किया। मस्तक में चूमकर सामने बैठाया। जैसे कलहंसी कलहंसी से बात करती है उस प्रकार उसने सम्भाषण किया। मुँह के राग से कहा गया उसने सब देख लिया, फिर भी राजकन्या ने कार्य के बारे में पूछा।

घत्ता—उस पण्डिता ने कहा कि तुमने जो चित्रपट चुपचाप लिखकर दिया था मैं उसे वहाँ ले गयी कि जहाँ दमित वासव दुर्दान्त आदि हटकर रह गये॥ १॥

२

जो वर सबसे बाद में आया वह मानो सौभाग्य का घर था। वह मानो कामदेव के द्वारा प्रेषित तीर है। वह मानो प्रेमरस के जल का समुद्र है। युवतीजनों के प्राणों का अपहरण करनेवाला तीर है। वह मानो तुम्हारे मुखरूपी कमल के लिए दिनकर है। वह मानो प्रसारित रूपविलास है। वह मानो बहुत बड़ा कान्तिकोष है, वह मानो विस्तारित विद्यानिधि है, वह मानो अवतरित पुण्य-समूह है। वह सुभग मेरे मन को भाता है और जो तुम्हारे आठों अंगों को जलाता है। जिसके बड़े शिखर हैं और जो दु:खनाशक हैं ऐसे जिन मन्दिर की उसी प्रकार प्रदक्षिणा देकर कि जिस प्रकार फेन हिम और अट्टहास के समान कैलास पर्वत की इन्द्र देता है, रति से विकसित अपने मन को मुकुलित (बन्द) कर तथा अपने दोनों हाथ जोड़कर पुण्यहीनों से दुर्लभ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

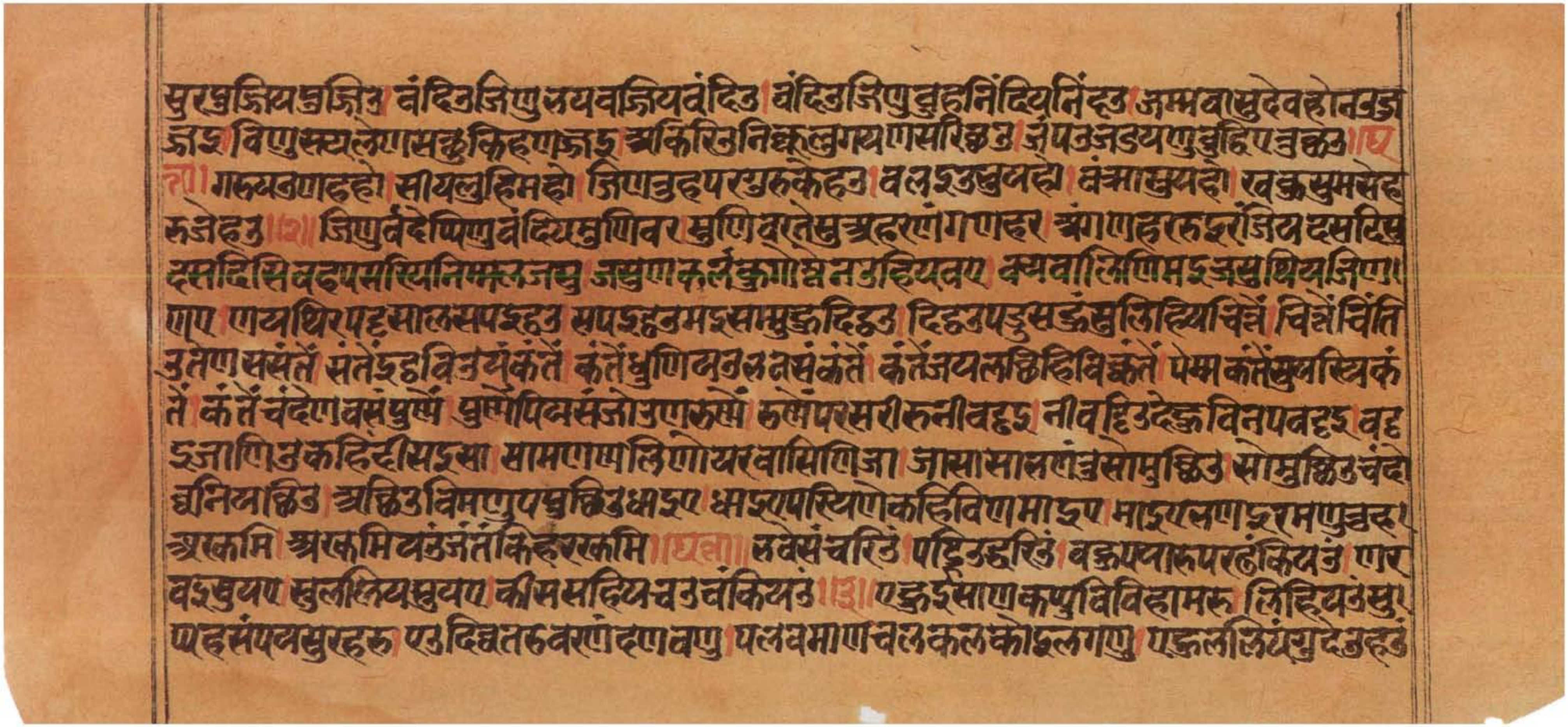

देवों के पूजितों के द्वारा पूज्य की वन्दना की, विश्ववन्दितों के द्वारा वन्दनीय की वन्दना की। पण्डितों के द्वारा निन्दितों के द्वारा निन्दित जिनवर की वन्दना की। देव का गर्भवास नहीं होता परन्तु शरीर के बिना (शिव का) शास्त्र कैसे युक्तियुक्त है। जो जड़जन बुद्धि से तुच्छ हैं, वे कहते हैं कि वह (शिव) निष्क्रिय निष्कल आकाश की तरह निराकार शून्य हैं।

घत्ता—हे जिन, आकाश से अधिक भारी, हिम से अधिक ठण्डा और तुमसे महान् गुरु कौन है? वह वैसा ही है, जैसे मुड़ी हुई भुजावाले बन्ध्यापुत्र के ऊपर आकाश-कुसुमों का शेखर॥ २॥

३

जिन की वन्दना कर, उसने मुनिवरों की वन्दना की। शुभ करनेवाले वे मुनि मानो गणधर हों। अपने अंगों और नखों की कान्ति से दसों दिशाओं को रंजित करता हुआ, दसों दिशाओं में अपना यश फैलाता हुआ, जिसके कुल और हृदय में कलंक नहीं है। व्रतों का पालन करनेवाली जिसकी मति जिननय में स्थित है, ऐसा नतशिर वह पट्टशाला में प्रविष्ट हुआ। प्रवेश करते हुए मैंने उसे सामने देखा। अपने सुलिखित चित्त से उसने पट्ट देखा और श्वास लेते हुए उसने सोचा। इष्ट के वियोग से पीड़ित उस उत्तम पुरुष ने जीवन की आशंका करते हुए अपना सिर हिलाया। विजयलक्ष्मी के लिए विक्रान्त सुन्दर, स्मृत प्रेम से उत्कण्ठित, सम्पूर्ण चन्द्रमा के समान सुन्दर (उसने सोचा) कि प्रियसंयोग पुण्य से होता है, रोने से नहीं। रोने से शरीर नष्ट होता है, शरीर नष्ट होने पर देव भी प्रवृत्त नहीं होता (काम नहीं करता) (पता नहीं) वह कहाँ है, कहाँ दिखाई देगी, जो मेरे मनरूपी कमल के भीतर निवास करनेवाली है।''जो वह, वह जो'' यह कहता हुआ वह मूर्च्छित हो गया। वह सौम्य चन्द्रमा के समान दिखाई दिया, धाय के द्वारा पूछा गया वह विमन बैठ गया। परिजन के दौड़ने (द्रवित) होने पर मन कहीं भी नहीं समाता। वह कहती है—हे पुत्री! तुम्हारा प्रिय बताती हूँ, जो कुछ उसने कहा है वह तुमसे कैसे छिपा सकती हूँ!

घत्ता—अच्छी तरह से आच्छादित, बहुत प्रकार से प्रतिलिखित यह पूर्वभवचरित राजपुत्री ने अपने सुन्दर हाथ से अपने हृदय के साथ कैसे अंकित कर दिया!॥ ३॥

४

''यह विविध देवोंवाला ईशान स्वर्ग है। यह श्रीमह विमान चित्रित है। यह दिव्य वृक्षोंवाला नन्दनवन है। यह बोलता हुआ सुन्दर कोकिलगण है। यह मैं ललितांग देव रहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

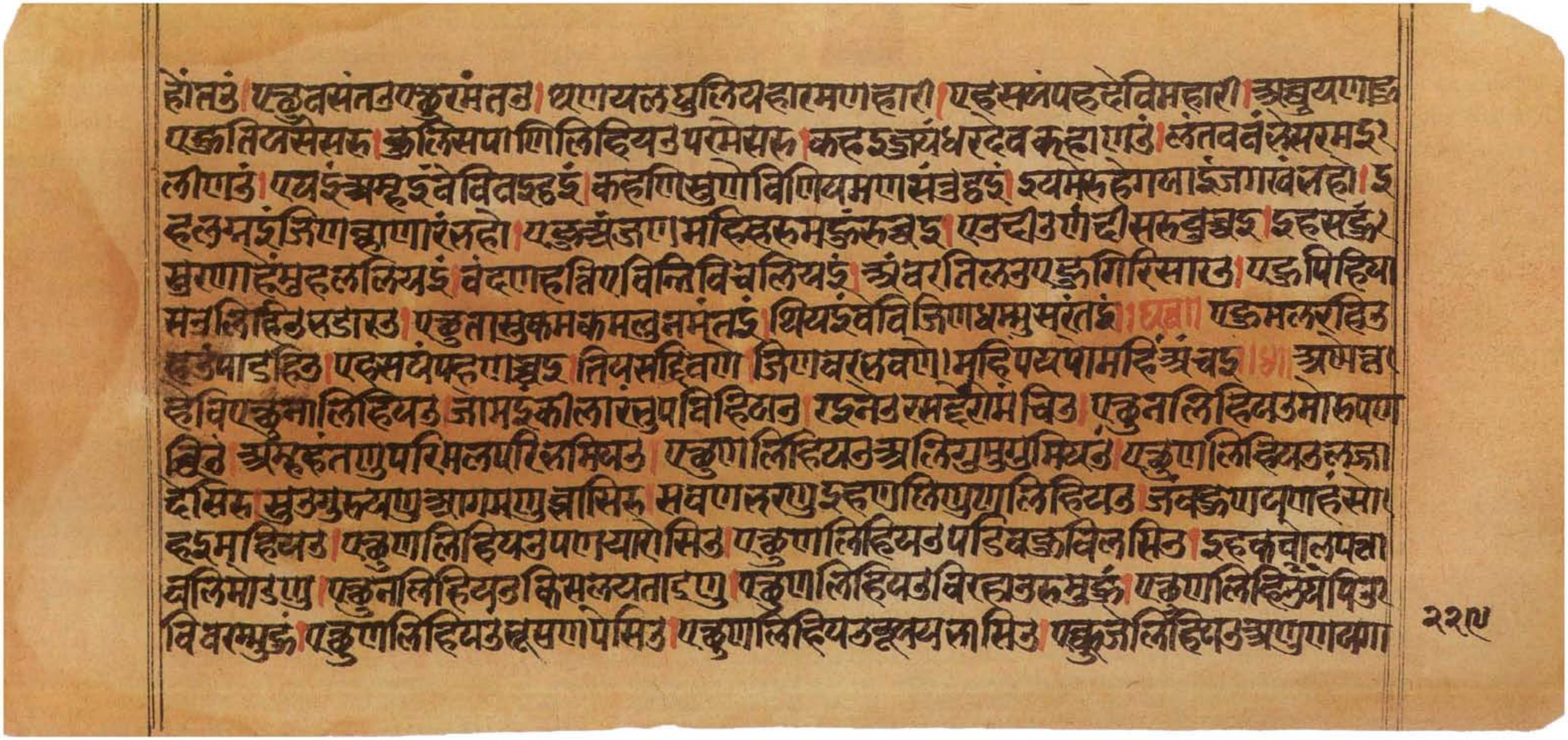

यहाँ बसता हुआ, यहाँ रमण करता हुआ। स्तनतलों पर आन्दोलित हार से सुन्दर यह हमारी प्यारी स्वयंप्रभा देवी है। देवों के इन्द्र यह अच्युतनाथ हैं। यह परमेश्वर इन्द्र चित्रित हैं। यह मुझमें लीन लान्तव ब्रह्मेश्वर युगन्धर देव का कथानक कह रहा है। ये हम दोनों बैठे हुए हैं। कथा सुनकर अपने मन में सन्तुष्ट हैं। ये हम विश्व के स्तम्भ सुमेरु पर्वत पर गये हुए हैं, ये हम जिनेन्द्र के अभिषेक में लगे हुए हैं। यह अंजन महीधर मुझे बहुत अच्छा लग रहा है, इसे नन्दीश्वर द्वीप कहा जाता है। यहाँ हम दोनों सुन्दर मुखवाले इन्द्र के साथ वन्दना-भक्ति के लिए गये थे। यह पर्वतश्रेष्ठ अम्बरतिलक है। यह आदरणीय पिहिताश्रव चित्रित हैं। यहाँ उनके चरणकमलों को प्रणाम करते हुए और जिनधर्म को सुनते हुए हम दोनों बैठे हुए हैं।

घत्ता—यह मैं निर्दोष नाट्याचार्य हूँ, और यह स्वयंप्रभा नृत्य कर रही है। त्रिसिद्धवन के जिनवरभवन में धरती चरणकमलों से शोभित है॥ ४॥

५

दूसरी जगह जो क्रीड़ा मैंने आरम्भ की थी वह यहाँ नहीं लिखी गयी। रति के नूपुर के शब्द से रोमांचित मयूर जो यहाँ नाचा था, वह यहाँ नहीं लिखा गया। हम लोगों के शरीर के परिमल से परिभ्रमित भ्रमर का गुंजन यहाँ नहीं लिखा गया। गुरुजनों के आगम की सूचना, और लज्जा का उपदेश देनेवाला शुक यहाँ चित्रित नहीं किया गया। यहाँ कानों का आभूषण यह कमल नहीं लिखा गया, जो बधुओं के नेत्रों से भी अधिक महनीय शोभित है। यहाँ प्रतिबधू की चेष्टा चित्रित नहीं है, यहाँ पर प्रणयकोप चित्रित नहीं है यहाँ पर गालों की पत्र-रचना का मण्डन और किसलय-ताड़न लिखित नहीं है। यहाँ पर बिरहातुर मुँह लिखित नहीं है, यहाँ काँपता हुआ प्रिय मुँह नहीं चित्रित किया गया, यहाँ भेजा गया आभूषण नहीं चित्रित किया गया, यहाँ पर विरह से आतुर मुँह नहीं लिखा गया, यहाँ पर दूती का सम्भाषण नहीं लिखा गया। यहाँ एक ही चीज लिखी गयी है और वह है मुझपर कृपा करनेवाला

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

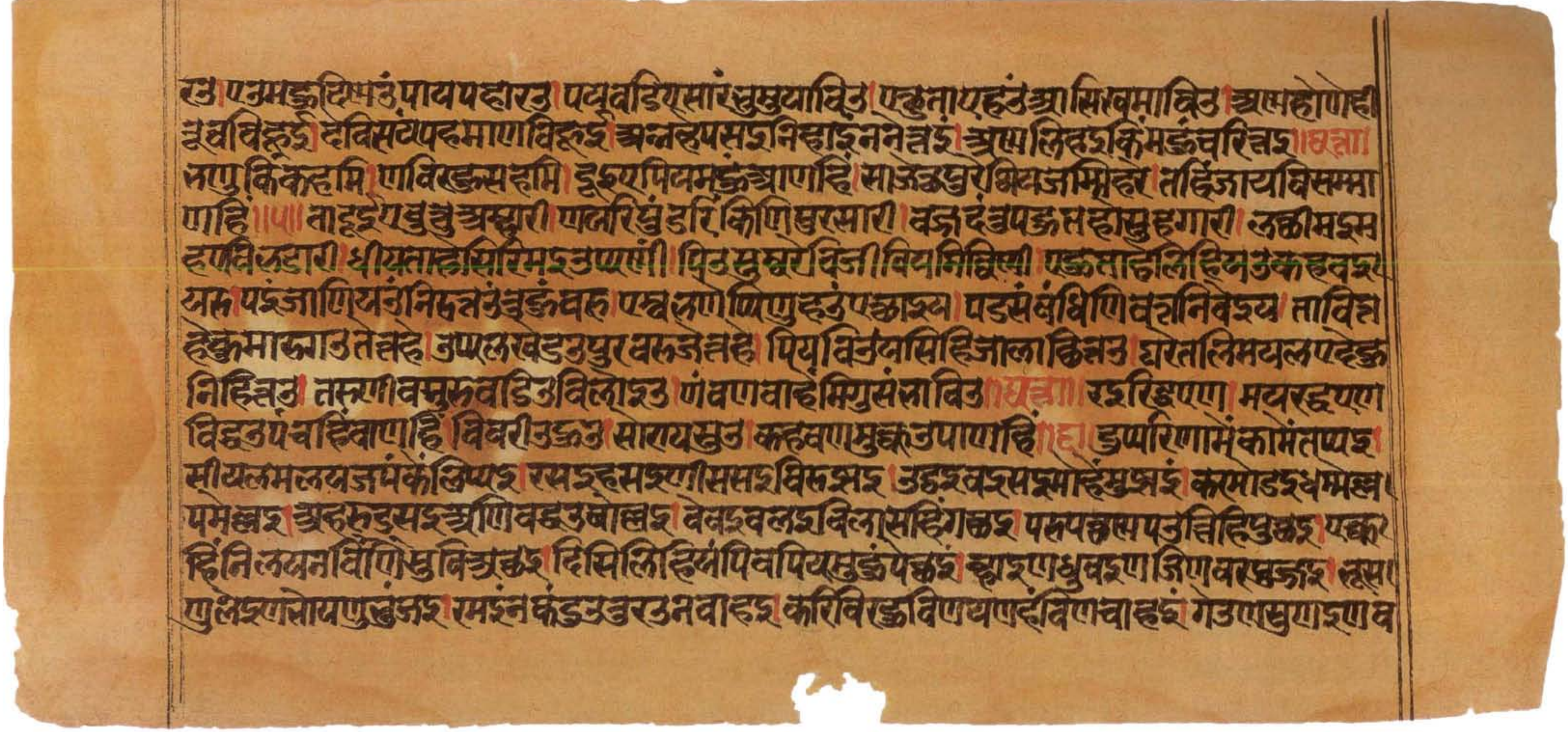

मुझपर किया गया पादप्रहार। मैंने पैरों पर पड़कर उसका क्रोध दूर किया था और यहाँ पर मैं उसके द्वारा क्षमा किया था। रूप की विभूति स्वयंप्रभा देवी अन्यत्र मानवी हुई है। माप (सौन्दर्य के) के निधान नेत्र क्या दूसरे के हैं। दूसरा कौन मेरा चरित्र लिख सकता है?

घत्ता—बताओ मैं क्या करूँ, मैं विरह सहन नहीं कर सकता। हे दूती, प्रिया को मेरे पास ला दो। वह जिस नगर में और घर में स्थित है वहाँ जाकर मेरी कुशल-वार्ता से उसे सन्तुष्ट करो''॥ ५ ॥

६

तब दूती बोली—''हमारी नगरी पुण्डरीकिणी सब नगरियों में श्रेष्ठ है। उसका कल्याण करनेवाला राजा वज्रदन्त है, उसकी आदरणीय महादेवी लक्ष्मीमती है। उसकी कन्या श्रीमती उत्पन्न हुई है, जो प्रिय की याद कर जीवन से विरक्त हो चुकी है। यह कथावृत्तान्त उसने लिखा है। तुमने इसे (वृत्तान्त को) जान लिया है, तुम निश्चित रूप से इसके वर हो। यह सोचकर मैं यहाँ आयी हूँ। पटचित्र सम्बन्धी वार्ता निवेदित की।'' इस बीच कुमार वहाँ गया कि जो उत्पलखेड़ नाम का नगर था। प्रिय के वियोग की ज्वाला से जलती हुई देह को घर के भूमितल में डाल दिया। युवती के जाल में पड़ा हुआ वह ऐसा दिखाई दिया मानो वनव्याधा ने मृग को आहत किया हो।

घत्ता—रति से समृद्ध कामदेव के द्वारा, पाँच बाणों से विद्ध वह राजकुमार एकदम छटपटाने लगा। किसी प्रकार उसने अपने प्राण-भर नहीं छोड़े ॥ ६ ॥

७

दुष्परिणामवाले काम से वह सन्तप्त है, शीतल चन्दन-लेप से उसका लेप किया जाता है। वह बोलता है, हँसता है, निःश्वास लेता है, विरुद्ध होता है, उठा हुआ बैठ जाता है, मोह से मुग्ध हो जाता है। हाथ मोड़ता है, बाल बिखराता है। ओठ काटता है, अण्टसण्ट बोलता है। काँपता है, मुड़ता है, विलासों के साथ जाता है। दूसरे से प्रच्छन्न उक्तियों से पूछता है। एक घर में वह पलमात्र भी नहीं ठहरता, न नहाता है, न धोता है, और न जिनवर की पूजा करता है। न आभूषण पहनता है और न भोजन ग्रहण करता है, न गेंद खेलता है। न घोड़े पर चढ़ता है। हाथी और रथ को तो वह आँखों से भी नहीं देखता। न गीत सुनता है और न वाद्य बजाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

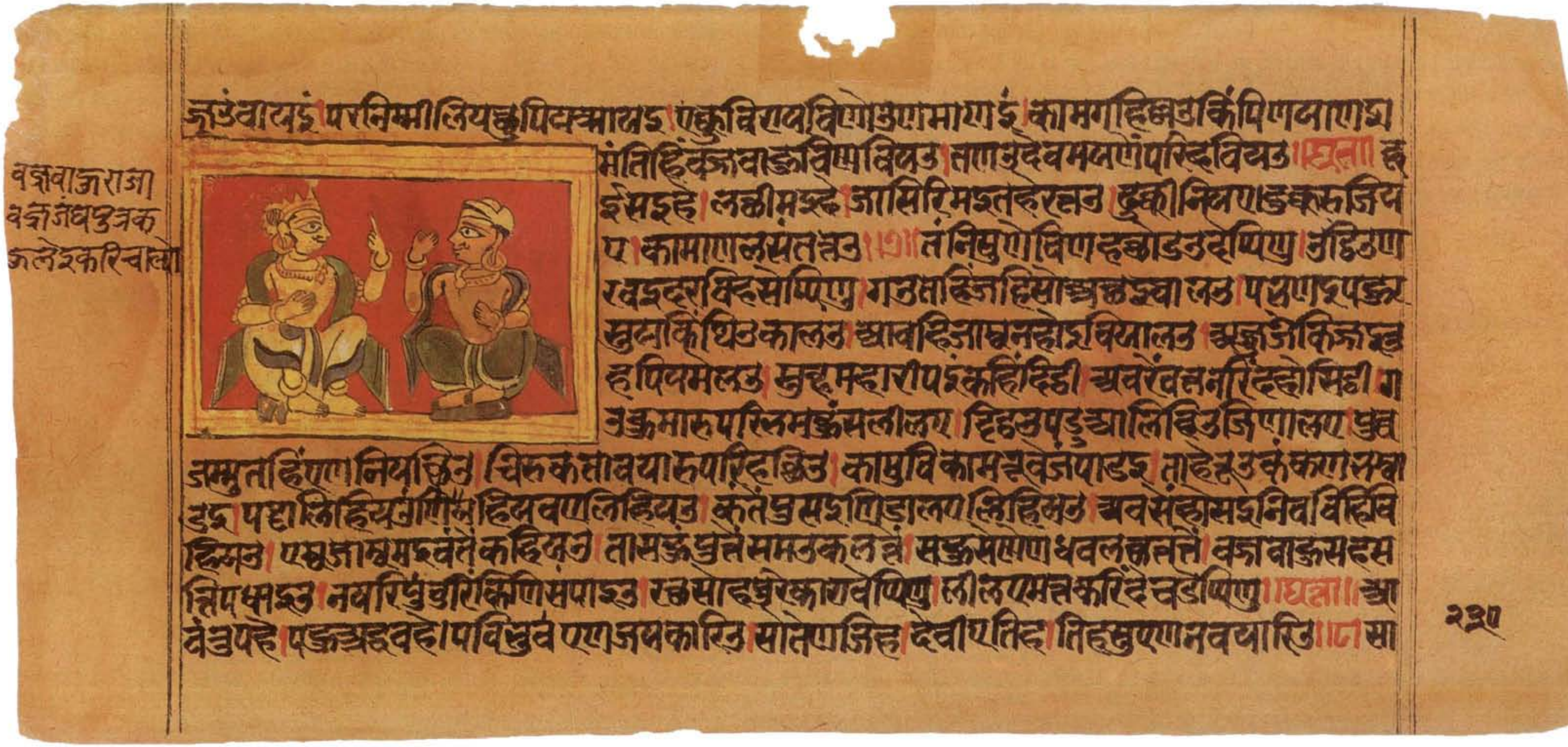

केवल आँखें बन्द कर अपनी प्रिया का ध्यान करता है। एक भी राजविनोद वह पसन्द नहीं करता। काम से अभिभूत वह कुछ भी नहीं चाहता। तब मन्त्रियों ने राजा से निवेदन किया— ''हे देव, पुत्र कामदेव से पराभूत है।

घत्ता—हे देव! सती लक्ष्मीमती की जो श्रीमती कन्या है, वह उसमें अनुरक्त है, उसकी नियति आ पहुँची है, कामाग्नि से सन्तप्त उसका इस समय जीना कठिन है।''॥ ७॥

८

यह सुनकर अपना नाखून तोड़ता हुआ राजा कुछ मुसकाता हुआ उठा। वह वहाँ गया जहाँ वह बालक था। वह बोला—''तुम काले क्यों हो गये हो। आओ, जबतक शाम नहीं होती, तबतक आज ही तुम्हारा प्रियमिलाप करा दिया जायेगा। मेरी बहू को तुमने कहाँ देखा?'' तब किसी एक ने कहा—''कुमार लीलापूर्वक कहीं घूमने के लिए गया हुआ था। उसने जिनालय में एक चित्रपट लिखा हुआ देखा। उसमें इसने अपना पूर्वजन्म देख लिया और अपनी पूर्वजन्म की कान्ता को जान लिया। जो काम को कामावस्था में डाल देती है, ऐसी उसके रूप से कौन-कौन नहीं नचाया जाता! जो पट में लिखा है, हृदय में लिखा है और जो भाग्य में लिखा है, उसे कौन मिटा सकता है? भाग्य का लिखा हुआ हे राजन्, अवश्य होगा। इस प्रकार जब मतिबन्ध मन्त्री ने कहा तो राजा पुत्र और पत्नी के साथ सेना और धवल छत्रों के साथ चला। बज्रबाहु एकदम दौड़ा और पुण्डरीकिणी नगरी आया। नगर में मार्ग-शोभा करवाकर और लीलापूर्वक मत्तगज पर चढ़कर—

घत्ता—पथपर आते हुए प्रभु का आधे पथपर बज्रबाहु ने जयकार किया। जिस प्रकार उसने, उसी प्रकार उसकी देवी और पुत्र ने भी नमस्कार किया॥ ८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

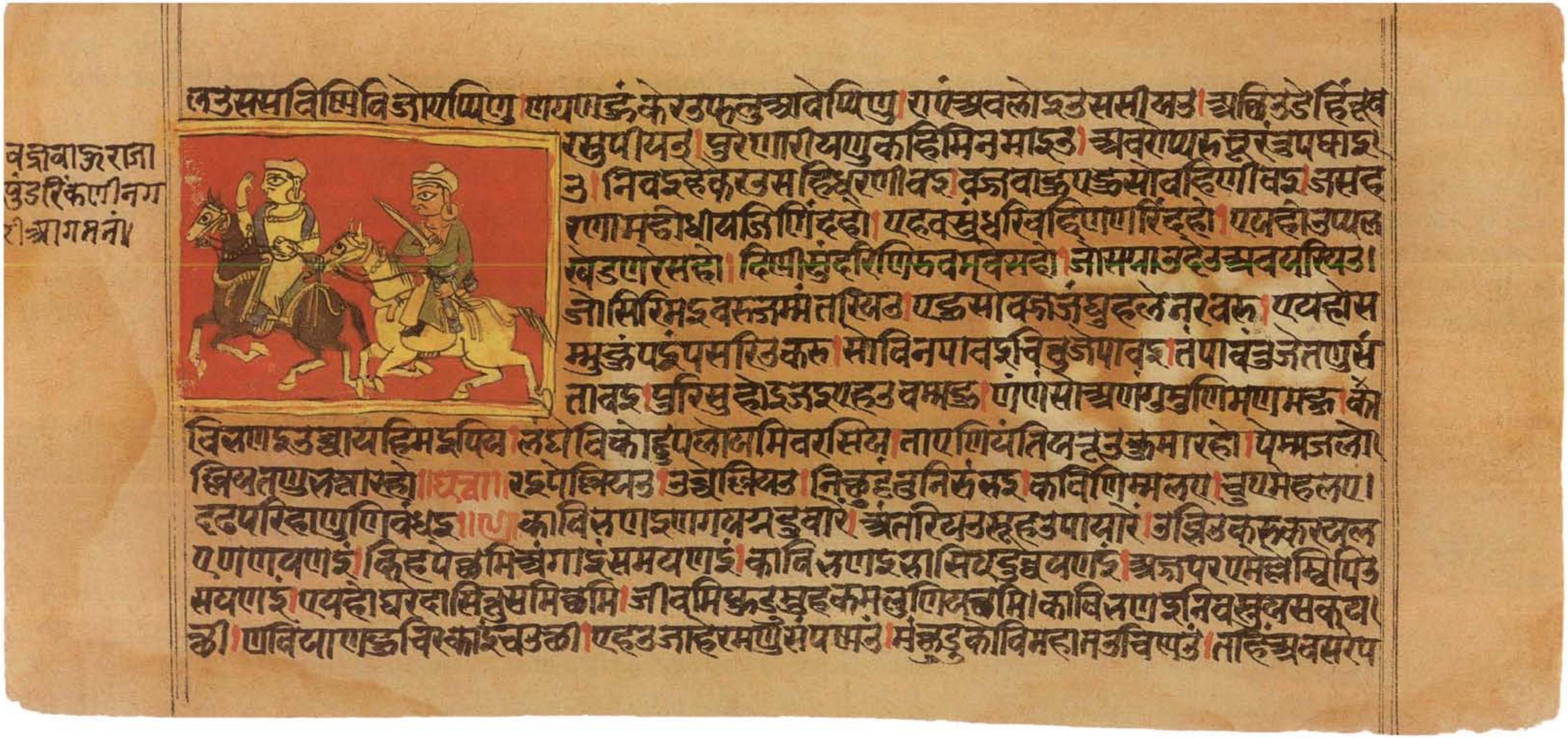

९

साले और बहन दोनों को देखकर, अपने नेत्रों का फल पाकर राजा ने अपने भानजे को देखा और आँखों के पुट से उसका रूपरस पिया। पुर नारीजन कहीं भी नहीं समा सके। वे एक-दूसरे को चूर-चूर करती (धकापेल करती हुई) दौड़ीं। ''हे सखी, यह जो राजा वज्रबाहु है वह राजा का बहनोई है। यह यशोधर नाम के जिनेन्द्र की कन्या, यह वसुन्धरा राजा की बहन है। अनुपम रूपवाले उत्पलखेड के राजा को यह दी गई है। जो स्वर्गलोक से अवतरित हुआ है वह श्रीमती का जन्मान्तर का वर है। यह वह नरश्रेष्ठ वज्रजंघ है। हे सखी! इसके सम्मुख मैंने यह अपना हाथ फैलाया, लेकिन वह भी नहीं पा सकता, चित्र ही पा सकता है। उसे पाते हुए भी शरीर सन्तप्त हो उठता है। शायद यह कामदेव का पुरुष हो, नहीं-नहीं, यह तो मुनियों के मन का मंथन करनेवाला कामदेव है।'' कोई एक कहती है—''हे प्रिय! मुझे ऊपर उठाओ, परकोटा लाँघकर मैं वर की श्री देख लूँ।'' प्रिय कुमार का रूप देखती हुई उसका शरीर प्रेमजल से आर्द्र हो गया।

घत्ता—रति से प्रेरित, उद्वेलित और स्खलित होती हुई रुक जाती है। कोई अपनी निर्मल करधनी में धोती को कसकर बाँधती है॥ ९॥

१०

कोई कहती है कि ''आँगन के पेड़, प्रतोली (नगर का अग्रदार) और परकोटे ने प्रिय को छिपा दिया है।'' उसने हाथ उठाया। न तो हाथ से और न नेत्रों से, (कुछ दिखाई देता है), मैं कामदेव के समान अंगों को किस प्रकार देखूँ? दुर्वचनों से प्रताड़ित कोई कहती है—''मैं आज या कल में पति और स्वजनों को छोड़ देती हूँ और इसके घर में दासी होना चाहती हूँ। मैं उसका मुँह देखकर जीवित रहूँगी।'' कोई कहती है कि यह राजकन्या कृतार्थ हुई, न जाने पहले इसने कौन-सा व्रत किया था जिससे यह वर इसका हो गया? जरूर इसने कोई महातप किया। उस अवसर पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

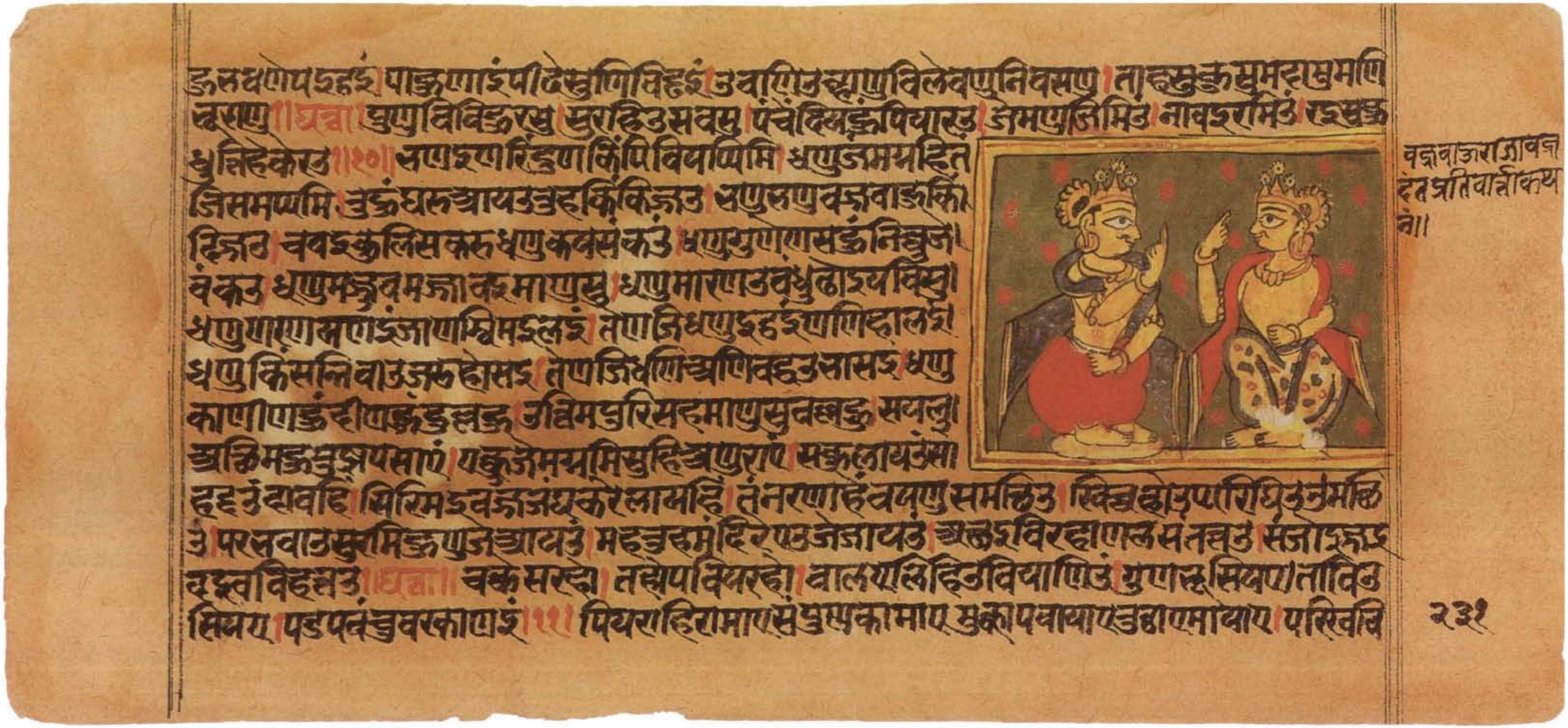

राजा के भवन में उन्होंने प्रवेश किया और अतिथि पीठों पर बैठ गये। जहाँ उन्हें स्नान-विलेपन-वस्त्र-पुष्पदाम और मणिभूषण दिये गये।

घत्ता—फिर विविध रस सुरभित जीरक, पाँचों इन्द्रियों को प्रिय लगनेवाला भोजन उन्होंने किया, मानो किसी धूर्ता के रतिसुख का रमण किया हो॥ १०॥

११

राजा कहता है—"मैं कुछ भी नहीं सोच पा रहा हूँ, जो धन माँगो मैं देता हूँ। तुम घर आये तुम्हारे लिए क्या करूँ, तुम जो धन माँगते हो वह मैं दूँगा। हे बज्रबाहु, कहो कहो, क्या दिया जाये?" तब धनुष से शंका उत्पन्न करनेवाला वज्रबाहु कहता है—"धनुष-गुण के साथ नित्य ही वक्र रहता है। धन मद्य की तरह मनुष्य को मतवाला कर देता है; धन मारक होता है और भाइयों में विष संचार करता है। धन को मैं नेत्रों और बुद्धि को मैला बनानेवाला मानता हूँ। यही कारण है कि मैं धन में कुछ भी भलाई नहीं देखता। धन से क्या? वह सन्निपात ज्वर के समान है; इसीलिए धन में अनिबद्धता (अलगाव) कही जाती है। धन कानीनों (कन्यापुत्रों) और दीनों के लिए दुर्लभ होता है, उत्तम पुरुषों के लिए मान अत्यन्त दुर्लभ होता है, आपके प्रसाद से मेरे पास सब कुछ है, सुधि के अनुराग से केवल एक चीज माँगता हूँ, अपने कुल का सौहार्द दिखायें और श्रीमती वज्रजंघ के हाथ में दे दें।" राजा वज्रदन्त ने इसका समर्थन किया, जैसे खिचड़ी के ऊपर घी डाल दिया गया हो, दूसरे जन्म से यह देवयुगल आया है और इसने हमारे-तुम्हारे घर में जन्म लिया है, वह जो विरह की ज्वाला से सन्तप्त है, दैव से वियुक्त इसका संयोग करा देना चाहिए।

घत्ता—चक्रवर्ती वज्रबाहु की कन्या के द्वारा लिखित चित्रपट गुणभूषित विदुषी धाय लायी और उसकी व्याख्या की॥ ११॥

१२

अपने प्रिय के लिए सुन्दर, सम्पूर्ण काम, मुक्त और संतुष्ट माता ने

कर्मों का क्षय करनेवाले जिननाथ की पूजा की और धूप दी। पवित्र स्वर्ण-घटों, सघन निर्मित खम्भों, रजतनिर्मित दीवालों, अलिखित भांडों, चमकते हुए रत्नों तथा श्रेष्ठ हीरों से सघन आसन से शोभित वेदियों और कान्ति से अलंकृत शत्रुओं की आँखों को आच्छादित करनेवाला, चमकते हुए मोतियों के समान अपने दाँतों की पंक्ति से जो हँसता हुआ जान पड़ता है और दृष्टिसुख देता है। नाना परकोटों, नाना द्वारों से युक्त इतना बड़ा मण्डप बनाया गया कि जहाँ तक सम्भव है उसमें जनसमूह समा सके। एकत्रित सुधीजनों, निबद्ध तोरणों, मेघध्वनि के समान गम्भीर बजते हुए तूर्यों, नृत्य करती हुई तरुणियों, मण्डलाकार गृहिणियों, विद्याधरियों, यक्षिणियों, नागरवनिताओं, हिमहार के समान जलमय कलशों और पति-पुत्रोंवाली राजमहिषियों के द्वारा, सौभाग्य से सुन्दर वधू-वर को स्नान करवाया गया। उनका नवरति रस से अत्यन्त परिपूर्ण प्रसाधन किया गया। पास-पास बैठे हुए उनके स्तुति शब्दों की कलकल ध्वनि से पूर्ण धवल मंगल गीतों के साथ बार-बार गीत गाये गये।

घत्ता—जो मद से परिपूर्ण है, तथा जिसके हाथ फैले हुए हैं ऐसी प्रिया का काम से विदारित मन उसने मुखपट को हटा दिया मानो वरसुभट ने गजघटा का मुखपट हटा दिया हो॥ १२॥

१३

जिसमें उग्र दुर्भाग्य और दुःखावली का अन्त हो गया है ऐसी शुभ लग्नवाले सुन्दर दिन, उसने उस स्त्री के हाथ को अपने हाथ में ले लिया। और उसकी असह्य कामपीड़ा को शान्त कर दिया। राजराजेश्वर ने भिंगार से लाये गये पानी को भानजे के हाथ पर डाल दिया (और कहा),

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

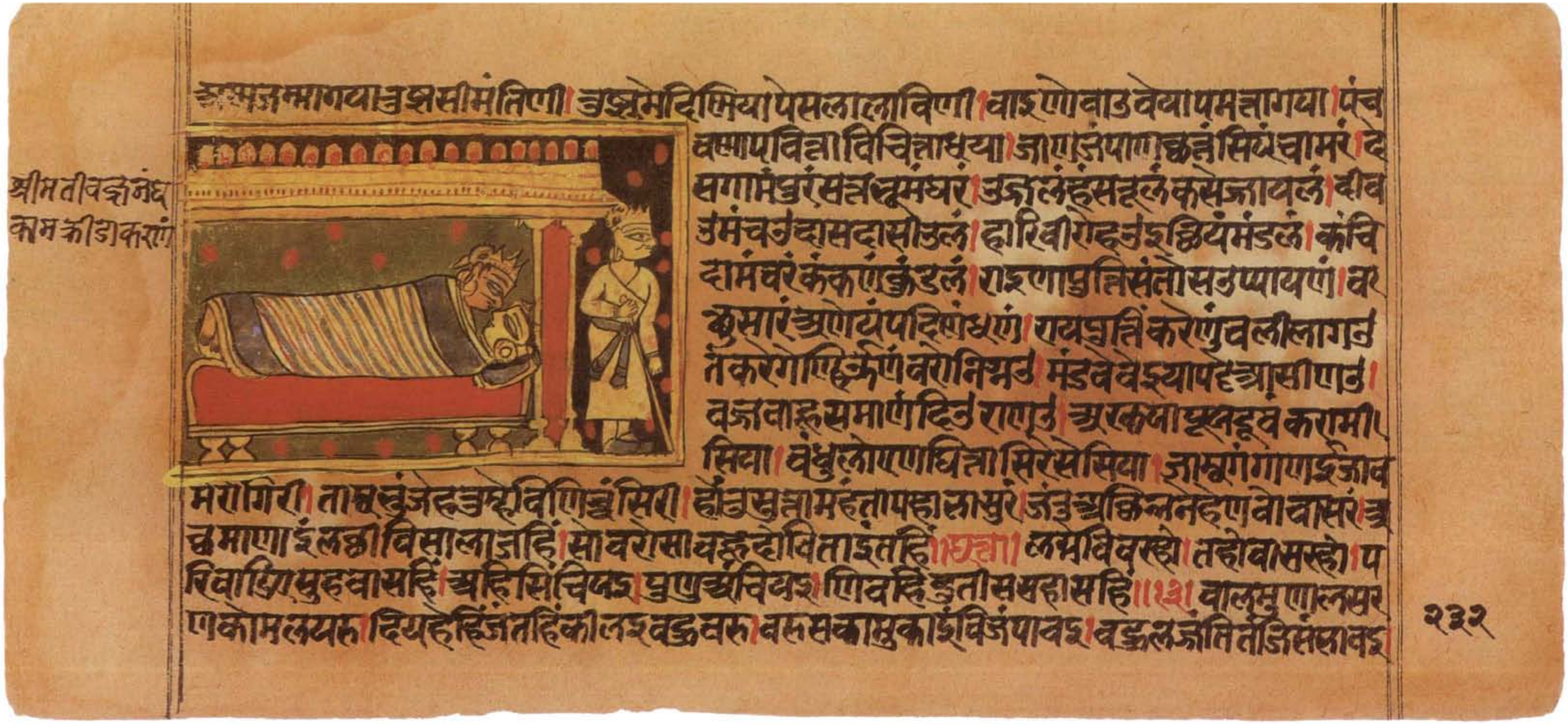

दूसरे जन्म की तुम्हारी कोमल आलाप करनेवाली पत्नी मैंने तुम्हें प्रदान कर दी। राजा ने वायु के समान वेगवाले प्रमत्त गज, पंचरंगी पवित्र ध्वज, यान, जम्पान, श्वेत छत्र, चमर, देश, ग्राम, पुर, सात भूमियों वाले घर, हंस, रुई और सूर्य के समान उज्ज्वल शय्यातल, दीपक, मंच, दास-दासी का समूह, सुन्दर वीर-समूह, इच्छित मण्डल, काँचीदाम, वर कंकण और कुण्डल आदि अनेक श्रेष्ठ, वस्तुएँ तथा पुत्री को सन्तोष उत्पन्न करनेवाला प्रचुर धन दिया। जिस प्रकार लीलागज हथिनी को ले जाता है उसी प्रकार वह उस राजपुत्री को हाथ में लेकर चला गया। मण्डप में वेदिकापट्टी पर बैठे हुए राजा वज्रबाहु का अभिनन्दन किया गया। पवित्र दुर्वांकुरों से मिले हुए अक्षत और सरसों बन्धुलोक ने उसके सिर पर फेंके और कहा कि जबतक गंगा नदी है, जबतक सुमेरु पर्वत है, तबतक तुम लोग भी सम्पत्ति का उपभोग करो। तुम्हारे प्रभा से भास्वर महान् पुत्र हों और तुम्हारे दिन अच्छिन्न स्नेह के साथ बीतें। लक्ष्मी से विशाल वह वर और वह वधू जहाँ विद्यमान थे वहाँ—

घत्ता—उस दिन से लेकर परम्परा के अनुसार, सुख से निवास करनेवाले बत्तीस हजार राजाओं ने उनका पूजन और अभिषेक किया॥ १३॥

१४

दिन बीतते रहे, और बालमृणाल के समान सरल तथा कोमल करवाले वधू-वर क्रीड़ा करते रहे। सकाम वर वधू से कुछ भी मनवाता है, लजाती हुई वधू उसी को मान लेती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

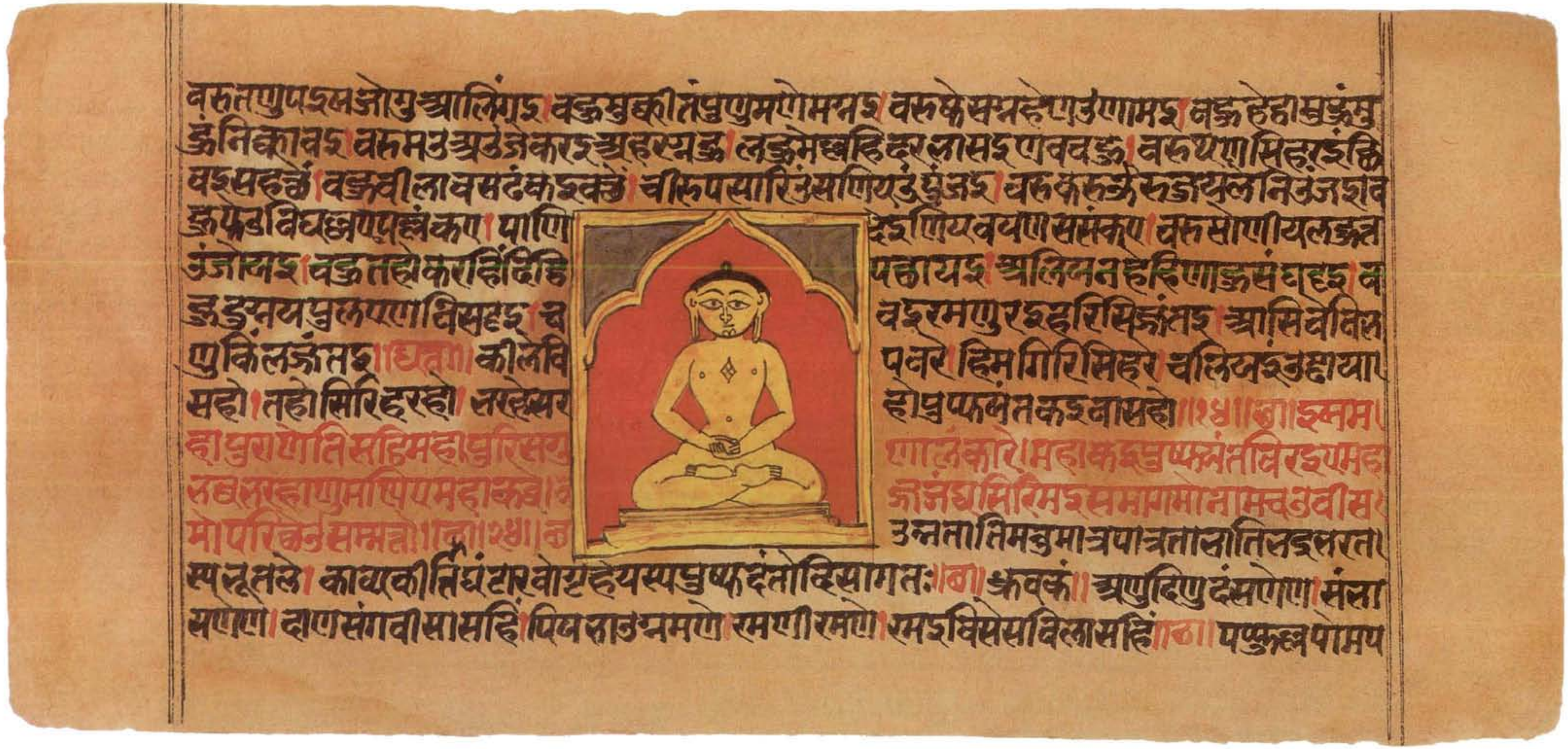

वर अपने शरीर के अनुरूप उसका आलिंगन करता है। आलिंगन से मुक्त होने पर वधू फिर उसी को अपने मन में चाहती है। वर बाल पकड़कर वधू को झुकाता है, वधू अपना मुँह नीचा करके मुँह को छिपाती है। वर अधरों के अग्रभाग में मृदु-मृदु कुछ करता है, नववधू हुँ-हुँ कहकर कुछ बोलती है। वर अपने हाथ से स्तनशिखरों को छूता है, वधू लज्जा के कारण उन्हें अपने वस्त्र से ढक लेती है। फैले हुए वस्त्र (साड़ी) को प्रिय धीरे-धीरे इकट्ठा करता है, और अपना हाथ दोनों जाँघों में डालता है। वर उस (वस्त्र) को निकालकर पलंग पर डाल देता है, वधू मुख पर शंका से अपना हाथ रख लेती है। वर कटितल में उस (के गुप्तांग) को देखता है, वधू हाथों से उसकी दृष्टि ढक लेती है। समर्थप्रेम से प्रिय भिड़ जाता है, वधू रोमांच से विशिष्ट हो जाती है। रतिगृह में प्रिय कहता है कि यहाँ हम दोनों हैं, बताओ . . . और लज्जा करने से क्या।

घत्ता—विशाल हिमगिरि के शिखर पर क्रीड़ा कर, वे दोनों तुम्हारे श्रीगृह भरतेश्वर और सूर्यचन्द्र के निवास ऊर्ध्व आकाश की ओर चले॥ १४॥

त्रेसठ महापुरुषों के गुण और अलंकारोंवाले इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का वज्रजंघ-श्रीमती समागम नाम का चौबीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ २४॥

सन्धि २५

प्रतिदिन वह प्रियभाव को उत्पन्न करनेवाले रमणी-रमण में दर्शन, सम्भाषण, दान, संग और विश्वास तथा विशेष विलास के साथ क्रीड़ा करता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

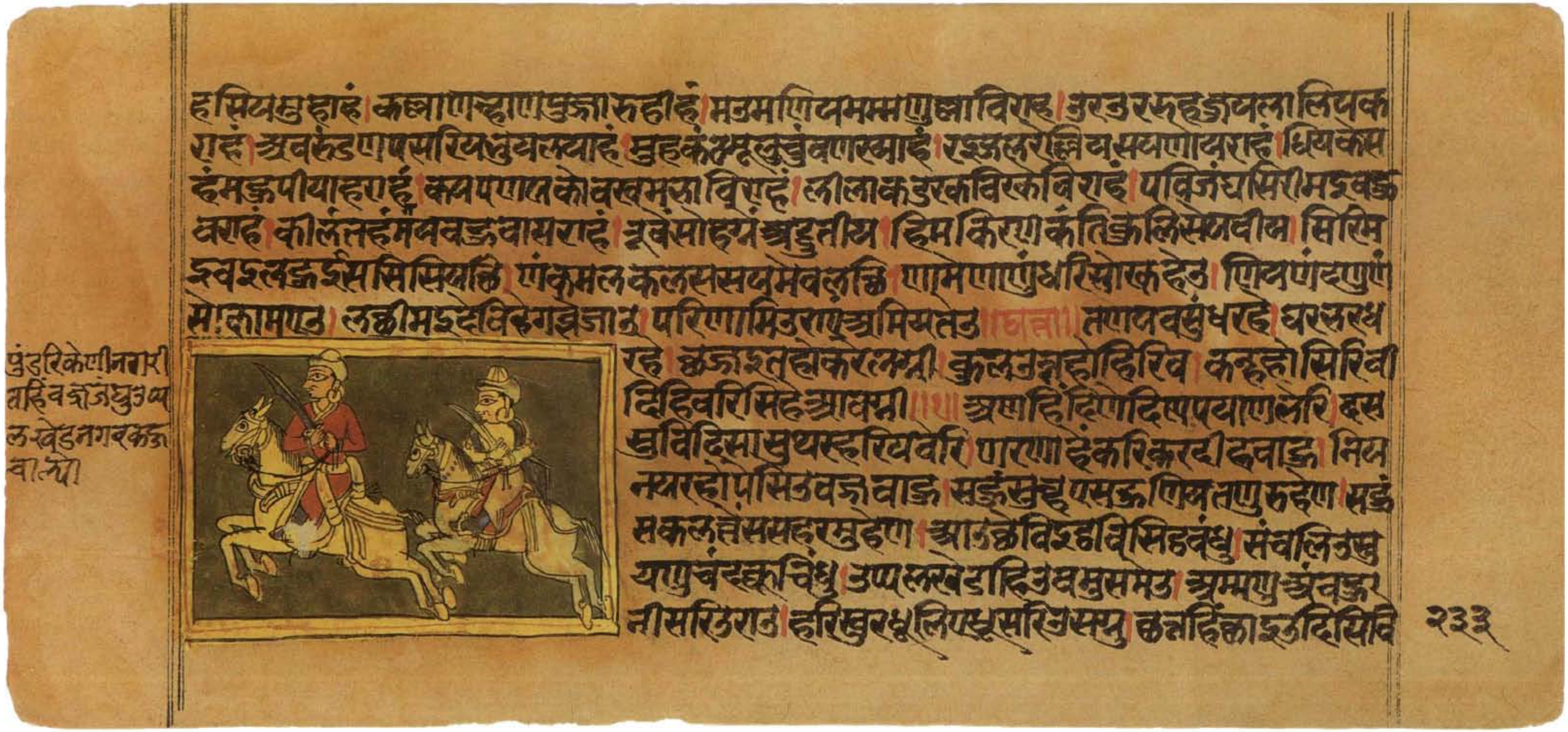

१

खिले हुए कमलों के समान अपने मुखों से हँसते हुए, अरहन्त भगवान् का कल्याणस्नान और पूजा करते हुए, मृदु सुन्दर और मार्मिक बोलते हुए, विशाल उरोजों को अपने हाथों से सहलाते हुए, आलिंगन के लिए हाथ फैलाते हुए, मुख और कण्ठों के मूल भाग में चुम्बन करते हुए, रतिजल से स्वजन-समूह को हटाते हुए, केश पकड़ते हुए, अधरों का मधुरासव पीते हुए, कृत्रिम क्रोध की सम्भावना करते हुए, लीला-कटाक्ष चलाते हुए, इस प्रकार वज्रजंघ और श्रीमती वर-वधू को बहुत-से दिन क्रीड़ा करते हुए बीत गये। वह श्रीमती रूप और सौभाग्य में अद्वितीय थी। चन्द्रमा की कान्ति के समान, वज्रबाहु की कन्या। श्रीमती के वर वज्रजंघ की छोटी बहन मृगाक्षिणी, मानो खिले हुए कमलों के समान हाथवाली स्वयं लक्ष्मी हो, अनुन्धरा नाम की सुख की कारण। उसका (वज्रदन्त का) अपना पुत्र था जो मानो कामदेव था, लक्ष्मीमती देवी के गर्भ से पैदा हुआ। राजा ने अमिततेज का उससे विवाह कर दिया।

घत्ता—गृहभार को धारण करनेवाली वसुन्धरा (वज्रजंघ की माँ) की कन्या अनुन्धरा उसके हाथ लगी हुई ऐसी मालूम देती है मानो कुलपुत्र के साथ लज्जा (ह्र), कृष्ण के साथ श्री और ऋषि के साथ धृति लगी हुई हो ॥ १ ॥

२

दूसरे दिन उसने प्रस्थान का नगाड़ा बजवाया। शुक्र दसों दिशाओं में काँप उठे। राजा ने हाथी के समान दीर्घ बाहुवाले वज्रबाहु को अपने नगर के लिए भेज दिया। अपनी बहू, पुत्र एवं अपनी चन्द्रमुखी पत्नी के साथ, इष्ट और विशिष्ट बन्धुओं से पूछकर चन्द्रार्क चिह्नवाला वह सुजन चला। उत्पलखेड़ का वह राजा अपनी सेना के साथ कितना मार्ग चलने के लिए बाहर निकला ? घोड़ों की धूल से स्वर्ग धूसरित हो गया। दिशाओं और विदिशाओं के मार्ग छत्रों से आच्छादित हो गये।

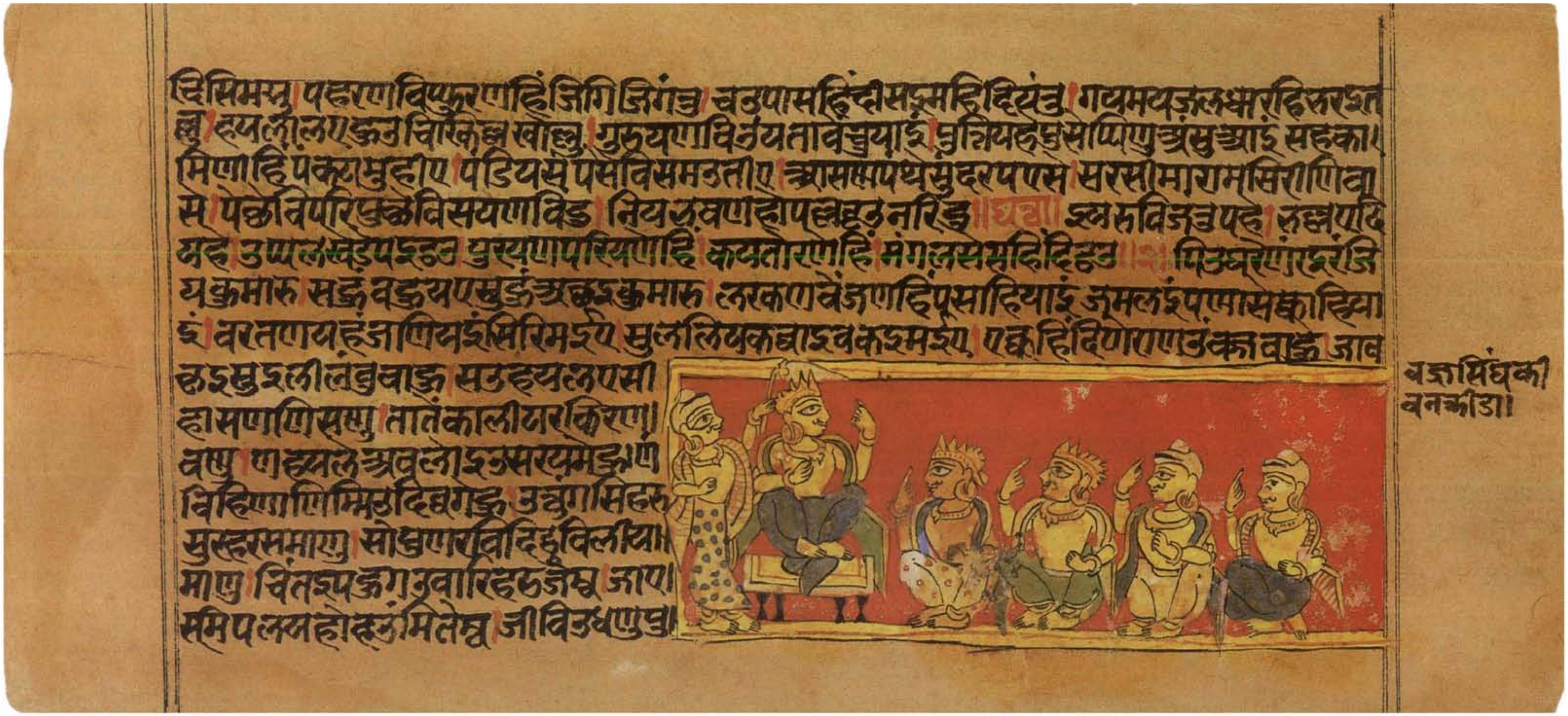

अस्त्रों के विस्फुरणों से चमकते हुए मही दिशान्त चारों ओर दिखाई देने लगे। हाथियों की मदजलधाराओं से ताल भर गये। घोड़ों की लार से गम्भीर कीचड़ हो गया। गुरुजनों के वियोग-सन्ताप के कारण गिरते हुए पुत्री के आँसुओं को पोंछने के लिए दूसरी कामिनियों सहित उसके साथ एक कमलमुखी पण्डिता भेजी। जिसमें पास-पास मार्ग हैं, सरोवर सीमोद्यान और श्री का निवास है ऐसे सुन्दर प्रदेश को देखते हुए अपने स्वजन समूह को पूछते हुए राजा अपने भवन की ओर लौटा।

घत्ता—सुन्दर पथ पर जाता हुआ दूसरा भी दिन उत्पलखेड़ में प्रविष्ट हुआ। पुरजनों और परिजनों ने तोरण बाँधकर मंगलों और तिलों के दर्शन किये॥ २॥

३

अपने पिता के घर में वधू के साथ कुमार सुख से रहने लगा, मानो रति से रंजित कामदेव हो। लक्षणों और सूक्ष्म चिह्नों से प्रसाधित इक्यावन पुत्र-युगल (एक अधिक पचास) श्रेष्ठपुत्र श्रीमती से पैदा हुए, उसी प्रकार जिस प्रकार कवि-प्रतिभा सुन्दर काव्यों को जन्म देती है। एक दिन राजा वज्रबाहु, जो सुन्दर क्रीड़ाओं के लिए मेघ के समान था, सौधतल में सिंहासन पर बैठा हुआ था, तब उसने आकाशतल में चन्द्रमा की श्रेष्ठकिरण के रंग का शरद्‌मेघ देखा, मानो जैसे विधाता ने दिव्य घर बना दिया हो। ऊँचे शिखरवाले देवविमान के समान वह भी फिर विलीन होते हुए दिखाई दिया। राजा विचार करता है जिस प्रकार यह मेघ चला गया, उसी प्रकार मैं भी नाश को प्राप्त होऊँगा!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

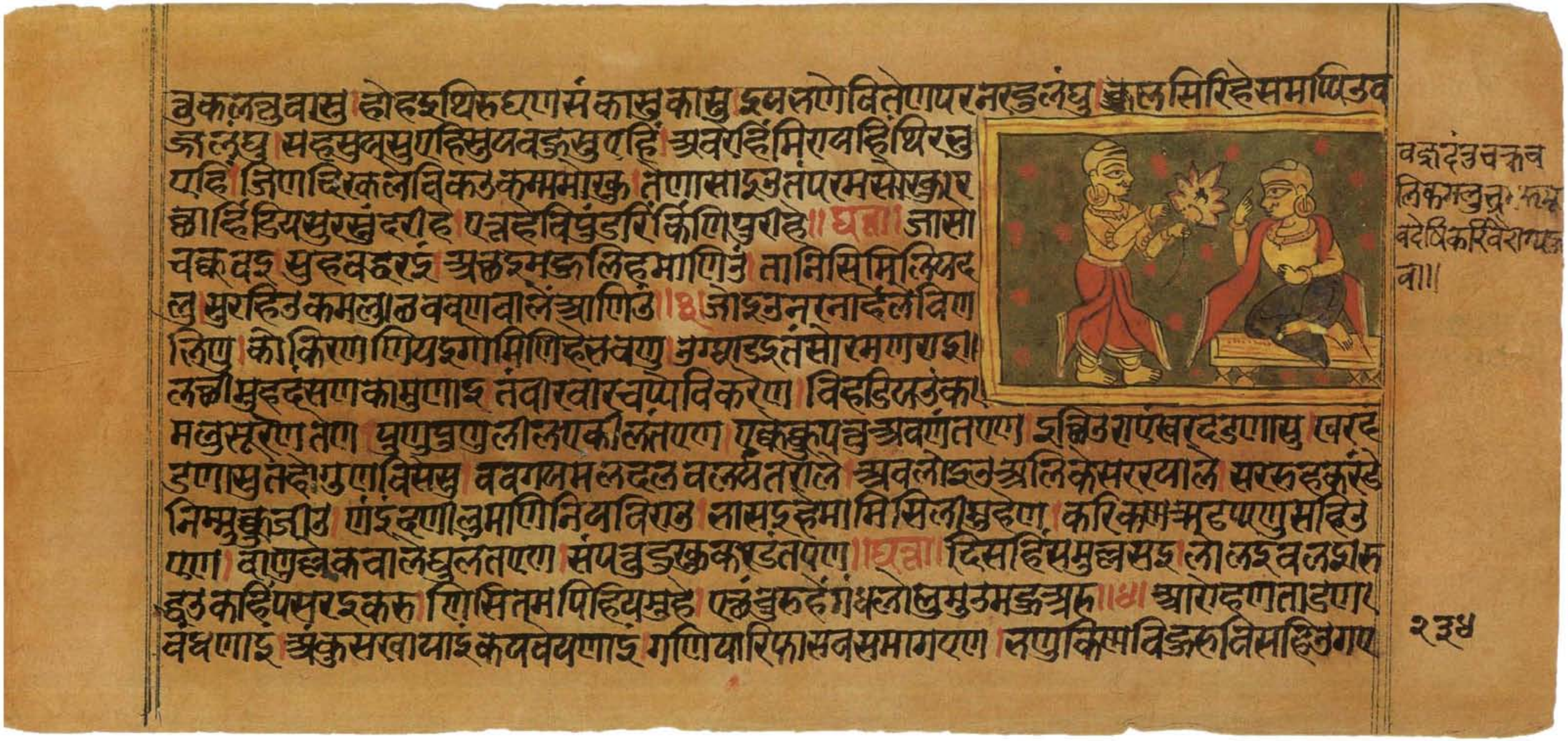

जीवन-धन-पुत्र-कलत्र और घर मेघ के समान किसके पास स्थिर रहते हैं ? यह सोचकर उसने शत्रुनर के लिए अलंघ्य वज्रजंघ के लिए कुलश्री सौंप दी। और अपने बहुत-से बहुश्रुत पुत्र-पुत्रों और दूसरे भी स्थिर भुजावाले राजाओं के साथ उसने जिनदीक्षा ले ली। उसने कर्मों से मोक्ष पाकर परम सुख प्राप्त कर लिया। यहाँ भी जिसकी गलियों में सुर-सुन्दरियाँ भ्रमण करती हैं ऐसी पुण्डरीकिणी नगरी में—

घत्ता—शुभ में प्रेम को निबद्ध करनेवाला वह राजा चक्रवर्ती रह रहा था, तब रात्रि के समय एक मुकुलित दलवाला सुरभित कमल उद्यानपाल ने लाकर दिया॥ ३॥

४

उस कमल को लेकर राजा ने देखा। लक्ष्मी (शोभा) के घर को कौन नहीं देखता ? क्रीड़ानुरागी वह राजा उस फूल को खोलता है, जैसे काम लक्ष्मी का मुँह देखने के लिए (उत्सुक हो); बार-बार अपने हाथ से चाँपकर उस वीर ने उस कमल को मसल दिया। फिर बार-बार क्रीड़ा के साथ उससे खेलते हुए, उसका एक-एक पत्ता तोड़ते हुए राजा ने उस कमल को चाहा। खर को दण्ड से नाश करना उसका (राजा का) गुण-विशेष था। मैले पत्तों का समूह जिसके अन्तराल से हट गया है, ऐसी कमलरूपी मंजूषा में परागरज में लीन एक निर्जीव भ्रमर उसने देखा, जैसे इन्द्रनील मणि हो। उसे देखकर राजा कहता है—हे सखी, देखो इस भ्रमर ने हाथियों के कानों के आघातों को सहा है, मदजल से गीले कपोलों पर घूमते हुए और गुनगुनाते हुए यह दु:ख को प्राप्त हुआ है।

घत्ता—यह दिशाओं में उल्लसित होकर चलता है, मुड़ता है, रुद्ध होने पर अपने कर कहाँ फैला पाता है? लेकिन रात्रि में अन्धकार से ढँके हुए इस कमल में गन्धलोलुप यह भ्रमर मर गया॥ ४॥

५

'आरोहण-बन्धन-ताड़न' और वेदना उत्पन्न करनेवाले अंकुशों के आघात, और हथिनी के स्पर्श के वशीभूत होकर आता हुआ हाथी, बताओ कौन-सा दु:ख सहन नहीं करता!

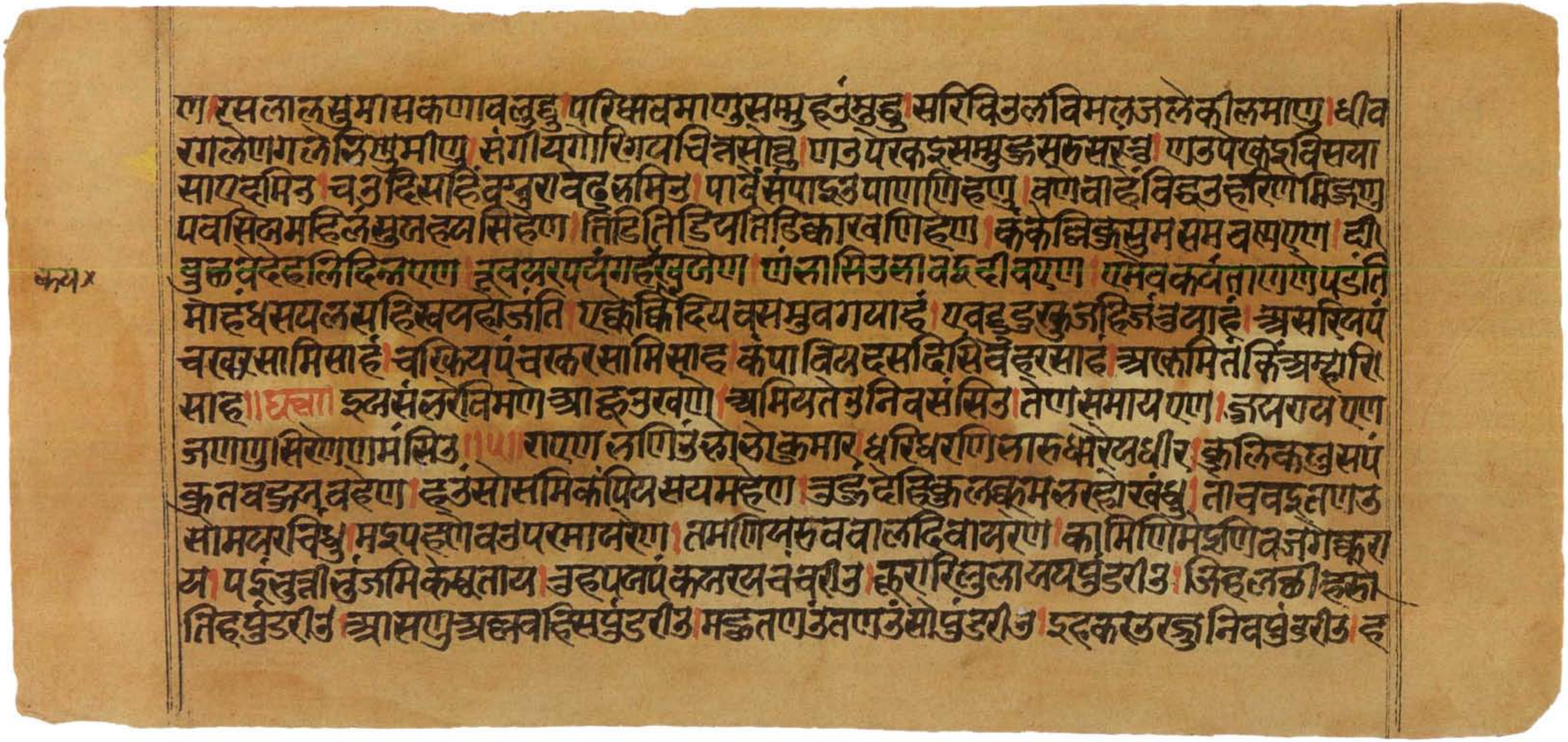

रस का लोभी-मांसकणों का लोलुप सामने दौड़ता हुआ मूर्ख मीन नदी के विपुल जल में क्रीड़ा करता हुआ धीवर के काँटे से गले में फँसा लिया जाता है, गाती हुई गोरी अपना चित्त और कान लगाये हुए हरिण नहीं देखता सामने आता हुआ तीर, विषयों की आशा से दमित हरिण का जोड़ा खेत के चारों ओर घिरे हुए बागर को नहीं देखता, और प्राय: वन में व्याध के द्वारा विद्ध होकर निधन को प्राप्त करता है। जिसकी शिखा प्रोषित-पतिकाओं के आँसुओं से आहत है, जो तिड़-तिड़-तिड़की ध्वनि से मुक्त है, जो कोरण्टक पुष्प के समान पीले रंगवाला है, देहली पर रखे हुए, तथा रूप में लीन शलभों का क्षय करनेवाले दीपक के द्वारा कहा गया उसे अच्छा नहीं लगता, इस प्रकार सभी यम के मुँह में पड़ते हैं। हे सखी, सभी मोहान्ध क्षय को प्राप्त होते हैं। एक-एक इन्द्रियों के वश में होनेवाले जीवों को जब इतना बड़ा दु:ख है, तब पाँच अक्षरों के स्वामी (अरहन्तादि) का स्मरण नहीं करनेवाले, तथा पाँच इन्द्रियों का स्वाद चखनेवाले तथा दसों दिशाओं के पथों और धरती को कँपानेवाले हम लोगों के दु:खों को कहने से क्या ?

घत्ता—अपने मन में इस प्रकार विचार कर उसने एक पल में राजाओं से प्रशंसनीय अमिततेज को बुलाया। आये हुए उस युवराज ने अपने पिता को सिर से नमस्कार किया॥५॥

६

राजा बोला—''हे कुमार, धुरी उठाने में धीर तुम धरती का भार उठाओ। मैं सैकड़ों पापों को कँपानेवाली तप की आग से कलियुग के पाप के कलंक को शोषित करता हूँ। तुम कुल-परम्परा के भार को अपना कन्धा दो।'' तब वह कामध्वजी पुत्र उत्तर देता है—''मैं परमादर के साथ इसको नष्ट करता हूँ, उसी प्रकार जिस प्रकार बालसूर्य के द्वारा अन्धकारसमूह नष्ट कर दिया जाता है। हे विश्व के एकमात्र सम्राट्, आपके द्वारा भोगी गयी भूमि और धरती का उपभोग मैं कैसे करूँगा! आपके चरणकमल की धूल का भ्रमर, क्रूर शत्रुरूपी लक्ष्मी के लिए व्याघ्र, मैं। जिस प्रकार लक्ष्मीधर है उसी प्रकार पुण्डरीक है। इसलिए अपने पुण्डरीक को आसन दे दीजिए। वह पुण्डरीक मेरा पुत्र है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

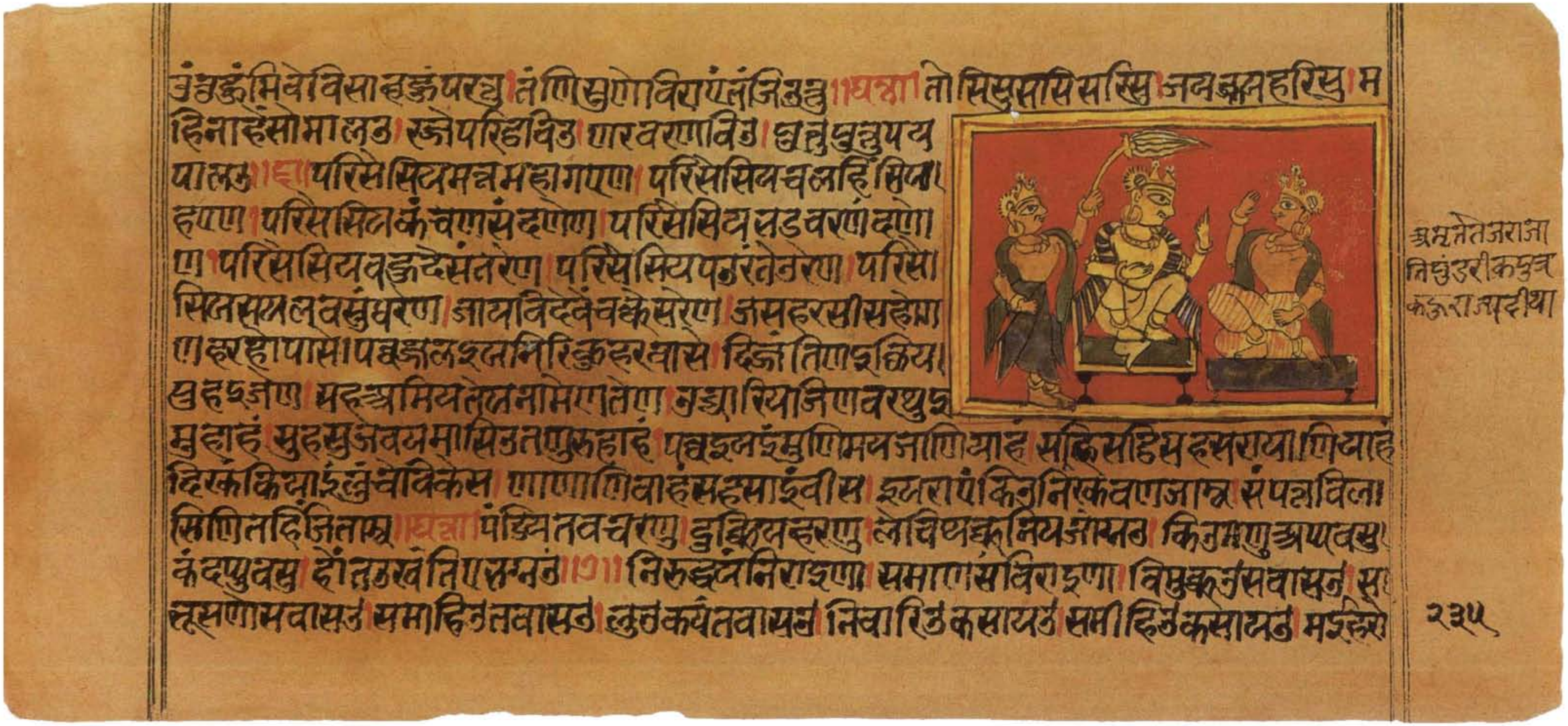

हम-तुम दोनों ही साधुत्व को प्राप्त हों।'' यह सुनकर राजा ने भी अपनी स्वीकृति दे दी।

घत्ता—तब चन्द्रमा के समान कोमल, जय में हर्ष मनानेवाले बालक को राजा ने राज्य में प्रतिष्ठित कर दिया (और कहा) कि नरश्रेष्ठों के द्वारा प्रणम्य हे राजन्, पुत्र-पुत्र! तुम प्रजा का पालन करना॥ ६॥

७

मत्त महागजों को छोड़ देनेवाले, चंचल हिनहिनाते घोड़ों को छोड़ देनेवाले, स्वर्णरथों को छोड़ देनेवाले, श्रेष्ठ योद्धाओं और पुत्रों को छोड़ देनेवाले, बहुत-से देशान्तर छोड़ देनेवाले, विशाल अन्तःपुर छोड़ देनेवाले, समस्त धरती को छोड़ देनेवाले, चक्रवर्ती देव वज्रदन्त ने यशोधर के शिष्य गणधर के पास गिरिकुहर के घर जाकर दीक्षा ले ली, उस अमिततेज के साथ कि जिसने दी जाती हुई पृथ्वी को भी नहीं चाहा। अपने मुखों से जिनवर की स्तुतियों का उच्चारण करनेवाले एक हजार पुत्रों ने व्रत लिये और मुनिमार्ग को जाननेवाले साठ हजार राजा भी प्रव्रजित हुए। और भी दूसरे-दूसरे बीस हजार राजाओं ने केशलोंच कर दीक्षा ग्रहण कर ली। इस प्रकार जैसे ही राजा ने संन्यास लिया कि वह बिलासिनी (अनुन्धरा) वहाँ पहुँची।

घत्ता—वह पण्डित पापों का हरण करनेवाला अपने योग्य तपश्चरण लेकर स्थित है। शान्ति से भग्न और कामवश होते हुए उसने अपना मन वश में कर लिया॥ ७॥

८

विरागी राजा ने अपना मानस रोक लिया। अपना वास, अपने आभूषण और अपने वस्त्र छोड़ दिये। तप का आश्रय ले लिया। यम के पाश को काट दिया। कषायों का निवारण कर दिया। परमात्मा के स्वाद की इच्छा की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

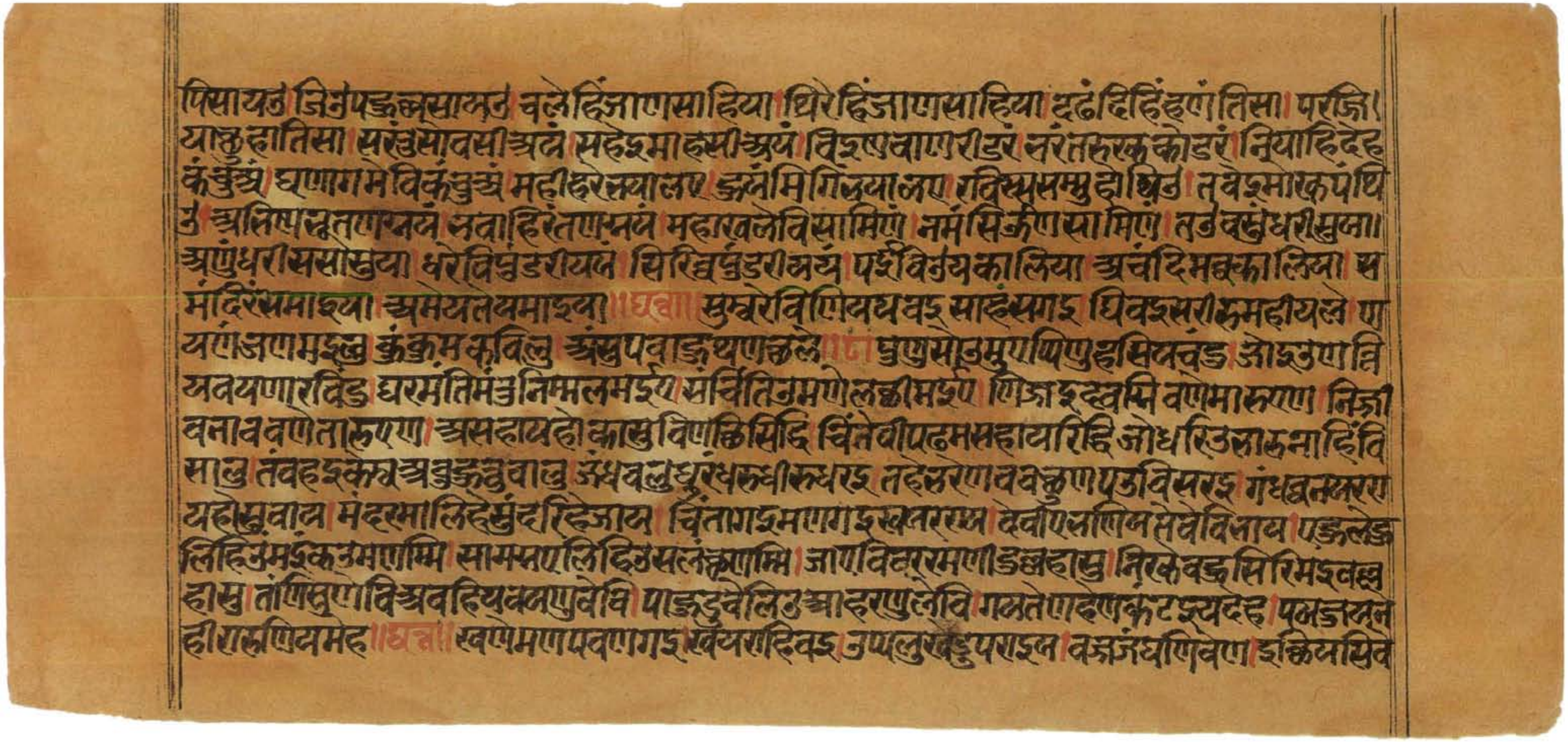

बुद्धि का अपहरण करनेवाले पिशाच कामदेव को जीत लिया। जो चंचल चित्तवालों के द्वारा सिद्ध नहीं होती स्थिर चित्तवालों से सिद्ध हो जाती है, ऐसे जानो। जो दृढ़ धैर्य को भी नष्ट कर देती है ऐसी उस क्षुधा को जीत लिया। वह वशीजिन चलते हुए माघ माह की ठण्ड सहन करते हैं। वर्षाकाल में भी जो वानरियों को भय प्रदान करता है, वृक्षों के कोटरों को भर देता है, साँपों के केंचुलों का प्रवाहित कर देता है, गिरते हुए जल को सहन करते हैं, ग्रीष्मकाल में भय से परिपूर्ण भयंकर पहाड़पर, धरती पर स्थित होकर जो मोक्षपन्थी सूर्य के सम्मुख तप करते हैं। जिन्होंने भूमि के तिनके के अग्रभाग को नष्ट नहीं किया, और जो सत्य और अन्तरंग से मुक्त हैं, तथा बड़े-बड़े दुष्टों को शान्त करनेवाले हैं, ऐसे स्वामी को नमस्कार कर उस समय वसुन्धरा की पुत्री अनुन्धरा अपनी सास के साथ (लक्ष्मीमती के साथ), छत्र की शोभा की तरह पुण्डरीक बालक को लेकर, पति के वियोग से चन्द्ररहित रात्रि के समान काली, अमिततेज की माँ (लक्ष्मीमती) अपने भवन में आ गयी।

घत्ता—फिर अपने पति की याद कर वह हंसगामिनी अपने शरीर को महीस्थल पर और नेत्रों के अंजन से मैले केशर से लाल आँसुओं के प्रवाह को स्तनतल पर गिरा देती है—॥८॥

९

फिर शोक छोड़ते हुए उसने चन्द्रमा का उपहास करनेवाले अपने पोते के मुखकमल को देखा। गृहमन्त्री की मन्त्रणा से निर्मलमति लक्ष्मीमती ने अपने मन में सोचा—"हवा के द्वारा वन में दावानल ले जाया जाता है और पानी में निर्जीव नाव केवट के द्वारा ले जायी जाती है। असहाय व्यक्ति के लिए कोई भी सिद्धि प्राप्त नहीं होती। इसलिए पहले सहायतारूपी ऋद्धि की चिन्ता करनी चाहिए, जिस विशालभार को स्वामी ने उठाया, उसे यह अप्रगल्भ बालक किस प्रकार उठा सकता है? जिस भार को धीर और धुरन्धर धवल (बैल) उठाता है, उस भार से तो बछड़ा एक पैर भी नहीं चल सकता।" गन्धर्व नगर के राजा की मन्दरमाला सुन्दरी देवी से उत्पन्न चिन्तागति और मनोगति विद्याधर थे। देवी ने उन दोनों भाइयों से कहा—"मेरे द्वारा किया गया, यह लिखित लेख मुद्रायुक्त सुन्दर मंजूषा में रखा है। तुम जाकर श्रेष्ठ रमणियों के लिए भी दुर्लभ श्रीमती के पति (वज्रजंघ) को यह लेख दो।" यह सुनकर, माता के पैर पड़कर, उपहार और आभूषण लेकर, रोमांचित शरीर वे दोनों अपने पैरों की केशर से मेघों को लाल-लाल करते हुए चल दिये।

घत्ता—पवन की जैसी गतिवाला विद्याधर राजा मनोगति एक क्षण में उत्पलखेड़ नगर पहुँच गये। कल्याण चाहनेवाले वज्रजंघ राजा ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रणाम करते हुए उन्हें देखा॥ ९ ॥

१०

उन्होंने उसके लिए मणिमंजूषा दी। उसने उसका ऊपरी खण्ड खोला। फैलाकर उसने शीघ्र पत्र पढ़ा कि किस प्रकार राजाओं का राजा योगी बन गया है और किस प्रकार दी जाती हुई भूमि छोड़कर अमिततेज भी उसका अनुगामी हो गया है? और किस प्रकार पुण्डरीक के सिर पर पट्ट बाँध दिया गया है। किस प्रकार अपने यौवन के अहंकार को छोड़ते हुए, राजस्त्रियों तथा धरती छोड़ते हुए माण्डलीक राजाओं ने दीक्षा ग्रहण कर ली। किस प्रकार पुत्रों ने तथा काम-क्रोध के समूह को नष्ट करनेवाली पण्डिता ने दीक्षा ले ली। किस प्रकार राजा अमिततेज भी चला गया। इसलिए तुम अब अपने भानजे का पालन करो। जो जैसा था वैसा लेख ने कह दिया। तब उस सुधी ने सुधी के चरित्र की सराहना की कि देव ने यह अच्छा किया जो काम को पीड़ित करनेवाला और संसाररूपी अन्धकार के लिए सूर्य के समान तप ग्रहण कर लिया। उसके पुत्र ने भी अच्छा किया जो उसने नववय में व्रत संग्रहीत कर लिया।

घत्ता—वह राजा धन्य है जिसने काम को छोड़कर अपने मन में अरहन्त का ध्यान किया। निधि का घड़ा दिखानेवाली गृहदासी पृथ्वी के द्वारा कौन खण्डित नहीं किया गया?॥ १० ॥

११

यह विचार कर राजा वज्रजंघ तुरन्त चला।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

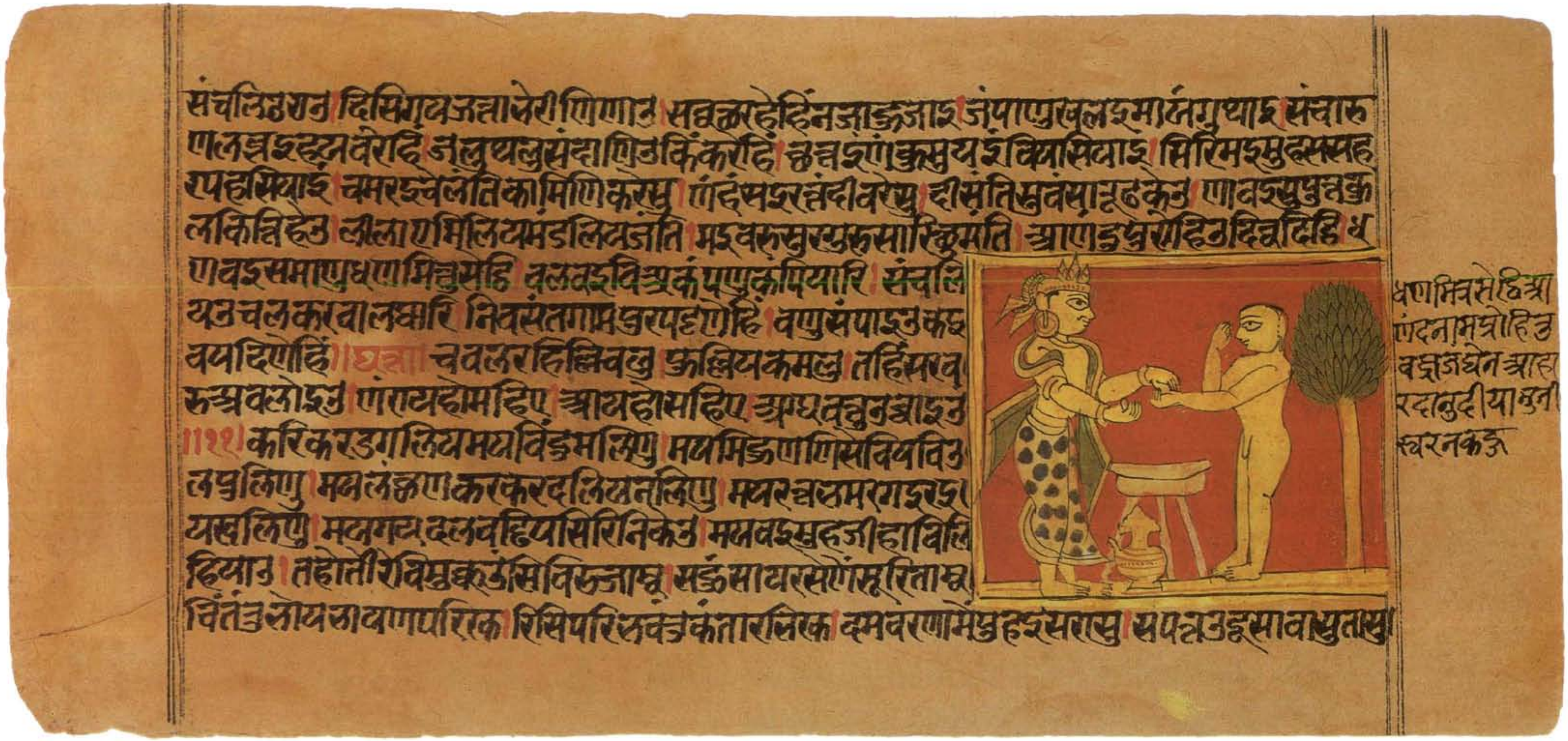

उसकी यात्रा के नगाड़ों की आवाज़ दिशाओं में फैल गयी। सर्वत्र रथों से नहीं जाया जाता। जम्पान स्खलित होता है, मातंग ठहर जाता है। अश्ववरों को संचार नहीं मिल पाता। छत्र ऐसे मालूम होते हैं मानो श्रीमती के मुखरूपी चन्द्रमा का उपहास करनेवाले खिले हुए कुसुम हों, कामिनियों के हाथों में चमर चल रहे हैं मानो लाल कमलों पर हंस हों। अच्छे बाँस पर लगा हुआ ध्वज हो, जैसे वह सुपुत्र कुल और कीर्ति का कारण हो। लीलापूर्वक माण्डलीक राजा भी मिलकर जाते हैं और मति में श्रेष्ठ बृहस्पति के समान मन्त्री भी। दिव्यदृष्टि आनन्द नाम का पुरोहित, कुबेर के समान सेठ धनमित्र। शत्रु को कँपानेवाला अकंपन सेनापति भी हाथ में तलवार लेकर चल पड़ा। इस प्रकार ग्राम-पुर और नगरों में रहते हुए वे लोग कई दिनों में उस वन में पहुँचे।

घत्ता—वहाँ उन्होंने चंचल लहरों से चपल और खिले हुए कमलोंवाले सरोवर को इस प्रकार देखा जैसे आये हुए राजा के लिए धरतीरूपी सखी ने अर्घपात्र ऊँचा कर लिया हो॥ ११॥

१२

जो हाथियों के सूँडों से झरते हुए मदजल बिन्दुओं से मलिन हैं, जिसके विशाल किनारों पर मृगयुगल ठहरा दिये गये हैं, जिसके कमल सूर्य की किरणों से खिलते हैं, जहाँ मतवाले भ्रमरों की गति का स्खलन हो रहा है, जहाँ मदवाले गजों के द्वारा कमलों को नष्ट कर दिया जाता है, जो सिंहों की जिह्वावलियों से अलिखित है उसके तट पर जैसे ही शिविर ठहरता है, वैसे ही सागरसेन के साथ एक मुनि भोजन के पात्र की परीक्षा की चिन्ता करते हुए तथा वनभिक्षा के लिए परिभ्रमण करते हुए (दूसरे) दमवर नामक महामुनि उस राजा के तम्बुओं के निवास पर पहुँचे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

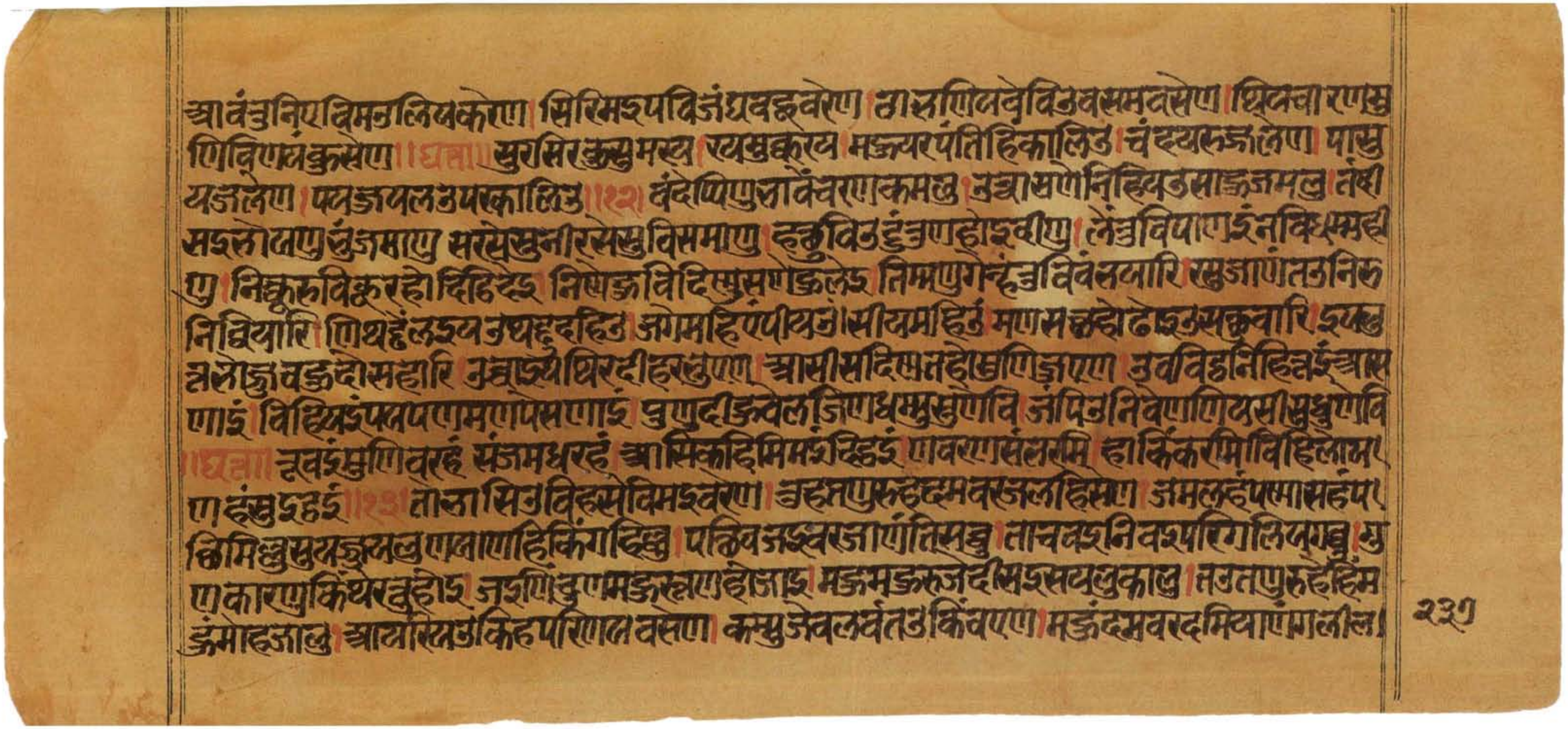

उन्हें आते हुए देखकर श्रीमती और वज्रजंघ वधू-वर ने दोनों हाथ जोड़कर दोनों के लिए 'ठहरिए' कहा। उपशम और विनय के अंकुश के कारण वे दोनों चारण मुनि ठहर गये।

घत्ता—देवों के सिरों की कुसुमरज में रत मुक्त मधुकर-पंक्तियों से काले उनके चरणयुगलों को चन्द्रमा के समान उज्ज्वल प्राशुक जल से प्रक्षालित किया॥ १२॥

१३

भावपूर्वक चरणयुगलों की वन्दना कर दोनों साधुओं को ऊँचे आसन पर बैठाया। वे भोजन करते हुए ऐसे दिखाई देते हैं—सुरस और नीरस में समान दिखाई देते हैं, हाथ उठाते हुए भी वे दीन नहीं होते, हाथ से ग्रहण करते हुए भी धर्महीन नहीं हैं, अक्रूर होते हुए भी कूर (क्रूर = दुष्ट, भात) पर दृष्टि देते हैं, स्नेहहीन होते हुए भी दिये गये स्नेह (घी-तेल) को लेते हैं, ब्रह्मचारी होते हुए भी तिम्मण (कढ़ी, स्त्री) लेते हैं, रस से निवृत्त होते हुए भी रस को जानते हैं, स्वयं तरल होते हुए जमा हुआ दही ले लिया, जो विश्व में महान् हैं उन्होंने शीतल मही पी लिया। मन से स्वच्छ उनके लिए स्वच्छ जल दिया गया। इस प्रकार उन्होंने सब प्रकार के दोषों से रहित भोजन किया। तब दोनों मुनियों ने अपने स्थिर लम्बे हाथ उठाकर उन्हें आशीर्वाद दिया। वे दिये गये आसनों पर बैठ गये। उन्होंने पैरों में प्रणाम, उन्हें दबाना आदि क्रियाएँ कीं। फिर लम्बे समय तक जिनधर्म सुनकर, अपना सिर हिलाते हुए राजा ने कहा—

घत्ता—"संयम धारण करनेवाले मुनिवरों का रूप कहीं मेरे द्वारा देखा हुआ है। नेत्रों के लिए दोनों इष्ट हैं, केवल मुझे याद नहीं आ रहा है, हा ! मैं क्या करूँ?"॥ १३॥

१४

तब हँसते हुए मतिवर बोले—"हम तुम्हारे मित्र दमवर और जलधिसेन हैं—पचास युगलों में से अन्तिम। क्या पागल हो, अपने दोनों पुत्रों को नहीं जानते! हे राजन्! यतिवर सब जानते हैं।" इस पर परिगलित गर्व राजा कहता है—"गुण का कारण बुढ़ापा नहीं होता, जीर्ण नींबू मीठा नहीं हो जाता। लेकिन मधु हर क्षण मधुर दिखाई देता है। पुत्रों ने तप का और परिणत वय मैंने मोहजाल का आचरण क्यों किया ? क्या आयु से कर्म बलवान् होता है ? कामदेव की लीलाओं का अन्त करनेवाले हे दमवर,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

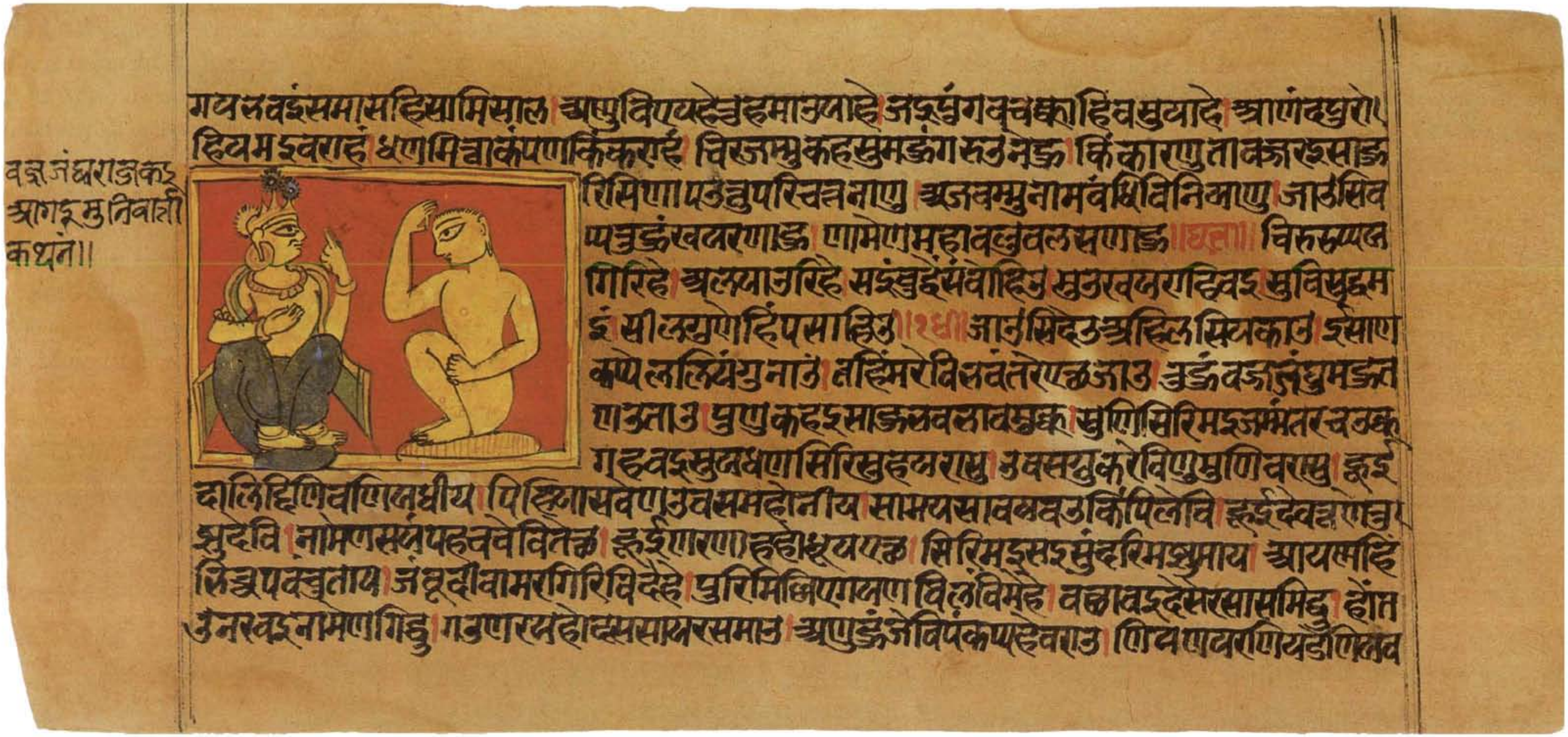

स्वामिश्रेष्ठ, मेरे गत जन्म थोड़े में बताइए ? और भी हे यतिश्रेष्ठ, इस चक्रवर्ती की पुत्री तुम्हारी माँ के आनन्द पुरोहित मतिवर धनमित्र और अकम्पन अनुचरों का चिरजन्म बताइए और मेरे भारी स्नेह का क्या कारण है ?'' इस पर मुनि कहते हैं कि ऋषि के द्वारा कहे जाने पर भी ज्ञान से रहित जयवर्मा नाम के हे सुभट ! तुम निदान बाँधकर विद्याधर राजा हुए, सेना से सहित महाबल नाम के।

घत्ता—प्राचीन समय में विजयार्ध पर्वत पर अलका नगरी में स्वयंबुद्ध के द्वारा सम्बोधित विशुद्ध मतिवाला और शीलगुणों से प्रसाधित वह विद्याधर राजा मर गया॥ १४॥

१५

तुम ललितांग नाम से ईशान स्वर्ग में देव हुए, काम की अभिलाषा करनेवाले। वहाँ से मरकर तुम यहाँ आये, तुम वज्रजंघ मेरे पिता। भव-भाव से रहित वे मुनि फिर कहते हैं—तुम श्रीमती का जन्मान्तर (चार पूर्वजन्म) सुनो। गृहपति की पुत्री धनश्री श्रुतधारी मुनिवर को उपसर्ग कर बनिया की दरिद्र कन्या हुई। मुनि पिहिताश्रव ने उसे उपशान्त किया। वह कुछ श्रावक व्रत ग्रहण कर स्वर्ग में तुम्हारी देवी हुई स्वयंप्रभा नाम की। वहाँ से आकर यहाँ राजा की कन्या हुई श्रीमती सती सुन्दरी मेरी माँ। हे तात ! अब भृत्यों के पूर्वजन्मों को सुनिए। जम्बूद्वीप के सुमेर पर्वत के पूर्वविदेह में वत्सावती देश है जिस पर सदैव बादल छाये रहते हैं, उसमें क्रोध से प्रज्वलित गृद्ध नाम का राजा था। वह बेचारा नरक गया और पंकप्रभा भूमि में दस सागर-पर्यन्त दु:ख भोगकर जहाँ धन का निवास है, ऐसे अपने नगर के निकट,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

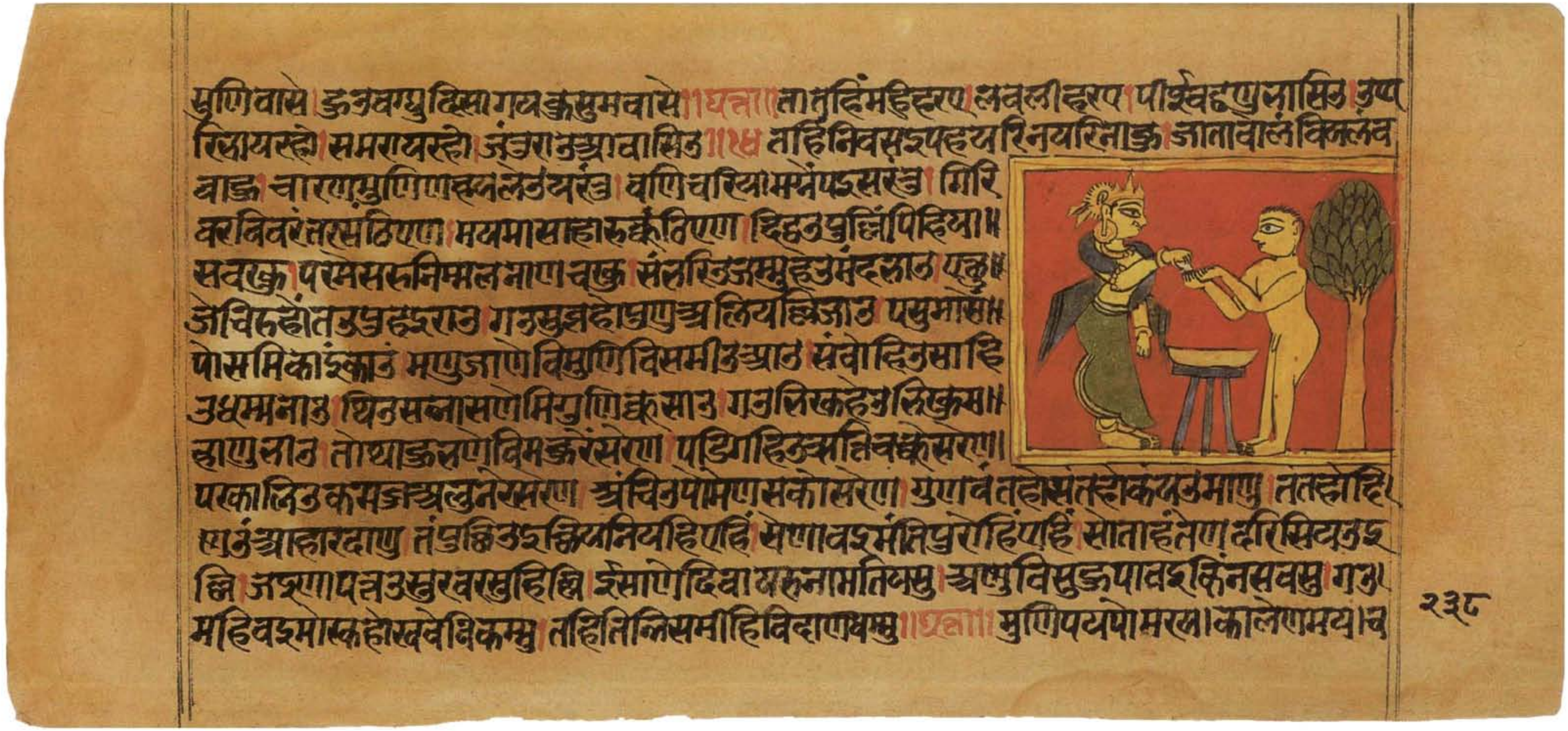

दिग्गजरूपी कुसुमों की गन्ध लेनेवाला बाघ हुआ।

घत्ता—वहाँ लवली-लताओं के घर उस पर्वत पर प्रीतिवर्धन नाम का राजा, युद्ध का आदर करनेवाले अपने भाई पर आक्रमण करने के लिए जाता हुआ, ठहर गया॥ १५ ॥

१६

प्रभंकरी (रानी) का स्वामी प्रीतिवर्धन राजा जब वहाँ रह रहा था, तब अपने लम्बे हाथ उठाये हुए, आकाश से उतरते हुए, वन में चर्यामार्ग के लिए प्रवेश करते हुए चारण मुनि आये। गिरिवर के विवर के भीतर स्थित और पशुओं के मांस का आहार करने के लिए उत्सुक व्याघ्र ने पिहिताश्रव नामक निर्मलज्ञान की आँखवाले परमेश्वर को देखा। अपने पूर्वजन्म की याद कर (वह कहता है) मैं मन्दभाग्य पहले यहीं का राजा था। मैं नरक गया। फिर व्याघ्र बना। मैं पशुमांस से अपने शरीर का पोषण क्यों करता हूँ! उसका मन जानकर मुनि भी उसके पास आये और उससे धर्म का नाम कहा। वह व्याघ्र कषायभाव से मुक्त होकर संन्यास में स्थित हो गया। महानुभाव भिक्षु भिक्षा के लिए चले गये। तब, 'ठहरिए' मधुर स्वर में कहते हुए, चक्रवर्ती राजा ने उन्हें शीघ्र पड़गाहा। उसने जल से उनके दोनों पैरों का प्रक्षालन किया और केशरसहित कमल से उसकी पूजा की। गुणवान् सन्त का मान किया, तथा उसने उनके लिए आहारदान दिया। अपना कल्याण चाहनेवाले सेनापति, मन्त्री और पुरोहितों ने अपनी इच्छित बात पूछी। उन्होंने उनके लिए वह व्याघ्र बताया। यति के कारण वह बाघ इन्द्र की सुख-परम्परावाले ईशान स्वर्ग में दिवाकर नाम का देव हुआ। स्ववश होकर दूसरा कौन नहीं सुख पा सकता ? राजा कर्म नष्ट करके मोक्ष चला गया। वे तीनों (सेनापति आदि) दानधर्म की इच्छा रखते हुए—

घत्ता—तथा मुनि के चरणकमलों में लीन होकर समय के साथ मृत्यु को प्राप्त हुए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

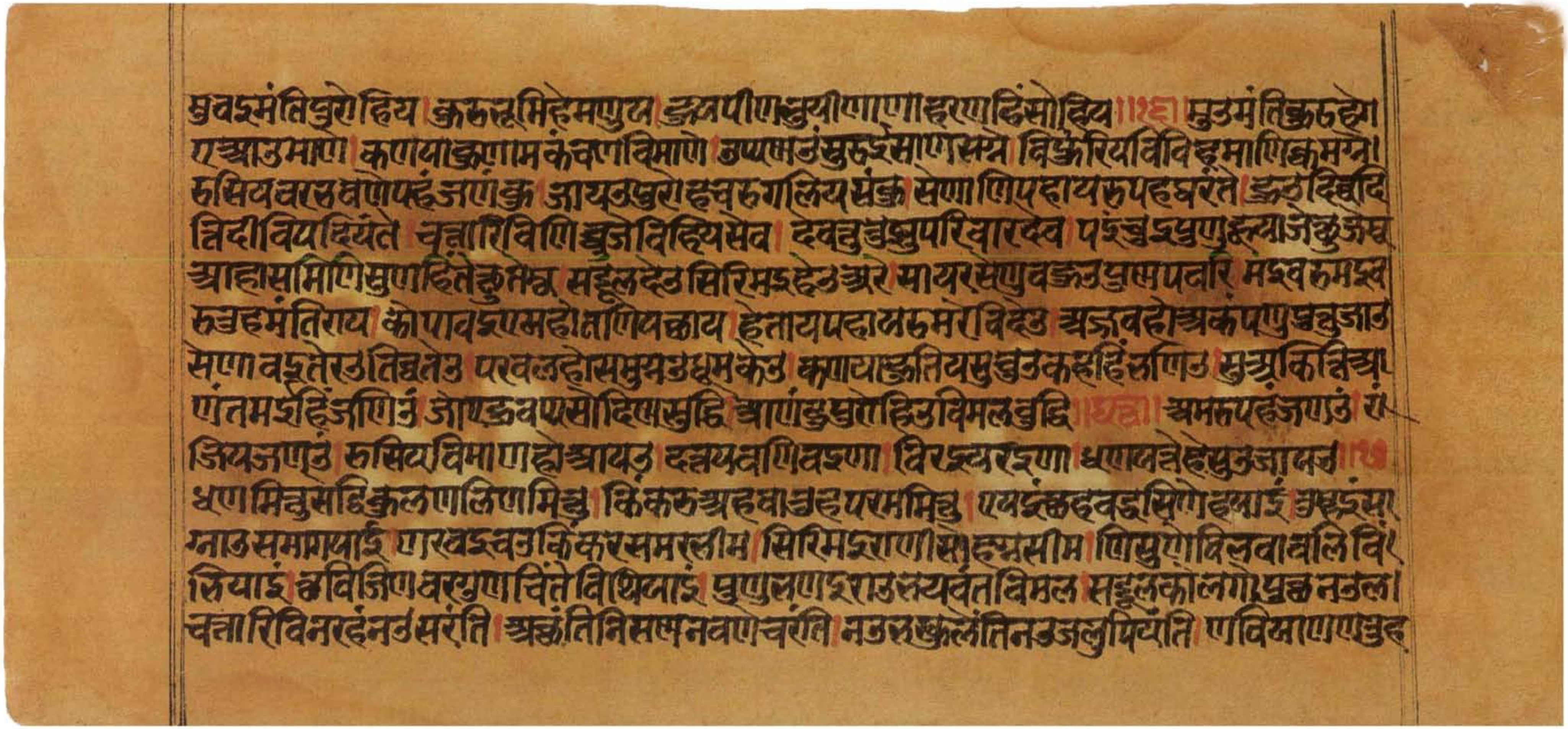

और कुरुभूमि में स्थूलबाहुवाले और नाना अलंकारों से शोभित मनुष्य हुए॥ १६॥

१७

कुरुक्षेत्र में आयु का मान समाप्त होने पर मन्त्री मर गया। विविध माणिक्यों से चमकते मार्गोंवाले ईशान स्वर्ग-स्वर्ण के विमान में कनकाभ नाम का देव हुआ। शंकाहीन पुरोहित का जीव प्रभंजन नाम से रुषित नामक उत्तम विमान में देव हुआ। सेनापति प्रभाकर नाम से दीप्त दीप्तिवाला दिशाओं को आलोकित करनेवाले प्रभा विमान में उत्पन्न हुआ। हे देव, वे चारों ही तुम्हारी सेवा करनेवाले स्वर्ग में तुम्हारे पारिवारिक देव थे। वहाँ से च्युत होने पर तुम जहाँ जिस प्रकार उत्पन्न हुए, उसी प्रकार ये भी उत्पन्न हुए। हे देव! सुनिए, शार्दूलदेव श्रीमती के पुण्यप्रवर उदर से सागरसेन नाम का पुत्र हुआ। मतिवर, तुम्हारा श्रेष्ठ मतिवाला मन्त्री हुआ। हे राजन्! इसकी छाया कौन पा सकता है! हे तात! प्रभाकर देव मरकर आर्जवा रानी से अकम्पन नाम का पुत्र हुआ। सेनापति, तुम्हारा दिव्यतेज सेनापति हुआ जो मानो शत्रुसेना के लिए धूमकेतु के रूप में उत्पन्न हुआ है। कवियों के द्वारा कहा गया है कि कनकाभ नाम का देव च्युत होकर श्रुतिकीर्ति और अनन्तमति से उत्पन्न होकर यह सुभट शुद्धि प्रदान करनेवाला विमलबुद्धि आनन्द नाम का पुरोहित है।

घत्ता—जनों का रंजन करनेवाला प्रभंजन नाम का अमर (देव) रुषित विमान से आकर रति में आसक्त दत्तक सेठ की पत्नी धनदत्ता का पुत्र हुआ॥ १७॥

१८

श्रेष्ठीकुलरूपी कमलों के लिए सूर्य, धनमित्र तुम्हारा अनुचर अथवा परममित्र हुआ। स्नेह से बँधे हुए ये छहों तुम लोग स्वर्ग से आये हुए हो। इस प्रकार राजा, युद्ध में भयंकर चारों अनुचर और सौभाग्य की चरम सीमा रानी श्रीमती अपनी भवावली सुनकर विस्मय में पड़ गये। छहों जिनरूपी सूर्य के गुणों को सुनकर स्थित हो गये। राजा फिर से कहता है—ये भयभीत तथा विमल सिंह-कोल-बन्दर और नकुल ये चारों मनुष्यों से नहीं हटते, यहाँ बैठे हुए हैं, वन में विचरण नहीं करते, न कुछ भोजन करते हैं, और न पानी पीते हैं, अपना मुँह नीचे किये हुए तुम्हारा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

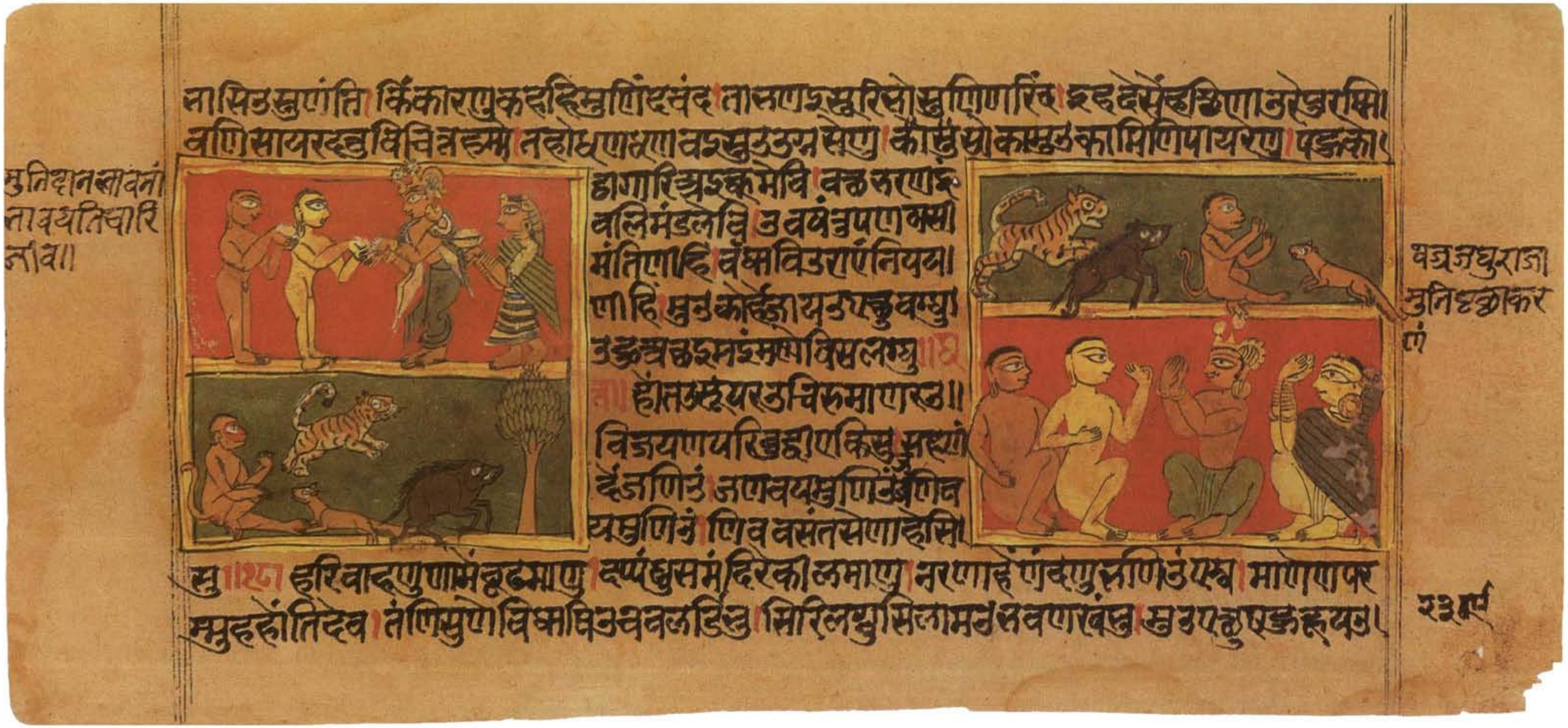

भाषण सुनते हैं। हे मुनिश्रेष्ठ, इसका क्या कारण है ? तब मुनिवर कहते हैं—'हे राजन्! सुनो, यहाँ सुन्दर हस्तिनापुर नगर में सागरदत्त वणिक् अपने विचित्र महल में निवास करता था। उसकी स्त्री धनवती और पुत्र उग्रसेन था। स्त्रियों के चरणों की धूल वह अत्यन्त कामी था। राजा के कोष्ठागार का अतिक्रमण कर चावल आदि वस्तुएँ बलपूर्वक हरणकर अपनी प्रेयसी स्त्री के पास ले जाते हुए राजा ने उसे रस्सियों से बँधवा दिया। वह मरकर क्रोध के कारण यहाँ बाघ हुआ। मुझे श्लाघनीय मानकर अब यह ऊपर स्थित है।

घत्ता—वह सुअर पूर्वजन्म में विजयनगर में महानन्द राजा से उत्पन्न वसन्तसेना का पुत्र था। अत्यन्त मानरत और बुद्धि से कृश। लेकिन जनपद में मान्य॥१८॥

१९

हरिवाहन के नाम से वह बड़ा हुआ। दर्प से अन्धे और अपने घर में खेलते हुए उससे राजा ने कहा कि मान करने से देवता विमुख हो जाते हैं। यह सुनकर वह चंचल बालक दौड़ा और उसका सिर शिलामय भवन के खम्भे से जा लगा। मरकर वह बेचारा यहाँ सुअर हुआ है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

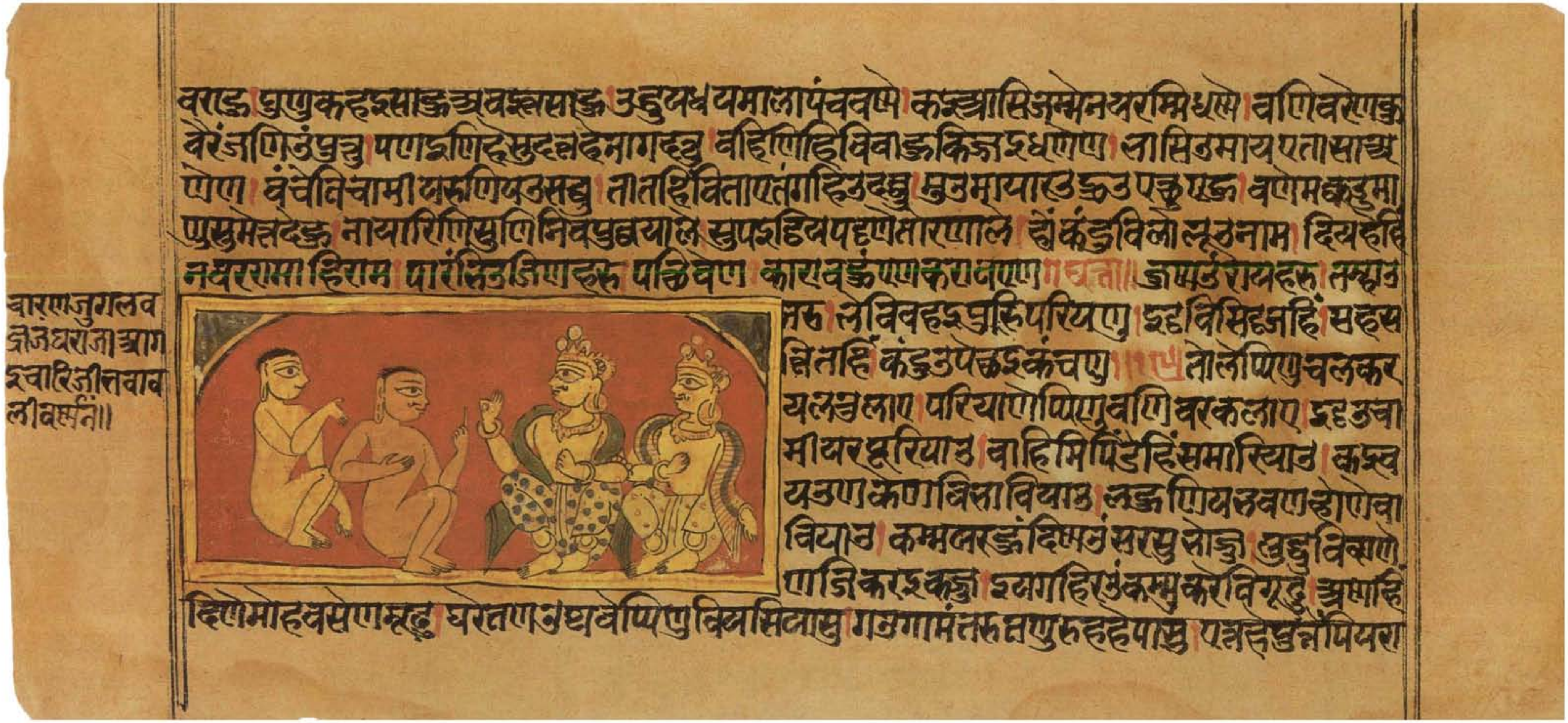

अत्यन्त साधु वह साधु पुन: कथन करते हैं कि उड़ती हुई पचरंगी ध्वजमालाओंवाले धान्यपुर नगर में यह बन्दर पूर्वजन्म में, वणिग्वर कुबेर से उत्पन्न प्रणयिनी सुदत्ता का नागदत्त नाम का पुत्र था। माता ने कहा कि बहन का विवाह धन से किया जाता है परन्तु इसने समस्त सोना ठगकर ले लिया, तब उसने (माँ ने) भी उससे सब धन छीन लिया। वह मायावी पुत्र यहाँ इस वन में मनुष्यमात्र के समान देहवाला वानर हुआ है। हे राजन्! सुनो, यह नेवला पूर्वकाल में तोरणों से युक्त सुप्रतिष्ठितनगर में लोलुप नाम का हलवाई था। हे वज्रजंघ, कुछ दिनों में राजा ने एक जिनमन्दिर कारीगर से बनवाना प्रारम्भ किया।

घत्ता—वहाँ पुराना राजघर था; वहाँ से लकड़ी लेकर पुरजन नगर ले जाते। जहाँ पर एक ईंट फूटी थी, वहाँ हलवाई अचानक सोना देखता है॥ १९॥

जिसमें करतल और तराजू चंचल है ऐसी वणिक्‌वर की कला से, जानबूझकर स्वर्ण से पूरित ईंटें तोलकर बाहर मिट्टी के पिण्डों से उन्हें ढक दिया। किसी ने भी किसी प्रकार इसे नहीं जाना। वह शीघ्र उन्हें अपने घर उठवा ले गया। काम करनेवाले को उसने सरस भोजन दिया। लोभी व्यक्ति भी दान से काम कर लेता है। यह गूढ़ और निन्दनीय काम कर दूसरे दिन वह मूर्ख मोह के वश से, प्रसन्नमुख अपने पुत्र को घर में रखकर दूसरे गाँव पुत्री के पास गया। यहाँ पर पिता की आज्ञा से खण्डित पुत्र ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

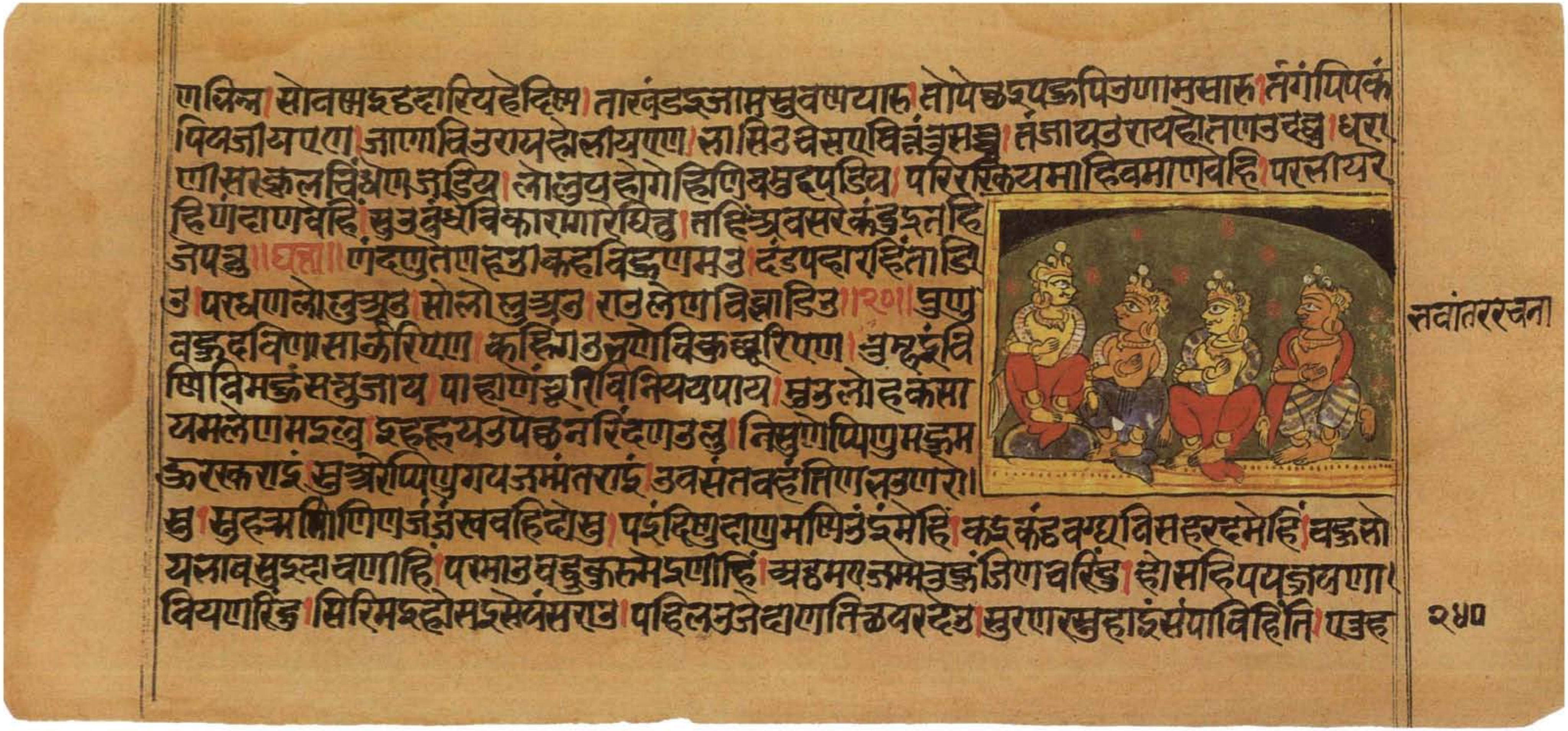

सोने की ईंटें वेश्या को दे दीं। जैसे ही सुनार उसे तोड़ता है वह उसमें राजा के पिता का श्रेष्ठ नाम देखता है। डरकर और काँपते हुए प्राणों से उसने यह बात राजा को बतायी। वेश्या ने सारा हाल बता दिया। वह सारा धन राजा का हो गया। राजा के कुलचिह्न से जड़ी हुई नृपमुद्राएँ लोलुप रसोइए के घर जा पड़ीं। दूसरों को डरानेवाले मानो दानवों के समान राजा के रक्षापुरुषों ने पुत्र को बाँधकर कारागार में डाल दिया। उस अवसर पर हलवाई वहाँ पहुँच गया।

घत्ता—उसने डण्डों के प्रहारों से लड़के को इतना मारा कि वह किसी प्रकार मरा-भर नहीं। दूसरे के धन के लोभी उस हलवाई को भी राजकुल ने नष्ट कर दिया॥ २०॥

२१

फिर अत्यधिक धन की आशा से भरे हुए हलवाई ने 'तुम कहाँ गये थे, तुम दोनों मेरे शत्रु हुए' यह कहकर अपने दोनों पैर कुचल दिये, लोभ कषाय से मैला वह मर गया। हे राजन्, देखो, यह यहाँ नकुल हुआ मधु के समान मीठे अक्षरों को सुनकर और गत जन्मान्तरों की याद कर ये उपशम भाव धारण करते हैं। न इन्हें डर है और न क्रोध। शुभध्यान के द्वारा आज भी ये अपने दोष नष्ट कर रहे हैं। तुम्हारे द्वारा दिये गये दान को इन वानर, सुअर, बाघ और विषधरदम अर्थात् नकुल ने माना है। बहु-भोगभाव और पवित्रता प्रदान करनेवाली कुरुभूमि की आयु इन्होंने बाँध ली है। आठवें जन्म में तुम (वज्रजंघ) अपने चरणयुगल में देवेन्द्रों को नमन करानेवाले जिनवरेन्द्र होंगे। श्रीमती (मरकर) पहला दान करनेवाले राजा श्रेयांस (के रूप में) उत्पन्न होगी और फिर तीर्थंकर बनेगी। ये देव और मनुष्यों के सुख को प्राप्त करेंगे और तुम्हारे

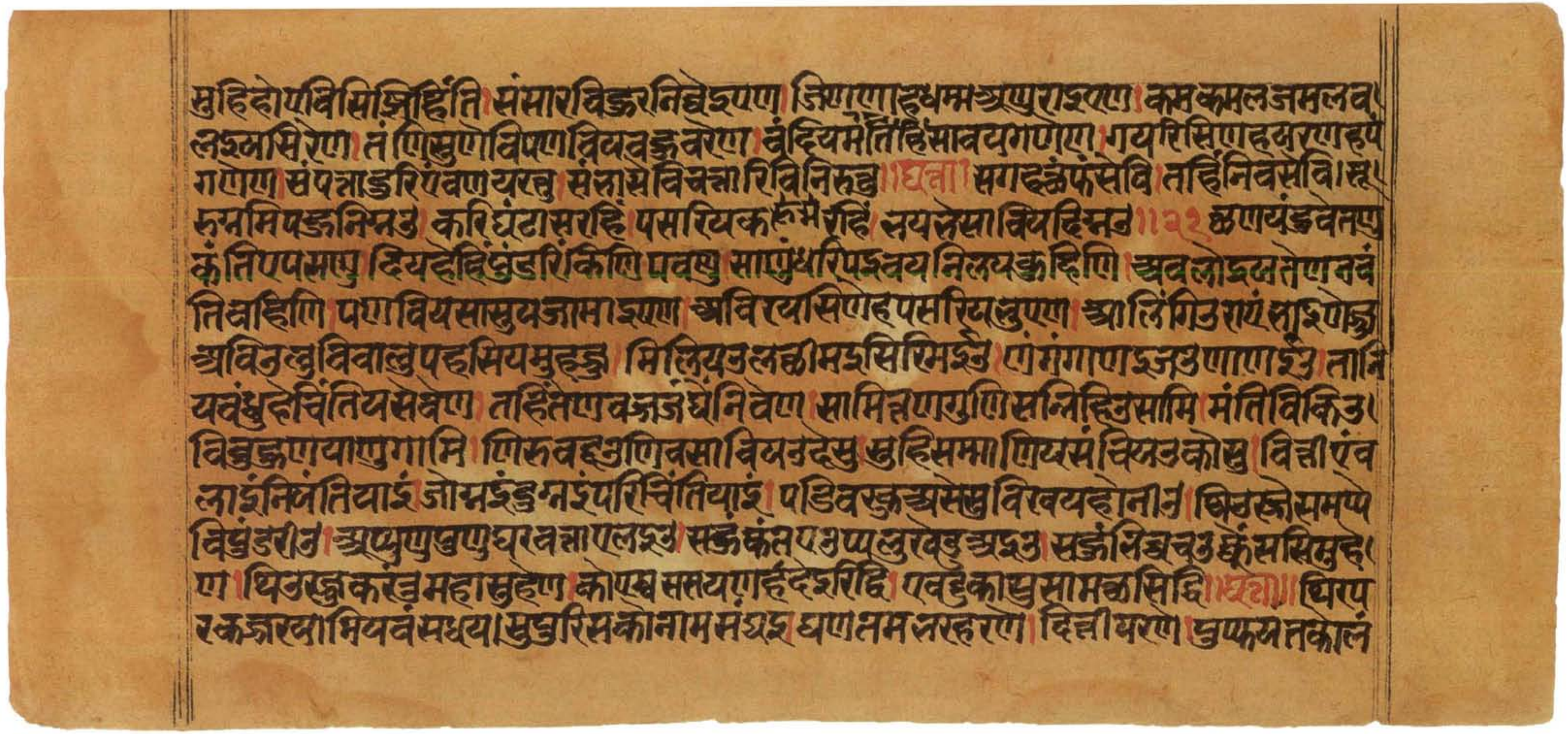

ये सुधीजन सिद्धि को प्राप्त होंगे। संसार के कष्टों से विरक्त होकर, जिनधर्म के अनुरागी तथा दोनों चरणकमलों में अपने सिर को झुकानेवाले वधू-वर ने उन्हें प्रणाम किया। मन्त्रियों और श्रावकगण ने उनकी वन्दना की, आकाशगामी ऋषिवर नभ के प्रांगण से चल दिये। बातचीत करके चारों ने निश्चित कर लिया कि वे पाप से ही पशुयोनि को प्राप्त हुए।

घत्ता—मृगहस्त नक्षत्र बीतने पर और रात्रि में वहाँ रहकर सूर्योदय होने पर राजा वहाँ से निकला, हाथियों के घण्टास्वरों और फैली हुई सूँडों से दिग्गजों को भय से कँपाता हुआ॥ २१॥

२२

अपनी शरीरकान्ति से पूर्णचन्द्र के समान प्रसन्न वह कुछ ही दिनों में पुण्डरीकिणी पहुँच गया। अनुन्धरा सहित तथा पतिव्रता के घर की पगडण्डी की तरह उसने अपनी बहन को प्रणाम करते हुए देखा। अविरत स्नेह से अपने बाहु फैलाये हुए जामाता ने सास को प्रणाम किया। राजा ने भानजे का आलिंगन किया। अविकल और हँसते हुए मुखकमलवाला बालक लक्ष्मीमती और श्रीमती से मिला, मानो गंगा और यमुना नदियों से मिला हो, अपने भाई का कल्याण सोचनेवाले उस वज्रजंघ राजा ने वहाँ स्वामित्व के गुण में स्वामी को रखा, विद्वानों का अनुगमन करनेवाले को मन्त्री बनाया। राजा के द्वारा शासित समूचा देश उपद्रवरहित हो गया। सुधियों को सम्मानित किया गया और कोष संचित किया गया। वृत्तियों से सेनाओं को नियन्त्रित किया गया। योग्य दुर्गों की चिन्ता की गयी। अशेष प्रतिपक्ष को नष्ट कर दिया गया। उसने पुण्डरीक को स्थिर राज्य में स्थापित कर दिया। स्वयं घर का वृत्तान्त पाकर अपनी पत्नी के साथ उत्पलखेड नगर गया। चन्द्रमुख चारों अनुचरों के साथ वह सुधी सुख से राज्य करता हुआ रहने लगा। इस प्रकार कौन अपने लोगों को ऋद्धि देता है? इतनी बड़ी सामर्थ्य और सिद्धि किसके पास है ?

घत्ता—स्थिर, परकार्य में रत, अपने वंश का ध्वजस्वरूप सज्जन पुरुष की शरण में कौन नहीं जाता? सघन अन्धकार के भार का हरण करनेवाले युद्ध में दीप्ति को कौन लाँघ सकता है?॥ २२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुण अलंकारों से युक्त महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का वज्रबाहु वज्रदन्त-तपश्चरण नाम का पचीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥ २५ ॥

सन्धि २६

कामभोग और सुखरस से वशीभूत उस श्रीमती का क्या वर्णन किया जाये! मन में वह जो सोचती है वह सब एक क्षण में उसे प्राप्त हो जाता है।

१

यक्ष कर्दम, प्रिय का दृढ़ आलिंगन, मालतीमाला, केशर का लेप, ऊँचा मंच, सुन्दर शय्यातल, स्थूल उन्नत ऊष्मा सहित स्तनों का भाग, उष्ण भोजन घी की धारा से सराबोर, लाल कम्बल, और रन्ध्रों से आच्छादित घर—पूर्व पुण्य के संयोग से उसे सब-कुछ का संयोग प्राप्त हो गया—शीतकाल में उसने इस प्रकार भोग किया। चन्दन, चन्द्रकिरणें, स्नेहमयी प्रिया, जुही की माला, स्वच्छ हारावली, दक्षिण मन्द शीतल पवन। वृक्ष की क्रीड़ा से आन्दोलित कोमल पल्लव। लतामण्डप, कमलयुक्त सरोवर, पंखों के आन्दोलन से व्याप्त जलकण। खूब जमा हुआ दही। ठण्डा जल—उष्णकाल को उसने इस प्रकार बिताया। खिले हुए दिशाकदम्ब समूह की धूल से रत, मस्त मयूरवृन्द का केका शब्द,

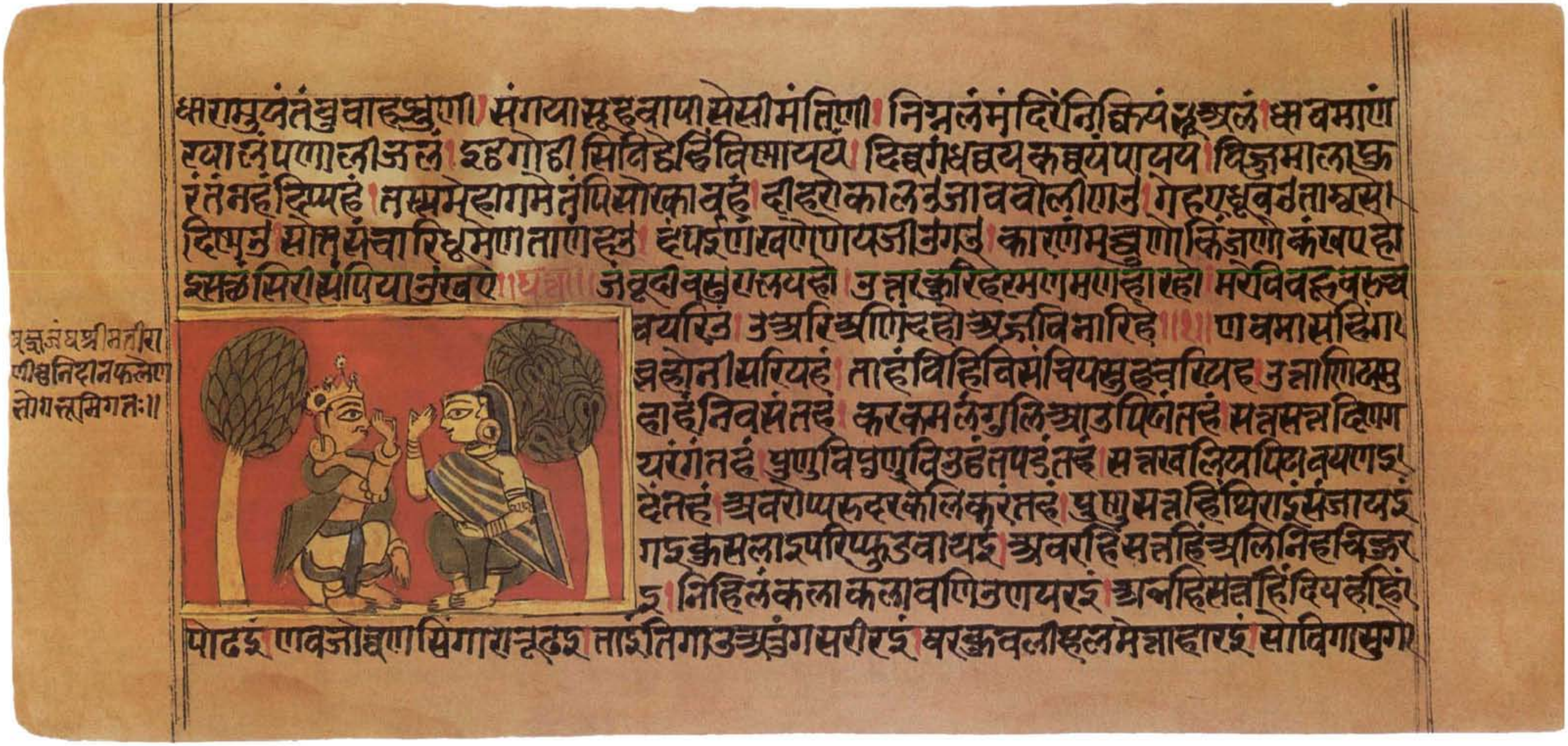

जलधारा को विसर्जित करनेवाले मेघों की ध्वनि, संगत सुभग, पास में बैठी हुई स्त्री। णिग्गल मन्दिर, और पवित्र भूमिभाग, दौड़ता हुआ वेगशील प्रणाली जल। इष्ट गोष्ठियों और विशिष्टों के द्वारा विज्ञापित दिव्य गन्धर्वगान और प्राकृतकाव्य। बिजलियों से स्फुरित आकाश और दिशापथ, ये भी मेघों के आगमन पर उसे (श्रीमती को) अच्छे लगे। जब उसका बहुत समय बीत गया तो एक दिन, उसने घर में धूप दी। उसके धुएँ ने उन्हें कानों के छेद में आहत कर दिया। उस दम्पति का एक क्षण में जीव चला गया। क्या मनुष्य मृत्यु का कारण चाहता है? आयु का क्षय होने पर शिरीष पुष्प भी शस्त्र का काम करता है ?

घत्ता—वधू-वर दोनों मरकर जम्बूद्वीप के महा सुमेरु की उत्तरदिशा में रमण के लिए सुन्दर उत्तर कुरुभूमि में अनिन्द्य आर्जव नारी के उदर में अवतरित हुए॥ १॥

२

नौ माह में गर्भ से निकलने पर, शुभ चरित का संचय करनेवाले, उन दोनों के ऊँचा मुँह कर रहते हुए और हाथ की अँगुलियों को पीते (चूसते) हुए सात दिन बीत गये। सात दिन घुटनों के बल चलते हुए, फिर-फिर उठते-पड़ते हुए, सात दिन कुछ पद-वचन बोलते हुए और एक-दूसरे के साथ कुछ क्रीड़ा करते हुए बीत गये। फिर सात दिन में स्थिर, गति में कुशल और स्फुट वाणीवाले हो गये। और भी सात दिन में भ्रमर के-से काले बालवाले और समस्त कलाकलाप में निपुणतर हो गये। दूसरे सात दिन में प्रौढ़ तथा नवयौवन एवं शृंगार में रूढ़ हो गये। उनका तीन कोस (गव्यूति) ऊँचा शरीर था। बेर के समान उनका श्रेष्ठ आहार था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वह भी तीन दिन में वे एक कौर ग्रहण करते थे। ऐसा हर्ष से रहित ऋषियों ने कहा है।

घत्ता—जहाँ सोने की जमीन है, पानी ऐसी मीठा कि जैसे रसायन हो। जहाँ सूर्य कल्पवृक्षों के द्वारा सत्ताईस योजन तक आच्छादित है॥ २॥

३

जहाँ सुख उत्पन्न करनेवाले दस वृक्ष हैं, जो जन-मन का हरण करते हैं और चिन्तित फल देते हैं। मद्यांग वृक्ष, हर्षयुक्त पेय और मद्य, वादित्रांग, तुरंग और तूर्य, भूषणांग हार, केयूर और डोर, वस्त्रांग वस्त्र, गृहांग घर, जो मानो शरद् मेघ हों। भाजनांग वृक्ष, अंगों को दीप्ति देनेवाले तरह-तरह के बर्तन देते हैं और जो भोजनांग वृक्ष हैं, वे विविध भोज्य पदार्थ तथा रसयुक्त सैकड़ों प्रकार के भोजन देते हैं। माल्यांग नाम के वृक्ष देते हैं उन पुष्पों को जिनसे मनुष्य का सम्मान बढ़ता है, पुन्नाग, नाग, श्रेष्ठ पारिजात, भ्रमरों से सहित नवमालाएँ, निर्दोष दीपांग वृक्ष तिमिरभाव को नष्ट करनेवाले दीप देते हैं।

घत्ता—नित्य ही उत्सव, नित्य ही नया भाग्य और नित्य ही शरीर का तारुण्य। भोगभूमि के मनुष्यों की जो-जो चीज दिखाई देती है, वह सुन्दर है॥ ३॥

४

वहाँ सज्जन के निवास को दूषित करनेवाला दुर्जन नहीं है। जहाँ न खाँस है, न शोष है, न क्रोध है और न दोष। न छींक, न जँभाई और न आलस्य देखा जाता है। न नींद और न सुष्ठु नेत्र-निमीलन। न रात न दिन। न ध्वान्त (अन्धकार), न घाम। न इष्ट-वियोग और न कुत्सित कर्म। न अकाल मृत्यु, न चिन्ता, न दीनता, कभी भी कहीं शरीर दुबला नहीं। न पुरीष का विसर्जन और न मूत्र का प्रवाह। न लार, न कफ, न पित्त और न जलन, न रोग, न शोक, न स्वेद और न विषाद,

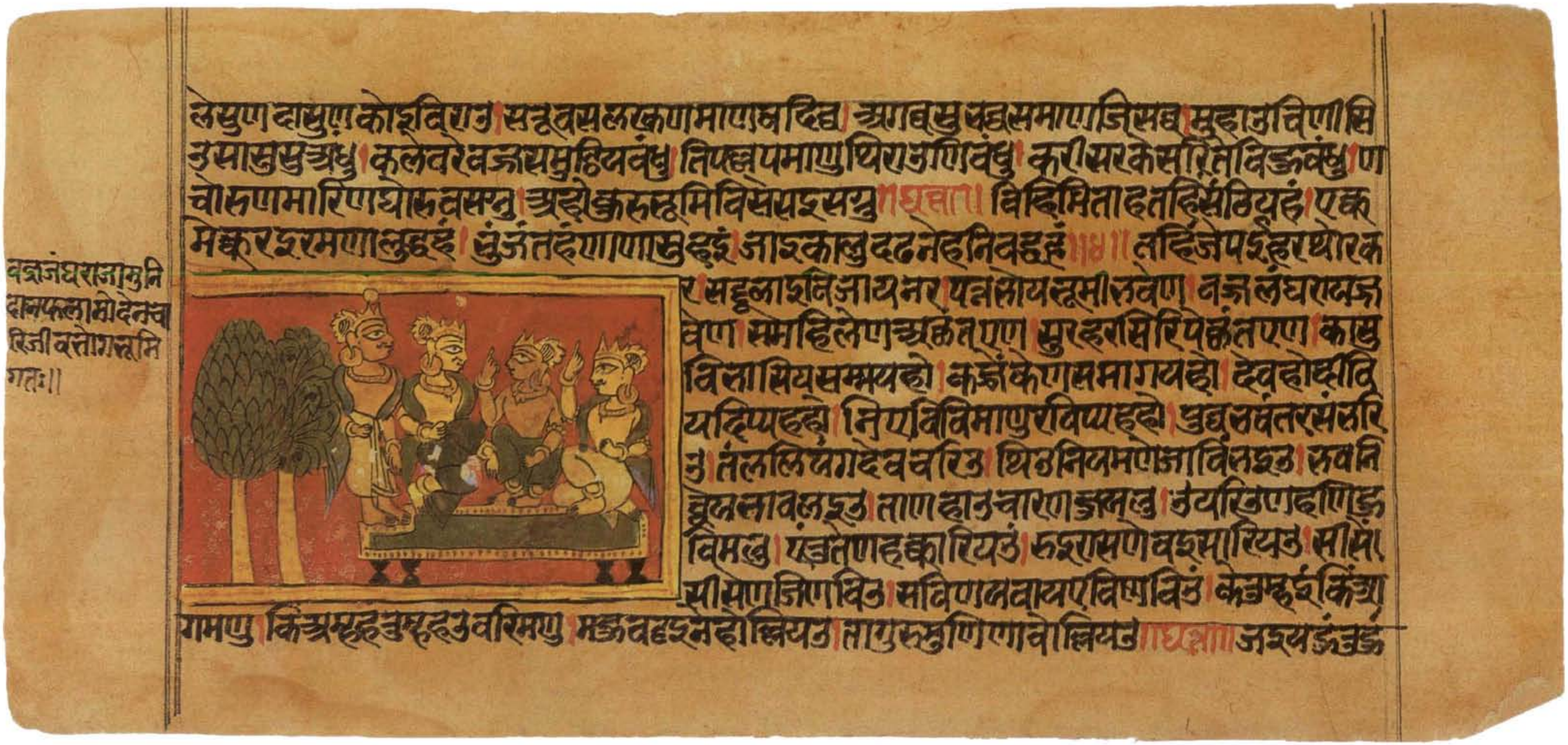

न क्लेश, न दास और न कोई भी राजा। सभी मनुष्य सुरूप, सुलक्षण और दिव्य, निरभिमानी, सुभव्य और सभी समान। उनके मुख से सुगन्धित श्वास निकलता है, शरीर में वज्रवृषभ नाराच संहनन है, तीन पल्य प्रमाण स्थिर आयु का बन्ध है। जहाँ गजेश्वर और सिंह दोनों भाई हैं। जहाँ न चोर है, न मारी है न घोर उपसर्ग। आश्चर्य है कि कुरुभूमि स्वर्ग से भी अधिक विशेषता रखती है।

घत्ता—एक-दूसरे के साथ रतिक्रीड़ा में लुब्ध, दृढ़ स्नेह में बँधे हुए, वहाँ रहते हुए उन दोनों का नाना प्रकार के सुख भोगते हुए समय बीतने लगा॥ ४॥

५

शार्दुलादि भी (सिंह, वानर, सुअर और नकुल) वहीं पर स्थूल और दीर्घ बाहुवाले मनुष्य हुए। भोगभूमि में जन्म पानेवाले वज्रजंघ राजा के जीव को, अपनी महिला (श्रीमती) के साथ रहते हुए, कल्पवृक्षों की लक्ष्मी का निरीक्षण करते हुए, किसी कार्य से आये हुए, सम्यक्दर्शन का भाषण करनेवाले, किसी सूर्यप्रभ देव के दिशापथों को आलोकित करनेवाले विमान को देखकर अपना पूर्वभव का ललितांग-चरित याद आ गया। जब वह अपने मन में विस्मित था, और उसे संसार से निर्वेदभाव हो रहा था, तभी आकाश से एक चारणयुगल मुनि उतरे। आते हुए उन्हें उसने पुकारा और एक ऊँचे आसन पर बैठाया। शिष्य ने सिर से नमस्कार किया और अपनी विनयपूर्ण वाणी से निवेदन किया—"आप कौन हैं, किसलिए यह आगमन किया, हमारा स्नेह से भरा हुआ मन आपके ऊपर क्यों है?" इस पर गुरु बोले—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

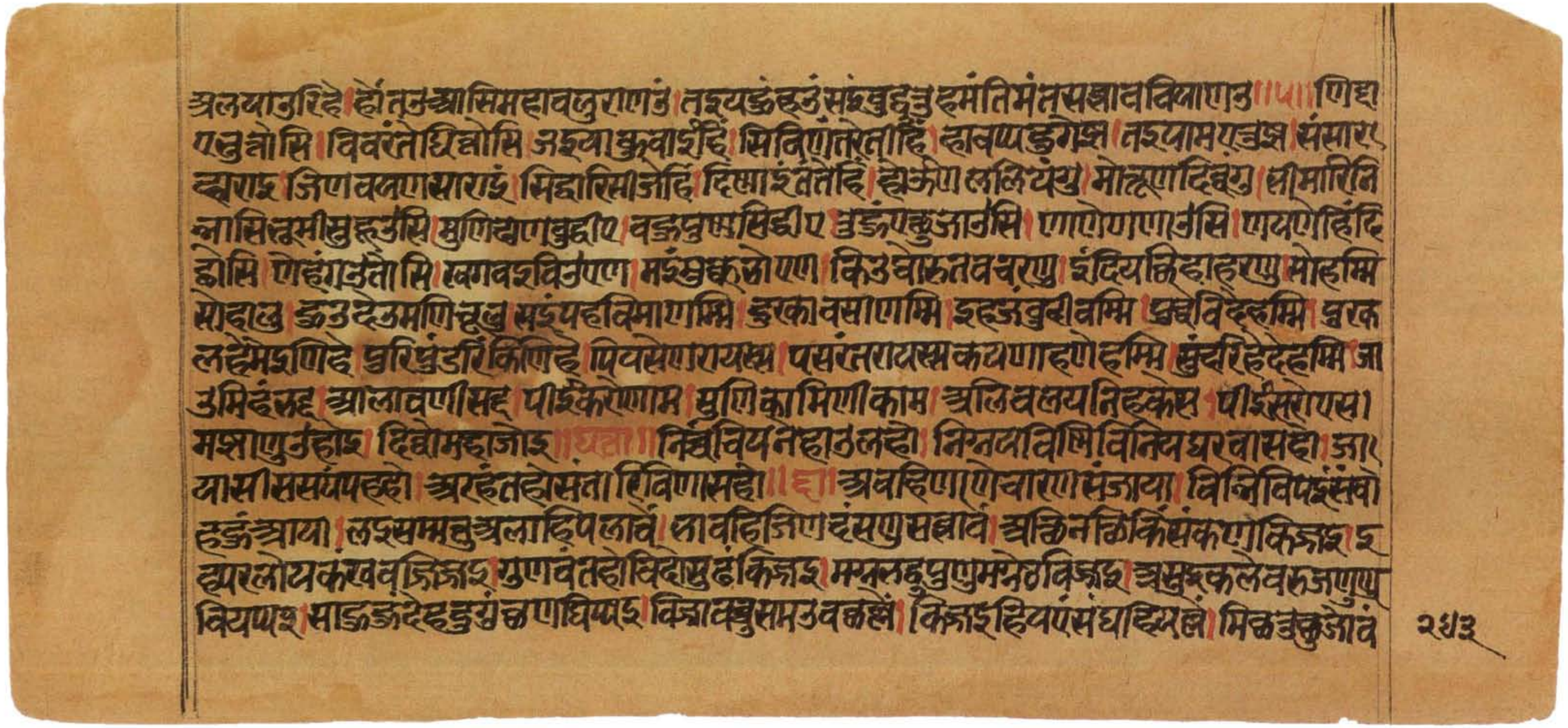

घत्ता—''जब तुम अलकापुरी में राजा थे महाबल नाम से, तब मैं मन्त्र और सद्‌भाव को जाननेवाला तुम्हारा स्वयंबुद्ध मन्त्री था॥५॥

६

जब तुम निद्रा में थे और जब कुवादियों द्वारा गर्त में फेंक दिये गये थे, तब स्वप्नान्तर में भी दुर्ग्राह्य हे सुभट, मैंने तुम्हें संसार का हरण करनेवाले जिनवर के उन वचनों का सार तुम्हें दिया था कि जिससे बड़े-बड़े ऋषि-मुनि सिद्ध हुए हैं। फिर तुम ललितांग देव होकर, दिव्य शरीर छोड़कर भयंकर शत्रुओं का नाश करनेवाली भूमि में उत्पन्न हुए। लेकिन मुनि को दान की बुद्धि और अनेक पुण्यों की सिद्धि से तुम यहाँ उत्पन्न हुए हो, ज्ञान के द्वारा तुम मेरे द्वारा जान लिये गये हो ? सम्बन्धित हो, क्या तुम नहीं जानते ? विद्याधर राजा के वियोग के कारण भोगों को छोड़कर मैंने इन्द्रियों की भूख को नष्ट करनेवाला भयंकर तप किया और सौधर्म स्वर्ग में सौभाग्यशाली मणिचूल देव उत्पन्न हुआ, दुःख को नाश करनेवाले स्वयंप्रभ विमान में। इस जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह की पुष्कलावती भूमि में पुण्डरीकिणी नगरी है। उसमें अपने राज्य को प्रसारित करनेवाले राजा प्रियसेन की सुन्दर पत्नी है। अपने पति से स्नेह करनेवाली उससे, वीणा के समान शब्दवाला मैं प्रीतिंकर नाम से उत्पन्न हुआ। स्त्रियों के द्वारा इच्छित, हे भद्र, तुम सुनो, भ्रमर समूह के समान केशराशिवाला, प्रेम का सरोवर, दिव्य महाज्योति यह मेरा छोटा भाई है।

घत्ता—स्नेह से नित्य भरपूर अपने गृहवास से हम दोनों निकल पड़े तथा विद्यमान शत्रुओं का नाश करनेवाले स्वयंप्रभ अरहन्त के शिष्य हो गये॥६॥

७

हम लोग अवधिज्ञानी चारण हो गये हैं और तुम्हें सम्बोधित करने आये हैं। तुम सम्यक्त्व ग्रहण करो, व्यर्थ बकवाद मत करो, सद्‌भाव से जिनदर्शन का विचार करो। 'है' या 'नहीं है', इसकी बिलकुल शंका नहीं करनी चाहिए, इहलोक और परलोक की भी आकांक्षा छोड़ देनी चाहिए। गुणवान् व्यक्ति के दोषों को ढकना चाहिए, जो मार्गभ्रष्ट हैं उन्हें मार्ग में स्थापित करना चाहिए। यह विचार नहीं करना चाहिए कि मनुष्य अपवित्र शरीर है। साधुओं की देह से घृणा नहीं करनी चाहिए। संघ के हित से भरे हृदय से और वात्सल्य के साथ उनकी वैयावृत्य करनी चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

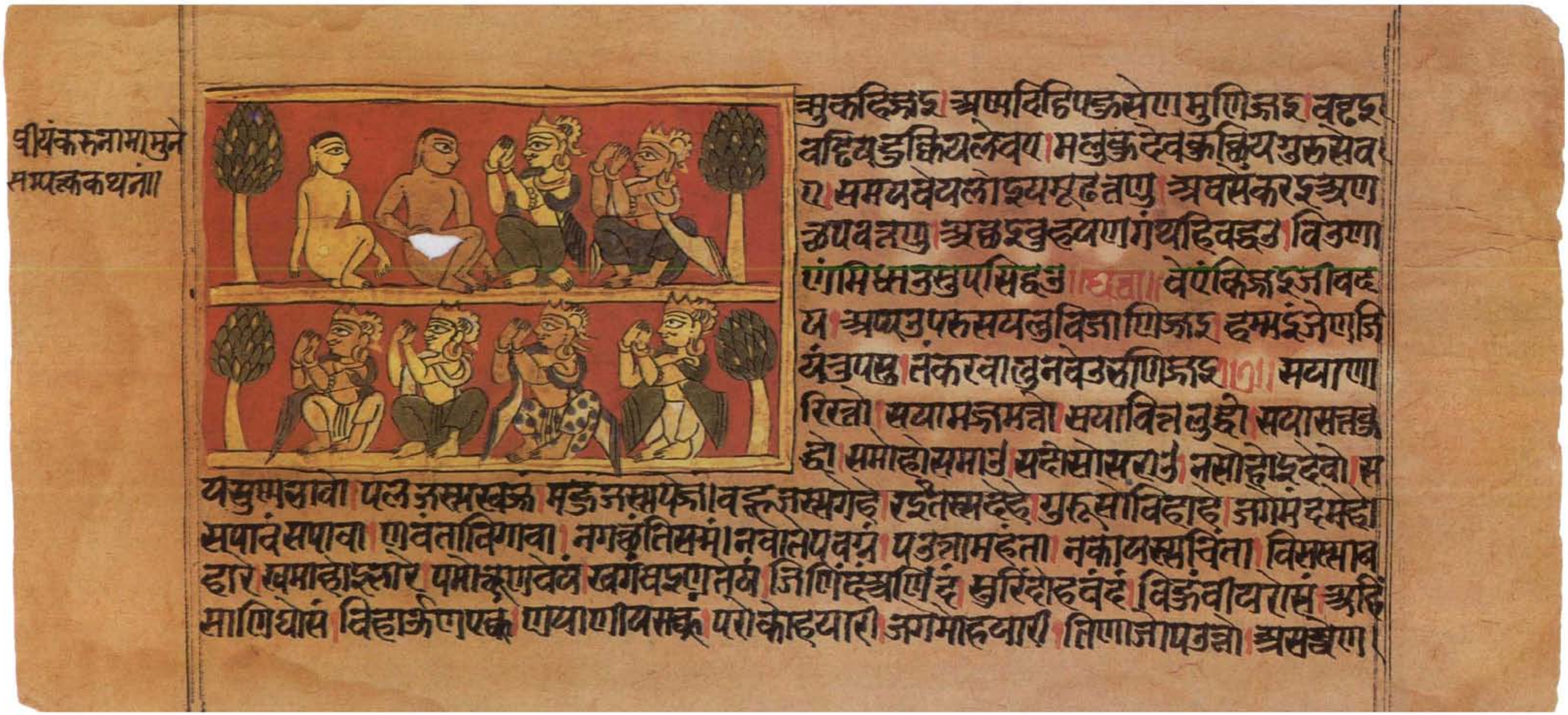

अन्य का दृष्टिपथ जो मिथ्या, तुच्छ और बन्ध्य कहा जाता है, उसकी प्रशंसा नहीं करनी चाहिए। बढ़ा हुआ है पाप का लेश जिसमें ऐसी कुगुरु और कुदेव की सेवा से मल (पाप) बढ़ता है। शास्त्रज्ञान और लोक की मूढ़ता अवश्य ही अनर्थ का प्रवर्तन करती है। बुधजन के ग्रन्थों में निबद्ध सुप्रसिद्ध विद् धातु ज्ञान के अर्थ में है।

घत्ता—ज्ञान (वेद) के द्वारा जीवदया करनी चाहिए, स्व और पर सबको जानना चाहिए, जिसके द्वारा जीवित पशु मारा जाता है उस करवाल (तलवार) को वेद नहीं कहा जाता॥ ७॥

८

जो सदैव नारी में रक्त है, सदा मदिरा में मत्त है, सदैव धनलुब्ध है, सदा शत्रु पर क्रुद्ध होता है, मोह-सहित, माया-सहित तथा दोष और राग से सहित है, वह देव नहीं हो सकता। और देव शून्यभाव हो सकता है। जिसके घर में वधू है, जिसके शरीर में रति है, अरे खेद की बात है कि मन्दबुद्धिवाले जग में वह भी गुरु है। पाप-सहित लोग पाप-सहित को विगतगर्व नमस्कार करते हैं। ऐसे लोग स्वर्ग नहीं जाते और न ही अपवर्ग (मोक्ष) जाते हैं। महान् वे कहे जाते हैं जिन्हें शरीर की चिन्ता नहीं होती। हार में या भार में, जिनकी विश्व के प्रति क्षमा होती है। इसलिए वेद को और वैनतेय (गरुड़) को छोड़कर अनिन्द्य देव-समूह द्वारा वन्दनीय, वीतक्रोध अहिंसा का निर्घोष करनेवाले इन्द्र के द्वारा प्रणम्य एकमात्र अनिन्द्य जिनेन्द्र को छोड़कर जग में दूसरा कौन शत्रुओं का नाश करनेवाला है, और मोह का अपहरण करनेवाला है। उन्होंने जो कुछ कहा है, वह असत्य से व्यक्त है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वह अहिंसा का प्रकाशन करनेवाला और विज्ञान का आगम है।

घत्ता—दया से श्रेष्ठ धर्म और ऋषि-गुरु-देव-आदरणीय-जिनका विश्वास करो, तुम सम्यक्त्व गुण को स्वीकार करो; मैंने संसार का सार तुम से कह दिया॥ ८॥

९

हे सुन्दर शरीर, धवल नेत्र मित्र! तुम श्रद्धान करो कि तत्त्व सात हैं। द्रव्य के छह भेद हैं, जीवकाय के छह भेद हैं, अस्तिकाय पाँच हैं और देवनिकाय चार हैं। ज्ञान पाँच हैं, गतिभेद पाँच हैं, मुनिव्रत पाँच हैं, गृहस्थों के भी पाँच व्रत हैं। लेश्याभाव छह हैं, गर्व तीन प्रकार के जानो, चारित्र्य तेरह प्रकार का है, और गुप्तियाँ तीन प्रकार की। पदार्थ नौ प्रकार के हैं, धर्म के मार्ग दस प्रकार के हैं, सात प्रकार के भय कहे गये हैं, दुष्टमद आठ प्रकार के हैं, आत्मानुवाद (जीवानुवाद) कर्मानुवाद, चरणनियोग और करणनियोग का उन मुनि ने जो वर्णन किया, उसे क्रम से सुनकर उसने ग्रहण कर लिया, आर्य ने जिस प्रकार, आर्या ने भी उसी प्रकार।

घत्ता—जिस प्रकार शार्दुल के जीव मनुष्य ने सम्यक्दर्शन स्वीकार किया, उसी प्रकार सुअर के जीव ने सम्यग्दर्शन स्वीकार किया। बानर और नकुल के जीव मनुष्यों को भी मुनि ने सम्यग्दर्शन प्रदान किया॥ ९॥

१०

भव्य नरसमूह के द्वारा भक्ति से प्रणमित ऋषि आकाशमार्ग से उड़कर चले गये। वज्रबाहु के वे चारों मतिवर आदि शुभंकर अनुचर तपकर निरवद्य अध:ग्रैवेयक स्वर्ग के अहमेन्द्र विमान में उत्पन्न हुए। उन्होंने लोकश्रेष्ठ अहमेन्द्रसुरत्व और पुण्य के प्रभाव की प्रभुता को प्राप्त किया। वज्रजंघ और आर्यिका श्रीमती, दोनों समता से अंचित और पूजित होकर मर गये।

वज्रजंघ ईशान स्वर्ग के श्रीप्रभ विमान में श्रीधर नाम का श्रेष्ठ सुर हुआ और उसी स्वर्ग में कुन्द और चन्द्रमा के समान आभावाले स्वयंप्रभ विमान में वह स्त्री (श्रीमती) जिन के चरणकमलों में भक्ति रखने के कारण सम्यक्त्व से स्त्रीलिंग का उच्छेद कर स्वयंप्रभ नाम का देव हुई, जिसे रूप में कामदेव भी नहीं जीत सका। व्याघ्र का जीव मनुष्य भी मरकर सुन्दर विमान में सुन्दर अंगोंवाला सुन्दर चित्रांग देव हुआ। वराह का जीव भी देव हुआ कुण्डलिल्ल नाम का सुन्दर कान्तिवाला। शरद् मेघों के समान नन्दविमान में वह ऐसा लगता, जैसे एक क्षण के लिए मेघ में विद्युत्-समूह शोभा देता है।

घत्ता—नकुल का जीव मनुष्य मरकर कुरुभूमि से मनुष्य हुआ जो कान्ति में मानो दूज का चाँद था। इस प्रकार अपने शुभकर्म से प्रेरित होकर मनरथवाला॥ १०॥

११

जो पूर्वजन्म में वानर था, वह कुरुभूमि के मनुष्य के रूप में सुख भोगकर नन्दावर्त विमान में उत्पन्न हुआ सुन्दर मनोहर नाम के देव के रूप में। पण्डितसमूह को अच्छा लगनेवाला जो स्वयंबुद्ध था और जिसने महाबल को धर्म में प्रतिष्ठित किया था, त्रिलोक को प्रिय लगनेवाला वह प्रीतंकर नाम का जिनवर केवली हुआ। देवसहचर श्रीधर ज्ञान से यह जानकर उसकी वन्दनाभक्ति करने के लिए गया। देवसभा के भीतर प्रवेश करके और गुरुभक्ति कर अपने गुरु की खूब स्तुति की— 'हे परमेश्वर ! भवविवर में गिरते हुए मुझे तुमने हाथ का सहारा दिया, तुम स्वयंबुद्ध बुद्ध हो, दुनिया में बुद्ध माने जाते हैं। आपने हृदय विशुद्ध कर दिया है। आपने अशेष तत्त्व का साक्षात्कार कर लिया है, आप धनी और निर्धन में समान हैं। आप मेरे लिए आधारभूत अभग्न स्तम्भ हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मैं तुम्हारे चरणयुगल की शरण गया था।

घत्ता—मिथ्यादृष्टि, अत्यन्त दुष्टमन, पापकर्मा, धर्महीन और बेचारे वे हमारे मन्त्री कहाँ उत्पन्न हुए, हे कामदेव के मद का नाश करनेवाले कृपया बताइए?'' ॥ ११ ॥

१२

आदरणीय वह बताते हैं—''वे दोनों सम्भिन्नमति और सहस्रमति खोटे स्थानवाले भयंकर, असह्य कष्टों की परम्परा से युक्त नित्य अन्धकारवाले नित्य-निगोद में गये हैं। शून्यवाद के विवरण से दूषितमति शतमति दूसरे नरक में गया।'' यह सुनकर श्रीधर वहाँ गया, जहाँ नरक में वह था। अन्धकारमय उस कुविवर में प्रवेश कर अपने विमान में बैठे हुए श्रीधरदेव ने कहा—''हे महाबल स्वयंमति सुनो, मैं वही यश से पवित्र विद्याधर राजा हूँ जिसने बहुत समय तक अलकापुरी का भोग किया। तुम्हारा स्वामी श्रेष्ठ और शत्रुरूपी हाथी के लिए सिंह। सुरदुन्दुभि का गम्भीर निनाद जिसमें है ऐसे विवाद के द्वारा तुम तीनों को जीतकर, गुरु के द्वारा जिन-वचनों में नियुक्त मैं सुख की परम्परा को प्राप्त हुआ हूँ। जीवदया और संयम से रहित तुम लोग पाप के कारण यहाँ उत्पन्न हुए हो। दुर्नयों से अपने को मत भटकाओ, वीतराग जिन-परमात्मा का नाम लो।

घत्ता—अहिंसाधर्म की श्रद्धा करो। निर्ग्रन्थ मोक्षमार्ग को जानो तथा जिह्वोपस्थ भूख से रहित और मोह से मुक्त मुनि का सम्मान करो'' ॥ १२ ॥

१३

उसने प्रभा से सूर्य को और गति-भंगिमा से हथिनी को जीतनेवाले स्वामी को माना और कहा—हे अनिन्द्य, तुम्हारी जय हो! शीघ्र ही उसने हमेशा दोष से रहित जिनेन्द्र के सिद्धान्त को दृढ़ता के साथ स्वीकार कर लिया।

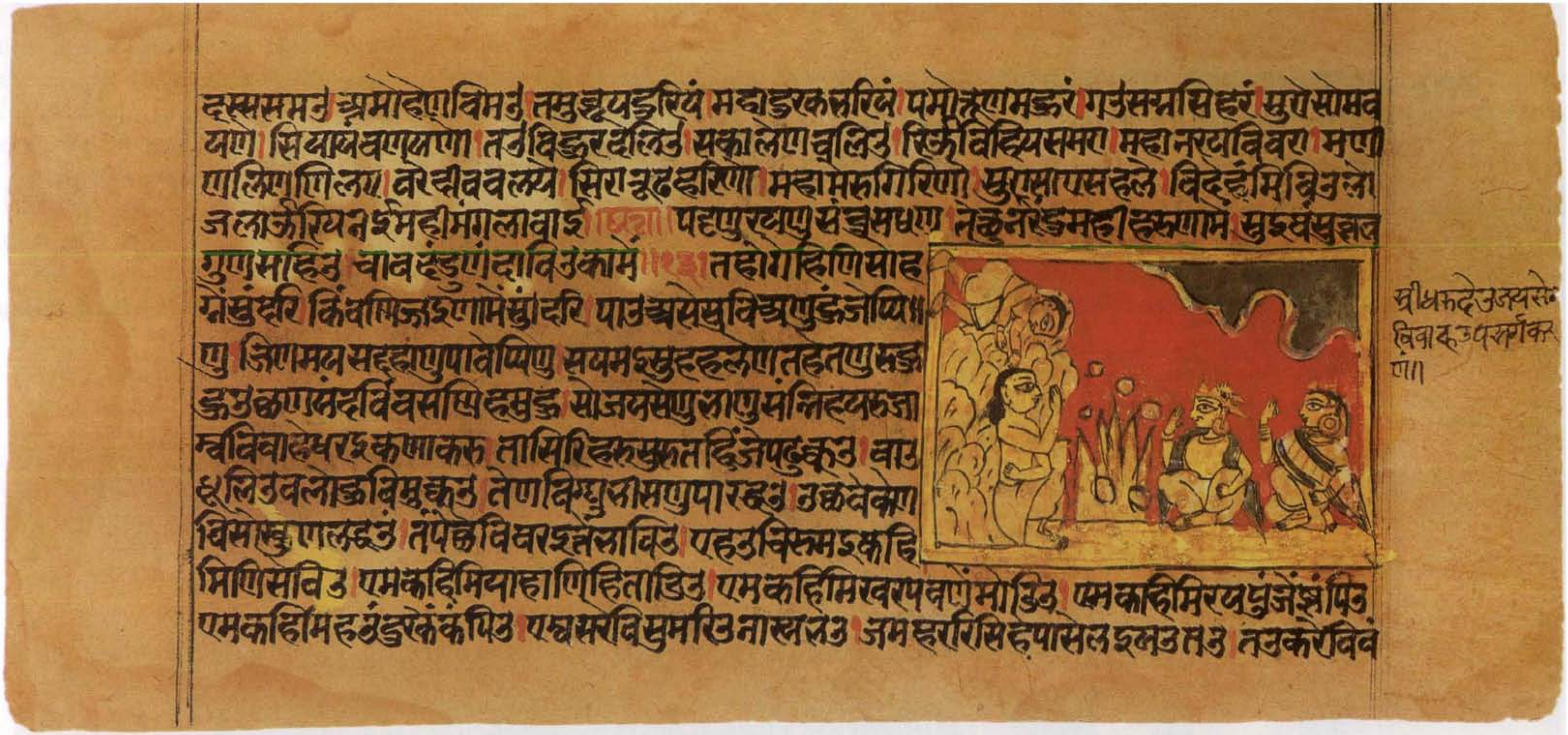

अमोह के साथ वह मृत्यु को प्राप्त हुआ। महान् दुःखों से भरे हुए तम से उत्पन्न दुःखोंवाले उस नरक को छोड़कर श्रीधर अपने मधुर स्वर्ग-विमान में चला गया। उस समय पापों को नष्ट करनेवाला शतमति अपने समय से आपस में लड़ते हुए महानरक विवरों को छोड़कर चला। मणिमय कमलों के स्थान श्रेष्ठ पुष्करार्ध द्वीप में, जिसके अग्रमार्ग में हरिण स्थित हैं, ऐसा सुमेरु पर्वत है। उसकी पूर्वदिशा में सफल विदेहक्षेत्र में जल से भरी हुई नदियोंवाला मंगलावती देश है।

घत्ता—उसमें धन-सम्पन्न रत्नसंचय नगर है। उसमें महीधर नाम का राजा है जो ऐसा जान पड़ता है मानो कामदेव ने पवित्र बाँस से उत्पन्न प्रत्यंचासहित धनुष ही प्रदर्शित किया हो॥ १३॥

१४

सौभाग्य में सुन्दर और नाम से सुन्दर उसकी गृहिणी का क्या वर्णन किया जाये! अपने अशेष पापों को भोगकर तथा जिनमत में श्रद्धान को पाकर शतमति पुण्य के फल से उसका पूर्णचन्द्र के समान मुखवाला पुत्र उत्पन्न हुआ। वह जयसेन सूर्य की किरणों के समान प्रतापवाला था। जब वह विवाह के लिए कन्या का हाथ पकड़ता है तभी श्रीधरदेव भी वहाँ आ पहुँचा। उसने धूल से भरी हुई हवा छोड़ी। उसने भीषण विघ्न शुरू किया। विवाह में किसी को भी आनन्द नहीं आया। यह देखकर वर अपने मन में विचार करता है कि इसको तो मैंने कहीं भोगा है! इसी प्रकार कहीं पत्थरों से प्रताड़ित किया गया हूँ! इसी प्रकार कहीं खरपवन से मोड़ा गया हूँ! इसी प्रकार कहीं धूलसमूह से ढका गया हूँ, इसी प्रकार कहीं मैं दुःख से काँपा हूँ! इस प्रकार विचारकर उसे नरक की याद आ गयी और उसने यमधरश्री के पास जाकर व्रत ग्रहण कर लिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तप करके वह ब्रह्मेन्द्र हुआ। जीव के धर्म ही सबसे आगे रहता है।

घत्ता—बड़े-बड़े लोग भी गुरु को नमस्कार करते हैं। चन्द्र-सूर्य और देवों के द्वारा वन्दनीय ब्रह्मसुरेन्द्र ने भी देव श्रीधर की धर्मगुरु के रूप में पूजा की॥ १४॥

१५

श्रीधर भी स्वर्ग से अपना शरीर छोड़कर चन्द्रमा और सूर्यों के द्वीप इस जम्बूद्वीप में, जहाँ इन्द्र जिन तीर्थंकर को ले गया है, ऐसे सुमेरु पर्वत की पूर्व दिशा में विशाल आकारवाले विदेह क्षेत्र की विस्तीर्ण सीमाओंवाली सुसीमा नगरी में शुभदृष्टि नाम का राजा है, जिसके युद्ध में संग्रामदोष नहीं है, जो क्रोध का संवरण करता है, लक्ष्मीरूपी वधू को धारण करता है, जो काम का परिहार करता है, परस्त्रियों में रति से दूर रहता है। जो मान का निग्रह करता है, मृदुता को धारण करता है, जिसने लोगों में हर्ष पैदा किया है, परन्तु जो स्वयं अधिक हर्ष नहीं करता, जिसने लोभ को नष्ट किया है, जिसने पुरुषार्थ का आदर किया है, जिसने अहंकार को नष्ट कर दिया है; जिसने अपने मन को स्थिर बना लिया है,

घत्ता—जो रूप, सौभाग्य और गुण में जैसे उर्वशी या इन्द्राणी थी ऐसी उसकी नन्दा नाम की सुन्दर रानी का वर्णन हम-जैसे लोगों के द्वारा कैसे किया जा सकता है?॥ १५॥

१६

वह देव (ब्रह्मेन्द्र) स्वर्ग छोड़कर, उसके गर्भ से पुत्र पैदा हुआ। सुविधि नाम के उस युवक से, जो मानो साक्षात् कामदेव था, मुनियों के भी मन में उन्माद उत्पन्न करनेवाली अभयघोष चक्रवर्ती की अपनी गति से हाथी को जीतनेवाली मनोरमा नाम की प्रणयिनी पुत्री से विवाह कर लिया। जो स्वयंप्रभ नाम का देव श्रीमती का जीव था, अनेक पुण्यों का धारण करनेवाला वह स्वर्ग से च्युत होकर मनोरमा का पुत्र हुआ।

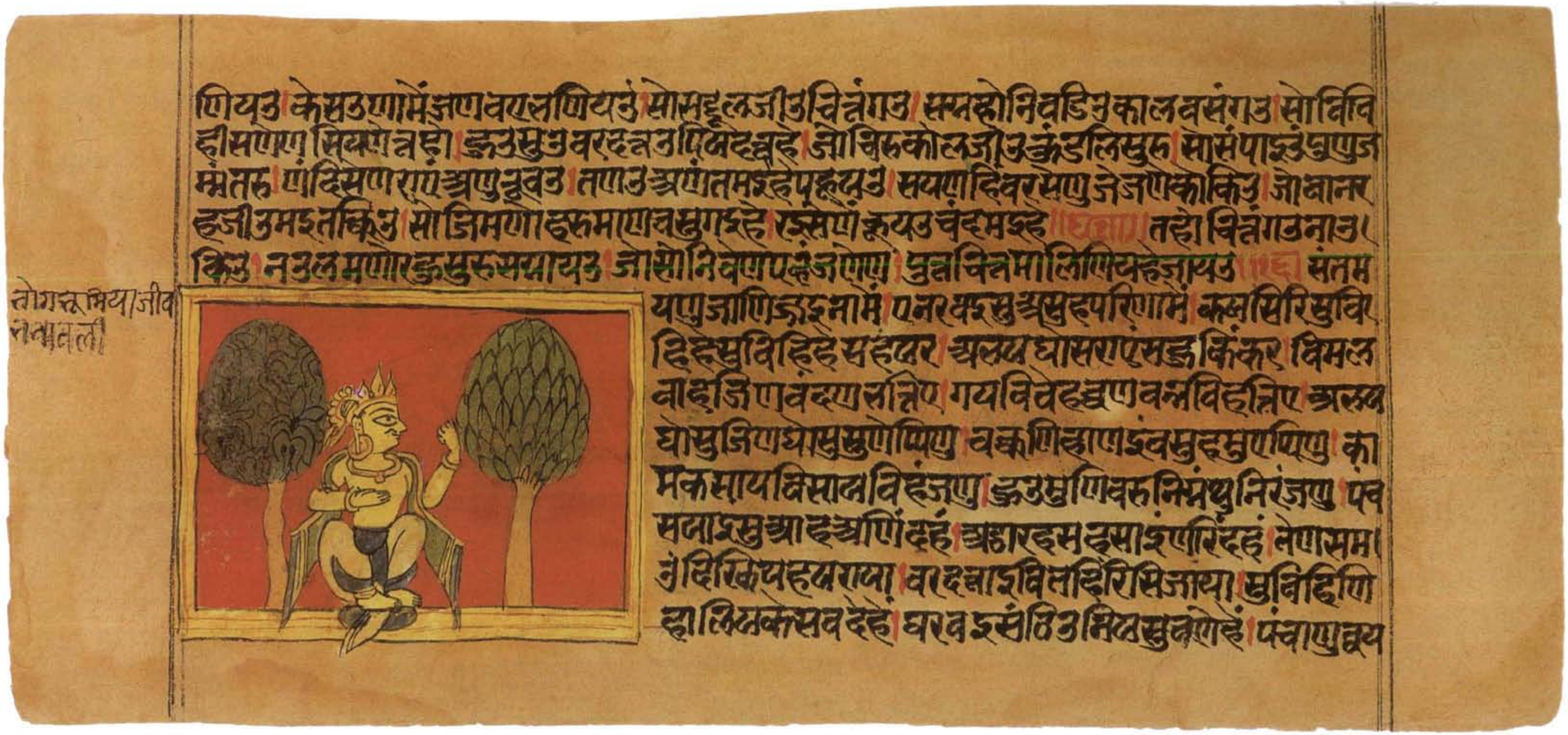

जनपद में उसका नाम 'केशव' रखा गया। जो सिंह का जीव चित्रांग था, वह भी समय के वशीभूत होकर, स्वर्ग से च्युत होकर, विभीषण का श्वेत नेत्रोंवाली प्रियदत्ता से वरदत्त नाम का पुत्र हुआ। जो सुअर का जीव कुण्डलदेव था, वह भी फिर जन्मान्तर को प्राप्त हुआ। नन्दीसेन राजा का अनन्तमती से उत्पन्न उसी के अनुरूप पुत्र उत्पन्न हुआ। स्वजनों में उसे वरसेन नाम से पुकारा गया और वानर के जीव की मैंने जो कल्पना की थी वह भी रतिसेन का सुगतिवाली चन्द्रमती से सुन्दर मनोहर नाम का मनुष्य हुआ।

घत्ता—उसका चित्रांग नाम रखा गया। नकुल को मनोहर नाम का देव स्वर्ग से आकर, प्रभंजन नाम के राजा की रानी चित्रमालिनी से पुत्र उत्पन्न हुआ॥ १६॥

१७

जो नाम से प्रशान्तवदन के रूप में जाना गया। जिसने मुनियों की सेवा की है ऐसे सुविधि के सहचर मित्र और अनुचर ये राजपुत्र शुभ परिणाम के कारण अभयघोष राजा के साथ विमलवाहन तीर्थंकर की विविध पूजाओं और विविध शब्दों से विभक्त वन्दना भक्ति के लिए गये। वहाँ राजा अभयघोष जिनघोष सुनकर चक्र, खजाना और धरती छोड़कर तथा कामकषाय का विभंजन करनेवाला निर्ग्रन्थ निरंजन मुनि हो गया। उसके साथ अनिंद्य राजाओं के राग को नष्ट करनेवाले अठारह हजार पाँच सौ राजपुत्र तथा वरदत्तादि जन मुनि हो गये। अपने पुत्र केशव के शरीर की देखभाल करनेवाले पुत्रस्नेह के कारण सुविधि गृहस्थ ही बना रहा। उसने पाँच अणुव्रत,

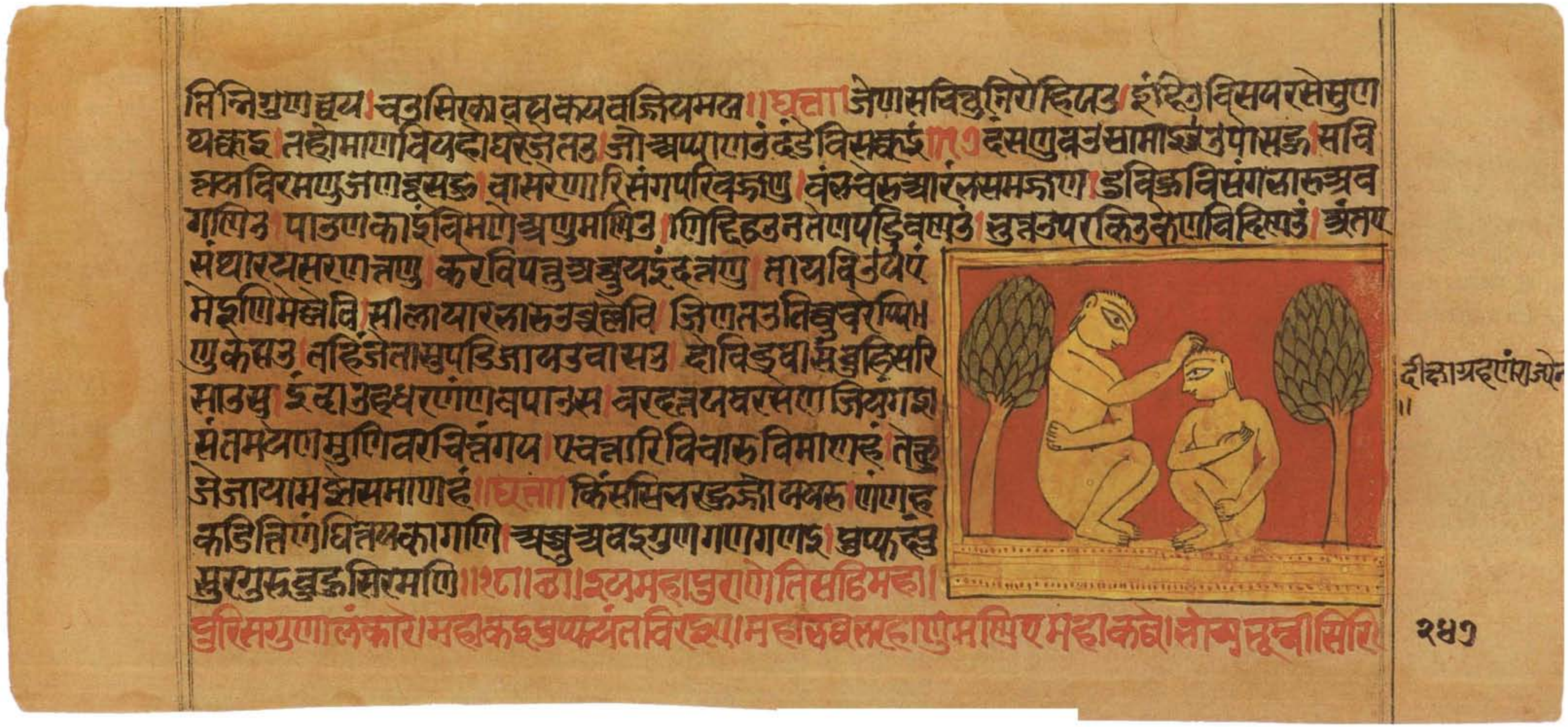

तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत ग्रहण किये और मदों को छोड़ दिया।

घत्ता—जो अपने चित्त का निरोध कर लेता है, उसकी इन्द्रियाँ विषय-रस में नहीं लगतीं। तप तो उस मनुष्य के घर में ही है जो अपने को दण्डित कर सकता है॥ १७॥

१८

दर्शन-व्रत-सामायिक-प्रोषधोपवास, लोगों के दोषों से अपने चित्त का विरमण। दिन में स्त्री के साथ सहवास का त्याग, ब्रह्मचर्य और आरम्भ का परित्याग। दो प्रकार के परिग्रह-भार की उसने उपेक्षा की। और अपने मन में उसने किसी भी प्रकार के पाप का अनुमोदन नहीं किया। निर्दिष्ट (सोद्देश्य) आहार को उसने ग्रहण नहीं किया। दूसरे के लिए बनाया गया और किसी के द्वारा दिया गया भोजन स्वीकार किया। अन्त में संन्यासपूर्वक मृत्यु प्राप्त कर अच्युत स्वर्ग में इन्द्रत्व को उसने स्वीकार कर लिया। अपने पिता के वियोग में धरती छोड़कर शीलाचार के भार को उठाकर जिनवर का तीव्रतम तप तपकर केशव उसी स्वर्ग में जन्म लेकर प्रतीन्द्रपद को प्राप्त हुआ। दोनों ही बाईस हजार वर्ष आयुवाले ऐसे थे मानो इन्द्रायुध करनेवाले नवपावस हों। वरदत्त, वरसेन, चित्रांगद और कामविजेता प्रशान्तवदन ये चारों ही मुनिवर समान चार बिमानों के भीतर उत्पन्न हुए।

घत्ता—क्या भारत को आलोकित करनेवाला चन्द्रमा है ? नहीं, आकाश-कटितल पर कागणी मणि रख दिया गया है। देवों का गुरु, बुधों में शिरोमणि अच्युतेन्द्र के गुणसमूह गिनता है॥ १८॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारोंवाले इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत इस काव्य का भोगभूमि श्रीधर-स्वयंप्रभा-सुविध-केशव-इन्द्र-प्रतीन्द्र-जन्म-वर्णन नाम का छब्बीसवाँ अध्याय समाप्त हुआ॥ २६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

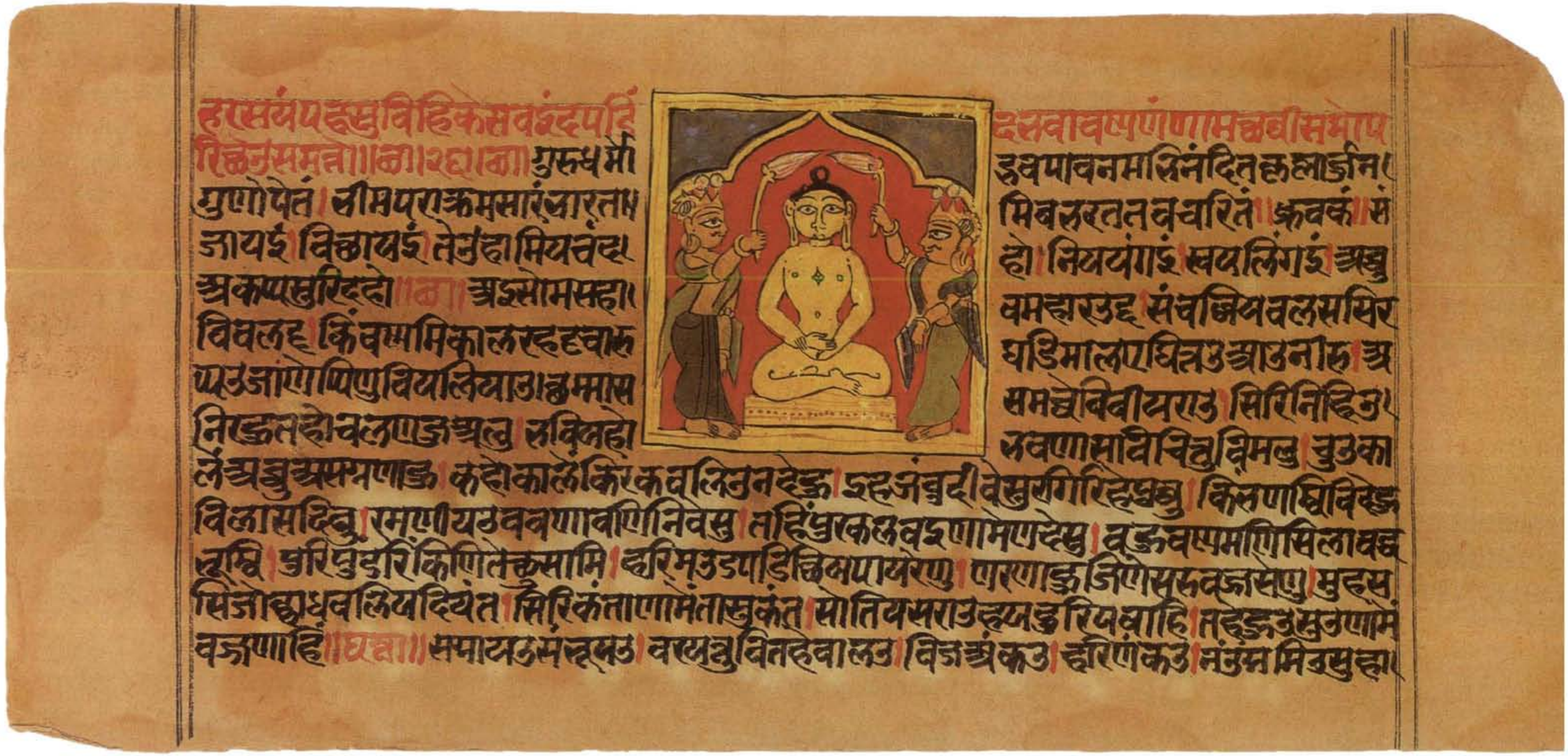

सन्धि २७

अपने तेज से चन्द्रमा को पराजित करनेवाले अच्युतेन्द्र के क्षय से आलिंगित अंग एकदम कान्तिहीन हो उठे।

१

अत्यन्त सौम्य स्वभाववाले और महाभयंकर चन्द्रमा और सूर्यरूपी चंचल बैल चल रहे हैं, घटीमाला (घटिका और समय) से आयुरूपी नीर कम हो रहा है, मैं कालरूपी रहट के आचरण से कैसे बच सकता हूँ! अपनी आयु को विगलित मानकर छह माह तक वीतराग भगवान् की समर्चा कर, श्री से युक्त और पाप से रहित उनके चरणकमल, जो भव्य के लिए भव का नाश होने पर वित्त (धन) के समान है, समय आने पर अच्युत स्वर्ग से वह च्युत हुआ। काल के द्वारा किसकी देह कवलित नहीं होती! इस जम्बूद्वीप में सुमेरुपर्वत की पूर्वदिशा में विलास से दिव्य विदेह का क्या वर्णन करूँ? उसमें सुन्दर उपवनों की कतारों और घरों से युक्त पुष्कलावती नाम का देश है। अनेक रंगों की मणिशिलाओं से विजड़ित भूमिवाली पुण्डरिकिणी नाम की नगरी है। उसका स्वामी इन्द्रमुकुटों से चाही गयी चरणधूलिवाला वज्रसेन नाम का सूर्य को जीतनेवाला राजा है। अपनी मुखचन्द्र की ज्योत्स्ना से दिगन्त को सफेद बना देनेवाली श्रीकान्ता नाम की उसकी पत्नी है। पाप की व्याधि को नष्ट करनेवाला वह अच्युतेन्द्र उसका वज्रनाभि नाम का पुत्र हुआ।

घत्ता—स्वर्ग से आया वरदत्त भी उसका बालक हुआ विजय नाम का, मानो जैसे सुधा का आलय चन्द्रमा ही उदित हुआ हो॥ १॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२

वरसेन भी वैजयन्त में हुआ, और चित्रांगद जयन्त नाम से उत्पन्न हुआ। प्रशान्तवदन भी देवलोक से चयकर प्रफुल्लमुख अपराजित हुआ।[1] ये शार्दूलादि (सिंहादि) चारों सहायक भी युवराज वज्रनाभि के इष्ट भाई हुए। अधोग्रैवेयक विमान के वास को छोड़कर, मानव जन्म में आकर मतिवर सुबाहु हुआ। आनन्द भी महन्तबाहु के नाम से उत्पन्न हुआ। अकम्पन अहमेन्द्र पीठ हुआ। और धनमित्र भी वहीं पर महापीठ हुआ। वज्रजंघ के जन्म में, जबकि वह उत्पलखेड नगर का अधिवासी राजा था, उस समय उसके जो भृत्य थे वे भी (पूर्वोक्त) विधि के वश से, यश के साथ चारों ही उत्पन्न हुए। वे देवेन्द्रगजपति के समान गतिवाली उसी महासती देवी के गर्भ से जन्मे। स्नेह से पूर्ण जेठे सगे और अपने भाइयों के लिए द्वेष्य कौन होता है? पूर्व जन्म में किये गये कर्म-छन्द का पालन करनेवाला वह प्रतीन्द्र केशव भी वणिक्पुत्र कुबेर का सुरति में अपनी मति आसक्त रखनेवाली अनन्तमती से पुत्र उत्पन्न हुआ।

घत्ता—गम्भीर नगाड़ों के बजने पर बन्धुवर्ग अत्यन्त आनन्दित हुआ। सम्मान और धनदान के साथ उसका नाम धनदेव रखा गया॥ २॥

१. सिंह = विजय, सुअर = वैजयन्त, नकुल = जयन्त, वानर = अपराजित, मतिवर मन्त्री = सुबाहु, आनन्द पुरोहित = महाबाहु, अकम्पन सेनापति = पीठ, धनमित्र सेठ = महापीठ, श्रीमती का जीव = धनदेव।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३

एक दिन शीघ्र आये हुए लौकान्तिक देवों ने उस (वज्रसेन) से कहा कि तुम मोहित क्यों हो? क्या तुम्हारी हितबुद्धि चली गयी, जो तुम नारी में रत रहनेवाले, इन्द्रियरूपी अश्वों के द्वारा यहाँ अनुरक्त हो! हे देवदेव, जहाँ तुम त्रिलोकनाथ हो वहाँ किसी दूसरे के लिए बोधिलाभ क्या होगा? शान्ति करनेवाले लौकान्तिक देवों ने इस प्रकार उस वज्रसेन को सम्बोधित किया। तब वज्रनाभि के लिए शृंगारभार वैभव के अहंकार का प्रतीक राजपट्ट बाँधकर उसने आम्रवन में एक क्षण में संन्यास ले लिया।

तीर्थंकर ने अपने हित पर विजय प्राप्त कर ली। पिता को धर्मचक्र उत्पन्न हुआ और पुत्र को शस्त्रशाला में चक्ररत्न। पिता ने मोहचक्र को जीता, पुत्र ने भी शत्रुचक्र को जीत लिया। पिता की निधि समवसरण में स्थित थी, पुत्र के भी नव-नव निधियाँ शरण में आयीं। पिता की इन्द्र सेवा करते हैं, पुत्र के भी गणबद्ध देव अनुचर हैं। पिता धर्मश्रेष्ठ के चक्रवर्ती हुए, पुत्र छह खण्ड धरती का चक्रवर्ती राजा हुआ।

घत्ता—फिर शुभदात्री श्री और धरती को पुराने तिनके के समान समझकर, अपने पुत्र वज्रदन्त को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

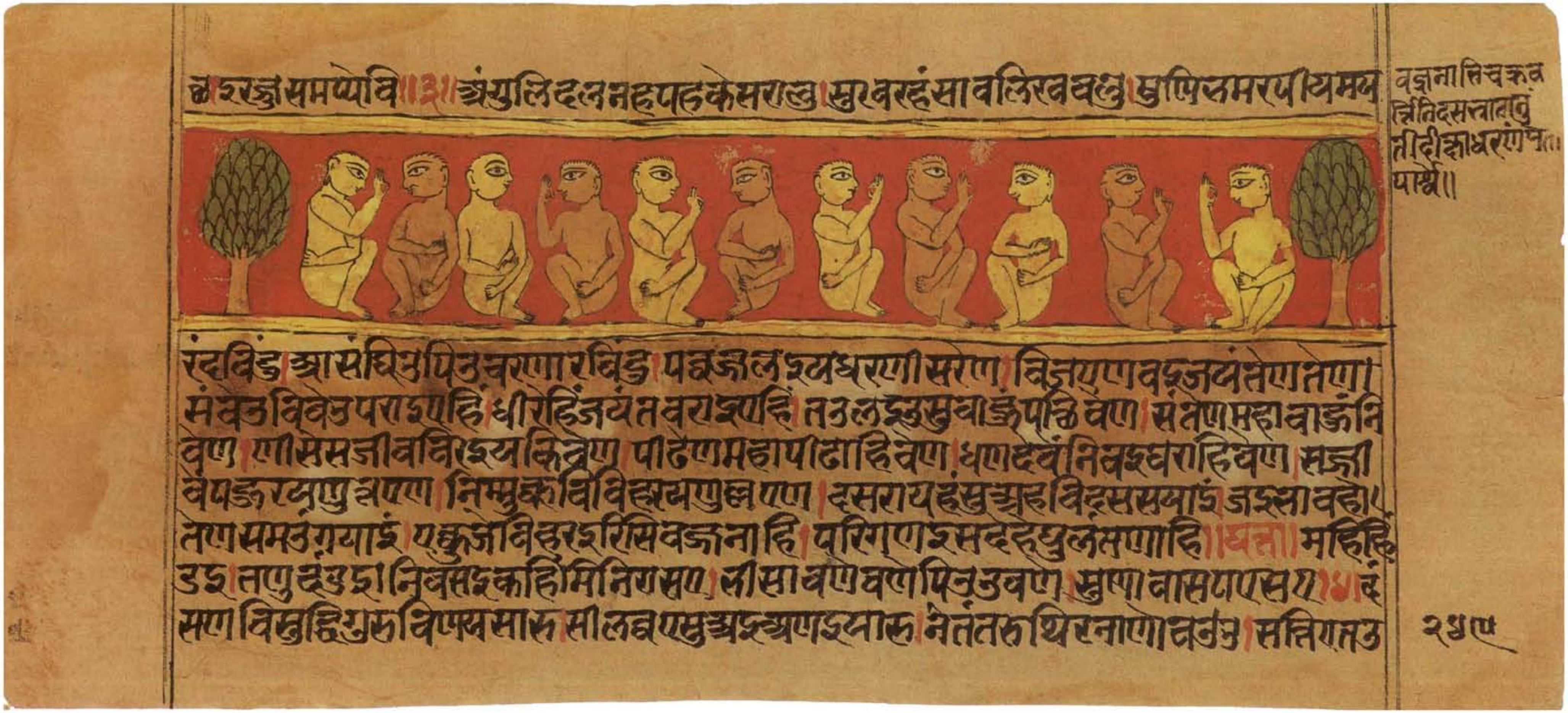

बाद में राज्य सौंपकर ॥ ३ ॥

४

जिसकी अँगुलियाँ ही दल हैं, नखों की प्रभा केशर है, जो सुरवररूपी हंसावली के शब्द से शब्दायमान है। मुनीन्द्ररूपी भ्रमरों से जिसका मकरन्द पिया जा रहा है, ऐसे पिता के चरणरूपी कमल की सेवा में आ पहुँचा। धरणीश्वर विजय और वैजयन्त ने भी प्रव्रज्या ले ली। संवेग और विवेक को प्राप्त धीर जयन्त वरादि ने भी तप ग्रहण कर लिया। राजा होते हुए बाहु-महाबाहु ने, समस्त जीवों के साथ कृपा करनेवाले पीठ-महापीठ राजाओं ने, राजघर के अधिपति धनदेव ने भी जो सतजीव, प्रभु की रज में नत और विविध रत्नसमूह को त्यागनेवाला था। (इस प्रकार) दसों राजाओं और एक हजार (दस सौ) पुत्रों ने उनके साथ मुनिपद ग्रहण कर लिया। लेकिन मुनि वज्रनाभि अकेले ही भ्रमण करते थे वे अपने शरीर पर चलते हुए सर्पों को नहीं गिनते।

घत्ता—धरती पर घूमते हैं, शरीर को दण्डित करते हैं, और कहीं भी आश्रयहीन प्रदेश में रहते हैं। आश्रय प्रदेशों से शून्य एक भयानक मरघट में वे स्थित हो गये॥ ४॥

५

दर्शन विशुद्धि, गुरुओं की विनय से श्रेष्ठ (विनय-सम्पन्नता), शीलव्रतों में अनतिचार (शीलव्रत), निरन्तर स्थिर ज्ञान का उपयोग करते रहना (अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग); अपनी शक्ति के अनुसार तप (शक्तितः तप)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

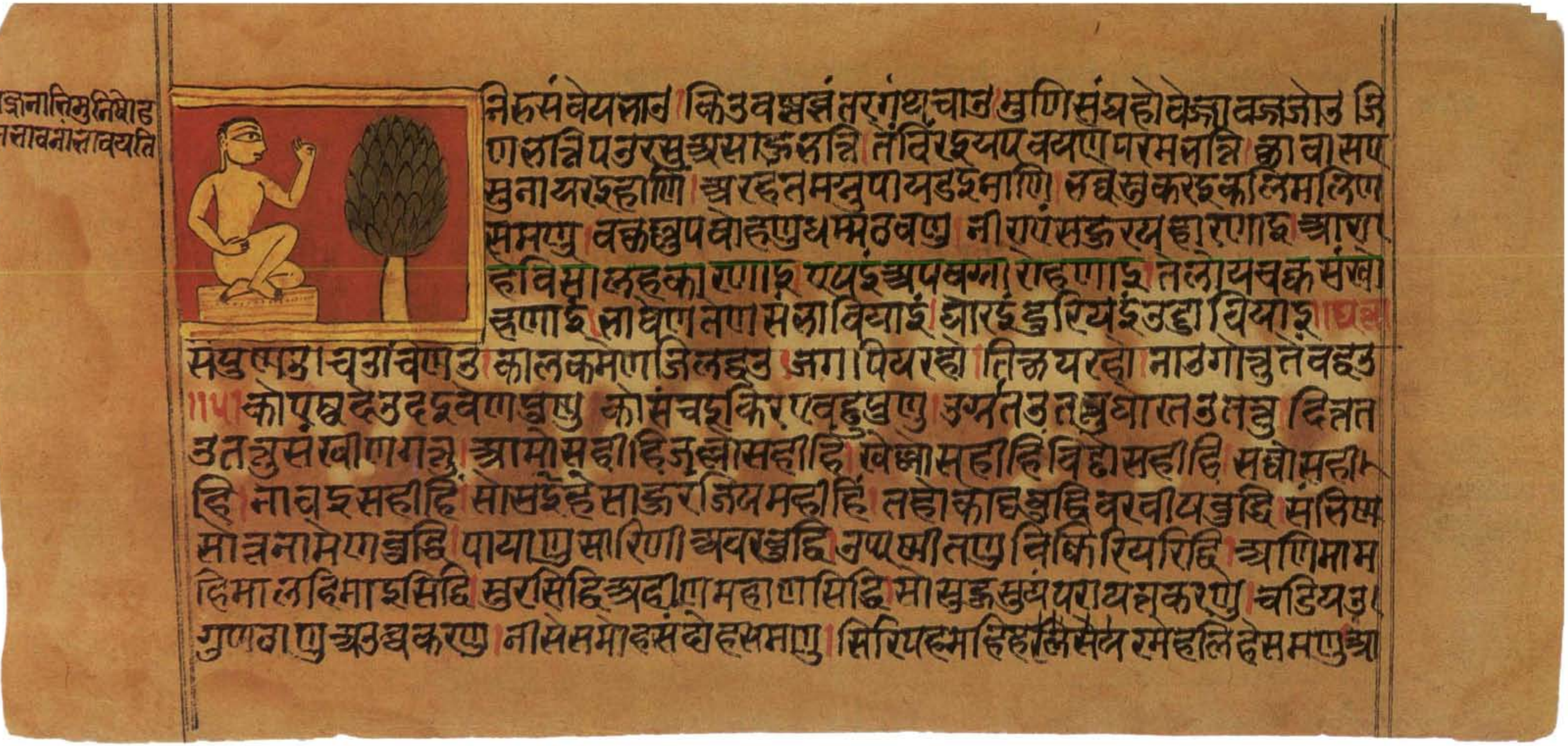

और संवेगभाव (जिनधर्म से अनुराग)। उन्होंने बाह्य और आभ्यन्तर परिग्रह का त्याग कर दिया और मुनिसंघ का वैयावृत्य योग किया। जिनभक्ति, प्रचुर श्रुत और साधुभक्ति, तथा प्रव्रजित लोगों में उन्होंने परमभक्ति की। छह प्रकार के कायोत्सर्ग में वह कमी का आचरण नहीं करता, अपने ज्ञान से अर्हत् मार्ग का प्रकाशन करता है। वह भव्यों के पापमल का शमन करता है। वात्सल्य प्रबोधन और धर्म की स्थापना। इस प्रकार वीतराग भाव से पाप का हरण करनेवाली अर्हन्त की ये सोलह कारण भावनाएँ मोक्ष का आरोहण करानेवाली और त्रिलोकचक्र को क्षुब्ध करनेवाली हैं। उन्होंने उस भाव से इनकी भावना की कि जिससे घोर पाप नष्ट हो गये।

घत्ता—काल-क्रम से उन्होंने सम्पूर्ण व्रत को ग्रहण कर लिया और पा लिया। जगत्पिता तीर्थंकर नामगोत्र का उन्होंने बन्ध कर लिया॥ ५॥

६

कौन देव इस प्रकार दैव से परिपूर्ण है ? इतना बड़ा पुण्य कौन संचित कर सकता है ? उसने उग्र तप तपा, (और उग्र तप-ऋद्धि का धारक बना) घोर तप किया। उसने दीप्ति तप, ऋद्धि तप किया, संक्षीणगात्र तप किया, अमृत-औषधियों, क्ष्वेल-औषधियों, विप्र-औषधियों, सर्व-औषधियों पृथ्वी को रंजित करनेवाली औषधियों से वह मुनि शोभित हैं। उन्हें श्रेष्ठ बुद्धि-ऋद्धि (कोठारी की तरह जिन सिद्धान्तों का रहस्य बतानेवाली) वर बीज बुद्धि-ऋद्धि (बीजाक्षर ज्ञान से सिद्धान्तों का निरूपण करनेवाली), सम्भिन्न श्रोत्र-बुद्धि-ऋद्धि (भिन्न शास्त्रों का रहस्य जाननेवाली); पादानुसारिणी बुद्धि-ऋद्धि, (पद के अनुसार अर्थ जाननेवाली), तनुविक्रिया-ऋद्धि, अणिमा-महिमा-लघिमादि सिद्धि, सुरसिद्धि और महान् महानस सिद्धियाँ उत्पन्न हुईं। वह आठवें अपूर्वकरण गुणस्थान से नौवें अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में चढ़कर दसवें सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में चढ़ गये। समस्त मोह समूहों का नाश करनेवाले, श्रीप्रभ राजा की धरती के रसिक,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

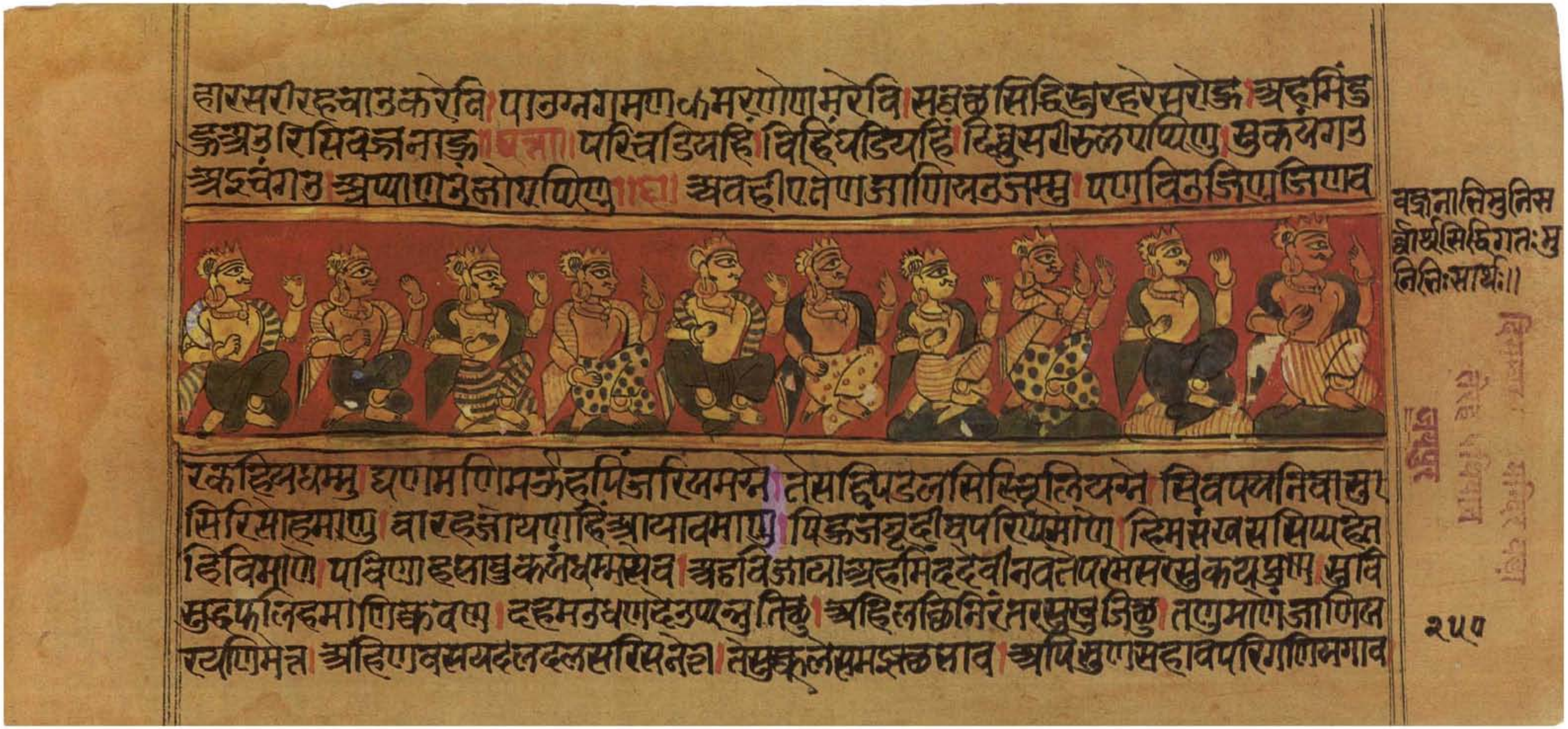

आहार शरीर का त्यागकर, प्रायोपगमन मरण के द्वारा, सर्वार्थसिद्धि के शोभित देवविमान में ऋषि वज्रनाभि अहमेन्द्र हुए।

घत्ता—विधि से घटित परिपाटियों से दिव्य शरीर धारण कर और स्वयं को पुण्य शरीर और अत्यन्त सुन्दर (अच्छा) देखकर॥ ६॥

७

उसने अवधिज्ञान से अपना जन्म जान लिया। जिन और जिनवर के द्वारा कहे गये धर्म को उसने प्रणाम किया। जिसमें सघन मणिकिरणों से मार्ग पीला है, ऐसे त्रेसठ पटलवाले स्वर्ग का अन्तिम पटल शिखामणि के समान है। उससे बारह योजन दूर श्री से शोभित सिद्धक्षेत्र में शिवपद का निवास है। वहाँ जम्बूद्वीप के समान एक लाख योजन प्रमाणवाले हिम शंख और चन्द्रमा के समान विमान में वहाँ धर्म की सेवा करनेवाले वज्रनाभि के आठों ही भाई अहमेन्द्र हुए। वे नौ ही पुण्य सम्पादित करनेवाले देव थे, जो विशुद्ध स्फटिक मणि के समान आभावाले थे। शरीर के मान में उन्हें एक हाथ बराबर ऊँचा समझिए। अभिनव कमल के पत्तों के समान उनके सरल नेत्र थे। शुक्ल लेश्यावाले वे मध्यस्थभाव धारण करते थे। अदुष्ट स्वभाववाले और गर्व से दूर थे।

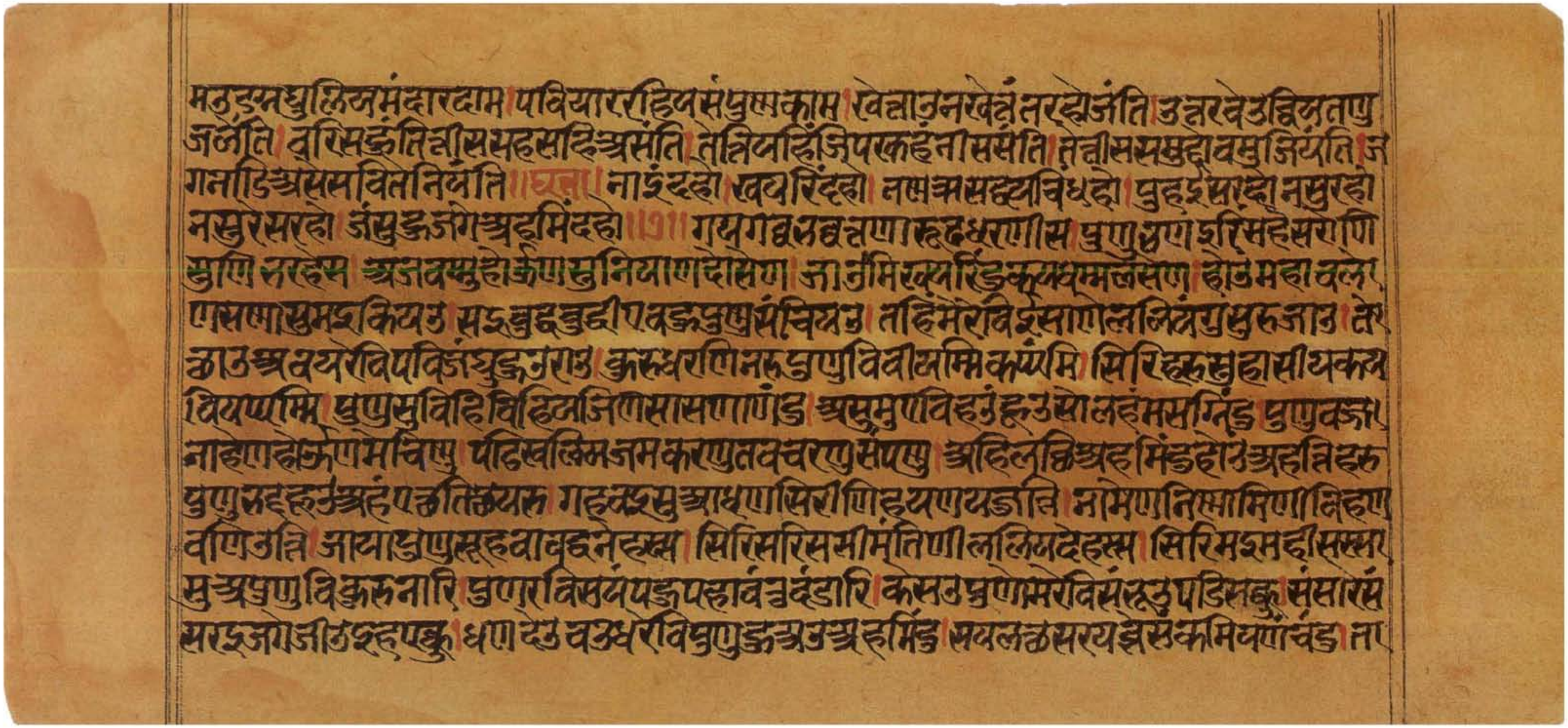

उनके मुकुटों के अग्रभाग पर मन्दारमाला पड़ी हुई थी। काम से रहित सम्पूर्णकाम थे। वे एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र नहीं जाते। वे उत्तर वैक्रियिक शरीर ग्रहण नहीं करते। तैंतीस हजार वर्षों में वे भोजन ग्रहण करते हैं और इतने ही पक्षों में साँस लेते हैं। तैंतीस समुद्र-पर्यन्त जीवित रहते हैं। वे विश्वरूपी नाड़ी को देखते हैं।

घत्ता—जग में जो सुख अहमेन्द्र को है वह काम से मन्द नागेन्द्र, खगेन्द्र, पृथ्वीश्वर और देवेन्द्र को प्राप्त नहीं है ॥७॥

८

ऋषभेश्वर कहते हैं—''हे गर्वरहित, भव्यत्व में आरूढ़, धरणीश भरत, सुनो—जयवर्मा होकर, अपने निदान के दोष से थोड़ा-सा धर्म करने से विद्याधरेन्द्र हुआ। फिर महाबल होकर मैंने संन्यास किया। और स्वयंबुद्धि से बहुत-से पुण संचित किया। वहाँ मरकर मैं ईशान स्वर्ग में ललितांग देव हुआ। वहाँ से अवतरित होकर मैं वज्रजंघ राजा हुआ। फिर कुरुभूमि का मनुष्य हुआ, फिर मैं कृतविकल्प दूसरे स्वर्ग में सुभाषी श्रीधर देव हुआ, फिर विधिपूर्वक जिनशासन का आनन्द करनेवाला सुविधि, फिर प्राणों का त्याग कर मैं सोलहवें स्वर्ग में अहमेन्द्र हुआ। फिर मैंने वज्रनाभि होकर, यमकरण को नष्ट करनेवाला सम्पूर्ण तपश्चरण स्वीकार किया। फिर सर्वार्थसिद्धि में पापों की वेदना का हरण करनेवाला अहमेन्द्र हुआ। हे भद्र, फिर मैं यहाँ तीर्थंकर हुआ। वणिक् कन्या धनश्री, जो नय की युक्ति को समाप्त करनेवाली थी, निर्नामिका नाम की अत्यन्त गरीब लड़की हुई। फिर वह सुभग बद्धस्नेह ललितांग देव की लक्ष्मी के समान पत्नी हुई। फिर मरकर कुरुभूमि में श्रीमती नाम से राजा की रानी हुई। फिर स्वयंप्रभ देव, फिर राक्षसों का शत्रु केशव, फिर मरकर प्रतीन्द्र हुआ। इस प्रकार जीव अकेला संसार में परिभ्रमण करता रहता है। धनदेव भी व्रत धारण कर सर्वार्थसिद्धि में अहमेन्द्र हुआ, मानो शरद्मेघों में चन्द्रमा उगा हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

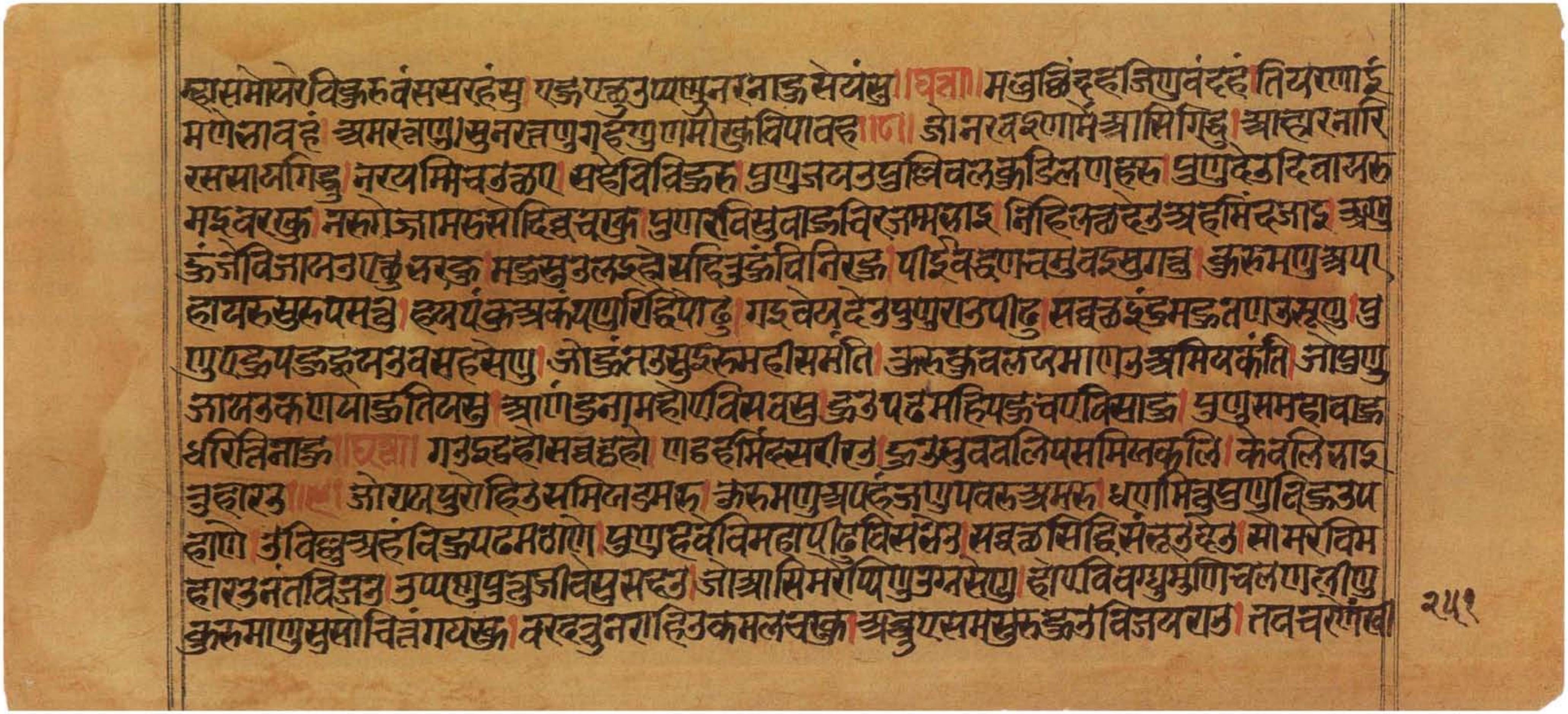

वहाँ से अवतरित होकर, वह कुरुवंशरूपी सरोवर का हंस यह राजा श्रेयान्स उत्पन्न हुआ।

घत्ता—इसलिए तुम मल नष्ट करो, जिन की वन्दना, करो, तीन रत्नों को मन में ध्यान करो। अमरत्व और सु-नरत्व को तो ग्रहण ही नहीं करना, मोक्ष भी प्राप्त करो॥ ८॥

९

जो आहार और नारी के रस के स्वाद का लालची राजा था, वह चौथे नरक में कष्ट सहकर चंचल और कुटिल नखोंवाला व्याघ्र हुआ। फिर देव और मतिवर नाम का तेजस्वी मनुष्य, फिर दिव्य दृष्टि ग्रैवेयक का देव। फिर पुराने जन्म का भाई सुबाहु, फिर निखिल अर्थों का देवता अहमेन्द्र हुआ, जो वहाँ सुख भोगकर यहाँ मेरा पुत्र भरत हुआ है। लो तुम भी शीघ्र ही पापरहित होगे। जो प्रीतिवर्धन नाम का सुगुण सेनापति था, कुरुभूमि का मनुष्य प्रभाकर नाम का प्रसन्न देव, फिर हतपाप और ऋद्धियों से प्रौढ़, अकम्पन, फिर ग्रैवेयक देव, फिर पीठ, फिर सर्वार्थसिद्धि का इन्द्र, फिर यह पापरहित मेरा पुत्र वृषभसेन हुआ। जो पहले राजा का मन्त्री था, कुरुभूमि का मनुष्य नाम से अमितकान्ति। जो फिर कनकाभ नाम का देव हुआ, आनन्द नाम से अपने अधीन था। वहाँ से च्युत होकर पहले वह राजा महाबाहु धरती का स्वामी हुआ।

घत्ता—फिर वह इष्ट सर्वार्थसिद्धि गया। फिर अहमेन्द्र शरीर नष्ट होने पर, कलह को शान्त करनेवाला यह बाहुबलि तुम्हारा भाई केवलज्ञानी हुआ॥ ९॥

१०

आडम्बर को शान्त करनेवाला जो राजपुरोहित था वह कुरु मनुष्य प्रभंजन प्रवरदेव, फिर धनमित्र, फिर सुखप्रधान परमस्थान में अहमेन्द्र हुआ। फिर महापीठ होकर भी, सर्वार्थसिद्धि में देव उत्पन्न हुआ। वह मरकर मेरा अनन्तविजय नाम का पुत्र हुआ जो जीवों में सदय है। और जो उग्रसेन था, वह मरकर और बाघ होकर मुनि के चरणों में लीन होकर कुरुभूमि में चित्रांगद मनुष्य हुआ फिर कमलनयन राजा वरदत्त हुआ। फिर अच्युत स्वर्ग में विजयराज सामानिक देव हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

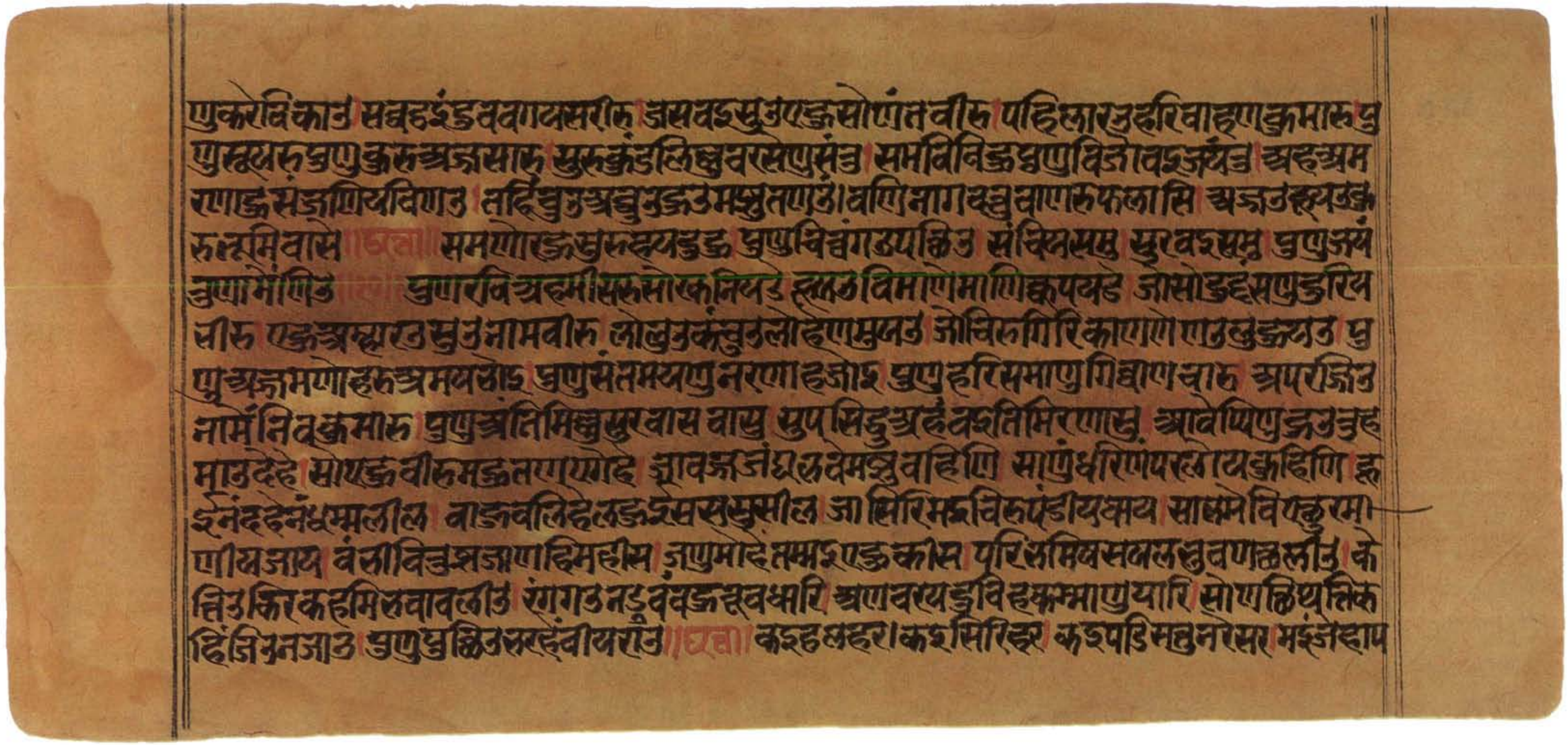

तपश्चरण से अपने शरीर को क्षीण कर सर्वार्थसिद्धि का देव हुआ। फिर शरीर छोड़कर वह यशोवती का पुत्र यह अनन्तवीर्य है। पहला जो हरिवाहन कुमार था, वह सुअर फिर कुरुभूमि में आर्यश्रेष्ठ, फिर मणिकुण्डलदेव और वरसेन, फिर सामानिक देव फिर वैजयन्त, फिर विनय से सम्पन्न अहमेन्द्र और फिर वह अच्युत देव च्युत होकर मेरा पुत्र हुआ। जो नागदत्त पलाश ग्राम का वणिक् था वह कुरुभूमि का निवासी आर्य हुआ।

घत्ता—फिर सुमनोरथ देव हुआ, फिर दुःख का नाश करनेवाला चित्रांगद राजा हुआ। फिर समता का संचय करनेवाला सामानिक देव, फिर जयन्त नाम का राजा॥ १०॥

११

फिर भी वह, जो माणिक्यों से रचित है और मोक्ष के निकट है (अर्थात् जहाँ सिद्धशिला कुछ ही योजन दूर है) ऐसे विमान में अहमेन्द्र हुआ। दुर्दर्शनीय पापों से डरनेवाला था, वह यहाँ हमारा वीर नाम का पुत्र हुआ। और जो लोलुप कन्दुक लोभ से मरकर पहले गिरिकानन में नकुल हुआ था, फिर अमृतभोगी आर्य मनोहर, फिर प्रशान्तमदन राजा योगी, फिर सुन्दर सामानिक देव। फिर अपराजित नाम का नृपकुमार। फिर अन्तिम प्रसिद्ध अहमेन्द्र देव अन्धकार का नाश करनेवाला। वह वीर आकर तुम्हारी माता की देह से मेरे घरमें उत्पन्न हुआ। जो वज्रजंघ जन्म में मेरी बहन थी, वह अनुन्धरा जो मानो परलोक के जाने के लिए पगडण्डी थी, वह सुनन्दा की धर्म का आचरण करनेवाली सुशील कन्या और बाहुबलि की छोटी बहन (सुन्दरी) हुई। और जो श्रीमती के जन्म में पण्डिता धाय थी वह परिभ्रमण कर यहीं स्त्री हुई है। हे महीश! तुम उसे ब्राह्मी जानते हो। आज भी जन मोह से किस प्रकार खेद को प्राप्त होते हैं? यह समस्त भुवनस्थली घूम रही है, मैं कितनी भवावलियों को बताऊँ! रंगमंच पर गया हुआ बहुरूप धारण करनेवाला नट अनवरत दो प्रकार के कर्मों का अनुकरण (अभिनय) करता रहता है। ऐसा एक भी स्थान नहीं है जहाँ यह जीव पैदा नहीं हुआ।" तब भरत ने पुनः वीतराग ऋषभजिन से पूछा—

घत्ता—कितने बलभद्र, कितने नारायण, कितने प्रतिनारायण, मुझ-जैसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

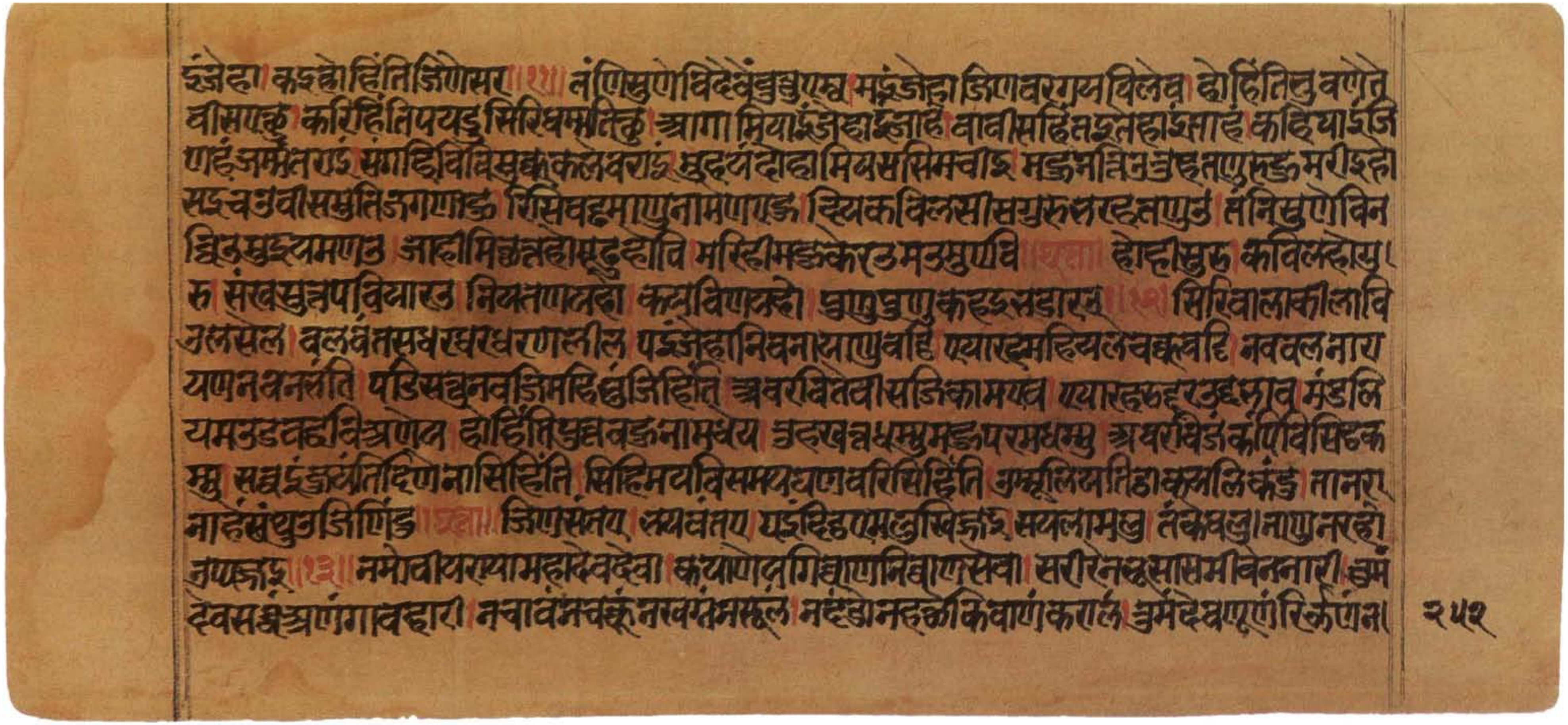

कितने चक्रवर्ती राजा और आप जैसे कितने तीर्थंकर उत्पन्न होंगे?॥ ११ ॥

१२

यह सुनकर देव ने इस प्रकार कहा—मुझ जैसे राग-द्वेष से रहित तेईस जिनवर इस भुवन में और होंगे जो श्रीधर्मतीर्थ को प्रकट करेंगे। जिस प्रकार इनके, उसी प्रकार उन बाईस तीर्थंकरों के आगामी शरीर ग्रहण करने और छोड़नेवाले जन्मान्तरों का कथन उन्होंने किया और कहा—जिसने अपने मुखचन्द्र से चन्द्रकिरणों को पराजित कर दिया है, ऐसा तुम्हारा पुत्र और मेरा नाती यह मरीचि श्री वर्धमान के नाम से चौबीसवाँ त्रिजगनाथ और तीर्थंकर होगा। तब द्विज कपिल जिसका शिष्य है ऐसा महान् भरत का पुत्र यह सुनकर प्रसन्नचित होकर खूब नाचा। यह मूर्ख होकर मिथ्यात्व को प्राप्त होगा। मेरा अहंकार छोड़कर मरेगा।

घत्ता—कपिल का गुरु तथा सांख्यसूत्रों में निपुण देव होगा। विनय करनेवाले अपने पुत्र से आदरणीय ऋषभजिन बार-बार कहते हैं॥ १२॥

१३

श्री का पालन करनेवाले क्रीड़ा के विपुल शैल के समान बलवान् पहाड़ों सहित धरती को धारण करने की लीलावाले तुम्हारे-जैसे न्यायानुगामी ग्यारह चक्रवर्ती भूमितल पर होंगे। नव बलभद्र, नव नारायण भी होंगे, इसमें भ्रान्ति नहीं है। और नौ ही प्रतिनारायण भी धरती का भोग करेंगे। और भी तेईस कामदेव, रौद्रभाववाले ग्यारह रुद्र, तथा मुकुटबद्ध बहुत से नामवाले माण्डलीक राजा उत्पन्न होंगे। तुम्हारा क्षात्रधर्म और मेरा परमधर्म और भी जो विशिष्ट कर्म हैं, वे सब युगान्त के दिनों में नष्ट हो जायेंगे। अग्निमय और विषमय मेघों की वर्षा होगी। तब जिन्होंने तृष्णारूपी कदलीकन्द का नाश कर दिया है ऐसे जिनेन्द्र की राजा ने स्तुति की—

घत्ता—हे जिनसंत भगवन्त, आपके दिखने पर पाप नष्ट हो जाता है। और मनुष्य को सम्पूर्ण पवित्र केवलज्ञान उत्पन्न हो जाता है॥ १३॥

१४

हे वीतराग महान् देवदेव, आपकी जय हो। आपकी अनेक देव निर्वाण सेवा करते हैं। आपके शरीर पर वस्त्र नहीं हैं, पास में नारी नहीं है। हे देव, आप सचमुच काम का नाश करनेवाले हो। आपके पास न चाप है, न चक्र है, न खड्ग है, न शूल है, न दण्ड है और न कराल-कृपाण है। हे देव, आप निश्चय से शत्रुओं के लिए गम्य नहीं हैं।

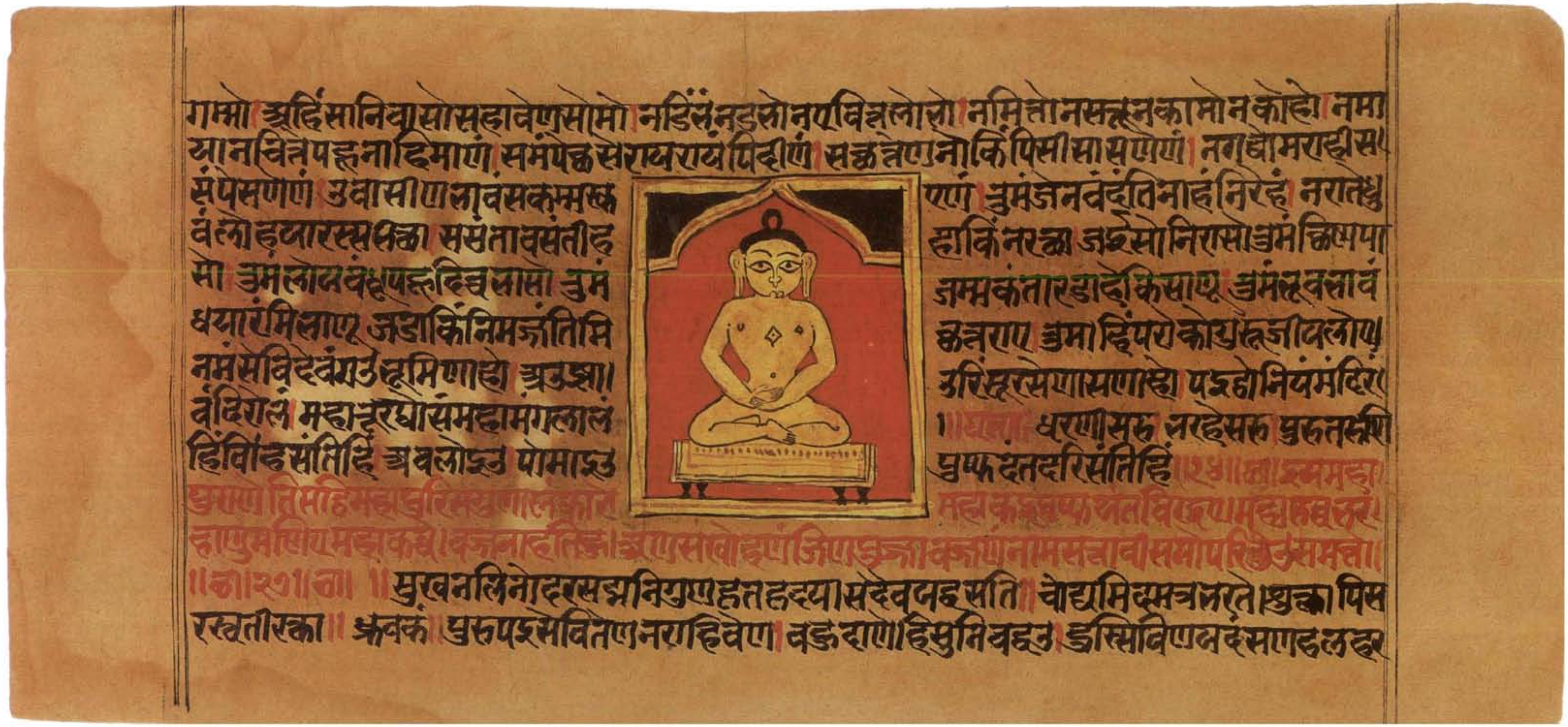

अहिंसा के निवास आप स्वभाव से सौम्य हैं, न बालक हैं, न दम्भ है, और न ही वित्त का लोभ है, न मित्र, न शत्रु, न काम और न क्रोध। चित्त में न माया है और न प्रभुता का अभिमान। आप राजराजा और दीन को समान भाव से देखते हैं। न छत्र से और न सिंहासन से और न गर्व से भरे इन्द्र के आदेशों से आपको कुछ लेना-देना। उदासीन भाववाले, अपने कर्मों का नाश करनेवाले निष्पाप आप की जो लोग वन्दना नहीं करते, वे लोग निश्चितरूप से लोभाचार के भृत्य हैं, और श्वास लेते हुए हा-हा, व्यर्थ क्यों संसार में रहते हैं! यति वही है जो आशाओं से रहित हो, आपने बन्धन काट दिये हैं, आप लोकबन्धु और दिव्यभाषी हैं। आप संसाररूपी कान्तार जलाने के लिए अग्नि हैं, आप प्राणियों के भावान्धकार के लिए सूर्य हैं। मूर्ख लोग मिथ्यात्व के जल में क्यों निमग्न होते हैं! तुम से महान् गुरु जीवलोक में दूसरा कौन है! इस प्रकार देव को नमस्कार कर, भूमिनाथ भरत अपनी प्रचुर सेना के साथ अयोध्या के लिए चल दिया। बन्दीजनों से मुखर, महातूर्यों से निनादित तथा महीमंगलों से युक्त अपने भवन में उसने प्रवेश दिया।

घत्ता—हँसती हुई पुष्पों की तरह दाँत दिखाती हुई नगर-तरुणियों के द्वारा भूमीश्वर भरतेश्वर देखा गया और प्रशंसित हुआ॥ १४॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणों और अलंकारों से युक्त इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत इस महाकाव्य में वज्रनाभि का त्रिभुवन संक्षोभन और जिनपूजा वर्णन नाम का सत्ताईसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ २७॥

सन्धि २८

अपने नगर में प्रवेश कर उस राजा भरत ने खोटे स्वप्नों के फल को दूर करने के लिए नाना प्रकार के दानों से समृद्ध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

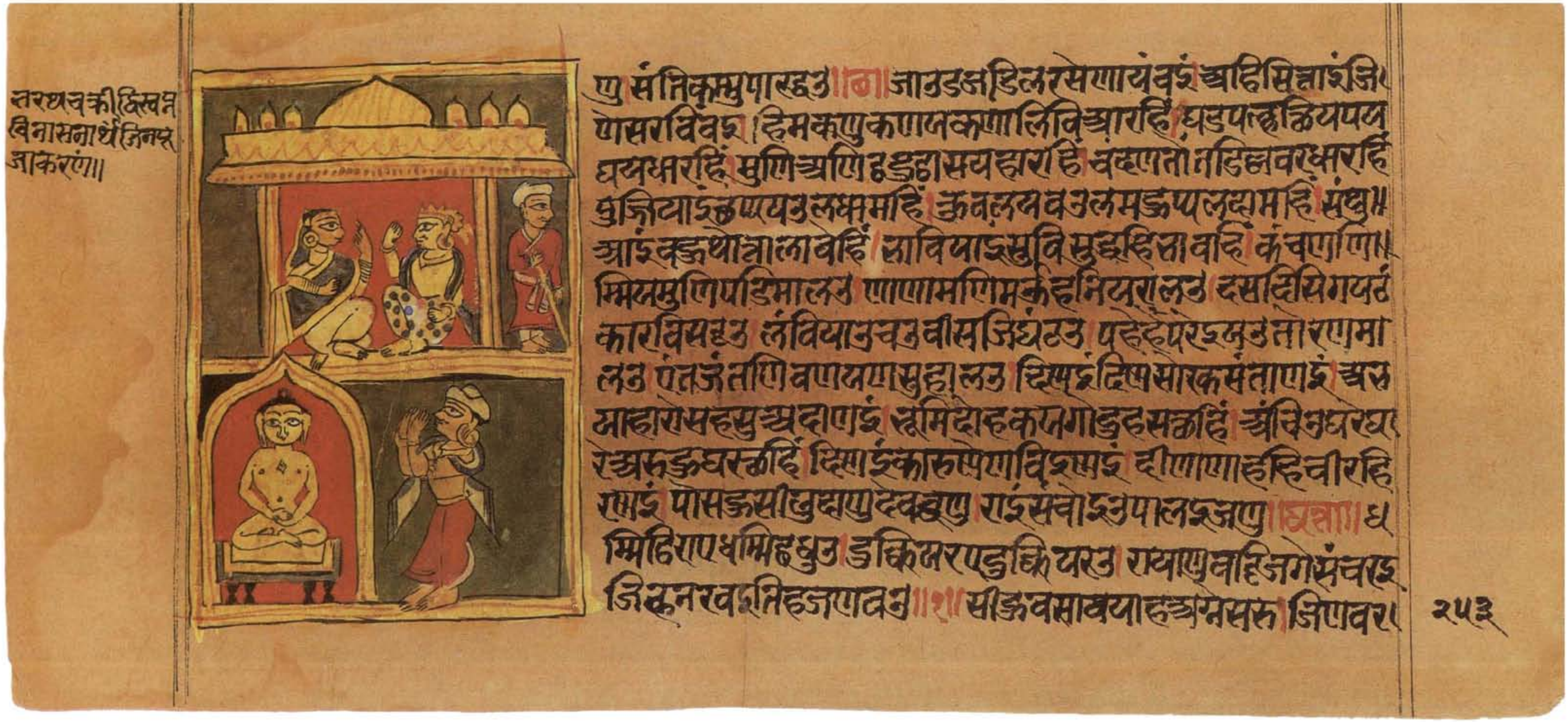

शान्तिकर्म प्रारम्भ किया।

१

हिमकण और कनककणों की पंक्तियों के समान परिणामवाली घड़ों से गिरती हुई दूध और घी की धाराओं, मुनियों के अनिष्ट और दुष्ट आशयों का नाश करनेवाली चन्दन से मिश्रित उत्तम जलों से, जाउड देश में उत्पन्न केशर से लाल जिनेश्वर प्रतिमाओं का अभिषेक किया। भ्रमरकुल की घरस्वरूप कुवलय-बकुल-मधु और कमलों की मालाओं से पूजा की। बहुत-सी स्तोत्रावलियों से संस्तुति की, विशुद्ध भावों से भावना की। स्वर्णनिर्मित मुनि-प्रतिमाओं से युक्त, नाना मणिकिरणों के समूहवाले, दसों दिशाओं में जानेवाली (गूँजनेवाली) टंकार ध्वनि से रचित चौबीस घण्टे लटकवा दिये गये। पथ-पथ में बन्दनवार सजाये गये जो आते-जातेहुए राजाओं के नेत्रों को सुहावने लगते थे। जिन्होंने सुख-परम्परा दी है ऐसे अभय, आहार, औषधि और शास्त्रों के दान दिये गये। भूमि-दोहन और गायों का दोहन करनेवाले गृहस्थों ने घर-घर में अर्हन्त की पूजा की। करुणाभाव से दूसरे दीन-अनाथों के लिए वस्त्र और सोना दिया गया। राजा के द्वारा प्रेरित प्रोषधोपवास शीलदान और देवार्चन का लोग पालन करते हैं।

घत्ता—राजा के धर्मनिष्ठ होने पर जनपद धर्मनिष्ठ होता है, राजा के पापी होने पर जनपद पापी होता है, विश्व में जनपद राज्य का अनुगामी होता है, राजा जैसा चलता है, जनपद भी वैसा ही चलता है॥ १॥

२

सावयों (श्वापदों और श्रावकों) में सिंह के समान अग्रसर होकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

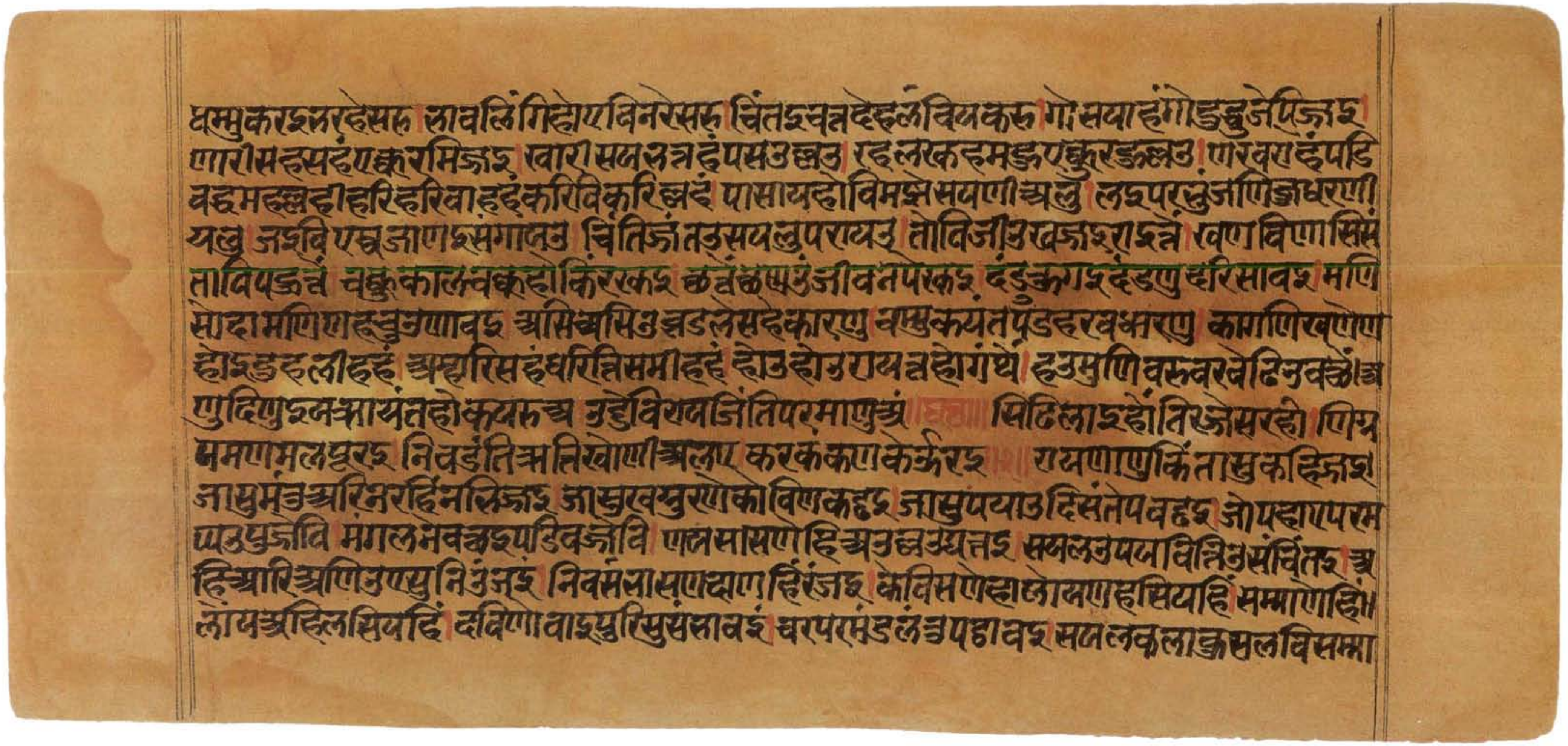

भरतेश्वर जिनवर धर्म का आचरण करता है। वह भावलिंगी होकर, शरीर की चिन्ता छोड़कर हाथ लम्बे कर (कायोत्सर्ग कर) विचार करता है — ''सैकड़ों गायों में एक गाय का ही दूध पिया जाता है, हजारों स्त्रियों में-से एक ही स्त्री से रमण किया जाता है, सैकड़ों खारीभर (मापविशेष) भात में से अँजुली-भर चावल खाया जाता है। लाखों रथों में मेरा एक रथ है। मनुष्य बड़े मनुष्यों का प्रतिबद्ध (दास) है, अश्व अश्ववाहों का, और हाथी हाथियों का। प्रासादों के भीतर भी शयनतल होता है। लो, इस प्रकार धरिणीतल का भोग किया जाता है। तब भी जीव राज्यत्व से क्षय को प्राप्त होता है; वह क्षणभंगुर और बहुत सन्तापकारी है। चक्र क्या कालचक्र से बचा सकता है, क्या वह छत्र से ढके हुए जीव की नहीं देखता? दण्ड कुगति के दण्ड को दरसाता है, मणि आकाश से च्युत बिजली की तरह है। असि (तलवार) कृष्ण उद्‌भट लेश्या का कारण है, सेना यम के नगाड़ों के शब्द को धारण करनेवाली है। दुःखों से आलिंगित धरती की इच्छा करनेवाले हम-जैसे लोगों के पास काकणी मणि क्षण-भर के लिए शोभित होता है। राज्यत्व और परिग्रह रहे। मैं मुनि (के समान) हूँ, केवल वस्त्रों से घिरा हुआ हूँ। प्रतिदिन इस प्रकार ध्यान करते हुए उसके (भरत के) रागपरमाणु धूलि के समान उड़कर जाने लगते हैं।

घत्ता—इस प्रकार राजेश्वर के निकलते हुए मनोमल से पूरित करकंगन और केयूर आभूषण शीघ्र ही धरती पर गिरने लगते हैं॥ २॥

३

राजनीति-विज्ञान उसी का कहा जा सकता है जिसके मन्त्र का भेदन शत्रुमनुष्यों के द्वारा न किया जा सके। जिसकी तलवार से युद्ध में कोई नहीं बचता, जिसका प्रताप दिशाओं में फैलता है, जो सवेरे परमात्मा की पूजा कर, मंगलवस्त्र पहनकर न्याय-शासन में अपना मन लगाता है, समस्त प्रजा-वृत्तियों की चिन्ता करता है, अधिकारियों को अपने नियोग में लगाता है, राजा सम्भाषण और दान से रंजित करता है। वह स्नेहपूर्ण अवलोकन हँसी से, सम्मानित लोक अभिलाषाओं और धन के उपाय से कितने लोगों का आदर करता है, शत्रुमण्डल में चरों को भेजता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

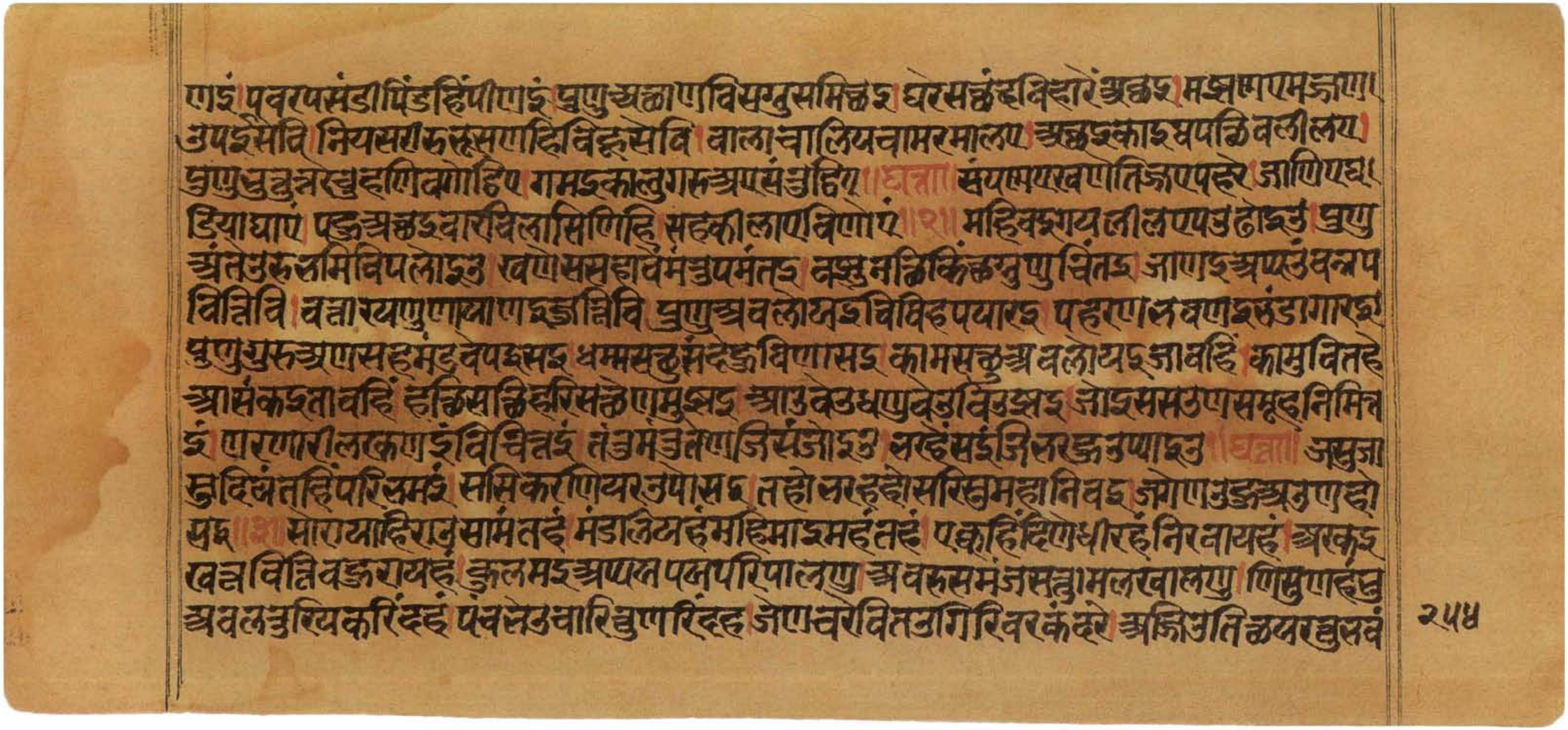

प्रवर स्वर्णपिण्डों से प्रसन्न करता है, फिर दरबार को विसर्जित करने की इच्छा करता है, और घर में स्वच्छन्द विहार से रहता है। मध्याह्न में स्नान के लिए प्रवेशकर अपने शरीर को भूषणों से सजाकर, जिसमें बालाओं के द्वारा संचालित है चमर ऐसी किसी राजलीला से रहता है। भोजन करने के उपरान्त राजा नृपगोष्ठी में अत्यन्त सन्तुष्टि के साथ अपना समय बिताता है।

घत्ता—घण्टी के आघात से जाने गये तीसरे प्रहर का एक क्षण बीतने पर राजा विलासिनियों के साथ क्रीड़ा-विनोद करता हुआ रहता है॥ ३॥

४

राजा गजलीला से अपने पैर रखता है, और फिर घूमकर अन्तःपुर देखता है। एक क्षण में अपने स्वभाव से मन्त्र का विचार करता है। यह वस्तु छह गुणवाली है या नहीं, यह विचार करता है। वह अपने को और वर्णों की प्रवृत्तियों को जानता है; वह कृष्यादि वार्ताओं के आचरण और न्याय तथा अन्याय की उक्ति को जानता है। फिर वह विविध प्रकार के आयुधभवन और भांडागारों का अवलोकन करता है। फिर वह गुरुजनों के सभामण्डप में प्रवेश करता है, तथा धर्म और शास्त्र के सन्देह को दूर करता है। जिस समय वह कामशास्त्र का अवलोकन करता है उस समय काम भी उससे आशंका करने लगता है। वह हस्तिशास्त्र और अश्वशास्त्र को नहीं छोड़ता, आयुर्वेद और धनुर्वेद को भी समझता है। ज्योतिष, शकुन-समूह और निमित्त शास्त्र को भी जानता है। नर-नारियों के विचित्र लक्षणों को समझता है। तन्त्र और मन्त्र का संयोग तो उसी ने किया। भरत ने स्वयं भरतसंगीत को उत्पन्न किया।

घत्ता—जिसका यश दिशाओं में घूमता है, और चन्द्रमा के किरणसमूह का पोषण करता है। उस राजा भरत के समान महान् राजा जग में न तो हुआ है और न होगा॥ ४॥

५

एक दिन राजाधिराज वह, महिमादि से महान् सामन्तों, माण्डलीक राजाओं, धीर और अपायरहित बहुत-से राजाओं से क्षात्रधर्म का कथन करता है—कुलमति अपना और प्रजा का परिपालन भी मल को दूर करनेवाला सामंजस्य (करना चाहिए) सुनिए, अपने बाहुबल से गजराजों को तोलनेवाले राजाओं के चारित्र्य के पाँच भेद हैं। जिससे गिरिगुफा में तप का आचरण कर, जिनने पूर्वभव में तीर्थंकर प्रकृति का अर्जन किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

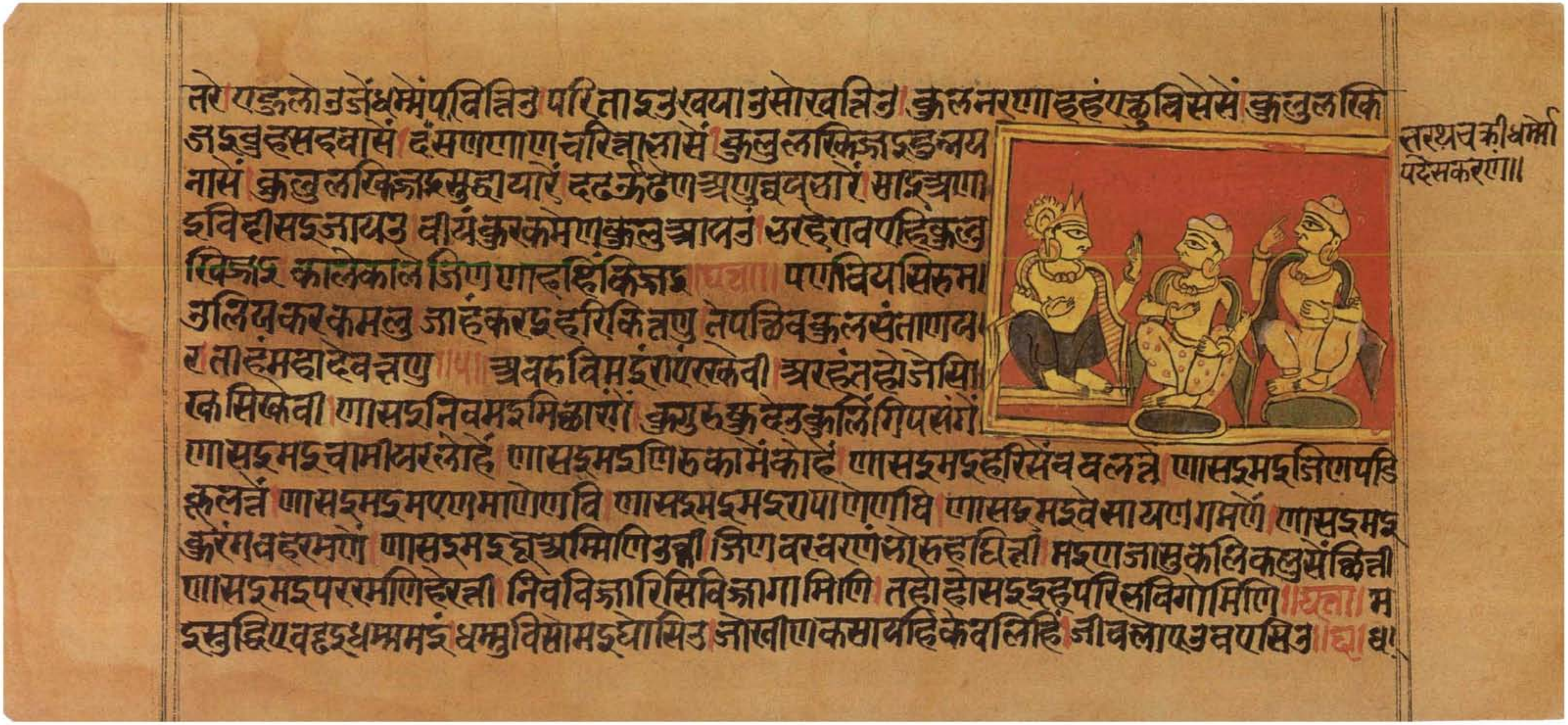

जिससे यह लोक धर्म में प्रवर्तित किया और उस क्षत्रियत्व को क्षय होने से बचाया गया। नरनाथ को अपने कुल की रक्षा विशेष रूप से करनी चाहिए। पण्डितों के सहवास से कुल को लक्षित करना चाहिए। दर्शन-ज्ञान और चारित्र के अभ्यास से और दुर्नयों के विनाश से कुल की रक्षा करनी चाहिए। शुद्ध आचार और दृढ़तापूर्वक धारण किये गये अणुव्रत-भार से कुल की रक्षा करनी चाहिए। यह कुल सादि-अनादि और उत्पन्न हुआ दिखाई देता है, बीजांकुर न्याय से कुल आया है। भरत ऐरावत आदि के द्वारा कुल नाश को प्राप्त होता है, फिर समय-समय पर जिननाथ के द्वारा वह किया जाता है।

घत्ता—सिर झुकाकर और करकमल जोड़कर इन्द्र जिन का कीर्तन करता है, वे राजकुल परम्परा के विधाता हैं और उनका ही महादेवत्व है॥५॥

६

और भी राजा के द्वारा बुद्धि की रक्षा की जाये और अरहन्त की ही सीख सीखी जाये। मिथ्यात्व के रंग कुगुरु, कुदेव और कुमुनि के सम्पर्क से राजा की मति नष्ट हो जाती है। स्वर्ण के लोभ से मति नष्ट हो जाती है। अत्यन्त काम और क्रोध से मति नष्ट हो जाती है। हर्ष और चपलता से मति नष्ट हो जाती है, जिन के प्रतिकूल होने पर बुद्धि नष्ट हो जाती है, मद और मान से बुद्धि नष्ट होती है। मदिरापान से बुद्धि नष्ट होती है, वेश्याजन-गमन करने से बुद्धि नष्ट हो जाती है। हरिणवध में रमण करने से बुद्धि नष्ट होती है। जुए में नियुक्त होने से बुद्धि नष्ट हो जाती है। परस्त्री में रमण करने से बुद्धि नष्ट होती है, जिन के चरण-कमलों में पड़ी हुई जिसकी बुद्धि कलि के पाप को स्पर्श नहीं करती उसकी बुद्धि नृपविद्या और ऋषिविद्या में गमन करनेवाली होती है और इहलोक तथा परलोक में धरती (या लक्ष्मी) उसकी होती है।

घत्ता—मति शुद्ध होने से धर्ममति बढ़ती है, और धर्म भी मैं उसे कहता हूँ कि जिसका उपदेश क्षीणकषायवाले केवलज्ञानियों ने विश्व में किया है॥६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

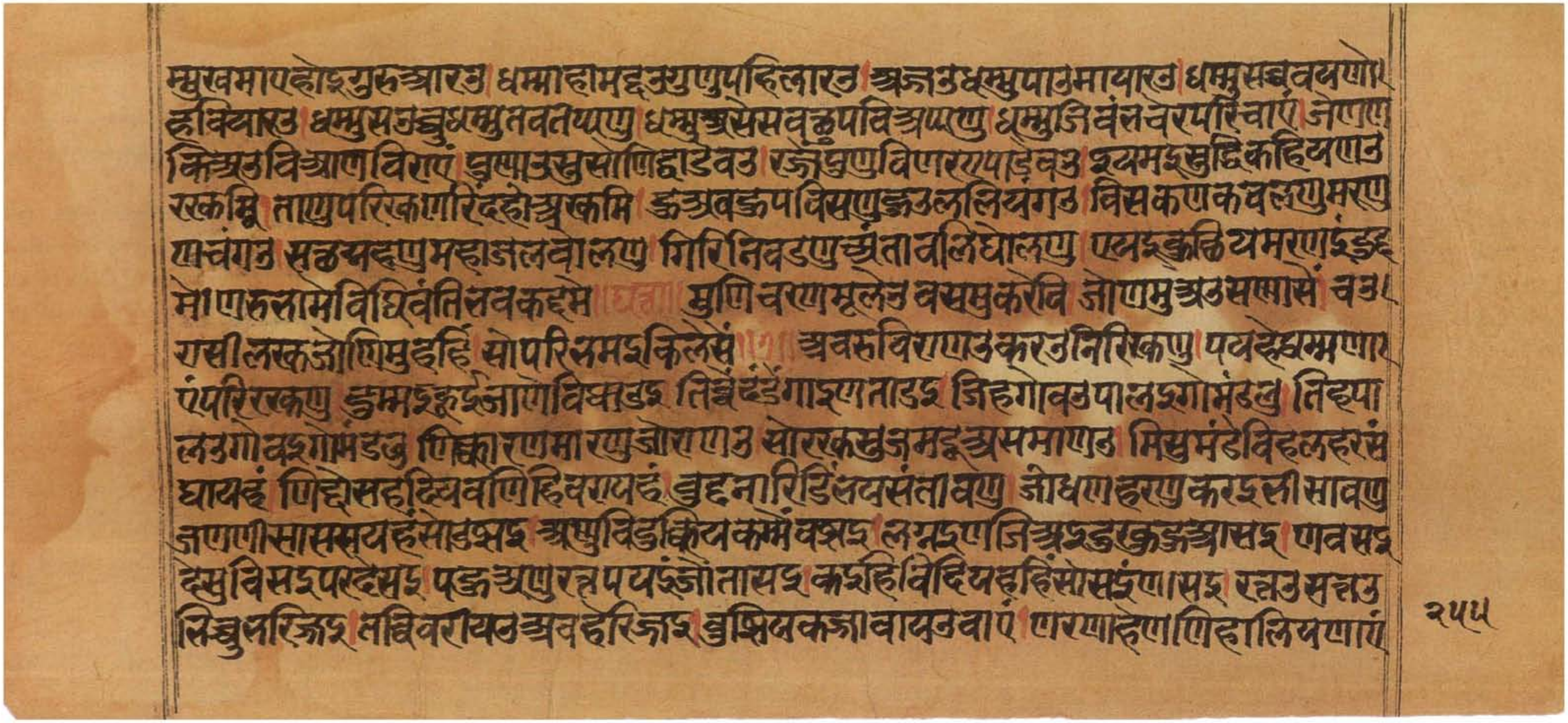

७

धर्म क्षमा से गौरवशाली होता है। धर्म का पहला गुण मार्दव है। आर्जव धर्म है और मायारत होना पाप है। विचार करनेवाला सत्य वचनों का समूह धर्म है। शौच्य धर्म है, तप तपना धर्म है, समस्त वस्तुओं का परित्याग करना धर्म है, ब्रह्मचर्य और त्याग से धर्म है। जिस राजा ने जानते हुए भी धर्म नहीं किया, पूर्णायु होने पर वह नष्ट हो जायेगा और राज्य उसे फिर नरक में गिरा देगा। इस प्रकार मैंने मतिशुद्धि कही, मैं कुछ भी छिपाकर नहीं रखूँगा, राजाओं को अब शरीर की रक्षा बताता हूँ। आग में प्रवेश करना, सुन्दर शरीर को जला लेना, विषकणों को खा लेना, ऐसा मरण अच्छा नहीं। आत्मघात, महाजल में अतिक्रमण करना, पहाड़ से गिरना, अपनी आँतों को घोल देना (संघर्षण) ये खोटे मरण हैं जो मनुष्य को घुमाकर दुर्दम भवपंक में गिरा देते हैं।

घत्ता—मुनिवर के चरणकमलों में उपशम धारण कर जो संन्यास से नहीं मरता वह चौरासी लाख योनियों के मुखों में कष्टपूर्वक परिभ्रमण करता रहता है ॥ ७ ॥

८

और भी राजा को निरीक्षण करना चाहिए। प्रजा का धर्म और न्याय से परिरक्षण करना चाहिए। दुर्मति होकर गाय चिल्लाती है, यह जानकर उसे तीव्र दण्ड से ताड़न नहीं करना चाहिए। जैसे ग्वाला गोमण्डल का पालन करता है उसी प्रकार राजा को पृथ्वीमण्डल का पालन करना चाहिए। जो राजा अकारण प्रजा को मारनेवाला होता है वह राक्षस और यमदूत के समान है। दोष लगाकर कृषक-समूहों, निर्दोष ब्राह्मणों और बेचारे वणिकों का भीषण धनापहरण करता है, बुड्ढों-स्त्रियों और बच्चों को सतानेवाला है वह लोगों की श्वास-ज्वालाओं में जल जाता है और पापकर्म से बँध जाता है। दुःख की ज्वाला लगने पर वह जीवित नहीं रहता, वह देश में नहीं रह सकता, परदेश में उसे प्रवेश करना पड़ता है। जो राजा अनुरक्त प्रजा को सताता है वह कुछ ही दिनों में स्वयं नष्ट हो जाता है। उसे सच्चे और अनुरक्त भृत्य का भरण करना चाहिए, जो विपरीत है उसकी उपेक्षा करनी चाहिए। कार्य के उपाय और अपाय को जानते हुए, न्याय की देखभाल करते हुए राजा को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुरु के चरणकमलों की सेवा करनी चाहिए और उसे सामंजस्य का विचार करना चाहिए। क्रोध में आकर विशिष्ट का परिहार नहीं करना चाहिए और दुष्ट का पक्ष कभी भी ग्रहण नहीं कहना चाहिए।

घत्ता—इस प्रकार से प्रकाशित नृपचरित का जो राजा पालन करता है कमलासन कमलमुखी कमला (लक्ष्मी) उसके मुखकमल को देखती है ॥ ८ ॥

९

गौतम गणधर कहते हैं — "हे श्रेणिक ! सुन, जब वहाँ भरत था तभी जिनभगवान् के चरणकमलों में रत रहनेवाला कुरुजांगल जनपद के गजपुर का राजा सोमप्रभ था। अपनी माँ लक्ष्मीवती के मन को सन्तुष्ट करनेवाला सोमप्रभ राजा का चौदह भाइयों में सबसे बड़ा जय नाम का सुन्दर पुत्र गद्दी पर बैठा। कुरुवंश के उस राजा ने प्रणाम कर और हँसते हुए राजा से कहा कि पिता के मुझे राजपट्ट बाँध देने और स्वयं ऋषियों के रत्नत्रय प्राप्त कर लेने पर, और उसमें भी निष्पाप और कालुष्य से च्युत हो जाने पर तथा सुरवरों के द्वारा संस्तुत दान का प्रवर्तन होने पर, एकानेक विकल्पों को जाननेवाले ऋषभस्वामी के चरणकमलों के भ्रमर, घोर वीर तपश्चरण से अद्‌भुत चाचा श्रेयांस राजा के विरक्त हो जाने पर मैं दिशामुखों को देखता हुआ अपने भाई के साथ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरवर के भीतर घूमता हुआ एक दिन नन्दन वन के लिए गया जो हवा से हिलती हुई चंचल शाखाओं से सघन था। वहाँ मैंने शीलगुप्त मुनि को देखा, उनकी वन्दना की और धर्मानन्द से मेरा मन नाच उठा। मैंने सरल-सुन्दर अंगोंवाली नागिन के साथ एक नाग को धर्म सुनते हुए देखा। एक साल बीत जाने पर मैंने अपने नाग द्वारा छोड़ी हुई उस नागिन को फिर देखा।

घत्ता—दीवड़ जाति का काकोदर (नाग) और नागिन दोनों को धर्म सुनते हुए। वहाँ पर भी जातीतर (जाति से भिन्न) स्नेह में अनुरक्त होनेवाले उनको अपने लीलाकमल से प्रताड़ित किया॥ ९॥

१०

(यह सोचकर कि) काले और लाल धब्बोंवाले शरीर से शोभित विजाति से नागिन कहाँ लग गयी। इस प्रकार परिवार से आहत होकर वह अपने यार के साथ चली गयी। मैं कास पुष्प की कान्ति के समान अपने घर वापस आ गया। रात्रि में शयनकक्ष में नागिन का वह विलास अपनी पत्नी को बताया। मैं जबतक खोटी महिलाओं के चरित को बताऊँ और प्रिय सम्भाषण करूँ कि इतने में विविध आभरणों से घर को रंजित करनेवाला एक सुरवर अवतरित हुआ। मैंने उससे पूछा — 'मुझे क्यों देखते हो, मुझ पर विकार-भरी दृष्टि क्यों करते हो'? उसने कहा — 'क्या नहीं जानते, लोगों को तुम्हीं धर्म का व्याख्यान करते हो, किसी का भी दोष ग्रहण नहीं करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

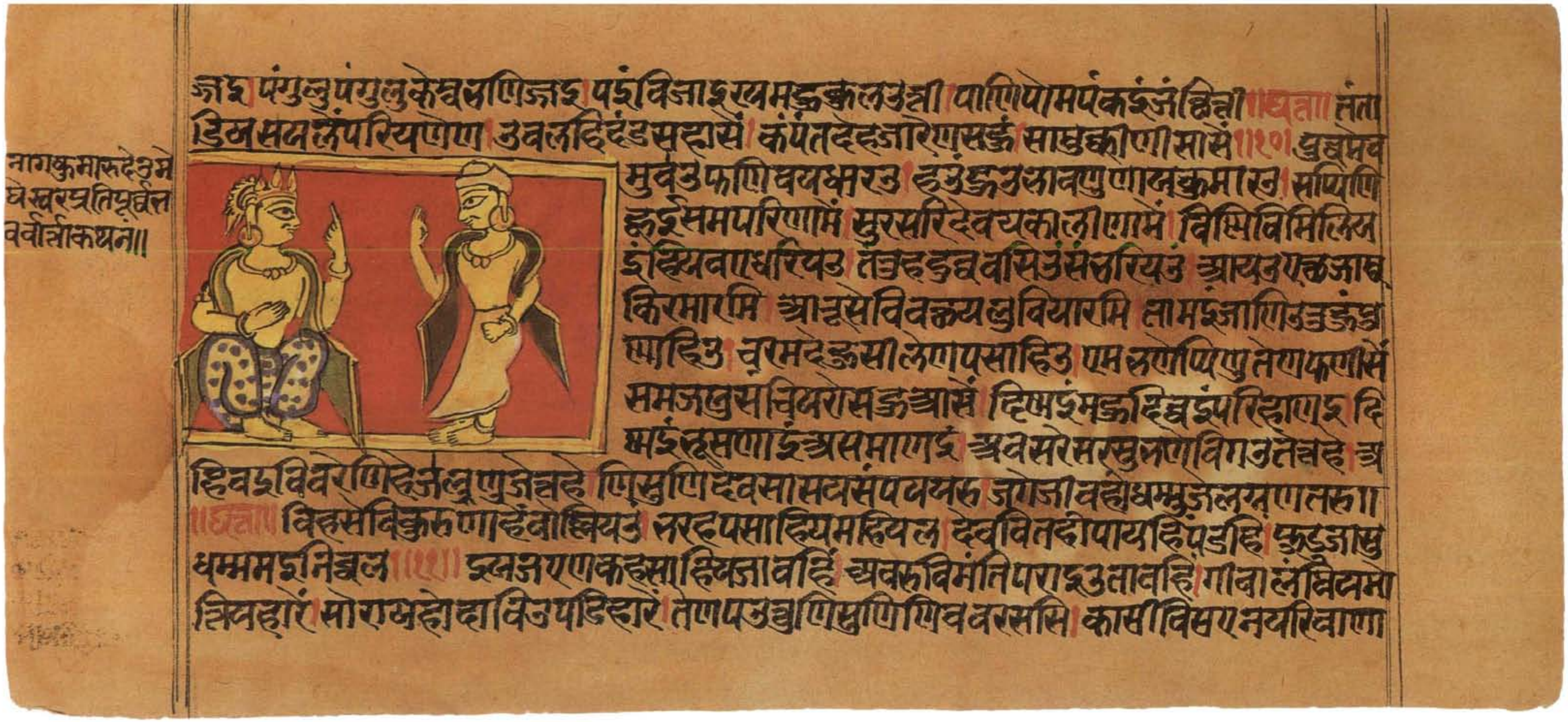

तुम्हें पंगुल-पंगुल (पुंश्चली-पुंश्चली) क्यों कहना चाहिए था? तुमने जन्म से अनुरक्त मेरी कुल-पुत्री को करकमल के कमल के द्वारा जो ताडित किया था

घत्ता—उसे समस्त परिजनों ने पत्थरों और हजारों दण्डों से गिरा दिया। काँपती हुई देहवाली वह, अपने यार के साथ साँस से मुक्त हो गयी॥ १०॥

११

व्रत धारण करनेवाला नाग पहले ही मर गया और मैं भवनवासी नागकुमार हुआ और वह नागिन समपरिणाम से गंगा में काली नाम की देवता हुई है। हम दोनों भी मिल गये और तुम्हारी उस कुचेष्टा को याद कर उसे मन में धारण कर लिया। मैं यहाँ आया और जबतक मैं तुम्हें मारूँ और क्रुद्ध होकर तुम्हारे वक्षस्थल को फाड़ दूँ कि इतने में मैंने जान लिया कि तुम पुण्यशाली हो, चरमशरीरी और शील से प्रसाधित हो। यह कहकर समता के जल से अपनी क्रोधाग्नि शान्त करते हुए उस नागेश ने मुझे दिव्य परिधान दिये, और असामान्य आभूषण दिये। उस अवसर पर अत्यन्त सरस बोलकर वह वहाँ गया जहाँ नागराज बिल में उसका भवन था। हे देव सुनिए, जीव का संसार में धर्म ही शाश्वत सम्पत्ति करनेवाला आधारभूत वृक्ष है।

घत्ता—कुरुनाथ ने हँसकर कहा कि जिसकी धर्म में निश्चल मति (या निश्चल धर्ममति) होती है—हे देव, भरत के समान धरती को सिद्ध करनेवाले भी उसके चरणों में पड़ते हैं॥ ११॥

१२

इस प्रकार जैसे ही जयकुमार ने कहानी कही कि वैसे ही दूसरा मन्त्री वहाँ आ पहुँचा। जिसकी गर्दन में मोती का हार लटक रहा है ऐसे प्रतिहार ने राजा से उसकी भेंट करायी। उसने कहा—हे नृपवर ऋषि, सुनिए, काशी देश में वाराणसी नगरी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

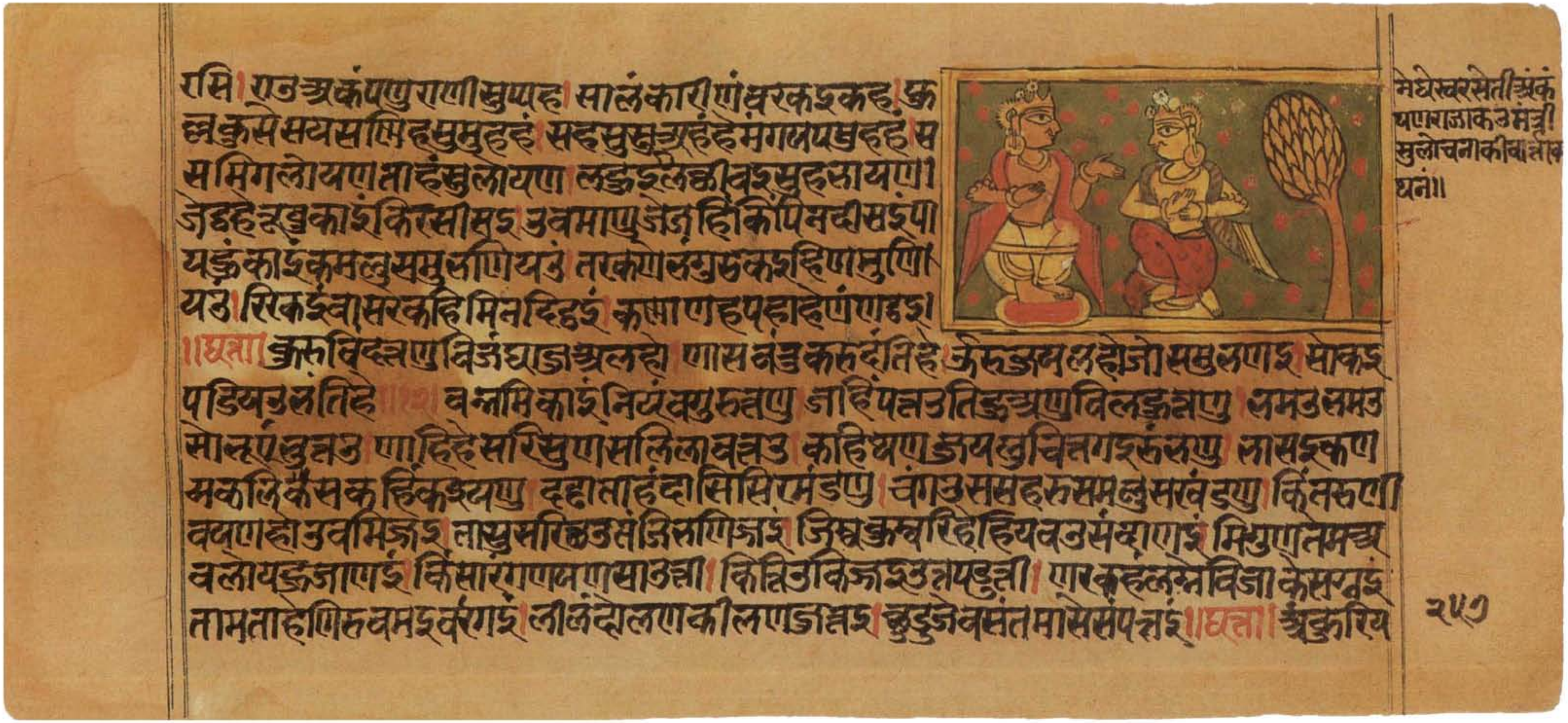

उसमें राजा अकम्पन, रानी सुप्रभा है। अलंकरों से युक्त वह ऐसी लगती है मानो वर (श्रेष्ठ) कवि की कथा हो। खिले हुए कमलों के समान मुखवाले हेमांगद प्रमुख उसके एक हजार पुत्र हैं। उनकी बहन मृगनयनी सुलोचना है। और छोटी सुखभाजन लक्ष्मीवती। उनमें-से बड़ी के रूप का क्या वर्णन किया जाये कि जिसके लिए कोई उपमान ही नहीं दिखाई देता। पैरों को कमल के समान क्यों कहा गया? वह क्षणभंगुर होता है, कवि ने इसका विचार ही नहीं किया। नक्षत्र दिन में कहीं भी दिखाई नहीं देते, मानो जैसे वे उस कन्या के नखों की प्रभा से नष्ट हो गये।

घत्ता—जो कवि छोटे से शंख को जंघायुगल के तथा हाथी की क्षणभंगुर सूँड को ऊरुयुगल के समान बताता है वह भ्रान्ति में पड़ा हुआ है॥ १२॥

१३

उसके उन नितम्बों के भारीपन का क्या वर्णन करूँ कि जहाँ त्रिभुवन छोटा पड़ जाता है। जलावर्त (भँवर) उसकी नाभि के समान नहीं है, लोगों के द्वारा उसका घूम-घूमकर भोग किया जाता है। चित्त की गति को रोकनेवाला स्तनयुगल कहाँ! और कहाँ कविगण उसे स्वर्णकलश बताता है! एक तो वे (स्वर्णकलश) आग में तपाये जाते हैं, और दूसरे उनसे दासी के शिर का मण्डन किया जाता है। खण्ड और कलंक-सहित चन्द्रमा अच्छा, परन्तु उससे युवती के मुख की उपमा क्यों की जाती है? उसके समान तो उसी को कहा जाना चाहिए। जिस प्रकार कुमारी का हृदय प्रकट होता है, वैसा अवलोकन मृग नहीं जानता। फिर उसे मृगनयनी क्यों कहा गया? कितनी उक्ति-प्रतिउक्ति दी जाये! नख से लेकर केशों के अग्रभाग तक उसके जितने उत्तम अंग हैं वे निरुपम हैं। इतने में शीघ्र बसन्त मास में लीलादोलन और क्रीड़ा की युक्तियाँ आ गयीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

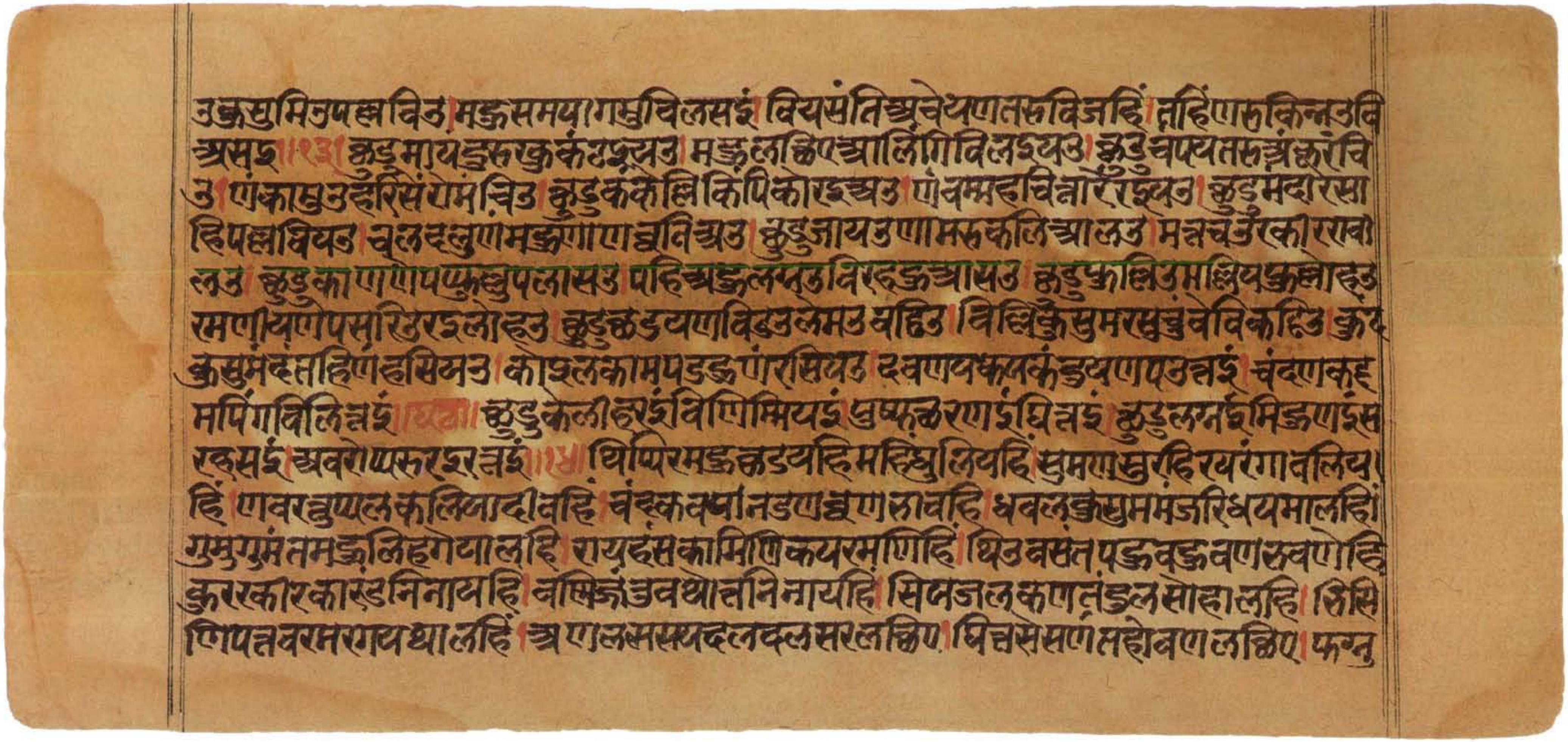

घत्ता—अंकुरित, कुसुमित और पल्लवित वसंत समय का आगमन शोभित है। जिस बसन्त में अचेतन तरु भी विकास को प्राप्त होते हैं उसमें क्या मनुष्य विकसित नहीं होता ?॥ १३॥

१४

शीघ्र ही आम्रवृक्ष कण्टकित हो गया, मधुलक्ष्मी ने आलिंगन करके उसे ग्रहण कर लिया। शीघ्र चम्पक वृक्ष अंकुरों से अंचित हो गया मानो कामुक हर्ष से रोमांचित हो गया। शीघ्र अशोक वृक्ष कुछ-कुछ पल्लवित हो उठा मानो ब्रह्मरूपी चित्रकार ने उसकी रचना की हो; शीघ्र ही मन्दार की शाखा पल्लवित हो गयी मानो चलदल (पीपल) को मधु ने नचा दिया हो। शीघ्र नमेरु (पुन्नाग वृक्ष) कलियों से लद गया और मतवाले चकोर और कीरों की ध्वनियों से गूँज उठा। शीघ्र ही कानन में टेसू वृक्ष खिल गया और पथिकों के लिए विरहाग्नि लगने लगी। शीघ्र ही जुही का पुष्प-समूह खिल उठा और रमणीजनों में रतिलोभ बढ़ने लगा। शीघ्र ही भ्रमररूपी विटजनों में मद बढ़ गया और उन्होंने लताओं के कुसुमरस को चूमकर खींच लिया। कुन्दवृक्ष अपने पुष्परूपी दाँतों से हँसने लगा और कोयल ने मानो काम का नगाड़ा बजाना शुरू कर दिया। दमनक लता से प्रयुक्त भित्तितल और चन्दन के कीचड़-समूह से लिप्त—

घत्ता—शीघ्र ही केलिगृह बना दिये गये और उनमें पुष्पों के बिछौने डाल दिये गये। शीघ्र ही वेगयुक्त मिथुन रति में रत हो गये॥ १४॥

१५

सघन मधु के छिड़कावों और फूलों की सुरभि रज की रंगोली से धरती रँग उठी। वसन्तरूपी प्रभु, नव रक्तकमलों के कलिकारूपी द्वीपों, मयूररूपी नट के नृत्यभावों, धवल कुसुम-मंजरियों की पुष्पमालाओं के गुनगुनाते हुए भ्रमरों की गीतावलियों, राजहंस की कामिनियों द्वारा किये गये रमणों के साथ उपवन भवनों में स्थित हो गया। कुरर, कीर और कारंज पक्षियों के निनादों के द्वारा जो मानो स्तोत्रसमूह के द्वारा वर्णित किया जा रहा हो। श्वेत जलकणों से चावल की शोभा धारण करनेवाले, कमलिनी के पत्तों की पंक्तियों की थालियों के द्वारा, खिले हुए कमलों के समान आँखोंवाली वनलक्ष्मी ने मानो उसे शेषाक्षत समर्पित किया हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नन्दीश्वर द्वीप में फागुन के आनेपर, शीघ्र देवेन्द्र द्वारा नमित नन्दीश्वर द्वीप में, जिसका शरीर उपवास के श्रम से क्षीण हो गया है, स्तनयुगल के अन्त में हार लटका हुआ है, ऐसी पुत्री ने हँसते हुए मुखकमल से जिनपूजा के कमल के साथ राजा को देखा।

घत्ता—त्रैलोक्य पितामह जिन को प्रणाम कर, नवपराग से अंचित और मधुकरकुल के मुख से चुम्बित उस कमल को राजा ने अपने सिरपर धारण कर लिया॥ १५॥

१६

पिता ने प्रिय वचनों से पुत्री का सत्कार किया और भोजन (पारणा) करो यह कहकर उसे विसर्जित कर दिया। सुन्दरी गयी और अपने घर पहुँची। पिता के मन में चिन्ता उत्पन्न हुई। उसने सब भटजनों को दूर हटा दिया। राजा ने मन्त्री से विचार प्रारम्भ किया—"ऋतुदिन में (मासिक धर्म के दिनों में) कन्या के गलित और लाल आठों अंग मुझे इस प्रकार कष्ट देते हैं मानो कुपुत्र के द्वारा किये गये दुश्चरित हों, इसलिए शीघ्र नये वर को खोजो। कुमारी कन्या को घर में कितना रखा जाये! किसी कुलीन और गुणवान् व्यक्ति को दी जाये।" सागर मन्त्री कहता है — "चक्रवर्ती का पुत्र, कमल के समान मुखवाला अर्ककीर्ति है, कन्या उसको दीजिए, किसी दूसरे लोक-सामान्य सामन्त से क्या?" सिद्धार्थ (मन्त्री) कहता है कि प्रभंजन नाम का सुन्दर राजा है, जो मानो साक्षात् स्वयं कामदेव हो। रथवर बली वज्रायुध और मेघेश्वर भी हैं।

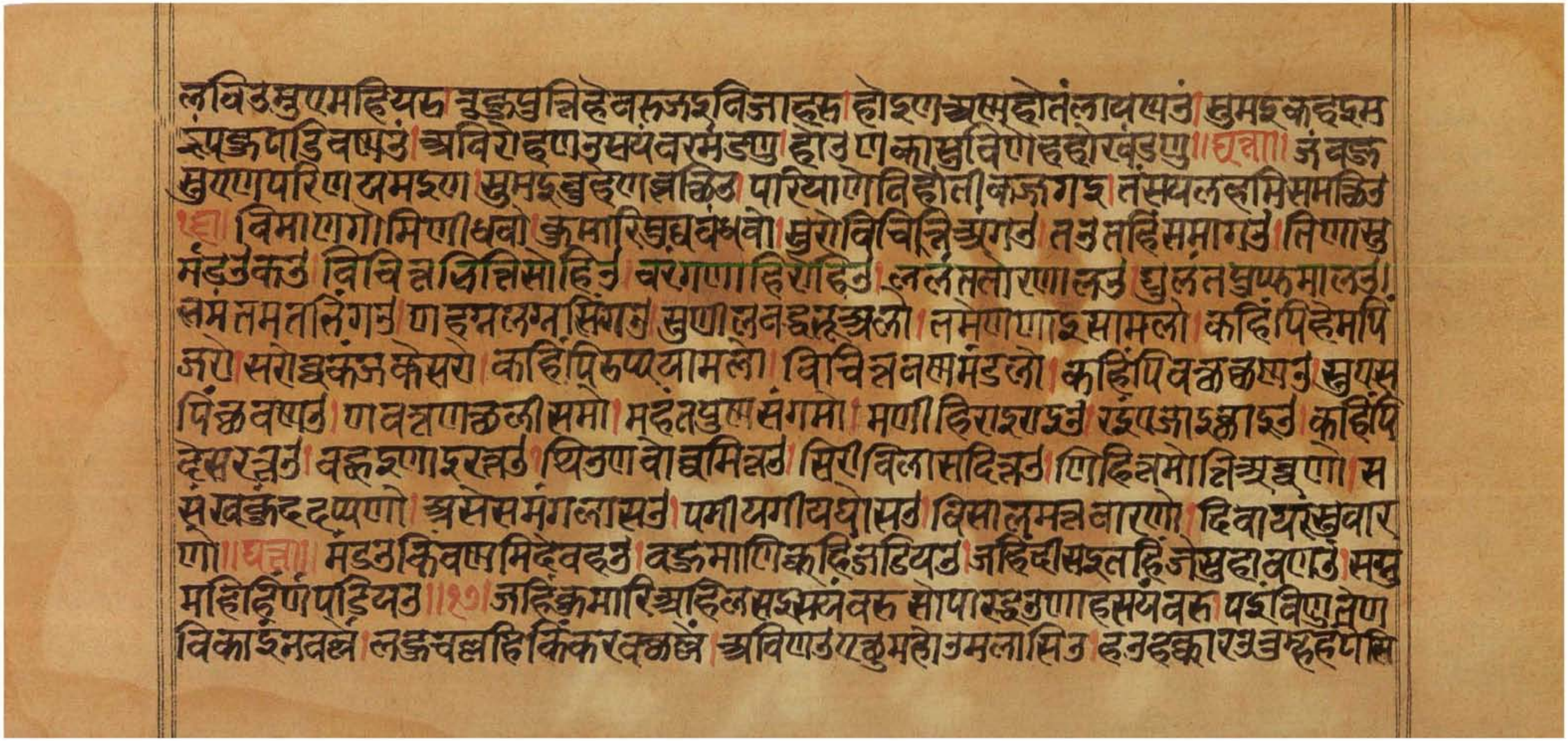

तब सर्वार्थ मन्त्री बोला — "यदि मनुष्य को छोड़कर, तुम्हारी पुत्री का वर विद्याधर हैं, तो किसी अन्य में वह लावण्य नहीं है।" सुमति ने कहा — "हे प्रभु, मैंने स्वीकार किया। सबसे अविरोधी बात यह है कि स्वयंवर किया जाये, जिससे किसी के भी स्नेह का खण्डन न हो।"

घत्ता—इस प्रकार बहुशास्त्रज्ञ परिणतबुद्धि सुमति मन्त्री ने जो प्रार्थना की उससे कार्य की गति होगी, यह जानकर सबने उसका समर्थन किया॥ १६ ॥

१७

उस अवसर पर विमानरूपी लक्ष्मी का स्वामी और कुमारी का पूर्वजन्म का भाई चित्रांगद देव वहाँ आया। उसने सुन्दर मण्डप की रचना की, जो विचित्र भित्तियों से शोभित, झूलते हुए तोरणमालाओं, हिलती हुई पुष्पमालाओं से युक्त, मतवाले भ्रान्त भ्रमरोंवाला और अपने शिखरों से आकाश के अग्रभाग को छूता हुआ। नीलमणियों से निबद्ध भूमितल ऐसी लगता है जैसे अन्धकार से काला हो गया हो, कहीं पर स्वर्ण से पीला कमलपराग से युक्त सरोवर हो, कहीं चाँदी से स्वच्छ ऐसा लगता है मानो प्रदीप्त चन्द्रमण्डल हो, कहीं वस्त्रों से आच्छादित ऐसा लगता है मानो शुकों की पूँछों के रंग का हो। नवतृणस्थली के समान और महान् पुण्यों का संगम, मणियों की शोभा से शोभित और कान्ति से आच्छादित, कहीं रक्त दिखाई देता है जैसे वधू के द्वारा अनुरक्त हो। श्री के विलास से दीप्त जो नवसूर्य के समान स्थित है, मोतियों के अर्चन से निहित, शंख-मंगल-कलश और दर्पण से सहित, अशेष मंगलों का आश्रय, प्रगीत-गीतघोषोंवाला, विशाल मत्त गजोंवाला और सूर्य की किरणों को आच्छादित करनेवाला।

घत्ता—हे देव, मैं मण्डप का क्या वर्णन करूँ! अनेक माणिक्यों से जड़ा हुआ वह जहाँ दिखाई देता है वहीं सुहावना लगता है, मानो स्वर्ग ही धरती पर आ पड़ा हो॥ १७॥

१८

जिसमें कुमारी स्वयं अपने वर की इच्छा करती है ऐसे पति का स्वयंवर प्रारम्भ किया गया है। तुम्हारे बिना किंकर वत्सल उस नवीन से क्या ? आप शीघ्र चलें, किसी दोष के कारण यहाँ अविनय न हो, मैं तुम्हें बुलाने के लिए भेजा गया हूँ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह सुनकर कुतूहल हुआ। भेरी बजा दी गयी। और भारी बल के साथ सेना इकट्ठी हुई। मेरु के समान धीर एवं विश्वरूपी कमल के लिए सूर्य के समान भरतेश्वर यह सुनकर चल पड़ा। तब शत्रु की गजघटा का मर्दन करनेवाला अर्ककीर्ति नाम का उसका पुत्र भी चल पड़ा. बली रथवर वज्रायुध भी चल पड़ा। घनरव भी चला मानो कामदेव हो। इस प्रकार मनुष्य और विद्याधर राजा जाकर उस मण्डप में आसीन हो गये। जबतक राजाओं द्वारा अकम्पन को प्रणाम किया गया तबतक तरुणी (सुलोचना) को रथ पर चढ़ा दिया गया। धाय के साथ

आभूषणों से शोभित होती हुई वह अपने हजारों भाइयों से रक्षित थी। महेन्द्र सारथि ने उस ओर अपने घोड़े चलाये जहाँ राजकुमार बैठे हुए थे। कंचुकी बताता है और सुन्दरी/कुमारी देखती जाती है। एक भी राजा उसके मन को अच्छा नहीं लगता।

घत्ता—वहाँ अर्ककीर्ति प्रलय के सूर्य समान और बलि भुजबलि के समान था। वज्रायुध वज्र के समान दिखाई दिया। परन्तु उसे कोई भी राणा अच्छा नहीं लगता॥ १८ ॥

१९

जहाँ-जहाँ वह सुन्दरी अपने को दिखाती वहाँ-वहाँ राजपुत्रों के शरीरों को सन्तप्त कर देती। कोई निश्वास लेता, कोई लम्बी साँस छोड़ता, कोई अपने आपको बार-बार अलंकृत करता, कोई कंठाभरण को ठीक करता। कोई स्वयं को दर्पण में देखता। कोई अपने अभग्न नखों को देखता कि जो अभी इसके स्तनों को नहीं लगे हैं, पूर्वभव में मैंने अपने मन का निग्रह नहीं किया, मैं इसके कण्ठग्रह को किस प्रकार पा सकता हूँ!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

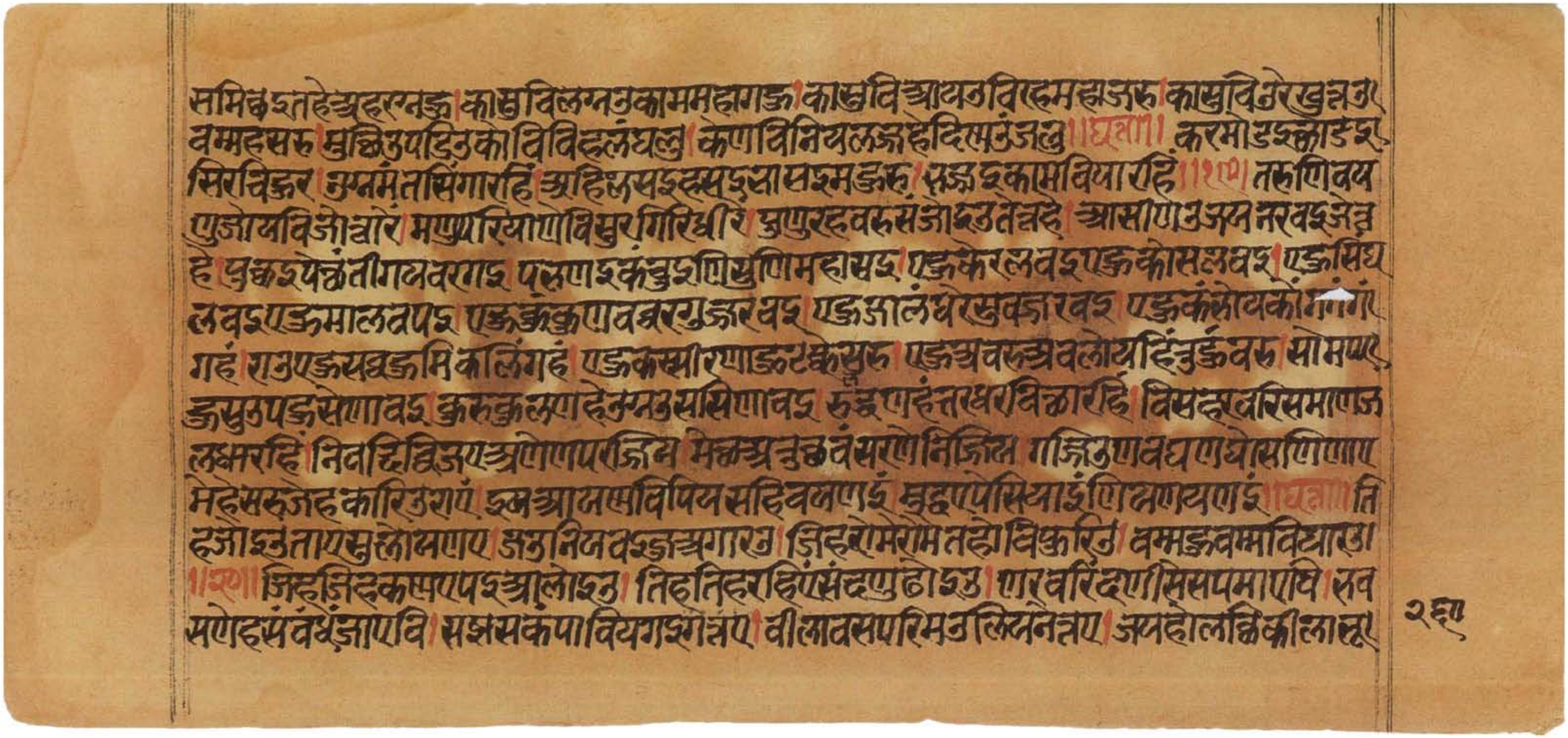

कोई उसके अधरों के अग्रभाग की इच्छा करता है और किसी के लिए कामरूपी महाग्रह लग जाता है। किसी के लिए विरह महाज्वर आ गया। किसी के हृदय में कामदेव का तीर चुभ गया। कोई विह्वलांग होकर मूर्च्छित हो गया और किसी ने अपनी लज्जा के लिए पानी दे दिया।

घत्ता—हाथ मोड़ता है, सिर के बाल खोलता है। उमड़ रहा है शृंगार जिनमें ऐसे कामविकारों से वह इच्छा करता है, हँसता है, मधुर बोलता है और भग्न होता है॥ १९॥

२०

सुमेरु पर्वत की तरह गम्भीर सारथि ने युवती का मुख देखकर और मन जानकर फिर से रथ उस ओर चलाया जहाँ राजा जयकुमार बैठा हुआ था। वह गजगामिनी उसे देखती हुई पूछती है। कंचुकी कहती है— "हे महासती सुनिए, यह केरलपति है, यह सिंहलपति है, यह मालवपति है, यह कोंकणपति है, यह बर्बरपति है। यह गुर्जरपति है, यह जालन्धर का ईश है, यह वज्जरपति है, ये कम्भोज-कोंग और गंगा के राजा हैं, यह कलिंग का राजा है। यह कश्मीर का राजा है, यह टक्केश्वर है। यह दूसरा तुम्हारा वर है, इसे देखो, सोमप्रभ का पुत्र यह सेनापति है जो कुरुकुल के आकाश में चन्द्रमा की तरह उदित हुआ है। अवरुद्ध कर लिया है धरती और आकाश के अन्तरों को जिन्होंने ऐसे विषधरों के समान बरसती हुई धाराओं के द्वारा इसने दिग्विजय में अनेक राजाओं को जीता है। युद्ध में म्लेच्छ और अतुच्छ वंश के राजाओं को पराजित किया है। जब वह नवघन के घोष के समान गरजा तो राजा (सोमप्रभ) ने उसका नाम मेघेश्वर रखा दिया।" इस प्रकार प्रिय सखी के इन वचनों को सुनकर उस मुग्धा ने अपने नेत्र प्रेषित किये।

घत्ता—उस सुलोचना ने जय करनेवाले अपने पति को इस रूप में देखा कि उसके रोम-रोम में मर्म को छेदनेवाला कामविकार हो गया॥ २०॥

२१

जैसे-जैसे कन्या ने पति को देखा वैसे-वैसे सारथि ने रथ आगे बढ़ाया। अशेष राजाओं को छोड़कर तथा पूर्वजन्म के स्नेह-सम्बन्ध से जाकर, सत्काम से प्रकम्पित है गति और गात्र जिसका, तथा लज्जा से जिसके नेत्र मुकुलित हो गये हैं, ऐसी उसने जयकुमार के लक्ष्मी की क्रीड़ा के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भूमिस्थल-उरस्थल में माला डाल दी। उसने अंजली जोड़े हुए कुमारी को ऐसे ग्रहण कर लिया मानो कामदेव ने कुसुमों की माला स्वीकार कर ली हो। भरत शीघ्र ही अपने रथ के साथ साकेत चला गया। यहाँ युवराजों में दुर्बुद्धि बढ़ने लगी। युवराज अर्ककीर्ति का दुर्मर्षण नाम का मन्त्री था जो दुर्धर, दुर्जन, दुष्ट, दुराशय, सज्जनों को दोष लगानेवाला और मित्रसमूह को सैकड़ों भागों में विभाजित करनेवाला था। मत्सर से भरकर उसने कहा — ''जहाँ अहिंसा होती है वहाँ निश्चय से धर्म है। जहाँ अरहन्त देव हैं वहाँ इन्द्र है, जहाँ मुनिवर हैं वहाँ इन्द्रिय-निग्रह है। जहाँ राजा है वहाँ रत्नों का संग्रह है। ऊँट या गधे के द्वारा नर-समूह का अवलम्बन नहीं होता। घण्टावलम्बन गजराज के शोभित होता है। घोड़ा, हाथी और स्त्री आदि समस्त रत्न नरश्रेष्ठ राजा के होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

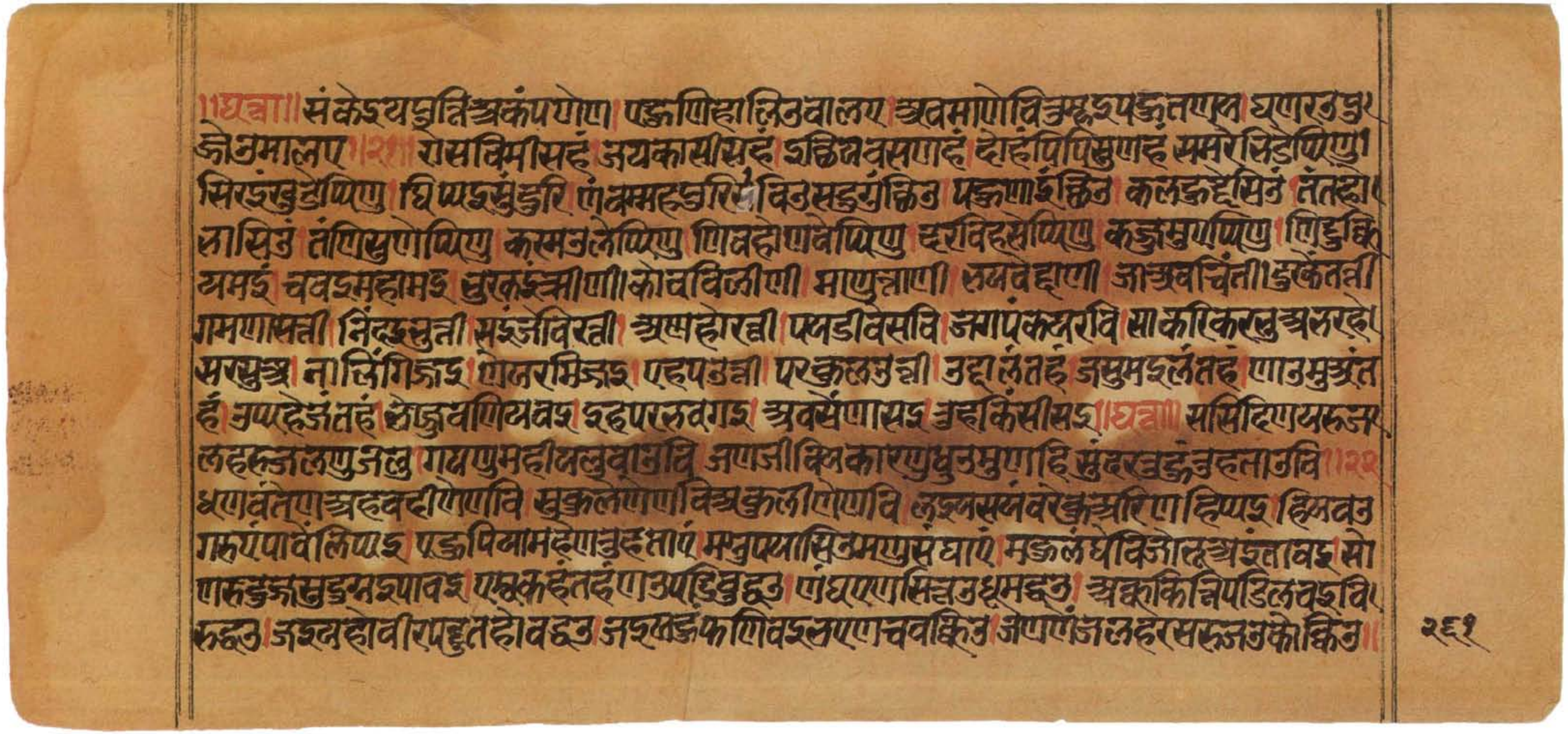

घत्ता—राजा अकम्पन ने पुत्री की ओर इशारा किया। इसलिए बाला ने इसकी ओर देखा। तुम्हारा अपमान कर चाचा के पुत्र मेघेश्वर (जयकुमार) का इसने सम्मान किया॥ २१॥

२२

इसलिए क्रोध से भरे हुए दुःख की इच्छा रखनेवाले दोनों ही दुष्टों — जयकुमार और काशीराज अकम्पन से युद्ध में भिड़कर, सिर काटकर सुन्दरी को इस प्रकार ले लिया जाये जैसे कामपुरी हो। विद्वानों के द्वारा निन्दनीय, उसके द्वारा कहे गये कलह के उद्देश्य की राजा ने भी इच्छा की। यह सुनकर, राजा को प्रणाम कर, थोड़ा हँसकर, कार्य छोड़कर, अपायबुद्धि महामति मन्त्री कहता है — "भूख से क्षीण, कोप से विलुप्त, मान में ऊँची, भय से खिन्न, उन्मत्त दुःख से सतायी हुई, निद्रा में लीन, गमन में आसक्त, स्वयं ही से विरक्त, दूसरे में अनुरक्त है। हे विश्व-कमल के रवि, भरतेश्वर-पुत्र, प्रकट वेश्या के समान, सूँड के समान हाथोंवाली, उसका आलिंगन नहीं करना चाहिए; उसके साथ रमण नहीं करना चाहिए। यह परकुलपुत्री कही जाती है। इसे उड़ाते हुए, यश को मैला करते हुए, न्याय को छोड़ते हुए, कुमार्ग में जाते हुए, हे युवराज! तुम्हारी इहलोक और परलोक की गति अवश्य नष्ट होगी। तुम्हारे द्वारा क्या कहा जा रहा है!

घत्ता—शशि-दिनकर-जलधर-अग्नि-जल-गगन-धरती और पवन, तुम और तुम्हारे पिता, हे सुन्दर! जनजीवन के कारण हैं, इसे तुम निश्चित रूप से जानो॥ २२॥

२३

धनवान् के द्वारा अथवा दीन के द्वारा, अकुलीन के द्वारा अथवा कुलीन के द्वारा स्वयंवर में ली गयी कन्या का अपहरण नहीं किया जाता। इससे हृदय भारी पाप से लिप्त होता है। यह मार्ग तुम्हारे पितामह (ऋषभ), तुम्हारे पिता (भरत) और मनुसमूह ने प्रकाशित किया है। इसका उल्लंघन कर जो प्राणियों को सताता है वह मनुष्य अपयश और दुर्गति को प्राप्त करता है।" लेकिन यह सब कहने पर भी युवराज अर्ककीर्ति प्रतिबुद्ध नहीं हुआ, उलटे जैसे आग में घी डाल दिया गया हो। वह विरुद्ध होकर कहता है कि "जब उसे वीरपट्ट बाँधा गया, और जब नागराज भय से चौंक गया था, और पिता ने मेघस्वर को 'जय' कहकर पुकारा था,

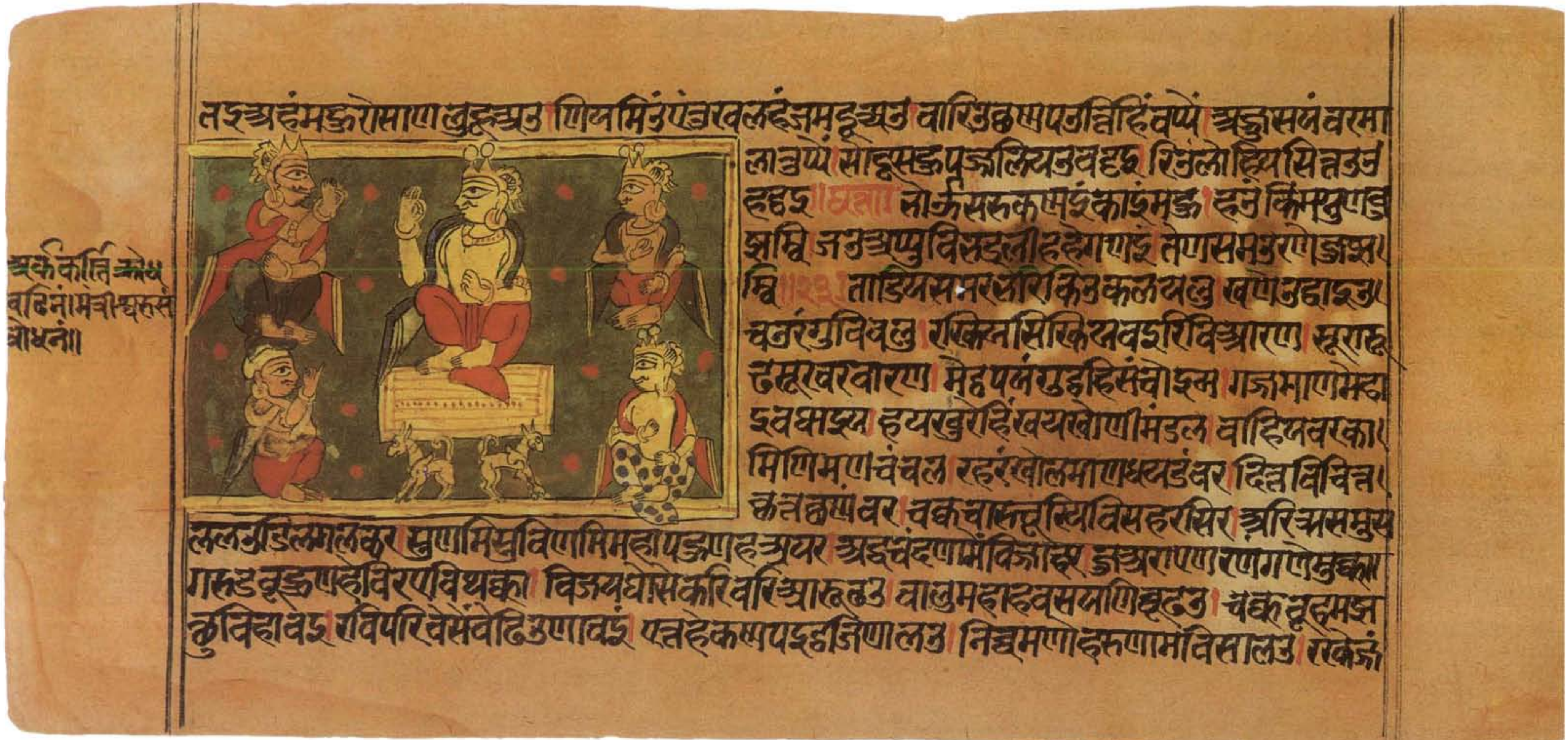

तभी मेरी क्रोधाग्नि भड़क उठी थी और दुष्टों के लिए यमदूत की तरह मैंने नियन्त्रित कर लिया था। पिता ने अपनी प्रच्छन्न उक्तियों से मुझे मना कर दिया था। लेकिन आज स्वयंवरमाला के घी से वह (क्रोधाग्नि) असह्य रूप से प्रज्वलित हो रही है, वह शत्रु के रक्त से सिंचित होकर ही कम होगी।

घत्ता—अरे यह अवसर है, कन्या से मुझे क्या ? क्या मैं मार्ग नहीं समझता हूँ। जय अपने को योद्धाओं की पंक्ति में गिनता है मैं उसके साथ युद्ध में लड़ूँगा''।॥ २३॥

२४

युद्ध के नगाड़े बज उठे। कलकल होने लगा। एक पल में चतुरंग सेना उठ खड़ी हुई, रक्षित और शिक्षित तथा शत्रुओं का विदारण करनेवाले शूरों से आरूढ़ बहादुर हाथी, महावतों के पैरों के अँगूठों से प्रेरित कर दिये गये। वे गरजते हुए मेघों की तरह दौड़े। अपने तीव्र खुरों से धरतीमण्डल को खोदनेवाले और उत्तम कामिनियों के समान चंचल मनवाले अश्व हाँक दिये गये। रथों पर उड़ते हुए ध्वजों का आडम्बर (फैलाव) था, चमकते हुए विचित्र छत्रों से आकाश ढक गया। चक्रों के चलने से विषधरों के सिर चूर-चूर हो गये। सैनिक हाथ में तलवार, झस, मूसल, लकुटि और हल लिये हुए थे। सुनमि और विनमि नाम के जो आकाशगामी महाप्रभु थे और आठ चन्द्र नाम के जो विद्याधर थे युवराज ने उन्हें युद्ध के मैदान में उतार दिया। वे गरुड़व्यूह की रचना कर आकाश में स्थित हो गये। अपने विजयघोष नामक महागज पर आरूढ़ होकर, बालक होकर भी सैकड़ों महायुद्धों का विजेता वह व्यूह के मध्य में स्थित होकर ऐसा शोभित होता है मानो सूर्य अपने परिवेश से घिरा हुआ हो। यहाँ कन्या ने जिनालय में प्रवेश किया, नित्यमनोहर नाम का जो अत्यन्त विशाल था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुचर-समूह के द्वारा रक्षा की जाती हुई वह कायोत्सर्ग से निश्चल मन होकर स्थित हो गयी। वह ध्यान करती है कि नाना जीवराशि का संहार करनेवाले विवाह विस्तार से क्या ? यहाँ दूत ने थोड़े में चक्रवर्ती के पुत्र द्वारा अवधारित काम बता दिया।

घत्ता—यहाँ दामाद ने पुलकित होकर कहा—"अकम्पन ! तुम धनुष धारण करो, शत्रु को जीतकर जबतक मैं बापस आता हूँ तबतक तुम तरुणी की रक्षा करो।" ॥ २४ ॥

२५

उसके साथ श्रेष्ठ वीर युद्ध में उद्‌भट सुकेतु और सूरमित्र योद्धा भी चले। हाथ में तलवार लिए हुए, शत्रुश्री का अपहरण करनेवाला देवकीर्ति, और श्रीधर के साथ जयवर्मा, ये पाँचों ही चन्द्र-सूर्य और नागकुल से उत्पन्न थे। पाँचों ही संग्राम का उत्सव करनेवाले थे। पाँचों ही दाढ़ों में विषधारण करनेवाले विषधर थे, पाँचों ही मुकुटबद्ध युद्धसाथी थे। पाँचों ही मानो भयंकर लोकपाल थे। पाँचों ही मानो पाँच सिंह थे। शत्रुरूपी तरुओं और मृगों के कान्तार का विनाश करनेवाले थे, पाँचों ही स्वयं पाँच अग्नियाँ थे। वहाँ छठा था मेघप्रभ विद्याधर राजा, जैसे इन्द्रियों के बीच में मन देखा जाता है, वैसा। जहाँ जय ही जीवरूप में व्यवसाय में लगा हुआ है, वहाँ शत्रु अपना कर्म संघात (सुलोचना का अपहरणादि कर्म) धारण नहीं कर सकता। जिसके भीतर मकरव्यूह रच लिया गया है, ऐसे विजयार्ध महागज के कन्धे पर स्थित सोमप्रभ का पुत्र (जयकुमार) ऐसा दिखाई देता है मानो वनगिरि के मस्तक पर सिंह बैठा हो। अपने चौदह भाइयों से

घिरा हुआ वह ऐसा मालूम होता है, जैसे सूर्य अपने किरणकलाप से विस्फुरित हो।

घत्ता—उठी हुई तलवारों से भयंकर, क्रोध से लाल अर्ककीर्ति और जयकुमार की सेनाएँ कन्या के कारण युद्ध में आ भिड़ीं॥ २५॥

२६

स्वर्ण के कंचुक और कवच पहने हुए, अमर्ष से भरी हुई, अपने अंगों को ढके हुए, अपने मुखों से हकारने की ललकार छोड़ते हुए, चक्र घुमातेहुए, इन्द्र को डरातेहुए, झस-कोंत और वज्र से भयंकर आकारवाले, झनझनाते धनुषों की डोरी की टंकारोंवाले, मुक्त तीरों से आकाश को आच्छादित करनेवाले, रक्त की धारा से धरती पर रेल-पेल मचा देनेवाले, अंकुशों के वश शान्त महागजोंवाले, रथों के समूह में धराशायी अश्वोंवाले, तलवारों के संघर्षण से उत्पन्न अग्नि की ज्वालाओं से जो पीले हैं; जहाँ कटे हुए सिर, उर और कर भूमितल पर व्याप्त हैं, भयंकर काल वैताल मिल रहे हैं, मारो-मारो का भयंकर कोलाहल हो रहा है, भैरुण्ड पक्षियों के झुण्डों के खण्ड अच्छे लग रहे हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धवल छत्र और ध्वजदण्ड खण्डित हैं, ऐसे दोनों सैन्य—

घत्ता—प्रगलित व्रणों के रुधिर से लाल और असामान्य युद्ध करते हुए देखे गये। दोनों ही सैन्य ऐसे लगते थे मानो युद्धलक्ष्मी ने दोनों को टेसू के फूल बाँध दिये हों॥ २६॥

२७

उस महायुद्ध में, कि जो रक्त से मत्त निशाचरों से विह्वल, धारणीयों के द्वारा खण्डित आँतों से बीभत्स, आहत गजों के मस्तकों के रक्त से कीचड़मय, रस और चर्बी से नदी की शंका उत्पन्न करनेवाला, ऊँची बँधी हुई पताकाओं के समूह को उखाड़नेवाला, देव-सुन्दरियों के सन्तोष की पूर्ति करनेवाला, उदर-ऊरु और उरतल को विदीर्ण करनेवाला, शत्रुओं की स्त्रियों के मणिहारों का अपहरण करनेवाला, डरपोक मुखों से निकलते हुए हा-हा शब्द को धारण करनेवाला और मृत्यु से भयंकर था, जयकुमार ने अपने पुंख लगे हुए और हुंकार की तरह तीखे तीर प्रेषित किये। उनसे घोड़े घायल हो गये, ध्वज छिन्न-भिन्न हो गये, गज भाग गये और निर्मद होकर मर गये। ऐसे अनुचर नहीं थे जो मारे न गये हों, ऐसे राजा नहीं थे जो विदीर्ण न हुए हों, ऐसा छत्र नहीं था जो छिन्न-भिन्न न हुआ हो, ऐसा वाहन न था जो क्षत न हुआ हो, ऐसा रथवर नहीं था जो भग्न न हुआ हो, ऐसा विद्याधर नहीं था जो आकाश में न गया हो। जब पक्षियों के पंखों से उड़ाया गया, मग्गणों (माँगनेवाले याचक और तीरों) के द्वारा कृपण की तरह तर्जित,

फूटी हुई कंचुकी और खूटे हुए मर्दल (मृदंग), टूटे हुए कवच और खुले हुए बालोंवाला आघातों से घूमता हुआ, समूह छोड़ता हुआ, चक्रवर्ती पुत्र का सैन्य भाग खड़ा हुआ तब समर के लिए उत्सुक अप्सराओं को हँसानेवाला, अपने भाई की हार पर ईर्ष्या धारण करता हुआ बाहुबलिदेव का पुत्र शीघ्र ही सोमवंश के तिलक (जयकुमार) के सम्मुख आया।

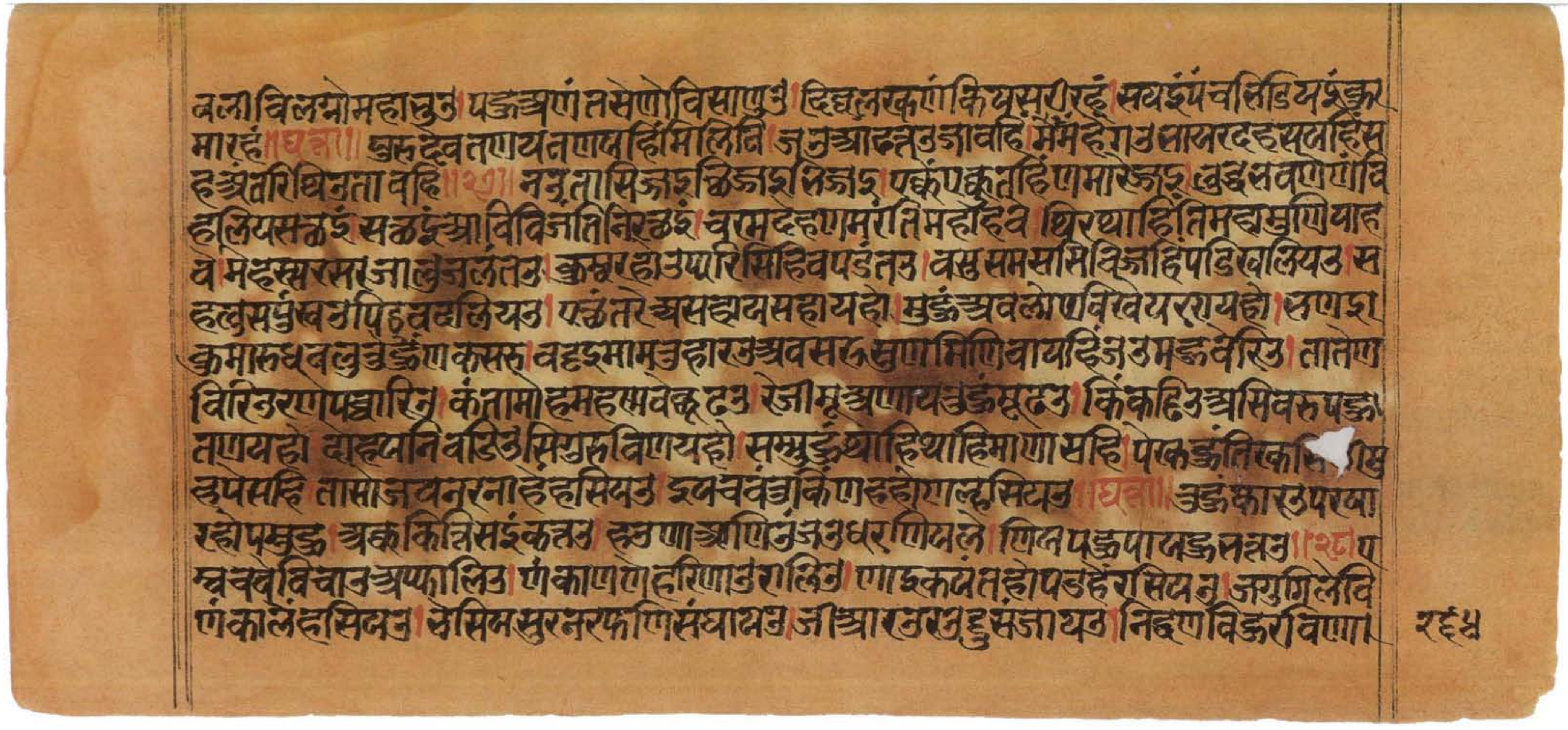

भुजबलि से लगा हुआ, महाभुज राजा अनन्तसेन भी अपने अनुज के साथ आया, दिव्य सैकड़ों लक्षणों से अंकित शरीरवाले पाँच सौ कुमारों के साथ।

घत्ता—पुरुदेव के पुत्र के पुत्रों ने जब कुमार जय को सब तरफ से घेर लिया, तब अपने एक हजार भाइयों के साथ हेमांगद आकर बीच में स्थित हो गया॥ २७॥

२८

वहाँ एक के द्वारा एक न त्रस्त किया जाता, न काटा जाता, और न भेदन किया जाता, न एक-दूसरे को मारा जाता, मानो जैसे लोभी के भवन में विह्वल समूह हो। वहाँ शस्त्र आते परन्तु निरर्थक चले जाते। जो चरम शरीरी होते हैं वे युद्ध में नहीं मरते। मानो महामुनि ही युद्ध में स्थित हों। मेघस्वर का जलता हुआ सर-जाल कुमार अर्ककीर्ति के ऊपर आग की तरह पड़ता है। आठ चन्द्रकुमारों की विद्याओं से प्रतिस्खलित होकर, इस तीर-समूह की फल और पुंख के साथ पीठ तक नष्ट हो गयी। इस बीच में असहायों के सहायक विद्याधर राजा का मुख देखकर कुमार कहता है—"तुम धवल बैल हो, गरियाल बैल नहीं, हे मामा, अब तुम्हारा अवसर है। सुनमि, तुम मेरे बैरी जय को नष्ट कर दो।" तब उसने भी युद्ध में दुश्मन को ललकारा—"हे कान्ता के मोह-समुद्र में डूबे हुए, हे मेघेश्वर ! तू मूर्ख है। तूने राजा के पुत्र के विरुद्ध तलवार क्यों खींची ? हे द्रोही, तू गुरुओं की विनय से पतित हो गया। भाग मत, मेरे सामने आ, देखूँ। अपने तीखे तीर प्रेषित कर।" इस पर राजा जयकुमार हँसा कि ऐसा कहते हुए तुम आकाश में क्यों नहीं गिर पड़े ?

घत्ता—परस्त्री के प्रमुख कारक (करानेवाले) तुम हो, अर्ककीर्ति स्वयं कर्ता है। मैं न्याय में नियुक्त हूँ और इस धरतीतल पर अपने स्वामी के चरणों का भक्त हूँ॥ २८॥

२९

इस प्रकार कहकर उसने धनुष का आस्फालन किया। जैसे कानन में सिंह गरजा हो। मानो यम का नगाड़ा बजा हो। मानो विश्व को निगलने के लिए काल हँसा हो। सुन-नर और नाग-समूह को डरानेवाला प्रत्यंचा का अत्यन्त भयंकर शब्द हुआ। निर्धन और विधुरों के विनाश में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

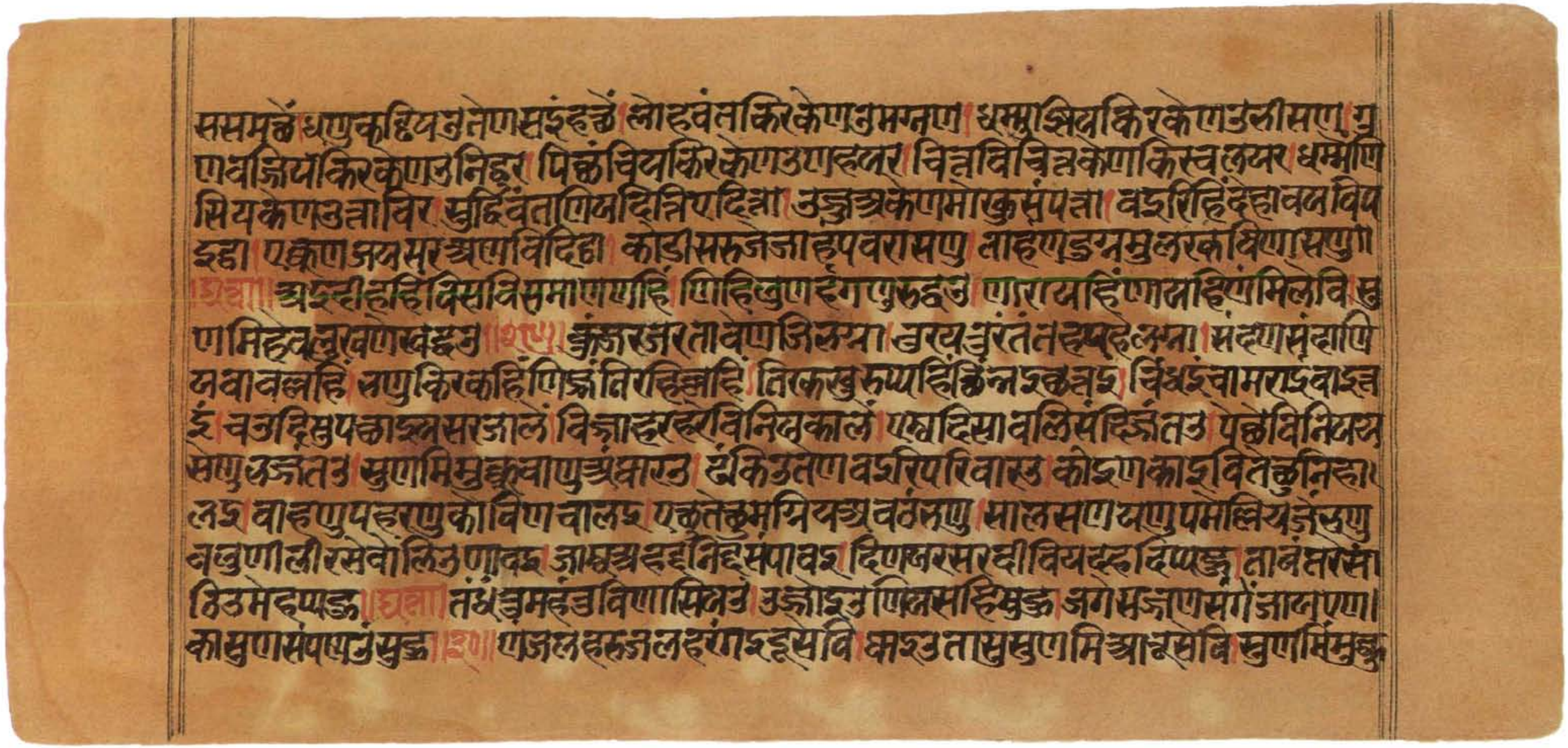

समर्थ उसने स्वयं अपने हाथ से धनुष चढ़ाया। कौन-से मग्गण (माँगनेवाले, और मार्गण = तीर), लोहवन्त (लोभ से युक्त, लोहे से सहित) नहीं होते, धमुज्झिय (डोटी से रहित और धर्म से रहित) कौन नहीं भीषण होते? गुण (डोरी और दयादि गुण) से वर्जित कौन नहीं निष्ठुर होते? पिच्छांचित (पंख और पुंख से सहित) कौन नहीं नभचर होते? चित्तविचित्त (चित्त से विचित्त और चित्र-विचित्र) कौन नहीं चंचलतर होते? मर्म का अन्वेषण करनेवाले (वम्मणेसिय) कौन सन्तापदायक नहीं होते? बुद्धि से युक्त अपने दीप्ति से भास्वर और सीधे कौन (तीर और मुनि) नहीं मोक्ष को प्राप्त होते? शत्रु की देह के अंगों में प्रविष्ट हुए एक जय के ही तीर नहीं थे बल्कि दूसरे भी काम को जीतनेवाले थे। कोटीश्वर (धनुष और काम) ही जिनका प्रवर आसन है उनके लिए अपना लक्ष्य और विनाश दुर्गम नहीं है।

घत्ता—अत्यन्त लम्बे और विष से विषम मुखवाले तीरों ने समस्त आकाश को अवरुद्ध कर लिया, मानो जैसे नागों ने मिलकर एक क्षण में सुनमि के बल को खा लिया हो॥ २९॥

३०

कुंजर ज्वर के भाव से भाग खड़े हुए, तुरंग (घोड़े) तुरन्त यम के मार्ग से जा लगे। स्यन्दन बरछियों से क्षत-विक्षत हो गये, बताओ सारथियों के द्वारा वे कहाँ ले जाये जायें? तीखे खुरपों से छत्र छिन्न-भिन्न हो गये। चिह्न चामर और वादित्रों ने भी सर-जाल से चारों दिशाओं को आच्छादित कर दिया और अपने समय से विद्याधरों का अपहरण कर लिया। इस प्रकार दिशाबलि दी जाती हुई और नष्ट होती हुई अपनी सेना को देखकर सुनमि ने अन्धकार का बाण छोड़ा, उसने शत्रु परिवार को ढक लिया। वहाँ कोई भी कुछ नहीं देखता, कोई भी वाहन और हथियारों को नहीं चलाता। यहाँ-वहाँ लोग सहारा माँगने लगे। नेत्र अलसाने लगे, जम्हाइयाँ छोड़ने लगे। जैसे सैन्य नीले रंग में डुबा दी गयी हो। जबतक लोग अभद्र नींद को प्राप्त होते, तबतक इस बीच में दिनकर तीर से दशों दिशाओं के पथों को आलोकित करता हुआ मेघप्रभ विद्याधर स्थित हो गया।

घत्ता—वह सारा अन्धकार नष्ट हो गया, अपने सुधियों के मुख आलोकित हो उठे। विश्व में सज्जन का संग मिलने पर किसे सुख नहीं होता!॥ ३०॥

३१

मानो जलधर जलधर की गति दूषित कर चला गया। इससे सुनमि क्रोध से भरकर दौड़ा। सुनमि ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भयानक सिंह तीर छोड़ा, मेघप्रभ ने स्फुरितानन श्वापद तीर छोड़ा, सुनमि ने जलता हुआ अग्नि तीर छोड़ा, मेघप्रभ ने जल बरसानेवाला मेघ तीर छोड़ा। सुनमि ने गुफासहित पर्वत तीर छोड़ा, मेघप्रभ ने बज्रसहित इन्द्र तीर छोड़ा, सुनमि ने बिषांकित महासर्प तीर छोड़ा, मेघप्रभ ने खगशिरोमणि गरुड़ तीर छोड़ा, सुनमि ने महान् महीधर तीर छोड़ा, मेघप्रभ ने दु:सह अग्नि तीर छोड़ा, सुनमि ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मतवाला महागज तीर छोड़ा, मेघप्रभ ने दंष्ट्राओंवाला सिंह तीर छोड़ा। इस प्रकार, सुनमि जो-जो तीर छोड़ता है उस-उस तीर को मेघप्रभ ध्वस्त कर देता है।

घत्ता—विद्याधर राजा सुनमि शत्रु के तीरों को सह नहीं सका और गरियाल बैल की तरह अपना मुँह टेढ़ा करके संग्रामभार को छोड़कर हट गया॥ ३१ ॥

३२

गजों और आठों चन्द्रकुमार विद्याधरों के होते हुए भी सुनमीश्वर के भग्न होने पर, मेघप्रभ के अस्त्रों से पराजित और भागता हुआ वह देवों से भी लज्जित नहीं हुआ। जिसने मदरूपी जल से मधुकर-कुल को सन्तुष्ट किया है, जिसका ऊँचा कुम्भस्थल आकाश को छूता है, जिसमें ध्वनि करते हुए स्वर्ण-घण्टियों का कोलाहल हो रहा है, जो सूँड के सीत्कारों से धरणीतल को सींच रहा है, जिसके दोनों उज्ज्वल दाँत लौह-शृंखलाओं से बँधे हुए हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

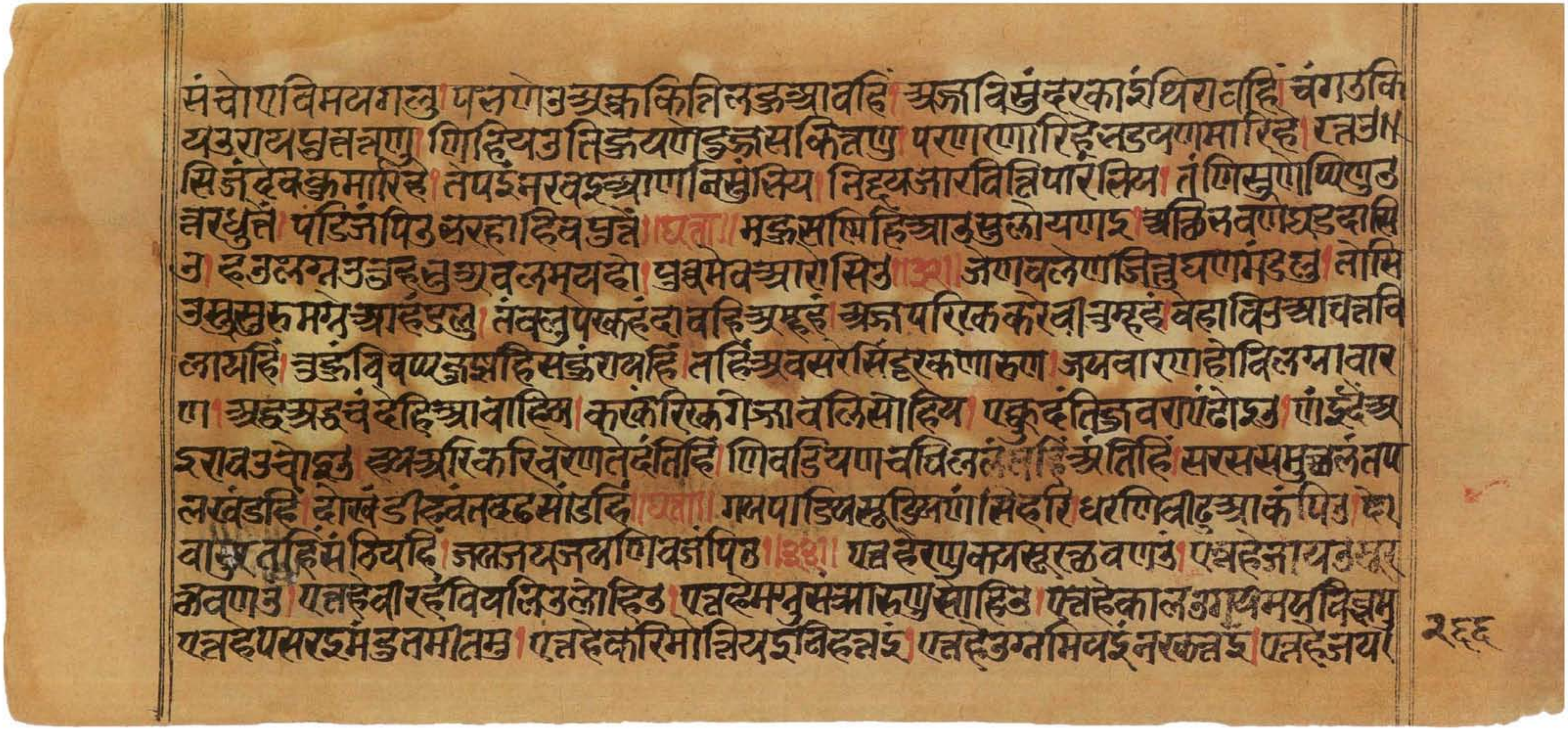

ऐसे मदगल महागज को प्रेरित करते हुए जयकुमार ने कहा—"हे अर्ककीर्ति, तुम शीघ्र आओ। हे सुन्दर, तुम आज भी देर क्यों करते हो? तुमने राजपुत्रत्व खूब अच्छी तरह निभाया, त्रिभुवन में अपयश का कीर्तन स्थापित कर दिया है कि जो तुम परस्त्री, योद्धासमूह को मारनेवाली देवकुमारी में अनुरक्त हो ? इससे तुमने राजा की आज्ञा को नष्ट कर दिया है। हे निर्दय, तुमने चार वृत्ति प्रारम्भ की है।" यह सुनकर भरत राजा के पुत्र अर्ककीर्ति ने उत्तर दिया—

घत्ता—"तुम मेरे समीप आओ। सुलोचना-जैसी मेरे घर में घटदासी हैं। पूर्व से ही आश्वस्त मैं तो तुम्हारे बाहुबल के मद के पीछे लगा हुआ हूँ॥ ३२॥

३३

जिस बल से तुमने मेघमण्डल जीता है और देवों सहित स्वर्ग में इन्द्र को सन्तुष्ट किया है वह बल तुम हमें बताओ, हम देखेंगे। आज तुम्हारी परीक्षा करेंगे। अभी तुम आवर्त और किरातों के साथ लड़े हो, तुम बेचारे राजाओं के साथ भी युद्ध करते हो।" ठीक इस अवसर पर सिन्दूरकणों से अरुण उसके गज जयकुमार के गज से आकर भिड़ गये। वे आठों के आठ चन्द्र विद्याधर कुमारों से प्रेरित थे और कक्षरिक्ख (करधनी) और वस्त्रों से शोभित थे। युवराज जयकुमार ने भी एक हाथी आगे बढ़ाया, मानो इन्द्र ने ऐरावत चलाया हो। शत्रु के श्रेष्ठ गज से आहत वे गज दाँतों, गिरती हुई नयी झूलती आँतों, सरस उछलते हुए मांसखण्डों, दो टुकड़े होती हुई दृढ़ सूँडों—

घत्ता—के साथ गिर पड़े और नष्ट हो गये मानो पहाड़ ही धरती पर आ पड़ा हो। आकाश में स्थित देवों ने 'हे नृप, जय-जय-जय' कहा॥ ३३॥

३४

यहाँ रण शूरों को अस्त कर रहा था और यहाँ सूर्यास्त हो गया। यहाँ वीरों का खून बह गया और यहाँ विश्व सन्ध्या की लालिमा से शोभित था। यहाँ काल मद और विभ्रम से रहित हो गया था और यहाँ धीरे-धीरे रात्रि का अन्धकार फैल रहा था। यहाँ गजमोती बिखरे हुए पड़े थे और यहाँ नक्षत्र उदित हो रहे थे,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ जय राजा का यश धवल हो रहा था और यहाँ चन्द्रमा का किरणसमूह दौड़ रहा था। यहाँ योद्धाओं के द्वारा चक्र छोड़े जा रहे थे और यहाँ विरह में चक्रवाक पक्षी विलाप कर रहे थे, इनमें कौन निशागम है और कौन सैनिकों का युद्ध है ? भटजन यह नहीं समझते और आपस में युद्ध करते हैं। तब उन्हें चाँपते हुए मन्त्रियों ने हटाया और रात्रि में युद्ध करते हुए उन्हें मना किया। युद्ध के रंग में रोष से भरे हुए दोनों सैन्य वहीं ठहर गये।

घत्ता—युद्ध के मैदान में राजा के काम में मृत्यु को प्राप्त हुआ तथा तीरों के शयनतल पर सोता हुआ (वह) प्रिय रात्रि में सहेलियों के द्वारा उसकी भावी पत्नी को दिखाया गया॥ ३४॥

३५

ईर्ष्या के कारण रूठी हुई कोई बोली—''तलवार की धार प्रिय के हृदय में प्रवेश कर गयी, जो उसमें अनुरक्त है उसे मैं कैसे अच्छी लग सकती हूँ? हतभाग्य मैं प्राणों से मुक्त क्यों नहीं होती?'' कोई कहती है—''हे प्रिय, जो मैंने स्वीकार किया था वह हृदय तुमने सियारिन को क्यों दे दिया ? जिसे मैंने पहले अपने दाँतों के अग्रभाग से काटा था वह (अब) पक्षिणी से खण्डित है।'' कोई कहती है—'हे प्रिय, हाथ मत बढ़ाओ।

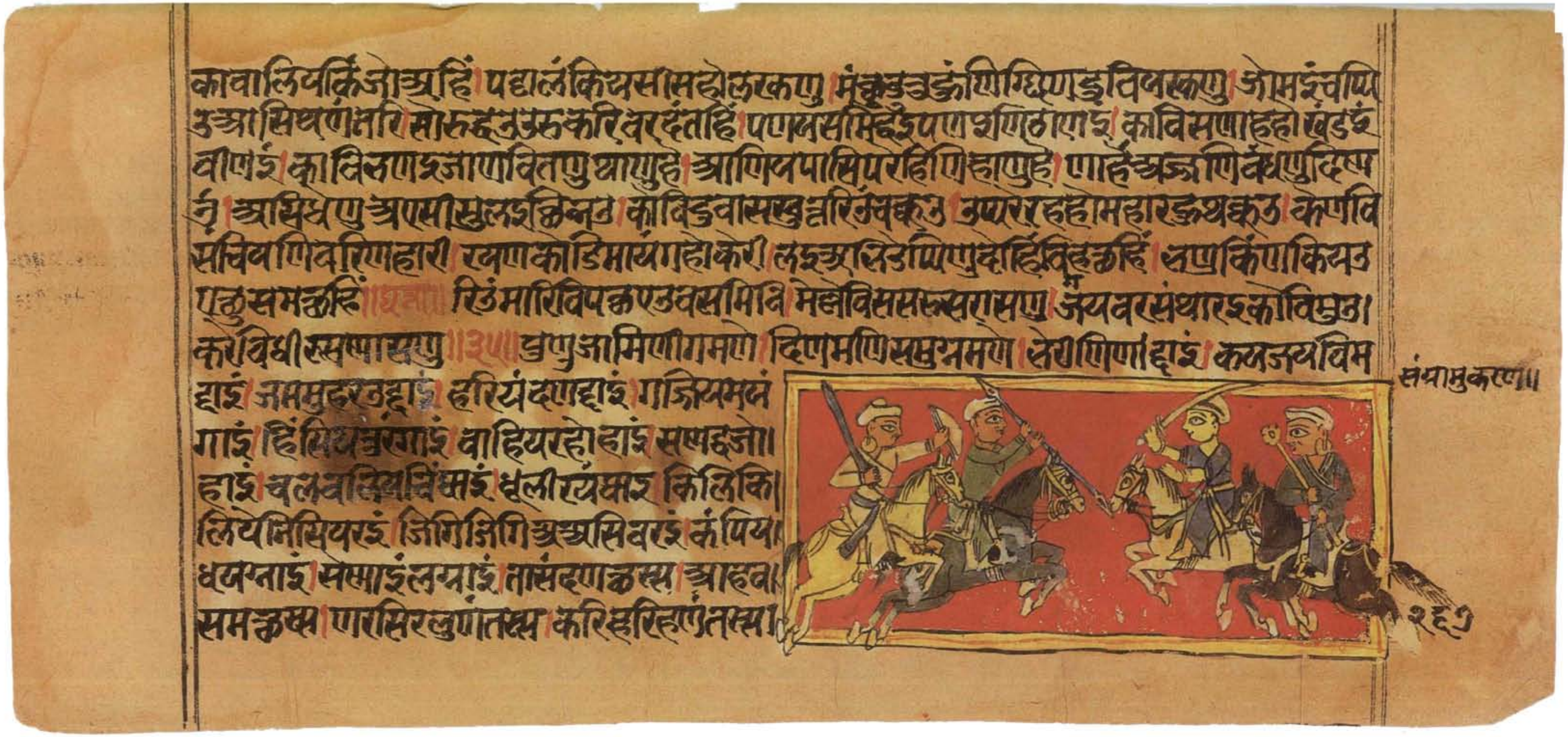

हे कापालिक, पट्ट से अलंकृत शिर के लक्षण क्या देखते हो, तुम मेरे लिए निर्दय और दुर्विदग्ध हो। जिसे मैंने स्तनों से चाँपा था वह उर गजवरों के दाँतों द्वारा अवरुद्ध है।'' कोई प्रणय से स्निग्ध प्रणयिनी के लिए यान स्वरूप अपने प्रिय की वीणाओं को खण्डित कर देती है। कोई कहती है कि शरीररूपी स्तम्भ समझकर, वह शत्रुओं के द्वारा नृप श्रेष्ठ के पास ले जाया गया। स्वामी ने उसे आँतों से बाँध दिया और कटारी से सिर काट लिया। जिसने अपने कठिन पाश से शत्रुचक्र को निमग्न कर लिया है ऐसा कोई मेरे रथ के ऊपर स्थित है। किसी ने राजा के ऋण को दूर करनेवाली हाथी की रत्नावली अपने दोनों हाथों से ले ली, बताओ समर्थों के द्वारा यहाँ क्या नहीं किया जाता ?

घत्ता—शत्रु को मारकर, फिर बाद में शान्त होकर और सर (तीर) सहित धनुष (शरासन) छोड़कर कोई गजवर की तृणशय्या पर मरकर संन्यास ग्रहण कर लेता है ॥ ३५ ॥

३६

फिर रात्रि के जाने और सूर्योदय होने पर जय के लिए संघर्ष करनेवाले नगाड़ों के शब्द होने लगे। यममुख की तरह रौद्र, हरिचन्दन से आर्द्र गरजते हुए हाथी, हिनहिनाते हुए अश्व, हाँके जाते हुए रथ-समूह, सन्नद्ध योद्धा, हिलती हुई पताकाएँ, चमकती हुई तलवारें। धरती के अग्रभाग को कँपाती हुई सेनाएँ भिड़ गयीं। तब युद्ध में समर्थ एक और रथ पर बैठे हुए, मनुष्यों के सिर काटते हुए, हाथी-घोड़ों को मारते हुए,

दानवों को ध्वस्त करते हुए लक्ष्मीवती के पुत्र जयकुमार को दूसरों के प्राणों का अपहरण करनेवाले, प्रहरणों की शंका से रहित आठ चन्द्र विद्याधरों ने, उत्पन्न है गर्व जिसे, ऐसी विद्या के प्रभाव से छिन्न-भिन्न कर दिया। कोंत-कम्पण-घनघन-मूसल-चाप और चक्रों को चूर-चूर करके छोड़ दिया। शस्त्रों के नष्ट हो जानेपर चित्त में समर्थ, सहायता की इच्छा रखनेवाले पुण्यवान्, धन्य और वीर जयकुमार राजा ने शरद्मेघों को जीतनेवाले घर में जिसे सिद्ध किया था, उस नागराज का स्मरण किया। वह शीघ्र अवतरित हुआ। वह नागपाश और युद्ध में तीव्र दिव्य अर्धेन्दु उसे देकर एक क्षण में नागिनीलोक चला गया। तब विजयशील सोमप्रभ के पुत्र ने ज्वालाएँ छोड़ते हुए दिशाओं को जलानेवाले अग्नि के समान, नाग के द्वारा दिये गये बाण से रथ के मुखभाग और धुरासहित सारथियों को जलाकर, जिसमें ध्वजसमूह ध्वस्त है, शत्रुओं के धड़ नाच रहे हैं, गृद्धकुल परिभ्रमण कर रहा है, ऐसे भटयुद्ध में प्रवेश कर उसने आठों ही चन्द्रमाओं को तुरन्त बाँध लिया, क्रूर शत्रुओं को सन्त्रस्त करनेवाले नागपाश से। क्रोध से लाल चक्रवर्ती के प्रिय पुत्र को पकड़ लिया।

घत्ता—जिसके पितामह जिन थे, और पिता राजाओं का स्वामी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो भी वह बन्धन को प्राप्त हुआ। हे माँ! देखो, कुमार राजा ने अपने दुष्कृत का फल किस प्रकार भोगा? ॥ ३६ ॥

३७

इस प्रकार कहते हुए घनस्तनोंवाली सुरवनिताओं ने जयकुमार के साहस की प्रशंसा की। देवसमूह ने पुष्पों की वर्षा की। रुनरुन करते हुए भ्रमरों ने गान किया। जयकुमार का विलास और दैव की चेष्टा विपरीत होती है। रथ में बैठकर कान्तिवान्, हाथ की अँगुलियों के अंकुश से गज को प्रेरित करता हुआ मेघस्वर (जयकुमार) अपने ससुर के घर में प्रविष्ट हुआ। पुरवर में विजय का आनन्द बढ़ गया। सभी लोग उसी समय परभव की तृप्ति से युक्त परमभक्ति से जिनभवन गये। जन्म और आवास के बन्धनों से मुक्त, त्रिलोक की पूजा के योग्य अर्हन्त की सभी राजाओं ने मिलकर अपने हाथ जोड़कर मुखरूपी कुहर से निकलती हुई सुन्दर वाणी से वन्दना की—"बहुमिथ्यात्व के बीज से उत्पन्न यह विशाल मोहरूपी जड़वाला, (संसाररूपी वृक्ष) विस्तीर्ण, चार गतियों के स्कन्धोंवाला, सुख की आशाओं की शाखाओंवाला, पुत्र-कलत्रों के सुन्दर प्रारोहों से सहित, बहुत प्रकार के शरीररूपी पत्तों को छोड़ने और ग्रहण करनेवाला,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

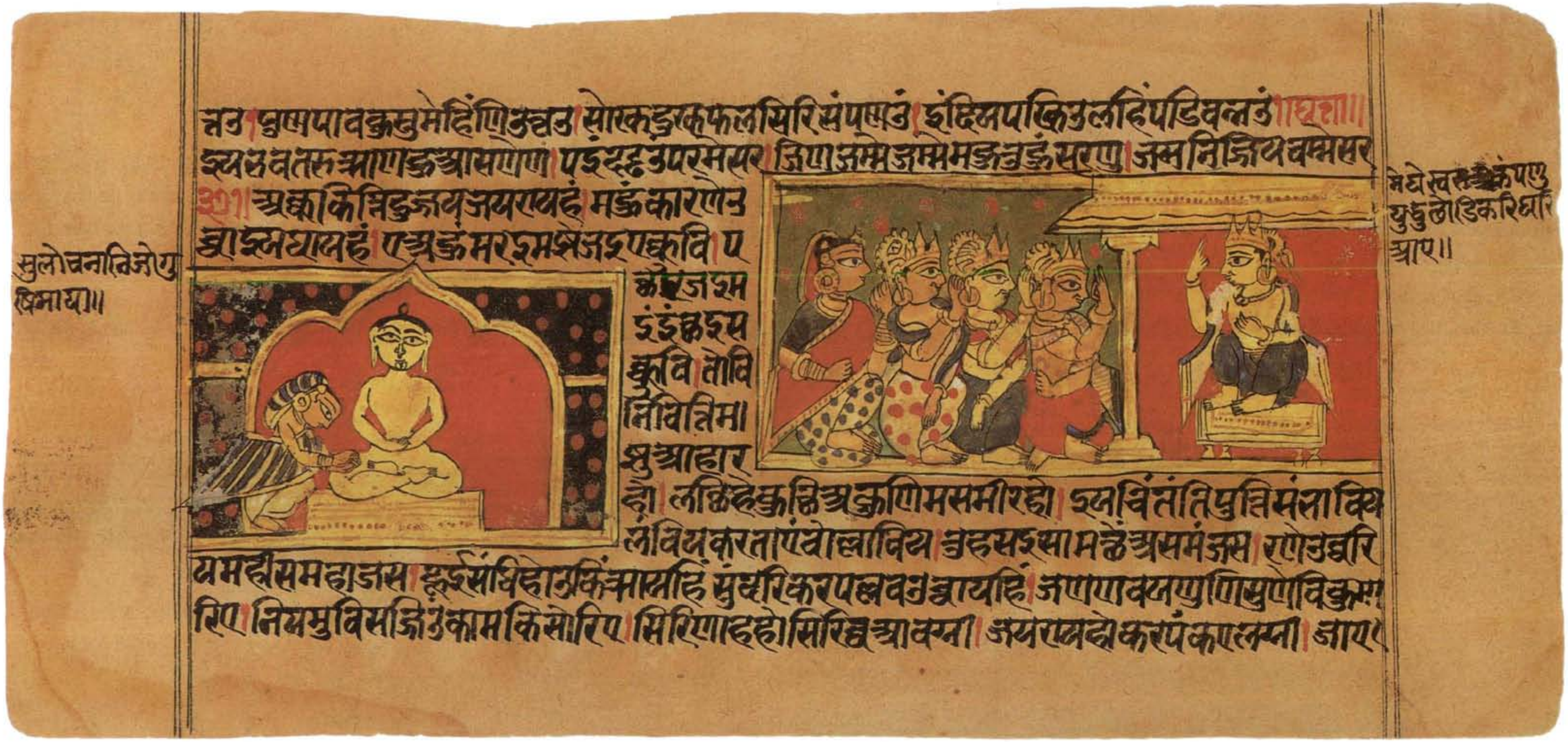

पुण्य-पापरूपी कुसुमों से नियोजित, सुख-दु:खरूपी फलों की श्री से सम्पूर्ण, इन्द्रियरूपी पक्षिकुलों के द्वारा आश्रित।

घत्ता—इस प्रकार के संसाररूपी वृक्ष को आपने ध्यानरूपी अग्नि के द्वारा भस्म कर दिया है ऐसे हे जिन, जन्म-जन्म में तुम मेरी शरण हो, कामदेव को जीतनेवाले आपकी जय हो''॥ ३७॥

३८

'मेरे कारण आघात करनेवाले अर्ककीर्ति और दुर्जेय जयकुमार इन दोनों में-से यदि एक भी मरता है, और उसके बाद यदि इन्द्र भी मुझे चाहता है तो भी मेरी आहार, लक्ष्मी और कुत्सित कुणिम शरीर से निवृत्ति।' इस प्रकार सोचती हुई, कायोत्सर्ग में स्थित पुत्री को पिता ने पुकारा—''हे सती, तुम्हारी सामर्थ्य से क्रोध से भरे हुए दोनों महायशस्वी राजा युद्ध से बच गये। शान्ति हो गयी। अब तुम क्या ध्यान करती हो, हे सुन्दरी! करपल्लव ऊँचा करो।'' अपने पिता के वचन सुनकर कुमारी कामकिशोरी ने अपना विनय समाप्त कर दिया। वह जयकुमार के हाथ से उसी प्रकार जा लगी, जिस प्रकार विष्णु से श्री जा लगती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुमार के पास स्नेह से जाकर और धरती पर दण्डासन से देह को धारण करते हुए, पैरों पर पड़ते हुए स्वामी की भक्ति से भरकर अकम्पन कहता है— "हम लोग मनुष्य हैं, आप परमेश्वर हैं। हम लोग पक्षी हैं, आप कल्पवृक्ष हैं। हम लोग कमलों के आकर हैं, आप दिवाकर हैं। हम कुमुदों के सरोवर हैं, आप चन्द्रमा हैं। अपने अनुपालितों से क्या रूठना, अपने भृत्यों को अभयदान दीजिए।"

घत्ता—इन शब्दों के द्वारा उसने भरत के पुत्र अर्ककीर्ति का मत्सर और मान दूर कर दिया तथा सुलोचना की बहन लक्ष्मीवती से उसका विवाह कर दिया।

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत इस काव्य का सुलोचना-स्वयंवर-वर्णन नाम का अट्ठाईसवाँ अध्याय समाप्त हुआ॥ २८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

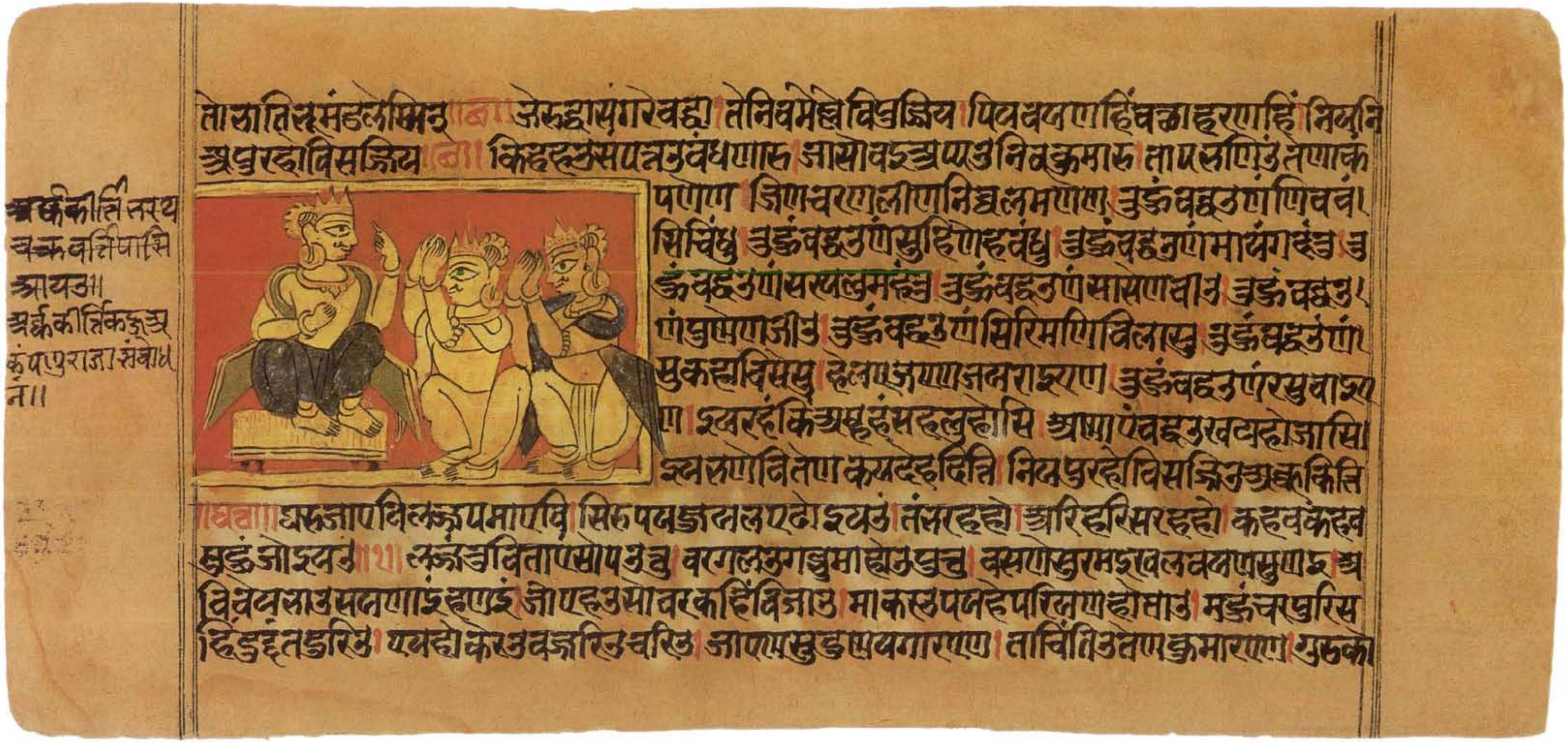

सन्धि २९

जो युद्ध में अवरुद्ध थे और बाँध लिये गये थे उन राजाओं को मुक्त कर उनका प्रिय वचनों और वस्त्राभरणों से सम्मान किया गया और उन्हें अपने-अपने घर के लिए विसर्जित किया गया।

१

जब कुमार अर्ककीर्ति यह सोचता है कि मैं बन्धन को प्राप्त क्यों हुआ ? तब जिन-चरण में लीन और निश्चल मनवाला राजा अकम्पन कहता है—"तुम बाँधे गये मानो राजवंश में पताका बँध गयी, तुम बाँधे गये मानो स्वजन-समूह बँध गया, तुम बाँधे गये मानो गजदन्त बाँध दिया गया, तुम बाँधे गये मानो तीर का महान् फलक बाँध दिया गया, तुम बाँधे गये मानो धान्य से बीज बँध गया, तुम बाँधे गये मानो पुण्य से जीव बँध गया, तुम बाँधे गये मानो सिर पर मणिविलास बाँध दिया गया, तुम बाँध दिये गये मानो सुकथा विशेष निबद्ध कर दी गयी। खेल-खेल में जय और जयराजा ने तुम्हें बाँध लिया मानो रसवादी ने (धातुवादी ने) रस को बाँध लिया हो। दूसरों की बात छोड़िए, हम लोगों के लिए तुम सफल होगे। अन्याय से दूषित व्यक्ति क्षय को प्राप्त होता है।" इस प्रकार कहकर उसके शरीर की दीप्ति बढ़ाकर अर्ककीर्ति को अपने घर के लिए विसर्जित किया।

घत्ता—घर जाकर लज्जा छोड़कर उसने अपना सिर (पिता के) चरणयुगल पर रख दिया तथा शत्रुरूपी सिंह के लिए श्वापद के समान भरत का मुख किसी प्रकार बड़ी कठिनाई से देखा॥ १॥

२

लज्जित होते हुए भी पिता ने उससे कहा कि "गर्भ गिर जाना अच्छा परन्तु ऐसा पुत्र न हो कि जो व्यसनों में रमता है, दुष्टों के वचन सुनता है, अविवेकशील होता है और स्वजनों को मारता है, जो ऐसा है वह कहीं भी चला जाये। यह अच्छा है, वह प्रजा और परिजनों को ताप न दे, मेरे चरपुरुषों ने इसका दुर्दान्त पापमय चरित मुझ से कहा है।" अत्यन्त दुर्नयकारक होते हुए उस कुमार ने अपने मन में विचार किया कि पिता के कोप से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

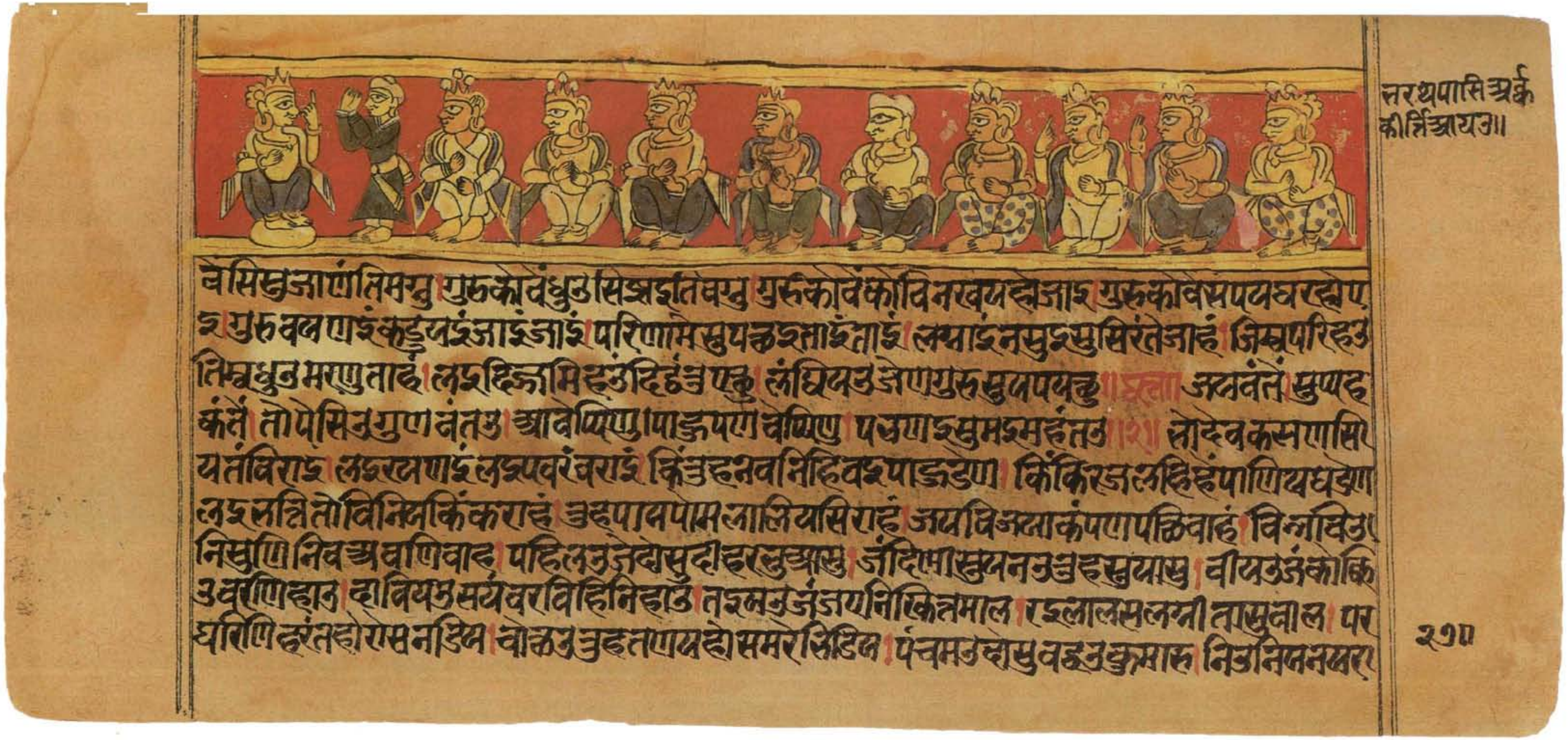

बच्चे मार्ग जानते हैं, पिता के कोप से विश्व में त्रिवर्ग सिद्ध होता है। पिता के कोप से कोई भी क्षय को प्राप्त नहीं होता। पिता के कोप से सम्पत्ति घर आती है। पिता के वचन जितने-जितने कडुए होते हैं वे परिणाम में उतने ही उतने प्रशस्त होते हैं। ये वचन जिसके कर्णकुहरों में नहीं जाते उनका जैसा पराभव होता है वैसा ही निश्चय से मरण होता है। लो, मैं स्वयं दृष्टान्त रूप में उपस्थित हूँ कि जिसने पिता से सुने पदार्थ का उल्लंघन किया।

घत्ता—जयशील सुप्रभा के पति काशीराज अकम्पन के द्वारा प्रेषित गुणवान् मन्त्री सुमति आकर और प्रणाम कर राजा से कहता है॥ २॥

३

"हे देव, कृष्ण-धवल और लाल रत्न तथा प्रवर वस्त्र ग्रहण करें। हे नवनिधियों के स्वामी! तुम्हें उपहारों से क्या? जल के घड़ों से समुद्र को क्या करना? तो भी भक्ति से तुम्हारे चरणकमलों में अपना सिर रखनेवाले, अपने ही अनुचर जय-विजय और अकम्पनादि राजाओं ने जो निवेदन किया है, उसे हे देव, सुनिए। उनका पहला दोष तो यह है कि दीर्घबाहुवाले तुम्हारे पुत्र को अपनी कन्या नहीं दी, दूसरा दोष यह है कि वरसमूह को आमन्त्रित किया और स्वयंवर विधि नियोग का प्रदर्शन किया, तीसरा दोष है कि प्रेम की इच्छा रखनेवाली बाला उससे (जयकुमार से) लग गयी और उसके गले में माला डाल दी। चौथा दोष यह है कि परस्त्री का अपहरण करते हुए तुम्हारे पुत्र से युद्ध में लड़ा। पाँचवाँ दोष यह है कि कुमार को बाँध लिया और युद्ध रंगमंच के उस वीर को अपने नगर ले आया।

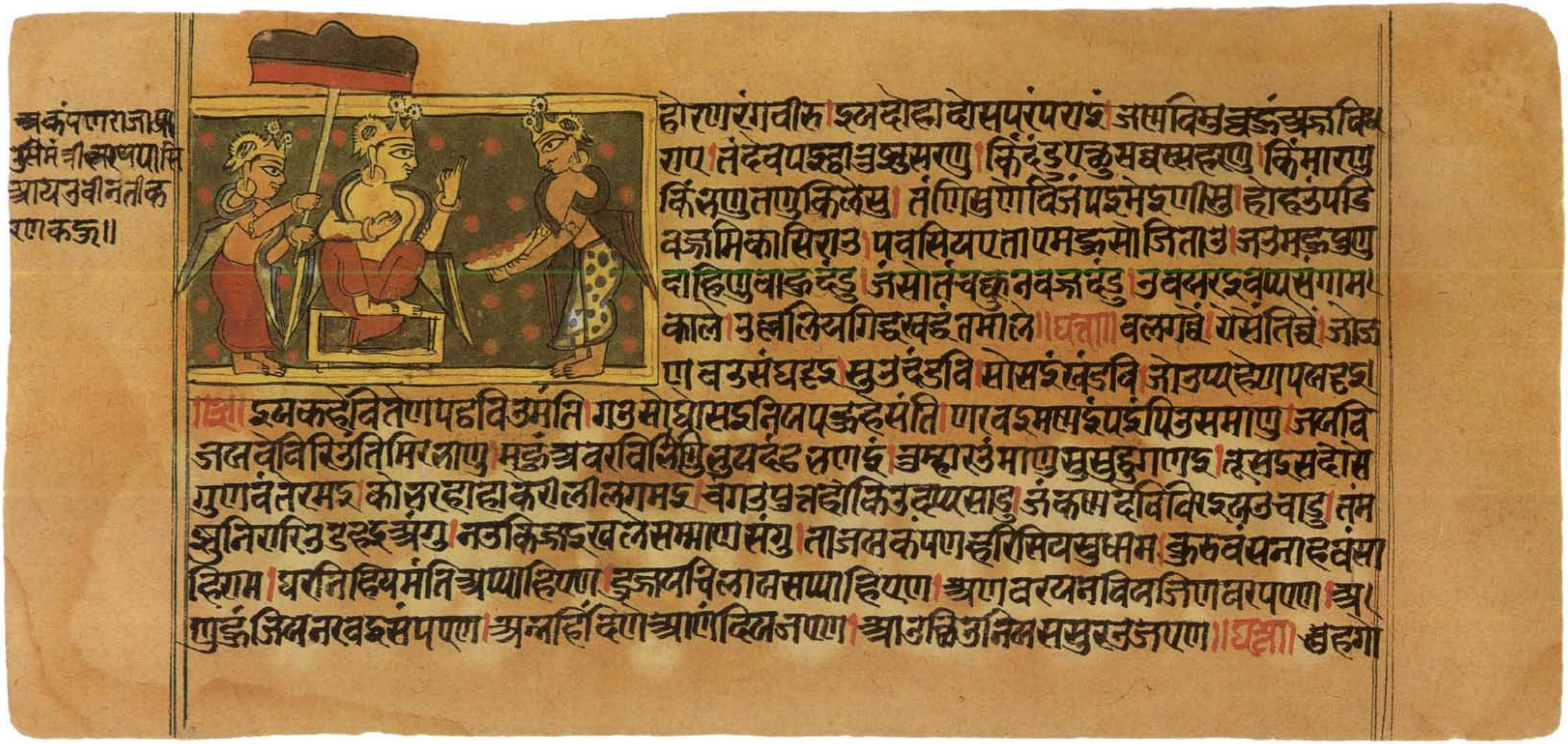

यह मुझ द्रोही की दोष-परम्परा है कि जिससे मैं आज भी घर नहीं छोड़ता। हे देव, अब मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ, क्या इसका दण्ड सर्वस्व अपहरण है ? क्या मृत्यु, बताइए क्या दण्ड है?'' यह सुनकर राजा भरत उत्तर देता है—''हे काशीराज, मैं कहता हूँ कि पिता के—ऋषभनाथ के संन्यास ले लेने पर वही मेरे पिता हैं। जयकुमार मेरा दायाँ बाहुदण्ड है। वह जो है वह न चक्र है और न वज्रदण्ड है। जिसमें झपटते हुए गीधों के द्वारा आँतों की माला खायी जा रही है ऐसे युद्ध के समय जो उपकार करता है।

घत्ता—जो बल, घमण्ड और तीव्र क्रोध से जनपद को पीड़ित करता है और जो खोटे मार्ग से जाता है ऐसे पुत्र को मैं खण्डित और दण्डित करता हूँ''॥ ३ ॥

४

यह कहकर भरत ने मन्त्री को भेज दिया। वह गया। वह अपने स्वामी से शान्ति घोषित करता है कि राजा तुम्हें पिता के समान मानता है और जो जय-विजय दोनों शत्रुरूपी अन्धकार के लिए सूर्य के समान हैं। वह (भरत) यह कहता है - वे मेरे दूसरे भुजदण्ड हैं, तुम्हारे व्यक्तित्व को बहुत सम्मान देता है। दोषी पर क्रुद्ध होता है, गुणी का आदर करता है। भरत की लीला को कौन धारण कर सकता है! तुमने पुत्र का अच्छा दर्पनाश किया ? लेकिन जो कन्या (अक्षयमाला) देकर उससे प्रेम जताया है वह मेरे शरीर को अत्यन्त जला रहा है। दुष्ट के साथ सम्मान और संग नहीं करना चाहिए। इस पर कुरुवंश और नाथवंश के सुन्दर सुधाम जय और अकम्पन प्रसन्न हो गये। तब गृहिणी मन्त्री और अपना हित करनेवाले दुर्जेय चिलात और सर्प का अहित करनेवाले, जिनवर के चरणों में अनवरत प्रणाम करनेवाले, राजा की सम्पति का भोग करनेवाले एवं जय से आनन्दित जयकुमार ने एक दूसरे दिन अपने ससुर से पूछा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

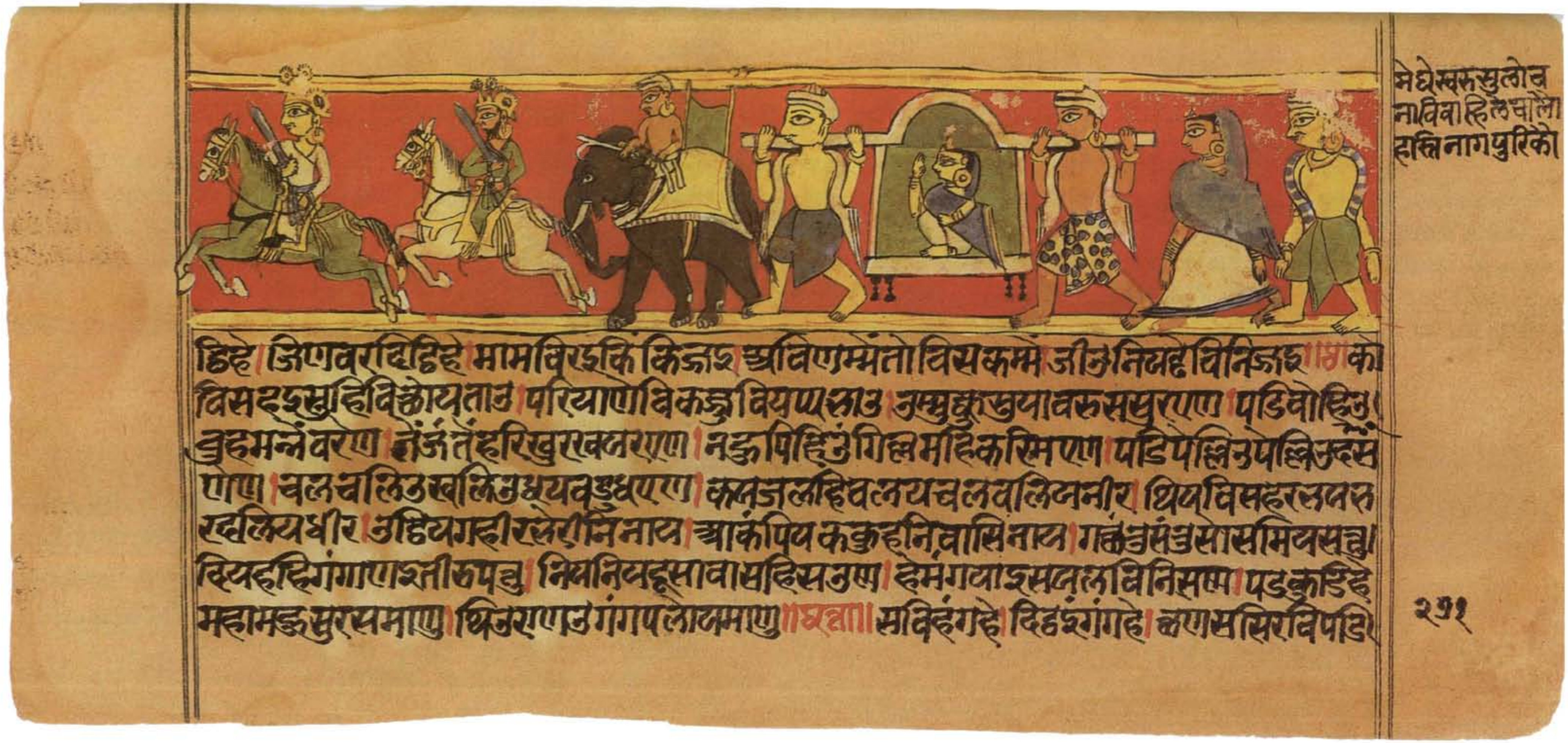

घत्ता—हे ससुर, तुम्हारी गोष्ठी और जिनवर की दृष्टि से विरति कैसे की जा सकती है ? तो भी अविनीत स्वकर्म के द्वारा जीव बलपूर्वक खींचकर ले जाया जाता है ॥ ४ ॥

५

सुधीजन के वियोग-सन्ताप को कौन सहन करता है ? फिर भी कार्य के विकल्प भाव को जानकर ससुर ने पुत्री और वर को विदा कर दिया। उनके जाते हुए घोड़ों के खुरों से आहत धूल ने आकाश ढक दिया। गजों के मदजल से धरती गीली हो गयी। वेग से ध्वजपट चंचल-स्खलित हो गये। समुद्रमण्डल का जल चंचल हो उठा। धीर विषधर भार के भय से दलित हो गये। नगाड़ों का गम्भीर शब्द हो उठा। दिशाओं में निवास करनेवाले गज काँप उठे। शत्रुओं को शान्त करनेवाला वह जाते-जाते कुछ ही दिनों में गंगानदी के किनारे पहुँचा। अपने-अपने तम्बुओं के आवासों से सम्पूर्ण हेमांगदादि राजा सभी ठहर गये। वस्त्र के तम्बू की कुटी में महावरणीय, देव के समान वह राजा गंगा को देखता हुआ स्थित हो गया।

घत्ता—लहरों से युक्त गंगा में पूर्णचन्द्र और सूर्य के प्रतिबिम्ब ऐसे दिखाई दिये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मानो भ्रमरों को सुख देनेवाली लता के सफेद और लाल फूल हों।

६

अपनी छावनी को वहीं छोड़कर, भूमि में महान् वह अपने कुछ सुभटों के साथ साकेत जाकर, भुवन में श्रेष्ठ राजा (भरत) के द्वार पर हाथ जोड़कर स्थित हो गया। प्रतिहार ने उसे शीघ्र प्रवेश दिया और चक्रवर्ती को प्रणाम कर उसने निवेदन किया— "विषधर नर और विद्याधरों से सेवित हे देव, देखिए यहाँ जय प्रणाम करता है।" तब उसने अपनी विशाल दृष्टि उस पर डाली मानो चन्द्रमा के विकसित नीलकमल की माला हो। प्रसरित हो रहा है प्रणय रस का सागर जिसमें ऐसे राजा ने स्वयं मुख देखकर, मानो स्नेह महावृक्ष की कली के समान अपनी अँगुली से उसे पीठासन बताया। तुष्ट होकर वह बैठ गया। राजा ने उसका सम्मान किया। सभा में उसका पौरुष परम उन्नति को प्राप्त हुआ। आग की तुलना में कोई दूसरा उष्ण नहीं है। परमाणु से अधिक दूसरा सूक्ष्म नहीं है। आकाश के आँगन से अधिक महान् दूसरा नहीं है। कामातुर के समान दूसरा कोई संगी नहीं है। जिन को छोड़कर कौन त्रिलोकस्वामी हो सकता है ? तुम्हें छोड़कर सुभटों में अग्रगामी कौन है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

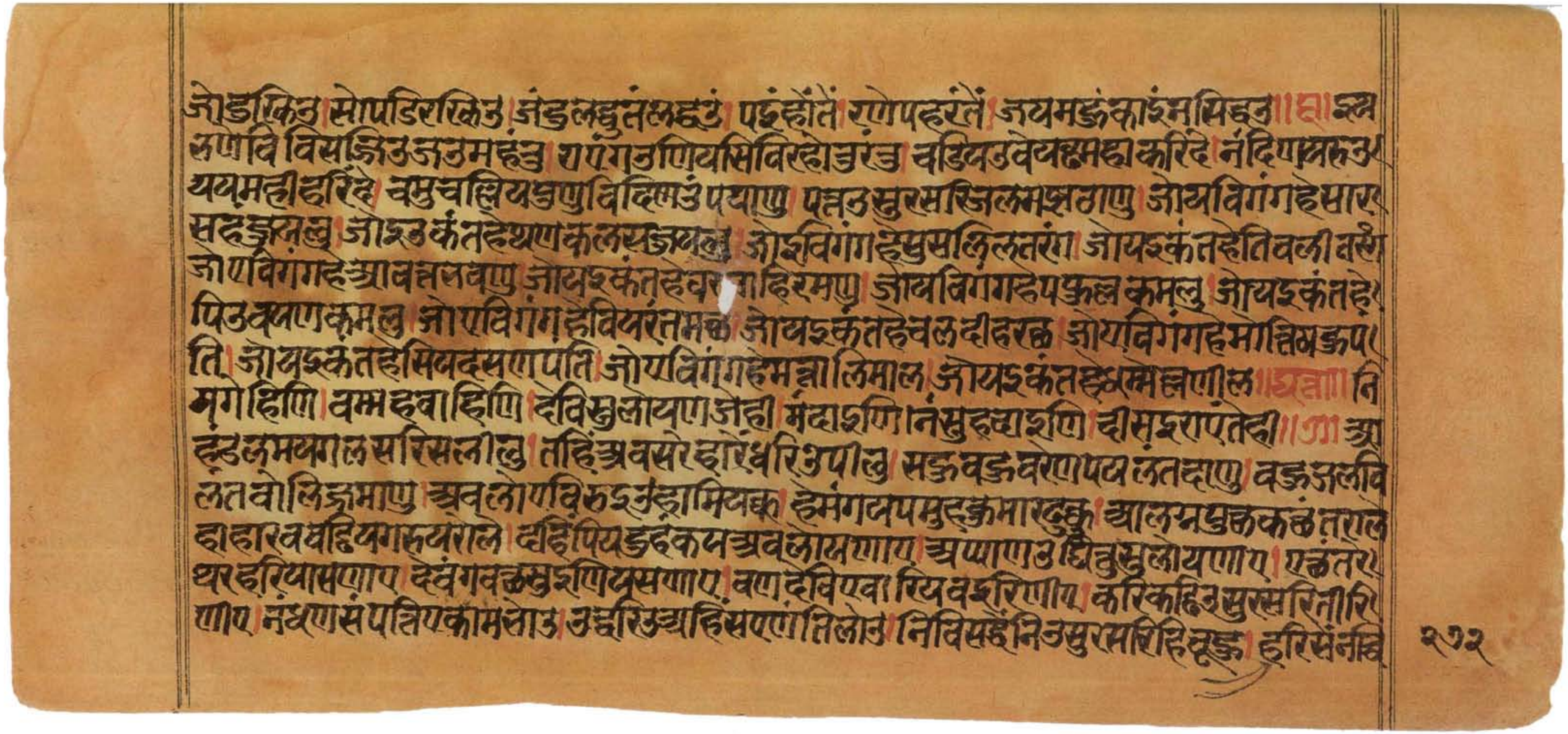

घत्ता—जो दु:खित था उसकी परिरक्षा कर दी गयी। जो दुर्लभ था उसे पा लिया। तुम्हारे रहते और युद्ध में प्रहार करते हुए हे जय ! मुझे क्या सिद्ध नहीं हुआ!॥ ६ ॥

७

यह कहकर राजा ने महान् जयकुमार को विसर्जित कर दिया। वह तुरन्त अपने शिविर में गया। वह विजयार्ध महागजेन्द्र पर आरूढ़ हुआ मानो दिनकर उदयाचल पर आरूढ़ हुआ हो। सेना चल पड़ी। उसने प्रस्थान किया। वह गंगा के जल के मध्यभाग में पहुँचा। वह गंगा की सारस जोड़ी को देखकर कान्ता के स्तनरूपी कलशयुगल को देखता है। गंगा की सुन्दर तरंग को देखकर अपनी कान्ता की त्रिबलि तरंग को देखता है। गंगा के आवर्त भँवर को देखकर कान्ता की श्रेष्ठ नाभिरमण को देखता है। गंगा का खिला हुआ कमल देखकर प्रिय कान्ता का मुखकमल देखता है। गंगा के विचरते हुए मत्स्य देखकर कान्ता की चंचल लम्बी आँखों को देखता है। गंगा की मोतियों की पंक्ति देखकर वह कान्ता की श्वेत दशनपंक्ति देखता है। गंगा की मत्त अलिमाला देखकर कान्ता की नीली चोटी देखता है।

घत्ता—जब सुख देनेवाली मन्दाकिनी (गंगा) राजा को वैसे ही दिखाई दी जैसी अपनी गृहिणी, काम की नदी सुलोचना॥ ७॥

८

उस अवसर पर इन्द्र के ऐरावत के समान लीलावाले उसके हाथी को मगर ने पकड़ लिया। प्रगलित है मदजल जिससे ऐसा वह गज बधू-वर के साथ अत्यधिक जल के आवर्तवाले ह्रद् में जाने लगा। प्रिय के दु:ख को देखनेवाली सुलोचना ने जोर से 'हा' की आवाज की। उसकी (गज की) पूँछ कक्षा के मध्य लगने पर, तथा हा-हा शब्द का कोलाहल बढ़ने पर, अपनी कान्ति से सूर्य को परास्त करनेवाले हेमांगद प्रमुख कुमार यह देखकर वहाँ पहुँचे। इसी बीच, जिसका आसन काँप गया है, तथा जो देवांग वस्त्रों से पवित्र निवास में रहनेवाली है, ऐसी शत्रु का विनाश करनेवाली वनदेवी ने गज को गंगा के किनारे पर ऐसे खींचा मानो धनसम्पत्ति ने कामदेव को खींचा हो, मानो अहिंसा ने त्रिलोक का उद्धार किया हो। आधे पल में वह सुरसरि के तट पर ले जाया गया।

Jain Education International
For Private & Personal Use Only

www.jainelibrary.org

किंकर समूह आनन्द से नाच उठा। रण-वन-जल और आग में पड़ने पर पुरुष को पूर्वार्जित कर्म ही बचाता है।

घत्ता—श्री से सेवित सुन्दर तीर पर मणिनिर्मित घर बनाया गया। देवी ने सिंहासन पर स्थापित कर सुलोचना को स्नान कराया॥ ८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९

देवताओं के योग्य उसे वस्त्र दिये गये। और भी दूसरे-दूसरे आभूषण दिये गये। खिली हुई मन्दारमाला दी। अपने नरवर (जय) के साथ वह बाला विस्मय में पड़ गयी। वह बोली—"तुम कौन हो ? और गज को किसने पकड़ा था ? नदी कैसे पार हुई? तारनेवाला कौन था ? सज्जनों से वन्दनीय हे सुरसुन्दरी, तुम बताओ-बताओ ?" तब वह भी बताने लगती है—"जिसमें शबर घूमते हैं, ऐसे विन्ध्याचल के निकट विन्ध्यपुरी नगरी है, उसका राजा विन्ध्यकेतु था जो अपनी शक्ति से हाथी को वश में करनेवाला था। उसकी सुन्दर महादेवी प्रियंगुश्री थी। मैं उसकी विन्ध्यश्री नाम की पुत्री थी। पिता ने तुम्हारा प्रभाव जानकर और समस्त कला-कलाप सीखने के लिए हे सखी, मुझे तुम्हें सौंप दिया। क्या तुम याद नहीं कर रही हो कि जब हम क्रीड़ा करने के लिए गये हुए थे, विशाल वसन्ततिलक नन्दनवन के एक लताघर में मैं साँप के द्वारा डँस ली गयी थी। तब तुमने 'अ सि आ उ सा' आदि व्यंजनों से विशिष्ट पंच परमेष्ठी का पंचणमोकार मन्त्र मुझसे कहा था।

घत्ता—उन अक्षरों को सुनकर और पाप को नष्ट कर मैंने यह विभूति प्राप्त की। देवताओं के घर गंगाकूट में गंगादेवी हुई॥ ९॥

१०

पूर्व में अपने सरस, कुत्सित विषधररूपी पति के साथ क्रीड़ा करती हुई जिस नागिन को तुम्हारे पति ने सरलपत्तों से कोमल, हाथ के लीलारक्त कमल से आहत किया था। और जो दूसरे मनुष्यों के द्वारा दण्डों और पत्थरों से कुचली जाकर मृत्यु को प्राप्त हुई थी, हे प्रिय सखी सुनो, वह काली के नाम से यहाँ जलदेवता हुई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

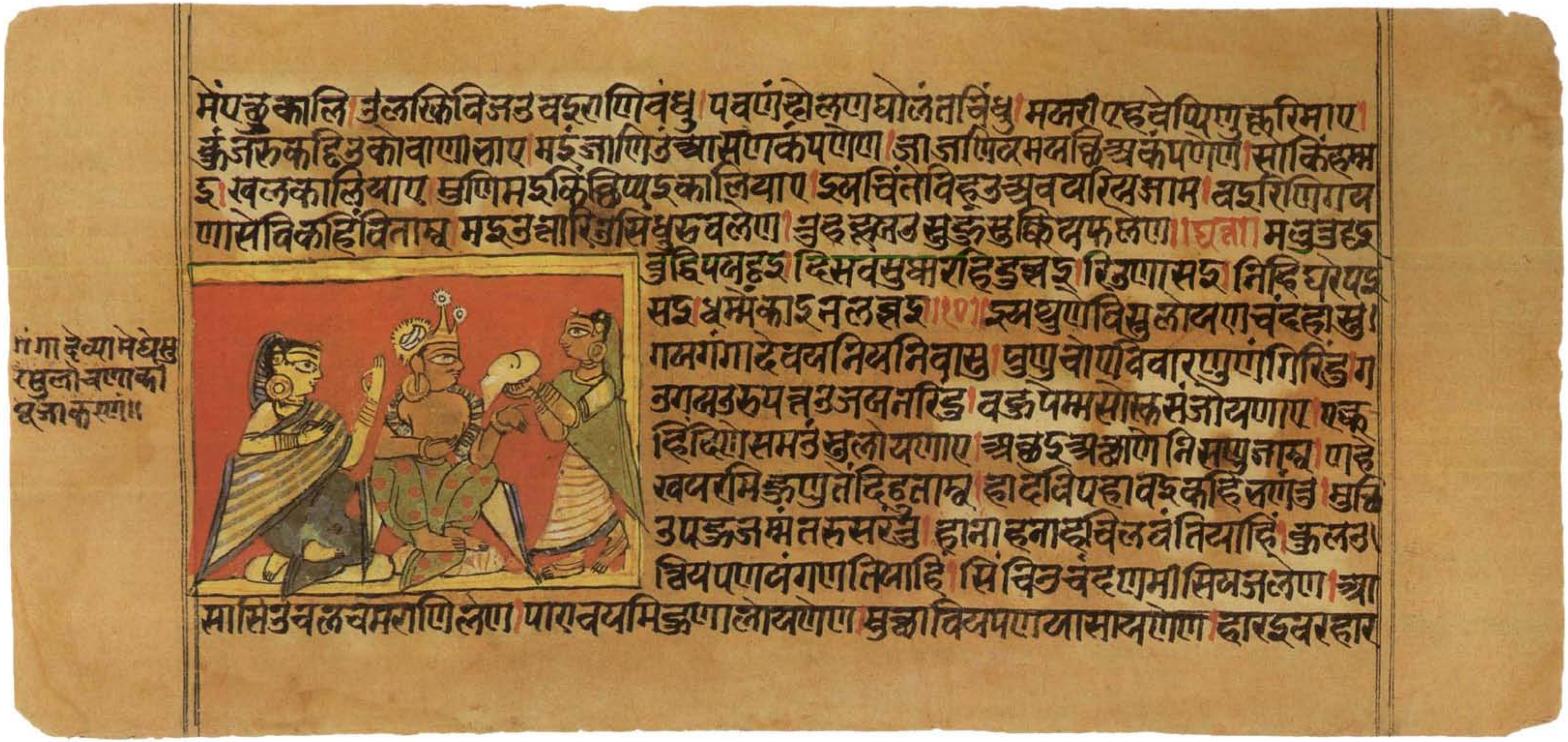

पवन के आन्दोलन से हिल रहे हैं चिह्न जिसके ऐसे तथा बैर का अनुबन्ध करनेवाले जयकुमार को देखकर, क्रूर मगरी बनकर, क्रुद्ध उसने गज को खींचा। आसन काँपने से मैंने जान लिया कि जो मृगनयनी अकम्पन राजा से उत्पन्न हुई है वह दुष्टा काली के द्वारा क्यों मारी जाये? पापवृत्ति के द्वारा मुनिमति का स्पर्श क्यों किया जाये? यह विचार कर जब मैं यहाँ अवतरित हुई तबतक वह दुश्मन भागकर कहीं भी चली गयी। मैंने शक्ति से गज का उद्धार किया, और तुम्हें अपने पुण्य के फल से यह सुख प्राप्त हुआ।

घत्ता—मल (पाप) दूर होता है, बुद्धि प्रवर्तित होती है, धन-धाराओं से दिशा दुही जाती है, शत्रु नाश को प्राप्त होता है, निधि घर में प्रवेश करती है। धर्म से क्या नहीं प्राप्त किया जा सकता?॥१०॥

११

चन्द्रमा के हास्य के समान सुलोचना की इस प्रकार स्तुति कर गंगादेवी अपने निवास-स्थान के लिए चल दी। तब गिरीन्द्र की भाँति उस गजेन्द्र को प्रेरित कर राजा जय गया और हस्तिनापुर पहुँच गया। सुखपूर्वक सप्तांग राज्य का परिपालन करते हुए जब बहुत समय बीत गया, जब प्रचुर प्रेम और सुख का संयोजन करनेवाली सुलोचना देवी के साथ एक दिन वह दरबार में बैठा हुआ था तब आकाश में उसने विद्याधर की जोड़ी देखी। 'हे प्रभावती देवी, तुम कहाँ' यह कहता हुआ और जन्मान्तर की याद करता हुआ राजा मूर्च्छित हो गया। तब हे स्वामी, हे स्वामी, इस प्रकार विलाप करती हुई कुलपुत्रियों और पण्य-स्त्रियों के द्वारा चन्दन-मिश्रित जल से सींचा गया, चंचल चमरों की हवा से वह आश्वस्त हुआ। कबूतर के जोड़े को देखने से स्नेह का अनुभव होने के कारण प्रिया सुलोचना भी मूर्च्छित हो गयी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

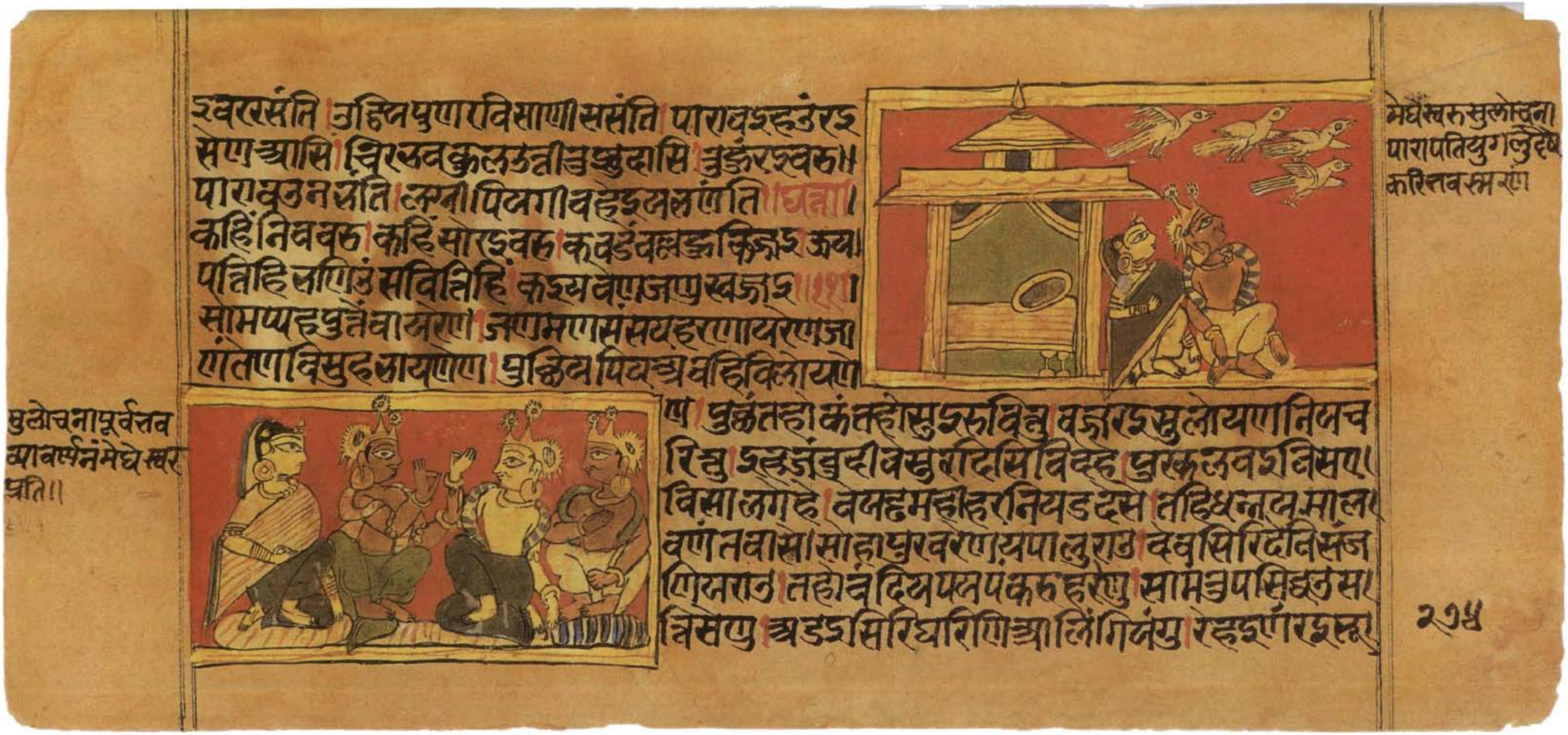

हा रतिवर, हा रतिवर—यह कहती हुई, वह निःश्वास लेती हुई फिर से उठी। "मैं रविसेना कबूतरी थी, पूर्वजन्म की कुलपुत्री तुम्हारी दासी, और तुम रतिवर कबूतर थे, इसमें जरा भी भ्रान्ति नहीं।" यह कहती हुई वह प्रिय के गले से लग गयी।

घत्ता—कहाँ वह राजा—कहाँ वह रतिवर, कपट से ही प्रिय बनाया जाता है ? जय की पत्नी की सौत ने कहा कि कैतव (छल-कपट) से लोग नाश को प्राप्त होते हैं ॥ ११ ॥

१२

जन-मन के सन्देह के निवारण में आदर रखनेवाले नागर अवधिज्ञान के नेत्रवाले सोमप्रभ के पुत्र ने जानते हुए शुभभावना से प्रिया से पूछा। पुराना वृत्तान्त पूछते हुए पति से सुलोचना अपना चरित कहती है—"इस जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह में विशाल घरोंवाला पुष्कलावती देश है। उसमें विजयार्ध पर्वत में स्थित धान्यकमाल वन के निकट बसा हुआ शोभापुर नाम का नगर था। उसका राजा प्रजापाल था। वह अपनी देवश्री देवी का अत्यन्त अनुरागी था। जिसने चरणकमलों के पराग की वन्दना की है, ऐसा उसका प्रसिद्ध शक्तिषेण नाम का सामन्त था। अटवीश्री गृहिणी के द्वारा आलिंगित शरीर वह ऐसा लगता था मानो रति से

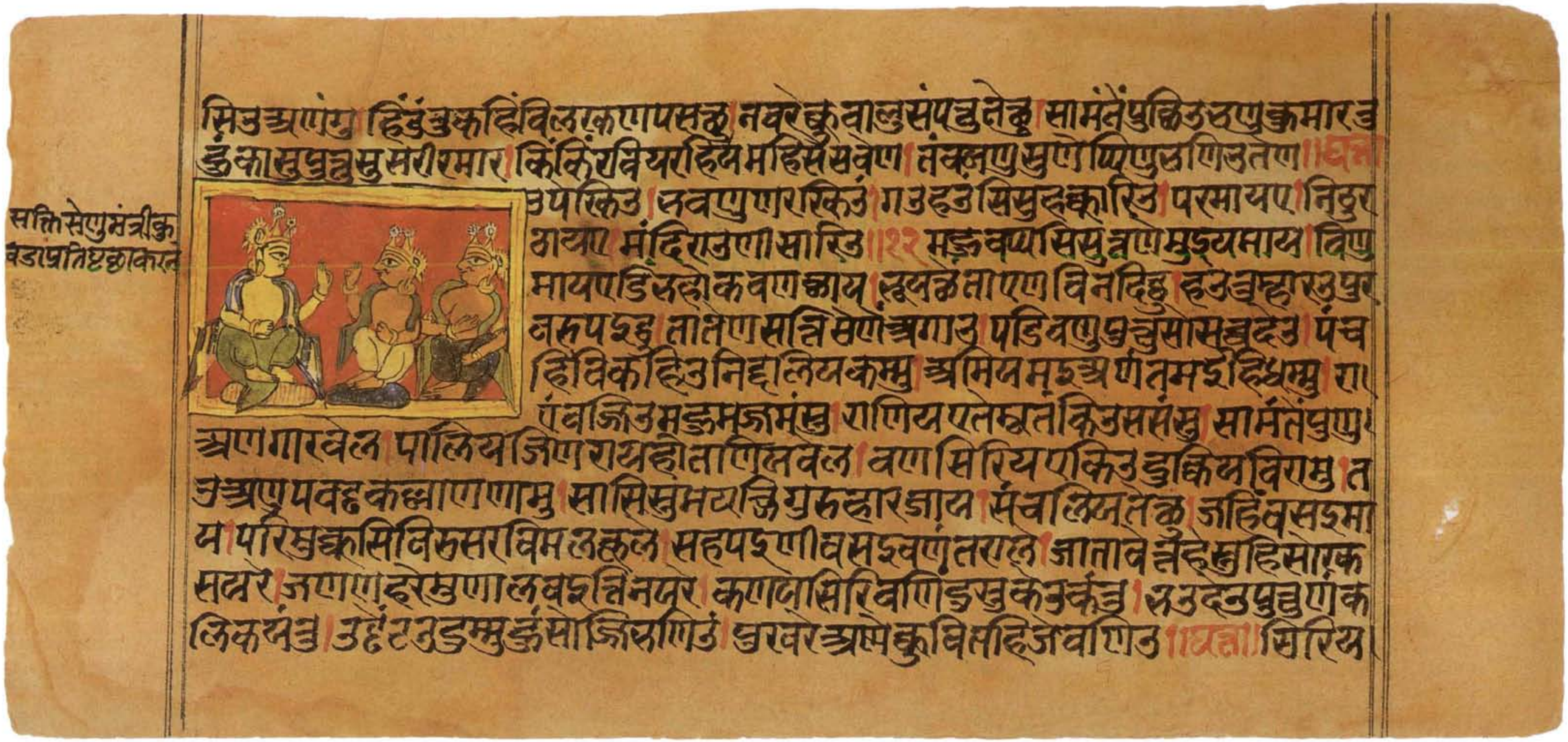

विभूषित कामदेव हो। कहीं घूमते हुए लक्षणों से प्रशस्त केवल एक बालक उसे प्राप्त हुआ। सामन्त ने उससे पूछा—हे कामदेव के समान शरीरवाले तुम किसके पुत्र हो ? बचपन से ही तुम धरती पर क्यों घूम रहे हो? यह वचन सुनकर बालक ने कहा—

घत्ता—मैंने घर की उपेक्षा की, उसकी रक्षा नहीं की। मैं बच्चा था, बुलाने पर चला गया था। परन्तु कठोरवाणी कहनेवाली माँ ने घर से निकाल दिया॥ १२॥

१३

हे सुभट, बचपन में मेरी माँ की मृत्यु हो गयी। बिना माँ के बच्चे के लिए किसकी छाया? भूयत्थ (धन से सम्पन्न) पिता ने भी नहीं देखा और मैं तुम्हारे पुरवर में आ गया। तब उस शक्तिषेण ने निष्पाप उस बालक को सत्यदेव के रूप में स्वीकार कर लिया। आर्यिका अमितमती और अनन्तमती के द्वारा कहा गया कर्मों का नाश करनेवाला धर्म पाँचों ने स्वीकार कर लिया। राजा ने मद्य, मधु और मांस छोड़ दिया। रानी ने भी प्रशंसापूर्वक वही सब किया। सामन्त शक्तिषेण ने अनागार वेला का व्रत लिया, और वह जिनराज (मुनि) की पारणा की बेला (समय) का पालन करने लगा। (अर्थात् वह मुनियों के आहार ग्रहण करने के समय के बाद ही भोजन करता)। उसकी पत्नी अटवीश्री ने पाप का अन्त करनेवाला अनुप्रवृद्धकल्याण का तप किया। वह बालक और गुरुभारवाली मृगनयनी पत्नी वहाँ (मृणालवती नगरी में) गयी जहाँ उसकी माँ रहती थी। शिविर छोड़कर वन के भीतर वह सर्पसरोवर के तटपर अपने पति के साथ जब रह रही थी तभी सुधियों के लिए सैकड़ों सुख देनेवाली, पिता की मृणालवती नगरी में कनकश्री पत्नी और उसका पति सेठ सुकेतु था। उसका भवदेव पुत्र मानो कलिकृतान्त था। वह अत्यन्त उन्मत्त और दुर्मुख कहा जाता था। उसी नगरी में एक और बनिया था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

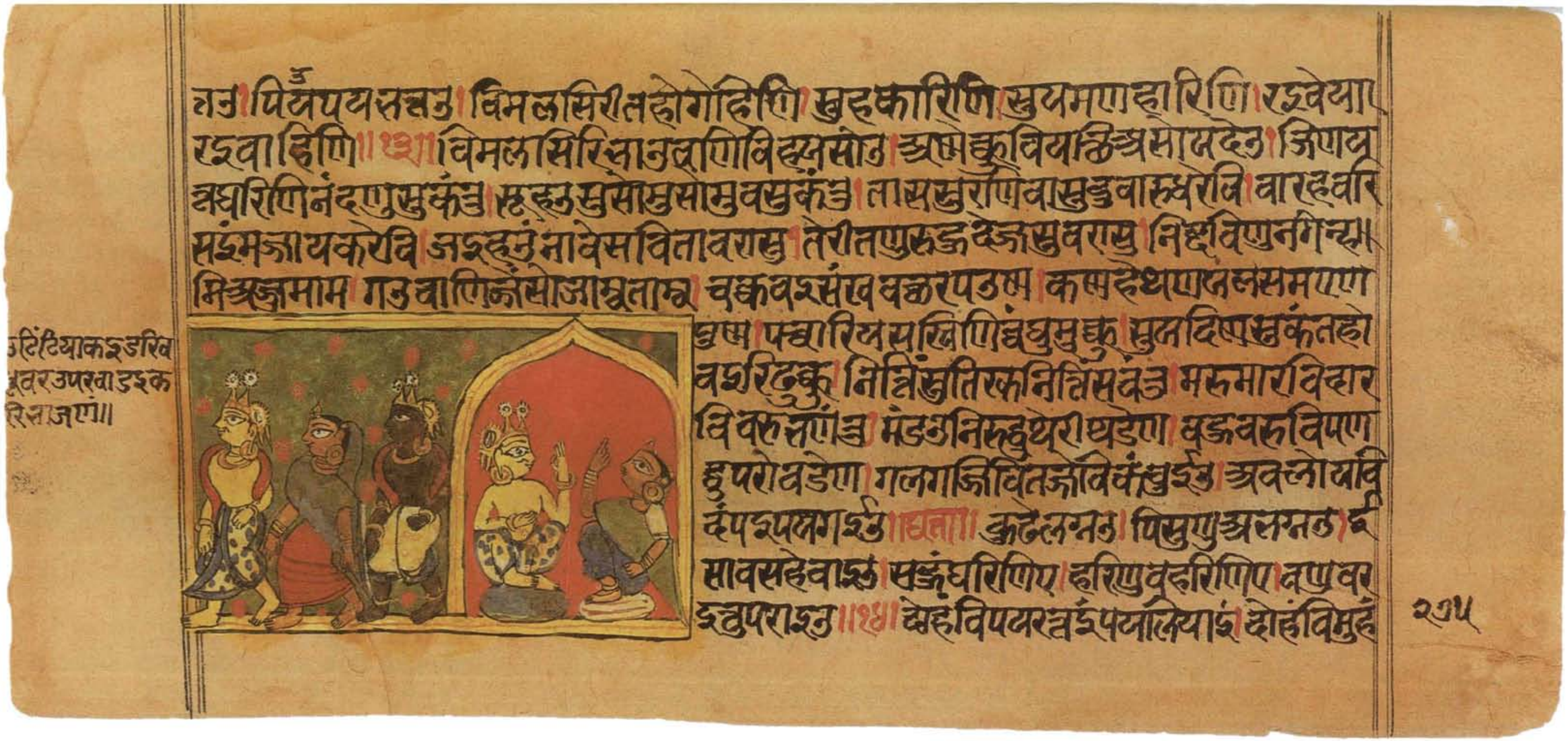

घत्ता—अपने पिता के चरणों का भक्त श्रीदत्त, उसकी गृहिणी विमलश्री थी। रति की नदी, सुन्दर, शुभ करनेवाली रतिवेगा नाम की उसकी कन्या थी॥ १३॥

१४

विमलश्री का भाई, शोक से रहित एक और सेठ था अशोकदत्त। उसकी गृहिणी जिनदत्ता थी। उसका पुत्र सुकान्त था। सुन्दर और सौम्य वह सोम की तरह सुकान्त था। तब ससुर के निवास और द्वार पर धरना देकर और बारह वर्ष की यह मर्यादा कर कि यदि मैं (इस बीच) नहीं आता हूँ तो तुम अपनी कन्या अन्य वर को दे देना। मैं निर्धन हूँ, हे ससुर, अभी कन्या ग्रहण नहीं करता। और जब वह वाणिज्य के लिए चला गया, तबतक बारह वर्ष पूरे हो गये और समय के साथ कन्या के स्तन भर गये। साक्ष्य और निबन्ध से मुक्त होकर उसने कन्या को पुकारा और सुकान्त के लिए दे दी। (इतने में) दुश्मन आ पहुँचा, निर्दय और तीखी तलवार लिये हुए। वह कहता है कि मैं वर को विदीर्ण करूँगा—मारूँगा। वृद्धसमूह ने उसे बलपूर्वक रोका। वधू-वर भी घर के पीछे दरवाजे से भाग गये। तब गरजकर और कंचुकियों को डाँटकर तथा दम्पति की चरण-परम्परा को देखकर—

घत्ता—अभग्न, दुष्ट, ईर्ष्यालु वह क्रुद्ध होकर पीछे लग गया। अपनी गृहिणी के साथ वह वन में पहुँचा, जैसे हरिणी के साथ हरिण हो॥ १४॥

१५

दोनों के पैरों की लालिमा प्रगलित हो गयी, दोनों के मुखकमल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

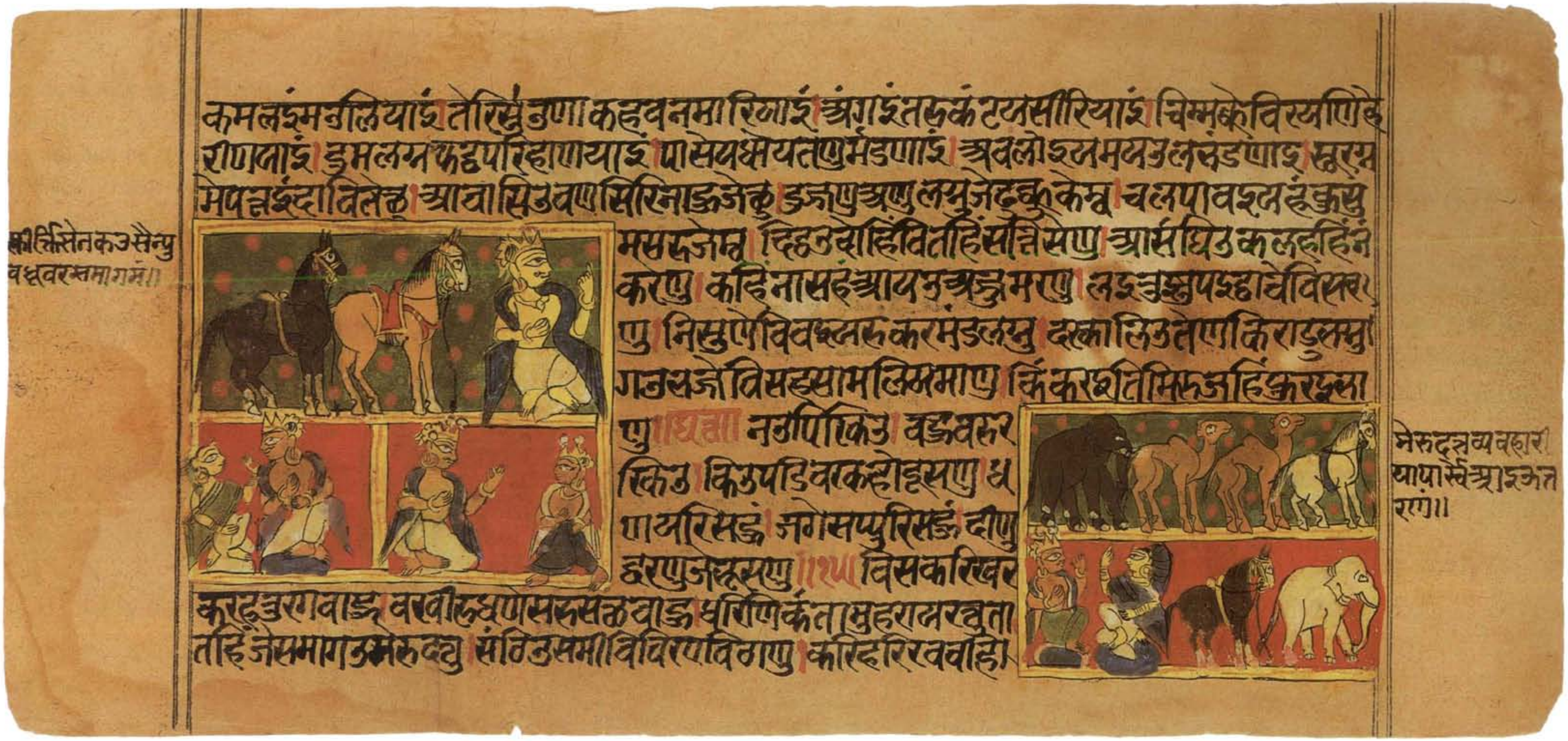

मुकुलित हो गये। उस शत्रु के द्वारा वे किसी प्रकार मारे-भर नहीं गये थे। उनके शरीर वृक्षों के काँटों से विदीर्ण हो चुके थे। पसीने से शरीर का सब मण्डन धुल चुका था। दोनों पशुकुल की भिड़न्त देख रहे थे। सूर्योदय होनेपर वे दोनों वहाँ पहुँचे जहाँ कि अटवीश्री का स्वामी ठहरा हुआ था। पीछे लगा हुआ ही वह वहाँ इस प्रकार पहुँच गया जैसे कि चंचल पापियों के पीछे कामदेव पहुँच जाता है। वहाँ उन दोनों ने शक्तिषेण की शरण ली, मानो शिशुगजों ने महागज की शरण ली हो। कहाँ हैं वे, भागनेवालों के लिए मैं मरण आया हूँ, लो, वे दोनों तुम्हारी शरण में चले गये। दुश्मन को सुनकर उस शक्तिषेण ने अपनी तलवार दिखायी उससे किरात भग्न हो गया। और मलिनमान वह शीघ्र वहाँ से भाग गया। वहाँ अन्धकार क्या कर सकता है, जहाँ सूर्य चमक रहा है!

घत्ता—उसने उपेक्षा नहीं की, वरन् वर-वधू की रक्षा की और शत्रुपक्ष को दोषी ठहराया। जग में धन से श्रेष्ठ (धनवरिसहुँ) सत्पुरुषों का भूषण दोनों का उद्धार करना ही है ॥ १५ ॥

१६

इतने में वृषभ, गज, खच्चर, ऊँट और घोड़ों के वाहनोंवाला, पर्वत की तरह धीर धनेश्वर, अपनी पत्नी धारणी के मुख में अनुरक्त सार्थवाह मेरुदत्त वहाँ आया। हाथियों और घोड़ों के शब्दों से पर्वतशिखर को बहरा करता हुआ वह पास ही अपना डेरा डालकर ठहर गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इतने में वन-मार्ग से दो चारण मुनि वहाँ प्रविष्ट हुए। शरण में आये हुए उन दोनों को शक्तिषेण ने देखा। उस महायशवाले ने 'ठहरिए' कहा। विनयरूपी अंकुश से वे दोनों महामुनिवर ठहर गये। पुण्य लेने के लिए उसने मुनिश्रेष्ठों के लिए योग्य नानाविध आहार भावपूर्वक दिया। देवों ने आकाशतल में नगाड़े बजाये तथा पाँच आश्चर्य प्रकट किये।

घत्ता—मणियों को लो, पुण्य को देखो, जिसका मुखरूपी पूर्णचन्द्र खिला हुआ है और जो तुम्हारे लिए प्रणय उत्पन्न करनेवाला है ऐसा मेरुदत्त घर आ गया है॥ १६॥

१७

वहाँ उस मेरुदत्त ने उसका दान देखकर धारणी के साथ यह निदान बाँधा कि अगले जन्म में दुःस्थित लोगों का कल्याणमित्र यह मेरा पुत्र हो। तब वहाँ रात्रि में चोर की तरह धरती पर चलता हुआ एक लँगड़ा आया। वणिक् ने अपने मन्त्रीवर्ग से पूछा—''बताओ कि इसका गतिप्रसार नष्ट क्यों हुआ?'' शकुनि (शकुन-शास्त्र जाननेवाला) ने कहा—''इसे अपशकुन हुआ था इसलिए इस जन्म में इसका पैर टूट गया।'' बृहस्पति ने कहा—सुख का नाश करनेवाले क्रूरग्रहों ने इसे लँगड़ा किया है। धन्वंतरि कहता है कि यह प्रकृति-दोष है। कफ से जड़त्व होता है और पित्त से शुष्कता आती है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

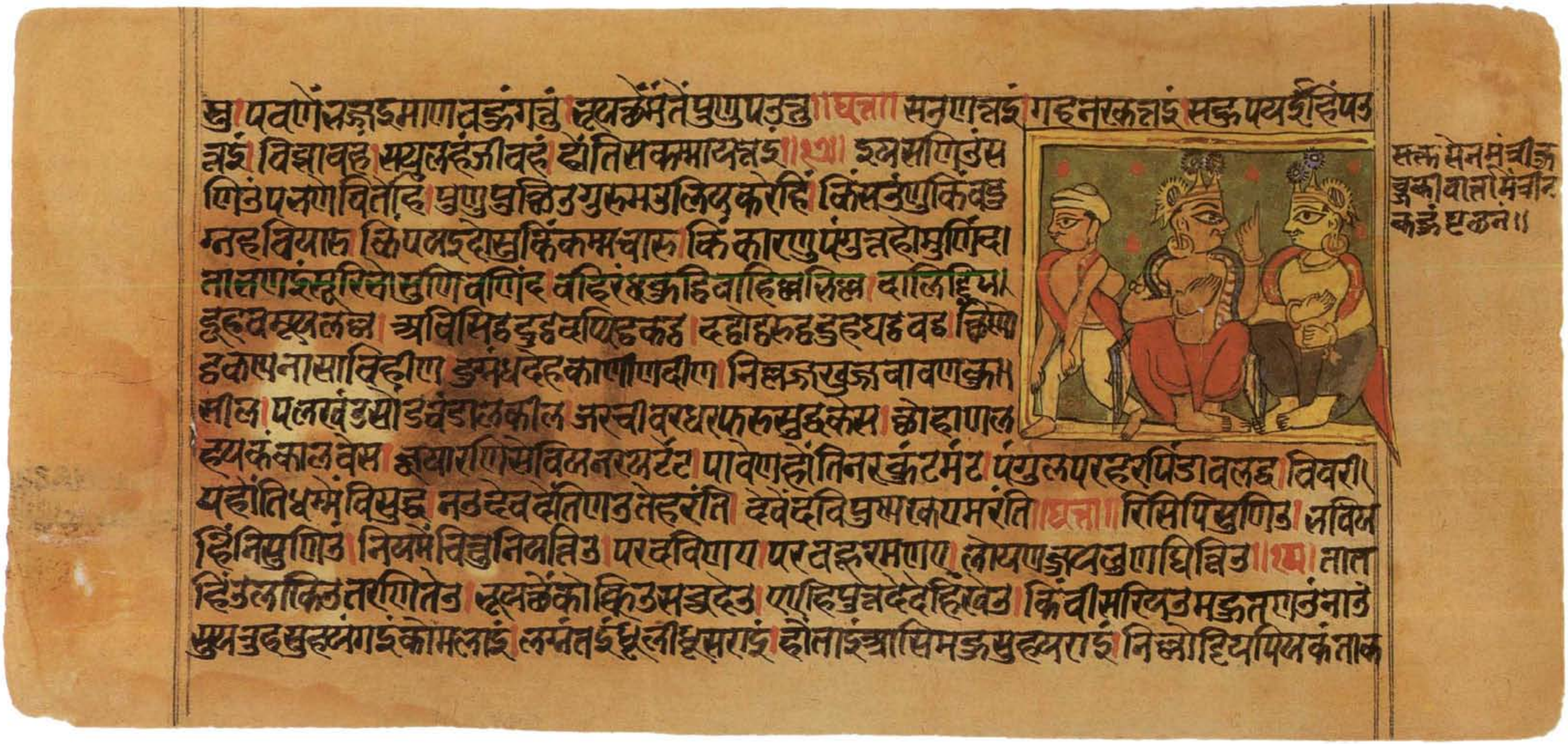

तथा वात से शरीर नष्ट हो जाता है। तब भूतार्थ मन्त्री ने पुन: कहा—

घत्ता—प्रकृतियों (वात-कफ और पित्त) के साथ कहे गये शकुन तथा ग्रह-नक्षत्र आदि मनुष्य का चैतन्यस्वरूप समस्त जीवों के अपने कर्म के अधीन होते हैं॥ १७॥

१८

इस प्रकार धीरे-धीरे बात कर, अपने हाथ जोड़ते हुए उन्होंने गुरुजी से पूछा—"हे मुनीन्द्र, लँगड़ेपन का कारण क्या है, क्या शकुन कारण है ? या खोटे ग्रहों का प्रभाव है, क्या प्रकृति-दोष है, या कर्मों का आचरण है ?" तब मुनीन्द्र कहते हैं—"हे सेठ, सुनो ! बहिरा, अन्धा, कोढ़ी, व्याधा, भील, दरिद्री, दुर्भग, गूँगा, अस्पष्ट आवाजवाला, अविशिष्ट, दुष्ट, दर्पिष्ट, कठोर, दुष्ट ओठोंवाला, क्रोधी, दु:खों से धृष्ट, वंठ, छिन्न ओठोंवाला, कान और नाक से रहित, दुर्गन्धित शरीरवाला कन्या-पुत्र, दीन, निर्लज्ज, कुबड़ा, कुशील, मांसभक्षी, दारु-विक्रेता, चाण्डाल, कील, जीर्णवस्त्र धारण करनेवाला, कठोर और खड़े बालोंवाला, क्रोध की आग से आहत कंकाल रूपवाला, जुआड़ी, नगर की वेश्या का सेवन करनेवाला, और लुच्चा आदमी पाप (कर्म) के कारण होते हैं। लँगड़े और दूसरे के घर के आहार के लालची और विपरीत धर्म से पवित्र होते हैं। न तो देवता लोग कुछ देते हैं, और न वे अपहरण करते हैं, देवेन्द्र भी पुण्य का क्षय होने पर मरते हैं।"

घत्ता—महामुनि के द्वारा प्रतिपादित बात भव्यजनों ने सुनी, उन्होंने अपना चित्त नियम में लगाया। दूसरे के धन और दूसरे की स्त्री पर उन्होंने अपनी आँख तक नहीं डाली॥ १८॥

१९

वहाँ सूर्य के समान तेजस्वी सत्यदेव दिखाई दिया, भूतार्थ ने उसे बुलाया और कहा—"हे पुत्र ! आओ, और मुझे आलिंगन दो। क्या तुम मेरा नाम भूल गये ? हे पुत्र, तुम्हारे कोमल सुभग पुत्र धूल-धूसरित होते हुए भी छूने पर सुखद मालूम होते थे। हे पुत्र, प्रिय कान्ता के द्वारा पोंछी गयी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

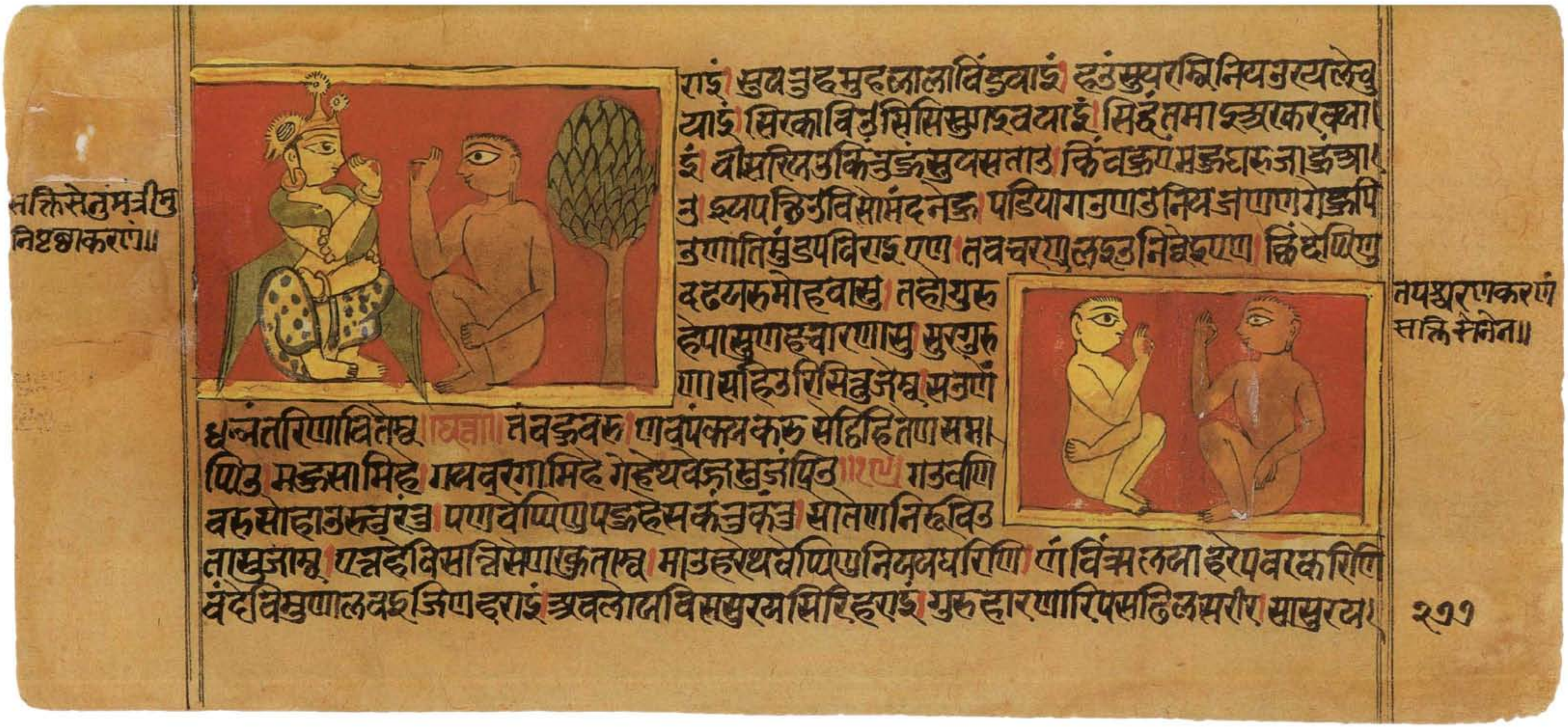

तथा ऊपर वक्ष पर गिरी हुई तुम्हारे मुख की लार की बूँदों को अपने वक्ष-स्थल पर गिरे हुए अनुभव कर रहा हूँ। हे वत्स, तुम्हें शिशुगति और वचन सिखाये गये थे। सिद्धों को नमस्कार हो, ये वचन सिखाये गये थे। हे पुत्र, क्या तुम अपने पिता को भूल गये? बहुत कहने से क्या? आओ अपने घर चलें।" मन्द स्नेह वह इस प्रकार प्रार्थना करने पर भी अपने पिता के घर वापस नहीं आया। प्रशस्त मन-वचन और काय के व्यापार से शोभित पिता ने विरक्त होकर तपश्चरण ले लिया। उन्हीं आकाशचारी गुरु के पास दृढ़तर मोहपाश को काटकर, जिस प्रकार बृहस्पति ने ऋषित्व ग्रहण किया, उसी प्रकार शकुनी और धन्वन्तरि ने भी।

घत्ता—उस शक्तिषेण ने नवकमल के समान हाथों वाला वह बधू-वर सेठ के लिए समर्पित कर दिया और कहा — गजवरगामी मेरे स्वामी के घर में रख देना॥ १९॥

२०

सेठ तुरन्त शोभापुर गया और जबतक वह प्रभु को प्रणाम कर कान्तासहित कान्त को सौंपे, तबतक यहाँ शक्तिषेण नाम का सामन्त अपनी पत्नी को उसकी माता के घर में रखने के लिए, मानो विन्ध्य के लतागृह में हथिनी को रखने के लिए, मृणालवती नगरी के जिनमन्दिर देखने और ससुराल के श्रीधर को देखने के लिए गया। परन्तु गुरुभार और शिथिल शरीरवाली पत्नी अटवीश्री को ससुराल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

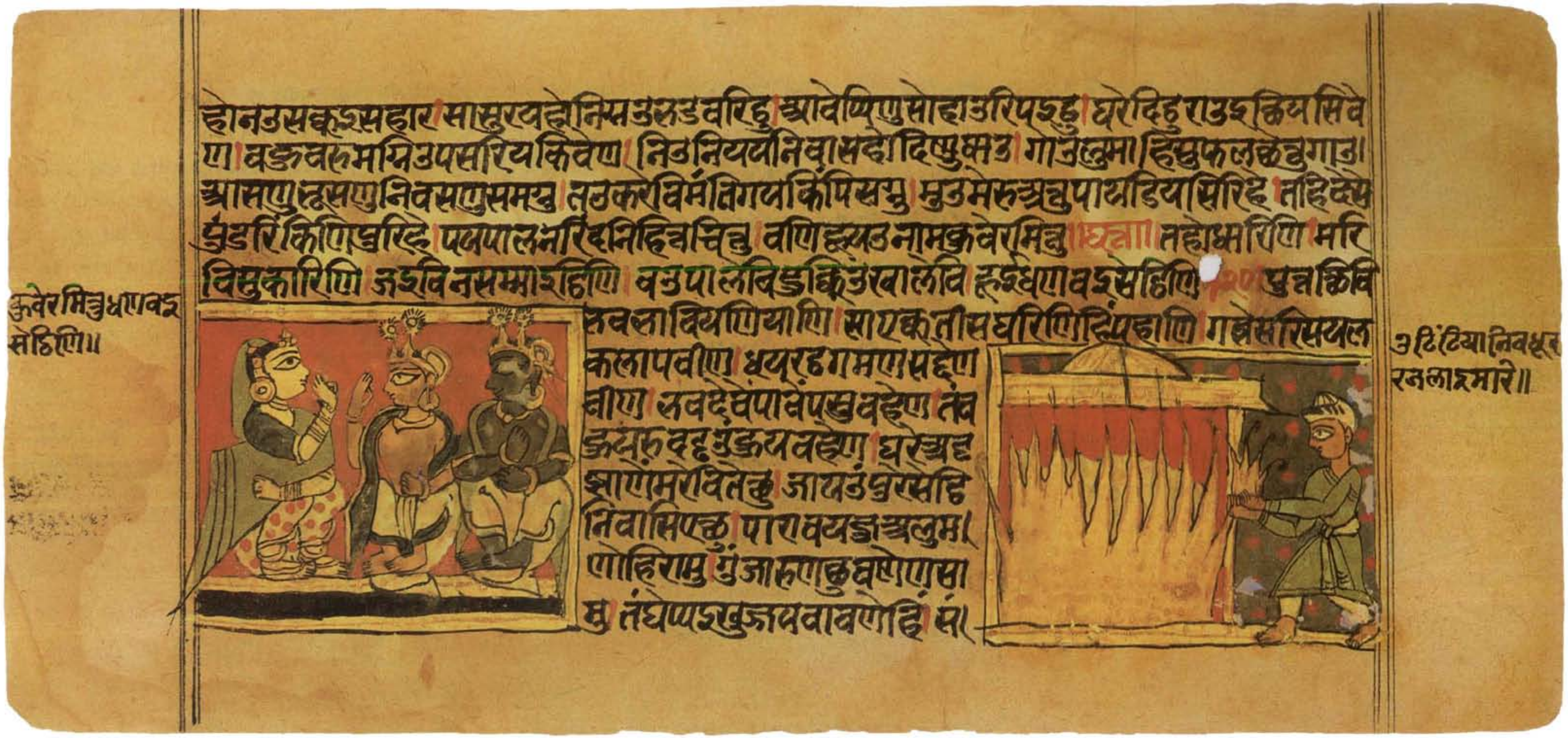

भी सहारा नहीं दे सका। वह श्रेष्ठ योद्धा ससुराल से भी चला आया। आकर शोभापुर में प्रविष्ट हुआ। कल्याण चाहनेवाले तथा बढ़ रही है दया जिसमें ऐसे उसने राजा से भेंट की और वधू-वर को माँगा। वह उन्हें अपने घर ले गया और अपना घर, गोकुल, भैंस, फलक्षेत्र, ग्राम, आसन, भूषण और वस्त्र सब-कुछ दे दिया। मन्त्री भी तप करके कहीं स्वर्ग चले गये। मेरुदत्त भी मर गया। तथा प्रकट है वैभव जिसका ऐसी उसी देश की पुण्डरीकिणी नगरी में कुबेरमित्र नाम का वणिक् हुआ, जिसका चित्त राजा-प्रजापाल में लगा रहता था।

घत्ता—फिर धारणी भी यद्यपि वह सम्यक्त्व धारण करनेवाली नहीं थी, पुण्यकारण से व्रतों का पालन कर, पाप को नष्ट कर धनपति की सेठानी हुई॥ २०॥

२१

दूसरे जन्म में निदान बाँधनेवाली तथा पुत्र की इच्छा रखनेवाली वह इकतीस स्त्रियों में प्रधान थी। गर्वेश्वरी वह समस्त कलाओं में निपुण, हंस की तरह चलनेवाली, स्वर में वीणा के समान थी। पशुवध करनेवाले उस दुष्ट नवदेव ने उस वधू-वर को आग में जला दिया। घर में आर्तध्यान कर वहीं मरकर वे इसी नगर के सेठ के घर में सुन्दर कबूतर के जोड़े के रूप में उत्पन्न हुए हैं, गुंजा के समान अरुण आँखोंवाले, रंग से श्याम। कुबड़े और बौनों द्वारा वह कबूतर-कबूतरी का जोड़ा ग्रहण किया जाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

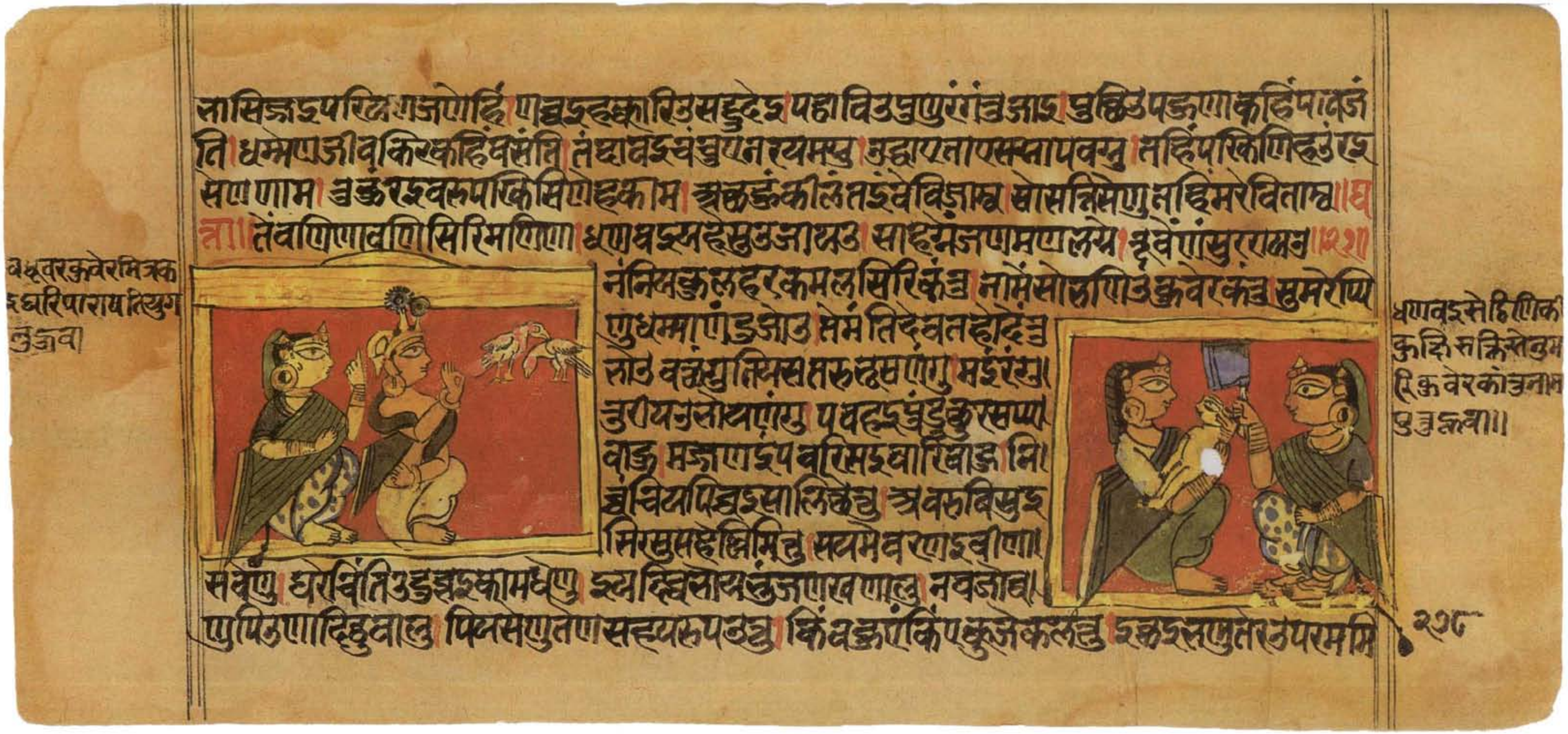

और परिजनों के द्वारा उससे सम्भाषण किया जाता। पुकारने पर नाचता और शब्द करता। भेजा गया क्रीड़ापूर्वक जाता। राजा पूछता है—'पापी कहाँ जाते हैं और धर्म से जीव कहाँ निवास करते हैं?' वह कबूतर का जोड़ा उसे चोंच से नरक बताता है और उठी हुई उसी चोंच से स्वर्ग-अपवर्ग बताता है। वहाँ मैं पक्षिणी रतिसेना नाम की थी और तुम स्नेह की कामना रखनेवाले रतिवेग थे। जब हम लोग क्रीड़ा करते हुए रह रहे थे तभी वह शक्तिषेण (सामन्त) मरकर—

घत्ता—वणिक्‌श्री के मान्य उस वणिक् से धनवती का पुत्र हुआ। जो सौभाग्य और जन-मन को अच्छे लगनेवाले रूप से मानो सुरराज था॥ २१ ॥

२२

मानो वह अपनी कुलगृहरूपी कमलश्री का प्रिय था। नाम से उसे कुबेरकान्त कहा गया। धर्मानन्द योग की याद कर वे मन्त्रीरूपी देव उसको भोग प्रदान करते हैं। वस्त्रांग, भूषणांग, मइरांग, चौथा भोजनांग (कल्पवृक्षों के द्वारा) पुण्ड्र और इक्षुरस का प्रवाह वहाँ नित्य प्रवाहित होता है, स्नान के लिए वारि का प्रवाह बरसता है। नित्य ही उत्तम धान्य के खेत पकते रहते हैं। नित्य ही सुखद लगनेवाली बाँसुरी सहित वीणा स्वयं बजती रहती है। घर में चिन्ता करते ही कामधेनु दुह ली जाती है। इस प्रकार दिव्यभोगों के भोगने में क्षण बितानेवाले अपने पुत्र को पिता ने नवयौवन में देखा। उसने उसके प्रिय सहचर प्रियसेन से पूछा— 'क्या बहुत-सी वधुएँ चाहिए, या एक ही कलत्र चाहता है तुम्हारा परममित्र, बताओ!'

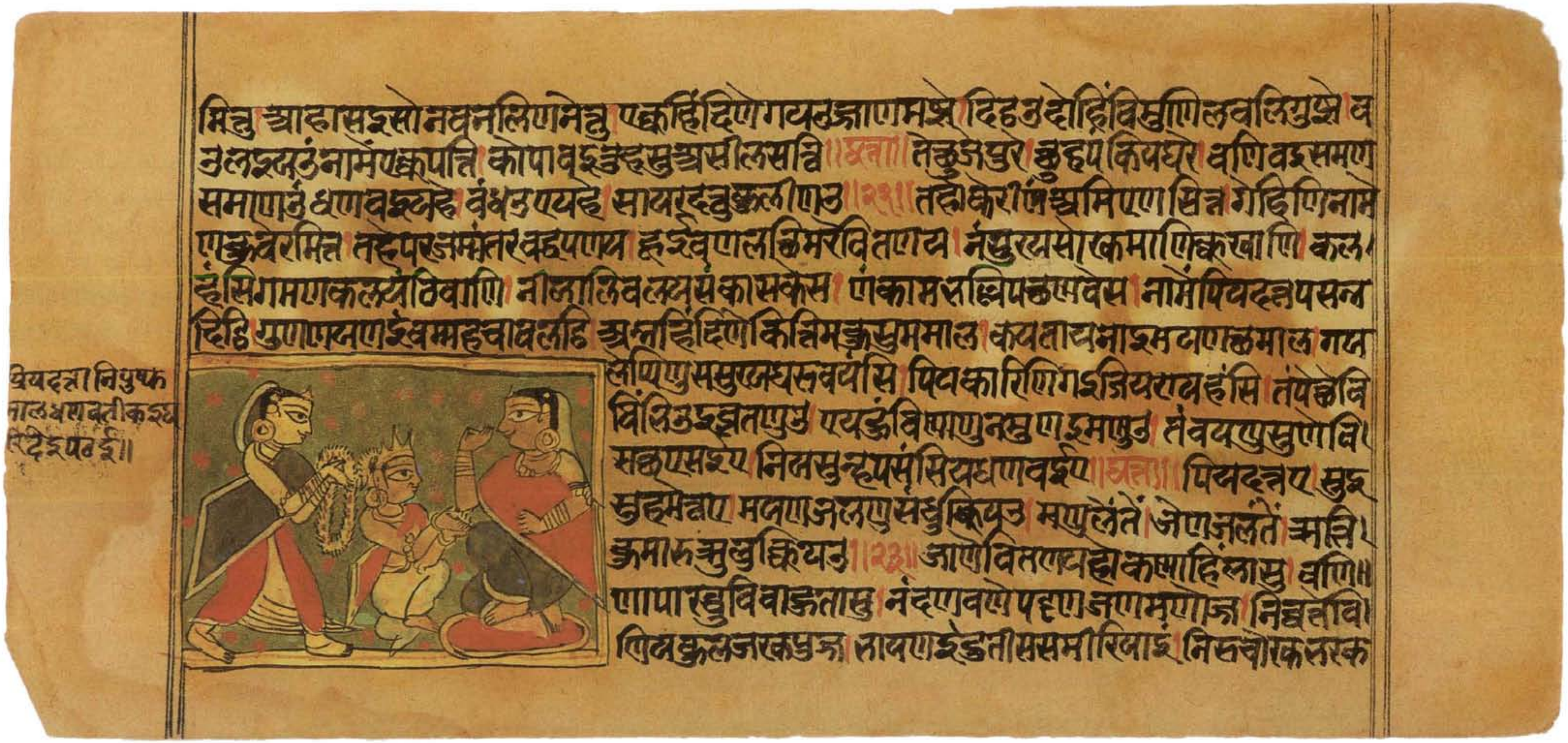

नवनलिन नेत्रवाला वह कहता है कि एक दिन हम लोग उद्यान में गये हुए थे, वहाँ पर दोनों ने चन्दनलता-कुंज में एक मुनि को देखा। वहाँ उसने एकपत्नी नाम का व्रत लिया है। तुम्हारे पुत्र की शीलवृत्ति को कौन पा सकता है!

घत्ता—चूने से पुते घरोंवाली उसी नगरी में कुबेर के समान इसी धनपति का बन्धु सागरदत्त नामक कुलीन सेठ था॥ २२॥

२३

उसकी अमृत से सींची गयी कुबेरमित्रा नाम की गृहिणी थी। दूसरे जन्म में प्रणय बाँधनेवाली अटवीश्री मरकर उसकी पुत्री हुई। मानो वह सुरति सुखरूपी मणियों की खदान हो, मानो कलहंस के समान गतिवाली और कलकंठ (कोयल) के समान स्वरवाली हो। नीली भ्रमरपंक्ति के समान केशवाली वह मानो प्रच्छन्न रूप में कामभल्ली हो। प्रियदत्ता नाम की प्रसन्नदृष्टि और गुणों से नत वह ऐसी लगती है मानो कामदेव की धनुषयष्टि हो। दूसरे दिन उसने एक कृत्रिम कुसुममाला बनायी जो मानो कामदेव की शस्त्रशाला थी। अपनी गति से राजहंस को जीतनेवाली प्रियकारिणी सखी उसे लेकर ससुर के घर गयी। उसे देखकर वणिक् पुत्र विस्मय में पड़ गया कि मनुष्य इस विज्ञान को नहीं जान सकता। यह सुनकर स्वच्छ सती धनवती के द्वारा अपनी बहू की प्रशंसा की गयी।

घत्ता—कानों को सुख देनेवाली प्रियवार्ता से काम की आग धधक उठी। उसका मन लेते हुए, जलती हुई आग ने कुमार को सन्तप्त कर दिया॥ २३॥

२४

पुत्र की कन्या में अभिलाषा जानकर वणिक् ने उसका विवाह प्रारम्भ किया। नन्दनवन में जनसुन्दर नगर और अपने कुलयक्ष की पूजा कर, उसने सुन्दर खाद्यों से भरे हुए बत्तीस पात्र फैला दिये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

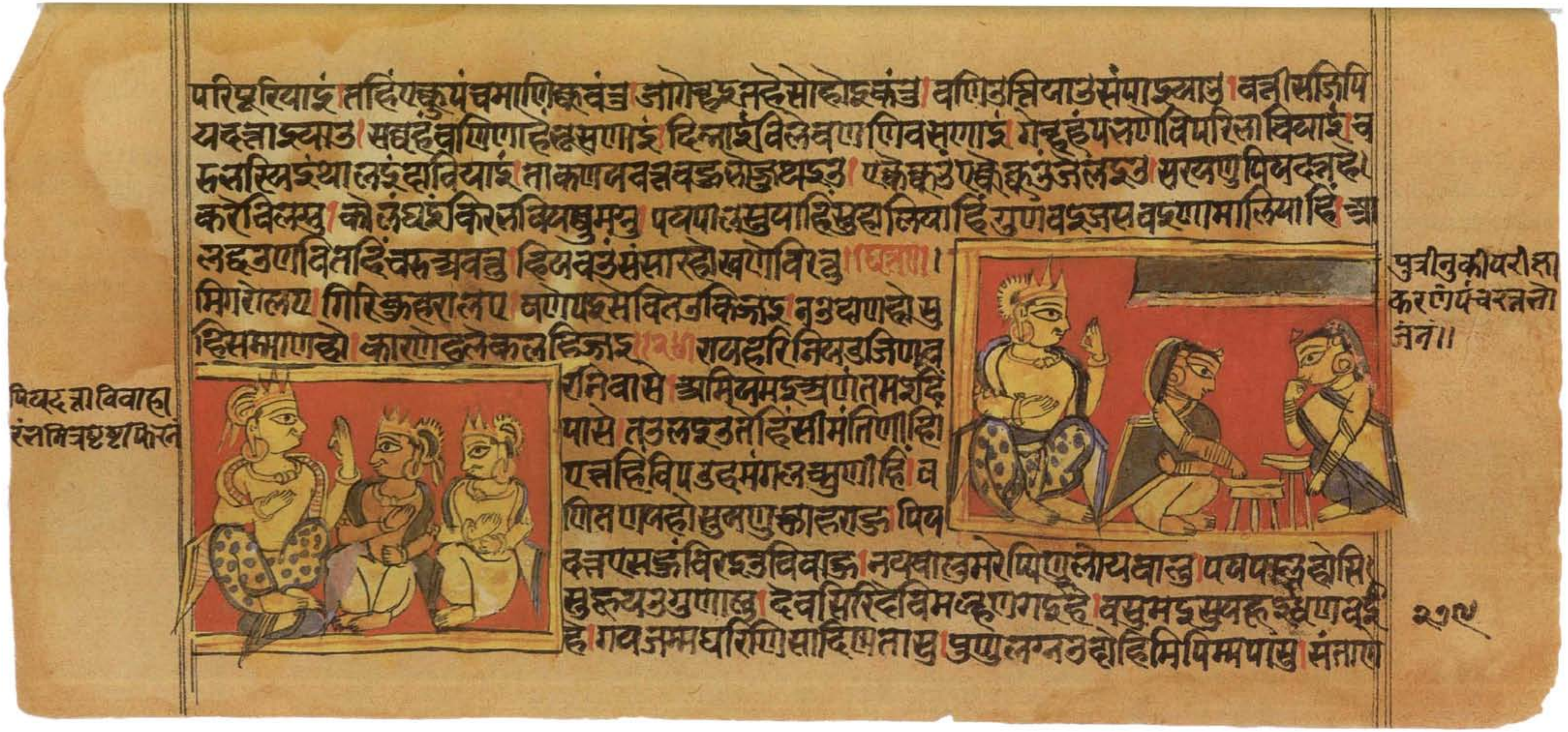

उनमें एक में पाँच माणिक्य रखे हुए थे, जो उसे ले ले वह उसका पति होगा। प्रियदत्ता आदि बत्तीस ही पुत्रियाँ वहाँ आयीं। सेठ ने सभी के लिए आभूषण, विलेपन और वस्त्रादि दिये और यह कहकर कि अपनी पसन्द के घड़े ले लो, उसने भक्ष्य पदार्थों से भरे घड़े बता दिये। तब बहुभोज्य से भरा एक-एक स्वर्ण पात्र एक-एक ने ले लिया। रत्नों से भरा घड़ा प्रियदत्ता के हाथ लगा, भवितव्य का मार्ग कौन लाँघ सकता है ? गुणवती, यशोवती, नामावली, शुभसखी प्रजापाल की पुत्रियों ने वह भक्ष्यपदार्थों से भरा स्वर्णपात्र नहीं लिया। एक क्षण में उनका मन संसार से विरक्त हो गया।

घत्ता—(वे कहने लगीं) अच्छा है पशुओं से मुखर पर्वतरूपी घर में प्रवेश कर तप किया जाये। सुधिसम्मान और दान के लिए हे सखी, कलह नहीं करनी चाहिए॥ २४॥

२५

राजभवन के निकट स्थित जिनमन्दिर में अमृतवती और अनन्तमती आर्यिकाओं के पास उन कन्याओं ने नगाड़ों की मंगल-ध्वनियों के साथ तप ग्रहण कर लिया। सुधीजनों का उत्साह बढ़ानेवाले उस वणिक्‌पुत्र का प्रियदत्ता के साथ विवाह कर दिया गया। व्रतों का पालन करनेवाला लोकपाल मरकर प्रजापाल का गुणवान् पुत्र हुआ। देवश्री देवी मदमाती चाल से चलनेवाली धनवती की वसुमती नाम की पुत्री हुई। पिछले जन्म की पत्नी वह (वसुमती) उसको (प्रजापाल के पुत्र को) दे दी गयी। फिर दोनों प्रेमपाश में बँध गये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुत्र को अपनी कुल-परम्परा में स्थापित कर राजा ने (प्रजापाल ने) भी मुनिव्रत ले लिये। कनकमाला आदि देवियाँ भी संन्यास लेकर स्थित हो गयीं। और भी जो परिजन थे वे भी प्रव्रजित हो गये। जो कोमलमति के लोग थे वे सब सगर्व घर में रह गये। कुबेरमित्र नाम का एक बूढ़ा मन्त्री ही ऐसा था जो तरुणों के लिए शत्रु के समान था।

घत्ता—कुमति चपलमति (तरुण) कहता है कि न हम हँस पाते हैं और न खेल पाते हैं। वृद्धावस्था को प्राप्त यह अप्रशस्त मनुष्य क्षुब्ध होता है ॥ २५ ॥

२६

हे राजन् (लोकपाल), तुम्हारे पिता ने जो मन्त्री रखा है उसको देखने से हमें शान्ति नहीं मिलती। विगलित इन्द्रियोंवाला वह क्या काम देखेगा? अरे, वृद्धों को कुछ भी काम नहीं देना चाहिए। वह हम लोगों की भुकुटियों के बीच दृष्टिपथ में न आये। वह सेठ तबतक अपने घर में रहे। राजा भी कुमार था और मन्त्री भी कुमार था। दीन भी व्यक्ति यौवन में विकारशील होता है। तब राजा ने पण्डितों की परम्परा को देखनेवाले वृद्ध मन्त्री को घर आने से मना कर दिया। अपरिपक्व बुद्धि और क्रीड़ा करने के स्वभाववाला वह राजाधिराज शिशुमन्त्रियों के साथ दूसरे दिन नन्दनवन में प्रविष्ट हुआ। वहाँ उसने लाल कान्तिवाला बावड़ी-जल देखा। राजा ने हँसकर चपलमति से पूछा कि यह पानी किस कारण से लाल है ? पण्डितों के द्वारा कही गयी विशिष्ट बुद्धि से रहित विपुलमति के पुत्र चपलमति ने प्रत्युत्तर दिया कि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

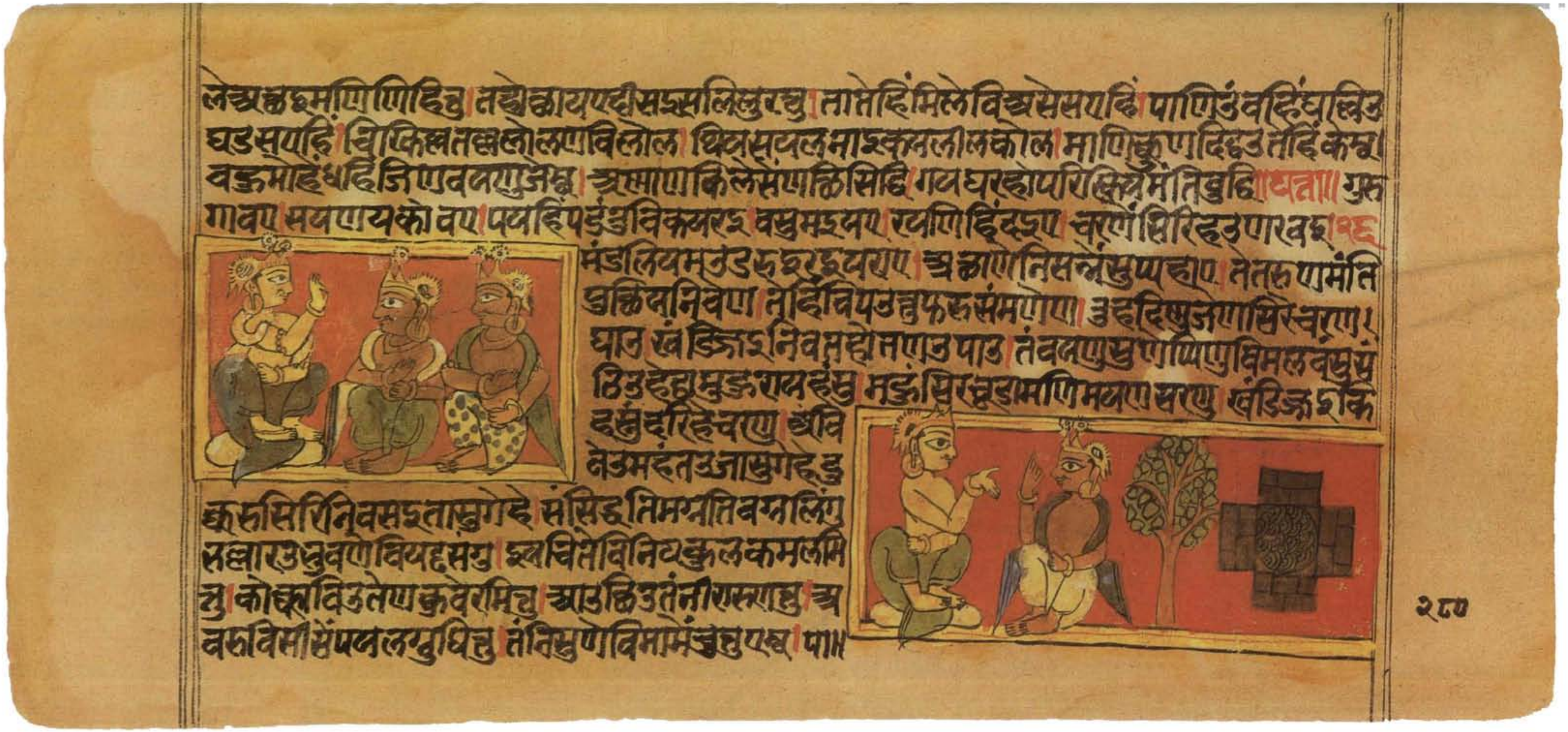

बावड़ी के तल में मणि रखा हुआ है, उसकी कान्ति से जल लाल दिखाई देता है। तब संशयरहित उन लोगों ने सैकड़ों घड़ों से बावड़ी का जल बाहर फेंक दिया। समूची बावड़ी कीचड़ के तलभाग में लोटने से ऐसी दिखाई देने लगी मानो चंचल, क्रीड़ा करता हुआ सुअर स्थित हो। परन्तु उन्हें माणिक्य उसी प्रकार दिखाई नहीं दिया जिस प्रकार अत्यधिक मोह से अन्धे लोगों को जिनवर के वचन दिखाई नहीं देते। अज्ञानपूर्वक क्लेश से सिद्धि नहीं होती। वे घर गये। वहाँ मन्त्री की बुद्धि की फिर परीक्षा की।

घत्ता—अत्यन्त गर्वीली प्रणयपूर्वक कोपवाली पत्नी वसुमति ने रात्रि में पैरों पर पड़ते हुए प्रेम करनेवाले राजा के सिर को पैर से आहत कर दिया॥ २६ ॥

२७

मण्डलित मुकुटों की कान्ति के समान शोभित, प्रभात में आसन पर बैठे हुए राजा से उन तरुण मन्त्रियों ने भी कठोर शब्दों में कहा कि जिसने तुम्हारे सिर पर लात से प्रहार किया है, हे राजन्, उसके पैर को काट दिया जाये। वह वचन सुनकर विमलवंश का वह राजहंस अपना मुँह नीचा करके रह गया कि मेरे सिर की चूड़ामणि, कामदेव की शरण सुन्दरी का चरण कैसे खण्डित किया जाये? जिसके घर में महान् अविवेक रहता है, उसके घर में लक्ष्मी बड़ी कठिनाई से निवास करती है। अत: जिसे समग्र त्रिवर्ग की पहचान सिद्ध है ऐसा वृद्ध-संग ही जग में अच्छा है। यह विचारकर, अपने कुलरूपी कमल के लिए सूर्य के समान कुबेरमित्र को उसने बुलवाया और पूछा—पानी का वह लाल होना और जो सिर में पादाग्र से आहत किया गया था। यह सुनकर आदरणीय कुबेरमित्र ने कहा—

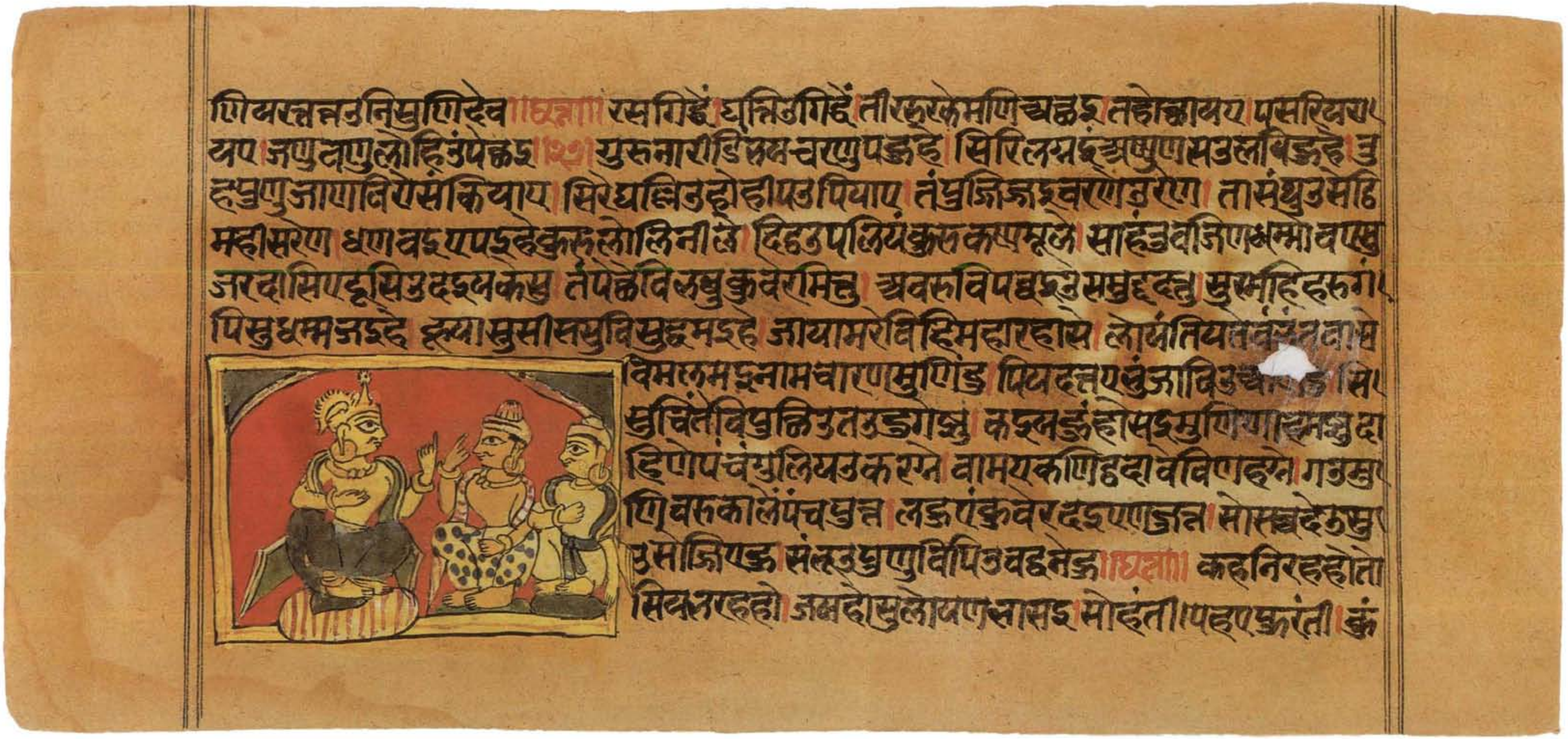

हे देव, पानी का लाल होना सुनिए—

घत्ता—रस के लालची गृद्ध के द्वारा छोड़ा गया मणि तट के वृक्ष पर स्थित है। उसकी कान्ति फैलने पर लोग जल को लाल देखते हैं॥ २७॥

२८

अपने कुल के चन्द्र राजा के सिर पर गुरु, बालक और स्त्री का पैर लगता है अन्य का नहीं। और तुम यह जानकर कि क्रोध से भरी हुई प्रिया के द्वारा तुम्हारे सिर पर लात मारा गया होगा, उसे तुम्हें श्रेष्ठ नूपुर से पूजना चाहिए। यह सुनकर राजा ने सेठ की प्रशंसा की। धनवती ने केशराशि से नीले कर्णमूल में सफेद बाल देखा, मानो जिनधर्म का उपदेश कहते हुए के समान वृद्धारूपी दासी ने पति के बाल को दूषित कर दिया था। यह देखकर भव्य कुबेरमित्र और दूसरा समुद्रदत्त भी प्रव्रजित हो गया और सुमेरुपर्वत पर सुविशुद्ध मतिवाले सुधर्म मुनि के पास जाकर उनके अच्छे शिष्य बन गये। मरकर वे ब्रह्म स्वर्ग में बुद्धि से महान् लौकान्तिक देव हुए। प्रियदत्ता ने विपुलमति नामक अन्तिम चारण मुनीन्द्र को आहार कराया और बच्चे का विचारकर उसने पूछा—हे मुनिनाथ, मुझे दुर्ग्राह्य तप कब प्राप्त होगा? तब दायें हाथ के अग्रभाग की पाँच अँगुलियाँ और बायें हाथ की कनिष्ठा बताकर वह आकाशमार्ग से चल दिये। तब सब से छोटे कुबेर दयित सहित उसे समय के साथ पाँच पुत्र हुए। वह सत्यदेव भी मर गया, वही यह हुआ है, बद्धनेह और प्रिय।

घत्ता—निष्पाप भरत को सन्तुष्ट करनेवाले जय से सुलोचना कथा कहती है। प्रभा से विस्फुरित,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुन्दपुष्पों के समान दाँतोंवाली वह शोभित है ॥ २८ ॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुण-अलंकारों से युक्त महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का जय महाराज सुलोचना-भव-स्मरण नाम का उनतीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥ २९ ॥

सन्धि ३०

अमृतमती और अनन्तमती सतियों तथा जिनवती, गुणवती तथा श्रेष्ठ यशोवती आदि द्वारा शीलगुणों से प्रसाधित बन्धुवर्ग को सम्बोधित किया गया।

१

वह राजा लोकपाल, वह रानी वसुमती, जो इन्द्राणी-जैसी स्त्रियों के समान थी, बारह प्रकार की दीक्षा से वे दोनों श्रावकव्रत के अपने मार्ग में लग गये। शान्ति आर्यिका ने निरन्तर धर्म का आख्यान किया। अन्तः-पुर जिनमार्ग में लग गया। इतने में जिसमें नित्य उत्सव मंगल का निर्घोष हो रहा है ऐसे कुबेरकान्त के निवासस्थान पर चरियामार्ग में राग से रहित जंघाचारणयुगल आया। प्रियदत्ता के पति लोकपाल ने उसे नमस्कार किया, उसने भी शीघ्र उसके आँगन में पैर रखा। इतने में वहाँ दो पक्षी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

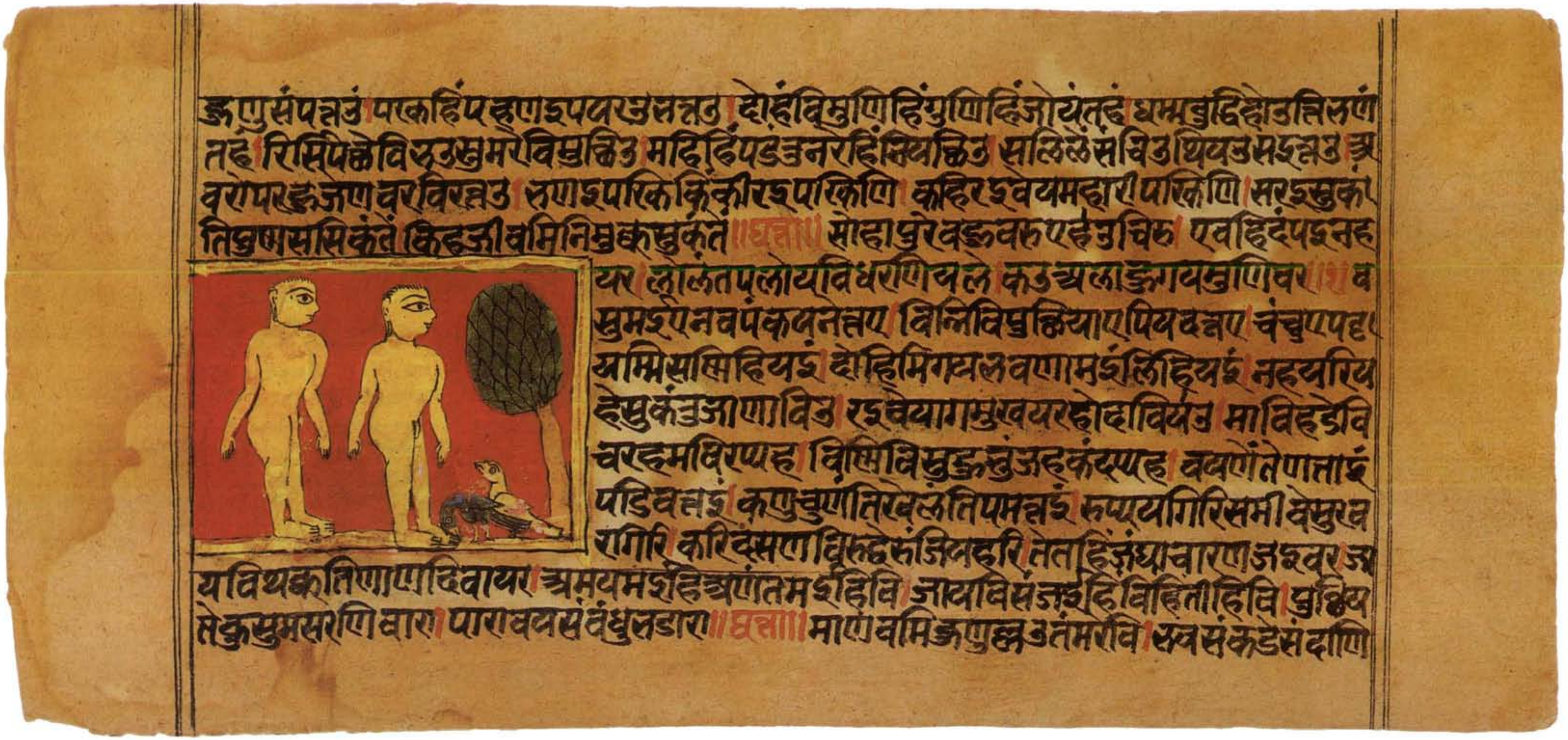

आये, वे भक्त मुनि के चरणों की धूल अपने पंखों से झाड़ते हैं। दोनों गुणी मुनियों ने देखते हुए 'धर्मबुद्धि हो' यह कहा। ऋषि को देखकर और अपना पूर्वभव याद कर पक्षियों का वह जोड़ा मूर्च्छित हो गया। धरती पर गिरते हुए उसे लोगों ने देखा। पानी सींचे जाने पर जब वे सचेत हुए तो केवल एक-दूसरे के प्रति विरक्त हो उठे। पक्षी याद करता है—पक्षिणी क्या करती है। मेरी प्रणयिनी रतिवेगा कहाँ है। पक्षिणी याद करती है कि पूर्णचन्द्र के समान कान्तिवाले सुकान्त के बिना मैं किस प्रकार जीवित रहूँगी!

घत्ता—पहले शोभापुर में यह वधू-वर थे और इस समय नभचर दम्पति हैं। धरतीतल पर पड़े हुए देखकर (इसे) अन्तराय मानकर मुनिवर चले गये॥ १॥

२

नवकमलों के समान नेत्रोंवाली प्रियदत्ता और वसुमती के द्वारा पूछे जाने पर दोनों ने चोंचों से लिखे गये गत भव के नामों को रख दिया। पक्षिणी के द्वारा अपना पति सुकान्त बता दिया गया, और पक्षी के लिए रतिवेगा का आगमन बता दिया गया। ''अलग-अलग होकर मत विचरो, एक-दूसरे पर विरक्त मत होओ, दोनों ही काम का सुख भोगो।'' इन शब्दों से वे दोनों पुनः अनुरक्त हो गये। वे कण चुगते और दूसरे पर आसक्त होते हुए क्रीड़ा करते हैं। तीन ज्ञानरूपी दिवाकरवाले वे जंघाचारण मुनि जाकर सुमेरु पर्वत पर विजयार्ध पर्वत के निकट, जहाँ कि गजों को देखकर सिंह उनके विरुद्ध दहाड़ते रहते हैं, स्थित हो गये। अमृतमती और अनन्तमती भी और तीनों आर्यिकाओं के द्वारा भी जाकर, कामदेव के बाणों का निवारण करनेवाले आदरणीय मुनिवर से पारावत के सम्बन्ध के विषय में पूछा।

घत्ता—जिस प्रकार से वह मानव-जोड़ा मरकर भवसंकट में पड़ा था

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और जिस प्रकार उन्होंने केवलज्ञान से जाना था, मुनि वह सब बताते हैं। कुछ भी छिपाकर नहीं रखा॥ २॥

३

किस प्रकार वैश्यकुल में दो बालक उत्पन्न हुए थे—रतिवेगा और सुकान्ता नाम से। किस प्रकार उनका विवाह हुआ और किस प्रकार भागे, किस प्रकार सामन्त शक्तिषेण की शरण में गये। किस प्रकार दुष्ट पीछे लग गया, किस प्रकार उसे डाँटा गया और कर्णकटु अक्षरों से निन्दित किया गया। सज्जन की संगति से किस प्रकार व्रतों का पालन किया और किस प्रकार सुख-सामर्थ्य से जन्म लिया। किस प्रकार शत्रु ने उनके घर को जला दिया और किस प्रकार वधू-वर पक्षी-योनि को प्राप्त हुए। कामरूपी हरिण के विध्वंस के लिए अखेटक के समान मुनिनाथ ने जिस-जिस प्रकार कहा, उस-उस प्रकार कान्ताओं ने आकर लोकपाल के पुरवर में प्रवेश कर शुभ संयोगवाले शिथिलित-स्नेह समस्त श्रावकलोक से यह सब कहा।

घत्ता—यह सुनकर जनपद की धर्म में रुचि हुई। विकसित मुखवाली मृगनयनी प्रियदत्ता ने गुणवती और यशोवती आर्यिका के चरणों के मूल में व्रत ग्रहण कर लिया॥ ३॥

४

धनवती सेठानी भी घर छोड़कर सम्यक्‌दर्शन में स्थित होती हुई आर्यिका हो गयी। और कुबेरसेना रानी भी दीक्षा लेकर अदीन हो गयी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक बार किसी नौकर ने नहीं देखा और विधि के विधान से प्रेरित होकर कबूतर-कबूतरी का वह जोड़ा घूमता हुआ, उद्यानवाले नगर के सीमान्त ग्राम में चला गया। जबतक वह अपनी गर्दन झुकाकर चोंच से कण निकालता है और बाड़ के समीप चरता है, तभी वह दुष्ट, उन्मत्त (सरद्दुंदुर और सेठ) के आमिष का भोजन करनेवाले, नवमधुबिन्दु के समान पिंगल आँखोंवाले, अशुभ तीखे और कुटिल नखों के शरीरवाले बिलाव के रूप में उत्पन्न हो गया। बाड़ के विवर से शीघ्र निकलकर उसने कबूतर को कण्ठ में पकड़ लिया। कबूतरी सब ओर से घूमकर उस पर झपटती है, अपने पति के पराभव पर स्त्री भी कुपित हो उठती है। पूर्वजन्म के वैर के कारण दाँतों से भयंकर उस बिलाव ने कसमसाते हुए उस कबूतर को खा लिया।

घत्ता—पति के मर जाने पर दु:ख से विदारित कबूतरी ने विधि को बलवान् कहा और अपने को तृणवत् समझती हुई उसने साँप के मुँह में डाल दिया॥ ४॥

५

जब पशुओं और पक्षियों में प्रेम होता है तो मनुष्य का मन क्या विरह से विदीर्ण नहीं होता ? फिर वहीं जीवदयाफल से सुन्दर पुष्कलावती देश में विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी में मोक्ष की नसैनी उशीरवती नगरी में आदित्यगति नाम का विद्याधर राजा निवास करता था। तेज में वह मानो प्रत्यक्ष कामदेव था। उसकी पत्नी शशिप्रभा से रतिवेग (कबूतर) हिरण्यवर्मा नामक कामदेव के समान सुन्दर पुत्र हुआ। उस पर्वत में गौरी देश और भोगपुर नगर से प्रसिद्ध उत्तर श्रेणी में वायुरथ नाम का विद्याधर आरूढ़ था, जो स्वयंप्रभा नामक विद्याधरी का पति था। वहाँ पर वह रतिषेणा नाम की पक्षिणी मरकर उन दोनों से इस प्रकार जन्मी मानो यक्षिणी हो। वह कन्या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

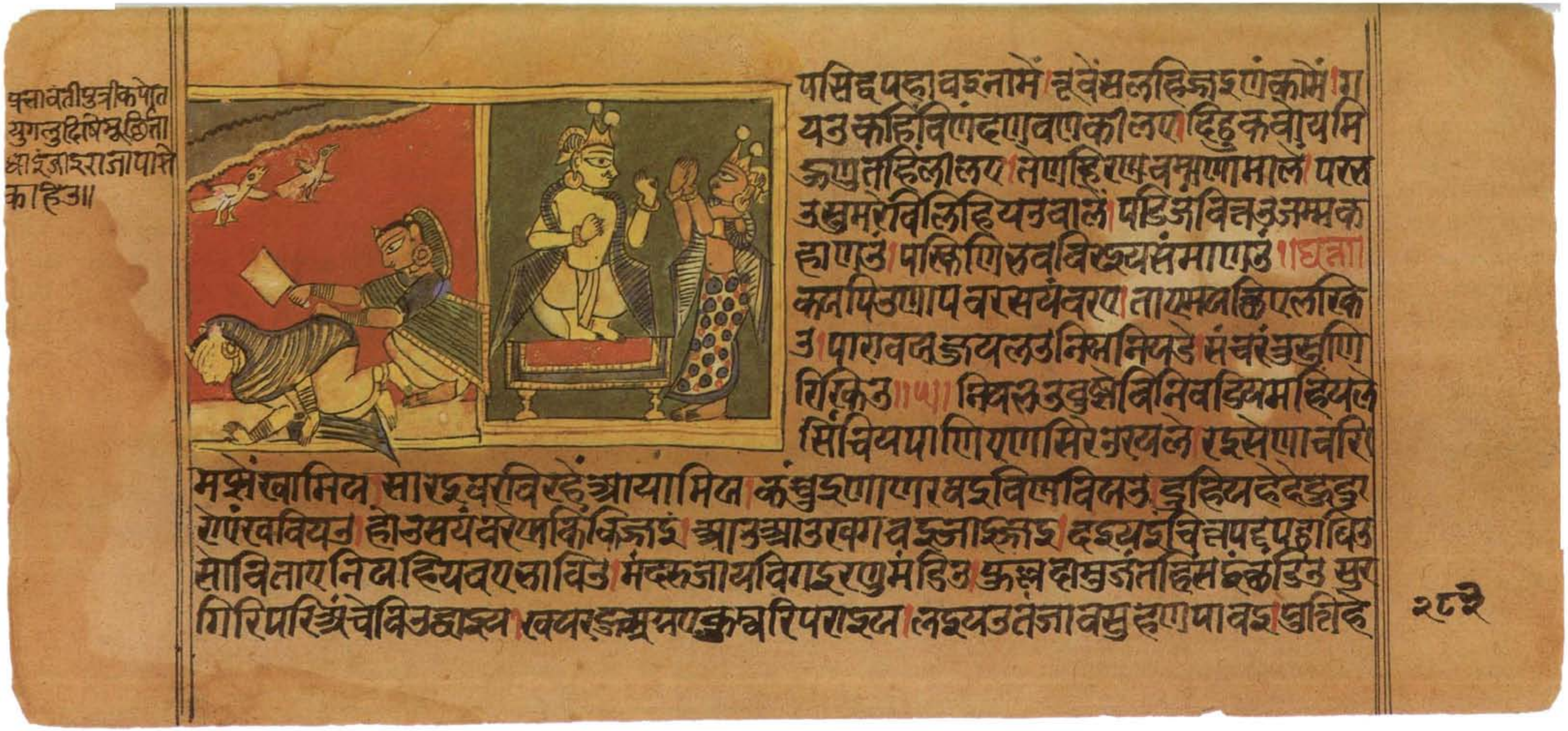

प्रभावती के नाम से प्रसिद्ध थी। रूप में उसकी प्रशंसा कामदेव के द्वारा की जाती थी। एक दिन कुमार (हिरण्यवर्मा) नन्दनवन की क्रीड़ा के लिए कहीं गया हुआ था। उसने देखा कि एक कबूतर-जोड़ा क्रीड़ा कर रहा है। उस युवा कुमार ने पूर्वजन्म की याद कर पट्ट पर जो पक्षीरूप में आचरित सम्माननीय बीता हुआ जन्म-कथानक था, वह लिख डाला।

घत्ता—स्वयंवरवाली उस मृगनयनी ने अपने प्रिय को लक्षित नहीं किया। अपने पास से जाते हुए उसने एक कबूतर-जोड़ा देखा॥५॥

६

अपने पूर्वजन्म की याद कर धरती पर गिर पड़ी। उसे सिर और उरतल पर सींचा गया। रतिषेणा का जीव मध्य में क्षीण प्रभावती रतिवर विरह से पीड़ित हो उठी। कंचुकी ने राजा से निवेदन किया कि कन्या की देह खोटे रोग से नष्ट हो गयी है। स्वयंवर से क्या ? हे विद्याधर, आओ-आओ, चला जाए। प्रिय ने उसे चित्रपट भेजा है जो उसे अपने हृदय में अच्छा लगा। मन्दिर में जाकर उसने गति-प्रतियोगिता प्रारम्भ की है। जिस पुष्पमाला को वह स्वयं छोड़ती है, वह सुमेरु पर्वत की प्रदक्षिणा के लिए दौड़ी, और विद्याधरों के आगे कुमारी पहुँची, जबतक वह उसे ले नहीं लेती, तबतक सुख नहीं पाती।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुत्री की गति को कौन पा सकता है ! जबतक पिता हर्ष से रोमांचित होता है और मन्त्री के वचन को देखने के लिए जाता है और जबतक विद्याधर समूह जीत लिया जाता है, तबतक हिरण्यवर्मा वहाँ पहुँचा।

घत्ता—फिर सुमेरु पर्वत से पुष्पमाला गिरा दी जाती है और दोनों साथ दौड़ते हैं। शीघ्र ही परिक्रमा देते हुए उन्हें नाग, किन्नर, चन्द्रमा और सूर्य ने देखा॥ ६ ॥

७

रति के हर्ष से प्रेरित, रतिवर का जीव (हिरण्यवर्मा) जहाँ माला गिरनेवाली थी, वहाँ पहुँचा। उसने आकाश में विद्याधरी के समान नृत्य करती हुई और धरती पर गिरती हुई उस पुष्पमाला को ग्रहण कर लिया। भ्रमरों को धारण करनेवाली पुष्पमाला इस प्रकार दिखाई दी मानो काम ने तीरों की माला का सन्धान किया हो। दोनों ने चित्तों को चाँपकर रखा लिया, दोनों ने गिरते हुए और काँपते हुए नेत्रों को धारण कर लिया, दोनों ने नागराजों को दलित करनेवाले मदनरूपी गजेन्द्र को लज्जा का दृढ़ अंकुश दिया। तब वर उस सुन्दरी को देखने के लिए गया, इस बीच में प्रियकारिणी आकर स्थित हो गयी। उसने उसका पट्ट उसे दिखाया। उसने भी अपनी तिरछी निगाहों से उसे देखा। देखकर वह पक्षी की कहानी समझ गया। यहाँ प्रमुख विद्याधर युवती प्रभावती स्वजनों के साथ पिता के घर पहुँची। बहुतूर्यों के निनादों के साथ आदित्यगति और वायु-रथ विद्याधर राजाओं ने ऐसा विवाह किया कि नागेन्द्र भी उसका वर्णन नहीं कर सकता। प्रेमसम्बन्ध से प्रगलित बह रहा है पसीना जिनसे, ऐसे—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

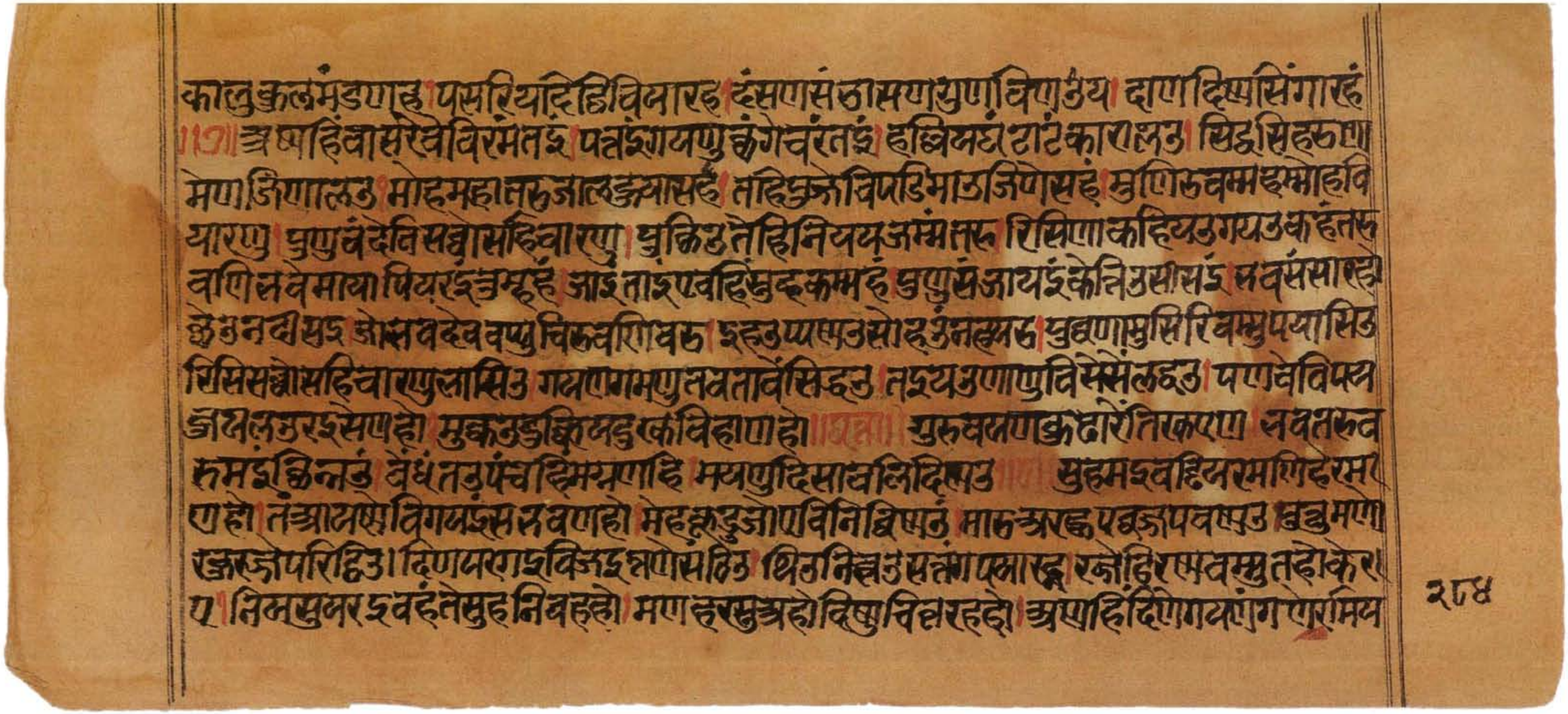

घत्ता—कुलमण्डन और प्रसरित दृष्टि विकारवाले इन दोनों का दर्शन, भाषण गुणविनय दान और शृंगार करते हुए समय बीतने लगा॥ ७॥

८

एक दूसरे दिन क्रीड़ा करते हुए तथा आकाश की गोद में चढ़ते हुए वे दोनों हिलते हुए घण्टों की ध्वनियों से निनादित सिद्ध शिखर नाम के जिनालय में पहुँचे। वहाँ पर मोहजालरूपी तरुजाल के लिए हुताशन के समान जिनेश्वर की प्रतिमा को पूजकर, फिर कामदेव के व्यामोह का विदारण करनेवाले सर्वोषधि चारण मुनि की वन्दना कर उन्होंने अपने जन्मान्तर पूछे। मुनि ने उन्हें बीती हुई कहानी बता दी। वणिक्‌भव में जो तुम्हारे माता-पिता थे (सुकान्त के अशोक और जिनदत्ता, रतिवेगा के श्रीदत्त और विमलश्री), इस समय शुभकर्मवाले तुम लोगों के वे ही पुनः माता-पिता हुए हैं। कितना कहा जाये, भवसंसार का अन्त नहीं है। वह बेचारा भवदेव का जीव वणिक्‌वर, मैं यहाँ उत्पन्न हुआ। पहला नाम श्रीवर्मा प्रकाशित हुआ फिर सर्वोषधि चारण कहा गया। तप के प्रभाव से आकाशगमन सिद्ध है और विशेष रूप से तीसरा अवधिज्ञान मुझे प्राप्त है। पाप-दुःखों का नाश करनेवाले रतिषेण भट्टारक के चरणयुगल को प्रणाम कर मैं मुक्त हुआ।

घत्ता—गुरुवचनरूपी तीखे कुठार से मैंने संसाररूपी वृक्ष को छिन्न-भिन्न कर दिया और पाँच बाणों से बिद्ध करते हुए मैंने काम को दिशाबलि दे दी॥ ८॥

९

यह सुनकर पति और पत्नी की सुमति बढ़ गयी और वे अपने घर गये। वायुरथ विद्याधर मेघशिखर देखकर विरक्त हो गया और उसने दीक्षा ग्रहण कर ली। उसका पुत्र मनोरथ गद्दी पर बैठा। आदित्यगति विद्याधर भी जैनत्व को प्राप्त हुआ। उसके सप्तांग प्रकारवाले राज्य में हिरण्यवर्मा स्थापित हो गया। अपनी पुत्री रतिप्रभा उसने सुख के समूह मनोहर पुत्र चित्ररथ के लिए दे दी। एक दूसरे दिन उन्होंने आकाश के प्रांगण में रमण किया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

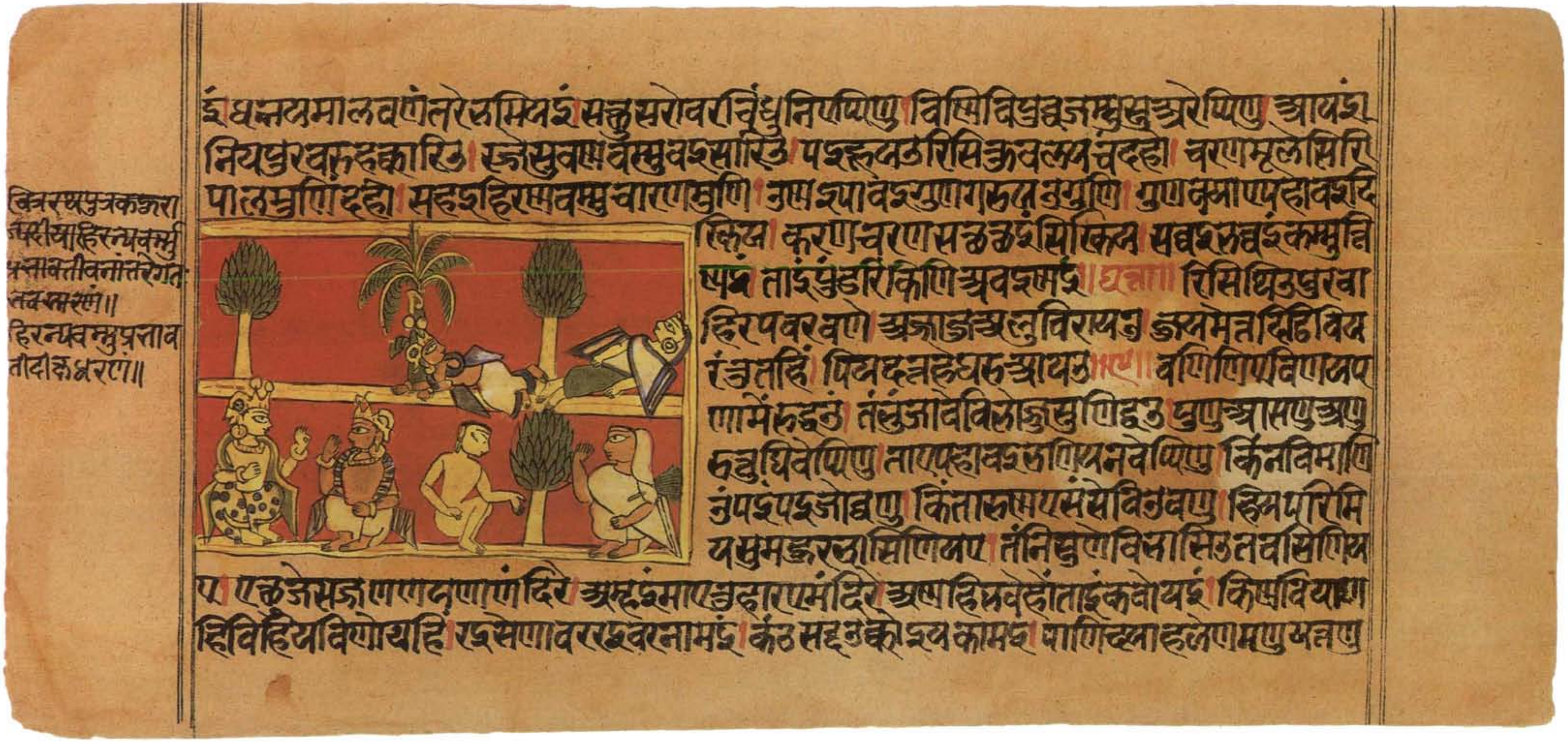

और धान्यमालक वन के भीतर भ्रमण किया। सर्प सरोवर के चिह्नों को देखकर और पूर्वजन्म को जानकर दोनों अपने नगर आये। उन्होंने सुवर्णवर्मा को पुकारा और राज्य पर प्रतिष्ठित कर दिया। ऋषिकुलवलय के चन्द्र श्रीपाल मुनीन्द्र के चरणमूल में चारणमुनि होकर पति (हिरण्यवर्मा) शोभित हैं। गुणी गुणों से महान् वे उन्नति पाते हैं। गुणवती आर्यिका से प्रभावती दीक्षित हुई। उसने करणानुयोग और चरणानुयोग शास्त्रों के अर्थों को सीखा। कर्मों से विरक्त सभी भव्य पुण्डरीकिणी में अवतीर्ण हुए।

घत्ता—आर्यायुगल से विराजित मुनि नगर के बाहर प्रवर उद्यान में ठहर गये। युगमात्र है दृष्टि जिसकी ऐसी आर्या गुणवती विहार करती हुई उस प्रियदत्ता के घर आयी॥ ९॥

१०

सेठानी ने विनय और प्रणाम से उन्हें रोक लिया और स्निग्ध भोजन कराया। फिर योग्य आसन देकर उसने प्रभावती से प्रणाम करके पूछा—"तुमने अपने पतियौवन का तिरस्कार क्यों किया ? और तारुण्य में तुमने वन का सेवन क्यों किया?" यह सुनकर हित, मित और सुमधुर बोलनेवाली तपस्विनी ने कहा—"यहीं पर सज्जनों के नेत्रों को आनन्द देनेवाले इस तुम्हारे ही घर में, दूसरे जन्म में हे आदरणीये, हम कबूतर थे विनोद करनेवाले, हम दोनों को (कबूतर-कबूतरी) क्या तुम नहीं जानती ? रतिषेणा और रतिवर नामवाले, अपने कण्ठ शब्दों से काम को संकेत करनेवाले। जीवदया के लाभ से हम दोनों ने मनुष्य जन्म

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

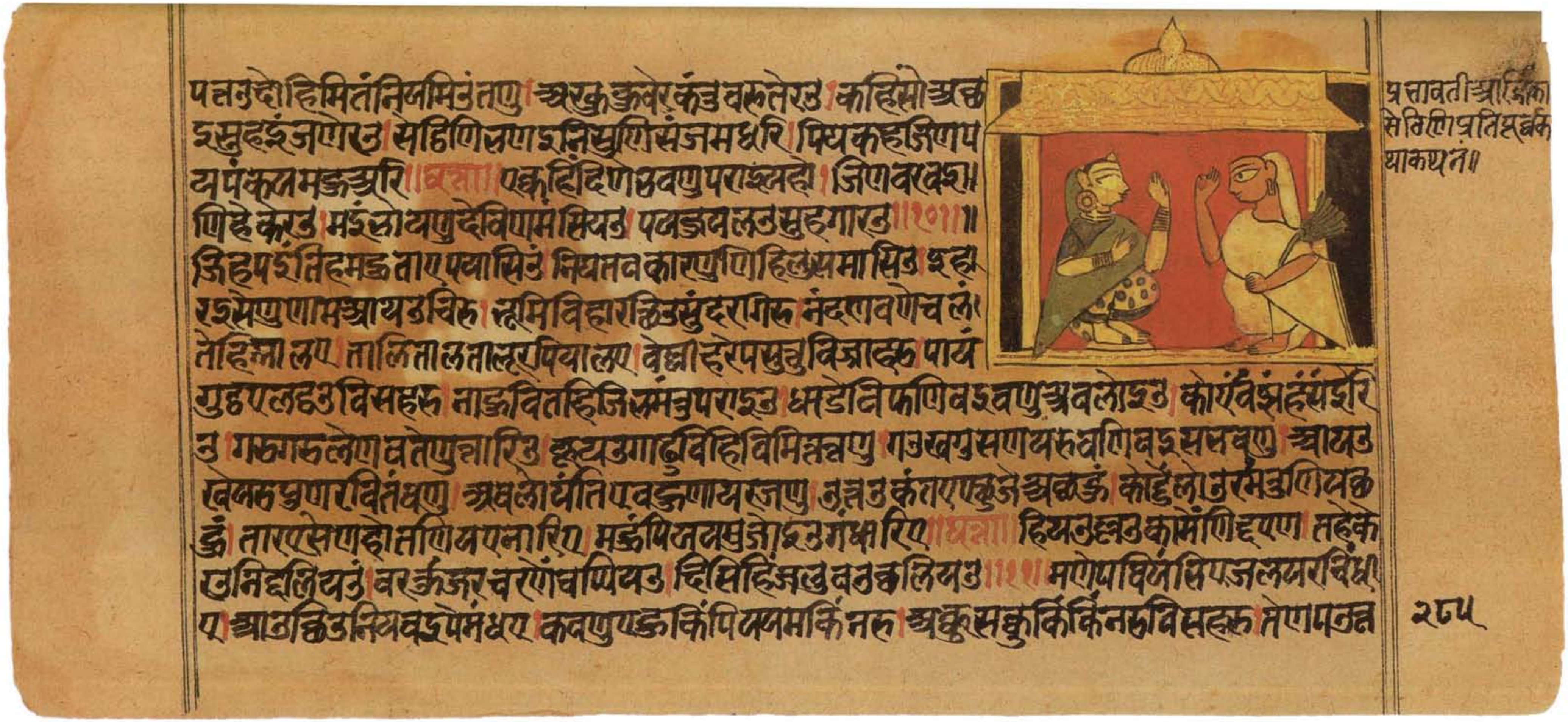

पाया और इसीलिए हम दोनों ने अपना मन नियमित कर लिया। बताओ तुम्हारा कुबेरकान्त वर कहाँ है? सुख का जनक वह, इस समय कहाँ है?'' इस पर सेठानी कहती है—हे संयमधारिणी और जिन के चरणकमलों की मधुकरी, प्रिय की कथा सुनिए।

घत्ता—एक दिन घर पर आयी हुई जिन संन्यासिनी को आहार देकर उनके शुभकारक दोनों चरणों को नमस्कार किया॥ १०॥

११

जिस प्रकार तुमने, उसी प्रकार उसने अपने तप का कारण थोड़े में बताते हुए कहा—पहले यहाँ रतिसेन नाम का सुन्दर वाणीवाला विद्याधर भूमिविहार के लिए आया था। जिसमें हिंतालवृक्ष आन्दोलित हैं, और जो ताली-ताल और तालूर वृक्षों से प्यारा है, ऐसे नन्दनवन के लताघर में वहाँ सोया हुआ था, विषधर ने उसके पैर के अँगूठे में काट खाया। मेरा स्वामी भी घूमता हुआ वहाँ पहुँचा। चिल्लाकर उसने वन में साँप को देखा। क्रोध से उसने वं झं हं सं वं क्रं कहा और गरुड़ के समान उसने वह विष उतार दिया। उन दोनों में प्रगाढ़ मित्रता हो गयी। विद्याधर अपने नगर और सेठ अपने घर चला आया। वह विद्याधर दुबारा उस वन में आया। वहाँ बहुत-से नगरजनों को देखते हुए उसकी कान्ता गान्धारी ने कहा कि मैं यहीं पर हूँ और कौतुक से क्रीड़ा करते हुए लोक को देखूँगी। तब रतिषेणा नामक विद्याधर की स्त्री गान्धारी ने मेरे प्रियतम को देखा।

घत्ता—निर्दय कामदेव ने उसके हृदय को विदीर्ण कर दिया, मानो श्रेष्ठ गज के चरणों से आहत जल दिशाओं में उछल पड़ा॥ ११॥

१२

मन में कामदेव के बढ़ने पर प्रेम की उस अन्धी ने अपने पति से पूछा—हे प्रियतम, यह कौन है? क्या मनुष्य है, बताओ क्या यह यक्ष है? क्या किन्नर है ? क्या विषधर है ?

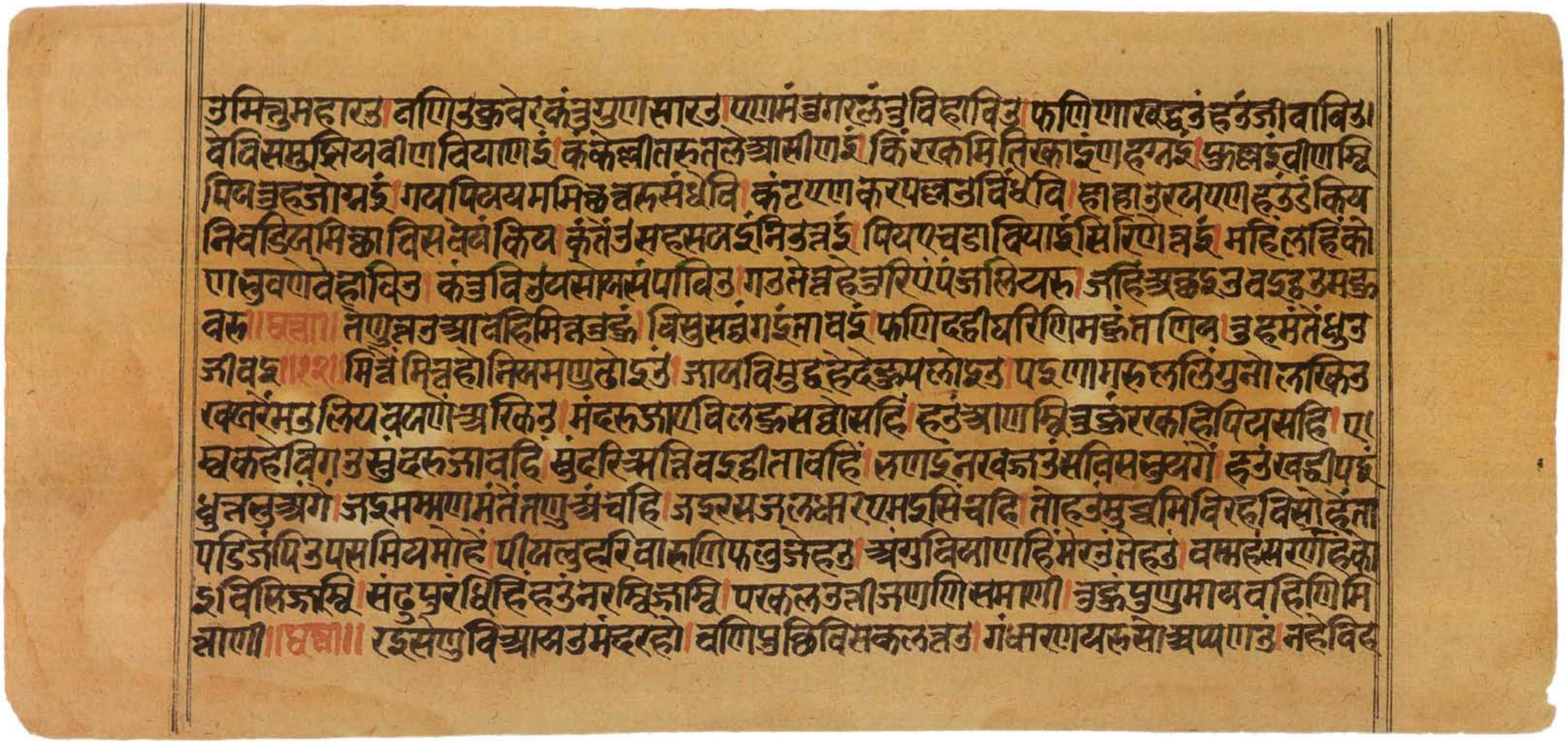

उसने कहा—यह हमारा मित्र है। गुणश्रेष्ठ कुबेरकान्त सेठ। इसे गरुड़ मन्त्र याद था। मुझे साँप ने काट खाया था, इसने मुझे जीवित किया। चीनांशुक को धारण किये हुए वे दोनों अशोक वृक्ष के नीचे बैठ गये। मैं इन तीखे नाखूनों का क्या करूँ ? हे प्रिय, तुम्हारे योग्य पुष्पों को चुनती हूँ। प्रियतमा चली गयी, और झूठ उत्तर की खोज के लिए काँटे से करपल्लव को बेधकर, हा-हा मुझे साँप ने काट खाया, इस प्रकार विष की झूठी वेदना से अंकित होकर गिर पड़ी। प्रिय ने सैकड़ों दवाइयों का प्रयोग किया परन्तु प्रिया ने अपनी आँखें सिर पर चढ़ा लीं। स्त्री से संसार में कौन प्रवंचित नहीं हुआ। पति वियोग और शोक को प्राप्त हुआ। वह तुरन्त हाथ जोड़कर वहाँ गया, जहाँ मेरा पति (कुबेरकान्त) बैठा हुआ था।

घत्ता—उसने कहा—हे मित्र, तुम आओ। विष सब अंगों को जला रहा है। मेरी पत्नी को नाग ने काट खाया है, तुम्हारे मन्त्र से वह निश्चित रूप से जीवित हो जायेगी॥ १२॥

१३

मित्र ने मित्र को अपना मन दे दिया। उसने जाकर उस मुग्धा का मुख देखा। मेरे पति ने विष का कोई चिह्न नहीं देखा, अपनी आँखें बन्द किये हुए विद्याधर ने कहा—मन्दराचल जाकर मैं शीघ्र दिव्यौषधि लेकर आता हूँ। तुम प्रिय सखी की रक्षा करना। यह कहकर उसका प्रिय जैसे ही गया, वैसे ही वह सुन्दरी शीघ्र बैठ गयी। वह कहती है—मुझे विषवाले साँप ने नहीं काटा है, मुझे तुम धूर्त भुजंग (विट) ने काटा है। यदि कामदेव के मन्त्र से शरीर को अभिमन्त्रित कर दो, यदि रतिरस की जलधारा से सींच दो तो मैं विरहविष के समूह से बच सकती हूँ। तब प्रशान्त मोह मेरे प्रिय ने कहा कि जिस प्रकार इन्द्रवारुणी फल पीला होता है तुम मेरे शरीर को उस प्रकार का समझो। मैं काम के तीरों से कभी विद्ध नहीं होता। मैं नपुंसक हूँ, मैं स्त्रियों से रमण नहीं कर पाता। दूसरे की कुलपुत्री मेरे लिए माता के समान है। फिर तुम मेरी बहन और मित्र हो।

घत्ता—इतने में रतिषेण भी मन्दराचल से आ गया। सेठ कुबेरकान्त पत्नी सहित उससे पूछकर आकाश में विहार करते हुए अपने गन्धार नगर आ गया॥ १३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४

अपनी पत्नी के साथ विहार करते हुए उत्पलखेड के बाहरी आकाश में जाते हुए उसका विमान स्खलित हो गया। उसने उपवन में मुनि को देखा। दोनों ने भावपूर्वक उनकी वन्दना की। पूछे जाने पर मुनि ने धर्म का कथन किया। श्रावक-मार्ग का विशेष रूप से उपदेश दिया। गुणवान् और पवित्र वचनवाले उन मुनि ने परस्त्री-सेवन का विशेष रूप से निवारण किया कि परस्त्री-सेवन करनेवाले की लोक द्वारा निन्दा की जाती है, असिधारा और करपत्र से उसका छेदन किया जाता है। उसकी तृप्ति नहीं होती और सज्जन सन्तप्त होता है। कामदाह बढ़ता है। मन फैलता है। स्नेह करनेवाले दोनों नेत्र जलते हैं। परस्त्री-सेवन करनेवाले को सुख कहाँ ? यद्यपि लोक अपने कार्य की आलोचना करता है, परन्तु शंका करनेवाले को उससे भी दु:ख होता है। सिर का मुण्डन, (बिल्लणि बन्धन) खोटे गधे पर आरोहण, नासिका का खण्डन, इस प्रकार तीनों लोक में जार अप्रशंसनीय होता है। मरने पर पुन:दुर्भग, दुष्ट, नपुंसक होता है।

घत्ता—इस प्रकार मुनि के उपदेशों को सुनते हुए विद्याधरी का मन सन्तप्त हो उठता है। 'हा-हा, मुझ दुष्टा ने दुष्ट काम किया।' वह अपने मन में विचार करती है ॥ १४ ॥

१५

मुनिवर का मान कर, आकाशतल में अपने चरणकमल रखते हुए वे दोनों भी चल दिये। मुनि के वचनों का विचार करती हुई और नरक-पतन से डरती हुई कान्ता विद्याधरी ने अपने अभिमान को खण्डित करनेवाली कुबेरकान्त से सम्बन्धित अभिलाषा (पति को) बता दी और बोली—"मैं पापात्मा तुम से विद्रोह करनेवाली हूँ। मेरी जैसी स्त्री संसार में न हो, हे प्रिय, मुझे छोड़िए, मैं प्रव्रज्या के लिए जाती हूँ।" तब पति अपनी पत्नी के लिए उत्तर देता है—"जो तुम्हारा मन दूसरे के प्रेमरूपी मल से मैला था वह आलोचनारूपी जल से प्रक्षालित हो गया।

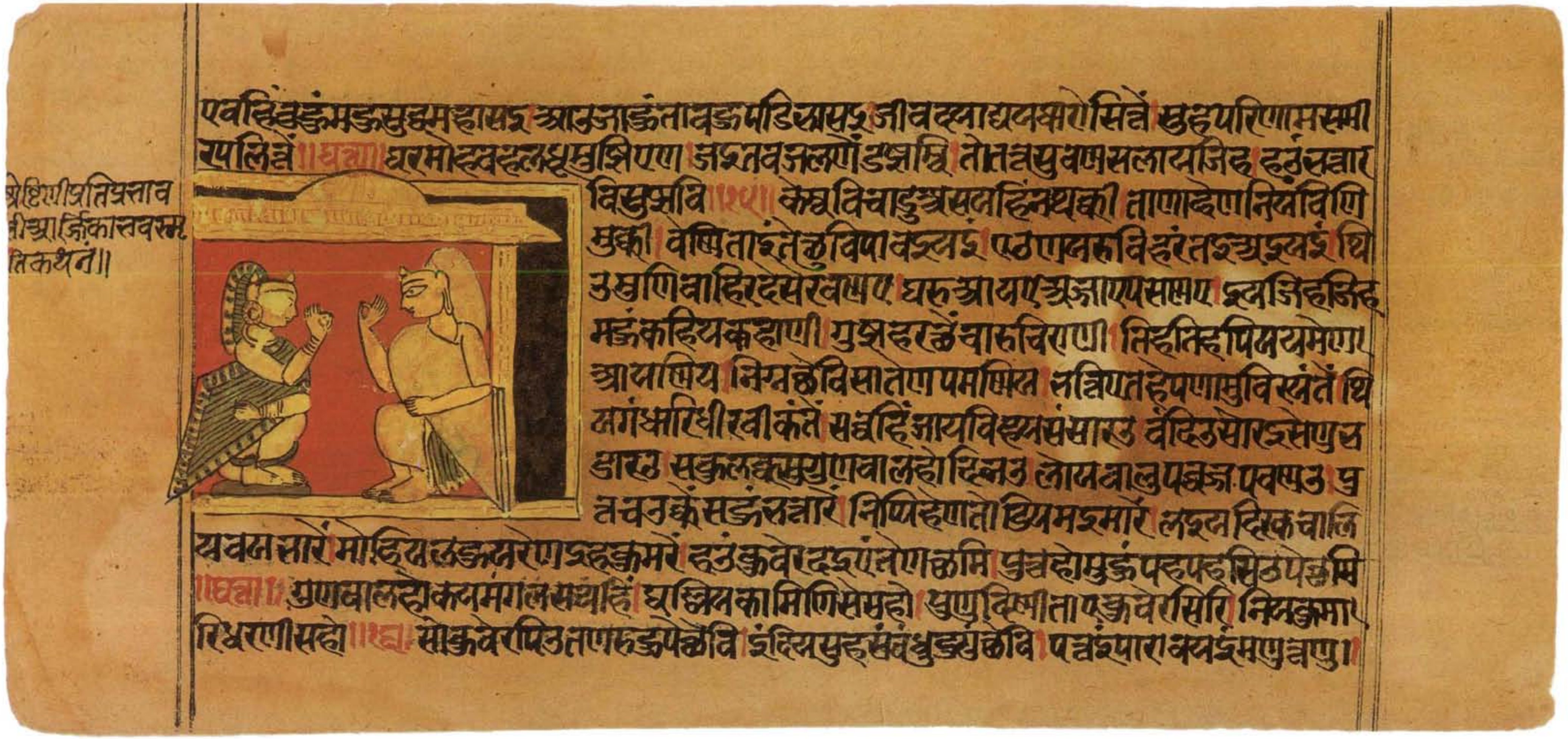

इस समय तुम मेरे लिए विशुद्ध महासती हो। आओ चलें।'' इस पर बधू (विद्याधरी) कहती है—''जीवदयारूपी घी से सिक्त एवं शुभ परिणामरूपी समीर से प्रदीप्त—

घत्ता—घर-मोहरूपी प्रचुर धूम से रहित, तपरूपी ज्वाला से मैं दग्ध होती हूँ और हे प्रिय, तपी हुई स्वर्णशलाका के समान मैं विशुद्ध होती हूँ।''॥ १५॥

१६

इस प्रकार वह सैकड़ों मनुहारों से नहीं थकी। तब प्रिय ने उस विद्याधरी को मुक्त कर दिया। वहाँ वे दोनों प्रव्रजित हो गये। और विहार करते हुए इस नगर में आये हैं। मुनि बाहर सुन्दर स्थान में ठहरे हुए हैं, और घर आयी हुई आर्यिका (विद्याधरी) ने जिस-जिस प्रकार गुह्य रहस्य से सुन्दर और विरागिणी कहानी मुझसे कही है उस-उस प्रकार प्रियतम ने उसे सुना और निकलकर उसने उसे प्रणाम किया। भक्ति से उसे प्रणाम करते हुए प्रिय ने धीरबुद्धि गान्धारी की स्तुति की। सब लोगों ने जाकर संसार को नष्ट करनेवाले आदरणीय रतिषेण मुनि की वन्दना की। उसने अपना कुलक्रम (उत्तराधिकार) गुणपाल को दिया और लोकपाल प्रव्रजित हो गया। नि:स्पृह मद और काम को नष्ट करनेवाले और व्रतों के भार का पालन करनेवाले स्वामी ने चार पुत्रों के साथ दीक्षा ले ली। लेकिन मैं सबसे छोटे पुत्र कुमार कुबेरदयित मोह में पड़कर यहाँ हूँ। मैं प्रभा से प्रहसित पुत्र का मुँह देखती हूँ।

घत्ता—उसे प्रियदत्ता (कुबेरकान्त की पत्नी) ने दूसरे सभी राजाओं को छोड़ते हुए अपनी कन्या कुबेरश्री कामिनी सैकड़ों मंगल करते हुए दे दी॥ १६॥

१७

वह कुबेरप्रिया अपने पुत्र से पूछकर, इन्द्रियों के सुख-सम्बन्ध की निन्दा कर, कबूतर पर्याय से मनुष्यत्व प्राप्त करनेवाले,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

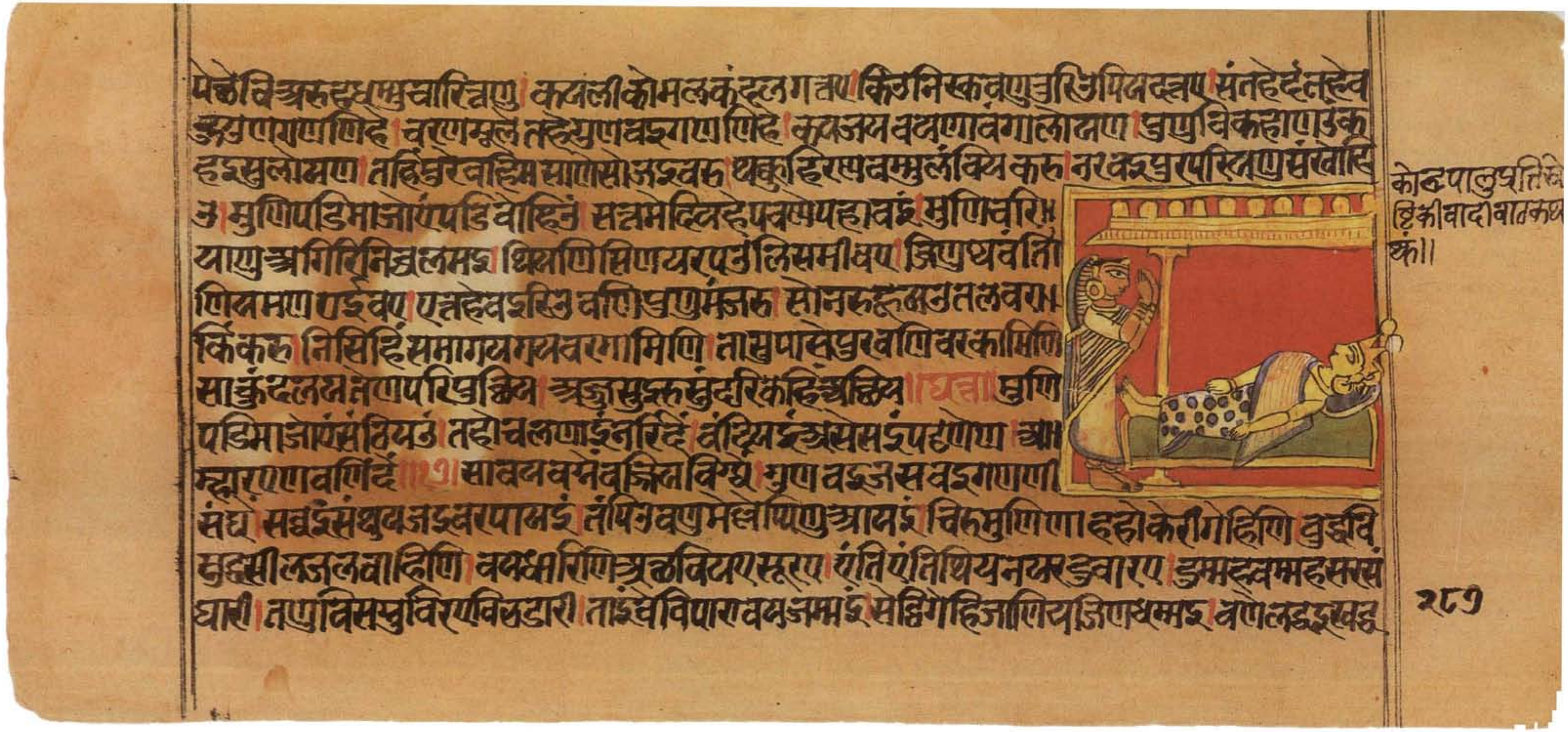

अरहन्त धर्म का आचरण करनेवाले (हिरण्यवर्मा) को देखकर केले के वृक्ष की तरह कोमल शरीरवाली प्रियदत्ता ने शान्त-दान्त बहुत-से गुणों से गणनीय (मान्य) गुणवती आर्यिका के चरणमूल में तुरन्त संन्यास ले लिया है। जयकुमार के मुख की ओर अपांगलोचन जिसमें, ऐसी सुलोचना पुन: कहानी कहती है कि उस नगर में बाहर मरघट में अपने हाथ लम्बे किये हुए यतिवर हिरण्यवर्मा विराजमान थे। प्रतिमायोग के सात दिन पूरा होने पर, मुनि ने सम्बोधित किया। राजा, परिजन और नगर में हलचल मच गयी। मुनिचरित का अनुगमन करनेवाली गिरि की तरह निश्चलमति प्रभावती आर्यिका, रात्रि में नगर के समीप प्रतोलि में, अपने मनरूपी कमल में जिनवर का ध्यान करती हुई स्थित थी। यहीं पर वह शत्रु वणिक (भवदेव) जो बाद में बिलाव हुआ, वह मनुष्य होकर नगर का सेवक कोतवाल बना। नगरसेठ की गजवर-गामिनी स्त्री, रात्रि के समय उसके पास आयी। उस स्वर्णलता से उसने पूछा—'हे सुन्दरी, इतनी देर कहाँ थी?'

घत्ता—(उसने कहा) मुनि प्रतिमायोग में स्थित थे, उनके चरणों की वन्दना अशेष नगर और हमारे सेठ ने की॥ १७॥

१८

विघ्नों से रहित श्रावक वर्ग, गुणवती और यशोवती आर्यिकाओं के संघ—सब ने यतिवर के पैरों की संस्तुति की। उन्हें हम मरघट में छोड़कर आये हैं। पहले जो मुनिनाथ की गृहिणी थी, बुद्धि और विशुद्ध शील गुण की नदी, व्रतों को धारण करनेवाली आदरणीय वह आते-आते सूर्य के अस्त हो जाने पर नगर के द्वार पर कायोत्सर्ग कर ठहर गयी। उन दोनों ने सेठ के घर में ही कबूतर-कबूतरी जन्म में जिनधर्म को जाना था। बिलाव ने उन्हें वन में पाकर खा लिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

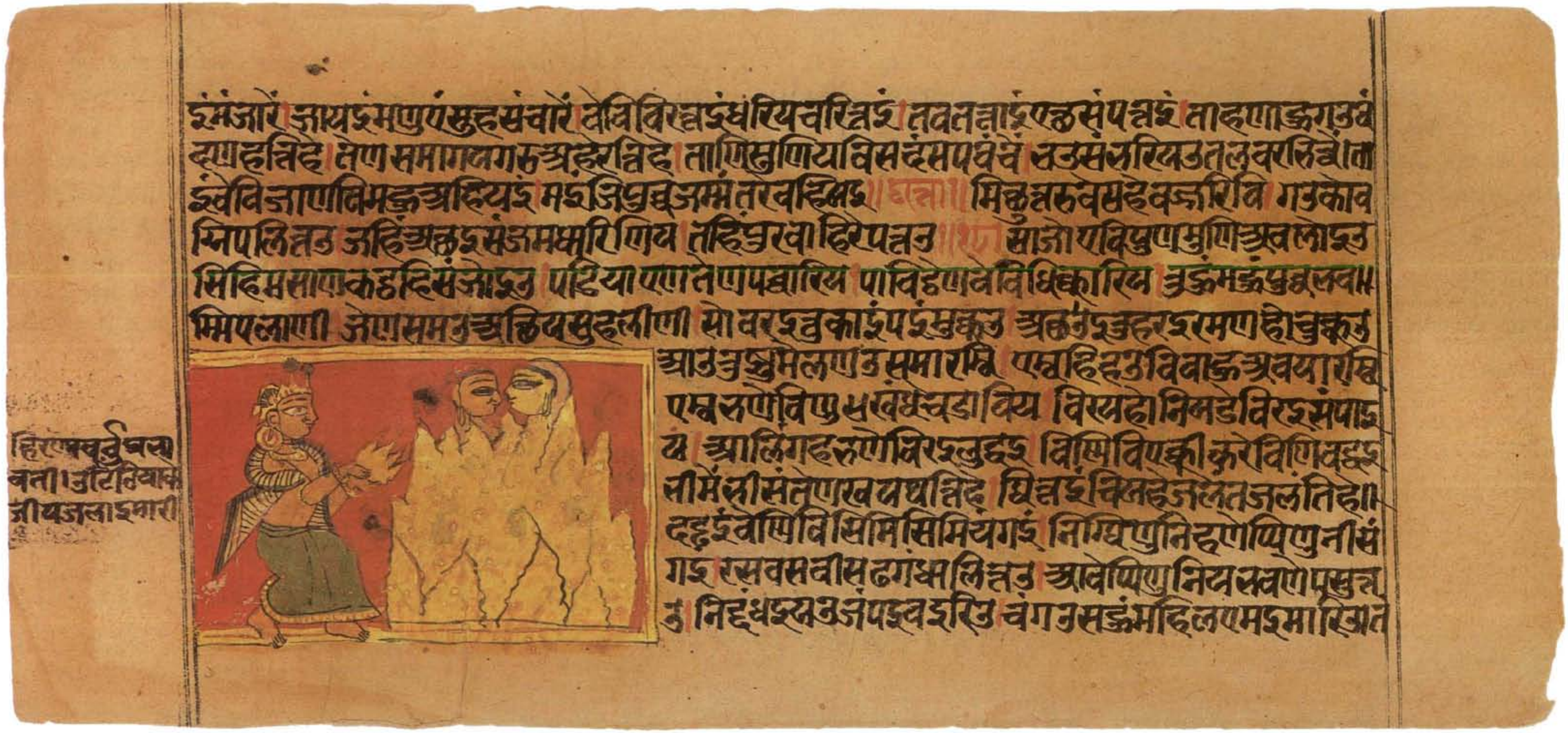

परन्तु पुण्य के योग से वे मनुष्य हुए। दोनों विरक्त हो गये और उन्होंने चारित्र्य ग्रहण कर लिया। तप तपते हुए वे यहाँ आये हुए हैं। मेरा स्वामी उनकी वन्दना-भक्ति करने के लिए गया हुआ था, इसीलिए इतनी रात बीत जाने पर मैं आयी। इस प्रकार सुनी है विषदंश की प्रवंचना जिसने, ऐसे तलवर भृत्य को अपने पूर्वभव का स्मरण हो आया कि अपना अहितकर जानते हुए मैंने पूर्वजन्म में उन दोनों का वध किया था।

घत्ता—क्रोध की आग से जलता हुआ वह उस वेश्या को झूठा उत्तर देकर वहाँ गया जहाँ पर नगर के बाहर संयम धारण करनेवाली वह आर्यिका स्थित थी॥ १८॥

१९

उसे देखकर उसने फिर मुनि को देखा। और मरघट की लकड़ियों में आग लगायी। वापस आकर उन दोनों को पुकारा, और पापी ने उन्हें धिक्कारा कि ''पूर्वभव में, जिसके साथ सुख में लीन तुम नष्ट हुई थी, अपने उस वर को तुमने इस समय क्यों छोड़ दिया ? तुम्हारा रतिरमण पास आया हुआ है। आओ मैं तुम्हारा मेल कराता हूँ। इस समय मैं तुम्हारे विवाह की अवतारणा करता हूँ।'' यह कहकर उसने उसे कन्धे पर चढ़ा लिया और विरत (मुनि) के पास विरता (आर्या) को ले गया। आलिंगन करो, यह कहकर रतिलुब्ध उन दोनों को एक-एक करके बाँध दिया। क्षय को स्थिरता देनेवाली जलती हुई चिता में उस भयंकर भीम ने उन्हें डाल दिया। सिकुड़ते हुए वे दोनों जल गये। और वह निर्दय अनासंग (मुनि आर्यिका) को जलाकर रस और मज्जा से विश्रब्ध और गन्ध से दुर्वासित आकर अपने घर में सो गया। (रात में) नींद में सोया हुआ वह बकता है—''अच्छा हुआ महिला के साथ मैंने दुश्मन को मार डाला।''

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

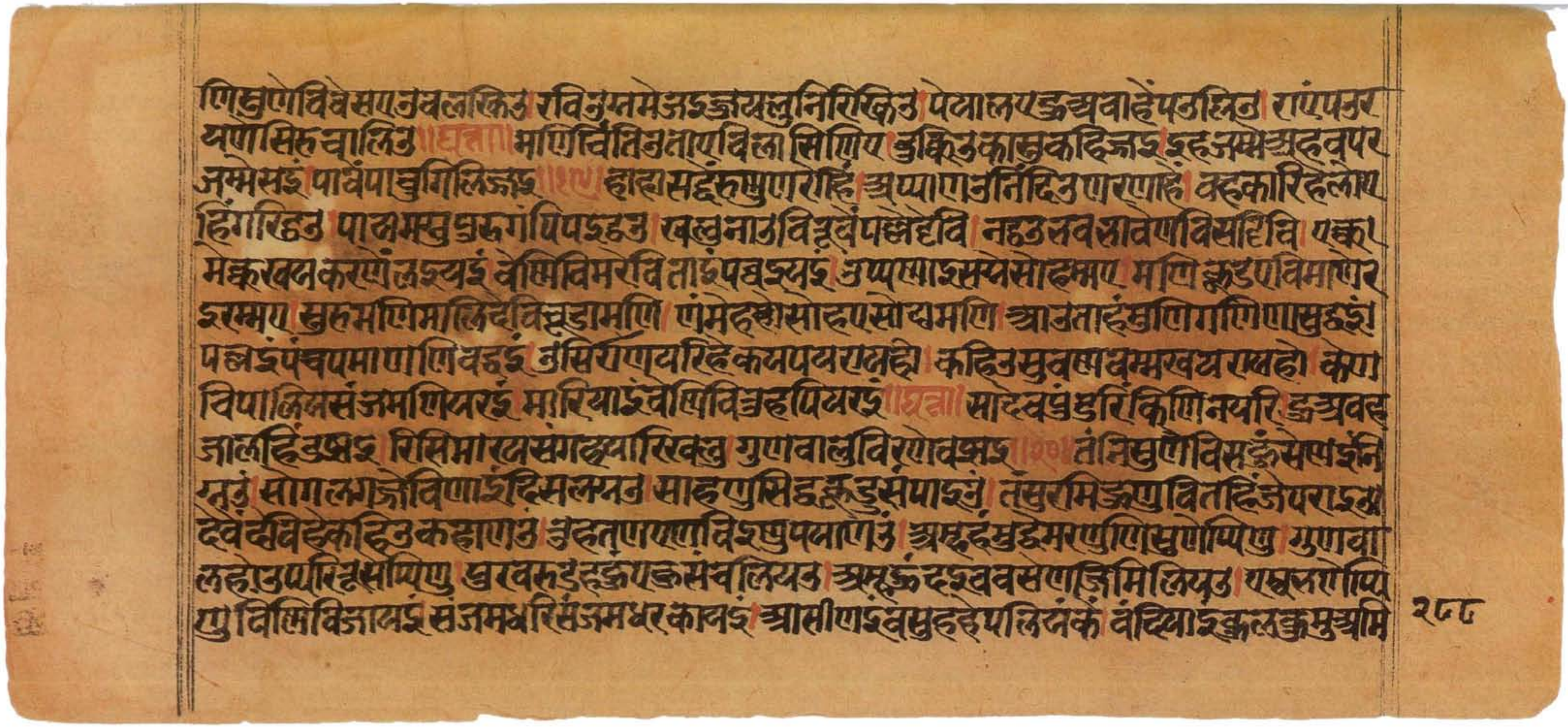

यह सुनकर वेश्या जान गयी। सूर्योदय होने पर मुनि-युगल को मरघट में जला हुआ देखा तो राजा तथा पुरजन ने अपना माथा पीटा।

घत्ता—उस वेश्या ने अपने मन में सोचा कि यह पाप किससे कहा जाये ? क्योंकि चाहे इस जन्म में हो या दूसरे जन्म में, पाप पाप को खा जाता है ॥ १९ ॥

२०

हा-हाकार कर नरसमूह रो पड़ा। राजा ने अपनी निन्दा की। वध करनेवाले को लोगों ने खोजा। वह पापमार्गी नगर में जाकर प्रवेश कर गया। दुष्टरूप और नाम मिटाकर, भव्य के भाव से काँपकर नष्ट हो गया। एक दूसरे (मुनि और आर्यिका ने) विनाश को करुणाभाव से लिया, वे दोनों ही संन्यासी मरकर सौधर्म स्वर्ग में उत्पन्न हुए, कान्ति से सुन्दर मणिकूट विमान में। देव मणिमाली था और देवी चूड़ामणि थी, मानो मेघों में बिजली शोभित हो रही हो। उनकी आयु मुनिगण के द्वारा बतायी पाँच पल्य-प्रमाण थी। किसी ने जाकर उशीरवती के प्रजा के साथ न्याय करनेवाले, स्वर्णवर्मा नाम के विद्याधर राजा से कहा कि संयमसमूह का पालन करनेवाले तुम्हारे माता-पिता दोनों को किसी ने मार डाला।

घत्ता—हे देव, वह पुण्डरीकिणी नगरी आग की लपटों में जल रही है, मुनि के घातक संग्रहकारी दुष्ट गुणपाल को भी युद्ध में मार दिया गया है ॥ २० ॥

२१

यह सुनकर सेना के साथ गरजकर वह चला जैसे दिग्गज हो। सेना सिद्धकूट पर्वत पर पहुँची। वह देवमिथुन भी वहाँ पहुँचा। देव ने देवी से कहानी कही कि तुम्हारे पुत्र ने प्रयाण किया है। हे मुग्धे, हम लोगों का मरण सुनकर और गुणपाल राजा के ऊपर क्रुद्ध होकर नगरवर को जलाने के लिए यह निकला है, और दैव के वश से यह हम लोगों के लिए मिल गया है। यह कहकर वे दोनों मुनि और आर्यिका बन गये और धरती के आसन पर बैठ गये। अपने कुलरूपी कुमुद के चन्द्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

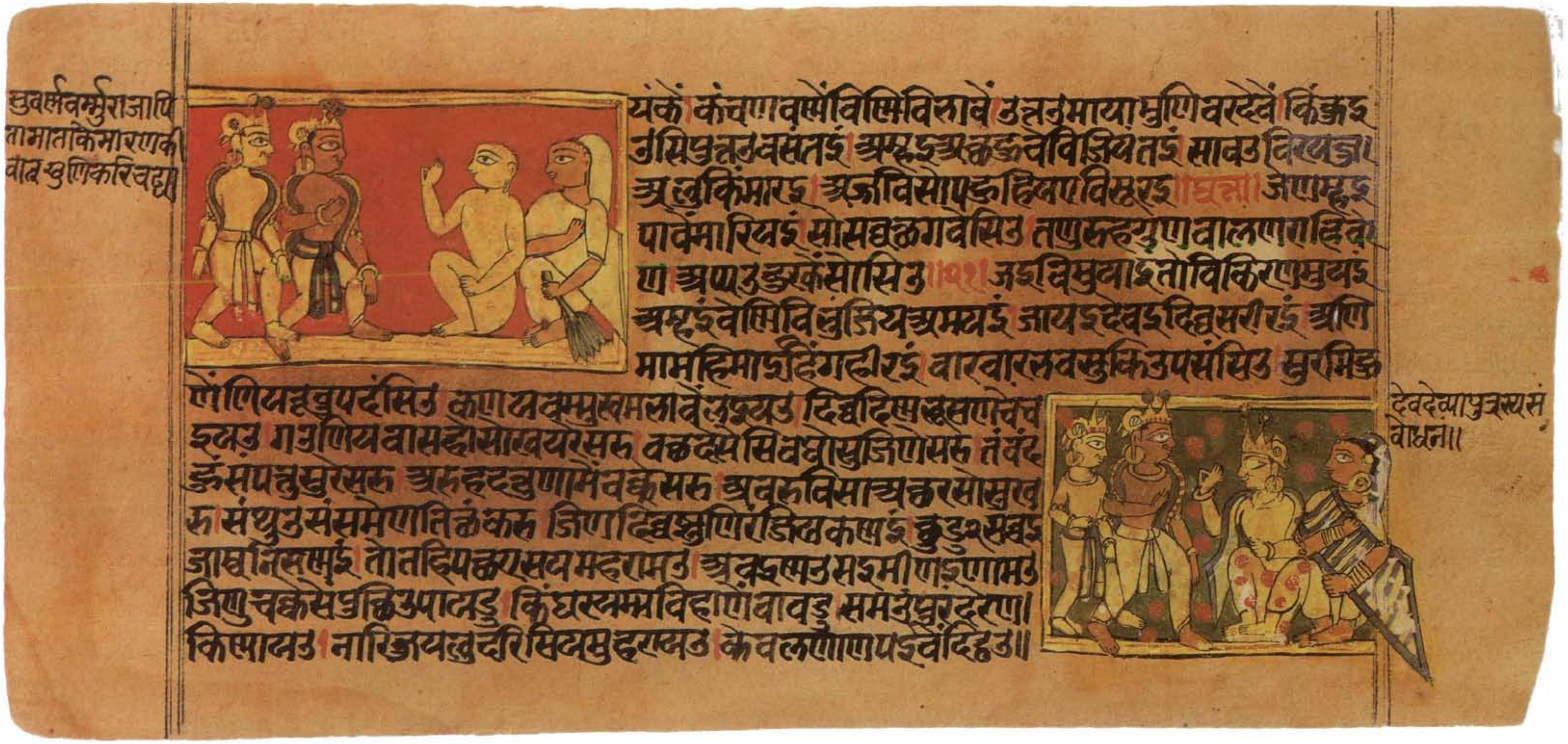

स्वर्णवर्मा ने दोनों की भावपूर्वक वन्दना की। तब माया मुनिवरदेव ने कहा—"हे पुत्र, तुम कुपित क्यों हो, हम दोनों तो जीवित हैं। वह श्रावक राजा मुनियुगल को क्या मार सकता है ? वह राजा (गुणपाल) तो आज भी हृदय में दु:खी है।

घत्ता—जिस पापी ने हम लोगों को मारा है उसको तो सर्वत्र खोज लिया गया। हे पुत्र, गुणपाल राजा ने अपने को शोक से सुखा डाला है॥ २१॥

२२

यद्यपि हम लोग मर गये हैं तो भी मरे नहीं हैं, हम दोनों अमृत का भोग करनेवाले दिव्य शरीरवाले एवं अणिमा-महिमा आदि से गम्भीर देव हुए। बार-बार उन्होंने संसार के पुण्य की प्रशंसा की, और उन्होंने अपने रूप का प्रदर्शन किया। स्वर्णवर्मा ने क्षमाभाव धारण किया। और देव द्वारा दिये गये आभूषणों से अपने को विभूषित किया। वह विद्याधर राजा अपने निवास के लिए चला गया। वत्सदेश में शिवघोष जिनवर हैं उनकी वन्दना के लिए देवेन्द्र आया। और अरुहदत्त नाम का चक्रवर्ती। और भी, वह अप्सरा तथा वह देव। समीचीन उपशम भाव से उसने स्तुति की। जिनेन्द्र भगवान् की दिव्यध्वनि से जिनके कान रंजित हैं ऐसे सब लोग जब बैठे हुए थे, तभी वहाँ बाद में इन्द्र की शची और मेनका नामक स्त्रियाँ अवतरित हुईं। चक्रेश्वर अरुहदत्त ने जिन से प्रकट पूछा कि इन्होंने कौन-सा गृहकर्म विधान किया है, अपने मुखराग को प्रकट करनेवाला यह देवयुगल इन्द्र के साथ क्यों नहीं आया? तब केवलज्ञानरूपी दीपक से देखी गयी बात

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

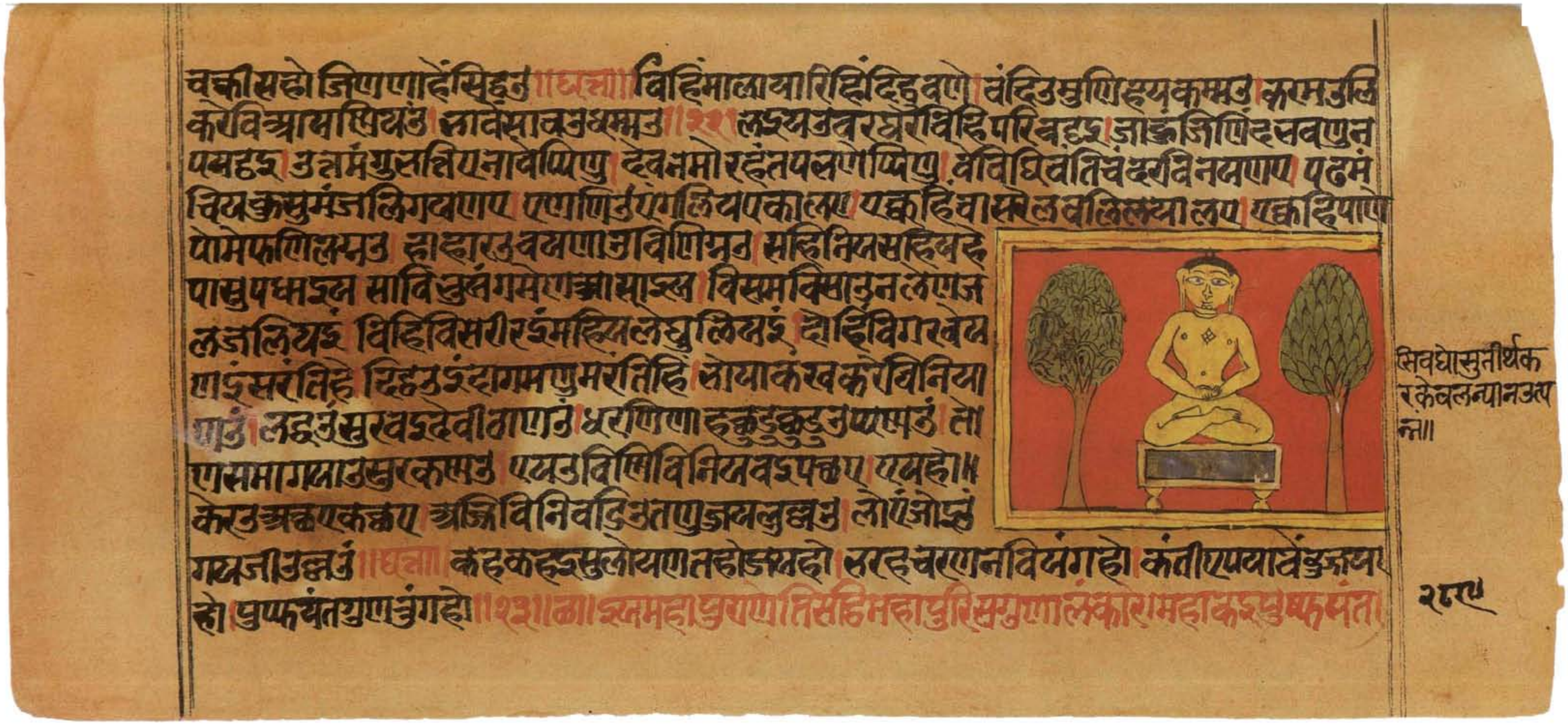

जिननाथ ने चक्रवर्ती से कही।

घत्ता—माला बनानेवाली इन दोनों ने वन में कर्म को नष्ट करनेवाले मुनि को देखा, और उनकी वन्दना की। दोनों हाथ जोड़कर भावपूर्वक श्रावकधर्म सुना॥ २२॥

२३

उन्होंने यह व्रत लिया कि तबतक घर के काम से निवृत्ति रहेगी कि जबतक जिनेन्द्र भवन नहीं जातीं। अपने सिर को भक्ति से झुकाकर, देव-अरहन्त को नमस्कार कहकर वे दोनों चन्द्र और सूर्य हैं नेत्र जिसके ऐसे गगन को सबसे पहले मालाएँ अर्पित करतीं। इस नियम के साथ उनका बहुत-सा समय चला गया। एक दिन चन्दनलता-घर में एक करकमल में नाग ने काट खाया, उसके मुँह से हा-हा शब्द निकला। सखी अपनी सखी के पास दौड़ी, वह भी साँप के द्वारा काट ली गयी। विषम विष की आग से जलते हुए उनके शरीर धरती पर गिर पड़े। किंचित् वेदना से जिनेन्द्र की याद करते और मरते हुए इन्द्र का आगमन देखा। भोग की आकांक्षा से निदान कर इन्होंने इन्द्र की देवियों का स्थान ग्रहण किया। हे राजन्, ये अभी-अभी उत्पन्न हुई हैं इसी कारण से ये दोनों सुरकन्याएँ अपने पति के पीछे आयीं। इनका गतजीव तनुयुगल आज भी पृथ्वी पर पड़ा हुआ है। लोगों ने उसे देखा।

घत्ता—इस प्रकार सुलोचना भरत के चरणों में अपना शरीर झुकानेवाले तथा कान्ति और प्रताप से अजेय पुष्पदन्त के (सूर्य-चन्द्र) के गुणों से ऊँचे उस जय से कहती है॥ २३॥

त्रेसठ महापुरुषों के गुण और अलंकारोंवाले इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का जिनक्षिप्त पुष्पांजलि-फल नाम का तीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ३०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सन्धि ३१

१

जिन-वचनों को सुनकर और अपने हृदय में मानकर मालती की माला से शोभित मणिमाली देव अपनी कान्ता के साथ गया। नवकमल के समान मुखवाला और श्री को माननेवाला वह आकाश में विहार करता हुआ, जिसमें ऊँचे तालवृक्ष हैं, ऐसे धान्यकमाल नामक कानन में पहुँचा, जो जग में प्रसिद्ध और वृक्षों से समृद्ध था। हंसों से धवलित और चक्रवाकों से मुखरित था। उसने सुन्दर सर्पसरोवर देखा, जो चंचल जल से आन्दोलित, कमलों से पुष्पित, गजमद से श्यामल, केशर से पिंगल, पत्तों से नीला और भ्रमरों से काला था। वह अपने मन में चौंक गया, पूर्वजन्म की उसने याद की। मुनि की सेवा करनेवाले देव ने कहा—

घत्ता—पूर्वजन्म में मैं सुकान्त नाम का वणिक् पुत्र था, धनसंचित करनेवाला। और तू रतिवेगा नाम से मेरी प्यारी घरवाली थी॥ १॥

२

यह मृणालवती नगर दिखाई देता है, जहाँ दोनों का विवाह-प्रेम हुआ था। किसी प्रकार चीरांचल से पकड़ा-भर नहीं था, और वह उन्मत्त पीछे लग गया था। प्राणों के हरण के भय से विघटित, दौड़ते हुए हम लोग यहाँ गिर पड़े थे। यहाँ तुम्हारे पैरों का खून गिरा था।

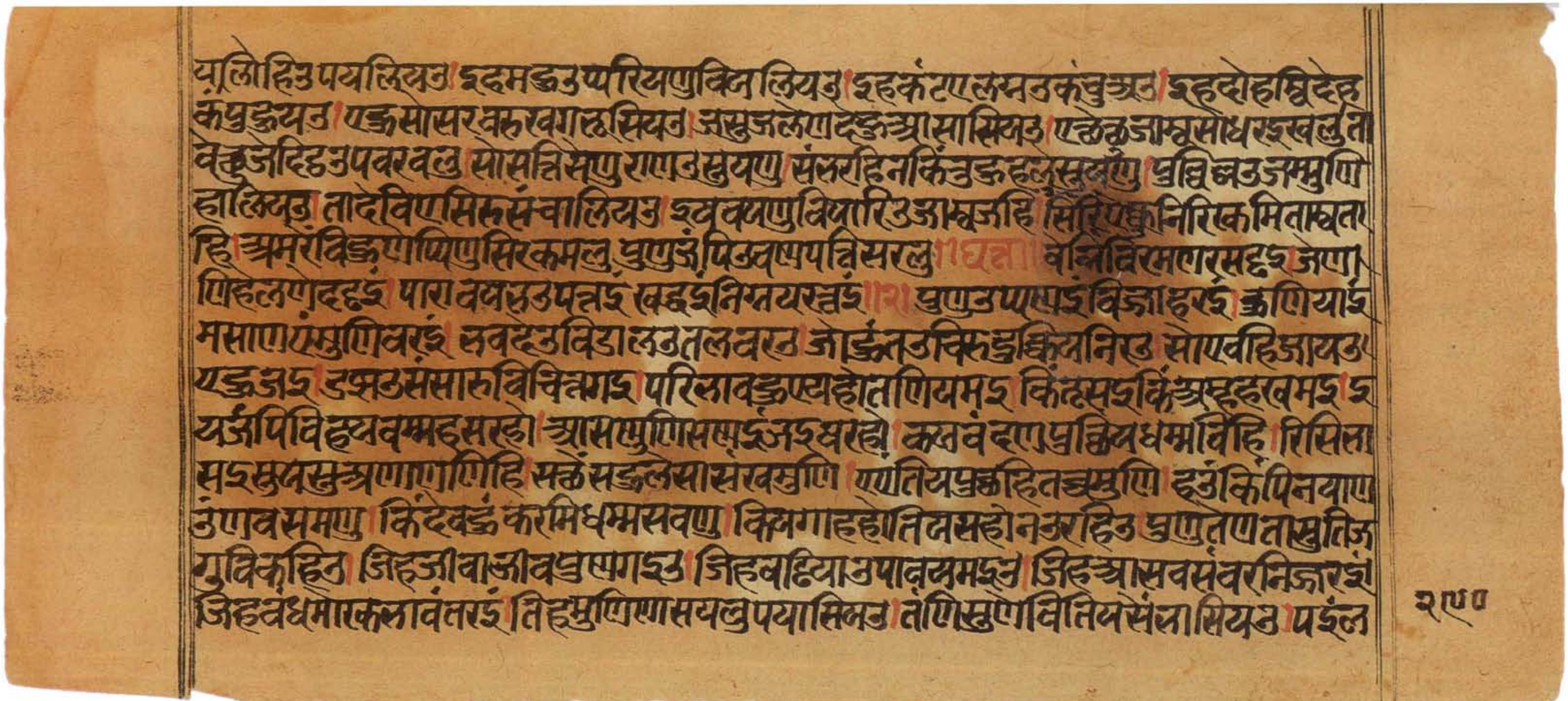

यहाँ ऊपरी वस्त्र गिर गया था। यहाँ कंचुक से काँटा लगा था। यहाँ हम दोनों को कम्प उत्पन्न हुआ था। पक्षियों से विभूषित यह वह सरोवर है जिसके जल से देह साफ होती है। यहाँ पर वह दुष्ट जब हमें पकड़ना चाहता था तो इतने में उसने वहीं पर एक प्रबल सेना देखी। वह सज्जन शक्तिषेण राजा था। हे सखी, क्या तुम्हें उसकी याद नहीं आ रही है! जब उसने पूर्व दिखला दिया तब देवी ने अपना सिर हिला दिया। जबतक उसने ये शब्द कहे तबतक उसने एक मुनि को देखा। देव ने अपना सिर-कमल हिलाकर, शब्दों और पंक्तियों सहित यह बात कही।

घत्ता—जिस कारण से रमणरस में दक्ष वे दोनों अपने घर में जला दिये गये। पारावत जन्म को प्राप्त हुए बाहर जाने के प्रेम में अनुरक्त वे मार्जार के द्वारा (बिलाव द्वारा) खा लिये गये थे॥ २॥

३

फिर हम विद्याधर उत्पन्न हुए और हम मुनिवर आग में होम दिये गये। भवदेव, मार्जार और कोतवाल, जो कि प्राचीन समय से पाप-निरत था, वह इस समय यति हो गया है इस विचित्र गतिवाले संसार को जलाने के लिए। चलो इसकी बुद्धि की परीक्षा करें कि यह हमसे क्रुद्ध होता है या हमें क्षमा करता है! इस प्रकार विचारकर कामदेव के तीरों को नष्ट करनेवाले यतिवर के आसन के निकट जाकर वे बैठ गये। उन्होंने बन्दना की और धर्म की विधि पूछी। मुनि कहते हैं—हे पुत्र, श्रुतज्ञान के निधि-गुणी यह लेश्यासंख मुनि संघ के साथ आ रहे हैं, इनसे तत्त्व पूछो। मैं कुछ भी नहीं जानता, मैं नवश्रमण हूँ। देव के लिए मैं क्या धर्मश्रवण कराऊँ! पर आग्रह करनेवाले देव से वह बच नहीं सका। तब उसने फिर उससे त्रिजग का कथन किया। जिस प्रकार जीव-अजीव, पुण्य गतियाँ, जिस प्रकार बढ़ी हुई पापबुद्धि, जिस प्रकार आस्रव-संवर और निर्जरा, जिस प्रकार बन्ध-मोक्ष और जन्मान्तर हैं वह उस मुनि ने सब प्रकार कथन किया। यह सुनकर देव बोला—

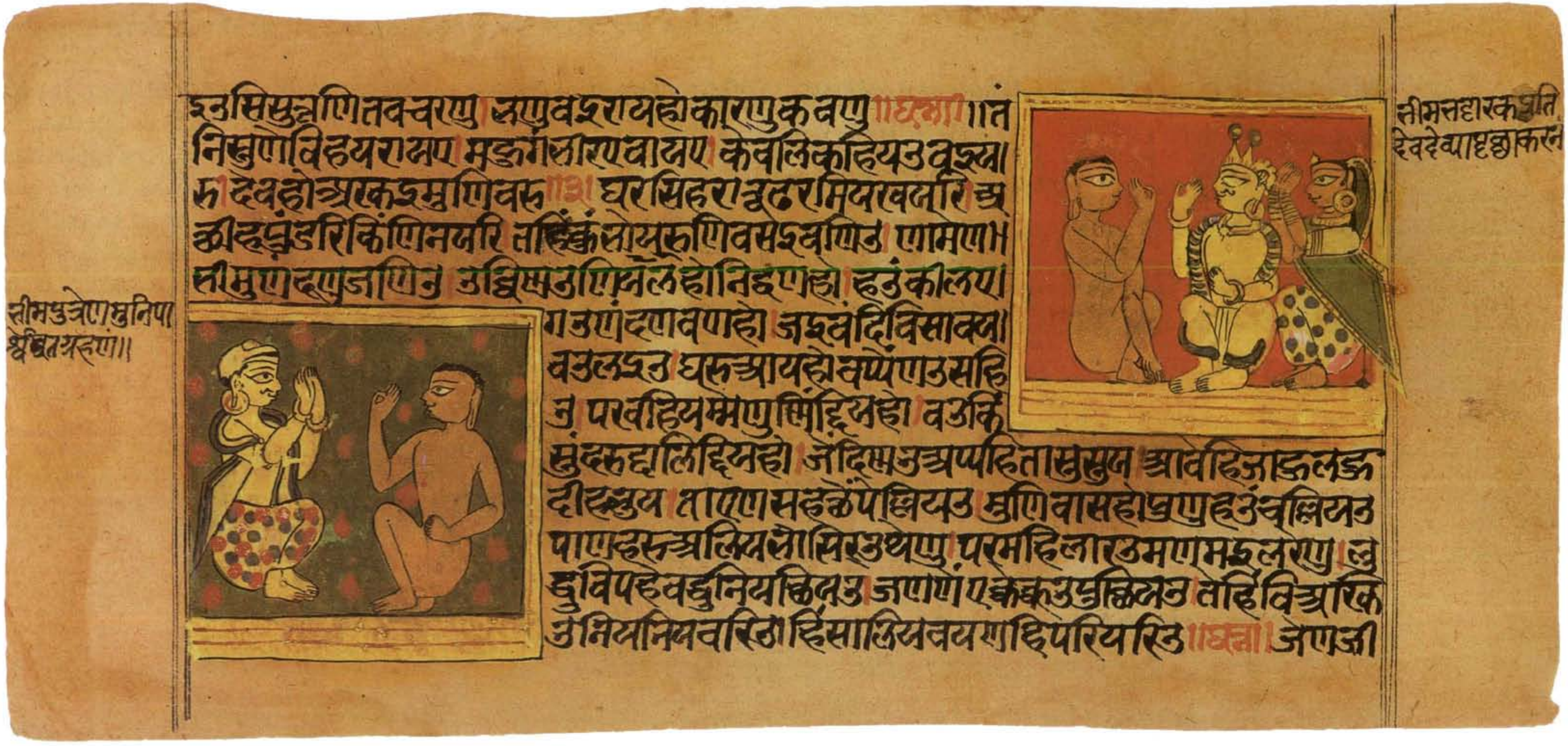

आपने बचपन में तपश्चरण ग्रहण कर लिया है, उस वैराग्य का क्या कारण है ?

घत्ता—यह सुनकर राग को नष्ट करनेवाली मृदु और गम्भीर वाणी में वह मुनिवर केवली के द्वारा कहा गया पूर्व वृत्तान्त उस देव को बताते हैं॥ ३॥

४

जिसके शिखरों पर आरूढ़ होकर देवता रमण करते हैं, यहाँ ऐसी पुण्डरीकिणी नगरी है। उसमें कुम्भोदर नाम का बनिया निवास करता था। (मैं) उसका भीम नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। निर्धन घर से विरक्त होकर मैं क्रीड़ा के लिए नन्दन वन में गया। यति की वन्दना कर मैंने श्रावकव्रत स्वीकार कर लिये, घर आने पर बाप ने यह सहन नहीं किया। दूसरों के भार को ढोने के कर्म से निद्रारहित दरिद्र के लिए क्या व्रत सुन्दर होता है ? हे पुत्र, जिसने ये व्रत दिये हैं उसी को सौंप दो। हे दीर्घबाहु, आओ जल्दी चलें। पिता के अपने हाथ से प्रेरित मैं पुन: मुनि के निवास के लिए चला। दूसरे का हिंसक, परस्त्री का अपहरणकर्ता, दूसरे के मर्म का उद्‌घाटन करनेवाला, झूठ बोलनेवाला, और लोभी को भी रास्ते में बँधा हुआ देखा। पिता ने एक-एक से पूछा। उन्होंने भी अपना-अपना चरित बताया कि जो हिंसा और झूठ वचनों से गिरा हुआ था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घत्ता—जिसने जीवकुल की हिंसा की है, जिसने असत्य वचन कहा है। जिसने परधन का अपहरण किया है, और जिसका मन परवधू में अनुरक्त है॥४॥

५

जो लोभ कषाय से अभिभूत है, वह कौन है, जो दु:ख से सन्तप्त नहीं हुआ!'' मैंने कहा—''हे पिता, मैंने यही व्रत मुनि के चरणों की वन्दना करके ग्रहण किये हैं। ये लोग जिस प्रकार व्रतों से विमुख होकर बँधे हुए हैं, हे पिता, उसी प्रकार मैं राग से बँधा हुआ हूँ।'' यह सुनकर मेरे द्वारा स्वीकृत अणुव्रतों की पिता ने इच्छा की। हम दोनों नगर के उद्यानवर में गये और विश्व के आनन्द करनेवाले मुनि को प्रणाम किया। उनके वचन से वणिग्वर को उपशान्त किया। वह जिनेन्द्र द्वारा उपदिष्ट गृहस्थ धर्म का पालन करने लगा। दरिद्र से क्या ? अच्छा है मैं तप करूँ। प्राप्त मनुष्य जन्म को क्यों नष्ट करूँ ? मैंने इस प्रकार न्याय से कहा, और पिता के हाथ से अपने को मुक्त कर लिया। त्रस और स्थावर जीवों के प्रति दया करनेवाले मैंने पाँच महाव्रतों को ग्रहण कर लिया।

घत्ता—जिनकी सेवा सुर और नर करते हैं ऐसे जिनदेव के पादमूल में असह्य दु:खों से निरन्तर भरपूर, अपने जन्मान्तरों को मैंने सुना॥५॥

६

मुझ (भीम) से मुनिनाथ ने कहा कि तुमने वन में एक जोड़े (सुकान्त और रतिवेगा) को मारा है रात्रि में। जब तुम अप्रिय विनाश और कलह के प्रिय भवदेव थे। फिर तुमने उस जोड़े को देखा और बिलाव होकर खा लिया। और जब वे लोग तप तप रहे थे तब तुमने पकड़कर उन्हें आग में डाल दिया। उस समय तुम कोतवाल थे। औषधि के गुण से तुम शीघ्र नष्ट हो गये। राजा गुणपाल ने तुम्हें खोजा और किसी प्रकार तुम्हें यमपुरी

नहीं भेजा। तुमने जाकर किसी दूसरी जगह अपना घर बसाया। वह राजा गुणपाल जब प्रव्रजित हो गया तो तुमने पुन: नगर में प्रवेश किया और अंजनगुण से तुमने दृष्टि के संचार को रोक लिया (अदृश्य हो गये), तथा लोगों का-खूब धन चुराया। पौर ने राजा से पुकार मचायी। उसने आरक्षक कुल की निन्दा की। तब आरक्षक कुल ने प्रतिअंजन की सिद्धि कर ली। तुम विद्युच्चोर को उन्होंने देख लिया और पकड़ लिया। तुमने धन की जगह बता दी।

घत्ता—जहाँ रमणीजन क्रीड़ा करती हैं, ऐसे स्वर्णकार के घर में तुमने सूर्य को जीतनेवाले सात माणिक्य हरणकर रखे थे॥ ६॥

७

तलवार और भालों से जिनके हाथ काँप रहे हैं, ऐसे राजपुरुषों को वह घर बता दिया। मैंने सुनार को भी खूब पुकारा। विधि से निवारित वह माँगने पर भी हीरे नहीं देता। राजा ने भोजनक से पूछा (कहा) कि उसकी गृहिणी को अभिज्ञान चिह्न बताकर घर में रखे हुए मणि ले आओ। या तो किसी प्रकार गोबर खाओ या सब धन दो, या पहलवानों का मुष्टि-प्रहार सहो। इस प्रकार विमति (सुनार) के लिए दण्ड सोचा गया। मल्ल ने आघातों से उसे हटा दिया, वह गोबर भी नहीं खा सका, अपने चित्त में चौंककर वह धन ढोता है। प्रतिवादी के द्वारा तीन काम कराये जाकर, वह विमति मरकर दुर्गति को प्राप्त हुआ। तुम फिर चण्डाल के पास ले जाये गये। उसने व्रत ले रखा था, इसलिए उसने मारा नहीं। राजा दोनों से नाराज हो गया। दोनों को बँधवाकर उसने निविड़ अन्धकारवाले विवर में डलवा दिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

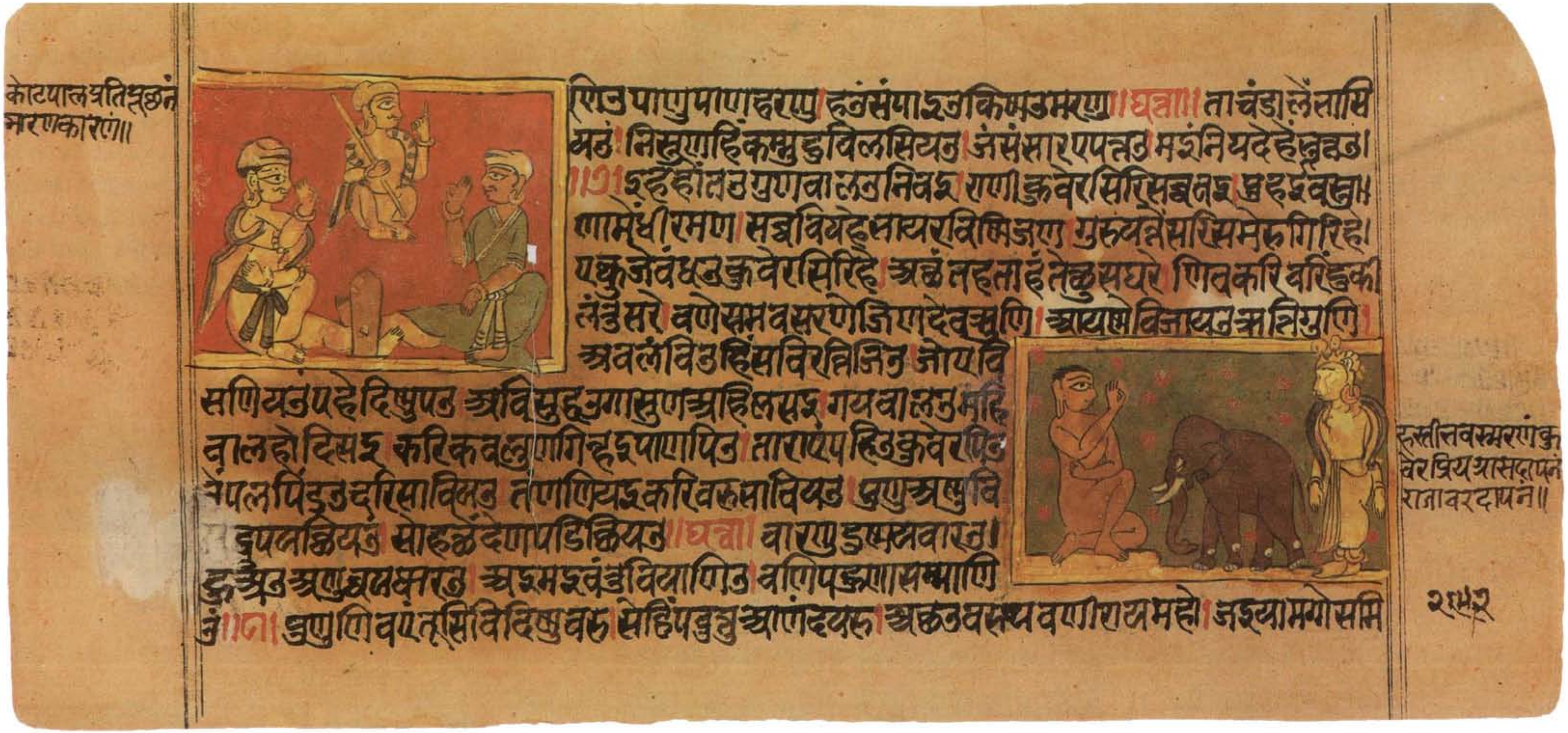

तुमने कहा—हे चण्डाल, प्राणों का हरण करनेवाले मरण को मैं क्यों नहीं पहुँचाया गया?

घत्ता—तब चण्डाल ने कहा—दुर्विलसित कर्म को सुनो कि जो मैंने संसार में पाया है और अपने शरीर से भोगा है ॥ ७ ॥

८

यहाँ गुणपाल नाम का राजा था। उसकी रानी कुबेरश्री और सत्यवती थी। पृथुधी और वसु नामक धीर मनवाले उसके दो भाई थे। कुबेरश्री का एक ही भाई था जो गुरुत्व में सुमेरु पर्वत के समान था। जब वे अपने घर में रहे थे तब राजा का श्रेष्ठ हाथी सरोवर में क्रीड़ा कर रहा था। वन में समवसरण में जिनवर की ध्वनि सुनकर वह शीघ्र गुणी हो गया। उसने हिंसा से निवृत्ति का सहारा ले लिया। जीव देखकर, वह धीरे-धीरे पग रखता, अविशुद्ध कौर की वह इच्छा नहीं करता। तब महावत राजा से कहता है कि प्राणप्रिय गज कौर नहीं खाता। तब राजा ने कुबेरप्रिय से कहा। उसने उसे मांस का पिण्ड दिखाया। उत्तम विचारवाला गज उसे देखता तक नहीं। फिर उसे खूब अन्न दिया गया, तो उस गजराज ने उसे स्वीकार कर लिया।

घत्ता—वारण (गज) दुर्जय का निवारण करनेवाला और अणुव्रतों का धारण करनेवाला हो गया है, इस प्रकार उसे बुद्धिमान् जाना, और सेठ का प्राण से भी अधिक सम्मान किया ॥ ८ ॥

९

दूसरे दिन राजा का नवतोरणक नाट्यमाली नट घर आया। और उसने रसविभ्रम हाव और भावों से सहित अपनी कन्या से नृत्य करवाया। तब राजा ने किया है तिलक जिसके ऐसी उत्पलमाला नामक वेश्या से पूछा। कामरूपी सर्प के विष से उद्विग्न और सेठ का स्वरूप अपने मन में सोचती हुई उस मुग्धा ने राजा से जो कुछ कहा उसने उसे अपने मन में रख लिया। अपने घर जाकर उस वेश्या ने उस सेठ के घर दूती नियुक्त कर दी। वह, उस सुभग (सेठ) के प्रतिवचनों से आहत हो गयी। प्रणतांग नरक से उसकी निवृत्ति की। सखी ने उस हंसगामिनी को समझाया कि दुर्लभ लभ्यों में प्रेम मत करो। तब दुर्लभ कामदेव के बाणों से आहत वह प्रवर विलासिनी कहती है—''हे सखी, चित्त दु:संस्थित है। वह मेरा नया-नया प्रिय हुआ है। हे सखी! तुम पंचम की तान गाओ, यदि वह (राग) प्रिय से किसी प्रकार नहीं मिलाती तो मैंने कह दिया कि मैं निश्चय से मरती हूँ। तुम मेरे परोक्ष में रोओगी।

घत्ता—सखी कहती है कि आठवें दिन वह जिनभवन के आँगन में अपने हृदय में जिनवर को धारण कर कायोत्सर्ग धारण करता है॥ ९॥

१०

''तब संचित किया है ध्यानरस जिसने, उसे उठाकर मैं अवश्य ले आऊँगी।'' इस प्रकार उन दोनों ने आलोचना की। इतने में आठवाँ दिन आ गया। वह धीर जहाँ अपने हाथ लम्बे किये हुए स्थित था, सखी ने तुरन्त जाकर उसे उठा लाकर बालिका उत्पलमाला के लिए समर्पित कर दिया। उस मुग्धा ने काम की सब चेष्टाएँ कीं परन्तु वर स्थित रहा, जैसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

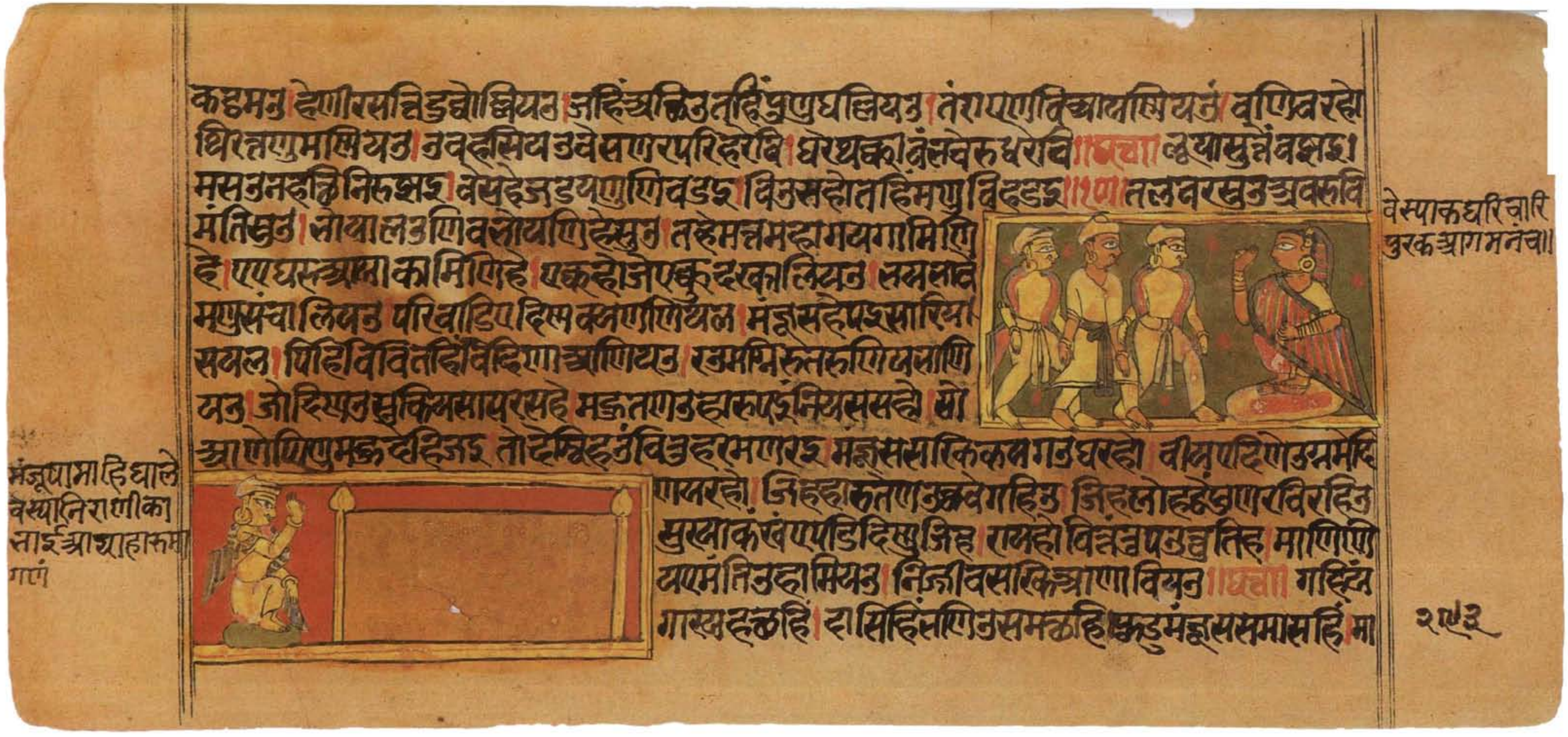

काठ का बना हो। उसने यह दुर्वचन कहा कि यह नीरस है। वह जहाँ था, उसे वहीं स्थापित कर दिया। यह बात राजा ने भी सुनी और वणिक्‌वर की दृढ़ता की सराहना की। नर को छोड़ने के लिए वेश्या का उपहास किया गया। वह ब्रह्मचर्य धारण कर अपने घर में स्थित हो गयी।

घत्ता—कोलिक सूत्र से मच्छर बाँधा जा सकता है, हाथी नहीं रोका जा सकता। वेश्या में मूर्खजन गिरते हैं विद्वान् का मन वहाँ खण्डित हो जाता है॥ १०॥

११

कोतवाल का पुत्र, एक और मन्त्री-पुत्र तथा विलासी राजा की रखैल का पुत्र, ये मतवाले महागज के समान गतिवाली उस वेश्या के घर आये। उसने एक-एक को (परस्पर) दिखलाया और डर की भावना से उनका मन चकित कर दिया। क्रम से उसने वचनों की शृंखला देकर, सबको मंजूषा में बन्द कर दिया। भाग्य के द्वारा पृथुधी भी वहाँ लाया गया। रति की याचना करनेवाले उससे युवती ने कहा—"जो तुमने पुण्यरूपी धान्य का आस्वाद लेनेवाली अपनी बहन के लिए मेरा हार दे दिया है, यदि वह लाकर तुम मुझे दोगे, तो मैं भी तुम्हें रतिमरण दूँगी।" मंजूषा का साक्ष्य बनाकर पृथुधी घर गया। दूसरे दिन सूर्य का उद्‌गम होने पर जिस प्रकार उसने उत्सव में हार ग्रहण किया था और जिस प्रकार लोभ से पुन: वह ठगा गया और सुरति की आकांक्षा से जिस प्रकार उसने दे दिया, उस प्रकार सारा वृत्तान्त राजा से कह दिया। उस मानिनी ने मन्त्री को नीचा दिखा दिया, वह निर्जीव साक्षी—गवाह (मंजूषा) ले आयी।

घत्ता—तब समर्थ दासियों ने अपने हाथों में अंगारे लेकर कहा—हे मंजूषे! थोड़े में साफ-साफ कहो,

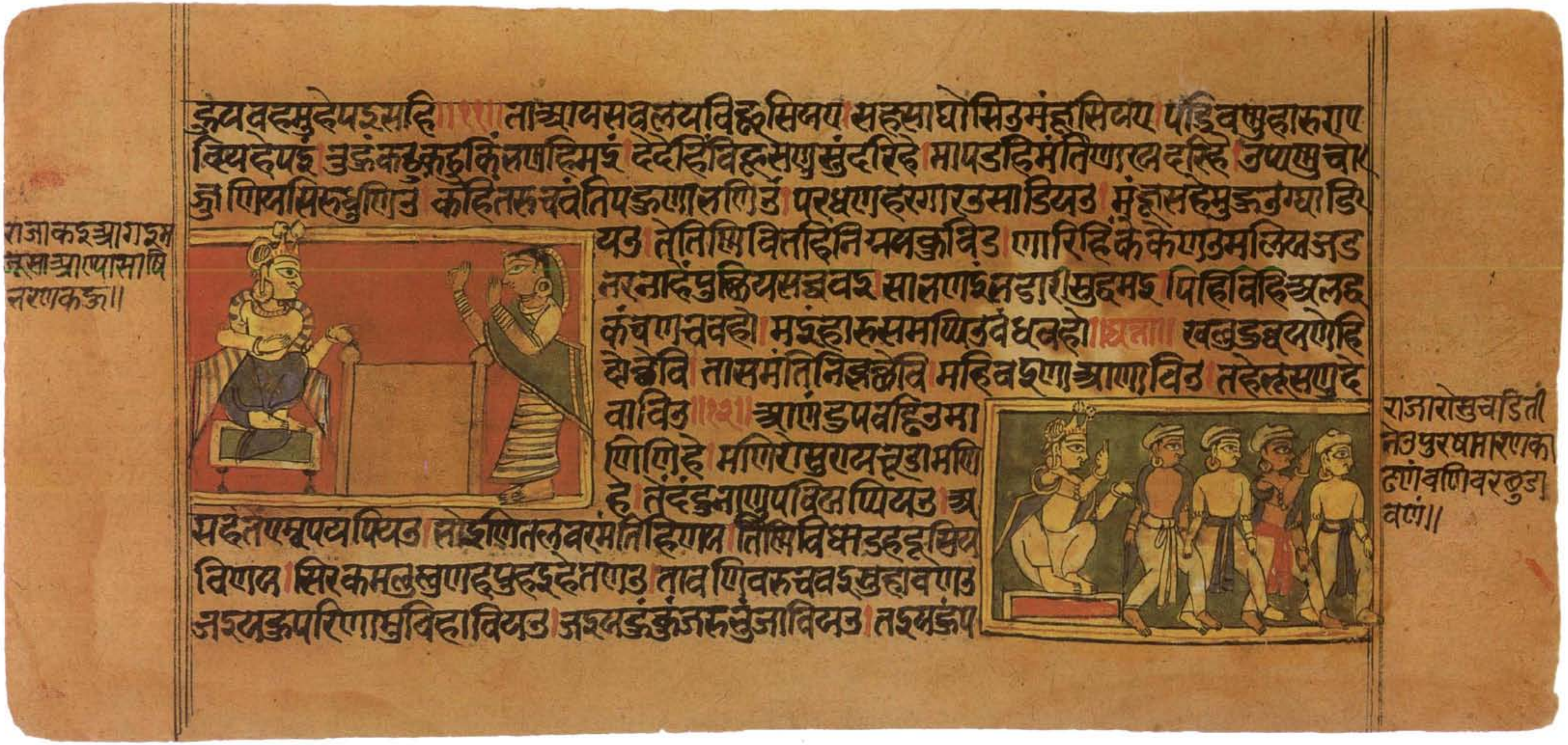

आग के मुख में मत जाओ॥ ११॥

१२

तब लोहे के वलयों से विभूषित मंजूषा ने घोषणा की कि गत दिवस तुमने हार देना स्वीकार किया था। तुम कठोर-कठोर यह मुझसे क्या कहते हो ? सुन्दरी का आभूषण दे दो। हे मन्त्री, तुम नरक की घाटी में मत पड़ो। राजा को आश्चर्य हुआ। उसने अपना माथा पीटा और कहा — क्या कहीं काठ भी बोलता है? मंजूषा का मुँह खोल दिया गया, परधन का हरण करनेवाला नष्ट हो गया। वे तीनों विट उसमें-से निकले। स्त्रियों के द्वारा कौन-कौन जड़-बुद्धू नहीं बनाये जाते ? राजा ने सत्यवती से पूछा। शुद्धमति आदरणीय वह स्वीकार करती है जिसे स्वर्णध्वज प्राप्त नहीं है ऐसे अपने भाई पृथुधी को मैंने हार दिया था।

घत्ता—तब उस दुष्ट की दुर्वचनों से भर्त्सना कर और अपने मन्त्री को डाँटकर राजा ने वह आभूषण बुलवाया (मँगवाया) और उसे दिलवा दिया॥ १२॥

१३

मानिनी का आनन्द बढ़ गया। परन्तु उस राजश्रेष्ठ के मन में क्रोध बढ़ गया। बाद में उसने दण्ड की कल्पना की और इसे सहन न करते हुए उसने कहा—''रखैल, तलवर और मन्त्री का पुत्र ये तीनों दूषितविनय हैं, इन्हें निकाल दिया जाये। मन्त्री के पुत्र का सिर काट लो।'' तब वह सेठ सुहावने स्वर में कहता है—''जब मैंने परिणाम का विचार किया था और हाथी को भोजन कराया था,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उस समय तुमने जो वर मुझे दिया था, हे राजन्! शान्ति करनेवाला वह वर आप आज मुझे दें। इनको परदेश न भेजें, इसको तलवार से खण्डित न करें।'' राजा ने इस पर करुणा की और देश निकाला और मृत्युदण्ड को उठा लिया। राजा ने जो सेठ का कथन मान लिया, उसने मन्त्री पृथुधी को कुपित कर दिया। उपकार भी दुष्ट के लिए दोष के समान होता है। नाग को दिया गया दूध विष ही होता है। वह सोचता है कि मरूँगा या मारूँगा, सेठ का प्रतिकार अवश्य करूँगा!

घत्ता—फिर जब वह हिम शीतल नदी किनारे गया हुआ था वहाँ उसने विद्याधर के हाथ से गिरी हुई एक अँगूठी देखी॥ १३॥

१४

सुखदायिनी उसे उसने अपनी अँगुली में पहन लिया। इतने में विद्याधर धरती देखता है। मन्त्री ने पूछा—तुम क्या देखते हो? उसने उत्तर दिया—''मैं यहाँ था। मेरी कामरूप धारण करनेवाली अँगूठी, हे मित्र, यहीं कहीं गिर गयी है, मानो जैसे पति के द्वारा नहीं सिखायी गयी प्रियतमा हो।'' तब उसने वह अँगूठी हँसकर उसे दिखायी और पुन: उससे माँगी। विद्याधर ने वह अँगूठी उसे दे दी। वह सन्तुष्ट होकर अपने घर गया। उसने अपने छोटे भाई वसु को सिखाया, उसने अँगूठी से कुबेरप्रिय बना दिया। वह धर्म को जाननेवाली सत्यवती रानी के एकान्त आसन पर चढ़ गया। वह उसे अपना सगा भाई समझती है, लोगों को वह अकार्य करता हुआ सेठ दिखाई देता है। किसी दुष्ट ने राजा से निवेदन किया — हे परमेश्वर, तुम्हारी स्त्री से रमण किया है—

घत्ता—नवयौवन-मद से मत्त धनवती के पुत्र ने निश्चय से। किसी दूत को मत भेजो खुद जाकर देखो॥ १४॥

१५

उस मुग्धा ने उस मायावी वणिक्त्व को प्राप्त उस बालक को सिर पर चूम लिया। दुर्दर्शनीय ईर्ष्या से उत्कण्ठित

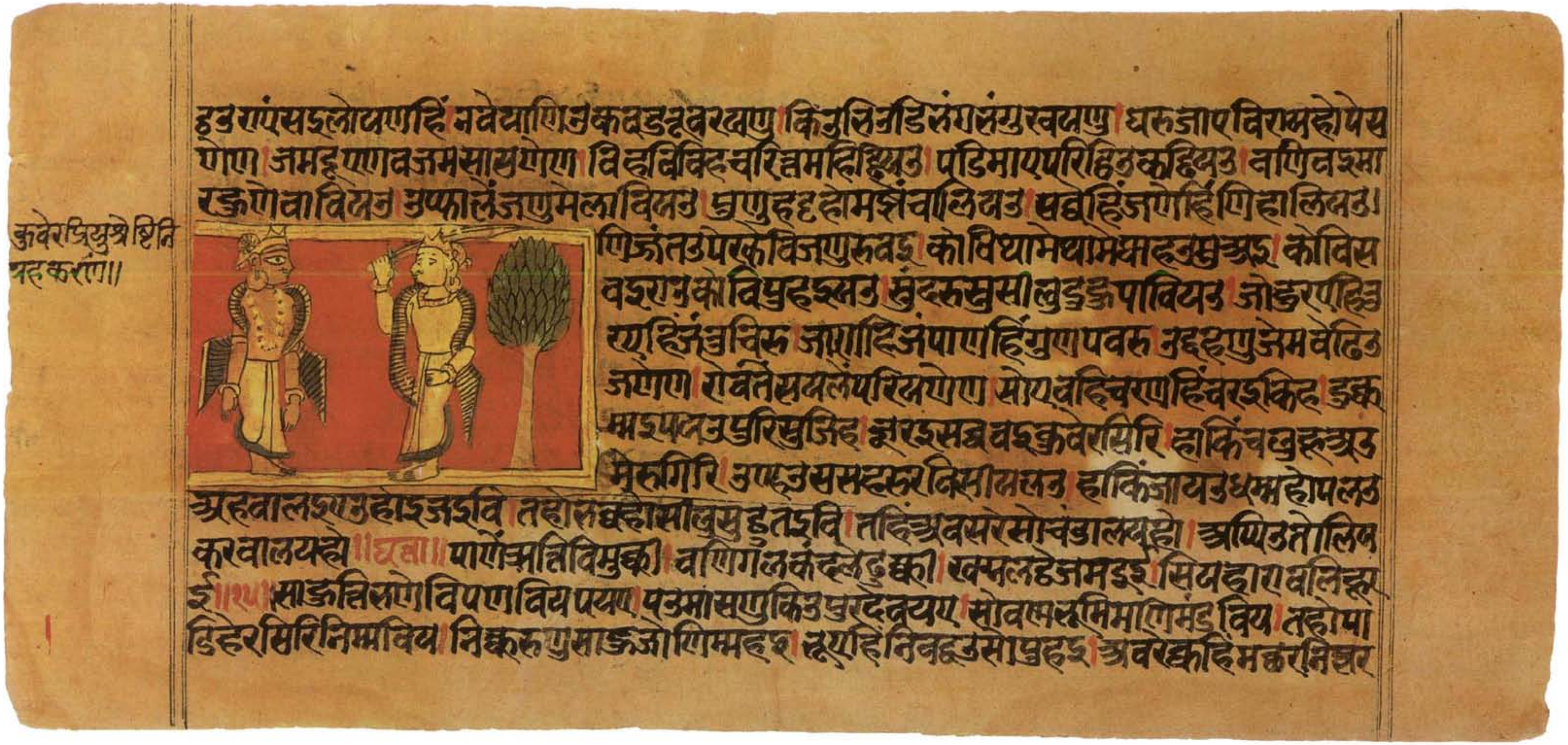

नेत्रों से राजा ने स्वयं उसे देखा। वह नहीं जान सका कि यह कपटरूप की रचना है। भौंहों की भंगिमा से उसका मुख टेढ़ा हो गया। पृथुधी ने भी घर जाकर राजा के आदेश से, यमशासन से यमदूत के समान, चारित्र्य की महाऋद्धि से सम्पन्न प्रतिमायोग में स्थित सेठ को निकाला। उसे मारने के लिए ले जाया गया। पटहध्वनि से लोगों को इकट्ठा कर लिया। सत्यवती और कुबेरश्री दु:खी होती हैं—हा! सुमेरुपर्वत डिग सकता है? चन्द्रमा उष्ण और सूर्य क्या शीतल हो सकता है ? हा ! क्या धर्म का प्रलय हो गया ? अथवा यद्यपि यह इस प्रकार हो, तब भी उसका भव्य का शील शुद्ध है। उस अवसर पर तलवार को उठाये हुए चण्डाल को यह सौंप दिया गया।

घत्ता—चाण्डाल के द्वारा मुक्त वह तलवार सेठ के गले पर शीघ्र पहुँची और यम की दूती वह खड्गलता श्वेतहारावलि बन गयी॥ १५ ॥

१६

'साधु' यह कहकर, और पैर पड़ते हुए पुरदेवता ने पद्मासन की रचना की, और उसके लिए मणिमण्डित स्वर्गभूमि तथा प्रातिहार्य-श्री का निर्माण किया। निष्करुण जो साधु को मारता है वह पृथुधी भूतों के द्वारा बाँध लिया गया, मत्सर से परिपूर्ण, और दूसरों ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निन्दा कर टक्करों से सिर चकनाचूर कर दिया। अनेक क्रोध से भरे हुए वहाँ पहुँचे जहाँ राजा था। उनका दिव्य क्रोध बहुत बढ़ गया और राजा को पैरों से पकड़कर खींच लिया। राजा कहता है कि मैंने क्या दोष किया ? तब धर्म का हित करनेवाला पिशाचगण बताता है—मुद्रा का प्रपंच, दूसरे का रूप बनाना, परस्त्री से विरत होने पर भी सुधि का बन्धन, गुणीजन का बन्धन और राजा की विभिन्नमति करना। उसने प्रणाम करके सत्यवती को सन्तुष्ट किया। पतिव्रता कुललक्ष्मी कुबेरश्री को शान्त कर अपनी श्री की निन्दा कर राजा वहाँ गया जहाँ सेठ था। हाथ जोड़कर वह राजा कहता है—

घत्ता—मैंने दुष्ट के कपट की कल्पना नहीं की थी, मुझ पापी ने दुष्कृत किया है। हे सुभट, क्षमा करें जो मैंने तुम्हारे चित्त को खेद पहुँचाया और कोड़ों के आघातों से तुम्हारे शरीर को सताया॥ १६ ॥

१७

सेठ कहता है कि यह मेरा पूर्वार्जित कर्म था कि जो तुम अकारण कुपित हुए। अब उस (कर्म) को नष्ट करूँगा, अब मैं तप करूँगा। तुम्हारे प्रति ईर्ष्याभाव धारण नहीं करूँगा। प्रिय कहकर वह अपने भवन ले आया। राजा ने उसे बहुत इष्ट माना। चाण्डाल ने भी मुनियों के द्वारा दी गयी अहिंसा का अष्टमी और चतुर्दशी के दिन पालन किया। फिर चाण्डाल ने चोर (विद्युत् चोर) से कहा कि किस प्रकार गुणपाल ने व्रत ग्रहण किये। उस सेठ ने अपनी कन्या वारिषेणा जो विज्ञान, रूप और लक्षणों से सहित थी, कुबेरश्री के पुत्र भुवन को आनन्द देनेवाले वसुपाल को दे दी। उसके पिता ने कुबेरप्रिय (सेठ) से कहा कि मोक्ष का क्या कारण है, हे प्रिय बताओ ! उसने कहा, मैं धर्म को ही शिव का कारण मानता हूँ, अन्य किसी कारण को नहीं गिनता। हे राजन, मैं जाऊँगा और मैं मुनि का चरित्रधारक बनूँगा?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तब उसे तीन दिन के लिए राजा ने रोक लिया। उसने पुत्रों की रक्षा करने के लिए किसी को खोज लिया। तीसरे दिन आता हुआ-सा दिखाई दिया। राजा से पूछने के लिए सेठ आया, (उसी समय) मक्खी के ऊपर छिपकली दौड़ी।

घत्ता—कहाँ छिपकली और कहाँ मक्खी! कणों को खानेवाली किस प्रकार भक्षित कर ली गयी। जीव को कर्म सहना पड़ता है और कोई दूसरा नहीं है॥ १७॥

१८

सन्तान के लिए सुख दैव करता है, चिन्ता कर माँ-बाप क्यों मरते हैं? सत्यवती का पुत्र श्रीपाल पहला चक्रवर्ती होगा। दैवज्ञों ने आदेश दिया। गुणपाल श्रमण मुनि होकर चला गया। कथा सुनकर चोर ने शान्ति से अपनी मति को शान्त और संयत किया। उसने अपनी नरकायु हटायी और तीसरे नरक से उसने पहले नरक का बन्ध कर लिया। जो सागरों की संख्या में थी, वह लाख करोड़ वर्षों में रह गयी। श्रीपाल के विवाह में वसुपाल ने रिसते हुए घावोंवाले उन दोनों (चाण्डाल और चोर) को मुक्त कर दिया। वह चोर मरकर भयंकर दु:खों के घर पहले नरक में गया। बहुत दिनों के बाद वहाँ से निकला और वन में कुम्भोदर के घर में उत्पन्न हुआ। यहाँ रहकर मैं संयम का पालन करता हूँ और जिनदेव के द्वारा कहे गये पर श्रद्धान करता हूँ।

घत्ता—तब देव ने कहा—"जिसे तुमने जन्मान्तर में मारा था, उस यति के जोड़े को देखो, क्या अब भी तुम उसे क्रोध से देखते हो?॥ १८॥

१९

या क्षमा करते हो? हे आदरणीय! स्फुट कहिए, क्या आज भी वैर अपने मन में धारण करते हो?"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह सुनकर मुनि ने कहा—"पापिष्ठ, मैंने जो अपने को पीड़ा दी, उससे अब मैं अपने को निःशल्य करता हूँ और उससे हित-मित वचन कहूँगा।" इस पर देव बोला—"हे ऋषि, सुनिए। हे स्ववशिन्, हम ही वे दोनों हैं। आपके द्वारा आहत होने पर देव हुए और कहीं भी भ्रमण करते हुए यहाँ आ गये और आप के चरणकमलों की वन्दना की।" तब मुनि ने अपनी निन्दा की—"हा-हा! मैंने दुष्ट सोचा, हा हा मैंने दुष्ट चिन्ता की। हा-हा मैंने दुष्ट भाषण किया। हा-हा मैंने दुष्ट चेष्टाएँ कीं। मैं क्षन्तव्य हूँ, मुझे निःशल्य बनाओ। इस समय किसी के भी साथ मेरा वैर नहीं है। जिस प्रकार तुम लोगों के लिए उसी प्रकार त्रिजग के लिए मैंने क्षमा किया। इस समय मैं मुनि कहा जाता हूँ।"

घत्ता—तब दूर हो गया है मत्सर जिसका ऐसा वह देव चमरों और अप्सरा के साथ गुरु की वन्दना कर स्वर्ग चला गया, वह जिनवर के मार्ग से च्युत नहीं हुआ॥१९॥

२०

वह भीम मुनि धरती पर विहार करते हुए वसुपाल के नगर के शिवंकर उद्यान-पथ में आकर ठहर गये। वहाँ उनका अशेष मोह नष्ट हो गया। सुरवर भवनों को कँपानेवाला एक क्षण में उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हो गया। उनके एक छत्र और दो चामर थे। चारों ओर से सुरवर झुक गये। पद्मासन विपुल मणिमण्डप और हेमोज्ज्वल धरतीमण्डल शोभित है। अपने स्वामी से रहित, तथा एक से एक विलक्षण चार व्यन्तर देवियाँ आयीं। उसी अवसर पर पवन से उद्धत आठ की आधी (चार) देवियाँ और आयीं। पति के बिना, उन्होंने दर्शन किये और यति से पूछा कि उनका पति कौन होगा? यति ने कहा कि इस नगरी में मति को मोहित करनेवाली तुम सुरदेव की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गृहिणियाँ थीं। वसुषेण, वसुन्धरा, धारिणी और पृथ्वी। ये शुभ करनेवाली थीं। श्रीमती, वीतशोका, विमला और वसन्तिका ये चार उनकी गृह दासियाँ थीं। इन आठों ने वन में मुनि के पास पवित्र व्रत ग्रहण किये। कन्याएँ मरकर अच्युत स्वर्ग के इन्द्र की शुभसूचित करनेवाली देवियाँ हुईं।

घत्ता—सुरकामिनी रतिषेणा, सुहाविनी सुसेना (सुसीमा), कोमल हाथोंवाली सुखावती और सुप्रशस्त चित्रसेना॥ २०॥

२१

व्रत करनेवाली चारों दासियाँ भी वनदेवियाँ हुईं (व्यन्तर देवियाँ हुईं), उनमें यक्षेश्वरी, चित्रवेगा, धनवती, धनश्री व्यन्तर देवियाँ आज भी दिव्यकुल में उत्पन्न हुई हैं, यहाँ इनको आकाशतल में देखो। ऋषि को दिये जाते हुए दान को सुरदेव ने नहीं माना, उसकी अवहेलना की। वह मरकर दो दाँत का गधा हुआ, फिर कौआ, फिर चूहा, फिर साँड, फिर दाढ़ों से भयंकर सुअर, फिर चाण्डाल और कुमनुष्य। मेरे साथ वह भी नरकबिल में डाला गया। मैं मरकर नरकबिल में उत्पन्न हुआ। मन-वचन और काय की शुद्धि से जिनधर्म की भावना की। फिर बकुल नाम के चाण्डाल ने यतिवर की सेवा की। उन्होंने भी उसकी आयु प्रकाशित की कि उसके सात दिन-रात बचे हैं। असह्य भव-ऋण को हटानेवाले उन सात दिनों में संन्यास कर इस समय वह स्पष्ट रूप से स्वर्ग में उत्पन्न हुआ है। विधि के द्वारा लिखी गयी लिपि को कौन मिटा सकता है? यह नया देवता तुम्हारा पति है, और लो, वही हमारा नया धर्मगुरु है।

घत्ता—सुरदेव की जो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

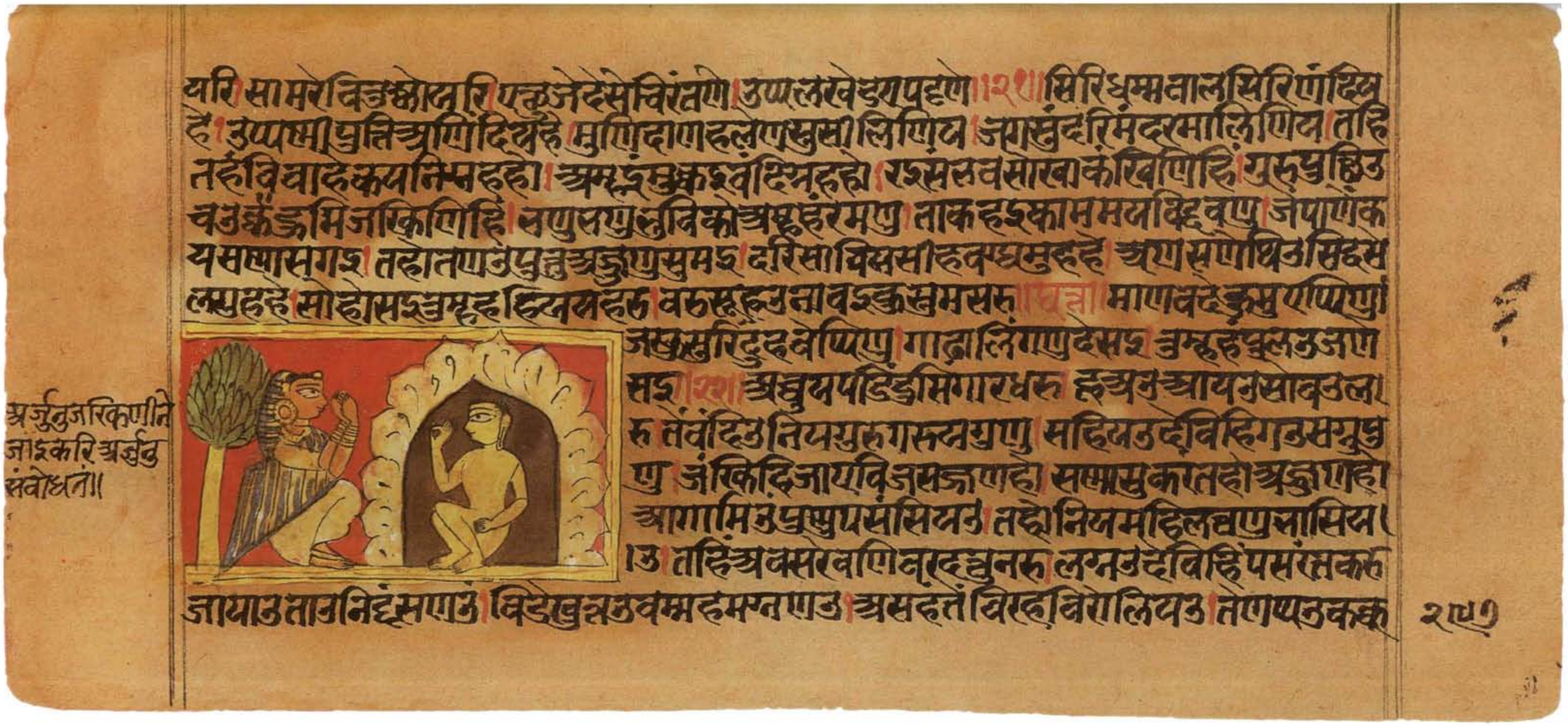

माता थी वह कृशोदरी मरकर इस प्राचीन उत्पलखेट नगर में— ॥ २१ ॥

२२

—श्री धर्मपाल राजा को आनन्द देनेवाली अनिन्दिता से पुत्री उत्पन्न हुई। मुनि के दान के फल से मन्दरमालिनी नाम की वह कन्या अत्यन्त सुशील और विश्वसुन्दरी थी। वहाँ उसके विवाह के अवसर पर निग्रह करनेवाले बन्दीगृह से हम लोग मुक्त हो गये। रति से उत्पन्न सुख की इच्छा करनेवाली उन चारों यक्षिणियों ने गुरु से पूछा—''बताओ-बताओ, संसार में हमारा प्रिय कौन है?'' तब काम-मद का नाश करनेवाले वे कहते हैं—''जो चाण्डाल ने संन्यासगति से मरण किया है उसका अर्जुन नाम का सुमति पुत्र है। जिसके मुख पर सिंह और बाघ दिखाई देते हैं ऐसी सिद्ध शैल की गुफा में वह अनशन कर रहा है। वह तुम्हारे हृदय का हरण करनेवाला सुन्दर वर होगा, कामदेव के समान।

घत्ता—मनुष्य शरीर छोड़कर यक्ष-सुरेन्द्र होकर वह तुम्हें प्रगाढ़ आलिंगन देगा और रोमांच उत्पन्न करेगा'' ॥ २२ ॥

२३

बकुल चाण्डाल का वह जीव आया और शृंगार धारण करनेवाला अच्युत प्रतीन्द्र हुआ। उसने आकर महान् गुणोंवाले अपने गुरु की वन्दना की और देवियों के साथ पुनः स्वर्ग चला गया। यक्षिणियों ने जाकर यश से उज्ज्वल, संन्यास करते हुए अर्जुन के आगामी पुण्य की प्रशंसा की और उसे बताया कि वे उसकी स्त्रियाँ होंगी। उस अवसर पर वरदत्त नामक वणिक् मनुष्य, अपने हाथ फैलाये हुए देवियों के पीछे लग गया। वे देवियाँ अदृश्य हो गयीं। कामदेव के बाणों से वह धूर्त क्षुब्ध हो गया, विरह की विडम्बना को सहन नहीं करते हुए उसने स्वयं को पर्वत

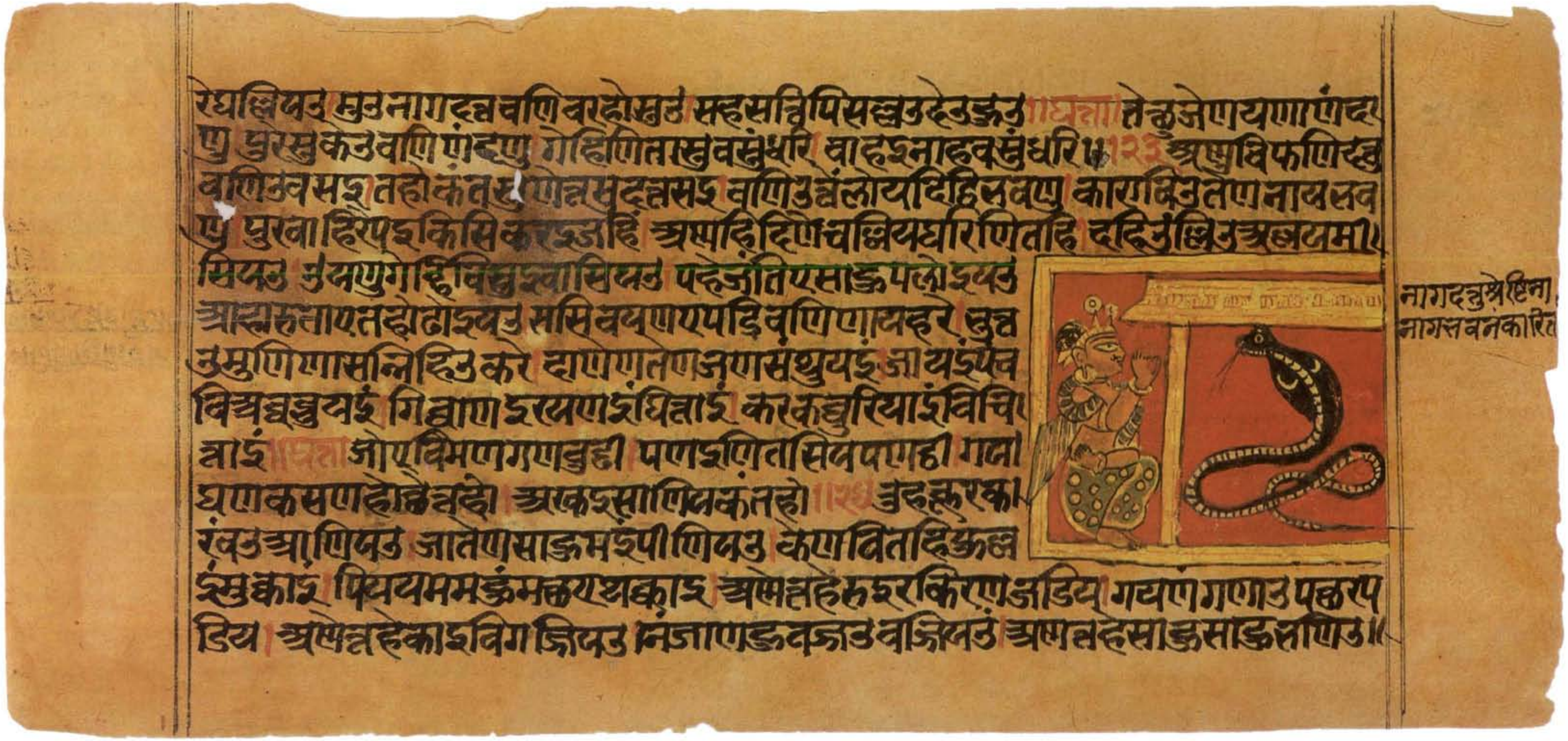

की चोटी से गिरा लिया। इस प्रकार सेठ नागदत्त का पुत्र मर गया और शीघ्र पिशाचदेव के रूप में उत्पन्न हुआ।

घत्ता—उसी नगरी में नयनों को आनन्द देनेवाला सुकेतु नामक वणिक्-पुत्र था। उसकी पत्नी वसुन्धरा थी। वह वसुन्धरा का पालन करता था॥ २३॥

२४

वहाँ एक और नागदत्त सेठ रहता था, उसकी सुन्दर नेत्रोंवाली पत्नी सती सुदत्ता थी। उस वणिक्-पुत्र ने लोगों की दृष्टि के लिए आश्रयस्वरूप (सुन्दरता के कारण) एक सुन्दर नाग भवन बनवाया। नगर के बाहर जहाँ उसका (वसुन्धरा का) पति खेती करता था, दूसरे दिन उसकी पत्नी वहाँ जाती है। दही से गीला, हल्दी से मिश्रित सुन्दर बघारा हुआ भोजन लेकर जाती हुई उसने रास्ते में एक साधु को देखा। उसने उसके लिए आहार दिया। उस वणिक् के नागघर में चन्द्रमुखी के द्वारा हाथ पर रखा हुआ भोजन मुनि ने कर लिया। उस दान से लोगों के द्वारा संस्तुत पाँच आश्चर्य उत्पन्न हुए। देवताओं ने रत्न बरसाये, रंगबिरंगे और विचित्र।

घत्ता—रत्नों की वर्षा देखकर प्रणयिनी त्रस्त होकर भागी। वह सघन कणोंवाले खेत में जाती है और अपने पति से कहती है॥ २४॥

२५

"मैं जो तुम्हारे लिए दही-भात लायी थी, उससे मैंने साधु को सन्तुष्ट कर दिया। किसी ने वहाँ फूल बरसाये, हे प्रियतम! वे मेरे माथे पर गिरे। एक और जगह सुन्दर किरणों से जड़े हुए पत्थर आकाश से गिरे। एक और जगह भी कुछ गरजा, मैं नहीं जान सकी! बाजा बजा। एक और जगह 'साधु-साधु' कहा गया,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

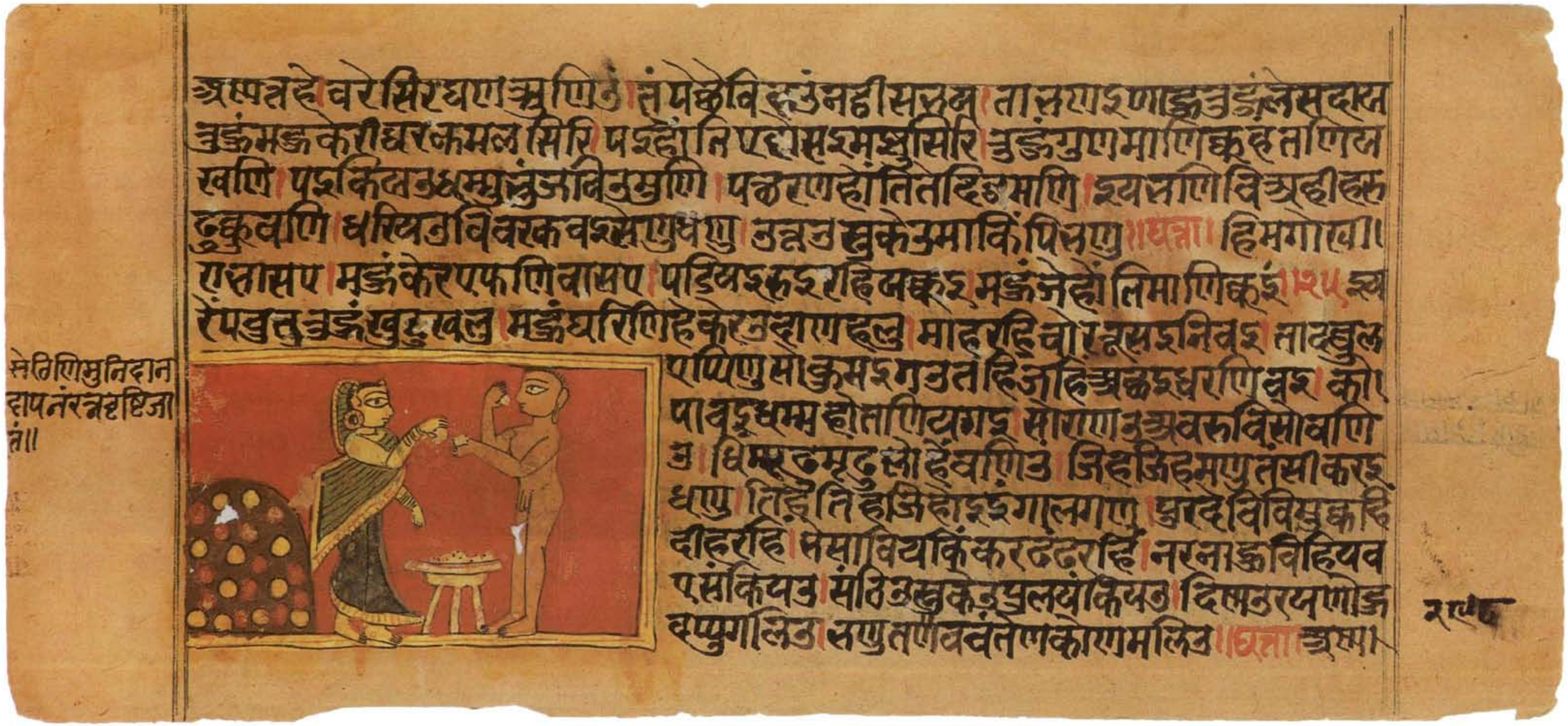

एक और जगह बरसनेवाले बादल गड़गड़ाये। वह सुनकर मैं डरकर भागी।'' इस पर स्वामी कहता है — ''हे सखी, तुम सदय हो। तुम मेरी गृहरूपी कमल की लक्ष्मी हो, तुम्हारे रहते हुए मुझे लक्ष्मी प्राप्त होगी। तुम गुणरूपी माणिक्यों की खदान हो। तुमने यह धर्म किया कि जो मुनि को आहार दिया। वे पत्थर नहीं दिव्यमणि हैं।'' यह कहकर वह वणिक् शीघ्र नागभवन पहुँचा। लेकिन शत्रुवैश्य (सुकेतु) ने वह धन ले लिया। सुकेतु बोला—कुछ मत कहो।

घत्ता—हिमकिरण और क्षीर की तरह भास्वर मेरे नागभवन में गिरे हुए अत्यन्त कान्तिवाले माणिक्य मेरे ही होते हैं॥ २५॥

२६

दूसरे ने कहा—''तुम क्षुद्र और दुष्ट हो। यह मेरी पत्नी के दान का फल है। हे चोर, उसका अपहरण मत कर, राजा नाराज होगा।'' तब वह कुमति धन लेकर वहाँ गया जहाँ राजा था। धर्म की गति को कौन पा सकता है ? वह राजा और वह बनिया भी अत्यन्त मूर्ख और लोभ से प्रवंचित थे। जैसे-जैसे वह मन में वह धन स्वीकार करता, वैसे-वैसे वह ईंटों का समूह होता जाता। नगरदेवी के द्वारा मुक्त राक्षसों ने अनुचरों को डरवा दिया। राजा भी अपने मन में आशंकित हो गया परन्तु सुकेतु रोमांचित हो उठा। उसने रत्नसमूह दे दिया। दर्प दूर हो गया। बताओ तपवाले से कौन मलिन नहीं होता!

घत्ता—दूसरे दिन नागभवन के तरुकोटर में दूसरे के धन का जिसे स्वाद लग गया है, ऐसे नागदत्त ने कहीं एक मणि देखा॥ २६॥

२७

किसी प्रकार रखने के लिए उसने उसे निकाला। फिर क्रोध की ज्वाला से विस्फुरित होकर, और यह कहकर कि यह मेरे हाथ पर क्यों नहीं आता, हुंकार भरते हुए उसके भारी पत्थर से प्रहार करने पर वह मणि आकाश में उछलकर उसके भालतल से जा लगा। उसके उठे हुए खण्ड (नोक) से वह विदारित हो गया। नागदत्त को बुलाया गया। धन-संख व्यवहारी से जीता गया वसुन्धरा का पति (सुकेतु) हार को प्राप्त हुआ। लेकिन जितना धन उसका बढ़ा, वह दुष्ट उतना ही धन हार गया (जुए में)। धनगर्व से दुष्ट आदमी उद्दण्ड (उद्‌भट) हो जाता है। सुकेतु ने वह धन माँगा। उसने कहा—''तुम अपनी भौंहें टेढ़ी क्यों करते हो, देवों के प्रभाव से मैं तुम्हें दूँगा''। फिर उसने (नागदत्त ने) नागराज से पूछा—हे देव, आपने मुझे क्यों दरिद्र बना दिया है? माँगते हुए भी कोई वर मुझे नहीं दिया। तब नाग कहता है—देता हूँ।

घत्ता—वणिक् कहता है—भो-भो ! विषधरश्रेष्ठ आदरणीय, सुकेतु का नाश करनेवाला और बाहुओं का भूषण बल मुझे दीजिए॥ २७॥

२८

गम्भीर ध्वनिवाला साँप कहता है—''धन से दिव्य धन नहीं जीता जा सकता। जिसका पुण्य सहायक होकर चलता है उसके प्राणों का अपहरण कौन कर सकता है ? लोभी तुम मुझे उसके लिए समर्पित कर दो, और यह मर्यादा वचन उससे कह दो। कहो कि नागराज कर्मभार धारण करना चाहता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

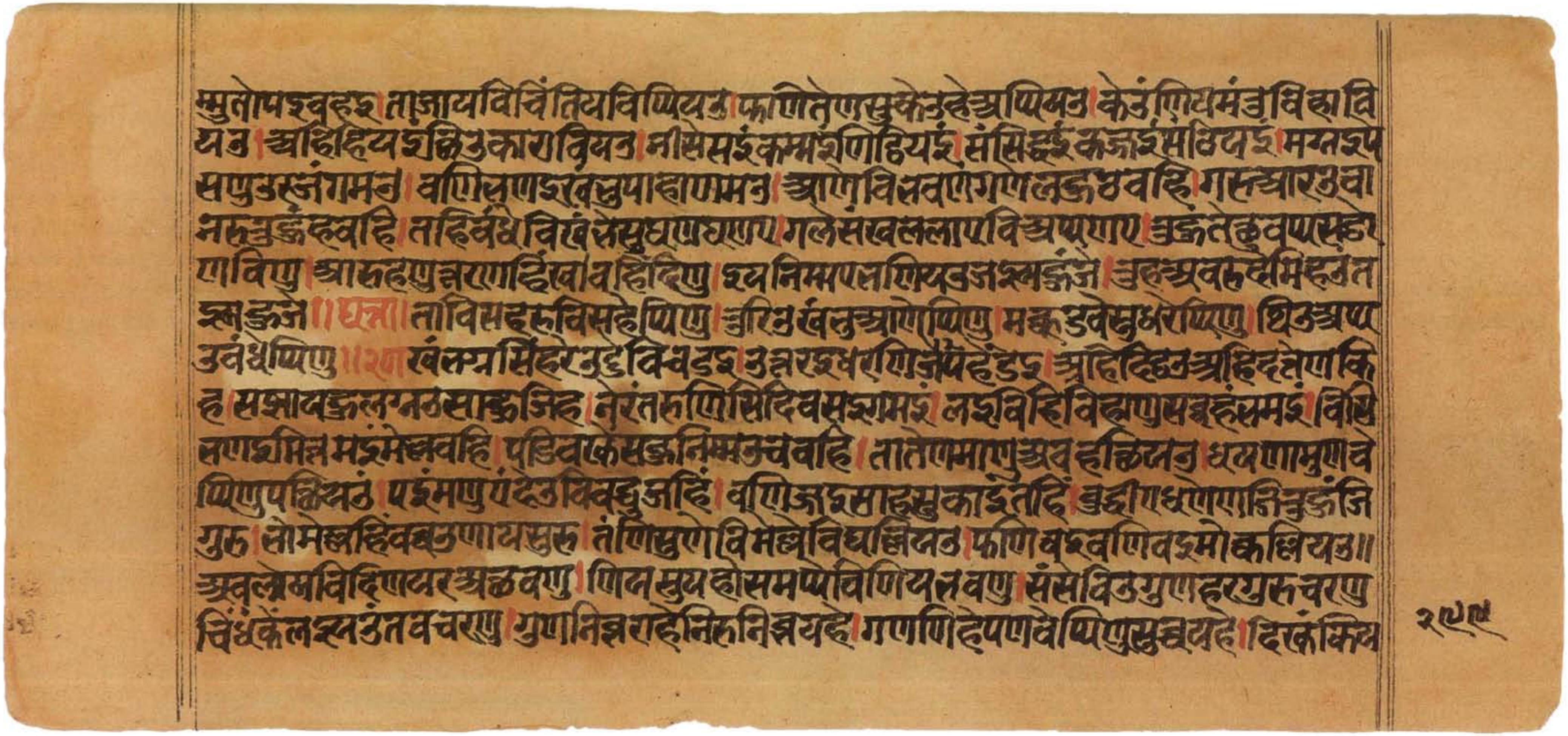

यदि कर्म नहीं है, तो तुम्हें धारण करना चाहता है।'' तब बुरा सोचनेवाले उस साँप को उसने सुकेतु के लिए सौंप दिया। सुकेतु ने अपना सोचा हुआ किया। उससे मनचाहा काम कराया। अशेष कामों का उसे आदेश दिया गया। जब सब काम सिद्ध हो गये, तो साँप आदेश माँगता है। वणिक् कहता है कि पत्थर का एक खम्भा लाकर घर के आँगन में स्थापित करो और तुम एक बहुत बड़े बन्दर बन जाओ। वहाँ मजबूत खम्भे से एक जंजीर बाँधकर और उसे अपने गले में डालकर हे सुभट, तुम बिना किसी धूर्तता के चढ़कर और उतरकर अपना दिन बिताओ। और उसने कहा कि जब तुम इसे नियमित रूप से करने लगोगे तभी मैं तुम्हें दूसरा काम दूँगा।

घत्ता—तब विषधर हँसकर तुरन्त खम्भा लाकर, बन्दर का रूप बनाकर और अपने को बाँधकर स्थित हो गया॥ २८ ॥

२९

खम्भे के अग्र शिखर पर उठकर चढ़ता है, उतरता है, चलता है और धरती पर गिरता है। नागदत्त ने नाग को इस प्रकार देखा जैसे कोई साधु सन्त ध्यान में लगा हुआ है। लगातार वह दिन-रात बिताता है। लो, विधि का विधान सबको घुमाता है। साँप कहता है — हे मित्र, तुम मुझे छोड़ दो। प्रतिपक्ष के साथ नम्रता से बोलो। तब उसने मान छोड़ दिया और सुकेतु को प्रणाम कर प्रार्थना की कि जहाँ तुमने मनुष्य होकर भी नाग को बाँध लिया, वहाँ मैं तुम्हारे साहस का क्या वर्णन करूँ! तुम बुद्धि और धन दोनों से बड़े हो, हे वत्स, तुम नागसुर को छोड़ दो।'' यह सुनकर छोड़कर डाल दिया। सुकेतु ने साँप को मुक्त कर दिया। एक दिन सूर्य का अस्त देखकर, अपने पुत्र को अपना भवन देकर सुकेतु ने गुणधर गुरु के चरणों की सेवा की और तपश्चरण ले लिया। तथा मत्सर से रहित निर्भय सुव्रता आर्या को नमस्कार कर उसकी गृहिणी

वसुन्धरा ने दीक्षा ग्रहण कर ली। षड् आवश्यक क्रियाओं का परिपालन कर मुनिवर सुकेतु विधुरगृह में मरकर श्रेष्ठ स्वर्ग में उत्पन्न हुआ। उसकी पत्नी वसुन्धरा भी स्त्रीलिंग का उच्छेद कर उसी स्वर्ग में अनुपम देव हुई, सम्यक्त्व से अलंकृत स्त्रियों में, वीतरागों को प्रणाम करनेवाली।

घत्ता—भव्यजीव भरत के पिता के द्वारा विज्ञापित अन्तिम छह नरकों, भवनवासी और व्यन्तरवासी देवों के विमानों में जन्म नहीं लेते॥ २९॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुण-अलंकारों से युक्त महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का वणिक् नागदत्त और सुकेतु कथा-सम्बन्ध नाम का इकतीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ३१॥

सन्धि ३२

मनुष्यों, सुरों, असुरों और विद्याधरों के लिए शरणस्वरूप समोशरण में विराजमान गुणपाल जिनेन्द्र ने जो कहा था और जिसे मैंने और तुमने सुना था

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१

हे देवि सुलोचने ! उस बीते हुए कथानक को मेरे अभिज्ञान के लिए कहिए।

इस प्रकार सती सुलोचना, जयकुमार के पूछने पर श्रीपाल की गुण-परम्परा का कथन करती है। अपने घरों की शोभा से इन्द्र के विमानों को जीतनेवाले सुन्दर पुण्डरीकिणी नगर में श्रीपाल राजा वसुपाल के साथ इस प्रकार रहता था मानो इन्द्र देवों के साथ रहता हो। इस बीच कुबेरश्री माता ने विचार किया और अपने मुख-गह्वर से निकलनेवाली वाणी से कहा—'सब लोग भावपूर्ण दिखाई देते हैं। अकेला मेरा स्वामी दिखाई नहीं देता। और एक दूसरा मेरा वह भाई कुबेरप्रिय कि जिसने अपने तेज से चन्द्रमा और सूर्य को जीत लिया है। वे दोनों गये और फिर लौटकर नहीं आये। क्या जाने वे मोक्ष चले गये ?' ऐसा कहते हुए उसका सुधीजन को मिलानेवाला बायाँ नेत्र फड़क उठा। उसके हृदय में परम-उत्साह नहीं समा सका। इतने में वनपाल सामने आ पहुँचा।

घत्ता—वह कहता है—हे स्वामिनी सुनिए ! कामदेव के विकार का नाश करनेवाले केवलज्ञान के धारी, महाऋषि गुणपाल देवताओं से घिरे हुए उद्यान में अवतरित हुए हैं ॥ १ ॥

२

वहाँ पर एक और तीन गुप्तियों से युक्त तथा ध्यान के कारण निमीलित नेत्र, जो कुबेरप्रिय मुनि हुआ था, वह तुम्हारा भाई आया है। यह सुनकर देवी रोमांचित हो उठी। मानो अमृत-रस से लता को सींच दिया गया हो। वह परमेश्वरी वन्दना-भक्ति के लिए गयी। अश्वों और गजों की लार और मद की नदी बह गयी। दूसरे रास्ते से दोनों सुन्दर पुत्र चले, जिन्होंने रथ प्रेरित किया (हाँका) था ऐसे उन्होंने उपवन में कोमल वट का वृक्ष देखा जो घाम को नष्ट करनेवाला, दलों और फलों से लदा हुआ था। वहाँ पत्थर से निर्मित अनेक रत्नों से जड़ा हुआ, मनुष्यों के द्वारा बुधजनों के वचनों से संस्तुत जगपाल नाम के यक्ष और मनुष्यों के मेले को देखा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

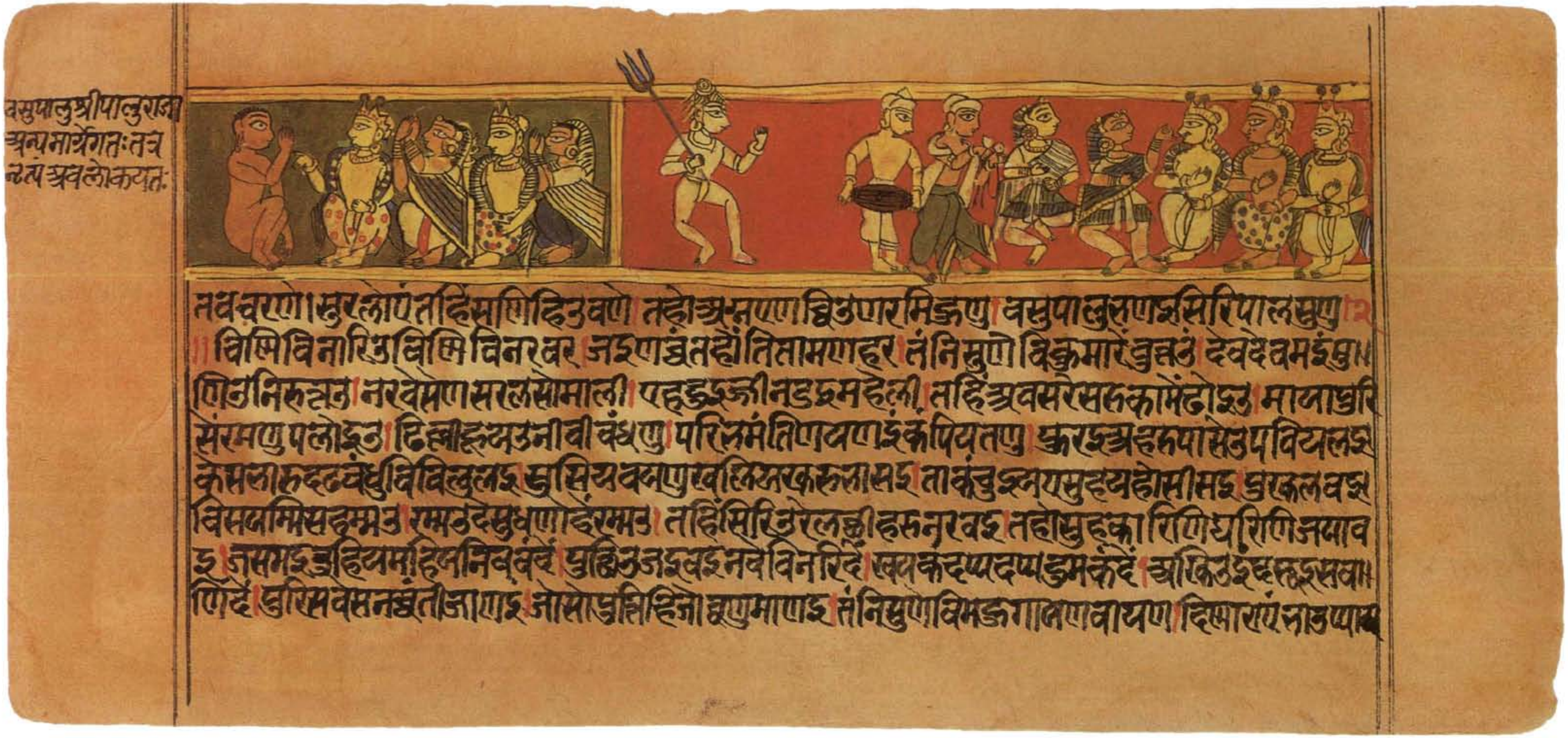

घत्ता—जगपाल राजा के तपश्चरण के कारण लोगों ने उस सुर (यक्ष) को वन में स्थापित किया था। उस यक्ष के आगे मनुष्यों का जोड़ा नृत्य कर रहा था। राजा वसुपाल कहता है कि हे श्रीपाल ! सुनो— ॥ २ ॥

३

यदि नर और नारी दोनों ही, नर नर होकर और नारी नारी होकर नाचते तो सुन्दर होता।

यह सुनकर कुमार श्रीपाल ने कहा कि हे देव-देव ! मैंने निश्चित रूप से जान लिया है कि यह दूसरी सरल और सुकुमार महिला है, जो मनुष्य रूप में नाच रही है। उस अवसर पर काम ने अपना तीर छोड़ा और मायावी पुरुष ने सुन्दर कुमार को देखा। उसकी नींवी की गाँठ ढीली पड़ गयी, नेत्र घूमने लगे और मन काँप उठा, ओठ फड़क गये, पसीना छूटने लगा, कसकर बँधा हुआ केशपाश भी छूट गया, मुख सूखने लगा और वह लड़खड़ाते शब्दों में बोलने लगी। तब कंचुकी उस सहृदय से कहता है कि पुष्कलावती देश में सुन्दर प्रासादोंवाला रम्यक नाम का देश है जो धन-समूह से रमणीय है। श्रीपुर नगर में उसका राजा लक्ष्मीधर है, उसकी शुभ करनेवाली जयावती रानी है, उसकी आदरणीय 'यशोवती' नाम की लड़की थी। राजाओं में श्रेष्ठ उस राजा ने जगतपति मुनि को प्रणाम करके पूछा। जिन्होंने कामदेव के दर्परूपी वृक्ष की जड़ों को नष्ट कर दिया है, ऐसे इन्द्रभूति मुनीन्द्र ने कहा था—जो इस कन्या को पुरुषरूप में नाचते हुए पहचान लेगा, वही इस कन्या के यौवन का आनन्द लेगा। यह सुनकर राजा ने मुझे रसभाव उत्पन्न करनेवाले गायन और वादन की शिक्षा दिलायी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

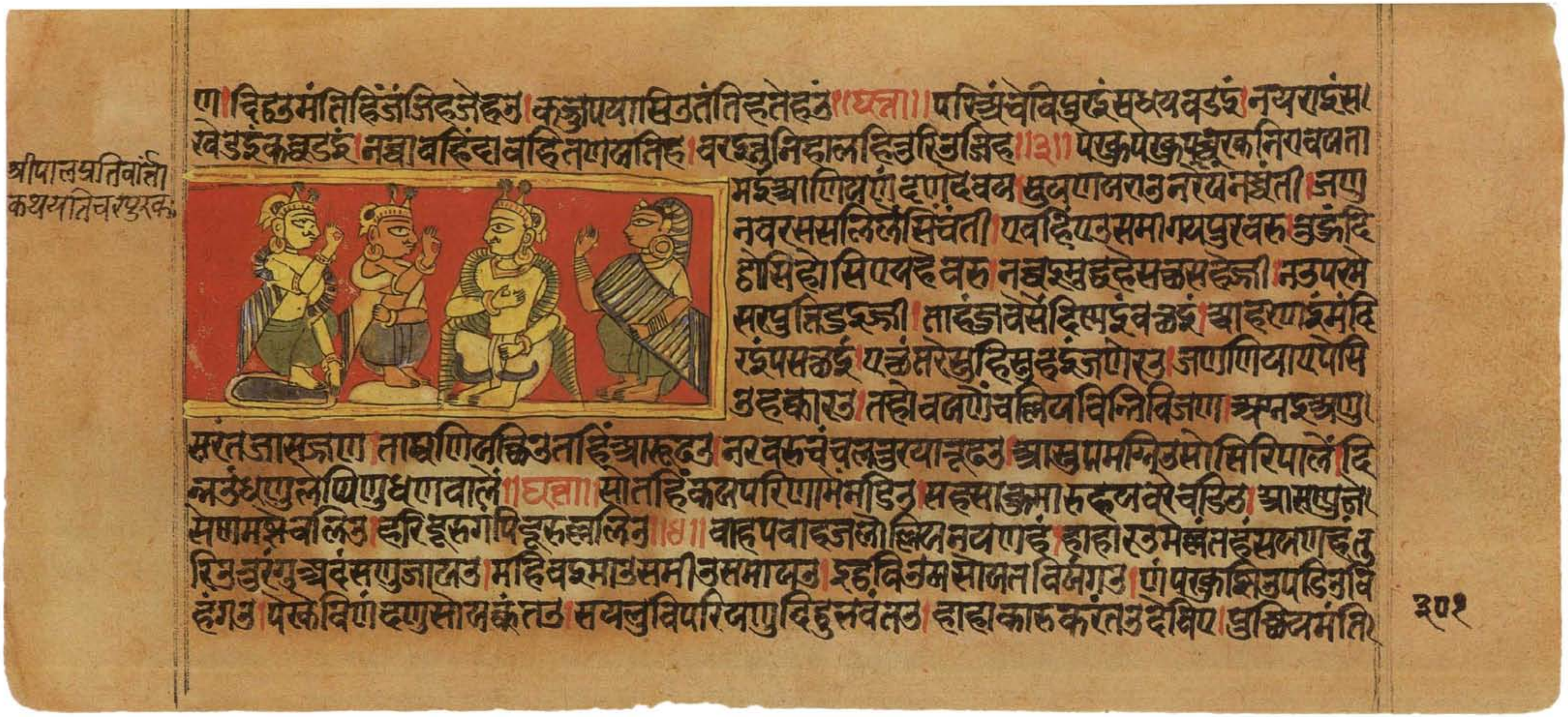

मन्त्रियों ने जिस प्रकार जैसा देखा था, उस काम को उन्होंने आज प्रकाशित किया।

घत्ता—ध्वज-पटवाले, गाँवों, नगरों, खेड़ों और कब्बड़ गाँवों में जा-जाकर इस कन्या को उस प्रकार नचाओ और दिखाओ जिससे इसका वर शीघ्र देख ले॥ ३॥

४

प्रत्यक्ष, बिना किसी बाधा के उसे देखो-देखो। तब एक नगर से दूसरे नगर में नाचती हुई और नौरसरूपी जल से लोगों को सींचती हुई इस कन्या को लाया हूँ—जो मानो वन-देवता की तरह है। इस समय इस नगर में आया हूँ। तुम्हें मैंने देख लिया है, तुम इस कन्या के वर हो गये। और जो उस मुग्धा की सुन्दर आँखोंवाली सहेली नृत्य करती है वह दूसरी नटराज की पुत्री है। तब उस युवेश ने उन लोगों के लिए वस्त्र, आभरण और प्रशस्त घर दिये। इसी बीच में सुधीजनों को सुख देनेवाला माता के द्वारा हकारा आया। उसके कहने पर वे दोनों ही चल दिये और जो सज्जन थे वे उनका अनुसरण करने लगे। इतने में उन्होंने चंचल घोड़े पर बैठ हुए एक अप्रसिद्ध आदमी को देखा, श्रीपाल ने उस घोड़े को माँगा, अश्वपाल ने उसे धन लेकर दे दिया।

घत्ता—वहाँ पर वह कुमार अपने किये हुए कर्म के परिणाम से प्रवंचित हुआ। जैसे ही कुमार घोड़े पर चढ़ा, सेना के बीच में से जाता हुआ वह 'अश्व' दूर जाकर एकदम ओझल हो गया॥ ४॥

५

आँसुओं के प्रवाह-जल से गीली आँखोंवाले, स्वजनों के हाहाकार करते हुए भी वह घोड़ा शीघ्र अदृश्य हो गया। राजा वसुपाल माता के समीप आया, इष्ट-वियोग के शोक से सन्तप्त शरीरवाला वह इस प्रकार गिर पड़ा मानो पंखों से रहित पक्षी गिर पड़ा हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

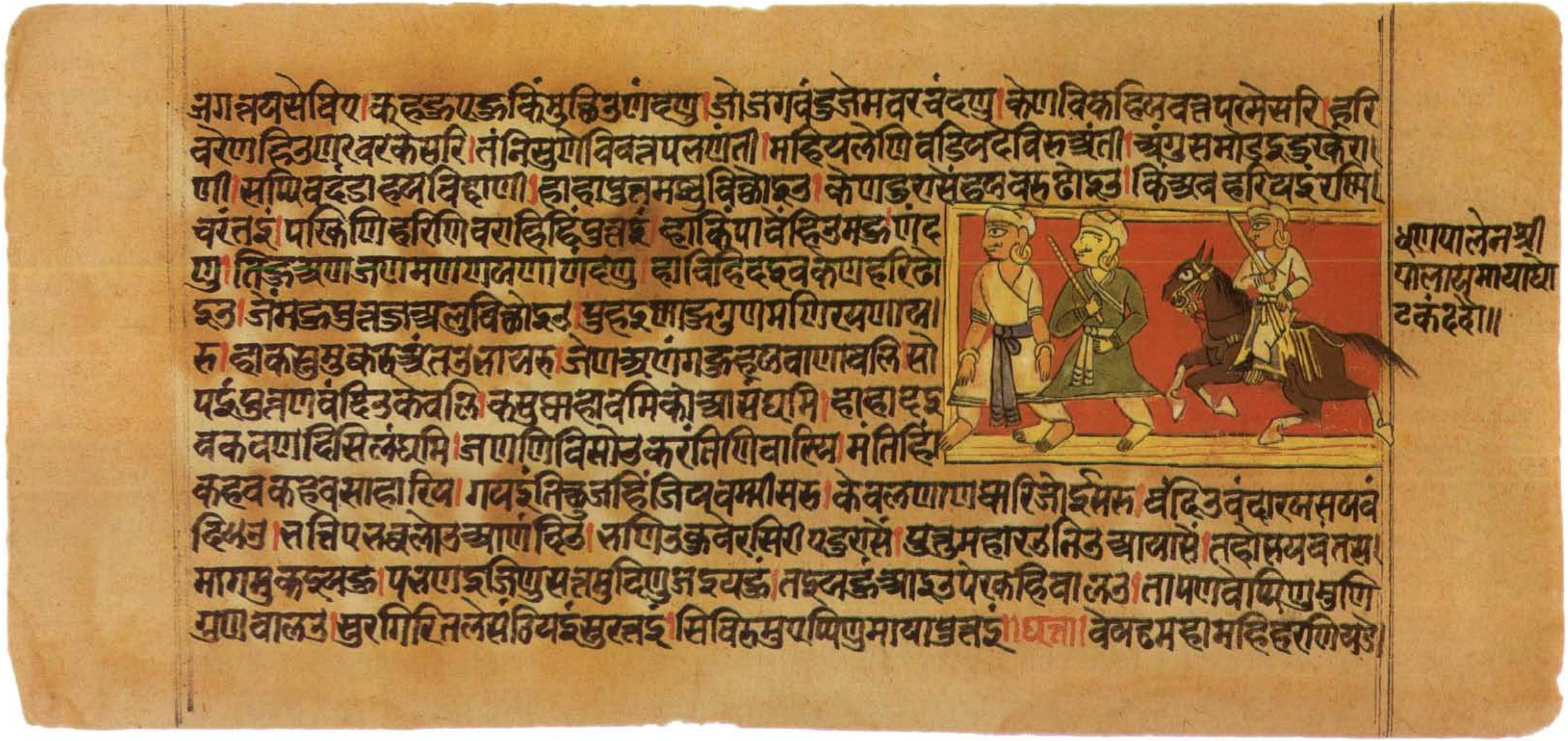

शोक करती हुई माता को मन्त्रियों ने किसी प्रकार मना किया और उसे सान्त्वना दी। वे लोग वहाँ पहुँचे जहाँ कामदेव को जीतनेवाले केवलज्ञानधारी योगीश्वर थे। देवों के द्वारा सैकड़ों बार वन्दनीय उनकी वन्दना की। भक्ति से भव्यजन आनन्दित हो उठे। कुबेरश्री ने कहा कि—खोटी आशा से मायावी घोड़ा मेरे पुत्र को ले गया है। हे ज्ञानवान्! उसका समागम कब होगा? तब जिनवर ने कहा कि सातवें दिन तुम आये हुए बालक को देखोगी। तब मुनि गुणपाल को प्रणाम करके माँ और पुत्र उस शिविर को छोड़कर सुमेरुपर्वत के तलभाग में स्थित हो गये।

घत्ता—विजयार्ध नामक विशाल पर्वत के निकट

खिले हुए वृक्षों वाले जंगल में शत्रु ने अपना अश्वपन छोड़ दिया और भयंकर राक्षस का रूप धारण कर लिया ॥ ५ ॥

६

वह बेताल जिसके उर-तल पर सर्पों का हार झूल रहा है, कटितल पर बँधे हुए सर्प विशेष से जो भंयकर है, जो सफेद विरल लम्बे दाँतोंवाला है, जिसने बाघ के श्रेष्ठ चमड़े के वस्त्र धारण कर रखे हैं, जिसका मुख मन्दराचल पर्वत की कन्दरा के समान है, जिसका गण्डस्थल मनुष्यों की चर्बी से शोभित है, जो बालचन्द्र के समान (श्वेत) दाढ़ से भयंकर है, जिसके बाल जलती हुई आग की ज्वाला के समान हैं, जो नवघन के समान श्यामल और नीलकमल के समान काला है, ऐसा वह बेताल आकाशगामी विद्याधर बनकर उससे कहता है कि—तुमने चम्पा के समान गोरी मेरी घरवाली का पिछले जन्म में अपहरण किया था। तुझ पर इस समय दुर्दान्त यम क्रुद्ध हुआ है। इस समय जीता हुआ तू कहाँ जायेगा! तब कुबेरश्री का पुत्र अपने मन में याद करता है कि यहाँ मैं अपने कर्म के द्वारा लाया गया हूँ। इस समय भवजलरूपी समुद्र से तारनेवाले जिनवर के चरण-कमल ही मेरी शरण हैं। तब जिसने जनवार्ता से समाचार जान लिया है और जिसने विभंग अवधिज्ञान के द्वारा सुधीजन का दु:ख ज्ञात कर लिया है ऐसा जगपाल नाम का यक्ष वहाँ आ पहुँचा और बोला कि मेरा कुमार अश्व के द्वारा ले जाया गया है।

घत्ता—वह यक्ष युवराज के लिए, जिसके कन्धे युद्धभार की धुरा धारण करने में समर्थ हैं तथा जिसका हाथ प्रचण्ड अस्थिदण्ड से मण्डित है, ऐसे दुर्धर निशाचर से भिड़ गये॥ ६ ॥

७

यक्ष कहता है कि—हे क्रोध से अभिभूत विद्याधर राक्षस, तू जा-जा। तू जलते हुए कालानल और विश्व के लिए संकटस्वरूप यम के मुखरूपी विवर में मत पड़। तेरी आयु नष्ट न हो, मेरे कुमार को तू मत सता। इस प्रकार अमर्ष के रस से वशीभूत महाआदरणीय वह महान् इस प्रकार कहता हुआ कहीं भी नहीं समा सका। राक्षस के द्वारा वह दो टुकड़े कर दिया गया। लेकिन वह व्यन्तर देव दो रूपों में होकर दौड़ा, उसने उन दोनों को आहत किया वे चार हुए, मानो गरजते हुए दिव्य दिग्गज हों। चारों को आहत करने पर वे आठ हो गये, आठ आहत होने पर सोलह हो गये, सोलह को आहत करने पर भयंकर बत्तीस हो गये, बत्तीस को आहत करने पर चौंसठ हो गये। चौंसठ के दो टुकड़े करने पर एक सौ अट्ठाईस हो गये। और वे भी दुगने बढ़ गये। इस प्रकार असंख्यात यक्षों ने जल-थल और आकाश को आच्छादित कर लिया।

घत्ता—निशाचर का बाहुबल कम नहीं हुआ। देव (यक्ष) का हृदय डिग गया कि क्या होगा! उस कर्म को देखते हुए उसने कुमार के भविष्य की चिन्ता की॥ ७॥

८

उसने उसके होनेवाले शुभ को स्वीकार किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और वह अपना प्रच्छन्नरूप बनाकर स्थिर हो गया। विजयार्ध पर्वत के ऊपर स्थित होकर सौ योजन आकाश के आँगन में जाकर शत्रु के द्वारा फेंके गये आकाश से गिरते हुए कुमार को देवेन्द्र ने शीघ्र अपनी विद्या से धारण किया। धीरे-धीरे श्रीपर्वत के शिखर पर उसे स्थित (स्थापित) कर दिया। वह राजकुमार वहाँ भूख से व्याकुल होने लगा। स्फटिक मणि की चट्टानों से ढँका हुआ सरोवर था, उसने उसे देखा और जल समझकर वह सुन्दर वहाँ गया। जल की इच्छा से विशाल श्वेत पत्थर पर फैलाये गये उसके हाथ पत्थर से जा लगे। बालक अत्यन्त विस्मित होकर सोचता है कि देश के स्वभाव के सदृश यहाँ पानी भी कठोर है! इतने में उस अवसर पर एक कामकिशोरी गोरी कमर पर घड़ा रखे हुए वहाँ आयी। उस तरुण ने जल के विवर्त में प्रवेश करती हुई और पानी भरती हुई उसे देखा। उसने भी उस मार्ग से जाकर अच्छी कुसुम-रज से सुवासित कोमल जल को पिया।

घत्ता—कलश को कमर में लिये हुए काम की उत्सुकता से युक्त धवल चंचल नेत्रों के द्वारा उस राजा को देखा और जिसकी प्रतिभा आहत है, ऐसी उस बाला ने पूछा नहीं॥ ८॥

९

जो सरस मन में उत्पन्न प्रणय से अत्यन्त स्निग्ध है, ऐसी उस भोली गोरी ने भवन में आकर पूछा—कि यदि वह विष्णु है तो उसके चक्र और चिह्न नहीं हैं, यदि वह कामदेव है तो उसके पास कुसुमधनु नहीं है, यदि वह चन्द्रमा है तो उसके हरिण चिह्न नहीं है। अगर वह सूर्य है तो उसका अस्त नहीं हुआ है। यदि वह इन्द्र है तो उसके हाथ में वज्र नहीं है। हे आदरणीय ! महासरोवर में पानी के लिए जाते हुए मैंने एक युवक को देखा है, क्या जानूँ कि वह त्रिलोक का राणा हो ? क्या जानूँ कि जिसके बारे में लोग कहते हैं वह वही श्रीपाल

नाम का राजा हो। लो, तुम्हारा प्रियतम आ गया और अपने स्तनों, मणि-हारों को घुमाओ। तब पाँचों कुमारियाँ चलीं, मानो हाथी के पास उसकी हथिनियाँ जा रही हों, मानो कामदेव ने अपनी भल्लिकाएँ छोड़ी हों, वे उस कुमार के पास पहुँचीं। उस भद्र ने कहा—आकाश को धवलित करनेवाले और आधे-आधे नेत्रों से आप क्यों देख रही हैं? मेरे पास आकर क्यों बैठीं ? लगता है कि कहीं पर आप लोगों को मैंने देखा है। यह सुनकर ढीठ बड़ी कन्या ने धृष्टता से जवाब दिया—

घत्ता—पुष्कलावती भूमि पर अच्छे गोधनवाले दुर्योधन नामक प्रसिद्ध देश के सिन्धुपुर नगर में लक्ष्मी नाम की अपनी पत्नी से राजा नरपाल ऐसा शोभित था मानो विष्णु हो॥ ९॥

१०

मैं उसकी रतिकान्ता से छोटी कन्या हूँ। इनमें बड़ी जयदत्ता है। मदनकान्ता और मदनावती, जन-मन के लिए सुन्दर कुमारी जयावती जेठी है और भी छठी सखी विमला है जिसे हमारे साथ उपवन में क्रीड़ा करते हुए अशनिवेग विद्याधर ने देख लिया। उसकी कामुक वृत्ति स्नेह से भंग हो गयी। उसने कन्या को माँगा, पिता ने इनकार कर दिया। उसने मुनि से पूछा कि कन्या से विवाह कौन करेगा? पृथुबोध मुनि ने पिता से कहा कि हे राजन् ! इस समय विवाह से क्या ? तुम्हारी पुत्री बाणयुक्त श्रीपाल चक्रवर्ती की गृहिणी हो गयी है। फिर अशनिवेग ने हम लोगों को माँगा, किन्तु पिता के वचन से वह निरुत्तर हो गया। तब जलद के शिखर के समान अपने पैर को चलानेवाला वह निष्करुण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हमें चुराकर ले आया और खोटे आशयवाले उस दुर्दान्त ने मन में क्रोध करते हुए हमें यहाँ रख दिया।

घत्ता—हम लोग राजकुमारियाँ होकर भी तालपत्रों से अपने स्तन को ढँकती हैं, और अपने मन में सन्ताप करते हुए राजा श्रीपाल का रास्ता देख रही हैं॥ १०॥

११

तुम्हीं मेरे स्वामी हो, क्योंकि तुमने हमारे अंगों को सन्तप्त किया है। नहीं तो क्या स्वामी के सिर पर सींग होगा! हे स्वामी ! इस गृहिणी को लो और शत्रुओं के लिए प्रचण्ड अपनी भुजाओं से उसका आलिंगन करो। तब वह सुभग कहता है कि यद्यपि कन्यारत्न सुन्दर है फिर भी बिना दिये हुए वह मेरा नहीं हो सकता। एक और कुमारी वहाँ आयी। राक्षसी के रूप में जो कहीं भी नहीं समा पा रही थी। कामदेव से आक्रान्त उसके निकट आती हुई वह (कामदेव) के पाँचों बाणों से उरस्थल में विद्ध हुई भील से आहत हरिणी की तरह चंचल थी और उस सुभग का मुख देख रही थी। उस अवसर पर वे छहों तरुणियाँ चली गयीं जिस प्रकार बाघ की गन्ध पाकर हरिणियाँ चली जाती हैं। दूसरी ने एक प्रासाद बनाया। उसमें सोने का पलंग अत्यन्त शोभित था। श्रीपाल के कानों में सरस आलाप आने लगा और श्रीपाल के नेत्रयुगल मछली की भाँति घूमने लगे। जैसे ही उस कन्या ने प्रिय का आलिंगन किया वैसे ही उसका कन्याव्रत खत्म हो गया। इस दोष के कारण विद्या नष्ट होकर चली गयी। और वह चन्द्रमुखी अपने को दोष देती हुई कामग्रह से विवर्ण हो गयी। सुन्दर कुमार ने पूछा कि तुम कौन हो ?

घत्ता—अचलता में महीधर को जीतनेवाले नरश्रेष्ठ श्रीपाल से वह अपना वृत्तान्त कहती है—श्रीशिखर से चार सौ योजन दूर और ध्वजों से मण्डित रत्नपुर नगर है॥ ११॥

१२

वहाँ पर स्तनितवेग नाम का राजा है, जो ज्योतिवेगा देवी का प्रिय पति है। अशनिवेग उसका उद्दण्ड प्रमादी पुत्र था। उसने तुम्हें

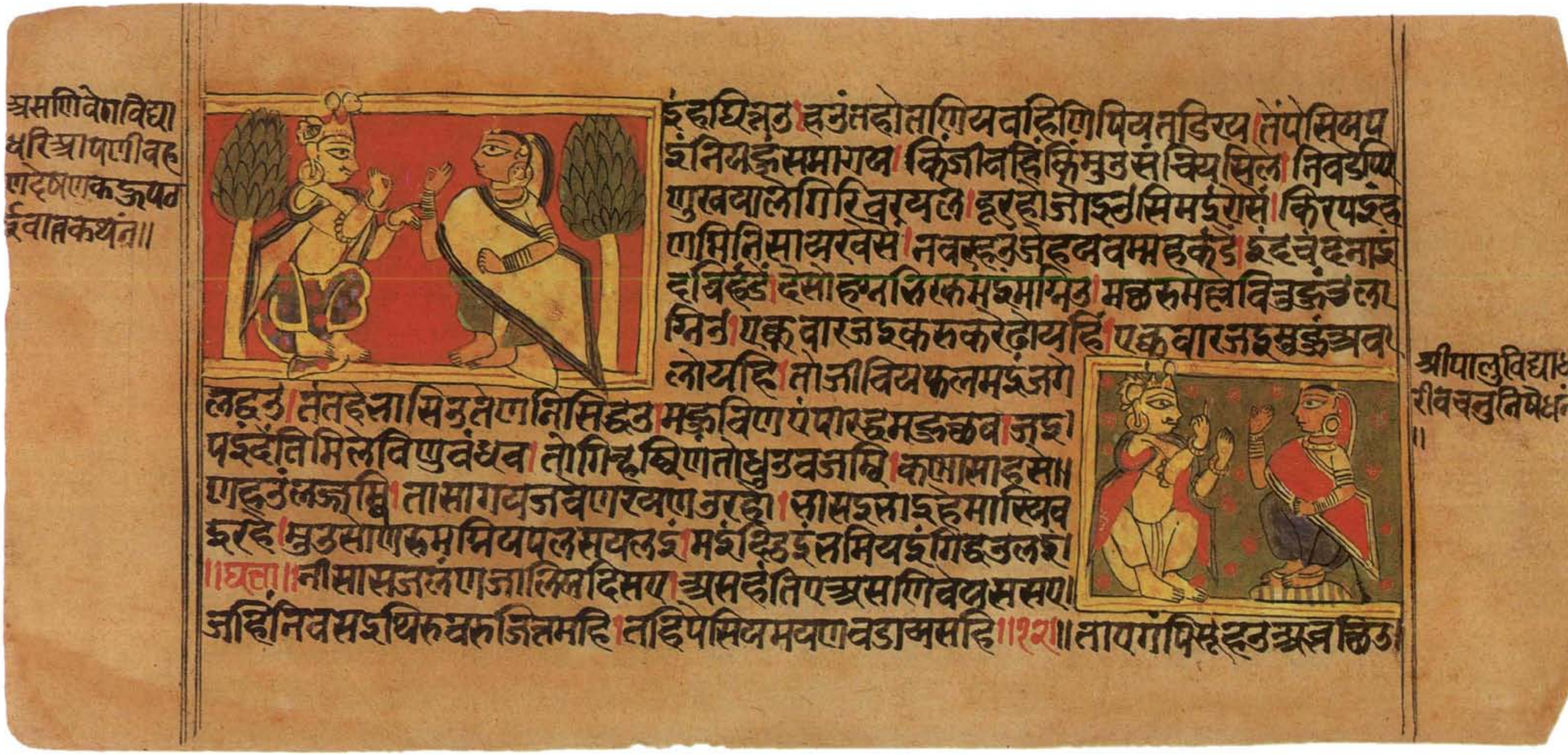

यहाँ लाकर डाल दिया। मैं उसकी प्रिय बहन विद्युद्वेगा हूँ। उसके द्वारा भेजी गयी मैं तुम्हें देखने आयी हूँ कि तुम जीवित हो या आकाश से पहाड़ में चट्टान पर गिरकर मर गये। यह कहती है कि मैंने रोषपूर्वक दूर से तुम्हें देखा कि जबतक मैं तुम्हें निशाचर रूप में मारूँ, तबतक मैं कामदेव के बाणों से आहत हो उठी। (इन्द्र-चन्द्र-नागेन्द्र को विखण्डित करनेवाले बाण से) मैं सौभाग्य की भीख माँगती हूँ। वह मुझे दो। ईर्ष्या छोड़कर मैं आपकी शरण में हूँ। एकबार यदि तुम मेरा हाथ अपने हाथ में ले लो, एकबार यदि मेरा मुँह देख लो, तो मैं अपने जीवन का फल संसार में पा जाऊँगी। तब उस कुमार ने उसके कहे हुए का निषेध किया और कहा—''यदि तुम्हारे भाईलोग एकत्रित होकर बड़ा उत्सव प्रारम्भ करके विनयपूर्वक तुम्हें देते हैं तो मैं विवाह (ग्रहण) करूँगा। यह मैं निश्चयपूर्वक कहता हूँ। तुम्हारे इस कन्या-सुलभ स्वभाव से मैं लज्जित हूँ।'' तब वह वेग से रत्नपुर चली गयी। और शत्रुओं को मारनेवाले अपने भाई से कहती है कि वह आदमी मर गया। मैंने मांस-खण्डों को खोजते हुए गिद्धों के झुण्ड को वहाँ घूमते हुए देखा है।

घत्ता—नि:श्वास की ज्वालाओं से दिशाओं को प्रज्वलित करनेवाली अशनिवेग की बहन वियोग को नहीं सहती हुई, अपनी सखी मदनपताका को वहाँ भेजती है कि जहाँ पृथ्वी को जीतनेवाला वह स्थिर वर निवास कर रहा था॥ १२॥

१३

उसने वहाँ जाकर उस सुभग से प्रार्थना की कि—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

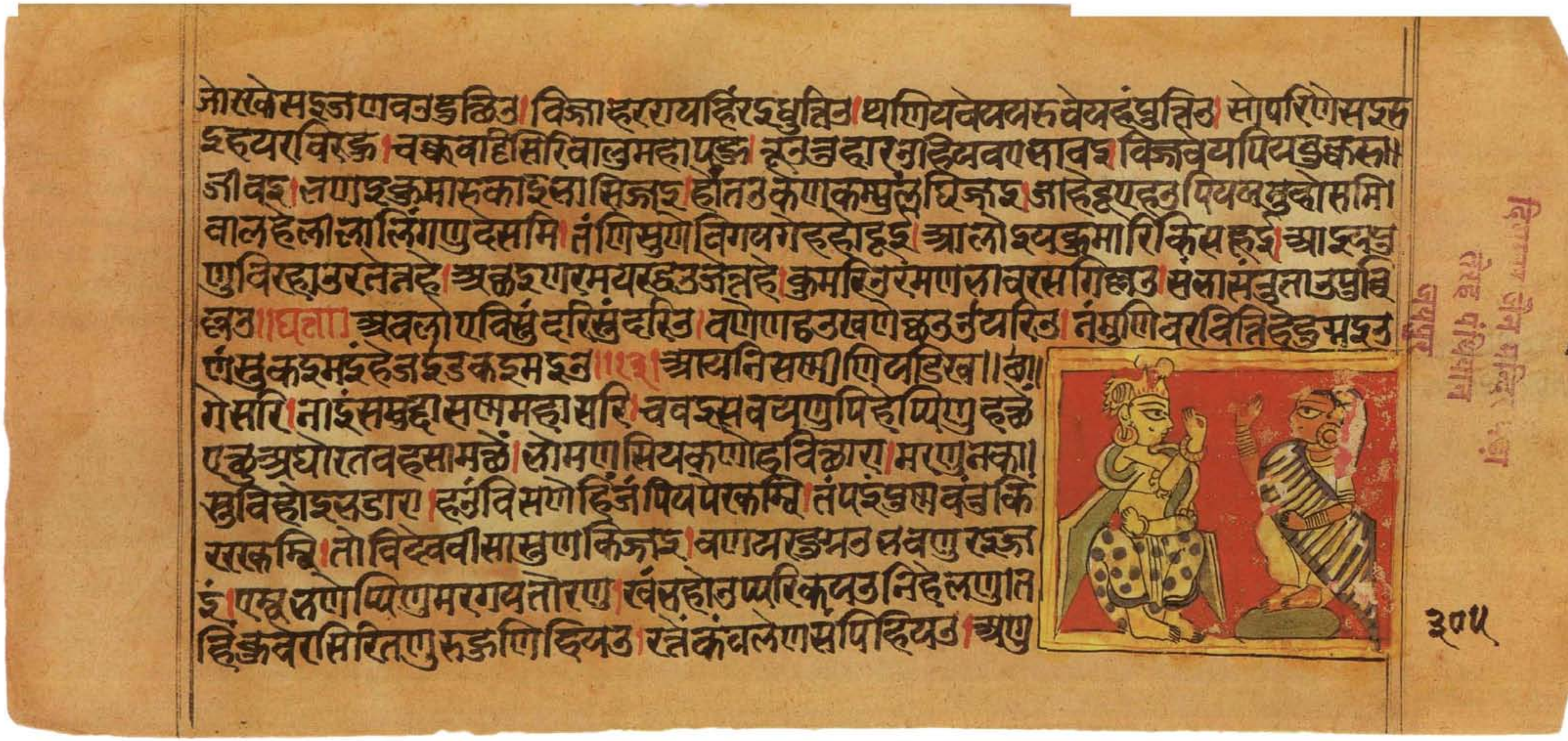

जो इस दु:स्थित जनपद और विद्याधर राजाओं की रति से व्याप्त पुत्रियों की स्तनितवेग और पवनवेग से रक्षा करेगा, अपनी कान्ति से सूर्य के रथ को आहत करनेवाला वह महाप्रभु श्रीपाल चक्रवर्ती उनसे विवाह करेगा। तुम्हारा रूप मुझे हृदय में अच्छा लगता है।" "प्रिय विद्युद्वेगा कठिनाई से जीवित है। कुमार कहता है कि तुम क्या कहती हो ? होनेवाले कर्म का उल्लंघन कौन कर सकता है! हे दूती ! तुम जाओ। मैं उस बाला का प्रियतम हूँगा। और उस बाला को लीलापूर्वक आलिंगन दूँगा। यह सुनकर दूती घर चली गयी, और एकदम दुबली हुई कुमारी को देखा। फिर वह विरहातुर वहाँ आयी कि जहाँ वह कामदेव था। रमण-भाव के रस से आर्द्र वह कुमारी अपने पहले के तात से सम्भाषण करती हुई।

घत्ता—उस सुन्दर सुन्दरी को देखकर वे छहों कुमारियाँ एक क्षण को वन में भाग गयी हैं, मानो सुकवि की मति से जड़ मतियाँ भाग गयी हों॥ १३॥

१४

वह विद्याधरी पास आकर बैठ गयी। हाथ से अपने मुख को ढँककर वह कहती है कि यहाँ घोर तप की सामर्थ्य से कामदेव के बाण-समूह का विस्तार करनेवाले, हे आदरणीय ! किसी का भी स्मरण नहीं होता। मैं भी स्नेह से कही गयी तुम्हें देखती हूँ। पुण्यात्मा तुम्हारी रक्षा करती हूँ। तब भी हे देव, विश्वास नहीं करना चाहिए और वनचरों के लिए दुर्गम भवन बनाना चाहिए। यह कहकर पन्नों के तोरणवाला एक प्रासाद उसने खम्भे के ऊपर बनाया, उसमें 'कुबेरश्री' के पुत्र 'श्रीपाल' को रख दिया और लाल कम्बल से ढँक दिया।

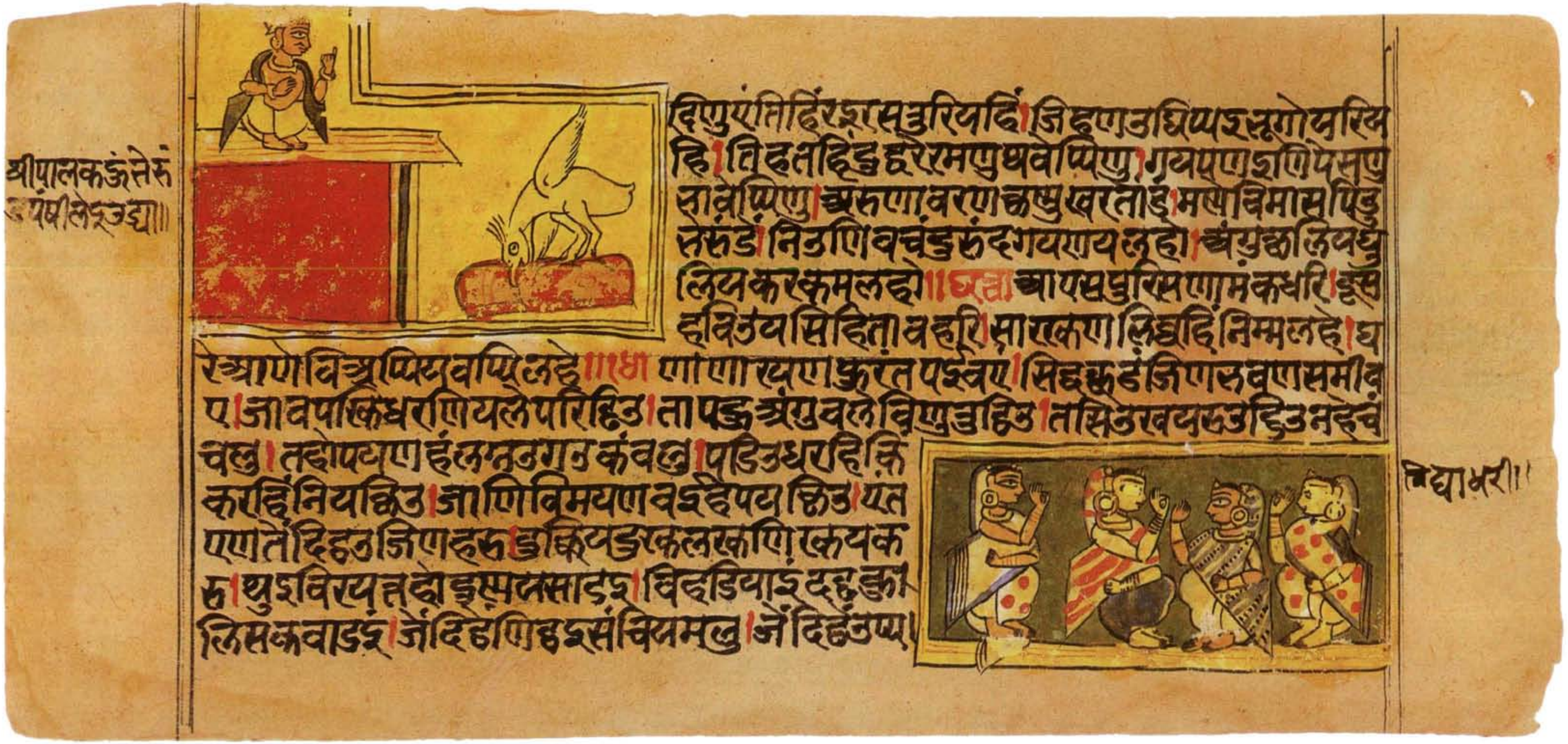

जिससे प्रतिदिन आनेवाली रतिरसरूपी घोड़ियाँ इन मनुष्यनियों के द्वारा यह ग्रहण न कर लिया जाये इस प्रकार उस प्रिय को उस दुर्ग्राह्य घर में रखकर आज्ञा लेकर वह प्रणयिनी चली गयी। अरुण / लाल कपड़े से ढँके हुए उसे मांस का पिण्ड समझकर तीखी चोंचवाला भेरुण्ड पक्षी राजा को ले गया। विशाल आकाशतल से उसके कर-कमल से अँगूठी गिर गयी।

घत्ता—आदर्श पुरुष के नाम को अपनी गोद में धारण करनेवाली, दुःसह वियोग की आग के सन्ताप को दूर करनेवाली, उसे रक्षा करनेवाले अनुचरों ने घर आकर निर्मल पवित्र बप्पिला को सौंप दिया॥ १४॥

१५

नाना रत्नों से चमकते हुए सिद्धकूट जिनालय के समीप धरतीतल पर जैसे ही बैठा, वैसे ही अपने शरीर को हिलाकर राजा श्रीपाल उठा। वह चंचल पक्षी डरकर आकाश में उड़ गया। कम्बल उसके पैरों के नख से लगा हुआ चला गया। धरती पर पड़े हुए और मदनवती का इच्छित समझकर अनुचरों ने उसे देखा। यहाँ पर इस श्रीपाल ने भी दुष्कृत लाखों पापों और दुखों का नाश करनेवाले जैन मन्दिर को देखा। स्तुति करते हुए, दुर्नय को नाश करनेवाले दृढ़ वज्र के किवाड़ खुल गये। जिसको देखने से संचित कुदृष्टि पाप नष्ट हो जाता है। जिसको देखने से केवलज्ञान उत्पन्न हो जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

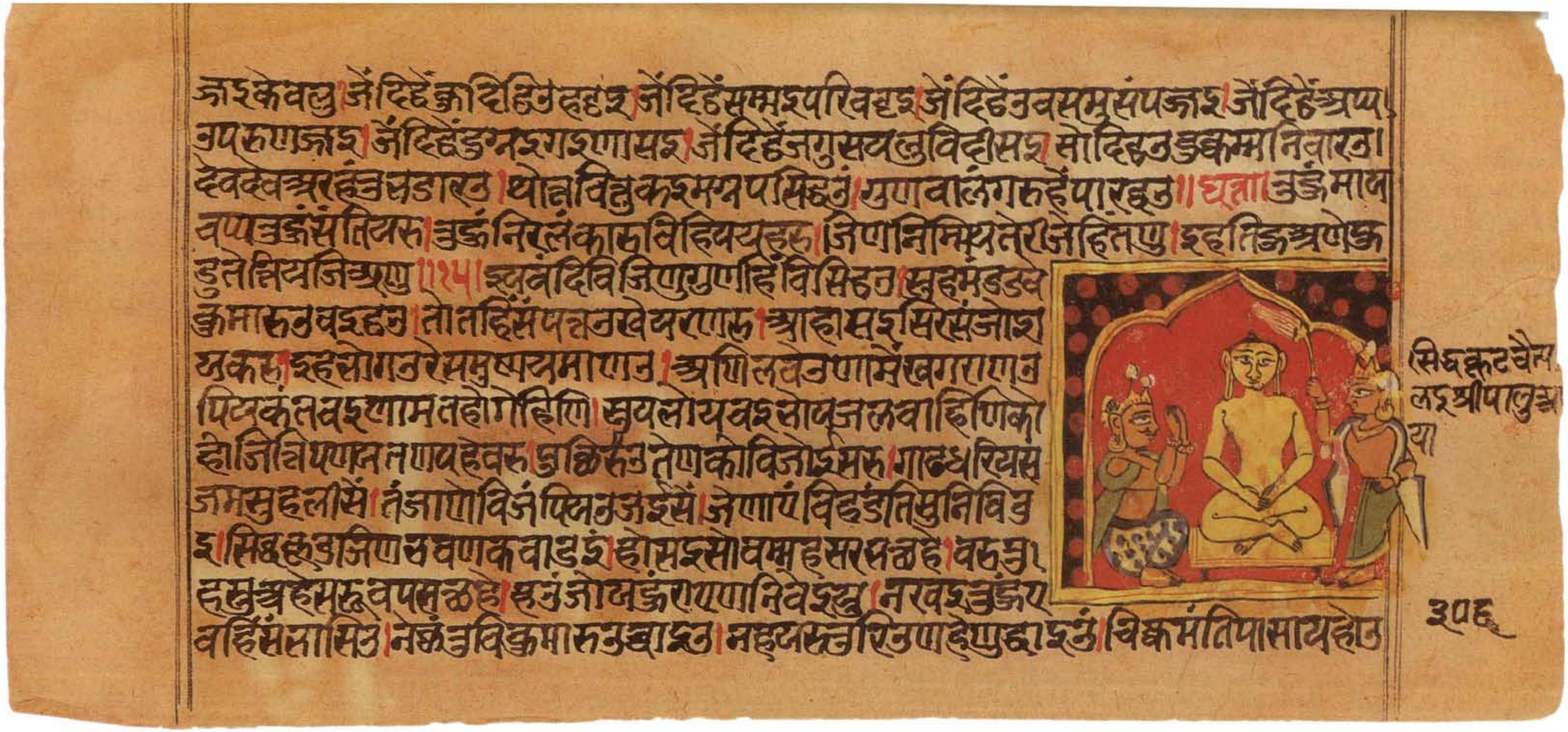

जिसको देखने से सम्यक्त्व प्राप्त हो जाता है। जिसको देखने से उपशम भाव प्राप्त होता है। स्व और पर का विवेक होता है। जिसको देखने से दुर्गति का नाश होता है। जिसको देखने से समग्र संसार दिखाई देता है। ऐसे उन दुष्कर्मों का निवारण करनेवाले देवों के देव आदरणीय अनन्त भगवान् को देखा और कवि-मार्ग में प्रसिद्ध स्तोत्र व्रत को 'गुणपाल' के बेटे 'श्रीपाल' ने प्रारम्भ किया।

घत्ता—आप माँ-बाप हैं। आप शान्ति करनेवाले हैं, आप अलंकारों से रहित हृदय को धारण करनेवाले हैं। हे जिनेन्द्र! जिन परमाणुओं से तुम्हारे शरीर की रचना हुई है वे परमाणु तीनों लोकों में उतने ही थे॥ १५॥

१६

इस प्रकार विशिष्ट गुणों से परम जिनेन्द्र की वन्दना कर वह कुमार रंगमण्डप में बैठ गया। तब एक विद्याधर पुरुष वहाँ आया। और अपने दोनों हाथ सिर से लगाते हुए बोला—इस भोगपुरी नगरी में उन्नत मानवाला 'अनिलवेग' नाम का विद्याधर राजा है। उसकी कान्तिवती नाम की प्रिय गृहिणी है। उसकी भोगवती नाम की लड़की है। राजा ने योगीश्वर से पूछा कि इस प्रणय-पुत्री का वर कौन होगा? जो प्रगाढ़ धारण किये गये संयम में धुरन्धर हैं ऐसे योगीश्वर ने विचार कर कहा कि—जिसके आने पर अच्छी तरह लगे हुए सिद्धकूट 'जिन-भवन' के किवाड़ खुल जायेंगे वह कामदेव के बाणों को धारण करनेवाली स्वरूप में प्रसिद्ध तुम्हारी कन्या का वर होगा। राजा के द्वारा निवेदित मैंने यहाँ देखते हुए—हे राजन्! मैंने तुम्हें देखा। नहीं चाहते हुए भी उसने कुमार को उठा लिया और वह नभचर शीघ्र आकाशमार्ग से उड़ा।

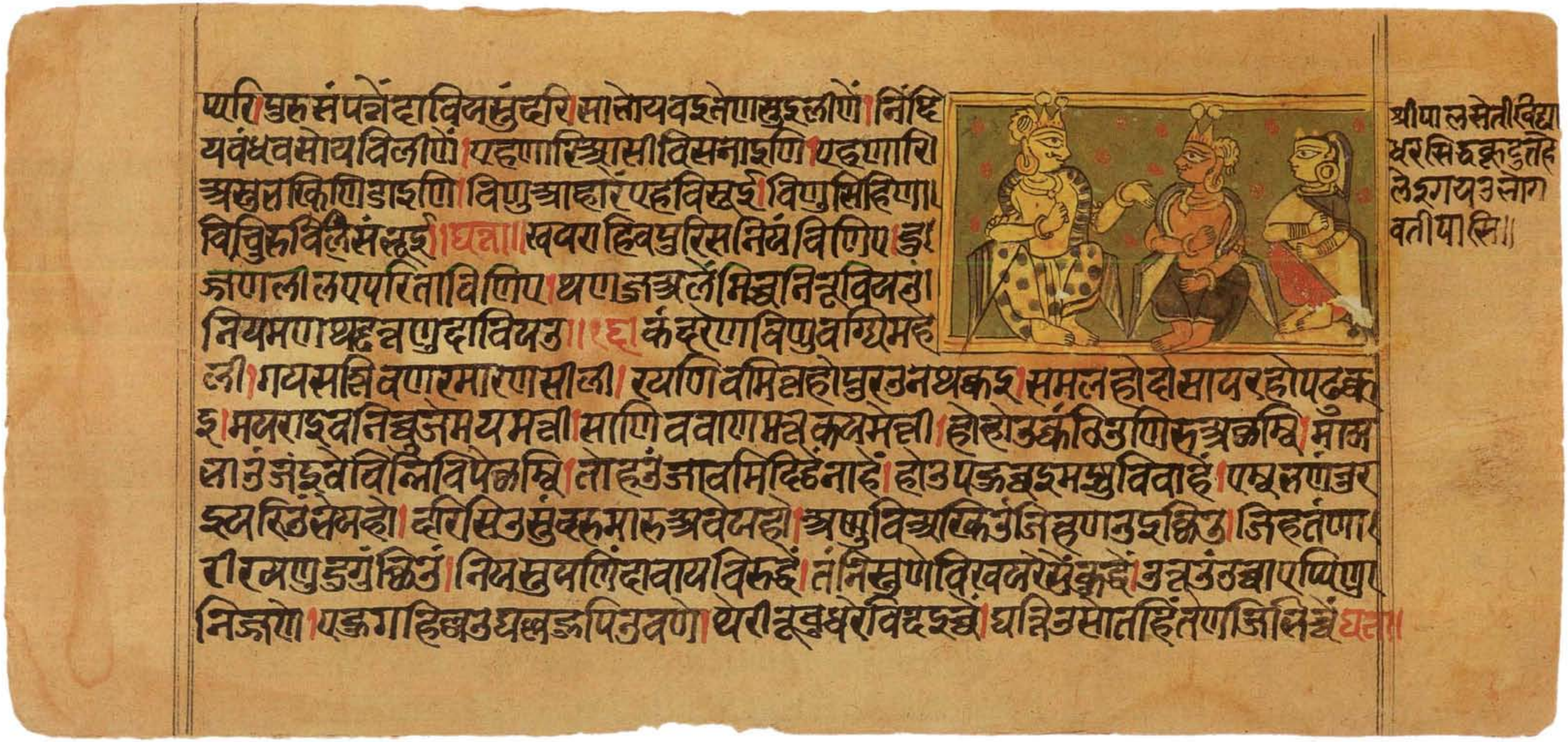

नगर आने पर प्रासाद के ऊपर खेलती हुई कन्या उसे दिखायी। अपने बन्धुओं के शोक में लीन तथा शास्त्र में लीन उस 'श्रीपाल' ने 'भोगवती' की निन्दा की। यह नारी विषैले दाँतोंवाली नागिन है। यह नारी अशुभ कहनेवाली डाइन है। ये बिना आहार की विषूची है, ये बिना ज्वालाओं की आग है।

घत्ता—विद्याधर राजा की उस लड़की ने उस दुर्जन में लीन, मन को सन्तप्त करनेवाली, अपने नित्य सुन्दर अनुपम स्तनयुगल को तथा अपने मन के ढीठपने को उसे दिखाया॥ १६ ॥

१७

यह महिला बिना गुफा की बाघिन है, ये मारनेवाली विषशक्ति है, रात्रि के समान यह मित्र (सूर्य) के सामने नहीं ठहरती, यह श्यामल दोषाकर (चन्द्रमा) के पास पहुँचती है। यह मदिरा के समान नित्य मदमत्त रहनेवाली है, कुत्ती के समान दानमात्र से मित्रता करनेवाली है। ''अच्छा-अच्छा मैं उत्कण्ठित यहाँ स्थित रहता हूँ, जिससे दोनों का मायाभाव देख सकूँ। स्वामी के देखने पर ही मैं जीवित रह सकता हूँ। विवाह से मुझे क्या लेना-देना?'' ऐसा सोचते हुए उस सुन्दर को जिसने शत्रुभेदन किया है, ऐसे मारुत-वेग के लिए उसे दिखाया और जिस प्रकार उसने यह भी कहा कि जिस प्रकार उसने उसे नहीं चाहा, और जिस प्रकार उसने नारीजन की निन्दा की। अपनी कन्या की निन्दा की बात से विरुद्ध होकर उस क्रुद्ध विद्याधर राजा ने वह सुनकर कहा कि—उठाकर इस पागल को प्रेतवन में फेंक दो। तब 'दैत्य' ने श्रीपाल का बुढ़िया का रूप बनाया और उस अनुचर ने उसे वहाँ फेंक दिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

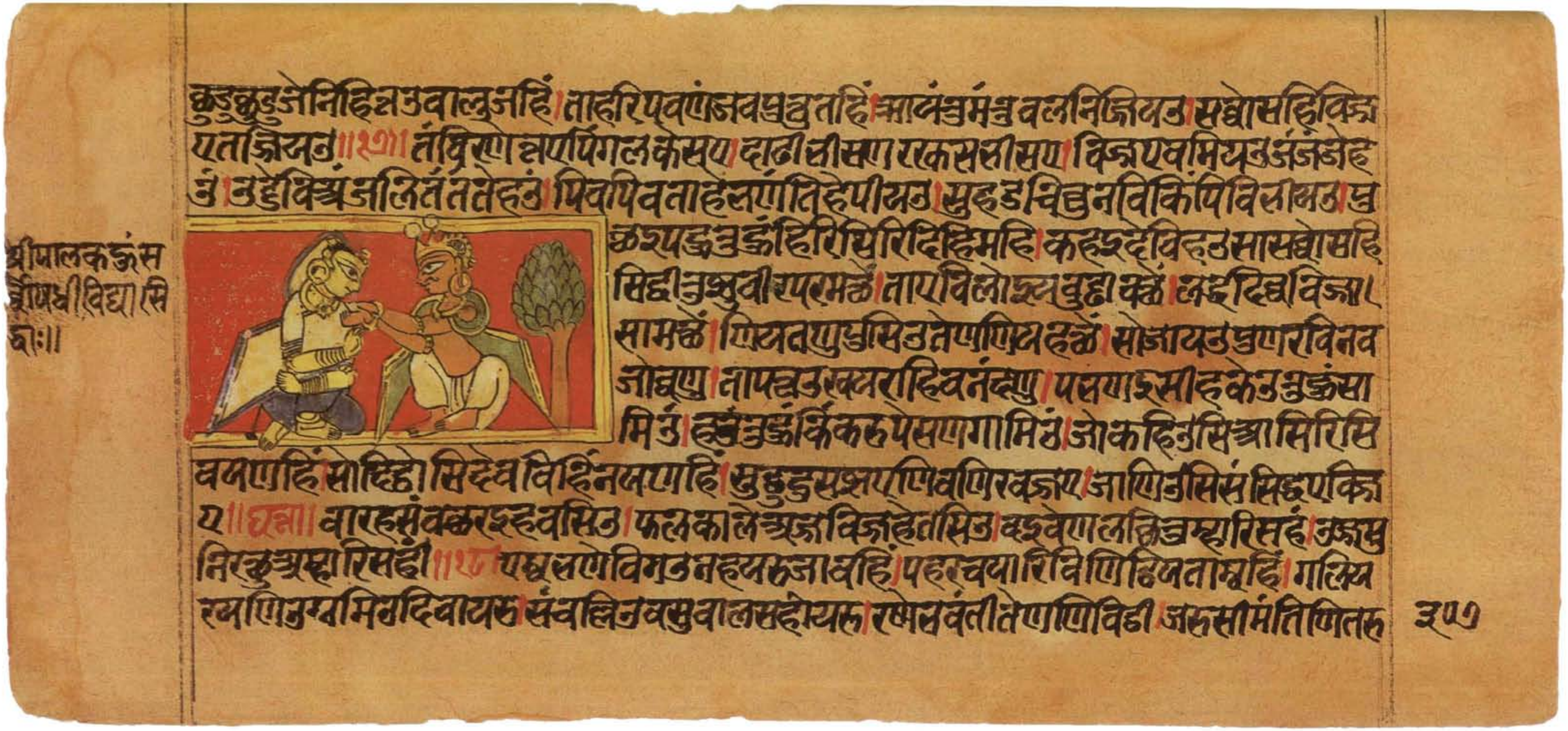

घत्ता—शीघ्र ही उस बालक को वहाँ फेंक दिया गया कि जहाँ 'पवनवेग' का पुत्र 'हरिकेतु' मन्त्र का ध्यान करता था। और बल से जीते गये जिसे सर्वोषधि विद्या ने डाँट दिया था॥ १७॥

१८

लाल-लाल आँखों और पीले बालोंवाली और दाढ़ों से भयंकर राक्षस का वेष धारण किये हुए विद्या ने जैसे-जैसे वमन किया, पियो-पियो कहने पर कुमार ने अंजली में भरकर उस-उसको उसी प्रकार पिया। वह वीरचित्त उससे जरा भी नहीं डरा। राजा उससे पूछता है कि तुम ह्री-श्री-धृति-कीर्ति या मही क्या हो? वह देवी कहती है कि मैं वह सर्वोषधि विद्या हूँ, हे वीर ! जो तुम्हें परमार्थ भाव से सिद्ध हुई हूँ। तब उस वृद्धावस्थावाले ने उसे देखा। प्राप्त है दिव्यविद्या की सामर्थ्य जिसमें ऐसे अपने हाथ से उस कुमार ने अपने शरीर को छुआ। उसका फिर से नवयौवन हो गया और तब विद्याधर राजा का बेटा आया। वह सिन्धुकेतु बोला कि आप मेरे स्वामी हैं और मैं आपका आज्ञाकारी सेवक। मुनि-वचनों के द्वारा जो कुछ कहा गया था, उसे मैंने आज अपनी आँखों से देख लिया। दुःसाध्य निरवद्य सिद्धविद्या के द्वारा मैंने आपको अच्छी तरह जान लिया।

घत्ता—बारह वर्ष तक मैं यहाँ रहा और फलकाल के समय आज विद्या ने मुझे पीड़ित किया। देव ने तुम-जैसे लोगों के लिए लक्ष्मी दी और हम लोगों का उद्यम (पुरुषार्थ) व्यर्थ गया॥ १८॥

१९

इस प्रकार कहकर जैसे ही वह विद्याधर वहाँ से गया वैसे ही चार पहर बीत गये। रात बीती, सूर्य उदय हुआ और वसुपाल का भाई चला। जंगल में चलते हुए उसने एक वृक्ष के नीचे बैठी हुई एक बूढ़ी स्त्री को देखा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हाथ उठाकर, नेत्रों को टेढ़ाकर, लोग उसे दुर्वचन कह रहे थे। राजा 'श्रीपाल' उसे देखकर अपने मन में सोचता है कि तिनका होना अच्छा लेकिन बन्धुरहित गरीब होना अच्छा नहीं। अफसोस है कि नागरिकों के द्वारा झगड़ा क्यों किया जाता है। बुढ़िया कहकर इसका उपहास क्यों किया जा रहा है! उस बुढ़िया स्त्री के छूने पर कुमार बुढ़िया जैसा हो गया। कुमार ने अपने अंग को अपने हाथ से छुआ, उसका शरीर जैसा पहले था, वैसा ही अब दिखाई दिया। उस अतिवृद्धा ने राजा से निवेदन किया कि मैंने वर के चरित्र को सत्यापित कर लिया। हे देव ! उसके शरीर में जो मैंने वृद्धरूप निवर्तित किया था, उसी प्रकार उसने उस रूप को छोड़ दिया। तब राजा ने उसके खोजनेवाले भेजे। वन में जाते हुए 'कुबेरश्री' के बेटे 'श्रीपाल' ने सिंहों, सर्पों से पूरित हैं दिशापथ जिसके तथा जिसमें चारों दिशाएँ मिल रही हैं, ऐसे चतुष्पथ में सोलह महाबलशाली सुभट देखे और अत्यन्त गोल सोलह पत्थर देखे।

घत्ता—उन लोगों ने हाथ जोड़कर आगे बैठकर अत्यन्त मधुरवाणी में कुमार से कहा कि हे कुमार! आप क्यों जाते हैं, इन गोल पत्थरों को रख दीजिए।।१९॥

२०

अन्यथा हे पथिक! तुम जा नहीं सकते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तब पथिक ने हँसते हुए कहा कि राजा की आज्ञा से गाय के सींग को नहीं दुहा जा सकता। हे सुभट! मैं जाता हूँ। इस प्रलाप, राजविनोद और मिथ्याधर्म से क्या ? ऐसा कहते हुए भी उसे रोककर पकड़ लिया। उसने कुपित होकर शक्ति से स्तम्भित कर गोल पत्थरों की पीठिका उस शैल में बना दी और बुद्धि से श्रेष्ठ उसने अनुचरों से पूछा कि ये कौन-सा देश है ? कौन राजा राज्य करता है ? रास्ते में गोल पत्थरों की स्थापना क्या उपयुक्त है ? तब अनुचर कहते हैं कि बड़ी-बड़ी शिखरों से युक्त विजयार्द्ध पर्वत पर 'पवनवेग' नाम का विद्याधर राजा जो कि 'अक्षय' शोभावाला है, यहाँ का राजा है। सोलह विद्याधर राजाओं के द्वारा सीखी गयी इस पत्थरों की परीक्षा में जो मनुष्य सफल होगा उसको एक लड़की मिलेगी। वह गोरे रंगवाली नवलावण्य से युक्त सोलह कन्याओं से विवाह करेगा। अनुचर अपने-अपने राजा के पास चले गये। कुमार ने भी आगे चलने का विचार किया, और चल दिया। मेघ विमान शिखर को देखकर तथा भूतरमण वन को छोड़कर जिस समय कुमार महानगर के बाहर ठहरा हुआ था इतने में एक और वृद्धा वहाँ आयी—अत्यन्त बूढ़ी, अत्यन्त जीर्ण।

घत्ता—बुढ़ापे से सफेद सिर और लम्बे स्तनोंवाली वृद्धा स्त्री ने आकर कहा कि हे आदरणीय! मैं बहुत दु:खी हूँ। ऐसा कुछ भी कहा और बेरों की पिटारी रख दी॥ २०॥

२१

शिथिल चमड़ी और अत्यन्त विद्रूप, वह पेड़ के नीचे निकट बैठी हुई थी। उसने राजकुमार का लक्ष्मी के द्वारा मान्य कमलरूपी मुख नीचे किया हुआ देखा। भूख-प्यास और

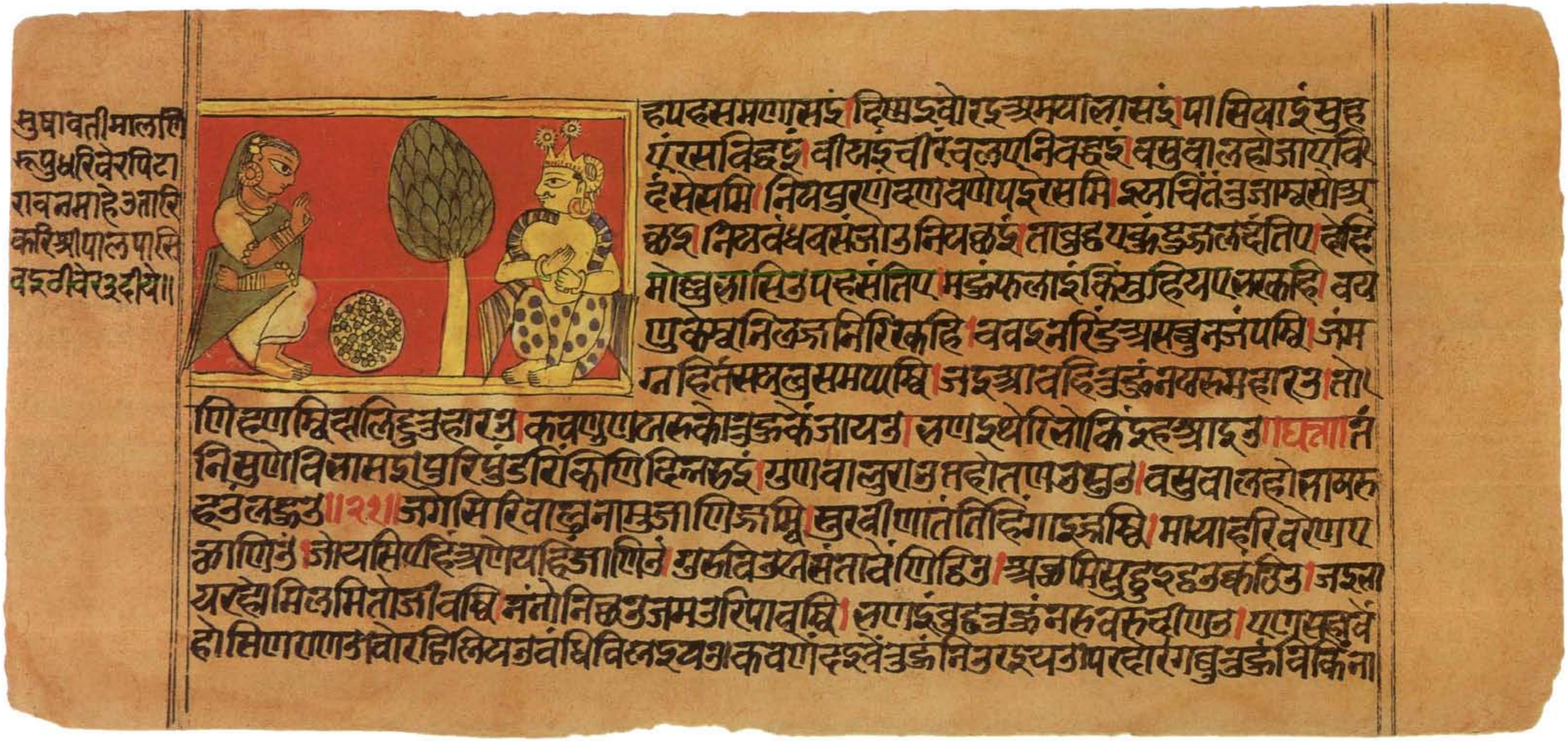

पथ के श्रम को शान्त करनेवाले अमृत का आभास देनेवाले उसने बेर दिये। उस सुभग ने रस से स्निग्ध उनको खा लिया। और दूसरे बेरों को अपने अंचल में बाँध लिया। (यह सोचकर कि) इन्हें राजा वसुपाल को दिखाऊँगा और अपने नगर के नन्दनवन में इन्हें बोऊँगा। ऐसा सोचता हुआ जब वह बैठा था, तभी अपने भाई के संयोग की इच्छा करता है। तब जूही के फूल के समान उज्ज्वल दाँतोंवाली उस वृद्धा ने हँसते हुए कहा कि मेरे बेरों की कीमत दो, मेरे फलों को क्या तुम मुफ्त खाते हो ? निर्लज्ज की भाँति मेरा मुख क्यों देखते हो ? तब राजा कहता है कि मैं झूठ नहीं बोलता, जो तुम माँगती हो वह सब दूँगा। यदि तुम मेरे नगर में आती हो तो मैं तुम्हारा दारिद्र्य नष्ट कर दूँगा। तब वह वृद्धा कहती है कि तुम्हारा कौन-सा नगर है ? तुम कौन हो ? तुम्हें किसने जन्म दिया ? और यहाँ किसलिए आये हो?

घत्ता—यह सुनकर चक्रवर्ती कहता है—कान्ति से युक्त पुण्डरींकिणी नगरी में गुणपाल नामक राजा है, उसका पुत्र वसुपाल है, मैं उसका छोटा भाई हूँ॥ २१॥

२२

जग में श्रीपाल के नाम से जाना जाता हूँ और देव-वणिओं में 'मैं' गाया जाता हूँ। एक मायावी घोड़े द्वारा मैं यहाँ लाया गया हूँ। यह बात समस्त ज्योतिषियों के द्वारा जानी गयी है। गुरु के वियोग के सन्ताप से दु:खी अपने प्रियजनों के वियोग में अत्यन्त उत्सुक दु:खी 'मैं' यहाँ रह रहा हूँ। यदि मैं अपने भाई से मिलता हूँ तो जीवित रहता हूँ। नहीं तो निश्चय ही मैं यमपुर के लिए चला जाऊँगा। वृद्धा कहती है कि अरे तुम तो दीन व्यक्ति मालूम होते हो। इस स्वभाव से तुम राजा नहीं मालूम होते हो। तुम बेर बाँधकर लाये! किस विधाता ने तुम्हें राजा बनाया। तुम दूसरों के दारिद्र्य का क्या नाश करोगे!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

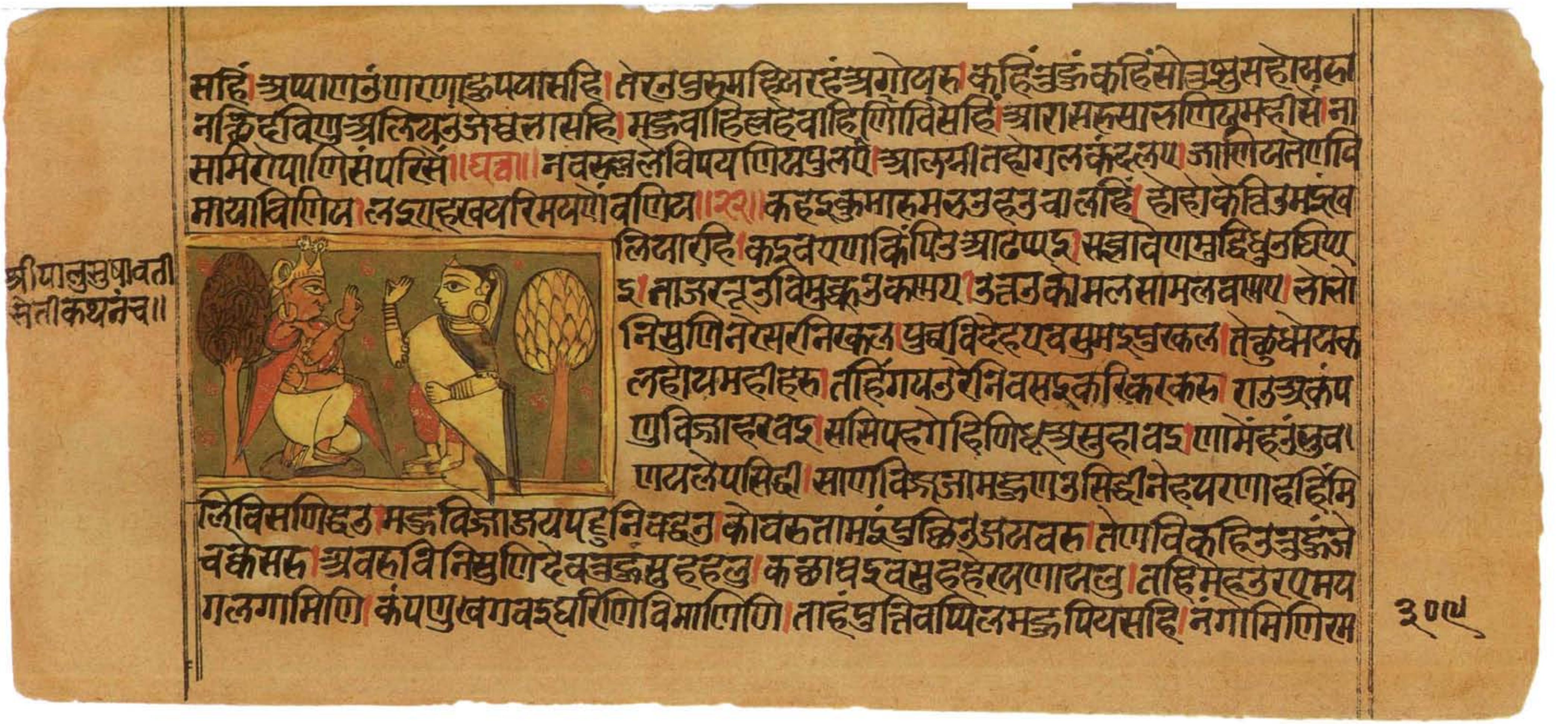

तुम्हारा नगर धरती-निवासी के लिए अगोचर है। कहाँ तुम ? और कहाँ तुम्हारा भाई ? धन नहीं है, यह तुम झूठ कहते हो, तुम झूठ मत बोलो। तुम मेरे बाहर की व्याधि नष्ट कर दो। राजा ने कहा—मेरे पास आओ और उसने अपने हाथ के स्पर्श से उसका रोग दूर कर दिया।

घत्ता—नव-सौन्दर्य से उल्लसित होकर रोमांच को प्रकट करती हुई वह उसके गले में आकर लिपट गयी। उसने भी जान लिया कि यह मायाविनी कोई विद्याधरी है जो कामदेव से आहत हो उठी है॥ २२॥

२३

कुमार कहता है कि हे देवि! अपनी भौंहें मत चलाओ। अरे-अरे तुम मुझे कितना अपमानित करती हो! तुम कपट से प्रिय को क्यों अर्जित करना चाहती हो! निश्चय से सद्भावपूर्वक तुम इसे छोड़ दो। तब कन्या ने अपना वृद्धरूप छोड़ दिया और कोमल श्याम रंगवाली उसने कहा—हे राज-नरेश्वर! निष्कपट बात सुनिए! पूर्व विदेह में पुष्कलावती नाम की नगरी है। उसके राजपुर नगर में जिसने स्वर्ण के समान महीधरों को धोया है ऐसा हाथी की सूँड के समान हाथोंवाला अकम्पन नाम का विद्याधरों का स्वामी राजा है। उसकी 'शशिप्रभा' नाम की कन्या है। वही मैं भुवनतल में इस नाम से प्रसिद्ध हूँ। ऐसी कोई विद्या नहीं है जो मुझे सिद्ध न हुई हो। समस्त विद्याधर राजाओं ने मिलकर स्नेह के साथ मुझे विद्याओं को जीतने का पट्ट बाँधा है। पिता ने मुनिवर से पूछा कि इसका कौन वर होगा? उसने कहा कि उसका वर चक्रवर्ती राजा होगा। हे देव ! अब और भी सुनिए। तुम्हारे शुभ फल की कच्छावती धरती पर रत्नाचल है। उसके मेघपुर नगर में कम्पन नाम का राजा है और उसकी हाथी के समान चालवाली मान से रहित गृहिणी है। उसकी लड़की बप्पिला मेरी प्रिय सखी है। जो मानो पृथ्वीरूपी (लक्ष्मीरूपी) रमणी की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

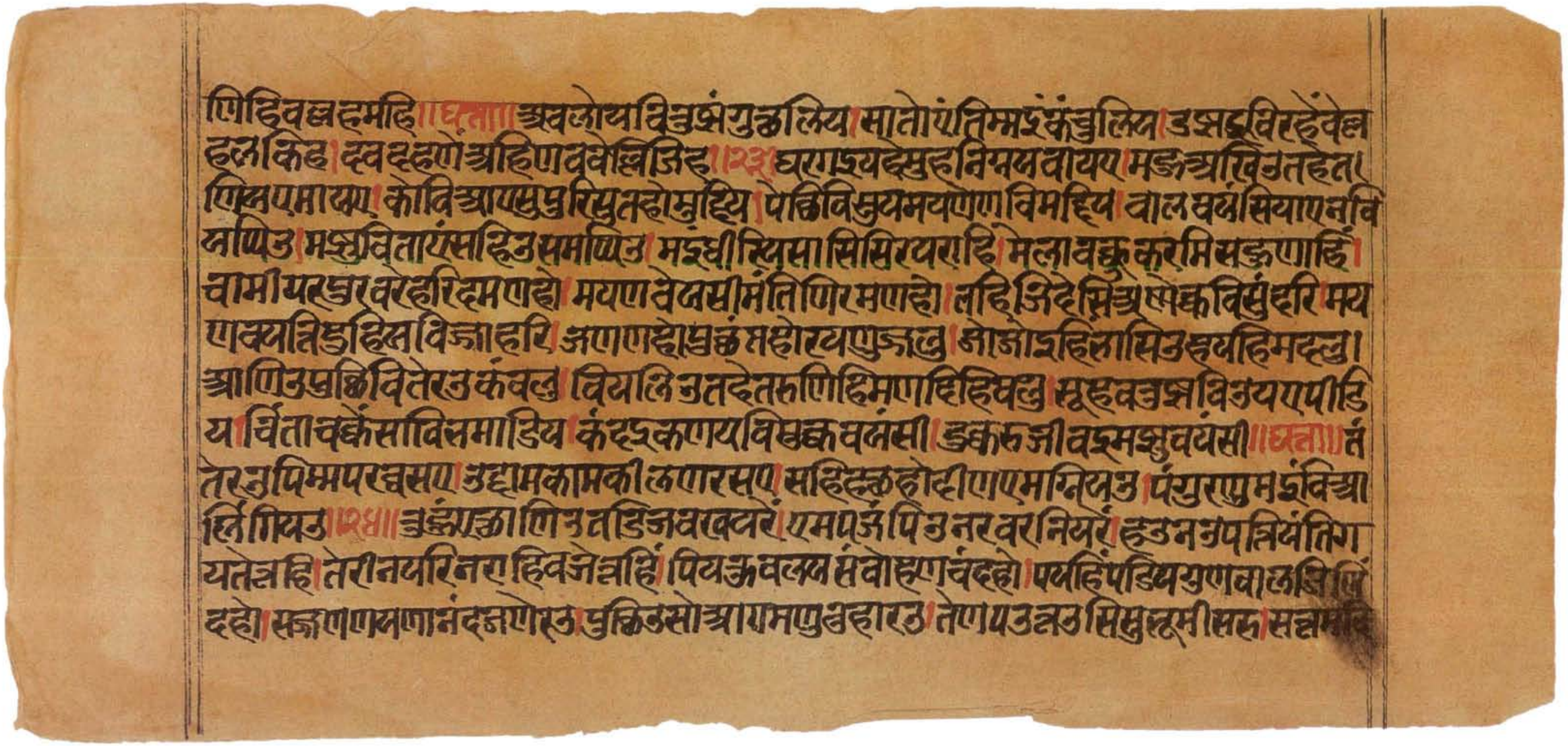

प्रिय सखी है।

घत्ता—तुम्हारी अँगूठी देखकर वह अश्रुजल से अपनी चोली गीली कर रही है। वह कोमल विरह से उसी प्रकार जल रही है जिस प्रकार दावानल से नयी लता जल जाती है॥ २३॥

२४

घर जाने पर जिसके मुख से वाणी निकल रही है, ऐसी उसकी माँ ने मुझे से कहा—कोई आदर्श पुरुष है, उसकी 'मुद्रा' देखकर लड़की काम से पीड़ित हो उठी है। उस बालसखी ने कुछ भी विचार नहीं किया और उसने मुझे अपना हृदय बता दिया। मैंने उसे धीरज बँधाया कि चन्द्रकिरणों के समान शोभावाले प्रिय से तुम्हारा मिलाप करा दूँगी। उसी देश में चामीकर (स्वर्णपुर में) 'मदनवेगा' स्त्री से रमण करनेवाले हरिदमन की 'मदनावती' नाम की विद्याधरी सुन्दरी लड़की थी। पिता के पूछने पर मुनियों ने कहा था कि जो रत्नों से उज्ज्वल हिमदल की कान्ति को आहत करनेवाले लाये गये तुम्हारे कम्बल को देखकर विगलित हो जायेगा उस युवती के मन में वही उसका धैर्यबल (मन) होगा? हे सुभग! तुम्हारे वियोग में वह पीड़ित है। और बेचारी तुम्हारी चिन्ता-वियोग में पीड़ित है। उसने कर्णफूल छोड़ दिये हैं। और मेरी सखी का जीना कठिन है।

घत्ता—प्रेम के वशीभूत होकर तथा उत्कट कामक्रीड़ा के रस से भरी हुई उस दीन ने वह तुम्हारा कम्बल माँगा और मैंने भी अपने हाथ से उस प्रावरण का आलिंगन किया॥ २४॥

२५

तुम यहाँ पर अशनिवेग विद्याधर द्वारा लाये गये हो—नरपति समूह ने ऐसा मुझ से कहा। उस पर विश्वास न करते हुए 'मैं' वहाँ गयी। हे राजन्! प्रजारूपी कमलों का सम्बोधन विकसित करने के लिए चन्द्रमा के समान गुणपाल जिनों के पैरों पर 'मैं' पड़ी थी। तथा सज्जन के नेत्रों को आनन्द देनेवाले तुम्हारे आगमन को उसने पूछा, उन्होंने कहा कि बाल राजा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

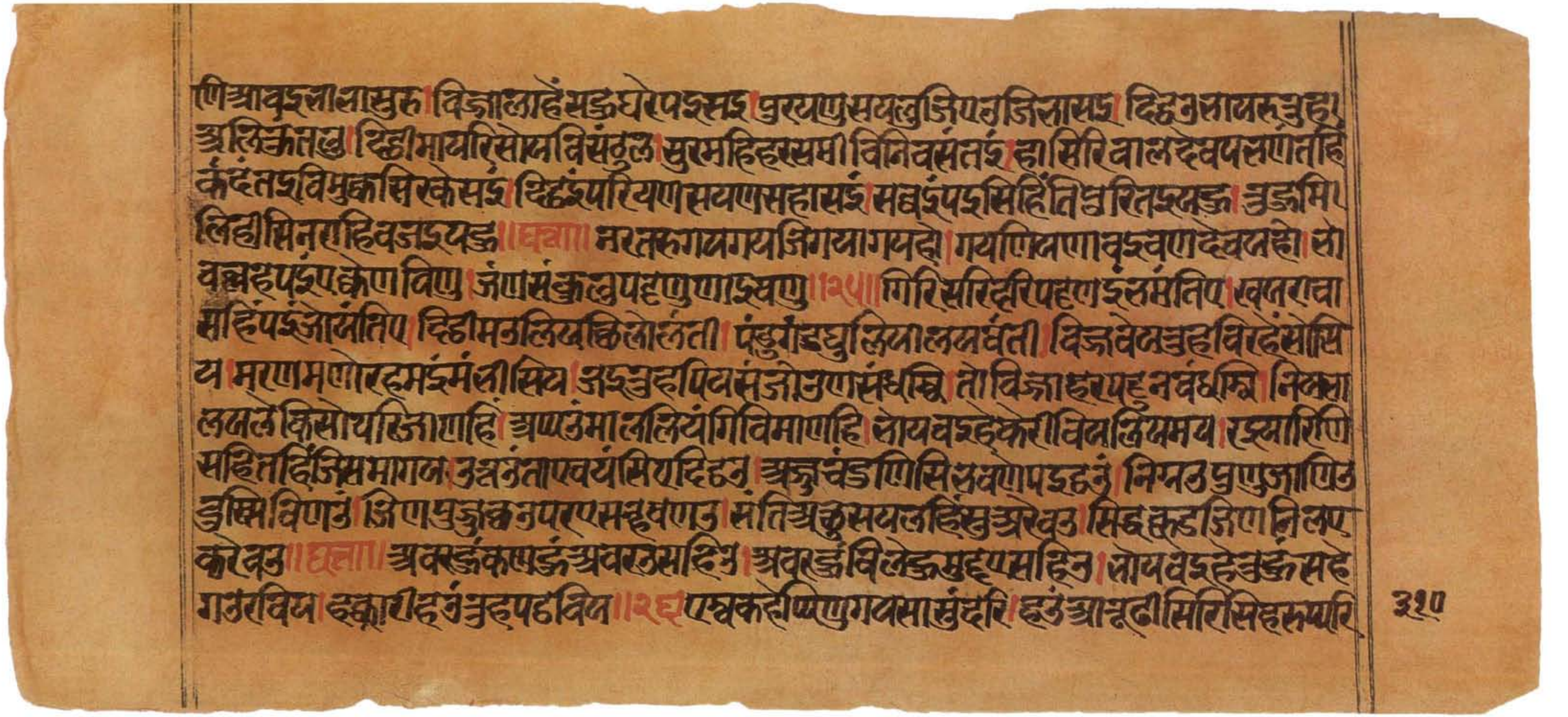

जो प्रकाश से भास्वर है, सातवें दिन आयेगा। और विद्यालाभ के साथ घर में प्रवेश करेगा। समस्त पुरजन भी यही बात कहते हैं। मैंने भ्रमर के समान काले बालवाले तुम्हारे भाई से भी बात की, शोक से विह्वल माता से भी मिली। सुमेरु पर्वत के निकट निवास करते हुए, हे देव! वे हा-हा श्रीपाल कहते हुए, उन्हें तथा आक्रन्दन करते हुए, जिनके सिर के बाल मुक्त हैं ऐसे सैकड़ों परिजन और स्वजनों को भी मैंने देखा। वे सब नगर में तभी प्रवेश करेंगे कि जब हे राजन्! तुम उन्हें मिल जाओगे।

घत्ता—नररूपी तरु चले गये, और गज भी गये और आ गये। जो गणिकाएँ हैं मानो वे वनदेवियाँ हैं। हे प्रिय ! तुम्हारे एक के बिना लोगों से व्याप्त वह नगर भी वन की भाँति मालूम होता है॥ २५॥

२६

सैकड़ों पहाड़ों, नदियों, घाटियों और वनों को देखते हुए तब विद्याधर निवासों में तुम्हें देखते हुए मैंने आँखें बन्द किये हुए तथा जिसके सफेद गालों पर अलकावली हिल रही है, ऐसी चंचल विद्युतवेगा को तुम्हारे वियोग में शोषित देखा। मरण की इच्छा रखनेवाली उसे मैंने अभय दान दिया कि यदि मैंने तुम्हारे प्रिय संयोग की तलाश नहीं की तो 'मैं' विद्याधर पट्ट को अपने भालस्तर पर नहीं बाँधूँगी। इस बात को तुम जान लो और हे ललितांगी! तुम अपने को कष्ट मत दो। तब भोगवती की विगलित मदवाली तथा रति उत्पन्न करनेवाली सखी भी वहाँ आ गयी। उस सखी ने कहा कि—आज मैंने रात में चन्द्रमा को अपने गृह में प्रवेश करते हुए देखा। और फिर वह निकल गया। सबने इसे दुःस्वप्न समझा और सोचा कि सवेरे सिद्धकूट जिनालय में शान्ति के लिए 'जिनेन्द्र' की पूजा-अभिषेक करना चाहिए।

घत्ता—दूसरी सखियाँ जिनका मुद्रासहित लेख है। भोगवती की तू सहेली अत्यन्त गौरवान्वित है, जो मुझे भेजकर तुझे बुलाया॥ २६॥

२७

ऐसा कहकर वह सुन्दरी चली गयी। 'मैं' श्रीपर्वत के ऊपर चढ़ गयी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उस कानन में मणिमय कुण्डलों से मण्डित कानोंवाली छह कन्याओं को देखा कि तुम में अनुरक्त जिन को अशनिवेग विद्याधर ने सत्ताईस योजनवाले उस वन में बन्द कर रखा है। मैं करुणापूर्वक उन मृग-नेत्रियों को उठाकर अपने नगर में ले आयी हूँ। और उन कन्याओं को राजा के लिए सौंप दिया है। मैं दो दिनों तक बाट जोहती हुई, विद्याधर नगरों में घूमती रही थी। तब हरिकेतु कुमार ने तुम्हारी कथा विस्तार से कही थी। यहाँ आये हुए मैंने तुम्हें देखा। काम ने मेरे मन में अपना तीर चला दिया। हे देव! मैंने वृद्धा का रूप धारण किया और बेरों से भरी हुई यह पोटली रख दी। पुण्डरीकिणी नगर में ज्योतिषी ने इस बात को जाना था और कहा था।

घत्ता—इस प्रकार श्रेष्ठ कुन्द-पुष्पों के समान दाँतों के मुखवाली सती सुलोचना यह कथा तीनों लोकों के लिए भयंकर तथा भरत नरेश्वर के अनुचर राजा जयकुमार से कहती है॥ २७॥

त्रेसठ महापुरुषों के गुण और अलंकारोंवाले इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का विद्याधरकुमारी-विरह-वर्णन नाम का बत्तीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ३२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

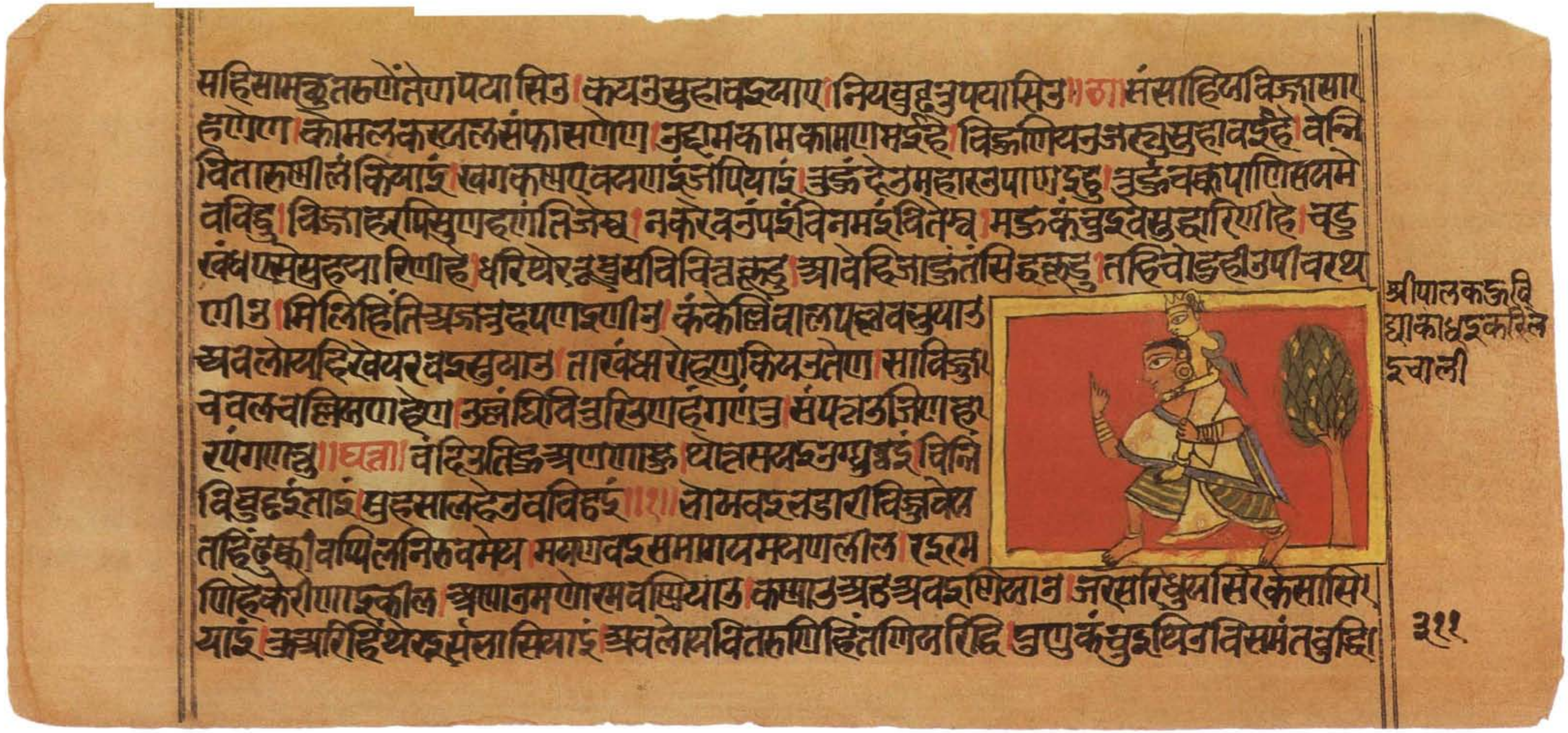

सन्धि ३३

१

उस तरुण श्रीपाल ने अपनी सर्वौषधि की सामर्थ्य प्रकाशित की। सुखावती ने जो उसका बुढ़ापा किया था उसने उसे नष्ट कर दिया। जिसने विद्याओं के शासन को सिद्ध किया है ऐसे श्रीपाल ने अपने कोमल करतल के स्पर्श से उद्दाम काम की इच्छा की मति (बुद्धि) रखनेवाली उस सुखावती के बुढ़ापे को भी नष्ट कर दिया। वे दोनों यौवन से अलंकृत हो गये। विद्याधर कुमारी ने ये शब्द कहे—हे देव! तुम मेरे प्राण-इष्ट हो, तुम साक्षात् विष्णु हो। दुष्ट विद्याधर जिस प्रकार दूसरों को मारते हैं, कहीं वे तुम्हें और हमें न मार दें! इसलिए शुभ करनेवाला कंचुकी का वेश धारण कर मेरे कन्धे पर चढ़ जाइए। ऐसा रूप धारण कर आओ, विचित्र शिखरोंवाले उस सिद्धकूट पर्वत पर चलें। वहाँ युवाहृदय-पीन-स्थूल स्तनोंवाली तुम्हारी प्रणयिनियाँ आज मिलेंगी। अशोक वृक्ष के नव-पल्लवों की तरह बाहुवाली विद्याधर कुमारी को वहाँ देखोगे। तब कुमार ने उसके कन्धे पर आरोहण किया। बिजली की तरह चंचल वह आकाश मार्ग से चली। नभ के आँगन को लाँघती हुई, वह तुरन्त जिनेन्द्र मन्दिर के प्रांगण में पहुँची।

घत्ता—उच्चरित सैकड़ों स्तोत्रों से त्रिभुवन के स्वामी जिनेन्द्र भगवान् की उन्होंने वन्दना की, और वे दोनों बूढ़े मन्दिर की मुख्यशाला में बैठ गये॥ १॥

२

आदरणीय भोगवती, विद्युतवेगा और अनुपम बप्पिला वहाँ पहुँची। कामदेव की लीला धारण करनेवाली मदनावती आयी। जो मानो रतिरूपी रमणी की क्रीड़ा हो, और भी मनोहर वर्ण की रंगवाली आठ कन्याएँ वहाँ अवतीर्ण हुईं। वृद्धतारूपी नदी से धोये गये हैं केश जिसके, ऐसे उन वृद्ध-वृद्धा से उन कुमारियों ने बातचीत की। उन युवतियों की ऋद्धि देखकर कंचुकी भी विस्मित बुद्धि होकर स्थित हो गया।

Jain Education International
For Private & Personal Use Only

www.jainelibrary.org

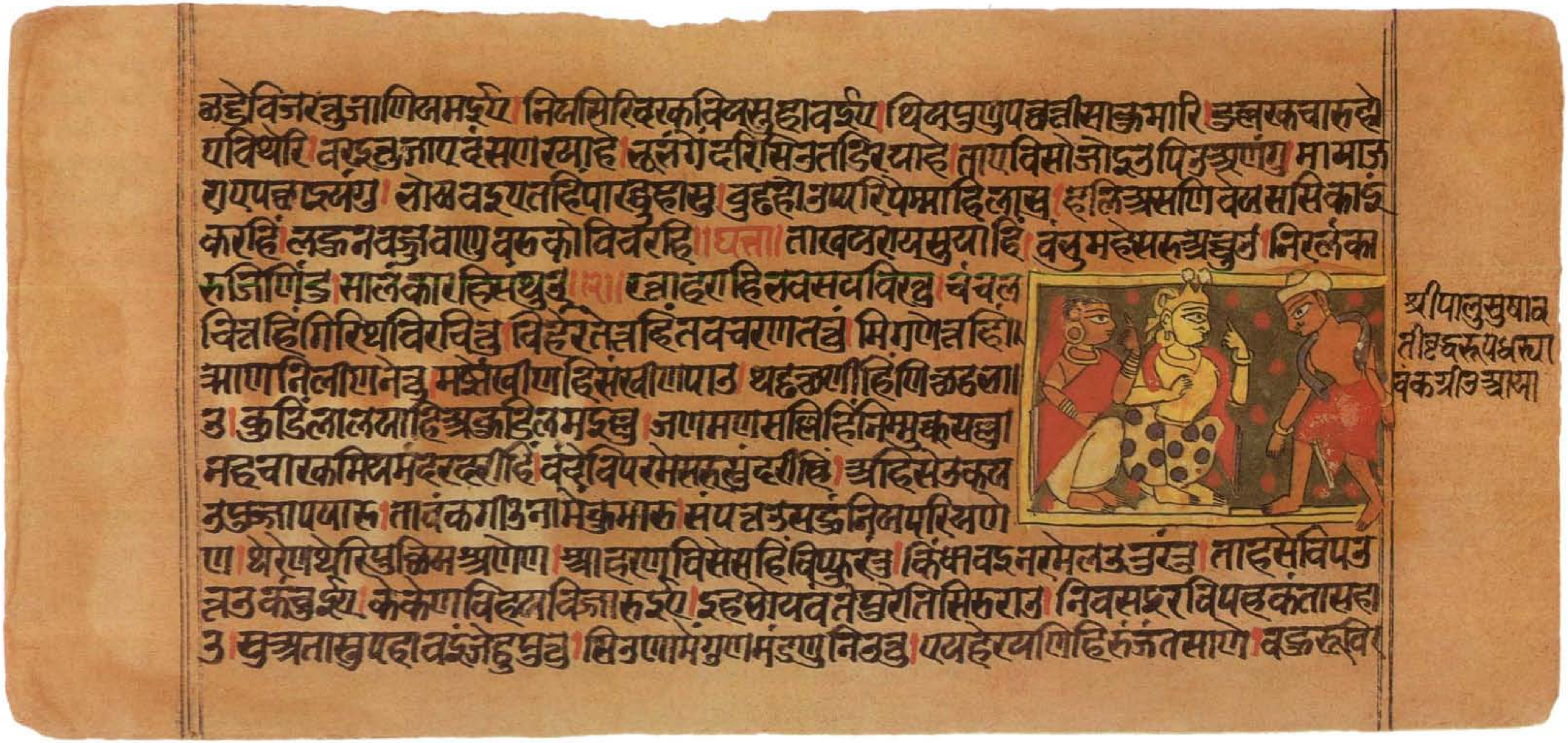

वृद्ध 'श्रीपाल' की बुद्धि को जाननेवाली सुखावती ने अपनी श्री उसे दिखाई फिर वह कुमारी छिपकर बैठ गयी। और दुर्लक्ष है आचरण जिसका ऐसी वृद्धा बनकर बैठ गयी। उसने दर्शन में लीन विद्युतवेगा के लिए भौंह के द्वारा वर को दिखाया। उसने भी उससे कहा कि प्रिय कामदेव है। लेकिन मायावी बुढ़ापे से उसके अंग छिपे हुए हैं। तब भोगवती ने वहाँ मजाक करना शुरू किया कि तुम्हारी प्रेम-अभिलाषा वृद्ध के ऊपर है। हे विद्युतवेगा ! सखि तुम क्या करती हो! शीघ्र ही किसी युवक लड़के से अपनी शादी कर लो।

घत्ता—तब विद्याधर की कन्याओं ने अलंकार पहने हुए स्वयं ब्रह्मा, महेश्वर, आदि जिनेन्द्र की संस्तुति की जो स्वयं बिना अलंकारों के थे॥ २॥

३

लाल-लाल ओष्ठोंवाली (रक्ताधर) उन्होंने सैकड़ों संसारों से विरक्त जिनेन्द्र भगवान् की संस्तुति की। चंचल चित्तवाली, पर्वत के समान स्थिर-चित्त जिन-भगवान् की, विरह से आर्द्र सन्तप्ताओं ने तपश्चरण से सन्तप्त जिनवर की, मृगनयनियों ने ध्यान में लीन नेत्रवाले जिनेन्द्र की, मध्य में क्षीण स्त्रियों ने पापों के क्षय करनेवाले जिनेन्द्र की, स्निग्ध स्तनोंवालियों ने स्नेह से रहित जिनेन्द्र की, कुटिल आलाप करनेवालियों ने अकुटिलों में श्रेष्ठ जिनवर की, जन-मन की शल्य रखनेवालियों ने शल्यों से रहित जिनवर की तथा इस प्रकार अपने आकाशगमन से मन्दराचल की घाटियों का उल्लंघन करनेवाली उन सुन्दरियों ने परमेश्वर की वन्दना कर अभिषेक और तरह-तरह की पूजाएँ कीं। इतने में बंकग्रीव नाम का कुमार अपने परिजनों के साथ वहाँ आया। इस वृद्ध ने उस वृद्धा से पूछा कि विशेष अलंकारों से चमकता हुआ यह मनुष्यों का मेला तुरन्त क्यों दौड़ रहा है? तब उस वृद्धा ने हँसकर कहा कि विद्या के आकर्षण (कान्ति) से कौन-कौन लोग आहत नहीं हुए! इस भोगवती नगरी में त्रिसिर नाम का राजा है। उसकी सहायक रविप्रभा नाम की पत्नी है। उसके उस रविप्रभा से बड़ा बेटा हुआ, शिव नाम का गुणों से मण्डित, रात्रि में जिसमें कुत्ते भौंक रहे हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

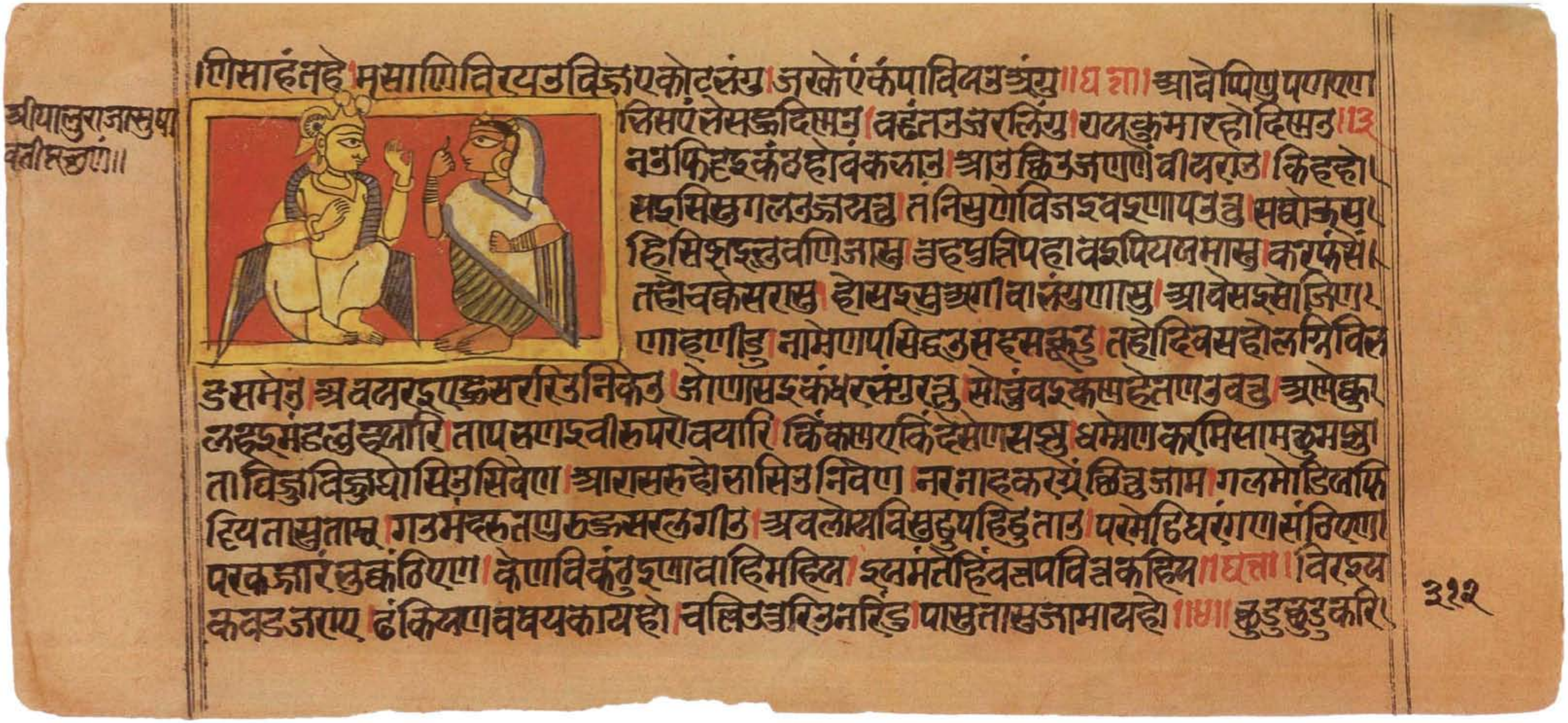

ऐसे मरघट में विद्या सिद्ध करते हुए विद्या ने उसका कोटाग्र (गर्दन) टेढ़ा कर दिया है, और ज्वर के आवेग से इसका शरीर कँपा दिया।

घत्ता—प्रणय से आकर वैद्य ने इसे औषधि दी। और बढ़ते हुए कुमार के वृद्धापन को छीन लिया॥ ३॥

४

लेकिन उसके कण्ठ का टेढ़ापन नहीं गया। पिता ने वीतराग मुनि से पूछा कि हमारे पुत्र का गला सीधा कैसे होगा? यह सुनकर मुनिवर ने कहा कि संसार में जिसे सर्वौषधि विद्या सिद्ध होगी ऐसे तुम्हारी पुत्री कुमारी प्रभावती के प्रियतम, उस चक्रवर्ती के छूने से लड़के की गर्दन के टेढ़ेपन का नाश हो जायेगा। 'जिनेन्द्र भगवान्' का घर जो सिद्धकूट नाम का प्रसिद्ध मन्दिर है वहाँ वह आयेगा। उस दिन से लेकर इस 'जिन मन्दिर' में वह योद्धाओं सहित अवतरित होगा। वह कुमार के कन्धे के टेढ़ेपन को दूर करेगा। और कन्या का मुख चूमेगा, और भी वह शत्रुओं को मारनेवाले मण्डल को प्राप्त करेगा। तब वह धीर परोपकारी कहता है कि मुझे कन्या से क्या उद्देश्य ? मैं धर्म से अपनी सामर्थ्य और सिद्धि को प्राप्त करूँगा। तब आचार्य ने उसे वैद्य घोषित किया। राजा ने कहा कि पास आइए। श्रीपाल के निकट आओ। कमल के समान जब उसने हाथ से उसे छुआ, जैसे ही उसने छुआ, वैसे ही उस लड़के का टेढ़ापन दूर हुआ। सीधी गर्दन का वह पुत्र मन्दिर में गया, पिता उसे देखकर प्रसन्न हुआ। परमेश्वरी के घर के आँगन में जिन-मन्दिर में स्थित, दूसरों का काम करने के लिए उत्कण्ठित किसी कंचुकी ने व्याधि नष्ट कर दी। मन्त्रियों ने यह पवित्र बात राजा से कही।

घत्ता—रची गयी कपट-माया के द्वारा जिसने अपनी नयी काया ढँक रखी है, ऐसे उस दामाद के पास राजा चला॥ ४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५

शीघ्र ही उसने मद झरनेवाले हाथी को प्रेरित किया। और जिसमें छह (षटकाय) जीवों की दया निवास करती है, ऐसे जिन-मन्दिर में पहुँचा। जिन-मन्दिर में जबतक सुधीजनों के लिए दर्शन के लिए तिसिर नाम का विद्याधर पहुँचता है, तबतक प्रवंचना बुद्धि रखनेवाली मायाविनी वह शोभावती उस सुन्दर को उसी प्रकार ले गयी जिस प्रकार हरिणी हरिण को ले जाये। प्रिय के जीवन रूपी धान्य की रक्षा के विचार से उस सुखावती ने उसे एक मणिबाग में रख दिया। जिसने आकाश में पवनवेग से अपने विमान का संचालन किया है, ऐसा वह तिसिर विद्याधर कुमार को नहीं देखकर लौट आया। यहाँ पर उस मुग्धा ने अभिनव वर उस राजा को हाथ की अँगुली में पहनी गयी तथा मनुष्यों के नेत्रों का मर्दन करनेवाली अँगूठी से विद्युतवेगा के आकार का बना दिया। वह वहाँ से चली गयी और वहाँ पहुँची जहाँ सुखोदय नाम की दूसरी बावड़ी थी।

घत्ता—वह बावड़ीरूपी विलासिनी शोभित थी। नव नीलकमल ही उसके नेत्र थे। राजहंसों के साथ निवास करनेवाली उसने जलरूपी वस्त्र पहन रखा था॥५॥

६

वह कन्या जलक्रीड़ा के लिए अपने कर-कमल को बढ़ाती हुई जैसे ही कन्याओं को पुकारती है वैसे ही उसे एक भी कन्या दिखाई न दी। इसने जान लिया कि वे तालाब से चली गयी हैं। या वे सरोवर को चली गयी हैं। यहाँ राजा 'श्रीपाल' ने उद्दाम वेगवाले अपने विद्युत्-रूप को देखा। अपने महत्त्ववाली अँगुली को उसने हटा लिया और अपना रूप धारण करके स्थित हो गया। उसने अपना मन्त्र पढ़ा,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

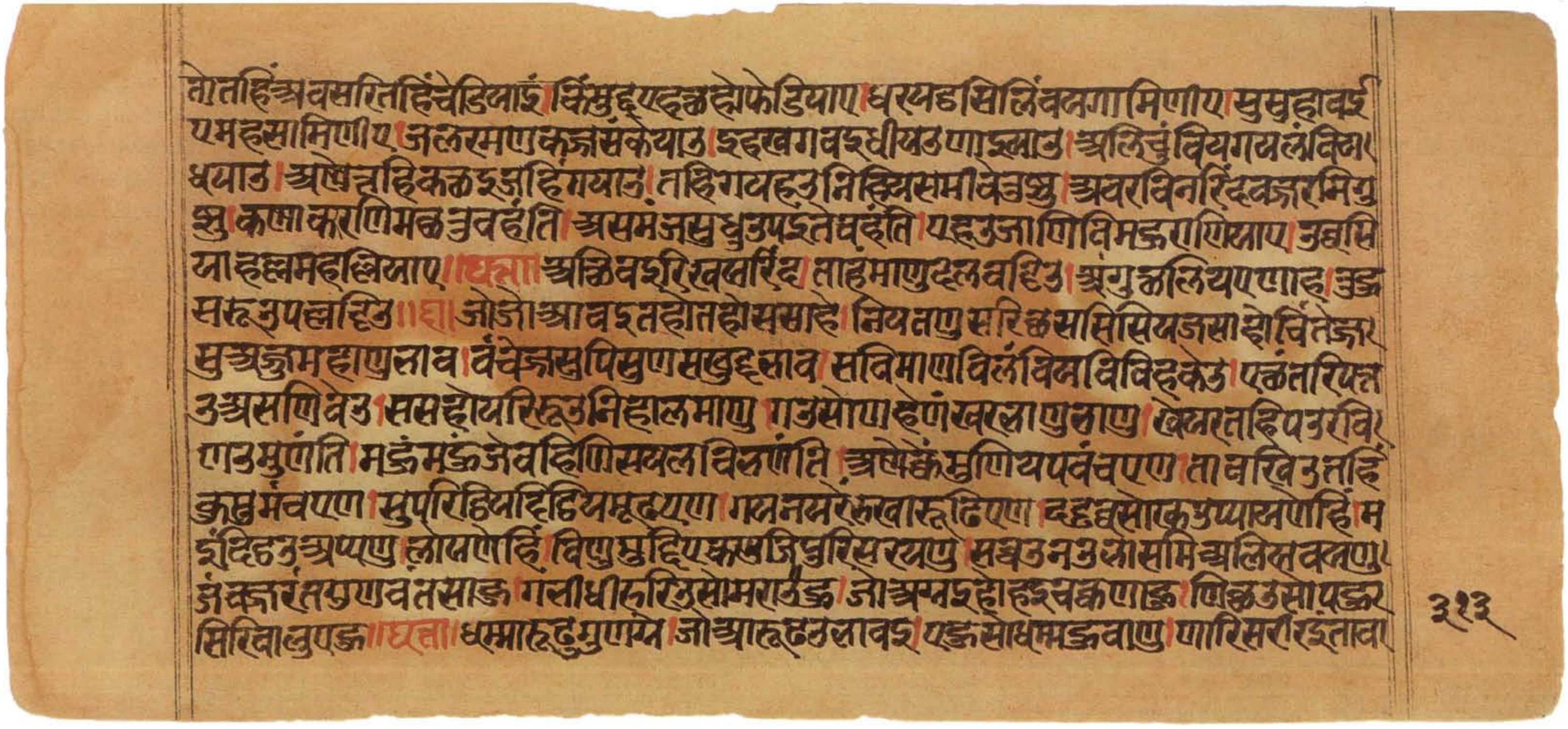

उस अवसर पर उसकी दासी ने कहा कि तुमने अपने हाथ से मुद्रिका क्यों हटा दी? हंस-शावक के समान गतिवाली मेरी स्वामिनी सुखावती, जलक्रीड़ा के काम के लिए संकेतित विद्याधर कुमारियाँ जो यहाँ नहीं आयी हैं, भ्रमर से चुम्बित गजों पर अवलम्बित ध्वजाओंवाली जो कहीं और चली गयी हैं—(वे) वहाँ गयी है और मुझे तुम्हारे पास छोड़ा है। हे राजन्! एक और गुप्त बात सुनिए, कन्या के लिए ईर्ष्या प्रदान करनेवाले वे दोनों विद्याधर निश्चय ही तुम्हारे साथ असामंजस्य करेंगे। यह जानकर उर्वशी से भी अधिक सुन्दर मेरी रानी सुखावती ने—

घत्ता—विद्याधर राजा शत्रु है, इसलिए उनका ज्ञान नष्ट कर दिया और हे स्वामी! इस अँगूठी के द्वारा तुम्हारा स्वरूप बदल दिया॥ ६॥

७

हे महानुभाव! जो-जो आता है, उसे अपने शरीर के समान तथा चन्द्रमा के समान श्वेत यश से युक्त बहन के रूप में अपने को सोचना और इस प्रकार समुद्र के समान गर्जनवाले दुष्टों को प्रवंचित करना। इसी बीच जिसके अपने विमान में तरह-तरह के ध्वज लगे हुए हैं, ऐसा अशनिवेग आया, और अपनी बहन का रूप देखकर तीव्र सूर्य के समान प्रवाहवाला वह आकाश-मार्ग से चला गया। वहाँ पर दूसरे बहुत-से प्रचुर विद्याधर भी नहीं जान पाते हैं, और सब उसे मेरी बहन है—मेरी बहन है, यह कहते हैं। तब एक ने जिसने इस प्रवचन को जान लिया है, ऐसे कुसुमचक्र माली ने उस समय कहा कि सुपरिस्थिति को देखने में अभ्रान्त है तथा जो पेड़ पर चढ़ा हुआ है ऐसे उस नागरिक ने विद्याधरों से कहा कि मैंने देखने योग्य चीज में सुख उत्पन्न करनेवाले अपने नेत्रों से स्वयं देखा है कि वह कन्या बिना मुद्रा के पुरुषरत्न है। मैं सच कहता हूँ—झूठ वचन नहीं बोलता। जो गुणवान् साधु, गम्भीर तथा चन्द्रमा के लिए राहु के समान शत्रु कहा जाता है और जो आगे चक्रवर्ती होगा निश्चय से यह वही राजा श्रीपाल है।

घत्ता—धनुष की डोरी के अग्रभाग पर स्थित यह वही कामदेव का बाण है जो स्त्रियों के शरीर को सन्तप्त करता है॥ ७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८

आज हमने शत्रु पा लिया। अब वह कहाँ जायेगा ? वह कहाँ का राजा है? और कहाँ राज्य करता है? यह कहकर विद्याधरों ने उसे उसी प्रकार घेर लिया जैसे पुंश्चलियों ने प्रिय को घेर लिया हो। मानो मेघों से अवलम्बित सूर्य की किरणों ने दिवस को घेर लिया है, मानो चन्दन के श्रेष्ठ वृक्ष को सर्पों ने घेर लिया हो। और जबतक फड़कते हुए ओठोंवाले उन विद्याधरों से वह आहत नहीं होता तबतक कमलों के सरोवर को देखकर कि जिसमें हंसनियों के मुखों द्वारा हंस-शिशु चूमे जा रहे हैं। यह देखकर कि कन्याएँ जलक्रीड़ा समाप्त करके चली गयी हैं वह प्रिय सखी अपनी मणि-वापिका पर आ गयी। शत्रुसेना के उपद्रव को देखकर उस बाला ने कुमार को छिपा दिया। उन विद्याधरों को वह विद्याधर उसी प्रकार दिखाई नहीं दिया जिस प्रकार अज्ञानियों को सर्वज्ञ दिखाई नहीं देते।

घत्ता—अभिनव स्वर्ण की तरह रंगवाली उस कन्या ने शीघ्र ही कुमार को उठाकर 'जिन-मन्दिर' की पूर्व दिशा में रख दिया॥ ८॥

९

हथिनी की तरह वे विद्याधरियाँ क्रीड़ा-वन से अपने-अपने घर चली गयीं। अपने मुख से जिसने चन्द्रमा की कान्ति को पराजित किया है, ऐसे स्फटिक मणि की चट्टान को देखते हुए राजा को उसने मुद्रा से रहित इस प्रकार देखा,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

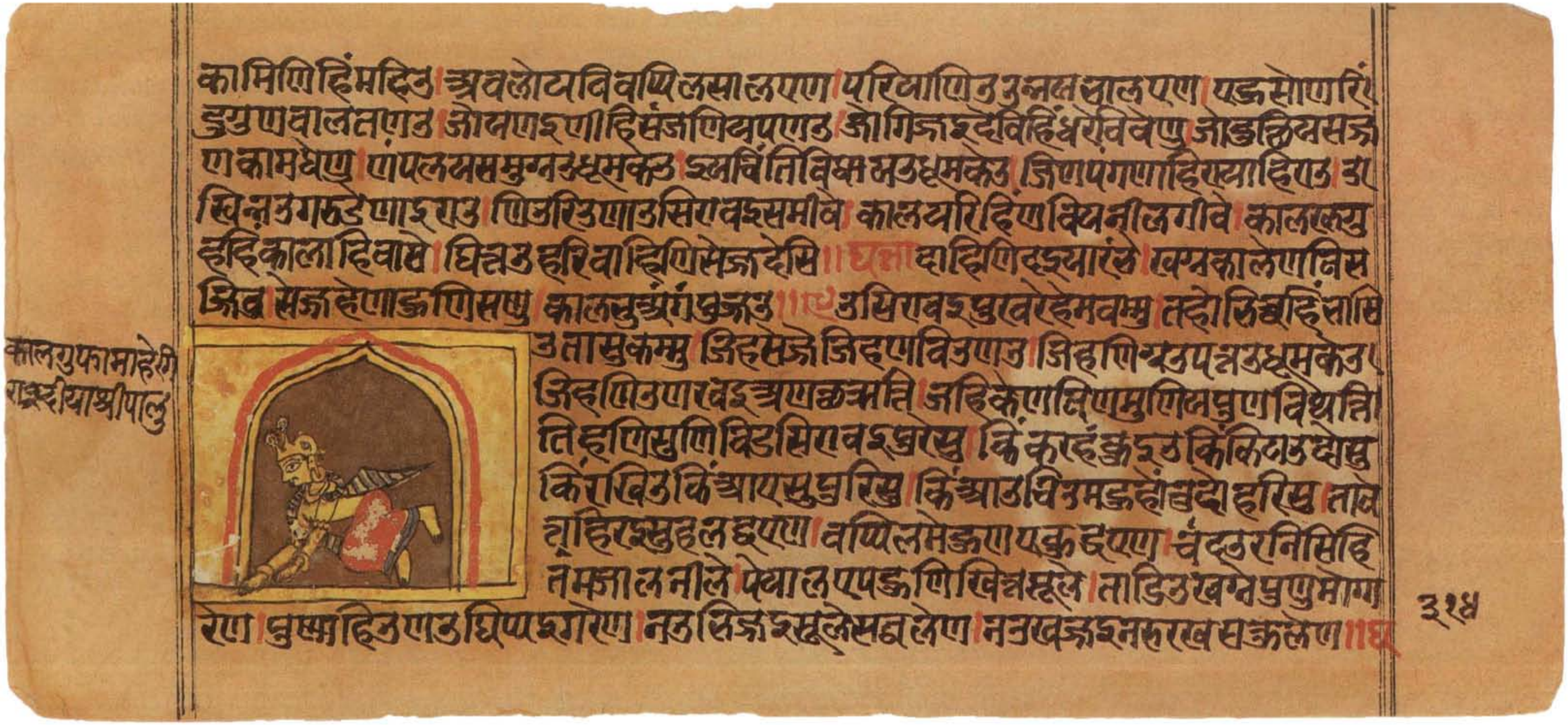

मानो रति के द्वारा पूजित कामदेव हो। उसे देखकर उन्नत भालवाले बप्पप्रिय साले ने जान लिया कि यह वही गुणपाल का बेटा राजा है कि जिसे प्रणयिनियों के द्वारा प्रणय उत्पन्न किया गया है। देवताओं के द्वारा जो वीणा लेकर गाया जाता है, जो सज्जनरूपी कामधेनु को दुहनेवाला है। यह विचार करके धूमकेतु विद्याधर इस प्रकार दौड़ा मानो प्रलयकाल में पुच्छल तारा उठा हो। और उस जिन-मन्दिर के आँगन से वह राजाधिराज इस प्रकार ले जाया गया जैसे गरुड़ ने नाग को उठाकर फेंक दिया हो। शत्रु उसे उसरावती के समीप ले गया और जिसमें नीलमयूर नृत्य करते हैं, कालगिरि की ऐसी कालगुहा में, यम के अधिवास हरिवाहिणी देश में उसे फेंक दिया।

घत्ता—देवी के अनुकूल होने पर क्षयकाल से रहित वह स्वामी सेज पर बैठ गया और कालभुजंग ने उसकी पूजा की॥ ९॥

१०

उसरावती नगरी में हेमवर्मा था। उसके अनुचरों ने उसका कर्म उसे बताया कि जिस प्रकार वह सेज पर चढ़ा, नाक को चढ़ाया, नवाया और धूमकेतु निकल गया। जिस प्रकार राजा अन्यत्र ले जाया गया और जिस प्रकार उसे स्थापित कर दिया गया कि कोई नहीं जान सका। यह सुनकर उसरावती नगरी के राजा नौकरों, अनुचरों पर क्रुद्ध हुआ कि तुमने गलती क्यों की? तुमने उस आदर्श पुरुष की रक्षा क्यों न की? तुमने मेरे होते हुए उसके हर्ष को क्यों छीन लिया? तब वहाँ पर रतिसुख के लोभी बप्पिल साले ने क्रुद्ध होते हुए कहा कि चन्द्रपुर में अन्धकार के समूह से नीली रात में, मरघट में उस राजा को सूली पर चढ़ा दिया तथा तलवार की मोगरी से उसे आहत किया गया। लेकिन जो पुण्यादि थे वह विष द्वारा ग्रहण नहीं किया जा सकता, शूल, सब्बल से न भेदा जा सकता। वह मनुष्य से नहीं, राक्षस-कुल से खाया जा सकता है।

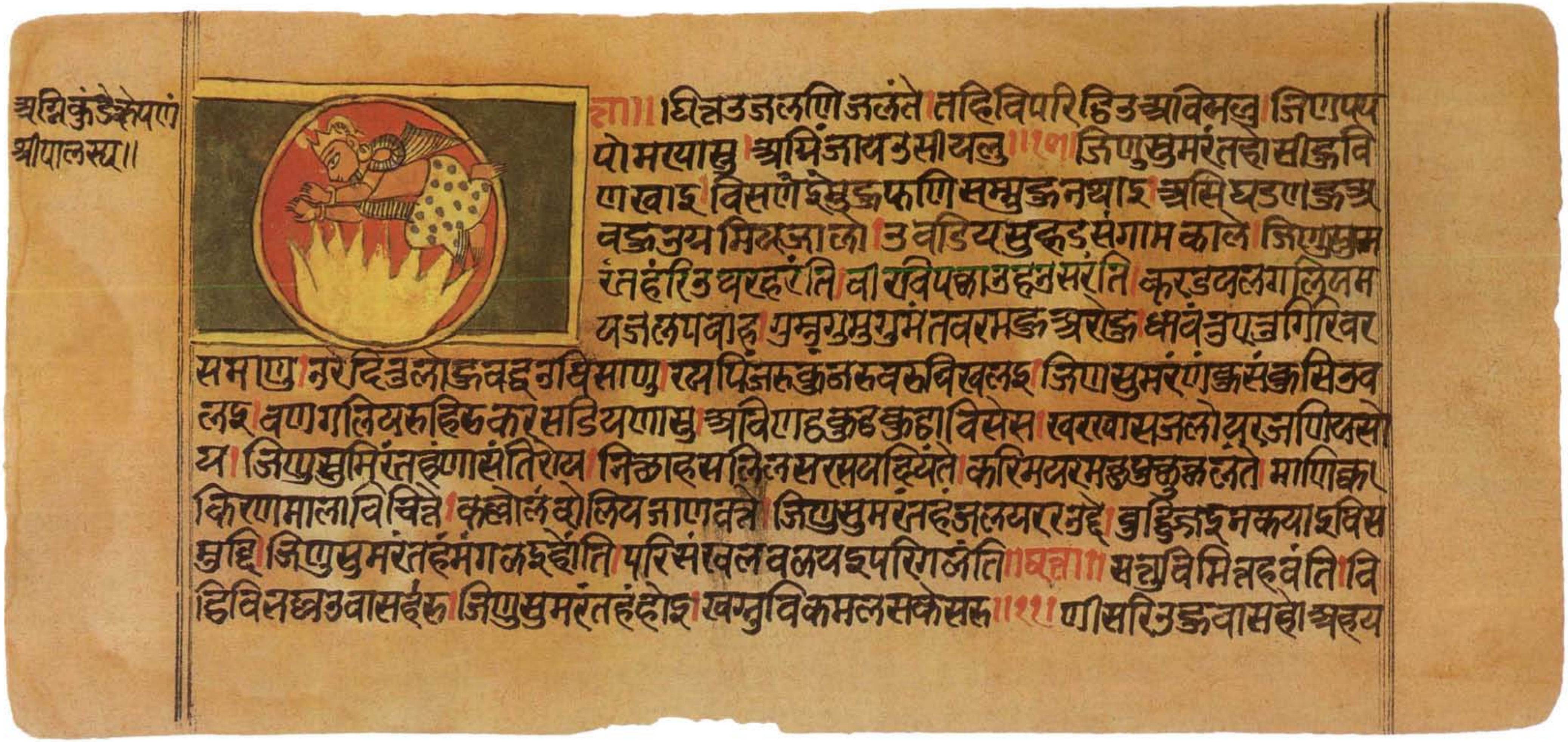

घत्ता—जलती आग में डाला वह भी उसी में अविकल स्थित रहा। जिनेन्द्र भगवान् के चरण-कमलों के लिए अग्नि भी ठण्डी हो गयी॥ १०॥

११

जिनेन्द्र भगवान् का स्मरण करनेवालों को सिंह नहीं खाता। विष से युक्त दोमुखी नाग भी उसके समक्ष नहीं ठहरता। जिसमें तलवारों के संघर्ष से उत्पन्न आग से ज्वालाएँ उत्पन्न हो रही हैं ऐसे सुभट संग्राम का क्षण आने पर भी 'जिन भगवान्' का स्मरण करनेवालों से शत्रु थर-थर काँपते हैं और धीर होते हुए भी पीछे हट जाते हैं। जिसके गण्डस्थल से मदजल की धारा बह रही है, चंचल भ्रमर-समूह गुनगुना रहा है, जो गिरिवर (हाथी) दौड़ता हुआ आता है, जिसके दाँत बँधे हुए (नियन्त्रित) हैं, जो हृदय पर आघात कर रहा है, ऐसा पराग से पीला गजवर भी जिनवर के स्मरणरूपी अंकुश से नियन्त्रित होकर लड़खड़ा उठता है और मुड़ जाता है। जिसमें घावों से रक्त बह रहा है, हाथ और नाक सड़ चुके हैं, ऐसा नष्ट नहीं होनेवाला कष्टकर बचा हुआ कुष्ठ रोग, क्षय, खाँसी और जलोदर के द्वारा शोक उत्पन्न करनेवाले रोग जिन-भगवान् का स्मरण करने से नष्ट हो जाते हैं। जिसमें अथाह पानी है, जिसमें स्वरों से दिगन्त आहत है, जिसमें गजों, मगरों और मत्स्यों की पूँछें उछल रही हैं, जो माणिक्यों की किरणमाला से विचित्र है, जिसकी लहरों से बड़े-बड़े यानपात्र विचलित हो उठते हैं, जो जलचरों से भयंकर हैं, ऐसे समुद्र में भी जिनवर का स्मरण करनेवाले कभी नहीं डूबते।

घत्ता—शत्रु भी मित्र हो जाते हैं। वर्षा भी अच्छी और दिन भी अच्छा रहता है। जिन का स्मरण करने से तलवार भी परागवाले कमल की तरह हो जाती है॥ ११॥

१२

वह राजा आग से अक्षत शरीर निकल आया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

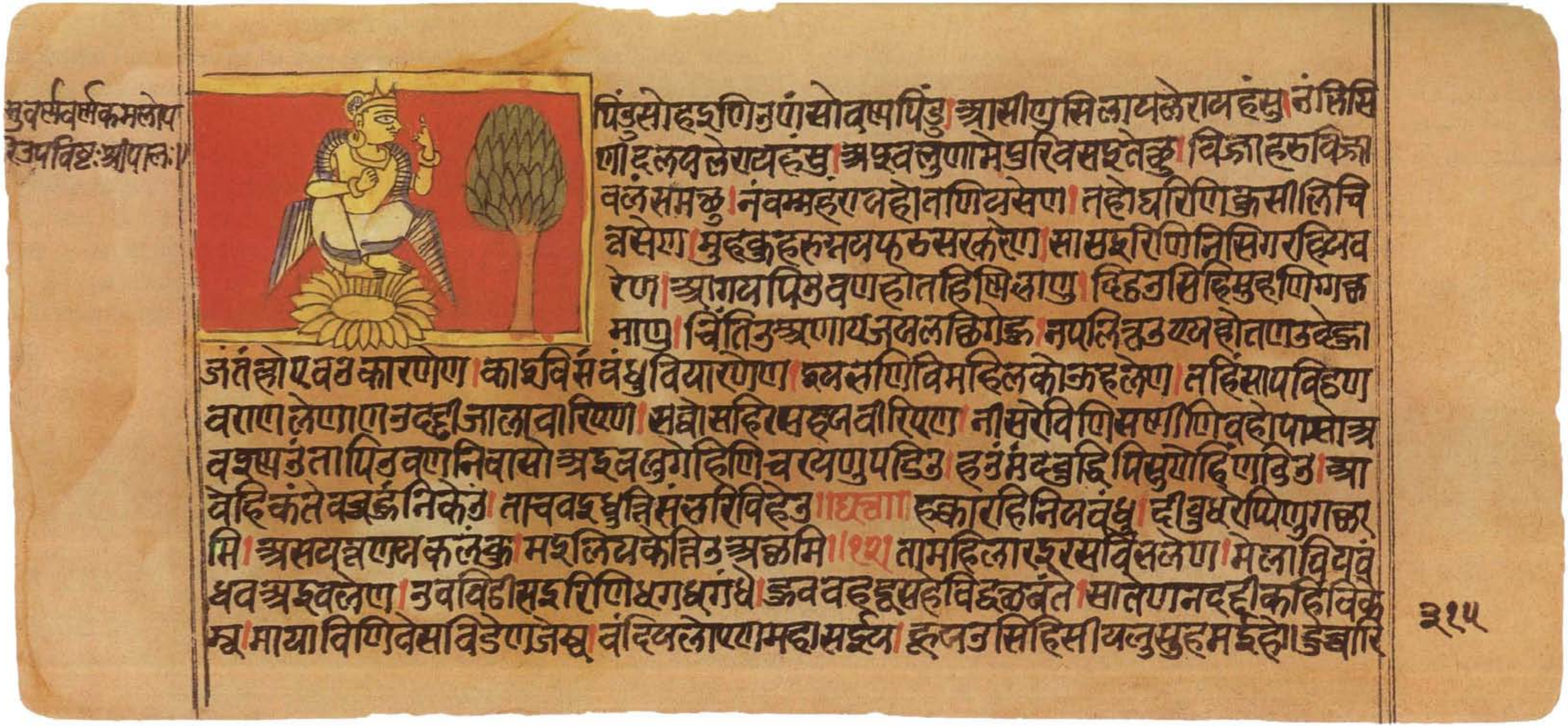

वह स्वर्णपिण्ड के समान शोभित है। वह राजहंस शिलातल पर बैठ गया मानो कमलिनी दल में राजहंस हो। उस नगरी में अतिबल नाम का विद्याधर रहता है जो विद्याबल से सामर्थ्यवाला है। उसकी चित्रसेना नाम की दुराचारिणी स्त्री ऐसी थी मानो कामदेव की सेना हो। जिसके मुखरूपी कुहर से कठोर अक्षर निकल रहे हैं ऐसे विद्याधर पति ने उस स्वेच्छाचारिणी पत्नी को रात में डाँटा। वह उस मरघट में आयी। उसने राजा श्रीपाल को आग के मुँह से निकलते देखा। उसने विचार किया कि विजयलक्ष्मी के घर इस राजा का शरीर आग में नहीं जला तो इसके लिए कोई कारण होना चाहिए। अथवा इस कारण का विचार करने से क्या ? यह विचारकर वह महिला कुतूहल से उस आग में घुस गयी। जिसकी सर्वौषधि से शक्ति आहत हो गयी है ऐसी ज्वालाओं को धारण करनेवाली उस विशाल आग से वह जली नहीं। वह निकलकर उस राजा श्रीपाल के पास आकर बैठ गयी। तब मरघट के निवास में विद्याधर अतिबल आया और अपनी पत्नी के चरणतल पर गिर पड़ा, और बोला कि मैं मूर्ख-बुद्धि दुष्टों द्वारा ठगा गया। हे प्रिय ! आओ, हम घर चलें। तब कारण का विचारकर वह धूर्त बोली –

घत्ता—अपने भाइयों को बुलाओ, मैं दीप धारण करके जाऊँगी। क्योंकि असतीत्व के मल से मैली मैं (बदनाम) होकर कब तक रहूँगी?॥ १२॥

१३

तब स्त्री प्रेम के रस से व्याकुल अतिबल विद्याधर ने भाइयों को एकत्रित किया। वह स्वेच्छाचारिणी अन्धकार को नष्ट करनेवाली धक-धक जलती हुई उस आग में प्रविष्ट हुई। उस आग में वह उसी प्रकार नहीं जली जिस प्रकार मूर्ख के द्वारा मायाविनी वेश्या दग्ध नहीं होती। लोगों ने उसकी बन्दना की। शुद्धमतिवाली इस महासती के लिए आग ठण्डी हो गयी।

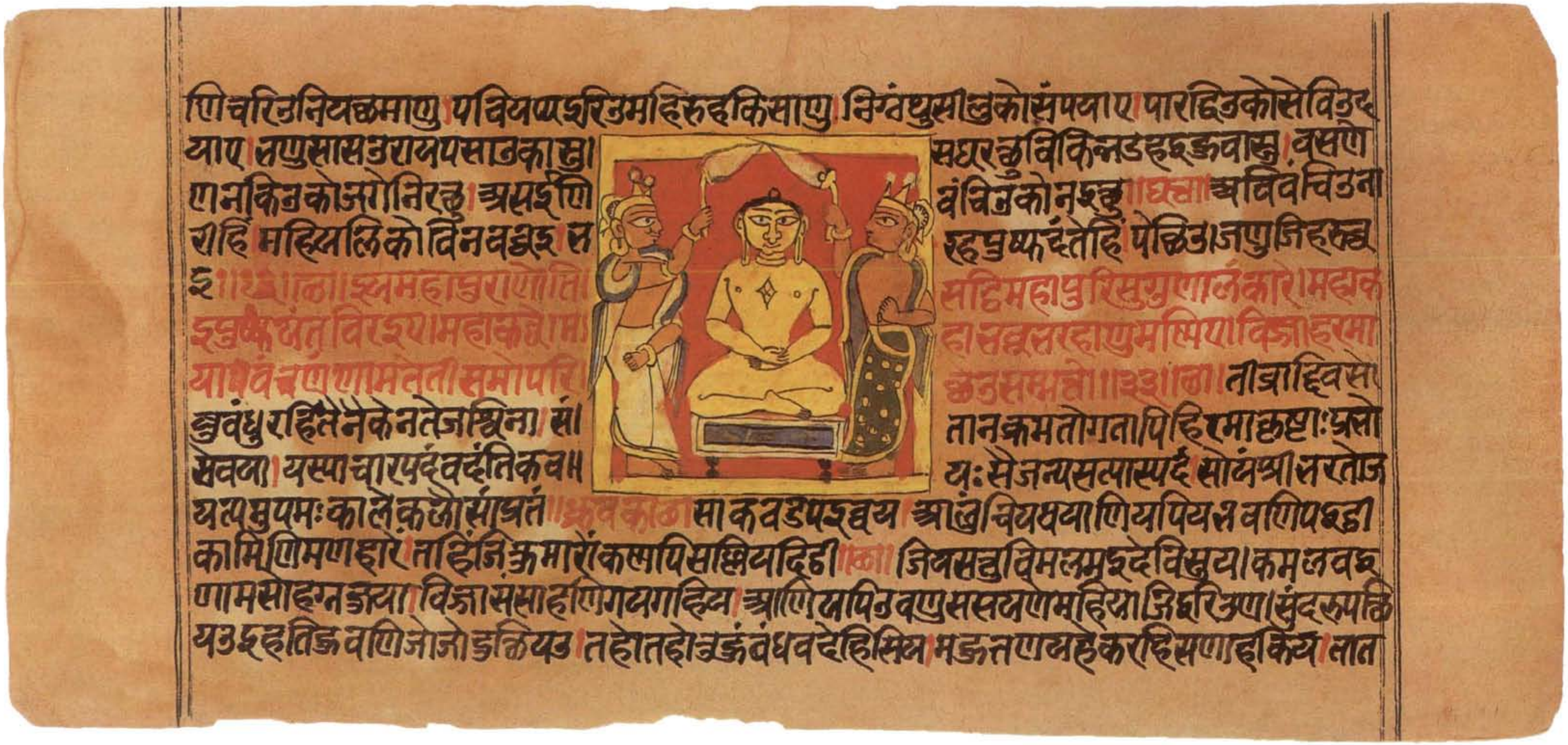

उस दुश्चारिणी के चरित्र को देखनेवाला वह कुमार जो कि शत्रुरूपी वृक्षों के लिए कृशानु (आग है), विचार करता है - गर्वहीन शील को कौन सम्पादित कर सकता है? कौन शिकारी दया से सेवित हो सकता है? बताओ कि राजा का प्रसाद हमेशा किसे मिलता है! घर की आग किसे नहीं जलाती है! व्यसन से संसार में कौन व्यर्थ नहीं हुआ! असतीजन से संसार में कौन वंचित नहीं हुआ!

घत्ता—इस धरती पर नारियों से वंचित नहीं होते हुए कोई नहीं बचा। भरत और पुष्पदन्त दोनों ने देखा कि लोगों को क्या अच्छा लगता है॥ १३॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत इस काव्य का विद्याधरीमाया-प्रवंचन नाम का तैंतीसवाँ अध्याय समाप्त हुआ॥ ३३॥

सन्धि ३४

नियमों का त्याग करनेवाली वह मायाविनी पतिव्रता अपने प्रिय के भवन में प्रविष्ट हुई। वहीं पर कामिनियों के लिए सुन्दर कुमार ने एक कन्या देखी, जिसे 'भूत' लगा हुआ था।

१

जितशत्रु और विमलावती देवी की कमलावती नाम की सौभाग्य से युक्त कन्या थी। विद्यासिद्धि करते समय वह 'भूत' से ग्रस्त हो गयी। अपनी बहनों में आदरणीय उसे मरघट ले आया। जितशत्रु ने सुन्दर कुमार से प्रार्थना की कि इस त्रिभुवन में जो-जो दु:स्थित है, पीड़ित है उसके लिए आप बन्धु हो। आप इतनी श्री दो और मेरी लड़की के स्वामी बनने की कृपा करो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तब कुमार ने मन्त्रों से वशीभूत पिशाची से ग्रस्त कन्या का पिशाच दूर कर दिया। दोनों ने अपना हृदय एक-दूसरे को दे दिया। अभिलाषा के साथ दोनों ने एक-दूसरे को देखा। ईर्ष्यावश कुमार से अप्रसन्न होकर सुखावती अपने घर चली गयी। राजा ने समझ लिया कि यह चक्रवर्ती है और उस विश्वपति को अपने घर ले आया।

घत्ता—लोगों में क्षोभ उत्पन्न करनेवाले मणि-हारों से उसकी पूजा कर राजा ने कन्याओं को अन्त:पुर में रख दिया। रूप की लोभी उन मुग्धाओं ने अपने-अपने मन में उसे प्रियरूप में स्थापित कर लिया॥ १॥

२

ससुर ने कहा कि हे चन्द्रमुख, तुम विवाह कर लो। उसने भी उसका वचन देखा, उसका मुख देखा और कहा कि मेरा हृदय बन्धु-वियोग से दु:खी है। हे ससुर ! इसलिए आप मुझे वहाँ ले जाइए जहाँ मेरा भाई वसुपाल रहता है। उससे मिलकर मैं देवता और मनुष्यों के नेत्रों तथा हृदय को चुरानेवाली इस सुन्दरी का हाथ पकड़ूँगा। यह सुनकर सज्जन मन जितशत्रु ने वारिसेन से कहा कि इस सुन्दर कुमार को लेकर तुम अनेक सुखों को करनेवाली पुण्डरीकिणी नगरी की ओर शीघ्र जाओ। तब उस सुभग को लेकर जिसमें ग्रह घूम रहे हैं, ऐसे आकाशपथ से वारिसेन ले गया। रात्रि में राजा का मुख प्यास से सूख गया। वह विमलपुर नगर की ऊँचाई पर पहुँचा। विद्याधर राजा पानी देखने चला, और जैसे ही उसने

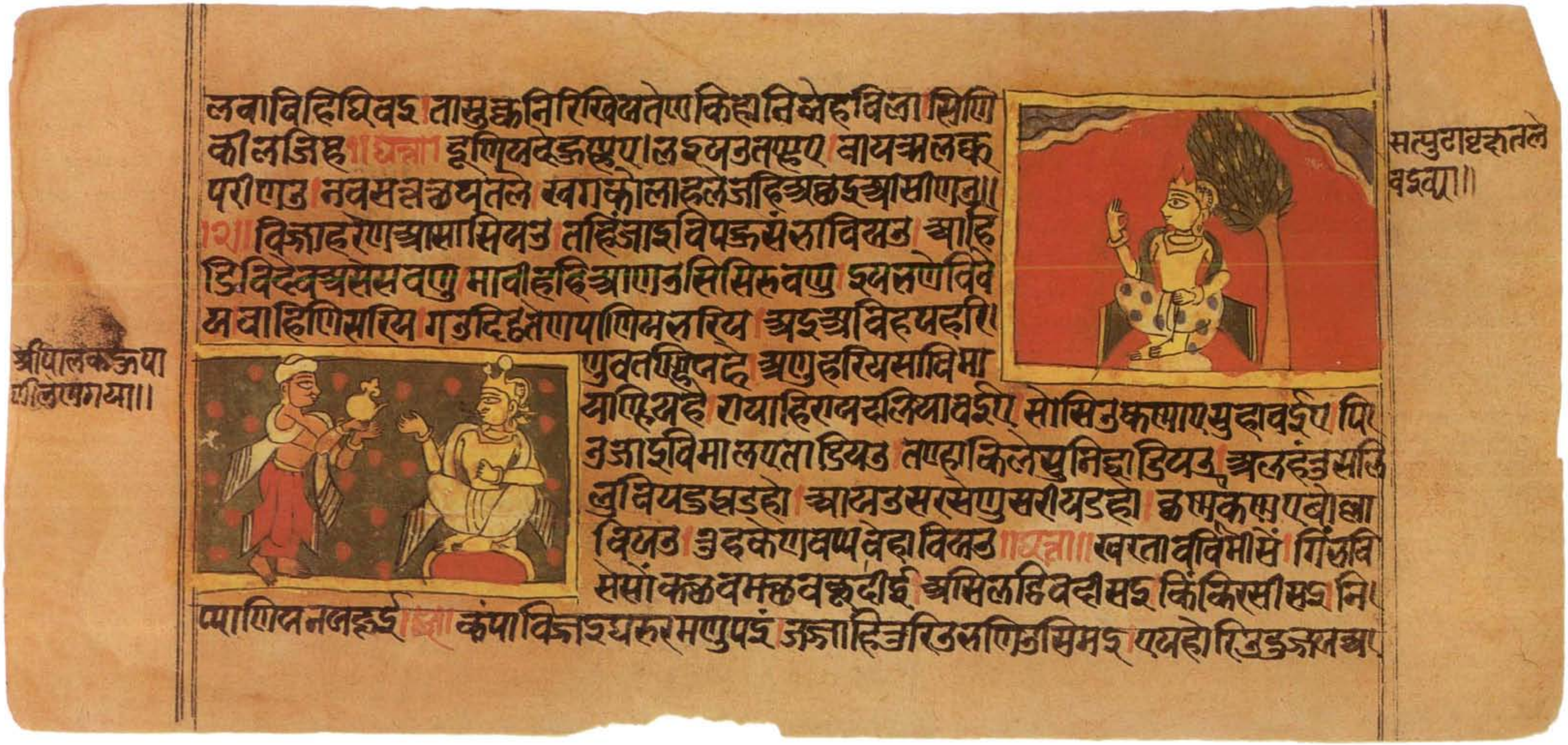

कमल वापिका पर दृष्टि डाली वैसे ही उसे (वापिका को) उसी प्रकार सूखा देखा जिस प्रकार कि विलासी वेश्या की स्नेहहीन क्रीड़ा हो।

घत्ता—असह्य शरीर की उष्णतावाली, प्यास से सन्तप्त तथा दौड़ने के आवेग से श्रान्त कुमार 'श्रीपाल' सप्तपर्णी के पत्तों के नीचे पक्षियों के कोलाहल के बीच जब बैठा हुआ था॥ २॥

३

वहाँ विद्याधर ने जाकर उसे आश्वासन दिया और कहा कि हे देव! तुम डरो मत, मैं शीतल जल लेकर आता हूँ। यह कहकर वह गया, और उसने वेग से बहनेवाली पानी से भरी हुई नदी देखी। लेकिन वह नदी भी, जिसने हरिणों के लिए अत्यन्त वितृष्णा उत्पन्न कर दी है, ऐसी मृगमरीचिका के समान दिखाई दी। राजाधिराज राजा श्रीपाल को आपत्तियों का दलन करनेवाली सुखावती कन्या ने उस नदी को सुखा दिया। उसने जाकर प्रिय को मालती की माला से ताड़ित किया और उसके प्यास की पीड़ा को नष्ट कर दिया। विकट और उद्भट नदी तट से पानी न पाकर वारिसेन लौट आया। तब प्रच्छन्न कन्या (सुखावती) बोली—तुम बेचारे किसके द्वारा प्रवंचित हुए हो?॥ ३॥

४

तुम अपने सुन्दर घर को किस प्रकार पा सकते हो, तुम फौरन चले जाओ मैंने कह दिया। इसका शत्रु यदि अजेय है, तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

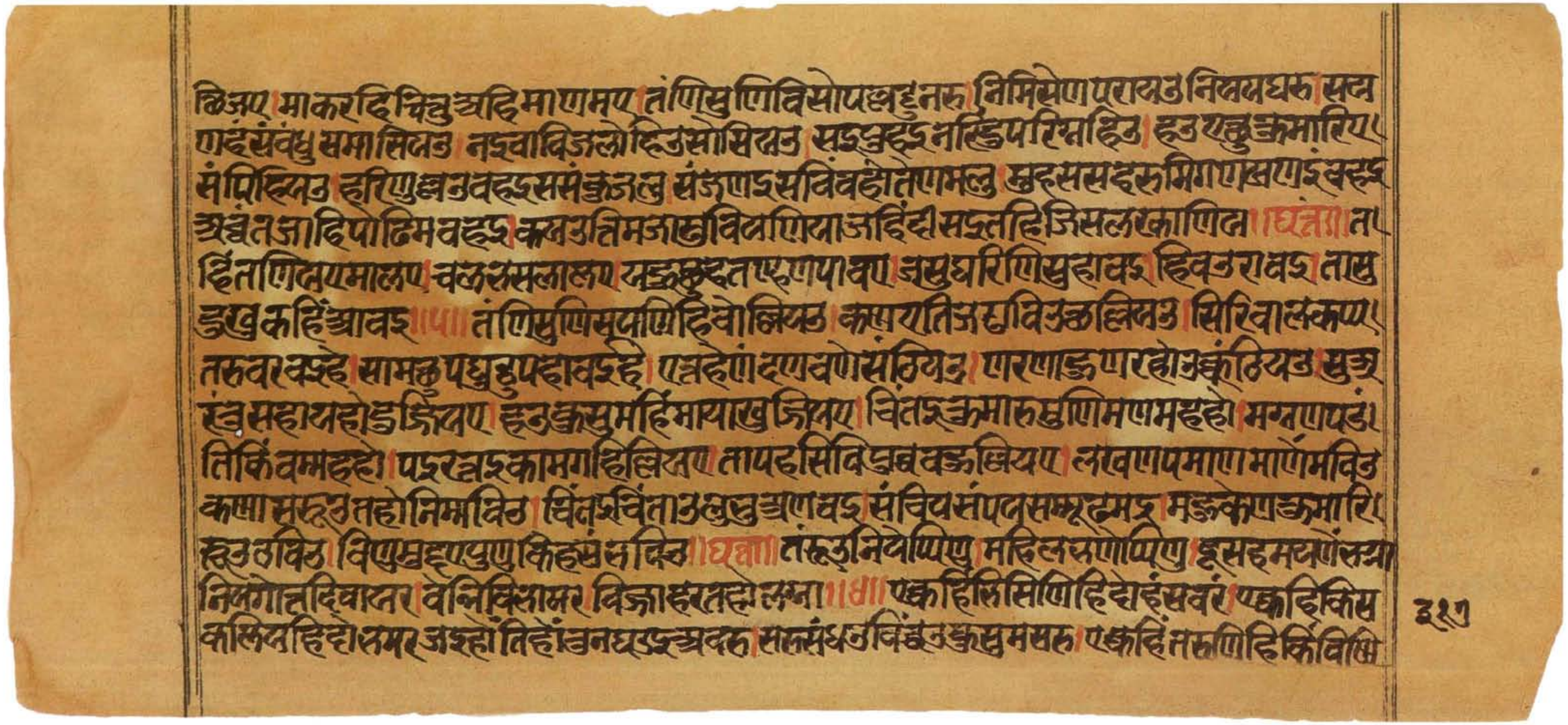

तुम व्यर्थ अपने चित्त में अभिमान-बुद्धि मत करो। यह सुनकर वारिसेन लौट पड़ा और पलमात्र में अपने घर आ गया। थोड़े में उसने अपने लोगों और बन्धुओं को बता दिया कि किस प्रकार बावड़ी और नदी का जलसमूह कुमारी ने सोख लिया और स्वयं पृथ्वीनरेश (श्रीपाल) को ग्रहण कर लिया है, और मुझे यहाँ भेज दिया है।

घत्ता—उसकी चंचल भ्रमरों से सुन्दर मालती से राजा को भूख और प्यास नहीं लगती। जिसकी गृहिणी सुखावती हृदय को रंजित करती हो उसे आपत्ति कहाँ से आ सकती है?॥४॥

५

यह सुनकर स्वजनों ने कहा कि इस लड़की ने तो तीन लोकों को उछाल दिया है। श्रीपालरूपी कल्पवृक्ष जिसका पति है, ऐसी सुखावती ने अपनी सामर्थ्य का डंका बजा दिया है। यहाँ पर नन्दनवन में स्थित वारिसेन के लिए राजा उत्कण्ठित हो उठा। सहायता का स्मरण करते हुए उसे उस दुर्जेय माया की कुब्जा ने फूलों से आहत कर दिया। वह कुमार अपने मन में सोचता है कि क्या मुनिमन का नाश करनेवाले कामदेव के ये तीर पड़ रहे हैं। पति में अनुरक्त पूर्व की वधू में अदृश्य रूप से युक्त उसका (श्रीपाल का) लक्षण और प्रमाण से युक्त कन्यास्वरूप बना दिया। जिसकी मति संचित संशय से मूढ़ है, ऐसा चिन्ताकुल वह भुवनपति अपने मन में सोचता है कि मेरा यह कन्या रूप किसने बना दिया? बिना अँगूठी के यह दुबारा कैसे सम्भव हुआ?

घत्ता—उसके उस रूप को देखकर और महिला समझकर, असह्य कामवेदना से नष्ट (भग्न) अपने-अपने गोत्रों के दिवाकर दोनों विद्याधर भाई उसके पीछे लग गये॥५॥

६

एक कमलिनी लेकिन उसके लिए दो-दो हंस, एक दुबली-पतली कली उसके लिए दो-दो भ्रमर यदि होते हैं तो यह होना घटित नहीं होता। केवल कामदेव वेधता है और सर-सन्धान करता है। क्या दो-दो आदमी एक तरुणी के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्तनों का अपने कोमल करतलों से आनन्द ले सकते हैं! यह विचारकर उन्होंने युद्ध प्रारम्भ किया। दोनों ने सज्जनता का नाश कर दिया। एक-दूसरे के ऊपर जिन्होंने अपने शस्त्र का प्रहार किया है ऐसे उन विद्याधरों के बीच में बड़ा भाई आकर स्थित हो गया और बोला कि दोनों ने प्रेम सम्बन्ध को भयंकर बना लिया इससे भाइयों की मित्रता विघटित होती है। फिर दूसरे नये लोगों का क्या होगा? यह कहकर उसने अपने हाथ में भयंकर तलवार उठाये हुए उन लोगों को मना किया। तब वह माया-कुमारी, जिसका उत्तुंग शिखर ऐसे अपने विजयार्ध पर्वतवाले घर पर उसे ले गयी। राग से उसने उसे सुन्दर समझा और तृण की सेज पर उसे निवास दिया।

घत्ता—युवजन के मन को चुरानेवाली उस कुमारी से कहा कि यह किसकी है और क्यों आयी है? तब पीन स्तनोंवाली उस विद्याधर स्त्री ने हँसकर यह बात निवेदित की॥ ६॥

७

हे स्वामिनी, यह अनेक गुणों से युक्त पुण्डरीकिणी नगरी के राजा की लड़की है। काम से लम्पट विद्याधर के द्वारा धरती में प्रसिद्ध भोली पण्डित यह मानविका कन्या यहाँ लायी गयी है। स्वच्छ और लाल आँखोंवाली हार-डोर से विभूषित शरीरवाली यह भाई और माता के वियोग से दुःखी होकर बोलती नहीं। तब यक्षदेव ने उसके बुढ़ापे को नष्ट कर दिया। ये चक्रवर्ती लक्ष्मी श्रीपाल और ये नौ कुमारियाँ हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुब्जा, विद्याधरी, सुखावती भी सुन्दर हो गयीं तब रतिप्रभा आदि नौ कन्याओं ने यह सुन्दर बात कही कि हजारों विलासों से युक्त अदीनों के भावों का निग्रह करनेवाले सुन्दर प्रिय को हे मानवीय, हमें दिखाइए। यह विचार कर सुन्दरी ने चन्द्रमा के समान मुखवाले तथा रूप में कामदेव के समान गम्भीर रागऋद्धि का उपभोग करनेवाले उस राजा को धीरे-धीरे दिव्य-चिन्तन और रूप के विभ्रम को नष्ट कर, उस पुण्डरीकिणी का राजा श्रीपाल बन्धुओं को दिखा दिया। उसे देखकर उनके मन में रति उत्पन्न हो गयी। कोई-कोई काम से पीड़ित होकर धरती पर गिर पड़ी, कोई निःश्वास लेती सखी द्वारा देखी गयी। कोई शुक्र के पतन से सखीजनों द्वारा लजायी गयी। किसी मूर्च्छित पर हिलते हुए चँवरों से हवा की गयी।

घत्ता—इस प्रकार कन्या के अन्तःपुर को देखते हुए काम ने वर को खोटे मार्ग पर स्थापित कर दिया। अनुचरों ने जाकर प्रणाम करते हुए नगर के राजा से जाकर कहा॥ ७॥

८

जो युवती बाला यहाँ रखी गयी है, जिसे उस कुब्जा ने हमें दिखाया है वह हंसगामिनी कन्या नहीं है। अपितु श्रीपाल नाम का राजा है। तब युद्ध की इच्छा रखनेवाले अनेक वीर और प्रबल विद्याधर कुमार दौड़े। अपनी तलवारों और कनक तोपों से दिशाओं को आलोकित करनेवाले तथा युद्ध का बहाना चाहते हुए वे भड़क उठे। लेकिन उस सुन्दर कुमार को देखकर वे वैसे ही शान्त हो गये जैसे जिन भगवान् को देखकर भव्य लोग शान्त हो जाते हैं। उस समय विद्याधर राजा आया और बड़े स्नेह से उसने जँवाई को देखा। उसने समझ लिया कि ये परमेश्वर चक्रवर्ती हैं, विद्याधर राजा सन्तुष्ट हो गया।

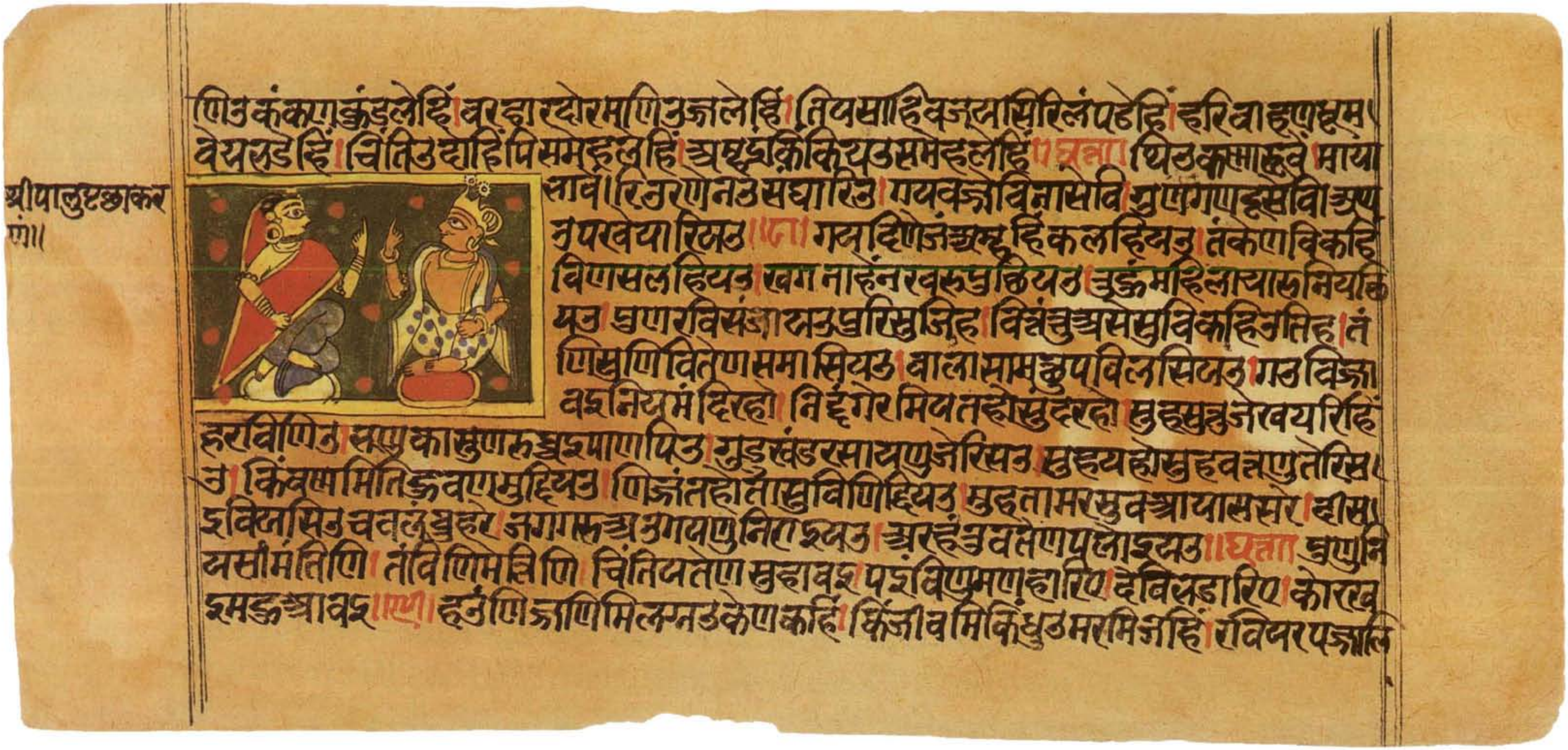

उसने कंगन-कुण्डल से सम्मान किया। बड़े-बड़े हार-डोर- मणियों से उज्ज्वल तथा देव-संग्राम की विजयश्री के लिए लम्पट तथा हरिवाहन तथा देव धूमवेग दोनों योद्धाओं ने विचार किया कि मेखला धारण करनेवाले तथा शान्त भाव की इच्छा रखनेवाले हम लोगों ने यह क्या किया!

घत्ता—कपटी मायावी कन्यारूप में युद्ध में स्थित शत्रु को भी हमने नहीं मारा। इसका नतीजा क्या हुआ? विद्या नष्ट होकर चली गयी और गुण-गण को दूषित कर हमने केवल अपने को नष्ट किया॥ ८॥

९

गत दिन हम लोगों ने जो कलह किया, उसकी कहीं भी किसी ने सराहना नहीं की। उस विद्याधर राजा ने नरवर से पूछा कि तुमको महिला रूप में देखा था, फिर तुम जिस तरह इस पुरुष रूप में हो गये वह समस्त वृत्तान्त कहिए। तब उसने संक्षेप में कहा कि यह सब इस कन्या की सामर्थ्य से घटित हुआ। विद्याधर राजा अपने घर गया। और उस कुमार के शरीर से नींद रमण करने लगी। सुख से सोते हुए उसे विद्याधरियाँ उड़ाकर ले गयीं। बताओ कि अपना प्रिय किसे अच्छा नहीं लगता! गुड़ और रसायन जैसे मीठे लगते हैं। ले जाते हुए मैं क्या वर्णन करूँ? त्रिभुवन को प्रसन्न करनेवाला वह उठ गया। चंचल मेघों को धारण करनेवाली आकाशरूपी नदी में उसका मुख खिले हुए रक्तकमल की तरह दिखता है। जग में श्रेष्ठ, महान् शोभित आकाश को उसने अनन्त भगवान् की तरह देखा।

घत्ता— फिर उसने तन्त्र-मन्त्रवाली अपनी स्त्री सुखावती का ध्यान किया। हे सुन्दरी! देवी आदरणीया!! तुम्हारे बिना इस आपत्ति में मेरी कौन रक्षा करता है?॥ ९॥

१०

मैं किसी के द्वारा कहीं ले जाया जा रहा हूँ। यहाँ मैं जीवित रहूँगा या मर जाऊँगा! यहाँ मैं यह नहीं कह सकता। तब जिसका मुकुट-मणि सूर्य से प्रज्वलित है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

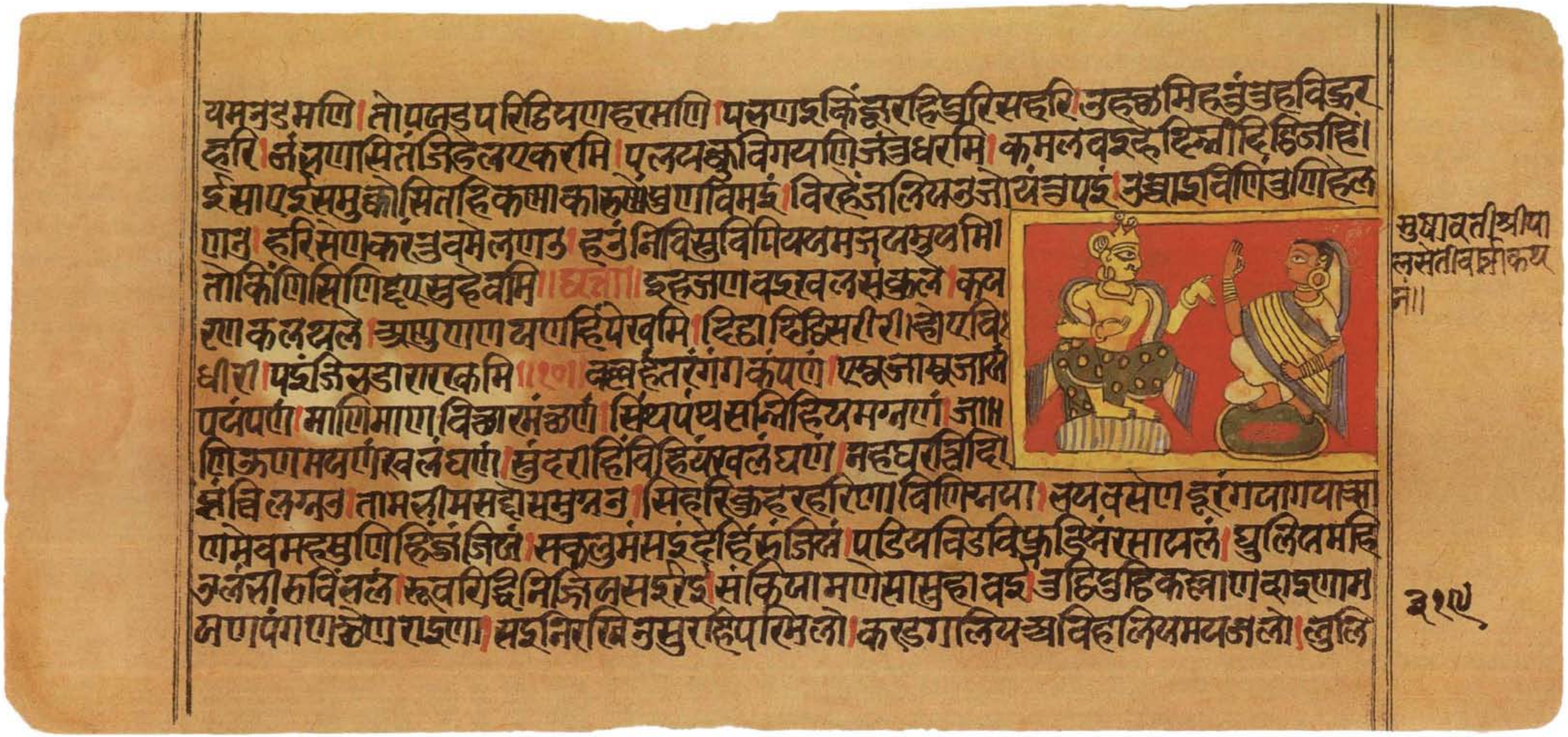

ऐसी विद्याधर स्त्री प्रकट हुई और बोली—हे पुरुषश्रेष्ठ, तुम्हारे कष्टों को दूर करनेवाली, तुम्हारी मैं यहाँ स्थित हूँ। तुम जो कहते हो उसे मैं अनायास कर देती हूँ। मैं आकाश में जाते हुए प्रलय के सूर्य को भी पकड़ सकती हूँ। कमलावती के लिए तुमने जब अपनी दृष्टि दी थी तब ही ईर्ष्या के कारण हे स्वामी ! कन्या की दया से तुम्हें विरह में जलते हुए देखकर अपने घर ले जाते हुए और हर्ष से मिलते हुए हे प्रियतम, तुम्हें यदि मैं एक पल के लिए भी छोड़ती हूँ तो क्या मैं रात को सुख से सो सकती हूँ!

घत्ता—दुष्टों से व्याप्त तथा जिसमें युद्ध के लिए कोलाहल किया जा रहा है ऐसे जनपद में, 'मैं' किसी दूसरे को अपनी आँखों से न देखूँगी और दृष्टि से अदृश्य शरीर होकर धैर्य धारण करते हुए मैं हे आदरणीय! तुम्हारी रक्षा करूँगी ॥ १० ॥

११

जब तक प्रिय के अन्तरंग अंग को कँपानेवाली यह बातचीत हुई तबतक जिसने अपनी प्रत्यंचा पर तीर चढ़ा लिये हैं तथा जो माननीय स्त्री के माननीय विस्तार को नष्ट करनेवाला है ऐसे दुष्ट मेघ को कामदेव जानकर सुन्दरियों ने आकाश का उल्लंघन कर लिया। इतने में नभ और धरती तथा दिशारूपी दिवालों को हिलानेवाला भयंकर शब्द उत्पन्न हुआ। गज पहाड़ की गुफा में रहनेवाले हरिणों के समान भय के कारण दूर चले गये। महामुनि ने अपना ध्यान केन्द्रित कर लिया। मृगेन्द्रों ने क्रोध के साथ गर्जना की। वृक्ष गिर पड़े। रसातल फूट गया और भय से विह्वल भूमितल हिल गया। तब अपनी रुचि ऋद्धि से इन्द्राणी को जीतनेवाली सुखावती को मन में शंका हुई। पुष्टि और कल्याण को देनेवाले आकाश के आँगन में स्थित राजा श्रीपाल ने स्वयं देखा। एक हाथी जो सुरभित गन्धवाला था, जिसकी सूँड से अविकलित मद की जलधारा बह रही थी,

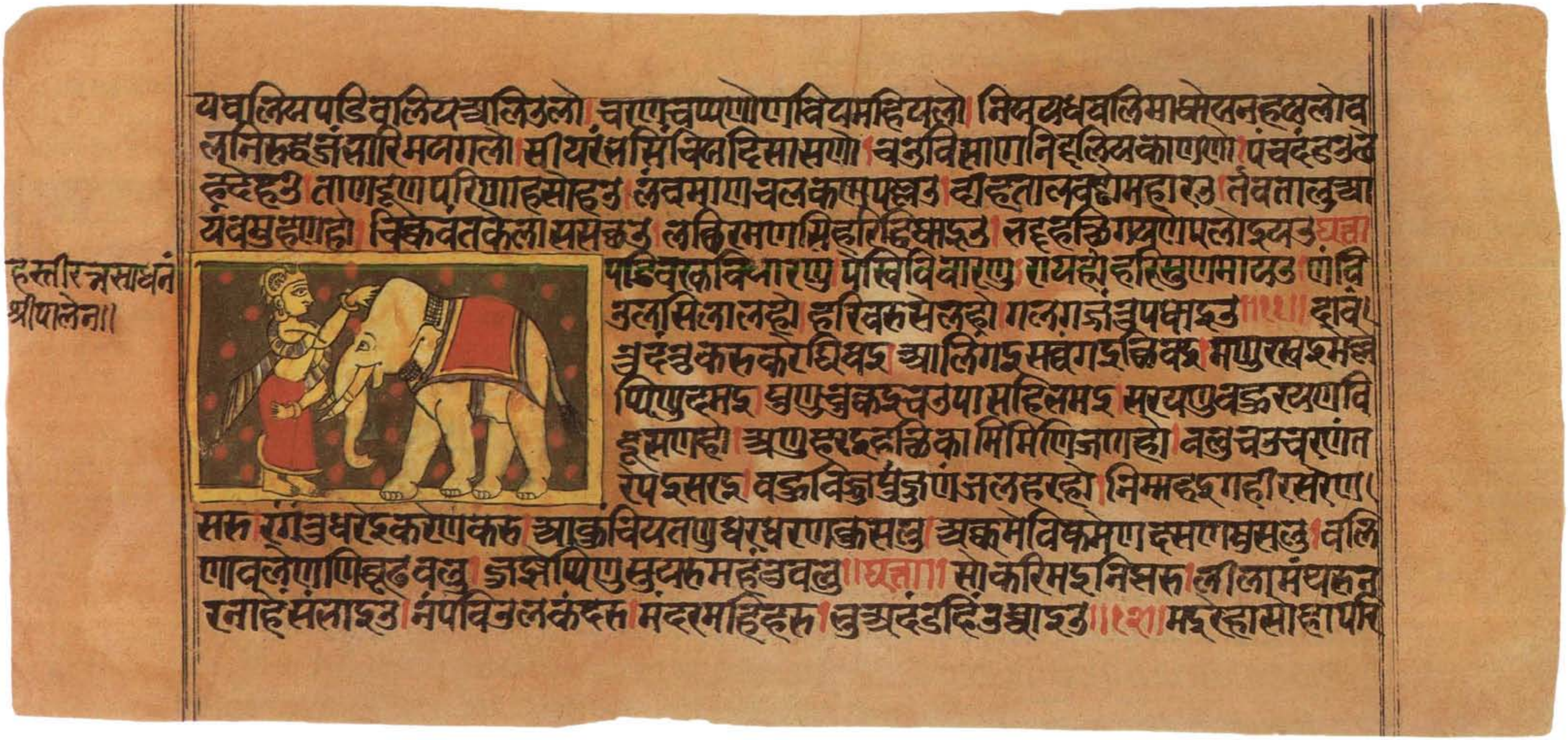

जिस पर चंचल भ्रमर समूह आ-जा रहा था, जो चरणों से चाँपनेवाला और धरती को झुकानेवाला था। जिसने अपनी धवलता से आकाश को धवलित कर दिया था। जिसने अपने बल से ऐरावत हाथी को क्रुद्ध कर दिया है, जो शीतल मदजल बिन्दु से दिशामुख को सींच रहा है, जिसने अपने चार दाँतों से जंगल को उजाड़ दिया है। जो पंचदन्त ऊँचे शरीरवाला है, रक्षकों से त्रस्त जो परिधान से शोभित है, जिसके लम्बे चंचल कान पल्लव के समान हैं, लम्बी पूँछवाला, महाशब्द करता हुआ, लाल तालुवाला, लाल-मुख, नखवाला, कैलास पर्वत की तरह चमकता हुआ स्वच्छ कान्तिवाला, लक्ष्मी से रमण करनेवाला श्रीपाल दौड़ा। उसने जंगल में भद्र नामक हाथी को देखा।

घत्ता—शत्रुपक्ष का नाश करनेवाले उस हाथी को देखकर राजा का मन हर्ष से फूला नहीं समाया। बड़ी-बड़ी चट्टानोंवाले पर्वत से गरजता हुआ वह राजा ऐसा दौड़ा, मानो गरजता हुआ सिंह दौड़ा॥ ११ ॥

१२

उसके दाँतों को दबाता हुआ वह हाथी पर अपना हाथ डालता है। उसके सब अंगों का आलिंगन करता और छूता है, शरीर की रक्षा करता है और फिर मिलने के लिए करता है, फिर पास पहुँचता है, चारों ओर घूमता है। श्वेत दाँतोंवाला वह हाथी अनेक रत्नों के आभूषणवाले कामिनीजन का अनुकरण करता है। वह चंचल श्रीपाल उसके चारों पैरों के नीचे से जाता है। हकलाता और हुंकारता है और निकल आता है, उसे लाँघता है, कुम्भस्थल पर बैठता है, पूँछ, सूँड और वक्षस्थल प्राप्त करता है। वह हाथी को दसों दिशाओं में घुमाता है। वह स्वामी ऐसा मालूम होता है, मानो मेघों में विद्युत्-पुंज हो। अपने गम्भीर स्वर से उसके भयंकर स्वर को पराजित करता और क्रीड़ा करता हुआ उसकी सूँड को अपने हाथ से पकड़ लेता है। जिसका शरीर आकुंचित है ऐसा प्रवंचना में कुशल वह क्रम से उसके दाँतोंरूपी मूसल का अतिक्रमण कर बलवान् बल का निर्वाह करनेवाले महाबलशाली उससे खूब समय तक लड़कर—

घत्ता—गजमद से परिपूर्ण, लीला से मन्थर उस हाथी को राजा श्रीपाल ने प्रसन्न कर लिया। मानो प्रबल गुफाओंवाले मन्दराचल पहाड़ को उसने अपने बाहुदण्ड से उठा लिया हो॥ १२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

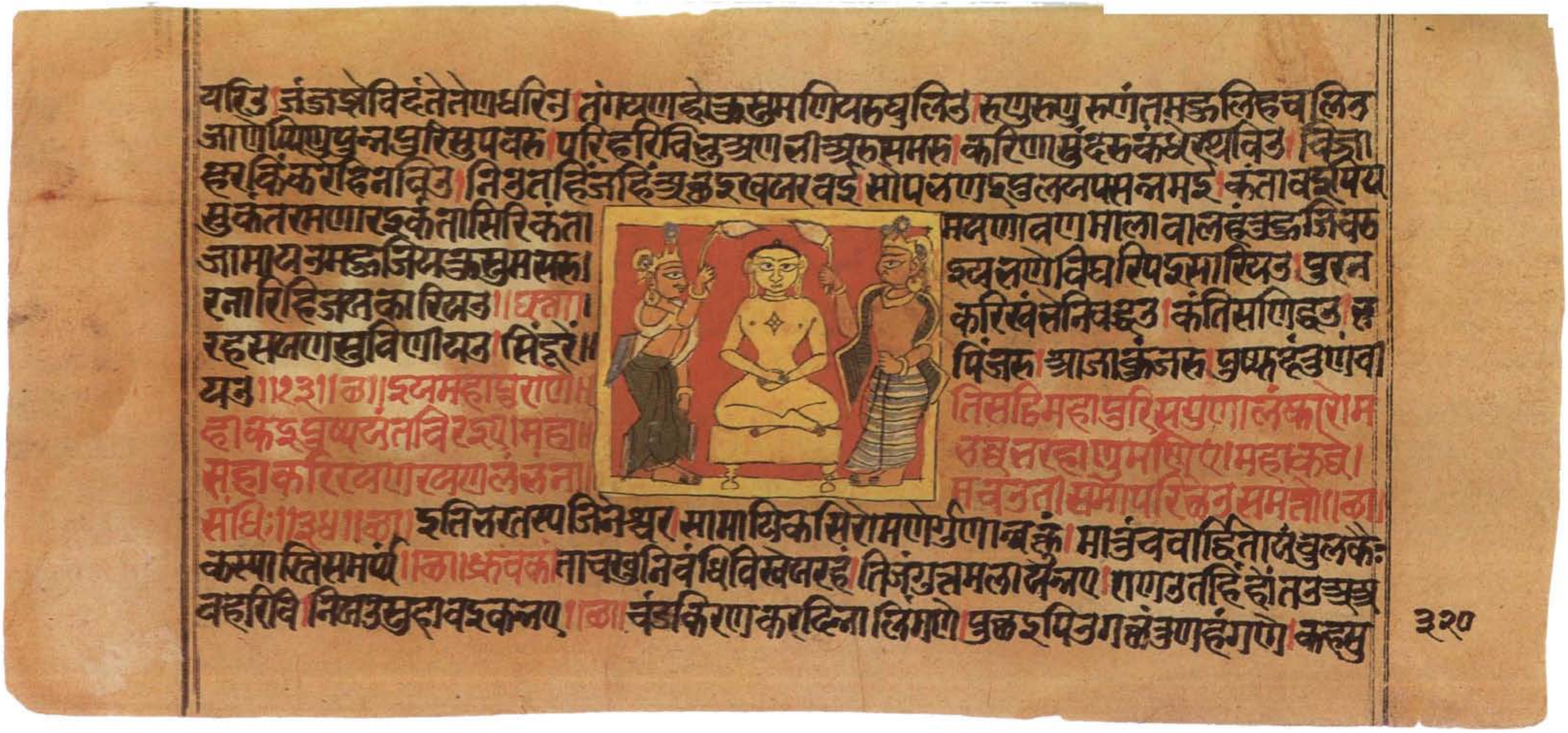

१३

मदरेखा की शोभा से परिपूर्ण उस हाथी को जब राजा श्रीपाल ने युद्ध करके पकड़ लिया तो आकाश से जिसमें चंचल भँवरे गुनगुना रहे हैं, ऐसा सुमन समूह गिरा। उसे प्रबल उच्च पुरुष जानकर तथा विश्व-भयंकर युद्ध को छोड़कर उस हाथी ने उसे अपने सुन्दर कन्धे पर चढ़ा लिया। और विद्याधर के अनुचरों ने उसे नमस्कार किया और वे उसे वहाँ ले गये जहाँ विद्याधर रहता था। रोमांच से प्रसन्न बुद्धिवाले उस विद्याधर राजा ने कहा कि अपने प्रिय पति से रमण करनेवाली कान्तावती की प्रिय मेरी रतिकान्ता, श्रीकान्ता, मदनावती, वनमाला कन्याएँ हैं। तुम उनके वर हो और कामदेव को जीतनेवाले मेरे दामाद।

घत्ता—कान्ति से स्निग्ध वह महागज खम्भे से बाँध दिया गया। भरत और स्वजनों के लिए विनीत सिन्दूर से पीला, फूलों के समान दाँतोंवाला वह गज मानो दूसरा दिग्गज हो॥ १३॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणों और अलंकारों से युक्त इस महपुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य में महाकरिरत्नलाभ नाम का चौंतीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥ ३४॥

सन्धि ३५

तब विद्याधरों की आँखों को अवरुद्ध कर तीनों लोकों में श्रेष्ठ सौन्दर्यवाली वह सुखावती कन्या वहाँ से ले गयी।

१

जिसमें सूर्य की किरणों से आलिंगन किया है ऐसे आकाश के आँगन में जाता हुआ प्रिय पूछता है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

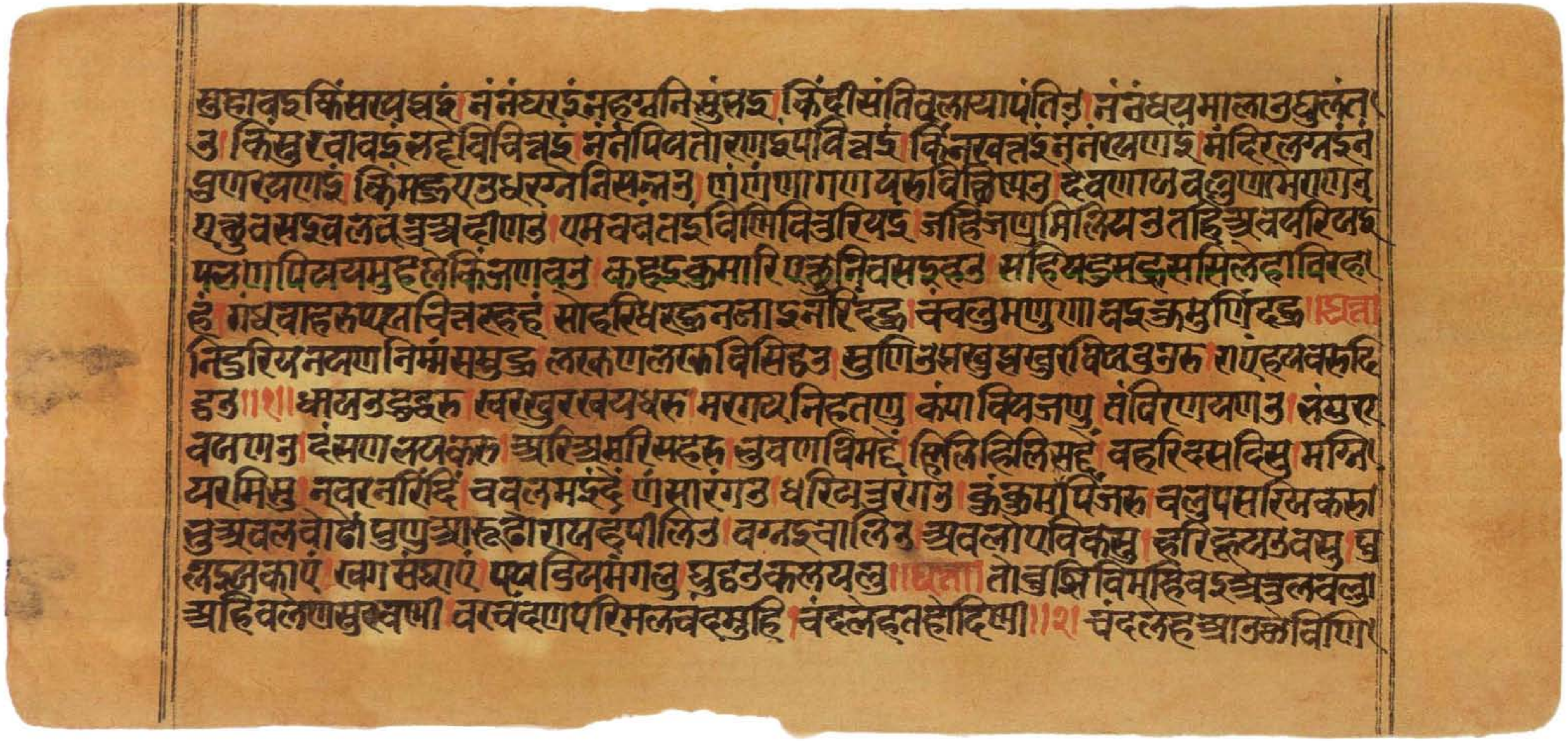

कि हे सुखावती, बताओ कि क्या आकाश में ये शरद् के बादल हैं? वह कहती है—नहीं-नहीं, ये आकाश को छूनेवाले घर हैं। क्या ये आती हुई बलाकाएँ दिखाई देती हैं? नहीं-नहीं ये हिलती हुई ध्वज-मालाएँ हैं। हे कल्याणी, क्या ये रंग-बिरंगे इन्द्रधनुष हैं ? नहीं-नहीं, प्रिय, ये पवित्र तोरण हैं। क्या ये नक्षत्र हैं ? नहीं-नहीं ये रत्न हैं, या नगर की आँखें मन्दिर पर लगी हुई हैं। क्या ये धरती के अग्रभाग पर आकाश स्थित है? नहीं-नहीं, यह नागनगर फैला हुआ है। हे देव ! यह नागबल नाम का राजा है। बलवान् और अदीन इस नगर में रहता है। इस तरह बात-चीत करते वे दोनों वहाँ उतरे जहाँ लोगों का मेला लगा हुआ था। प्रियतम पूछता है—क्या यह कोई जनपद है? कुमारी कहती है—यहाँ पर हय (घोड़ा) निवास करता है। जिन्होंने शशिलेखा का असह्य विरह-दु:ख सहन किया है, ऐसे गन्धवाह रूप्यक और चित्ररथ का वह अश्व राजा से पकड़ा नहीं जा सकता, उसी प्रकार जिस प्रकार कुमुनि अपना चंचल मन नहीं पकड़ पाते।

घत्ता—डरावने नेत्रों और बिना मसोंवाला लाखों लक्षणों से विशिष्ट और लोहों के नाल से रचित खुरोंवाला विशाल वक्ष का वह घोड़ा राजा श्रीपाल ने देखा॥ १॥

२

तीखे खुरों से धरती खोदनेवाला, मरकत के समान शरीरवाला, लोगों को कँपानेवाला, लाल-लाल नेत्रोंवाला, टेढ़े मुखवाला, दाँतों से भयंकर, शत्रु के क्रोध को चूर करनेवाला वह घोड़ा दौड़ा। विश्व का मर्दन करनेवाले कुमार ने लिहि-लिहि शब्द के द्वारा दसों दिशाओं को बहरा बनानेवाले और युद्ध का बहाना खोजनेवाले उस घोड़े को उसी प्रकार पकड़ लिया जैसे सिंह हरिण को पकड़ लेता है। और फिर अपना केशर से पीला चंचल हाथ फैलाकर फिर उस पर बैठा हुआ अपने बाहुबल से प्रबुद्ध राजा ने उसे प्रेरित किया। राजा के द्वारा लगाम से चालित कोड़ा देखकर वह घोड़ा वश में हो गया। पुलकित शरीर विद्याधर-समूह ने मंगल शब्द को प्रकट करनेवाला कल-कल शब्द किया।

घत्ता—तब राजा अहिबल ने उसे अतुल बलशाली राजा समझकर देवताओं के रंग की तथा सुन्दर चन्दन से सुभाषित अपनी चन्द्रलेखा नाम की कन्या उसे दे दी॥ २॥

३

चन्द्रलेखा से पूछकर वह चल दिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुखावती के द्वारा ले जाया गया वह पल-भर में वहाँ गया जहाँ वह सीमान्त महीधर था, जिसके कटिबन्ध पर बड़े-बड़े कल्पवृक्ष लगे हुए थे। स्वर्ण के रंगवाले वे दोनों जब लताकुंज में बैठे हुए थे तब दो विद्याधर अपने हाथ में तलवार लिये हुए आये मानो आकाश में सूर्य और चन्द्रमा उग आये हों। तब विनय का प्रयोग करते हुए कुबेरश्री के पुत्र श्रीपाल ने मधुर बाणी में उनसे पूछा—आप दोनों सुन्दर कान्तिवाले दिखाई देते हैं। बताइए आप किस कारण, किसके लिए आये हैं? उन्होंने कहा कि अपना नगर छोड़कर चरण-कमलों से आकाश मण्डित करते हुए हम लोग आपको खोजने तथा द्वय बुद्धि और पौरुष की परीक्षा करने आये हैं। लो-लो यह तलवार और इसे नमस्कार करो। यदि तुम पत्थर के इस खम्भे को तोड़ देते हो तो तुम विद्याधरों और मनुष्यों के ईश्वर चक्रवर्ती समाट् होवोगे।

घत्ता—यह सुनकर तलवार अपने हाथ में लेकर कुमार ने खम्भे पर आघात किया। उसकी तलवाररूपी जलधारा से वह पत्थर भी दो टुकड़े हो गया॥ ३॥

४

वे दोनों विद्याधर—तुम्हीं विजयश्री का वरण करनेवाले चक्रवर्ती हो, इस प्रकार अभिनन्दन कर चले गये। सुखावती के मन्त्र से आराधना कर,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

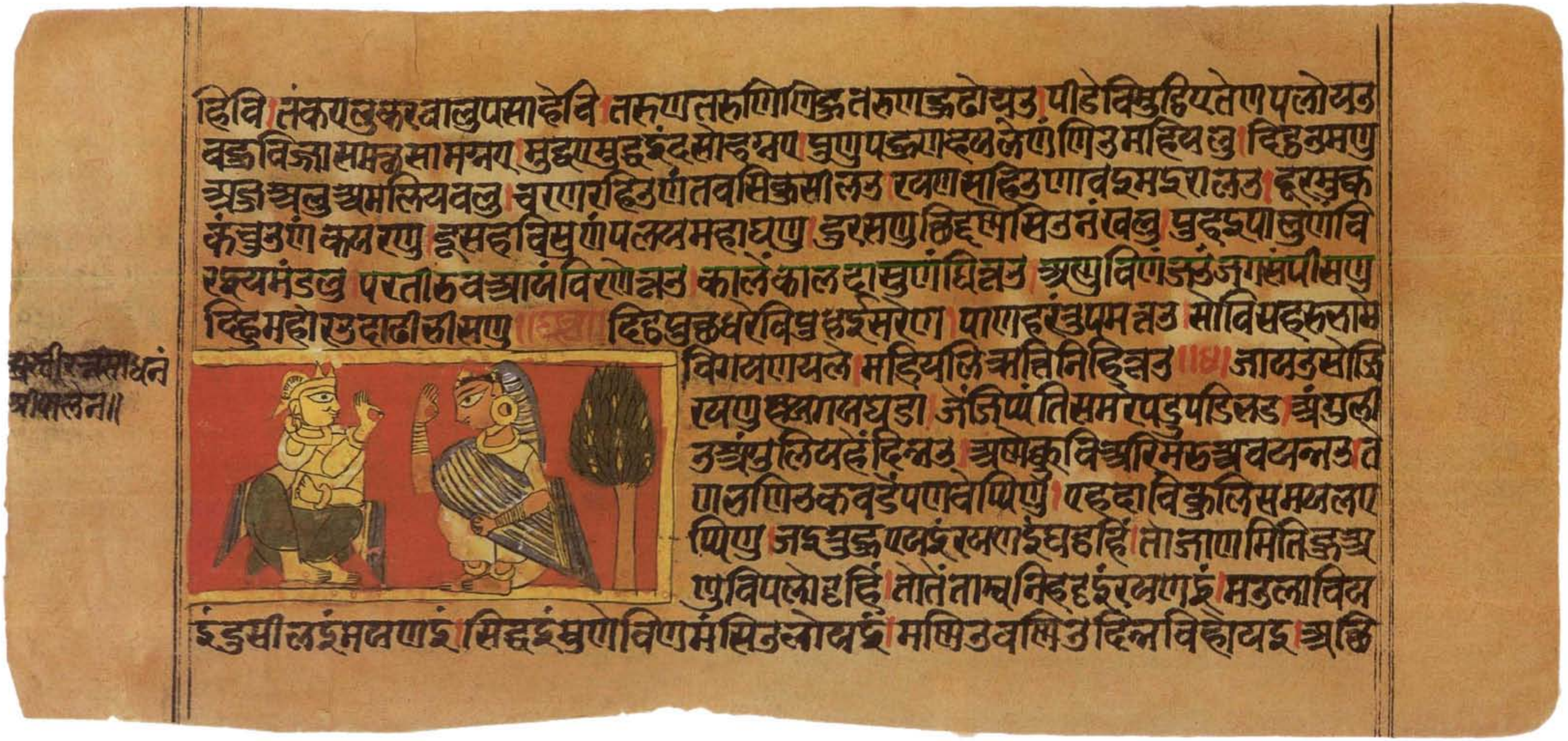

उस भयंकर तलवार को सिद्ध कर, कुमार के लिए जो तरुण सूर्य के समान उपहार में दी गयी उस तलवार को उसने अपनी मुट्ठी से दबाकर देखा। अनेक विद्याओं की सामर्थ्य से सम्पूर्ण, मुग्धजनों के लिए सौभाग्यस्वरूप मुग्धा सुखावती फिर नभतल से ले गयी। फिर उसने धरती-तल और अमलिन बलवाला एक युगल पुरुष देखा। जो पैरों से रहित कुशल तपस्वी की तरह था। जैसे रत्नों से रहित समुद्र हो। मानो जिसने अपना कवच छोड़ दिया है, ऐसा युद्ध करनेवाला योद्धा हो। मानो असह्य विषवाला प्रलयित महाघन हो, मानो दूसरों के दोष देखनेवाला दो जिह्वावाला दुष्ट हो, मानो जिसने मण्डल की रचना की हो ऐसा राजा हो। जो शत्रु के तीर की तरह लाल-लाल नेत्रवाला है, जो मानो काल के द्वारा कालपाश की तरह फेंका गया है, जो मानो दूसरा यम है, इस संसार को निगलने के लिए ऐसा दहाड़ों से भयंकर महानाग उसने देखा।

घत्ता—उस पृथ्वीश्वर ने प्राण हरनेवाले उस साँप को उसकी मजबूत पूँछ पकड़कर आकाशतल में घुमाकर शीघ्र ही पृथ्वीतल पर पटक दिया॥ ४॥

५

वही सर्प असु और गजघण्टारूपी रत्न हो गया जिससे युद्ध में चतुर शत्रु-योद्धा जीते जाते हैं। अँगुली में अँगूठी पहना दी गयी। एक और शत्रु पुरुष वहाँ अवतीर्ण हुआ। उसने कपट से प्रणाम कर कहा कि यदि आप इस वज्रमय मुद्रा को लेकर इन रत्नों को नष्ट कर दो तो मैं समझूँगा कि तुम त्रिभुवन को उलट-पुलट सकते हो, तब उसने उन रत्नों को नष्ट कर दिया। उससे दुर्जनों के नेत्र बन्द हो गये। लोगों ने 'सिद्ध हुए' कहकर नमस्कार किया। और जिन्हें ऐश्वर्य-धन दिया गया है ऐसे उन लोगों ने उसे माना और उसकी प्रशंसा की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हजारों अंधे लोग आँखों से देखने लगे, बहरे का बहरापन दूर हुआ, गूँगे लोग सुन्दर आलाप में बोलने लगे, मृत व्यक्ति श्रीपाल के प्रताप से जीवित हो उठा।

घत्ता—उसके गुणगान को देखकर श्रीपुर के स्वामी राजा श्रीशयन ने हर्षित होकर कमल के समान नेत्रों और हाथोंवाली अपनी वीतशोका नाम की लड़की उसे दे दी॥५॥

६

विजयनगर में यशरूपी कोंपल का अंकुर यशकीर्ति अंकुर, वरकीर्ति राजा ने कीर्तिमती कन्या और धान्यपुर के धनादित राजा ने अनुराग से विमलसेना कन्या उपहार में दी। उसे राजनीतिविज्ञान में परिपक्व मति पुरोहित के साथ सेनापित और गृहपति भी प्राप्त हुए। सुखावती फिर भी पति को ले चली। उसने आकाश में फिर धूममेघ को देखा। दस सिरोंवाला ईर्ष्या की ज्वाला उत्पन्न करता हुआ, बीस हाथ और बीस आँखवाला, विष और तमाल की तरह काला, भौंह की वक्रता से युक्त भालवाला, कानों को कटु लगनेवाले वचनों को बोलते हुए उस स्त्री ने श्रीपाल और सुखावती को तिनके के समान समझते हुए युद्ध के लिए ललकारा और कहा कि हे रसावति ! तू श्रीपाल को छोड़-छोड़। मेरे सामने धनुष धारण मत कर। हे हताश, तू यम के शासन से भी नहीं बच सकती।

घत्ता—जिसके हृदय में योद्धा का अहंकार नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

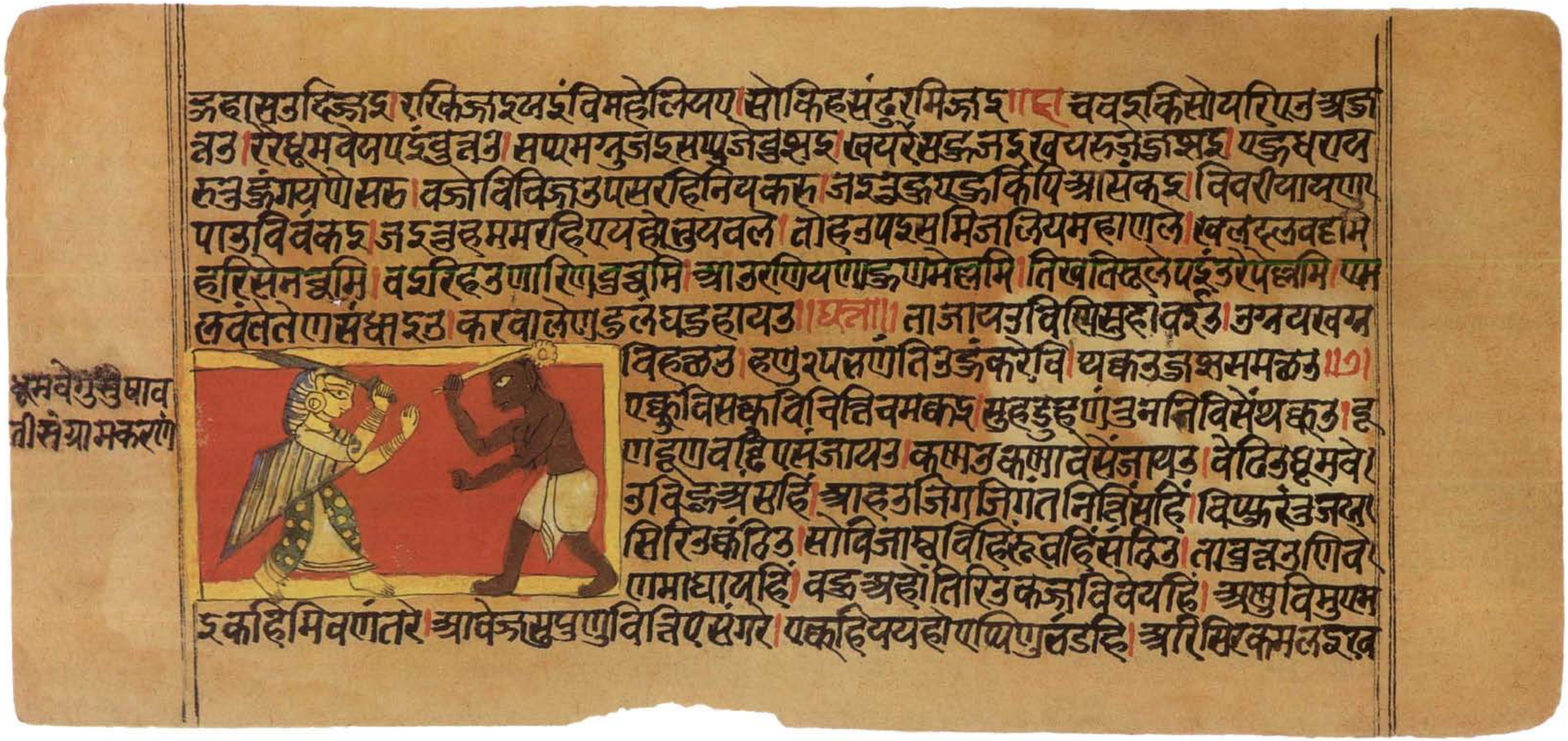

मुझे हँसी आती है कि वह तुम महिला द्वारा रखा जाता है! वह तुम्हारे द्वारा कैसे रमण किया जायेगा?॥ ६ ॥

७

वह कृशोदरी सुखावती कहती है कि हे धूमवेग ! जो तुमने कहा वह ठीक नहीं है। साँप की मार को साँप ही जानता है। यदि विद्याधर के साथ विद्याधर लड़ता है तो यह ठीक है। यह धरती का निवासी है और तुम आकाशचारी। इसलिए विद्या छोड़कर तुम अपना हाथ फैलाओ। यदि यह तुझसे कुछ भी आशंका करता है, और उलटा मुँह करके थोड़ा भी काँपता है, यदि तुम इसके भुजबल से नहीं मरते तो मैं जलती आग में प्रवेश कर जाऊँगी। हे दुष्ट, तुझे चकनाचूर कर मैं हर्ष से नाचूँगी। मैं कहती हूँ कि (मैं) शत्रुओं को मारनेवाली हूँ। आओ-आओ मैं अपने स्वामी को नहीं छोड़ती। तीखे त्रिशूल से तुम्हारे छाती को शरीर को छेद दूँगी। ऐसा कहकर धूमवेग ने आक्रमण किया और तलवार से अलंघ्य दो टुकड़े कर दिये।

घत्ता—तब जिनके हाथ में उठी हुई तलवार है ऐसी सुखावती दो हो गयी। और मारो-मारो कहती हुई युद्ध में समर्थ वह स्थित हो गयी॥ ७॥

८

उसे देखकर सूर्य और इन्द्र भी अपने मन में चौंक गये। वह सुभट भी मारता हुआ एक पल के लिए नहीं तकता। वह कन्या भी दूनी-दूनी बढ़ती गयी। कन्यारूप में उत्पन्न उस युद्ध में चमकती हुई तलवारों से धूमवेग चारों ओर से घिर गया। तब विजयश्री के लिए उत्कण्ठित, फड़कता हुआ, वह भी जब दो रूपों में स्थित हो गया तो राजा श्रीपाल ने कहा कि तुम आक्रमण मत करो। बहुत से शत्रु पैदा हो जायेंगे। अपने काम का विचार करो। किसी वनान्तर में मुझे छोड़ दो, युद्ध जीतने पर फिर आ जाना। एक हृदय होकर तुम लड़ो। और शत्रु के सिर-कमलों को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

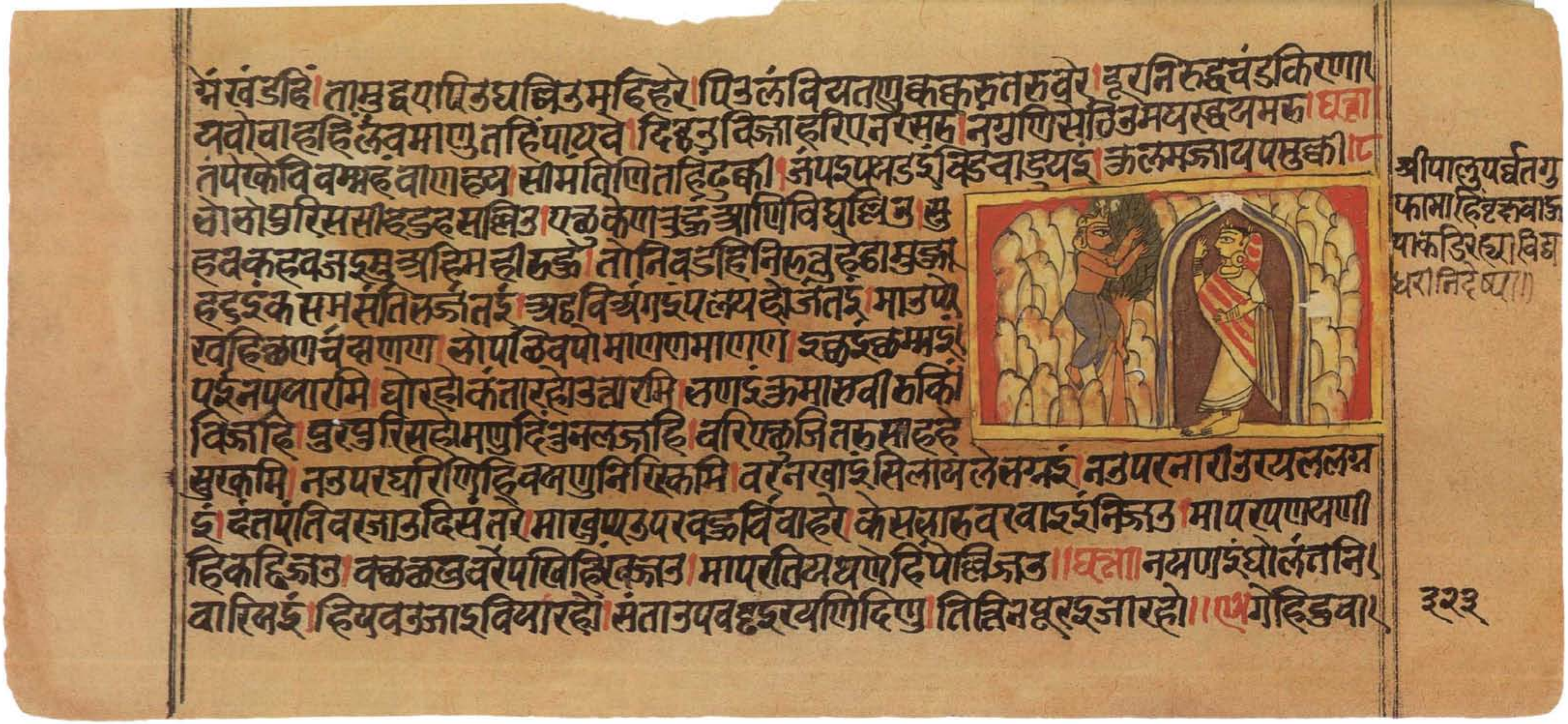

तलवार से खण्डित करो। तब उस मुग्धा ने प्रिय को पहाड़ पर रख दिया। वह भी ककर वृक्ष के नीचे अपना शरीर लम्बा करके लेट गया। जिसमें दूर से सूर्य के प्रताप को रोक दिया गया है उस वृक्ष के नीचे हाथों से लम्बे होते हुए राजा श्रीपाल को उस विद्याधरी ने देखा। मानो कामदेव ने अपनी प्रत्यंचा का सन्धान कर लिया हो।

घत्ता—यह देखकर कामदेव के बाणों से आहत एक सीमन्तिनी यहाँ पहुँची। कुल-मर्यादा से मुक्त वह स्पष्ट चापलूसी के शब्दों में बोली— ॥ ८ ॥

९

हे पुरुष श्रेष्ठ ! दु:ख से प्रेरित तुम्हें यहाँ किसने लाकर डाल दिया? हे सुन्दर ! और इसी तरह वृक्ष से तुम छोड़ दिये जाओ तो तुम नीचा मुँह किये हुए निश्चय ही गिर पड़ोगे। कसमसाती तुम्हारी हड्डियाँ टूट जायेंगी, सम्पूर्ण अंग चकनाचूर हो जायेंगे। राजलक्ष्मी को माननेवाले हे राजा, तुम मुझ चन्द्रमुखी की उपेक्षा न करो। तुम मुझे चाहो-चाहो, मैं तुम्हें धोखा न दूँगी और इस भयानक जंगल से उद्धार करूँगी। तब वह कुमार बोला कि तुम खिन्न क्यों होती हो! परपुरुष को अपना मन देते हुए शर्म नहीं आती। ये अच्छा है कि 'मैं' इस कल्पवृक्ष की डाल पर सूख जाऊँ। परस्त्री का मुख न देखूँगा। मेरे अंग चट्टान पर नष्ट हो जायें, पर वे परस्त्री के उरस्थल में न लगेंगे। अच्छा है मेरे दाँतों की पंक्ति नष्ट हो जाये, वह दूसरे की स्त्री के बिम्बाधरों को न काटे। अच्छा है केशभाग नष्ट हो जायें, पर वे दूसरे की प्रेमिकाओं द्वारा न खींचे जायें। अच्छा है इस वक्षस्थल को पक्षी खा जायें, लेकिन दूसरों की स्त्रियों के स्तनों से यह न रगड़ा जाये।

घत्ता—निवारण किये हुए भी नेत्र हिलते रहते हैं। हृदय-विकार को प्राप्त होता है। और रात-दिन सन्ताप बढ़ता रहता है। किन्तु दुष्ट प्रेमी की तृप्ति पूरी नहीं होती॥ ९ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

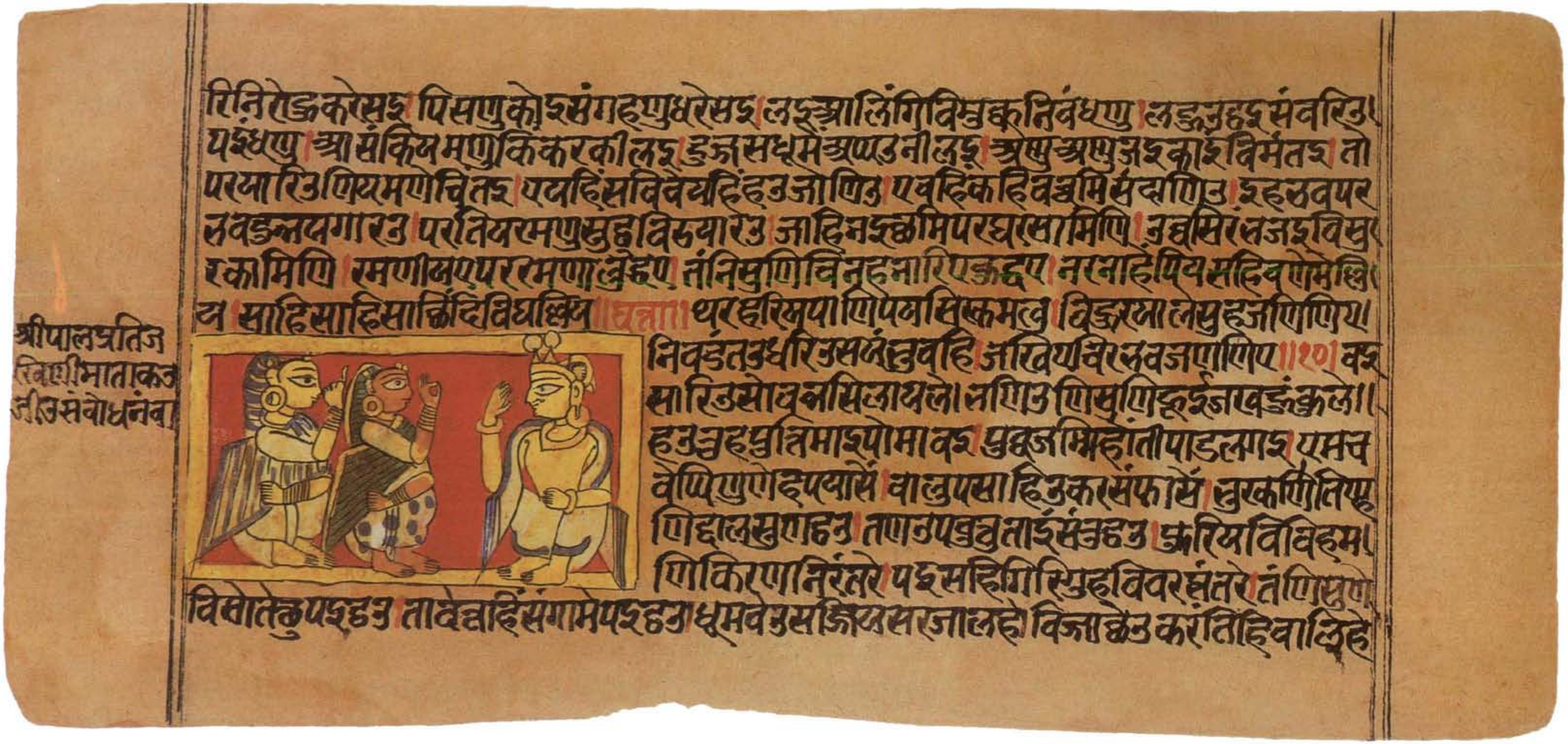

१०

वह गृहद्वार को निरुद्ध करता है और दुष्ट किसी पुंश्चल जोड़े को पकड़ता है। ऐसा वह शीघ्र उठता है, आलिंगन करके कण्ठश्लेष छोड़ता है। वह शीघ्र उठता है और अपनी धोती पहनता है। इस प्रकार आशंकित मनवाला वह क्या क्रीड़ा करता है! केवल अपयश के धुएँ से अपने को कलंकित करता है। और वह यदि किसी दूसरे से मन्त्रणा करता है तो परस्त्री-लम्पट अपने मन में विचार करता है तो यह कि इन विवेकशील लोगों द्वारा मैं जान लिया गया हूँ। इस समय अब 'मैं' किसके सहारे बचूँ ? इस प्रकार परस्त्री का रमण इस लोक और परलोक में दुर्नय करनेवाला तथा अत्यन्त विद्रूप है। यदि परघर की स्वामिनी, रम्भा, उर्वशी और देवबाला भी हो तब भी मैं उसे पसन्द नहीं करता। यह सुनकर दूसरे के साथ रमण करनेवाली उस विद्याधरी स्त्री ने क्रुद्ध होकर श्रीपाल के साथ प्रिय सखी को वन में भेज दिया, और पेड़ की डाल काटकर ऊपर डाल दी।

घत्ता—जिसके हाथ-पैर और सिररूपी कमल थरथर काँप रहा है, ऐसे उस गिरते राजा को संकटकाल में सुरभव की पुरजनी ने अपने हाथों में ग्रहण कर लिया॥ १०॥

११

उसे स्वर्ण-सिंहासन पर बैठाया, उसने कहा—सुनो, यक्ष कुल में उत्पन्न हुई मैं पद्मावती, हे पुत्र ! हंस की तरह चलनेवाली तुम्हारी माता थी। यह कहकर स्नेह को प्रकट करनेवाले हाथ के स्पर्श से बालक को सज्जित किया। उसकी भूख, निद्रा और आलस्य नष्ट हो गया। उस सन्तुष्ट बालक से उसने कहा—विविध प्रकार के किरणों से भरपूर गिरिगुहा के विवर में तुम प्रवेश करो। यह सुनकर राजा वहाँ गया। इतने में यहाँ संग्राम से धूमवेग भाग खड़ा हुआ। शर-जाल को सज्जित करती हुई उसके लिए दैवी वाणी हुई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

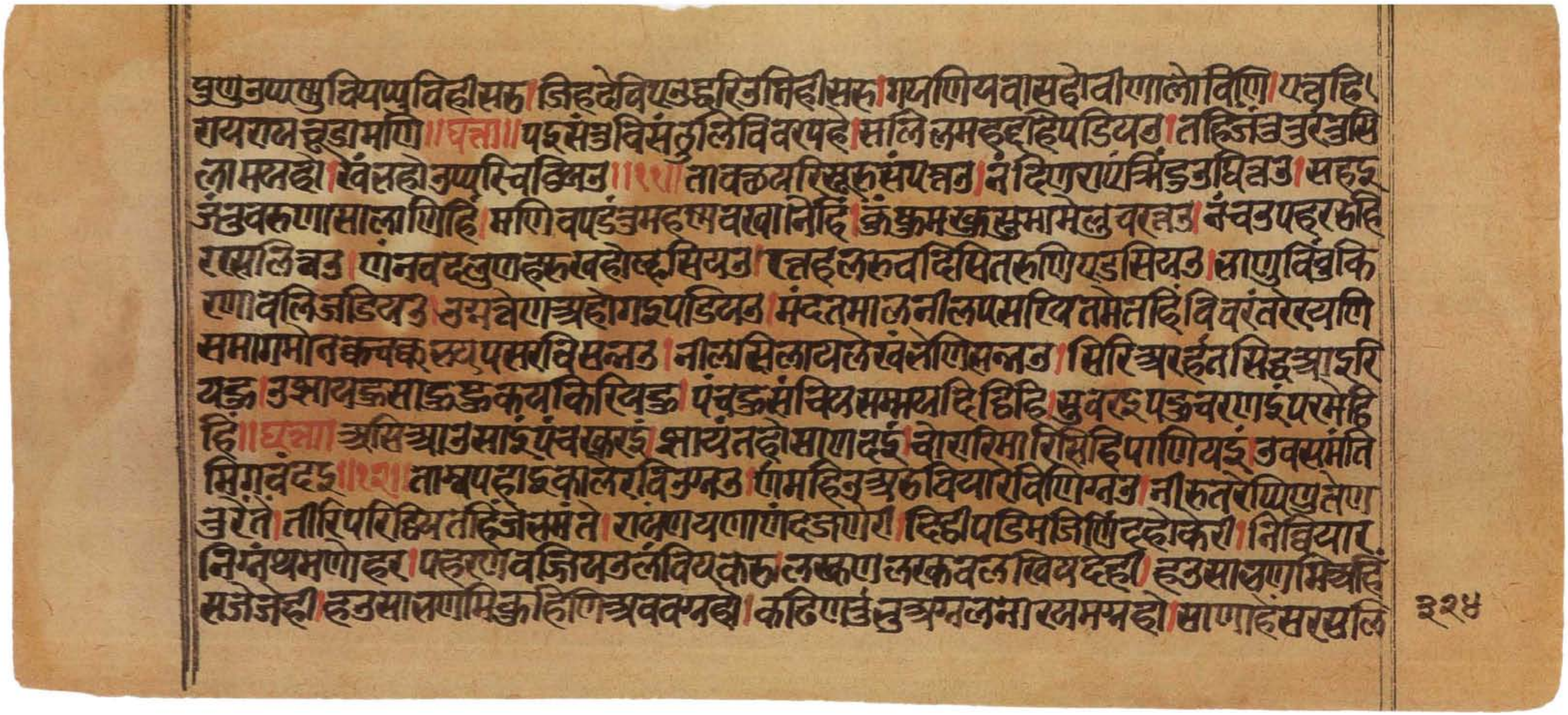

कि किस प्रकार उस निधीश्वर का उद्धार हुआ। वीणा के समान आलाप करनेवाली वह देवी अपने घर चली गयी। यहाँ वह राजश्रेष्ठ राजा—

घत्ता—उस ऊँचे-नीचे विवर में प्रवेश करते हुए एक महासरोवर के जल में गिर पड़ा। उसमें जाते हुए और तिरते हुए शिला से बने खम्भे पर चढ़ गया॥ ११॥

१२

इतने में सूर्य अस्ताचल पर पहुँच गया। मानो दिनराज द्वारा फेंकी गयी गेंद पश्चिम दिशा की परिधि में जाती हुई शोभित हो रही हो। या महासमुद्र की खदान में पड़े हुए मणि की तरह वह कुंकुम और फूलों के समूह की तरह रक्त है। मानो रक्तरूपी रस से लाल चतुष्प्रहर है। मानो आकाशरूपी वृक्ष से नवदल गिर गया है। मानो दिशारूपी युवती ने लाल फल को खा लिया है। किरणावली से विजड़ित सूर्य का वह बिम्ब मानो उग्रता के कारण अधोगति में पड़ गया है। स्थूल तमाल वृक्षों से नीले, जिसमें रत्नों का समागम है ऐसे विवर के भीतर कि जिसमें अन्धकार फैल रहा है। श्रीपाल नील-शिलातल के खम्भे पर बैठा हुआ, मगर समूह के भय के प्रतार से उदास होकर श्री अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और आचरणनिष्ठ साधुओं, पाँचों सम्यग्दृष्टि को संचित करनेवाले परमेष्ठियों के प्रभु-चरणों का ध्यान करता है।

घत्ता—पाँच अक्षरोंवाले णमोकार मन्त्र का आनन्द से ध्यान करनेवाले के सम्मुख चोर, शत्रु, महामारी, आग, पानी और पशु, जलचर समूह सानन्द शान्त हो जाते हैं॥ १२॥

१३

इतने में सवेरे सूर्योदय हुआ, मानो धरती का उदर विदारित करके निकला हो। उस राजा ने तुरन्त पानी में तैरकर घूमते हुए, किनारे पर स्थित नेत्रों को आनन्द देनेवाली, जिनेन्द्र भगवान् की प्रतिमा देखी। निर्विकार-निर्ग्रन्थ-सुन्दर, प्रहरणों से रहित, हाथों का सहारा लिये हुए जो लाखों लक्षणों से उपलक्षित थी। मैं (कवि) कहता हूँ कि वह अहिंसा के समान थी। मैं कहता हूँ कि वह अपवर्ग की पगडण्डी थी, और नरकमार्ग के लिए कठिन भुजारूपी अर्गला थी। स्वामी भरत ने उसे सर के जल से अभिसिंचित किया,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

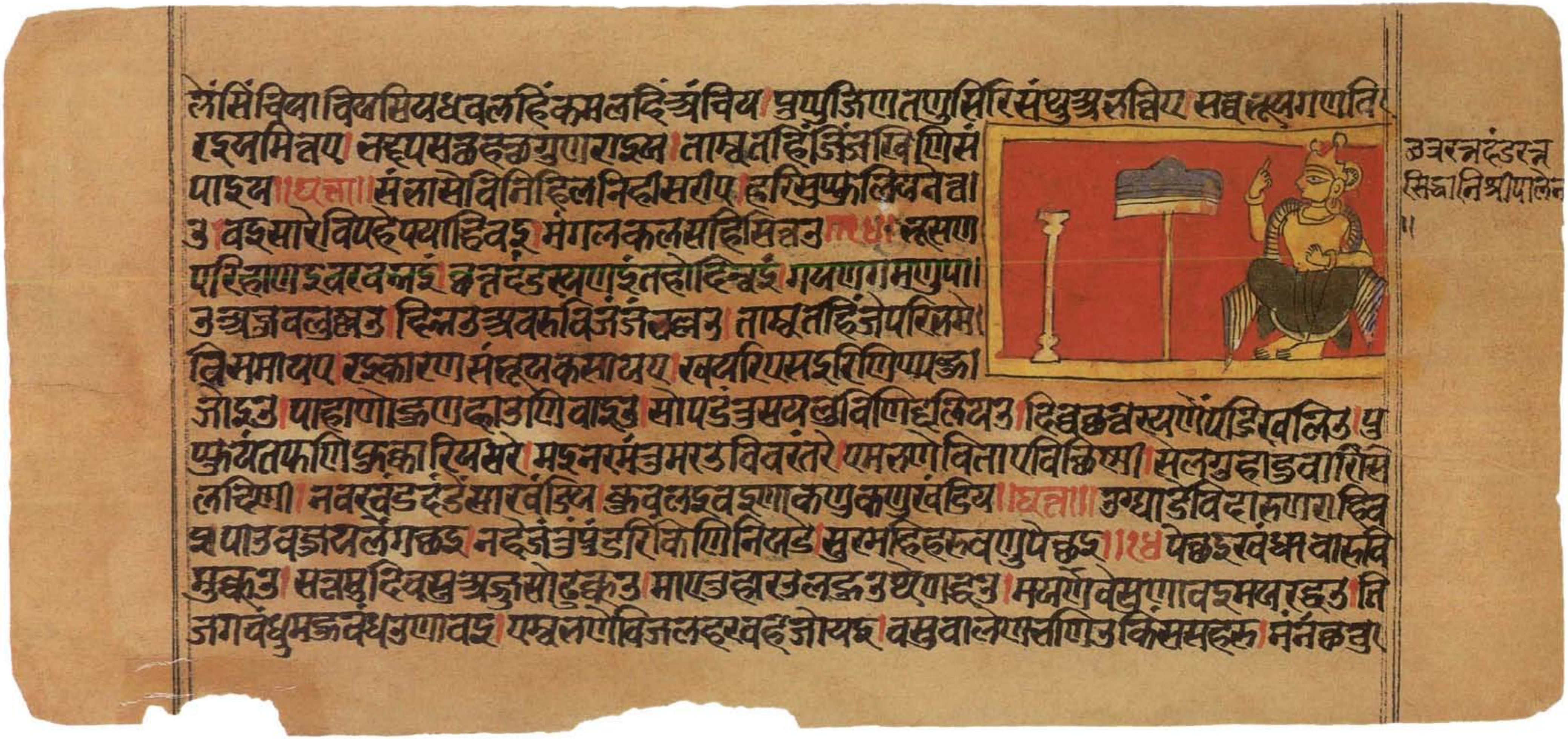

सफेद खिले हुए कमलों से अर्चित किया, फिर उसने जिन के शरीर की श्री की भक्तिभाव से स्तुति की कि जो सब प्राणियों से मित्रता का भाव स्थापित करनेवाली थी। इतने में भद्र, प्रशस्त और हस्त-गुणों से शोभित यक्षिणी तत्काल वहाँ आयी।

घत्ता—अखिल निधियों की स्वामिनी ने बात करके, जिसके नेत्र हर्ष से उत्फुल्ल हैं, ऐसे प्रजाधिपति भरत को यहाँ पर बैठाकर मंगल कलशों से अभिषेक किया॥ १३॥

१४

सुन्दर अलंकार, वस्त्र, छत्र और दण्ड रत्न दिये तथा आकाश में गमन करनेवाली खड़ाउओं की जोड़ी दी। जो-जो सुन्दर था, वह-वह दिया। तब जिसे रति के कारण ईर्ष्या उत्पन्न हुई है ऐसी विद्याधरी घूमती हुई वहाँ आयी। उस स्वेच्छाचारिणी ने राजा को देखा और आकाश से पत्थर का समूह गिराया। लेकिन दिव्य शत्रुरत्न से प्रस्खलित होकर वह गिरती हुई चट्टान चूर-चूर हो गयी। मुझसे रमण नहीं करते हुए पुष्पदन्त नाग की फुंकार का जिसमें स्वर है ऐसे विवर के भीतर तुम मरो। इस प्रकार कहकर उस स्वेच्छाचारिणी ने उस शेरगुहा के द्वार पर एक बड़ी चट्टान फैला दी। लेकिन उस पृथ्वीपति ने अपने प्रचण्ड-दण्ड से खण्डित करके उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये।

घत्ता—द्वार खोलकर राजा पादुका युगल से जाता है। आकाश में जाते हुए पुण्डरीकिणी नगर के निकट वह विजयार्ध पर्वत को देखता है॥ १४॥

१५

वहाँ विमुक्त स्कन्धावार देखता है कि आज वह सातवाँ दिन भी आ पहुँचा। हे माँ ! तुम्हारा छोटा बेटा जो मनुष्य रूप में कामदेव के समान है, तीनों जग का बंधु, मेरा भाई, नहीं आया। ऐसा कहकर उसने आकाश की ओर देखा। तब वसुपाल ने कहा—क्या यह चन्द्रमा है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

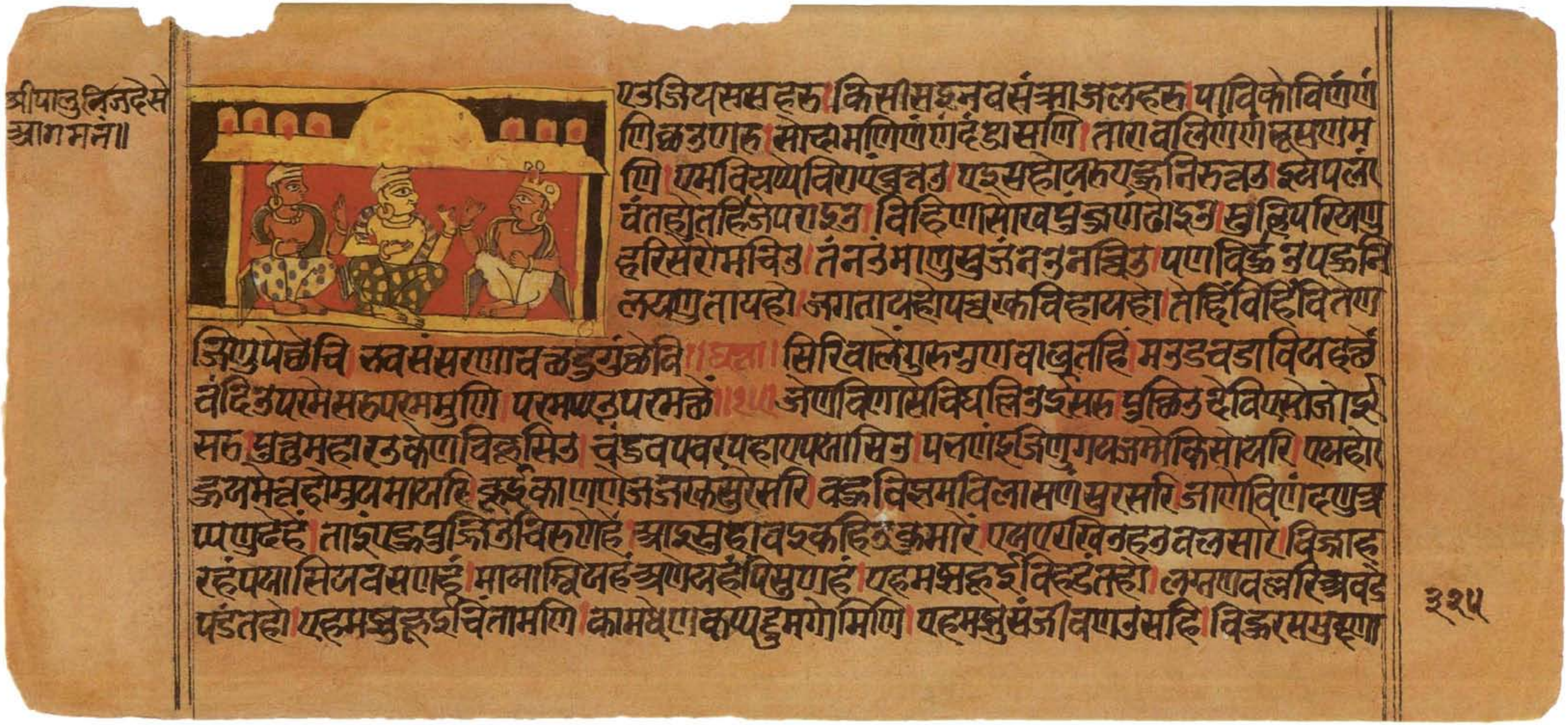

क्या यह नभ-सन्ध्या मेघ दिखाई देता है ? या कोई पक्षी है ? नहीं-नहीं यह निश्चय ही मनुष्य है। क्या यह बिजली है ? नहीं-नहीं यह रत्नदण्ड है। क्या तारावली है ? नहीं-नहीं ये अलंकारों के मणि हैं। इस प्रकार विचार कर राजा वसुपाल ने कहा कि यह निश्चय से हमारा भाई आ रहा है। इस प्रकार उनके बात करते श्रीपाल वहाँ आ पहुँचा मानो विधाता ने उनके लिए सुखपुंज दिया हो। सुधीजन और परिजन हर्ष से रोमांचित हो उठे। वहाँ एक भी मानव ऐसा न था जो नाचा न हो। उसे विश्व के पिता और प्रत्यक्ष विधाता—पिता के शरण में ले जाया गया। उन्होंने स्वामी को प्रणाम किया। उन दोनों ने उसी प्रकार जिनेन्द्र भगवान् के दर्शन कर संसार में परिभ्रमण करने की अवस्था की निन्दा की।

घत्ता—श्रीपाल ने अपने दोनों हाथ मुकुट पर चढ़ाते हुए महान् गुणों के पालन परममुनी परमात्मा परमेश्वर की परमार्थ भाव से वन्दना की॥ १५ ॥

१६

जिन्होंने कामदेव को नष्ट करके डाल दिया है, ऐसे योगीश्वर से माता ने पूछा कि मेरे पुत्र को किसने अलंकृत किया ? यह चन्द्रमा के समान महान् आभा से आलोकित क्यों है ? जिनेन्द्र भगवान् कहते हैं कि हे कृशोदरी, पूर्वजन्म में इसके पैदा होते ही इसकी माँ मर गयी। जो जंगल में यक्ष-देवी हुई। जो मानो गंगा की तरह अनेक विभ्रम और विलासवाली थी। शरीर से इसे अपना पुत्र समझकर उसने अत्यन्त स्नेह से इसकी पूजा की। इतने में सुखावती आ गयी। कुमार ने कहा कि—इसने अपनी शक्ति से मेरी रक्षा की है। दुःख प्रकट करनेवाले विद्याधरों और मायावी अनेक दुष्टों से घूमते हुए और आपत्तियों में पड़ते हुए मेरी यह आधारभूत लता रही है। यह मेरे लिए चिन्तामणि, कामधेनु, कल्पवृक्ष की भूमि सिद्ध हुई है। यह मेरे लिए संजीवनी औषधि कष्टरूपी समुद्र की नाव-जैसी है। मेरी प्रिय सखी—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

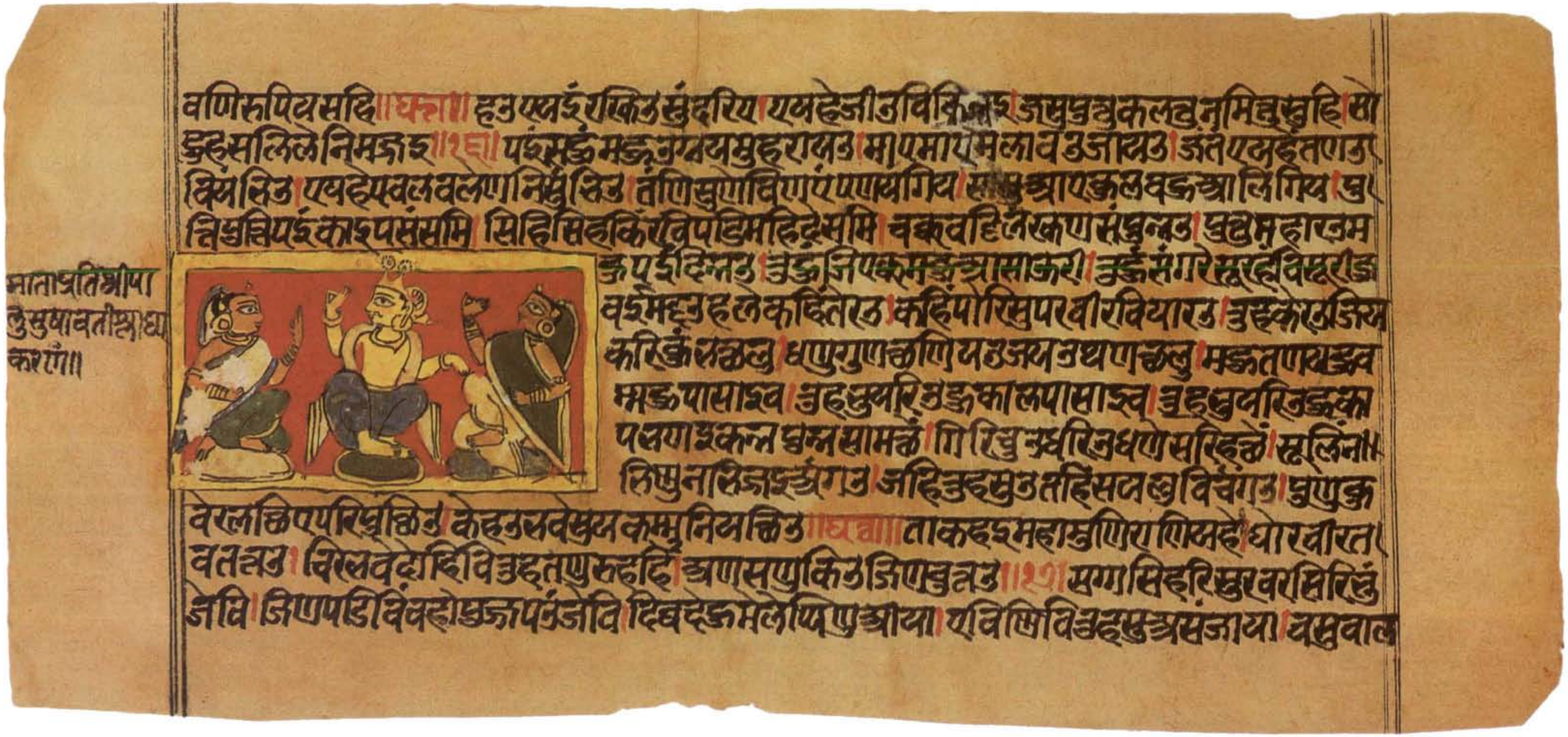

घत्ता—इसने मुझे बचाया है। इसके लिए मुझे अपना जीव भी दे देना चाहिए। इस संसार में जिसका न पुत्र, कलत्र और न सुधीजन ऐसा व्यक्ति दुःखरूपी जल में डूब जाता है॥ १६॥

१७

तुम्हारे साथ ही मेरे मुख का राग चमक सका और हे आदरणीय, मेरा मिलाप हो सका। जो-जो है, वह सब इस की चेष्टा है। इसी के बल से मैंने शत्रुबल का नाश किया। यह सुनकर विनय से प्रणतांग होती हुई कुलवधू को सास ने गले लगाया और वह बोली—हे बेटी! मैं तुम्हारी क्या प्रशंसा करूँ! क्या मैं सूर्य-प्रतिमा के लिए आग की ज्वाला दिखाऊँ! तुमने मुझे चक्रवर्ती लक्षणों से सम्पूर्ण मेरा बेटा दिया। तुम्हीं एक मेरी आशा पूरी करनेवाली हो। युद्ध में तुम सूर हो। कहाँ तुम्हारी युवती-सुलभ कोमलता? और कहाँ शत्रु को विदीर्ण करनेवाला पौरुष ? जिसने हाथियों के गण्डस्थलों को जीता है ऐसा तुम्हारा स्तन युगल जो धनुष की डोरी से आच्छन्न धनुष की तरह है। मेरे पुत्र के लिए कामदेव के पाश की तरह तुम्हारी दोनों भुजाएँ शत्रु के लिए कालपाश के समान हैं। तब कन्या कहती है कि पुण्य के सामर्थ्य से यक्षिणी ने अपने हाथ से गिरते हुए पहाड़ को उठा लिया। और त्रिशूल से भेदे जाने पर भी शरीर भग्न न हुआ। हे आदरणीय ! जहाँ तुम्हारा बेटा है वहाँ सब-कुछ भला होता है। कुबेरलक्ष्मी फिर पूछती है कि किस कर्म से ऐसा पुत्र और कर्म देखा?

घत्ता—तब महामुनि रानी से कहते हैं कि पूर्वजन्म में तुम्हारे दोनों पुत्रों ने जिनेन्द्र के द्वारा कहा गया अत्यन्त कठिन तप और अनशन किया था॥ १७॥

१८

स्वर्ग में इन्द्र की विभूति का भोग कर, जिनप्रतिमा की पूजाकर, दिव्यदेह को छोड़कर वे दोनों यहाँ आये और दोनों तुम्हारे पुत्र हुए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

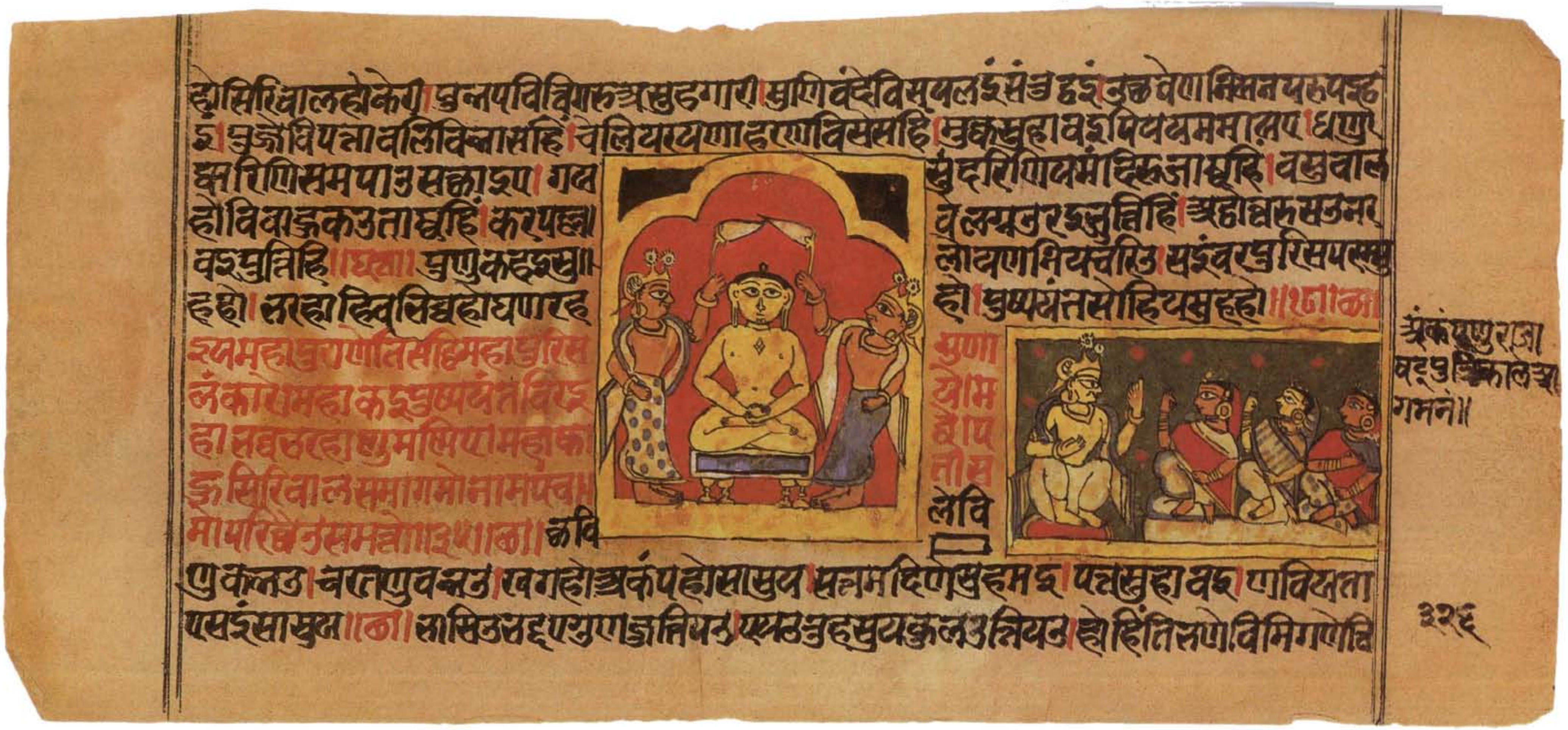

वसुपाल, श्रीपाल की अत्यन्त महान् शुभकारी पुण्यप्रवृत्ति को सुनकर तथा मुनिवन्दना कर सब लोग सन्तुष्ट हुए। और उत्साह के साथ अपने नगर को चल दिये। माया से रहित प्रियतमा सुखावती ऐसी मालूम होती थी जैसे पावस की छाया से इन्द्रधनुषी। जब वह सुन्दरी अपने घर गयी तब तक वसुपाल का विवाह कर दिया गया। रति से युक्त एक सौ आठ युवतीरत्न उसके कर-पल्लव से लगीं।

घत्ता—इस प्रकार परपुरुष से पराङ्मुख, पुष्पदन्त के समान शोभित मुखवाली सती सुलोचना अपना चरित्र राजावर्ग के अनुचर जयकुमार से कहती है॥ १८॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुण-अलंकारों से युक्त महापुराण का महाकवि भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य में प्रभु श्रीपाल-संगम नाम का पैंतीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ३५॥

सन्धि ३६

विद्याधर राजा अकम्पन की वह पुत्री शुभमतिवाली सुखावती, उत्तम रूपरंगवाली छहों कन्याओं के साथ सातवें दिन वहाँ पहुँची। उसने स्वयं अपनी सास को नमस्कार किया।

१

वह भद्रा बोली—''गुणों से युक्त तथा हरिण के समान नेत्रोंवाली ये पुत्रियाँ तुम्हारी कुलपत्नियाँ होंगी—यह सोचकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

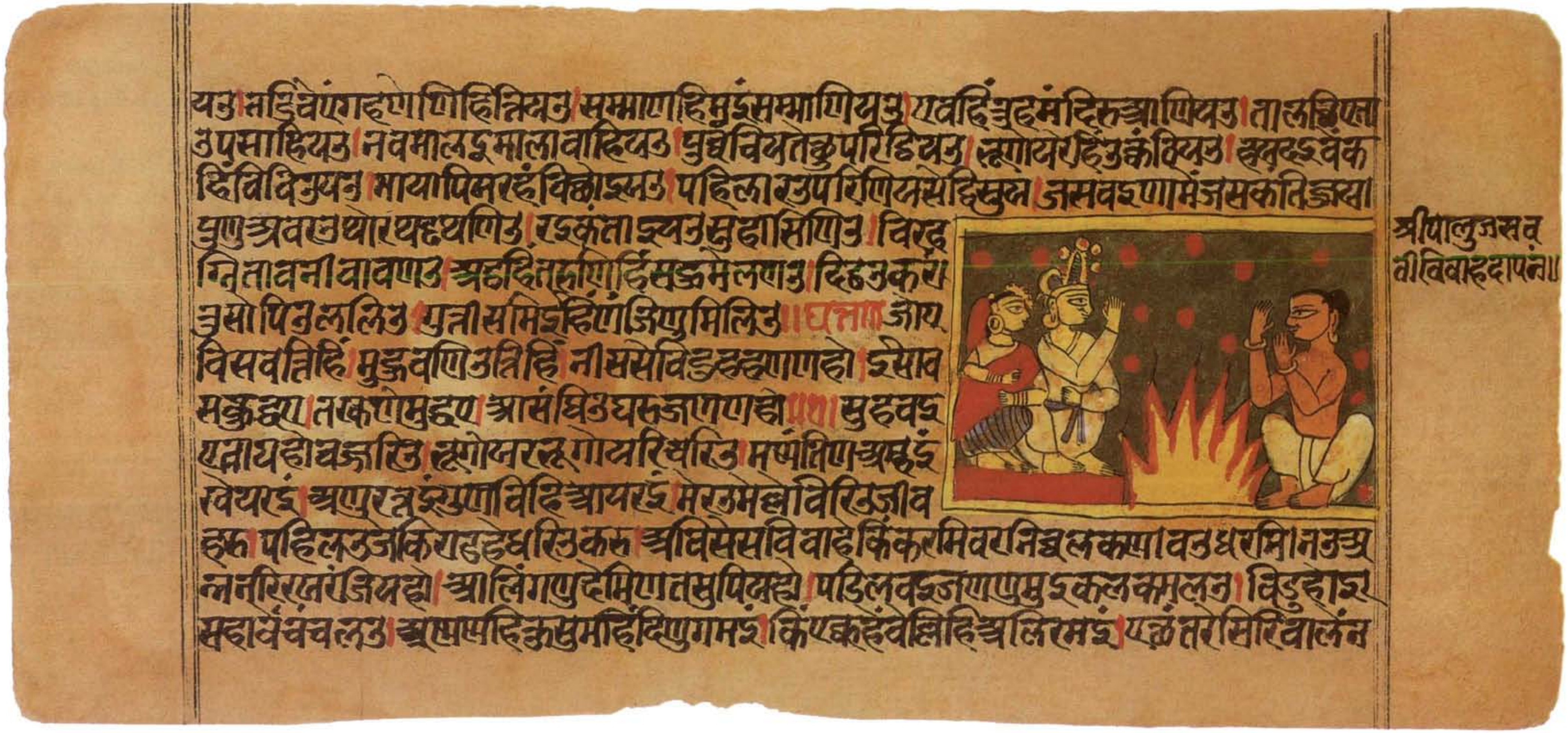

अशनिवेग विद्याधर ने इन्हें जंगल में छिपा रखा था। मेरे द्वारा सम्मानित इनका आप सम्मान करें। इस समय मैं इन्हें तुम्हारे मन्दिर में ले आयी हूँ।'' तब कुबेरश्री ने मालती मालाओं को धारण करनेवाली उन कन्याओं का प्रसाधन किया। हतदैव ने पहले से ही वहाँ स्थित और उत्कण्ठित इन मनुष्यनियों से वियोग करवा दिया, ये माता-पिता से भी विमुक्त हुईं। सबसे पहले श्रीपाल ने यश और कान्ति से युक्त सेठ की यशोवती कन्या से विवाह किया। उसके बाद दूसरी स्थूल और सघन स्तनोंवाली तथा सुमधुर बोलनेवाली रतिकान्ता आदि से। उन आठों कन्याओं के साथ विरहाग्नि के सन्ताप को शान्त करनेवाला मिलाप करता हुआ वह सुन्दर प्रिय श्रीपाल, उसी प्रकार देखा गया जिस प्रकार गुप्तियों और समितियों से मिले हुए जिन-भगवान् देखे जाते हैं।

घत्ता—अपनी सौत वणिक् पुत्री यशस्वती का मुख देखकर ईर्ष्या के कारण क्रुद्ध होकर और उच्छ्वास लेकर सुखावती दुःख का हनन करनेवाले पिता के घर तत्काल चल दी॥ १॥

२

सुखावती ने मनुष्यनी यशस्वती आदि का चरित अपने पिता को बताया कि वे गुणों के कारण आदर करनेवाले तथा अनुरक्त हम विद्याधरों को कुछ भी नहीं मानते। उसने (श्रीपाल ने) शत्रु के प्राणों का अपहरण करनेवाले मेरे हाथ को छोड़कर उस किराती (यशस्वती) का हाथ पहले पकड़ा। इस अतिसामान्य विवाह से मैं क्या करूँगी? अच्छा है कि मैं अचल कन्याव्रत ग्रहण कर लूँ। दूसरी स्त्रियों में रत होकर रंजित करनेवाले उस प्रिय को आलिंगन नहीं दे सकती। तब पिता ने कहा—हे पुत्री, तुम ईर्ष्याजनित खेद को छोड़ो। विट स्वभाव से चंचल होते हैं। भ्रमर दूसरे-दूसरे फूलों में दिन गँवाता है। क्या वह एक लता में रमण करता है? इस बीच में श्रीपाल ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

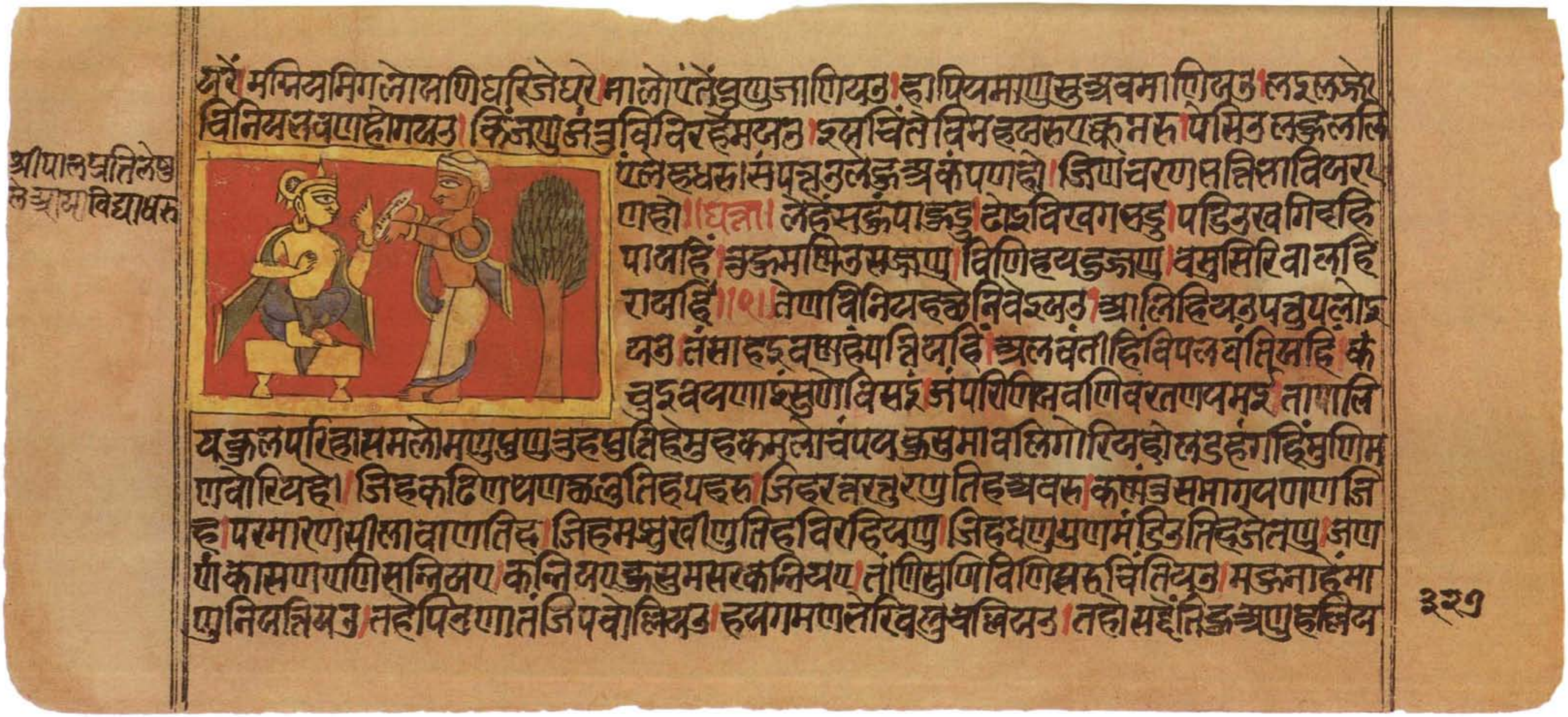

सुखावती को घरों-घर ढुँढ़वाया। उसे नहीं देखते हुए वह समझ गया और अफसोस करने लगा कि मैंने अपने प्रिय मनुष्य को अपमानित किया। वह अत्यन्त लज्जित होकर अपने भवन में गया। प्रत्येक प्राणी विरह से पीड़ित होता है। यह विचारकर सुन्दर श्रीपाल ने एक लेखधारी नभचर मनुष्य (विद्याधर) को भेजा। जिनवर के चरणों में भावित मन विद्याधर राजा अकम्पन के घर वह लेखधर पहुँचा।

घत्ता—लेख के साथ उपहार देकर वह विद्याधर योद्धा विद्याधर राजा के चरणों में पड़ गया। (और बोला) दुर्जनों का नाश करनेवाले आप सज्जन, वसुपाल और श्रीपाल दोनों राजाओं के द्वारा मान्य हैं॥ २॥

३

उसने भी अपने हाथ में निवेदित लिखा हुआ पत्र देखा। वह पत्र नहीं बोलती हुई भी, बोलती हुई शब्दों की पंक्तियों के द्वारा शोभित था। कंचुकी के वचनों से स्वयं सुनकर जो मैंने सेठ की कन्या से विवाह किया है वह मैंने अपने कुल में मर्यादा का पालन किया है। परन्तु मेरा मन, तुम्हारी पुत्री के मुखकमल में है। मैं तुम्हारी चम्पक कुसुमावलि के समान गोरी कन्या की याद करता हूँ। जिस प्रकार उसके स्तनतल कठोर, उसी प्रकार उसका प्रहार। जिस प्रकार रक्त लाल होता है उसी प्रकार उसके अधर लाल हैं। जिस प्रकार उसके कान नेत्रों तक समागत हैं, उसी प्रकार उसके बाणों का स्वभाव दूसरों को मारना है। जिस प्रकार उसका मध्यभाग क्षीण है, उसी प्रकार यह विरहीजन; जिस प्रकार धनुष गुण (डोरी) से मण्डित है उसी प्रकार उसका शरीर गुणमण्डित है। पिता के निकट आसन पर बैठी हुई कामदेव के तीरों से घायल कन्या ने यह सुनकर अपने मन में अच्छी तरह विचार किया कि मेरे स्वामी ने मान छोड़ दिया है। उसके पिता ने भी उससे यही कहा। कूच का नगाड़ा बजाकर सेना चल दी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपने पिता के साथ कुमारी वहाँ गयी जहाँ उसका प्रिय वर निवास करता था।

घत्ता—अपने हाथी और घोड़ों के साथ अकम्पन वहाँ पहुँचा। नभ के आँगन को आच्छन्न देखकर दोनों ही भाई आलिंगन माँगते हुए आदरपूर्वक सम्मुख आये॥ ३॥

४

स्नेह और दया से परिपूर्ण वे घर में ठहरा दिये गये। शीघ्र ही उन्होंने अभ्यागतों का अतिथि-सत्कार किया। नीचा मुख कर बैठी हुई वधू से कुमार ने कहा कि तुम्हारा मुख मलिन क्यों है? घन एक बिजली से शोभा पाता है, और वन कोयल से शोभित है। यहाँ मैं शोभित हूँ तुम्हारे एक के द्वारा। तब भी मुझे गुरुजनों से वचन करने होते हैं। इसलिए सज्जनों के प्रति वत्सल रखनेवाली तथा भ्रमर के समान नीले घुँघराले और कोमल बालोंवाली तुम मुझसे रूठो मत। इन शब्दों से उसके क्रोध का नियन्त्रण हो गया और उसका प्रेम सघन तथा सुन्दर हो उठा। इतने में प्रिय की वशीभूत बप्पिला आ गयी, विद्युद्रव और विद्युत्वेग की बहन भी आ गयी। अपने चंचल नेत्रों से हरिणी को जीतनेवाली रतिकान्ता और मदनावती युवतियाँ भी आ गयीं। इस प्रकार उसने आठ हजार विद्याधर रानियों से विवाह किया। फिर बाद में उसने अनुपम भोगवाली विद्याधर-पुत्री भोगवती से विवाह किया।

घत्ता—सेनापति, गुरुपति, अश्व-गज-स्त्री-स्थपति और पुरोहित से युक्त तथा आँखों को रंजित करनेवाले सात जीवित रत्न उसे प्राप्त हुए॥ ४॥

५

सुखावती क्रोध से हुँ करती है, और ईर्ष्या के कारण प्रिय के नगर में प्रवेश नहीं करती। जिसकी वनश्री देवों के द्वारा मान्य और वर्ण्य है ऐसे सुमेरु पर्वत पर घर बनाकर वह रहने लगी। गृह-दासियों के द्वारा यशस्वती का रूप बना लिया गया। एक और ने आकर राजा से निवेदन किया—"हे परमेश्वर ! वणिक् कन्या का अपमान किया गया है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसकी गृहदासी के रूप में घर में स्थापना की गयी है।'' यह सुनकर राजा चला, अश्वों के खुरों की धूल आकाश से जा मिली। शीघ्र वह पतिभक्ता महासती सुखावती के निवास पर पहुँचा। प्रिय शब्दों में वह इस प्रकार बोला कि उससे उस मुग्धा का मन काँप उठा। ईर्ष्या करनेवाली वह पति के द्वारा शान्त कर दी गयी, उसने जाकर वणिक् कन्या को नमस्कार किया। वह विद्याधरी (सुखावती) इन्द्र के पराक्रम का हरण करनेवाली पुण्डरीकिणी नगरी में जाकर स्थित हो गयी (रहने लगी)। जिसका तप सुफलित है ऐसे उस राजा को आयुधशाला में चक्ररत्न की प्राप्ति हुई। वह चक्रवर्ती नौ निधियों का स्वामी हो गया। हमारे-जैसा कुकवि उसका वर्णन कैसे कर सकता है!

घत्ता—चन्द्रमा के समान रंगवाले (सफेद) और सुन्दर तलभाग में एकासन स्वीकार कर, यशस्वती के साथ राजा ने प्रसादपूर्वक सुख-दुख की बातें कीं॥५॥

६

पहले अशनिवेग मुझसे ईर्ष्या रखता था। मायावी अश्व के द्वारा मेरा अपहरण किया गया। मुझे विजयार्ध पर्वत पर छोड़ दिया गया। मैं उस गम्भीर जंगल में घूमा। फिर मैंने अपनी गति से आकाशतल और मेघों का अतिक्रमण करनेवाले विद्याधरों के छल-कपट देखे। मैंने ईर्ष्याजनक कितने ही साहसी कार्य किये। उन्हें देखकर, जो अपने चंचल हाथों में चंचल हल और मूसल घुमा रहे हैं, ऐसे वे गर्वीले दुष्टजन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

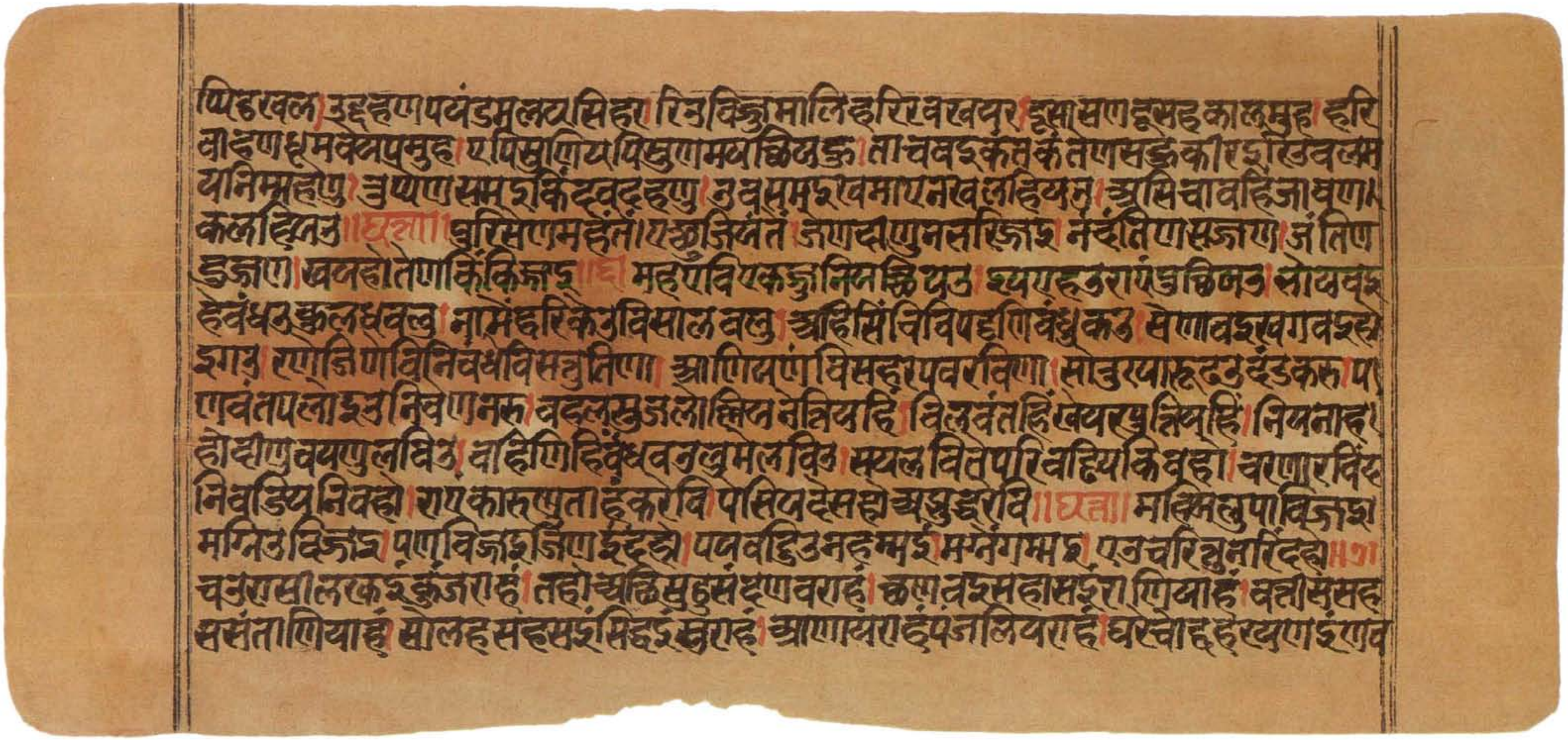

अप्रसन्न हो उठे। जलाने में प्रचण्ड प्रलयकाल के सूर्य के समान, शत्रु विद्युद्माली और अश्ववेग विद्याधर, दु:शासन, दुर्मुख, कालमुख, हरिवाहन और धूमवेग प्रमुख, दुष्टों के लिए भी दुष्ट, ये मेरे दुश्मन हैं (हे मृगनयनी)। तब प्रिया अपने प्रिय से कहती है—शत्रु के बल और मद का दमन किया जाता है क्या घी से दावानल की ज्वाला शान्त होती है? जबतक तलवार और धनुष से न लड़ा जाये, तबतक दुष्ट हृदय क्षमा से शान्त नहीं होता।

घत्ता—इस संसार में जीवित रहते हुए जिस महापुरुष ने दीन का उद्धार नहीं किया, जिससे सज्जन आनन्द में नहीं हुए और दुर्जन विनाश को प्राप्त नहीं होते, उससे क्या किया जाये (वह किसी काम का नहीं है)!॥६॥

७

महादेवी ने कार्य निश्चित किया। राजा ने भी इस प्रकार उसकी इच्छा की। भोगवती को कुलश्रेष्ठ विशाल बलवाले हरिकेतु नामक भाई का अभिषेक कर पट्ट बाँध दिया। वह विद्याधर राजा सेनापति होकर चला गया। वह शत्रुओं को जीतकर और बाँधकर ले आया मानो गरुड़ साँपों को पकड़कर लाया हो। अश्व पर आरूढ़, हाथ में दण्ड लिये हुए और प्रणाम करते हुए उन मनुष्यों को राजा ने देखा। जिनके नेत्र आँसुओं की प्रचुरता के कारण आर्द्र हैं ऐसी विलाप करती हुई विद्याधर-पुत्रियों ने अपने स्वामी से दीन शब्द कहे, और इस प्रकार बहनों ने अपने बन्धु-समूह को मुक्त करा दिया। वे सबके सब बढ़ रही कृपा से युक्त राजा के चरणाग्र में गिर पड़े। राजा ने उन पर करुणा कर और उनका उद्धार कर अपने-अपने देशों में भेज दिया।

घत्ता—महीतल का पालन किया जाये, याचक को दान दिया जाये, जिनेन्द्र के चरणों में प्रणाम किया जाये, पैरों में पड़े हुए व्यक्ति को न मारा जाये, और अच्छे मार्ग पर चला जाये, राजाओं का यही चरित्र है॥७॥

८

चौरासी लाख हाथी, तेंतीस हजार श्रेष्ठ रथ, छियानवे हजार रानियाँ, कुल-परम्परा के बत्तीस हजार राजा, आज्ञाकारी और हाथ जोड़े हुए सोलह हजार देव उसे सिद्ध हुए। घर में चौदह रत्न और नौ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

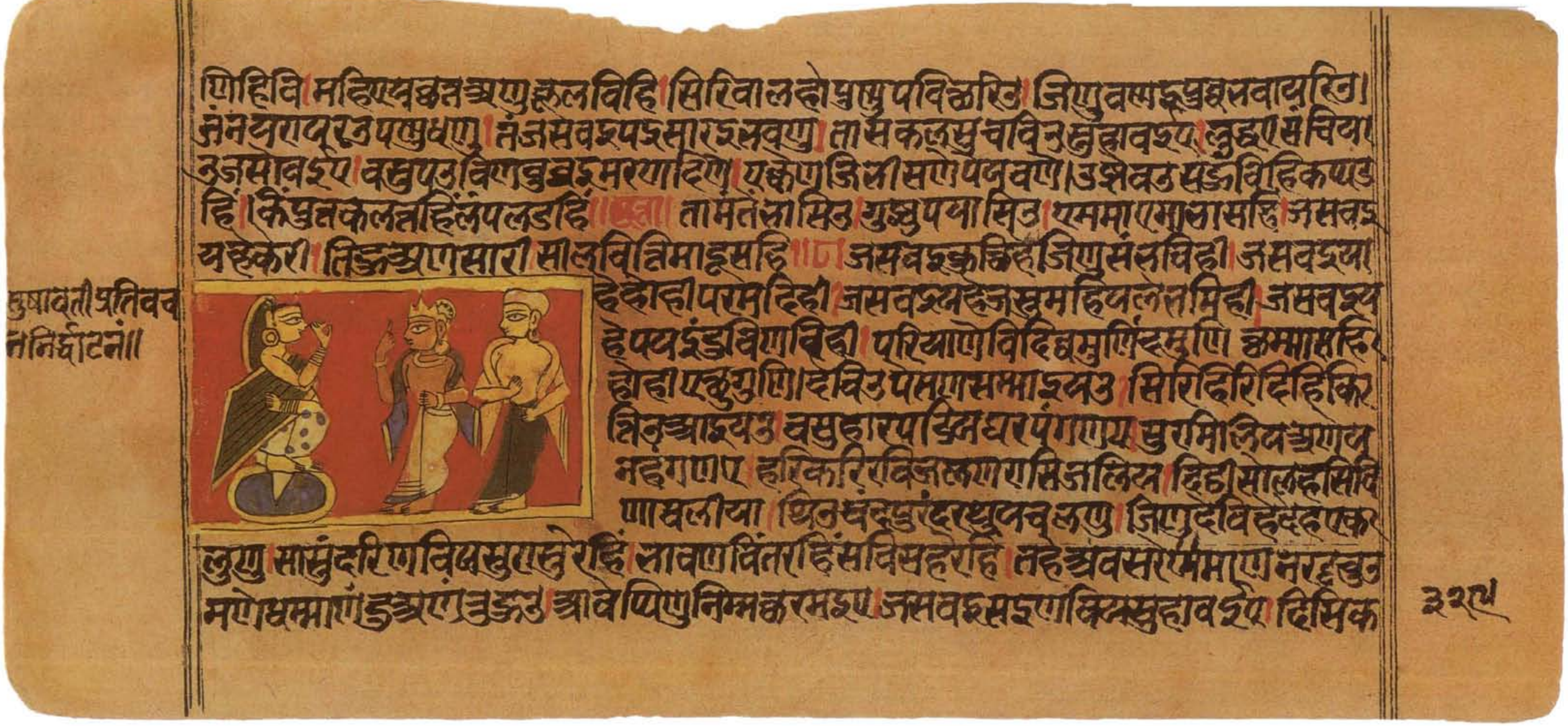

निधियाँ सिद्ध हो गयीं। अनुकूल पथ में उसे एकछत्र भूमि प्राप्त थी। लोग कहते हैं कि श्रीपाल के पूर्व जन्म में अर्जित पुण्य का विस्तार हो गया। तब सुखावती ने यह कीचड़ उछालना शुरू किया कि नगर की खदानों से जो धन निकलता है उसे यशस्वती अपने घर में प्रविष्ट करा लेती है, लेकिन यशस्वती के द्वारा संचित धन मृत्यु के दिन एक पग भी उसके साथ नहीं जायेगा। भीषण मरघट में उसे अकेले ही जलना होगा, दो कपड़ों के साथ। लम्पट पुत्र-कलत्र से क्या ?

घत्ता—तब मन्त्री ने कहा और यह गुप्त बात प्रकट कर दी, इस प्रकार मत कहो। यशस्वती की तीनों लोकों में श्रेष्ठ शीलवृत्ति को दोष मत लगाओ॥ ८॥

९

यशस्वती की कोख से जिन-भगवान् का जन्म होगा, यशस्वती का परम सौभाग्य होगा। यशस्वती का यश संसार में घूमेगा। यशस्वती के चरणों में इन्द्र प्रणाम करेगा। यह जानकर कि गुणी दिव्य मुनीन्द्र छह माह में होंगे, आज्ञादान के सम्मान से सम्मानित श्री-ह्री-कीर्ति आदि देवियाँ सेवा की सम्भावना से आयीं। घर के आँगन में धन की वर्षा हुई। उसने सिंह, गज, सूर्य, समुद्र और जल आदि सोलह सपनों की आवलि देखी। जिन्होंने करुणा की है, और जिनके चरण प्रचण्ड इन्द्रों के द्वारा संस्तुत हैं, ऐसे जिन भगवान् देवी की देह में स्थित हो गये। सुर-असुरों तथा विषधरों सहित भवनवासी और व्यन्तरों ने उसे प्रणाम किया। उस अवसर पर सुखावती का मान-अहंकार च्युत हो गया, उसके मन में अनन्त धर्मानन्द हुआ। सुखावती ने ईर्ष्या से रहित होकर, स्वयं आकर यशस्वती को नमस्कार किया, और कहा—

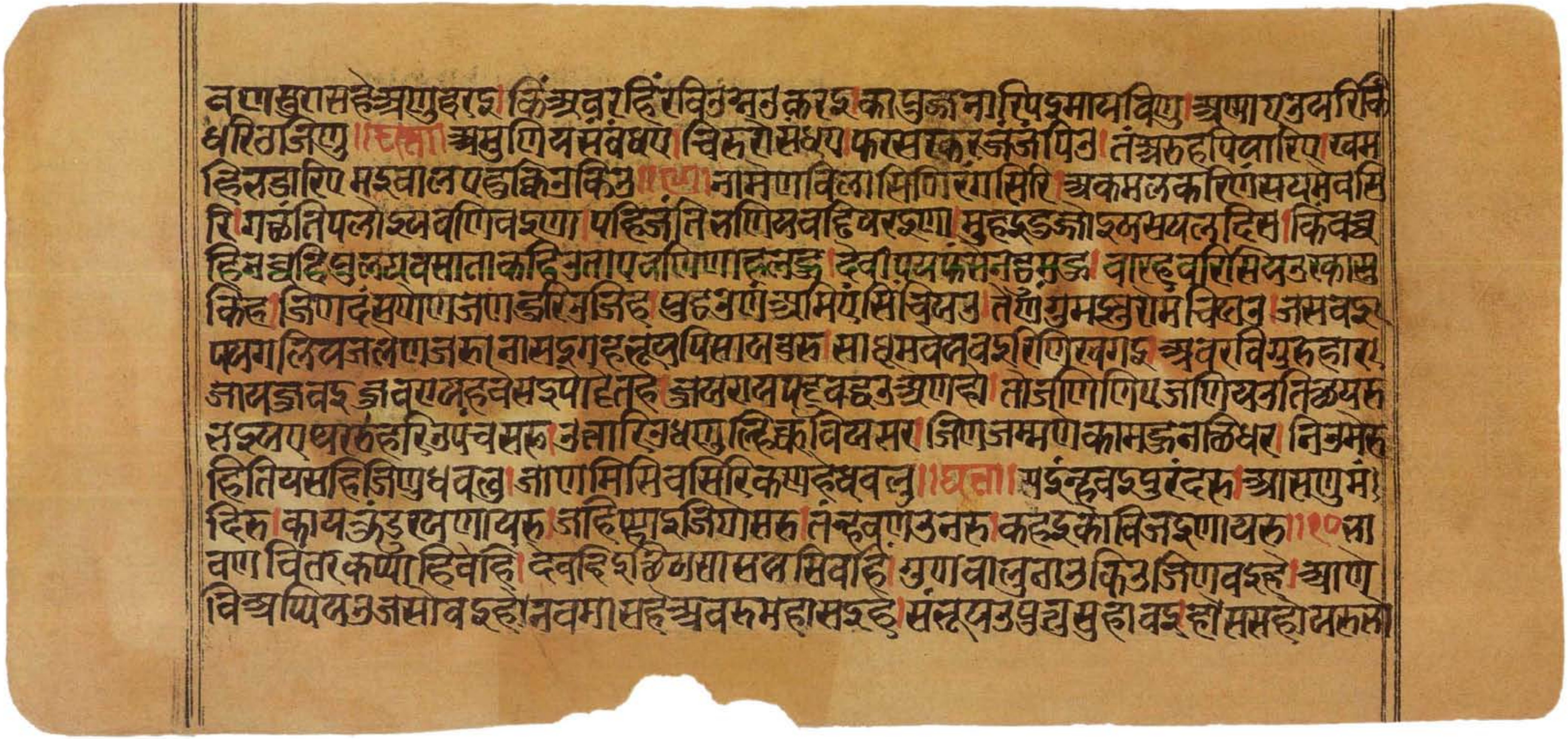

पूर्व दिशा का अनुकरण कौन दिशा कर सकती है ? क्या किसी दूसरी दिशा में सूर्य का उदय हो सकता है ! हे आदरणीय, तुम्हारे बिना कौन स्त्री जिनवर को अपने उदर में धारण कर सकती है !

घत्ता—क्रोध से अन्धी, मैंने सम्बन्ध को नहीं जानते हुए जो कठोर शब्दों का प्रयोग किया उन्हें हे देवताओं की प्रिय आदरणीये, आप क्षमा कर दें। मुझ मूर्खा ने बहुत बड़ा पाप किया॥ ९॥

१०

विलासिनी नाम की एक रंगश्री (नर्तकी) थी जो कमल से उत्पन्न न होते हुए भी स्वयं लक्ष्मी थी। सेठ ने उसे जाते हुए देखा। जिसे कामवासना बढ़ रही है ऐसे उस सेठ ने रास्ते में जाते हुए उससे पूछा—'अपने मुखचन्द्र से दिशाओं को आलोकित करनेवाली तुम रोमांचित होकर नाचती हुई क्यों जा रही हो?' उसने सेठ से कहा—देवी के चरण-स्पर्श से मेरी बारह वर्ष की खाँसी मिट गयी है, उसी प्रकार, जिस प्रकार जिनदेव के दर्शन से लोगों के पाप मिट जाते हैं। मेरा पृष्ठभाग मानो अमृत से सिंचित हो। इसी से मेरा शरीर रोमांचित है। यशस्वती के पैरों से प्रगलित जल से ज्वर और ग्रहभूत-पिशाचों का नाश हो जाता है। वह धूमवेगा वैरिन विद्याधरी नष्ट हो गयी। और भी उस युवती का पैर भारी हो गया। उसके उदर से युवराज का जन्म होगा, इसलिए एक दूसरी ने उसे युवराज-पट्ट बाँध दिया। तब माता ने तीर्थंकर को जन्म दिया। भय से कामदेव डर गया। उसने अपना धनुष उतार लिया और तीर छिपा लिये। जिनवर के जन्म के समय कामदेव के लिए रक्षा नहीं रह जाती। देवों के द्वारा जिनेन्द्र श्रेष्ठ सुमेरु पर्वत पर ले जाये गये, मैं जानता हूँ कि वह शिवलक्ष्मी रूपी कन्या के भर्ता हैं।

घत्ता—देवेन्द्र स्वयं स्नान कराता है, मन्दराचल आसन है, समुद्र शरीर के लिए कुण्ड है (जलपात्र है), स्नानगृह वही है जहाँ जिन स्नान करते हैं ऐसा कोई चतुर मनुष्य-गणधर आदि कहते हैं॥ १०॥

११

शाश्वत् सुख की इच्छा रखनेवाले भवनवासी, व्यन्तर और कल्पवासी देवों ने जिनपति का नाम गुणपाल रखा और लाकर यशस्वती के लिए सौंप दिया। महासती सुखावती के भी नौ माह में एक और पुत्र हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

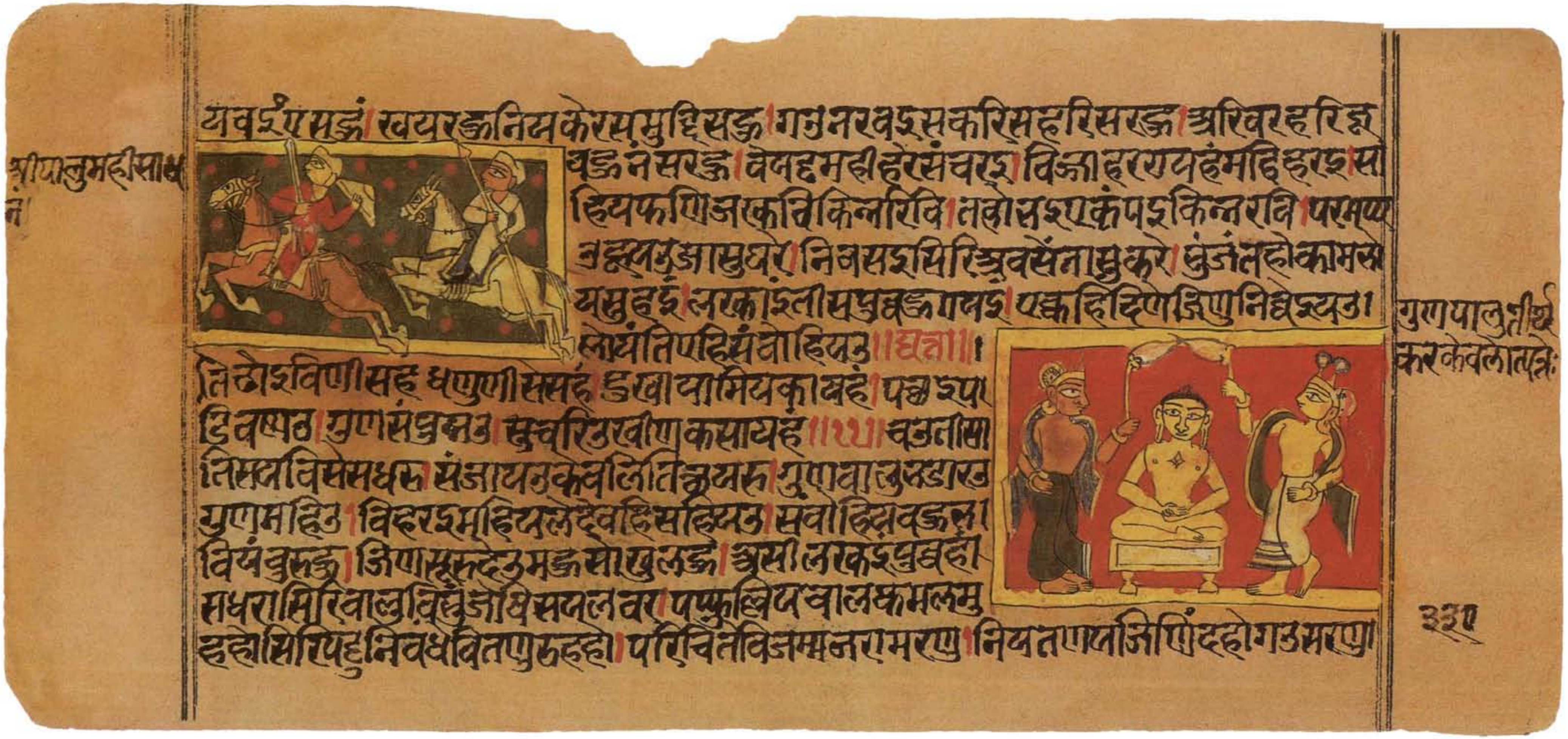

भोगवती के साथ तथा अपने भाई के साथ वह विद्याधर राजाओं में अपनी आज्ञा स्थापित करने के लिए अनुचरों, घोड़ों, गजों और रथों के साथ गया, मानो शत्रुरूपी हाथियों के झुण्ड पर सिंह टूट पड़ा हो। वह विजयार्ध पर्वत पर परिभ्रमण करते हुए विद्याधर राजाओं की धरती का अपहरण करता है। वह सिद्धों और किन्नरों को सिद्ध कर लेता है। उसके भय से सूर्य काँपता है। जिसके घर में परमात्मा का जन्म हुआ है उसकी गोद में लक्ष्मी का निवास अवश्य होगा। सैकड़ों कामभोगों को भोगते हुए उसके तीस लाख वर्ष बीत गये। एक दिन जिन भगवान् को वैराग्य उत्पन्न हो गया। लौकान्तिक देवों ने आकर उसे सम्बोधित किया।

घत्ता—निर्धन और दु:ख से झुकी हुई कायावाले समस्त दीन-दुखियों को धन दिया। फिर बाद में उसने क्षीणकषायवालों का गुणों से परिपूर्ण समस्त चारित्र स्वीकार कर लिया॥ ११॥

१२

वह चौंतीस अतिशयों को धारण करनेवाले केवलज्ञानी तीर्थंकर हो गये। गुणों से महान् आदरणीय गुणपाल देवों के साथ धरती पर विहार करते हैं। भव्यरूपी कमलों को सम्बोधित करनेवाले हे जिनदेवरूपी सूर्य, आप मुझे शीघ्र मोक्ष प्रदान करें। बयासी लाख वर्ष पूर्व तक, पर्वतों सहित समस्त धरती का उपभोग कर श्रीपाल भी खिले हुए बालकमल के समान मुखवाले बालक के सिर पर पट्ट बाँधकर जन्म, जरा और मृत्यु का विचार कर अपने पुत्रों के साथ तीर्थंकर गुणपाल की शरण में चले गये।

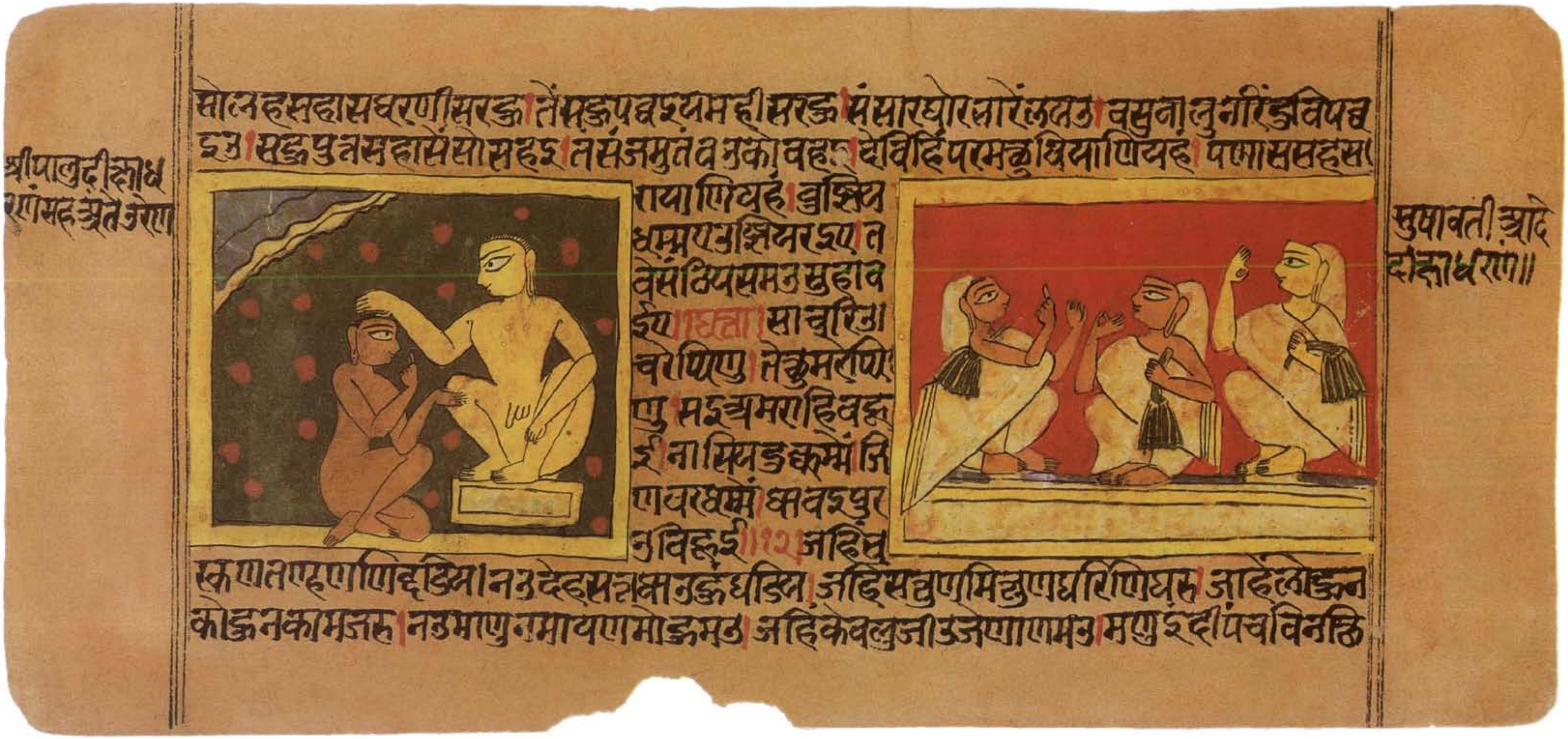

उसके साथ सोलह हजार गम्भीर घोषवाले राजा प्रव्रजित हो गये। संसार के घोरभार से विरक्त होकर वसुपाल राजा भी प्रव्रजित हो गया। वह हजारों पुत्रों के साथ शोभित है, वैसे संयम और व्रत को कौन धारण कर सकता है! परमार्थ को जाननेवाली पचास हजार रानियाँ भी रति को छोड़कर, धर्म को जानती हुई, सुखावती के साथ तप में लीन हो गयीं।

घत्ता—वह भी तपश्चरण कर, और मरकर वहाँ से स्वर्ग में इन्द्र हुई। कर्मों को नाश करनेवाले जिनवर के धर्म के प्रभाव से ऐश्वर्य आगे-आगे दौड़ता है॥ १२॥

१३

जहाँ न भूख है, न प्यास है और न नींद है, जहाँ शरीर सात धातुओं से रचित नहीं है, न शत्रु है, न मित्र है, न गृहिणी है, न घर है, जहाँ न लोभ है और न कोप है, जहाँ न काम है, न ज्वर है, न मान है, न माया है, न मोह है, न मद है, जहाँ जीव केवल ज्ञानमय है, जहाँ पाँचों इन्द्रियाँ और मन भी नहीं हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

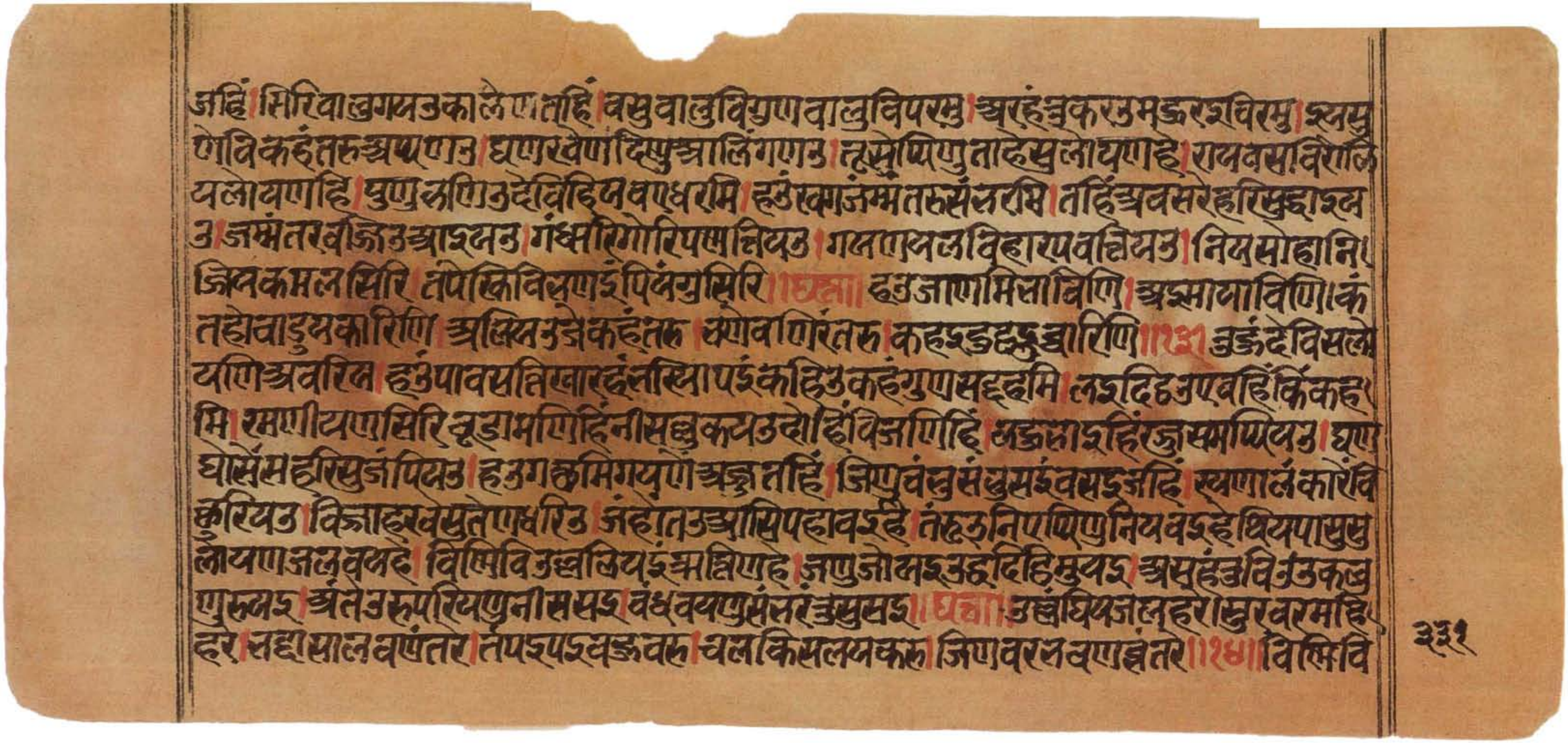

समय आने पर श्रीपाल भी वहाँ पहुँचा। वसुपाल, गुणपाल तथा परम अरहन्त भी मेरी रति का विराम करें। इस प्रकार अपना कथान्तर सुनकर प्रेम के वश से अपनी आँखों को घुमानेवाली उस सुलोचना को सन्तोष देने के लिए जयकुमार ने उसे आलिंगन दिया। उसने कहा कि हे देवी, मैं तुम्हें हृदय में धारण करता हूँ। मैं विद्याधर के जन्मान्तर की याद करता हूँ। उसी अवसर पर हर्ष से उछलती हुई पूर्व जन्म की विद्याएँ आयीं, गान्धारी, गौरी और प्रज्ञप्ति जो आकाशतल में विहार करने की प्रवृत्तिवाली थीं। अपनी शोभा से कमलश्री को जीतनेवाली प्रियंगुश्री उसे देखकर कहती है—

घत्ता—मैं समझती हूँ यह भामिनी अत्यन्त मायाविनी और प्रिय की चापलूसी करनेवाली है। यह दुष्ट दुराचारिणी झूठ-मूठ कथान्तर और भवजन्म-परम्परा कहती है॥ १३॥

१४

''हे देवी सुलोचने ! तुम अवतरित हुईं और मैं पापी सौत-खार से भर गयी। तुमने जो कथांग कहा, उसमें मैं श्रद्धा नहीं करती। लो मैंने सब देख लिया, अब क्या छिपाऊँ।'' तब रमणीजनों के लिए चूड़ामणि के समान उन दोनों ने उसे शल्यरहित बना दिया। जयकुमार ने अपने छोटे भाई के लिए राज्य सौंप दिया और मेघ के स्वर में घोषणा की कि आज मैं आकाश में वहाँ-वहाँ जाता हूँ जहाँ जिन, ब्रह्मा और स्वयम्भू स्वयं निवास करते हैं। उसने रत्नालंकारों से विच्छुरित विद्याधर का स्वरूप बनाया। जो प्रभावती का रूप था, अपने पति के लिए उस रूप को धारण कर सुलोचना आकाशपथ में प्रिय के पास स्थित हो गयी। दोनों शीघ्र आकाशपथ में उछल गये। जन उन्हें देखता है और अपनी ऊपर की दृष्टि छोड़ देता है। वियोग को सहन नहीं करता हुआ रोता है। अन्तःपुर और परिजन निःश्वास लेता है, बान्धवजन याद करता हुआ शुष्क होता है।

घत्ता—जिसने मेघों का अतिक्रमण किया है ऐसे सुमेरु पर्वत और भद्रशाल वन के भीतर जिन-मन्दिरों में चंचल कोयलों के समान हाथवाले वधू-वर प्रवेश करते हैं॥ १४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

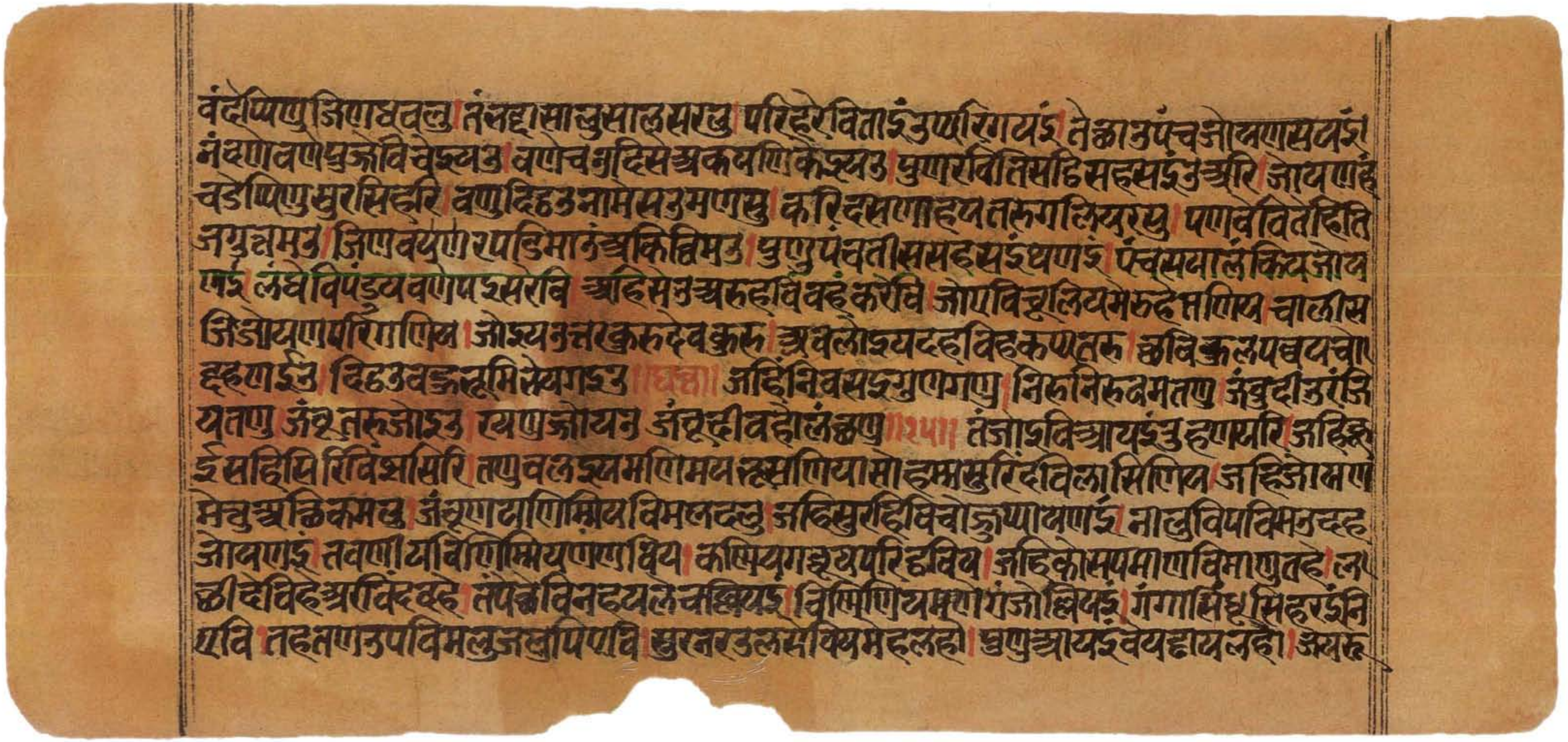

१५

दोनों जिनश्रेष्ठ की वन्दना कर, सालवृक्षों से सरल उस भद्रशाल वन का परित्याग कर उनके ऊपर पाँच योजन गये। वहाँ नन्दनवन में चारों दिशाओं में अकृत्रिम चैत्यालयों और चैत्यों की पूजा कर, फिर त्रेसठ हजार योजन ऊपर चढ़कर सुमेरु पर्वत के शिखर पर उन्होंने सौमनस नाम का वन देखा, जिसमें हाथियों के सूँडों से आहत वृक्षों से रस रिस रहा है। वहाँ पर भी जय से भुवनत्रय में उत्तम अकृत्रिम जिनवर प्रतिमाओं को प्रणाम कर फिर पैंतीस हजार पाँच सौ योजन ऊपर मेघों को लाँघकर पाण्डुक वन में प्रवेश कर, अर्हन्त बिम्बों का अभिषेक कर, मेरुपर्वत की चूलिका देखकर, चालीस योजन और जाकर उत्तरकुरु और दक्षिणकुरु के दर्शन किये और दस प्रकार के कल्पवृक्षों को देखा। छहों कुलपर्वत, चौदह नदियाँ और भेदगतिवाली अनेक नदियाँ देखीं।

घत्ता—जहाँ अपने गुणों और गणों से युक्त लोगों को रंजित करनेवाला अनुपम शरीर जम्बूस्वामी रहता है, ऐसा रत्नों से उद्योतित जम्बूद्वीप का चिह्न जम्बू वृक्ष देखा॥ १५॥

१६

उसे देखकर वे हिमगिरि पर्वत पर आये, जहाँ सखी विन्ध्यश्री देवी हुई थी, शरीर बलित, मणिमय भूषणोंवाली और सौधर्म स्वर्ग की विलासिनी। जहाँ एक योजन का कमल है, जिसके विमल कमलदल स्वर्ण से निर्मित हैं, जिसमें देवों में भी आश्चर्य उत्पन्न करनेवाला दस योजन का कमल माल है तथा सोने से निर्मित एक गव्यूति प्रमाण नयी कर्णिका है, अरविन्द सरोवर में उस लक्ष्मीदेवी का एक कोश प्रमाण विमान है। उसे देखकर वे लोग आकाशतल पर चले। दोनों ही अपने मन में पुलकित थे। गंगा और सिन्धु नदी के शिखरों को देखकर, उनका सुगन्धित जल पीकर वे लोग शवरकुल से सेवित मेखलावाले विजयार्ध पर्वत पर आये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वहाँ पर जयकुमार के रूपरूपी कमल की लम्पट एक विद्याधरी रास्ता रोककर बैठ गयी। वह कहती है कि यहाँ पर तीनों विश्वों को तोलनेवाला गान्धार पिंग नाम का विद्याधर रहता है।

घत्ता—मैं उसकी कन्या हूँ। नवकमल के समान भुजाओंवाली तुम्हें देखते हुए जगसुन्दर कामदेव ने प्रत्यंचा पर तीर चढ़ाकर तथा अपने स्थान को लक्ष्य बनाकर मुझे विद्ध कर दिया है॥ १६॥

१७

नमि विद्याधर की गृहिणी मैं विश्व में तडित्मालिनी के नाम से प्रसिद्ध हूँ। हजारों विद्याओं की सम्पत्ति धारण करनेवाले विद्याधरों के युद्ध में अजेय हूँ। हे सुन्दर, यदि तुम आज चाहते हो तो तुम्हारे लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं होगा? यह सुनकर भरत के सेनापति जयकुमार ने कहा— "हे सुन्दरी, तुम मूढ़मति हो। हे स्वैरचारिणी, मार्ग से हट। हे व्योमविहारिणी! तू क्या कहती है ? परस्त्री मेरे लिए माता के समान है। जो वैतरिणी नदी में प्रवेश कर सकता है वह अत्यन्त निर्धन तुम्हारा सेवन करे। हे माता, मैं तुम्हारा पुत्र होता हूँ।" तब उस असती ने क्रुद्ध होकर पीले बालोंवाले निशाचर को भेजा, जो बालचन्द्र के समान दाढ़ोंवाला, नवमेघ और अंजन के समान काला, चंचल जीभरूपी पल्लव के मुखवाला, भुजा-समूह के समान आँखोंवाला, लम्बे घोणस साँप की मेखलावाला, किल-किल शब्द से कलकल करता हुआ।

घत्ता—इन्द्रधनुष के विन्यासों, बिजलियों के विलासों, स्थिर जलधारावाले मेघों तथा बड़े-बड़े सुभटों के शरीरों का भेदन करनेवाले नाना प्रकार के अनेक शस्त्रों के द्वारा उसने उसे घेर लिया॥ १७॥

१८

उनसे भी जयकुमार के शील की पवित्रता नष्ट नहीं हुई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

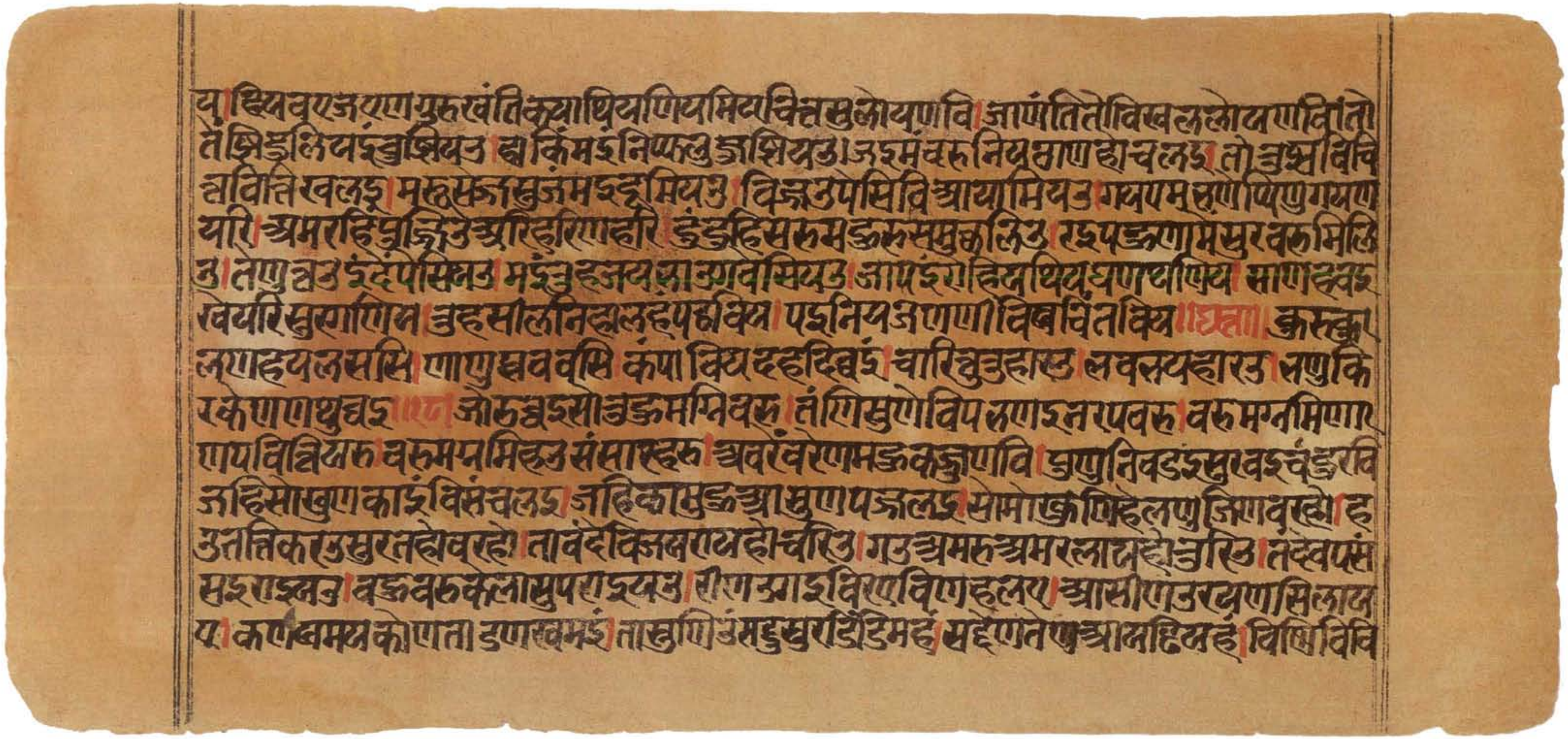

अपने हृदय में जय ने महान् शान्ति धारण की। सुलोचना भी अपना मन नियमित करके स्थित हो गयी। तब भी दुष्ट लोक नहीं समझ सका। तब उस पुंश्चली की समझ में आया कि मैंने व्यर्थ युद्ध क्यों किया! यदि मन्दराचल अपने स्थान से चलित होता है, तो तुम्हारी (जयकुमार की) चित्तवृत्ति चलित हो सकती है। मैंने तुम्हें जो पीड़ा पहुँचायी है, और विद्या भेजकर कष्ट दिया है, उससे क्रुद्ध मत होना। यह कहकर वह विद्याधरी चली गयी। शत्रुरूपी हरिणी के सिंह उसकी देवों ने पूजा की। मधुर दुन्दुभि स्वर उछल पड़ा। रतिप्रभ नाम का सुरश्रेष्ठ उससे आकर मिला। उसने कहा कि इन्द्र के द्वारा प्रेषित मैंने तुम्हारे पवित्र भाव का अनुसंधान कर लिया। सघन स्तनोंवाली जो तुम्हें रोककर स्थित थी वह विद्याधरी नहीं, अप्सरा थी, जो तुम्हारे शील की परीक्षा करने के लिए भेजी गयी थी। लेकिन तुमने अपने मन में उसे अपनी माता के समान माना।

घत्ता—हे कुरुकुलरूपी आकाश के चन्द्र, इन्द्रियों को वश में करनेवाले दसों दिग्गजों को कँपानेवाले हे जयकुमार, संसार के भय का हरण करनेवाले तुम्हारे चारित्र्य की प्रशंसा किसके द्वारा नहीं की जाती।।१८॥

१९

जो अच्छा लगे वह वर माँग लो। यह सुनकर वह श्रेष्ठ मनुष्य कहता है—"मैं ज्ञान की पवित्रता करनेवाला वर माँगता हूँ। मैं संसार का हरण करनेवाला वर माँगता हूँ। किसी दूसरे वर से मुझे काम नहीं है। इन्द्र, चन्द्रमा और सूर्य का पतन होता है। जहाँ सुख कभी भी विचलित नहीं होता, जहाँ काम की ज्वाला प्रज्वलित नहीं होती, जिनवर का घर वह मोक्ष मुझे चाहिए। मैं उसी वर से सन्तुष्टि पा सकता हूँ।" इस प्रकार जयकुमार राजा के चरित की वन्दना कर वह देव तुरन्त देवलोक चला गया। देवप्रशंसा से शोभित वधू और वर कैलास पर्वत पहुँचे। आकाशतल में अपनी गति क्षीण कर वे रत्नों से निर्मित शिलातल पर स्थित हो गये। तब उन्होंने स्वर्णदण्डों के ताड़न से सक्षम देव-दुन्दुभियों का शब्द सुना। उस शब्द से आकर्षित होकर,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

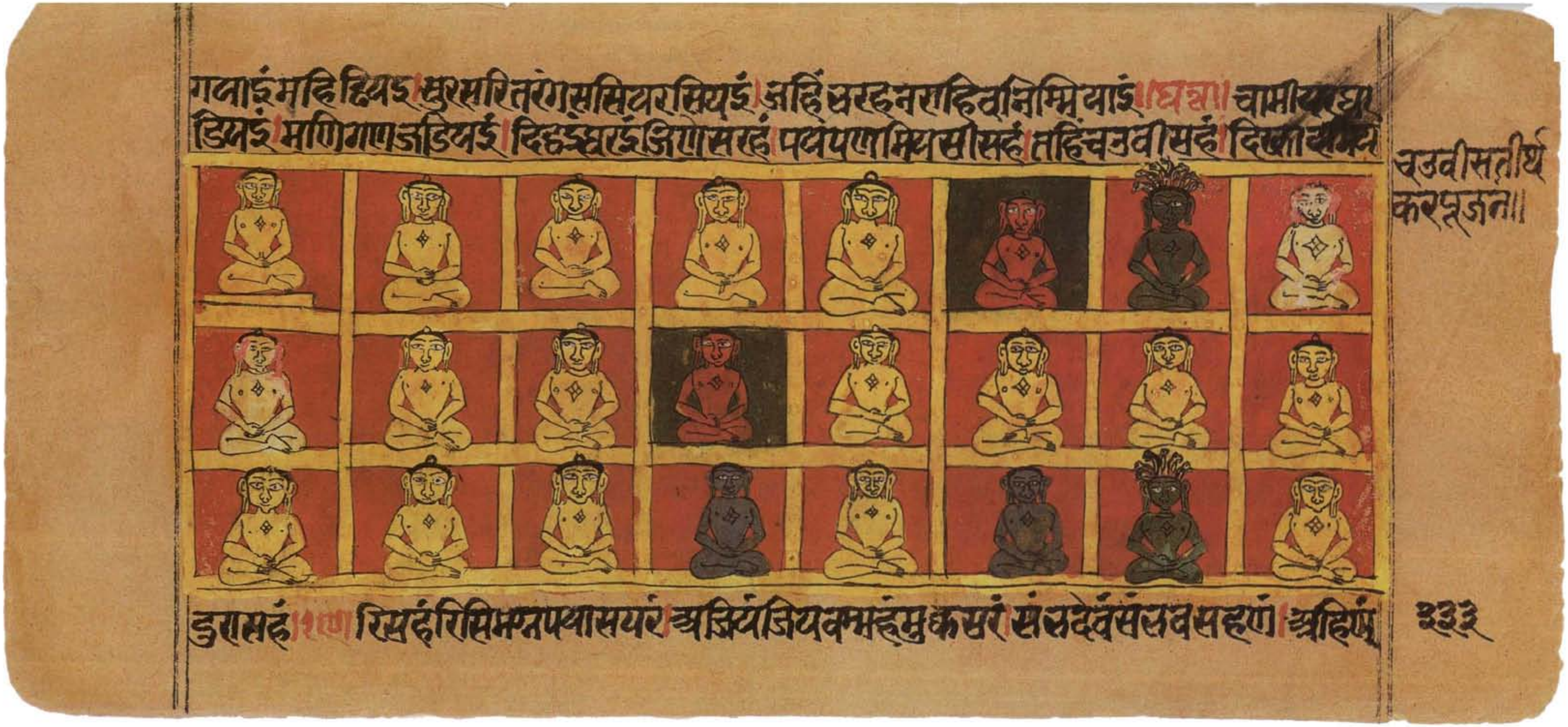

वे दोनों वहाँ गये जहाँ महा ऋद्धियों से सम्पन्न, देव-गंगा की जल-लहरों से शीतल भरत राजा के द्वारा निर्मित,

घत्ता—स्वर्णरचित मणिसमूह से विजड़ित, जिनके पैरों पर इन्द्रादि प्रणत हैं, जो दीक्षा के द्वारा संसार की दुराशाओं का दमन करनेवाले हैं ऐसे चौबीस जिनेश्वर के मन्दिरों को देखा॥ १९ ॥

२०

मुनिमार्ग का प्रकाशन करनेवाले ऋषभ को, कामदेव के द्वारा मुक्त बाणों के विजेता अजितनाथ को, संसार का नाश करनेवाले सम्भवनाथ को, संसार और धरती को आनन्द करनेवाले अभिनन्दन को,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

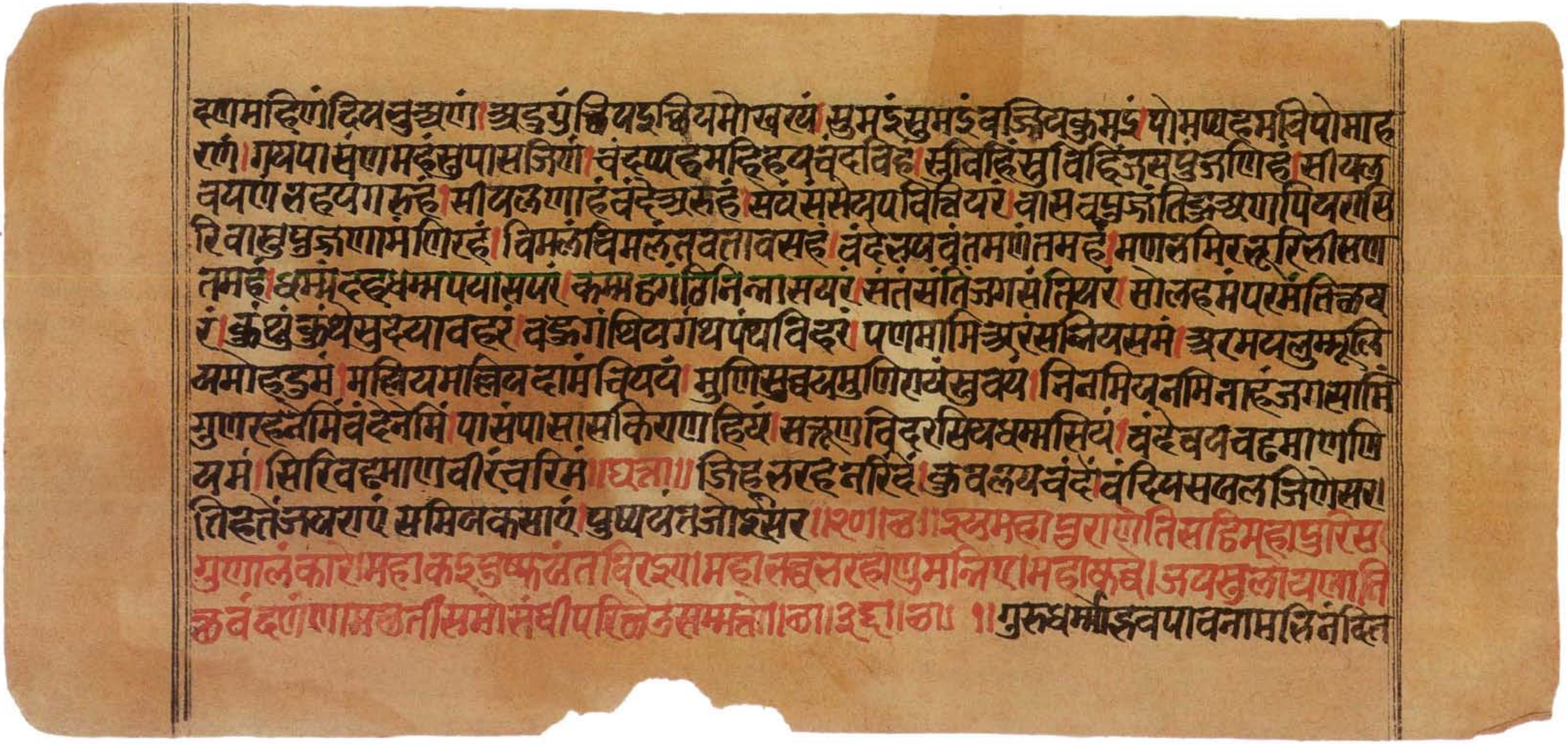

अनिन्दित मोक्षगति को चाहनेवाले तथा कुमति को छोड़नेवाले सुमति को, केवलज्ञान रूपी लक्ष्मी को धारण करनेवाले पद्मप्रभ भगवान् को, बन्धन से रहित सुपार्श्व को नमस्कार करो। चन्द्रमा की विशिष्ट कान्ति को नष्ट करनेवाले चन्द्रप्रभ की, यश:समूह के समान बुद्धिवाले सुविधि की, अपने शीतल वचनों से संसार के रोगों को दूर करनेवाले शीतलनाथ की मैं वन्दना करता हूँ। कल्याण-प्रवृत्ति के विधाता श्रेयांस को, त्रिभुवन के पिता इन्द्र के द्वारा पूज्य, पूजनीय श्रीवासुपूज्य को, तप के ताप के सहनकर्ता पवित्र विमलनाथ को, मन को घुमानेवाले प्रचुर और भयंकर अज्ञान अन्धकार के नष्ट करनेवाले ऐश्वर्य-सम्पन्न अनन्तनाथ को मैं नमस्कार करता हूँ। दस धर्मों के उपदेशक और स्व-पर को जाननेवाले धर्मनाथ को मैं प्रणाम करता हूँ। स्वयं शान्त और विश्व में शान्ति के विधाता सोलहवें तीर्थंकर शान्तिनाथ को, अत्यन्त सूक्ष्म जीवों के प्रति दया करनेवाले, तरह-तरह की (अन्त:-बाह्य) ग्रन्थियों से परिपूर्ण पन्थों को दूर करनेवाले कुन्थुनाथ को, शमभाव के धारक, अचल मोहवृक्ष को उखाड़नेवाले अरहनाथ को, मालती पुष्प की मालाओं से अंचित मल्लिनाथ को, सुव्रती मुनिसुव्रत को, चक्रवर्तियों के द्वारा प्रणम्य विश्वस्वामी नमिनाथ को, गुणरूपी रथ की नेमि नेमिनाथ को, पाशों के लिए हाथ में तलवार लेनेवाले पार्श्वनाथ को तथा शत्रुओं के लिए भी धर्म की श्री दिखानेवाले, व्रतों से नियमों की उत्तरोत्तर वृद्धि करनेवाले, अन्तिम तीर्थंकर वर्धमान को मैं प्रणाम करता हूँ।

घत्ता—जिस प्रकार पृथ्वीमण्डल के चन्द्र भरतराजा ने समस्त जिनेश्वरों की वन्दना की, उसी प्रकार शान्त कषाय जयकुमार राजा ने पुष्पदन्त योगीश्वरों (तीर्थंकरों) की वन्दना की॥ २०॥

त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का जय-सुलोचना तीर्थवन्दन नाम का छत्तीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ३६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

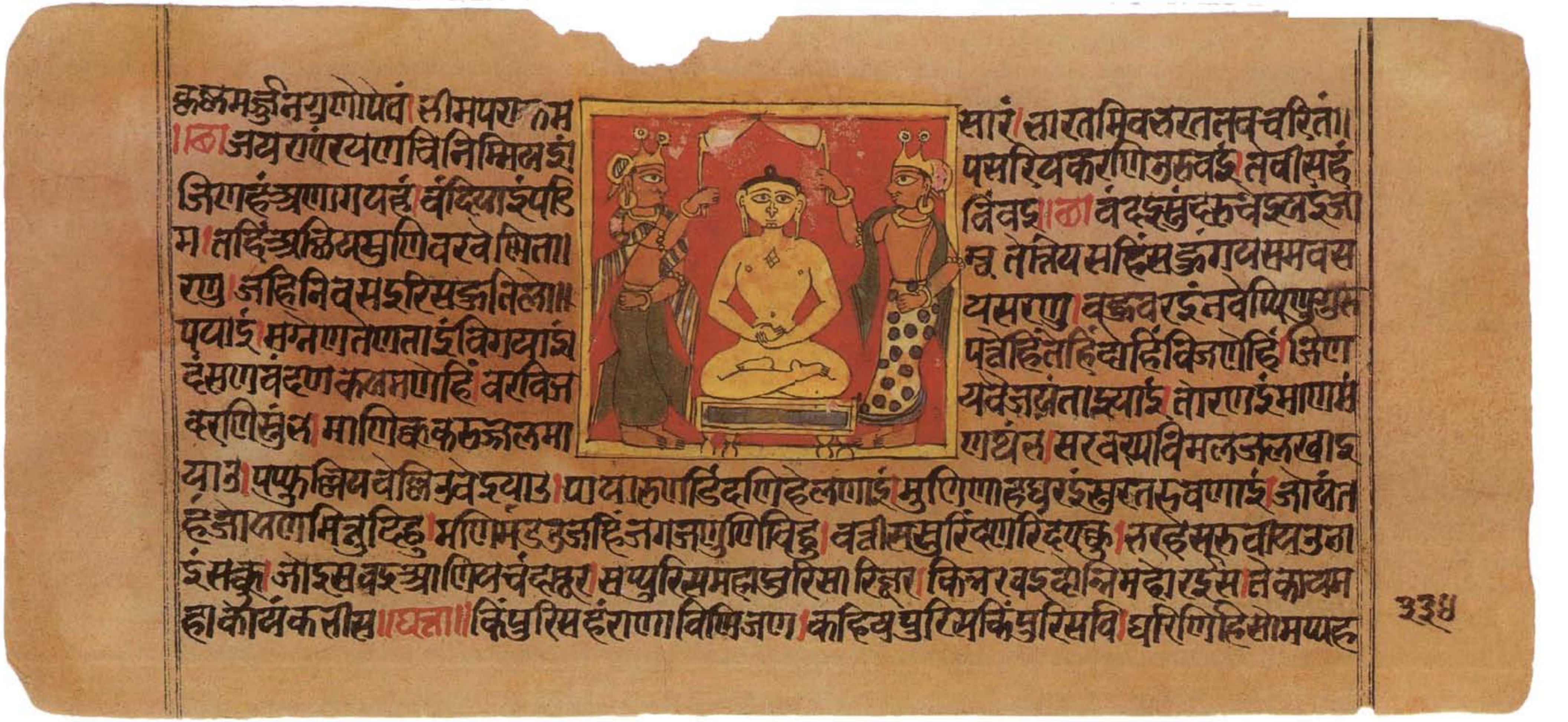

सन्धि ३७

राजा जयकुमार ने अनागत (आगामी) तेईस तीर्थंकरों की ऐसी रत्ननिर्मित प्रतिमाओं की, जिनसे किरणों का समूह प्रसारित हो रहा है, वन्दना की।

१

जब सुन्दरी चैत्यों की वन्दना करती है वहाँ दो मुनिवर विद्यमान थे। वे दोनों देवों के साथ उस समवसरण के लिए गये, जहाँ त्रिलोकशरण ऋषभ निवास करते थे। वधू-वर भी गुरु-चरणों को नमस्कार कर उसी मार्ग से वहाँ गये। जिन भगवान् के दर्शनों की इच्छा रखनेवाले उन दोनों ने भी वहाँ पहुँचकर वर-विजय-वैजयन्तादि चारों दरवाजों और तोरणों को देखा। मानरूपी मन्दराचल का नाश करनेवाले तथा माणिक्य की किरणों से उज्ज्वल मानस्तम्भ, सरोवरों की स्वच्छ खाइयों, खिली हुई लताओंवाली वेदिकाओं, प्राकारों, नटराजों के घरों, मुनिनाथों के निवासों, कल्पवृक्षों के वन और एक योजन का बना हुआ मण्डप देखा, जिसमें विश्वजन-समूह बैठा हुआ था। बत्तीस इन्द्र (कल्पवासी १२, भवनवासी १०, व्यन्तर ८ और चन्द्र तथा सूर्य), एक भरतेश्वर चक्रवर्ती, जो मानो दूसरा इन्द्र था, ज्योतिषपति और चन्द्रसूर्य जो सत्पुरुषों और महापुरुषों को पीड़ा उत्पन्न करनेवाले हैं, किन्नरपति दोनों महानागराज, जो काय और महाकायांक से अत्यन्त भयानक थे।

घत्ता—किंपुरुषों के दो इन्द्र थे जो पुरुष और किंपुरुष कहे जाते हैं। सोमप्रभ के पुत्र ने अपनी गृहिणी की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

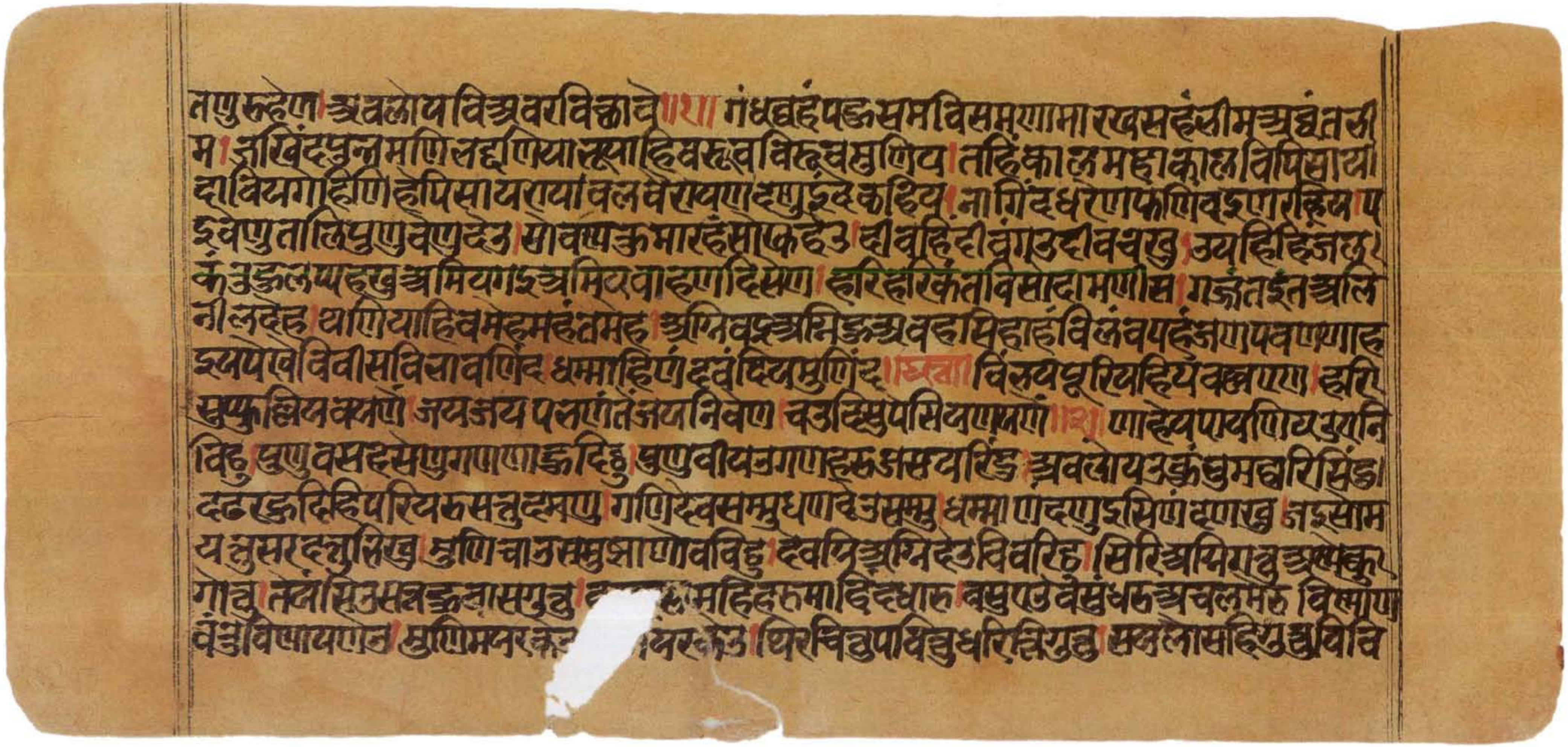

नये सूर्य के समान छवि को देखा॥ १ ॥

२

गन्धर्वों का समविषम नाम का राजा। राक्षसों के भीम और अत्यन्त भीम, यक्षेन्द्र पुनः पुण्यभद्र और मणिभद्र कहे जाते हैं। भूतों के राजा रूप और विरूप हैं। पिशाचों में वहाँ काल और महाकाल राजा हैं। बल और वैरोचन दानवेन्द्र कहे जाते हैं। नागराज धरणेन्द्र और फणीन्द्र भी बाकी नहीं बचे। स्वर्णकुमारों के सुख के कारण उनके राजा वेणुवलि और वेणुदेव हैं। द्वीपकुमार के दीपांग और दीपचक्षु हैं, समुद्रों में अलकान्त और जलप्रभ। दिक्कुमारों के अमितगति और अमितवाहन। विद्युत्कुमारों के हरि और हरिकान्त। भ्रमर के समान कृष्णशरीर स्तनितों के देव मेघ और महन्तमेघ थे। अग्निज्वालाओं के अग्नि और अग्निदेव, पवनों के स्वामी बेलम्ब और प्रभंजन इस प्रकार बीस भवनवासी इन्द्रों को देखकर उन्होंने धर्म से अभिनन्दनीय मुनियों की वन्दना की।

घत्ता—आश्चर्य से भरे हुए हृदय और हर्ष से खिले हुए जय राजा जय-जय कहते हुए तथा चारों ओर दृष्टि घुमाते हुए—॥ २ ॥

३

वह नाभेय (ऋषभ) के चरणों के निकट बैठ गया। फिर उसने प्रमुख गणधर वृषभसेन के दर्शन किये। फिर दूसरे गणधर यतिवरेन्द्र और महाऋषीन्द्र कुम्भ को देखा। फिर धैर्य के समूह शत्रुदमन गणधर देवशर्मा, श्रमण, धनदेव, धर्मनन्दन, ऋषिनन्दन, यति सोमदत्त, भिक्षु सुरदत्त, ध्यान में स्थित मुनि वायुशर्मा, देवाग्नि और वरिष्ट अग्निदेव, मुनि अग्निगुप्त और एक अन्य गोत्र के तेज अंशवाले अग्निगुप्त। हलधर, महीधर, धीर माहेन्द्र, वसुदेव, वसुन्धर, अचल मेरु, विज्ञानवान, विज्ञाननेय, कामदेव को नष्ट करनेवाले मुनि मकरकेतु, स्थिर चित्त, पवित्र, धरित्रीगुप्त, सकल औषधिगुप्त और विजयगुप्त भी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

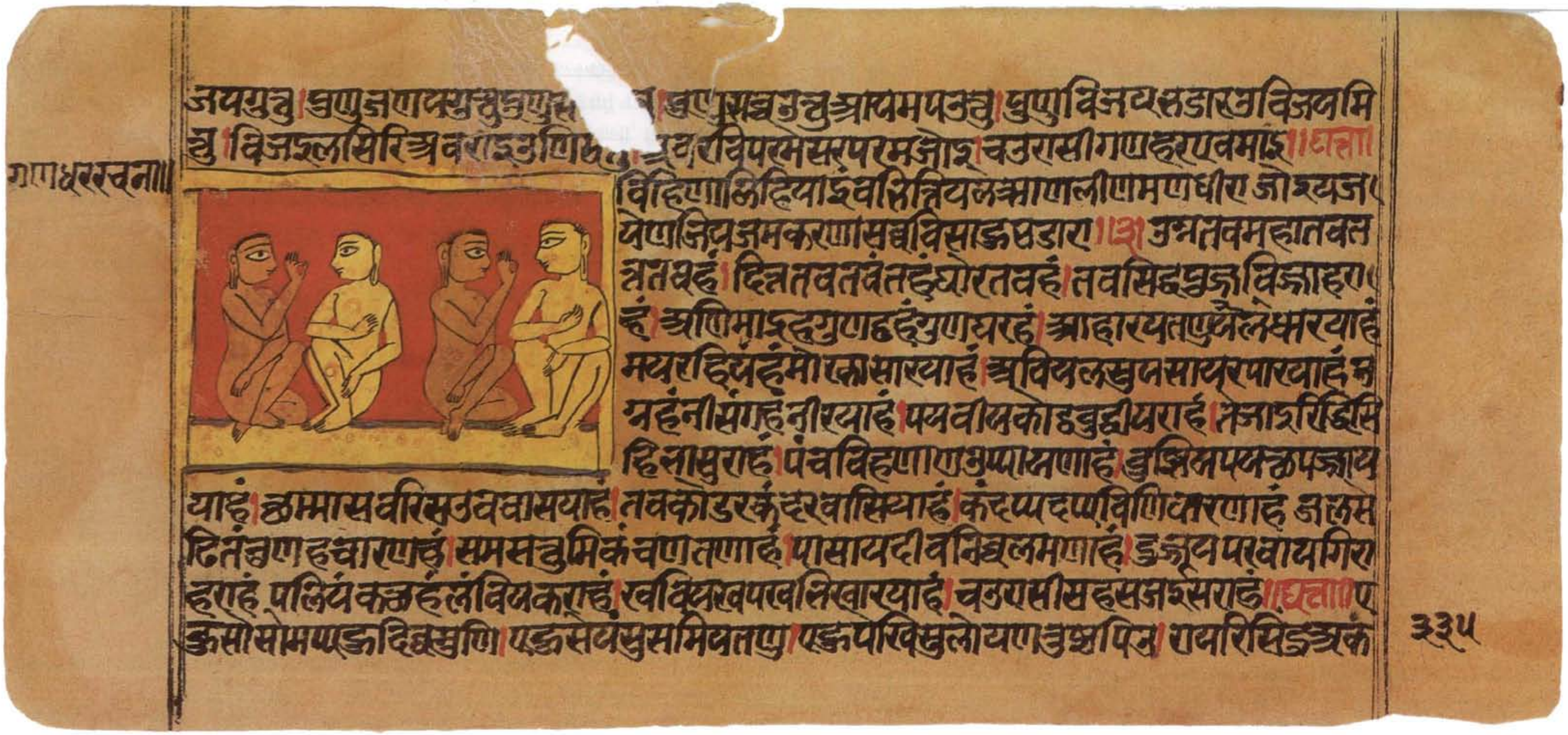

फिर यज्ञगुप्त और फिर सर्वगुप्त, फिर सर्वार्थगुप्त जैसा कि आगम में कहा गया है; फिर भट्टारक विजय, विजयमित्र, विजहल (विजयदत्त) और श्री अपराजित और भी परमेश्वर, परमज्योति इत्यादि चौरासी गणधर थे।

घत्ता—विधाता के द्वारा भित्तितल पर लिखे हुए के समान, ध्यान में लीन और मन से धीर, सभी यम को जीतनेवाले आदरणीय गणधरों को जय ने देखा॥ ३॥

४

उग्र तप और महातप तपनेवाले, दीप्त तप तपनेवाले, घोर तपवाले, तप से सिद्ध पूज्य विद्याओं को धारण करनेवाले, अणिमादि गुणों से सम्पन्न गणधरों, आहारक शरीर को धारण करनेवाले मद से रहित, मोक्ष की आशा में लीन रहनेवाले, अविचल श्रुतरूपी सागर को पार करनेवाले, नग्न-अनासंग-निष्पाप, कोष्ठ बुद्धीश्वरों को पदों में प्रणत करानेवाले, तेज में ऋद्धियों और आग से भास्वर, पाँच प्रकार के ज्ञान को प्राप्त करनेवाले, पदार्थ और उनके पर्यायों को जाननेवाले, छह माह और एक वर्ष में उपवास करनेवाले वृक्षों की कोटरों और पहाड़ी कन्दराओं में निवास करनेवाले, कामदेव के दर्प को चूर-चूर करनेवाले, जलश्रेणी-तन्तु और आकाश में विचरण करनेवाले, शत्रु-मित्र, काँच और कंचन में समताभाव धारण करनेवाले, प्रासाद में रखे हुए दीपक समान निश्चल मनवाले, अजेय पर-सिद्धान्तवादियों की वाणी का अपहरण करनेवाले, पर्यंकासन पर हाथ लम्बे कर बैठे हुए इन्द्रियों के पक्ष का नाश करनेवाले, भिक्षा में रत चौरासी मुनिवरों को देखा।

घत्ता—ये दिव्य मुनि सोमप्रभ हैं। ये मन को शान्त करनेवाले राजा श्रेयांस हैं। ये देखो सुलोचने, तुम्हारे पिता राजर्षि अकम्पन हैं॥ ४॥

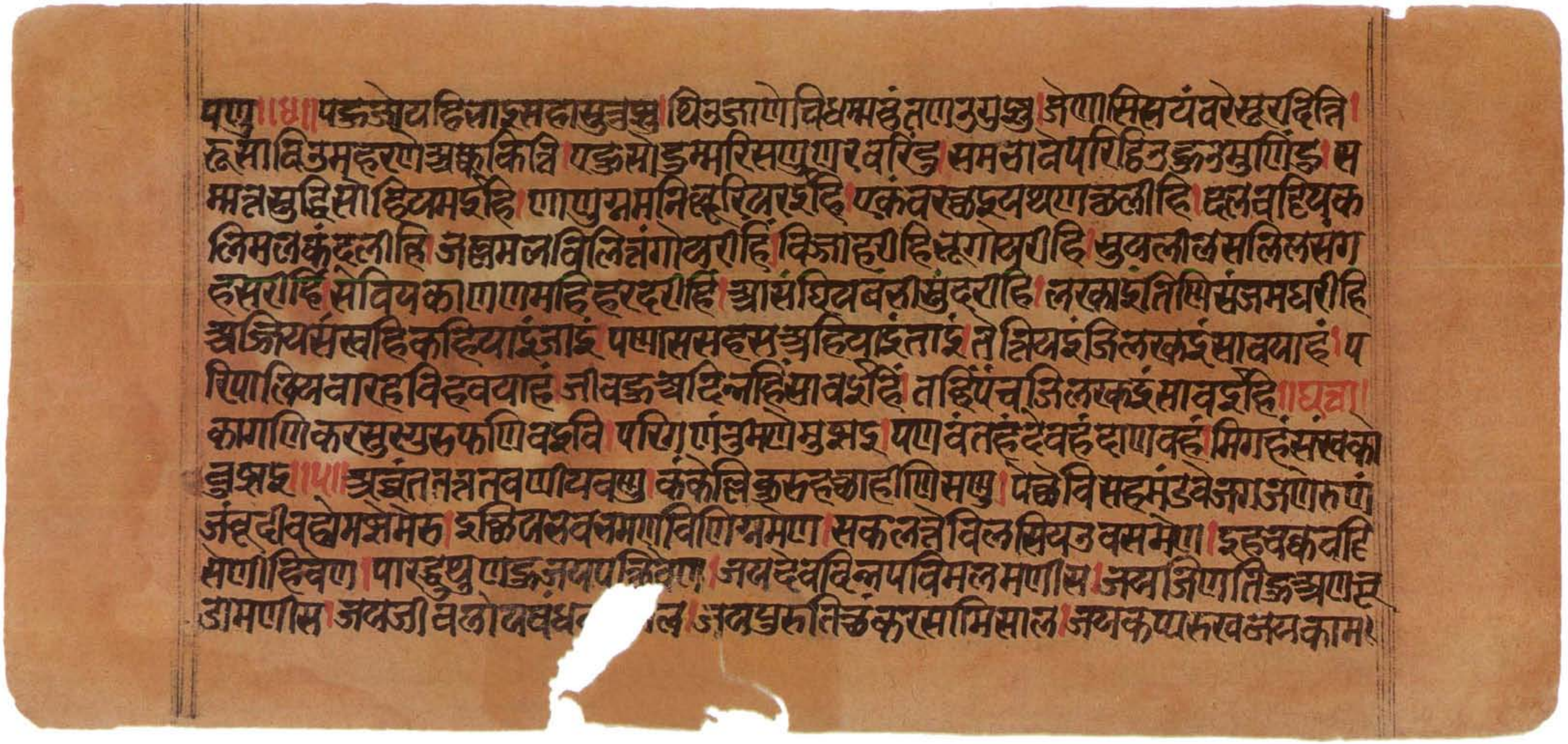

५

ये देखो तुम्हारे एक हजार भाई हैं जो धर्म का रहस्य जानकर स्थित हैं। जिसने स्वयंवर में सूर्य के समान दीप्तिवाले अर्ककीर्ति को महायुद्ध में रुष्ट किया था, यह वह दुर्मर्षण नरवरेन्द्र समभाव में स्थित मुनीन्द्र हो गया है। सम्यक्त्व और शुद्धि से शोभित बुद्धिवाली ज्ञान के उद्गम से रति को नष्ट करनेवाली, अपनी स्तनरूपी स्थली को एक वर्ष से आच्छादित करनेवाली, पापमल के अंकुरों को नष्ट करनेवाली, प्रस्वेदमल से विचित्र अंग से गोचरी करनेवाली, पवित्र शीलरूपी जल के संग्रह की नदी, कानन और महीधरों की घाटियों में निवास करनेवाली, ब्राह्मी और सुन्दरी की शरण लेनेवाली, संयम धारण करनेवाली, विद्याधरियों और मनुष्यनियों की संख्या तीन लाख थी। जितनी आर्यिकाओं की संख्या कही गयी है उसमें पचास हजार अधिक और उतने ही लाख—अर्थात् साढ़े तीन लाख बारह प्रकार के व्रतों को धारण करनेवाले श्रावक थे। जीवमात्र को हिंसा की आपत्ति नहीं देनेवाली वहाँ पाँच लाख श्राविकाएँ थीं।

घत्ता—कागणिकर, बृहस्पति, नागराज भी संख्या गिनते हुए मन में मूर्च्छित हो जाते हैं। उन्हें प्रणाम करते हुए देवों, दानवों और पशुओं की संख्या कौन समझ सकता है!॥५॥

६

अत्यन्त तपे हुए सोने के रंग के समान, अशोकवृक्ष की छाया में विराजमान सभामण्डप में जगत्पिता को देखकर, मानो जम्बूद्वीप के बीच में सुमेरुपर्वत हो, भवभ्रमण से निवृत्ति की इच्छा रखनेवाले उपशमभाव से शोभित अपनी पत्नी के साथ चक्रवर्ती भरत के सेनापति राजा जयकुमार ने स्तुति प्रारम्भ की—''विमल बुद्धि देनेवाले हे देव! आपकी जय हो, त्रिभुवन श्रेष्ठ! आपकी जय हो, जीवलोक के बन्धु और दयालु! आपकी जय हो, पुरुतीर्थंकर स्वामिश्रेष्ठ! आपकी जय हो, हे कल्पवृक्ष, हे कामधेनु! जय हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

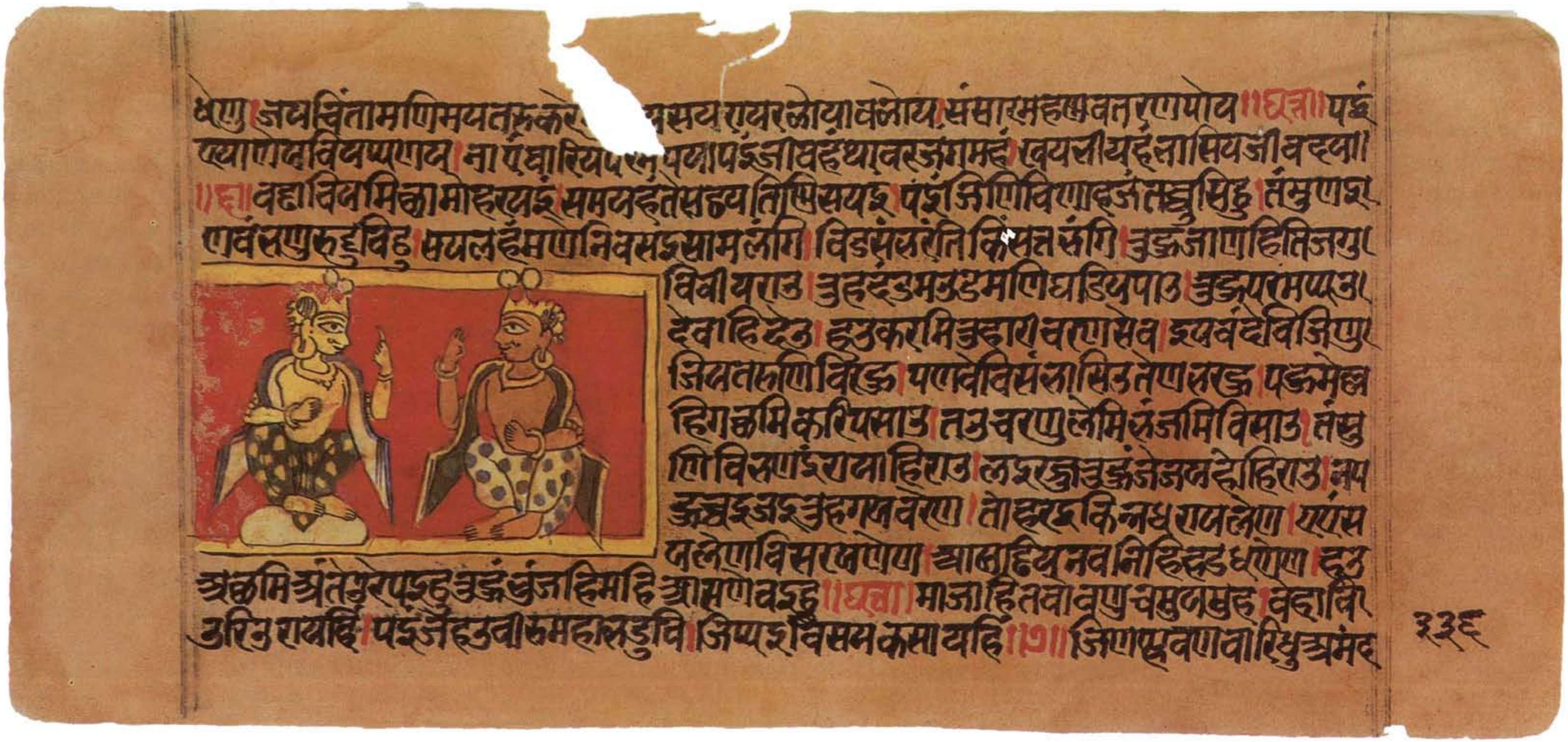

हे चिन्तामणि और मदरूपी वृक्ष के लिए गज! आपकी जय हो। सचराचर लोक का अवलोकन करनेवाले! आपकी जय हो, संसाररूपी समुद्र के सन्तरण पोत (जहाज)! आपकी जय हो।

घत्ता—हे परमपद! आपने एकानेक (अद्वैत-क्षणिक आदि विकल्प) के विकल्पवाले नय के न्याय से पर-मत का निवारण किया है, आपने क्षय से भयभीत स्थावर-जंगम जीवों के लिए जीवदया का कथन किया है॥ ६॥

७

मिथ्यामोह और रति को बढ़ानेवाले तीन सौ त्रेसठ मतों को जीतकर, हे स्वामी, आपने जिस तत्त्व की रचना की है उसे ब्रह्मा, विष्णु और शिव नहीं जानते। सभी के मन में श्यामलांगी (सुन्दरी) निवास करती है, वे विट, सप्तभंगी की क्या याद कर सकते हैं। हे वीतराग, आप तीनों लोकों को जानते हैं। तुम परमात्मा और देवाधिदेव हो। मैं तुम्हारी चरणसेवा करूँगा। इस प्रकार जिन की वन्दना कर, रमणी के विरह को जीतनेवाले भरत को प्रणाम कर उसने उनके साथ सम्भाषण किया—"हे प्रभु, छोड़ दीजिए, मैं जाता हूँ। प्रसाद करिए, मैं तपश्चरण लूँगा और दु:ख का नाश करूँगा?" यह सुनकर राजाधिराज भरत कहता है—"हे जय, लो तुम्हीं राज्य ले लो, तुम्हीं राजा हो जाओ। यदि तुम्हें गजपुर पर्याप्त नहीं है, तो धरतीतल तथा रत्नों सहित इस समस्त नवनिधिरूपी घड़ों में संचित धन से भी क्या पूरा न पड़ेगा! मैं अन्त:पुर में प्रवेश करके रहता हूँ। तुम सिंहासन पर बैठकर धरती का भोग करो।

घत्ता—हे सेनाप्रमुख, तुम तपोवन के लिए मत जाओ, शत्रुराजाओं से विजय-वृद्धि को प्राप्त तुम-जैसा वीर महासुभट भी (क्या) विषय कषायों से जीता जा सकता है?॥ ७॥

८

तब जिन-भगवान् के अभिषेक-जल से मन्दराचल को धोनेवाले

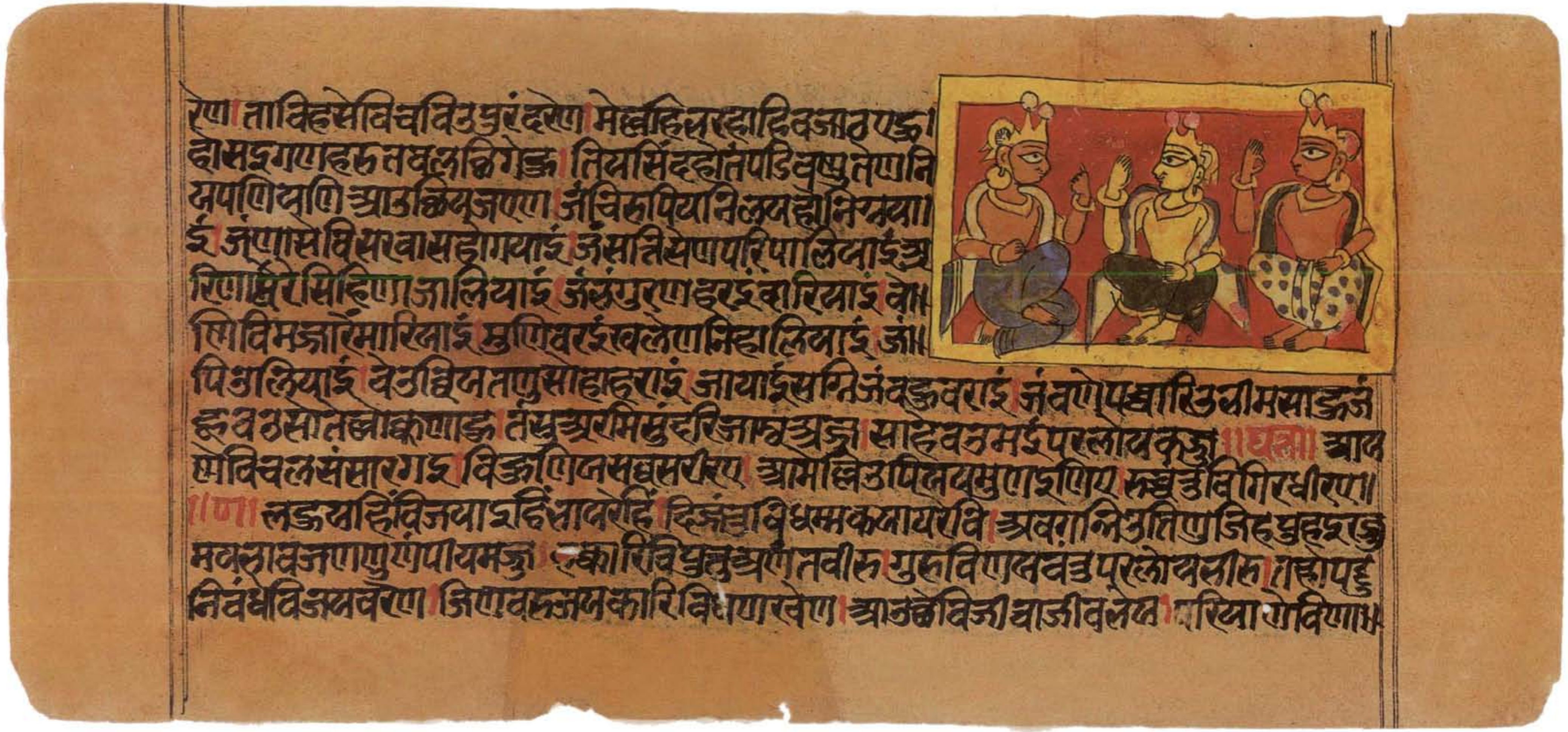

इन्द्र ने हँसकर कहा—हे भरताधिप, आप इसे छोड़ दें, यह जाये। तपलक्ष्मी का घर यह गणधर होगा। तब भरत ने देवेन्द्र के लिए इसकी स्वीकृति दे दी। जयकुमार ने अपनी पत्नी से पूछा—"जो पहले हम पिता के घर से निकले थे, और जब सरोवरवास पर भागकर गये थे और (सामन्त) शक्तिषेण ने हमारा पालन किया था, और घर में शत्रु के द्वारा आग से जलाये गये थे, जो भंगुर नखों से हम विदीर्ण किये गये थे, और दोनों मार्जार के द्वारा मारे गये थे, हम मुनिवर उस दुष्ट के द्वारा देखे गये थे, और जो मरघट में जलाये गये थे, और जो वैक्रियिक शरीर की शोभा धारण करनेवाले स्वर्ग में वधू-वर हुए थे, और जो हमने वन में भीमसाधु को पुकारा था, और जो वह त्रिलोकनाथ हुआ, हे सुन्दरी, मैं उस सबको याद करता हूँ, आज मैं अब जाता हूँ। मैं अब अपना परलोक कर्म सिद्ध करूँगा।"

घत्ता—संसार की चंचल गति सुनकर, अपने समस्त शरीर को कँपाते हुए, पर्वत की तरह धीर उस प्रणयिनी ने चाहते हुए भी प्रियतम को मुक्त कर दिया॥ ८॥

९

धर्म का आदर करनेवाले विजय आदि छोटे भाइयों ने भी दिये जाते हुए पृथ्वी-राज्य को तृण के समान समझा और पिये गये मद्य के समान मदभाव को उत्पन्न करनेवाला समझा। उसने अनन्तवीर्य पुत्र को बुलाया, जो गुण और विनय से युक्त परलोक-भीरु था। जयकुमार ने उसे राजपट्ट बाँधकर, मेघस्वरवाले उसने जिन की जय-जयकार कर, जीव-अजीव के भेद को जानकर, नाना ज्ञानों से ज्ञेय जानकर,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

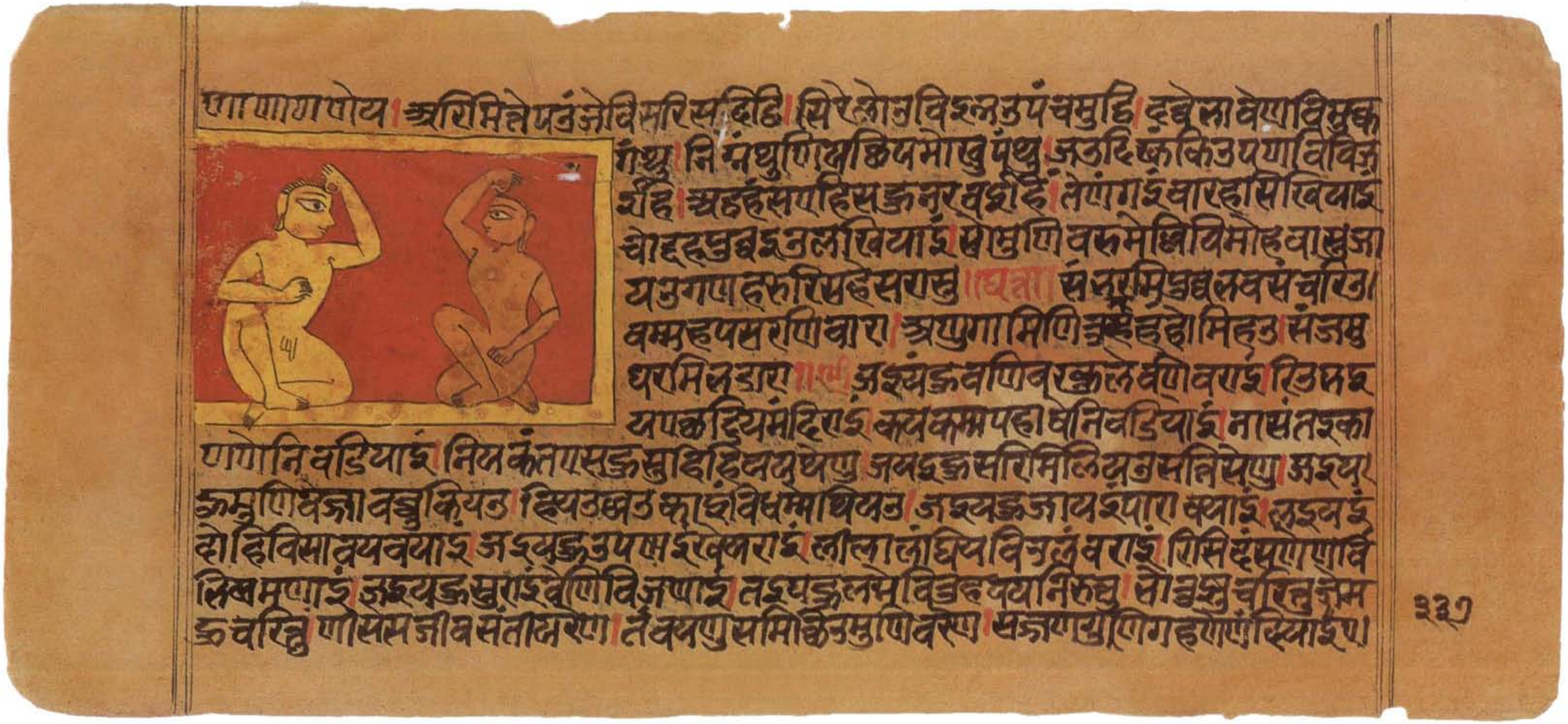

शत्रु और मित्र में समान दृष्टि कर, पाँच मुट्ठियों से सिर के बाल उखाड़ लिये, और द्रव्य तथा भाव की दृष्टि से परिग्रहमुक्त हो गया। निर्ग्रन्थ और मोक्षपथ को देखनेवाले दीक्षा से अंकित जय को आठ सौ राजाओं के साथ मुनियों ने प्रणाम किया। उसने बारह अंगों को सीखा और चौदह पूर्वों को उपलक्षित किया। वह मुनिवर मोहपाश छोड़कर, ऋषभेश्वर का गणधर हो गया।

घत्ता—हे कामदेव के प्रसार का निवारण करनेवाले आदरणीय, मैं पूर्वभव की गतियों को स्मरण करती हूँ, मैं तुम्हारी अनुगामिनी बनूँगी, मैं संयम धारण करूँगी॥ ९॥

१०

जब वणिग्वर के कुल में हम वणिक् थे और शत्रु से भयभीत होकर हमने अपना घर छोड़ा था, अपने किये गये कर्म के प्रभाव से प्रताड़ित हम भागते हुए जंगल में गये। उस समय सुधीजनों के हृदय का चोर (सामन्त) शक्तिषेण अपनी कान्ता के साथ सरोवर पर मिला। जब हम लोगों ने मुनि की वैयावृत्त्य की तो किसी प्रकार हृदय धर्म में स्थित हुआ। जब हम कबूतर हुए, हम दोनों ने श्रावक व्रत ग्रहण किये। जब हम लीला से विशाल आकाश का उल्लंघन करनेवाले विद्याधर हुए, जब मुनिदर्शन से विस्मित मन हम दोनों सुर हुए। तब से लेकर हम वधू और पति रहे। अरे, तुम्हारा चरित्र ही हमारा चरित्र है। (सुलोचना के) ये वचन निःशेष जीवों को शान्ति प्रदान करनेवाले मुनिवर ने पसन्द किये। सज्जनों के गुणों को ग्रहण करने में आनन्दित होनेवाली

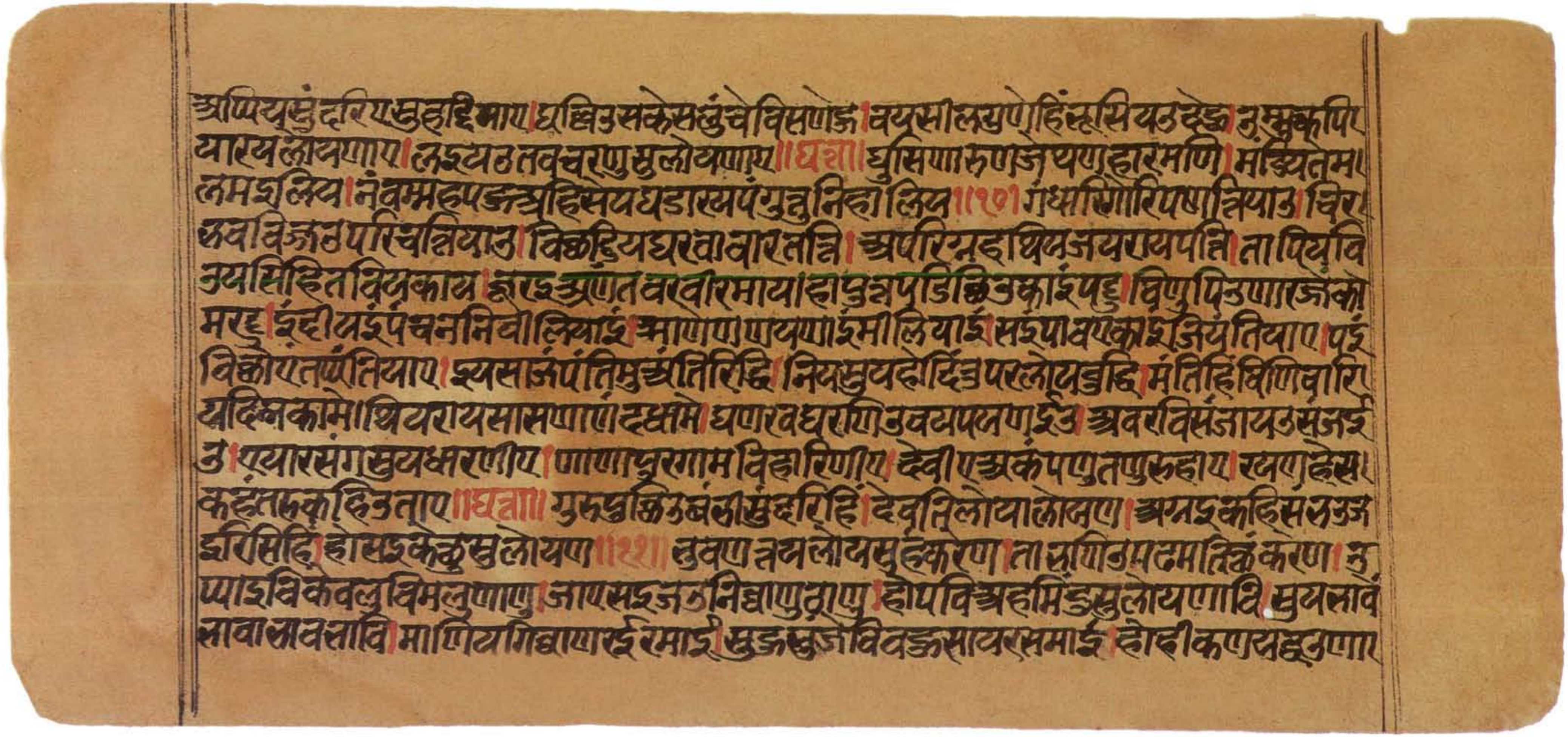

आर्यिका सुभद्रा के लिए अर्पित उस सुन्दरी सुलोचना ने स्नेह के साथ अपने केश उखाड़कर फेंक दिये और व्रत तथा शीलगुणों से अपने शरीर को भूषित कर लिया। उन्मुक्त विचार से देखनेवाली सुलोचना ने तपश्चरण ले लिया।

घत्ता—केशर से अरुण तथा स्तनहार-मणियों से मण्डित जो स्तन मानो कामदेवरूपी राजा के अभिषेक के घट थे, धूल-धूसरित वे अब मल से मैले दिखाई दिये॥ १०॥

११

चिरभव में अर्जित गन्धारी, गौरी और प्रज्ञप्ति विद्याएँ उसने छोड़ दीं। गृह-व्यापार की तृप्ति को छोड़नेवाली जय की पत्नी परिग्रह से हीन होकर स्थित हो गयी। तब प्रिय के वियोग की ज्वाला से सन्तप्तकाय अनन्तवीर की माता पीड़ित हो उठती है—'हे पुत्र, तुमने राजपट्ट क्यों स्वीकार किया ? पिता के बिना राज्य में क्या अहंकार ? तुमने पंच इन्द्रियों को पीड़ित नहीं किया। ध्यान के द्वारा अपने नेत्रों को निमीलित नहीं किया। पति-वियोग में तड़पती हुई और जीती हुई मुझसे क्या पाया जाएगा?' इस प्रकार कहती हुई और अपने पुत्र को परलोक की बुद्धि देती हुई समस्त ऋद्धि छोड़ देती है। परन्तु मन्त्रियों के मना करने पर, कामनाओं की पूर्ति करनेवाले राज्यशासन के केन्द्र हस्तिनापुर में वह स्थित हो गयी। व्रतरूपी जल की नदी, जयकुमार की वह पत्नी एक दूसरी आर्यिका हो गयी। ग्यारह अंगश्रुतों को धारण करनेवाले तथा नाना पुरों और ग्रामों में विहार करनेवाली राजा अकम्पन की पुत्री उस देवी ने रत्ना श्राविका को अपना कथान्तर बताया।

घत्ता—ब्राह्मी और सुन्दरी देवियों ने गुरु से पूछा—''त्रिलोक को देखनेवाले हे देव, जयमुनि का अगला जन्म कहाँ होगा, और सुलोचना कहाँ होगी?॥ ११॥

१२

तब भुवनत्रयलोक के लिए कल्याणकर प्रथम तीर्थंकर ने कहा—''जय केवल विमलज्ञान उत्पन्न कर निर्वाणस्थान को प्राप्त करेगा। यह सुलोचना भी, भावाभाव का विचार करनेवाला अच्युतेन्द्र देव होगी। माना है देवों की रति और लक्ष्मी को जिन में ऐसे अनेक वर्षों तक सुख का भोग कर, यह कनकध्वज राजा होगी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

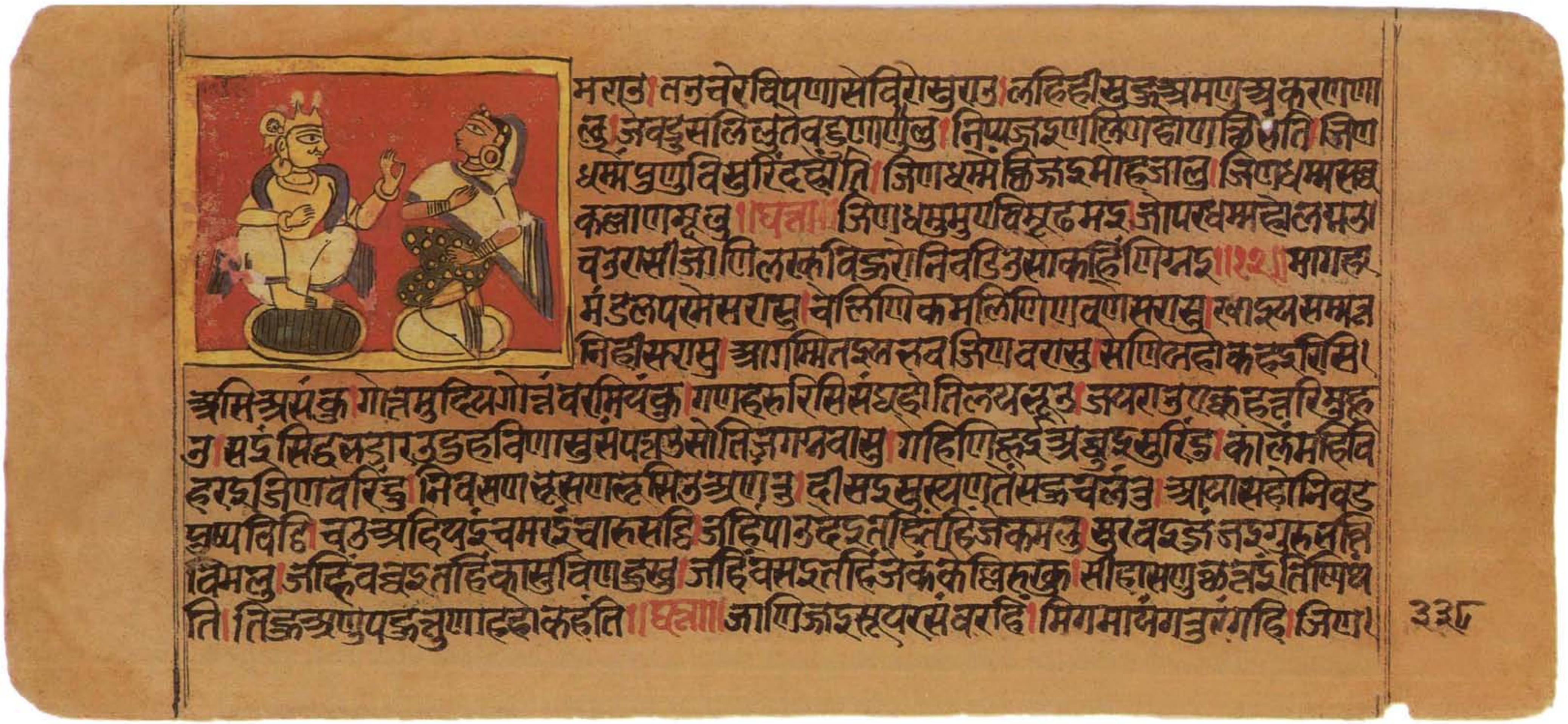

और तप कर तथा राग-द्वेष का नाश कर, इन्द्रियशून्य और मृत्युरहित सुख प्राप्त करेगी। जितना बड़ा पानी, कमल के उतना बड़ा नाल उत्पन्न होता है, इसमें भ्रान्ति नहीं है। जिनधर्म से पशु भी देवेन्द्र होते हैं। जिनधर्म से मोह की जड़ नष्ट होती है। जिनधर्म सबके कल्याण का मूल है।

घत्ता—जो मूढ़मति जिनधर्म को छोड़कर परधर्म में लगता है, चौरासी लाख योनियों के संकट में पड़ा हुआ वह कहाँ निकल पाता है?॥ १२॥

१३

मागध मण्डल के परमेश्वर चेलनारूपी कमलिनी के लिए नये सूर्य के समान क्षायिक सम्यक्त्वरूपी निधि का ईश्वर, आगामी तीसरे भव में तीर्थंकर होनेवाले राजा श्रेणिक से, शंका को पोंछ देनेवाले, ब्राह्मणरूपी आकाश के चन्द्र गौतम ऋषि कहते हैं—"मुनिसंघ में श्रेष्ठ जयराजा इकहत्तरवें गणधर हुए। स्वयंसिद्ध आदरणीय, दुःख का नाश करनेवाले वे तीनों लोकों के अग्रवास (मोक्ष) में स्थित हुए। उनकी गृहिणी सुलोचना अच्युत स्वर्ग में देवेन्द्र हुई। समय के साथ जिनवरेन्द्र धरती पर विहार करते हैं, वे अनन्त अनाहार के आभूषण से भूषित हैं। उनके साथ चलता हुआ सुरजन दिखाई देता है। आकाश से फूलों की वर्षा होती है, चौंसठ चमर ढुराये जाते हैं, वे जहाँ भी पैर रखते हैं वहाँ-वहाँ कमल होते हैं, गुरुभक्ति से विमल देवेन्द्र उन्हें जोड़ता है। वे जहाँ चलते हैं वहाँ किसी को दुःख नहीं होता। वे जहाँ ठहरते हैं वहाँ अशोक वृक्ष होता है, सिंहासन और तीन छत्र होते हैं और वे नाथ की त्रिभुवनप्रभुता घोषित करते हैं।

घत्ता—जिनवर का कहा हुआ समस्त जीवों की भाषा के अंगस्वरूप परिणमित हो जाता है। सुअर, साँभरों, मृग, मातंग और अश्वों के द्वारा वह जान लिया जाता है"॥ १३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

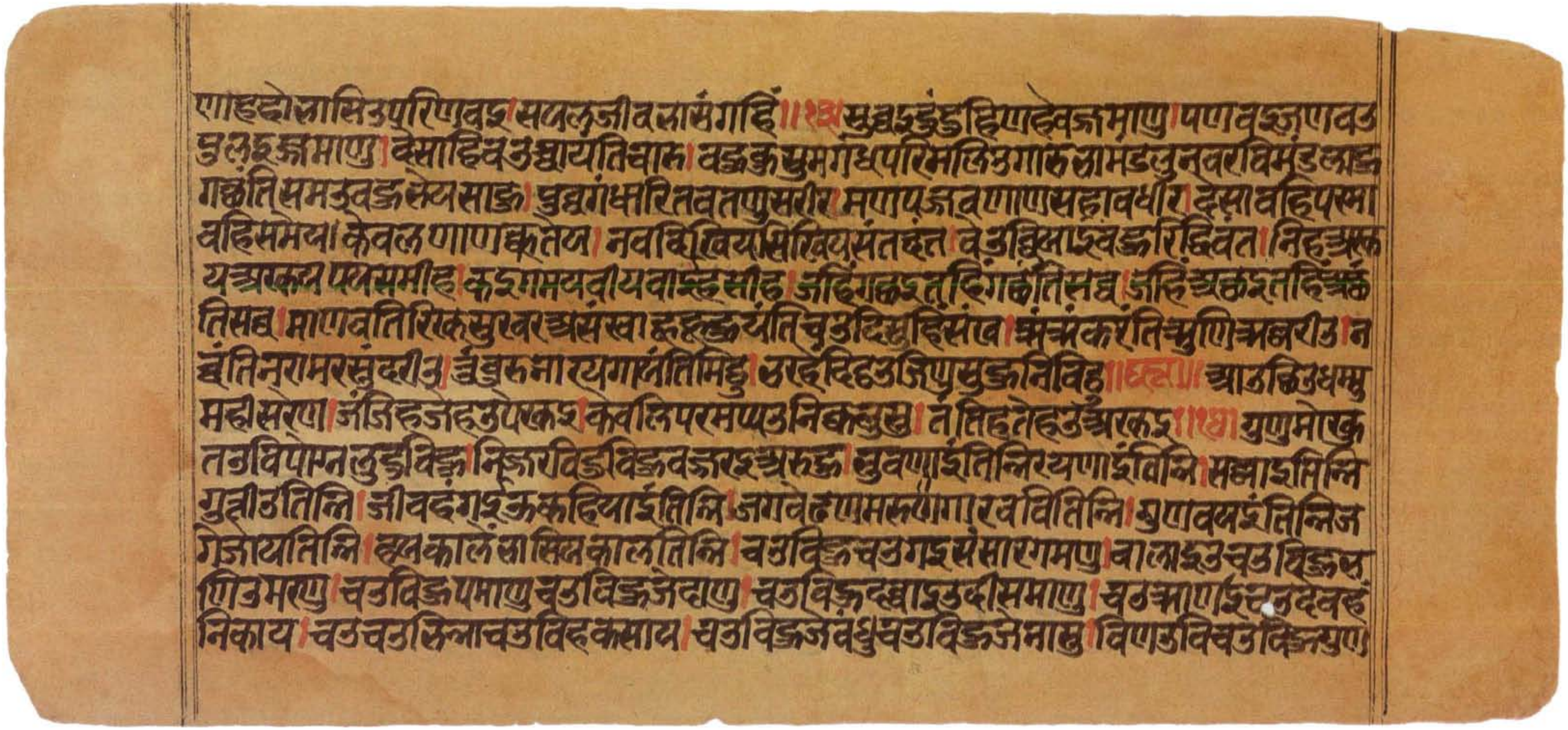

१४

आकाश में बजती हुई दुन्दुभि सुनाई देती है; पुलकित होकर लोक प्रणाम करता है। उनके अर्घ-पात्र को देश-देश के राजा उठाते हैं, प्रचुर कुसुम-गन्ध से मिली हुई हवा बहती है। नवसूर्य मण्डल के समान आभावाला भामण्डल तथा अनेक प्रकार के साधु साथ चलते हैं। पूर्वांग को धारण करनेवाला, तप से कृश शरीर, मन:पर्यय ज्ञानवाला, स्वभाव से धीर, देशावधि और परमावधि ज्ञान से युक्त केवली, केवलज्ञानरूपी सूर्य से तेजस्वी, नवदीक्षित, शिक्षक, शान्त और दंत (जितेन्द्रिय)। विक्रियाऋद्धि से बहु-ऋद्धियों से सम्पन्न। इन्द्रियों के नाशक अक्षयपद में इच्छा रखनेवाला और कैतव आगमवादियों में सिंह। वे जहाँ जाते हैं वहाँ भव्य चलते हैं, वे जहाँ हैं वहाँ सब रहते हैं। मानव, तिर्यंच, असंख्य सुरवर तथा चारों दिशाओं में शंखों की हूँ-हूँ ध्वनि होने लगी। झालरें झं-झं ध्वनि करती हैं, नर और अमरों की सुन्दरियाँ नृत्य करती हैं। तुम्बुर और नारद मीठा गान करते हैं। भरत ने पिता जिन को वहाँ बैठे हुए देखा।

घत्ता—महीश्वर भरत ने धर्म पूछा। निष्कलुष परम केवली परमपद में स्थित वे, जो जैसा देखते हैं उसको उसी प्रकार से कहते हैं॥ १४॥

१५

गुण, मोक्ष, तप और पुद्गल भी दो प्रकार का है। अरहन्त निर्जरा को भी दो प्रकार का बताते हैं। भुवन तीन हैं, रत्न तीन हैं, शल्य तीन हैं, गुप्तियाँ भी तीन हैं, जीव की गतियाँ भी तीन कही गयी हैं। जग को घेरनेवाले गर्व भी तीन हैं, गुरुव्रत तीन हैं, जग में भोग भी तीन हैं, समय को नष्ट करनेवालों ने काल भी तीन प्रकार का कहा है। चार गतियाँ, चार प्रकार का संसार का संचरण; बालादि चार प्रकार का मरण भी कहा गया है। प्रमाण चार प्रकार का है, दान चार प्रकार का है; दिखाई देनेवाला द्रव्य (पुद्गल) भी चार (गुणवाला) है, चार ध्यान हैं, देवों के निकाय चार हैं, चार-चार प्रकार की चार-चार कषायें हैं। बन्ध चार प्रकार का है, उनका नाश चार प्रकार का है, गुणगण की निवास विनय भी चार प्रकार की है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

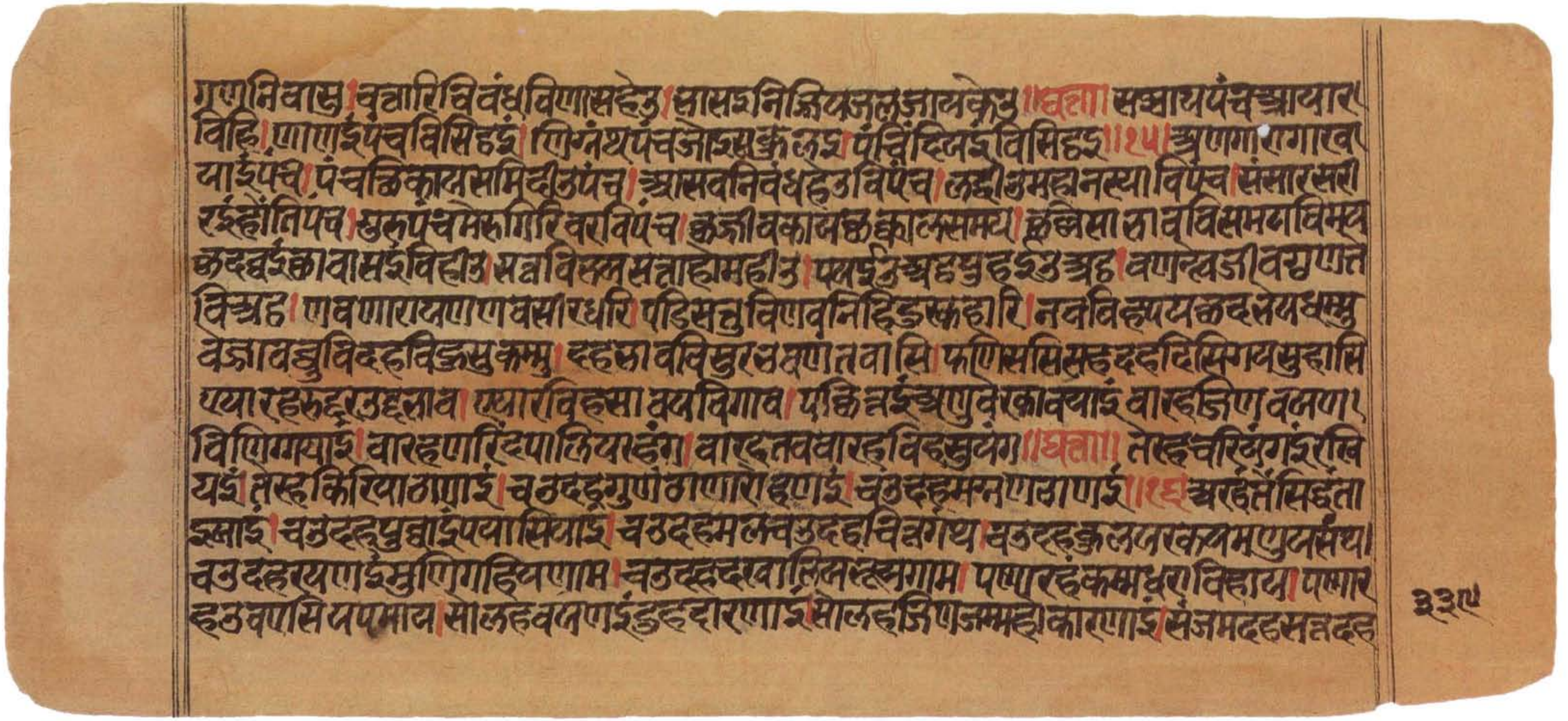

बन्ध और विनाश के कारण चार हैं। इस प्रकार कामदेव का नाश करनेवाले जिन कहते हैं।

घत्ता—सत् ध्यान पाँच हैं, आचार विधि और श्रेष्ठ ज्ञान भी पाँच हैं, निर्ग्रन्थ मुनि पाँच प्रकार के हैं, ज्योतिषकुल पाँच हैं, इन्द्रियाँ भी पाँच कही गयी हैं ॥ १५ ॥

१६

मुनि और श्रावक के व्रत पाँच-पाँच हैं। पाँच अस्तिकाय हैं, समितियाँ पाँच हैं, आश्रव और बन्ध के हेतु पाँच हैं। लब्धियाँ और महानरक पाँच हैं। सांसारिक शरीर पाँच होते हैं; गुरु पाँच होते हैं, सुमेरुपर्वत भी पाँच होते हैं। जीवकाय छह होते हैं। समयकाल छह होते हैं। लेश्याभाव छह होते हैं, सिद्धान्त और मद भी छह होते हैं। द्रव्य छह हैं, आवश्यक विधियाँ छह होती हैं। भय सात और पृथ्वियाँ (नरक की) सात हैं, प्रकृतियाँ आठ हैं, पृथिवियाँ आठ हैं, व्यन्तर देव और जीवगुण भी आठ हैं। नौ नारायण, नौ बलभद्र, प्रतिनारायण भी नौ, दु:ख का हरण करनेवाली निधियाँ भी नौ। पदार्थ नौ प्रकार के। दस प्रकार का धर्म। सुकर्मा वैयावृत्य भी दस प्रकार का। भवनान्तवासी भावनसुर दस प्रकार के होते हैं, धरणेन्द्र और चन्द्रमा के साथ दस दिग्गज शोभित होते हैं। रुद्र ग्यारह हैं, रुद्रभाव भी ग्यारह हैं। गर्वरहित श्रावक भी ग्यारह प्रकार के हैं। जिन-वचनों से उत्पन्न पश्चात्ताप और अनुप्रेक्षाएँ बारह। चक्र का पालन करनेवाले चक्रवर्ती बारह। बारह प्रकार के तप। और श्रुतांग भी बारह प्रकार का।

घत्ता—चारित्र्य के प्रकार तेरह और क्रिया के स्थान भी तेरह कहे गये हैं। गुणस्थानों का आरोहण चौदह प्रकार का है, और मार्गण के स्थान भी चौदह हैं ॥ १६ ॥

१७

अरहन्त के द्वारा सिद्धान्त पर आश्रित चौदह पूर्व प्रकाशित किये गये हैं। चौदह मल हैं, चित्तग्रन्थ भी चौदह हैं, चौदह कुलकर, जो मानव संस्था का निर्माण करनेवाले हैं। गुणियों के द्वारा जिनका नाम लिया जाता है, ऐसे चौदह रत्न बताये गये हैं; भूतग्राम भी चौदह बताये गये हैं। कर्मभूमि का विभाग पन्द्रह है, पन्द्रह प्रमादों का भी उपदेश किया गया है। दु:ख का नाश करनेवाले सोलह वचन होते हैं, जिन के जन्म के कारण भी सोलह होते हैं। संयम सत्तरह होते हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

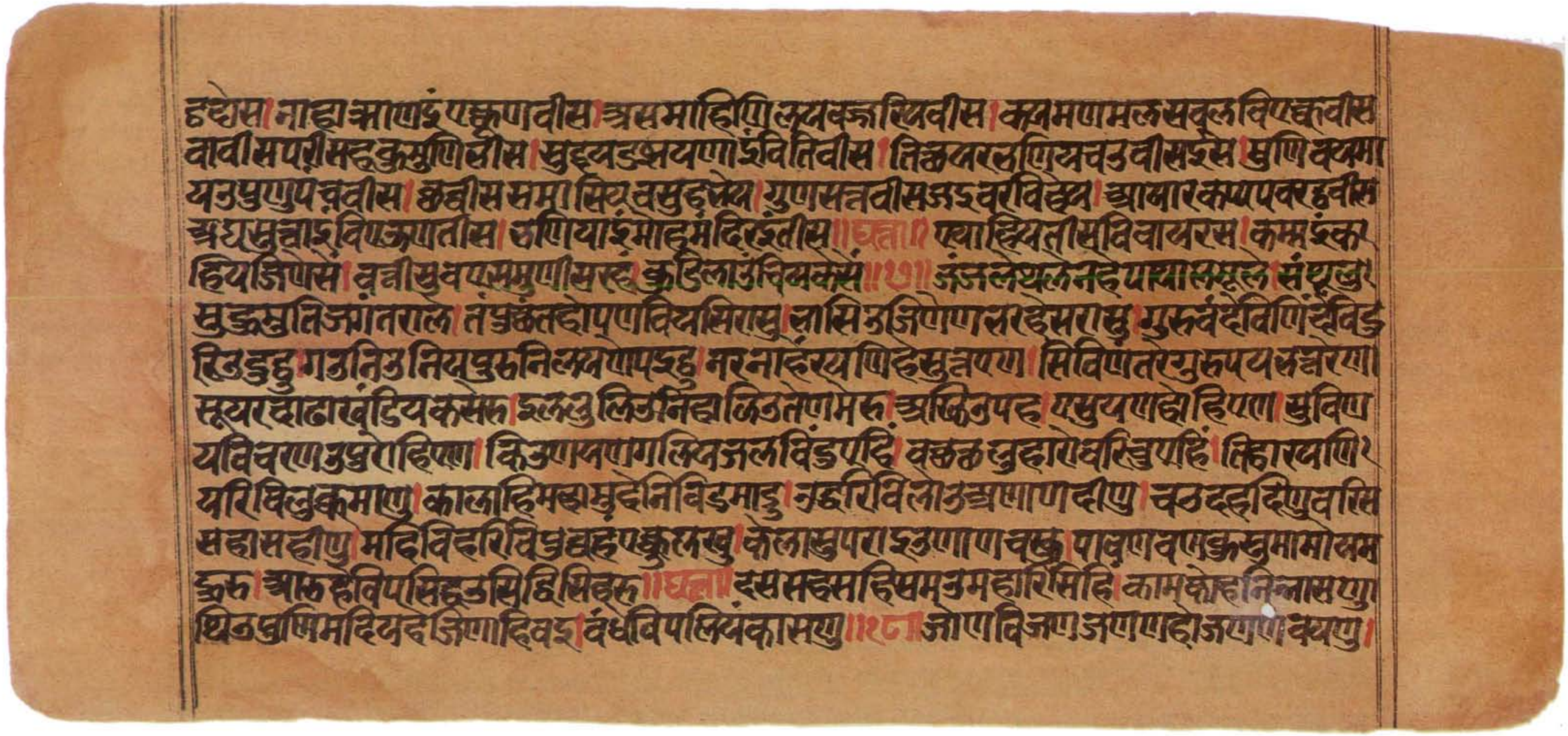

दोष अठारह हैं, ध्यान उन्नीस होते हैं, कुमुनियों को डरानेवाले परिषह बाईस होते हैं... तीर्थंकर ईश चौबीस होते हैं, मुनिव्रत की भावनाएँ पच्चीस होती हैं; वसुधा के भेद छब्बीस हैं, यतिवर के भेद करनेवाले गुण सत्ताईस हैं। आचार कल्प के अट्ठाईस भेद हैं, और अर्धसूत्रों के उनतीस। मोहरूपी मन्दिर के तीस भेद कहे गये हैं।

घत्ता—कुटिल और आकुंचित केशवाले जिनेश्वर ने कर्मों के इकतीस विकार-रस कहे हैं, और मुनीश्वरों के लिए बत्तीस उपदेश॥ १७॥

१८

जो जल, थल, नभ, पातालमूल और तिजग के भीतर स्थूल और सूक्ष्म है, प्रणतसिर उसे पूछते हुए भरतेश्वर के लिए आदिजिन ने सब बताया। गुरु की वन्दना कर, और दुष्ट पाप की निन्दा कर भरत अपने नगर के लिए गया, और उसने अपने घर में प्रवेश किया। रात्रि में सोते हुए जिनवर के चरण-कमलों के भक्त भरत ने स्वप्न देखा कि जिसका शिखर सुअर की दाढ़ से खण्डित है, ऐसा सुमेरुपर्वत धरती पर लुढ़क रहा है। सवेरे भरत ने यह स्वजनों से कहा। हितकारी पुरोहित ने, वक्षःस्थल के हार पर गिरती हुई, नयनोंसे झरती हुई अश्रुबिन्दुओं की धारा द्वारा स्वप्न का विवरण बता दिया। तृष्णारूपी निशाचरी के द्वारा विलुप्त, कालरूपी महासर्प के मुख में पड़ते हुए, दीन अज्ञानी लोक का उद्धार कर, जब एक हजार वर्ष से कम चौदह दिन शेष बचे, तब एक लाख पूर्व धरती पर विहार कर ज्ञाननयन ऋषभनाथ कैलास पर्वत पर पहुँचे। पवित्र वन के पुष्पों के आमोद से मधुर प्रसिद्ध सिद्ध शिखर पर आरोहण कर—

घत्ता—काम और क्रोध का नाश करनेवाले जिनाधिप ऋषभ दस हजार महामुनियों के साथ पूर्णिमा के दिन पर्यंकासन बाँधकर बैठ गये॥ १८॥

१९

पिता के संसार-त्याग का समय जानकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

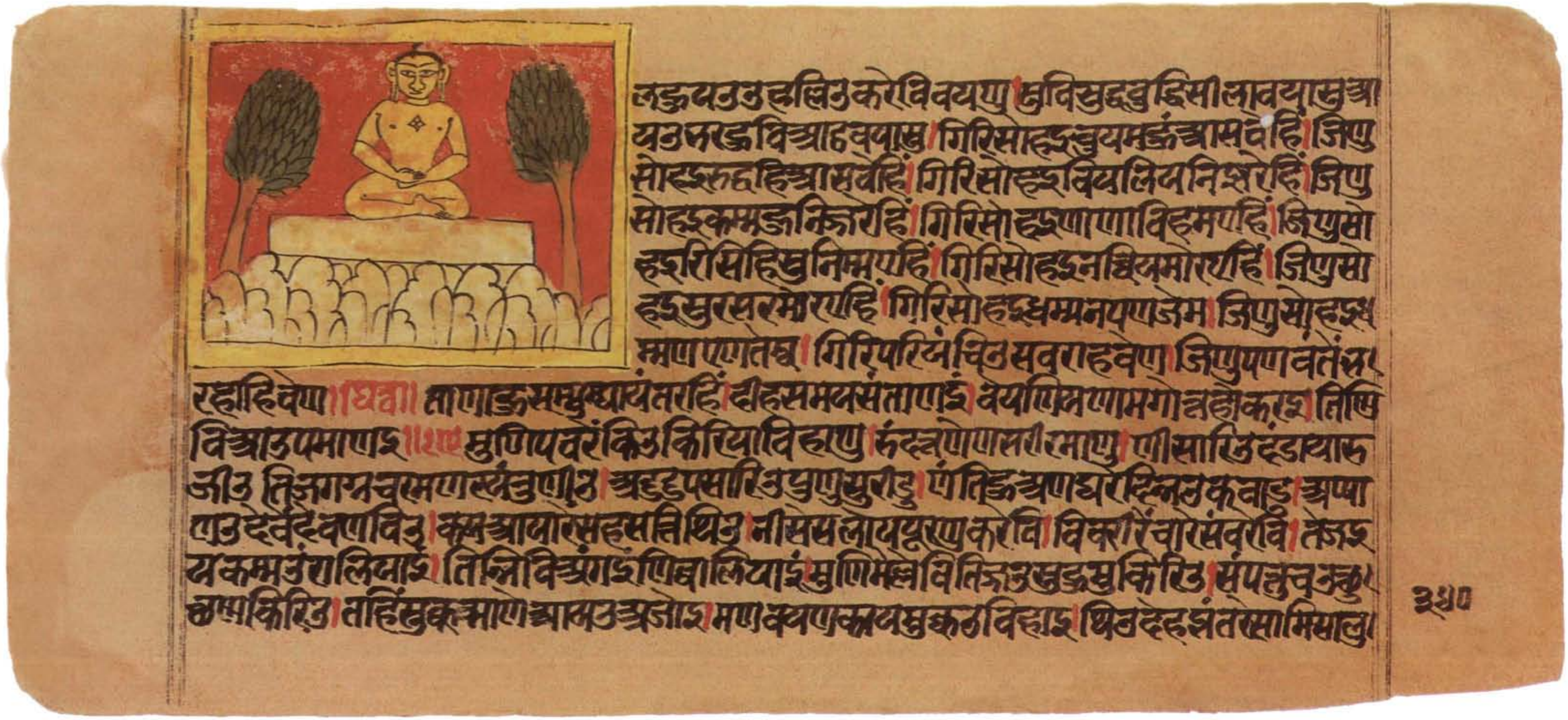

शीघ्र अपना मुख नीचा कर, पवित्र बुद्धि और शील का आश्रय भरत अष्टापद शिखर पर आया। उसने देखा—गिरि मधुवृक्षों के च्युत आसव से शोभित है, जिन रुद्ध आस्रवों के कारण शोभित हैं। गिरि बहते हुए झरनों से शोभित है, जिन कर्मों की निर्जराओं से शोभित हैं। गिरि नाना प्रकार के मृगों से शोभित है, जिन नाना प्रकार के मदरहित मुनियों से शोभित हैं। गिरि नाचते हुए मयूरों से शोभित है, जिन (नमित) देवताओं के मुकुटों से शोभित हैं गिरि धर्म नामक (अर्जुन) वृक्ष से शोभित है, जिन धर्म और न्याय से शोभित हैं, जिस प्रकार गिरि शवरराज से सहित है, उसी प्रकार जिन प्रणाम करते हुए भरतराज से।

घत्ता—तब स्वामी आदिनाथ ने समुद्घात विशेष से लम्बे समय की सन्तानवाले वेदनीय, नाम और गोत्र तीनों कर्मों का आयुप्रमाण कर दिया॥ १९॥

२०

मुनिप्रवर ने, विशालता में अपने शरीर के मान का क्रियाविधान किया (अर्थात् शरीर से आत्मा के प्रदेशों को बाहर निकालना शुरू किया), दण्डाकार के रूप में जीव को बाहर निकाला और उसे तीनों लोकों के अग्रभाग में, नित्यनिगोद नरक के निकट तक ले गये। मानो तीनों लोकों के लिए किवाड़ (द्वार) दे दिया हो। देव ने देवों से प्रणम्य अपने को प्रवर आकार में स्थापित किया। समस्त लोक का आपूरण कर, फिर विपरीत भाव से संवरण कर (अर्थात् लोकपूरण, संवरण, रुजक्कार संवरण और दण्डाकार संवरण कर) उन्होंने तैजस्, कार्मिक और औदारिक तीनों शरीरों को निश्चल बना लिया। फिर तीनों सूक्ष्म क्रियाओं को छोड़कर चौथे सूक्ष्म क्रिया शुक्लध्यान में स्थित हुए। वहाँ वे आयोग शुक्लध्यान में अवतरित हुए; वह मन, वचन और काय से मुक्त होकर शोभित हुए। स्वामी श्रेष्ठ, इस प्रकार अपनी देह के भीतर स्थित होकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जितना समय 'क ख ग घ ङ' समाक्षरों के कथन का समय है, उसमें विद्यमान होते हुए भी देव शरीर को नहीं छूते। जिस प्रकार छिलका निकल जाने पर पके हुए एरण्ड का बीज (ऊपर जाता है)।

घत्ता—उसी प्रकार वे दर्शनज्ञानादि और आठ सिद्धगुणों से सम्पूर्ण होकर। वे अपने (उर्ध्वगमन) स्वभाव के कारण परमपद में जाकर स्थित हो गये॥ २०॥

२१

तब देवेन्द्र ने अरहन्त की मानवमनोज्ञ पाँचवें कल्याण की पूजा की। स्वामी के देह को श्वेत शिविका में रखा गया, मानो कैलास शिखर पर अरुण मेघ हो। सैकड़ों भंभा-भेरी, झल्लरि और तूर्य वाद्य देव-वादकों द्वारा बजा दिये गये। गाती हुई किन्नर स्त्रियों, नाचती हुई नाग स्त्रियों, गिरती हुई कुसुमांजलियों, ऊपर उड़ती हुई ध्वजावलियों, फल-अक्षत-धूप और विलेपनों से युक्त भिंगारों, कलशों और दर्पणों, प्रारम्भ की गयी विचित्र स्तुतियों के कल-कल शब्दों और दूसरे नाना मंगलों के साथ कपूर-चन्दन-अगुरु से मिश्रित विभिन्न वृक्षों को काटकर चिता बनायी गयी; फिर ऋषि परमेश्वर की पूजा कर, कामदेव का नाश करनेवाले उनके शरीर को उस पर रख दिया गया। चरणों में प्रणाम करते हुए, अग्नीन्द्र ने मुकुटरूपी अनल से लाल स्फुलिंग छोड़ा।

घत्ता—मनुष्यत्व नहीं पाने के कारण थर-थर काँपता हुआ, संसार के परिभ्रमण से भग्न एवं संसार से त्रस्त होकर मानो अग्नि जिनवर के चरण-कमलों से जा लगी॥ २१॥

२२

मेघ की आशंका उत्पन्न करनेवाला धुआँ उठा, मानो आग ने अपना मल-कलंक छोड़ दिया हो। फिर ज्वालासमूह आकाश से जा मिला और उसका शरीर आधे क्षण में वाष्परूप में बदल गया। उस कुण्ड (चितास्थान) का गणधरों ने यम की दिशा (पूर्व दिशा) से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्कार किया, मुनिवरों ने पश्चिम दिशा से, ब्राह्मणों और क्षत्रियों ने घी, जौ तथा तिल डालकर तीन दिशाओं से आग की पूजा की। उसे पवित्र पुण्यार्जन मानकर, दूसरे कई लोगों ने अग्निहोत्र यज्ञ स्वीकार कर लिया ! भालतल, कण्ठ, दोनों बाहुओं के बाजुओं, हृदयकमल और नाभिविवर पर, बाद में मस्तक प्रदेश और मुकुट के अग्र भाग पर विहित वह भस्म ऐसा मालूम देता है, जैसे शरीर यश से मण्डित हो।

घत्ता—जिस प्रकार तुम्हें मोक्ष-सुख प्राप्त हुआ है, वह प्यारा सुख मुझे भी हो, यह विचार कर इन्द्र ने ऋषभ के उस भस्म की वन्दना की॥ २२॥

२३

''हे आदरणीय, जिस प्रकार तुम्हें बोधि प्राप्त हुई, वैसी हमारे मन में भी समाधि हो।'' यह कहते हुए कल्पवासी देवों और विद्याधरों ने भस्म की वन्दना की। व्यन्तरदेवों, ज्योतिषगणों और भवनवासियों ने भी भस्म की वन्दना की। महासती नन्दादेवी और यशोवती ने भस्म की वन्दना की। दु:ख से पीड़ित मन भरत ने और परिजनों ने भी भस्म की वन्दना की। जिसमें सिंह के शावकों का शब्द है ऐसे पर्वत पर निवास करनेवाले माह माघ में कृष्ण चतुर्दशी के दिन सूर्योदयकाल में पुरुषश्रेष्ठ तीर्थंकर ऋषभ के निर्वाण प्राप्त करने पर शोक से व्याकुल स्वजन समूह रोने लगता है, महानरेन्द भरत स्वयं शोक में डूब जाता है कि त्रैलोक्यरूपी मन्दिर के आधार-स्तम्भ और युग के आदि ब्रह्मदेव को मैं कहाँ देखूँगा!

घत्ता—हे जिन, आपके बिना नेत्र अन्धे हैं, अशेष दिशाएँ सूनी हैं। बेचारी उत्कण्ठित प्रजा अपने दोनों हाथ ऊपर कर रो पड़ी॥ २३॥

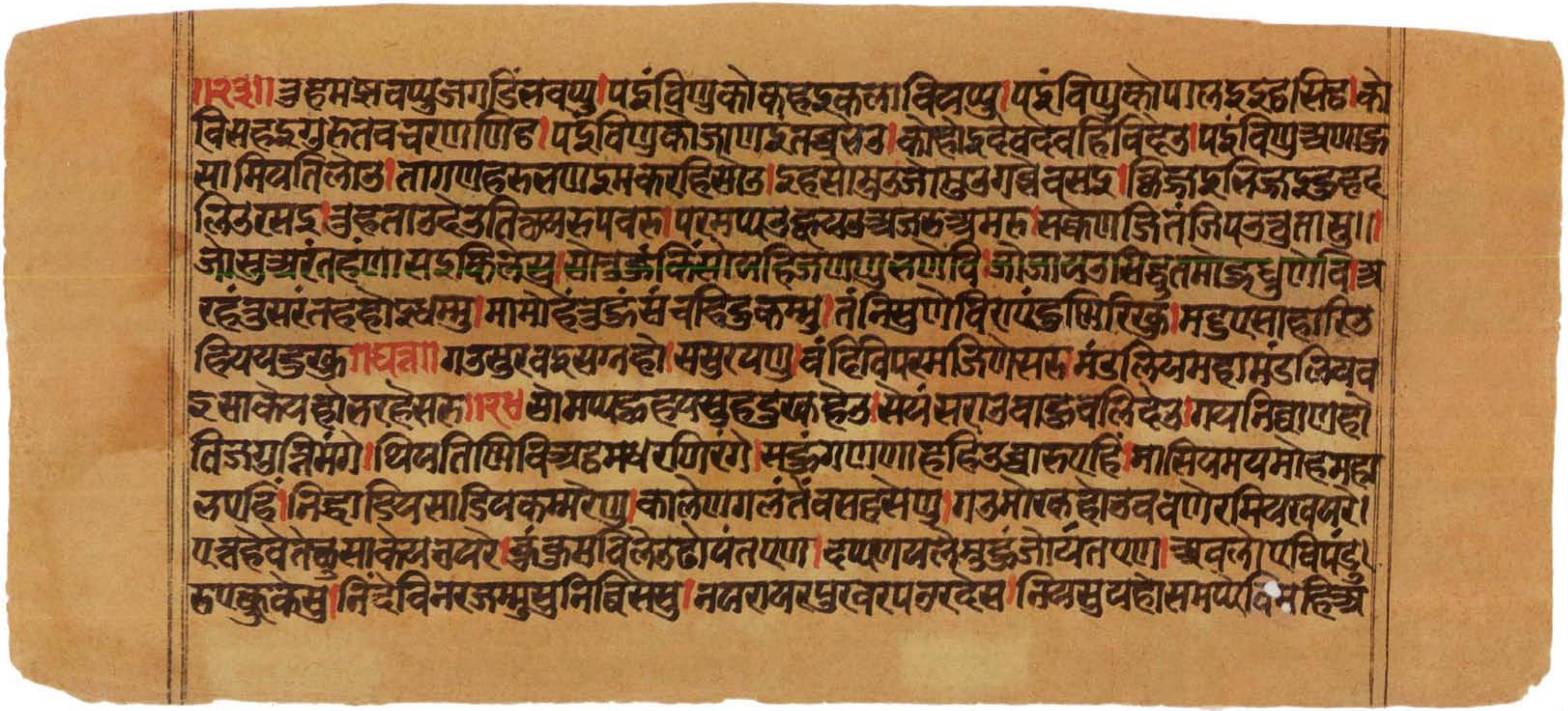

२४

''विश्वरूपी बालक के पिता, तुम मेरे पिता हो। तुम्हारे बिना कला-विकल्प कौन बतायेगा ? तुम्हारे बिना इष्ट प्रजा का पालन कौन करेगा ? महान् तपश्चरण की निष्ठा कौन सहन करेगा ? तुम्हारे बिना तत्त्व का रहस्य कौन जानेगा ? हे देव, देवों का देव कौन होगा ? हे स्वामी, तुम्हारे बिना यह त्रिलोक अनाथ हो गया।'' तब गणधर कहते हैं—''तुम मत शोक करो। जो मर गया, वह मरकर गर्भ में बसता है, छीजता है, भेद को प्राप्त होता है और दु:ख से पीड़ित होकर चिल्लाता है। तुम्हारा पिता, हे देव, महान् तीर्थंकर, अजर-अमर परमात्मा हो गये हैं। इन्द्र ने भी उससे यही कहा कि जो स्मरण करनेवालों के क्लेश का नाश करते हैं, तुम पिता कहकर, उनके लिए शोक क्यों करते हो ? जो तम:समूह का नाश कर सिद्ध हो गये हैं। अरहन्त को स्मरण करनेवालों का धर्म होता है, तुम मोह के द्वारा दुष्कर्म का संचय मत करो।'' यह सुनकर राजा भरत ने बलपूर्वक पिता के दु:ख को सहन किया।

घत्ता—परमजिनेश्वर की वन्दना कर इन्द्र देवों सहित स्वर्ग चला गया, तथा माण्डलीक और महामाण्डलीकपति भरतेश्वर साकेत चला गया॥ २४॥

२५

सुख-दु:ख के कारण को नष्ट करनेवाले सोमप्रभ, राजा श्रेयांस और देव बाहुबलि भी निर्वाण को प्राप्त हुए, और त्रिलोक के उत्तमांग आठवीं धरती की भूमि पर तीनों स्थित हो गये। मदमोहरूपी महारोग का नाश करनेवाले, उद्धार करनेवाले, गणधरों के साथ, पूर्वार्जित कर्मरज को नाश करनेवाले गण वृषभसेन, समय बीतने पर मोक्ष गये। यहीं, जहाँ उपवनमें विद्याधरियाँ रमण करती हैं, ऐसे साकेत नगर में भी केशरविलेप लगाते हुए, दर्पणतल में मुख देखते हुए भरत ने एक सफेद बाल देखकर निरवशेष मनुष्य-जन्म की निन्दा कर, नगर आकर पुरवर प्रचुर देश और अशेष धरती अपने पुत्र को समर्पित कर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

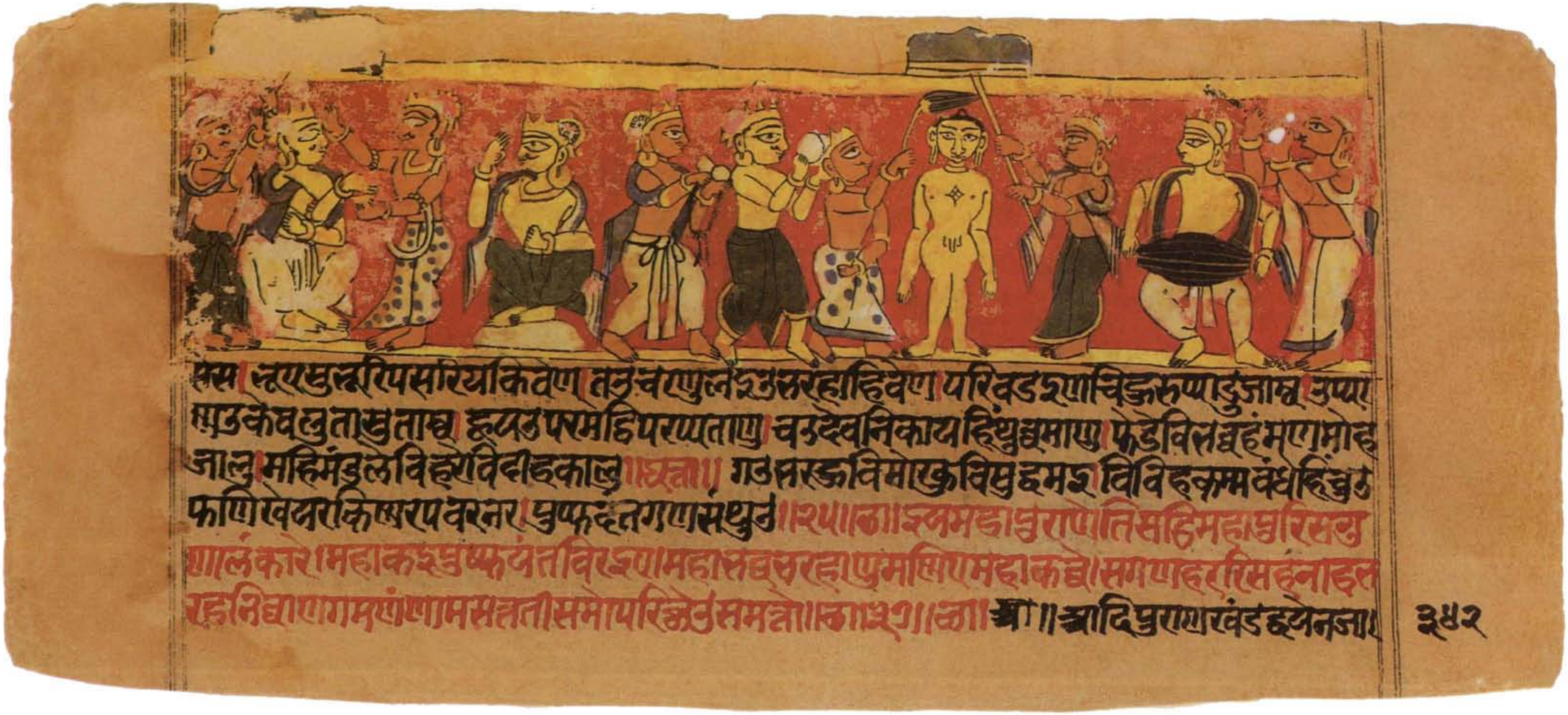

प्राणिमात्र में कृपा का प्रसार करनेवाले उसने तपश्चरण स्वीकार कर लिया। उखाड़े हुए बाल जबतक धरती पर गिरें, इतने में उन्हें केवलज्ञान प्राप्त हो गया। वह स्व-पर का रक्षक परमेष्ठी हो गया। चारों निकायों के देवों के द्वारा स्तूयमान वह भव्यजनों के मन के मोहजाल को नष्ट कर और लम्बे समय तक धरती पर विहार कर—

घत्ता—विशुद्धमति विविध कर्मबन्धनों से रहित, नागों, किन्नरों, प्रवर नरों और ज्योतिषगणों के द्वारा संस्तुत भरत भी मोक्ष चले गये॥ २५॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुण-अलंकारों से युक्त महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का सगणधर ऋषभनाथ-भरत निर्वाण-गमन नाम का सैंतीसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ॥ ३७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तच्छ्लोकमानेनाष्टसहस्राणिग्रंथं कृतोयंग्रंथाग्रं ८०००॥ छ॥ अक्षरमात्रपदस्वरहीनं व्यंजनसंधिविवर्जि
तरेफं। साधुभिरेव मम क्षमितव्यं को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे॥ छ॥ १॥ छ॥ अथ संवत्सरेऽस्मिन् श्रीनृ
पविक्रमादित्य॥ राज्ये॥ संवत् १५५७॥ वर्षे फाल्गुनमासे शुक्लपक्षे। त्रयोदश्यां १३ तिथौ सोमवासरे
कुरुश्री इंजोगिनीपुरमहादुर्गे। सुरित्राणश्री साहिआलम्मुपातिसाहिराज्ये प्रवर्त्तमाने। श्रीपालंब
सुलस्थाने। श्रीकाष्ठासंघे। माथुरान्वये। पुष्करगणे। उभयभाषाप्रवीणतपोनिधिभट्टारकश्रीदेवसे
नदेवाः। कविविद्याप्रधानचारित्रचूडामणिभट्टारकश्रीविमलसेनदेवाः। तत्पट्टे अनेकविद्यानिधा
नध्यानयमनियमस्वाध्यायध्याननिरतभट्टारकश्रीधर्मसेनदेवाः। तत्पट्टे क्षत्रीसगुणमिलयपंचमहा
व्रतधरणधीरान् भट्टारकश्रीभावसेनदेवाः। तत्पट्टे कामप्रमातंगमृगेंद्रान्। सच्चकमलदिनेंद्रान् भट्टा
रकश्रीसहस्रकीर्त्तिदेवाः॥ तत्पट्टे हीणदीणउद्धरणसमर्थान्। कलितानेकसाध्यायान्॥ भट्टारक
श्रीगुणकीर्त्तिदेवाः॥ तत्पट्टे संजमविवेकनिलयान्। विबुधकुलतिलकान्। भट्टारकश्रीलघुभ्राता त
थ श्रीयशःकीर्त्तिदेवाः॥ तत्पट्टे वाचासीतलान्। भट्टारकश्रीमलयकीर्त्तिदेवाः। तत्पट्टे वादीभकुंभस्थ
लविदारणैकपंचमुखान्। लब्धानेकसुखान्भट्टारकश्रीअनेकगुणसद्भाःगुणभद्रसूरिदेवाः। तस्यासि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सचारित्राभरणनिर्जितकामणमुनिगुणचंद्र। तस्य सिष्य देवसाधुपुरस्कृतसंघामंडलाचार्य श्रीक्षेम
कीर्त्ति तत्पट्टे। तस्य सिष्य धर्मभूषण। तत्सिष्य ब्रह्मचारिकाह्न। तत्सिष्य षट्दर्शनपालक। दशलाक्ष
णीकव्रतउधारका ब्रह्मचारि गिरिधन्ना। मुनिश्री विद्यानिधान वादी सकलसविद्यारिका ब्रह्मचारिध

र्मदास। एताम्नाये॥ इक्ष्वाकवंस॥ जैसवालठाकुराणि
पालंवचास्तव्यं। पंचमीव्रतउधारु। श्रावकाचारदक्ष॥
चौधरीथापालु। तस्य भार्या चौधरणि मन्नी। तयो पुत्र पंचम
रद्धवपंच। प्रथमपुत्र चौधरी ऊधा। द्वितीयपुत्र चौधरी ला
ष। त्रितीयपुत्र चौधरी कल्हा। चतुर्थपुत्र चौधरी कोल्ह। पं
चमपुत्र चौधरी लरहो। चौधरी ऊधा। तद्भार्या चौधरणि राक्षा
सिरि। तयो पुत्र रतनसिक। प्रथमपुत्र साधुपदसमाश्रित। चऊ
प्रकारदानदायक। पञ्चव्रताराधक। जपनाक्रिया संजातु॥
चौधरी जगसी। तद्भार्या देवश्री गुरुचरणाराधनपरसुनिगणआहारपोषणनिरत। राणी चेलणा इव ३५२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माणिकह्लषी चोधरणि देल्हा। तयोः पुत्रः सप्तक्षेत्रकृतनिजवित्तवत्ताराउ। जिनप्रतिष्ठाजिनमहोत्सवा
दिकरणसंरक्तस्वरावताराउ। मरवहीराउ। समुद्रवङ्गीराउ। नृपतिसभाशृंगारहाराउ। षंडस्फुटि
तजीर्णजिनालयोद्धरणधौरेयाउ। देवगुर्वादिषट्कर्मविधिद्युक्तः। साधुजनपदपद्मसंरक्षः। जिनचै
त्यालयसंस्था मंडनु। दुर्जनचित्तानुरंजनु। अभ्यागतोप्पितादानु। जिनोपदिष्टसाधार्थस्वचित्त
निश्चीकरणु। चोधरी टोडरमल्लु। तस्य भार्या त्रिक्कू। प्रथमला मिनी रूपेण निर्जितकामकामिनी। जिन
पूजास्नपनादिनित्यकर्मसाधुराधरणाधीरा। दानसीलप्रियंवदा॥ चोधरणि तकुरी। तस्य पुत्र मदि
नीमल्लु। तस्य भार्या राणी। टोडरमलु द्वितीय भार्या चोधारणि सरो। तृतीय भार्या कोरी। तस्य पुत्र क
ल्याणमल्लु। तस्य भार्या चो० पिर्थु सिरि तस्य पुत्र। टोडरू। टोडरमलु चतुर्थ रत्नी। तस्य पुत्र द्वौ प्रथम पु
त्रु चो० जैतमल्लु। तस्य भार्या रूपदे पुत्र राम दासु। तस्य भार्या चि० तेजो। द्वितीय पुत्रु चो० क्षेमचंद्र। तस्य
जीर्णं भार्या [illegible] पुत्र चिंतारणु चोधरी केधाडु तृतीय पुत्रु सदा सदाचारविचारसारपारंगताउ। श्री जिन॥
सासनप्रभावकाउ। चोधरी लाषा॥ तद्भार्या सील तोयतरंगिणी। चोधरणि वाल्ही। तयोः पुत्र तीनि। प्र
थम पुत्रु जिनयज्ञकरणनिपुणतरप्रज्ञा। विशि[...]लोपवाउ। आगमाध्यात्मरसरसिकाउ चोधुरी सांवा
तस्य भार्या सरस्वरूपेण देवां[...]। चोध[...]रौस वासिरी। चोधरी लाधाडु तृतीय पुत्रु श्री[...]दिरनु।

[...] तस्य पुत्र प्रथम तिलोका भार्या दिवला द्वि० पुत्र चोषा भार्या जसो [...] रु० दीला
[...] कामी।

तस्य पुत्र [illegible] भार्या [illegible] नारू

श्री दि० जैन मन्दिर [illegible] तेरहपंथ, जयपुर (राज०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऋद्धिहरीयसुत
...भीदासुतस्य

रिसत्रुंजयादिनानातीर्थया[illegible]समूर्थो[illegible]कलिकालअर्थासलरक्षेस्वरादावतारानु। च[illegible]विक्षस
घमुदक्षदानात्॥ चौधरीराङ्मल्लु। तस्यस्त्रायामि[illegible]तिकावा विशयंदा[illegible]आमिपी। चौधरणिसवीरा
तच्चोपुत्रविरङीचीगुणाढ्या तस्यस्त्रायोस्तलितरंगिणी चौ॰ देवलपुत्र चौ॰ राजपालु। चौ॰ टूरा द्वि
तीयल्लापादारथी। चौधरीलाषत्रितीयपुत्रु जिनगंधोदकेन पवित्रीकृतो समागान्। चौधरीडूङ
रु। तस्यस्त्रायोसीलसालिणी। गुणमालिणी चौधरणि आतिलड। पुत्रतयोप्रथमु चि॰ रोमलुसाया
अपरा। द्वितीयपुत्र[illegible]म्बुडु। तस्यस्त्रायीदोपल्ह। चौधरी केश त्रितीयपुत्रु चोधरी चांदणु। तु
स्यस्त्रायी॥ चौधरी कढ तृतीयपुत्र तस्यस्त्रायोसुहागो। एतेषांमध्येसर्वज्ञध्वनिनिर्गतजीवादि
पदार्थषट्द्रव्यगुणपर्यायश्रद्धापर। साधुदाननिरतपरोपका
रीसाधुलोयेसु चौधरी राङ्मल्लु तेनइदं महापुराण आदि
खंड श्रीहस्त[illegible]मिदं कर्मक्षयनिमित्तं लिषापितं॥ जि
नसासनं॥ सचित्रं कारापितं राङ्मल॥ कृतं हरिनाथका
यस्थ सपरिवारेण॥ लिखितं विष्णुदासु केधासुतन ब्रा
ह्मणेन॥ मिश्र श्रीनाथ जयमेर मिश्र॥ शुभं भवतु॥ छ॥ छ॥

३४४

जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट

ऋषभपुत्र भरत से भारत

इस देश का नाम 'भारत/भारतवर्ष' ऋषभपुत्र-'भरत' के नाम से हुआ है। यह तथ्य निम्न उद्धरणों से स्पष्ट एवं पुष्ट होता है—

जैनेतर/वैदिक परम्परा से उद्धृत उद्धरण—

अग्निपुराण

ऋषभो मरुदेव्यां च ऋषभाद् भरतोऽभवत्।
ऋषभो दत्तश्रीः पुत्रे शाल्यग्रामे हरिं गतः।
भरताद् भारतं वर्षं भरतात् सुमतिस्त्वभूत्॥

(१०७.१०-११)

— 'नाभिराजा' से 'मरुदेवी' में 'ऋषभ' का जन्म हुआ। ऋषभ से 'भरत' हुए। ऋषभ ने राज्यश्री 'भरत' को प्रदानकर संन्यास ले लिया। भरत से इस देश का नाम 'भारतवर्ष' हुआ। भरत के पुत्र का नाम 'सुमति' था।

मार्कण्डेयपुराण

आग्नीध्रसूनोर्नाभेस्तु ऋषभोऽभूत् सुतो द्विजः।
ऋषभाद् भरतो जज्ञे वीरः पुत्रशताद् वरः॥
सोऽभिषिच्यर्षभः पुत्रं महाप्राव्राज्यमास्थितः।
तपस्तेपे महाभागः पुलहाश्रम संश्रयः॥
हिमाह्वं दक्षिणं वर्षं भरताय पिता ददौ।
तस्मात्तु भारतं वर्षं तस्य नाम्ना महात्मनः॥

(५०.३९-४२)

— अग्नीध्र-पुत्र नाभि से ऋषभ उत्पन्न हुए, उनसे भरत का जन्म हुआ, जो अपने सौ भाइयों में अग्रज था। ऋषभ ने ज्येष्ठ पुत्र भरत का राज्याभिषेक कर महाप्रव्रज्या ग्रहण की और 'पुलह' आश्रम में उस महाभाग्यशाली ने तप किया। ऋषभ ने भरत को 'हिमवत' नामक दक्षिण-प्रदेश शासन के लिए दिया था, उस महात्मा 'भरत' के नाम से इस देश का नाम 'भारतवर्ष' हुआ।

ब्रह्माण्डपुराण

नाभिस्त्वजनयत् पुत्रं मरुदेव्यां महाद्युतिम्।
ऋषभं पार्थिवश्रेष्ठं सर्वक्षत्रस्य पूर्वजम्॥६०॥
ऋषभाद् भरतो जज्ञे वीरः पुत्रशताग्रजः।
सोऽभिषिच्यर्षभः पुत्रं महाप्रव्रज्यया स्थितः॥६१॥
हिमाह्वं दक्षिणं वर्षं भरताय न्यवेदयत्।
तस्मात्तु भारतं वर्षं तस्य नाम्ना विदुर्बुधाः॥६२॥

(पूर्व २.१४)

— नाभि ने मरुदेवी से महाद्युतिवान् 'ऋषभ' नाम के पुत्र को जन्म दिया। ऋषभदेव 'पार्थिव श्रेष्ठ' और 'सब क्षत्रियों के पूर्वज' थे। उनके सौ पुत्रों से वीर 'भरत' अग्रज थे। ऋषभ ने उनका राज्याभिषेक कर महाप्रव्रज्या ग्रहण की। उन्होंने भरत को 'हिमवत्' नाम का दक्षिणी भाग राज्य करने के लिए दिया था और वह प्रदेश आगे चलकर भरत के नाम पर ही 'भारतवर्ष' कहलाया।

स्कन्दपुराण

नाभेः पुत्रश्च ऋषभः ऋषभाद् भरतोऽभवत्।
तस्य नाम्ना त्विदं वर्षं भारतं चेति कीर्त्यते॥

(खंडस्थ कौमारखंड ३७.५७)

— नाभि का पुत्र ऋषभ, ऋषभ से 'भरत' हुआ। उसी के नाम से यह देश भारत कहा जाता है।

लिंगपुराण

नाभिस्त्वजनयत् पुत्रं मरुदेव्यां महामतिः।
ऋषभं पार्थिवश्रेष्ठं सर्वक्षत्र-सुपूजितम्॥
ऋषभाद् भरतो जज्ञे वीरः पुत्रशताग्रजः।
सोऽभिषिच्याथ ऋषभो भरतं पुत्रवत्सलः॥
ज्ञानवैराग्यमाश्रित्य जित्वेन्द्रिय-महोरगान्।
सर्वात्मनात्मनि स्थाप्य परमात्मानमीश्वरम्॥
नग्नोजटी निराहारोऽचीवरो ध्वान्तगतो हि सः।
निराशस्त्यक्तसंदेहः शैवमाप परं पदम्॥
हिमाद्रेर्दक्षिणं वर्षं भरताय न्यवेदयत्।
तस्मात्तु भारतं वर्षं सत्य नाम्ना विदुर्बुधाः॥

(४७.१९-२३)

— महामति नाभि को मरुदेवी नाम की धर्मपत्नी से 'ऋषभ' नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। वह ऋषभ (नृपतियों) में उत्तम था और सम्पूर्ण क्षत्रियों द्वारा सुपूजित था। ऋषभ से भरत की उत्पत्ति हुई, जो अपने सौ भ्राताओं में अग्रजन्मा था। पुत्र-वत्सल ऋषभदेव ने भरत को राज्यपद अभिषिक्त किया और स्वयं ज्ञान-वैराग्य को धारण कर, इन्द्रियरूपी महान् सर्पों को जीत सर्वभाव से ईश्वर परमात्मा को अपनी आत्मा में स्थापित कर तपश्चर्या में लग गये। वे उस समय नग्न थे, जटायुक्त, निराहार, वस्त्ररहित तथा मलिन थे। उन्होंने सब आशाओं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का त्याग कर दिया था। सन्देह का परित्याग कर परमशिवपद को प्राप्त कर लिया था। उन्होंने हिमवान् के दक्षिण भाग को भरत के लिए दिया था। उसी भरत के नाम से विद्वान् इसे भारतवर्ष कहते हैं।

वायुपुराण

नाभिस्त्वजनयत्पुत्रं मरुदेव्या महाद्युतिः।
ऋषभं पार्थिवश्रेष्ठं सर्वक्षत्रस्य पूर्वजम्॥४०॥
ऋषभाद् भरतो जज्ञे वीरः पुत्रशताग्रजः।
सोऽभिषिच्याथ भरतं पुत्रं प्राव्राज्यमास्थितः॥४१॥
हिमाह्वं दक्षिणं वर्षं भरताय न्यवेदयत्।
तस्माद् भारतं वर्षं तस्य नाम्ना विदुर्बुधाः॥४२॥

(पूर्वार्ध, अध्याय ३३)

— नाभि के मरुदेवी से महाद्युतिवान 'ऋषभ' नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। वह 'ऋषभ' नृपतियों में उत्तम था और सम्पूर्ण क्षत्रियों द्वारा पूजित था। ऋषभ से 'भरत' की उत्पत्ति हुई जो सौ पुत्रों से अग्रज था। उस 'भरत' को राजपद पर अभिषिक्त कर ऋषभ स्वयं प्रव्रज्या में स्थित हो गये। उन्होंने हिमवान् के दक्षिण भाग को भरत के लिए दिया था। उसी भरत के नाम से विद्वान इसे 'भारतवर्ष' कहते हैं।

नारदपुराण

आसीत् पुरा मुनिश्रेष्ठः भरतो नाम भूपतिः।
आर्षभो यस्य नाम्नेदं भारतं खण्डमुच्यते॥5॥
स राजा प्राप्तराज्यस्तु पितृपैतामहं क्रमात्।
पालयामास धर्मेण पितृवद्रंजयन् प्रजाः॥6॥

(पूर्वखण्ड, अध्याय ४८)

— पूर्व समय में मुनियों में श्रेष्ठ 'भरत' नाम के राजा थे। वे ऋषभदेव के पुत्र थे, उन्हीं के नाम से यह देश 'भारतवर्ष' कहा जाता है। उस राजा भरत ने राज्य प्राप्तकर अपने पिता-पितामह की तरह से ही धर्मपूर्वक प्रजा का पालन-पोषण किया था।

श्रीमद्भागवत

येषां खलु महायोगी भरतो ज्येष्ठः श्रेष्ठगुणा आसीत्।
येनेदं वर्षं भारतमिति व्यपदिशन्ति॥

(५.४.९)

— श्रेष्ठ गुणों के आश्रयभूत, महायोगी भरत अपने सौ भाइयों में श्रेष्ठ थे, उन्हीं के नाम पर इस देश को 'भारतवर्ष' कहते हैं।

शिवपुराण

नाभेः पुत्रश्च वृषभो वृषभात् भरतोऽभवत्।
तस्य नाम्ना त्विदं वर्षं भारतं चेति कीर्त्यते॥

(३७.५७)

नाभि के पुत्र 'वृषभ' और वृषभ के पुत्र 'भरत' हुए। उनके नाम से इस वर्ष (देश) को 'भारतवर्ष' कहते हैं।

सूरसागर

बहुरो रिषभ बडे जब भये, नाभि राज दे वन को गये।
रिषभ-राज परजा सुख पायो, जस ताको सब जग में छायो॥
रिषभदेव जब बन को गये, नवसुत नवौ-खण्ड-नृप भये।
भरत सो भरत-खण्ड को राव, करे सदा ही धर्म अरु न्याव॥

(पंचम स्कन्ध, पृ. १५०-५१)

भागवत

तेषां वै भरतो ज्येष्ठो नारायण-परायणः।
विख्यातं वर्षमेतद् यन्नाम्ना भारतमद्भुतम्॥

(११.२.१७)

वराहपुराण

नाभिर्मरुदेव्यां पुत्रमजनयत् ऋषभनामानं तस्य भरतः
पुत्रश्च तावदग्रजः तस्य भरतस्य पिता ऋषभः
हेमाद्रेर्दक्षिणं वर्षं महद् भारतं नाम शशास।

(अध्याय ७४)

कूर्मपुराण

हिमाह्वयं तु यद्वर्षं नाभेरासीन्महात्मनः।
तस्यर्षभोऽभवत्पुत्रो मरुदेव्या महाद्युतिः॥३७॥
ऋषभाद् भरतो जज्ञे वीरः पुत्रः शताग्रजः।
सोऽभिषिच्यर्षभः पुत्रं भरतं पृथिवीपतिः॥३८॥

(अध्याय ४१)

विष्णुपुराण

न ते स्वस्ति युगावस्था क्षेत्रेष्वष्टसु सर्वदा।
हिमाह्वयं तु वै वर्षं नाभेरासीन्महात्मनः॥२७॥
तस्यर्षभोऽभवत्पुत्रो मरुदेव्यां महाद्युतिः।
ऋषभाद्भरतो जज्ञे ज्येष्ठः पुत्रशतस्य सः॥२८॥

(द्वितीयांश, अध्याय १)

उपर्युक्त उद्धरण 'आदिपुराण', आचार्य जिनसेन, भाग-१, प्रस्तावना, पृ. २७, प्रकाशक - भारतीय ज्ञानपीठ, चतुर्थ संस्करण, १९९३ से उद्धृत हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन परम्परा/साहित्य से उद्धृत उद्धरण

वसुदेवहिण्डी

इहं सुरासुरिंदविंदवंदिय-चलणारविंदो उसभो नाम पढ़मो राया जगप्पियामहो आसी। तस्य पुत्तसयं। दुवे पहाणा भरहो बाहुबली य। उसभसिरी पुत्तसयस्स पुरसयं च दाऊण पव्वइयो। तत्थ भरहो भरहवासचूड़ामणि, तस्सेव णामेण इहं भारतवासं ति पवुच्चंति।

(प्रथम खण्ड पृ. १८६)

— यहाँ जगत्पिता ऋषभदेव प्रथम राजा हुए। सुर और असुर दोनों ही के इन्द्र उनके चरण-कमलों की वन्दना करते थे। उनके (ऋषभदेव के) सौ पुत्र थे। उनमें दो प्रमुख थे - भरत और बाहुबली। ऋषभदेव शतपुत्र-ज्येष्ठ को राजश्री सौंपकर प्रव्रजित हो गये। भारतवर्ष का चूड़ामणि (शिरोमुकुट) भरत हुआ। उसी के नाम से इस देश को 'भारतवर्ष' ऐसा कहते हैं।

जम्बूदीवपण्णत्ति

भरहे अइत्थदेवे णहिड्ढिए महज्जुए जावपलि ओवमढिइए परिवसइ। से एएणट्ठेणं गोयमा, एवं वुच्चइ भरहेवासं।

— इस क्षेत्र में एक महर्द्धिक महाद्युतिवंत, पल्योपम स्थितिवाले भरत नाम के देव का वास है। उसके नाम से इस क्षेत्र का नाम 'भारतवर्ष' प्रसिद्ध हुआ।

महापुराण

ततोऽभिषिच्य साम्राज्ये भरतं सूनुमग्रिमम्।
भगवान् भारतं वर्षं तत्सनाथं व्यधादिदम्॥

आचार्य जिनसेन (१७.७६)

— इसके पश्चात् भगवान् ऋषभनाथ ने अपने ज्येष्ठ पुत्र का साम्राज्याभिषेक किया तथा 'भरत से शासित प्रदेश भारतवर्ष हो' — ऐसी घोषणा की।

'भारतवर्ष' को उन्होंने सनाथ किया।

प्रमोदभरतः प्रेमनिर्भरा बन्धुता तदा।
तमाह्वत भरतं भावि समस्त भरताधिपम्॥
तन्नाम्ना भारतं वर्षमितिहासीज्जनास्पदम्।
हिमाद्रेरासमुद्राच्च क्षेत्रं चक्रभृतामिदम्॥

(१५.१५८-१५९)

— समस्त भरत क्षेत्र के उस भावी अधिपति को आनन्द की अतिशयता से स्नेह करनेवाले बन्धु-समूह ने 'भरत' ऐसा कहकर सम्बोधन दिया-पुकारा। उस 'भरत' के नाम से हिमालय से समुद्र-पर्यन्त यह चक्रवर्तियों का क्षेत्र 'भारतवर्ष' नाम से लोक में प्रतिष्ठित हुआ।

पुरुदेवचम्पू

तन्नाम्ना भारतं वर्षमितीहासीज्जनास्पदम्।
हिमाद्रेरासमुद्राच्च क्षेत्रं चक्रभृतामिदम्॥

(६.३२)

— उसके नाम से (भरत के नाम से) यह देश 'भारतवर्ष' प्रसिद्ध हुआ - ऐसा इतिहास है। हिमवान् कुलाचल से लेकर लवणसमुद्र तक का यह क्षेत्र 'चक्रवर्तियों का क्षेत्र' कहलाता है।

× × ×

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आर्थिक सहयोग हेतु आभार

इस सचित्र आदिपुराण के प्रकाशन हेतु निम्नलिखित महानुभावों ने आर्थिक सहयोग प्रदान किया उसके लिए हम आभारी हैं—

क्र.सं.	नाम	प्रदत्त राशि
१.	**श्रेयांसप्रसाद चेरिटेबल ट्रस्ट,** मुम्बई	११,०००.००
२.	**श्री घेवरचन्द जैन,** दुर्गापुरा, जयपुर	११,०००.००
३.	**श्री प्रकाशचन्द रतनदेवी कोठ्यारी** सवाई मानसिंह हाईवे, जयपुर	११,०००.००
४.	**शान्तिदेवी चेरिटेबिल ट्रस्ट,** प्रभादेवी, मुम्बई	११,०००.००
५.	**श्री सुरेशचन्द रतनप्रभा तोतूका** **श्रीमती कामिनी तोतूका,** बापूनगर, जयपुर	११,०००.००
६.	**अहिंसा प्रसारक ट्रस्ट,** यूनिक हाउस, मुम्बई	११,०००.००
७.	**श्रीमती मनोरमा जैन** **धर्मपत्नी श्री विनोदकुमार जैन,** मोतीडूँगरी रोड, जयपुर	६०००.००
८.	**श्री धन्नालाल राजेन्द्रकुमार गोधा,** सेठी कॉलोनी, जयपुर	६०००.००
९.	**श्री एम. पी. जैन, श्री आर. के. जैन,** सेठी कॉलोनी, जयपुर	६०००.००
१०.	**श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, महावीर नगर,** टोंक रोड, जयपुर	६०००.००
११.	**श्रीमती गुलाबदेवी सरावगी** **धर्मपत्नी राजकुमार सरावगी (बगड़ा),** न्यू सांगानेर रोड, जयपुर	६०००.००
१२.	**श्रीमती हीरामणि कोठ्यारी** **धर्मपत्नी पदमकुमार कोठ्यारी,** सवाई मानसिंह हाईवे, जयपुर	६०००.००
१३.	**स्व. पालकीदेवी उमरावमल ठोलिया की स्मृति में** **सुरेश-सरला, संदीप-सुनयना ठोलिया,** जवाहरनगर, जयपुर	६०००.००
१४.	**स्व. श्रीमती कमलादेवी काला की स्मृति में** **श्री कैलाशचन्द काला,** चाँदपोल बाजार, जयपुर	६०००.००
१५.	**श्री सुभाषचन्द जैन तेलवाले,** कमलानगर, मेरठ	६०००.००
१६.	**श्री राजेन्द्रकुमार अजयकुमार जैन (दनगसिया)** सिविल लाइन्स, अजमेर	६०००.००
१७.	**डॉ. (श्रीमती) विमला जैन** **धर्मपत्नी श्री प्रकाशचन्द्र जैन,** सुहागनगर, फिरोजाबाद	६०००.००
१८.	**श्री सुमेरचन्द सोनी,** सी-स्कीम, जयपुर	६०००.००
१९.	**डॉ. (श्री) रवीन्द्रकुमार टोंग्या,** सी-स्कीम, जयपुर	६०००.००
२०.	**स्व. हरकचन्द सेठी की स्मृति में** **श्रीमती सोहनीदेवी सेठी,** मातेश्वरी श्री निर्मलकुमार, हुलासचन्द महावीरप्रसाद, दिनेश सेठी, गुवाहाटी, असम	६०००.००
२१.	**श्री प्रेमचन्द्र खिन्दूका,** महावीर नगर, जयपुर	६०००.००
२२.	**श्रीमती शैल राणा,** सी-स्कीम, जयपुर	६०००.००
२३.	**केसरीचन्द पूनमचन्द चेरिटेबल ट्रस्ट** द्वारा श्री पी. सी. सेठी, ग्रेटर कैलाश, नई दिल्ली	६०००.००
२४.	**स्व. मदनलाल जी गंगवाल की स्मृति में श्रीमती बिदामीदेवी एवं** **श्री मोहनलाल गंगवाल** (पुत्र) की ओर से, गुवाहाटी, असम	६०००.००
२५.	**स्व. श्रीमती सोहनीदेवी एवं स्व. श्री मांगीलालजी पाण्ड्या की स्मृति में** **श्री प्रभुलाल, श्री एम. पी. जैन, एडवोकेट,** गुवाहाटी, असम	६०००.००
२६.	**श्री फूलचन्द प्रदीपकुमार मोहित झांझरी (डीमापुरवाले)** रूपविहार, सोडाला, जयपुर	६०००.००
२७.	**मातुश्री स्व. श्रीमती चन्द्रावली देवी सेठी की स्मृति में** **श्री तनसुखराय सेठी,** इम्फाल, मनीपुर	६०००.००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसके पश्चात भगवान ऋषभनाथ ने अपने ज्येष्ठ पुत्र का साम्राज्याभिषेक किया तथा 'भरत से शासित

प्रबन्धकारिणी कमेटी
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

अध्यक्ष	:	श्री नरेशकुमार सेठी
उपाध्यक्ष	:	श्री भंवरलाल अजमेरा श्री राजकुमार काला
मानद मंत्री	:	श्री नरेन्द्रकुमार पाटनी
संयुक्त मंत्री	:	श्री बलभद्रकुमार जैन श्री हेमन्त सौगानी
कोषाध्यक्ष	:	श्री पदमचन्द तोतूका

सदस्य

श्री सुभद्रकुमार पाटनी	श्री मिलापचन्द जैन
श्री ज्ञानचन्द खिन्दूका	श्री पूनमचन्द शाह
श्री रामचन्द्र कासलीवाल	श्री प्रकाशचन्द जैन
श्री जमनादास जैन	श्री महेन्द्रकुमार पाटनी
श्री तेजकरण डंडिया	डॉ. कमलचन्द सौगानी
अध्यक्ष, भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी	श्री नगेन्द्रकुमार जैन
	डॉ. हुकमचन्द सेठी
श्री ताराचन्द्र जैन	श्री अशोक जैन
श्री नवीनकुमार बज	श्री शान्तिकुमार जैन, दिल्ली
श्री नानगराम जैन	श्री नरेन्द्रमोहन कासलीवाल
श्री हरकचन्द सरावगी, कोलकाता	श्री कमलकुमार बड़जात्या, मुम्बई

जैनविद्या संस्थान समिति

श्री ज्ञानचन्द खिन्दूका
प्रो. नवीनकुमार बज
श्री महेन्द्रकुमार पाटनी
श्री नरेन्द्रकुमार पाटनी
श्री अशोककुमार जैन
पं. श्री ज्ञानचन्द बिल्टीवाला
डॉ. प्रेमचन्द राँवका
डॉ. जिनेश्वरदास जैन
डॉ. कमलचन्द सोगाणी
संयोजक

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org